NAVNEET

1988
Jan-Nov

G. K. V.
Hardwar

111.२९९

~~RT-0947~~

111299

ी शताब्दी अंक

री : १९८८

ल्य : रु. ४.००

1988

Jan-Nov.

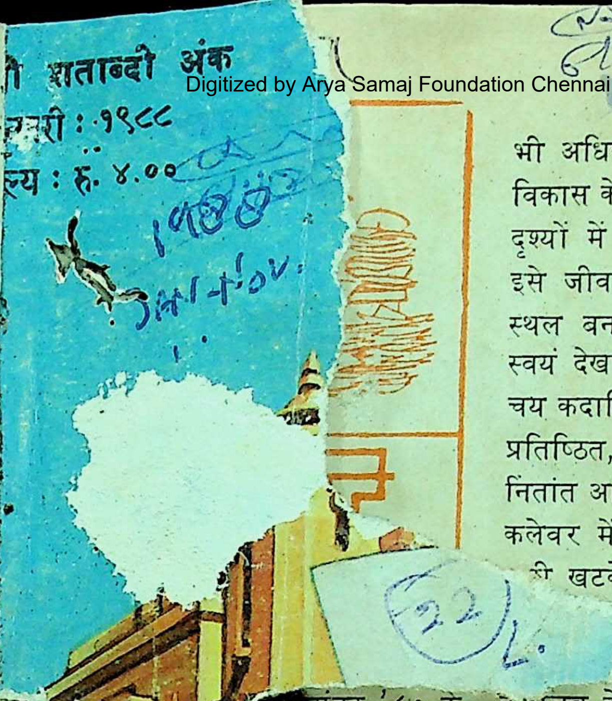

22

अ दिसंबर '८७ के अंक में देश का अपन आप में अनूठा साहित्यिक पर्यटन-स्थल के रूप से विख्यात 'तुलसी उपवन' का रंगीन चित्र द्वारा आवरण पृष्ठ देकर सराहनीय कार्य किया है। आपके द्वारा उसका अपूर्ण परिचय 'राष्ट्रीय चेतना का अनूठा संगम : तुलसी उपवन' मन को खटकता है। परिचय पूर्ण और विस्तार से होना चाहिये था।

पत्रिका उत्तरोत्तर विकास-पथ पर अग्रसर हो, इसी कामना के साथ संपादक महोदय को पुनः बधाई। **—वली उल्लाह सिद्दीकी** **'तारेश', जाजमऊ, कानपुर**

○○○

शत-शत साधुवाद जो **नवनीत** दिसं- '८७ के मुखपृष्ठ को 'तुलसी उपवन' र की एक मनोरम छबि से आपने । अंतर्राष्ट्रीयता, विश्वबंधुत्व से भी अधिक विश्वनागरिकता की संस्कृति-विकास के जिस दुर्लंघ्य कार्य को यहां परिदृश्यों में सजीव किया जा रहा है, वह इसे जीव मात्र से सद्भाव का साधना-स्थल बना रहा है। काश; इसे आपने स्वयं देखा होता तो इतना संक्षिप्त परिचय कदापि न आता। **नवनीत** जैसी ठोस, प्रतिष्ठित, स्तरीय पत्रिका के लिए यह नितांत आवश्यक है कि सामग्री अपने पूर्ण कलेवर में दी जाय, न कि अपूर्णता ी खटके। Jan - Nov.

अ. हिंदी साहित्य सम्मेलन की ी स्वर्ण जयंती का रिपोर्ताज वृत्तचित्र के समान हर किसी को साक्षात् करा देने में पर्याप्त सफल है। जो नहीं जा सके हैं, उन्हें भी कन्नौज-सम्मेलन की रसमय साहित्य सुरभि में सराबोर होने का अवसर हाथ आता है। बधाई स्वीकारें।

पत्रिका में साज-सज्जा प्रिंटिंग आदि सभी सर्वोत्तम है। मात्र भीतरी पृष्ठ 'पेपर' अच्छे लगाये जाने की प्रतीक्षा है।

—राजेश शुक्ल, भगवंतनगर, उन्नाव, उ. प्र.

○○○

नवनीत के नवंबर '८७ के अंक में हरीन्द्र दवे की धारावाहिक लेखमाला 'कथा राम की, व्यथा मानव की' विद्वतापूर्ण तथा जिज्ञासु चेतना से पूर्ण है। अमृतलाल बेगड़ की यात्रा-कथा वनवाला नर्मदा-शैलवाला नर्मदा' प्रवाह की सहजता तथा शब्द-चित्र उकेरने में सक्षम है। डा. रामनारायण सिंह 'मधुर' ने महादेवी

RT-0947

111299

१११२९९

पत्र-वृष्टि

राष्ट्रभाषा हिंदी की सर्वोच्च पत्रिका रूप में **नवनीत** का वास्तव में अपना अलग स्थान है । आपने दिसंबर ’८७ के अंक में देश का अपन आप में अनूठा साहित्यिक पर्यटन-स्थल के रूप से विख्यात ‘तुलसी उपवन’ का रंगीन चित्र द्वारा आवरण पृष्ठ देकर सराहनीय कार्य किया है। आपके द्वारा उसका अपूर्ण परिचय ‘राष्ट्रीय चेतना का अनूठा संगम : तुलसी उपवन’ मन को खटकता है । परिचय पूर्ण और विस्तार से होना चाहिये था ।

पत्रिका उत्तरोत्तर विकास-पथ पर अग्रसर हो, इसी कामना के साथ संपादक महोदय को पुनः बधाई । **—वली उल्लाह सिद्दीकी ‘तारेश’, जाजमऊ, कानपुर**

०००

शत-शत साधुवाद जो **नवनीत** दिसं- [illegible] ’८७ के मुखपृष्ठ को ‘तुलसी उपवन’ [illegible]र की एक मनोरम छबि से आपने [illegible] । अंतर्राष्ट्रीयता, विश्वबंधुत्व से भी अधिक विश्वनागरिकता की संस्कृति-विकास के जिस दुर्लंध्य कार्य को यहां परिदृश्यों में सजीव किया जा रहा है, वह इसे जीव मात्र से सद्भाव का साधना-स्थल बना रहा है । काश; इसे आपने स्वयं देखा होता तो इतना संक्षिप्त परिचय कदापि न आता । **नवनीत** जैसी ठोस, प्रतिष्ठित, स्तरीय पत्रिका के लिए यह नितांत आवश्यक है कि सामग्री अपने पूर्ण कलेवर में दी जाय, न कि अपूर्णता की कमी खटके । Jan — Nov.

हां, उ. प्र. हिंदी साहित्य सम्मेलन की मनायी गयी स्वर्ण जयंती का रिपोर्ताज वृत्तचित्र के समान हर किसी को साक्षात् करा देने में पर्याप्त सफल है । जो नहीं जा सके हैं, उन्हें भी कन्नौज-सम्मेलन की रसमय साहित्य सुरभि में सराबोर होने का अवसर हाथ आता है । बधाई स्वीकारें ।

पत्रिका में साज-सज्जा प्रिंटिंग आदि सभी सर्वोत्तम है। मात्र भीतरी पृष्ठ ‘पेपर’ अच्छे लगाये जाने की प्रतीक्षा है ।

—राजेश शुक्ल, भगवंतनगर, उन्नाव, उ. प्र.

०००

नवनीत के नवंबर ’८७ के अंक में हरीन्द्र दवे की धारावाहिक लेखमाला ‘कथा राम की, व्यथा मानव की’ विद्वता-पूर्ण तथा जिज्ञासु चेतना से पूर्ण है । अमृतलाल बेगड़ की यात्रा-कथा ‘बनवाला नर्मदा-शैलवाला नर्मदा’ प्रवाह की सहजता तथा शब्द-चित्र उकेरने में सक्षम है । डा. रामनारायण सिंह ‘मधुर’ ने महादेवी

नवनीत के नवंबर '८७ के अंक में प्रकाशित 'आचार्य सत्यव्रत : समर्पित व्यक्तित्व' लेख में उनके द्वारा लिखित पुस्तक 'बुढ़ापे से जवानी की ओर' के संबंध में अनेक पाठकों ने लेखिका श्रीमती कमला रत्नम् से पुस्तक-प्राप्ति का पता पूछा है। पुस्तक का हिंदी संस्करण समाप्त हो चुका है। वह केवल अंग्रेज़ी में निम्न पते पर सुलभ है : गोविन्दराम हासानंद, ४४०८ नयी सड़क, दिल्ली ११०००६। **—सं०**

वर्मा से अपनी बातचीत में उनके प्रति विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित की है। शंभुशरण द्विवेदी 'बंधु' की महादेवीजी के प्रति सुंदर कविता है। पं. माखनलाल चतुर्वेदी का 'महात्मा कबीर' पर सारगर्भित लेख है। बालकथा 'एक घर हरा भरा' (सुखबीर) प्रेरक है।

मधुकर खरे की बाल कविता भी सीख देने वाली है। कुंतल कुमार जैन की कविताएं मात्र उक्ति वैचित्र्य ही हैं, सार्थक नहीं। डा. श्यामसुंदर घोष ने राम-भक्त मुस्लिम साहित्यकारों पर सम्यक प्रकाश डाला है। उनकी कृतियों के उद्धरण देकर सांस्कृतिक एकता का भाव प्रकट किया है। **नवनीत** अपने संपादक की प्रेरणा से रोचक, विचारोत्तेजक तथो चरित्र निर्माण से समन्वित रचनाओं को देकर जनमानस में एक स्तुत्य छवि बनाकर उभर रहा है।

—आदर्श 'प्रहरी', उरई, उ. प्र.

०००

नवनीत का दीपावली विशेषांक बड़ा सुंदर निकला है। विभिन्न विषयों पर आपने जो रचनाएं उसमें संग्रहीत की हैं, वे न केवल पठनीय है, अपितु प्रेरणादायक भी है। दीपावली के ज्योति पर्व पर पाठकों को एक ज्ञानदीप प्रज्वलित करके आपने घर बैठे पहुंचा दिया है, इसके लिए हार्दिक बधाई। **—यशपाल जैन, नयी दिल्ली**

०००

नवनीत में हरीन्द्र दवे का निबंध- 'कथा राम की, व्यथा मानव की' निरंतर- पढ़ रहा हूं। राम कथा को मानवीय परिप्रेक्ष्य में देखने की यह अत्यंत ही मार्मिक दृष्टि है। इसी तरह अमृतलाल बेगड़ का संस्मरण—'वनबाला नर्मदा, शैलबाला नर्मदा' पढ़कर मुग्ध रह गया। ऐसा लगा जैसे मैं भी उनके साथ निमाड़ अंचल में प्रवहमान नर्मदा की यात्रा पर हूं। इतना भावपूर्ण और मार्मिक वर्णन है कि चित्र आंखों में तैरने लगता है।

आज जैसे व्यावसायिक पत्र-पत्रिकाओं की भीड़ में **नवनीत** की प्रत्येक रचना संपादक की परिष्कृत रुचि की परिचायक है। ऐसी पत्र-पत्रिकाएं अब हिंदी में दुर्लभ होती जा रही हैं। आप इसे विशुद्ध साहित्यिक और सांस्कृतिक ढंग से निभा रहे हैं, यह सबसे बड़ी उपलब्धि है। बधाइयां स्वीकारें। **—रामनारायण उपाध्याय,**

खंडवा, म. प्र.

०००

नवनीत का दीपावली विलेषांक इस

वार दीपावली के दिन ही प्राप्त हो गया। फिर दिन का पता ही न चला कि कब बीत गया। लगभग सभी रचनाएं अच्छी लगीं। तथापि अपने विषय से संबंधित लेख तो विशेष भाये। यथा 'प्राचीन भारत में वाणिज्य व्यापार', 'रामायण काल में हाइड्रोजन बम', 'धर्म ही मानवता की रक्षा करेगा', 'कब और कैसे प्रारंभ हुई लक्ष्मी-पूजा की परंपरा', 'लक्ष्मी की प्रतीक कौड़ियों के अनूठे संग्राहक श्रीराव', 'भारतीय संस्कृति में शक्ति-पूजा' आदि-आदि।

ऐसे अच्छे और आकर्षक विशेषांक के लिए आपको तथा समस्त **नवनीत** परिवार को मेरी हार्दिक बधाइयां।

–अ. ला. श्रीवास्तव, इलाहाबाद, उ. प्र.

ooo

नवनीत (अक्तूबर '८७) का दीपावली विशेषांक अपनी परंपरा के अनुरूप ज्ञान-वर्द्धक, विचारोत्तेजक और संग्रहणीय है। 'देश की शांति स्थापना में आपका क्या योगदान हो सकता है?' विषय पर सवा दो दर्जन शीर्षस्थ रचनाकारों के विचार देकर **नवनीत** ने सचमुच में शांति की स्थापना में एक श्रेष्ठ पत्रिका के नाते अपना भी योगदान देकर तृप्त किया है। सभी रचनाकार अपनी-अपनी दृष्टि से जीवन मूल्यों को ही रेखांकित करते हैं। आपके द्वारा चुने गये ये सवा दो दर्जन प्रणम्य रचनाकार भारत के उन हजारों रचनाकारों और लाखों-करोड़ों पाठकों का भी प्रतिनिधित्व करते हैं, जो निहित स्वार्थों और अवसरवादी चेहरा-बदल राजनीति से ऊपर उठकर राष्ट्रीय, सामाजिक तथा मानवीय धरातल पर अपने सोच-विचार को मनुष्य मात्र तक संप्रेषित करना चाहते हैं।

–विश्वभावन देवलिया,
जबलपुर, म. प्र.

नवनीत के दीपावली-विशेषांक '८७ में श्री सत्यकाम विद्यालंकार के लेख 'स्वास्थ्य रक्षा के लिए प्राकृतिक जीवन' पर अनेक पाठकों ने लेखक से इस चिकित्सा पर व्यावहारिक निर्देश देते हुए विस्तार से लेख लिखने की मांग की है। अतएव हम पाठकों के हितार्थ आगामी फरवरी अंक में उनका तत्संबंधी लेख छाप रहे हैं। **–सं०**

---

ooo

मैं **नवनीत** का बहुत पुराना पाठक नहीं हूं, किंतु पिछले कुछ महीनों से उसे नियमित पढ़ रहा हूं। **नवनीत** का दीपावली अंक हाथ में आते ही हृदय प्रफुल्लित हो उठा और पूरी पत्रिका पढ़ डाली। अन्य सभी पत्रिकाओं में **नवनीत** का यह अंक सर्वश्रेष्ठ लगा। यह अंक केवल पठनीय ही नहीं, वरन संग्रहणीय भी है।

'देश की शांति स्थापना में आपका क्या योगदान हो सकता है?' परिचर्चा के अंतर्गत अनेक विद्वानों के महत्वपूर्ण विचार पढ़ने को मिले, जो कि अन्य पत्रिकाओं से असंभव है। उसी प्रकार माननीय जे. आर. जयवर्धनेजी का 'भारत से मैंने क्या सीखा'

(शेषांश पृष्ठ १२९ पर)

नवनीत

संस्थापक कन्हैयालाल मुंशी — श्रीगोपाल नेवटिया
भारती : स्थापना १९५६ — नवनीत : स्थापना १९५२
संपादक • गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ३७, अंक १ — जनवरी १९८८

पत्र-वृष्टि १
नये वर्ष का नया प्रभात — प्रस्तोता : देवीसहाय शर्मा ६
नये साल की नयी सुबह (कविता) — किशोरीरमण टंडन ७
मुंशीजी और उनका प्रेरक संदेश — सु. रामकृष्णन् ८
अणुव्रत की महिमा — डा. गोपालप्रसाद 'वंशी' १९
एक बहुआयामी जीवन के अनेक आयाम २०
जीवन की परीक्षा — सुभाषचन्द्र बोस २७
वार्षिक भविष्यफल : १९८८ — पंडित वी. के. तिवारी २९
गीत — स्वप्निल तिवारी ३२
प्रार्थना ३३
छोटी बात, बड़ी सीख — संतोष ३४
मुंशीवाणी ३६
तीन ग़ज़लें — कृपाशंकर 'अचूक' ५५
श्रीकृष्ण और भगवद्गीता — डा. कन्हैयालाल मुंशी ५६
महीयसी महादेवी का अंतिम संदेश — जगदीश गुप्त ६०
अनोखे नववर्ष देश-विदेश में — जितेंद्रशंकर बजाड़ ६१
नववर्ष (कविता) — डा. सुरेंद्रबहादुर सिंह ६४
श्री क. मा. मुंशी का जीवन-क्रम ६५

श्रीलंका में चुका रहा है भारत आजादी का मोल	रामपाल सिंह	७०
रोटी और हाथ के बीच (कविता)	आशाराम त्रिपाठी	७५
साधारण वेश : असाधारण व्यक्तित्व	के. आर. चतुर्वेदी	७६
मुक्तक	अंजलि पांडेय	७९
ग्रंथलोक.	... ...	८०
श्रीकृष्ण व रासमालाओं का चित्रण	रवींद्र डी. पण्ड्या	८७
नया साल : नया जाल (उर्दू हास्य)	एम. हुसेन	९१
कनउजी लोकगीतों की भाव-संपदा	डा. महेंद्रप्रताप सिंह	९२
अप्रत्याशित परिणामों और चमत्कारिक प्रदर्शनों की कहानी	हरिमोहन शर्मा	९७
उसका बेटा (हिंदी कहानी)	धनेश्वरप्रसाद	१०८
अगर इनाम मिल जाये तो (व्यंग्य लेख)	विश्वनाथ मिश्र	११७
विवशता (कविता)	कु. लता अवस्थी 'अमिता'	११९
दूसरा मन (कहानी)	कु. शैलजा मीतू	१२०
कथा राम की, व्यथा मानव की	हरीन्द्र दवे	१२५
नया साल (कविता)	बालकृष्ण गर्ग	१२८
नववर्ष-बधाई	बालकवि बलराम जैनपुरी	१३१
कनाडा का अंतर्राष्ट्रीय रामायण-सम्मेलन	लल्लनप्रसाद व्यास	१३२
नववर्ष पर बच्चों द्वारा वृक्षारोपण	कमल सौगानी	१४१
महान पुरुष की महान बातें	... ...	१४३

आवरण-चित्र : मुंशीजी

चित्र-सज्जा : ओके, शेणै, चव्हाण, राणा, अशोक श्रीश्रीमाल।

कार्यालय : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई-७ **फोन :** ८११४४६२

चित्र : विनोद दुबे

नये वर्ष का नया प्रभात

निजांशुकावृतां प्राचीं चुम्बत्यर्केऽतिरागिणीम् ।
लज्जयेव ययौ क्वापि श्यामामीलित लोचना ।।

अपने उत्तरीय में आवेष्टित अतिरागवती पूर्व दिशा को जैसे ही भास्कर ने चूमा, वैसे ही अपने साजन की आकांक्षिणी सजनी की लज्जा की तरह रजनी तिरोहित हो गयी है।

○○○

निसर्ग सौरभोद्भ्रान्त भृङ्गसङ्गीत शालिनी ।
उदिते वासराधीशे स्मेराजनि सरोजिनी ।।

दिवस-पति सूर्य के उदित होते ही, नैसर्गिक सौरभ से मस्त भ्रमर के संगीत में रुचि रखनेवाली कमलिनी प्रफुल्लित हो गयी है ।

○○○

पुरुहूत दिगङ्गना प्रसूता रविमुद्दामसुतं चिरादुपेतम् ।
अलिनो नलिनोदराद्विमुक्ताः प्रियबाहुद्वय बन्धनान्नवोढा ।।

दिशारूपी अंगनाओं द्वारा प्रसूत चिरकाल से प्राप्त दिव्य पुत्र सूर्य की शोभा देखते ही बनती है—जैसे कमलिनी के उदर से मुक्त भ्रमर व प्रियतम के बाहुपाश से छूटी हुई नवोढ़ा ।

○○○

आगत्य सम्प्रति वियोगविसंस्थुलाङ्गीमम्भोजिनीं क्वचिदपि क्षपित त्रियामः ।
एतां प्रसादयति पश्य जनैः प्रभाते तन्वङ्गि पादपतनेन सहस्र रश्मिः ।।

अन्य द्वीप में रात बिताने से अपने वियोग में कुम्हलाई हुई कमलिनी को सहस्ररश्मि भास्कर अपनी किरणों के स्पर्श से उसी तरह प्रसन्न कर रहे हैं—जिस तरह अन्य नायिका के पास रात बिताने वाला नायक अपनी प्रियतमा को उसके चरणों में गिरकर मनाता है ।

○○○

अंतर्हिते शशिनि सैव कुमुद्वतीयं दृष्टिं न नन्दयति संस्मरणीय शोभा ।
इष्टप्रवासजनितान्यबला जनानां दुःखानि नूनमतिमात्र दुरुद्वहानि ।।

प्रभात समय चंद्रमा के अस्त होते ही नयनरम्या कुमुदिनी दृष्टि के आकर्षित करने में असमर्थ हो रही है । निश्चय ही अपने प्रियतम के प्रयास से उत्पन्न दुख अबलाजनों के लिए अतीव कष्टकारी होते हैं ।

नये साल की नयी सुबह

नयी धरा पर नयी सुबह की नयी किरण उतरी
रथ पर हो अरूढ़ आ रहा पूरब का प्रहरी
मिटी कालिमा
बढ़ी लालिमा
उषा वधूटी ने सिंदूर से अपनी मांग भरी
कोयल बोली
पुरवा डोली
अंगड़ाई फसलों की रानी ओढ़ हरी चुनरी
कंधे पर हल
धरे कृषक दल
चरवाहे मेड़ों पर गाते फागुन औ कजरी

—किशोरीरमण टंडन
४ पत्रकार कालोनी, बांद्रा (पूर्व), बंबई-४०००५१

आपाटलैः प्रथमांकुरितैमयूखैरह्लांपतिः प्रथमशैलविहारिणीनाम् ।
सोऽयं करोति सुरपुंगव सुन्दरीणां कर्णेषुकल्पतरू पल्लवभंगलक्ष्मीम् ।।

कैसा सुहाना प्रभात है । सूर्य अपनी रक्तिमवर्णा प्रथम किरणों से शैल शिखरों पर विहार करती हुई देवांगनाओं के कानों में पहने हुए कल्पतरु पल्लवों की शोभा को परास्त कर रहे हैं ।

०००

यात्येकतोऽस्तशिखरं पतिरौषधीनामाविष्कृतोऽरुण पुरःसर एकतोऽर्कः ।
तेजोद्वयस्य युगपद्व्यसनोदयाभ्यां लोको नियम्यत इवैष दशान्तरेषु ।।

एक ओर औषधियों के स्वामी चंद्रमा अस्ताचल को जा रहे हैं तो दूसरी ओर अपने सारथि अरुण को आगे रखकर भगवान भास्कर उदित हो रहे हैं । इन दो तेज समूहों का एक साथ अस्त और उदय होना लोकों के लिए शिक्षा देता है कि अस्त होने वाले का उदय और उदय होने वाले का अस्त होना अनिवार्य प्राकृतिक नियम है ।

[प्रस्तुति : देवीसहाय शर्मा]

□

मुंशी जन्म - शताब्दी के अवसर पर विशेष

मुंशीजी और उनका प्रेरक संदेश

□ सु. रामकृष्णन्

डॉक्टर राधाकृष्णन् ने एक बार भारतीय विद्या भवन को, जिस व्यक्ति के जीवन की महानतम उपलब्धि तथा स्मृतिस्तंभ बताया था, उसके बारे में कोई यह कल्पना भी नहीं कर सकता था कि वह जून, १९०७ में एक अनुभवहीन, मित्रहीन तथा धनविहीन नौजवान के रूप में गुजरात से बंबई आया होगा ।

आज मुंशी और भवन, दोनों समानार्थक बन गये हैं । भवन, वास्तव में मुंशीजी की लंबी छाया ही है, और आधुनिक भारत के उस पुनर्जागरण युग का एक जीवंत प्रतीक है, जिसका सूत्रपात उन्नीसवीं सदी में हुआ था ।

पश्चिम के पुनर्जागरण युग, जिसके द्वारा पाश्चात्य सांस्कृतिक व बौद्धिक पुनर्जागरण चौदहवीं सदी में आरंभ हुआ, के आने पर पश्चिम में 'अंधा युग' समाप्त हुआ था । इसकी समाप्ति पर पश्चिम ने अपनी पुरानी बिरासत–ग्रीक विरासत–को दुबारा अपनाया ।

इधर, भारत ने भी जो प्राचीन काल में 'विश्व-सभ्यता का पालना' कहा जाता था, अपने पुनर्जागरण-काल में अपनी उसी प्राचीन संस्कृति को पुनः अपनाया, एक विरासत के रूप में ।

०००

पुनर्जागरण की धारणा भारतीय मानस में बहुत गहरे में अवस्थित है । वह भारत राष्ट्र के 'सामूहिक अवचेतन' की गहराइयों में छिपी है । भारत का 'अंधा युग' तभी आरंभ हुआ, जब वह अपना अस्तित्व-बोध खोकर अज्ञान और दासता के जाल में फँस गया, और सदियों तक फँसा रहा ।

गीता में श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि वे उसे कोई नया ज्ञान नहीं दे रहे हैं, मात्र उसी प्राचीनतम परम ज्ञान का पुनः स्मरण करा रहे हैं, जिसे बाद में लोगों ने भुला दिया था ।

गीता तथा दुर्गा सप्तशती दोनों में घोषणा की गयी है कि धर्म को पुनर्स्थापित करने के उद्देश्य से ('धर्म संस्थापनार्थ'), भगवान बार बार-पृथ्वी पर जन्म लेते हैं । जब-जब धर्म का विनाश होता है, और पृथ्वी पर पाप बढ़ता है, तब-तब ऐसे अवतार प्रकट होते हैं ।

जिस प्रकार अँधेरी रात के बाद उजला दिन अवश्य आता है, उसी प्रकार अंधे युग की समाप्ति के बाद उजला युग भी अनिवार्य रूप से आता ही है ।

आधुनिक भारत के पुनर्जागरण युग में राजा राममोहन राय, श्री रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद, महर्षि दयानंद सरस्वती, महर्षि रमण, महायोगी श्री अरविंद, महात्मा गाँधी जैसी विभूतियाँ सामने आयीं। इनमें कुलपति मुंशी का, जिन्होंने एक बार कहा था कि वे 'भारतीय पुनर्जागरण के शक्तिशाली जलप्रवाह के कारण समुद्र-तट पर फेंकी गयी एक साधारण सीप के समान हैं', नाम भी इन दिग्गजों के साथ लिया जा सकता है।

* * *

भारतीय पुनर्जागरण के राजनैतिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, धार्मिक व आध्यात्मिक आदि पहलुओं को मुंशीजी ने स्पष्ट रूप से देखा था, और वे उनसे अत्यधिक सम्मोहित तथा प्रभावित भी हुए थे। किंतु, उन्हें यह देखकर दुख होता था कि इन पहलुओं को जीवन में अभिव्यक्त करने की भारतीयों की शक्ति काफ़ी क्षीण हो गयी है।

वे इसका दोष उस दीर्घकालीन दासता को देते थे, जिससे भारत ग्रस्त था। उन्होंने महसूस किया कि देश जब तक आज़ाद नहीं होगा, तब तक भारत के लोग भारतीय पुनर्जागरण को नये-नये आयाम प्रदान करने के बारे में सोच भी नहीं सकेंगे। अतः वे पूरे जोर-शोर से देश के स्वाधीनता-संग्राम से संलग्न हुए, और कई बार जेल भी गये।

इसके साथ-साथ, उन्होंने उस सामाजिक क्रांति से भी अपने को जोड़ा, जिसका उद्देश्य नारी-मुक्ति तथा अछूतों का उद्धार करना था। अपने देशवासियों को उनकी प्राचीन संस्कृति के उच्चादर्शों का बोध कराने वाली शिक्षण-संस्थाओं को, जिनमें भारतीय विद्या भवन प्रमुख है, को भी

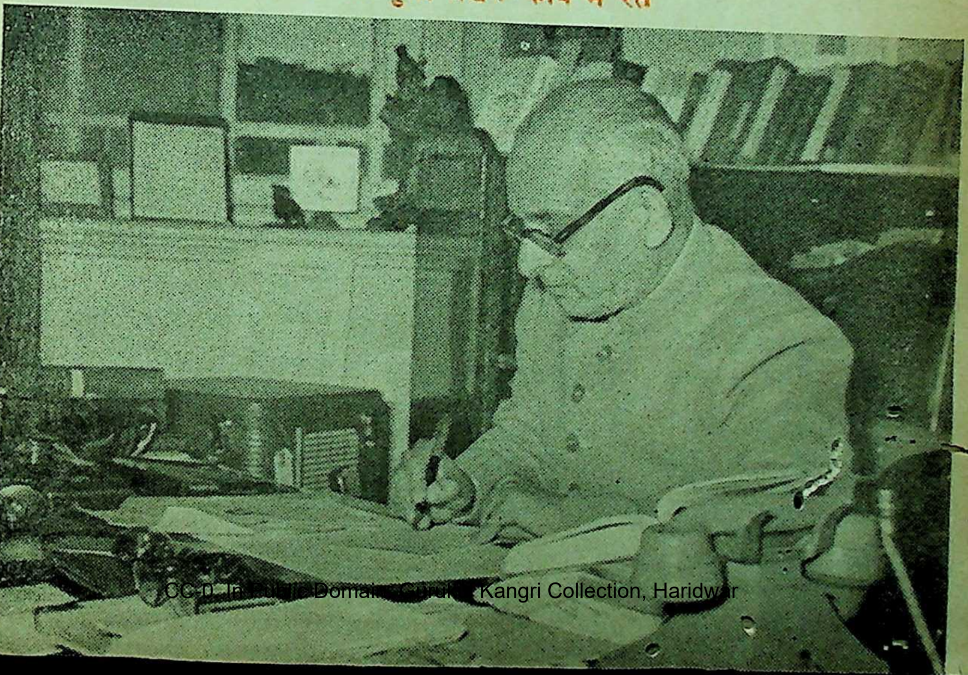

श्री क. मा. मुंशी लेखन-कार्य में रत

उन्होंने जन्म दिया ।

भारतीय संस्कृति को सशक्त तथा सप्राण बनाने के लिए वे इन बातों के पालन को महत्वपूर्ण मानते थे ।

(१) भारतीयों में 'परलोक में सुख मिलेगा' तथा 'भाग्यवाद' की धारणाएँ समाप्त हों और वे जीवन में रस लेना सीखें ।

(२) उन कर्मकांडों और संस्कारों की समाप्ति होनी चाहिये, जो व्यक्ति की सर्जनात्मक शक्ति को अवरुद्ध करते हों । उनके स्थान पर ऐसे कर्मकांड और संस्कारों को लाना चाहिये, जो जीवन के प्रति उसके दृष्टिकोण को व्यापक, स्वस्थ और सर्जनात्मक करें ।

(३) नयी पीढ़ी को भारतीय संस्कृति के मूल सिद्धांतों व आदर्शों से अवगत कराया जाये, ताकि वे इसके शाश्वत जीवन-मूल्यों को ग्रहण कर, उन्हें अपने जीवन में उतार सकें ।

पचास वर्ष पूर्व, १९३७ में, उन्होंने भारतीय विद्या भवन की स्थापना की कल्पना की थी । १९३८ में उनकी इस कल्पना ने साकार होना आरंभ किया । भवन का उद्देश्य भारतीय विद्या का प्रचार-प्रसार करना था । वे भारतीय विद्या का आधार सत्यं, शिवं, सुंदरम्, इन तीनों गुणों से युक्त धर्म को मानते थे ।

हमारा धर्म सदियों पुरानी प्रज्ञा का छना-छनाया व संघठित रूप है । प्रदर्शन से परे, वह विश्व के सभी धर्मों का सार-रूप है, और इस कारण उनमें सर्वोत्कृष्ट है । इस कारण, भारतीय विद्या भवन सच्चे अर्थों में एक धर्म-निरपेक्ष संस्था है; वस्तुत: सर्व-धर्म-समभाव के सिद्धांतों का सर्वाधिक निरपेक्ष व विध्यात्मक प्रतीक ।

भवन कट्टर मूलतत्ववादी संस्था नहीं है, वरन् भारतीय संस्कृति के मूल तत्त्वों को भारत के आधुनिक जीवन-मूल्यों का आधार बनाने की इच्छुक संस्था है ।

० ० ०

सृजन-क्षम कल्पना के धनी, मुंशीजी ने अपनी आशाओं व आकांक्षाओं को अपनी साहित्यिक कृतियों में साकार किया है । उनमें सर्वाधिक स्मरणीय है—सात खंडों में प्रकाशित 'कृष्णावतार' ।

भारतीय पुनर्जागरण के मिशन को एक नया आयाम भारत के बुद्धिजीवियों को प्रदान करने के उद्देश्य से उन्होंने 'ग्रंथ-विश्वविद्यालय' नामक एक योजना की कल्पना कर उसे भी साकार किया । इस ग्रंथमाला में प्रकाशित होने वाली सर्वप्रथम पुस्तक थी—श्री राजगोपालाचारी द्वारा प्रस्तुत 'महाभारत', जिसके बारे में सदियों पूर्व कहा गया था कि 'जो महाभारत में नहीं है, वह कहीं नहीं है ।' महाभारत हमारे देश का ही नहीं, विश्व का एक ऐसा अन्यतम ग्रंथ है, जो नैतिकता, दर्शन व इतिहास की सीखों से भरा है । वह समग्र जीवन का ग्रंथ है ।

'महाभारत' के बाद 'रामायण' का प्रकाशन हुआ, और उसके बाद तो उच्च कोटि के ग्रंथों के प्रकाशन का ताँता ही

लग गया।

एक बार मुंशीजी ने कहा था कि उनके तपों की पराकाष्ठा 'ईश्वर प्राणिधान' के दृष्टिकोण को, जिसके अनुसार मानव भगवान के प्रति पूर्णतया समर्पित होकर उसकी इच्छानुसार जीवन व्यतीत करता है, सतत विकसित करते रहना था। सफलता व असफलता प्रशंसा व निंदा के प्रति अपनी आत्यंतिक संवेदनशीलता से ऊपर उठकर, मुंशीजी ने इस चरम बोध की अनुभूति की थी कि 'सब कर्मों तथा उनके परिणामों का निश्चय वही एक चरम सत्ता करती है, और मानव उसके हाथों का एक खिलौना और साधन मात्र है।'

०००

इसे मैं परमपिता की अनुकंपा ही मानता हूँ कि मुझे १९४६ में उनके सान्निध्य में आने का स्वर्णिम अवसर मिला। यह सान्निध्य लगभग २५ वर्षों तक ८ फरवरी, १९७१ में उनके निधन तक बना रहा। उनके सामीप्य का लाभ मुझे सदा मिलता रहे, यह निश्चय मैंने उनके निकट आने पर ही कर लिया था।

मुंशीजी के सान्निध्य में आने पर मुझे जो असंख्य व्यक्तिगत अनुभव हुए, जिनमें से कुछ का वर्णन मैं आगे कर रहा हूँ, ताकि लोगों को उनके समूचे, बहुआयामी व्यक्तित्व की थोड़ी झाँकी मिल सके। इस झाँकी से एक बात तो निर्विवाद रूप से स्पष्ट हो ही जायेगी, और वह यह कि वे सदा घृणा, विद्वेष तथा संकीर्णता से मुक्त रहे। इसी कारण, मैं उनके सत्संग-रूपी

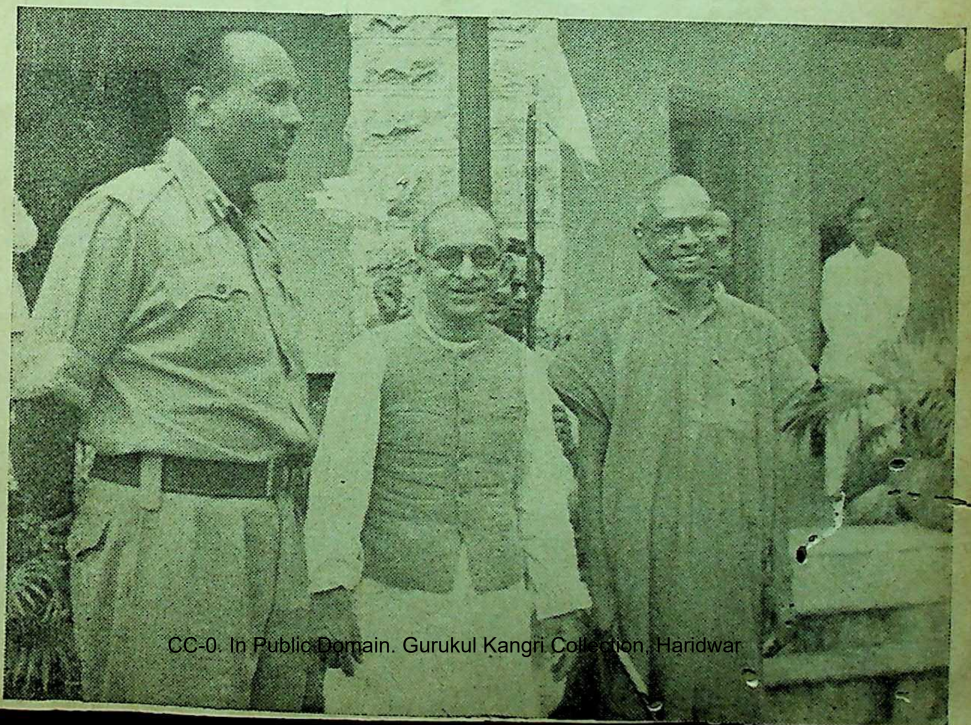

श्री मुंशीजी हैदराबाद कार्यवाही के बाद ले. जनरल मुखर्जी और स्वामी रामतीर्थ के साथ

हरियाली के लिए उत्सुक रहता था। उनसे भेंटों का सुयोग मुझे मरुभूमि में हरियाली के तुल्य सम्मोहक और पोषक जान पड़ता था।

भवन के मुंबादेवी (बंबई) स्थित संस्कृत महाविद्यालय के पहले प्रिंसिपल एक ख्यातनामा तथा गतिशील महामहोपाध्याय थे। उनके पांडित्य को स्वीकार करते हुए भी, यह अवश्य कहा जायेगा कि उनकी वाणी में कभी-कभी संयम नहीं रहता था, वे हमेशा सबसे झगड़ते रहते थे, और शिक्षा की परिधि का अतिक्रमण कर, राजनीति में भी दखल करने के प्रयासों में लगे रहते थे। भवन से अलग हो जाने पर, वे भवन तथा मुंशीजी की निंदा करने लगे।

बाद में उनके व्यक्तिगत जीवन में अनेकानेक समस्याएँ उत्पन्न हुईं, और एक दिन मैंने पाया कि वे मेरे घर आकर मुझसे पूछ रहे हैं कि क्या मुंशीजी उनसे मिलने की कृपा करके उनकी एक निजी समस्या को सुलझाने में सहायक हो सकते हैं। मैं चूंकि मुंशीजी के दयालु तथा उदार स्वभाव से भली भाँति परिचित था, इसलिए मुझे महामहोपाध्याय से यह कहने में एक क्षण को भी सोचना नहीं पड़ा कि मुंशीजी उनसे मिलेंगे ही नहीं, उनकी सहायता भी करेंगे।

०००

महामहोपाध्याय महोदय ने जैसे ही मुंशीजी के कक्ष में प्रवेश किया, मुंशीजी ने आगे बढ़कर उन्हें अपने गले लगा लिया, और बातचीत के दौरान एक बार भी अतीत की अप्रिय तथा कटु घटनाओं का उल्लेख नहीं किया।

महामहोपाध्यायजी की समस्या यह थी कि वे अपने एक शोध-प्रबंध के, जिसे उन्होंने बड़े श्रम से लिखा था, कोई अच्छा खरीदार चाहते थे। उन्होंने इस शोध-प्रबंध का उल्लेख किया ही था कि मुंशीजी भाँप गये कि महामहोपाध्यायजी क्या चाहते हैं, और उन्होंने वही कहा और किया जो महामहोपाध्यायजी उनसे कहने और करवाने आये थे।

मुंशीजी उन दिनों उत्तर प्रदेश के राज्यपाल थे। उन्होंने महामहोपाध्यायजी से कहा, 'मैं उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री को एक पत्र लिखकर उनसे सिफारिश करूँगा कि आपके शोध-प्रबंध को प्रकाशनार्थ खरीद लें।' उनका अव्यक्त निवेदन मुंशीजी उत्साहपूर्वक स्वीकार कर लेंगे, यह आशा उन्होंने सपने में भी न की होगी। वे चिंतित मुद्रा में आये थे और मुस्कराते हुए वापस लौटे।

०००

ऐसी ही एक घटना अंधेरी स्थित भवन के महाविद्यालय के पहले प्रिंसिपल के साथ भी घटी थी। इन प्रिंसिपल महोदय की पत्नी भी महाविद्यालय में पढ़ाती थीं।

दुर्भाग्य से उन्हें अज्ञात कारणों से अपना पद छोड़ना पड़ा। पदमुक्त होते ही उन्होंने समाचारपत्र में मुंशीजी तथा भवन के विरुद्ध लेख लिखकर, विष-वमन

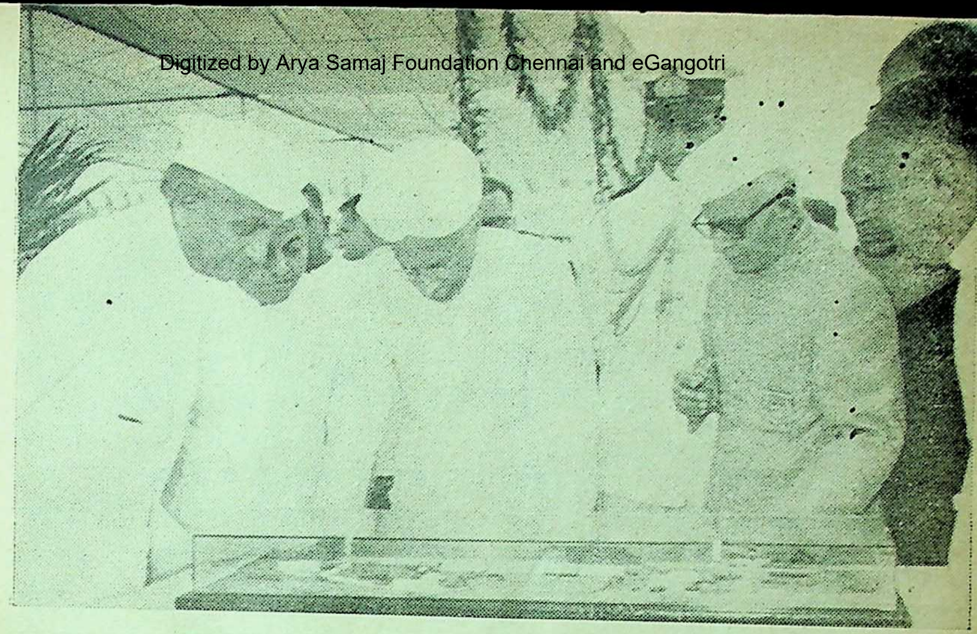

डॉ. मुंशी तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन् के साथ भवन के पुस्तकालय में दुर्लभ पांडुलिपियों का अवलोकन करते हुए। साथ में गुजरात के तत्कालीन मुख्यमंत्री डॉ. जीवराज मेहता।

करना आरंभ कर दिया । मुंशीजी इस निंदा-अभियान के दौरान बिलकुल मौन रहे, फिर उन्होंने कभी प्रिंसिपल महोदय के आरोपों का उत्तर देने की कोशिश नहीं की।

तीन साल बाद, यही बदमिजाज़ प्रिंसिपल महोदय, काफी हिचकते हुए मुंशीजी से मिले । वे चाहते थे कि मुंशीजी उनके पक्ष में एक पत्र राजस्थान के मुख्य मंत्री को लिख दें कि वे राजस्थान में एक रिक्त स्थान के लिये सर्वाधिक योग्य उम्मीदवार हैं । मुंशीजी ने सहर्ष एक सिफ़ारिशी पत्र राजस्थान के मुख्य मंत्री के नाम लिखकर उन्हें दे दिया ।

०००

एक बार मुंशीजी बुरी तरह बीमार पड़े । तब उन्होंने गीता के उस श्लोक का बार-बार स्मरण किया, जिसमें कहा गया है कि शरीर आत्मा रूपी सूक्ष्म देह पर पड़े वस्त्रों से अधिक नहीं है, जिन्हें कभी भी फेंका या बदला जा सकता है । इस श्लोक पर मनन करते समय उन्हें यह बोध भी हुआ कि आदमी का जीवन पृथ्वी पर एक संक्षिप्त पड़ाव के समान ही है, और हर व्यक्ति पूर्णतया एकाकी है ।

इन्हीं दिनों, एक दिन उन्होंने मुझे बुलाकर मेरे हाथ में कागज का एक पुर्जा थमा दिया । पुर्जे में जो कुछ लिखा था, वह उनकी वसीयत का एक भाग था । उन्होंने लिखा था, 'मेरी वसीयत के अनुसार कार्यवाही करने का अवसर तब आयेगा, जब मेरी आत्मा मेरे वर्तमान जीवन रूपी वस्त्रों का परित्याग कर चुकी होगी ।'

सन १९३२ तक मुंशीजी ने भविष्य में रायल्टियों से होनेवाली सारी आय तथा संपत्ति भवन के नाम कर दी थी। बाद में उन्हें लगा कि उन्होंने भवन के कर्मचारियों की निष्ठा और भवन के लक्ष्यों को उनकी समर्पित-भावना की प्रशंसा शब्दों में ही की है, मगर मूर्तरूप से उनके लिए अधिक कुछ नहीं किया है।

१९६२ में उन्होंने माथेरान (बंबई के निकट स्थित एक हिल-स्टेशन) स्थित 'नैमिषारण्य' नामक अपनी दो रिहायशी इमारतों को भवन के कर्मचारियों के उपयोगार्थ भवन को दे दिया। भवन के कर्मचारी गर्मियों में वहां जाकर कुछ दिन तक हिल-स्टेशन की शीलता का आनंद लेते हैं।

○○○

१९६२ में भवन की रजत-जयंती मनायी गयी। इस अवसर पर आयोजित एक सम्मेलन में भाग लेने के लिये जिन दिग्गजों को आमंत्रित किया गया था, उनमें राजाजी तथा डॉ. राधाकृष्णन् का भी समावेश था। सम्मेलन में राजाजी ने, जो स्वयं सादा जीवन जीने के लिये आजीवन विख्यात रहे, मुंशीजी को राजयोगी घोषित किया। डॉ. राधाकृष्णन् ने भी इस मत को मूक सहमति प्रदान की। राजाजी के इस मत में थोड़ा व्यंग्य भी था, कारण मुंशीजी मन से भले ही बीत-राग हो गये थे, तथापि उनके जीने का ढंग शाहाना था।

मुंशीजी ने राजाजी को देने के लिए एक कागज मुझे दिया था। राजाजी ने उसे पढ़कर, कहा, 'मुंशी एक ऐसे व्यक्ति हैं, जो ईशावास्योपनिषद् के 'तेन त्यक्तेन भुंजी था...' वाले कथन को चरितार्थ करते हैं।' यह कहकर उन्होंने वह कागज़ डॉ. राधाकृष्णन् की ओर बढ़ा दिया।

डॉक्टर राधाकृष्णन् ने उस कागज को पढ़कर कहा, 'मुझे दार्शनिक कहा जाता है, लेकिन मुंशीजी ने जो साहसिक घोषणा की है, उसे करने का साहस मैं भी नहीं कर सकता था।' इस प्रकार डॉ. राधाकृष्णन् ने विनम्रतापूर्वक अपने को लघुतर दिखाते हुए, मुंशीजी की प्रशंसा की।

यहाँ, मैं यह बता दूं कि मुंशीजी ने इस कागज पर अपने वसीयतनामे के कुछ अंश लिखे थे और अपने अंतिम संस्कार के बारे में लिखा था, 'मेरा अंतिम संस्कार वैदिक विधि से ही किया जाये, और उस अवसर पर मेरे बारे में भाषणादि न हों।' मुंशीजी के अंतिम संस्कार के समय उनके इन आदेशों का अक्षरशः पालन किया गया।

मुंशीजी ने अपने वसीयतनामे में अपनी यह इच्छा भी व्यक्त की थी कि उनके लिये कभी भी रक्तदान की व्यवस्था न की जाये। उन्होंने मुझे यह जिम्मेवारी सौंपी थी कि यदि कोई डॉक्टर अनजाने में ऐसी व्यवस्था करना चाहे, तो मैं उसे उनका वसीयतनामा दिखा दूं। सौभाग्य से, ऐसा अवसर आया ही नहीं।

यद्यपि उन्होंने अपनी सभी कृतियों,

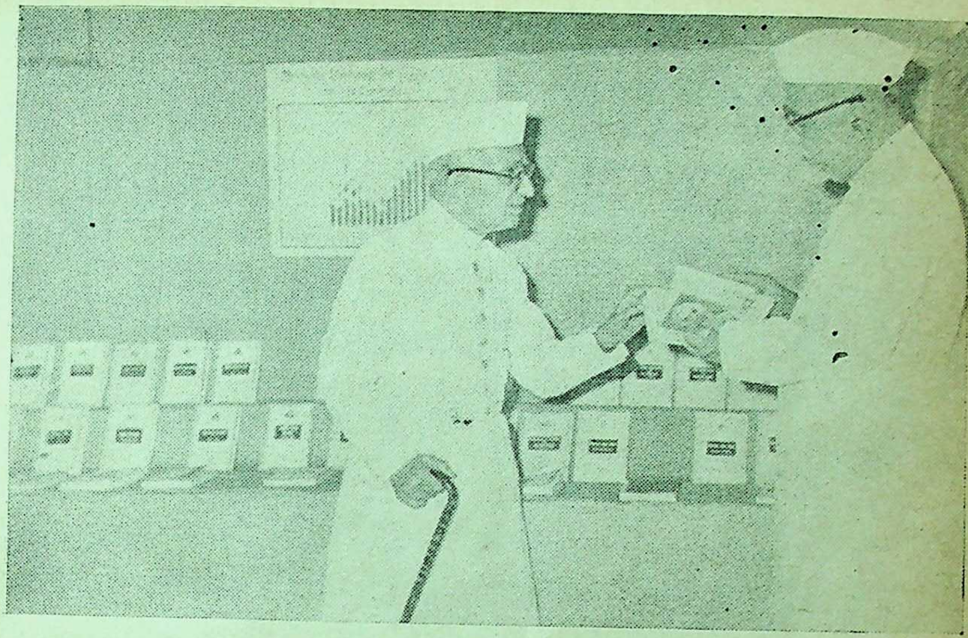

श्री मुंशीजी डॉ. जाकिर हुसेन को भवन के प्रकाशनों के बारे में बताते हुए

और उनके अनुवादों की रायल्टियों की राशि की वसीयत भवन के नाम कर दी थी, तथापि जब भी उनकी कोई नयी पुस्तक प्रकाशित होती, तो वे मुझे बुलाकर उस पुस्तक की रायल्टी की राशि की वसीयत नये सिरे से भवन के नाम करते। अपने गुरु महात्मा गाँधी की भाँति उनका भी विश्वास था कि मंजिल तक पहुँचने के लिये एक वक्त में एक क़दम ही क़ाफ़ी होता है। काम छोटा हो या बड़ा, उसे हाथ में लेते समय वे इस बात को सदा याद रखते थे।

० ० ०

इस संबंध में मुझे कुछ और घटनाएँ, याद आ रही हैं।

१९३८ में जब उन्होंने भवन की स्थापना का संकल्प किया था, तब पहले कदम के रूप में उनके सामने एक वर्ष तक २५० रुपये प्रति माह की रक़म के देने के वायदे थे—सर्वश्री रामेश्वरदासजी बिरला, प्राणलाल देवकरण नानजी और श्री सी. वी. मेहता के। उन्होंने स्वयं भी एक वर्ष तक इस फंड के लिये २५० रु० प्रति माह देने का वायदा किया था। भवन के संस्थापक सदस्यों में से एक श्री कश्मीरा सिंह ने, जो खालसा कॉलेज, माटुंगा (बंबई) के प्रिंसिपल थे, एक कमरा निःशुल्क उपयोग के लिये दिया था।

इसी प्रकार, जब मुंशीजी ने ११ खंडों वाले ग्रंथ 'भारतीयों का इतिहास व

संस्कृति' लिखवाना आरंभ किया था, तब सिर्फ श्री घनश्यामदासजी बिरला का डेढ़ लाख रुपये अनुदान-स्वरूप देने का आश्वासन ही उनके पास था। इस ग्रंथ के सब खंडों को पूरा करवाने में उन्हें ३२ वर्ष लगे। १०० विद्वानों ने उसका लेखन-कार्य पूरा किया, और सब खंडों के प्रकाशन पर ३२ लाख रुपये खर्च आया।

जब इस ग्रंथमाला के प्रथम ग्रंथ 'वैदिक युग' के प्रकाशन में उसके मूल प्रकाशक एलेन एंड अन्विन (लंदन) को द्वितीय विश्वयुद्ध के छिड़ जाने के कारण आठ वर्ष लगे, तो उन्होंने निश्चय किया कि भवन के पास स्वयं का एक प्रेस होना चाहिये।

इस प्रेस को खोलने के लिये उन्होंने पहला क़दम उठाया बैंकों को अपनी ओर से कई लाख रुपयों की गारंटी देकर। उन दिनों बैंकों को लाखों की राशि की गारंटी देना हरेक के बलबूते की बात नहीं थी।

०००

लेकिन, इसी पहले क़दम की परिणति 'द एसोशियेटेड एडवरटाइजर्स एंड प्रिंटर्स' के रूप में हुई। इसी विशाल प्रेस ने भवन द्वारा प्रकाशित १०० से अधिक पुस्तकों का प्रकाशन किया है, और यहीं से भवन के अंग्रेजी मुखपत्र 'भवन्स जर्नल' का प्रकाशन होता है।

मुझे अच्छी तरह याद है, बैंक के गिरवी संबंधी कागजों पर हस्ताक्षर करते समय, मुंशीजी ने कहा था, 'यदि भवन डूबेगा, तो मुंशी भी डूबने से नहीं बचेगा।' लेकिन, ऐसा नहीं हुआ, इसका कारण यही था कि उन्होंने इस दिशा में पहला क़दम पूरी निष्ठा और विश्वास के साथ उठाया था।

भवन की बंबई स्थित भव्य इमारत, जिसका उद्घाटन १९४९ में राजाजी ने किया था, के निर्माण की मंजिल की यात्रा जिस 'पहले क़दम' से आरंभ हुई थी, वह थी २०,००० रु० की साधारण राशि, जो अनेक छोटे दानों की राशि से मिलकर बनी थी।

और भवन द्वारा प्रकाशित पुस्तकों के लक्ष्य की ओर जाने वाले मार्ग पर, मुंशीजी ने पहला क़दम उठाया श्री बृजमोहनजी बिरला के माध्यम से ओरियंट पेपर मिल्स से पहली पांच पुस्तकों के प्रत्येक के ३००० प्रतियों के संस्करण के मुद्रण के लिये पर्याप्त कागज प्राप्त करके।

०००

भवन के साथ मुंशीजी का अत्यधिक लगाव होने के कारण, उनके जीवन-काल में ही उसका कार्य-विस्तार काफ़ी व्यापक और विस्तृत हो गया था। लेकिन, १९७१ में उनके निधन के बाद भी, उनकी आत्मा की प्रेरक शक्ति उसकी प्रवृत्तियों का बहुमुखी विकास कर उन्हें चलायमान करती रही। भवन के वर्तमान रूप में पीछे मुंशीजी की लगन व कार्य-सिद्धि ही है।

भवन का प्रथम विदेशी केंद्र १९७२ में ब्रिटेन में खुला था। इस संबंध में भवन ने 'पहला क़दम' उठाया था स्वामी रंगनाथ (रामकृष्ण मिशन) से हालैंड पार्क,

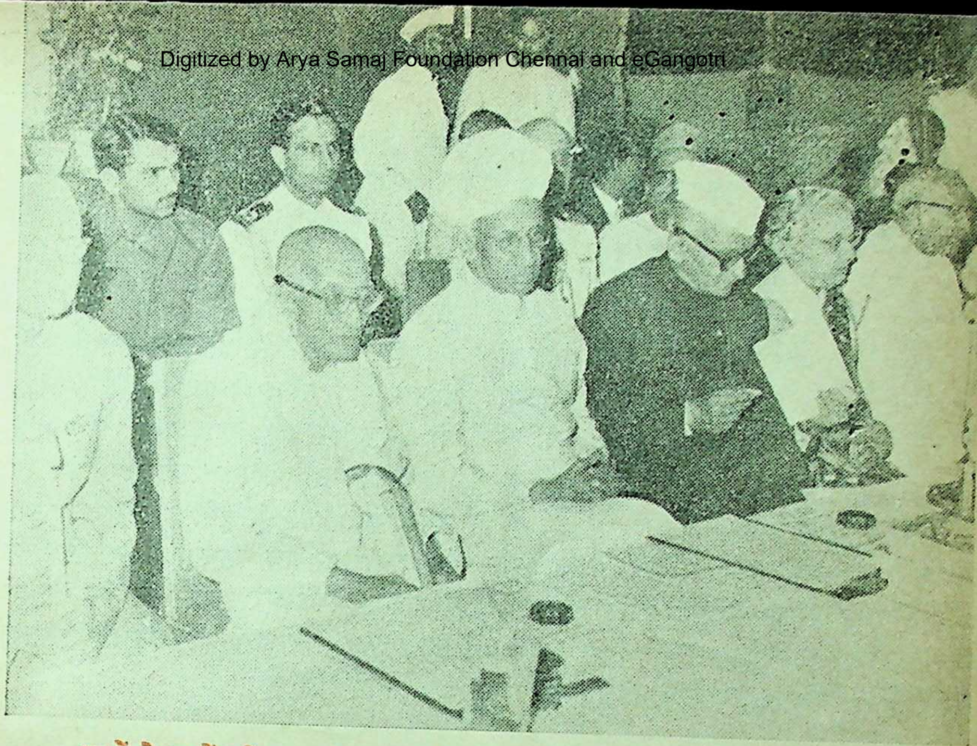

बायें से दायें श्री राजगोपालाचारी, डॉ. राधाकृष्णन्, डॉ. क. मा. मुंशी, श्रीमती विजयालक्ष्मी पंडित तथा एच. वी. देवटिया।

लंदन स्थित रामकृष्ण-विवेकानंद केन्द्र के प्रबंधक श्री भव्यानंद के नाम एक परिचय-पत्र प्राप्त करके जिसमें रंगनाथानंदजी ने स्वामी भव्यानंदजी से निवेदन किया था कि वे भवन के अतिरिक्त रजिस्ट्रार और इन पंक्तियों के लेखक को लंदन में तीन महीने तक निःशुल्क रहने और खाने की व्यवस्था करा दें।

ooo

लंदन केंद्र ने भवन के न्यूयार्क केंद्र की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया। १९८१ में न्यूयार्क केंद्र के खुलने के बाद, बोस्टन में भवन का दूसरा अमरीकी केंद्र भी खुला।

यह मुंशीजी की अंतःप्रेरणा का ही परिणाम है कि उनके निधन के पश्चात् भी भवन के देश में अनेक नये केंद्र खुले। जिन स्थानों में ये केंद्र खुले, उनके नाम हैं—मंगलूर, जामनगर, चंडीगढ़, त्रिचूर, जयपुर, मुकंदगढ़, कोदाईकनाल, भीमावरम्, रेनूकोट (उ. प्र.), पुणे, भड़ोच, राउरकेला, जोधपुर, मछलीपत्तनम्, कैनानोर, पालघाट, कोज़ीकोड, त्रिवेन्द्रम् तथा बेलगाम। देश-विदेश के अनेक स्थानों से भवन की शाखाएं व केंद्र खोलने के प्रस्ताव प्रति दिन प्राप्त होते रहते हैं।

मुंशीजी के निधन के पश्चात्, भवन

जिन नयी प्रवृत्तियों से संलग्न हुआ है, उनमें से निम्न का उल्लेख करना आवश्यक है।

(१) प्राचीन अंतर्दृष्टि तथा आधुनिक आविष्कार (१९७६)।

(२) डॉक्टर पी. बी. गजेंद्रगड़कर के तत्वावधान में आयोजित मुख्य उपनिषदों का समीक्षात्मक अध्ययन (१९७७)।

(३) सांस्कृतिक पाठ्यक्रमों की शुरुआत (१९७८)।

(४) बोलारम (हैदराबाद) में 'राजाजी इंस्टीटयूट ऑफ पब्लिक अफेयर्स एंड एडमिनेस्ट्रेशन' की स्थापना (१९८१)।

(५) अंधेरी (वंबई) स्थित 'श्रेयांस प्रसाद जैन इंस्टीटयूट ऑफ मैनेजमेंट एड रिचर्स' की स्थापना।

(६) आलंदी (संत ज्ञानेश्वर की जन्म-भूमि) स्थित संत ज्ञानेश्वर हरिकथा और कीर्त्तन महाविद्यालय (१९८४)।

कुलपति मुंशीजी की जन्म-शताब्दि के अवसर पर, भवन से जुड़े हम सब लोग, जो उनके पदचिह्नों पर चलने का विनम्र प्रयास कर रहे हैं, एक बार फिर स्वयं को उनके प्रिय कार्य—आधुनिक आवश्यकताओं के साथ प्राचीन भारतीय संस्कृति का एकीकरण—को पूरा करने के लिये स्वयं को ईश्वर-आराधना की भावना के साथ समर्पित करते हैं।

□

ओरछा नरेश की कलाप्रियता

ओरछा नरेश स्वर्गीय महाराज वीरसिंहजी देव की काव्य और कला में बड़ी अभिरुचि थी और वे इनके बड़े पारखी थे। एक बार राजस्थान से एक चित्रकार टीकमगढ़ गया। वह चाहता था कि महाराज का एक चित्र बनाये और उनसे इनाम प्राप्त करे। वह वहां बहुत दिनों ठहरा रहा, किंतु महाराज तक उसकी पहुंच न हो सकी। संयोग से उसकी भेंट श्री कृष्णनंद गुप्त से हो गयी, जो उन दिनों वहां रहते थे। उन्हें उस पर दया आयी और उन्होंने महाराज से उसकी चर्चा की। महाराज ने उसे बुलवाया। वह अपने साथ अपने बनाये चित्र भी ले गया था। उन्हें देखकर महाराज ने उससे कहा, 'मैं आपसे अपना चित्र नहीं बनवाऊंगा।' वह चित्रकार बड़ा निराश होकर महल से लौटा। महाराज को मालूम था कि वह कई सप्ताह से टीकमगढ़ में ठहरा हुआ है और बड़ी आशा लेकर आया था। महाराज ने उसे विदाई में कई सौ रुपये भिजवा दिये। उसे बड़ी आश्चर्य-मिश्रित प्रसन्नता हुई। उसने गुप्तजी से कहा कि महाराज ने विदाई में जितने रुपये दिये हैं उतने में उनका चित्र बनाकर भी पाने की आशा न करता था। महाराज को चित्रकार की कला नहीं जंची, किंतु उस कला के साधक को उचित सम्मान देना वे आवश्यक समझते थे। उनका उदार हृदय उस कलाकार को निराश नहीं कर सकता था।

—डा. गोपालप्रसाद 'वंशी'

□

अणुव्रत की महिमा

☐ डा. गोपालप्रसाद 'वंशी'

एक बहेलिया भगवान महावीर के पास दीक्षा लेने पहुंचा। दीक्षा की गुरु दक्षिणा मांगी गयी, अहिंसा का पालन। दीक्षार्थी ने कहा—'यह मेरे जीवित रहने का प्रश्न है। आजीविका का एक व्यवसाय मेरे अभ्यास में है—'आखेट'। अहिंसा पालन के लिए उसे त्यागूं तो परिवार का पेट कैसे भरूं? यह मुझसे न बन पड़ेगा।' व्याध निराश हो गया और वापस लौटने की सोचने लगा।

भगवान के शिष्य विजयभूति ने विचार किया। कोई मध्यवर्ती मार्ग निकाला जाय। कुछ से कुछ अच्छा की नीति अपनायी जाय। बहेलिये से पूछा जाय कि वह पूर्ण अहिंसा न सही आंशिक अहिंसा का शुभारंभ कर सकता है क्या? ऐसा बन पड़े तो पिपीलिका गति से चलते हुए कालांतर में वहां पहुंचा जा सकता है जहां गरुड़ पहुंचते हैं।

विजयभूति ने निराश व्याध के साथ नया परामर्श किया। अहिंसा की उपयोगिता समझाये।

उसकी कठिनाई समझी। बीच का रास्ता यह सुझाया कि थोड़े से शुभारंभ किया जाय और फिर जैसे-जैसे सुविधा मिले उस व्रत को क्रमशः आगे बढ़ाया जाय। दीक्षार्थी सहमत हो गया। न्यूनतम किसी एक प्राणी के प्रति दया बरतने का व्रत लिया जाय। यह तय होने पर प्रश्न यह उठा कि किस प्राणी के प्रति दयालु रहने का दक्षिणा संकल्प किया जाय। व्याध ने इसके लिए 'कौवा' चुना। और आरंभ में उतना ही कर पाने की हिम्मत दिखायी।

दीक्षा मिली। संकल्प हुआ। व्रत छोटा था। इसलिये उस प्रयास का नाम 'अणु व्रत' रखा गया। अहिंसा की गरिमा नित्य समझने-समझाने का सिलसिला कौवे के माध्यम से चला। तथ्य सशक्त था। इसलिए व्याध चिंतन-मनन के आधार पर उस पर अधिक निष्ठावान होता चला गया। धारा बही सो बही। उसने दया-क्षेत्र बढ़ाया और कुछ ही समय उपरांत वह पूर्ण अहिंसक ही नहीं बना, वरन जैन धर्म के मूर्धन्य आचार्यों की पंक्ति में जा खड़ा हुआ।

कथा बताती है यदि तथ्य सशक्त हो और संकल्प में सचाई हो तो छोटा शुभारंभ भी क्रमशः बढ़ सकता है और समयानुसार पूर्णता तक पहुंच सकता है।

☐

चोटी के नेताओं की नजर में

एक बहुआयामी जीवन के अनेक आयाम

'श्री कन्हैयालाल मुंशी का जीवन एक ऐसे प्रिज्म की भांति था, जिसके माध्यम से इस देश को उसकी पूरी सांस्कृतिक समृद्धता व रंगबिरंगेपन के साथ देखा जा सकता था,' श्री मुंशी के बारे में यह उद्‌गार हैं, एक प्रख्यात मनीषी के।

श्री मुंशीका जीवन बहुआयामी था, और वे बहुमुखी प्रतिभाके धनी थे। हमारे देश के महानतम नेताओं व चिंतकों ने उन्हें इन नानाविध आयामों से देखा और परखा था। यहां प्रस्तुत हैं, ऐसे ही सात शीर्षस्थ मनीषियों के विचार, उनके बहुरंगी व्यक्तित्व के बारे में।

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी

उस चमत्कारी इंजन से कौन परिचित नहीं है, जो श्री मुंशी की देह में स्थित था। वह एक असामान्य 'इन्टरनल कबंस्चन इंजन' था, जो अपने अनुस्पंदन से ऐसे अन्य इंजनों को अपनी ओर आकर्षित कर लेता था। मैं कामना करता हूं कि मुंशी के यश की महक और अधिक विस्तीर्ण हो, और उनके सहयोगी सदा उस अपरा-ऊर्जा से ओतप्रोत रहें, जो उन्हें मुंशी से प्राप्त हुई थी।

डा. राजेंद्रप्रसाद

यदि मुझसे मुंशीजी के जीवन-कर्मों का मूल्यांकन करने को कहा जाये, तो मैं सबसे पहले तो, विनम्रतापूर्वक, उनकी सर्वतीमुखी प्रतिभा का उल्लेख करना चाहूंगा। लेकिन, वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी होने के अतिरिक्त भी कुछ और थे। वे एक ऐसे महान शक्ति-पुंज भी थे, जिनके स्पर्श मात्र से दूसरे भी लघु शक्तिपुंज बन जाते थे।

उनके नानाआयामी व्यक्तित्व की छाप हमें अनेक क्षेत्रों में, जिनमें उन्होंने शानदार सफलताएं अर्जित कीं, दिखायी देती है। समाजसेवी, शिक्षाशास्त्री, अधिवक्ता, राजनीतिक नेता, साहित्यकार, वक्ता आदि अनेक रूपों में प्रकट होकर उन्होंने हर रूप में अपनी धाक जमायी। जो भी कार्य वे हाथ में लेते थे, उसे पूरी लगन व निष्ठा से, निःस्वार्थ भाव से पूरा करते थे। उनके सद्‌गुणों की विभा इतनी चमत्कारिणी थी कि दोषों की कालिमा बिल्कुल अदृश्य सी लगती है।

कवि रामधारी सिंह 'दिनकर'

'भगवान परशुराम' नामक अपनी श्रेष्ठ साहित्यिक कृति में मुंशीजी ने परशुराम को पौरुष के सर्वाधिक विकसित व आदर्श रूप में प्रस्तुत किया है। सदियों से साहित्यकारों ने परशुराम को एक ऐसे अति-क्रूर तथा प्रतिशोधपूर्ण योद्धा के रूप

111299...

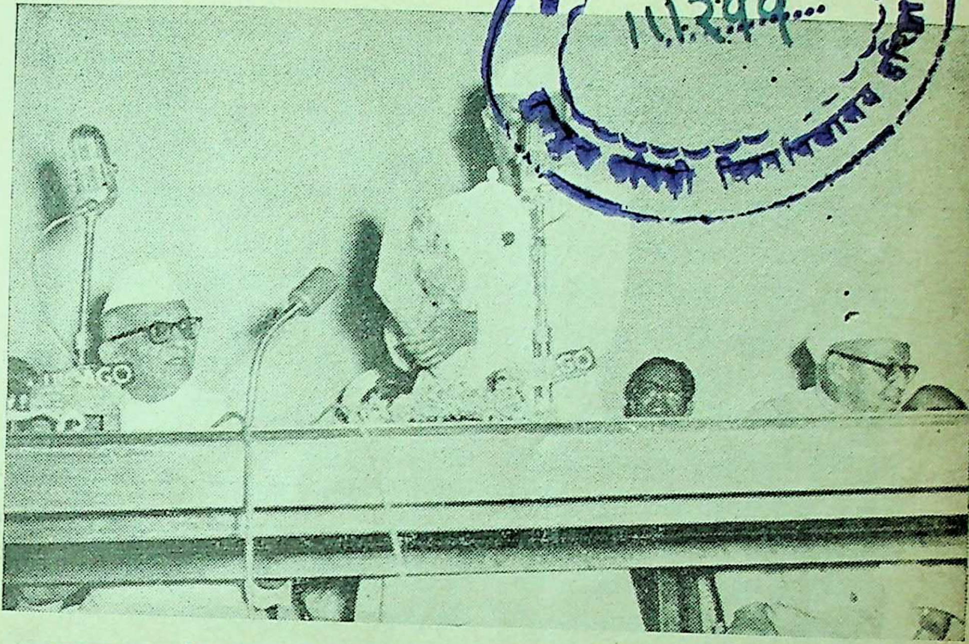

माइक पर बोलते हुए पं. जवाहरलाल नेहरू के दायीं ओर बैठे हुए श्री मुंशीजी

में प्रस्तुत किया है, जिसने प्रतिकार भावना से इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रियरहित किया था । किंतु, मुंशीजी की कल्पना के परशुराम ऐसे क्रूर और बुद्धिहीन व्यक्ति नहीं हैं। उन्होंने सिर्फ उन्हीं क्षत्रिय राजाओं की हत्या की, जिन्होंने संतों व बनवासियों की हत्या की, या उन्हें अपना दास बनाया ।

अपने परशु का प्रयोग भगवान परशुराम ने बर्बर सभ्यता के युग में धर्म की प्रतिष्ठा के पावन उद्देश्य से ही किया था। और, ऐसा करने से पूर्व, उन्होंने ऐसे दुष्ट और पापी क्षत्रियों को चेतावनी दे दी थी कि नर-हत्या तथा नर-बलि मानवता-विरोधी कृत्य हैं, और वे ऐसा जघन्य कृत्य करने वालों को कभी क्षमा नहीं करेंगे ।

यादवों की अपने क्षत्रिय-विरोधी अभियान का उद्देश्य समझाते हुए, परशुराम ने कहा था, 'तुम्हारे और शर्यतों के बीच एक दूसरे की स्त्रियों और पशु-धन को चुराने की एक परंपरा सी बन गयी है, और तुम्हारे सारे युद्ध इन्हीं दोनों कारणों से होते हैं । मेरे युद्ध धर्म - स्थापना के उद्देश्य से होते हैं, तुच्छ और हेय कारणों से नहीं । धर्म-युद्ध का योद्धा अजेय होता है, और गौरवपूर्ण जीवन जीता है ।'

कुछ समय पूर्व, ऐसे उद्गारों को तानाशाही की भावनाओं से पूर्ण उद्गार माना जाता, लेकिन अब हम जानते हैं कि मामला इतना सीधासादा नहीं है । बुद्ध, अशोक और गांधी को अपने आदर्श-पुरुष मानने वाले भी अब यह समझते जा रहे हैं कि

भगवान परशुराम के जीवन-सिद्धांतों को जीवन में स्थान दिये बिना, उनका जीना भी दूभर हो जायेगा। परशुरामों का जन्म हर युग में सहस्रार्जुनों तथा उनके पापों को नष्ट करने के लिए होता रहा है।

पुरा-कथाओं के अनुसार, परशुराम ब्रह्मचारी थे। किंतु मुंशीजी की कल्पना से जन्मे परशुराम लोमहर्षिणी नामक एक महिला के पति हैं।

उनके मानस में प्रवाहित होने वाली अनेकानेक अंतरधाराओं के कारण उत्पन्न जो तनाव व भावात्मक परिस्थितियां उत्पन्न हुईं, उन्होंने ही परशुराम को विवाह करने के लिये बाध्य किया था। लोमा से उनका परिचय बचपन से था, और वह उनकी बालसखी थी। तब, परशुराम ने यह कल्पना भी न की होगी कि एक दिन लोमा उनकी पत्नी बनेगी।

कुक्षी ऋषि की पत्नी काल्विनी ने एक बार उन्हें अपनी कुटिया में आने का आमंत्रण दिया, और एकांत में उन्हें पथ-भ्रष्ट करने का प्रयास किया था। क्रुद्ध परशुराम ने उस पर कशा-प्रहार किया और चले गये। इस घटना के कुछ समय बाद उन्हें विवाह की आवश्यकता अनुभव हुई, और उन्होंने लोमा से विवाह किया। वैदिक युग में ऐसे विवाहों को ऋषि-धर्म का एक अंग माना जाता था। हमारे पूर्वज जानते थे कि संतों व ऋषियों तक के लिए कामवासना को वश में रखना असंभव नहीं तो दुष्कर कार्य अवश्य है। इसलिए वे ब्रह्मचर्य पर एक सीमा तक ही जोर देते थे, और उसे जीव-मुक्ति की साधना के लिए अनिवार्य नहीं मानते थे। वे ऐसे अविवाहित व्यक्ति को पापी मानते थे, जो स्त्रियों को पथभ्रष्ट कर उनका सतीत्व नष्ट करता फिरता हो।

परशुराम की कहानी के माध्यम से मुंशीजी ने वैदिक युग के आदर्श पुरुष की कहानी सुनायी है। उस काल के ऋषि धार्मिक तथा वीर होने के साथ-साथ करुणावान् तथा मानवोचित गुणों से युक्त भी होते थे। सहस्त्रार्जुन की एक प्रेमिका को परशुराम परामर्श देते हैं कि वह विवाह करके अपने अनैतिक संबंध को समाप्त कर ले। इस प्रकार, उन्होंने उसमें आत्म-सम्मान की ज्योति जगायीं। और जब स्वयं उनके पिता ने उनकी माता पर पथभ्रष्ट होने का आरोप लगाया, तो उनके सामने एक विचित्र स्थिति उत्पन्न हो गयी। उनके पिता ने उन्हें आदेश दिया कि वे अपनी दुष्चरित्रा मां की अपने हाथों से हत्या कर दें। यद्यपि परशुराम अपनी माता को निर्दोष मानते थे, तथापि इस कारण उन्होंने अपने पिता का आदेश मानने से इंकार नहीं किया, और अपनी माता की हत्या करने को तैयार हो गये। उनके पिता ने तब आत्म-ग्लानि व पश्चात्ताप से भरे शब्दों में अपनी पत्नी से कहा, 'रेणुका, ओ, रेणुका! मैंने तो तुम्हें मार डाला ही था, किंतु तुम्हारे पुत्र ने जैसे तुम्हें पुनर्जीवित किया। राम, मेरे पुत्र! अपना परशु फेंक दो।

मैं अपना वचन वापिस लेता हूं ।'

मेरी प्रतीति है कि परशुराम को हमारे पुराणों में जिस ढंग से क्रूर तथा क्षत्रिय-द्वेषी ब्राह्मण के रूप में चित्रित किया गया है, वह सर्वथा गलत है, और मुंशीजी की कल्पना के परशुराम ही वास्तविक परशुराम थे । और, यदि रेणुका स्वेच्छाचारिणी होती तो आज हम मंदिरों में देवी के रूप में उनकी पूजा न करते । और, यदि परशुराम सचमुच क्रूर होते, तो हम उन्हें 'भगवान' या 'महात्मा' परशुराम न मानते ।

भारत आज इतिहास के एक चौराहे पर खड़ा है, और ऐसे नाजुक समय में हम सब मुंशीजी के उपन्यासों से प्रेरणा प्राप्त करने के साथ-साथ उन्हें अपना पथ-प्रदर्शक भी मान सकते हैं ।

डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

मुंशीजी ने देश के सार्वजनिक जीवन को नानाविध रूपों से समृद्ध किया । वे निडर स्वतंत्रता सेनानी थे । बंबई राज्य के एक वरिष्ठ मंत्री रहे । और, कठिन परिस्थितियों में वे हैदराबाद में राष्ट्र के प्रतिनिधि भी रहे । केंद्रीय मंत्रिमंडल के एक सदस्य रहने के साथ-साथ, वे उत्तर प्रदेश के राज्यपाल भी रहे । वे कुशाग्र बुद्धि वाले अधिवक्ता भी थे ।

लेकिन, उन्होंने देश की महानतम सेवा की—भारतीय विद्या भवन की स्थापना करके । उसे उनके यशस्वी जीवन का 'मील का पत्थर' माना जा सकता है, और मुझे पूरा विश्वास है कि राष्ट्र भवन के माध्यम से उन्हें आगामी अनक दशकों तक याद करता रहेगा ।

न्यायाधीश श्री भगवती

मुंशीजी अल्पसंख्यकों के सच्चे दोस्त और हमदम थे । अधिवक्ता तथा राजनीतिज्ञ दोनों रूपों में वे भारत को धर्मनिरपेक्ष राज्य मानते थे, मगर उनकी कल्पना का धर्म-निरपेक्ष भारत धर्मविमुख भारत नहीं था, वरन् ऐसा भारत था, जिसके प्रत्येक नागरिक को अपने धर्म का पालन करने की पूर्ण स्वतंत्रता थी । 'सर्व धर्म समभाव' के सिद्धांत में विश्वास करने वाली भारत-सरकार सब धर्मों का समान आदर करती है । विश्व-बंधुत्व तथा उदारता की अपनी इसी उदात्त भावना के कारण ही, उन्हें अल्पसंख्यकों का विश्वास प्राप्त था, और इस विश्वास के बल पर ही वे अलग-अलग महानुयायियों से बातचीत कर, उन्हें भारत को अपना देश समझने और पृथकत्व की भावना से करवट करने के लिए राज़ी करने में सफल हो जाते थे । उन्हीं के अथक प्रयासों के फ़लस्वरूप, अल्पसंख्यकों ने मताधिकार पर ज़ोर दिये बिना आम चुनावों में भाग लेने में अपनी रज़ामंदी व्यक्त की थी ।

यह एक शानदार और उल्लेखनीय उपलब्धि थी । इन प्रयासों के पीछे शक्ति सरदार पटेल की थी, लेकिन बातचीत करके दूसरे को अपनी बात मानने को राज़ी करवा लेने की योग्यता मुंशीजी की थी ।

इन वार्ताओं के दौरान, पटेल व मुंशी

दोनों को अप्रत्यशिक्ष कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, लेकिन वे उनसे घबराये नहीं, वरन् धीरज और संयम रखकर प्रयास करते रहे, और अंतत: अल्पसंख्यकों को यह विश्वास दिलाने में सफल हुए कि कट्टर होना उनके हित में न होगा। उनकी सफलता ने अंग्रेजों की 'फूट डालो, और राज्य करो' वाली कुटिल नीति को हमेशा-हमेशा के लिये ज़मीदोज़ कर दिया, और अल्पसंख्यकों को यह विश्वास हो गया कि उनके हितों की रक्षा कोई विदेशी शक्ति नहीं कर सकती, वरन् भारत-सरकार ही कर सकती है। उनके इस सफल प्रयास से राष्ट्रीय एकता के सिद्धांत को बल मिला, और अल्पसंख्यकों ने पुराना नज़रिया छोड़कर राष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाया।

हिंदी को सरकारी भाषा बनाने के लिए जिन तीन दूरदर्शी तथा अहिंदीभाषी राजनीतिक नेताओं ने अपनी आवाज सबसे ज्यादा बुलंद की, उनमें से एक श्री कन्हैयालाल मंशी थे। अन्य दो थे—डाक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जी व एन. गोपालस्वामी आयंगर। इन तीनों का एक ही मत था कि हिंदी ही सारे देश के लोगों को भाषायी एकता के सूत्र में बांध सकती है, और देश अपनी राष्ट्रभाषा के माध्यम से ही प्रगति-पथ पर अग्रसर हो सकता है।

लेकिन, हिंदी के मामले को लेकर, संविधान सभा के सदस्यों में काफ़ी मतभेद देखने को मिला। यद्यपि, जुलाई १९४९ में एक संशोधन पारित किया, और इस संशोधन के बाद, हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि को राष्ट्रभाषा और राष्ट्रलिपि का, और अंग्रेजी को १० वर्षों तक दूसरी राष्ट्रभाषा का दर्जा प्रदान किया गया, और संविधान सभा के ८० सदस्यों ने इस संशोधन का समर्थन भी किया, तथापि विरोधियों के ३ वर्गों ने उसका विरोध किया। (१) वे लोग जो संविधान में राष्ट्रभाषा का उल्लेख किसी भी रूप में नहीं चाहते थे। (२) हिंदुस्तानी का समर्थक एक छोटा-सा, किंतु प्रभावशाली वर्ग। (३) मुख्यत: दक्षिण भारतीयों का वर्ग, जो चाहता था कि १५ वर्षों तक अंग्रेजी राजभाषा रहे, और हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का प्रश्न 'ठंडे बस्ते' के सिपुर्द कर दिया जाये।

मुंशीजी ने अपनी समझ-बूझ से इस जटिल समस्या को एक ऐसे फार्मूले द्वारा हल करके दिखाया जिसे आज भी 'मुंशी आयंगर फार्मूले' के नाम से जाना जाता है। इस फार्मूले के अनुसार, यह तय हुआ कि हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया जाये, और १५ वर्षों के बाद अंग्रेजी को दूसरी राजभाषा के पद से अपदस्थ कर दिया जाये। इस फार्मूले की स्वीकृति से यह एक बार सिद्ध हो गया कि श्री मुंशी का भारत की एकता व एकात्मता में कितना अधिक विश्वास था, और उसके क्रियान्वयन के लिए वे कितने प्रयत्नशील रहते थे।

आचार्य कृपलानी

श्री मुंशी किसी अपरिवर्तनीय आदर्श

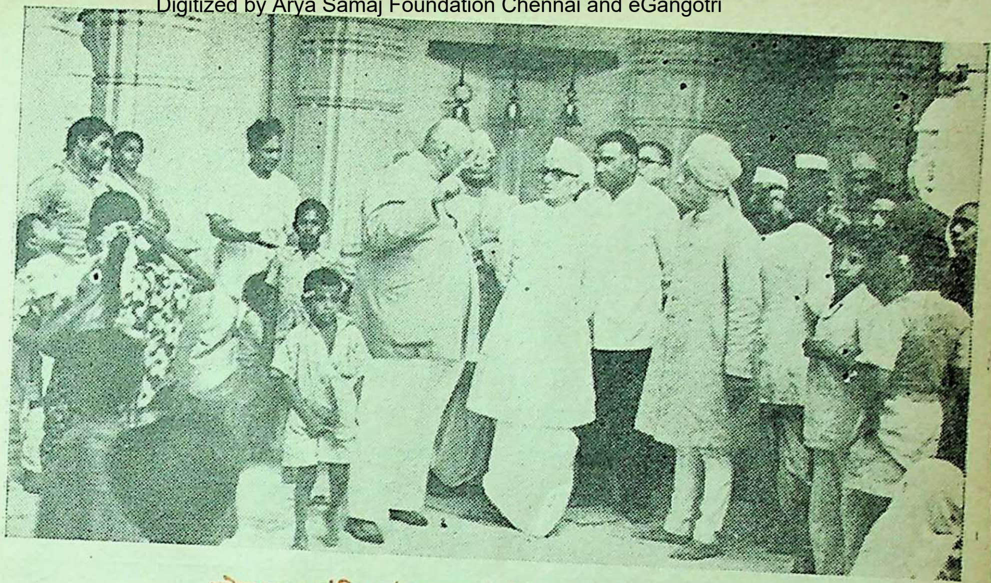

सोमनाथ मंदिर (गुजरात) में जाम साहब के साथ

में आस्था नहीं रखते थे और किसी व्यक्ति या विचारधारा का विरोध या समर्थन करने से पूर्व, उसके सब पहलुओं पर गंभीरतापूर्वक विचार कर लेते थे । अंग्रेजों के ज़माने में उनके ऐसे रुख के कारण कई बार उन्हें 'देशद्रोही' कहा गया, कारण उन्होंने अवैध विदेशी सरकार के किसी वैध कार्य या विचार का समर्थन करने की हिम्मत दिखायी थी । उन्होंने ब्रिटिश सरकार के इस प्रस्ताव का समर्थन कर लोगों की आलोचनाएं सुनीं कि राज्यपाल को अपने राज्य के विश्वविद्यालय का कुलपति भी होना चाहिये । मगर, उन्होंने विश्वविद्यालयों की प्रबंध-समितियों में सांप्रदायिकता के आधार पर नियुक्तियों के प्रस्ताव का जमकर विरोध किया ।

श्री बी. पी. मेनन

अपनी पुस्तक 'द एंड ऑफ एन ऐरा' में श्री मुंशी ने हैदराबाद के अपन अनुभवों का वर्णन किया है । अब मैं अपने पक्ष का वर्णन करना चाहता हूं । समझौते पर हस्ताक्षर हो जाने के बाद, प्रायः एक महीने तक शांति रही, लेकिन जनवरी, १९४८ में एक घटना घटी, जिससे सिद्ध हो गया कि यह शांति भ्रामक और कपटपूर्ण थी । यह घटना हैदराबाद में श्री मुंशी के रहने के स्थान से संबंधित थी । उनके लिए जो स्थान चुना गया था, वह तैयार नहीं था, और भारत सरकार ने मुंशीजी से प्रार्थना की थी कि वे ११ दिनों तक एक अन्य स्थान में रह लें । किंतु, निज़ाम ने इस प्रस्ताव का विरोध किया । सरकार ने निज़ाम से सख्ती से कहा कि यदि उसका प्रस्ताव अस्वीकृत किया जाता है, तो भारत सरकार हैदराबाद में कोई एजेंट-जनरल नहीं भेजेगी । अंत में, माउंटनबेटन

के हस्तक्षेप से समस्या हल हुई, और मुंशीजी ५ जनवरी, १९४८ को दिल्ली से हैदराबाद के लिए रवाना हुए ।

हैदराबाद तहुंचते ही, मुंशीजी ने हिंदू व मुस्लिम नेताओं के अलावा जेल से छूटे कांग्रेसियों से विचार-विमर्श करने की पहल की । यह बात लायक अली सरकार को अपने कामकाज में हस्तक्षेप लगा । लायक अली ने माउंटबेटन से भी शिकायत की । भारत सरकार की ओर से मैंने लायक अली को लिखा कि वे व्यर्थ में मामले को तूल न दें, और जल्दी से जल्दी वार्ता पूरी करें, ताकि एजेंट-जनरल की ज़रूरत ही न रहे । चूंकि इस बीच रज़ाकारों ने अपनी गतिविधियां तेज़ कर दी थीं, इसलिए मुंशीजी ने माउंटबेटन से मिलकर कहा कि यदि रज़ाकारों पर निमंत्रण नहीं रखा गया, तो भारत को हैदराबाद में अपना पुलिस दल भेजने को बाध्य होना पड़ेगा । माउंटबेटन को यह बात ठीक नहीं लगी । उनका कहना था कि जल्दबाज़ी से वार्ता भंग होने का डर है, इसलिए धैर्य और शांति से काम लेना उचित होगा । उन्होंने मेरे माध्यम से श्री पटेल पर भी ज़ोर डाला कि मुंशीजी को हैदराबाद से बुला लिया जाये ।

लेकिन, श्री पटेल ने इस सुझाव को ठुकरा दिया, कारण उनका श्री मुंशी में पूरा विश्वास था । माउंटनबेटन भी चुप हो गये, और उन्होंने यह बात दुबारा नहीं उठायी । बाद की घटनाओं ने प्रमाणित कर दिया कि श्री मुंशी ने हैदराबाद में जो नीति अपनायी थी, वही सही थी, और भारत के हित में भी थी ।

□

एक शिष्य किसी संत पुरुष की सेवा में निरत था और ऐसा मंत्र चाहता था जिसके सहारे वह ऋद्धियां सिद्धियां दिखा सके । पर संत थे जो सबको राम नाम ही बताते थे । शिष्य को चमत्कारी मंत्र चाहिये था । राम नाम तो मामूली बात है । उसे निराशा होन लगी । गुरु ने उसकी मन:स्थिति को ताड़ लिया ।

एक दिन गुरु ने उस शिष्य को एक चिकना पत्थर दिया और कहा—इसे सब्जी वालों से पूछकर आओ कि वे कितने में खरीदेंगे । शिष्य दिन भर घूमा । बटखरे के काम में आ सकता है यह मानकर उन्होंने दो चार पैसे भर की कीमत लगायी ।

दूसरे दिन वही पत्थर लेकर सुनारों के मुहल्ले में भेजा । वहां उसका दाम एक हजार तक लगाया गया । तीसरे दिन उसे जौहरी बाजार में उसकी कीमत मालूम करने को कहा गया । कइयों को दिखाने पर उसकी कीमत बढ़ते-बढ़ते एक लाख तक पहुंच गयी ।

गुरु ने शिष्य को समझाया—'पत्थर तो वही था, पर पारखियों ने अपनी-अपनी जानकारी के आधार पर उसका मोल बताया । राम नाम है तो एक ही पर मान्यता के अनुरूप उसका मूल्य और महत्व घटता बढ़ता रहता है ।

□

जीवन की परीक्षा

—सुभाषचन्द्र बोस—

हम परीक्षाओं के निकट आते ही बेचैन होने लगते हैं। लेकिन, हम यह कभी नहीं सोचते कि हमारे जीवन का प्रत्येक क्षण परीक्षा का क्षण है। हमारा परीक्षक हमारा प्रभु है। हमारा धर्म है। शैक्षणिक परीक्षाएं न कोई अधिक महत्त्व की हैं, और न उनका कोई स्थायी मूल्य ही है। किंतु, जीवन की परीक्षाएं अनंत काल के लिए हैं, और उनके परिणाम हमें इस जीवन में भी भुगतने पड़ेंगे, और आगामी जन्मों में भी।

वह व्यक्ति धन्य है, जिसने अपने इसी जीवन में अपने आपको बिना किसी शर्त के भगवान के हाथों सौंप दिया है। उसे ही पूर्णता प्राप्त होगी, और इस संसार में आकर, उसी का जीवन सार्थक बनेगा। लेकिन, कितने दुख की बात है कि हम इस महान सत्य को स्वीकार नहीं करते। हम इतने अंधे, इतने अविश्वासी और इतने अज्ञानी हैं कि हम इस सत्य की अनुभूति नहीं कर पाते। हम वास्तव में मनुष्य कहलाने योग्य नहीं हैं। हम इस पापपूर्ण युग में राक्षसों के समान हैं।

लेकिन फिर भी हमारे लिए कुछ आशा शेष हैं, क्योंकि भगवान दयालु है, और उसकी कृपा सदा बनी रहती है। चाहे, हम घोरतम पाप के अंधकार में ही क्यों न हों, हम उसकी कृपा को पहचान सकते हैं। उसकी करुणा का कोई अंत नहीं है।

एक बार जब वैष्णव धर्म के सामने ऐसी स्थिति आयी कि वह लगभग समाप्त होने को हुआ, तो महानतम वैष्णव अद्वैताचार्य ने अपने धर्म की ग्लानि को देखकर भयभीत स्वर में भगवान से प्रार्थना की, 'हे भगवान! हमारी रक्षा करो। इस पापपूर्ण युग में धर्म निर्मूल हो जाने का खतरा उत्पन्न हो गया है। आओ, हमारा परित्राण करो।' इस पर नारायण श्री चैतन्य के रूप में धराधाम पर अवतीर्ण हुए। समय-समय पर, पाप और अंधकार से परिपूर्ण धरती पर सत्य, ज्ञान, प्रेम और पवित्रता का प्रकाश जिस प्रकार फैलता रहा है, उससे हमें आशा बंधती है कि अभी ऐसी स्थिति नहीं आयी है कि हमारा उद्धार हो ही न सके। यदि ऐसा होता तो परमेश्वर इस धरती पर बार-बार मनुष्य रूप में क्यों अवतरित होते?

□

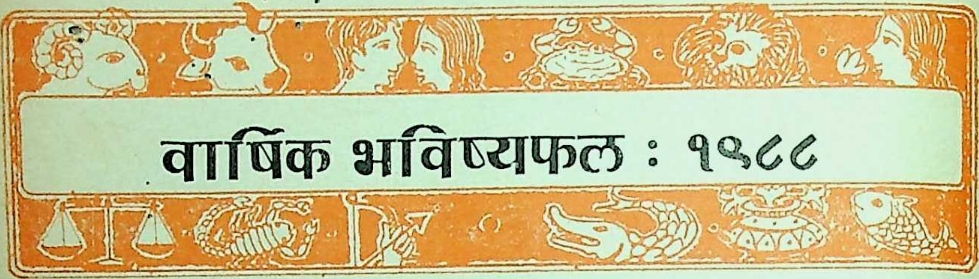

वार्षिक भविष्यफल : १९८८

□ पंडित वी. के. तिवारी

वर्ष १९८८ में साढ़ेसाती से वृश्चिक, धनु व मकर राशियां प्रभावित रहेंगी। गुरु भ्रमण मेष व वृष राशि पर होगा। मंगल वृश्चिक राशि से मीन राशि तक चलेगा। शुक्र व बुध क्रमशः वृश्चिक व तुला राशि तक चलेंगे।

मेष :

(१४ अप्रैल से १३ मई)

इस वर्ष मिश्रित प्रभाव प्राप्त होंगे। गतवर्ष से श्रेष्ठ, अनुकूल व समस्या निवारक समय व्यतीत होगा। रोजगार में अनुकूल स्थितियों का सृजन होगा। विलंबित प्रकरण का निपटारा होगा। यश व स्थायी संपत्ति से लाभ रहेगा। अप्रैल के उपरांत सितंबर तक परिवार एवं रोजगार में मनोवांछित स्थितियां निर्मित होती रहेंगी। शेष समय आरोप, उद्वेग, रोग एवं चिंता से युक्त रहेगा अतएव सावधान रहना चाहिए।

श्रेष्ठ समय : २० जनवरी से २५ फरवरी; १० जून से २ जुलाई।

प्रतिकूल समय : १९ जनवरी तक, १ से १७ मई, अगस्त ९ से १० सितम्बर तक, अक्तूबर २४ से २० नवबर तक।

वृष :

(१४ मई से १४ जून)

आपको गुरु, शनि के प्रतिकूल प्रभाव प्राप्त होंगे।

परिवार एवं दांपत्य सुख में बाधा होगी। रोग, व्यय, यात्रा की अधिकता से आक्रांत रहेंगे। नौकरी, व्यवसाय एवं राजनीतिक पक्ष में मनोवांछित सफलता मिलेगी। शांति से वंचित रहेंगे। दायित्व बढ़ेंगे। प्रयासों के अच्छे परिणाम मिलेंगे।

श्रेष्ठ समय : ३ मार्च से १७ अप्रैल, १ से २० अक्तूबर, २१ नवंबर से वर्ष के अंत तक।

प्रतिकूल समय : २ जनवरी से २८ फरवरी, १७ अप्रैल से २० मई, २५ जुलाई से ८ अगस्त, २६ अगस्त से १८ सितबर तक।

मिथुन :

(१५ जून से १६ जुलाई)

इस वर्ष पत्नी-पक्ष से कष्ट व चिंता रहेगी । यात्रा की अधिकता एवं यात्रा-कष्ट रहेगा । नौकरी में विशेष सावधानी वरतें । वर्ष के पूर्वार्द्ध में रोजगार, राजनीति, व्यापार में गत वर्ष की तुलना में श्रेष्ठ उपलब्धियां हस्तगत होंगी । स्थायी लाभ व संपत्ति से लाभ बढ़ेगा । विरोधी पराजित होंगे । कनिष्ठ वर्ग का प्रशंसनीय सहयोग मिलेगा।

श्रेष्ठ समय : २० मार्च से ३० अप्रैल, २ अगस्त से २० सितंबर, १० नवंबर से २५ नवंबर तक ।

प्रतिकूल समय : २७ जनवरी से १९ मार्च, १ मई से १३ मई, २२ सितंबर से २ नवंबर तक ।

कर्क :

(१७ जुलाई से १५ अगस्त)

गत वर्ष की तुलना में स्थिति कमजोर रहेगी । किंतु शनि शुभ प्रभावों में वृद्धि करेगा । स्वास्थ्य उत्तम रहेगा । स्थायी लाभ होंगे । जीवन के स्थायी कार्यों में अनुकूलता मिलेगी । संतान, दांपत्य सुख के अतिरिक्त नौकरी व व्यवसाय में आशातीत सफलता मिलेंगी ।

श्रेष्ठ समय : ४ फरवरी से २५ फरवरी २१ अप्रैल से २८ जून, २२ सितंबर से १० अक्तूबर तक ।

प्रतिकूल समय : जनवरी, मार्च, जुलाई एवं दिसंबर माह तक ।

सिंह :

(१६ अगस्त से १६ सितंबर)

गत वर्ष की तुलना में व्यस्तता, चिंता एवं कष्ट रहने के बाद भी आपकी स्थिति नौकरी एवं व्यवसाय में दीर्घकालिक लाभ व सफलता की सृजित होगी । २८ जुलाई से पूर्व विशेष अनुकूल व श्रेष्ठ समय प्राप्त होगा । संतान एवं पत्नी की ओर से विशेष चिंता व व्यय के योग हैं । व्यवसाय में उन्नति होगी । नौकरी में लाभ बढ़ेगा ।

श्रेष्ठ समय : १० जनवरी से २७ जनवरी, १० अप्रैल से १७ अप्रैल, ३० अप्रैल से २० मई, १२ जून से ३१ जुलाई एवं अक्तूबर तक ।

प्रतिकूल समय : २८ जनवरी से ४ फरवरी, १८ अप्रैल से २९ अप्रैल, २१ मई से १० जून, १ अगस्त से २६ अगस्त, २० सितं. से २८ सितंबर, २१ नवंबर से वर्ष अंत तक ।

कन्या :

(१७ सितंबर से १६ अक्तूबर)

विगत वर्ष की तुलना में स्थिति विशेष पक्ष में नहीं कही जा सकती है । शनि के कुप्रभाव वर्ष के उत्तरार्ध में दृष्टिगोचर होंगे । मिश्रित प्रभावयुक्त इस वर्ष गुरु नौकरी में प्रतिकूलता, स्थानांतरण एवं लंबी यात्रा करायेगा । वर्ष के अंत से पूर्व रोजगार व व्यवसाय में संघर्ष के बाद पद, प्रतिष्ठा एवं शुभ प्रभाव परिवार की सुख-समृद्धि के रूप में देगा ।

श्रेष्ठ समय : १ फरवरी से १० मार्च,

१८ अप्रैल से ३० अप्रैल, ३० जून से ८ अगस्त एवं दिसंबर ।

प्रतिकूल समय : २७ जनवरी तक, ११ मार्च से १७ अप्रैल, १ मई से २९ जून, ९ अगस्त से २२ सितं., २१ नवंबर से १० दिसं. तक ।

तुला :

(१७ अक्तूबर से १५ नवंबर)

यह वर्ष विगत की तुलना में श्रेष्ठ व्यतीत होगा । वर्ष का पूर्वार्ध प्रत्येक दृष्टि से उन्नति, यश, लाभ एवं गत वर्ष में किये गये प्रयासों की सुखद परणिति के रूप में व्यतीत होगा, जबकि उत्तरार्ध में स्थितियां उत्तरोत्तर प्रतिकूल होंगी । मनोबल बनाये रखने से प्रतिकूल स्थितियों पर आधिपत्य किया जा सकेगा । परिवार एवं व्यवसाय में लाभ होगा ।

श्रेष्ठ समय : २५ जनवरी तक; २ अप्रैल से २० अप्रैल; १५ जुलाई से ३१ अगस्त, एवं दिसंबर तक ।

प्रतिकूल समय : २६ जनवरी से २५ फरवरी, मार्च एवं २० अप्रैल २० जून, १ सितंबर से २८ सितंबर तक ।

वृश्चिक .

(१६ नवंबर से १५ दिसंबर)

नौकरी में उलझन, अधिकारियों से मत वैभिन्नता, धनाभाव आदि कठिनाइयां प्रस्तुत होंगी । स्वास्थ्य, दांपत्य एवं संतान पक्ष से सुख श्रेष्ठ रहेगा । व्यवसाय में निराशावाद प्रभावी रहेगा । राजनीति में स्थिति परिवर्तनशील एवं प्रभावी बनी रहेगी ।

श्रेष्ठ समय : १९ जनवरी से २६ मार्च, २८ अप्रैल से १३ मई, २६ मई से २० जून, २२ अगस्त से २२ सितंबर ।

प्रतिकूल समय : १८ जनवरी तक, १४ मई से २५ मई; २ जुलाई से १९ अगस्त, १ से २० अक्तूबर तक ।

धनु :

(१६ दिसंबर से १३ जनवरी)

शनि द्वितीय ढैया कष्टों में न्यूनता उत्पन्न करेगा । गुरु पंचमस्थ सफलता, उन्नति, मांगलिक कार्य, उच्च मनोबल आदि देगा । पारिवारिक जीवन आनंदपूर्ण रहेगा । व्यवसाय में लाभ होगा । राजनीति में उत्कर्ष होगा । यश व प्रभाव बढ़ेंगे । प्रयासों का परिणाम आह्लाददायक होगा ।

श्रेष्ठ समय : २ फरवरी से १० मार्च; १ से १० अप्रैल; २ मई से २० मई; २७ अगस्त से २० नवंबर तक ।

प्रतिकूल समय : २७ जनवरी से १ फरवरी; ११ से ३१ मार्च; ११ अप्रैल से ३० अप्रैल; ३ जुलाई से २९ जुलाई; एवं दिसंबर ।

मकर :

(१४ जनवरी से १२ फरवरी)

साढ़ेसाती का प्रारंभ यात्रा में कष्ट व सुख में कमी देगा । उत्तरार्ध से पूर्व तक कठिनाइयां अधिक रहेंगी । गत वर्ष से श्रेष्ठ व अनुकूल सिद्ध होगा । व्यवसाय व राजनीति में उत्कर्ष होगा । जोखिम

न लें। सुख व आर्थिक स्थिति में सुधार होगा। स्वास्थ्य के प्रति सजग रहें। संतान को पीड़ा रहेगी। मतभेद बढ़ेंगे।

श्रेष्ठ समय : २८ जनवरी से फरवरी अंत; २० मार्च से मार्च अंत; १० जुलाई से २५ जुलाई; ९ अगस्त से २५ अगस्त; १९ अक्तूबर से ६ दिसंबर तक।

प्रतिकूल समय : २६ जनवरी तक, १३ अप्रैल से २९ मई; २६ अगस्त से २० सितंबर तक।

कुंभ :

(१३ फरवरी से १४ मार्च)

एकादश शनि लाभ, विद्या, व्यवसाय (भूमि, मशीन, पत्थर, चमड़ा, सीमेंट कोयला) एवं राजनीति में विशेष अनुकूलता देगा। स्वास्थ्य उत्तम रहेगा। कनिष्ठ वर्ग से सहयोग मिलेगा। नौकरी, पत्नी-पक्ष एवं दैनिक कार्यों में चिंता की स्थिति बनी रहेगी। नयी योजना व कार्य आरंभ हो सकते हैं। यह वर्ष गत वर्ष से श्रेष्ठ रहेगा।

श्रेष्ठ समय : १० फरवरी तक; ६ अप्रैल से १५ मई; २० जुलाई से २० अगस्त; १ से ५ दिसंबर।

प्रतिकूल समय : २६ मार्च से १ अप्रैल; ४ जून से २० जुलाई; २९ सितंबर से २० अक्तूबर; २१ नवंबर से ६ दिसंबर।

मीन :

(१५ मार्च से १३ अप्रैल)

यह वर्ष गत वर्ष के संत्रास, कुंठा, त्रस्तता एवं प्रतिकूलता से मुक्ति देगा। पूर्वार्ध में गुरु एवं राहु तथा दसमस्थ शनि के प्रभाव मिलेंगे। परिवार पक्ष से कष्ट मिलेगा। नौकरी में पूर्वार्ध अनुकूल रहेगा। व्यवसाय में प्रगति होगी। यात्रा व स्थान परिवर्तन होगा। जनविरोध की स्थिति बनेगी, राजनीति में फूंक-फूंककर कदम रखें। कार्य एवं पद परिवर्तन हो सकते हैं।

श्रेष्ठ समय : जनवरी ६ से २२ फरवरी तक; १८ अप्रैल से १ मई, १२ मई से २० जून, ९ अगस्त से ९ सितंबर; २८ सितंबर से १० अक्तूबर, २० दिसंबर से वर्ष अंत तक।

प्रतिकूल समय : मार्च एवं २ मई से १० मई; २१ जून से ६ अगस्त, १२ अक्तूबर से १८ नवंबर तक।

जनवरी मास के पर्व एवं व्रत

७ जनवरी – गणेश चतुर्थी
१५ जनवरी – षट्तिला एकादशी
१७ जनवरी – प्रदोष
२६ जनवरी – भीष्म अष्टमी
२९ जनवरी – जया एकादशी
३१ जनवरी – प्रदोष व्रत

–देवलोक कालोनी (सी. टी. ओ.), बैरागढ़, भोपाल, म. प्र.

गीत

— स्वप्निल तिवारी —

एक नदी–
बहती सी–
एक ताल ज़िंदगी ।
एक सत्य–
एक झूठ,
एक चाल ज़िंदगी ।
व्यर्थ के प्रयत्न, थकी-हारी अभिलाषाएं
व्याकुल मृग–मरुथल का पानी,
दम-भरती जिजीविषा गिरती, उठती,
चलती–
मृगतृष्णा–छल भरी कहानी,
सरल समाधान,
कभी–
उलझा-सा समीकरण,
जोकि हल,
न हो पाया,
वो सवाल ज़िंदगी ।
जीवन ही लूट-मार, हिंसा आतंकवाद
जीवन ही सुरभित वातायन,
जीवन ही राग-द्वेष, जीवन ही अहंकार,
जीवन ही गीता-रामायण,
राधा की
छेड़-छाड़
मर्यादा सीता की,
मीरा का
पागलपन,
बेमिसाल ज़िंदगी ।
नगर-वधू के घर में, तन का व्यापार या कि,
मंदिर में पूजा का दोना,
ऋषियों का तपश्चरण, साधना मनस्वी की,
छूमंतर डायन का टोना,
विस्तृत आयाम,
कभी–
बौना-सा रूप धरे,
जादूगर का
झोला–
या कमाल ज़िंदगी ।
रामायण या कुरान, बाइबिल गुरु-ग्रंथ और
वेद-ऋचा कबिरा की बानी,
मोहक-संगीत और कोमल अभिव्यक्ति लिये,
गीत, ग़ज़ल, नज्म या कहानी,
तुलसी, मतिराम, सूर,
जायसी, निराला या–
एक बिंब,
एक रूप
इक ख़याल ज़िंदगी ।
जन्म से मरण तक का अंतराल–एक उम्र,
एक कथा–किंतु है अधूरी,
कितने ही युग आये, बीत गये, कौन यहां,
नाप सका–जीवन की दूरी,
नाटक का
पर्दा या
कठपुतली का अभिनय,
अंतहीन,
यात्रा-सी
है विशाल ज़िंदगी ।

— भारतीय स्टेट बैंक, आई. टी. आई. टाउनशिप, रायबरेली-२२९०१०, उ. प्र. —

□

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः
भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन साहित्य, और संस्कृति का मासिक

प्रार्थना

गूहता गुह्यं तमो, वियात विश्व मत्रिणम्
ज्योतिष्कर्ता यदुश्मसि ।

ऋक्–१.-८६-१० ॥

खोलो ज्योतिर्द्वार हृदय के, खोलो ज्योतिर्द्वार
गूढ़ अंधेरा छाया मन में,
गहन उदासी है जीवन में,
टूट गया आधार, खोलो ज्योतिर्द्वार ।
जीवन का यह पथ दुर्गम है,
आंखों के आगे सब भ्रम है,
कौन करेगा पार, खोलो ज्योतिर्द्वार ।

[रूपांतर : सत्यकाम विद्यालंकार]

प्रेरक और रोचक प्रसंग

छोटी बात, बड़ी सीख

□ सन्तोष

यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक डायोजिनस एक दिन सड़क के किनारे खड़े होकर हंस रहे थे। एक राहगीर ने उनसे पूछा, 'क्या बात है? आप क्यों हंस रहे हैं?'

डायोजिनस ने जवाब दिया, 'सड़क के बीच में पड़ा वह पत्थर देख रहे हो। दस से ज्यादा आदमी इससे ठोकर खा चुके हैं। उसके बाद उसे देखकर कोसते हुए चले गये, मगर किसी को यह ख्याल नहीं आया कि उसे हटाकर किनारे रख देता, ताकि बाद में आने वालों को ठोकर न लगे।'

○○○

टामस हार्ट वेन्टन को जब खबर मिली कि उनका घर जल गया है, तब वह अमरीकी संसद में थे। बाहर निकले और घर पहुंचकर दुर्घटना का दृश्य देखने लगे। बहुत भारी तबाही हो गयी थी। उसे देखकर उन्होंने कहा, 'इसकी वजह से मौत का सामना करना ज्यादा आसान हो गया है। पीछे छोड़कर जाने वाला माल कितना कम रह गया।'

○○○

संत हजरत एक दोपहर आराम कर रहे थे। परिचारिका पंखा झल रही थी। पंखा झलते-झलते उसे नींद आ गयी। परिचारिका को सोते देख संत पंखा लेकर उस पर झलने लगे। जागने पर, परिचारिका संत को अपने ऊपर पंखा झलते देख घबरा गयी और डरकर बोली, 'मुझे नींद आ गयी थी। कृपया मुझे माफ कर दीजिये।'

संत ने कहा, 'इसमें माफी मांगने की क्या बात है? तुम भी तो इंसान हो। अगर मैंने पंखा झल दिया तो क्या बुरा किया।'

जब हेरल्ड मैकमिलन इंग्लैण्ड के प्रधानमंत्री थे, तब वह अफ्रीका के दौरे पर गये। वहां के मूल निवासियों ने उनके विरुद्ध प्रदर्शन किया। बड़ी भारी भीड़ जमा हो गयी। लोगों के हाथ में रंगभेद की नीति के खिलाफ बोर्ड और झंडियां थीं। एक युवक बोर्ड को उल्टा करके हाथ में लिये था। मैकमिलन उसके पास गये और बोले, 'मेरे मित्र, अपना बोर्ड सीधा करो ताकि मैं इसे पढ़ तो सकूं।'

मैकमिलन का साहस देखकर सब लोग हंस पड़े। उनका विरोध करने के बजाय उनकी जय-जयकार करने लगे।

○ ○ ○

जूलियस सीजर को एक बार पत्रों का एक पुलिंदा पड़ा मिला। वे पत्र उनके एक विरोधी ने लिखे थे। सीजर ने उन्हें बिना

पढ़े ही जला डाला ।

'आपको ये पत्र अपने शत्रु के खिलाफ सबूत के तौर पर रखने चाहिये थे ।' एक मित्र ने सलाह दी ।

'नहीं, मैं गुस्से के प्रति हमेशा सतर्क रहता हूं । लेकिन उससे भी ज्यादा जरूरी है, गुस्सा दिलाने वाले कारण को मिटा देना ।' सीजर ने जवाब में कहा ।

○ ○ ○

बहुधा मार्क ट्वेन चर्च में रविवारीय उपदेश सुना करते थे । एक दिन वे पादरी से बोले, 'डाक्टर जोन, आपका उपदेश सुनकर मुझे बड़ा हर्ष होता है । ऐसा लगता है, जैसे मैं अपने पुराने मित्र से मिल रहा हूं । क्योंकि आप जानते हैं कि मेरे पास एक पुस्तक है जिसमें आपके उपदेशों का प्रत्येक शब्द है ।'

'बिलकुल गलत बात है यह ।' उसने उत्तर दिया ।

'नहीं, सचमुच मेरे पास वह पुस्तक है ।' मार्क ट्वेन बोले ।

'अच्छा, तो उसे मेरे पास भेज देना ।' उत्तर में 'जरूर' कह अगले दिन सबेरे ही मार्क ट्वेन ने बड़ा शब्दकोश पादरी के पास भिजवा दिया ।

○ ○ ○

प्रसिद्ध शल्य-चिकित्सक बायट्लर जितने मालदार थे, उतने ही कंजूस भी थे । एक बार उनकी लड़की बीमार पड़ी, तुरंत उसका आपरेशन जरूरी था और बायट्लर ने तुरंत कर भी डाला ।

दूसरे दिन जब लोग लड़की की कुशल खबर पूछने आये, तो हर आदमी लगभग यही बात पूछता था कि अपनी ही इकलौती बेटी पर चाकू चलाते हुए आपके पितृ-हृदय को दुख नहीं हुआ ?

'ऊंह' बायट्लर उत्तर देता, 'रोगी कोई भी हो, फर्क क्या पड़ता है ? काटा, एपेंडिस निकाला और खत्म !'

अंत में सर्जन का भाई भी आया और उसने सबसे अलग ढंग का सवाल किया—'मैं तुम्हें अच्छी तरह जानता हूं, इसलिये तुमसे सीधा सवाल करना चाहता हूं—क्या ऐसे मालदार की बेटी का मुफ्त आपरेशन करने में तुम्हारे हृदय को दुख नहीं हुआ ?'

○ ○ ○

जर्मनी की महान विचारक रोजा लेक्जेंबर के विरुद्ध किसी ईर्ष्यालु ने समाचारपत्र में कुछ गलत अफवाहें प्रकाशित करवा दीं, मगर वह शांत रहीं । लोगों ने कहा भी कि उन समाचारों का खंडन न करने से जनता का उनके प्रति संदेह उत्पन्न हो रहा है ।

रोजा ने कहा, 'मेरे पिता ने बचपन में मुझसे एक बात कही थी और वह मुझे भूलती नहीं है कि जब हम दूसरे के दोषों को बताने का यत्न करते हैं तो हमारी एक उंगली तो उधर की ओर होती है तथा तीन होती हैं हमारी ओर । जिसने भी यह समाचार छपवाया है, उसने मेरी अपेक्षा अपने को तीन गुना दोषी तो पहले ही स्वीकार कर लिया, अब उसका विरोध करने से क्या लाभ ?'

—सरिया मिल कंपाउंड, सिकंदरा राऊ.
(अलीगढ़) २०४२१५, उ. प्र.

□

मुंशीवाणी

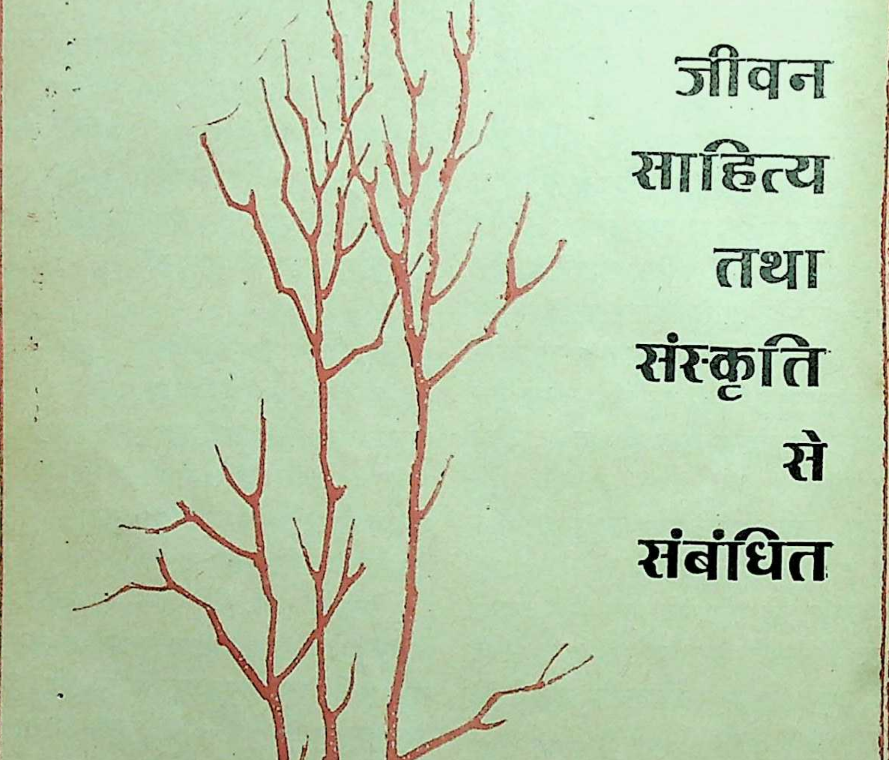

जीवन
साहित्य
तथा
संस्कृति
से
संबंधित

भारतीय मनीषा के प्रकांड विद्वान तथा सुप्रसिद्ध साहित्यकार एवं शिक्षाविद् डा. कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी भारतीय विद्या भवन द्वारा संचालित विद्यालयों और महाविद्यालयों के छात्र-छात्राओं को भवन के कुलपति की हैसियत से समय-समय पर विभिन्न विषयों पर लिखकर अपनी लेखनी के प्रसाद द्वारा उद्‌बोधित करते रहे हैं। उनके द्वारा लिखे गये 'कुलपति के पत्र' आज भी उस समय से कहीं अधिक उपयोगी और महत्वपूर्ण हैं।

'नवनीत' के पाठकों के लाभार्थ कुलपति मुंशी के पत्रों के कुछ संक्षिप्त अंश हम यहां प्रस्तुत कर रहे हैं।

मुंशीजी के सामयिक समस्याओं पर लिखे गये ये पत्र मुंशी शताब्दी वर्ष के अवसर पर हमारे पाठकों को आज भी सही दिशा-निर्देश देने एवं अपनी संस्कृति का ज्ञान कराने में पूर्ण सक्षम सिद्ध होंगे।

—संपादक

भारतीय संस्कृति का आधार

पिछले पत्र में मैंने भारतीय संस्कृति की केंद्रीय विचारधारा के रूप में ऋत तथा तपस् की चर्चा की थी। यह केवल एक दार्शनिक विचार अथवा सिद्धांत ही नहीं रहा, बल्कि सामाजिक संस्थाओं और आचरण के नियमों तथा सर्वोपरि अनुशासन के माध्यम से इसे जीवन में चरितार्थ किया गया, जिसमें दैनिक आचरण को भी पवित्र यज्ञ का दर्जा मिला।

अनुशासन अथवा नियमों की शिक्षा और आचरण का मुख्य केंद्र ऋषि का आश्रम ही था। आर्य नरेश दस्युओं से तथा आपस में भी युद्ध करते रहते थे; लेकिन इन सबसे अप्रभावित व तटस्थ, ऋषि अपने आश्रम में शिष्यों के साथ विद्याभ्यास व धर्माचरण के वातावरण में रहते थे। पवित्र मंत्रों के माध्यम से वे देवताओं के संदेश का प्रसार करते और यज्ञ के द्वारा उनकी पूजा करते। वे अपने शिष्यों को धार्मिक कार्य संपन्न करने, देवताओं से संलाप करने, मंत्रों का सही उच्चारण करने और मनुष्यों को ऋत के नियमों के प्रति प्रवृत्त करने की शिक्षा देते। उचित रूप में आमंत्रण पाने पर वे एक राजा के यहां से दूसरे के यहां जाते यज्ञ करते और भेंटस्वरूप गायें पाकर उनके द्वारा सम्मानित होते।

प्रत्येक आश्रम में प्रधान ऋषि के प्रति अपार श्रद्धा के फलस्वरूप एक संयुक्त परिवार का-सा वातावरण रहता था। वह एक छोटा-सा विश्वविद्यालय था; लेकिन कोई ऐसा सेवा-केंद्र न था, जिसकी उपयोगिता के लिए लोग उसका खर्च उठाते। वह तो संपूर्ण समाज की सहायता का अधिकारी था और लोग उसे एक पूर्ण जीवन की प्रेरणा का स्रोत मानकर आदरभाव से देखते थे। बदले में, आश्रम भी

व्यक्तिगत व सामुदायिक जीवन को यज्ञ, दीक्षा, ब्रह्मचर्य और ब्राह्मण अथवा प्रार्थना द्वारा उन्नतिशील बनाते ।

वैदिक भारत में ऋषि पुरोहित नहीं हुआ करते थे; वे तो ऐसे पवित्र, धार्मिक व्यक्ति थे, जिन्होंने अपना जीवन समर्पित कर दिया था । वे गुरु थे और देवताओं तथा ऋत के संदेशवाहक थे । उनको जो भेंट दी जाती वह उन पर कोई कृपा करके नहीं, बल्कि उनका सम्मान करने के लिए, श्रद्धा-स्वरूप; क्योंकि स्वयं राजा भी सनातन धर्म के अनुसार सामाजिक व्यवस्था को सुचारुरूप से चलाने के लिए क्षात्र के प्रतिनिधि मात्र थे ।

इसके विपरीत आधुनिक पाश्चात्य सभ्यता ने धन और सफलता को ही जीवन का मौलिक मूल्य बना दिया है । सामाजिक नेतृत्व प्राप्त करने के लिए इन्हीं गुणों का होना आवश्यक है । परिणामस्वरूप, प्रत्येक व्यक्ति का चरित्र और पदप्रतिष्ठा सफल विक्रेता (व्यापारी) के हाथ में आ गयी है । वह किसी भी सैनिक, कवि, साहित्यिक, वैज्ञानिक, अध्यापक की सेवाएं खरीद सकता है और इस प्रकार सभी को अपने इशारे पर नचा सकता है ।

पश्चिम के कुछ आधुनिक विश्वविद्यालयों में हम देखते हैं कि विद्वान लोग उच्चतर नियमों के प्रति निष्ठावान रहकर भी जी सकते हैं, किंतु उस प्रतिष्ठा के अभाव में, जो एक आध्यात्मिक आधार पर स्थापित सामाजिक व्यवस्था ही समर्पित व्यक्तियों को दे सकती है, उनमें से बहुत कम ही लोग व्यापारी के प्रभाव से बचे रह सकते हैं ।

०००

ऋत के अनुकूल जीवन-यापन की दिशा में प्रथम चरण दीक्षा थी । यह दीक्षा आचार्य के संरक्षण में—और वैदिक काल में आचार्य प्रसिद्ध ऋषि हुआ करते थे—आत्म-नियंत्रित आचरण में प्राथमिक शिक्षा द्वारा दीक्षित जीवन में पदार्पण करना था ।

हमारी संस्कृति में आचार्य का पद अत्यंत महत्वपूर्ण था । वे अपने शिष्यों के पूज्यनीय आध्यात्मिक पिता थे । इसीसे बाद में गुरु-परंपरा का विकास हुआ जिसमें शिक्षा की परंपरा, पद्धति और आदर्शों की शृंखला कायम हुई ।

अथर्ववेद में आचार्य की उपमा शिष्य को अपने गर्भ में धारण करनेवाली आध्यात्मिक माता से दी गयी है । बाद में, उपनिषदों ने तो उन्हें आराध्यदेव ही कहा है, क्योंकि आचार्य के तत्वावधान में तीन दिन तक कड़े अनुशासन में रहने के बाद शिष्य 'एक ऐसा आध्यात्मिक आश्चर्य बन जाता, जिसके देवता भी दर्शन करने आते ।'

दीक्षा की प्रारंभिक अवस्था में बालक को व्रतों का पालन कर ऋत के अनुकूल बनने की शिक्षा दी जाती । शिष्य कहता है, 'मैं व्रत का पालन करूंगा और

उसके द्वारा असत्य को लांघ कर सत्य की ओर बढ़ूंगा।'

इन वचनों को बहुत महत्वपूर्ण माना जाता था। ऋषि कहते हैं, 'व्रतों के पालन से ही दीक्षा मिलती है। दीक्षा से शिष्टता और शिष्टता से श्रद्धा प्राप्त होती है। और, केवल श्रद्धा से ही सत्य की प्राप्ति हो सकती है।'

दीक्षा का अर्थ ही था अनुशासनबद्ध जीवन, जो प्रार्थना, शिक्षा प्राप्त करना, शिक्षा देना और व्रतों के पालन के लिए समर्पित था। जब एक आर्य दीक्षित होता, तब वह ब्रह्मचारी बन जाता और बरसों तक, कभी-कभी तो १२ से लेकर २४ वर्षों तक, ब्रह्मचारी बना रहता। उस अवस्था में वह कठोर नियमों का पालन करता और ऋषि के आश्रम में वेदाभ्यास करता।

हमारी संस्कृति ने वैदिक काल के बाद भी कई युगों तक जो एक आदर्श-भावना रखी और हमारी सामाजिक व्यवस्था प्राणवान बनी रही, इसका कारण यही था कि वह इस कोटि के आत्मनियंत्रित, समर्पित शिष्यों पर अपनी सृजनात्मक शक्ति के लिए निर्भर थी। ऋषि कहते हैं, 'यह केवल ब्रह्मचारी के तपस् की ही शक्ति है, जिससे राजा राज्य की रक्षा करता है, गुरु शिष्य बनाता है, कुमारी युवक पति पाती है और देवता अमर होते हैं। इसी के द्वारा महान देवता इंद्र ने देवताओं को दिव्य आत्मा प्रदान की।'

जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, कोई भी संस्कृति तभी संवृद्धिशील होती है, जब उसकी शिक्षा-पद्धति युवाओं में एक आदर्श की भावना भरे और उन्हें दीक्षित जीवन बिताने के लिए तैयार करे। यदि वे भोगवादी बन गये, तो वह प्रणाली अपने उद्देश्य में असफल रहती है और नयी पीढ़ी उस संस्कृति के मूल्यों को फिर से समझ नहीं पाती। परिणामस्वरूप, संस्थाएं और परंपराएं शक्तिहीन हो जाती हैं, उनका क्षय होने लगता है और सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विघटन शुरू हो जाता है।

०००

ब्रह्मचर्य केवल शिक्षण काल था; तपस् अर्थात आत्मनियंत्रण का वर्तन तो विवाहित जीवन में भी किया जाता था, जब कि परंपरा को आगे बढ़ाने के लिए संतानोत्पत्ति एक कर्तव्य बन जाता था।

इस ध्येय की पूर्ति के लिए ऋषि का शिष्य जो तपस् और ब्राह्मण—आत्मनियंत्रण और प्रार्थना—का जीवन जीता, वह भी समाज का नेता माना जाता। इससे ऋत-समर्पित दीक्षित पुरुष समाज में अल्पसंख्यक नेता बने रहते। स्थायी मूल्यों के निर्माताओं के रूप में ये लोग परिज्ञान एवं निर्णय और उन्हें जीवन में चरितार्थ करने की अनुमति प्रदान करते। इस प्रकार नैतिक-आध्यात्मिक मूल्यों के निर्माताओं को नेतृत्व प्रदान करने से सामाजिक व्यवस्था को महान

शक्ति व स्थायित्व का एक मानसिक-सामाजिक आधार मिला।

राजन्य युद्ध में नेतृत्व करते थे; जो शस्त्र धारण करते वे क्षत्रिय कहलाते। अधिकांश आर्य जो खेती करते, उन्हें वैश्य कहा जाता। वे अनार्य जो अब तक असंस्कृत थे, शूद्र माने जाते। वैदिक संस्कृति के उत्कर्षकाल में ये चार विभाग आनुवंशिक नहीं थे। वे कर्म के अनुसार वर्ग थे, जो एक-दूसरे पर निर्भर रहने के कारण एक सामाजिक इकाई के रूप में सुव्यवस्थित थे।

वैदिक ऋषियों में महानतम, वशिष्ठजी एक वेश्या-पुत्र थे। विश्वामित्र राजपुत्र होते हुए भी एक महान ऋषि थे। आवश्यक गुणों के रहने पर एक राजन्य भी पुरोहित का कार्य कर सकते थे। अनार्य माताओं से उत्पन्न ऋषियों का उल्लेख भी हमें मिलता है।

०००

एक ऋषि का सर्वोच्च कर्म ऋचाओं अर्थात् पवित्र श्लोकों की रचना, संरक्षण और प्रचार करना था। वेद स्वयं ईश्वर-तुल्य थे, क्योंकि देवता उनमें निवास करते थे। शब्द पवित्र था, यज्ञ उसकी ओर केवल एक चरण था। 'ब्राह्मणा वेद परांगता' अर्थात् वेदों में पारंगत ब्राह्मण उसके जीवित स्वरूप थे।

शब्द अर्थात् वेदों की पवित्रता वैदिक संस्कृति का एक अत्यंत शक्तिशाली मौलिक मूल्य बहुत पहले ही बन चुकी थी। जातीय एकता उसी के फलस्वरूप थी। पवित्र शब्द के प्रति और साथ ही विद्या द्वारा मूल्यों का निर्माण करने के लिए समर्पित व्यक्तियों को वह जीवन में सर्वोच्च बनाती थी। यही वह युग-चट्टान थी, जो संस्कृति का आधार थी और एकता, निरंतर प्रेरणा और आर्यों में एक उच्चादर्श की भावना भरती थी। वेदों का ज्ञान ब्राह्मणों का एक मात्र अधिकार नहीं था, जैसा कि बाद में समझा जाने लगा था। प्रत्येक व्यक्ति पवित्र शब्द पढ़ने का अधिकारी था। ऋषि कहते हैं 'मैं इन पुनीत शब्दों का ज्ञान सभी को दूंगा, ब्राह्मण को, राजन्यों को; शूद्रों को और सभी आर्यों को; स्वजनों को और परजनों को भी।'

०००

जैसा कि ऋग्वेद से हमें पता चलता है, वैदिक संस्कृति का केंद्र सरस्वती के तट हैं, जहां वशिष्ठ व विश्वामित्र जैसे ऋषि रहते थे। उन्हें सम्राटों की श्रद्धा प्राप्त थी। भेंट के तौर पर उनको सैकड़ों गायें मिलती थीं, जिनके कारण सांसारिक संपन्नता व सफलता की परवाह किये बिना उनके शिष्य अपने गुरु के उच्चादर्शों का प्रचार कर सकते थे।

सांसारिक सुखों से परे, संपत्ति व सफलता से अविचलित, वैदिक ऋषियों का दृढ़ संकल्प था –

उच्च ज्ञान का स्रोत, बुद्धि व दृढ़ इच्छा, और मानव हृदय की वह मृत्यु-

हीन ज्वाला, जिसके बिना कोई कार्य संभव नहीं –

ये सब मेरे मन में सबके कल्याण के लिए प्रेरणा दें।

और उच्चादर्श की यह भावना संसार को अपने अनुरूप बनाने के लिए उन्हें सामूहिक कर्म की प्रेरणा देती। वे देवताओं से प्रार्थना करते–

हमारे शरीरों का स्वच्छंद विकास हो। हमारे गृहों का अनंत विस्तार हो, हमारे जीवन की पूर्ण अवधि हो।

और विजय की ओर आर्यों को उन्मुख करनेवाले जय-घोष की प्रेरणा के पीछे यह उत्कंठा मौजूद थी–

सभी को आर्य बनाना

अन्यायियों को दूर भगाना

ऋषियों ने अपने आश्रम केवल सप्त-सिंधु के केंद्रों में ही नहीं खोले; बल्कि निरंतर फैलती हुई आर्य-सीमाओं पर भी स्थापित किये। इससे विभिन्न जातियों का भी आर्यीकरण हो सका। अपने आदर्श के अनुकूल ही उन्होंने विभिन्न रीति-रिवाजों और धार्मिक मान्यताओं के साथ भी समझौता किया। परिणामस्वरूप आर्य, द्रविड़ व अन्य जातियां, जिन्होंने आपस में शादी-ब्याह कर रिश्ते कायम किये उनमें जातीय परंपराओं व रीति-रिवाजों का एक ऐसा समन्वय हुआ कि वे एक ही सशक्त संस्कृति से अभिभूत, एक समाज बन सके।

कुलपति मुंशी

राजा लोग युद्ध-रत रहे। राजवंशों का उत्थान और पतन हुआ। किंतु एक प्रभावशाली अल्पसंख्यक वर्ग जीवन व लोगों की विचारधारा पर अपना आधिपत्य जमाता गया। वशिष्ठ व विश्वामित्र के पहले ही शायद प्रारंभ में कुछ आर्यों ने दक्षिण और पश्चिमी तट पर अपनी बस्तियां बसा ली थीं। उनके साथ ही महान ऋषियों के शिष्यों की कई पीढ़ियां आर्य-संस्कृति के सीमांतों को आगे बढ़ाती गयीं। लोपमुद्र और अगस्त्य ऋषि के शिष्यों की कई पीढ़ियों ने आर्यसंस्कृति को दक्षिण में लाकर दक्षिण-पूर्व एशिया तक फैलाया। स्वयं अगस्त्य ऋषि ही तमिल व्याकरण और काव्य के जनक माने जाते हैं।

प्रायः उसी काल में भृगुओं ने अपनी बस्तियां पश्चिमी तट पर बसायीं। कैम्बे से कन्याकुमारी तक के ब्राह्मण आज भी अपने को परशुराम के वंशज बताते हैं। केरल में जाकर कोई भी देख

सकता है कि अपने को परशुराम के वंशज मानने वाले नंबूदिरी ब्राह्मणों ने भारत के उस दूर कोने में कितना सांस्कृतिक प्रभाव जमा रखा है और इतनी शताब्दियों के बाद भी वैदिक साहित्य का संरक्षण किया है।

○○○

वैदिक आर्यों की संस्कृति में जो उतार-चढ़ाव देखे उसकी स्मृति ऋग्वेद में सुरक्षित है। आर्य विजेता दिवोदास के पुत्र सुदास ने अपने गुरु महान वैदिक ऋषि वशिष्ठ की सहायता से दस जातियों के संघ से युद्ध किया, जिनमें कुछ अनार्य जातियां भी थीं, लेकिन जिनका नेतृत्व एक और महान ऋषि विश्वामित्र की सहायता से आर्य नरेश पुरुकुत्स ने किया। इस युद्ध को दशरज्ज अर्थात् दस राजाओं का युद्ध कहा जाता है। इससे मालूम होता है कि आर्य ऋषियों और नरेशों के नेतृत्व में वैदिक आर्यों तथा अनार्यों में किस प्रकार समझौते हो रहे थे।

पुराणों में सुरक्षित एक और घटना से पता चलता है कि यह संस्कृति इससे भी अधिक भीषण उथल-पुथल से गुजर चुकी है। हैहया के, जो शायद वैदिक आर्यों के पूर्व भारत में आयी एक आर्य जाति थी, सम्राट सहस्रार्जुन ने सप्तसिंधु पर आक्रमण किया। सभी पवित्र नियमों की अवहेलना करते हुए उसने ऋषि वशिष्ठ के आश्रम को नष्ट कर डाला और ऋषि जमदग्नि की हत्या की। जमदग्नि के पुत्र परशुराम ने, जो भृगु वंश के योद्धा-पुरोहितों के प्रधान थे इस आक्रमण का सफलता से सामना किया। उन्होंने आक्रामकों का विनाश किया और आर्य मूल्यों की श्रेष्ठता का पुनः स्थापन किया।

ऐसा मालूम होता है कि परशुराम के जिन सुप्रसिद्ध इक्कीस युद्धों में सभी नरेशों का नाश हुआ, उन्हीं दीर्घकालिक युद्धों से वैदिक काल की समाप्ति हुई।

○○○

राष्ट्रीय एकता का आधार

राष्ट्रीय विचार धाराओं का अध्ययन, उन पर विचार और भाषण तथा उनमें सक्रिय योगदान मैं साठ से भी कुछ अधिक वर्षों से करता आया हूं, फिर भी राष्ट्रीय एकता के महत्वपूर्ण विषय पर मैं आपसे इस पत्र में कुछ कहना चाहूंगा। मेरा संबंध उस काल से है, जब १९०२ में कालेज में भर्ती होते समय मैंने अपने आवेदनपत्र में स्वयं को भारतीय के अतिरिक्त और कुछ भी बताने में इन्कार कर दिया था। लेकिन आज मैं यह दिन भी देख रहा हूं, जबकि एक अमरीकन यात्री के शब्दों में, 'आज देश में एक दक्षिण भारतीय, एक पंजाबी, एक बंगाली, एक गुजराती, एक मराठी के दर्शन तो होते हैं, परंतु एक भारतीय कहीं नहीं दिखायी पड़ता।'

संसार अब पहले जितना बड़ा नहीं रहा। अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था अब अनिवार्य हो चुकी है। संयुक्त राष्ट्रसंघ ने हमारे

समक्ष एक विश्वसमाज की झांकी प्रस्तुत की है। यह सब सही है, पर पूर्णतः सही नहीं। राष्ट्रों के सह-अस्तित्व पर आधारित एक अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की शीघ्र आवश्यकता अनुभव करने पर भी मुझे स्वयं को राष्ट्रवादी कहने में कोई संकोच नहीं। मुझे पक्का विश्वास है कि संघर्ष और अविश्वास के इस युग में सुदृढ़ अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था हम तभी स्थापित कर सकते हैं, जबकि राष्ट्रीय एकता की जड़ें ठोस और मजबूत हों। चीनी आक्रमण के समय हमने देखा कि अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था रहे या न रहे, एक कमज़ोर राष्ट्र को कितना नुकसान उठाना पड़ता है।

राष्ट्रीय एकता का आधार इन चार पायों पर ही रखा जा सकता है—वैधानिक एकता, मानसिक एकता, आर्थिक एकता और प्रतिकार की सामूहिक इच्छा। इनमें से प्रथम एकता का एक रूप संवैधानिक है। हमें याद रखना चाहिये कि संविधान हमारी एकता की पवित्र संस्कारविधि है और इसलिए पवित्र है। उसे हमें अपनी सर्व प्रथम श्रद्धा अर्पित करनी चाहिये। सभी राजनीतिक दलों को इसी के ढांचे में रह कर कार्य करना है।

यदि सत्तारूढ़ दल अपनी सुविधानुसार समय-समय पर इसमें परिवर्तन करता है, तो उसकी सातत्य-भावना भंग होती है। उसकी पवित्रता नष्ट हो जाती है और उसका आधार भी सुदृढ़ नहीं रह पाता। तब संविधान के स्थान पर दल की व्यवस्था ही इस एकता का स्रोत हो जाती है और अंतर्दलीय दबाव और संविधान के बाहर के दबावों के लिए भी मार्ग प्रशस्त हो जाता है। जो दल संविधान को नष्ट करने पर तुला है, वह राष्ट्रीय अपराध का भागी है।

०००

वैधानिक एकता का दूसरा तत्व सारे देश के लिए समान सैनिक तथा प्रशासन सेवाओं से प्राप्त शक्ति है। राष्ट्रीय इमारत के लिए वह एक फौलादी ढांचे का काम करती है। इन सेवाओं के लिए भर्ती सामान्य योग्यताओं पर होनी चाहिये; एक सामान्य शक्ति और चुस्ती उनमें होनी चाहिये और भारतीय, धार्मिक तथा प्रांतीय भावनाओं से उन्हें मुक्त रखा जाना चाहिये। अखिल भारतीय सेवाएं जितनी अधिक प्रभावशाली ढंग से कार्य करेंगी, उतनी ही राष्ट्र की नींव मज़बूत होगी। इन सेवाओं में जब प्रांतीय आधार पर भर्ती हो या उनमें प्रांतीयता का दृष्टिकोण आ जाय, तब यह नींव हिलने लगती है। यह दुर्भाग्य का विषय है कि कुछ प्रांतीय मंत्रिमंडल अपने क्षेत्र के कर्मचारियों के प्रति असाधारण रूप से पक्षपात करते हैं। यदि सेवाओं में प्रांतिक भावनाएं कार्यरत रहीं, तो राष्ट्र की इमारत ढह जायगी।

देश भर में न्याय का शासन समान रूप से लागू होना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। इससे मौलिक अधिकारों के माध्यम

से प्रत्येक नागरिक का संबंध राज्य से स्थापित हो जाता है । हमारे संविधान ने न्याय के शासन की जो सबसे मजबूत कड़ी तैयार की है, वह एक संगठित न्याय-व्यवस्था, जो देश भर में निम्न से निम्न पंचायत या हाकिम से लेकर सर्वोच्च सुप्रीम कोर्ट तक फैली हुई है । जब तक यह न्याय व्यवस्था इसी प्रकार सुगठित सुरक्षित और स्वतंत्र रहेगी, तभी तक एकता का आधार नागरिकों की स्वतः स्फूर्त और ऐच्छिक निष्ठा पर रहेगा ।

ooo

एक और इतना ही महत्वपूर्ण तत्व है, संपूर्ण शक्तिवान केंद्र के चारों ओर राष्ट्रीय इच्छाशक्ति का संगठन । इसी से राष्ट्रीय एकता सुरक्षित रह सकती है । आवश्यकता पड़ने पर आवश्यक सामूहिक शक्ति भी यह प्रदान कर सकता है । इस संकटग्रस्त युग में किसी राष्ट्र का अस्तित्व ही उसके सुदृढ़ केंद्र पर अवलंबित है, जो विभिन्न प्रांतों को सुगठित रख सके और बाहरी आक्रमण से देश की रक्षा कर सके। बार-बार हमें केंद्र के अधिक शक्तिशाली होने की शिकायत सुनने को मिलती है, परन्तु केंद्र का सुदृढ़ होना अति आवश्यक है । आधुनिक काल की यह परम आवश्यकता है ।

क्षेत्रीय स्वशासन की अपनी अच्छाइयां हैं अवश्य, परंतु सभी सत्ता का स्रोत केंद्र को ही रहना चाहिये, क्योंकि इसके अभाव में न तो देश ही सुगठित रह सकता है और न बाहरी खतरों का ही मुकाबला किया जा सकता है । इतिहास इस बात का गवाह है कि जब भी हमारी केंद्रीय शक्ति कमजोर हुई है, तभी भारत पर विदेशी आक्रमण हुए हैं ।

ooo

देश का प्रभावशाली अल्पसंख्यक वर्ग अर्थात् वह समुदाय, जो अपने विचारों अथवा प्रभाव से लोक जीवन को दिशा देता है, उसकी मानसिक एकता का भी होना अति आवश्यक है । इस एकता के सबसे बड़े शत्रु वे हैं, जो राष्ट्रवादी वाणी तो बोलते हैं, परंतु कार्य गद्दारों का करते हैं। जो अपना पितृ देश इस देश की सीमाओं के बाहर देखते हैं, वे इस एकता से कोसों दूर हैं; वे तो संभवतः देशद्रोही ही हैं ।

इस एकता का मूल आधार वे शिक्षित लोग हैं, जो एक राष्ट्र में बद्ध होने की इच्छा रखते हैं । हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि भारतीय राष्ट्रवाद उन लोगों की मानसिक एकता का परिणाम है, जिन्होंने अंग्रेज़ों द्वारा स्थापित युनिवर्सिटियों से पिछले सौ वर्षों से शिक्षा प्राप्त की । इस सामान्य चेतना का विकास और पोषण तभी हो सकता है, जबकि देश में उच्च शिक्षा द्वारा एक सांस्कृतिक और बौद्धिक एकता बनी रहे । इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए देश की सभी युनिवर्सिटियों में समान स्तर, समान परंपराएं और समान दृष्टिकोण होना चाहिये । यह तभी संभव है, जबकि देश भर में प्राध्यापक

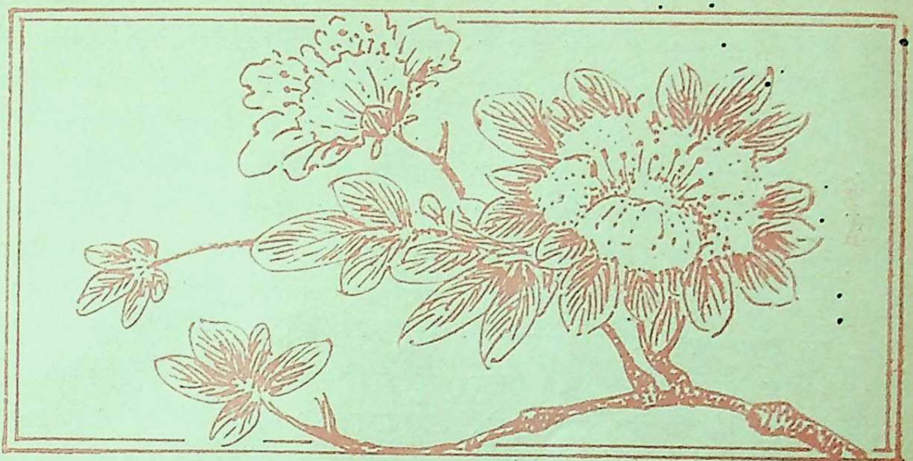

और विद्यार्थी एक स्थान से दूसरे स्थान पर कहीं भी बेखटके आ-जा सकें । जब तक विभिन्न युनिवर्सिटियों के स्तर और दृष्टिकोण में भेद रहेगा, तब तक यह मानसिक भावना मज़बूत नहीं हो सकती और यदि देश में युनिवर्सिटी-शिक्षा का माध्यम एक नहीं, रहा तब तो वह नष्ट ही हो जायगी ।

मानसिक एकता को लाने में एक महत्वपूर्ण तत्व है हमारी प्राचीन परंपरा की चेतना । यदि पाठ्य-पुस्तकें नयी पीढ़ी को हमारे गौरवशाली अतीत के वीरों, राजनीतिज्ञों और संतों की स्मृति से प्रेरित नहीं कर सकतीं, यदि उसे इन महापुरुषों की गौरवगाथाओं से वंचित रखा गया और यह नहीं बताया गया कि हमारे संस्थानों की अभिवृद्धि किस प्रकार हुई तो हमारे विश्वविद्यालय सभ्य जंगलियों को भले ही तैयार कर दें, परंतु राष्ट्रीय एकता की नींव हिल जायगी ।

मैं भारत के एक ऐसे राज्य को जानता हूं, जहां कुछ ग्रेज्युएट विद्यार्थी सर्विस-कमीशन द्वारा पूछे गये इस साधारण प्रश्न का उत्तर नहीं दे सके—'महाभारत के रचयिता कौन हैं ?' उनमें से एक ने कहा सी. राजगोपालाचारी । दूसरा इससे भी आगे बढ़ गया । उसने महाभारत का लेखक के. एम. मुंशी को ही बता दिया । इस सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय महाकाव्य के बारे में जो जानकारी उन्हें थी वह किसी पुस्तक-विक्रेता के यहां भवन द्वारा प्रकाशित और राजाजी द्वारा लिखित 'महाभारत' के संक्षिप्तीकरण की एक प्रति को देख कर ही उन्हें प्राप्त हुई थी । उसके मुखपृष्ठ पर जनरल एडिटर के रूप में के. एम. मुंशी का नाम छपा था ।

ooo

राष्ट्रीय एकता का एक और तत्व है, देश की आर्थिक एकता । लोगों को यह और भी अच्छी तरह समझ लेने की आव-

श्यकता है कि देश एक है और उसकी आवश्यकताएं तथा आर्थिक स्रोत समान हैं। विभिन्न क्षेत्रों द्वारा इस बात का ख़याल न करते हुए कि परिस्थितियां अनुकूल हैं या नहीं, अथवा साधन-स्रोत सहज प्राप्त हैं या नहीं, स्वयं को आत्मनिर्भर बनाने की चेष्टा एकता के भौतिक आधार को खत्म कर देगी। ऊपर से लादी गयी मार्क्सवादी योजनाएं भी जनता का समर्थन प्राप्त नहीं कर सकतीं और इसलिए हानिकर हैं। परंतु 'योजनाएं न बनाना' तो और भी अधिक दुर्भाग्यपूर्ण होगा।

साथ ही हमें यह भी अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि राष्ट्रीयता केवल भौगोलिक तत्वों, योजनाओं अथवा वैधानिक एकता का फल नहीं है। वह तो 'प्रतिकार की सक्रिय इच्छा' का परिणाम है—राष्ट्र की शक्ति के विघटित होने के प्रति प्रतिकार की सामूहिक इच्छा, सुरक्षा और स्थायित्व को ध्वंस करने की चेष्टा के प्रति प्रतिकार, विदेशी आक्रमण के प्रति प्रतिकार। यह 'इच्छा' तभी होती है, जबकि हममें यह चेतना उग्र रूप से हो कि हम सब एक ही मातृभूमि की संतान हैं और उसकी सेवा में अपना सर्वस्व निछावर करने को तैयार हैं। इसके लिए मातृभूमि के एक और अविभाज्य होने की अडिग श्रद्धा, उसके महान अतीत के प्रति विश्वास और गौरवशाली भविष्य को बनाने के दृढ़ संकल्प की आवश्यकता है। इसके मानी, हममें भारत को शक्तिशाली बनाने की तीव्र भावना होनी चाहिये, ताकि संसार में वह शांति, संवादिता, सहिष्णुता और आध्यात्मिक जीवन का संदेश पहुंचा सके।

हमें यह अनिष्टकर भ्रांति मिटा देनी चाहिये कि राष्ट्रीय एकता अधार्मिक, अनैतिक अथवा भौतिक तरीकों से लायी जा सकती है। भ्रष्ट राजनीतिज्ञ, घूसखोर सरकारी कर्मचारी और बेईमान व्यापारी कल्याणकारी राज्य के विपर्यय हैं। ऐसे हालात में जनतंत्रीय समाजवाद एक मज़ाक के सिवा और कुछ नहीं रह जाता। राष्ट्रीय एकता का नैतिक आधार ही वह समर्पण की भावना है, जो आनेवाली पीढ़ियों को राष्ट्र की महानता को बनाये रखने और विकसित करने की प्रेरणा दे। जिन्होंने इस भावना का विकास किया है, वे जानते हैं कि राष्ट्रों ने अपनी शक्ति किस प्रकार बढ़ायी और बनाये रखी इसके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं।

○○○

कुल एवं यज्ञ

वेदकालीन आर्य-संस्कृति ने भारतीय-संस्कृति को रचनात्मक व जीवनदायक तत्व प्रदान किये, इसलिए उसकी चर्चा कुछ विस्तार से करूंगा। जब तक हम उसका महत्व समझने की चेष्टा नहीं करते, तब तक हमारी संस्कृति का उद्देश्य और उसका विकास-क्रम समझना कठिन है।

वैदिक आर्य, जिन्होंने भारतीय संस्कृति की नींव डाली, कुछ मूलभूत सामाजिक

व्यवस्थाओं का पालन करते थे जैसे—कुल, जन याने जाति, पंचजन अर्थात् पांच आर्य जातियों का संघ । शेष अनार्य दस्यु और दास जाति के लोग थे, जो शायद हड़प्पा संस्कृति के प्रारंभिक द्रविड थे ।

ooo

हड़प्पा संस्कृति के दस्युओं की भौतिक संस्कृति वैदिक आर्यों से उच्चतर थी, फिर भी आर्यों ने उन्हें किस प्रकार पराजित किया, यह अनुसंधान का एक रोचक विषय है । इसका कारण सम्भवत: आर्यों के जीवन की कई बौद्धिक-सामाजिक और सांस्कृतिक विशेषताएं हैं ।

आर्य एक अधिक सशक्त व पुरुषार्थी जाति थीं; साथ ही उसके पास युद्ध के लिए उपयोगी घोड़े भी थे । ऐसा मालूम होता है, कि सबसे पहले उसी ने जंगली घोड़ों को वश में किया, उन्हें पालतू बनाया और युद्ध में उनका उपयोग शत्रु-सेनाओं को खदेड़ने में किया । उसके विपक्षी या तो पैदल ही लड़ते थे, अथवा केवल खच्चर, गधे और बैलों का उपयोग करना वे जानते थे ।

ऋग्वेद में 'अश्व' की स्तुति की गयी है । वह शक्ति और सामर्थ्य का प्रतीक है । योद्धाओं के नाम के पीछे भी 'अश्व' जोड़ दिया जाता था । दधिक्रवस नामक दैवी अश्व की एक मंत्र में स्तुति की गयी है। घोड़े के अतिरिक्त वैदिक आर्यों में एक महान सांस्कृतिक जीवनशक्ति थी, और उसका स्रोत था, उनकी परम्पराएं, सशक्त सामाजिक व्यवस्थाएं, अपनी श्रेष्ठता के विषय में उनका विश्वास और कार्यरत होने की उनकी सामूहिक भावना ।

आर्यों की एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण सामाजिक व्यवस्था पितृ-तंत्र थी । पिता सारे परिवार का और उसकी संपत्ति का एकछत्र शासक व मालिक था । पितृ-गण अपने वंशजों की रक्षा करते थे और वंशजों को भी मरने के बाद अपने पुरखाओं से मिलने की बड़ी लालसा रहती थी । कुल की अखंडता को आर्य-संस्कृति में बड़ा महत्व दिया गया है । इसे अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए पितृ-यज्ञ, तर्पण, पिण्डदान और श्राद्ध किये जाते थे । इस प्रकार पितामह, पिता, पुत्र व पौत्र भावना, परंपरा व संपत्ति द्वारा एक ही अटूट श्रृंखला में सम्बद्ध थे ।

संसार के कई भागों में, भारतवर्ष में भी, मातृ सत्ता-प्रधान पद्धति पूर्वकाल में कभी थी । आज भी संसार के कुछ भागों में वह कायम है, जैसे केरल के नायरों में । लेकिन सामाजिक व्यवस्था के नाते पितृ-सत्ता-प्रधान प्रणाली परस्पर संबद्धता व सामूहिक चेतना के लिए मातृ-सत्ता-प्रधान प्रणाली से अधिक शक्तिशाली पायी गयी ।

कुल की भावना का विकास गोत्र में हुआ, जो एक ही पूर्वज से उत्पन्न कई परिवारों का एक समूह था । आज भी हममें से कई ब्राह्मण अपने को भृगु, वसिष्ठ और कौशिक के वंशज कहते हैं । कई गोत्रों के

संघ को जन कहा जाता था। पंचजन, अथवा ऐसी पांच जातियां मिलकर सप्तसिंधु का वेदकालीन समाज बना। ये लोग अपने को ययाति के वंशज मानते थे।

इस प्रकार पितृ-प्रधान व्यवस्था ने एक मनोवैज्ञानिक एकता का सूत्रपात किया, जिससे कुल की मर्यादा और अखंडता बनी रही। इससे एक वृहत्तर सामूहिक चेतना का भी विकास हुआ। मनु को सभी मनुष्यों का आदि पुरुष माना गया और सारे संसार को एक परिवार (वसुधैव कुटुंबकम्)।

अथर्ववेद में कुल के विषय में एक सुंदर स्तोत्र है।

मैं तुम्हें एक-हृदय, एक-चित्त और घृणा-मुक्त करूंगा।
जिस प्रकार गाय अपने बछड़े से स्नेह करती है, उसी प्रकार तुम एक दूसरे को प्यार करो।
पुत्र अपने पिता के प्रति निष्ठावान रहे और अपनी माता के साथ एक-चित्त।
पत्नी, पति के साथ मधुर और विनम्र शब्दों में संभाषण करे।
भाई अपने भाई से और बहन अपनी बहन से घृणा न करे।
अपने संभाषण में तुम सर्व-सम्मति से एक-ध्येय होकर मैत्री के शब्दों का उच्चारण करो।

पारिवारिक जीवन के लिए आवश्यक अत्यंत मूल्यवान एक और वस्तु थी, पति और पत्नी के जीवन-पर्यंत सहवास की पवित्रता, जो वैदिक संस्कृति की तो विशेषता थी, लेकिन उस समय की अन्य जातियों में नहीं पायी जाती थी। विवाह का बंधन पवित्र माना जाता था, जो दो व्यक्तियों को एक-प्राण करता था।

मैं तुम्हारा पाणिग्रहण इसलिए करता हूं, कि हमारी परस्पर अभिवृद्धि हो और तुम मेरे (पति के) साथ वृद्धावस्था तक जीवित रहो।

देवताओं भग, अर्यमा, सविता, पुरन्ध्रि ने तुमको मेरी गृह-स्वामिनी बनने के लिए मुझे दिया है...

हे इंद्र इस दंपत्ति को चक्रवाक के जोड़े की तरह संयुक्त करो।

स्तुति इस प्रकार है –

तुम दोनों यहाँ निवास करो और कभी विलग न होओ। अपने पुत्र व पौत्र के साथ-हंसते-खेलते हुए अपने घर में आनंद के साथ जीवन व्यतीत करो और पूर्णावस्था प्राप्त करो।

इस प्रकार वैवाहिक बंधन की पवित्रता एक अत्यंत महत्वपूर्ण व मूल्यवान वस्तु बन गयी। इसके बिना परिवार अथवा कुल की अखंडता व परंपरा का निभना असंभव समझा गया; यहां तक कि देवत्व की तुलना भी 'अपने पति की प्यारी निष्कलंक पत्नी' से की गयी है।

देवताओं में भी पितृ-प्रधान कुल की कल्पना की गयी। प्रत्येक देवता एक उच्चतर शक्ति का प्रतीक था, लेकिन उसकी विशेष पूजा के समय वही सबसे बड़ा माना जाता। साथ ही, उनमें पारिवारिक संबंध भी

थे। अदिति, सब देवताओं की माता थी; पृथ्वी मां। उषा एक सुंदर बाला थी; किंतु सृष्टि के रचयिता विश्वकर्मन् पिता थे। उनकी वंदना एक श्लोक में इस प्रकार की गयी है –

हमारे पिता, हमारे स्रष्टा, हमारे पालक, जो सभी स्थानों और सभी लोगों को जानते हैं; कई देवताओं के विभिन्न नाम उन्होंने ग्रहण किये हैं, किंतु हैं वे एक ही। अन्य सभी अपनी-अपनी जिज्ञासा से उन्हीं को जानना चाहते हैं।

ग्रीक आर्यों के इंद्र 'डायूस पिता' सब देवताओं के पिता थे।

विभिन्न स्तरों पर एक ही पितृ के वंशज होने के फलस्वरूप जो परस्पर एकता की भावना पैदा हुई, उससे आर्यों के जीवन को संबल व स्थायित्व प्राप्त हुआ।

वैदिक आर्यों की सामाजिक-धार्मिक व्यवस्थाओं में द्वितीय महत्वपूर्ण स्थान यज्ञ को प्राप्त हुआ, जो मनुष्यों का अपने पूर्वजों और देवताओं के साथ एक आंतरिक संबंध स्थापित करता था।

पूर्व-वैदिक काल में यज्ञ, पवित्र अग्नि को हवि देना अथवा सोमरस का तर्पण करना था। प्रत्येक गृहस्थ के लिए प्रतिदिन हवन करना जरूरी समझा जाता था। इसके अतिरिक्त विशेष पर्वों पर भी यज्ञों का आयोजन होता था और उन अवसरों पर सामाजिक व धार्मिक उत्सव मनाये जाते थे, जो कई दिनों तक चलते थे। यज्ञ देवताओं के लिए भी 'प्रथमानि धर्माणि' थे।

यज्ञ के पीछे बलि की भावना का अत्यंत महत्व था। ऋषि ने कहा है : 'यज्ञ की तभी उन्नति होती है, जब वह यज्ञ की भावना के साथ संपन्न किया जाय। (यज्ञो यज्ञेन कल्पतम)। यज्ञ सच्ची भावना के साथ किया जाय, तो इच्छित लाभ के लिए देवताओं और मनुष्यों की एकता ही उससे संपन्न नहीं होती, बल्कि सृष्टि की अक्षुण्णता बनाये रखने के लिए भी वह आवश्यक है। ऋग्वेद

के पुरुष-सूक्त में, जो शायद संसार के साहित्य में सर्वाधिक सुंदर व भव्य मंत्र है, ऋषि ने वर्णन किया है कि स्वयं 'पुरुष' ने किस प्रकार अपनी बलि दी। वह ब्रह्म 'पृथ्वी के सभी ओर और सभी दिशाओं में व्याप्त था', 'जो कुछ हुआ है और होगा' वह सब वही था और 'अपने भव्य सौंदर्य में सभी भूतों से परे 'अमृत्व का स्वामी' था।

जब वे 'पुरुष' की आहुति देते, तब देवता-गण इस बलि को सच्ची भावना के साथ देते थे—'यज्ञेन यज्ञमयजंत देवा:'। इसी से सृष्टि का उद्भव हुआ, देवता और मनुष्य, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र उत्पन्न हुए। देवताओं के गुरु, वृहस्पति ने भी देवताओं और मनुष्यों के कल्याण के लिए स्वयं की बलि दी।

इस प्रकार बलि की भावना का सृष्टि के स्रोत के रूप में महत्व माना गया। सारी सृष्टि की उत्पत्ति श्रद्धा व त्याग की सच्ची भावना के साथ यज्ञ में अर्पित की गयी बलि से ही हुई। इस अर्थ में समझा गया यह मूल्य उत्तर काल में अधिक स्पष्ट हो गया।

ooo

जिन नियमों से यज्ञ-कार्य संपन्न किये जाते, उसकी व्यवस्था उस सनातन धर्म ऋत द्वारा, जो सृष्टि को धारण किये है, की गयी। वैदिक परंपरा के अनुसार, 'ऋषियों में सर्वोत्तम, स्वर्ग तथा महान वरुण के पुत्र' अंगिरसों में सर्व प्रथम ऋत की शक्ति को अभिव्यक्त करने के हेतु यज्ञ की विधि का पालन किया। देवताओं, पूर्वजों, मनुष्यों—सभी को इस आवश्यक धर्म का पालन करना पड़ता। ऋत के अनुकूल जो भी नहीं होता, वह अऋत अथवा असत्य था।

ऋत सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान, अटल, सारी सृष्टि का स्रोत और जीवन को संचालित व धारण करने वाला था। देवताओं और मनुष्यों से वह स्वतंत्र था और सब-कुछ उसी में व उसी के द्वारा अवस्थित था; प्राकृतिक व आध्यात्मिक उच्चतर शक्तियों का संबल भी वही था। देवता उसके अभिभावक मात्र थे; उसी के कारण वे 'महान' थे और उसी की शक्ति से उनका कार्य होता था। यही वह 'दैदीप्यमान रथ' था, जिसमें बैठकर प्रार्थनाओं के स्वामी, वृहस्पति आसुरी भावना को खदेड़ते थे। मित्र और वरुण भी ऋत के ही कारण सर्वशक्तिमान देवता थे। मनुष्य भी इसी का पालन कर महान, 'दुख व कष्ट से परे' और अमृत्व का पान करनेवाले बन सकते थे।

सत्य ऋत का ही वह अंग था, जिसका पालन मनोवांछित अथवा आशानुकूल फल दे सकता था। सृष्टि के प्रारंभ में ऋत व सत्य ही तपस् से उत्पन्न हुए। मनसा, वाचा, कर्मणा ऋत का आचरण ही सत्य था। यही वह वस्तु थी, जिससे मनुष्य 'सत्य-शुश्म, सत्य-कर्मण, सत्य-वाक्य' होते थे। जब मनुष्य देवताओं की स्तुति करते हैं, तब उनका आशीर्वाद सत्य तथा आशाओं

को पूर्ण करने वाला होना चाहिये।

सामाजिक व्यवस्था का परिचालन भी ऋत द्वारा ही होना आवश्यक था। क्षात्र राजाओं को सर्वशक्तिमान इसीलिए बनाता था कि वे ऋत-निर्देशित धर्म का पालन करते थे। यह बात काफी रोचक मालूम होती है, कि फारस के एक आर्य नरेश का नाम ऋत-क्षात्र था।

ऋषि के अनुसार 'सर्वव्यापी, निश्चल सत्य एवं ऋत, पवित्र संस्कार, तपस् (ब्रह्म), स्तुति तथा यज्ञ (बलि)–ये ही धरती को धारण करते हैं।'

ooo

हमने देखा कि यज्ञ तभी फलदायक हो सकता था, जब वह यज्ञ की भावना से, किया जाता। यही भावना तपस् थी, जिसका अर्थ था ऋत के अनुकूल बनने के लिए पवित्र संस्कार व प्रार्थना द्वारा जीवन व उसके सभी मूल्यों का अर्पण करना। इस अनुशासन से शरीर व मन दोनों पवित्र होते! भौतिक सुखों की अवहेलना कर यह मनुष्य को आत्म-नियंत्रण का अधिकारी बनाता और उसे महत् के मार्ग पर ले जाता, मानवीय वासनाओं और कमजोरियों को शक्ति, सौंदर्य और प्रेरणा में बदल देता।

तपस् से ही आत्मा की पूर्णता प्राप्त की जा सकती है, क्योंकि तभी कोई ऋत, सृष्टि के नियम, के अनुसार जीवन यापन कर सकता है।

आर्यों के सभी मूल्यों की अंतर्धारा के रूप में यह केंद्रीय विचारधारा रही है।

सृष्टि किसी यांत्रिक विकास का उत्पादन नहीं है, न वह किसी व्यक्तिगत ईश्वर की आज्ञा से हुई है। वह तो ऋत की अभिव्यक्ति है, जो नाना रूपों में होते हुए भी अपने अस्तित्व और कार्य में आध्यात्मिक था।

हमारी संस्कृति के संस्थापकों के अनुसार ब्रह्मांड-धर्म के नाते ऋत सृष्टि को धारण और संचालित करता है, उसकी प्राकृतिक क्रियाओं, उसके जीवन और उसके विकास का भी मूलाधार वही है। अपने नैतिक रूप में वह दुष्टता को दूर करता है और व्यक्तिगत तथा सामूहिक जीवन का संचालन करता है। अपने सत्य रूप में वह विचार, वाणी व कर्म में प्रबल एकता स्थापित कर फल देता है। अपने आध्यात्मिक रूप में वह विचार, वाणी व कर्म में सौंदर्य की प्रेरणा देता है और ऊर्ध्वमुखी आत्मा को 'शब्द' का उच्चारण कराता है, जो जीवन को शक्ति एवं ध्येय प्रदान करता है। क्षात्र रूप में वह सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखता है जिसके द्वारा जीवन की पूर्णता प्राप्त होती है।

वैदिक ऋषियों को यही सर्वोत्तम श्रद्धांजलि अर्पित की जा सकती है कि चार हजार वर्ष पहले, जबकि मानव जाति विभिन्न बौद्धिक व आध्यात्मिक विकास के स्तरों पर थी और मनुष्य केवल ईर्ष्यालु व चिड़चिड़े जातीय सरदारों की

तरह कई देवताओं की ही कल्पना कर सकते थे, तब उन्होंने इस केंद्रीय विचारधारा को उसके समस्त विश्व-स्वरूप में देखा और उसके द्वारा जीवन में सभी मूल्यों का एकीकरण किया, उसे परिपूर्ण करने के लिए संस्थानों तथा आचरण के नियमों की रचना की तथा उनका पुष्टिकरण किया।

यह केंद्रीय विचारधारा हमारी संस्कृति की हजारों वर्ष की बदलती जिंदगी में एक स्वर्ण-सूत्र के समान सतत विद्यमान रही है। भारतीय संस्कृति का कई सदियों का अध्ययन करते समय हमें यह बात ध्यान में रखनी होगी।

०००

भारतीय शिल्प का आदि स्रोत

हमारी मूर्तिकला का इतिहास किसी प्राग-ऐतिहासिक काल में प्रारंभ हुआ, जब पाषाण-युग का मानव लिंग और योनि को सृजनशक्ति का प्रतीक मानकर श्रद्धा और विस्मय की दृष्टि से देखता था। हड़प्पा संस्कृति के भग्नावशेषों में ये चिह्न मिले हैं। किंतु इस बात के प्रमाण कहीं नहीं मिलते कि इस संस्कृति के उत्कर्ष-काल में अथवा अन्य किसी समय इन चिह्नों का शरीर रचना की दृष्टि से कोई अभिप्राय था। यह तो आधुनिक फ्रायडवादी, पश्चिमी विद्वानों ने ही ढूंढ़ निकाला है कि इनकी पूजा करनेवालों के पीछे कोई कामभावना अवश्य रही होगी, चाहे स्वयं भारतीय इस बात को न मानें।

धार्मिक मूर्तिकला की दृष्टि से भारत की सभी देवी-देवताओं की मूर्तिकला का प्रारंभ हड़प्पा संस्कृति के पशुपति और माँ भगवती से हुआ। कुछ विद्वानों का कथन है कि शिव शब्द की उत्पत्ति तमिल 'चिवन' (लाल) से हुई है और वैदिक आर्य उन्हें नील-लोहित, अर्थात् 'नीलकंठ, रक्तवर्ण' कहा करते थे।

भारत में आर्यों के आगमन के पूर्व एशियाई और पूर्व-भूमध्यसागरीय लोगों की बहुपूज्य देवी 'मां' से ही शायद उमा शब्द बना है। पशुपति पशुओं के नाथ थे और उमा संपन्नता तथा उपजाऊपन की देवी। फिर भी यह कहना कठिन है कि प्राग-ऐतिहासिक काल में धार्मिक मूर्तियों की पूजा में वे एक-दूसरे से संबंधित थे।

प्रारंभ से ही ये मूर्तियां हमारी कलात्मक आकांक्षाओं का मूल आदर्श रही हैं। पिछली तीस शताब्दियों में उनके सहस्रों रूप हम अपनी कला, साहित्य, धर्म और दर्शन में पाते हैं। केवल वे ही हमारी सामूहिक चेतना का रहस्य उसके कल्पनात्मक, भावात्मक और ललित पक्षों में ही नहीं, बल्कि बुद्धि और आकांक्षाओं के रूप में भी प्रकट करने में समर्थ हैं।

संभवतः हड़प्पा के पशुपति वैदिक आर्यों के रुद्र के साथ ऋग्वेदकालीन युग से बहुत पहले ही एकरूप हो गये थे। इस देवता का वर्णन इतना स्पष्ट और सजीव मिलता है कि यदि वैदिक आर्य रुद्र की मूर्ति की पूजा भी करते रहे हों तब भी

कोई आश्चर्य की बात नहीं। यजुर्वेद का यह श्लोक तो सुप्रसिद्ध ही है:

नमः शंभवाय च मयोभवाय च
नमः शंकराय च
नमः शिवाय च शिवतराय च

शक्ति और शिव की ही तरह प्राग ऐतिहासिक काल की एशिया की महान देवी 'मा' और पिता 'अथिस' का संबंध सिह तथा वृषभ से है। इन्हीं के समकक्ष वेदों के दयाउस और पृथ्वी अथवा अदिति आर्यों के देवता हैं। जैसा कि ऋग्वेद के देवीसूक्त से मालूम होता है, वैदिक काल में भी महादेवी का संबंध रुद्र के साथ उनकी शक्ति के रूप में था और पूजा में उनका स्थान सर्वोपरि था।

केनोपनिषद काल गणना की दृष्टि से एक प्राचीनतम उपनिषद है। उसमें वैदिक देवता इंद्र 'स्त्री के सम्मुख आये, जो विविध रूपों में जाज्वल्यमान हैं और जो हिमालय की पुत्री उमा हैं।' इंद्र ने उनसे कहा, 'यह महान यक्ष कौन है?' उन्होंने उत्तर दिया, 'यहं सनातन है। यह सनातन की ही विजय, है जिसमें तुम स्वयं महानता प्राप्त करोगे।' तभी इंद्र को पता चला कि वह ब्राह्मण था। पूर्व-वैदिक उमा और यक्ष के साथ वैदिक इंद्र और उपनिषदों के ब्राह्मण का विचित्र संयोग नाना प्रकार के विचारों और विश्वासों के उस समन्वय की ओर संकेत करता है, जिससे शिव और शक्ति के विचार का बाद में आविर्भाव हुआ। इससे यक्ष और यक्षी की प्राचीनतम मूर्तियों के बीच संभाव्य संबंध भी प्रकट होता है।

सृजक और सृजनात्मक कारण के रूप में शिव और शक्ति का संबंध भारतीय कल्पना में अमिट है। उनका विचित्र परिवार जीवन की सामूहिक जीवधारी रचना का प्रतिनिधित्व करता है। उनके पुत्र गणेश जो पहले सभी शुभ कार्यों में विघ्न डालनेवाले आर्यों के पूर्वकाल के

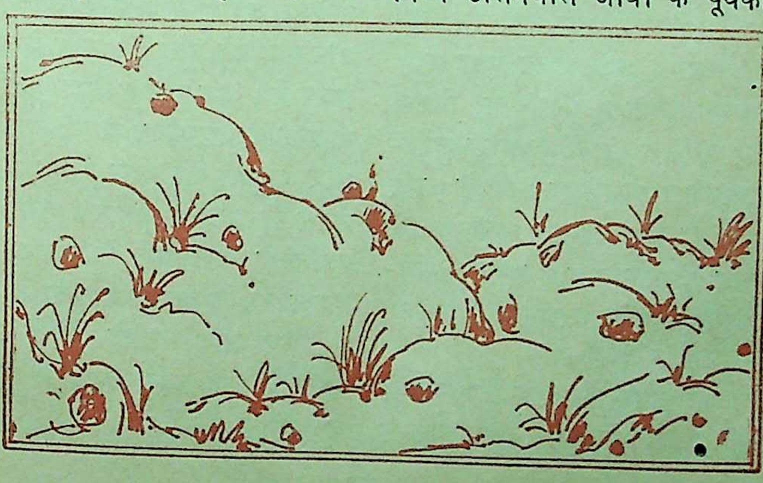

देवता थे, अब बुद्धि और शुभ के देवता बन गये । कार्तिकेय युद्ध के देवता थे और वे वीर व सीधे-सच्चे थे । संभवत: कार्तिकेय भी प्रारंभ में द्रविडों के देवता रहे होंगे । शिव के साथ सदा रहनेवाला और उनका परमश्रद्धालु अनुयायी नंदी स्वयं ईश्वर का ही पशु रूप था, जो सभी जीवों का पूर्वपुरुष था । विश्व की एकता के चिह्नस्वरूप चंद्रमा शिव के मुकुट की तरह विराजमान थे । स्वर्ग में बहनेवाली मंदाकिनी ने शिव की जटा में आश्रय पाया और उन्हीं की कृपा से वह पवित्रता और संपन्नता की जननी, गंगा के रूप में धरती पर आयीं ।

शिव का स्वरूप धीरे-धीरे विराट व विश्वव्यापी हो गया । पशुपति के रूप में वे पशुजगत् के स्वामी हैं; वनस्पति के रूप में अरण्यों के स्वामी हैं । पापियों का उद्धार करने में वे अपनी जटा में गंगा को धारण किये हैं । रुद्र रूप में वे भयानक विध्वंसक हैं; शिव के रूप में वे कल्याणकारी हैं । अपनी शुभ, प्रसन्न मुद्रा में वे एक आकर्षक युवक हैं । संगीत, शिल्प, ज्ञान और लौकिक बंधनों से मुक्त करनेवाले, योग की प्रथम शिक्षा देनेवाले आदि गुरु भी वे ही हैं । समस्त ब्रह्माण्ड की शक्ति तथा 'परम तत्व, स्वयंभू, सर्वव्यापक' जैसा कि कालिदास ने उनका वर्णन किया है, वे ही हैं ।

शक्ति भी उन्हीं की तरह विश्वव्यापी हैं । उन्हीं के गर्भ में सृजन और विनाश की शक्तियां हैं । जिस प्रकार शिव महाकाल हैं, उसी प्रकार शक्ति सारी सृष्टि की समाप्ति स्वरूप काली हैं । शिव कठोर आत्म-नियंत्रण की जीवित अग्नि, तपस् भी हैं, जो मानवीय इच्छाओं का ऊर्ध्वीकरण करता है । वे ही जीवन को विमल कर मानवीय अभिलाषाओं को सृजनात्मक रूप देते हैं । उमा अटल श्रद्धा की सजीव मूर्ति हैं, जो शिव को प्राप्त करने के लिए, मृत्यु को भी सहर्ष स्वीकार कर लेती हैं । कालिदास ने इसी विषय पर अपनी अमर रचना 'कुमार संभव' आधारित की । माँ अंबिका अथवा पार्वती के रूप में वे प्रेम और दया की मूर्ति हैं । दुर्गा के रूप में वे अजेय हैं । जब दुष्टता और क्रूरता सृष्टि में अनीश्वरवाद फैला देती हैं, तब देवताओं और मनुष्यों की रक्षा वे ही करती हैं । उनसे ही दुष्टों के संहारक कुमार अथवा कार्तिकेय तथा धर्म के रक्षक, बुद्धि के देवता गणेश का जन्म हुआ ।

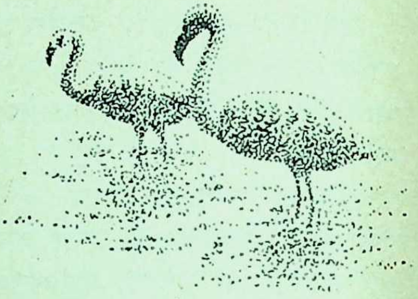

शिव और पार्वती दोनों ही अनंत काल हैं, एक तथा समान हैं और दयालु व भयंकर भी हैं ।

तीन ग़ज़लें

यूं तो तुम्हारा नाम, लिया है कभी-कभी,
होंठों के पास जाम, किया है कभी-कभी ।

नजरों में मैंने जिसको सजाया है रात-दिन,
अपनों ने ही बदनाम, किया है कभी-कभी ।

कश्ती जो मेरे साथ थी, जब-जब जुदा हुई,
तूफां ने गिरता थाम, लिया है कभी-कभी

पीने की बात आजकल, हर शख्स कर रहा,
विष को भी सुबहे शाम, पिया है कभी-कभी

सुख-चैन अब 'अचूक' नहीं इस जहान में,
ग़ज़लों ने कुछ आराम, दिया है कभी-कभी ।

[२]

क्या आदमी की देखिये औकात हो गयी
छुपकर के अंधेरों से कोई बात हो गयी

पीकर यह नाचता है उंगलियों के बीच में,
लगता पुरानी फिर से, मुलाकात हो गयी ।

चढ़कर जो देखने लगा शीशों के महल से,
दिन में ही इसके वास्ते, सच रात हो गयी ।

आवाज दे रहा है आसमान से यहां,
ये कैसी मेरे साथ शुरूआत हो गयी ।

अबतक 'अचूक' चल रहा साहसका सिलसिला
लगता कि तुझसे ज़िंदगी की मात हो गयी ।

[३]

आग ही आग बरसती, यारो,
आंख पानी को तरसती, यारो ।

छुपके सूरज भी निकल जाता है,
धूप भी रोज सुबकती, यारो ।

सारी खुशियां चुरा ली मौसम ने,
बहारें छुपके सिसकतीं, यारो ।

लोग क्यों खुदकशी पे उतरे हैं,
मौत यह देख बहकती, यारो ।

पांव अपने फंसे है दलदल में,
जान-पहचान खिसकती, यारो ।

मेरे जैसा ही रो रहा बादल,
कोई एक बात कसकती, यारो ।

'अचूक' बूंद जो मिली थी तुझे,
आज वो यूं ही भटकती, यारो ।

— कृपाशंकर 'अचूक' —

प्लाट नं. ३८, विजयनगर, करतारपुरा, २२ गोदाम, जयपुर, राजस्थान

□

जीवन का संदेश

श्रीकृष्ण और भगवद्गीता

□ डॉ. कन्हैयालाल मुंशी

* * *

गीता का केंद्रीय तत्व यही है, कि मर्त्य मानव की देह में श्रीकृष्ण के रूप में स्वयम् श्री भगवान अवतरित हुए थे। गीता की दिव्य प्रज्वलन्त वाणी में उन्होंने अर्जुन को सिखाया था, कि वह उन्हें जाने, उनके पास आये, उनके भीतर जिये, और उन-रूप हो जाये। यही तत्व भारत की सबसे मूल्यवान निधि रहा है। गीता कोई परलोक, संन्यास या अकर्मण्यता का शास्त्र नहीं है। वह एक नितांत मानवीय दस्तावेज है: हर मानवीय स्थिति की वह मार्गदर्शिका है। जीवन के दारुणतम संग्राम में वह मनुष्य को अपनी सीमाओं से ऊपर उठने की शिक्षा देती है। वह एक ऐंसे विजेता जीवन का संदेश देती है, जिससे मनुष्य, इस जीवन में ही, आत्मानुशासन द्वारा भागवदीय आयामों को प्राप्त कर सकता है। मरण, पराजय और घोर भौतिकता के जिस ज़हर से आज पश्चिम ने जगत् को विषाक्त कर दिया है, उसे गीता एक अपराजेय पुरुषार्थ के संदेश से चुनौती देती है।

* * *

गीता के गायक हैं श्रीकृष्ण, जो परम विजयी पुरुषत्व के प्रतीक हैं और जिन्हें भारतवर्ष की जनता युग-युग से भगवान का अवतार मानती आती हैं।

पिछले ढाई हजार वर्षों से गीता-धर्म ने असंख्यों लोगों को सामान्य मानव से कहीं अधिक सक्षम बनाया है, जिनमें आधुनिकों में हम शंकर और रामानुज, विवेकानंद, लोकमान्य तिलक और गांधीजी की भी गणना कर सकते हैं।

भागवत और तुलसीदास का 'रामचरित मानस' जैसे अमर ग्रंथ भी इसी धर्म से प्रेरित हैं और इसीलिए वे भारतीय संस्कृति को अपना स्वरूप और शक्ति प्रदान करने में समर्थ हुए हैं। कभी सिर न झुकानेवाले, विप्लवी पुरुषत्व की अग्निशिखा को इसी छोटी-सी पुस्तिका ने प्रज्वलित रखा है। पराजय, मृत्यु तथा उस घोर भौतिक-वाद को इससे सफलतापूर्वक चुनौती दी जा सकती है, जिसके द्वारा आधुनिक पाश्चात्य देशों ने विश्व को विषाक्त बना रखा है।

भागवत तथा रामायण ने कई प्रकार से हमारे सामूहिक अचेतन मन के मूलतत्व

प्रस्तुत किये हैं, परंतु भगवद्गीता ने उन्हें अद्‌भुत शक्ति दी है। सातवीं शताब्दि में शंकर ने कहा था, 'इसके उपदेशों का बोध समस्त मानवीय उच्चाकांक्षाओं की पूर्ति करता है।' तिलक के अनुसार यह 'ऐसा ज्ञान है, जिस पर काल का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।' श्री अरविंद ने इसे 'संसार का महानतम धर्मग्रंथ, एक राष्ट्र और संस्कृति के पुनरुद्धार में सर्वाधिक सशक्त तत्व' कहा है। गांधीजी तो गीता को जगत् की जननी कहते थे और उनके जीवन का प्रत्येक क्षण उसकी अगाध शक्ति का परिचायक था।

ऊंच या नीच, सभी को गीता एक नवजीवन का दिव्य संदेश देती है। मैं यद्यपि 'इस धरती का—पार्थिव' रहा हूं, फिर भी मेरे लिए भगवद्गीता अंधकार में से जीवन की ओर ले जानेवाली ज्योतिशिखा रही है, हालांकि उसका प्रकाश अधिकांशत: आच्छन्न, कभी-कभी शीघ्र ओझल हो जानेवाली एक क्षीण और कंपमान ज्योति-रेखा सी रहा है, परंतु किन्हीं असाधारण प्रेरणा-क्षणों में उसके उज्ज्वल और परम तेजस्वी स्वरूप का भी दर्शन मैंने किया है। सूर्य की भांति प्रभावित कर उसने प्रेरणा दी है, जीवन का निर्माण और संचालन किया है, क्षय और मृत्यु के विष-कीटाणुओं का नाश किया है, वे स्वभावोक्ति के उत्तम उदाहरण हैं। नहीं, वे स्वभावोक्ति के उदाहरण नहीं हैं, वे उससे बड़ी चीज हैं। संसार के साहित्य की बात मैं नहीं जानता, क्योंकि वह बहुत बड़ा है और उसका एक अंशमात्र हमारा जाना हुआ है, परंतु हमारे जाने हुए साहित्य में इतनी तत्परता, मनोहारिता और सरसता के साथ लिखी हुई बाललीला अलभ्य है। बालकृष्ण की एक-एक चेष्टा के चित्रण में कवि कमाल की होशियारी और सूक्ष्म निरीक्षण का परिचय देता है। न उसे शब्दों की कमी होती है न अलंकार की, न भावों की न भाषा की। क्यों ऐसा है? क्या कारण है? कि शताधिक पदों में बार-बार दुहरायी हुई बात इतनी मनोरम हो गयी है? क्या कारण है कि उपमाओं, रूपकों और उत्प्रेक्षाओं की जमात हाथ जोड़कर इस बार-बार दुहरायी हुई लीला के पीछे दौड़ पड़ी है? इसका कारण यशोदा का

निखिलानन्दसंदोह भगवान् बालकृष्ण के प्रति एकांत आत्मसमर्पण है । अपने आपको मिटाकर, अपना सर्वस्व निछावर करके जो तन्मयता प्राप्त होती है, वही श्रीकृष्ण की इस बाललीला को संसार का अद्वितीय काव्य बनाये हुए है । यशोदा को उपलक्ष्य करके वस्तुतः सूरदास का भक्त-चित्त ही शत-शत रसस्रोतों में उद्वेल हो उठता है । वही चित्त गोपियों-गोपालों और सबसे बढ़कर राधिका–के रूप में भी अभिव्यक्त हुआ है । इसीलिए सूरदास की पुनरुक्तियां जरा भी नहीं खटकतीं और वाक्चातुर्य इतना उत्तम कोटि का होकर भी व्यंग्यार्थ के सामने अत्यंत तिरस्कृत हो गया है । वर्णन-कौशल वहां प्रधान नहीं है, वह भक्त के महान् आत्मसमर्पण का अंगमात्र है । किंतु साधक भक्त लोग लीला के विरहरूप को जितनी आसानी से अनुभव कर सकते हैं, उतना मिलनरस को नहीं ।

भगवान् के साथ गोपियों या श्रीराधा के मिलन के विषय में गान करता हुआ भक्त सद्गुरु के बताये हुए लीलामार्ग को दुहराता है और आशा करता है कि उनके सत्संग से प्राप्त की हुई हृदयकर्ण की रसायनरूप कथा को सुनते-सुनते श्रद्धा, प्रीति और भक्ति भी प्राप्त हो जायगी । श्रीमद्भागवत में यह बात स्पष्ट शब्दों में कही गयी है, परंतु विरह की अवस्था में वह स्वयं अपने आपको निःशेष रूप से उड़ेल देता है । यही कारण है कि भक्त की विरह कथा अधिक सरस, अधिक भावप्रवण और अधिक द्रावक होती है । यशोदा द्वारा कथित निम्नलिखित पद में सूरदास स्वयं फूट पड़े हैं :–

मेरे कान्ह कमलदललोचन ।
अबकी बार बहुरि फिरि आबहु कहां लगे जिय सोचन ।
यह लालसा होती जिय मेरी बैठी देखत रैहौं ।
गाइ चरावत कान्ह कुंअर को कबहूं जान न दैहौं ।

यशोदा का यह रूप तभी समझा जा सकता है, जब पूर्ववर्ती बाललीलाओं को इसी प्रेम का एक रूप माना जाय । स्वभावोक्ति का चमत्कार देखनेवाले यशोदा के इस और उस रूप में कोई एकरूपता नहीं खोज पायेंगे । हम आगे चलकर देखेंगे कि राधिका के रूप में सूरदास ने भक्त-हृदय का जो चित्र खींचा है, वह इसी अपूर्व तन्मय प्रेम का आश्रयभेद से परिवर्तित रूपांतर मात्र है ।

उन्होंने उस प्रेम-निधि को पाया था, जो नये रूपों और आकारों को जन्म दिया करता है । बालस्वभाव का वर्णन हो या प्रेमलीला का, सर्वत्र वे गंभीर हैं । यह जो कांताभाव की रति है, वह इस देश के निर्गुण भाव के उपासक भक्तों में भी पायी जाती है । कबीरदास, दादू आदि भक्तों में भी यह भाव है, परंतु वहां समासोक्ति पद्धति से काम लिया जाता है और लौकिक कांताविषयक प्रीति व्यंजन

का विषय होती है।

प्रकट लाभ के लिए लालायित मत हो नहीं तो काम, भय तथा क्रोध तुम्हारे मन को भ्रमित कर देंगे और तुम्हारा देवत्व अपूर्णताओं से घिर जायेगा। जिसने धर्म के प्रति अपना जीवन समर्पित कर दिया है, उसके लिए ईश्वर की महत्ता वस्तुतः जीवन में अनुभवगम्य वस्तु हैं। ऐसी कोई पराजय नहीं, जिस पर उसकी इच्छा विजय न पा सके, ऐसा कोई दुःख नहीं, जिसको वह पार नहीं कर सके। यदि दुष्प्राप्य धर्म का वह दृढ़ इच्छुक हो, तो भावी से भी वह अधिक बलवान होगा, क्योंकि ईश्वर स्वयं उसमें वास कर चुका होगा।

किंतु यह इच्छा व्यक्तिगत ही हो सकती है। जो भी इसका अनुसरण करता है, उसे सामूहिक विचार की सर्वत्र व्याप्त विमूढ़ता से बचना होगा। जो भो धर्म का अनुसरण करता है, उसे प्रशंसा और निंदा के प्रति उदासीन रहना होगा। धर्मप्राप्ति की दिशा में विचार और कर्म की हमारी एकता संशयशील और अनिश्चयात्मक बुद्धि के द्वारा भंग नहीं होनी चाहिये। तो असत् के भंवरजाल में डूब जायेंगे।

धर्म ही जीवन है; आर्यावर्त उसका आश्रय है; और प्रभु की वाणी अर्थात् भगवद्गीता वह ज्योतिशिखा है, जो उसे जीवंत रखती है।

□

– तुम्हारा ताल भरा होने पर भी तुम जिस प्यास का भय बता रहे हो, वह तृष्णा है, बह कभी शांत नहीं हो सकती।

– खालील जिब्रान

○○○

– किसी की प्रेमिका को प्रेमी के होने पर दुख होता ही है। लेकिन सबसे अधिक दुख तब होता है जब कोई दूसरी स्त्री इसका कारण हो।

– अज्ञात

□

राष्ट्रकवि की जन्म-शताब्दी पर

महीयसी महादेवी का अंतिम संदेश

भारतीय संस्कृति में कवि तथा कविता का विशेष महत्व है। जहां इतिहास की किरणें नहीं पहुंच पातीं, वहां भी ऋषि ने कवि तथा कविता को इस प्रकार परिभाषित किया है 'पश्य देवस्य काव्यं न ममार नजीर्यति' ईश्वर के इस काव्य को देखो जो न जीर्ण होता है न कभी मरता है।

प्रकृति ईश्वर का काव्य है। अर्थात यह रूपरेखामयी सृष्टि, उसका अमर होना ही, नित्य नवीनतामय काव्य है।

फिर उसी क्रम में ऋषि कहता है 'कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूः' रचनाशील कवि विशेष प्रज्ञा सम्पन्न होता है, वह संकीर्ण होकर व्यापक होता है तथा उसे बनाया नहीं जा सकता, वह स्वयं उपलब्ध हो जाता है।

नदी के तट भिन्न हो सकते हैं, किंतु उसे गतिशील रखने के लिए गहराई सब तटों पर रहेगी। अन्यथा वह नदी नहीं बन सकती। प्रत्येक बड़े कवि के साथ यही तत्व रहता है, जिसे हम प्रासंगिकता कहते हैं।

पूज्य दद्दा में यह प्रासंगिकता मुख्य तत्व है, जिसमें उनकी भारतीयता को गति दी है। वे उन तत्वों को लेकर चले हैं जो समस्त कालचक्र की धुरी है।

हम आज के कवि से यही आशा करते हैं कि उसकी रचना गतिशील हो न कि वह मरणशील हो और पुरानी हो जाय। यह हमारी शती की श्रद्धांजलि होगी।

पन्थ तुम्हारा मंगलमय हो।

—महादेवी

पुनश्चः अत्यंत अस्वस्थ हो जाने के कारण उपस्थित नहीं हो सकी इसके लिए क्षमा मांगती हूं।

३–८–८७

[तीन अगस्त को 'कवि-दिवस' पर महादेवीजी का लघु संदेश जो उनका अंतिम वक्तव्य सिद्ध हुआ। अस्वस्थता के कारण वे स्वयं आ भी नहीं सकीं। हमारा कर्तव्य है कि तीन अगस्त को प्रति वर्ष अखिल भारतीय स्तर पर कवि और कविता का विशेष सम्मान करें। इससे राष्ट्रकवि और राष्ट्रवाणी दोनों को गौरव प्राप्त होगा और प्रतिष्ठा मिलेगी।

[**जगदीश गुप्त**]

अनोखे नववर्ष देश-विदेश में

☐ जितेन्द्र शंकर बजाड़

परिवर्तन अपना प्रभाव अवश्य छोड़ते हैं और इसी प्रभाव के कारण मानव जाति उस परिवर्तन से प्राप्त हर्ष किंवा शोक को व्यक्त करने के लिए युगों-युगों से समारोह, त्यौहार, मेले आदि का आयोजन करती चली आ रही है । ये समारोह मेले, पर्व, त्यौहार कब शुरू हुए, कहा नहीं जा सकता । परंतु हैं, बड़े विचित्र, मनभाते और उल्लेखनीय, अविस्मरणीय । इन्हीं पर्व त्यौहारों में नववर्ष आगमन के उपलक्ष्य में विश्व के अलग-अलग देशों में बसी मानव जाति जो विभिन्न पर्व, त्यौहार आदि मनाती है वे भी बड़े रोचक और जानने योग्य है ।

प्राचीन रोम में नये वर्ष के अवसर पर भेंट देने की परंपरा थी । रोम के एक बादशाह ने तो भेंट देने के लिए मात्र नववर्ष का अवसर ही नियत किया था, इसके अतिरिक्त अन्य अवसरों पर भेंट दिया जाना निषिद्ध था । एक द्वीप है बाली वहां इस नववर्ष के पहले दिन को गालुंगन कहते हैं । इस दिन के सप्ताह भर पहले से वहां पर आये दिन चोरियां होती हैं क्योंकि गालुंगन के दिन सब लोग अपने घनिष्ठ मित्रों व रिश्तेदारों को उपहार देते हैं । उनके गांव में जाकर पांच-छः दिन आराम करते हैं । इन दिनों वहां के बाजार बंद रहते हैं । हां, इन्हीं दिनों होटलों के नौकर सजधज कर कानों में फूल लगाते हैं और होटल के आंगन में बैठकर बर्तन मांजते दिखते हैं । मांजते नहीं, बस बहाना करते हैं । 'गालुंगन' के अवसर पर सुंदरियां उन्हें रिझाने जाती हैं । कुछ की शादी भी हो जाती है आपस में ।

आयरलैण्ड और इंग्लैण्ड में इकतीस दिसंबर को काले बालों वाले आदमियों को ढूंढ़-ढूंढ़कर एकत्रित किया जाता है । इन्हें वहां सुख-समृद्धि का दूत माना जाता है । रात्रि के बारह बजे ये काले बालों वाले लोग घर-घर घूमकर कुछ खास चीजें भेंट करते हैं । इसी रात को तोपें दागी जाती हैं । बंदरगाहों पर खड़े जहाजों के भोंपू बजाये जाते हैं और गिरजों में जोर-जोर से घंटे बजते हैं ।

'अतिथि देवो भव:' इस भावना को देखना हो तो आप नये वर्ष का त्यौहार देखने स्काटलैण्ड जायें । वर्ष के अंतिम दिन रात के बारह बजते ही घर-घर में कुछ युवक प्रवेश करते हैं जो चाय, डबल रोटी, मक्खन, केक आदि लेकर आते हैं ।

व ये चीजें घर के सदस्यों में बांट देते हैं। घर वाले भी इस आगंतुक का बड़ा हर्ष के साथ स्वागत करते हैं। ये नवयुवक इस प्रकार की चीजें लेकर बारह बजने से कुछ समय पूर्व ही जिसके यहां पहुंचना है, उसके घर की ओर रवाना हो जाते हैं। यहां स्काटलैण्ड में विश्वास है कि नव वर्ष का प्रथम अतिथि हमारे घर में सुख-सौभाग्य लेकर आता है।

चीनी लोग मानते हैं कि हर परिवार में एक कोई रसोईघर का देवता होता है, जो मनुष्य के पाप-पुण्य का हिसाब रखता है। प्रतिवर्ष नया साल आने से पहले यह हिसाब वह देवता ईश्वर को देने जाता है। नववर्ष पर लौटता है। इसलिए सप्ताह भर पहले आतिशबाजी छोड़कर उस देवता को विदा करते हैं। नववर्ष के दिन सुबह के नाश्ते में घर के हर सदस्य को चावल से बनी एक खास मिठाई परोसते हैं। मिठाई के टुकड़े में एक सिक्का छिपाकर रखा जाता है। नाश्ते के समय जिस सदस्य की मिठाई में वह सिक्का निकलता है, उसके लिए नववर्ष सुख-समृद्धि एवं सौभाग्यवर्धक माना जाता है।

भारत एवं चीन के पड़ोसी देश में नये वर्ष पर तरह-तरह के नृत्य एक के बाद एक प्रस्तुत किये जाते हैं। नववर्ष के समारोह का शुभारंभ युद्ध नृत्य से होता है। जिसे वहां के सैनिक हाथों में बेंत की ढाल लिये, सिर पर पक्षियों के पंख से सजी टोपी और शरीर पर पुराने कवच के टुकड़े पहने प्रस्तुत करते हैं। नृत्य की समाप्ति से पूर्व बंदूकें दागी जाती हैं। और युद्ध के बाजे बजाये जाते हैं। फिर आता है दानव नृत्य जिसे लामा (साधु) लोग प्रस्तुत करते हैं। ये ठीक दानवों जैसे डरावने मुखौटे लगाये इधर-उधर नाचते कूदते हैं। इनके जाने पर कुछ लोग काले कपड़े पहन कर आते हैं। कपड़ों पर भूरे और सुनहरे रंग के कंकाल के चित्र बने होते हैं। इस नृत्य को ठठरी नृत्य कहा जाता है। भारत के कुछ प्रांतों में भी यह नृत्य होता है, परंतु इससे भिन्न होता है।

ठठरी नृत्य के बाद प्रस्तुत किया जाने वाला नृत्य इस समारोह का अंतिम नृत्य होता है, जिसमें कुछ नर्तक अपने सिर पर रखी टोपी पर मोरपंखों की कतारें एवं छोटी-छोटी खोपड़ियां लगी होती हैं। टोपी भी पिरामिड के आकार की होती है। इनका मुखिया ओझाओं का प्रमुख कहलाता है। अन्य नर्तक उसके चारों ओर नाचते हैं। वह कई प्रकार के मंत्र जपता रहता है।

नृत्य कई घंटे तक चलता रहता है। मुखिया के मंत्रों का जाप पूरे होने पर अपने सामने धधकती आग पर चढ़े कड़ाह के उबलते तेल में स्प्रिट डालता है। स्प्रिट से लौ भभककर जलता हुआ तेल लौ सहित फर्श पर फैल जाता है। उस आग में मुखिया एक कागज डालता है जो जल जाता है तथा जलते ही यह मान लिया जाता है कि दुष्ट आत्माएं भाग गयीं। अब नया सा

बिना कठिनाई, विपदा के आयेगा । आग में डाले गये कागज पर भूत-प्रेतों की आकृतियां बनी होती हैं ।

ईरान में नववर्ष का आरंभ नौरोज के उत्सव के रूप में मनाते हैं, जो २० मार्च की रात के मध्य में आरंभ नववर्ष के प्रारंभ होने के अवसर पर संपन्न होता है । हां, ईरान में नया वर्ष २१ मार्च से ही माना जाता है । बीस मार्च की आधी रात घर के किसी कोने में लगी मेज या भूमि पर एक कपड़ा बिछाकर उस पर कई चीजें सजाकर रखी जाती हैं । जिनमें मोमबत्ती, कुरानपाक, दर्पण और 'स' से जिन वस्तुओं का नाम शुरू होता है उन्हें रखते हैं ।

यहां पर इस अवसर के लिए गेहूं की पौध तैयार करते हैं, जिसे छोटे डिब्बों या टोकरियों में जगह-जगह सजावट के लिए रखा जाता है । गेहूं की इन कोंपलों को ये लोग नये जीवन का प्रतीक मानते हैं ।

घर के सब लोग (वस्तुओं के नीचे बिछे कपड़े) के चारों ओर नये-कपड़े पहने खड़े होकर अपने-अपने नाम की मोमबत्ती जलाते हैं । हर एक मोमबत्ती को हवा के झोंकों से बचाने के लिए घर का दरवाजा भी बंद कर दिया जाता है । किसी भी सदस्य के नाम की मोमबत्ती का बुझना अशुभ कहा जाता है ।

अमरीका में नववर्ष के पर्व पर इकतीस दिसंबर की रात में जितना संभव हो उतना ज्यादा शोर मचाया जाता है । इस आधी रात के समय सभी गाड़ियों के भोंपू बजाये जाते हैं ।

जापान जितना छोटा देश उतनी ही ऊंची है वहां के निवासियों की धारणाएं, परंपराएं और बहुत ही बड़ा है उनका स्वाभिमान।

यहां के लोग नये वर्ष में किसी के कर्जदार बने रहकर पसंद नहीं करते। अपना पुराना कर्ज चुकाने के लिए घर की कुछ चीजें तक बेच देते हैं। इसी कर्ज चुकाओ अभियान के तहत घर की बेचने योग्य चीजों की दुकान सजाकर बैठते हैं । ऐसे लोगों की दुकानें और खरीददारों की भीड़ एक मेले के रूप में परिवर्तित हो जाती है । ये दुकानें मीलों तक दूर चली जाती हैं–लंबी और लंबी । नये वर्ष के पहले दिन नदी अथवा कुएं का ताजा पानी लाकर पिया जाता है । समझा जाता है कि ऐसा करने से वे दीर्घायु को प्राप्त होंगे ।

छोटे बच्चों व बालिकाओं को देवताओं, परियों के रूप में सजाकर रंग-बिरंगे रथ और नावों में उनका जुलूस निकालते हैं । दर्शकों की भारी भीड़ लग जाती है, इसे देखने के लिए शहर के घर, द्वार, गली, बाजार और रास्ते बांस व चीड़ की शाखाओं से सजाते हैं, जापान में चीड़ को दीर्घायु व बांस को मजबूती का प्रतीक माना गया है। **–पो. भीचोर-३१२०२२,**

जिला–चितौड़गढ़ (राज.)

□

नववर्ष

कौन दिशा, किस पथ चलना है, मेरे नूतन साल।

अमा निशा, घनघोर घटायें, पन्थ न सूझे, दिशा भ्रमित है।
क्षितिजों पर पाखण्ड-कलह, शंका-छल की कालिमा अमित है।

सीमायें असुरक्षित, शंकित, दिग्दाहों में देश ज्वलित है।
कितने कंस-रावणों से, यह राम-कृष्ण की धरा दलित है।
मन बिह्वल रे, देख देश का यह हिलता कंकाल।
कौन दिशा, किस पथ चलना है, मेरे नूतन साल।।

राम-राज्य वाले दर्पन में, रावणीय परिवेश दिख रहा।
आज चतुर्दिक चौराहों पर, मानव का ईमान बिक रहा।
जाति, धर्म, धन, सम्प्रदाय का विध्वंसक संघर्ष चल रहा।
गांधी-गौतम की धरती पर, हिंसा व आतंक बढ़ रहा।

किस गति से, कैसे निपटोगे, प्रश्न बड़े विकराल।
कौन दिशा, किस पथ चलना है, मेरे नूतन साल।।

उलझी हुई समस्यायें कितनी, पथ रोके हुए खड़ी हैं।
कुंठा-व्यथा-वेदना-चिन्ता, मुख बिचकाती हुई अड़ी हैं।
जन-जन के मन में कुछ तीखी, अलख कील-सी यहां गड़ी हैं।
कौन निकाले, कैसे निकलें, तेरे माथे मढ़ी पड़ी हैं।

दायें, बायें, आगे, पीछे इतने विषधर ब्याल।
कौन दिशा, किस पथ चलना है, मेरे नूतन साल।।

— डॉ. सुरेन्द्रबहादुर सिंह —

हिन्दी-विभाग, कमला नेहरू डिग्री कालेज, तेजगांव, रायबरेली, उ. प्र.

□

श्री क. मा. मुंशी का जीवन-क्रम
(१८८७ से १९७१ ई. तक)

१८८७ : भरूच में जन्म, ३० दिसंबर, माता: तापी बहन, पिता: माणेकलाल ।

१८९७ : उपनयन संस्कार ।

१९०१ : अतिलक्ष्मी पाठक के साथ विवाह । मैट्रिक पास हुए ।

१९०२ : बड़ोदा कॉलेज में दाखिल ।

१९०४ : बड़ोदा कॉलेज में प्रो. अरविंद घोष का प्रभाव । भरूच में निशुल्क पुस्तकालय की स्थापना ।

१९०५ : अंबालाल साकरभाई पुरस्कार । प्रथम वर्ष एल. एल. बी. ।

१९०६ : एलियट मेमोरियल पुरस्कार । बी. ए. ।

१९०७ : बंबई में निवास, सूरत कांग्रेस अधिवेशन में शामिल ।

१९१० : एल. एल. बी. पास । बंबई हाईकोर्ट एपलेट में प्लीडर के तौर पर दर्ज ।

१९११ : गुर्जर सभा के मंत्री—'सामाजिक सेवा के सिद्धांत और प्रयोग' लेख के लिए स्टुडेंट्स ब्रदरहुड मोतीवाला पुरस्कार ।

१९१२ : 'भार्गव' मासिक के संपादक ।

१९१३ : बंबई हाईकार्ट की ओरिजनल साइड में वकालत शुरू की । भुला-

बालक मुंशीजी

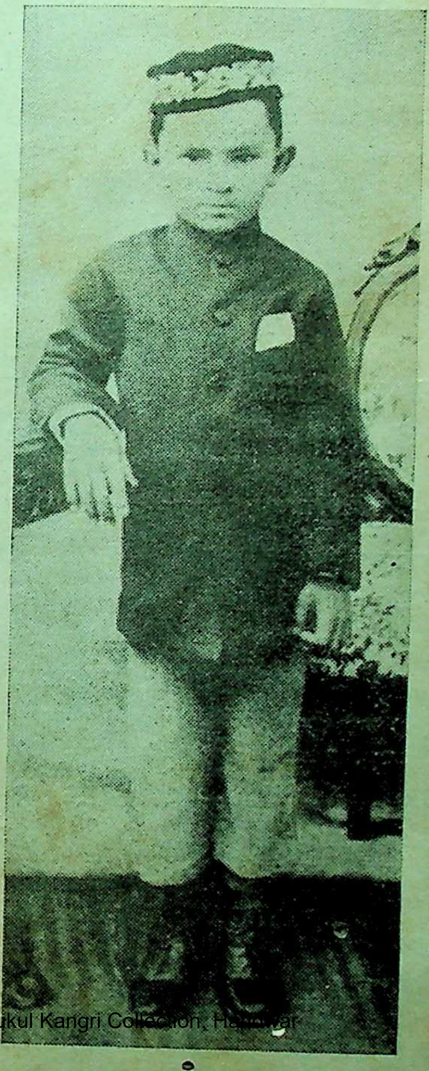

भाई देसाई के जूनियर के नाते। 'वेरनी वसुलांत' उपन्यास गुजराती साप्ताहिक में छपना शुरू हुआ।

१९१५ : 'यंग इंडिया' के सह-संपादक। होमरूल आंदोलन में हिस्सा।

१९१६ : 'पाटणनी प्रभुता' का प्रकाशन।

१९१७ : भारतीय कांग्रेस की विषय विचारिणी समिति के सदस्य।

१९१९ : बंबई होमरूल लीग के मंत्री। बाद में भा. रा. कांग्रेस और होमरूल से इस्तीफा।

१९२२ : गुजराती साहित्य संसद की स्थापना। 'गुजरात' मासिक का आरंभ। 'गुजरात' के काम में लीलावती शेठ सहयोगी।

१९२३ : यूरोप-प्रवास। Amrit

१९२४ : पंचगनी हिंदू शिक्षण सोसायटी के मुख्य चुने गये। हरकिशनदास अस्पताल के प्रमुख। पत्नी अतिलक्ष्मी का अवसान।

१९२६ : गुजराती साहित्य परिषद के उपप्रमुख। गुजरात यूनिवर्सिटी सोसायटी की स्थापना—उसके मंत्री बने। बड़ोदा यूनिवर्सिटी कमीशन के सदस्य। बंबई यूनिवर्सिटी में फैलो और सिनेट में चुने गये। लीलावती शेठ के साथ विवाह।

१९२७ : बंबई यूनिवर्सिटी के गुजराती पाठ्यक्रम बोर्ड के अध्यक्ष। बंबई की लेजिस्लेटिव काउंसिल में चुने गये।

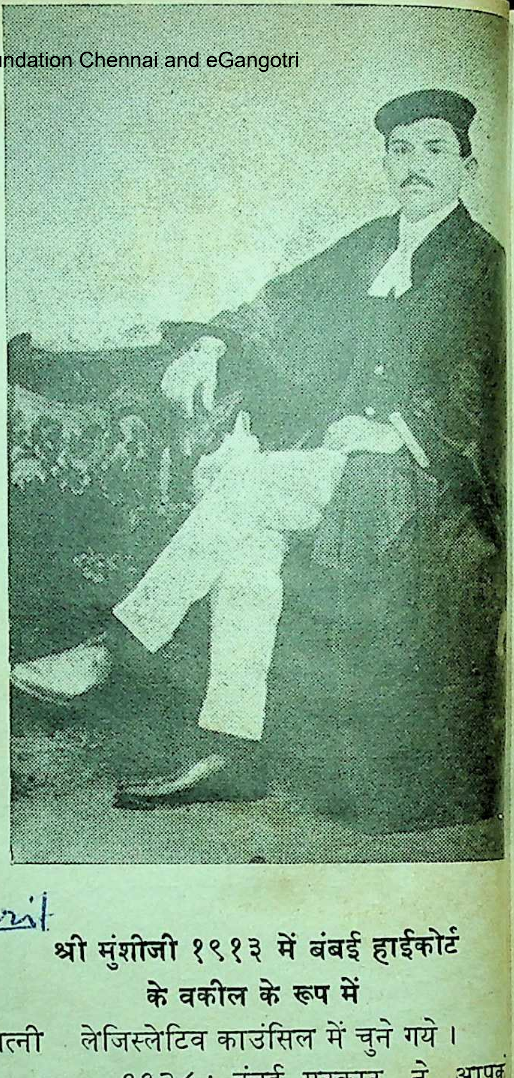

श्री मुंशीजी १९१३ में बंबई हाईकोर्ट के वकील के रूप में

१९२८ : बंबई सरकार ने आपक माध्यमिक शिक्षा समिति के सदस्य औ भौतिक संस्कृति समिति के अध्यक्ष के नात नियुक्त किया। बम्बई यूनिवर्सिटी बि पास करने में मार्गदर्शन।

१९२९ : बंबई यूनिवर्सिटी के अनुस्नात पाठ्यक्रम बोर्ड के और एकेडेमिक का सिल के सदस्य। बाई कबीबाई ट्रस्ट औ कानजी खेतशी ट्रस्ट के ट्रस्टी। बारडोल

सत्याग्रह के समय बंबई विधान परिषद से इस्तीफा । बारडोली जांच समिति के अध्यक्ष ।

१९३० : फिर से कांग्रेस में । नमक सत्याग्रह में ६ महीने की ज़ेल । बंबई शहर एम्बुलेंस दल की स्थापना--उसके मुख्य बने ।

१९३१ : बंबई प्रदेश कांग्रेस समिति और अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के सदस्य । एम. एस. ट्रस्ट के ट्रस्टी ।

१९३२ : सत्याग्रह आंदोलन के लिए दो वर्ष की सख्त कैद की सजा ।

१९३३ : कांग्रेस के संसदीय विभाग के लिए आंदोलन । परिणामतः स्वराज पक्ष की स्थापना ।

१९३४ : कांग्रेस संसदीय बोर्ड के मंत्री ।

१९३६ : 'हंस प्रकाशन' शुरू किया । हिन्दी 'हंस' के श्री प्रेमचंद के साथ सह-संपादक ।

१९३७ : बंबई विधान सभा में चुने गये । प्रथम कांग्रेसी मंत्रिमंडल में गृहमंत्री बने । गुजराती साहित्य परिषद के प्रमुख ।

१९३८ : बाल सहाय सोसायटी के उपप्रमुख और पश्चिम भारत में बाल संरक्षण सोसायटी के प्रमुख का कार्यभार संभाला । सरदार पटेल के साथ आणंद में कृषि भवन शुरू किया और संस्था के उपप्रमुख बने । बंबई में कानजी खेतशी कन्या छात्रालय की स्थापना की । बंबई यूनिवर्सिटी के अंतर्गत ठक्कर विसनजी माधवजी संशोधन व्याख्यानमाला में 'अर्ली आर्यन्स इन गुजरात' विषय पर व्याख्यान । भारतीय विद्या भवन की स्थापना ।

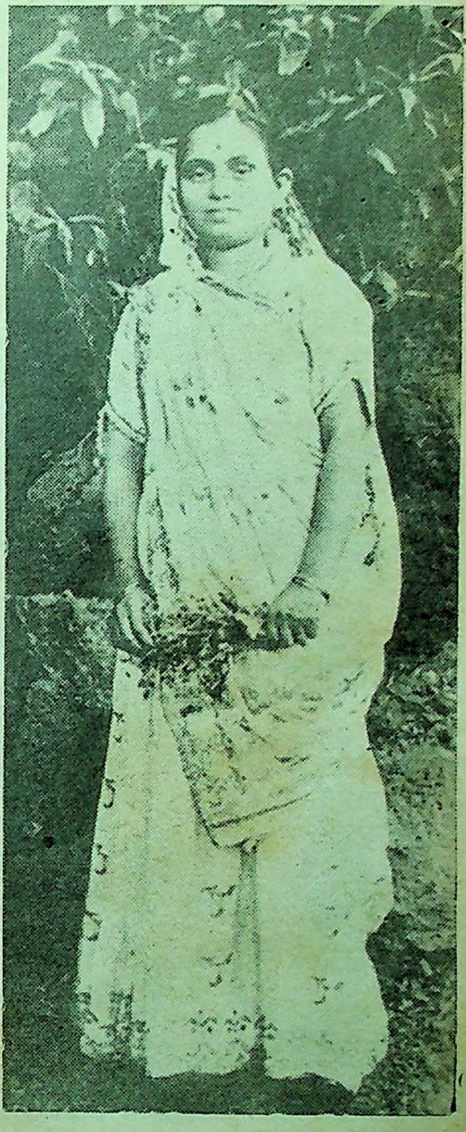

श्री मुंशीजी की प्रथम पत्नी अतिलक्ष्मी

१९३९ : हंसराज मोरारजी स्कूल का

श्री मुंशीजी प्रौढ़ावस्था में

आरंभ । गृहमंत्री पद से इस्तीफा ।

१९४० : 'सोशल वेलफेयर' अंग्रेजी साप्ताहिक शुरू किया और संपादक बने। व्यक्तिगत सत्याग्रह में पकड़े गये ।

१९४१ : सख्त बीमारी की वजह से जेल से मुक्ति । कांग्रेस से इस्तीफा । अखंड हिंदुस्तानी आंदोलन की शुरूआत की ।

१९४४ : भारतीय इतिहास समिति की स्थापना और उसके अध्यक्ष चुने गये । गुजरात यूनि. और बड़ोदा यूनि. की सिनेट में शामिल और स्थापना में योगदान । कृष्णार्पण ट्रस्ट के, सिंघानिया ट्रस्ट, आर्य धर्म सेवा संघ ट्रस्ट के ट्रस्टी ।

१९४५ : अखिल भारतीय संस्कृत परिषद का उद्घाटन । 'भगवद्गीता और आधुनिक जीवन' पर भाषण । गुजराती साहित्य परिषद के उपप्रमुख !

१९४६ : मेघजी मथुरदास आर्ट्स कॉलेज और नारणदास मनोरदास विज्ञान कॉलेज की स्थापना की । अ. भा. हिन्दी साहित्य सम्मेलन उदयपुर के अध्यक्ष, हिंद दीनदया संघ के प्रमुख । कांग्रेस द्वारा भारत का संविधान गठन निष्णात समिति के सदस्य । भारतीय संविधान सभा के सदस्य। नवभारत पब्लिशर्स लि. (न्यू इंडिया पब्लिशर्स) के डायरेक्टर बने ।

१९४७ : हैदराबाद में भारत सरकार के एजेंट जनरल नियुक्त ।

१९४८ : संविधान सभा की ड्राफ्टिंग समिति के सदस्य ।

१९५० : यूरोप, अमेरिका की यात्रा भारत सरकार में कृषि और खाद्य-मंत्री ।

१९५१ : संस्कृत विश्व परिषद की स्थापना–उसके अध्यक्ष । आणंद की कृषिसंस्था के अध्यक्ष ।

१९५२ : उत्तर प्रदेश के राज्यपाल (१९५२-५७)आगरा, इलाहाबाद, लखनऊ यूनिवर्सिटी के चांसलर ।

१९५६ : चारुतर शिक्षण सोसायटी के अध्यक्ष तथा सरदार पटेल यूनि. के फेलो ।

१९५७ : भारतीय कानून संस्था के कार्यकारी अध्यक्ष (१९५७-६०) ।

१९५९ : कांग्रेस से इस्तीफा–अ.भा.स्वतंत्र पार्टी के उपप्रमुख ।

श्रीमती लीलावती मुंशी तरुणावस्था में

१९६६ : बंबई में आयोजित 'राष्ट्रीय एकता की बुनियाद पर नैतिक और आध्यात्मिक मूल्य'–इसकी अ. भा. चर्चा सभा के अध्यक्ष ।

१९६८ : अ. भा. यूनि. प्राध्यापक-विद्यार्थियों के शिविर अध्यक्ष ।

१९६९ : वंबई महानगरपालिका द्वारा सत्कार । नयी दिल्ली में भारत के राष्ट्रपति द्वारा अभिनंदन समारोह में सम्मान्न ।

१९७१ : ८ फरवरी निधन ।

निम्नलिखित मानद पदवियां मुंशीजी को अर्पित–

डी. लिट : बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी–१९४६

डी. लिट : सागर युनिवर्सिटी : १९४९
उसमानिया यूनिवर्सिटी : १९५४
बंबई यूनिवर्सिटी : १९६८

□

धर्म निरपेक्षता को हमने जीवन मूल्यों की निरपेक्षता मान लिया है । **–महादेवी वर्मा**

श्रीलंका में चुका रहा है भारत आजादी का मोल

□ रामपाल सिंह

श्रीलंका के जफना और पूर्वी प्रांतों में तमिल शेरों के सब अड्डों को नष्ट कर दिया गया और इन प्रांतों को उनके प्रभाव से मुक्त करा लिया गया है। तमिल ईलम के लिए संघर्ष करने वाले २५०० शेरों में से लगभग आधे मार दिये गये और आधे भारतीय शांति सेना के जाल से बच निकले। बचकर भाग निकलनेवालों में तमिल शेरों के नेता वेलुपिल्लै प्रभाकरन् भी हैं। ३३ वर्षीय प्रभाकरन् के बारे में कहा जाता है कि उनका एक ही उद्देश्य है, लड़ना। वे क्यों लड़ रहे हैं इस बात का उनके पास भी कोई साफ जवाब नहीं। उनके सामने तमिल ईलम (स्वतन्त्र तमिल राज्य) का सपना तो है, जिसके लिए वे खून बहा रहे हैं, पर इस सपने को साकार कैसे किया जाय, वे नहीं जानते।

प्रभाकरन् जब श्रीलंका से भागकर भारत आये थे और उनको साथ लेकर भारत ने श्रीलंका के साथ समझौता किया था, तब भारत को उम्मीद थी कि यह तमिल नेता जो पिछले १४ वर्ष से एक कल्पना को संजोये संघर्ष कर रहा है, भारतीय सहायता और संरक्षण का उपयोग करके अपनी कल्पना को एक संस्था का रूप दे सकेगा। श्रीलंका की आजादी, अखंडता और भारत की सुरक्षा के हित में राष्ट्रपति जयवर्धन भी इसमें सहयोगी बने। ७ श्रावण (२९ जुलाई) को कोलंबो में प्रधानमंत्री राजीव गांधी के साथ बैठकर उन्होंने भारत-श्रीलंका समझौते पर हस्ताक्षर किये। इस समझौते की प्रत्येक व्यवस्था के बारे में वेलुपिल्लै प्रभाकरन् और उनके साथियों से कदम-कदम पर सलाह मशविरा किया गया और उनकी पूर्ण सहमति प्राप्त की गयी। श्रीलंका के उत्तरी और पूर्वी प्रांतों को मिलाकर एक प्रांतीय परिषद बनाने की बात मान ली गयी थी। प्रांतीय सलाहकार परिषद में तमिल शेरों का बहुमत होने और प्रभाकरन् द्वारा सुझाये गये तीन व्यक्तियों में से किसी एक को सलाहकार परिषद का अध्यक्ष बनाने को राष्ट्रपति जयवर्धन को राजी कर लिया गया था।

भारत-श्रीलंका समझौते पर हस्ताक्षर और राष्ट्रपति जयवर्धन के आमंत्रण पर भारतीय शांति सेना के जफना पहुंचने पर कोलंबो स्थित भारतीय उच्चायुक्त ज्योतीन्द्रनाथ दीक्षित ने कहा था कि

ईश्वर ने चाहा तो अब ठीक होगा । समझौते की व्यवस्था के अनुसार दस्तखत होने के तीन-चार दिन के भीतर छापामारों को हथियार रख देना था । इसके बाद प्रांतीय परिषद का गठन होता और वर्ष १९८७ के अंत तक प्रांतीय परिषद का चुनाव संपन्न हो जाता । प्रभाकरन् का राजनैतिक उद्देश्य यदि स्पष्ट होता तो श्रीलंका का जातीय संघर्ष भारत-श्रीलंका समझौते से समाप्त हो जाता और प्रभाकरन् अपनी कल्पना में हाड़-मांस भरना और उसमें प्राण फूंकना आरंभ कर देते । पर प्रभाकरन् के सामने समझौते से जैसे अंधेरा छा गया । वे तय न कर पाये कि यहां से आगे का रास्ता कैसे तय करना है और वह रास्ता हमें कहां पहुंचायेगा ।

प्रभाकरन् की अनिश्चयता से उनके मन में संदेह का ऐसा धुआं उठा कि उनकी आंखों से सब कुछ ओझल हो गया । कुछ भी नजर न आने से उनका भय और गढ़िया गया । अपनी सुरक्षा और भविष्य के प्रति शंकालु यह नेता फिर उसी मार-काट में डूब गया, जिससे उबरने को उसने भारत की मध्यस्थता का स्वागत और समझौते का समर्थन किया था । आतंकवादी गतिविधियों में डूबे तमिल शेर अपनी मूठ में जकड़ी ब्रेनगन को ही अपनी रक्षा की प्रतिभूति मान बैठे थे । सो, भारतीय शांति सेना को हथियार सौंपते समय उनके मन में यह भय कुनमुनाया होगा कि हथियार रख देने के बाद हमारी रक्षा कैसे होगी ? हम भारतीय सेना को हथियार सौंप रहे हैं और हमारी रक्षा करने को ही वह यहां आयी है, वे इतना न सोच सके । वे अब सरकार से लड़नेवाले नहीं खुद सरकार चलानेवाले बन रहे हैं, यह बात उनकी समझ में न आयी । प्रांतीय सलाहकार परिषद की स्थापना, फिर प्रांतीय परिषद का चुनाव और साल भर के भीतर जनमत संग्रह, भारत-श्रीलंका समझौते की इस व्यवस्था से उनके हाथ-पैर फूल गये । सलाहकार परिषद में अधिसंख्य स्थान (१२ में से ७) शेरों के लिए सुरक्षित होने के बाद भी वे शेष पांच सीटों पर बैठनेवालों से भयभीत थे । पूर्वी तमिल बहुल प्रांतों में ४२ प्रतिशत तमिल, ३३ प्रतिशत मुसलमान और २५ प्रतिशत सिंहल हैं । पूर्वी भाग में तमिल शेरों के विरोधी छापामार संगठनों का प्रभाव है । तमिल शेरों का मन यह सोचकर बैठ गया कि प्रांतीय परिषद के चुनाव में हमारे उम्मीदवार हार सकते हैं और जनमत संग्रह में बहुमत पूर्वी प्रांत को जफना से अलग रखने का समर्थन कर सकता है । इन तमाम संदेहों के कारण, जिनके मूल में आत्मविश्वास और राजनैतिक सूझबूझ का अभाव था, तमिल शेरों को भ्रम हुआ कि भारत ने श्रीलंका के साथ समझौते में हमारी स्वीकृति लेकर हमें अड़दब में ले लिया है ।

भय और आशंकाओं से प्रेरित तमिल शेरों ने पूर्वी प्रांतों में अपने विरोधी

तमिलों की हत्या शुरू कर दी। लगभग १०० तमिल, जिनमें अधिसंख्य विभिन्न छापामार गुटों के नेता और कार्यकर्ता थे, मारे गये। तमिल शेर आतंक फैलाकर इस क्षेत्र की तमिल जनता को अपने साथ करना चाहते थे। उत्तरी जफना प्रांत में ऐसा ही आतंक फैलाकर उन्होंने जनता को अपनी जकड़बंदी में लिया था।

इसी बीच एक घटना और हुई। श्रीलंका सेना ने नाव से जफना आ रहे १७ तमिल शेरों को पकड़ लिया। सरकारी सेना इन तमिल शेरों को पूछ-ताछ के लिए कोलंबो ले जाना चाहती थी। 'हमें कोलंबो क्यों ले जाया जा रहा है?' किसी अज्ञात आशंका से पीड़ित इन गिरफ्तार तमिल शेरों ने साइनाइड की गोलियां खालीं, जिससे १२ शेरों की तत्काल मृत्यु हो गयी। तमिल शेरों ने इस घटना के बाद कहा कि अब हम भारत-श्रीलंका समझौता मानने को बाध्य नहीं। अपने मन में छिपे भय और शंका को प्रेत-छाया के रूप में उन्होंने पूर्वी प्रांत के हर कोने में खड़ा देखा। भयाक्रांत शेरों ने पूर्वी भाग में बदले में सिंहलों की अंधाधुंध हत्याएं शुरू कर दीं। लगभग २०० सिंहल मारे गये। भारतीय उच्चायुक्त दीक्षित के अनुसार दोनों पक्ष यदि विवेक का परिचय देते तो स्थिति इतनी न बिगड़ती।

तमिल शेरों ने जब दुबारा हत्याओं का दौर आरंभ किया तब सिंहल जनता के मन में बैठा भारत विरोधी भाव खुलकर बाहर आने लगा। समझौते का विरो करनेवाले तत्वों को यह कहने का बहाना मिल गया कि भारतीय शांति सेना तमिल शेरों का पक्ष ले रही है। पहले तमिल और फिर सिंहलों की हत्याओं से राष्ट्रपति जयवर्धन भी विचलित हो उठे। उन्होंने कहा कि समझौते के अनुपालन का दायित्व भारतीय शांति सेना को निभाना चाहिये। तमिल शेरों को समझाने-बुझाने का प्रयत्न हुआ। भारतीय शांति सेना ने मार-काट रुकवाने की कोशिश की। पर तमिल शेर इतने अनियन्त्रित और विवेकशून्य हो चुके थे कि उन्होंने भारतीय शांति सेना पर भी हमले शुरू कर दिये। गोली लगने या सुरंग विस्फोट से भारतीय शांति सैनिकों की हत्या होते देख भारतीय सेना के पास इसके अतिरिक्त और कोई चारा नहीं था कि अपनी रक्षा, समझौते को बचाने और शांति कायम करने को कार्रवाई करे। भारतीय शांति सेना ने १८ आश्विन (१० अक्तूबर) से तमिल शेरों के विरुद्ध कार्रवाई शुरू कर दी।

श्रीलंका के घटनाक्रम में आया यह मोड़ निश्चय से बड़ा पीड़ाप्रद था। जिन तमिलों की रक्षा के लिए भारतीय सेना श्रीलंका गयी, उसे अब उनसे ही लड़ना पड़ रहा था। भारतीय सेना के २०० से भी अधिक सैनिक शांति और समझौते की रक्षा के लिए अब तक शहीद हो चुके हैं। इतनी बड़ी संख्या में शांति सैनिकों के मारे जाने की वजह यही रही कि भारतीय

सेना वहां लड़ने और अधिकार करने नहीं सामान्य तमिल और सिंहल जनता की रक्षा करने गयी थी। पर तमिल शेरों ने अचानक उसे अपनी भूमिका वदलने को बाध्य कर दिया। भारत के पूर्वांचल में नागा, मिजो आदि छापामारों का सामना करने का अनुभव तो भारतीय सेना को है पर घनी आवादी में छापामार युद्ध का यह पहला अनुभव था।

गुप्तचर सूचनाओं के अभाव में भारतीय सेना को और ज्यादा कठिनाई हुई। जिस क्षेत्र में भारतीय शांति सैनिकों को तमिल शेरों का सामना करना पड़ा, उसकी जानकारी उन्हें बिलकुल नहीं थी। तमिल शेर इसके चप्पे-चप्पे से वाकिफ थे। तमिल छापामारों ने स्त्रियों और बच्चों को अपनी ढाल के रूप में इस्तेमाल किया। उन्होंने घनी आवासीय बस्ती में आम नागरिकों के घरों में छिपकर भारतीय शांति सेना पर हमले किये। श्रीलंका की सरकारी सेना का रास्ता रोकने के लिए बिछी सुरंगों से भी भारतीय शांति सेना की काफी क्षति हुई। तमिल शेरों को पहचानने में भी भारतीय शांति सैनिकों को काफी कठिनाई हुई। फिर तमिल शेरों ने तमिल जनता को गुमराह करके और भारतीय सैनिकों के विरुद्ध भ्रम फैलाकर भी शांति सेना के काम को काफी मुश्किल बना दिया। सामान्य नागरिकों तथा जनता की संपत्ति को नुकसान पहुंचाने के उद्देश्य से भारतीय सैनिकों ने भारी हथियारों का प्रयोग न करने और अंधाधुंध गोलियां न चलाने की सावधानी बरती। इसकी उन्हें भारी कीमत चुकानी पड़ी।

फिर भी भारतीय शांति सेना ने तेजी से स्थिति पर काबू पा लिया है। छुटपुट प्रतिरोध को छोड़कर समूचे उत्तरी और पूर्वी श्रीलंका में स्थिति सामान्य हो रही है। जो तमिल शेर भाग निकले हैं वे आनेवाले समय में भारतीय शांति सैनिकों के लिए कठिनाई पैदा कर सकते हैं। पर दिक्कतें छापामार तमिल शेरों के सामने भी कम नहीं।

अब तक वे घनी आबादी, शहरों और कस्बों में आम जनता के बीच बैठकर सब सुख-सुविधाओं का उपयोग करते हुए अपना छापामार युद्ध चला रहे थे। आम तमिल जनता का समर्थन उन्हें प्राप्त था। भारत के पांच करोड़ तमिलों और भारत की आम जनता की भी सहानुभूति उन्हें प्राप्त थी। पर अब वे यह सब गवां बैठे हैं। जंगलों में छिपकर छापामार युद्ध चलाने की कला उन्हें सीखनी होगी, जो आसान काम नहीं।

जनता की सहानुभूति अब तमिल शेरों के साथ नहीं रही। तमिलनाडु की ७३ प्रतिशत जनता श्रीलंका में भारतीय शांति सेना की कार्रवाई का समर्थन करती है। वह नाराज है कि जिन तमिल शेरों को तमिलनाडु में शरण दी गयी और जिनको बचाने के लिए भारत ने श्रीलंका

विवाद में अपने पैर फँसाये, वे तमिल शेर ही अब मद्रास रेजीमेंट के जवानों की हत्या कर रहे हैं। श्रीलंका की तमिल जनता का बड़ा भाग अब उनसे विमुख हो चला है। भारतीय शांति सेना उसके दिल और दिमाग को अपने साथ करने के प्रयत्न कर रही है। प्रांतीय परिषदों का चुनाव होने और तमिल बहुल क्षेत्रों का प्रशासन तमिल प्रतिनिधियों एवं तमिल अधिकारियों को सौंप दिये जाने से तमिल शेर अलग-थलग पड़ते जायेंगे।

पर इसका मतलब यह नहीं कि श्रीलंका में सब कुछ आम दिनों जैसा हो चला है। भारतीय सेना की दक्षिणी कमान के सेनाध्यक्ष और श्रीलंका में भारतीय शांति सेना के सर्वोच्च कमांडर ले. जनरल देपिन्दर सिंह का कहना है कि यदि आम दिनों जैसी हालत से आपका मतलब यह है कि रात-बिरात जब चाहें कार पर बैठकर या बस में सवार होकर लंबी यात्रा पर चल दें, तो इसमें अभी समय लगेगा।

राष्ट्रपति जयवर्धन ने भी दिल्ली आने पर कहा कि भारतीय सेना श्रीलंका में तब तक रहेगी जब तक उसका रहना जरूरी है। श्रीलंका की कुछ जनता और राजनैतिक दल भारत-श्रीलंका समझौते का विरोध कर रहे हैं। जनता विमुक्ति पेरामुना १९७१ की कहानी दोहराने की तैयारी कर रहा है। राजनैतिक दलों की नजरें अगले वर्ष होनवाले राष्ट्रपति पद के चुनाव पर टिकी हैं। पेरामुना और तमिल शेरों के बीच सहयोग का पता चला है। वे विदेशी तत्व जो श्रावण (जुलाई) समझौते से पूर्व कोलंबो सरकार को अपनी मुठ्ठी में कसकर श्रीलंका को भारत विरोधी गतिविधियों के अड्डे के रूप में बदल देने की योजनाएं बना रहे थे, अब पेरामुना और तमिल शेरों के कंधों पर अपनी बंदूक रखकर चलाने की सोच सकते हैं। तमिल शेरों को विदेशों से हथियारों और गोला बारूद की सप्लाई जारी है। तमिल शेरों से पाकिस्तानी और इस्राइली हथियारों का भंडार बरामद किया गया है।

श्रीलंका में भारत की सक्रिय दिलचस्पी की वजह समझना भी जरूरी है। सत्तरी दशक के आरंभ में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने इस क्षेत्र को विदेशी हस्तक्षेप से मुक्त करने का जो संकल्प किया था, वह भारत की विदेशी नीति में नये अध्याय की शुरुआत थी। श्रीलंका के साथ भारत का समझौता उसी अध्याय में जुड़ा एक नया पन्ना है। श्रीलंका में तमिल समस्या इतनी उलझनपूर्ण और दूर तक अपनी छाया डालनेवाली कैसे बन गयी और इसे इस तरह भड़कानेवाले हाथ कौन से हैं, यह खोज का विषय है। संभव है इसका भेद बाद में खुले, पर जब वहां इस्राइल, पाकिस्तान और ब्रिटेन के भड़ैतों की संस्था ने छापामार का प्रशिक्षण देना शुरु किया और तमिल शेरों के बढ़ते आतंक के आगे असमर्थ जयवर्धन सरकार के

अपनी शर्तें मानने को बाध्य किया तब भारत का माथा ठनका।

श्रीलंका की स्थिति जो रंग पकड़ रही थी, उसमें भारत के सामने एक रास्ता विनाश और बेबसी का था। श्रीलंका को भारत विरोधी गतिविधियों का अड्डा बनने दिया जाय, हिंद महासागर से भारत की आवाजाही और व्यापार के सब रास्ते छेंककर विदेशी शक्तियां बैठ जायं और भारत अपने अंगों को कुष्ठ से गल-गल कर गिरता देखे। दूसरा रास्ता यह था कि स्थिति के काबू से बाहर जाने से पहले उसे संभाला जाय और 'तमिल शेरों से खतरा' के नाम पर श्रीलंका को विदेशी जाल में फंसने से बचाया जाय। यह दूसरा रास्ता जितना श्रीलंका के हित में था उससे कहीं अधिक भारत के अपने हित में था। यह रास्ता व्ययसाध्य और संकटापन्न है फिर भी श्री राजीव गांधी ने देश के तात्कालिक और दूरगामी हित में कांटों भरे और उलझावपूर्ण इस रास्ते पर चलना स्वीकार किया। पर स्वतंत्रता और सुरक्षा का ऐसा कोई रास्ता नहीं जो आसान हो या कांटों से खाली हो। भारत श्रीलंका समझौते की रक्षा के लिए भारत को प्रतिदिन लगभग ४ करोड़ रुपये खर्च करने पड़ रहे हैं। पर आजादी और गुटनिरपेक्षता को सिक्कों से तोला नहीं जा सकता और न वे किसी की दया पर आरक्षित रह सकती हैं।

—११/१, तिलक मार्ग, लखनऊ उ. प्र.

□

रोटी और हाथ के बीच.

—डा० आशाराम त्रिपाठी

कागज़ के टुकड़े बीनते-बीनते
यकायक वह ठिठक गया,
एक ऊंची इमारत के पास,
उनके कुत्ते के मुंह से
छूटी हुई रोटी की आस में।
उसकी दोनों आंखें
अर्जुन की आंख से भी अधिक एकाग्र
उसके दोनों हाथ
एकलव्य के हाथ से भी
अधिक सधे हुए
पर कैसी विडंबना?
वह हवा में तैरती हुई आ रही रोटी को,
हाथ से पकड़ने ही वाला था
तभी एक चील
अपने पंजे में कसकर उस रोटी को
लेकर उड़ चली
अनंत आकाश में
और वह
कोसता रह गया
कुत्ते को,
आंख को,
हाथ को,
चील को,
रोटी को,
रोटी और हाथ के बीच के फासले को
उनको और अपने को।

—आकाशवाणी, १८ विधान सभा मार्ग,
लखनऊ, उ. प्र.

संस्मरण

साधारण वेश : असाधारण व्यक्तित्व

☐ के. आर. चतुर्वेदी

बचपन में श्रद्धेय मुंशीजी के उपन्यास पढ़ने का अवसर मिला था। सेवा-काल में वन-महोत्सव आदि उनकी योजनाओं में निहित दूरदर्शिता की प्रशंसा की। किंतु अगस्त १९५२ में पहली बार उत्तरप्रदेश के राजभवन, लखनऊ में उनके दर्शन करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ।

एक असाधारण प्रतिभाशाली व्यक्ति से यह केवल भेंट न थी। मुंशीजी से साक्षात्कार के लिए मुझे उत्तरप्रदेश के सचिवालय से बुलाया गया था, क्योंकि तत्पश्चात् मुझे उनके निजी स्टाफ पर काम करना था। राजभवन पहुंचते ही मैंने देखा कि विदेशी के स्थान पर पूर्णत: स्वदेशी भावना व्याप्त थी। विशेषकर चतुर्थ-श्रेणी के कर्मचारी बड़े प्रसन्न थे। धीरे-धीरे अधिकारी-कर्मचारी के बीच की सुदृढ़ दीवारें टूट रही थीं। राज्यपाल से मिलने के पहले मैंने सुना कि मुंशीजी गरीबों की परवरिश करते हैं, लेकिन काम भी डट कर लेते हैं।

महामहिम राज्यपाल के कक्ष में पहुंचते ही मैंने देखा कि मुंशीजी धोती-कुर्ता धारण किये, विचारमग्न थे। उनका विशाल ललाट दर्पण की भांति चमक रहा था। संक्षिप्त साक्षात्कार के पश्चात् मैंने कृतज्ञतापूर्वक बिदाई ली।

मुंशीजी के साथ मैंने अगस्त ५२ से ५७ तक काम किया। उनका कार्यक्रम सुनिश्चित था। समय से कार्यालय कक्ष में आना-जाना तथा लोगों से मिलना तो था ही, उनके पास निष्काम बैठने के लिए एक भी मिनट न था। राजभवन के जो अधिकारी अथवा कर्मचारी उनके निकट काम करते थे, वे तो उनके परिवार के सदस्य थे ही, लेकिन सारे राजभवन परिसर में रहने वाले, लगभग २५० परिवारों को भी उन्होंने सम-दृष्टि से देखा। समय-समय पर वे उनके कुशल-क्षेम के बारे में जानकारी प्राप्त करते थे। यदि किसी निर्धन व्यक्ति को आर्थिक सहायता की आवश्यकता पड़ती, तो उसकी पूर्ति वे एक सुचारुरूप से करते थे, जिससे व्यक्ति विशेष को किसी प्रकार की ग्लानि न हो।

यदि किसी छोटे-वर्ग के कर्मचारी से कोई गलती होती, तो मुंशीजी उसे समझाकर भूल जाते थे। और यदि किसी अधिकारी ने मौखिक या लिखित रूप से उसके साथ कार्यवाही का सुझाव दिया, तो

मुंशीजी पहले तो हंसकर टाल जाते । फिर भी, प्रशासनिक कार्यवाही पर यदि जोर दिया जाता था, तो वे स्पष्टतः कहते थे कि यदि बेचारा इतना योग्य होता, तो आज तुम्हारे और हमारे पदों पर होता । वहीं बात समाप्त हो जाती ।

मुझे याद है कि एक दिन जुलाई के महीने में मुंशीजी का एक वृद्ध कर्मचारी पंखे के नीचे सो रहा था । दोपहर के विश्राम के बाद उसी कमरे में वे काम करते थे । कर्मचारी को सोते हुए देखकर, मुंशीजी अपने कक्ष में वापस चले गये और कुछ पढ़ने लगे । लगभग एक घंटे तक वह व्यक्ति सोता रहा । जागने पर उसे ज्ञात हुआ कि 'लाट साहब' (राज्यपाल) उसे देखकर वापस चले गये थे । राजभवन के पुराने कर्मचारी अनुशासनबद्ध थे । उन्हें ग्लानि हुई और वे क्षमायाञ्चना के लिए राज्यपाल मुंशीजी के पास गये । उन्होंने उसका सत्कार किया और जो

उत्तरप्रदेश के राजभवन (लखनऊ) में राज्यपाल के रूप में मुंशीजी और श्रीमती मुंशी । उनके पीछे पं. गोविन्दवल्लभ पंत ।

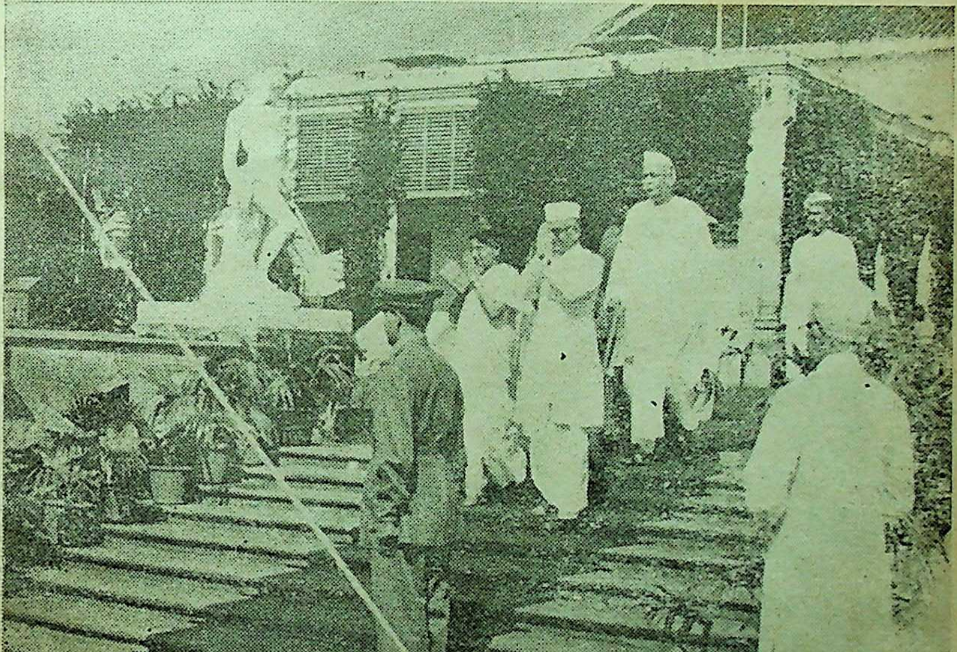

व्यक्ति सो रहा था, उसके स्वास्थ्य की जानकारी प्राप्त की । उसे ज्वर था । तुरंत राजभवन के डाक्टर को मुंशीजी ने स्वयं बुलवाया तथा उसके उपचार की व्यवस्था का आदेश दिया ।

एक छोटा-सा अनुभव अपना भी है । उस समय मेरी अवस्था २६ वर्ष की थी । कठिन-परिश्रम करने में आनंद तभी आता है, जबकि शब्दों के बजाय भावों में उसकी प्रशंसा हो । उन दिनों मैं राजभवन परिसर के बजाय रिसालदार पार्क के एक छोटे-से मकान में रहता था । एक दिन रात ८ बजे तक राजभवन में काम करके जब वापस आया, तो 'अशोकचक्रधारी' राजभवन की एक कार मुझे राजभवन लाने के लिए पहुंची । दिनभर कार्य करने के बाद थकावट महसूस हो रही थी । मन में सोचा : 'कुछ आवश्यक कार्य होगा, अन्यथा मुंशीजी इस समय न बुलाते । दस मिनट के अंदर मैं उनकी सेवा में उपस्थित हुआ । मुंशीजी ने पूछा, 'खाना खाया या नहीं ?' बड़े धर्मसंकट में पड़ गया । 'नहीं' कहते ही २-४ विशेषणों से सुशोभित कर देंगे, और 'हां' कहने पर असत्य बोलना होगा । अतः मेरा उत्तर 'ठीक है' सुनकर वे चुप रहे, और सीधे हाथ से घंटी पहले ही बजा चुके थे । उनके समक्ष एक खिदमदगार उपस्थित हो गया । मुंशीजी के आदेशानुसार वह खाना ले आया ।

'काम जरूरी है या खाना' सुनकर वे रुक गये, फिर उत्तर दिया, 'तुम्हारे लिए खाना' और 'हमारे लिए काम'–और हं पड़े । खाने के पश्चात् लगभग २ घंटे औ पिसाई हुई । बहुत ही आवश्यक काम था लेकिन उनके नेत्र ही कह रहे थे कि यथा शीघ्र पूरा होना चाहिये । स्वयं कहने मुंशीजी को कष्ट था ।

उसी प्रकार से वापस घर आया तथ प्रातः ६ बजे तक काम पूरा हुआ । आंखे में नींद थी । काम राजभवन पहुंचाना था एक कर्मचारी के हाथ सभी कागज मुंशीज के कक्ष में साढ़े छह बजे प्रातः पहुंचे । घर वापस लौट आया । लगभग ९ ब प्रातः कार्यालय पहुंचने पर जो खिचा हुई वह अब भी याद है । पचास से अधि पृष्ठ थे जो रात में टाइप हुए थे । उन्हों अन्य बातों के साथ कहा, 'आई नेव वांट टु किल यू' ।

मुंशीजी से जो भी व्यक्ति मिलत लौटकर उनके मानवीय-गुणों की भूरि भूरि प्रशंसा करता था । वे स्वयं तो स्वल्पाहारी थे, लेकिन उनके साथ दो ए. डी.सी खाना खाते थे । उनके लिए स्पष्ट आदे थे कि जो भी खाना चाहें, खा सकते हैं ईश्वर की कृपा से मुंशीजी के पास पै की कमी न थी, और न आज की तर महंगाई ही थी जो कि अपने ही अधिकार को खाने से रोके । मुंशीजी का हृद विशाल था । धार्मिक और सांस्कृति विचारधारा थी । सुविख्यात अधिवक्त होने के कारण, वे न्यायप्रिय थे, तथा संविधान के निर्माता होने की वजह से उनक

दृष्टि समान थी।

कभी-कभी मैं सोचता था कि ऐसे प्रतिभाशाली व्यक्ति को आज के युग में राजभवन में भेजना कहां तक उचित है? प्रदेश का शासन जन-प्रतिनिधियों की सरकार के हाथ में है। एक बार यह विचार मुंशीजी के समक्ष व्यक्त करने का साहस किया, और उत्तर से संतोष हुआ कि राज्यपाल का पद महत्वपूर्ण है यदि वह निष्ठापूर्वक अपने कर्तव्य का पालन करता है। संविधान के दायरे में मुंशीजी का कार्यकाल राज्यपालों के लिए अनुकरणीय है। विधि और विधान का ज्ञान, शिक्षा-प्रेम तथा जनता के कष्टों का निवारण करने की क्षमता मुंशीजी में अपार थी।

मुंशीजी के कार्यकाल में राजभवन के गेट होली-दिवाली के अवसरों पर जनसाधारण के लिए खुल जाते थे। राजभवन के अलंकृत 'दरबार हाल' में, जहां विदेशी-शासन-काल में सुरा-सुन्दरी-क्रीड़ाएं होती थीं, वहां एक-धर्म-समारोह, रामायण-गीता-पाठ होने लगे। इन अवसरों पर सभी लोग उनसे मिलते थे। अधिकारियों और कर्मचारियों के परिवार भी आमंत्रित किये जाते थे, और मुंशीजी तथा लीलावती मुंशी सबसे बड़े स्नेहपूर्वक मिलते थे।

मुंशीजी मेरी दृष्टि में साधारण वेश में एक असाधारण महापुरुष थे। लखनऊ राजभवन में उनका कार्यकाल एक अविस्मरणीय संस्मरण है, जिससे बहुत से महामहिम प्रेरणा प्राप्त कर सकते हैं।

□

मुक्तक

[१]

तेरी अमृतमयी वाणी से
मुखरित मौन मुझे मिलता था।
लौटा दे, नीरव अधरों पर
जो मधुमास कभी खिलता था।

[२]

सुरभि बिखेरी सांस-सांस में
फिर क्यों तुमने किया किनारा।
मेरे जीवन की मलयानिल
फिर न कभी महकी दोबारा।

[३]

बसे हुए प्राणों में मेरे
तुमने अनगिन खेल रचाये।
बिन्दु किया सागर को तुमने
सागर से फिर बिन्दु बनाये।

[४]

एक नीड़ स्वमेव बन गया
भांवर डाल विराजो इसमें।
दो दर्पन ऐसा नयनों को
देखूं जग का दर्शन जिसमें।

—अंजलि पांडेय

सी-ब्लाक ३६, महावीर भवन,
किदवई नगर, कानपुर, उ. प्र.

ग्रंथलोक

*** हृदय रोग : बचाव और उपचार * संपादन : डा. सुकमाल जैन; प्रकाशक : सन्मति प्रकाशन, बावड़ी चाल, चंदावाड़ी, सी. पी. टैंक, बंबई-४००००४; मूल्य : ६० रुपये।**

'हृदय रोग : बचाव और उपचार' के संपादक डा. सुकमाल जैन। १२९ पृष्ठों की इस सचित्र पुस्तक में २४ हृदय-रोग-विशेषज्ञों के बहुमूल्य आलेखों का संपादन है। संपादक के शब्दों में 'कुछ हृदय-चिकित्सकों का दावा है कि अब वे दिन भी दूर नहीं है, जब इन्सान को कृत्रिम या मशीनी हृदय के सहारे जीवित रखा जा सकेगा। यानी प्राकृतिक दिल का स्थान मशीनी दिल ले लेगा? तब क्या इन्सान सचमुच में अमर नहीं हो जायेगा? कैसा होगा विश्व का वह दृश्य, जब चारों ओर केवल अमर मानव नज़र आयेगा?'

पुस्तक का प्रारंभ ज्ञानी जैल सिंह के आशीर्वचन से होता है—'दिल खुश रहे तो बीमारी कैसी!' वास्तव में यह आशीर्वचन १९८४ में बंबई में आयोजित विश्व हृदय रोग सम्मेलन में उनके इस हिंदी में दिये गये भाषण का अंश है। उसके बाद हृदय-रोग विशेषज्ञों के ३९ लेख और टिप्पणियां हैं। एक लेख संपादक की कलम से है, जिसका शीर्षक है 'नकली दिल की खोज में एक अनंत यात्रा'।

'पराये शरीर में धड़कता हृदय' उस हृदय-प्रतिरोपण की कहानी है, जो कनाडा में किया गया था। उसके बाद (पेन्सिल्वानिया, अमरीका) में संपन्न हुए प्रथम भारतीय श्री माधव राव के हृदय-प्रतिरोपण की मनोरंजक कहानी दी गयी है। फिर डा. डेंटन कूली १५० साल तक जीने का उपाय बताते हैं। उन्होंने १९४४ में हृदय का आपरेशन शुरू किया था। उनका कथन है: 'भारत के चिकित्सक बहुत अनुभवी और कुशल हैं और उनमें ज्ञान प्राप्त करनेकी तीव्र पिपासा है। अब तक करीब १०० डाक्टर मेरे साथ काम कर चुके हैं और उनमें से कई शल्य-चिकित्सक आज भारत में ओपन हार्ट सर्जरी का शानदार काम कर रहे हैं।'

अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त भारत के हृदय-चिकित्सक डा. बी. के. गोयल ने अपने सचित्र लेख में दिल के दौरे के बारे में वह सही जानकारी दी है, जो खतरे को टाल

सकती है । स्पेन के डा. दियागो फिगेरा ने अपने लेख में यह जोर देकर कहा है कि हृदय-रोग रोकने की शक्ति हर व्यक्ति के पास है । डा. आर. एच. दस्तूर ने उच्च रक्तचाप के खतरों का जिक्र करते हुए उसे रोकने का उपाय बताया है । डा. वीरेंद्र माथुर ने कहा है दिल के दौरे में दर्द होना जरूरी नहीं है । डा. एम. वी. शाह ने अपने लेख में उन वस्तुओं का जिक्र करते हुए हमें सावधान किया है, जो हृदय के लिए घातक सिद्ध हो सकती हैं—उन्होंने तंबाकू और धूम्रपान के कारण होने वाली मौतों के आंकड़े पेश किये हैं और सुझाव दिया है—'खतरे से बचने का सरल उपाय है धूम्रपान से बहुत दूर रहना, इसी में भलाई है।'

इसी प्रकार, कुछ अन्य डाक्टरों ने राय दी है—ज्यादा शक्कर खाना हृदय के लिए खतरनाक है, कोलेस्ट्रोल बढ़ाये नहीं, घटाइये; सूती कपड़े पहनिये, व्यायाम से हृदय को स्वस्थ रखिये । हृदय रोग और उच्चताप को रोकने के लिए सावधानियों की एक अत्यंत उपयोगी तालिका भी इस पुस्तक में दी गयी है । इस पुस्तक में हृदय-रोग पर आयुर्वेदीय और होमियोपैथी की दृष्टि से भी विचार किया गया है । वैद्य वासुदेव वि. व्यास ने आयुर्वेदीय दृष्टिकोण से हृदय रोग का विवेचन प्रस्तुत किया है और डा. ए. जे. अल्फांसो ने होमियोपैथी से हृदय रोग के इलाज के संबंध में अपने विचार व्यक्त किये हैं ।

पुस्तक का अंतिम लेख है बंबई अस्पताल के श्री सी. जी. जोशी का—'अपने देश में भी सब सुविधाएं उपलब्ध हैं' । उसमें उन्होंने यह लिखा है कि हमारे अस्पतालों में ओपन हार्ट सर्जरी की पूरी सुविधाएं हैं । ऐसे आपरेशन के लिए इंग्लैंड या अमरीका जाने की जरूरत नहीं है । डा. डेंटन कूली का मत है 'मैं भारतीय लोगों को यही सलाह दूंगा कि वे यहां पर ही इलाज करवायें, क्योंकि यहां के अस्पतालों में सुविधाएं मौजूद हैं और कुशलतापूर्वक इलाज किया जाता है ।'

पुस्तक के अंत में दो बहुमूल्य परिशिष्ट हैं, जिनमें भारत के और विदेश के हृदय चिकित्सकों और हृदय चिकित्सा केंद्रों के पते दिये गये हैं । **—रमेश निर्मल**

०००

*** सरजा शिवाजी (नाटक) * लेखक : डॉ. रामकुमार वर्मा; प्रकाशक : साहित्य भवन प्राइवेट लि., इलाहाबाद-३; पृष्ठ सं. : ५६; मूल्य : आठ रुपये ।**

वरिष्ठ नाटककार डा. रामकुमार वर्मा द्वारा विरचित प्रस्तुत नाट्यकृति छत्रपति शिवाजी के एक अछूते पहलू को उजागर करती है । मुगल सम्राट औरंगजेब को उन्होंने अपने बुद्धि कौशल से कुछ ऐसा छकाया कि उनकी उस चतुराई पर वे भी दंग रह गये । यह ऐतिहासिक नाटक एक घटना को रेखांकित करता है । औरंगजेब ने वीर शिवा को आगरा में छल-प्रपंच से कैद कर लिया था । वंदीगृह से मुक्ति प्राप्ति के लिए उन्होंने भी

एक एसा स्वांग रचा कि मुगल सम्राट और उनके प्रमुख दरबारी भी देखते ही रह गये थे । चूंकि यह नाटच कृति रंग-मंचीय है । अतः इसमें देशकाल वातावरण का हवाला देते हुए तत्कालीन ऐतिहासिक चरित्रों का परिचय दिया गया है ।

नाटककार ने देश-काल और वातावरण की सृष्टि करने में महारत हासिल किया है । इसमें चार-पांच ही प्रमुख पात्र हैं । संवाद भी चुस्त-दुरुस्त और नपे-तुले तथा पात्रानुकूल हैं । इस कृति में भाव-भंगिमाओं के अनुरूप अंग-संचालन तथा अभिनेयता के सभी गुण हैं । मंच-सज्जा में भी किसी प्रकार की कठिनाई नहीं हो सकती । वस्तुतः उन्होंने महाकवि भूषण की इन काव्य-पंक्तियों के अनुरूप ही शिवाजी का चारित्रिक विश्लेषण किया है :

साजि चतुरंग वीर रंग में तुरंग चढ़ि,
सरजा शिवाजी जंग जीतन चलत हैं ।

निश्चय ही यह कृति नाटच प्रेमियों को रसास्वादन करवाने में समर्थ कही जायेगी ।

○○○

*** प्रसंगवश (लघुकथा संग्रह) * लेखक सतीशराज पुष्करणा; प्रकाशक : अयन प्रकाशन, नयी दिल्ली; पृष्ठ सं. : ११९; मूल्य : पच्चीस रुपये ।**

समसामयिक हिंदी साहित्य में प्रभाव व गुण की दृष्टि से लघुकथा ने अपनी अलग पहचान बना ली है । काव्य विधा में जो कथ्यगत सामर्थ्य 'मुक्तक' में है लगभग वही गद्य विधा में 'लघुकथा' में निहित हैं । प्रस्तुत संग्रह में सतीशराज की पचहत्तर लघु कथाएं संकलित हैं । विषय वस्तु की दृष्टि से उन्होंने इन्हें ग्यारह खंडों में विभाजित किया है । कानून, व्यवस्था एवं सामाजिक-पारिवारिक संदर्भों से जुड़ी हुई ये लघुकथाएं प्रभाव की दृष्टि से गहरा घाव करने में सक्षम हैं । लेखक ने इनके माध्यम से मानव के उदात्त भाव को भी रेखांकित किया है । देश-भक्ति को केंद्रित कर लिखी गयी 'कुर्बानी' लघुकथादेश भक्ति और त्याग-तपस्या का अनूठा ही उदाहरण है । 'इक्कीसवीं सदी' ठेकेदारी एवं इंजिनियरिंग के पारिवारिक व्यवहार व व्यवसाय पर करारा प्रहार करती है । 'आकाश छूते हौसले' एक श्रमजीवी के स्वाभिमान को प्रकाशित करती है । भ्रष्टाचार एव रिश्वतखोरी के मूल में अल्प वेतन ही कार्यरत है । 'एक और एक ग्यारह' लघुकथा का चरित्र करोड़ों लोगों की आंखें खोल देने का सामर्थ्य रखती है ।

संग्रह की सभी लघुकथाएं हमारे सामाजिक, राजनैतिक एवं पारिवारिक जीवन पर लगे हुए पैबंदों को उधेड़ने में समर्थ हैं । भाषा, कथ्य एवं संवाद पात्रों के अनुरूप ही हैं । आशा की जाती है कि इस संग्रह का हिंदी-जगत में समुचित स्वागत होगा ।

○○○

*** एक गृहयुद्ध और (उपन्यास) * लेखक: राजेंद्रकुमार शर्मा; प्रकाशक स्मृति प्रकाशन, १२४, शहरारा बाग, इलाहाबाद; पृष्ठ संख्या : २०२, मूल्य : तीस रुपये ।**

हरिजन मानसिकता के संदर्भ से जुड़ा हुआ यह उपन्यास भारतीय ग्रामीण व्यवस्था और उसमें परिव्याप्त गंदी राजनीति का बखिया उधेड़ने में समर्थ है। लेखक ने गांधीवादी विचार-धारा को आधार बना कर ही उसके कथ्य को विस्तार दिया है। अध्यापक किशना हरिजन है और वह अपनी जाति का प्रतिनिधित्व करता है। अंततः वह हृदय परिवर्तन में आस्था रखता है। वस्तुतः वह गांव-ढांणियों की सामाजिक और राजनैतिक आंधियों से टक्कर लेता हुआ भी निरंतर अपने लक्ष्य की ओर अग्रसित होता रहता है। बाल विधवा पार्वती (जो कि सवर्ण है) भी ऊंच-नीच व जाति-पांति का पुरजोर बहिष्कार करती है। ग्रामीण परिवेश में पंडित, महंत आदि धर्म के नाम पर अनाचार फैलाते हैं। महंत एक ऐसा ही व्यभिचारी जीव है, जो अपने आस-पास की मांसल जवानियों पर गिद्ध दृष्टि जमाये रहता है। इसी प्रकार गांव के पंच-सरपंच व अन्य सरकारी कर्मचारी भी अपने ही स्वार्थों में निर्लिप्त रहते हैं। ऊंच-नीच की जातीयता का यह गृहयुद्ध अंततः चलता ही रहता है। स्कूल का हेडमास्टर चंदीराम पुरापंथिता से ही जुड़ा रहता है। निम्न जाति के अध्यापक किशन का उसी के स्कूल में आ जाना वह गांव का दुर्भाग्य मानता है। इसीलिये तो वह सरपंच नेता और महंत जैसे प्रभावशाली और दुराचारी चरित्रों से मिल कर वहां से उसे भगा देने का षड्यंत्र रचने लगता है।

देश-काल एवं वातावरण की दृष्टि से उपन्यास जीवंतता लिये हुए है। भारतीय गांव हमारे दृष्टिपटल पर एक-एक कर रूपायत होते जाते हैं। भाषा यद्यपि पात्रानुकूल ही है किंतु कहीं-कहीं आंचलिक शब्दों से वह बोझिल हो जाती है। कुल मिलाकर उपन्यासकार अपने उद्देश्य में सफल कहा जा सकता है।

—डॉ. शीतांशु भारद्वाज

*** हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिपरक इतिहास * लेखक : डा. रामप्रसाद मिश्र; प्रकाशक : बिनोद पुस्तक मंदिर, डा. रांगेय राघव मार्ग, आगरा, उ. प्र., पृष्ठ : ३८२; मूल्य : तीस रुपये।**

समीक्ष्य ग्रंथ हिंदी के बहुचर्चित समीक्षक, विख्यात लेखक डा. रामप्रसाद मिश्र लिखित हिंदी साहित्येतिहास का निरपेक्ष मूल्यांकन है। इससे पूर्व डा. मिश्र के तिरपन ग्रंथ छप चुके हैं और विभिन्न विश्वविद्यालयों के परास्नातक पाठ्यक्रम में भी प्रायोजित हैं।

डा. मिश्र के प्रस्तुत ग्रंथ के पूर्व अनेक विद्वानों की साहित्येतिहास तथा हिंदी समालोचना संबंधी कृतियां हैं, पर वे नींव का पत्थर हैं। डा. मिश्र ने नये ढंग से नये रूप से काल गणना की है जैसे पूर्ववर्ती आदिकाल या वीर गाथाकाल के स्थान पर संक्राति काल, (भक्तिकाल) पुनरुत्थान-काल, (रीतिकाल) शास्त्रीय काल, जिससे

यह हिंदी साहित्य के अधुनातन, वस्तुवादी एवं विश्ववादी विवेचन, विश्लेषण, संश्लेषण एवं आकलन की दृष्टि से मौलिक ग्रंथ बन गया है।

प्रस्तुत ग्रंथ में अनुसंधित्सुओं तथा शोधकर्ताओं के लिए पर्याप्त शोध विषय-संकेत हैं, जिससे साहित्यानुरागी एवं छात्र आवश्यक भटकाव से बचकर मूल तत्व को हृदयंगम कर सकेंगे। इसमें लेखक परंपरावादी-अलंकारवादी एवं शास्त्रवादी, लोक मंगलवादी परिसीमाओं से ऊपर उठकर वर्तमान एवं भविष्य के अनुरूप विराटवाद का संवहन कर हिंदी के राष्ट्रभाषा एवं विश्वभाषा रूपों के साथ पर्याप्त न्याय कर सका है।

वस्तुतः नये आधार पर हिंदी साहित्येतिहास एवं हिन्दी आलोचना को प्रतिष्ठित करने में इस साहित्येतिहासज्ञ को पर्याप्त सफलता मिली है।

इसमें न केवल हिंदी साहित्य वरन विश्व की अनेक समृद्ध भाषाओं के साथ अनेक आयामों में तुलनात्मक साहित्य-दृष्टि भी प्रस्तुत की गयी है। अंत में ग्रंथ के साथ प्रवृत्तिपरक इतिहास की रूपरेखा और सूची तथा ४२ पृष्ठ की अनुक्रमणिका समग्रत्व-संपन्नता की परिचायिका है।

०००

***अन्नदा *उपन्यासकार : अमरनाथ शुक्ल; प्रकाशक : विद्या प्रकाशन मंदिर, १६८१ दरियागंज, नयी दिल्ली-११०००२; पृष्ठ सं : १७१; मूल्य : २५ रुपये।**

अमरनाथ शुक्ल के एक दर्जन से अधिक उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं, जिनमें 'अन्नदा' में उनके संघर्षशील व्यक्तित्व का प्रतिबिंब उतरा है। उ. प्र. के प्रतापगढ़ में जन्मे, दिल्ली में स्थापित इस उपन्यासकार के मन में इस उपेक्षिता, पराश्रिता, करुणामूर्ति नारी अन्नदा के प्रति जनमानस का सहानुभूतिभाव संवेदनात्मक स्तर पर निःसंदेह सफलता के शिखरों का सहज-स्पर्श करता है। उपन्यासकार इसे घनीभूत पीड़ा तथा संवेदना के अंतर्द्वंद्व का प्रतिफलन मानता है। नारी की पीड़ा, उसकी उपेक्षा उसके स्व का स्पर्श, उसके स्वाभिमान की रक्षा, उसकी अवमानना मौर प्रताड़ना इस उपन्यास की सामान्य विषयवस्तु है, जिसे उपन्यासकार ने लेखकीय पैनी दृष्टि से उजागर किया है। कितनी ही अन्नदा हमें दिखायी देती हैं पर हमें उनका दुख-दर्द सुनने का न समय है, न धैर्य, न संयम। लेखक ने अन्नदा के माध्यम से बीसवीं शती के नारी संसार को व्यस्त मनुष्य के बीच उसे नये अर्थ इस कृति के माध्यम से दिये हैं।

प्रस्तुत उपन्यास उ. प्र. के, विशेषकर प्रतापगढ़ के, पूर्वी क्षेत्र के ग्राम्य वातावरण पर लिखा गया है। इस क्षेत्र की नारी समस्या पर लिखा गया यह पहला सामाजिक उपन्यास है।

पुस्तक की भाषा प्रवाहमयी, आंचलिक बोध से ओतप्रोत है। हिंदी अकादमी द्वारा

पुरस्कृत यह औपन्यासिक कृति पठनीय तथा संग्रहणीय है । —चक्रधर नलिन

०००

*** सत्य की साधना * कवि : हुल्लड़ मुरादाबादी; प्रकाशक : मनीषा प्रकाशन, ५०३, चेतना, जयप्रकाश रोड, अंधेरी (पश्चिम), बंबई-४०००५८; मूल्य : दस रुपये मात्र ।**

जिन लोगों ने हास्यकवि हुल्लड़ मुरादाबादी की हाहाकारी रचनाएं पढ़ी या सुनी हैं उन्हें एक बार विश्वास ही नहीं हो सकता कि इस कलाकार कवि के भीतर एक गंभीर चिंतनशील विचारक विराजमान है जो ठहाकों की गूंज में आंसू की भाषा भी बोलता है, रंगीन मिजाजी के स्वर में दार्शनिकता के शब्द पिरोता है, मदारी की मुद्रा में जगत नियंता के क्रिया-कलापों की खोज खबर रखता है व सपनों की दुनिया में सारी अकल्पित भंगिमाओं के साथ जीते हुए भी सत्य के अन्वेषण की प्रक्रिया से निरंतर जुड़ा रहता है ।

ऐसे बिरले ही लोग होते हैं, जो इस स्तर तक हास्य की समझ रखते हैं। कवि हुल्लड़ मुरादाबादी की प्रस्तुत पुस्तक चिंतन, भक्ति, वैराग्य, ज्योतिष, अंक विज्ञान, प्रेम, लोक व्यवहार संबंधी काव्य रचनाओं का दोहा प्रधान संग्रह है जिसका हास्य से प्रारंभ होता है और आत्म बोध से अंत ।

भाग्य और कर्म का द्वंद्व शाश्वत है । हर युग के आदमी के समक्ष यह द्वंद्व उभरता है । कवि का निष्कर्ष देखें—

कहा भाग्य ने कर्म से, रहो सुमति के साथ,
सौ हाथों से प्राप्त कर, बांट हजारों हाथ ।

महान पुरुषों को अपनी संकीर्णता के दायरों में बांट या काट लेने की प्रवृत्ति पर हुल्लड़जी की सार्थक टिप्पणी व उदारवादी ऐलान इन दोनों में निरखें ।

गगन कहो या आसमां, चाहे कृष्ण करीम,
एक अकेले के नहीं, सबके राम .रहीम ।

× × ×

सब धर्मों में एक से, मिले सत्य के रंग
सबका मालिक एक है, बंद करो यह जंग ।

आज के इस मक्कारी-प्रधान युग में कवि की यह आश्वस्ति हर व्यक्ति को सोचने पर विवश करती है ।

पूर्ण सत्य की विजय है, झूठ कपट की हार,
चालाकी मक्कारियां, चलती हैं दिन चार ।।

भारतीय सोच को पुनर्प्रतिष्ठित करने की दिशा में गोया हुल्लड़ मुरादाबादी की कलम से संत कबीर जैसी वाणी फूटती दिखायी पड़ती है—

समय करे सो ठीक है सहले देर सबेर ।।
साधो साधो समय को, समय समय का फेर ।

नारी के संबंध में हुल्लड़जी की निम्न पंक्तियां दृष्टव्य हैं—

हर युग में नारी बड़ी, पूजित उसका नाम ।
चाहे राधेश्याम हो, चाहे सीताराम ।।

ज्योतिष व अंक शास्त्र का सार दोहों में उतार लेने का कमाल देखें—

शनि का नीलम रत्न है, माणिक सूरज रत्न ।
मूंगा मंगल के लिए, पन्ना है बुध रत्न ।।

× × ×

पहला नंबर सूर्य का, दूजा चंद्र कहाय ।
तीजे को कहिये गुरू बेड़ा पार लगाय ।।

ये तो हुए कुछ उजले पक्ष, कुछ ऐसे पक्ष भी हैं, जो पुस्तक के स्वरूप पर चोट करते हैं, जैसे कुछ दोहों में अनगढ़पन साफ झलकता है । 'तू क्यों टांग अड़ाया' जैसी उथली अभिव्यक्ति एक से अधिक बार हुई है ।

भाग्यवाद पर जरूरत से ज्यादा ह जोर देना, अंधश्रद्धा की हद तक श्रद्धाल होने की प्रेरणा देना, अवसरवादी व्यव हार की सीख, नितांत पारिवारि गुणानुवाद इसके कमजोर पक्ष हैं, वै पुस्तक की उपयोगिता के व्यापक परिवे में यह कमजोरी दब जाती है ।

—रामेश्वर वैष्ण

□

चर्खा और शरत बाबू

असहयोग आंदोलन के समय जब गांधीजी कलकत्ता आये तब एक दिन कांग्रे का कार्यालय देखने के लिए गये । देशबंधु दास के घर से और भी कई व्यक्ति उनके सा थे । श्री श्यामसुंदर चक्रवर्ती उस समय बंगाल प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष थे । व भी थे और शरतचंद्र भी । कार्यालय पहुंचकर महात्माजी ने सबके साथ चर्खा चलाने क इच्छा प्रकट की ।

चर्खे आये और सब लोग कातने लगे । महात्माजी की दृष्टि बड़ी तीक्ष्ण थी । तु ही उन्होंने देख लिया कि शरत बाबू का सूत बहुत सुंदर है । इसके विपरीत श्याम बा बहुत मोटा कात रहे हैं । परिहास के स्वर में वह बोले—'अरे देखो तो, बंगाल प्रांतीय कांग्रे के प्रधान रस्से-जैसा मोटा सूत कात रहे हैं ।'

सुनकर सब हंस पड़े । शरतचंद्र बोले, 'मंदिर के जो जितना पास होता है भगवा से उतना ही दूर होता है ।'

महात्माजी ने कहा—'शरत बाबू, आपकी चर्खे में श्रद्धा नहीं है ?'

'नहीं, रत्ती भर नहीं ।'

महात्माजी ने कहा—'लेकिन कातते तो आप चर्खे के अनेक प्रेमियों से अच्छा है

शरत बोले—'मैं चर्खे को नहीं, आपको प्यार करता हूं । मैंने चर्खा कातना इसीलि सीखा है ।'

महात्माजी हंस पड़े । बोले—'लेकिन आप इस बात में विश्वास नहीं करते कि कात से स्वराज्य-प्राप्ति में सहायता मिलेगी ?'

शरतचंद्र ने हंसते हुए कहा—'जी नहीं, मैं विश्वास नहीं करता । मेरे विचार स्वराज्य-प्राप्ति में सिपाही ही सहायक हो सकते हैं, चर्खे नहीं ।'

यह सुनकर गांधीजी बड़े जोर से हंस पड़े ।

—डा. गोपाल प्रसाद 'वंश

□

संत मावजी कालीन साहित्य और कला

श्रीकृष्ण व रासमालाओं का चित्रण

☐ रवीन्द्र डी. पण्ड्या

राजस्थान राज्य के दक्षिणांचल का एक भाग वाग्वर प्रदेश है, जो गुजरात, मालवा और मेवाड़ के मध्य स्थित है । प्राचीन समय से ही यह प्रदेश धर्म व शौर्य प्रधान रहा है । मौर्य काल से राजपूत काल तक इस क्षेत्र में कई भव्य हिंदू तथा जैन मंदिरों का नवनिर्माण हुआ । प्राय: इस प्रकार की भक्ति तथा धार्मिक भावना के प्रेरणा स्रोत संत और मुनि मानव शरीरधारी देवदूत ही होते हैं । अत: इस क्षेत्र को भी इस प्रकार की महान् शक्तिशाली दैवी शक्तियां पुत्र रत्न के रूप में प्राप्त हुईं ।

१८ वीं शताब्दी के प्रारंभिक चरण में अविकसित वाग्वर प्रदेश के अशिक्षित एवं दलित वर्ग को वैष्णव भक्ति मार्ग पर ले जाने के अभियान को छेड़ने वाले मावजी का जन्म संवत् १७७१ माघ सुदी ५ पंचमी २८, जनवरी १७१५ ई. में डूंगरपुर जिले के साबला नामक ग्राम के निर्धन ब्राह्मण दालमजी की भार्या केसर बाई की कोख से हुआ । कौन जानता था कि जंगलों में गाय-भैंसों को चराने वाला ब्राह्मण का पुत्र बागड़ की धरती पर भगवान श्रीकृष्ण की तरह लीलाएं करेगा । बालक मावजी कृष्ण भक्ति में खो गया । श्रीकृष्ण के गुन भरे स्वरचित गीत, बांस की बनी वांसुरी के मधुर स्वरों से बेणेश्वर स्थल को आनंदित कराता रहा । कृष्ण भक्ति में खोये हुए इस ब्राह्मण पुत्र मावजी को 'मावजी गाड़ा' के नाम से जानने लगे । जब 'माव' ने इस क्षेत्र में वैष्णव धर्म की धारा को प्रवाहित करना प्रारंभ किया, तो इनकी चमत्कारिक प्रतिभा को देखकर इस क्षेत्र की जनता उन्हें अपनाने लगी । लोग इनके शिष्य व भक्त बन गये ।

१८ वीं शताब्दी में कृष्ण भक्त संत मावजी ने इस प्रदेश में 'पंथ संप्रदाय' स्थापित कर स्वयं का एक पंथ चलाया;' जिसे 'महाराज पंथ' कहा जाने लगा । मावजी ने अपना शिष्य वर्ग तैयार किया । इनके प्रमुख शिष्यों में जीवनदास प्रमुख थे । जिनके सहयोग से ५ बड़े सचित्र ग्रंथों की रचना हूई । इस समय ४ सचित्र ग्रंथों की प्रतियां मावजी महाराज के मंदिरों में सुरक्षित हैं ।

इन ग्रंथों में वैष्णव धर्म से संबंधित अनेक चित्रों की रचना हुई । कृष्ण लीलाओं का चित्रण इन ग्रंथों का प्रमुख विषय रहा । मूल सचित्र ग्रंथों के अतिरिक्त अन्य छोटे-

छोटे ग्रंथों का लेखन कर संत मावजी के उर्पदेश, आगमवाणी, भक्तिपद, भजन, बारहमासा, हरि कीर्तन, राग-रागिनियों के आधार पर गाये जाने वाले कृष्ण भक्ति के गीत, आदि के लघु गुटके उनके शिष्य वर्गों में बांटें जाने लगे। वैष्णव भक्ति की धारा इस प्रदेश के लोगों में प्रवाहित होती गयी। जगह-जगह संत मावजी के मठ-मंदिर स्थापित हुए।

मावजी कालीन ग्रंथों में बेणेश्वर की महिमा का बिशद वर्णन किया गया है। वर्तमान बागड़ तीर्थ 'बेणेश्वर' धाम को ग्रंथों में 'बेण वृंदावन धाम' के नाम से उल्लेख किया गया है।

१८ वीं शताब्दी में यह संपूर्ण क्षेत्र घने जंगलों से आच्छादित था। बेणेश्वर स्थल माही, जांखम व सोम नदियों के संगम के मध्य में स्थित ऊंची पहाड़ी का कुछ भाग है, जिसे स्थानीय भाषा में 'बेणकु' कहा जाता हैं। यह स्थल संत मावजी की साधना व रासक्रीड़ा स्थल रहा।

मावजी कालीन रचित ग्रंथों में 'बेण वृंदावन' की महिमा व रास क्रीड़ाओं का सुंदर वर्णन व चित्रण हुआ हैं। जिस

चीरहरण (साबला ग्रंथ)

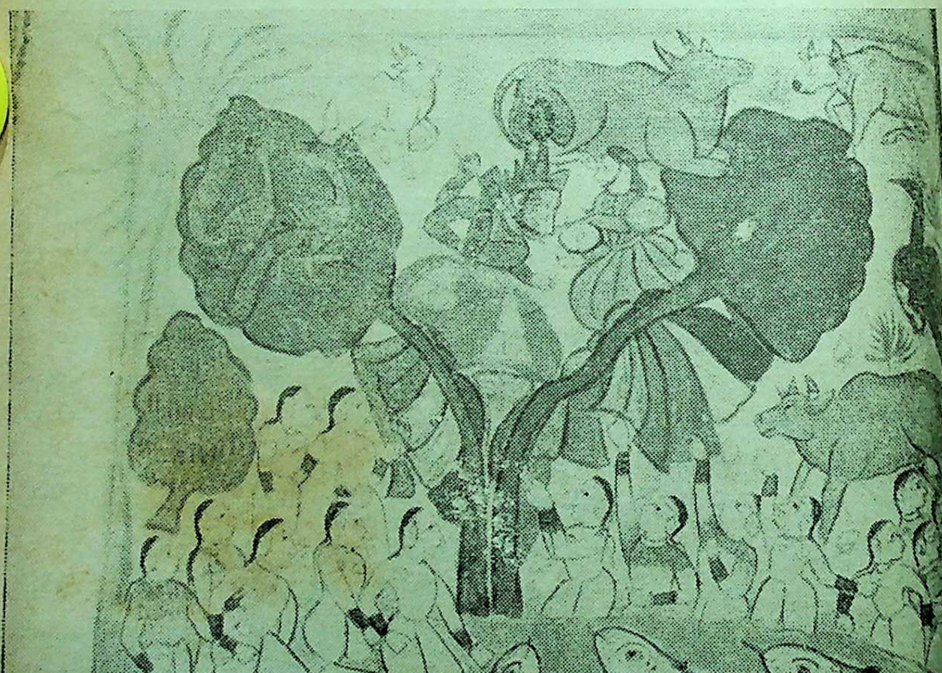

तरह भगवान कृष्ण की जन्मस्थली मथुरा और रासक्रीड़ा-लीला स्थल वृंदावन रहा, उसी तरह कृष्ण भक्त संत मावजी का जन्म स्थल 'साबला' को रचनाकारों ने मथुरा माना तथा इनकी रासलीला व साधना स्थल 'बेण वृंदावन धाम' वर्तमान बेणेश्वर को माना। तत्कालीन लिपिकारों, चित्रकारों ने इस स्थल का विशद वर्णन साहित्य एवं कला के माध्यम से ग्रंथों में अलंकृत किया है।

मावजी कालीन रचित इस ग्रंथ का अंतिम भाग रासलीला एवं 'महारासलीला' के असंख्य चित्रों से सुसज्जित है। साबला स्थित मूल ग्रंथ की अंतिम पुष्पिका में 'इति श्री निजसुत्र जीजतार माहारस महारासलीला ग्रंथ नाम सम्पूर्ण: भवती' का उल्लेख है। मावजी कालीन ग्रंथ 'महारासलीला' में वंशीध्वनि, गोपियों के अभिसार, श्रीकृष्ण के साथ उनकी बातचीत, राधाजी के साथ अंतर्धान, पुन:प्राकट्य, गोपियों के द्वारा दिये हुए बसनावस पर बिराजना, गोपियों के कूट प्रश्न का उत्तर, रासनृत्य क्रीड़ा, जलकेलि और वन विहार आदि का सुंदर वर्णन है। साथ ही उक्त प्रसंगों के रंगीन चित्र मावजी कालीन साहित्य और चित्रकला के बेजोड़ उदाहरणों में से एक हैं।

साबला व बेणेश्वर स्थल जिस प्रकार संत मावजी की तपोभूमि व रासक्रीड़ा स्थली रही उसी भांति पालोदा व लसाड़ा ग्राम (जिला बांसवाड़ा) भी संत मावजी के साधना स्थल रहे। संत मावजी कालीन रचित ग्रंथों में लसाड़ापुरी, सावलापुरी, हीरापुरी, भावपुरी के दृश्यों को चित्रित किया गया है। पालोदा ग्राम के मध्य संत मावजी की स्मृति में बना मंदिर जिसमें घोड़े पर सवार निष्कलंक की चतुर्भुज मूर्ति विद्यमान है, इस मंदिर में संत मावजी के शिष्यों द्वारा लिखित दो हस्तलिखित पांडुलिपियां शोध के दौरान मुझे प्राप्त हुईं।

बागड़ी साहित्य की अमूल्य इन कृतियों में कृष्ण भक्ति गीत विभिन्न रागमालाओं राग-रागिनियों में गाये जाने वाले भक्ति गीतों की रचना की गयी। पालोदा हरि मंदिर में सुरक्षित 'निष्कलंक राय नी रासलीला' नामक ग्रंथ जिसे 'बांगड़ी गीत गोविंद' के नाम से कहा जाना मेरे ख्याल से उचित है। यह कृति जयदेवकृत गीत गोविंद की ताजी स्मृति दिलाती है। 'बागड़ी गीत गोविंद' में बेण वृंदावन धाम वर्तमान बेणेश्वर पर गोप-गोपियों की रासक्रीड़ाएं एवं लीलाएं, गोप-गोपियों का प्रेम मिलन, संवाद, विभिन्न राग मालाओं पर आधारित कृष्ण भक्ति के गीत अंकित हैं। प्रस्तुत है कुछ अंश –

गोपांगनाएं श्रीकृष्ण मिलन के लिए तैयार हो रही हैं, सखियां आपस में एक-दूसरे को श्रीकृष्ण मिलन के लिए आमंत्रित कर रही हैं।

ला हो लीजे सुख वधे।
ऐ अंचली आवोरे सोहागण सुंदरी ।।
पीजे पीजे प्रभु संग प्रेम ।-

अवसर आयोरे पेली वार में ।।
हवे अवसर चूकजे केम सजनी ।
ला हो लीजे सुख वधे ।।

'निष्कलंकरायनी रासलीला' (बागड़ी साहित्य) ग्रंथ में बेण वृंदावन (वर्तमान बेणेश्वर) में श्री साम (कृष्ण) के मिलन हेतु गोपियां कह रही हैं :–

समर दिपु जातणी, लागी भाव अनंत ।
मणी माणक्य मोती करी,
नीज्य बंधावी कंत ।। १०२ ।।
हाली सब हल के करी, रमऊम रग पाय ।
मन सुध मोहन भेटीऐ,
वेण वृंदावन माहे ।। १०३ ।।

प्रतिवर्ष माघ पूर्णिमा पर संत मावजी की स्मृति में वर्तमान बेणेश्वर (ग्रंथों में वर्णित 'वेण वृंदावन धाम') पर विशाल मेले का आयोजन होता है । लाखों लोगों के इस मिलन समारोह में बागड़ प्रदेश की 'साद' कही जाने वाली जाति का नृत्य दल इस 'वेण के टापू' पर स्थित विष्णु मंदिर के विशाल प्रांगण में कृष्ण रासलीलाओं, नृत्यों का आयोजन लगातार १४ घंटों तक करता रहता है ।

मूलतः मावजी कालीन यह साहित्य बागड़ी मिश्रित गुजराती एवं कतिपय संस्कृत भाषा से अलंकृत है ।

भारतीय इतिहासकारों एवं साहित्यकारों ने इस प्रदेश के महान संत मावजी महाराज एवं उनके समय के सचित्र धार्मिक ग्रंथ साहित्य के प्रति क्यों उपेक्षा की ? यह हमारे सामने प्रश्न चिह्न है ? १८ वीं शताब्दी में इस देश में अनेक संत पैदा हुए एवं अनेक साहित्य एवं धार्मिक ग्रंथों के साथ-साथ चित्रकला की भी रचना हुई। भारतीय इतिहासकारों एवं साहित्यकारों ने अपनी लेखनी से तत्कालीन महत्वपूर्ण साहित्य एवं संतों के कृतित्व एवं व्यक्तित्व को बड़े जोर-शोर से उभारने मे अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी । किंतु बागड़ प्रदेश 'पीछड़े' शब्द का अभिशाप बन गया । अतः पीछड़ा प्रदेश मानकर डा. गौरीशंकर हीराचंद ओझा के अलावा किसी ने इस प्रदेश का पुरातात्विक सर्वेक्षण-साहित्यिक सर्वेक्षण कर इसका लेखा जोखा तैयार नहीं किया । बागड़ की धरती के विद्वानों ने इस महान् संत को देवता स्वरूप तो माना, किंतु इस संत को ए तत्कालीन उनके साहित्य को देखा अनदेखा कर दिया । घर के लोगों ने इ ठुकराया एवं साहित्य को सदा का मंजूषाओं में अब तक कैद रखा; अन्यथा आज इस प्रदेश के महान् संत मावजी ए तत्कालीन उनका साहित्य देश के सम कालीन साहित्य व कला की धारा जुड़ जाता ।

इस प्रदेश में वैष्णव भक्ति धारा क प्रवाहित करने वाला महान संत मावजी अमर हैं । जिसकी सचित्र कृतियां रासक्रीड़ व लीलास्थल, साधना स्थल–वेणेश्वर 'बे वृंदावन धाम' आज पूजनीय एवं तीर्थ स्थ के रूप में विद्यमान है ।

–खडगदा, जि. डूंगरपुर-३१४०

उर्दू हास्य

नया साल, नया जाल

□ एम. हुसेन

सज्जनो ! नया साल आ गया, इसलिए दिल खोलकर खुशियां मनाइये, लेकिन हम तो खुद नये साल की खुशी इसलिए नहीं मनाते कि नया साल आ गया है, वरन् खुशी इस बात की मनाते हैं कि पुराना साल गुजर गया और हम नहीं गुजरे।

हमें ठीक समय पर नये साल के आने की कोई खबर नहीं होती। विश्वास मानिये कि नये साल के आने की खबर हमें अपनी बीवी से उस समय मिलती है जब वह हर नये साल में हमें एक बच्चे का बाप बना देती हैं, जबकि उनकी गोद में एक सलोना बच्चा हुमकने लगता है। तब हम अपनी आंखें मलते हुए पूछते हैं–'क्या नया साल आ गया ?'

इस पर हमारी बीवी मुस्कराती हुई हमारी गोद में नये साल को डाल देती हैं और कहती हैं–'अगर विश्वास नहीं होता है, तो स्वयं अपनी आंखों से देख लो कि नया साल आ गया है कितना खूबसूरत और मोटा-ताजा है।'

नये साल के आगमन की सूचना तो हमें किसी-न-किसी तरह से हो ही जाती है, लेकिन उसकी आमद का विश्वास उस समय तक नहीं होता, जब तक कि हमारे पड़ोसी और पड़ोसन में लड़ाई-झगड़ा न शुरू हो जाये। यह झगड़ा हमेशा नये साल के कैलेंडरों को लेकर होता है और फिर नये साल का आधा हिस्सा गुजरने तक जारी रहता है।

अब नये साल के आरंभ के बारे में कुछ निवेदन करना चाहते हैं। कहा जाता है कि कार्य का शुभारंभ हो, तो समझ लीजिये कि आधा काम पूरा हो गया। लेकिन दुःख इस बात का है कि नये साल की शुरूआत हमारे पक्ष में कुछ अच्छे शगुन से नहीं हुई है। वह इस तरह कि आज जब हम अभी अपने बिस्तर में ही पड़े थे कि अचानक दरवाजे पर किसी ने दस्तक दी। हमने आंखें मलते हुए दरवाजा खोला तो अपने एक साथी को पाया जो अपने ग्यारह बच्चों और दो बीवियों के साथ हमारे घर के सामने बारात के रूप में मौजूद थे। बंबई से आने वाली गाड़ी ने उन्हें हमारे घर तक पहुंचा दिया था।

हम इतनी लंबी यात्रा के बाद उनके एकाएक आ धमकने का कारण पूछना ही चाहते थे कि उन्होंने आगे बढ़कर गले से लगा लिया और बोले–'नया साल मुबारक !'

फिर बच्चों को समझाने लगे कि बच्चो, अब तुम एक-एक कर अपने चचा जान को नये साल की मुबारक दो।

हम परेशान हैं कि अगर श्रीमान के

(शेषांश पृष्ठ ९६ पर)

लोक-साहित्य

कनउजी लोकगीतों की भाव-सम्पदा

☐ डा. महेन्द्रप्रताप सिंह

'कनउजी' शब्द की व्युत्पत्ति कान्यकुब्ज शब्द से हुई है। कान्यकुब्ज, कन्नौज का प्राचीन नाम है। कन्नौज नगर फर्रुखाबाद जिले में गंगा तट पर बसा हुआ है। प्रयाग में यदि तीन नदियों का संगम है तो कन्नौज में पांच नदियों का। काशी में यदि विश्वनाथजी तथा अन्नपूर्णा अलग-अलग मंदिरों में स्थापित हैं तो कन्नौज में दोनों एकाकार होकर 'गौरीशंकर' के रूप में विराजमान हैं। कन्नौज का अतीत गौरवमय रहा है। धार्मिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक सभी रूपों ने कन्नौज की प्रतिष्ठा में चार चांद लगाये हैं। प्राचीन भूगोल के अनुसार जो क्षेत्र इसकी सीमा में थे, उनको भी कन्नौज के नाम से पुकारा जाता था। इस प्रकार राजधानी और राज्य दोनों का एक ही नाम था।

'कनउजी' से वस्तुतः कन्नौज प्रदेश की भाषा से ही तात्पर्य है।

आजकल कन्नौजी भाषा फर्रुखाबाद, इटावा, मैनपुरी की भोगांव, एटा की अलीगंज तथा एटा तहसील, बदायूं की बिसौली के पूर्वीभाग, बदायूं तथा दातागंज तहसील, बरेली की फरीदपुर तथा नबाबगंज तहसील शाहजहांपुर, हरदोई की संडीला तहसील तथा गोसगंज, खीरी की मुहम्मदी तहसील और सीतापुर की मिस्रिख तहसील तथा पश्चिमी कानपुर में बोली जाती है।

कनउजी लोक गीतों में अशिक्षित ग्रामीण जनता के भावुक तथा संवेदनशील हृदय के उद्‌गारों को संगीत की बलवती धारा की लहरों पर प्रवाहित किया गया है। लोक गीतों में सामान्य जनमानस के निश्छल हृदय की सहज अभिव्यक्ति होती है। उनके हर्ष और विषाद, आशा और निराशा, सुख और दुःख सभी प्रकार की भावनाओं का हृदय अनुवाद किया जाता है। हृदय पक्ष की सीधी अभिव्यक्ति होने के कारण लोकगीतों में भाव सम्पदा अत्याकर्षक होती है। ब्रज और अवधी के मध्य दोआबा क्षेत्र में विभिन्न वनस्पतियों की प्रचुरता के समान ही कन्नौजी भाव-संपदा की प्रचुरता भी अद्वितीय ही है।

कनउजी लोकगीतों में विभिन्न देवी-देवताओं की वंदना के गीतों के साथ ही साथ गर्भाधान, पुत्र-जन्म, सोहर गीत, रोग निवारण हेतु विभिन्न देवी-देवताओं के पूजन के गीत, पुत्र-प्राप्ति हेतु देवी-देवताओं के अनुनय के गीत, भाई-बहिन के

स्नेहपूर्ण संबंधों के गीत, उत्साह के गीत, विवाह के गीत तथा पति-पत्नी के रति भाव के गीत प्राप्त होते हैं।

जिस परम पिता परमात्मा ने हम सबको जन्म दिया, उसकी वंदना करना हमारा परम धर्म है। श्रीरामचंद्रजी की आराधना के साथ ही साथ विभिन्न देवी-देवताओं के पूजा के गीत यहां के लोक गीतों में प्राप्त होते हैं –

'पहिले सुमिरौं रामचंद कों
जिन्नै पिण्डी दई बनाय'।

'कर्म प्रधान विश्व रचि राखा' यह सत्य है, लेकिन कभी-कभी ऐसा होता है कि कर्म करने पर भी फल की प्राप्ति नहीं होती है। तब हम कहते हैं कि ऐसा मेरे भाग्य में नहीं था। अतः भाग्यवाद की झलक कनउजी लोक गीतों में दिखायी पड़ती है। गोपीचंद्र जन्म के समय जब ज्योतिषी रानी से कहता है कि यह बालक तो योगी होगा, तो रानी कहती है कि ज्योतिषी तुम्हारे पोथी-पत्रों को फाड़कर फेंक दो। तो ज्योतिषी कहता है कि –

कागद होय रानी फारि कैं फेकौं
करम न मेटो जाय मोरे रामा।
लिखने वाले तो ब्रह्मा हैं! रानी
उनको लिखें को मेटैं मोरे रामा।

विवाह को भारत वर्ष में सामाजिक बंधन माना जाता है। कन्या की विदाई के समय कन्या पक्ष के व्यक्तियों के नेत्रों से अश्रुधार बहने लगती हैं, लेकिन कन्या की भाभी खड़ी-खड़ी मुस्काती है। लोक गीत में इसे निम्नांकित पंक्तियों में चित्रित किया गया है –

माया के रोये छतिया फटत है,
ददुली के रोये सागर पार।
भइया के रोये पटुका भिजत्त है,
भौजी ठाड़ी मुस्काय।

विवाहोपरांत भाई जब बहिन के घर जाता है तब वह बहिन की दीन-दशा देखकर चकित रह जाता है। किन अरमानों के साथ उसने बहिन का विवाह किया था। वह अरमान आज भुने हुए पापड़ के समान टूट जाते हैं। घर पहुंचने पर जब माता बहिन के समाचार जानना चाहती है, तब भाई रो-रोकर बहिन की दशा का चित्रण करता है –

बहिन का हाल न पूछो मोरी माया,
बहिन का हाल सुनि छतिया फटेगी।
बहिनी के कपड़ा ऐसे बने हैं,
जैसे चौका को पूतना जी।
बहिनी के असुआ ऐसे गिरत हैं
जैसे मघा के बूंद जी।

अपनी बेटी का हृदय विदारक वर्णन सुनकर माता का हृदय विदीर्ण हो जाता है।

भाई के विवाह में बहिन ही 'राई नोन' उतारती है। भाई के घर में भतीजा होता है तो बहिन बधावा लाती है। भतीजे के मुंडन में बहिन ही बालों की झालर पुए पर रखती है। भतीजी की शादी में बहिन ही चांदी की 'मठियां' लाती है। रक्षा-बंधन एवं भैया-दूज (दीपावली पर) जैसे अमूल्य अवसरों को भी लोककवियों

ने गीतों से सजाया है ।

बहिन के घर में विवाह होने पर भाई 'भात' ले करके जाता है । भात के गीत बड़े ही मर्मस्पर्शी हैं । भाई के पहुंचने पर ही उसका स्वागत नाई द्वारा चरण धोकर किया जाता है। उस समय से लेकर रात्रि के दस बजे तक, जब तक वह बहिन को भात पहना नहीं देता है तब तक विभिन्न गीतों की मांगलिक एवं स्नेहिल आवाज उसके कर्णपटल पर पड़ती रहती है–'विनती है मेरे भइया कि तुम भात ले आना ।'

बालक ज्वर, चेचक आदि रोगों से पीड़ित है । मां पीड़ित पुत्र हेतु देवी की आराधना करती हुई कहती है –

काहे काजे मइया ध्वजा नारियल
काहे काजे मइया दोनन मेवा ।
दूधा के काजे ध्वजा नारियल
पूता के काजे मइया दोनन मेवा ।

कनउजी लोक गीतों में उत्साह का भाव प्रधान होते हुए भी प्रणय भाव कम महत्वपूर्ण नहीं है इस क्षेत्र की नायिकाओं ने संयोग और वियोग दोनों स्थितियों का भरपूर भोग किया है । कनउजी लोक कवि ने प्रणय के दोनों पक्षों को साहित्य में सफलतापूर्वक उभारा है ।

ब्रज और अवधी भाषा के कारण जहाँ कनउजी भाषा का साहित्यिक परिवेश कम ही उभर पाया है; वहीं उसका लोक पक्ष लोक कवि की वाणी में राशि-राशि बिखर उठा है । एक-एक भाव महाकवियों की उच्चकोटि की कविता के समकक्ष रखा जा सकता है । प्रोषित पतिका नायिका के लिए वर्ष की षडऋतुएं विशेष पीड़ादायक होती हैं । आदि काल और रीति काल के कवियों की भांति ही कनउजी लोक कवि ने भी नायिका की विरह व्यथा के चित्रांकन में बारहमासा का चित्रण किया है । लोक-गीत की एक-एक पंक्ति अंगूर के दाने के समान रस प्लावित है ।

ग्रीष्मकाल में गर्म धूल पर अपने पति के साथ चलती हुई नग्नपदी मुग्धा नायिका के कथन में कवि ने नायिका की दशा के साथ मिलकर निम्नांकित रूप में चित्रित किया है –

'भुलभुलिया लागी जोर,
बलम मोय कनियां लै लेउ ।'

बिहारी के दोहों की भांति इस पंक्ति में चित्रात्मकता उभरती है । प्रेमी के सामने पैर पटककर ठुनकती हुई चंचल नायिका का चित्र सहज ही उभर आता है । ऐसी माधुर्य से परिपूर्ण अभिव्यक्ति बड़े से बड़े कवियों में सहज प्राप्त नहीं होती है और यही भाव-स्थितियां कनउजी लोक कवि की भाव-संपदा को महान सिद्ध करने में सक्षम हैं । जिसे किसी भी काल और किसी भी स्थान के कवि के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है ।

एक प्रवत्स्य प्रेयसी नायिका पति को विदेश जाने के लिए मना कर रही है । पति आवश्यक कार्य बताते हुए विदेश जाना चाहता है । अंत में उससे पत्नी कहती है यदि आप बहुत दिनों बाद लौटकर आवें

तो जाने से पूर्व मुझे गंगा नदी में डुबा दें–

जुगति बताय जाउ कौन विधि रहिवे ।
जो कहुं सजन बहुत दिनन में अइऔं ।
अपनी सुधि मेरी बहियां पै लिखाय जइऔ ।
जो कहुं सजन बहुत दिनन में अइऔं ।
बहियां पकरि हमें गंगा में धकिआय जइऔ ।

बैसाख मास में फूस के बंगले बनने लगते हैं । पति के घर पर न होने के कारण पत्नी केवल कल्पनायें कर ही सन्तोष कर लेती है । वह कहती है यदि पति होते तो मैं भी बंगला बनवाती – |

बैसाख मास में बांस कटउती ।
बांस कटाय कै बंगला छवउती ।
बंगला छवाय के खिरकी कटउती ।
झुकुअन आती बयार ।

पति वियोग से पीड़ित होकर एक नायिका स्वयं पति के पास जाने के लिए सन्नद्ध होती है । जेठ मास की कड़ी दोपहरी में जब भूतल तवे के समान गर्म होता है तो कोमलांगी किस प्रकार पति तक पहुंचे । पति के पास वह संदेश भेजती है कि वह आयें और उसे ले जावे–

जेठ मास की कड़ी दोपहरी,
हम पै चलो न जाय ।
जाय कहो उन बारे बलम तै
बहिआं पकरि लै जांय ।

कोई भी संदेशवाहक नायिका का संदेश पहुंचाने में समर्थ नहीं है । सबसे अनुनय-विनय करने के पश्चात् वह मेघों को अपना संदेश-वाहक बनाती है । मेघ उसका संदेश प्रियतम तक पहुंचाने में समर्थ होते हैं–

अरे-अरे कारी बदरिया तुर्महिं मोरी बदरी हो ।
बदरी जाय बरसौ उइ देस जहां पिया छाये हों ।

और वास्तव में काले-काले मेघ उस देश में वर्षा कर रहे होते हैं, जहां उसका प्रियतम है । वर्षा के कारण उसका हृदय स्पंदित होता है और प्रियतमा की याद सताने लगती है । तुललीदास की तरह वह भी रात्रि में घर पहुंचता है और दरवाजे को खटखटाता है । पत्नी जब द्वार के खटखटाने की आवाज सुनती है, तो वह पूछती है कि तुम कौन हो ? कुत्ते, बिल्ली या ससुर के पहरेदार ?

पति उत्तर देता है–मैं कुत्ता, बिल्ली या ससुर का पहरेदार नहीं हूं । मैं तुम्हारा पति हूं और बदरी के बुलावे पर आया अभी-अभी हूं–

न हम कुत्ता बिलइया,
न ससुर पहरुआ हो ।
धनि हम आये तुम्हारे
सजना बदरी बुलाये हो ।

नटखट कन्हैया को चुनौती से भरा गोपियों द्वारा फाग खेलने का निमंत्रण तो जगत-प्रसिद्ध है ।

फाल्गुन मास में शरीर पर रंगों की बौछार एवं गालों पर अबीर-गुलाल की लालिमा किसके मन को मधुर नहीं करती । देवर-भाभी की होली तो मनमोहक होती ही है लेकिन पति-पत्नी की होली भी

विशिष्ट स्थान रखती है । पति-पत्नी की होली परिवार के सदस्यों की नजर बचाकर खेली जाती है । नायिका का प्रियतम होली पर भी घर नहीं आया है । पत्नी की इच्छा मन में ही मसल जाती है, वह होली किसके साथ खेलें–

फागुन मास ऋतु लागी री सजनी
सब सखि होरी खेलैं ।
हमरे तौ कृस्न विदेश में छाये
हम होरी कइसे खेलैं ।

कन्नौज की भूमि को 'घाघ' जैसा लोक कवि प्राप्त होने का श्रेय है । जो सम्राट अकबर के समकालीन हुए । (घाघ सराय कन्नौज से १ कि. मी. की दूरी पर स्थिति ग्राम है जहां घाघ के वंशज आज भी विद्यमान हैं ।)

घाघ की कहावतों में कृषि एवं सामाजिक जीवन के अनुभव प्राप्त होते हैं जो जीवन में खरे उतरते हैं ।

परिवार में पति सुख और शांति चाहता है लेकिन यदि उसे प्रत्येक बात का खंडन करने वाली स्त्री प्राप्त हो जाय, तब उसका दुःख कहां जाये ।

नसकट पनही, बतकट जोय,
जो पहिलौठी बिटिया होंय ।
पातरि कृषि बौरहा भाय,
घाघ कहें दुःख कहां समाय ।

नारी विधाता की अलौकिक कृति है । मां, बहिन, पत्नी और लड़की सभी रूपों में वह श्रेष्ठ है । कनउजी लोक गीतों में नारी को सम्मान प्राप्त है–

नारी निंदा कोइ न करियौ,
नारी नर की खान ।
नारी से न उपजे हैं
ध्रुव प्रहलाद समान ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कनउजी लोक गीतों के भाव अधिक संप्रेषणीय हैं। उत्कृष्ट भावों की सहज अभिव्यक्ति यहां के लोक गीतों में प्राप्त होती है ।

–पी. एस. एम. डिग्री कालेज, कन्नौज, उ. प्र.

□

(पृष्ठ ९१ का शेषांश)

आगमन का उद्देश्य केवल नये साल का मुबारकबाद देना था तो हमें सीधे-सीधे कोई कार्ड भेज देते, अपने इतने सारे बीवी-बच्चों के साथ हमारे घर पर बमबारी करने की क्या आवश्यकता थी ।

हम सबेरे से बराबर इस प्रयास में हैं कि उनके आने का असली कारण उनसे पूछें, मगर वह सबेरे ही अपने बच्चों सहित खाने में इस तरह व्यस्त हैं कि उन्हें छेड़ना उचित नहीं समझा । पता नहीं वे कब वापस जायेंगे । हमें तो यह संदेह भी है कि कहीं वह अगले साल की मुबारकबाद देकर ही वापस न हों और अपने साथ ग्यारह बच्चों के बजाय बारह बच्चों को ले जायें । इतनी लंबी यात्रा का कुछ न कुछ लाभ तो होना ही चाहिये । फिर हम नये साल की खुशियां मनायें तो कैसे ?

[अनु. मनोहरलाल विश्वकर्मा]

□

क्रिकेट की विश्वकप-प्रतियोगिता

अप्रत्याशित परिणामों और चमत्कारिक प्रदर्शनों की रोमांचक कहानी

☐ हरिमोहन शर्मा

हाल ही में भारत व पाकिस्तान में आयोजित रिलायंस विश्व कप क्रिकेट प्रतियोगिता इससे पूर्व आयोजित क्रिकेट की तीन विश्व कप प्रतियोगिताओं से अधिक रोमांचक, अधिक तीखे संघर्षों व अप्रत्याशित परिणामों और चमत्कारिक घटनाओं से भरपूर रही । इस प्रतियोगिता से पूर्व, क्रिकेट-विशेषज्ञों, अनुभवी क्रिकेट खिलाड़ियों ने उसके मैचों के बारे में, परिणामों के बारे में जो भविष्यवाणियाँ की थीं, वे एक-दो अपवादों को छोड़कर ग़लत साबित हुईं । प्रस्तुत है इस प्रतियोगिता के हर संघर्षपूर्ण मैच की रोमांचक कहानी, उनके लेखे-जोखे के साथ ।

इसे पढ़कर आप उन उत्तेजनापूर्ण क्षणों को एक बार फिर जी सकेंगे, जो प्रतियोगिता में भाग लेने वाले ८ देशों के करोड़ों क्रिकेट-प्रेमियों के लिए एक अमिट यादगार बन कर रह गये हैं ।

अप्रत्याशित परिणामों और चमत्कारिक प्रदर्शनों का सिलसिला रिलायंस विश्व कप क्रिकेट प्रतियोगिता के प्रारंभिक मैच से ही आरंभ हो गया था, और अंतिम मैच तक अटूट रूप से कायम रहा ।

प्रतियोगिता में भाग लेने वाली टीमों को दो वर्गों में बांटा गया था। 'ए' वर्ग में भारत, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और जिबाब्वे की टीमें थीं, जबकि 'बी' वर्ग में श्रीलंका की टीमें थीं ।

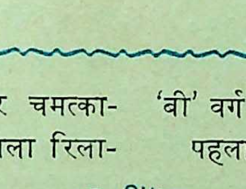

पहला मैच पाकिस्तान और श्रीलंका के बीच हैदराबाद (पाक) में हुआ। पाकिस्तान ने अपने उप-कप्तान मियांदाद के शतक—१०३ रनों—की सहायता से बमुश्किलतमाम ५० ओवरों में २६७ रन बनाये । श्रीलंका ने अपने दो बल्लेबाजों—रोशन महानामा और अरविंद द'सिल्वा के क्रमशः ८९ और ४२ रनों की मदद से २५२ रन

बनाये, और जीत के इतना निकट आ गया था कि उसे आखिरी ८ गेंदों में १८ रन बनाने थे, जो असंभव कार्य न था। लेकिन भाग्य ने उनका साथ नहीं दिया।

इसके बावजूद, जैसा कि मैच के अंत में पाकिस्तान के भूतपूर्व नामी खिलाड़ी इंतखाब आलम ने कहा, 'पाकिस्तान जीता अवश्य, किंतु अंत तक दबाव में और परेशान रहा। अंतिम ओवरों में श्रीलंका की विजय निश्चित लगने लगी थी।'

भारत-सिर्फ़ एक रन से हारा

अगले दिन–९ अक्तूबर–को भारत और आस्ट्रेलिया के बीच हुआ प्रारंभिक मैच और भी अधिक रोमांचक और अप्रत्याशित रहा। आस्ट्रेलिया ने पहले खेलते हुए निर्धारित ५० ओवरों में २७० रन बनाये, जिसमें सबसे बड़ा योगदान दिया वूल (४९) और मार्श (११०) की प्रारंभिक जोड़ी ने। भारत ने श्रीकांत (७०), नवजोत सिद्धू (७३) और गावसकर (३९) के माध्यम से सशक्त उत्तर दिया, और तीन विकेट गंवाने पर उसका स्कोर २०७ था। अंतिम ५४ गेंदों में उसे सिर्फ़ ४२ रन बनाने थे, और उसके छह खिलाड़ी आउट होने शेष थे। मगर कपिल, शास्त्री, प्रभाकर, मोरे और बिन्नी की जल्दबाजी ने जीता हुआ मैच हरा दिया।

फिर भी, लंच-टाइम में अंपायर डिकी बर्ड और निर्णायक हनीफ़ मुहम्मद ने आस्ट्रेलियाई बल्लेबाज डीन जोंस द्वारा लगाये गये एक चौके को छक्के में न परिवर्तित किया होता, तो भी भारत जीत जाता। मगर, क्रिकेट और विशेष रूप से एक दिवसीय क्रिकेट की सबसे बड़ी विशिष्टता यही है कि उसके बारे में निश्चय से यही कहा जा सकता है कि निश्चय से कभी भी कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

उसी दिन 'बी' वर्ग में गुजरांवाला (पाकिस्तान) में वेस्ट इंडीज और इंग्लैंड के खिलाफ़ खेला गया मैच भी अपने अप्रत्याशित परिणाम के कारण काफ़ी रोमांचक रहा। वेस्ट इंडीज की शक्तिशाली टीम, जो दो बार विश्व-कप जीत चुकी थी, और १९८३ में भारत से हार कर, दूसरे स्थान पर रही थी, के पास यद्यपि, ग्रीनिज जैसे श्रेष्ठ बल्लेबाज और मॉर्शल और गार्नर जैसे तूफ़ानी गेंदबाज नहीं थे, तो भी क्रिकेट विशेषज्ञों को पूरी आशा थी कि अपने वर्ग में वह पाकिस्तान के साथ सेमी-फाइनल में अवश्य प्रवेश करेगी। इंग्लैंड और श्रीलंका को वे 'कमज़ोर टीम' मानते थे।

लेकिन, इंग्लैंड के बल्लेबाज लैंद ने जिन्हें इस मैच का 'मैन ऑफ द मैच' घोषित किया गया, अपराजित ५६ बनाकर, गूच (४७) के साथ अपनी टीम को जिताने में महत्वपूर्ण योगदान दिया, और अंतिम ओवर में फॉस्टर के साथ मिलकर १३ शानदार रन बनाकर अपनी टीम की विजय सुनिश्चित कर दी। वेस्ट इंडीज (२४३-७) को इंग्लैंड (२४६-८) के हाथों

अप्रत्याशित पराजय स्वीकार करनी पड़ी। ४७ वें ओवर में लैंब ने अपनी आक्रामक बल्लेबाजी से १६ रन बनाये थे।

न्यूजीलैंड के खिलाफ़ अकेला हाउटन

अगले दिन–१० अक्तूबर–को एक और सनसनीखेज मैच खेला गया। इस मैच के अकल्पनीय परिणाम ने सबको चकित कर दिया।

जिंबाब्वे की टीम 'ए' वर्ग की ही नहीं, आठों टीमों में सबसे कमजोर थी। इसलिए, किसी ने यह कल्पना भी नहीं की थी कि वह न्यूजीलैंड जैसी अनुभवी और अपेक्षाकृत तगड़ी टीम को हराने के बहुत निकट आ जायेगी। मगर, यह अकल्पनीय संभावना संभव कर दिखायी, जिंबाब्वे के हिम्मती बल्लेबाज–विकेटकीपर हाउटन ने। १४२ शानदार और जोखिमपूर्ण ढंग से बनाये गये रनों के द्वारा उन्होंने अपनी टीम को विजय के द्वार पर ला खड़ा कर दिया, और यदि उनके बाद आने वाले खिलाड़ी थोड़े संयम से काम लेते, तो अंतिम ४ गेंदों में सिर्फ़ ४ रन बनाकर, अपनी टीम को अविश्वसनीय विजय दिला सकते थे। किंतु, अनुभव की कमी उनके उद्देश्य में बाधक बनी। स्कोर इस प्रकार रहे: न्यूजीलैंड (२४२-७), और जिंबाब्वे (२३९, सब खिलाड़ी ४९-४ ओवरों में आउट)। इससे अधिक उत्तेजक अंत शायद नहीं हो सकता था।

इस मैच के बाद, क्रिकेट-विशेषज्ञों को अपनी रायें बदलनी पड़ीं, और उन्होंने कहना आरंभ किया, इस प्रतियोगिता में अब कुछ भी संभव है, और कोई भी टीम किसी भी टीम को हरा सकती है। सभी टीमों के चकित-स्तब्ध कप्तान भी उनसे सहमत थे। हर मैच उनके लिए बारूदी सुरंग सरीखा बन गया था।

Reliance Cup 87
The cricket event
8th Oct–10th Nov

आघात पर आघात

१२ अक्तूबर को रावलपिंडी में हुए मैच में पाकिस्तान के लैग-स्पिनर अब्दुल कादिर ने इंग्लैंड के ४ विकेट लेकर यह दिखा दिया कि एक प्रवीण-स्पिनर एकदिवसीय मैच में भी अपनी टीम को जीत दिला सकता है। इस मैच में पाकिस्तान (२३९ रन) ने इंग्लैंड (२२१ रन) को १८ रनों से हराया) पाक की ओर से सलीम मलिक (६५ रन) और एजाज अहमद (५९ रन) ने शानदार बल्लेबाजी की। इंग्लैंड के बल्लेबाज क़ादिर (४ विकेट), तौसिफ़ (१ विकेट), और जाफर (२ विकेट) की सटीक गेंदबाजी के आगे टिक नहीं पाये।

१३ अक्तूबर को दोनों वर्गों की दो कमज़ोर टीमों जिबाब्वे और श्रीलंका का मुकाबला क्रमशः आस्ट्रेलिया और वेस्ट इंडीज से हुआ, और दोनों शक्तिशाली टीमों ने विपक्षी टीमों की चटनी बनाकर रख दी। आस्ट्रेलिया (२३५ रन) के सामने जिबाब्वे (१३९ रन) की टीम बिल्कुल नहीं टिक पायी । उधर वेस्ट इंडीज के ३६० के अति-विशाल स्कोर के आगे श्रीलंका की टीम कुल १६९ रन ही बना सकी । वेस्ट इंडीज की ओर से १८१ रन बनकर १७५ रन का कपिल का पुराना कीर्तिमान भंग किया । हेन्स ने शानदार १०५ रन बनाये । श्रीलंका की ओर से रणत्तुंगा का ५२ रन (अपराजित) का प्रदर्शन ही उल्लेखनीय रहा ।

१४ अक्तूबर को बंगलूर में न्यूजीलैंड और भारत के बीच हुआ मैच भी काफ़ी रोमांचक रहा । अपने श्रेष्ठ क्षेत्ररक्षण के लिए प्रसिद्ध न्यूजीलैंड ने गावसकर और श्रीकांत को सस्ते में रन आउट करके सनसनी मचा दी । लेकिन सिद्धू, कपिल और मोरे (२८ गेंदों में ४० रन) ने भारत की स्थिति को सुदृढ़ किया। भारतीय स्पिन गेंदबाजों–रवि शास्त्री और मनिंदर–ने शानदार गेंदबाजी कर भारत की विजय सुनिश्चित की ।

१६ अण्तूबर को लाहौर में पाकिस्तान और वेस्ट इंडीज के बीच हुए महत्वपूर्ण मैच में तगड़े संघर्ष के बाद, पाकिस्तान ने वेस्ट इंडीज को १ विकेट से हराकर, वेस्ट इंडीज की आशाओं पर कुठाराघात किया। वेस्ट इंडीज ने पहले खेलते हुए सिमंस (५० रन) और कप्तान रिचर्ड्स (५१ रन) की सहायता से ४९.३ ओवरों में २१६ रन बनाये । वेस्ट इंडीज के तेज़ गेंदबाजों ने पाकिस्तान के तेज़ बल्लेबाजों–सलीम मलिक, मियांदाद, एजाज़ अहमद आदि को काफ़ी बाँधे रखा, और अंतिम ओवर में स्थित यह थी कि पाकिस्तान को विजय के लिए १४ रन बनाने थे, और उसके अंतिम खिलाड़ियों–क़ादिर और सलीम ज़ाफर–की जोड़ी विकेट पर थी। इतने रन बनाना दोनों के लिए असंभव कार्य लगता था। तीन गेंदों में सिर्फ़ चार रन बने। चौथी गेंद पर क़ादिर ने एक शानदार छक्का लगाया। पांचवीं गेंद पर उसने दो और रन बनाये, और यही कमाल उसने छटी गेंद पर दिखाकर पाकिस्तान को असंभव लगने वाली विजय दिला दी। इस मैच में सलीम यूसफ़ ने धाकड़ ५६ रन बनाये ।

पाकिस्तान के हाथों इंग्लैंड की दूसरी हार

१७ अण्तूबर को जो दो मैच हुए, उसमें दोनों सफल टीमों–भारत व इंग्लैंड–ने क्रमशः जिबाब्वे और श्रीलंका को आसानी से हराकर न सिर्फ़ अपने-अपने अंकों में वृद्धि की बल्कि अपनी रन बनाने की गति में भी सुधार किया ।

जिबाब्वे के खिलाफ़ हुए मैच में मनोज प्रभाकर ने धुंआधार गेंदबाजी कर जिबाब्वे के ४ बल्लेबाजों को सिर्फ़ १३ के स्कोर पर

आउट किया, और सारी टीम सिर्फ़ १३५ के स्कोर पर आउट हो गयी । जवाब में भारत ने सिर्फ़ २७.५ ओवरों में, दो विकेट खोकर, जीत के लिए आवश्यक १३६ रन बना लिये ।

श्रीलंका के खिलाफ इंग्लैंड ने पेशावर में २९६ रन बनाये, जिसमें गूच का योगदान ८४ रन था । प्रकाश की कमी व वर्षा के कारण, श्रीलंका ४८ ओवरों में ८ विकेट खोकर सिर्फ़ १५८ रन बना पाया । बेहतर रन-रफ्तार के कारण, इंग्लैंड को विजयी घोषित किया गया ।

इंदौर में १८ अक्तूबर को हुआ आस्ट्रेलिया-न्यूजीलैंड मैच मौसम की खराबी की वजह से ३०-३० ओवरों तक सीमित रहा । आस्ट्रेलिया ने पहले खेलते हुए, ४ विकेटों पर १९९ रन बनाये, जिसमें बून का योगदान ८७ रनों का था । न्यूजीलैंड ने इस स्कोर को पार करने और इसमें से इस स्कोर की बराबरी करने और ४ रनों से उन्हें हराने की जीतोड़ कोशिश की, मगर किस्मत ने उसका साथ नहीं दिया ।

२० अक्तूबर से दोनों वर्गों के वापसी मैच आरंभ हुए । उस दिन, पहला वापसी मैच पाकिस्तान और इंग्लैंड के बीच कराची में हुआ । इसमें पाकिस्तान ने इंग्लैंड के २४४-९ के स्कोर को, जो ऐंथी के ८६ और कप्तान गैटिंग के ६० रनों के कारण ही इतना विशाल बन पाया, ४९ वें ओवर में २४७ रन बनाकर, आसानी से पार कर लिया । इस मैच में पाकिस्तान के कप्तान इमरान ने ४ विकेट लेकर लाहौर में वेस्ट इंडीज के विरुद्ध अपने प्रदर्शन की बराबरी की, रमीज़ राजा ने एक दिवसीय मैच में अपना पहला शतक (११३ रन) बनाया । सलीम मलिक (८८ रन), बिल ऐथी (८६ रन) और गैटिंग (६० रन) ने अपने एक दिवसीय मैचों के श्रेष्ठतम प्रदर्शन किये । अब इंग्लैंड को सेमी-फाइनल में पहुंचने के लिए वापसी मैचों को श्रीलंका और वेस्ट इंडीज को हराना आवश्यक था । पाकिस्तान ने सेमी-फाइनल में प्रवेश

किया ।

भारत के दो साहसिक प्रदर्शन

जब २२ अक्तूबर को दिल्ली में भारत और आस्ट्रेलिया का वापसी मैच आरंभ हुआ, तो भारत के लिए इस मैच को जीतना ज़रूरी था, क्योंकि तब तक उसने दो मैच जीतकर सिर्फ़ ८ अंक अर्जित किये थे, जबकि आस्ट्रेलिया अपने तीनों मैच जीतकर १२ अंक अर्जित कर चुका था। भारत को अपनी रन-गति भी आस्ट्रेलिया की रन-गति से बेहतर करनी थी। उसे आस्ट्रेलिया से अपनी पहली हार का बदला भी लेना था।

भारत ने इस मैच में अपने एक-दिवसीय इतिहास का सर्वोत्कृष्ट प्रदर्शन कर, निर्धारित ५० ओवरों में ६ विकेट खोकर २८९ रन बनाये। चार भारतीय बल्लेबाजों ने अर्द्धशतक पूरे किये : गावसकर (६१ रन), नवजीत सिद्धू (५१ रन), बैंगसरकर (६३ रन) और अज़हरुद्दीन (५४ रन)। अज़हरुद्दीन ने गेंदबाजी भी अच्छी की, और सिर्फ़ १९ रन देकर, आस्ट्रेलिया के तीनों गेंदबाजों—रीड, मॅकडरमट और ओडोनल को आउट किया। आस्ट्रेलिया ५६ रनों से पराजित हुआ। इस मैच के बाद, भारत अपने वर्ग में ५.३१ रनों की बेहतर रफ्तार के कारण, अपने वर्ग में सबसे ऊपर हो गया। आस्ट्रेलिया की रन-गति ५.२० रन प्रति ओवर ही थी।

इस मैच के बाद, भारत के कप्तान कपिल देव ने कहा—'सेमी फाइनल में अब हमारा प्रवेश ९०% निश्चित है, और है आशा है कि हम फाइनल कलकत्ता पाकिस्तान के साथ खेलेंगे।'

सेमी फाइनल में अपना प्रवेश सु श्चित करने के लिए भारत को वाप मैचों में ज़िबाब्वे और न्यूजीलैंड को हराना था। २६ अक्तूबर को अहमदाबा में हुए मैच में उसने जिबाब्वे (१९१-७ को आसानी से (४२ ओवरों में, ३ विके पर १९४ रन) हरा तो दिया, मग उसकी रन-गति ४.६१ ही रही। अब यह था कि यदि शेष मैचों में न्यूजीलैं अपने तीनों मैच—भारत, आस्ट्रेलिया औ जिबाब्वे को हरा दे, और बेहतर र गति प्राप्त कर ले, तो आस्ट्रेलिया, भा व न्यूजीलैंड के समान अंक—१६ अंक जायेंगे, और बेहतर रन-गति पाने भारत सेमी-फाइनल में आने से वं रह सकेगा।

२३ अक्तूबर को कलकत्ता में मैच में न्यूजीलैंड ने जिबाब्वे को हरा ८ अंक अर्जित कर लिये, और भारत सेमी-फाइनल में न आ सकने के डर और बढ़ा दिया। (स्कोर : जिबाब्वे २२७-५, न्यूजीलैंड : ४७.४ ओवरों २२८-६)।

आशाओं पर पानी

मगर, २७ अक्तूबर को आस्ट्रेलिया न्यूजीलैंद को चंडीगढ़ में हुए मैच में प जित कर, न्यूजीलैंड की सेमी-फाइनल आने की सब आशाओं पर पानी फेर दि

आस्ट्रेलिया ने ८ विकेट खोकर २५१ रन बनाये, जिसमें मार्श द्वारा बनाये गये १२६ रन भी शामिल थे। न्यूजीलैंड ने इससे अधिक रन बनाने का भरसक प्रयास किया, लेकिन ४८.४ ओवरों में सिर्फ़ २३४ रन बनाकर उसकी सारी टीम आउट हो गयी। यदि उसके प्रमुख बल्लेबाज मार्टिन ४ रन पर आउट न होते, तो वे जीत सकते थे।

वर्ग 'ए' के अंतिम दो मैचों में आस्ट्रेलिया का मुकाबला जिबाब्वे से ३० अक्तूबर को कटक में हुआ, जिसमें उसने जिंबाब्वे को ७० रनों से हराया, और अपनी रन-गति ५.१९ प्रति ओवर कर ली। अब भारत को अपने अंतिम मैच में अपने वर्ग में सर्वोच्च स्थान पर रहने और सेमीफाइनल में पाक से न भिड़ने के लिए या तो २६२ रनों से जीतना था, या ५.२ रन-गति ओवर की दर से। नागपुर में हुए अपने वर्ग के अंतिम मैच में उसने न्यूजीलैंड को हराकर यह लक्ष्य प्राप्त कर लिया। यह एक उत्कृष्ट प्रदर्शन था।

न्यूजीलैंड ने ९ विकेट पर २२१ रन बनाये। जवाब में भारत ने सिर्फ़ ३२.१ ओवरों में, और एक ही विकेट खोकर २२४ रन बनाये। गावसकर ने १०३ अपराजित रन बनाकर एक-दिवसीय मैचों में शतक बनाने का अपना सपना साकार किया। श्रीकांत ७५ पर आउट हुए, और अजहर ने ४१ अपराजित रन बनाकर, १ विकेट भी लिया। चेतन शर्मा ने लगातार तीन गेंदों में रदरफोर्ड, स्मिथ और चैटफील्ड को आउट कर, विश्व कप प्रतियोगिताओं में पहली 'हैट ट्रिक' बनाने का असाधारण गौरव प्राप्त किया। इस मैच के बाद ५.४१ रन-गति के कारण अपने वर्ग में पहला स्थान प्राप्त कर लिया।

पाकिस्तान की पहली हार

उधर, वर्ग 'बी' में वापसी मैचों में दो के परिणाम अप्रत्याशित रहे। इंग्लैंड ने वेस्ट इंडीज को, और वेस्ट इंडीज ने पाकिस्तान को हराया।

२१ अक्तूबर को कानपुर में वापसी मैच में वेस्ट इंडीज ने श्री लंका को २५ रनों से हराया अवश्य, मगर तगड़े संघर्ष के बाद ही। श्रीलंका ने 'टॉस' जीता, और वेस्ट इंडीज से पहले बल्लेबाजी करने को कहा। रवि रत्नायके और अरविंद डि'सिल्वा की सटीक गेंदबाजी के कारण, वेस्ट इंडीज ८ विकेट खोकर २३६ रन ही बना सका। जवाब में श्रीलंका ने २११ रन बनाये। यदि भाग्य ने श्रीलंका का साथ दिया होता, तो वह अवश्य जीतता, कारण उसका प्रदर्शन निःसंदेह वेस्ट इंडीज से बेहतर था। उसके अर्जुन रणत्तुंगे ने अपराजित ८६ रन बनाये।

२५ अक्तूबर को फैसलाबाद में पाकिस्तान का वापसी मैच श्रीलंका के साथ हुआ। पाकिस्तान के २९७ के विशाल स्कोर में सलीम मलिक का शतक भी शामिल था। इस बड़े स्कोर के सामने श्रीलंका की टीम ८ विकेट खोकर १८४

रन ही बना सकी । इस मैच में क़ादिर ने ४० रन देकर ३ विकेट लिये ।

२६ अक्तूबर को जयपुर में एक और रोमांचक मैच हुआ वेस्ट इंडीज और इंग्लैंड के बीच । इस संघर्षपूर्ण मैच में अपनी हार के बाद, वेस्ट इंडीज की टीम सेमी-फाइनल में आने से वंचित रह गयी । ३० अक्तूबर को उसने कराची में पाकिस्तान को अवश्य हराया, और उसके अंक भी बढ़कर १२ हो गये, लेकिन तब तक पाकिस्तान के २० और इंग्लैंड के १६ अंक हो चुके थे ।

इस मैच में ५० निर्धारित ओवरों में पहले खेलते हुए, इंग्लैंड ने ५ विकेटों पर २६९ रन बनाये । वेस्ट इंडीज ने ४८.१ ओवरों में सारे विकेट गंवाकर २३५ रन बनाये । सिर्फ रिची रिचर्डसन ने ९३ रन बनाकर ठोस बल्लेबाजी का प्रदर्शन किया । रिचर्ड्स ने भी ५१ रन बनाये, मगर शेष बल्लेबाज इंग्लैंड के गेंदबाजों की सटीक गेंदबाजी के सामने टिक नहीं पाये ।

अपनी इस पराजय का बदला वेस्ट इंडीज ने ३० अक्तूबर को पाक़िस्तान को सनसनीखेज़ ढंग से हराकर लिया । इस मैच में वेस्ट इंडीज ने पहले खेलते हुए, रिचर्डसन के ११० रनों की सहायता से, ७ विकेट खोकर २६८ रन बनाये । पाकिस्तान की ओर से रमीज़ राजा (७० रन) को छोड़कर कोई और बल्लेबाज उल्लेखनीय रन नहीं बना सके, और ९ विकेट खोकर सिर्फ़ २३० रनों पर आउट हो गये । इस मैच के परिणाम ने स पाकिस्तान को सन्न करके रख दिया ।

इसी दिन, कटक में आस्ट्रेलिया जिंबाब्वे के साथ अपना दूसरा वापिसी मै खेला । आस्ट्रेलिया ने इस मैच में अप प्रतिद्वंद्वी को ७० रनों से हराया, औ अपनी रन-गति भारत के बराबर ५.१९–कर ली ।

सेमी फाइनलों के अप्रत्याशित परिणाम

और, इसी दिन पूना में इंग्लैंड खिलाफ़ खेले गये वापसी मैच में श्रील को आसानी से हराया । श्रीलंका ने पह खेलते हुए ७ विकेटों पर २१८ रन बना जिसके जबाब में इंग्लैंड ने ४१.२ ओव में सिर्फ़ दो विकेट गंवाकर ३१९ रन ब लिये ।

वापसी मैचों के क्रम में अंतिम भारत और न्यूजीलैंड के बीच हुआ, जिस संक्षिप्त विवरण हम पीछे दे आये हैं ।

इस मैच के बाद, सेमी फाइनल खेलने वाली टीमों की स्थिति स्पष्ट गयी । पहला सेमी फाइनल ४ नवंबर लाहौर में आस्ट्रेलिया और पाकिस्तान बीच खेला गया । इस मैच में बड़े ही अप्रत्य शित ढंग से आस्ट्रेलिया ने पाकिस्तान पराजित कर, फाइनल में भारत के वि खेलने की इमरान ही नहीं, सारे पाकिस्त की आशाओं पर पानी फेर दिया ।

आस्ट्रेलिया ने टॉस जीतकर बल्लेबा शुरू की, और निर्धारित ५० ओवरों ८ विकेट खोकर २६७ रन बनाये ।

जोन्स और वैलेटा ने क्रमशः ६५, ३८ और ४८ रन बनाकर पाकिस्तान के सामने ५.३४ की रन-गति से अधिक गति से रन बनाने की चुनौती पेश की, जो काफ़ी कठिन थी, कारण उनकी रन बनाने की रफ्तार इस प्रतियोगिता में कभी ५.१ से अधिक नहीं पहुंची थी। पाकिस्तान इस चुनौती को स्वीकार नहीं कर पाया और उसकी पूरी टीम ४९ ओवरों में २४९ बनाकर आउट हो गयी। आस्ट्रेलिया की ओर से मॅकडरमॅट ने ५ विकेट लेकर 'मैन ऑफ द मैच' का खिताब जीता। इस हार से, एक समाचार के अनुसार, 'सारे पाकिस्तान में मातम छा गया।'

दूसरा सेमी-फानइल बंबई में ५ नवंबर को भारत और इंग्लैंड के बीच हुआ। जैसा कि सभी क्रिकेट-पंडितों ने भविष्यवाणी की थी, यह मैच काँटे का, और तीव्र संघर्ष से पूर्ण सिद्ध हुआ, कारण जानकार लोगों के अनुसार, दोनों टीमें समान क्षमताओं वाली थीं।

इंग्लैंड ने पहले खेलते हुए ६ विकेट गंवाकर २५४ रन बनाये। इन रनों में गूच के शानदार ११५ रन भी शामिल थे। मनिंदर ने ३ और कपिल ने २ और चेतन शर्मा ने १ विकेट लिया। दोनों स्पिनरों—शास्त्री और मनिंदर ने गेंदों को लैग-स्टम्प पर 'पिच' कराते हुए गूच तथा इंग्लैंड के अन्य बल्लेबाजों को 'स्वीप शॉट' से खूब रन बनाने के अवसर प्रदान किये।

भारत की पारी की शुरुआत बड़ी निराशाजनक रही। गावसकर उतावली में सिर्फ़ ४ रन बनाकर आउट हो गये। श्रीकांत ने ३१, सिद्धू ने २२ और वैंगसरकर के स्थान पर खेलने वाले पंडित ने २४ रन बड़ी धीमी गत से बनाये। अज़हर (६४ रन) और कप्तान कपिल देव ने ३० रन, काफ़ी तेज़ी से बनाकर रन-गति को ५ के आसपास ला दिया। १६ ओवरों में ८७ रन बनाने थे। यदि कपिल अविवेकपूर्ण ढंग से एक गलत शॉट लगाकर आउट न हुए होते, तो भारत आसानी से इस लक्ष्य तक पहुंच सकता था। फिर भी, ४१ वें ओवर में स्कोर २०० से आगे पहुंच चुका था, लेकिन अंतिम ४ विकेट २४

गेंदों में सिर्फ़ १५ रन बनाकर गिरे। भारत ने वह मैच, जो वह आसानी से जीत सकता था, अपने बल्लेबाजों की चौके और छक्के लगाने की अबुद्धिमानीपूर्ण जल्दबाजी में खो दिया।

कुछ जानकार लोगों ने इस मैच में कपिल की कप्तानी की भी आलोचना की। इंग्लैंड की पारी के आरंभ में कपिल और मनोज प्रभाकर ने अपनी कसी हुई गेंदबाजी से इंग्लैंड के प्रारंभिक बल्लेबाजों को बाँधकर रखा था, और १० ओवरों में सिर्फ़ २० रन बने थे। ऐसे मौके पर, कपिल को कम से कम ४ ओवर प्रभाकर के साथ और फेंकने चाहिए थे। तब मैच पर भारत की पकड़ और मजबूत हो जाती, और शेष ओवरों में इंग्लैंड के बल्लेबाज तेज़ी से रन बनाने के चक्कर में धड़ाधड़ आउट हो सकते थे। उन्हें यह भी मालूम था कि इंग्लैंड के गूच व गैटिंग आदि बल्लेबाजों ने स्पिनरों की गेंदों के खिलाफ 'स्वीप शाट' खेलने का अच्छा अभ्यास कर रखा है, इसलिए ११ वें ओवर में मनिंदर को गेंद देकर उन्होंने गंभीर गल्ती की। मनिंदर ने २ विकेट अवश्य लिये, मगर १० ओवरों में ५४ रन भी दिये। शास्त्री ने बिना कोई विकेट लिये १० ओवरों में ४९ रन दिये।

आदि से अंत तक रोमांच

जिस फाइनल के कलकत्ता के १ लाख दर्शकों को बैठाने की क्षमता वाले ईडन गार्डन्स में भारत के पाकिस्तान के खिलाफ़ खेलने की पूरी आशा थी, वह सब आशा और रिचर्ड्स आदि क्रिकेट के विशे की भविष्यवाणियों के विपरीत आस्ट्रेलि अप्रत्याशित रूप से विजयी रहा। वह सात रनों से जीता।

आस्ट्रेलिया ने पहले बल्लेबाजी और ५ ओवरों में २५२ रन बनाये। ने, जो तीसरी बार 'मैन ऑफ द घोषित किये गये, ७५ रन बनाये। इं के राबिंसन यद्यपि पहले ही ओवर शून्य पर आउट हो गये थे, तथापि (३५ रन), ऐंथी (५८ रन), गै (४१ रन), लैंब (४५ रन) ने आक्रा बल्लेबाजी कर, इंग्लैंड की विजय प्रतिशत सुनिश्चित कर दी थी, लें डिफ्रेट्स को छोड़कर शेष बल्लेबाज की रफ्तार को बढ़ाने में असफल और इंग्लैंड को विजय के द्वार पर, परा का मोह देखना पड़ा।

'छिपे रुस्तम'

इस प्रकार आस्ट्रेलिया, जिसके क वोर्डर ने भारत आते ही कहा था यद्यपि हमारी टीम निरानुभवी खि ड़ियों वाली टीम है, तथापि हम रुस्तम' (डार्क हॉर्स) साबित हो स हैं, 'और जिसे प्रायः सभी क्रिकेट-स क्षकों ने सेमी-फाइनल्स की चारों टीम सबसे कमजोर टीम घोषित किया सारी आशाओं और भविष्यवाणियों झूठा साबित कर, ३० लाख की ल वाला रत्नजड़ित रिलायंस कप जीत

सबको चकित-स्तब्ध कर दिया। आस्ट्रेलिया के खिलाड़ी प्रशंसा के पात्र हैं कि उन्होंने कभी हिम्मत नहीं हारी, और हर मैच योजनाबद्ध तरीके से पूरे जोश और साहस के साथ खेला।

इसके विपरीत भारत, जिसके 'रिलांयस कप' जीतने की पूरी आशा थी, के कप्तान कपिल देव ने कभी योजना बनाकर कोई मैच नही खेला। कपिल एक आक्रामक बल्लेबाज और सफल गेंदबाज हैं, लेकिन कप्तान के रूप में वे असफल रहे हैं, क्योंकि वे बुद्धि की अपेक्षा अपनी सहज वृत्ति पर अधिक निर्भर रहते हैं।

कुछ जानकारों के अनुसार, भारत की विफलता का एक कारण यह भी था कि उसके खिलाड़ी टीम को जिताने की भावना से नहीं, शानदार व्यक्तिगत प्रदर्शन कर रेडियो व टी. वी. का निर्माण करने वाली एक कंपनी द्वारा घोषित इनामों को जीतने के चक्कर में भी लगे रहे। इस कंपनी ने हर भारतीय खिलाड़ी को हर चौके पर ५००), हर छक्के पर १०००), हर रन-आउट करने वाले को १०००), हर 'मेडन' (रन-रहित) ओवर फेंकने वाले गेंदबाज को ५००), हर कैच व स्टम्पिग पर ५००), ३० गेंदों में ३५ रन बनाने वाले को ३५००), ५० गेंदों पर ५० रन बनाने वाले को १०,०००) और ११० गेंदों में १०० रन बनाने वाले को २५०००) और एक ओवर में ३ रन बनाने वाले को ५०००) नक़द इनाम देने की घोषणा की थी।

नये कीर्तिमान

इस चौथी विश्व-कप-प्रतियोगिता के बाद, इस प्रतियोगिता के कुछ नये कीर्तिमान भी स्थापित हुए, जिनमें से अधिकांश को स्थापित करने का श्रेय आस्ट्रेलियाई खिलाड़ियों को मिला।

० आस्ट्रेलिया के मैकडरमट ने इस प्रतियोगिता में १८ विकेट लेने का कीर्तिमान स्थापित किया। उनके बाद इमरान (१७ विकेट) का नंबर आता है।

० गूच ने सर्वाधिक–४७१–रन बनाये। उनके बाद नंबर है बून का–४४७ रन।

० बोर्डर पहले कप्तान हैं, जिन्होंने विश्व कप के फाइनल में टॉस जीतकर, विजय प्राप्त की। इससे पूर्व, तीन फाइनल जीतने वाले कप्तानों ने 'टॉस' हारकर बल्लेबाजी की, और जीते।

० इस फाइनल में जीतने वाली टीम सबसे कम रनों से जीती। इससे पूर्व, फाइनल क्रमशः १७, ९२ और ४३ रनों के अंतर से जीते गये थे।

□

कर्म के फल पर विचार नहीं करना चाहिये, ऐसा नहीं है। फल पर विचार करके उत्तम फल देने वाला कर्म ही करना चाहिये। परंतु फल मिले ही, ऐसी आसक्ति नहीं रखनी चाहिये। नहीं तो जब कर्म निष्प्रयोजन होगा, तो तामस हो जायेगा।

□

हिंदी कहानी

उसका बेटा

□ घनेश्वरप्रसा

सारा गांव मरघट-सा लग रहा था । सर्वत्र सन्नाटा और उदासी ।

कुछ दिनों पूर्व इस गांव में हैजे का प्रकोप हो गया था । खैरियत थी कि यह गांव शहर से बहुत दूर नहीं था । सरकारी डाक्टरों की टीम शीघ्र ही पहुंच गयी और बीमारी फैलने से रुक गयी ।

सुबह हो चुकी थी । एक झोंपड़े के पास कुछ लोग एकत्रित थे । डाक्टर को सूचना भेज दी गयी थी ।

'अम्मा . . . अम्मा . . .' झोंपड़े के अंदर से एक बच्चे की आवाज रुक-रुक कर आ रही थी । लेकिन बीमारी लग जाने के भय से कोई उसके अंदर जाने का साहस नहीं जुटा पा रहा था ।

तभी डाक्टर प्रकाश अपने कुछ सहकर्मियों के साथ पहुंचा ।

'लगता है, डाक्टर साब, यह बेचारी भी हैजे की शिकार हो गयी ।' एक युवक ने कहा ।

'इस औरत का कोई है ?'

'हां, एक बच्चा है ।'

'कितना बड़ा है ?'

'यही कोई साढ़े तीन-चार साल का होगा, साहब ।' एक बुजुर्ग ने कहा, 'इसी को गोद में लेकर इस गांव में आयी थी । बड़ शरीफ औरत थी । दिन भर घर-घर घूम-घूमकर कुटायी-पिसायी किया करती थी।

प्रकाश खामोश झोंपड़े के अंदर प्रवे कर गया । एक चटाई पर एक औरत मुं के बल पड़ी थी । बच्चा उसके सिरहा बैठा, आंखें मलता, सिसक रहा था।

प्रकाश ने झुककर उसकी नब्ज देखी तत्पश्चात उसने आहिस्ता से उसे पीठ बल कर दिया । उसके चेहरे पर नज पड़ते ही वह चिहुंककर तन कर खड़ा गया और होंठों में ही बुदबुदाया–'विद्या

वह अपलक सोच की मुद्रा में उसक ओर देखता रहा । तभी उसकी नज बच्चे पर पड़ी । वह उसकी ओर ही दे रहा था । उसने लपककर उसे गोद उठा लिया और झोंपड़ें में से बाहर आक बोला–'वह मर चुकी है ।'

०००

गांव से बाहर एक बगीचे में प्राइम स्कूल का भवन था । उसी भवन में स कारी कैंप लगा था । प्रकाश के साथ सती नाम का एक और डाक्टर था जो संयो से उसका सहपाठी ही था ।

प्रकाश के साथ एक बच्चे को देख

सतीश ने कहा–

'यह बच्चा कहां से उठा लाये ?'

'इसकी मां चल बसी । बस, इसके लिए सिर्फ वही थी ।'

'तो इसे यहां क्यों ले आये ?'

'तो क्या करता !' वह झुंझलाकर बोला, 'मरने के लिए वहीं छोड़ देता ?'

'मेरे कहने का यह मतलब नहीं था ।' उसने शांत स्वर में कहा, 'किसी गांववाले को सौंप देते ।'

'किसे सौंप देता ? कोई तैयार भी तो हो लेने को ।'

'अम्मा के पास जाऊंगा ।' बच्चा रोनी सूरत बनाकर बोला ।

'अभी नहीं ।' उसके सिर पर हाथ फेरते हुए प्रकाश ने कहा,

'तुम्हारी अम्मा कुछ दिनों के बाद आयेगी ।'

'कब आयेगी ?'

'आठ-दस दिनों में ।'

'कहां गयी ?'

'भगवान के पास ।'

बच्चा मौन उसकी ओर देखता रहा ।

'लेकिन जब वह लौटकर आयेगी तो तुम उसे पहचान नहीं पाओगे ।'

'क्यों ?'

'क्योंकि वह अपनी सूरत बदलकर आयेगी ।'

'क्यों ?'

'क्योंकि भगगान उसकी सूरत बदल देंगे ।'

'मैं खाऊंगा ।'

'जरूर खाना, पर पहले नहाना होगा ।'

'ठंड लगेगी ।' वह ठुनकता बोला ।

'बुद्धू कहीं का । यह कोई जाड़े का दिन है जो ठंड लगेगी ।'

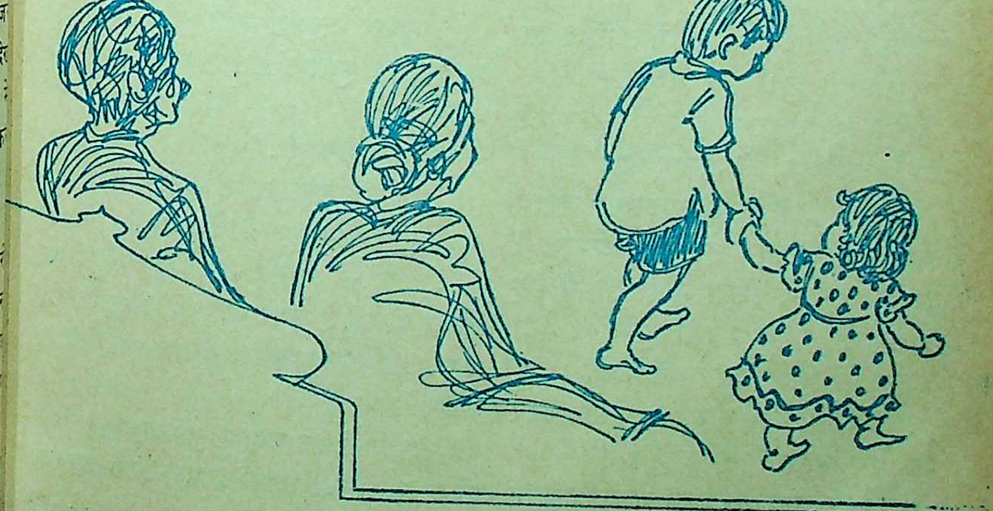

वह हसकर बोला, 'तुम्हारा नाम क्या है, बेटे?'

'मुन्ना।'

'अच्छा, मुन्ना!' कह, वह हंस पड़ा और उसे हैंड पंप के पास ले गया।

०००

'आज प्रकाश, सतीश और उनके अन्य सहकर्मी जाने की तैयारी कर रहे थे। उन्हें विदा करने के लिए गांव के बहुत से निवासी स्कूल के पास एकत्रित थे। प्रकाश ने उनसे मुन्ना को अपने साथ ले जाने की इजाजत ले ली।

अन्य सहकर्मी ट्रक पर सारा सामान लेकर चले गये। जीप पर प्रकाश, सतीश और मुन्ना थे। सतीश ही जीप चला रहा था। उसने कहा—'मुन्ना को ले तो जा रहे हो, प्रकाश, पर उसे रखोगे कहां?'

'क्यों, मेरा घर नहीं है क्या?' वह हंसकर बोला।

'है तो सही, पर उस घर में कांता भाभी भी तो हैं।'

'अगर उसे एतराज होगा तो मुन्ना को किसी अनाथालय में डाल दूंगा।'

'मुन्ना के साथ तुम्हारा इतना लगाव देखकर मुझे आश्चर्य होता है, प्रकाश। यदि यह शहर में मिला होता तो मैं यह शक कर बैठता कि यह तुम्हारा ही बेटा है।' वह परिहास के स्वर में बोला।

प्रकाश ने मुस्कराकर उसकी ओर देखा, पर बोला कुछ नहीं।

'मुन्ना के साथ तुम्हारा इतना लगाव देखकर ऐसा कोई भी सोच सकता है।'

'बच्चा चाहे जानवर का हो या मानव का, प्यारा लगता ही है। और मुन्ना तो बहुत ही प्यारा बच्चा है।'

'हां, सो तो है। बहुत बोलता है। सयाने की तरह प्रश्न पर प्रश्न करता है।'

'हां, इसकी मां ने अब तक सही ढंग से पालन-पोषण किया है।'

'हम कहां जा रहे हैं?' तभी मुन्ना ने पूछा।

'घर।' प्रकाश ने कहा।

'मेरा घर पीछे ही रह गया।' वह पीछे की ओर मुड़कर देखता बोला।

'अब तुम्हारा घर बदल गया।'

'क्यों?'

'क्योंकि तुम्हारी अम्मा अब वहां नहीं आयेगी।'

'तो कहां आयेगी?'

'जहां हम जा रहे हैं।'

'तुम्हारी अम्मा मुन्नी को लेकर आ गयी होगी, मुन्ना।' सतीश ने मुस्करा कर कहा।

'मुन्नी कौन है?'

'मुन्नी तुम्हारी बहन है।'

वह मौन बिस्कुट खाने लगा।

प्रकाश ने अपनी पीठ पीछे की ओर टिका दी और आंखें मूंद लीं। आंख बंद करते ही उसके समक्ष विद्या का चेहरा उभर आया।

उसे याद आ गया वह दिन, जिस दिन विद्या की शादी उसके अभिन्न मित्र अशोक

के साथ एक मंदिर में हुई थी । उस समय वह और अशोक दोनों ने मेडिकल की अंतिम परीक्षा दे दी थी । उस शादी का वही एक चश्मदीद साक्षी था ।

अशोक विद्या को बहुत प्यार करता था । पर अशोक के पिताजी उसकी शादी अपने किसी मित्र की लड़की के साथ करना चाहते थे । अशोक इसके लिए कतई तैयार नहीं था । मंदिर में शादी कर लेने का सुझाव उसकी मां ने ही दिया था । उन्हें यह विश्वास था कि शादी के बाद अशोक के पिताजी भी मान जायेंगे ।

किंतु, किसे पता था कि कल क्या होगा । शादी के छह महीने बाद ही स्कूटर दुर्घटना से अशोक की मृत्यु हो गयी । उसके पिताजी ने विद्या की स्वीकार नहीं किया । विद्या के मायके वाले भी मंदिर में चुपके-चुपके शादी करने के खिलाफ थे । एक दिन उसने सुना कि विद्या कहीं चली गयी ।

'क्या सोच रहे हो, प्रकाश ?' सतीश ने उसे मौन देख कर पूछा ।

'अं ऽ. . ?' वह चौंककर बोला ।

'क्या सोच रहे हो, भई ?'

उसने एक दीर्घ श्वास भरी ।

'क्या परेशानी है ?'

उसने कोई उत्तर नहीं दिया । मौन उसकी ओर देखता रहा ।

'यदि तुम्हें यह आशंका है कि कांता भाभी मुन्ना को नहीं रखेंगी तो चिंता की कोई बात नहीं । जानते ही हो कि मेरी पत्नी कुछ दिनों के लिए मायके गयी हुई है । मुन्ना को मेरे यहां छोड़ देना । फिर इत्मीनान से कुछ तय करेंगे ।'

'फिलहाल मैं उस समस्या से परेशान नहीं हूं, सतीश ।'

'तो ?'

'बात यह है कि मुन्ना कोई गैर नहीं, अशोक का बेटा है ।'

'क्या !' उसने आश्चर्य से प्रकाश की ओर देखा ।

'हां । विद्या शायद इसी कारण अपना घर छोड़कर चली गयी थी । तुम तो जानते ही हो कि अशोक मेरे कितना निकट था । उसकी शादी का एकमात्र साक्षी भी मैं ही हूं । अब उसका बेटा मेरा ही बेटा तो है, सतीश ।'

सतीश ने एक नजर मुन्ना पर डाली । वह पांव फैलाये विंडस्क्रीन से सड़क की ओर देख रहा था ।

'विद्या के साथ भी बड़ा अन्याय हुआ ।' सतीश ने कहा ।

'मैं सोच रहा हूं, सतीश कि मुन्ना का पोलन-पोषण अपनत्व और प्यार भरे वातावरण में किस प्रकार हो ।'

'इसके लिए एक ही रास्ता है, प्रकाश ।'

'क्या ?'

'कांता भाभी से सच बात बता दो ।'

'यही बात मैंने भी सोची थी, सतीश । पर मैं यह सोच कर आशंकित हो उठा कि मामला कहीं और उलझ न जाये ।'

'वह कैसे ?'

'भई, जैसा कि तुमने कुछ देर पहले कहा था कि अगर मुन्ना शहर में मिला होता तो तुम यह शक कर बैठते कि वह मेरा बेटा है । उसी प्रकार कांता भी तो ऐसा शक कर सकती है । अगर उसने मेरी बात को सही अर्थों में ग्रहण नहीं किया तो मेरी गृहस्थी पर ही ग्रहण लग जायेगा ।'

'मैं खाऊंगा ।' तभी मुन्ना अपना शरीर ऐंठता बोला ।

'तुम्हें भूख बहुत लगती है, यार।' सतीश ने हंसकर कहा ।

प्रकाश मुस्कराकर थैले में से चार-पांच बिस्कुट निकालकर उसे देने लगा ।

'यह नहीं खाऊंगा ।' वह बिस्कुट की ओर देखता बोला ।

'तो क्या खाओगे ?'

'रोटी-चीनी ।'

'बाप रे !' प्रकाश ने हंसकर कहा, इस समय रोटी-चीनी कहां से लाऊं ? चलो, घर पर खाना ।'

उसने बिस्कुट ले लिये । वह प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरने लगा ।

'तो तुमने क्या निश्चय किया है, प्रकाश ?' सतीश ने पुनः बात छेड़ दी ।

'फिलहाल तो मुन्ना को घर ही ले जा रहा हूं । देखें, कांता की क्या प्रतिक्रिया होती है ।'

०००

सतीश के उतर जाने के बाद प्रकाश जीप को लेकर लगभग ग्यारह बजे घर पहुंचा । उसने हार्न दिया तो कांता बाहर आ गयी । जीप से मुन्ना को उतरते देखकर वह आश्चर्य से भर उठी ।

वह मुस्कराती आहिस्ता-आहिस्ता चहलकदमी करते हुए प्रकाश के पास पहुंची और मुन्ना का सिर सहलाती बोली– 'बड़ा प्यारा बच्चा है । किसका है ?'

'उसी गांव से लाया हूं । उस बीमारी में इसकी मां की भी मृत्यु हो गयी ।'

'तो इसे यहां क्यों ले आये ?'

'मां के अलावा इसका कोई नहीं था । किसी गांववाले ने भी इसे नहीं रखा ।'

'क्या नाम है, भई ?'

मुन्ना खामोश कांता की ओर देखता रहा ।

'बोलो, बेटे ।'

'मुन्ना ।'

'मुन्ना !' कह वह हंस पड़ी ।

'यह कौन है ?' वह प्रकाश की कमीज खींचता बोला ।

'लो, तुमने अपनी अम्मा को भी नहीं पहचाना ।' वह हंसकर बोला ।

'दुत् !' कांता मुस्कराकर बोली ।

मुन्ना कुछ क्षण कांता की ओर देखता रहा, फिर बोला–'यह मेरी अम्मा नहीं है ।'

'अरे बेटे, ठीक से देखो । यही है तुम्हारी अम्मा । मैंने कहा था न कि वह सूरत बदलकर आयेगी ।'

उसने पुनः कांता की ओर देखा । कुछ देर देखने के बाद वह भोलेपन में बोला–'तुम बदल कैसे गयीं, अम्मा ?'

कांता का दिल भर आया । उसने किंचित् मुस्कराकर कहा–'भगवान ने बदल दिया, मुन्ना ।'

प्रकाश ने कांता की ओर देखा । उसकी आंखें डबडबा आयी थीं । वह बोली–'इसे यहीं रखेंगे क्या ?'

'कुछ दिन तो रखना ही पड़ेगा ।' उसने गंभीर मुद्रा में कहा, 'फिर कुछ सोचेंगे ।'

'मुन्नी भी आयी है, अम्मा ?' तभी मुन्ना ने पूछा ।

कांता ने प्रकाश की ओर देखा । उसने सतीश द्वारा कही हुई बात बता दी ।

'हां, मुन्नी भी आयी है ।'

'कहां है ?'

'चलो ।'

'अम्मा, भूख लगी है । रोटी-चीनी दोगी न !'

'हां, दूंगी ।' उसने साड़ी के छोर से अपनी आंखें पोंछते हुए कहा ।

उनकी डेढ़ साल की मुन्नी बैठक में ही खेल रही थी । उसके समक्ष बहुत से खिलौने पड़े थे । ढेर सारे खिलौने देखकर मुन्ना कांता की उंगली छोड़कर मुन्नी के पास जा बैठा ।

कांता एक प्लेट में ब्रेड के दो टुकड़ों पर जाम लगाकर ले आयी, 'लो, मुन्ना ।'

उसने प्लेट थाम लिया और एक ब्रेड उठाकर खाने लगा । मुन्नी खिलौने छोड़कर उसके पास चली आयी । उसने जरा-सा ब्रेड नोचकर उसके मुंह में डाल दिया ।

कांता कुछ क्षण दोनों की ओर देखती रही, फिर एक निःश्वास छोड़कर प्रकाश के लिए चाय बनाने चली गयी ।

०००

मुन्ना को आये लगभग एक माह गुजर गया । इस दौरान मुन्ना के बारे में न प्रकाश ने कोई बात की न कांता ने । किंतु, एक दिन कांता ने ही मुन्ना की बात छेड़ दी ।

सुबह का समय था । प्रकाश ड्यूटी पर जाने की तैयारी कर रहा था । कांता ने मेज पर नाश्ता लगाते हुए कहा–'आपने मुन्ना की बाबत क्या फैसला किया ?'

यह प्रश्न सुनते ही वह अशांत हो उठा । मेज के पास बैठता हुआ वह बोला– 'मुन्ना के यहां रहने से तुम्हें कोई कष्ट है, कांता ?'

'नहीं, बल्कि आराम है ?' वह मधुर स्वर में बोली, 'मुन्नी उसके साथ ही सदा खेलती रहती है और इस कारण मुझे अब कुछ खाली समय मिल जाता है । पर प्रश्न यह है कि मुन्ना का भविष्य क्या है ?'

'क्या मतलब ?'

'मतलब यह कि वह गोद का बच्चा अब नहीं है । कुछ दिनों में ही उसकी पढ़ायी-लिखायी की व्यवस्था भी होनी चाहिये । उसके भविष्य के संबंध में कोई निश्चित रास्ता तय करना पड़ेगा न कि वह यूं ही किसी के घर में आजीवन गुजारा ही करता रहेगा ।'

'मेरी समझ में तो कुछ नहीं आ रहा है, कांता, कि मैं क्या करूं ?'

'सतीश भाई से भी आप राय ले लीजिए न।'

'ठीक है, आज सतीश से बात करूंगा।'

'चाय लाती हूं।' कह, वह चली गयी।

तभी मुन्ना प्रकाश के पास आया। वह अभी सोकर उठा था।

'आओ, बेटे।' उसे अपने पास खींचता वह बोला।

'अम्मा कहां गयी?'

'चाय लाने गयी है।' फिर उसने मुस्कराकर पूछा–'तुम्हें अम्मा अच्छी लगती है, मुन्ना?'

'हां, बहुत अच्छी लगती है।'

'प्यार करती है तुम्हें?'

'हां, बहुत प्यार करती है। पर अपने पास मुझे सुलाती नहीं है।' वह मुंह बनाकर बोला, 'मुन्नी को सुलाती है।' फिर प्रकाश की ओर देखता बोला–'अब क्यों नहीं सुलाती है, पिताजी? पहले तो रोज सुलाती थी।'

उसने उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा–'पहले मुन्नी नहीं थी न?'

उसने 'ना' में सर हिला दिया।

'मुन्नी तुमसे बहुत छोटी है न, इसलिए वह अम्मा के पास सोती है। तुम्हें मुन्नी अच्छी लगती है न?'

'हां, बहुत अच्छी लगती है।'

तभी कांता चाय लेकर आ गयी।

'देखो कांता, मुन्ना तुम्हारी शिकायत कर रहा है।' प्रकाश ने चाय का प्याला थामते हुए कहा।

'क्या कह रहा है?' वह मुस्करायी।

'कह रहा है कि अम्मा मुन्नी को अप पास सुलाती है उसे नहीं।'

'जाओ मुन्ना, देखो तो मुन्नी सो उठी या नहीं।' कांता ने कहा।

वह दौड़ता हुआ चला गया। उस जाने के पश्चात् वह बोली–'इसी कार तो कह रही हूं कि जो निर्णय करना शीघ्र कर लीजिए। आखिर बच्चा ही है। वह समझता है कि सचमुच मैं उस मां हूं और रूप बदलकर आयी हूं। मुझसे उसी प्यार की अपेक्षा करता है उसकी मां किया करती थी।'

उसी समय मुन्ना आ गया, 'अभी रही है, अम्मा।'

'अच्छा।'

तभी मुन्नी के रोने की आवाज आ 'लो, उठ गयी।' मुन्ना ने धीरे से क फिर चिल्लाकर बोला–'आया मु आया।' और वह दौड़ता हुआ उसके प चला गया।

ooo

प्रकाश के दिमाग में मुन्ना की चिंता समायी हुई थी। वह दो-तीन अनाथाल में भी घूम आया था, पर वह मुन्ना अनाथालय में देने की बात सोच ही पाता था। एक अपराध भावना से ग्रस्त होता जा रहा था।

वह कांता से सच बात कहने का सा भी नहीं जुटा पा रहा था। वह जब उससे कहने का दृढ़ संकल्प करता, उ

दिमाग में यही बात आ जाती थी कि कहीं इस परिवार में बिखराव न आ जाये ।

इसी उधेड़बुन में कुछ दिन और निकल गये । वह एक दिन यह निश्चय करके ड्यूटी से लौटा कि वह कांता के साथ ही कुछ अनाथालयों का चक्कर लगायेगा । यदि कांता के अंतर में मुन्ना के प्रति जरा-सी भी मृदु भावना होगी तो वह अवश्य ही अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करेगी ।

संध्या के छह बज रहे थे । कांता चाय ले आयी । उसने चाय का सिप करते हुए कहा–'मेरे साथ चलोगी ?'

'कहां ?'

'कोई अच्छा-सा अनाथालय देखकर मुन्ना को उसमें डाल ही दें ।'

ऐसा सुनकर उसके मुखमंडल पर कई भाव उभरे और मिटे । वह चाय का एक घूंट भरकर बेमन से बोली–'चलिए ।'

तभी उसकी नजर मुन्ना और मुन्नी पर पड़ी । मुन्नी हंसती हुई दोनों हाथ फैलाए चली आ रही थी और मुन्ना उसके आगे-आगे उलटे पांव चलते हुए, तालियां बजा-बजाकर एक फिल्मी गीत का मुखड़ा गा रहा था–'मेरी प्याली बहनिया बनेगी दुलहनिया . . .'

चाय पीना छोड़कर कांता सोफे पर पीठ के बल पसर-सी गयी । प्रकाश ने घबराकर कहा–'क्या हुआ ?'

'अगर मुन्ना को अनाथालय में ही डालना था तो उसे यहां लाने की जरूरत क्या थी ?' वह चीख-सी पड़ी ।

'उसे कहां छोड़ देता ?'

'उधर ही किसी अनाथालय में इसे आप डाल देते ।'

वह चुप हो गया ।

'आपने कोई अनाथालय देखा है क्या ?'

'नहीं ।' वह झूठ बोल गया ।

'अनाथालय शब्द से ही मुझे एलर्जी है ।' वह मुंह बनाकर बोली, 'मैं नहीं जाऊंगी । जाना हो तो सतीश भाई के साथ चले जाइये । मेरा मन ठीक नहीं है ।'

'अम्मा ।' तभी मुन्ना ने पुकारा ।

'हूं ।' वह खोयी हुई मुद्रा में बोली ।

'मुन्नी का कपड़ा बदल दो ।'

'क्यों, इस कपड़े में क्या खराबी है ?'

'देखती नहीं, कितना गंदा हो गया है !' वह एक बुजुर्ग की भांति तेज आवाज में बोला ।

'अच्छा बाबा, बदल देती हूं ।' वह सोफे से उठती हुई झुंझलाहट भरे स्वर में बोली, 'ले चलो उसे कमरे में ।'

कांता के जाने के बाद प्रकाश सोच की मुद्रा में बैठा रहा ।

०००

कांता पलंग पर जा बैठी । मुन्नी की उंगली पकड़े मुन्ना धीरे-धीरे कमरे में पहुंचा, 'लो, आ गयी ।'

उसने मुन्नी को पलंग पर खींचकर कहा–'तुम भी आ जाओ ।'

मुन्ना चप्पल खोलकर पलंग पर चढ़ गया । वह मुन्नी के कपड़े बदलने लगी और मुन्ना उसकी जांघ पर सिर रखकर लेट

गया । मुन्नी के कपड़े बदलने के बाद वह भी पलंग पर लेट गयी । उसने एक तरफ मुन्ना को और दूसरी तरफ मुन्नी को सुला लिया । तत्पश्चात् वह मुन्ना का सिर सहलाती बोली–'दूसरी जगह जाओगे मुन्ना ?'

'तुम भी चलोगी, अम्मा ?'

'नहीं ।'

'तो मैं नहीं जाऊंगा ।' कह, वह कांता से लिपट गया ।

कांता ने उसका माथा चूम लिया । उसकी आंखों से आंसू की धाराएं बह निकलीं ।

मुन्ना ने अपनी हथेली से उसके आंसू पोंछते हुए कहा–'मत रो, अम्मा । मैं कहीं नहीं जाऊंगा ।'

'मेरी बात मानोगे न ?'

'क्या मानता नहीं हूं, अम्मा ?'

'हां बेटा, मानते हो ।' वह आंचल से अपनी आंखों को पोंछकर बोली, 'खूब पढ़ोगे न ?'

'हां, खूब पढूंगा । तुम्हें हवाई जहाज में घुमाऊंगा ।'

'ओह, मेरे बेटे !' वह उसे अपनी छाती से लिपटाती बोली, 'जाओ, पिताजी को बुला लाओ ।'

'अच्छा ।' कह, वह झट पलंग से उतर कर चला गया ।

थोड़ी ही देर में प्रकाश उसके साथ अ गया । कांता को सोया हुआ देखकर बोला–'तबीयत ठीक नहीं है क्या ?'

'ठीक है ।' कहती वह उठ बैठी ।

प्रकाश पलंग पर बैठता बोला–'क्य बात है ?'

'मुन्ना बेटे, मुन्नी को बैठक में ले जा ।' कह, उसने मुन्नी को पलंग से उतार दिया । वह उसकी उंगली पकड़कर उसे ले गया ।

उनके जाने के पश्चात् कांता ने कहा–'आपने तो कोई निर्णय नहीं लिया, प मैंने यह निर्णय किया है कि मुन्ना अनाथा लय में नहीं जायेगा ।'

'तो फिर ?'

'यहीं रहेगा हमारा बेटा बनकर' वह बोली, 'हमारे कोई दो-चार बच्चे त हैं नहीं कि मुन्ना हमारे ऊपर भार बनेगा सबसे अहम बात तो यह है कि वह मु अपनी मां समझता है । बस, हम हमारे दो !'

'कांता !' उसने भावावेश में उस हाथ थाम लिया, 'तुमने तो मेरे दिल क बात कह दी ।' **–ई-1-२००, लाजपतनग**

नयी दिल्ली-११००

□

परिचय की संभावना

आप अपने अंतर को ज्यों-ज्यों पहचानेंगे, त्यों-त्यों बाहर का परिवेश युक्त अपने वास्तविक-अवास्तविक भेद बतलाने लगेगा । बाहर-भीतर को एक हुए बि शिव और शक्ति का परिचय संभव नहीं ।

—अमृतलाल ना

□

व्यंग्य लेख

अगर इनाम मिल जाये तो...

☐ विश्वनाथ मिश्र

प्राइज़, पुरस्कार, इनाम, ईसा, ईश्वर, अल्लाह, सब एक ही हैं। इनाम मिलना कुछ लोगों को भगवान मिलना होता है। होना भी चाहिये। भगवान अगर भगवान है, तो इनाम कहां कम है। एक के लिए नवधा भक्ति का सहारा लेना पड़ता है, तो दूसरे के लिए, कम पापड़ नहीं बेलने पड़ते। अगर विश्वास न हो तो जरा कोई इनाम जीतकर दिखलाइये। छक्के-पंजे छूट जायेंगे। छक्के-पंजों का पूरा संजोग फिट करना पड़ता है। पक्की जुगलबंदी, तब कहीं इनाम मिल सकता है। अगर गलत कहता हूं तो पीठ पीछे आप गालियां दे लीजिये।

आप समझदार आला अफसर हो सकते हैं, लेकिन आमने-सामने गालियां देना आपके वश की बात नहीं। इतना साहस कहां से बटोर पायेंगे? कितनी गालियां याद रख पायेंगे? गालियां तो किसी किताब में पढ़ायी नहीं जातीं। किसी यूनिवर्सिटी के पाठ्यक्रम में नहीं हैं। इसलिए आपका काम पीठ पीछे ही गालियां देना है। और आप कुछ नहीं कर सकते। आप आधा गांव हैं, पूरा नहीं। आमने-सामने गालियां देना तो आधा गांव जानता है। गालियों पर उसका जन्म सिद्ध अधिकार है। वो ज़िंदगी की किताब पढ़ता है। सब कुछ आमने-सामने। पीठ दिखाना, पीठ पीछे गालियां देना उसका काम नहीं। बस आमने-सामने, गाली, गलौज, जूतम-पैंजार, मार-पीट, सब ज़िंदगी की किताब का विषय है। पीठ पीछे गाली देने की कला, भला उसके पास कहां? गाली देने वाला आधा गांव नहीं जानता, शरा-

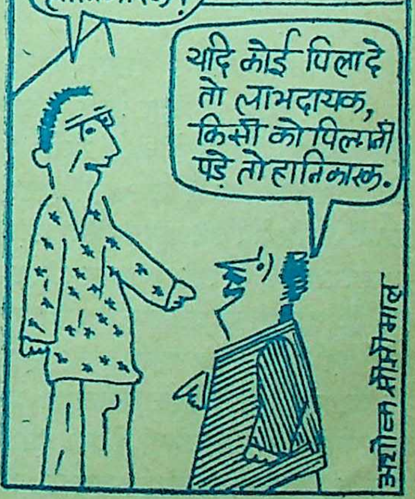
चाय लाभदायक है, अथवा हानिकारक?
यदि कोई पिला दे तो लाभदायक, किसी को पिलानी पड़े तो हानिकारक.

फत् पर बट्टा लगता है ।

पता नहीं सारा हिंदुस्तान, पढ़ क्यों नहीं जाता ? शायद भ्रष्टाचार को भी नया नाम मिल जाता । उसके आदर्श और ऊंचे होते, उसका अस्तित्व और बढ़ जाता । आदमी की शराफत में चार चांद लग जाते । शराफत किसी की बपौती तो होती नहीं । चार अक्षर किताब के पढ़कर हर आदमी अपने को शरीफ कहलाने का हक रखता है । ये पढ़ायी-लिखायी का मौरूसी हक हो । अपने आप में डिप्लोमा या डिगरी । संत कबीर तो ढाई आखर प्रेम का पढ़के अपनी औकात भूल गये थे । जुलाहे से धर्मात्मा बन गये थे । क्या सब के बश की बात है, इस तरह धर्मात्मा बन जाये ? ज्ञानी कहलाये ? इनाम का बहिष्कार कर जाये ? लेकिन कबीर कहां कर पाये इनाम का बहिष्कार, भगवान का बहिष्कार । तो फिर हम काहे करें इनाम का बहिष्कार ?

इनाम पाना अगर इतना आसान होता तो हर कोई पा लेता । इनाम पाने के लिए लोग मुंह बाये खड़े रहते हैं । इनामदाता अन्नदाता से कम नहीं होता । विधाता समझिये । उसे खुश करना पड़ता है । अगर आप नारदीय आचरण अपना सकते हैं, तो इनाम दाता को प्रसन्न कर सकते हैं । इनामी विधाता प्रसन्न होगा तभी आपको इनाम मिल सकेगा । शर्त है इनामदाता खुद इनाम पाने का हक़ न रखता हो । आप उसका फायदा नहीं उठा सकते, उसके अधिकार का फायदा उठा सकते हैं । किसी के अधिकारों का फायदा उठाने की कला सबको नहीं आती । गोस्वामी तुलसीदास से भी कुछ सीखना पड़ेगा । कल्याणदाता राम तक पहुंचने के लिए उनके परम प्रिय भक्त श्री हनुमान की शरण में पहुंचना पड़ा । हनुमानजी भी कुछ कम नहीं थे । उन्होंने राम के पास पहुंचाने के लिए, एक के बाद एक के पैर छुआ लिये, तब कहीं राम के पास पहुंचाया । क्या तुलसीदासजी गलत थे ? राम दरबार में सीधे पहुंचने पर, राम उनकी अशिष्टता को स्वीकार कर लेते ? कभी नहीं, कदापि नहीं । यह समझने की भूल मत कीजियेगा कि राम को प्रशासन नहीं आता था । हनुमान जैसे और भी थे उनके प्रशासन में । तुलसीदास रामायण लिखते या महाभारत । जन मानस उन्हें सर पर बैठाता या हृदय में, लेकिन प्रशासन इतनी छूट नहीं देता । आप भी वही रास्ता अपनायेंगे तो इनाम पा जायेंगे । इनाम तो इनाम; भगवान पा जायेंगे ।

यह कभी मत भूलिये, राम, राम थे तो इनामदाता भी इनामदाता है । वो भी लोकतंत्र का इनामदाता, जिसके पास चमचों की अपनी फौज होती है, इनाम पाने के लिए, और आपको उसी फौज से जूझना पड़ेगा । जूझने से पहले जूझने की कला सीखनी होगी । उसका प्रयोग करना पड़ेगा । उसका अभ्यास करना पड़ेगा प्रैक्टिस । प्रक्टिस मेक्स ए मैन परफेक्ट

अभ्यास के लिए कहीं दूर जाने की आवश्यकता नहीं। घर से, घरवाली से शुरू कीजिये। एकाध उसकी मनपसंद साड़ी ला दीजिये। कोई मनपसंद आभूषण दीजिये। देखिये वो खुश होती है कि नहीं। अगर पत्नी को खुश कर लेंगे, तो परमेश्वर को खुश करना आसान हो जायेगा। पत्नी को खुश करना परमेश्वर को खुश करने से ज्यादा कठिन है।

इनामदाता तो आखिर आदमी है। वो भी हमारे देश का आदमी। भारत का आदमी। लोकतंत्र का आदमी। अगर उसे मनौतियां चढ़ानी पड़ें तो हर्ज़ क्या है? अब तो ये लोकतांत्रिक भारत का दस्तूर बन गया है। अगर आप इनामदाता के बच्चों को पढ़ा देते हैं तो बुरा क्या है? उसकी बीवी को मार्केटिंग कराने चले जाते हैं तो आपको अपनी बीवी का मिजाज समझने में सहायता मिलेगी। एक पंथ दो काज! एक तीर दो शिकार! अगर इनामदाता शौकीन मिजाज़ है, तो मिजाज़पोशी कीजिये, पिलाइये शराब। लोग बकते रहें, शराब ज़हर है। शबाब ज़हर है। जब तक दोनों का सेवन नहीं करेगा, कैसे मरेगा? मरा नहीं तो इनाम कैसे मिलेगा? कुछ पाने के लिए कुछ देना पड़ता है। कागज उड़ने से बचाने के लिए वज़न रखना पड़ता है। मेरी न मानिये तो किसी क्लर्क से पूछ लीजिये। किसी नेता से पूछ लीजिये। किसी व्यापारी से पूछ लीजिये। अगर इनमें से कोई न मिले तो आज के आम आदमी से पूछ लीजिये।

आप जहां हैं, वहीं पूछ लीजिये। देश के किसी कोने में, किसी कोने से। सत्य इतना ही व्यापक होता है। अगर आप इस सत्य की शरण नहीं जायेंगे, तो इनाम से हाथ धोना पड़ेगा। फिर भी अगर इनाम मिल जाये, तो समझिये अंधे के हाथ बटेर लग गयी। मज़े से पकाइये और खाइये। **—आर. बी. १/४७/७-८, मध्य रेलवे आवास, शीव, बंबई-२२**

विवशता !

जानती हूं,
तुम्हें–
तेज चलने की आदत है!
अतः तुम्हारे
बढ़ते हुए कदमों को
रोक नहीं सकती।
और
कदम से कदम
मिलाकर चल भी नहीं सकती!
क्योंकि तेज चलना तुम्हारी मजबूरी है
और तुम्हारे कदमों का
साथ न दे पाना
मेरी कमजोरी!

—कु. लता अवस्थी 'अमिता'

—८, मुन्नूगंज, गोला गोकरननाथ,
खीरी, उ. प्र.

कहानी

दूसरा मन

□ कु. शैलजा मीतू

कुछ परिस्थितियां जैसे कुंडली मारकर अनंत समय के लिए बैठ जाती हैं । समय का चक्र भी उनसे बचता हुआ घूमता है । और ऐसे ही होते हैं कुछ मन ! हां मन जो कभी नहीं बदलते, जिनके विचार अचेतन में न जाने कितने तर्कों के बाद भी चेतन की प्रक्रिया नहीं बदल पाते । क्यों होता है ऐसा ? सारा सुख-ऐश्वर्य और—और सारे हर्षित वातावरण में आग लगा देने वाले ऐसे मन की मल्लिका मैं ही तो हूं । एक दीर्घ नि:श्वास खींचकर आशा अपना आंचल गीली आंखों से भिगोने लगी । नहीं आज वह इस मन की हत्या कर देगी । कम से कम धधकते हुए मस्तिष्क को शांति तो मिलेगी । मगर—मगर आशा के नाम के साथ-साथ संध्या को आने वाले रवि के पत्र क्या उस जबरदस्ती की शांति में ईर्ष्या की चिंगारी नहीं फेंकेंगे । और फिर जी उठेगा उसका पुराना मन । नहीं . . . नहीं मरकर भी कोई जीता है ! जी नहीं उठेगा, बल्कि प्रेत बनकर उठ खड़ा होगा, हां, प्रेत बन आशा को सताने के लिए । आशा हत्यारिन को ! नहीं . . . दोनों हाथों से कानों को दबाकर आशा चीख पड़ी । बड़ी भयानक चीख । किंतु, वहां था कौन ? कमरे की दीवारों से टकराती चीख, बेबसी से दम तोड़ गयी। हांफती हुई आशा ने धड़कते हुए दिल को दोनों हाथों से थाम लिया । घबराकर आसपास देखा और हंस पड़ी । आशा तेरी चीख सुनने वाला यहां कौन है ? इस समय तो सब हवाई अड्डे पर हंसते, खिलखिलाते हवाई जहाज का इंतजार कर रहे होंगे। रवि, संध्या, आभा, ज्योति और . . . और रवि के पापा राय साहब सब, हां सब ।

'भइया, रवि भइया, मेरे लिए क्या लाओगे ?'—आभा रवि के गले में बांहें डालकर लड़ियाती हुई पूछती होगी।

'ओह, रवि भइया, अभी तो बहुत देर है, चलो तब तक एक-एक काफी हो जाये।' ज्योति अकुलाकर कहता होगा ।

और इन सबको मीठी झिड़की देती हुई संध्या राय साहब से कहती होगी—'देख रहे हैं आप, आपके ये बेटे-बेटी मिलकर किस कदर मेरे बच्चे को परेशान कर रहे हैं । डांटते क्यों नहीं ?' 'मेरा बच्चा हुंह' व्यंग्य से आशा के होंठ तिरछे हो गये और रवि वातावरण में उनमुक्त कहकहे बिखेरता क्या एक बार भी उसके ख्याल से विचलित होगा ? कभी नहीं । फिर आशा

ही क्यों मरे किसी के गम में। क्यों अपनी स्पर्धी भावनाओं की हत्या करके कलंकिनी हो।

कुछ भी हो रवि है तो अपना बेटा। तीन दिन से हो रही रवि की तैयारियों में संध्या की व्यस्तता वह मौन होकर देख रही थी। 'ज्योति, फलां चीज बाजार से ले आ।' 'जरा रवि के लिए ये बनाना है।' 'आभा, चने की दाल भिगो दे, रवि को चने के लड्डू बहुत अच्छे लगते हैं, थोड़े बांध दूं।' 'अरे ज्योति, कुछ उपन्यास तो पैक कर दे जिससे रवि विदेश जाकर कहीं हिंदी न भूल जाये।'

कैसे पूछने आयी थी भोली बनकर, 'दीदी, रवि की तैयारी कर दो कुछ।' लगा था जैसे जलती हुई लौ उसके कोमल हृदय से छुआ दी गयी हो।

'मैं क्या जानूं। जो कुछ करना है, पूछकर तुम खुद न कर दो।' विष बुझे शब्दों में आशा ने जवाब का झापड़ मारा था। किंतु, उसकी तो जैसे उसे परवाह ही नहीं थी, शायद, उसे ऐसे ही उत्तर की आशा थी। कैसे फिरकी जैसी नाचने लगी थी तैयारी में। और क्या जवाब दे भी सकती थी आशा? वह जानती थी रवि की शर्ट में बटन भी लगायेगी तो कैसे चिल्लायेगा–'अरे-अरे बड़ी मां, रहने दो आप, छोटी मां टांक देंगी। छोड़ दो न! नहीं क्रीज खराब हो जायेगी।'

और आज–'क्यों बड़ी मां, चलती क्यों नहीं।'

'अरे घर में भी तो कोई रहेगा। सूना घर नहीं छोड़ा जाता विदाई के तुरंत बाद...' आशा ने खोखली हंसी के साथ कहा था और छूटते ही कहकहा लगाकर रवि बोला–'अरे वाह! बड़ी मां, तुम कभी

नहीं बदलोगी। तभी तो कहता हूं छोटी मां बहुत अच्छी हैं इन मामलों में।' और पैरों पर झुकता बोला था–'अच्छा चलता हूं बड़ी मां, पत्र डालूंगा पहुंचते ही, हां जवाब दे देना, उसमें साइत न निकलवाना।' दूसरी हंसी के साथ वह कार में बैठ गया था। आशीर्वाद तक नहीं सुना। उसने दिया भी तो नहीं था, आशीष। कम से कम कुछ तो कह देती 'खुश रहो सुखी रहो, दीर्घायु हो' आखिर उसका बेटा विदेश जा रहा था। किंतु वह तो प्रस्तर प्रतिमा की भांति खड़ी जाती हुई कार को देखती रह गयी थी। अपनी कठोरता का स्मरण कर आंखें फिर गीली हो गयीं किंतु दूसरे ही पल आंसू पोंछ वह फिर बड़बड़ा उठी–'क्यों दूं आशीर्वाद? दे उसकी छोटी मां।'

मन हलका करने के लिए आशा बाहर निकल आयी। बाहर दिसंबर की उजली धूप देखने में बड़ी भली लग रही थी। अचानक उसे लगा धूप के श्वेतांचल पर कुछ धुंधली काली लकीरें उभर रही हैं। नहीं, लकीरें नहीं, चित्र उसके अपने अंतर्द्वंद्व में बीते अतीत के दृश्य।

० ० ०

संध्या थी राय साहब की दूसरी बीवी-सांवली, बड़ी-बड़ी काली आंखों वाली। समझदार, सुशील और पढ़ी-लिखी संध्या ने न केवल पति के प्रेम क्षेत्र में गोरी गुलाबी अल्प प्रशिक्षित पहली पत्नी आशा को पछाड़ा था बल्कि, ममता के क्षेत्र में कर्तव्य और स्नेह के अस्त्र-शस्त्रों का कुशलता से प्रहार कर अपनी समझदारी की विजय पताका फहरा उसके बेटे रवि पर भी अधिकार जमा लिया था। और आठ वर्ष का रवि छोटी मां के पीछे पागल बना फिरता। तीन-चार वर्षों में ही आशा को श्रद्धा की पात्री बनाकर रवि के मन के एक कोने में स्थापित कर दिया था।

कितनी चालाक थी संध्या। कभी आशा को किसी काम में हाथ न लगाने देती और आशा भी कितनी भोली थी, रवि को नहलाना, धुलाना, स्कूल भेजना सब संध्या के जिम्मे जिस भावना ने किया था, यही समझ के न, कि छोटी सौत नौकरानी होती है। काश! आशा समझती कि सौतें जादूगरनी होती हैं। दिन और रात बनकर समय चलता रहा, और रवि छोटी मां के जादुई पहरे में बंधता उससे दूर होता गया। कितनी बेबस, और अकेली रह गयी थी आशा–हर ओर से आदर और श्रद्धा की पात्री! उसे लगता वह घर की कोई बड़ी बुजुर्ग है। रवि के आदर मिश्रित स्नेह से ऐसे लगता वह रवि की मां नहीं दादी है।

संध्या के अपने दो बच्चे भी थे–आभा और ज्योति। किंतु रवि का लगाव आपस में ऐसा था मानों ज्योति उसका छोटा भाई और आभा उसकी लाड़ली बहन हो।

हाईस्कूल में रवि संध्या से अंग्रेजी पढ़ा करता था। कितनी जिद की थी उसने कि टीचर लगा लो पर, साफ जवाब दे दिया

था रवि ने–'तुम्हें क्या परेशानी है, बड़ी मां ? जब मां का पढ़ाया इतनी जल्दी मेरे समझ में आता है तो।'

सन्न रह गयी थी आशा । मुझे बड़ी मां और उसे 'मां'। हाईस्कूल का नतीजा निकला तो संध्या बरामदे में बैठी कुछ काढ़ रही थी और ऊपर छज्जे पे खड़ी आशा नीचे ही झांक रही थी तभी रवि हाथ में अखबार लेकर–'मां, मां' करता आया और संध्या से लिपट गया। 'मां देखो-देखो मेरा नाम मेरिट लिस्ट में।'

'मेरे बेटे, मेरे बच्चे रवि' कहती संध्या उसके चौड़े माथे को चूमती जा रही थी। 'बड़ी मां के पैर तो छू आ, पागल।' संध्या ने उसे अपने से अलग करते हुए कहा था।

जैसे कहा हो (बेटा, अपनी दादी के पैर छू आओ)। ईर्ष्या और क्षोभ की भीषण तड़प से कांपती आशा छज्जे से हट गयी थी। दूसरे ही पल धम्-धम् सीढ़ियां चढ़ता रवि संध्या के साथ उसके सामने जा खड़ा हुआ।

'बड़ी मां,' पैर छूते हुए बोला–'मैं पास हो गया,' वह बोला, 'हां दीदी, मिठाई बांटो जल्दी,' संध्या से उल्लास से भरकर बोली थी। 'जाओ, तुम बांटो जाकर।' व्यंग्य और ईर्ष्या शब्दों से साक्षात व्यक्त हो रही थी। आंसू भरी आंखों से तुरंत रवि नीचे चला गया था और उसके पीछे ही उदास संध्या। 'पागल, बड़ों की बातों का कहीं बुरा मानते हैं,' रवि को दिलासा देता संध्या का स्वर उस पर बर्छियां चला गया था।

हार्न की आवाज पर आशा चौंककर उठ खड़ी हुई। झांककर देखा, रवि को छोड़कर सब लौट आये थे।

ooo

'बड़ी मां . . . बड़ी मां . ., रवि भइया का खत . . . आभा ने लिफाफा पकड़ाया, 'और वह ?' आशा ने पूछा

'यह छोटी मां के नाम है,' कहकर आभा संध्या को खत देने चली गयी।

अनमने भाव से खत खोलकर आशा पढ़ने लगी। हर बात सोच समझकर लिखी थी, जिसमें 'बड़ी मां' को सम्मान के दायरे में बांधकर। सीधा-सादा जवाब भी दे दिया था आशा ने। इधर आशा काफी बदल गयी थी। उसे महसूस होने लगा था अपनी घोर मानसिक अशांति की उत्तरदायी वही है। संध्या और रवि के इस गहरे स्थायी संबंध को बनाने में उसका ही गहरा हाथ है। परिस्थितियां उसी ने तो उत्पन्न की थीं। रवि और संध्या ने तो महज उन्हें जिया था स्वाभाविक रूप से, उसी की बनायी परिस्थितियों को। इसीलिए आशा रवि के जाने के बाद अपने अंदर एक दूसरे मन का सृजन कर रही थी।

'बहनजी, चिट्ठी।' आशा ने डाकिये की आवाज पर लपककर चिट्ठी ले ली। तीन चिट्ठियां थीं–राय साहब के नाम, संध्या और आशा के नाम। तीन की तीनों रवि की।

आज घर में कोई नहीं था, राय साहब पहले ही आभा के ब्याह के चक्कर में कहीं गये थे और संध्या बच्चों को लेकर सिनेमा

गयी थी। दो चिट्ठियां मेज पर ऐसे ही डालकर आशा ने धीरे-धीरे सावधानी से संध्या का पत्र खोला। पत्र खोलते ही एक तस्वीर गिरी। झुककर उठाया आशा ने, तस्वीर लड़की की थी, खूबसूरत और लजाई-सी। यह कौन हो सकती है? कहीं रवि ने ब्याह तो नहीं कर लिया? लगती तो भारत की ही है? वह जल्दी-जल्दी पत्र पढ़ने लगी।

मेरी प्रिय मां,

तस्वीर देखकर चौंकी होंगी। मां यह रंजना की है। मेरे साथ ही पढ़ती है यह। यह भी भारत से आयी है, बड़ी प्यारी है। तुम बड़ी मां से धीरे से बताना, फिर लिखना। बिना बड़ी मां के आशीर्वाद के हम कैसे कुछ करेंगे! प्लीज मां, इतना करना, जल्दी ही।

—तुम्हारा बेटा रवि

एक लंबी सांस खींचकर आशा ने तस्वीर रखकर पत्र बंद कर दिया और अपना पत्र लेकर कमरे में आ गयी। बिना पढ़े ही पत्र ड्रार में डालकर, संध्या के आने का इंतजार करने लगी।

रात खाने के समय तक आशा अपने दूसरे मन की नींव मजबूत करती रही और, सारी अशांति पर उस दूसरे मजबूत मन का निर्माण कर उसने संध्या को बुलाया। सहमी-सी संध्या उसके बगल में बैठ गयी।

'छोटी, रवि को इस बार चिट्ठी लिख, मेरी तरफ से कि वहीं कोई अच्छी लड़की तलाश कर ले। हम उसकी पसन्द कहां यहां खोजते फिरेंगे। फिर हमारी-तुम्हारी खोज उसे भाये न भाये।'

'सच, बड़ी दीदी . . .' आश्चर्य के स्वर संध्या के मुंह से रोशनी की तरह बिखर गये।

'कहा न, बड़ा झंझट है यहां ढूंढ़ने में फिर, उसके मन की मिलने में।'

'ओह दीदी! मैं अभी आयी,' संध्या भागकर लिफाफा ले आयी और आशा के कदमों पे धर दिया।

'तू कल 'हां' लिख दे, मेरी तरफ से।'

'तुम क्यों नहीं लिखतीं, दीदी?'

'पागल है। जानती है वह मेरा कितन आदर करता है...' आशा ने हंसकर कहा

०००

'आशा राय के नाम का तार' बाह खड़ी आशा से डाकिया कह रहा था।

'जी हां, लाइये,' साइन करके धड़क दिल से उसने तार थामा। तार रवि था और हिंदी में सिर्फ इतना '. . . म हम दोनों आ रहे हैं!'

'मां' जैसे दूर रेगिस्तान से आ रहे थ राही को शीतल सरोवर पाकर, या ऋषि को तप के बाद ईश्वर दर्शन से जिस सु का अनुभव होता होगा, ठीक उसी सु का अनुभव आशा को दूसरे मन के निर्मा से आज मिल रहा था।

आंसू भरी आंखों से तार में लिखे को बार-बार पढ़ रही थी—'श्रीमती आ राय'।—**अस्पताल चौराहा, रायबरेली,** उ

सांस्कृतिक निरूपण–१७

कथा राम की, व्यथा मानव की

हरीन्द्र दवे

राम की विदा का दृश्य बहुत ही हृदय-द्रावक है। समग्र अयोध्या राम के पीछे चल पड़ी है : ताप से पीड़ित प्राणी पानी की तरफ जायें उसी प्रकार वे राम के पीछे दौड़ रहे थे । सुमंत्र राम का रथ हांक रहे थे । लोग उनसे विनती कर रहे थे, धीरे चलाओ । राम कह रहे थे, वेग से चलाओ ।

रामो याहीति तं सूतं
तिष्ठेति च जनस्तथा,
उभयं नाशकत्सूतः
कर्तुमध्वनि चोदितः
(अ. ४०-३२)

राम सारथि से रथ चलाने के लिए कह रहे हैं, लोग रथ रोकने के लिए कह रहे हैं : इन दो प्रकार की ध्वनि के बीच सुमंत्र रथ को न तो आगे ले जा सके, और न ही रोक सके । कालिदास के कुमार संभव की 'शैलाधिराजतनया न ययौ न तस्थौ' जैसी स्थिति यहां सारथि सुमंत्र की हो गयी है ।

राम समग्र अयोध्या को अपने पीछे आते हुए देखते हैं, उसमें केवल नगर जन ही नहीं हैं । जिन्होंने कभी धरती पर पांव नहीं रखे ऐसे अपने माता-पिता भी हैं । राजा दशरथ रथ रोकने के लिए आक्रोश कर रहे हैं। राम आगे चलाने को कह रहे हैं–

तिष्ठेति राजा चुक्रोश
याहि याहीति राघव
सुमंत्रस्य बभूवात्मा
चक्रयोरिव चान्तरा
(ग. ४०-४६)

पिता और पुत्र के विपरीत आदेशों के बीच सुमंत्र को ऐसा अनुभव हो रहा है मानों दो चाकों के बीच पिस रहा हो । राम जानते हैं कि पिता ऐसी शोकाकुल परिस्थिति में अधिक देर तक रहें यह इष्ट नहीं है । वे सुमंत्र से कहते हैं, 'तुम रथ चलाओ, बाद में पिताजी से कह देना कि उनकी आवाज तुम्हें सुनायी नहीं दी थी ।' रथ आगे बढ़ता है :

न्यवर्तत जनो राज्ञो
रामं कृत्वा प्रदक्षिणम्
मनसाप्याशु वेगेन
न न्यवर्तत मानुषम्
(अ. ४०-४९)

राजा दशरथ के साथ आये हुए लोग

मन ही मन राम की प्रदक्षिणा करके मात्र शरीर से पीछे लौटे। (उनका मन तो राम के भी आगे दौड़ रहा था।) बाकी अन्य सब लोग तो मन से और शरीर से राम के पीछे-पीछे ही दौड़ रहे थे।

दशरथ का मन राम के पीछे दौड़ रहा था, तब मंत्रीगण उन्हें आश्वासन देते हैं। उनकें शब्दों में उस काल के सामाजिक वहम और मान्यताओं का आभास मिलता है, साथ ही उन मान्यताओं में जो यथार्थ है उसका भी परिचय मिलता है। मंत्री कहते हैं, 'महाराज, जिसके सत्वर लौटने की आकांक्षा हो, उसके पीछे बहुत दूर तक नहीं जाना चाहिए।' यह सुनते ही राजा अटक जाते हैं और दीन भाव से आंखों से ओझल होते पुत्र को देखते रहते हैं।

राम की विदा के बाद अयोध्या, नगर-जन तथा समग्र वातावरण पर छायी हुई ग्लानि का कवि वर्णन करते—उस दिन अग्निहोत्र बंद हो गया, गृहस्थों के घर खाना नहीं पका। सूर्यदेव अस्ताचल को चले गये। हाथियों ने सूंड में लिये हुए ग्रास नीचे रख दिये, गायों ने बछड़ों को दूध नहीं पिलाया तथा उस दिन पहली बार पुत्रवती होने वाली माता को भी कोई हर्ष नहीं हुआ।

दिशः पर्याकुलाः सर्वा-
स्तिमिरेणेव संवृताः
न ग्रहो, नापि नक्षत्रं
प्रचकाशे न किंचन
(अ. ४१-१४)

सारी दिशाएं व्याकुल हो गयीं दिशाओं में अंधकार छा गया। न कोई प्रकाशमान हुआ, न कोई नक्षत्र।

न वाति पवनः शीतो
न शशी सौम्यदर्शनः
न सूर्यस्तपते लोकं
सर्वं पर्याकुलं जगत्
(ग. ४१-१

शीतल पवन बहता नहीं, शशि के सौ दर्शन नहीं, सूर्य भी लोक में पर्याप्त त नहीं। सकल जगत् व्याकुल हो उठा है

राम का अयोध्या से विलग होना घटना की करुणता को कवि ने अ रूप से दर्शित किया है। रथ की उड़ती धूल जब तक दृश्यमान रही तब तक द उस मार्ग को ताकते रहे। फिर शो निर्बल विह्वल दशरथ को कैकेयी सां देने आती है, तब राजा उससे कहते

'आज से तू न मेरी भार्या है न मित्र।' राजा कैकेयी के पाणिग्रहण के संबंध का 'अस्मिन् लोके परत्रच' इस में और परलोक में भी त्याग कर देते और राम को याद करके विलाप लगते हैं। कैकेयी के कारण कौशल्या हमेशा दूर रहना पड़ा था। इस कौशल्या दशरथ के सबसे नजदीक राजा उससे कहते हैं—

न त्वां पश्यामि कौशल्ये
साधु मां पाणिना स्पृश
रामं मेनुगता दृष्टि
रद्यापि न निवर्तते (अ. ४२-

'कौशल्या, मेरी दृष्टि तो राम के साथ जो गयी, वह अभी तक लौटकर नहीं आयी, इसलिए मैं तुम्हें देख नहीं सकता । तुम मुझे स्पर्श करो ।'

उस क्षण कौशल्या भी अपने रुदन को रोक नहीं सकती । कौशल्या के रुदन में कैकेयी के प्रति डंक भी है । कवि इस डंक को नुकीली भाषा में प्रकट करते हैं–

राघवे नरशार्दूले
विषं मुक्त्वा हि जिह्मगा
विचरिष्यति कैकेयी
निर्मुक्तेव हि पन्नगी
(अ. ३२-२)

नरशार्दूल राम पर अपना विष प्रयोग करके वक्र चाल से चलती हुई कैकेयी केंचुल उतारकर चलती पन्नगी (नागिन) की तरह अब निर्बंध होकर विचरण करेगी ।

कौशल्या को सांत्वना देती हुई सुमित्रा की वाणी में स्वस्थता है । हकीकत में सुमित्रा को अधिक शोक होना चाहिए । लक्ष्मण तो केवल बड़े भाई की सेवा के लिए वन में गया है । राम के साथ सीता, किंतु भाई की सेवा में कोई कमी न हो इसलिए लक्ष्मण अकेले गया है । इस दृष्टि से सुमित्रा की वेदना अपार होनी चाहिए, किंतु सुमित्रा स्वस्थ है । 'राम पितृवचन का पालन करने वन में गया है । वह धर्म में स्थित है : 'न च शोच्य कदाचन'–ऐसे राम के लिए कदापि शोक न करें ।' ऐसा वह कौशल्या से कहती है। सुमित्रा राम और सीता की ही बात करती है । वे वन से जरूर लौट आयेंगे ऐसा कहती है, लेकिन लक्ष्मण का जिक्र तक नहीं करती । ठेठ अंत में कहती है –

धनुर्ग्रहवरो यस्य
बाणखड्गास्त्रभृत स्वयम्
लक्ष्मणो व्रजति ह्यग्रे
तस्य किं नाम दुर्लभम्
(अ. ४४-२०)

जिनके आगे धनुर्धारियों में श्रेष्ठ लक्ष्मण स्वयं बाण तथा खड्ग इत्यादि अस्त्र धारण करके चल रहा हो उनके लिए जगत में क्या दुर्लभ है ? अयोध्याकांड के ४४ वें अध्याय में सुमित्रा कौशल्या को आश्वासन देते हुए २८ श्लोक कहती है, जिनमें सतत राम और सीता का ही नाम लेती है । सिर्फ एक बार लक्ष्मण के नाम का उच्चार करती है ।

कुशल कथाकार कथा की पश्चाद् भूमिका विविध प्रकरणों में बदलते रहते हैं, इस प्रकार वाल्मीकि अब फिर राम की ओर मुड़ते हैं । नगर के वृद्ध ब्राह्मण राम के पीछे-पीछे जा रहे हैं । ज्ञान, वय और ओजस (तप) तीनों द्वारा जो वृद्ध हैं ऐसे ये ब्राह्मण राम से नहीं, राम के अश्वों से कहते हैं–

वहन्तो जवना रामं
भो भो जात्यास्तुरंगमाः,
निवर्तश्वं न गन्तव्यं
हिता भवनभर्तरि
(अ. ४५-१४)

'हे तेजगति से दौड़ने वाले तुरंगों (अश्वों), तुम सब तो राम के हितचिंतक बनो। तुम तो राम को वन में न ले जाओ।'

राम यह सुनकर द्रवित हो जाते हैं। वे रथ से उतरकर इन ब्राह्मणों के साथ चलने लगते हैं। किंतु उनके कदमों की गति तो वन की दिशा में ही है। ब्राह्मणों को आशा थी कि उनकी आर्त विनती सुनकर राम वन की दिशा में जाने से अटकेंगे।

वाल्मीकि की काव्य प्रतिभा इन सब प्रसंगों में खिल उठी है। ब्राह्मण राम से कहते हैं : 'हमारे कंधों पर चढ़कर अग्निदेव स्वयं आपके पीछे आ रहे हैं। वेद मंत्रों का अनुसरण करने वाली हमारी बुद्धि अब 'वनवासानुसारिणी' हो गयी है। वृक्षों की जड़ें गहरी गड़ी हैं इसलिए वे चल नहीं सकतीं; किंतु उनसे छनकर बहने वाली हवा की सनसनाहट द्वारा वे आपको रोक रहे हैं। आपको वन में जाते हुए देखकर स्तब्ध पंछी भी आपको लौटने की विनती कर रहे हैं।'

और इस अध्याय की पराकाष्ठा अपूर्व कविता के साथ होती है –

एवं विक्रोशतां तेषां द्विजातिनां निवर्तने
ददृशे तमसा तत्र वारयन्तीव राघवम्
(अ. ४५-३२)

राम को लौटने के लिए पुकारने वाले इन ब्राह्मणों पर कृपा करने के हेतु ही तमसा नदी मार्ग में आयी है; वह अपने प्रवाह द्वारा राघव को रोक रही हो, ऐसा लगता है।

वृक्ष, पंखी और अब स्वयं सरिता का रास्ता रोककर बैठे हैं। (क्र

[**अनुवाद : नंदिनी मे**

नया तराना

नये साल का नया तराना
हमको-तुमको, इनको-उनको,
सबको साथ-साथ है गाना !

नये स्वरों में, नये ताल
लय भी उसकी नयी-नयी
त्रिगुणात्मक हों तीये उस
तानें उसकी कालजयी
मंत्रमुग्ध हो जायें श्रो
ऐसा मोहक राग सुनान

हर बंदिश के बोल नये हों,
हर फिकरे का चलन नया हो।
हर टुकड़े का वजन निराला,
हर मुरकी की नयी अदा हो।
राग फिजाओं में बस जाये,
ऐसा हमको रंग जमाना !

एक राग में रंगना स
हो पावन उद्देश्य हमा
बहे हमारी स्वर-गंगा
अविरल नये प्रेम की धा
लक्ष्य हमारे गीतों का
वीरानों में फूल खिला

—बालकृष्ण
संगीत कार्यालय, हाथरस,

……

□

(पृष्ठ ३ का शेषांश)

'मुगल शासन काल की दिलचस्प दीवाली' तथा 'ऐसा था मान पान का' अत्यधिक रोचक लगे। हास्य-व्यंग्य 'जजों के कुछ दिलचस्प चुटकुले' तथा परिचर्चा 'किसके संग मनायें दीवाली' से स्वस्थ मनोरंजन हुआ। 'नन्हे-नन्हे ज्ञानदीप' अत्यधिक ज्ञानवर्धक व उपयोगी सामग्री हैं। **—एक पाठक**

०००

मैं **नवनीत** का पिछले पांच वर्षों से नियमित पाठक हूं। सांस्कृतिक मूल्यों की स्थापना में इसका योगदान उत्कृष्ट संपादन का ही परिणाम है। अक्तूबर '८७ का विशेषांक पढ़ा।

'श्रीराम आज भी प्रासंगिक हैं' तथा 'धर्म ही मानवता की रक्षा करेगा' लेख अच्छे लगे। 'स्वास्थ्य रक्षा के लिए प्राकृतिक जीवन' लेख के लिए कोटिशः धन्यवाद। अगर इस विषय को प्रत्येक अंक में 'प्रार्थना' की भांति नियमित कर सकें तो हम पर बड़ा उपकार होगा।

परिचर्चा 'देश की शांति-स्थापना में आपका क्या योगदान हो सकता है?' इस अंक का महत्वपूर्ण भाग है। यदि देश के सभी साहित्यकार अपने अहं और स्वार्थ की भावना को त्यागकर जनमानस में व्याप्त चिंतन की निकृष्टता को दूर करने में समर्थ, साहित्य की रचना में जुट जायें तो शांति-स्थापना में देर न लगे। दीपावली विशेषांक श्रेष्ठ सामग्री से पूर्ण है, इसके लिए आपको साधुवाद।

—सूरजप्रसाद शुक्ल, रगौल, हमीरपुर, उ. प्र.

०००

मैं पिछले वर्ष से **नवनीत** पढ़ रहा हूं। लेकिन दीपावली अंक पढ़कर मुझे **नवनीत** कार्यालय को पत्र डालने को मजबूर होना पड़ा। सुरेंद्र सिंह गौर की कहानी 'भरी गोद' बहुत पसंद आयी। **—राममनोहर वर्मा,**
उ. मा. शा., मालथौन, म. प्र.

०००

उत्तम, ज्ञानवर्द्धक, शिक्षाप्रद एवं प्रेरणादायक रचनाओं से भरपूर **नवनीत** का अक्तूबर १९८७ का (दीपावली विशेषांक) बहुत ही अच्छा रहा। 'श्रीराम आज भी प्रासंगिक हैं', 'प्राचीन भारत में वाणिज्य व्यापार', 'भारत से मैंने क्या सीखा', 'धर्म ही मानवता की रक्षा करेगा', देश की शांति-स्थापना में आपका क्या योगदान हो सकता है?' 'एक और स्वतंत्रता सेनानी राष्ट्रपति भवन में', 'राम कथा के गायक : फादर कामिल बुल्के', 'नन्हे नन्हे ज्ञानद्वीप', 'दीवानी दुनिया सयाने अमीरों की' तथा 'महीयसी महादेवी वर्मा' आदि रचनाएं विशेष रुचिकर लगीं।

'महीयसी महादेवी वर्मा' लेख में विद्वान लेखक डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी द्वारा महान साहित्यकार कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा के संबंध में प्रस्तुत वृतांत तथ्यपूर्ण, तर्कसंगत एवं हृदयस्पर्शी है।

—डा. शकुनचंद गुप्त, रायबरेली, उ. प्र.

दीपावली का विशेषांक मैंने दीपावली के दिन ही खरीदा और पढ़ा। **नवनीत** वास्तव में बड़ी प्यारी पत्रिका है। प्रथम पृष्ठ पर महादेवी वर्मा की कविता और द्वितीय पृष्ठ पर संपादक द्वारा लिखा गया आलेख सचमुच विशेषांक की शोभा बढ़ाते हैं। श्री सुरेंद्र सिंह गौर की कहानी 'भरी गोद' मेरे मन को छू गयी। ठीक यही कहानी मेरे परिवार में घटी है।

—मु. सलीम खान, रांझी बस्ती, जबलपुर

०००

नवनीत के दीपावली विशेषांक में प्रकाशित 'गयाप्रसाद शुक्ल सनेही' लेख में पं. बदरीनारायण तिवारी ने सनेहीजी के काव्य के साथ न्याय करने में सफलता प्राप्त की है। सनेहीजी राष्ट्रीय आंदोलन के अनुगामी कवि माने जाते हैं। इस दिशा में 'कृषक क्रंदन' उनकी प्रतिनिधि रचना है।

तिवारीजी के शब्दों में सनेहीजी ने साहित्य की सृष्टि से अधिक साहित्यकारों की सृष्टि की है। 'हितैषी' व अनूप शर्मा उनकी इस क्षेत्र में अद्‌भुत उपलब्धि थी। कानपुर सनेहीजी का कार्यक्षेत्र बना। समाज सेवी लाला किशोरचंद्र कपूर उनके जीवन के प्रमुख अंग थे। देशप्रेम सनेहीजी के काव्य की आत्मा है।

धाराधर बिपदा के बरसे सहस्रधार
तो भी मेरा धीरज धराधर न धसका।

—निशानाथ दीक्षित, उन्नाव, उ. प्र.

०००

अक्तूबर '८७ अंक **नवनीत** का पढ़ा।
अंक में प्रकाशित सभी रचनाएं ज्ञानवर्द्ध
लगीं। प्रथम पृष्ठ पर महादेवी वर्मा
काव्य पाठ रोचक, पठनीय था। सुरेंद्र सि
गौर द्वारा लिखित कहानी 'भरी गो
अच्छी लगी।

—शोभालाल को
सरदानपुर, सागर, म.

०००

सांस्कृतिक परंपरा की भांति इस बा
भी दीप-पर्व को समर्पित **नवनीत** का अं
पाकर प्रसन्नता हुई। महीयसी महादे
वर्मा को विनत श्रद्धांजलि शोक-संतप्त
गयी। **नवनीत** का दीपावली अंक स
अनूठा मनोहारी एवं प्रशंसनीय होता है
इस माध्यम से प्रत्येक वर्ष देश के मह
साहित्यकारों का विराट सम्मेलन
जाता है। 'ब्रह्म क्या है', 'रामायण का
में हाइड्रोजन बम', 'धर्म ही मानवता
रक्षा करेगा', 'शक्ति पूजा', 'भारत से
क्या सीखा?' आदि के निबंधकारों ने
की महिमामयी संस्कृति की प्रासंगिक
को सिद्ध किया। 'देश की शांति स्थापना
आपका क्या योगदान हो सकता है।' प
चर्चा के प्रतिभागियों द्वारा प्रस्तुत वि
प्रेरक, चिंतन प्रधान व मनोरंजक ल
विराट कवि-सम्मेलन स्वयं में एक उ
लब्धि रही, जो श्री रामजीदास क
द्वारा विश्वमाता की वंदना से प्रारंभ हु
'मधुर-मधुर मेरे दीपक जल' से यशः
महादेवीजी की आकृति छायी रही। अ
कवियों के साथ श्री 'अंचल', डा. आशा
त्रिपाठी, शिवप्रसाद कमल, डा. भाव

नरेंद्र शर्मा, शिवसिंह 'सुमन' आदि की रचनाओं ने भावविभोर कर दिया।

—गौरीशंकर वैश्य 'विनम्र' सीतापुर, उ. प्र.

०००

नवनीत की प्रशंसा शब्दों की सीमा से परे है। आपके अक्तूबर अंक में प्रकाशित कविताएं, कहानियां व साहित्यिक खोजपूर्ण लेख काफी ज्ञानवर्द्धक हैं। 'भरी गोद' कहानी काफी प्रशंसनीय है।

—हरिशंकर दीक्षित, छतरपुर, म. प्र.

०००

भारतीय संस्कृति को साथ लेकर चलनेवाले **नवनीत** का प्रत्येक अंक रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक होता है। श्री हरींद्र दवे का धारावाहिक लेख 'कथा राम की, व्यथा मानव की' तथा नवंबर अंक में प्रकाशित 'राम भक्त मुस्लिम साहित्यकार' में मुस्लिम साहित्यकारों द्वारा प्रसूत राम भक्ति परक रचनाएं पढ़कर हृदय गद्गद हो गया।

—स्वामी नर्मदानंद सरस्वती, जबलपुर

०००

नवनीत के अक्तूबर माह का अंक पढ़ने को मिला, यह मेरा सौभाग्य था। इस अंक की जितनी तारीफ की जाये, कम ही है। हालांकि चांदपुर कस्बे में आपकी **नवनीत** पत्रिका प्राप्त ही नहीं होती। लेकिन मैं अब इस पत्रिका को हमेशा पाना चाहता हूं। इस अंक में प्रकाशित कहानी 'भरी गोद', 'महीयसी महादेवी वर्मा', हरीश निगम का काव्य पाठ, रोशनी की कविताएं सुश्री शरदसिंह की छोटी कविता 'माटी दीप' की मैं मन से सराहना करता हूं।

—खेटसिंह साहू, झाबुआ, म. प्र.

०००

आपकी मासिक पत्रिका **नवनीत** के दीपावली विशेषांक के अंतर्गत देश की शांति-स्थापना में विभिन्न कवियों एवं लेखकों के बहुत अच्छे विचार पढ़ने को मिले। यह भी पता चला कि हमारे भारतीय चिंतकगण अपने देश, अपनी मातृभूमि के प्रति कितना चिंतन-मनन करते हैं एवं उसके सामाजिक ढांचा, व्यवस्था के संबंध में लगभग सभी के विचार सामयिक लगे। इस योजना के माध्यम से आपने हमारे चिंतकों के विचार लोगों तक पहुंचाये। इसके लिए आपको कोटिशः धन्यवाद। आपकी पत्रिका में भारतीय संस्कृति का सुंदर समावेश रहता है।

—सेतराम कश्यप, रायपुर, म. प्र.

नव वर्ष की बधाई

शीत की भीत में भी है मवास, छटा मधुमास की है छिति छाई।
मंगल कामना भारती ले, सधी, रागिनी गा रही है मनभाई।
मित्रों - सुबंधुओं साथियों की, 'बलराम' विशेष सुप्रीति सुहाई।
दे रहा है नव वर्ष सहर्ष, भरे उत्कर्ष सुविज्ञ . . . . . बधाई।

—वालकवि बलराम जेनपुरी

विश्व के सांस्कृतिक क्षितिज पर प्रकाश की नयी रेखा :

कनाडा का अंतर्राष्ट्रीय रामायण-सम्मेलन

☐ लल्लनप्रसाद व्या

पश्चिमी जगत में आयोजित होने वाले इस सर्वप्रथम 'अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन' के शुभारंभ से पूर्व ही इसकी सफलता के तीन प्रमुख आधारस्तंभ भगवद्कृपा से बने थे–प्रथम, विश्व प्रसिद्ध रामकथा गायक, संत और विद्वान मोरारी बापू ने आश्वासन दिया था सम्मेलन से तीन दिन पूर्व टोरेंटो पधारे और हमने भावना में यही मान लि था कि ऐसे संत के द्वारा ही सम्मेल का श्रीगणेश होना है तीन दिन पूर्व द्वितीय, वृंदावन के स्वामी रामस्वरूप शर्मा ने अपनी रामलीला मंडली साथ कनाडा सम्मेलन में आना स्वीक कर लिया था, जिनकी मंडली को भा सरकार ने द्वितीय अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन लिए अप्रैल, १९८६ में थाईलैण्ड भेजा और दो वर्ष की अवधि पूरी न होने कारण इस बार उन्होंने २७ व्यक्तियों मंडली का व्यय-भार स्वयं वहन क स्वीकार किया था, जो अपने ढंग के सा और रामायण प्रेम की पहली घटना थी तृतीय, भारत सहित लगभग १५ देशों प्रमुख विद्वानों के भाग लेने की स्वीकृति मिल गयी थीं, जिनमें अधिकांश अ मार्ग व्यय वहन करके पहुंच रहे थे। उ लिए केवल स्थानीय आतिथ्य की व्यव हमें करनी थी।

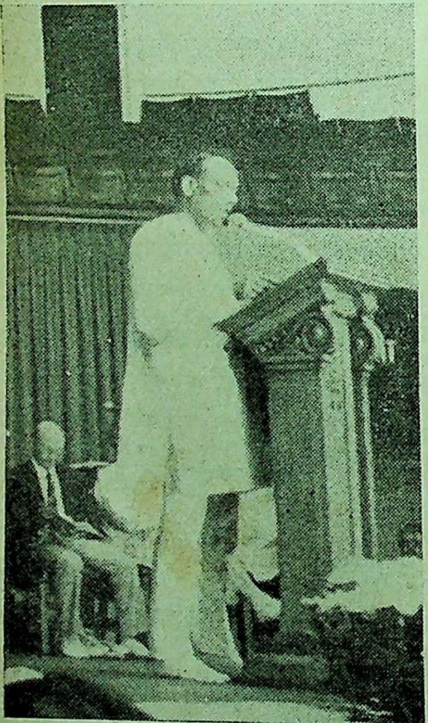

सम्मेलन के अध्यक्ष रामबिशुन

इस तथ्य का उल्लेख इसलिए आव है कि लोग अनुमान लगा सकें कि अ

कांश प्रतिनिधियों की अत:प्रेरणा कितनी प्रबल थी, जो उन्हें एक बड़ा व्यय भार वहन करने के लिए बाध्य कर रही थी। इनमें भारत के भी ऐसे कुछ विशिष्ट विद्वान और लेखक थे जिन्होंने शायद जीवन में पहली बार अपना व्यय कर सुदूर विदेश यात्रा की थी। निश्चय ही न यह सिर्फ विदेश यात्रा थी और न यह कोई साधारण अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन था। वे एक विशेष सौभाग्यपूर्ण प्रेरणा से वशीभूत थे जो उन्हें बरबस इस आयोजन में खींच रही थी।

रामायण सम्मेलन से पूर्व रामलीला और कृष्णलीला

रामायण सम्मेलन से पूर्व जन उत्साह और सहयोग का वातावरण बनाने में रामलीला और कृष्णलीला ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। ४ जुलाई को टोरेंटो के प्रसिद्ध मारकम थियेटर में जब कृष्णलीला की प्रस्तुति सप्ताहों के व्यापक प्रचार के बाद हुई तो सम्मेलन के लिए नयी प्रेरणा, उत्साह और आत्मविश्वास का सृजन हुआ। यह सम्मेलन विदेशी प्रतिनिधियों के लिए निःशुल्क था। शेष के लिए अधिकतम एक सौ डालर यानी एक हजार भारतीय रुपये तक के टिकट थे। हाल पूरा भरा था। लीला की भाषा तो हिंदी ही थी, किंतु पूर्व अंग्रेजी टिप्पणियों के साथ। यह कार्य प्रो. हरिशंकर आदेश ने बखूबी निभाया। रामलीला और कृष्णलीला का यह कार्यक्रम सम्मेलन की समाप्ति के बाद भी दो सप्ताहों से अधिक समय तक चलता रहा तथा टोरेंटो के अलावा कुछ अन्य समीपवर्ती नगरों में आयोजन हुए।

५ जुलाई की शाम को श्री मोरारी बापू रामायण सम्मेलन के लिए विशेष

कनाडा के टोरेंटो नगर में आयोजित तृतीय अंतरर्राष्ट्रीय रामायण-सम्मेलन। स्वामी चिन्मयानंद, स्वामी दयानंद के साथ कुछ स्थानीय राजनेता

[चित्र : अशोक खन्ना]

रूप से टोरेंटो पधारे और ६ तारीख से सुबह १० बजे महानगर के सर्वाधिक चर्चित 'इंटरनेशनल सेंटर' में गणेशपूजन के साथ ही तृतीय 'अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन' का श्रीगणेश होना था । यद्यपि वह सोमवार का दिन था और पश्चिमी देशों में काम के दिन सामान्यतः लोग समय नहीं निकाल पाते, किंतु इसके बावजूद दो-ढाई हजार रामायणप्रेमी उपस्थित थे । जैसे ही श्रीगणेश पूजन प्रारंभ हुआ, श्री उपेन्द्रजी के हाथ में अलौकिक ढंग से एक बड़ा लाल फूल प्रकट हुआ और उसके साथ ही एक चांदी का सिक्का भी, जिस पर श्रीगणेशजी, लक्ष्मीजी, सतिया ओम दीपक के चित्र अंकित थे । हमारे लिए यह दैवी शगुन था । उस समय श्री मोरारी बापू के समक्ष श्रीराम, हनुमानजी और शिवजी की वे छोटी रजत मूर्तियां भी विराजमान थीं, जो दिल्ली से कनाडा प्रस्थान से पूर्व अखंड रामायण पाठ शुरू होने के समय प्रकट हुई थीं ।

महामंत्री के नाते मैंने श्री मोरारी बापू का स्वागत और अभिवादन करते हुए एक श्रेष्ठ रामभक्त के द्वारा सम्मेलन के श्रीगणेश पर हर्ष व्यक्त किया । साथ ही, मैंने यह हार्दिक उद्गार भी व्यक्त किया कि प्रथम 'अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन' का उद्घाटन भारत की अयोध्या में हुआ था और दूसरे सम्मेलन का उद्घाटन थाईलैण्ड की अयोध्या में, किंतु कनाडा में कोई अयोध्या न होते हुए भी श्री मोरारी बापू जैसे रामभक्त की उ स्थिति इस विदेशी महानगर में ही अयोध् का भाव उत्पन्न कर रही है 'अवध त जहं राम निवासू । तहइँ दिवसु जहं भा प्रकासू ।।'

रामायण सम्मेलन : विश्व सद्भाव का सेतु

श्री मोरारी बापू ने अपनी अत्यंत प्रेर और उद्बोधक भाषा में 'अंतर्राष्ट् रामायण सम्मेलन' की शृंखला को राष् और उनमें बसने वाले मनुष्यों के बी एक सेतु बताया—जैसे सेतु की रचना श्रीरा ने वानर, भालुओं के सहयोग से कि था । श्री मोरारी बापू ने सम्मेलन उद्देश्यों के प्रति अपनी शुभकामना अ सद्भावना व्यक्त की तथा उपस्थि जनसमूह से ऐसे प्रेरक और चरित्र निर्मा कारी कार्यक्रमों में पूर्ण रूप से सहयो बनने का आह्वान किया ।

भव्य उद्घाटन

और फिर ९ जुलाई भी आ गया, टोरैंटो विश्वविद्यालय के दीक्षा कक्ष तृतीय 'अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मे का औपचारिक उद्घाटन होना था मंच पर आयोजक संस्था के पदा कारियों के साथ कनाडा के सांस्कृ मंत्री टोनी रूपरज, संसद सदस्य बॉब रे, भारतीय उच्चायुक्त श्री छत के अतिरिक्त स्वामी चिन्मयानंदजी स्वामी दयानंदजी उपस्थित थे । सम्मे के शुभारंभ के समय स्वामी रामस्व

के सुमधुर कंठ से जो दिव्य शब्द सबसे पहले वातावरण में प्रकट हुए वे थे —

वर्णानामर्थसंधानां रसानां छंदसामपि।
मंगलानां च कर्तारो बंदे वाणीविनायकौ।।

उसके बाद सम्मेलन के अध्यक्ष श्री रामविशुन ने अपने स्वागत भाषण में देश-विदेश के प्रतिनिधियों का स्वागत करते हुए इन क्षणों को जीवन की धन्यता बतायी।

सभी रामायण धाराओं का संगम

महामंत्री के रूप में इन पंक्तियों के लेखक ने पश्चिमी जगत में सर्वप्रथम आयोजित होने वाले इस अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन में रामायण की सभी धाराओं के प्रतिनिधित्व पर संतोष व्यक्त किया। साथ ही, इस बात पर भी हर्ष व्यक्त किया कि सम्मेलन में पूर्व की भांति विभिन्न राजनैतिक विचारधाराओं और पद्धतियों वाले देशों के विद्वान उपस्थित हैं जो अपने आप में यह सिद्ध करते हैं कि रामायण को विश्व व्यापी स्वीकृति प्राप्त है। रामायण का प्रादुर्भाव भले ही भारत में हुआ, किंतु वह आज संपूर्ण संसार की नैतिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और साहित्यिक निधि है जिस पर सबका अधिकार है। आज के अशांत और तनावपूर्ण संसार को परस्पर विरोधी अनेक राजनैतिक विचारधाराएं और धार्मिक संप्रदाय विभाजित कर रहे हैं, उस समय उनमें एकता और सद्भावना का सूत्र रामायण से ही संभव हो सकता है। यह भावना दिन-प्रतिदिन संसार के विभिन्न भागों में जोर पकड़ रही है और ऐसा लगता है कि इसमें श्रीराम की कृपा और इच्छा निहित है। ऐसी स्थिति में जब हमारी मंजिल की ओर हवा तेजी से बह रही है उस समय यदि हम अपने जीवन की नौका उसी दिशा में छोड़ दें तो वह अपने आप मंजिल तक पहुंच जायेगी। रामायण से जुड़ना हमारा अपनी मंजिल की ओर अग्रसर होना है।

इस औपचारिक उद्घाटन के कार्यक्रम में भारत सरकार की ओर से उच्चायुक्त श्री छतबाल ने अपनी शुभकामना और सद्भावना व्यक्त की तथा बेल्जियम के ल्युवेन विश्वविद्यालय के हिंदी विभागाध्यक्ष प्रो. गिल्बर्ट पोलेट ने विदेशी प्रतिनिधियों की ओर से तथा प्रो. हरिशंकर आदेश ने कनाडा के प्रतिनिधियों की ओर से विचार व्यक्त किये।

उद्घाटन कार्यक्रम में ही 'अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन—प्रेरणा और विस्तार' नामक एक पुस्तक का विमोचन भी हुआ जिसकी लेखिका भारत की डॉ. (श्रीमती) शशि प्रभा श्रीवास्तव हैं। उन्होंने अब तक के तीनों 'अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलनों' के आयोजन, उद्देश्य और उपलब्धियों पर यह विस्तृत पुस्तक लिखी और प्रकाशित करायी है।

विचार गोष्ठियां

दूसरे दिन से टोरैंटो विश्वविद्यालय के सैण्ट माइकेल्स कालेज में गोष्ठियों का

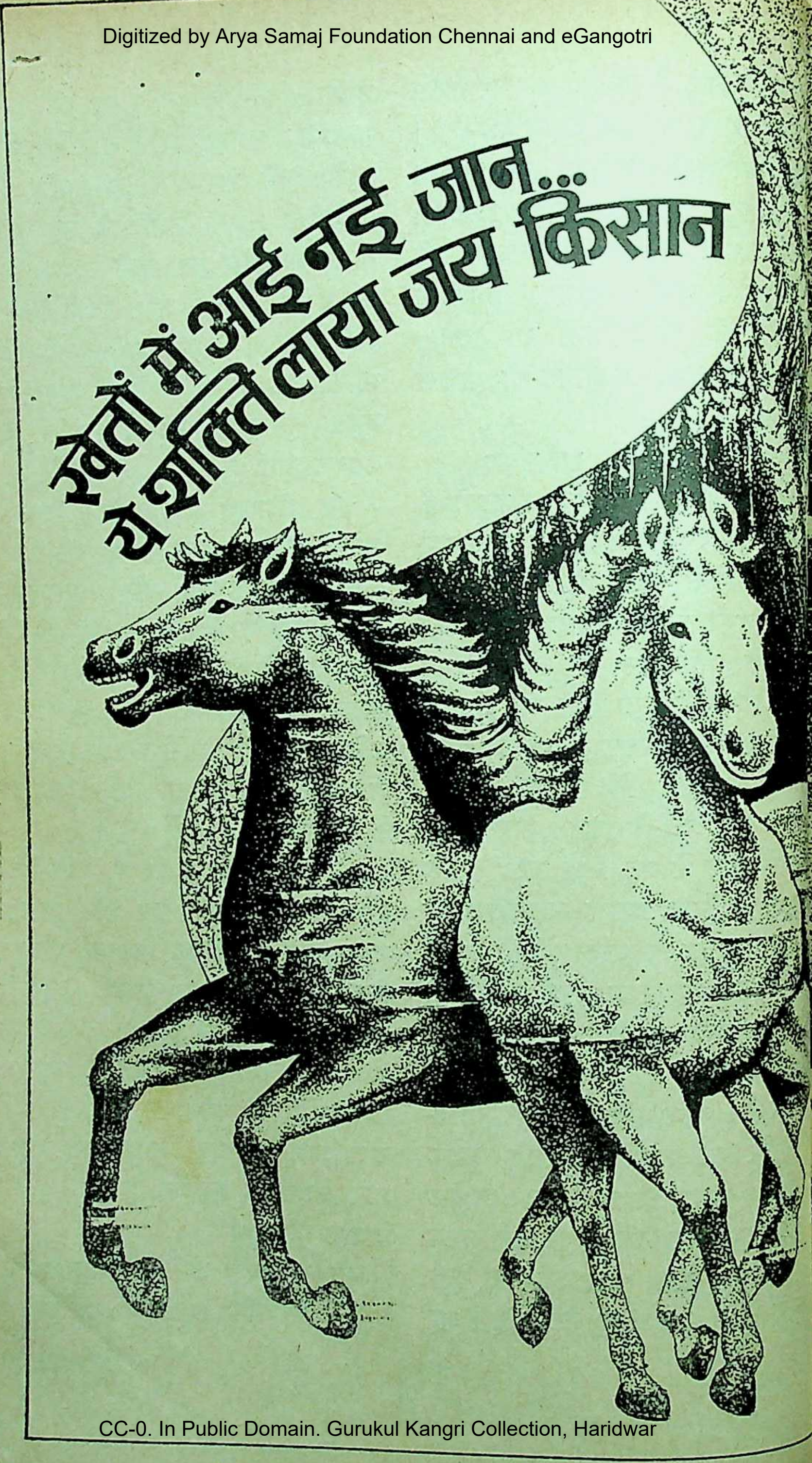
खेतों में आई नई जान...
ये शक्ति लाया जय किसान

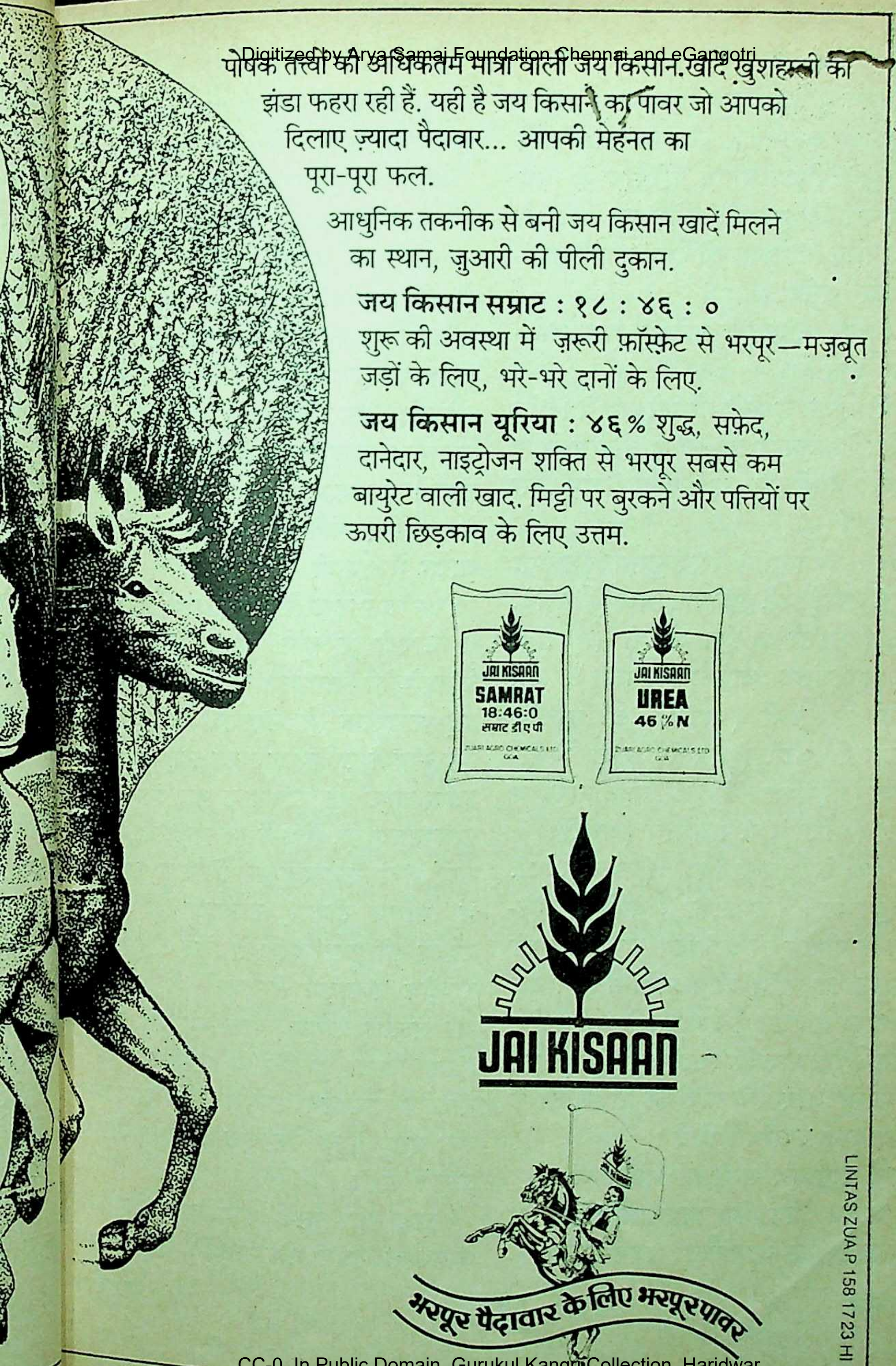
JAI KISAAN
SAMRAT
18:46:0
सम्राट डी ए पी
ZUARI AGRO CHEMICALS LTD
GOA
JAI KISAAN
UREA
46 % N
ZUARI AGRO CHEMICALS LTD
GOA
JAI KISAAN
भरपूर पैदावार के लिए भरपूर पावर
LINTAS ZUA P 158 1723 HI

पोषक तत्वों की अधिकतम मात्रा वाली जय किसान खादें खुशहाली का झंडा फहरा रही हैं. यही है जय किसान का पावर जो आपको दिलाए ज़्यादा पैदावार... आपकी मेहनत का पूरा-पूरा फल.

आधुनिक तकनीक से बनी जय किसान खादें मिलने का स्थान, ज़ुआरी की पीली दुकान.

जय किसान सम्राट : १८ : ४६ : ०
शुरू की अवस्था में ज़रूरी फ़ॉस्फ़ेट से भरपूर—मज़बूत जड़ों के लिए, भरे-भरे दानों के लिए.

जय किसान यूरिया : ४६ % शुद्ध, सफ़ेद, दानेदार, नाइट्रोजन शक्ति से भरपूर सबसे कम बायुरेट वाली खाद. मिट्टी पर बुरकने और पत्तियों पर ऊपरी छिड़काव के लिए उत्तम.

आयोजन हुआ, जिनके विषय थे- सांस्कृतिक आदान-प्रदान में रामायण की प्रभावी भूमिका', 'विश्व मानव परिवार के लिए रामायण के आदर्श', 'विभिन्न देशों में रामायण', 'रामायण की विश्वव्यापी प्रासंगिकता' आदि ।

विचारगोष्ठियों के प्रतिदिन चार अधिवेशन होते थे।

दो भोजन से पहले और दो बाद में। और प्रत्येक के अलग-अलग अध्यक्ष और सहायक अध्यक्ष निश्चित थे। इनके नाम इस प्रकार हैं –

डॉ. (श्रीमती) सिरीसुरांग पुलथुप्या (थाईलैण्ड), डॉ. कृष्णचन्द्र मिश्र (नेपाल), डॉ. (श्रीमती) ईवा अरादी (हंगरी), प्रो. हरिशंकर आदेश (कनाडा), डॉ. सत्यव्रत शास्त्री (भारत), डॉ. भारतेंदु (कनाडा), डॉ. (श्रीमती) लूबा बिचीखाना (सोवियत संघ), डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल (भारत), पं. रामलाल (अमरीका), आचार्य केशवचन्द्र मिश्र (भारत), डॉ. ऊषर्बुध आर्य (अमरीका), आदि । सम्मेलन के दौरान ही प्रतिदिन रामलीला की प्रस्तुति की जाती थी । प्रतिनिधिगण बड़े मनोयोग से देखते थे। भारत के श्री अशोक खन्ना ने एक आकर्षक स्लाइड शो के माध्यम से काशी और रामनगर की रामलीला के भव्य दृश्य उपस्थित किये ।

चतुर्थ रामायण सम्मेलन भारत में

अंतिम दिन के प्रथम अधिवेशन में रामायण पर आधारित भजन-संगीत के साथ-साथ शास्त्रीय नृत्य का भी आयोजन हुआ था।

अंतिम अधिवेशन में सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव पारित हुआ कि आगामी चतुर्थ 'अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन' भारत में हो, जिसका आयोजन प्रथम 'अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन' की आयोजक संस्था 'विश्व साहित्य संस्कृति संस्थान' करेगी।

यही संस्था सर्वप्रथम सम्मेलन की आयोजक बनी तथा शेष दोनों की सहयोगी। इस आशय का प्रस्ताव महामंत्री के रूप में इन पंक्तियों के लेखक ने किया।

भारत में स्थायी सचिवालय

सम्मेलन में पारित सर्वसम्मत प्रस्ताव:

'टोरंटो में होने वाला यह तीसरा 'अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन' है। अब यह आवश्यक हो गया है कि भारत में एक स्थायी सचिवालय की स्थापना हो। इसके साथ ही रामायण का एक संदर्भ पुस्तकालय हो, जिसमें पुस्तक, लेख, समीक्षाएं तथा रामायण की विभिन्न भाषाओं में विभिन्न टीकाएं उपलब्ध हों। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए तीनों अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलनों के महामंत्री श्री लल्लन प्रसाद व्यास को यह निर्देश दिया जाता है कि वे आगामी 'अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन' के आयोजन तक इस विषय पर एक विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत करें।

साथ ही, इसके कार्यान्वयन के लिए आवश्यक कदम भी उठायें। इस उद्देश्

की पूर्ति के लिए संसार के विभिन्न भागों में रामायण से जुड़ी हुई संस्थाएं और संस्थानों से श्री व्यास संपर्क स्थापित करें तथा उनसे आवश्यक सहयोग भी प्राप्त करें।'

सम्मेलन में निम्नलिखित १२ देशों के प्रतिनिधि विद्वान उपस्थित थे—भारत, कनाडा, संयुक्त राज्य अमरीका, बेल्जियम, थाइलैण्ड, सूरीनाम, गयाना, नेपाल, हंगरी, सोवियत संघ, त्रिनडाड और ब्रिटेन।

पूर्वी और पश्चिमी जगत में आयोजित तीन अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलनों के बाद भारत में प्रस्तावित चतुर्थ अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन के सहयोग में रामायण-प्रेमियों को यह आशा बंधी है कि यह शृंखला विश्वव्यापी बन रही है तथा क्रमशः अनेक देशों में फैल रही है। अमरीका और ब्रिटेन की महत्वपूर्ण संस्थाओं द्वारा प्राप्त औपचारिक निमंत्रण इस स्थिति का संकेत करते हैं। अमरीका से यह निमंत्रण १९८९ या उसके बाद के वर्ष के लिए भारतीय विद्या भवन की ओर से इसके संचालक डा. पी. जयरामन ने भेजा था।

साथ ही, सोवियत संघ, त्रिनिडाड, इण्डोनेशिया, हालैण्ड, आदि अनेक देशों में भावी अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलनों की संभावनाएं बन रही हैं।

—सी-१३, प्रेस इन्क्लेव, साकेत,
नयी दिल्ली-११००१७

□

राष्ट्रभाषा मशाल जुलूस

सरकारी कार्यालयों और सार्वजनिक राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रयोग में वृद्धि तथा भारतीय भाषाओं का सम्मान बढ़ाने व समन्वय स्थापित करने की ओर सरकार व देश की जनता का ध्यान आकृष्ट करने के उद्देश्य से कानपुर के साहित्यकारों, प्राध्यापकों, राजनीतिक कार्यकर्ताओं व छात्रों ने गत २१ सितम्बर १९८७ को हिंदी सप्ताह के अंतिम दिन कानपुर की घनी बस्ती वाले क्षेत्रों में 'राष्ट्रभाषा मशाल जुलूस' निकाला।

जुलूस में सुप्रसिद्ध समीक्षक व वरिष्ठ प्राध्यापक डॉ. प्रेमनारायण शुक्ल, कन्हैयालाल तिवारी, डॉ. सर्वेन्द्र गोपाल, प्रो. रामजी गुप्त, कैलाशनाथ त्रिपाठी, डॉ. किसन, डॉ. अखंड प्रताप, डॉ. अशोक शुक्ल, लोकेश शुक्ल, अशोक शास्त्री, अंबिकासिंह वर्मा, चारुदत्त, चंद्रमोहन पांडेय, डॉ. शिवबालक द्विवेदी, रामनरेश त्रिपाठी, विनोद तरुण, रामकृष्ण प्रेमी, विनोद त्रिपाठी, सत्यप्रकाश शर्मा, विनोद श्रीवास्तव, गुरुवेंद्र तिवारी, शैलेंद्र शर्मा, सुनील मिश्र, अजय रत्न, शैलेंद्र दीक्षित आदि थे। जुलूस का संयोजन डॉ. प्रतीक मिश्र ने किया था।

—अशोक शास्त्री

□

नववर्ष पर बच्चों द्वारा वृक्षारोपण

□ कमल सौगानी

नववर्ष अमरीकी बच्चों के लिए खासतौर से 'वृक्षारोपण' का दिन होता है। इस दिन यहां के तमाम स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चे जगह-जगह रंग-बिरंगे महकते फूलों के पौधों का रोपण करते हैं और सुंदर-सुंदर क्यारियां अनोखे ढंग से बनाते हैं।

यहां नूतन वर्ष पर फूलों के पौधे रोपण करने की यह प्रथा आज से एक दशक पूर्व सैंटा स्कूल के एक पांच वर्षीय बालक 'जोनिया' ने शुरू की थी, तब से अब तक विभिन्न स्थलों पर करोड़ों खुशबूदार महकते फूलों के पेड़ रोपे जा चुके हैं।

नववर्ष के दिन यहां बच्चे सबसे पहले 'जच्चा बच्चा अस्पताल' जाते हैं और इस दिन वहां जितने भी बच्चे पैदा होते हैं, उतने ही लाल गुलाब के पौधे वहां के परिसर में रोप देते हैं।

वर्तमान अमरीका में अब नूतन वर्ष पर पौधे रोपने का सभी बच्चों में एक शौक सा हो गया है। इस दिन बच्चों की टोलियां भोर में ही अपने हाथों में फूलों के पौधे, मिट्टी खोदने का खुरपा व बगल में पानी की थैली लटकाकर निकल पड़ते हैं, और धरती के रिक्त स्थानों को पौधे रोपकर भर देते हैं।

यहां के दूरदर्शन विभाग द्वारा ही इस दिन टी. वी. के लिए वृक्ष रोपते बच्चों की एक विशेष रील तैयार की जाती है जिसे रात्रि में खेल समाचार के बाद सारे चैनल पर एक साथ प्रसारित की जाती है।

यहां के कुछ स्कूलों में इस दिन विशेष बाल सभाएं भी आयोजित की जाती हैं, जिसमें 'वृक्षारोपण' संबंधी विविध बातों पर विशेष प्रकाश डाला जाता है।

चूंकि जनवरी का महीना वर्ष का प्रथम महीना होता है, अतः इस महीने के पूरे ३१ दिनों तक ही नववर्ष की खुशियां यहां प्राप्त की जाती हैं। पूरे महीने भर तक यहां के स्कूली बच्चे वृक्षारोपण करते रहते हैं।

यही नहीं नववर्ष पर 'वृक्षारोपण' के उपलक्ष्य में यहां से प्रकाशित होने वाली बच्चों की कई पत्रिकाएं 'स्पेशल विशेषांक' भी निकालती हैं, जिनमें प्रकृति के महकते फूलों और बहादुर बच्चों की सचित्र जानकारी का समावेश रहता है।

यहां के बच्चे प्रतिवर्ष बड़े उत्साह के साथ फूलों के पौधों का रोपण कर अपने देश को बेहतरीन फूलों का देश बनाना चाहते हैं। एक ताजा सर्वे के मुताबिक एक दशक में समूचे अमरीका के विभिन्न स्थलों पर पांच करोड़ से भी अधिक पौधे रोपे जा चुके हैं। ये पौधे आज अपनी खुशबू के लिए दुनिया के कई प्राकृतिक मुल्कों के लिए एक चुनौती का विषय बन गये हैं।

—स्टेशन रोड,
भवानीमंडी (राज.)

□

सुभाषित

□

भग्नाशस्य करण्डपीडिततनोर्म्लानेन्द्रियस्य क्षुधा,
कृत्वाऽखुर्विवरं स्वयं निपतितो नक्तं मुखे भोगिनः ।
तृप्तस्तत्पिशितेन सत्वरमसौ तेनैव यातः पथा,
लोकाः पश्यत दैवमेव हि नृणां वृद्धौ क्षये कारणम् ।।

जीवन से निराश, पिटारे में बंद हुआ, शिथिल शरीरवाला सर्प जब भूख से अत्यंत व्याकुल हो रहा था, तब रात के समय एक चूहा खाद्य पदार्थ मिलने की आशंका से उस पिटारी में छेद करके अंदर गया और तुरंत ही उस सर्प का खाद्य बना । सर्प की भूख मिटी और वह चूहे द्वारा बनाये गये छेद से बाहर निकल कर स्वतंत्र भी हो गया। देखिये, इस दृष्टांत से प्रतीत होता है कि मनुष्यों की वृद्धि और क्षय का कारण दैव ही है ।

आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः ।
नास्त्युद्यमसमो बन्धुः कुर्वाणो नावसीदति ।।

आलस्य मनुष्यों के शरीर में बैठा हुआ बड़ा भारी शत्रु है और उद्यम उनका हित साधन करने वाला असामान्य बंधु है । उद्यम करके कभी पछताना नहीं पड़ता ।

छिन्नोऽपि रोहति तरुः क्षीणोऽप्युपचीयते पुनश्चन्द्रः ।
इति विमृशन्तः सन्तः सन्तप्यते न ते विपदा ।।

कटा हुआ वृक्ष फिर से हरा-भरा हो जाता है तथा क्षीण हुआ कलाहीन चंद्रमा भी फिर वृद्धि को प्राप्त होता है । यह विचार कर सत्पुरुष अपनी विपत्ति से दुःखित नहीं होते ।

नेता यस्य बृहस्पतिः प्रहरणं वज्रं सुराः सैनिकाः,
स्वर्गो दुर्गमनुग्रहः किल हरेरैरावतो वारणः ।
इत्यैश्वर्यबलान्वितोऽपि बलभिद्भग्नः परैः संगरे,
तद्युक्तं ननु दैवमेव शरणं धिग्धिग्वृथा पौरुषम् ।।

बृहस्पति के समान मंत्री, वज्र के समान आयुध, देवताओं के समान योद्धा, स्वर्ग के समान दुर्ग, विष्णु के समान अनुग्राहक और ऐरावत के समान जिसके वाहन हैं, वह अनुपम ऐश्वर्य का स्वामी इंद्र भी जब संग्राम में शत्रुओं से पराजित हो चुका है तो मनुष्यों का वृथा पौरुष तो सर्वथा धिक्कार युक्त ही है । इस दशा में दैव ही सबकी शरणस्थली है ।

[प्रस्तुति : अरुणा शर्मा]

□

विश्व है
हमारा कैनवास...

याद [illegible] वर्ष पीछे नज़र डालें तो हम देखेंगे कि भारत तब पूरी तरह विदेशी डाइज़ पर निर्भर था. और तब तक इस क्षेत्र में अतुल ने कदम नहीं रखा था. स्वदेशी डाइज़ के उत्पादन क्षेत्र में पहल हमने की... एक श्रद्धांजलि के रूप में, जो हमारे संस्थापक स्वर्गीय श्री कस्तूरभाई लालभाई की दूरदृष्टि को समर्पित थी.

आज अतुल न केवल डायस्टफ़ की विशाल श्रेणी का उत्पादन करते हैं बल्कि बुनियादी रसायन, डायस्टफ़ के माध्यम, फ़ार्मास्युटिकल्स तथा कीटनाशकों का उत्पादन करके कपड़े, चमड़े, कागज़, हाथ से बने कपड़े, पिग्मेंट, पेट्रोलियम, जूट तथा साबुन जैसे विविध उद्योगों में देश को आत्मनिर्भर बनाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं. अपनी १०० करोड़ की बिक्री और १० से भी अधिक करोड़ रुपये के निर्यात द्वारा तेज़ी से विकास की ओर अग्रसर हैं. हमेशा उत्तम क्वालिटी के उत्पादन तैयार करना ही हमारा उद्देश्य है जिसे हम पूरा करते हैं अपने आर एंड डी विभाग की सहायता से.

भारत में उद्योगों के कदम तीव्र गति से विकास के पथ पर अग्रसर हैं. और अतुल राष्ट्र की उपलब्धियों में लगातार सहभागी रहा है.

THE ATUL® PRODUCTS LTD.

अतुल ३९६०२०, गुजरात, इंडिया, टेलेक्स : ०१७३ २३२ ATUL IN
फोन : ATUL ६१ से ६५. टेलीग्राम : TULA ATUL

महान पुरुषों की महान बातें

☐

ऐसे थे पूज्य बाबू !

एक बार पूज्य बापू आगरे से टूंडला जा रहे थे । मई का महीना था । भयंकर गरमी पड़ रही थी । वे थर्ड क्लास ही में सफर करते थे । एक सीट पर लेट गये । उन्हें नींद आ गयी । श्री महादेव देसाई उन पर पंखा झल रहे थे । थोड़ी देर बाद पंखे की हवा से उनको भी झपकी आने लगी और वे भी सो गये । पंखा कब उनके हाथ से छूटकर फर्श पर गिर गया, इसका उन्हें पता भी न चला । थोड़ी देर बाद जब उनकी नींद टूटी तो उन्होंने देखा कि बापू सीट पर बैठे हुए उन पर पंखा झल रहे हैं । ऐसे महान थे पूज्य बापू !

०००

शेख की हाजिरजवाबी

रसकालीन प्रसिद्ध कवि आलम की पत्नी 'शेख' भी बहुत सुंदर कविता करती थीं और साथ ही साथ वह बहुत ही हाज़िर-जवाब भी थीं ।

एक दिन बादशाह ने विनोद की मुद्रा में शेख से पूछा, 'क्या आप ही आलम (संसार) की बीबी हैं ?'

शेख ने तुरंत उत्तर दिया, 'हां जहांपनाह ! लेकिन मैं जहान (संसार) की मां भी हूं ।'

शेख के लड़के का नाम 'जहान' था ।

बादशाह उनकी हाज़िर-जवाबी से निरुत्तर हो गये ।

०००

चर्चिल का भाषण

एक बार चर्चिल कहीं किसी सभा में भाषण देने गये थे । उनके एक खुशामदी प्रशंसक ने उनसे कहा, 'देखिये मिस्टर चर्चिल, आप इतने लोकप्रिय हैं कि आपको सुनने के लिए पांच हजार लोगों की भीड़ यहां जमा है ।'

चर्चिल ने कहा, 'मेरे दोस्त, ये लोग मेरा भाषण सुनने नहीं आये हैं, महज़ तमाशा देखने आये हैं । अगर कल मुझे इसी जगह फांसी देने की घोषणा की जाये तो आप देखियेगा कि पांच की जगह पचास हजार की भीड़ इकट्ठा हो जायेगी ।'

०००

आचार्य शिवपूजन सहाय का हास्य

एक बार आचार्य शिवपूजन सहाय किसी साहित्य गोष्ठी में भाग लेने गये । आयोजन

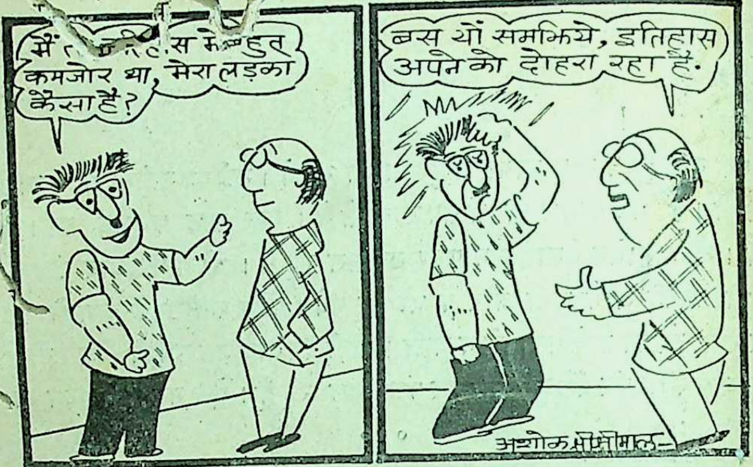
मैं [illegible] स में बहुत कमजोर था, मेरा लड़का कैसा है?
बस यों समझिये, इतिहास अपने को दोहरा रहा है.
अशोक

क बाद जलपान का प्रबंध था, वे चाय नहीं पीते थे। इससे प्याला हटवा दिया था। उ
कक्ष का प्रबंध एक देवीजी कर रही थीं। उन्होंने पूछा, 'चाय लाऊं?' आचार्यजी ने कह
'नहीं मैं चाय नहीं पीता', लेकिन देवीजी ने यह सोचकर कि शायद चाय में कोई त्रुटि
उनसे थोड़ी-थोड़ी देर बाद चाय के लिए पूछतीं और वे हर बार इनकार कर देते। ज
इनका इनकार और देवीजी का इसरार बढ़ता ही गया तो वे खीज उठे।

सातवीं बार जब वे उनके पास पहुंचकर बोलीं, 'चाय पीजियेगा?' तो शिवपूज
हायजी ने कहा, 'आप मुझे पिया ही समझ लीजिये।'

यह सुनने के बाद देवीजी का कहीं पता ही न चला।

ooo

सुकरात

सुकरात की बीवी बहुत कर्कशा थी। एक दिन सुकरात अपने शिष्यों के साथ कि
दार्शनिक विषय पर वार्तालाप कर रहे थे तो उनकी बीवी ने उन्हें छत पर से पुकारा
सुकरात अपनी वार्ता में इतने तल्लीन थे कि उन्होंने उधर ध्यान नहीं दिया। कई बा
जोर-ज़ोर से चिल्लाने पर भी जब सुकरात कुछ नहीं बोले तो उनकी बीवी ने क्रोध
आकर उनके ऊपर एक घड़ा पानी छत पर से डाल दिया।

शिष्यों को इस आचरण से रोष और आश्चर्य हुआ, लेकिन सुकरात ने हंसक
कहा, 'इसमें आश्चर्य की क्या बात है जो गरजता है वह बरसता भी है!'

संकलन : सुरेश सि

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुन्शी मार्ग, बम्बई - ४००००७
के लिए प्रकाशित तथा श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
बंबई—४०० ००४ में मुद्रित।

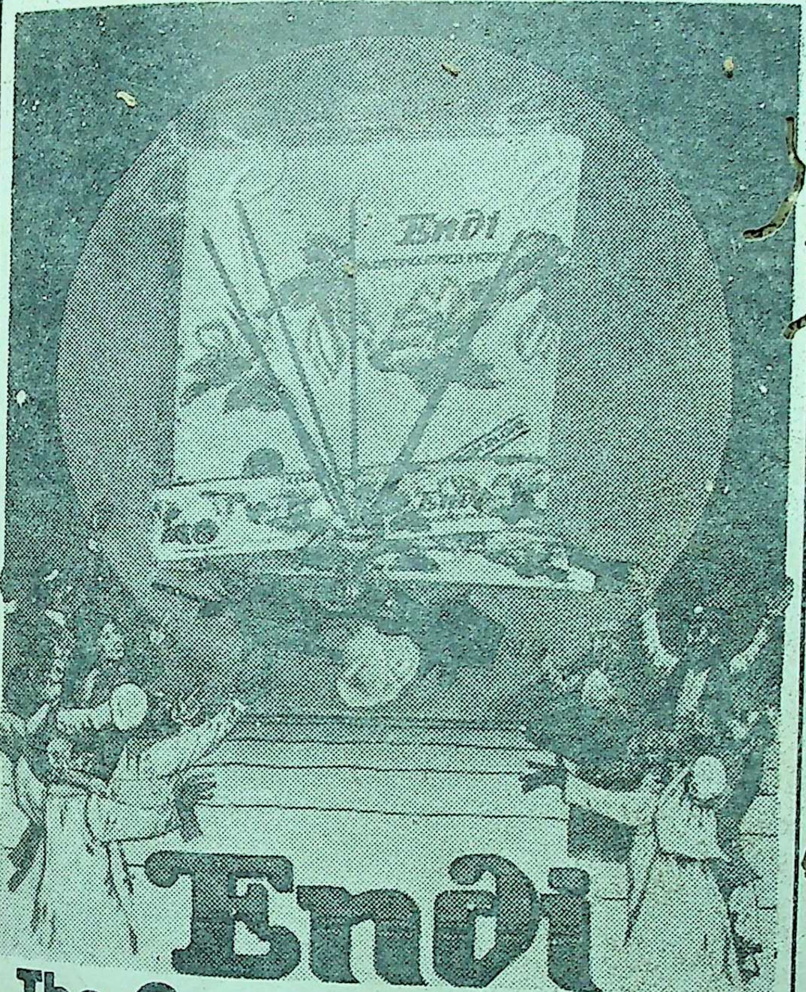

Endi

The Great and Graceful Fragrance

SEVEN IN ONE

MYSORE SUGANDHI
DHOOP FACTORY PVT. LTD.
13. Commercial Chambers, Yusuf Meharali Rd.,
P.O. Box 3178, Bombay 400 003.

Regd. No. BYW 2

ऐसा करने से मुझे क्या लाभ होगा ? यदि ऐसा न करूंगा, तो क्या होगा ? इस विचार से ही प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन को चलाना चाहिये ।

—महाभारत

यदि मैं पैसा बचाऊंगा नहीं तो मेरा क्या होगा, ऐसा विचार करो और शक्ति फायनेन्स में पैसा बचाओ।

शक्ति फाइनैन्स लिमिटेड

कार्यकारी चेयरमैन : एस. एन. पै

पंजीकृत कार्यालय : ४७५, ननजप्पा रोड,
कोईम्बतूर-६४१०१८

THE COMPANY THAT CARES
FOR YOUR INTEREST

पत्र-वृष्टि

नवनीत आपके हाथों पठनीय एवं रोचक निकल रहा है । विविधता के साथ विशिष्टता का अच्छा संयोग है ।

–रतनलाल जोशी (**आद्य संपादक : 'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट'**), **नयी दिल्ली**

०००

नवनीत ने कितने उतार-चढ़ाव देखे, किंतु हिंदी की एकमात्र डाइजेस्ट **नवनीत** में काल के थपेड़ों में खड़े रहने की अपूर्व क्षमता है । इसकी यही क्षमता जनवरी अंक में बखूबी व्यक्त हुई है । मुंशी-अंक के लिए बधाई । इस अंक में नवनीत ने उस ऊंचाई को छू लिया, जो यह अपने पूर्व-संपादक **सत्यकाम विद्यालंकार** के समय छूता रहा है । इसमें परिवेष्ठित सभी सामग्री बहुत अच्छी लगी, विशेष-रूप से इसकी कविताएं ।

–डॉ. रामशंकर द्विवेदी, उरई, उ. प्र.

०००

नवंबर अंक में 'आचार्य सत्यव्रत', 'कथा [illegible] राम की, यथा [illegible]' और कविता 'तुम नेह-भरी रस की बदली' (शम्भुशरण द्विवेदी 'बंधु') बहुत पसंद आयी।

–जगदीशचंद्र, नयी दिल्ली

०००

अच्छे कागज पर नये वर्ष का **नवनीत** देखकर मन प्रमुदित हो उठा । रवीसहाय शर्मा का 'नया वर्ष का नया प्रभात' और टंडनजी की 'नये साल की नयी सुबह' रचनाएं एवं मुंशीजी पर विपुल सामग्री बहुत अच्छी लगी । स्वप्निल तिवारी, आशाराम त्रिपाठी और अंजलि पांडेय की कविताएं भी मोहक हैं ।

–अरुण नागर, उरई, उ. प्र.

०००

नवनीत (हिंदी डाइजेस्ट) का नवीनतम अंक उत्सुकतावश खरीदा । पूरा अंक पढ़ने के बाद यह पत्रिका मेरी पहली पसंद बन गयी । इतिहास शलाका पुरुष परम श्रद्धेय मुंशीजी के बहुआयामी व्यक्तित्व का दर्शन कराने वाली यह पत्रिका वस्तुत: संग्रहणीय बन गयी है । कनाडा का अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन, 'नये साल की नयी सुबह' और 'श्रीकृष्ण व रासमालाओं का चित्रण' मनोहारी है । अंजलि पांडेय द्वारा रचित मुक्तक मन की गहराइयों में उतर गया । हार्दिक बधाई । हिंदी में इतनी उत्कृष्ट पत्रिका प्रकाशित करने के लिए आप बधाई के पात्र हैं ।

–केशवानंद शर्मा सारस्वत, इलाहाबाद

०००

नवनीत के [illegible] शताब्दी विशेषांक पढ़ने का सुअवसर प्राप्त हुआ । हृदय प्रफुल्लित हो उठा । व्यावसायिक पत्र-पत्रिकाओं की वर्तमान भीड़ में **नवनीत** की प्रत्येक रचना संपादक की परिष्कृत रुचि एवं उत्कृष्ट संपादन की परिचायक है ।

'मुंशीजी एवं उनका प्रेरक संदेश', 'मुंशीवाणी' एवं 'साधारण वेश असाधारण व्यक्तित्व' लेखों में विद्वान लेखकों द्वारा महान साहित्यकार, राजनेता एवं विचारक श्री क. मा. मुंशी के संबंध में प्रस्तुत वृत्तांत प्रामाणिक, तथ्यपूर्ण, प्रेरक एव हृदस्पर्शी हैं । धारावाहिक लेखमाला 'कथा राम की, व्यथा मानव की' ने भावविभोर कर दिया ।

रामपाल सिंह का लेख 'श्रीलंका में चुका रहा है भारत आजादी का मोल' सामयिक एवं तर्कसंगत है ।

–डा. राकेशकुमार शर्मा, जबलपुर, म. प्र.

०००

अन्य पत्रिकाओं से इतर **नवनीत** की एक अलग ही महत्ता है । अन्य पत्रिकाओं का भी मैं पाठक हूं, क्योंकि यह मेरी आदत है । लेकिन **नवनीत** को एक ही बैठक में लगभग पूरा पढ़ना मेरी रुचि व अंतस की तुष्टि है ।

जनवरी अंक संग्रहणीय के साथ ही हम जैसों के लिए मुंशीजी के कृतित्व-व्यक्तित्व की सामग्री 'गागर में सागर है ।' खास-तौर से 'श्रीकृष्ण और भगवद्गीता' विषयक आलेख युवावर्ग में एक नयी चेतना व शक्ति भरने में पूर्णतः सक्षम रहा।

–गगनबिहारी दाधीच, जैसल
३४५००१ (रा

०००

नवनीत मुंशी शताब्दी अंक (जन ८८) हाथ में आते ही मन व हृदय ल्लित हो उठा। सारी की सारी पत्रिका ही बैठक में पढ़ डाली । 'मुंशीजी उनका प्रेरक संदेश' 'एक बहुआयामी जी के अनेक आयाम' 'श्री क. मा. मुंशी जीवन-क्रम', 'साधारण वेश असाधा व्यक्तित्व' तथा 'महीयसी महादेवी अंतिम संदेश' प्रेरणादायक और गर्भित लेख हैं। इसी तरह आशा त्रिपाठी की कविता 'रोटी और हा बीच' व कहानियां, 'उसका बेटा', ' मन' रुचिकर लगीं।

–कुंवर जितेंद्र 'पथिक', बाजना,

०००

१९७९ से **नवनीत** का लगातार रहा हूं । हर माह के पहले सप्ता 'पुस्तक-घर' पहुंच जाता हूं। लेकिन बार निराश लौटना पड़ता है। पर यह बहुत कम उपलब्ध होती और जब मिल जाती है, तब ऐसा है, मानो बिछुड़ा हुआ मित्र मिल गया प्रारंभ में तो पढ़कर साथियों को को दे दिया करता था, जिनमें से मु से कोई पत्रिका वापस मिलती थी, अब संग्रह करने लगा हूं । मुंशी अंक में 'मुंशीजी का जीवन चक्र',

वाणी', 'कृष्ण और भगवद्गीता' यहां तक कि समस्त लेखन सामग्री उत्कृष्ट एवं सराहनीय है।

–छगन रामावत, जालोर, राजस्थान

०००

नवनीत का जनवरी '८८ अंक बहुत ही अच्छा रहा। 'नये साल की नयी सुबह' (कविता), 'श्रीकृष्ण और भगवदगीता', 'श्रीलंका में चुका रहा है भारत आजादी का मोल' तथा 'कथा राम की, व्यथा मानव की' आदि लेख अच्छे लगे।

–डा. शकुनचंद गुप्त, रायबरेली, उ. प्र.

०००

जनवरी' ८८ अंक पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। काफी समय से आपकी पत्रिका के बारे में सुन रखा था, लेकिन पत्रिका कहीं भी दृष्टिगोचर ही नहीं हुई थी। पढ़ने के बाद इसके बारे में जैसा सुना था, वैसा ही पाया। **नवनीत** सचमुच 'नवनीत' है। आशा है आप यही परंपरा बनाये रखेंगे। आपने जनवरी-८८ अंक भारत की महान विभूति एवं साहित्य जगत के एक महान चितेरे स्व. क. मा. मुंशी की जन्मशती पर विशेष अंक के रूप में प्रकाशित कर उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व को जन-जन के समक्ष प्रस्तुत करने का बड़ा ही सशक्त प्रयास किया है। उनके विषय में सभी लेख शिक्षाप्रद एवं भाष्य शैली बड़ी ही सरल है। साधुवाद स्वीकारें। **–सुनील अग्रवाल 'कुमार' रेवाड़ी-१२३४०१**

०००

लेखकों से निवेदन

प्रतिदिन **नवनीत** में प्रकाशनार्थ बहुत-सी डाक आती है। कई बार अनुरोध करने पर भी कुछ लेखक वापसी के लिए रचना के साथ पर्याप्त टिकट लगा लिफाफा नहीं भेजते। भविष्य में ऐसी रचनाओं को न लौटाया जायेगा और न उन पर प्रकाशनार्थ विचार ही किया जायेगा। **–संपादक**

नवनीत का जनवरी-८८ अंक देखा। दुख इस बात का है कि स्वतंत्रता के [illegible] वर्षों के बाद भी अपने देश में अंग्रेजी कैलेंडर के मुताबिक नया वर्ष जनवरी से मनाया जाता है और भारतीय पंचांग को उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता है। जबकि शक संवत अथवा विक्रम संवत हजारों वर्ष से इस देश में प्रचलित हैं। आशा है **नवनीत** नववर्ष के अवसर पर विशेषांक निकाल कर इस अभाव की पूर्ति करेगा।

–सुरेंद्रकुमार शर्मा, गोपालपुर

०००

नवनीत के जनवरी अंक में रवींद्र डी. पंड्या ने बागड़ प्रदेश के संत मावजी पर अच्छी जानकारी दी है। उनके लिखे चोपड़े भविष्यकथन के प्रामाणिक दस्तावेज हैं। वेणेश्वर के माघ मेले में चोपड़ों का लेखन मेलार्थियों को सुनाया जाता है। इनके लिखे साहित्य का प्रकाशन

(शेषांश पृष्ठ ११ पर)

नवनीत

संस्थापक कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल नेवटि
नवनीत : स्थापना १९५
संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ३७, अंक ३
मार्च १९८

पत्र-वृष्टि ... ...
तकियाकलाम कुंवर प्रेमिल
मासिक भविष्यफल : मार्च १९८८ पं. वी. के. तिवारी
मूर्तता से अमूर्तता की ओर अनुराधा वैद्य
प्रेम का रंग (कविता) डा. आशाराम त्रिपाठी
सुभाषित ... ...
दिल्ली के सुलतान : कुछ रोचक दास्तान रवींद्रनाथ त्यागी
पं. नेहरू की होली पी. डी. टंडन
गन्ना : एक औषधि डा. नारायणशंकर दीक्षित
दो ग़ज़लें नित्यानंद 'तुषार'
तीन कविताएं हरीश निगम
प्रार्थना ... ...
नंदगांव और बरसाने की होली मदन गोपाल शर्मा
एक अनूठा साहित्यिक व्यक्तित्व रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'
गीत कन्हैयालाल वाजपेयी
ब्रज की होली गजेंद्रनाथ चतुर्वेदी
क्यों फीके पड़ रहे हैं प्रेम-रंग ? (परिचर्चा) संयोजक : किंजल्क
तीन फागुनी रचनाएं शिवप्रसाद कमल
वेद और गायत्री राधाकान्त मिश्र
रश्मिरथी (कविता) कन्हैया सिंह सरोज

हास्य-व्यंग्य : संस्कृत के संग — अरविन्द कुमार 'साहू' — ६२
सच (कविता) — डा. अजय प्रसून — ६४
मैं (कहानी) — उषा भटनागर — ६५
कथा राम की व्यथा मानव की—१८ — हरीन्द्र दवे — ७६
तुलसी के प्रति — डा. एस. एम. एच. रिजवी 'पुण्डरीक' — ८१
बुआ (कहानी) — पूरनचंद बाली — ८२
वैज्ञानिक मापदंडों पर संगीत की भूमिका — ऋषिमोहन श्रीवास्तव — ८६
सांगोद का न्हाण — विवेक चक्षु — ८८
होली का एक मनोरंजक रूप यह भी ! — कमल सौगानी — ९४
होली (कविता) — ललितेश मिश्र — ९५
सुख और दुख (कविता) — गोविन्द पाण्डेय — ९६
हमारे अतीत को महकाता इत्र — अनुभव तिवारी — ९७
तीन लघु कविताएं — डॉ. प्रतीक मिश्र — ९९
रघुपति सहाय फिराक — प्रस्तुति : के. के. सिंह — १००
फागुनी सवैये — शिवचरण सिंह चौहान — १०७
भारत का तख्तेताऊस कहां छिपा है ? — . . . . — १०८
ग़ज़ल — हस्तीमल 'हस्ती' — ११६
मुंशी-साहित्य में राष्ट्रीयता के स्वर — बनवारीलाल पुरोहित — ११७
रिटायर होने का सुख (कहानी) — उमा शर्मा — १२०
तीन शताब्दी पूर्व की काबुल की होली — अनिता जैन — १२४
लूट लिया मेरा अनुराग (कविता) — सतीश आर्य — १२५
कॉमिक्स के पात्रों का संसार — हरि — १२६
भावना (कविता) — रामेश्वरदयाल दुबे — १२८
ग्रंथलोक — त्रिवेदी, पांडेय, अरुण, निशंक, महेंद्र, कमल — १२९
सुबूत (बालकथा) — डा. अशोक गुजराती — १३६
दो फागुनी नवगीत — बद्रीप्रसाद गुप्त 'आर्य' — १३८
सांस्कृतिक मंच — . . . . — १३९
फागुनी उपहार — जहीर कुरेशी — १४२
दो क्षण हंस न लें ? — डा. झूलन सिंह — १४४

आवरण-चित्र : कमलाक्ष शेणै
चित्र-सज्जा : ओके, शेणै, विनोद दुबे।
कार्यालय : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई-७ फोन : ८११४४६२

हास्य-व्यंग्य

तकियाकलाम

कुंवर प्रेमि

एक फिल्म 'शोले' में आपने कामेडियन जगदीप का यह तकियाकलाम—'मैं तो के रिया हूं कि पान खा लो' जरूर सुना होगा। कैसा जुबान-जुबान पर चढ़कर बोल रहा था।

उसी तरह लखनवी नवावों का 'पहले आप पहले आप' वाला तकियाकलाम भी क्या कम चर्चित हुआ है। मैं तो कह रहा हूं कि बोलचाली भाषा का वह कितना ही मरगिल्ला-सा वाक्य क्यों न हो अगर जुबान चढ़ गया तो जन-जन का वाक्य बन जाता है। किसी वेदांती के हाथ चढ़ गया तो महावाक्य ही बन जाता है, प्यारे।

अब देखिये ये शब्द कितने प्रचलित हैं—खामखां, माशाअल्लाह, लाहौल ब्लाकूवत, हाय अल्ला उर्दू के, तो गोरखधंधा, लाग-लपेट, लफंट, लंगड़ी (टंगड़ी) मार दी, चढ़ोत्तरी, नगदऊ, काढ़-मूढ़ हिंदी के। इनके प्रयोग बिना पढ़े-लिखे यानी अंगूठा-छाप से लगाकर डिग्रीधारी तक करते हैं।

कुछ तकियाकलाम तो ऐसे हैं जैसे उनके व्यक्तिगत यानी निजी महसूस होते हैं। पीढ़ी-दर-पीढ़ी उनका प्रयोग होता है। वंश परंपरा के अनुसार जमीन-जायदाद, माल-रुपया, असबाब के साथ ये भी उन्हें विरासत में मिले होते हैं। यानी, गोया, अलबत्ता, अमां यार, कबूतरखाना, मट गश्ती, बटेर, गुंडियाई, करमजले नसीहत आदि उनमें से कुछ हैं।

वैसे हर आदमी का कोई न कोई तकिय कलाम अवश्य होता है। यह अलग बा है कि भूल से दो तकियाकलामी मिल जा तो 'तकियाकलामी' युद्ध का-सा वात वरण बन जाता है। मुझे भी तो इ तकियाकलामों में रुचि है। तभी न 'खा दानी, गौरव, हिंदुस्तानी' आदि शब्द का प्रयोग दिन में कई-कई बार कर ले हूं। पत्नियां कई बार 'मेरे मायके वा कहती अघाती नहीं हैं।

इन दिनों 'यार' खूब चल रहा है मित्र मित्र से, सहेली सहेली से, गुरु चे से और बॉस अपनी स्टेनो से 'यार' कहक मुखातिब होते हैं। बड़ी आत्मीयता भ है इसमें। पत्नियां पति से, जीजा साले से, चलता-फिरता राही भी 'ये राह किधर जायेगा, यार' कहकर उसकी उ योगिता बढ़ाते हैं। अंग्रेजी वाले 'डियर' कहकर काम चलाते हैं। कुछ वाक्य जन वाक्य हो जाते हैं—तेल दिया, यह क्या नाटक है तथा ये क लफड़ा है आदि। कुछ लोग तो 'लफड़े लफड़ा' कह डालते हैं। मैं जब लि

बैठता हूं तो पत्नी मुझे 'घरघुस्सू' कहकर मेरा मजाक उड़ाने बैठ जाती है। कुछ स्त्रियां, शराब, सिगरेट, ताश-चौपड़ को 'सौतन हमार' मानती आयी हैं।

हमारे लेखक बंधु भी मसलन, अलबत्ता, कतरन, काट-छांट, कतरनी आदि उपयोग में लाते हैं। ये काट-छांटकर रचना छापने वा,ले रचना लौटाने वाले संपादकों को—हज्जाम, बंदरबांट तथा खाल उधेड़ू कहकर आक्रोश भुनाते हैं।

कर्मचारी अपने बॉस को बाजीगर, भांजीमार, मजमेबाज, धुरंधर या जानवर तथा स्त्री बॉस को चील, शैतान की नानी, तीसरी आंख कह डालते हैं। बॉस लोग भी अपने अधीनस्थों को 'चमचा, मक्खनबाज', आदि से विभूषित कर डालते हैं। दुबले-पतले बॉस को सींकिया और मोटी ताजी बॉस के लिए 'डबलरोटी' शब्द प्रयुक्त करते हैं।

पति के लिए कमाऊ बीवी दुधारू गाय होती है। कमाऊ के साथ सुंदर हुई तो 'हेमा' 'डिंपल' और कुछ ऐसी वैसी हुई तो 'ललिता पवार'। कमाऊ पति की पत्नी हाय जानी, हाय राजा, कहकर स्वागत करती है। उधर मटरगश्ती करने वाले पति 'उड़ाऊ-खाऊ', 'चिटंगबाज', 'चिड़ीमार' या 'चुरकट' समझे जाते हैं। एक बाई तो अपने उनको 'लो आ गये कादरखान' कहकर स्वागत करती है।

कोई किसी के पौरुष को ललकारता है तो 'कद्दू' कहता है। 'ये मुंह और मसूर की दाल', 'किसके मुंह में है इतने दांत' और 'बत्तीसी न तोड़ दूंगा' आदि तकियाकलाम भी आम हैं। परंतु ये नायक के गुस्सा होने पर ही धड़ल्ले से निकलते हैं।

महिलाओं को तूफानमेल, अफलातून, जंबो जैट, अक्ल की अंधी गांठ की पूरी, मदर इंडिया, कहना आम है तो लंबे पुरुषों को लंबू बनाम अमिताभ तथा ठिगनों को मुकरी कहा जाता है।

अब दूर क्यों जाते हैं। मेरे मित्र के मुंह से हरदम 'गिलहरी', 'छिपकली' शब्द निकला करता है। एक दिन रैकेट खेलती लड़कियों को इसी तकियाकलामी शब्द से क्या बुलाया कि शामत आ गयी।

कन्याओं को देखने से शांति मिलती है तो 'नेत्रलाभ', कोई मुस्कराई तो 'हरी झंडी', मन प्रसन्न हो गया तो 'तबियत गार्डन-गार्डन' का तकियाकलाम।

हमारे एक गुरुजी अक्सर 'हम साला, तुम साला' कहकर गुस्सा निकालते थे।

आप तो स्वयं समझदार हैं। अपने स्वयं के तकियाकलामों से तो आप भी परिचित होंगे। यहां तो नेताओं, दूरदर्शन, अखबार, आकाशवाणी के भी तकियाकलाम हैं। अब यह आप पर निर्भर करता है कि आप देर से या पलक झपकते समझ लें कि किसका तकियाकलाम है।

अच्छा अब मुझे भी माफ कर दीजिये। भला तकियाकलामों से कभी किसी का पिंड छूटा है जो मेरा छूटेगा। जय हिंद!

—४५८, मोती भवन, आमनपुर, जबलपुर

□

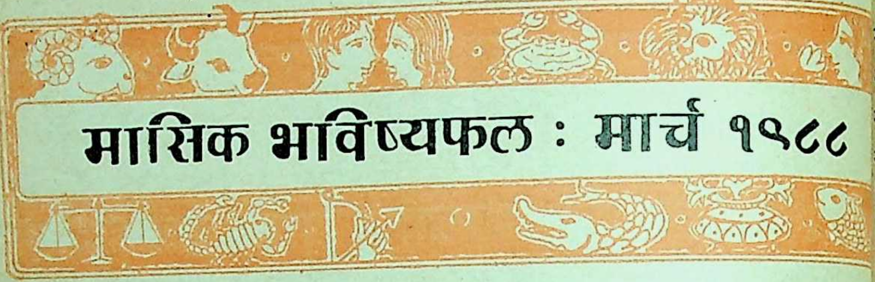

मासिक भविष्यफल : मार्च १९८८

□ पं. वी. के तिवारी, ज्योतिषशिरोम

मेष :

(२२ मार्च से २० अप्रैल)

१० मार्च तक पूर्ववत् अनुकूल परिस्थियों की सुखदानुभूति होगी । इसके उपरांत उत्तरोत्तर मासांत तक उलझन और बाधाओं से मानसिक कष्ट होगा । रोजगार में भाग्य साथ देता प्रतीत नहीं होगा । धैर्य व संयम का प्रतिफल उत्तम मिलेगा । परिवार में भ्रातृ पक्ष में विवाह संभावित है । आर्थिक निर्बलता रहेगी । व्यवसाय में लाभ अपेक्षित नहीं होगा । राजनीतिज्ञों के लिए व्यस्तता एवं विरोधी वर्ग द्वारा त्रस्तता का दौर रहेगा ।

वृष :

(२१ अप्रैल से २१ मई)

यह समय वर्ष का श्रेष्ठ समय सिद्ध होगा । मनोबल सुदृढ़ता एवं प्रयासों से प्रत्येक क्षेत्र में अनुकूलता एवं अपेक्षित परिणाम मिलेंगे । राजनीति में उत्कर्ष होगा । महत्वपूर्ण व्यक्तियों एवं सुखद समाचारों की प्राप्ति होगी । व्यवसाय में लाभ बढ़ेगा । विरोधी पराजित होंगे । प
वार सुख व भौतिक सुख में वृद्धि होगी

मिथुन :

(२२ मई से २१ जू

इस माह दांपत्य सुख में कमी प्र
होगी । ग्रह-सुख व भोजनादि में व्यति
रहेगा । निराशा एवं क्रोध की अधि
रहेगी । राजनीति में विरोधी मुखर
उठेंगे । अपेक्षित सफलता की संभा
क्षीण है । प्रशासकीय शक्ति का उप
नहीं हो सकेगा । २० मार्च के उप
उत्तरोत्तर मासांत तक अच्छे परिणा
प्रभाव की वृद्धि होगी । उल्लेखनीय
लता मिलेगी ।

कर्क :

(२२ जून से २३ जुल

शरीर एवं मानसिक कष्ट की स्थि
पूरे माह प्रतीत होती है । यात्रा
प्रबल है । व्यय की अधिकता रहे
राजनीतिक जीवन में आरोप एवं वि
धियों का प्रभाव बढ़ता प्रतीत हो

मुकदमे आदि में विपरीत स्थिति रहेगी। आत्मीयजनों से मनोनुकूल सहयोग का अभाव रहेगा। संतान के स्वास्थ्य के प्रति सतर्क रहें। व्यवसाय में जोखिम न लें।

सिंह :

(२४ जुलाई से २३ अगस्त)

आर्थिक अनुकूलता पूर्ववत रहेगी। व्यस्तता एवं यात्रा का दौर रहेगा। शरीर रोगाक्रांत रहेगा। नौकरी में उच्च अधिकारी की ओर से त्रस्तता में वृद्धि होगी। संतान-सुख में वृद्धि होगी। प्रयास व एकाग्रता के अपेक्षित परिणाम प्राप्त होंगे। व्यवसाय में आकस्मिक लाभ होगा। राजनीतिक पक्ष निर्बल रहेगा। अंततोगत्वा शत्रु-वर्ग मुंह की खायेगा।

कन्या :

(२४ अगस्त २३ सितंबर)

माह का पूर्वार्ध सुखद रहेगा। जबकि उत्तरोत्तर उत्तरार्ध में दांपत्य जीवन के सुख पर दुख के काले बादल मंडराते प्रतीत होंगे। भ्रातृ वर्ग से एवं कनिष्ठ वर्ग से विवाद संभावित है। बाह्य जीवन में प्रभाव बढ़ेगा। व्यवसाय में अपेक्षित लाभ नहीं होगा। नये निर्णय एवं जोखिम के परिणाम प्रतिकूल रहेंगे। कटुता एवं क्लेशदायक परिस्थितियों का सूत्रपात होगा। संतान से यश मिलेगा।

तुला :

(२४ सितंबर से २३ अक्तूबर)

ग्रह आपको प्रत्येक क्षेत्र में अनुकूलता प्रदान करेंगे। अवसर का लाभ उठाने में जुट जायें। राजनीति में अधिकार व दायित्व के साथ-साथ यशवर्धन के अवसर हैं। व्यवसाय में आकस्मिक लाभ होगा। उच्च एवं कनिष्ठ वर्ग से प्रशंसित होंगे। उलझे प्रकरण निपटेंगे।

वृश्चिक .

(२४ अक्तूबर से २२ नवंबर)

समस्याओं में वृद्धि होगी। व्यवसाय में सामान्य लाभ मिलेगा। परिजनों से पीड़ा व अवमानना के योग हैं। स्वास्थ्य बाधा एवं आर्थिक प्रतिकूलता बढ़ेगी। मानसिक पीड़ा एवं प्रयत्नों को असफलता का मुंह देखना पड़ेगा। राजनीति में पराभव की स्थिति रहेगी। वाद-विवाद से पृथक रहने के उत्तम परिणाम भविष्य में मिलेंगे। परिवार के सदस्य सहयोग देंगे।

धनु :

(२३ नवंबर से २२ दिसंवर)

माह का पूर्वार्ध पूर्ववत् आधिकारिक रूप से नियंत्रण एवं यशवर्धक रहेगा। परंतु उत्तरार्ध में घरेलू विवाद एवं स्थायी संपत्ति मानसिक सुख शांति पर प्रतिघात करेंगे। यात्रा का उद्देश्य पूरा होना संदिग्ध रहेगा एवं हानि के प्रति सतर्क रहें। दांपत्य जीवन में सुखोपभोग की संभावना क्षीण है। राजनीति में स्थिति सामान्यतः अनुकूल रहेगी। व्यवसाय में चिंता होगी। नये व्यक्तियों से मिलना होगा।

मकर :

(२३ दिसंबर से २० जनवरी)

अस्वस्थता एवं चोट के प्रति सजगता

बरतें । पत्नी का स्वास्थ्य भी ठीक नहीं रहेगा । यात्रा निश्चय ही कष्टसाध्य साबित होगी । मास के उत्तरार्ध में पूर्वोक्त के अतिरिक्त व्यक्तिगत प्रभाव वढ़ेगा । अनुकूल समाचार मिलेंगे । राजनीतिज्ञों को सुख, पद एवं प्रतिष्ठा के अवसर मिलेंगे । उलझे प्रकरणों का निपटारा इच्छानुकूल होगा ।

व्यवसाय में श्री-समृद्धि भी होगी । व्यस्तता बढ़ेगी ।

कुंभ :

(२१ जनवरी से १९ फरवरी)

इस माह धन-हानि अथवा व्यय के अवसर अधिक पेश आयेंगे । पत्नी-पक्ष से चिंता एवं सुखावरोध रहेगा । संतान पीड़ित रहेगी । थकावट एवं कार्य अधिकता रहेगी । प्रत्येक कार्य का निष्पादन विलंब से ही होगा । दृढ़ आस्था व मनोबल से सफलता मिलेगी । परिवार-सुख अपेक्षित नहीं मिलेगा । आकस्मिक धन लाभ होगा । राजनीति एवं व्यवसाय सामान्य रहेंगे ।

मीन :

(२० फरवरी से २१ मार्च)

लंबी यात्रा एवं कार्य-परिवर्तन की संभावना है । नये कार्य सौंपे जायेंगे । प
वार के सदस्यों का सहयोग नहीं मि
सकेगा । धन-लाभ में वृद्धि होगी । उपयो
योजना क्रियान्वित होगी । प्रभाव बढ़ेगा
तर्कशक्ति बढ़ेगी । विरोधी द्विविधा में प
जायेंगे । मन में उद्वेग रहेगा । महत्व
व्यक्ति से वांछित सहयोग मिलेगा । मन
वल बढ़ेगा । मासांत में अनुकूल समाचा
संभावित हैं ।

इस मास के व्रतादि

३ मार्च – होलिका दहन
११ मार्च – शीतला पूजन
१८ मार्च – सूर्य ग्रहण (मीन, मि
तुला, कुंभ राशि हेतु कष्टप्रद)
१५ मार्च – प्रदोष
१४ मार्च – पापमोचनी एकादशी
१८ मार्च – संवत्सरारंभ एवं नवरात्रि
प्रारंभ
२० मार्च – मत्स्य जयंती
२१ मार्च – चैत्र आरंभ
२६ मार्च – रामनवमी
२९ मार्च – कामदा एकादशी
३० मार्च – प्रदोष व्रत

–देवलोक कालोनी (सी. टी.
बैरागढ़, भोपाल, म.

☐

स्वाभिगान

रवींद्रनाथ ठाकुर की अंतिम बीमारी के समय डाक्टरों ने जब उनकी सुविधा
दृष्टि से उनके सिरहाने का तकिया हटाना चाहा तो उन्होंने मुस्कराते हुए कहा–
सिर को मैंने पूरे अस्सी बरस तक अभिमान से ऊंचा रखा, उसे ही ये डा
नीचा करने को तुले हैं।'

☐

(पृष्ठ ३ का शेषांश)

नहीं हो पाया, इसीलिए ये अपने अंचल विशेष तक सीमित रह गये, पर अब ऐसी बात नहीं है। मावजी के चोपड़ों को लेकर तो एक सचित्र ग्रंथ ही प्रकाशित हो गया है, जिसकी कीमत ही ५०० रु. है।

मावजी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर बागड़ के ही सुंदरलाल शर्मा ने शोधप्रबंध लिखकर गत वर्ष ही पी-एच. डी. की डिग्री ली है।

मावजी की सबसे बड़ी देन सामाजिक क्रांति रही। अछूतों को उन्होंने अपनाया। स्वयं उन्होंने चार विवाह तक अलग-अलग जातियों में इसीलिए किये और साद लोगों को, जो नीची जाति के समझे जाते थे, रासलीला प्रदर्शित करने का आशीष दिया। फलस्वरूप आज भी वेणेश्वर मेले में साद लोगों की रासलीला होती है।

–डा. महेंद्र भानावत, उदयपुर, राजस्थान

○○○

देश की सुविख्यात संस्था 'मानस संगम' कानपुर द्वारा संस्थापित तुलसी उपवन की उन मूर्तियों का आकर्षक चित्र दिसंबर-८७ के नवनीत के मुखपृष्ठ पर छापकर आपने निश्चय ही रामकथा के दिव्य संदेश को जन-जन तक पहुंचाया है। कानपुर नगरवासियों की ओर से हार्दिक धन्यवाद स्वीकार करें।

–डा. यतींद्र तिवारी, प्राचार्य, कानपुर, उ. प्र.

☐

With Best Compliments From :

DHIRAJ IRON & STEEL PVT. LTD.
GRAND FOUNDRY PVT. LTD.
JANGLA FXPORTS & IMPORTS LTD.
RELIABLE STEEL COMPANY

Works :
C–40, T. T. C.
Industrial Area,
Thana–Belapur Road
Village Pawne
P. O. : K. U. Bazar,
NEW BOMBAY 400 705
Tel : (0215) 682231/2
683126/8

Office :
31, Sindhi Lane
Nanubhai Desai Road
BOMBAY 400 004 (INDIA)

Tel : 364689 • 365536
381464 • 364047

Telex : 011–75268 DISL–IN

Manufacturers of Bright Steel Bars & Shaftings

मूर्तता से अमूर्तता की ओर

□ अनुराधा वे

जनवरी महीने की सुहानी शाम थी, बड़ा प्रसन्न वातावरण लग रहा था। सजे, संवरे तन और उत्सुक मन थामकर हम सब संगीत रसिक सभागृह में प्रतीक्षा कर रहे थे, अपने मनपसंद कलाकार गायक पंडित कुमार गंधर्वजी का।

कुमारजी महाराष्ट्र में ही नहीं, बल्कि सारे भारत में अपने संगीत विषय का ज्ञान, प्रभावी सुर और इस कला में उन द्वारा किये गये संशोधन से जाने जाते हैं। देश के कोने-कोने से उन्होंने कितनी ही धुनें, भजन, लोकगीत, ठुमरियां अपने कंठ में सजायी हैं।

उनका गायन मैं पहले भी सुन चुकी थी। लेकिन आज की सभा विशेष थी। अलग किस्म की थी। वे आज टप्पा-ठुमरी-तराना आदि गाकर संगीत का वैशिष्ट्य प्रस्तुत करने वाले थे।

तानपूरे लग गये। एक प्रभावी सुर गूंजने लगा। धीरे-धीरे सभा गायक के अधीन हो गयी। 'टप्पे' के बाद ठुमरी की बारी आयी। ठुमरी छेड़ी गयी। कहना मुश्किल था कि शब्दकाव्य श्रेष्ठ था या सुरों का भावचित्र/जसे सुरों की गगरियां भरकर गोपियाँ उन्हें छलका रही हों। हम रस में भीग रहे थे। कभी लग जैसे कोई सुंदर मोतियों के हार रहा हो, सुरों का अमृत कान पी रहे थे। सुरों पर झूम रहे थे। इसी भावविभ अवस्था में कुछ मिनटों का विश्राम रख 'तराना' प्रस्तुत होने वाला था।

मुझे अचरज इस बात पर हो रहा कि 'तराना' जैसा गायन महफिल इस ऊंचाई पर कैसे सजेगा? तराने केवल त, न, म, र-दिर, दिर ऐसे अ खास रागों तालों में बंधते हैं। उनमें न अर्थपूर्ण शब्द आते हैं, न कोई खास विष

कुमारजी अपने प्रभावी स्वर में ब लगे कि 'तोम तनन तनन देरेना' लकीरें बिना खास शब्दों के कैसे भावों व्यक्त कर सकती हैं, सिर्फ अक्षर भी प्रभावी हो सकते हैं। उन्होंने 'जौन शुरू किया। तराना रंग भरने लगा। सच्चे सुरों से एक सुरमंदिर बनता रहा था।

जब अचानक कभी कोमल स्वर फैल तो उसके आघात का पता तक न ल जैसे पेड़ की शाखा से पके पत्ते अना नीचे आते हैं। गायक के सुर में मधु थी और आर्तता, गहरी व्याकुलता प्र

हो रही थी ।

उस दिन 'तराना' मेरे मन में सिमट गया, उसने मेरे मन के एक कोने का अंधकार मिटा दिया । हम सामान्य लोग शब्द, भाषा, उनकी श्रेष्ठता, कनिष्ठता, शुद्धता पर बहस करते बैठते हैं, तब भूलते हैं कि भावों से भरे केवल अक्षर भी प्रयत्नपूर्वक रचित शब्दों की लकीरों के आगे निकल जाते हैं ।

यही अक्षर मूर्त प्रतिमाओं के आगे अमूर्त भावों को व्यक्त करने के सेतु बनते हैं । और कलाकार के साथ रसिकों को ले जाते हैं, उस अनाहत निरंकार निर्गुण की ओर ।

यह प्रयास 'क्षर' से 'अक्षर' तक, सगुण से निर्गुण तक ले जाने वाला था । पन्ने भर-भर के जो बातें नहीं बनतीं वह एक सुंदर स्वर या एक रेखांकन कर सकता है । भाव आनंद, सौंदर्य अनगिनत माध्यमों से हमारे चारों ओर प्रतीत होते रहते हैं । सिर्फ हमें सजगता से उन्हें अनुभव करना चाहिये ।

चाहे वह पैर चूमनेवाली मिट्टी हो, या नीले आकाश का आभास, फूल-पत्ते हों या अपनी ही मस्ती में खेलता बालक, सब आशा के आनंद के माध्यम हैं; जो हमारे मन को विशाल बनाते रहते हैं ।

उस महफिल ने जो दीप उजागर किया उसे मैं कभी न बुझने दूंगी ।

—भारतीय रिजर्व बैंक, भायखला, बंबई-८

प्रेम का रंग

प्रेम का रंग शुद्ध दे दो,
खेल लूं होली,
बड़ा उपकार मानूंगा ।

अभी जो बानगी के तौर पर
ली प्रेम की पुड़िया
भला घुलती नहीं क्यों ?
बात कुछ बनती नहीं क्यों ?
वर्ष भर की है प्रतीक्षा,
इस सलोने
रस भरे
फागुन महीने की
यों ही इसे जाने न दूंगा ।

तुम नहीं यदि दे सकोगे
प्रेम की पुड़िया
तो इन टेसुओं से माँग लूंगा
प्रेम के रंग में डुबो दूंगा

दनुजता को ।
भिगो दूंगा,
मनुजता को ।
प्रेम का यह रंग
अब छूटे नहीं ।
रंग तुम अपना रखो,
आसको यदि खेलने होली
बड़ा उपकार मानूंगा ।
बड़ा उपकार मानूंगा ।

—डा. आशाराम त्रिपाठी

आकाशवाणी, विधानसभा मार्ग, लखनऊ

विश्व है हमारा कैनवास...

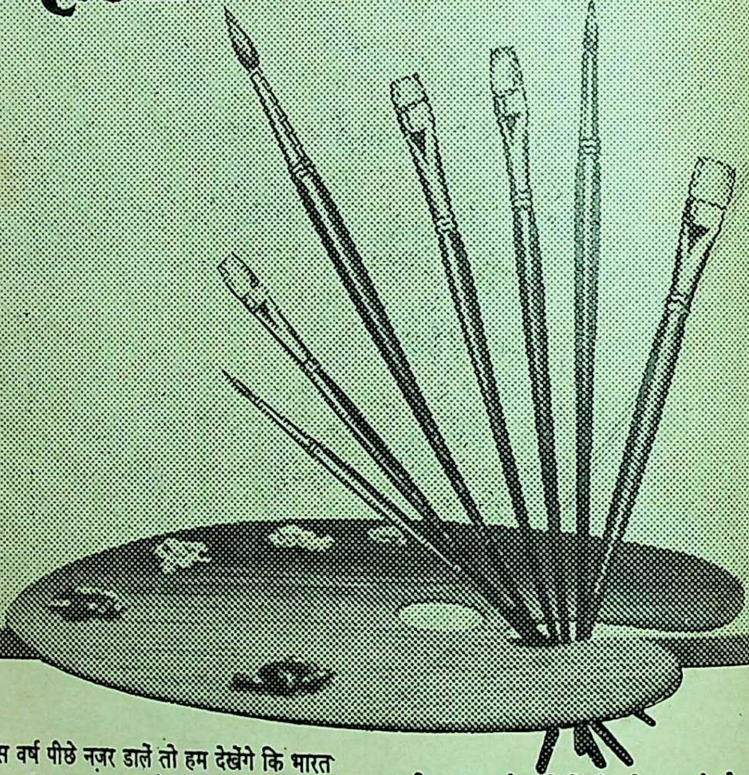

यदि चालीस वर्ष पीछे नज़र डालें तो हम देखेंगे कि भारत तब पूरी तरह विदेशी डाइज़ पर निर्भर था. और तब तक इस क्षेत्र में अतुल ने कदम नहीं रखा था. स्वदेशी डाइज़ के उत्पादन क्षेत्र में पहल हमने की... एक श्रद्धांजलि के रूप में, जो हमारे संस्थापक स्वर्गीय श्री कस्तूरभाई लालभाई की दूरदृष्टि को समर्पित थी.

आज अतुल न केवल डायस्टफ़ की विशाल श्रेणी का उत्पादन करते हैं बल्कि बुनियादी रसायन, डायस्टफ़ के माध्यम, फ़ार्मास्युटिकल्स तथा कीटनाशकों का उत्पादन करके कपड़े, चमड़े, कागज़, हाथ से बने कपड़े, पिग्मेंट, पेट्रोलियम, जूट तथा साबुन जैसे विविध उद्योगों में देश को आत्मनिर्भर बनाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे है अपनी १०० करोड़ की बिक्री और १० से भी अधिक करोड़ रुपये के निर्यात द्वारा तेज़ी से विकास की ओर अग्रसर हैं. हमेशा उत्तम क्वालिटी के उत्पादन तैयार करना ही हमारा उद्देश्य है जिसे हम पूरा करते हैं अपने आर एंड डी विभाग की सहायता से.

भारत में उद्योगों के कदम तीव्र गति से विकास के पथ अग्रसर है. और अतुल राष्ट्र की उपलब्धियों में लगातार सहभागी रहा है.

THE ATUL® PRODUCTS LTD.

अतुल ३९६०२०, गुजरात, इंडिया, टेलेक्स : ०१७३ २३२ ATUL

फोन : ATUL ६१ से ६५, टेलीग्राम · TULA ATUL

सुभाषित

◆

नमस्यामो देवान्ननु हतविधेस्तेऽपि वशगा,
विधिर्वन्द्यः सोऽपि प्रतिनियतकर्मैकफलदः ।
फलं कर्मायत्तं किममरगणैः किं च विधिना,
नमस्तत्कर्मभ्यो विधिरपि न येभ्यः प्रभवति ।।

देवतागण हमारे लिए वन्दनीय हैं, किन्तु वे भी विधि के वश में हैं, विधाता भी केवल प्रारब्धानुसार फल देता है और यह फल मनुष्यों के पूर्वसंचित कर्मानुसार ही शुभाशुभ होते हैं । अतः हमारे लिए यही उचित है कि देवता और विधाता को छोड़कर उन कर्मों को ही प्रणाम करें । क्योंकि कर्मों के प्रतिकूल विधाता भी कुछ नहीं कर सकता ।

ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमितो ब्रह्माण्डभाण्डोदरे,
विष्णुर्येन दशावतारगहने क्षिप्तो महासंकटे ।
रुद्रो येन कपालपाणिपुटके भिक्षाटनं कारितः,
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव गगने तस्मै नमः कर्मणे ।।

जिसके प्रभाव से ब्रह्मा इस ब्रह्माण्ड रूपी विशाल पात्र के उदर के मध्य में कुम्हार के समान काम कर रहा है, भगवान विष्णु मत्स्यादि दशावतार ग्रहण करने के महासंकट में पड़े हुए हैं । रुद्र कपाल हाथ में लिए भिक्षाटन कर रहे हैं और सूर्यनारायण नित्य प्रति आकाश में भ्रमण करते हैं, उस कर्म को हमारा नमस्कार है ।

नैवाकृतिः फलति नैव कुलं न शीलं
विद्याऽपि नैव न च यत्नकृताऽपि सेवा ।
भाग्यानि पूर्वतपसा खलु सञ्चितानि,
काले फलन्ति पुरुषस्य यथैव वृक्षाः ।।

शरीर की सुन्दरता, कुल, शील, विद्या और यत्नपूर्वक की हुई सेवा, ये कोई भी काम नहीं आते हैं । अवसर आने पर पूर्व संचित प्रारब्ध ही मनुष्य को वृक्ष की तरह नाना प्रकार के फल देते हैं ।

वने रणे शत्रुजलाग्निमध्ये महार्णवे पर्वतमस्तके च ।
सुप्तं प्रमत्तं विषमस्थितं वा रक्षन्ति पुण्यानि पुरा कृतानि ।।

जंगल, युद्ध, शत्रु, जल, अग्नि और महा समुद्र के बीच में अथवा पर्वतशिखर पर स्थित, सुप्त, प्रमत्त अथवा संकटग्रस्त मनुष्य की रक्षा केवल पूर्व जन्म के शुभ कर्मों से ही होती है ।

[भर्तृहरि कृत 'नीतिशतक' से]

◆

दिल्ली के सुल्तान कुछ रोचक दास्तान

☐ रवीन्द्रनाथ त्यागी

पिछले दिनों मैंने दिल्ली के बारे में कई किताबें पढ़ीं। पढ़कर लगा कि पहली बात तो यह है कि काफ़ी इतिहास लेखकों को इस बात का पता नहीं है कि दिल्ली का नाम दिल्ली जो पड़ा वह कैसे पड़ा। दूसरी बात यह है कि जब दिल्ली इतनी पुरानी और महत्वपूर्ण जगह है तो फ़ाह्यान, इत्सिंग, इब्नबतूता व हुएनसांग ने इसकी चर्चा क्यों नहीं की? दूसरे प्रश्न का निश्चित उत्तर किसी के पास नहीं है, मगर पहले प्रश्न का उत्तर मैं जानता हूं। काफ़ी लोगों ने बताने की कोशिश की है कि दिल्ली के लौहस्तंभ को 'किल्ली' कहा जाता था और बाद में उसे 'ढिल्ली' कहा जाने लगा। इसी 'ढिल्ली' का रूप बिगड़ते-बिगड़ते 'दिल्ली' पड़ गया। मगर यह धारणा गलत है, ठीक नहीं। सन उन्नीस सौ नौ में रेलवे बोर्ड से छपी और लाइब्रेरियन अबदुर्रशीद द्वारा लिखी 'तीर्थाटन प्रदीपिका' नामक मोटी पोथी से पता चलता है कि दिल्ली को दिल्लू नाम के हिंदू राजा ने ईसा से पचास वर्ष पहले बसाया था। 'दिल्लू' नाम के राजा का जिक्र अनेक इतिहास ग्रंथों में आता है, मगर उसके नाम के साथ 'दिल्ली' को जोड़ने का साहस सिर्फ़ रेलवे बोर्ड के लाइब्रेरियन अब्दुर्रशीद ने ही किया। मैं उन्हें दाद देता हूं और आगे बढ़ता हूं।

फ़िलहाल मेरे पास कई अच्छी किताबें हैं। पहली है डाक्टर परमात्माशरण द्वारा लिखित 'दिल्ली की कहानी', दूसरी है मेरे मित्र विष्णु खन्ना की लिखी 'दिल्ली बोलती है'। तीसरी है महेश्वर दयाल द्वारा लिखित और बहुचर्चित पुस्तक 'दिल्ली : मेरी दिल्ली'। बाकी दो किताबें हैं ख्वाज़ा हसन निज़ामी की लिखी 'मुगलों के अंतिम दिन' तथा राजेश्वर बाबू की लिखी 'मुगल वंश के डूबते सितारे'। इन सभी पुस्तकों में से मैं कुछ सुलतानों और शहंशाहों के रोचक प्रसंग आपको सुनवाता हूं, जो इस प्रकार हैं :

१–महमूद गज़नवी ने हिंदोस्तान के ऊपर कई हमले किये और करोड़ों रुपयों की दौलत लूटी। मगर सबसे ज्यादा कीमती जो चीजें थीं वे मात्र दो ही थीं। एक तो ऐसा पत्थर का अनमोल टुकड़ा था जिसके लगाने से गहरे से गहरा घाव भी ठीक हो जाता था। और दूसरी जो बेशकीमती चीज़ थी, वह एक पक्षी था। इस पक्षी में यह विशेषता थी कि यदि कभी भी ज़हर मिला खाना उसके सामने रखा जाता था, तो वह अपने आप रोने लगता था।

२–एक बार मुहम्मद गौरी अपने गुलामों में इनाम बांट रहा था। यकायक

उसने देखा कि एक खूबसूरत गुलाम इनाम की अशर्फ़ियां अपने पास रखने के बजाय दूसरों के बीच बांट रहा है । उसकी इस बेअदबी से बादशाह को बड़ा गुस्सा आया और उसने उस गुलाम को सज़ा देने से पहले स्पष्टीकरण का मौका दिया । गुलाम ने सिर झुका के कहा कि 'मुझे इस दुनिया में आपके करम के अलावा और कुछ नहीं चाहिये । आपका हाथ मेरे सिर पर रहे तो मुझे किसी और चीज़ की तमन्ना नहीं ।' गुलाम का जवाब सुनकर बादशाह का दिल पसीज गया । उसने उसे शाही अस्तबल का दरोगा बनाया और उसे अपने करीब रखने लगा । इस गुलाम का नाम कुतुबुद्दीन ऐबक था, जिसे बाद में चलकर बादशाह मुहम्मद गौरी ने दिल्ली का वायसराय बनाया । एक बार किसी हादसे में ऐबक खो गया तो सुलतान को इतना दुख हुआ कि वह रोने लगा और उसने खाना-पीना तक छोड़ दिया ।

३–अनेक सुलतानों और शहंशाहों को सफ़ेद हाथी का बड़ा शौक था । मुहम्मद गौरी ने जब कन्नौज पर चढ़ाई की तो वहां से उसे एक अदद सफ़ेद हाथी प्राप्त हुआ जिससे सुलतान को शब्दातीत हर्ष हुआ । चलते वक्त उसने इस नायाब जानवर को, कुतुबुद्दीन ऐबक को ही दे दिया । (कहते हैं कि अकबर महान के फ़ीलखाने में छः हज़ार हाथी थे, मगर वे सारे काले थे । अकबर सारी उम्र एक सफ़ेद हाथी हासिल करने के लिए तरसता रहा । शाहजहां के पास अलबत्ता एक सफ़ेद हाथी ज़रूर था, जिसे वह अपने मेहमानों को दिखाया करता था । कुतुबुद्दीन हमेशा उसी सफ़ेद हाथी पर सवार होता था । चौगान खेलते-खेलते घोड़े से गिरने के कारण जब कुतुबुद्दीन ऐबक की मृत्यु हो गयी तो इस सफ़ेद हाथी ने खाना-पीना छोड़ दिया और उसने ऐबक के ग़म में ही घुल-घुलकर अपनी जान दे दी ।

४–कई शहरों को जीतने के बाद मुहम्मद गौरी ने उनका नाम 'गौर' रखा जैसे कि गौर-बंगाल । ('गौर' शब्द बाद में चल कर 'गौड़' कहलाया ।)

५–पिछली शताब्दी तक लोग मानते थे कि कुतुबमीनार जो है, वह पास में बनी मस्जिद की ही एक मीनार है, जो नमाज़ पढ़ने के लिए विशेष रूप से बनवायी गयी थी । सर सैयद अहमद खान इस मत को नहीं मानते थे । बाकी तर्कों के अलावा उन्होंने यह भी पूछा : कौन-सा ऐसा मुल्ला होगा जो दिन में पांच बार अज़ान देने इतनी सीढ़ियां चढ़ता होगा ? कौन-सी थी वह मिट्टी जिससे वह बना था ? और अगर वह अजान देता भी होगा तो इतनी ऊंचाई से दी गयी अज़ान को सुनता कौन होगा ?

६–अल्तमश बड़ा दयालु और न्यायप्रिय बादशाह था । उसका हुक्म था कि मुसीबतजदा लोग रंगीन कपड़े पहनें चाहे वे फटे हुए ही हों । उनकी पोशाक बाकी से अलग होने के कारण, बादशाह उन्हें जल्दी पहचान लेता था, उनकी परेशानियां

सुनता था और तुरंत न्याय करता था । (मुसीबतज़दा लोग रंगीन कपड़ों का इंतज़ाम कैसे करते थे, इसका इतिहास में कोई जिक्र नहीं मिलता ।)

७–बादशाह और बख्तियार बाबा (जो कि एक फ़कीर थे) की आपस में नहीं बनती थी । गज़नी के बादशाह ने कहा कि अगर यह कव्वालियों की मजलिस बंद नहीं हुई तो मैं इस फ़कीर को मुल्क से निकलवा दूंगा । बाबा ने सुना, कुछ सोचा और फिर कहा कि देखता हूं, मुल्क से कौन पहले निकलता है । इसके थोड़े ही दिनों बाद बादशाह की मृत्यु हो गयी ।

८–बख्तियार बड़े भावुक फ़कीर थे । एक बार एक शेर सुना तो दिल को ऐसा चुभा कि बेहोश हो गये । सिर्फ़ नमाज के वक्त होश आता था, बाकी वक्त कव्वालों से वही शेर बार-बार सुनते थे और बेहोश से ही रहते थे । वही शेर सुनते-सुनते उनका दम निकल गया । (ऐसी मार्मिक शायरी अब नहीं लिखी जाती और न ऐसे गुणग्राहक श्रोता ही अब पाये जाते हैं ।)

९–सुल्तान रुक्नुद्दीन (रज़िया सुलतान के भाई जो अल्तमश के मरने के बाद गद्दी पर बैठे) आठों पहर चापलूसों, लफ़ंगों और बदमाशों से घिरे रहते थे । जब बाज़ार से निकलते थे तो सोने के सिक्के उछालते निकलते थे । पहले तो लोगों ने उसे गरीबनवाज़ समझा मगर शीघ्र ही यह भरम टूट गया । सब जान गये कि इसका दिमाग़ काम नहीं करता । बादशाह जब दरबार लगाता तो भांड़ डोम-डोमनियां और नाचने-गाने वा उसे घेर लेते । बड़े-बड़े अमीर, वज़ीर औ विदेशों के राजदूत बादशाह से मुलाका करने की प्रतीक्षा करते रहते, मगर बाद शाह को उनसे मिलने की फुर्सत नहीं थी

१०–एक सौदागर काफ़ी गुलाम बेच अल्तमश के दरबार में आया । एक छोड़कर बादशाह ने बाकी सारे गुला खरीद लिये । उस बचे हुए लड़के ने बाद शाह से पूछा कि 'आलमपनाह, ये गुला आपने किसके लिए खरीदे हैं ?' सुल्ता ने मुस्कुराकर कहा कि 'अपने लिए' । सुनने पर मामूली शक्ल वाला वह लड़ बहुत गिड़गिड़ाकर बोला कि 'तो ए गुलाम अल्लाह के नाम पर भी ।' बा शाह को उस साधारण सूरत वाले लड़के दया भी आयी और हंसी भी । बहरह वह गुलाम भी खरीद लिया गया । आखिरी गुलाम बाद में चलकर सुल्त बलवन बना ।

११–अमीर खुसरो ने अपनी ज़िंदगी ग्यारह सुलतान देखे थे । हिंदोस्तान तारीफ़ें गिनाते हुए उन्होंने यह भी लि है कि यह मुल्क इसलिए भी बड़ा है क्यों यहां अमीर खुसरो जैसा कवि रहता उनके गुणग्राहकों में किशलू खान नाम अमीर सबसे आगे थे । एक कवि का क उन्हें इतना पसंद आया कि अस्तबल सारे घोड़े उस कवि को दे दिये राजा भोज की तरह उन्होंने भी

को एक कलाम के एक-एक अक्षर के बदले में सोने का एक-एक सिक्का दिया था ।

१२–जलालुद्दीन खिलज़ी इतना 'सज्जन' व्यक्ति था कि जिस दिन उसका राज्याभिषेक हुआ और शाही सवारी निकली, उस दिन भी वह यह बात भूल गया कि वह बादशाह है । तख्त पर बैठने के बजाय वह अमीरों के साथ जा खड़ा हुआ और उनको सलाम झुकाई । उसे भांडों से इतना प्रेम था कि खुले दरबार में वह उनकी मजाक सुनता था और इतना हंसता था कि उसके पेट में बल पड़ जाते थे । न जाने कितने भांड काफ़ी बड़ी-बड़ी तनख्वाहों पर उसके दरबार में नौकर थे ।

१३–खिलजी वंश का अंतिम बादशाह था कुतुबुद्दीन मुबारक शाह । वह बिना किसी संकोच के साड़ी पहनकर दरबार किया करता था । कभी-कभी तो नंगा होकर दरबार में नाचा भी करता था। राज्य संचालन में बहस-मुबाहिसों की जगह सारा काम अश्लील इशारों से लिया जाता था ।

१४ – मुहम्मद तुगलक ने हकूमत करने के लिए मिस्र के खलीफ़ा से इज़ाजत मांगी । आज्ञा पत्र लेकर खलीफ़ा का जो दूत सुलतान के दरबार में आया, उसे सारी चीज़ें सोने और चांदी की ही दी गयीं । घोड़ों के नाल तक सोने के थे । सारा समान लेकर जब वह दूत मिस्र के लिए वापस हुआ तो कुछ डाकुओं ने उसकी सारी संपत्ति छीन ली और वह रोता-पीटता हुआ फिर दिल्ली आया । उसकी दास्तान सुनकर मुहम्मद तुगलक बहुत हंसा और उसे दुगुनी संपत्ति देकर विदा किया ।

बादशाह को इस बात का कोई ग़म नहीं हुआ कि उसके राज्य में कानून और व्यवस्था की हालत इतनी खराब थी । कहते हैं कि मुहम्मद तुगलक न्याय पालिका का बहुत आदर करता था । एक लड़के ने काज़ी की अदालत में शिकायत दर्ज की कि बादशाह ने उसे बिना वजह पीटा है । अदालत ने बादशाह को तलब किया । फ़ैसले के मुताबिक उस लड़के ने बादशाह को इक्कीस कोड़े लगाये, जिसके कारण बादशाह की टोपी अदालत में ही गिर पड़ी ।

१५ – फ़ीरोज़शाह तुगलक के जमाने में घूस खूब चलती थी । एक बार एक विशिष्ट सिपाही इस बात को लेकर बहुत परेशान हो गया कि हालांकि वह घुड़सवार है पर उसके पास घोड़ा नहीं है । बात बादशाह के कानों तक पहुंची । उस परिचित सिपाही ने बताया कि यदि उसके पास रिश्वत देने के लिए सोने का एक सिक्का होता तो यह सारे मामले को उसी तरह संभाल सकता था जैसे कि बाकी लोग संभाल रहे थे । बादशाह को गुस्सा नहीं आया, और अफ़सोस भी नहीं हुआ । वह हंसा और उसने उस सिपाही को एक सिक्का देकर कहा कि जाओ तुम भी मुंशी को रिश्वत दो और अपनी परेशानी दूर करो । घोड़ों की सालाना गणना के समय ऐसी घूस जम कर

चलती थी।

१६ – दिल्ली के बाज़ार में एक फकीर आवाज़ लगा रहा था कि कोई है जो दो हज़ार सोने के सिक्के मेरी झोली में डाल दे और दिल्ली का तख्त ले ले (एक फ़कीर को इतने सोने की क्या ज़रूरत थी, इस बात पर विचार किया जा सकता है)। बहलोल लोदी ने अपने चाचा से (जो उसके श्वसुर भी थे) दो हज़ार सिक्के लिये और फ़कीर को दे दिये। फ़कीर ने उसके सिर पर हाथ रखा और कहा कि 'जा, बेटा, तुझे दिल्ली का राज दिया।' बहलोल लोदी बादशाह तो बना मगर उससे पहले वह घोड़ों का सौदागर रहा। उसी दौरान उसने एक बार काफ़ी घोड़े दिल्ली के (सैयद) सुलतान को बेचे। बादशाह ने हिसाब चुकता करने के संदर्भ में कहा कि 'बहलोल, मैं सिर्फ़ नाम का बादशाह हूं क्योंकि मेरा खज़ाना खाली है। मैं तुम्हें रुपया नहीं दे सकता, हां अलबत्ता यह इजाज़त ज़रूर दे सकता हूं कि तुम मुल्क में किसी भी एक परगने को लूट लो और घोड़ों की कीमत वसूल कर लो।' बहलोल ने आज्ञा का पालन किया और उसने कई परगने लूटे।

१७ – सल्तनत मिलने से पहले पठान लोग इतने 'पिछड़े हुए' थे कि वे जब अफ़गानों के महल में जाते थे तो अपने जूते बगल में दबा लेते थे, ताकि उन्हें कोई चुरा न ले। महलों में बिछे कालीनों के टुकड़े काटकर वे कहा करते थे कि 'वाह कितना बढ़िया ऊनी कपड़ा है; हम तो इस टोपियां बनवाएंगे।' जब उन्हें इत्र दि जाता था तो वे उसे हथेली पर रख चाटा करते थे और पान तो इस त खाते थे जैसे कि बकरियां खाती हैं।

१८ – हुमायूं एक निहायत खुशमिज़ आदमी था। जब देश के कोने-कोने बग़ावत फैल रही थी तब भी उसकी विनो प्रियता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा था। दिन की बात है कि वह खानज़दा बेगम साथ ज़रबख्त के शामियाने के नीचे था, जिसमें से मोतियों की लड़ें लटक थीं। सोने के सिक्के उछाले जा रहे थे दरबार के बहुत से अमीर उन्हें उठाने लगे थे। हुमायूं की विनोदप्रियता ने मारा। उसने अमीरों को भिगोने के फ़व्वारों का रुख़ उनकी दिशा में दिया। भीगे कपड़ों में अमीर सिक्के कर भागने लगे और उनकी इस हरक बादशाह बहुत देर तक हंसता रहा।

१९ – शेरशाह बहुत इंसाफ़ पसंद शाह था। एक बार उसका शहजादा आ खां घोड़े पर सवार होकर बाज़ार से रहा था। उसने एक सौदागर की बीवी को छत पर नहाते देखा और उ तरफ पान का बीड़ा फेंका। सौदाग बादशाह से फ़रियाद की। शेरशा हुक्म दिया कि वह सौदागर भी शह की बेग़म को उसी नज़र से देखे औ भी उसकी दिशा में पान का बीड़ा फें

२० – मिर्ज़ा अब्दुर्रहीम खान

अरबी, तुर्की, फ़ारसी, संस्कृत और हिंदी के अच्छे ज्ञाता थे। वे बड़े रहमदिल थे और एक कहावत के अनुसार साल भर की कमाई को एक दिन में ही उड़ा दिया करते थे। जब उन्हें पता चलता कि कोई शरीफ़ आदमी बुरे हाल में है और वह लज्जा के मारे किसी से कुछ मांग भी नहीं सकता, तो वे उसकी घर बैठे दावत कर दिया करते थे। पुलाव-ज़र्दे के थाल भिजवाये जाते थे, जिनमें चावलों की पर्त के नीचे अशर्फ़ियां भरी रहती थीं। (एक वे दिन थे और एक आज के दिन हैं कि अगर कोई वैसा करना भी चाहे तो पुलिस अशर्फ़ी तो अशर्फ़ी, उन चावलों तक को गुम कर दे और उल्टे उस भद्र पुरुष पर चोरी का इल्ज़ाम लगाये।)

२१–एक बार एक बड़े घर की रूपवती स्त्री खानखाना पर आसक्त हो गयी। उसने एक वृद्धा स्त्री के हाथों रहीम साहब के पास खबर भिजवायी कि वह भी उनके सहयोग से उनके जैसा ही पुत्ररत्न चाहती है। रहीम ने सारी दास्तान सुनी और उस वृद्धा से कहा कि अगर तुम्हारी मालकिन को मेरा जैसा बेटा चाहिये तो उनसे कह दो कि आज से मैं उनका बेटा और वे मेरी मां। उन्हें और क्या चाहिये? पला-पलाया बेटा मिल रहा है जो हर महीने उनके पास अशर्फ़ियां भेजता रहेगा। (उस नारी रत्न के हृदय पर इससे क्या गुज़री होगी, उसका आप अनुमान खुद ही लगाइये।)

२२–एक बार शाहजहां शिकार खेलते-खेलते रास्ता भूल गया और साथियों से बिछुड़ गया। किसी तरह वह एक ब्राह्मण की कुटिया पर पहुंचा और पीने के लिए पानी मांगा। प्यासा बादशाह ओक लगाकर डगडगाकर पानी पीने लगा। पानी की धार धीमी करने के लिए ब्राह्मण ने पानी के बर्तन में घास डाल दी। बादशाह ने गुस्से में कहा कि यह क्या करते हो? ब्राह्मण ने रूखेपन से उत्तर दिया कि मैं तुम्हारे साथ ठीक वही कर रहा हूं जो मैं अपने बैलों के साथ करता हूं। जब वे शाम को थके-मांदे आते हैं तो बहुत प्यासे होते हैं। अगर मैं घास न डालूं तो वे सारा पानी गटागट पी जायेंगे, जिससे उनका पेट फट जायेगा। बादशाह झेंप गया और धीरे-धीरे पानी पीने लगा। इतनी ही देर में उसके साथी भी आ पहुंचे। ब्राह्मण घबरा गया, मगर बादशाह ने उसकी पीठ ठोंकी और इनाम में सोने के सिक्के दिये।

२३–शाहजहां ने जब लाल किला बनवाना शुरू किया तो वह जल्दी में था। उसने 'मीर इमारत' को हुकुम दिया कि किला फ़लां तारीख तक तैयार हो जाना चाहिये। उधर जो कारीगर थे (उस्ताद हासिद और उस्ताद हीरा) वे किले को किले की तरह बनाना चाहते थे। बहरहाल स्थिति यह रही कि नींव खुदने के बाद दोनों कारीगर लापता हो गये। उनकी गिरफ्तारी का वारंट भी जारी हुआ पर

नतीजा कुछ नहीं निकला । एक दिन ऐसा हुआ कि दोनों कारीगर अपने आप ही बादशाह के सामने पेश हो गये । डांट खाने के बाद वे दोनों बोले कि 'जहांपनाह हम बेकसूर हैं। हम आपके नमकहलाल और वफ़ादार बंदे हैं। हम नहीं चाहते थे कि किले की इमारत किसी भी तरह बोदी रह जाये । इसी कारण हमने नींवों को खुदा छोड़ा और खुद अफ़गानिस्तान चले गये । अब किले की नींव पक्की हो चुकी है । गरमी आयी, बरसात आयी, जाड़ा पड़ा–नींवों को जहां से झूमना था, झूमीं और जहां से सिकुड़ना था सिकुड़ीं । जो कुछ होना था, हो लिया । मालिक ने चाहा तो अब लाल किला ऐसा बनेगा कि हज़ारों बरस बाद भी लोग यही कहेंगे कि यह कल ही बना है। हुज़ूर सारी बात पर ग़ौर फ़रमायें और जो सज़ा मुनासिब समझें वो दें।' शाहजहां ने सारी बात सुनी और दोनों उस्तादों को शाही खिलअत दी। (ज़ाहिर है उन दिनों के मीर इमारत और ठेकेदार ईमानदार होते थे । एक आज . . .)।

२४ – जामा मस्जिद जब बनकर तैयार हुई तो ईद का त्योहार आ पहुंचा । बादशाह ने मीर इमारत को हुकुम दिया कि ईद की नमाज़ वे जामा मस्जिद ही में पढेंगे । काम टेढ़ा था । हज़ारों मन मलबा इर्द-गिर्द पड़ा था । जगह-जगह पाड़ें बंधी थीं । मस्जिद की सफाई आसान न थी । बहरहाल जब यह बात बादशाह के कानों तक पहुंची तो उसने ढिंढोरा पिटवा दि कि जो चीज़ जिसको मिले वह उसे उठा ले जाये । फिर क्या था, शहर वाले पड़े । देखते-देखते मस्जिद की सफ़ हो गयी। (अगर वैसी कोई इमारत आ कल बनवायी जाती तो सामान उठाने लिए सरकारी आज्ञा की ज़रूरत ही न पड़ती । इस आजाद मुल्क के जिम्मेद शहरी वैसी ही सारी संपत्ति उठाकर अ घर ले जाते ।)

२५ – शाहजहां के दरबारे-आम हर एक को आने की छूट थी । एक दि एक वृद्धा आयी और उसने बादशाह शिकायत की कि उसका पति तीन ल रुपया छोड़कर मरा था, पर उसका बे है कि सारी रकम खुद ही हड़पना चाह है । बादशाह ने हुक्म दिया कि एक ल रुपये लड़के को दिये जायें, एक ल रुपये वृद्धा को दिये जायें और एक ल रुपये सरकारी ख़ज़ाने में जमा कर दि जायें । वृद्धा ने कहा कि हुज़ूर इंसाफ़ आपने किया पर उसकी जो कीमत वह ज्यादा रही । बादशाह झेंप गया औ उसने सारा रुपया मां-बेटे को बराबर दिया ।

२६ – एक दिन दरबार में एक मु दौड़ा-दौड़ा आया और कहने लगा उसकी लौंडी को हकूमत का एक सिपा बहकाकर ले गया है और वापिस न कर रहा है । सिपाही तलब किया तो उसने बताया कि लौंडी उसकी

मुंशी की नहीं । लौंडी ने भी यही कहा । बादशाह ने हुक्म दिया कि हमारा कलमदान इस लौंडी को दो और उससे कहो कि उसे धोकर लाये । लौंडी जब कलमदान लेकर आयी तो बादशाह ने कहा 'इस सिपाही को कोड़े लगाओ । लौंडी, इसकी नहीं बल्कि मुंशी की है । जिस सलीके से इसने कलमदान को, दावातों को और कलमों को साफ़ किया है, वह काम एक मुंशी की लौंडी ही कर सकती है, सिपाही की लौंडी नहीं । (अगर ऐसी परीक्षा इन दिनों ली जाती तो स्थिति यह रहती कि लौंडी शाही कलमदान के साथ ग़ायब मिलती ।)

२७ – जहांदारशाह बादशाह बना तो उसकी रखैल भी (लाड कुंवर) शाही महल में आकर रहने लगी । वैसे भी उसका सारा वक्त डोम, डोमनियों, भांडों और कलावंतों के साथ ही बीतता था । जब गुस्से में आकर वजीर ने बादशाह से अर्ज़ किया कि मैं सारे अमीरों को सारंगियां बंटवा रहा हूं और उनकी तलवारें नाचने-गाने वालों को दिलवा रहा हूं ताकि अगर कोई मुसीबत आये तो वे सल्तनत की हिफ़ाज़त कर सकें, तो बादशाह झेंप गया और उसने नाचने-गानेवालों को ऊंचे पद देने बंद कर दिये ।

२८ – लाड कंवर अक्सर बादशाह को रथ में बिठलाकर दिल्ली के कलालखानों में ले जाती थी । एक बार तो दोनों ने शहर के एक शराबघर में इतनी शराब पी कि दोनों बेहोश हो गये । किले में वापिस आये तो लाड कंवर की सहेलियां उसे संभालकर महलों में ले गयीं । रथ रथखाने में खड़ा किया गया और बैल खोलने के बाद रथवान जो था वह आराम करने चला गया । किसी को यह खयाल ही नहीं रहा कि बादशाह सलामत रथ ही में बेहोश पड़े रह गये । सुबह होने पर बादशाह की खोज शुरू हुई और यह वाकया सारे शहर को सकते में डाल गया ।

२९ – फ़र्रुखसियर के बाद दिल्ली के तख्त की हालत यह रह गयी थी कि सैयद भाइयों ने भरे दरबार में कहा था कि वे जिसके सिर पर जूती रख देंगे, वही बादशाह बन जायेगा । मुगल साम्राज्य के विनाश का यह चरमोत्कर्ष था । ये दोनों सैयद भाई मेरठ ज़िले में स्थित कस्बा जानसठ के थे । इनकी जूती कई बादशाहों के सिर पर ठीक फ़िट हुई ।

३० – मुहम्मदशाह रंगीले के दरबार में अमर बेगम एक मशहूर नाचने वाली थी । उसकी प्रतिभा मौलिक व अप्रकाशित थी । उसने अपने निचले शरीर पर पाजामे की चित्रकारी करा रखी थी । वह जब किसी मजलिस में जाती और नाचती तो कोई यह नहीं कह सकता था कि वह नंगी है । उसने अपने बदन को इस तरह गुदवा रखा था कि लगता था जैसे कि वह कमख्वाब के बूटेदार कपड़े पहने हो ।

३१ – बादशाह मुहम्मदशाह वाकई रंगीला था । उसने बांकों और ज़नानों की

एक अलग पलटन बनवायी थी। ये लोग लड़ते तो वीरों की तरह थे मगर तलवार का हाथ मार कर 'उई' ज़रूर पुकारते थे। इनकी साख बहुत थी। अगर इन्हें कभी रुपये-पैसे की ज़रूरत पड़ती तो ये लोग अपनी मूंछ का बाल तक गिरवी रख सकते थे। एक दिन ऐसा हुआ कि एक बांके की देखा-देखी एक बदमाश भी बांके का स्वांग भर के महाजन की दूकान पर चला गया और मूंछ के एक बाल के बदले अशर्फ़ियां उधार मांगने लगा। महाजन को कुछ शक हुआ और उसने कहा कि बांके मियां, यह बाल ठीक नहीं है, दूसरा दो। इतना सुनने पर उस बदमाश ने मूंछ के कई बाल तोड़े और महाजन को पेश किये। महाजन ने उसे बुरा-भला कहा और बताया कि तुम लपाड़िया हो। अगर तुम असली बांके होते तो दूसरा बाल मांगने पर मेरा सिर अब तक नाली में तड़पता हुआ मिलता।

३२ – मुहम्मदशाह के शासनकाल में व्यवस्था इतनी अच्छी थी कि बारह महीने तक वेतन न मिलने के कारण शाही खजांची ने खुद खज़ाने में से चोरी कर ली थी और उसकी दास्तान सुनने पर बादशाह ने उसे माफ़ भी कर दिया था।

३३ – जब नादिरशाह ने दिल्ली फ़तह कर ली तो उसके उपलक्ष्य में लाल किले में एक उत्सव हुआ, जिसका सारा खर्च बादशाह मुहम्मदशाह को उठाना पड़ा। एक हसीन और अलबेली नाचने वाली को देखकर नादिरशाह ने कहा 'अगर हिंद की इस परी की शादी किसी विलायती मर्द से क दी जाये तो बच्चा कैसा होगा?' महफ़िल में बैठे हुए एक भांड ने तुरंत उत्तर दिया कि 'हुज़ूर गुस्ताखी माफ़, नादिर होगा।' (फ़ारसी में नादिर का अर्थ विचित्र होता है) नादिरशाह बहुत खुश हुआ।

३४ – मुहम्मदशाह रंगीले ने अपनी रंगरेलियों में तो करोड़ों रुपये फूंके, पर अपने बेटे अहमदशाह को पैसे-पैसे के लिए तंग रखा। नतीजा वही हुआ जो होना था। गद्दी पर बैठते ही अनाड़ी शहंशाह ने पै को पानी की तरह बहाना शुरू कर दिया। नया बादशाह वैसे भी बहुत खुशमिज़ा किस्म का आदमी था। जिन दिनों अहमदशाह अब्दाली मुल्क पर हमला करने क सोच रहा था, उन दिनों बादशाह अहमदशाह दरबार में बच्चों से खेला करते थे। उसने अपने एक साल के शहज़ादे क काश्मीर का सूबेदार नियुक्त किया औ पंद्रह साल के एक और शहज़ादे को उसक नायब नियुक्त किया। 'दीवाने खास' म दूधपीते और घुटनों के बल चलते काफ़ शाहज़ादों को बाकी सूबेदारियां बांटी गयीं। शाही नौकरों ने उन शाहज़ादों को गोद म लिया और बतौर शुक्रिया के उनके हाथ उठवाये। इस तमाशे को देखकर बादशाह हंसी के मारे लोटपोट हो गया। बादशाह के इस 'भोलेपन' को लेकर पब्लिक गली कूचों में कहा करती थी : 'अहमदशाह अलबेले : गुड़-खांड के ढेले!'

३५ – खुशमिज़ाज़ होने के साथ-सा

नया बादशाह डरपोक भी बहुत था। लड़ाई का नाम सुनते ही वह कांपने लगता था। एक बार ऐसा हुआ कि वह अपनी बेगमों के साथ कहीं से दिल्ली आ रहा था कि सिकंदराबाद के पास मराठों ने शाही सवारी को घेर लिया। बादशाह अहमदशाह सिर पर पैर रखकर ऐसा भागा कि उसे बेगमों तक की सुध न रही। मराठों ने शाही सवारी लूट ली।

३६ – बादशाह की मां कुदासिया बेगम अपने को नूरजहां से कम नहीं समझती थी। अपनी वर्षगांठ पर उसने दो करोड़ रुपये खर्च किये थे, जबकि शासन की यह स्थिति थी कि शाही फ़ौज ने तनख्वाह न मिलने के कारण एक महल की चांदी उखाड़कर दो लाख की बेची थी।

३७ – मुगल बादशाह हमेशा से अपना काफ़ी वक्त हम्मामों में बिताया करते थे। जब सर टामस रो आगरा आया था तो उसकी मुलाकात भी शहंशाह जहांगीर से दरबारी हम्माम में ही हुई थी। शाही हम्मामों में बेहद खास आदमी ही घुस सकते थे और उसका दर्जा 'दीवाने खास' से भी कहीं ऊंचा था। बाद के मुगल सम्राट तो सरकारी काम-काज सिर्फ़ हम्माम में ही करने लगे (आज़ादी के बाद कई मंत्री-विशेष ऐसे थे, जो सारी सरकारी फ़ाइलें अपने बाथरूम ही में निबटाया करते थे। एक ऐसे देसी नरेश का भी जिक्र दीवान जरमनीदास ने अपनी पुस्तक 'महाराजा' में किया है।)

३८ – वैभव के इस युग में एक विदेशी अमीर ने दिल्ली दरबार की देखा-देखी शतरंज का सारा नक्शा अपनी छाती पर गुदवा रखा था। वह पलंग पर पड़ा हुक्का गुड़गुड़ाता रहता था और हसीन बांदियां उसकी छाती पर मोहरे बदलती रहती थीं।

३९ – अंतिम मुगल सम्राट बहादुरशाह जब गद्दी पर बैठे तो उनकी उम्र साठ वर्ष की हो चुकी थी। वे गद्दी पर बैठने के लिए बेचैन थे। शाही नजूमियों ने बहुत-बहुत मना किया और कहा कि आप दिन निकलने तक तख्त पर न बैठिये मगर वे नहीं माने। उन्होंने हुकुम दिया 'कोई बात नहीं, देखा जायेगा। सूरज न होगा तो क्या रौशनी न होगी? जाओ और इतनी रौशनी करो कि किला जगमगा उठे।'

४० – बहादुरशाह कंपनी सरकार से भीख मांगते, सेठ साहूकारों से कर्ज़ा लेते पर दुखी और मुसीबतज़दा की जितनी मदद होती, उतनी करते। गरीबों, विधवाओं और अनाथों का महीना बंधा हुआ था। बिना गरीबों को खिलाये, बादशाह खाना खाने नहीं बैठता था। अरसे बाद किसी मुगल सम्राट ने फिर से प्रजा का दिल जीता था, हालांकि वह नाम का ही बादशाह था। सड़कों पर जो ऐलान होते थे, उनके पहले हमेशा यह कहा जाता था: ख़ल्क खुदा का, मुल्क बादशाह का, हुक्म कंपनी बहादुर का।

(नोट: इतिहास पढ़ते-पढ़ते उसके

(शेषांश पृष्ठ २९ पर)

पं. नेहरू की होली आनंद भवन और जेल में

☐ पी. डी. टं

होली की हुल्लड़बाजी तो जवाहरलाल नेहरू को पसंद नहीं थी, मगर उस दिन के जोश-खरोश में उन्हें बहुत मज़ा आता था। जब वे लोगों को खुशी से नाचते-गाते, कूदते-फांदते देखते तो खुश होते, क्योंकि उस दिन भारत का गरीब से गरीब नागरिक अपने गम को भुला देता है और मुसीबतों की मार को भूल जाता है।

स्वराज्य से पहले जब कभी पंडितजी होली पर आनंद भवन में होते थे, तो उनके साथी, कुछ मुहल्ले वाले और उनके यार-दोस्त, हिंदू और मुसलमान दोनों, उनके घर उनसे होली मिलने जाते थे। सुबह के समय वहां रंग भी चलता था। जिसके लिए इंतजाम एक-दो दिन पहले ही हो जाता था। उस दिन मिठाई की खवाई आनंद भवन में खूब होती थी और रंग खेलने वालों को, सारे नौकरों को और आने वालों को मिठाई खिलायी जाती थी। अक्सर पंडितजी अपने हाथ से ही मिठाई खाने के लिये देते थे, तो लोग खुश होते थे।

पान खाने वालों की तबीयत मिठाई खाने से तो खुश होती नहीं, जब तक उनको अपना मनपसंद पान न मिल जाये। पडितजी से पान मांगने की हिम्मत तो यार लोगों की पड़ती नहीं थी, पर वे विजयलक्ष्मी पंडित से कहते थे कि पान का इंतजाम कीजिये। खिलाने-पिलाने वे हमेशा तेज रही हैं और फौरन इंतज कर देती थीं। खुद पान लगाती थीं लोगों को देती थीं। एक बार होली के जब आनंद भवन में लोग पंडितजी साथ होली खेल रहे थे, तो श्रीमती पं पान लगाने बैठ गयीं। जवाहरलाल बोले, यह तुमने क्या पान की दुकान रखी है। स्वर्गीय सरदार नर्मदाप्रसाद जो पान के बहुत शौकीन थे और खाने इंतजार कर रहे थे, बोले, 'हम लोगों अपना काम करने दीजिये। आप पान मजा क्या जानें? पंडितजी 'क्या कहकर मुस्कराते हुए फिर होली खे में जुट गये। आमतौर पर होली खे कृपलानीजी, सुचेताजी, केशवदेव मालवी लालबहादुर शास्त्री, श्रीमती पंडित उनकी बेटियां तथा फिरोज गांधी होते और उस दिन आनंद भवन में कोई यह नहीं सोचता था कि वह नेता है। लोग बराबरी का वर्ताव करते थे एक दूसरे पर डटकर रंग डालते धक्कम-धुक्की करते थे और गले मि मिलते थोड़े परेशान हो जाते थे। ज हरलालजी और कृपलानीजी जब रंग फें वालों से आजिज आ जाते थे, तो ज झूला झूलने लगते थे। झूला लेकिन

में एक ही था, इसलिए एक बार कृप-लानीजी एक सूखे पेड़ पर चढ़कर झूला झूलने लगे।

जब नेहरू प्रधानमंत्री हुए तब भी होली खेलने का सिलसिला जारी रहा। सैकड़ों लोग उनके निवासस्थान पर जाते थे और पंडितजी और इंदिराजी से होली खेलते थे। मगर अत्यंत व्यस्त रहने के कारण आनंद भवन की होली वाली मस्ती न होती थी। फिर भी अबीर गुलाल और रंग की फेंकाई खूब होती थी।

नेहरू जिस होली के दिन जेल में होते थे, वहां भी उन्हें होली की याद आती थी और बाहर के लोगों को शोरगुल करते सुनकर होली खेलने वालों की खुशी का अंदाजा कर लेते थे। १२ मार्च १९३३ को उन्होंने देहरादून जेल में अपनी डायरी में लिखा था, 'आज होली का दिन है। सुबह से ही होली के धूम-धड़ाके की आवाजें बाहर से आ रही हैं। लोग चिल्लाते हैं, गाते हैं, नाचते हैं।

'मैंने महसूस किया कि कैसा बढ़िया त्यौहार है होली और मैं आज अकेलापन का अनुभव कर रहा हूं। क्योंकि सारे लोग नाच-कूद रहे हैं और मैं यहां अकेला बैठा हूं। जब मैं बाहर रहता हूं, तो होली के हंगामे में ज्यादा शिरकत तो नहीं करता, फिर भी आज मैं उन सब बातों की याद कर रहा हूं। दूसरे कैदियों की क्या हालत होगी। उन लोगों को अपने घरों की याद सताती होगी और बहुत अकेला महसूस करते होंगे। जेल में भी होली की छुट्टी होती है, जिसका नतीजा यह होता है कि वे सारे दिन काम पर नहीं जाते और कटघरे में ही बंद रहते हैं।'

'आज दोपहर को जब मैं ऊंघ रहा था, तो मेरा धोबी (जो कैदी नहीं है) बाहर से मुझसे होली मिलने आया। इससे मुझे थोड़ा आश्चर्य हुआ। मगर यह ताज्जुब खुशगवार था।'

'हम दोनों प्यार से होली मिले और उसने हमारे ऊपर गुलाल डाला और एक तश्तरी में वाकई अच्छी मिठाई मुझे दी। वह सब मुझे बहुत अच्छा लगा और मैं प्रभावित हुआ . . . धोबी जो मुझसे होली मिलने आया वह मेरे ज्यादा नजदीक है, बजाय उन शाहजादों और शाहजादियों के, जिनसे मेरी बीसों बरसों से मुलाकात नहीं हुई है।'

जिन्होंने कभी नेहरू के साथ होली खेली थी, उन्हें होली के दिन उनकी याद जरूर आती। हमें तो ऐसे कई मौके मिले थे और उन दिनों की कई बातें मेरे दिल में नक्श हो गयी हैं।

पंडितजी ने मुझसे, एक सिलसिले में एक बार कहा था कि होली के दिन लोगों को गम नहीं करना चाहिये, ठीक ही था, मगर अभी भी होली के दिन जब आनंद भवन की तरफ से गुजरता हूं, तो बरबस उनकी याद आ जाती है और दिल गमजदा हो जाता है।

—४ एलगिन मार्ग, इलाहाबाद, उ. प्र.

□

गन्ना : एक औषधि

□

डा. नारायणशंकर दीक्षित

भारतीय जड़ी-बूटियां अपने अद्भुत गुणों के कारण विदेशों तक में अपनी धाक जमा चुकी हैं। इन जड़ी-बूटियों, पेड़-पौधों में ईश्वर ने दिव्य शक्तियां भर दी हैं। भारत की इस वन-संपदा के अद्भुत गुणों और रहस्यों को जानकर बड़े-बड़े वैज्ञानिक तक आश्चर्य-चकित रह गये हैं। भारतीय जड़ी-बूटियों, पेड़-पौधों से मनुष्य का कायाकल्प हो सकता है, खोया हुआ स्वास्थ्य और यौवन पुनः वापस मिल सकता है; भयंकर से भयंकर रोगों का निदान इन पेड़-पौधों के उचित उपयोग से किया जा सकता है। इन्हीं में एक है–गन्ना।

गन्ना जो कि संसार का दो-तिहाई अकेले भारत में होता है और मनुष्य के शारीरिक विकास में सहायक व संक्रामक रोगों से बचाता है। इसे आयुर्वेद में 'रसायन' माना गया है। दांत, हृदय, पेट, दिमाग हाथ और पैरों में शक्ति का संचार कर देता है। कुदरत का यह एक ऐसा 'रक्त-बैंक' है जो जैसे ही शरीर में जाता है, वैसे ही 'ग्रुप' का बन जाता है। गन्ने के रस में कैल्शियम के कार्बनिक लवण, फास्फोरस, लोहा और मैंगनीज इतनी प्रचुर मात्रा होते हैं कि शायद ही इतनी मात्रा में कि दूसरे पदार्थ में हों। विटामिन 'ए', 'बी 'सी' और 'के' की प्रचुरता से सूखा हु शरीर भी रक्त-मज्जा-मांस से परिपू हो जाता है। गन्ने द्वारा रोगों का इला अत्यंत सरल व किफायती है। इसके कु उपयोग नीचे दिये जा रहे हैं–

गुर्दे की खराबी में : आजकल स चीनी के शौक ने गुर्दे के रोग इतने ब दिये हैं कि लोगों को विज्ञापन देकर की भीख मांगनी पड़ती है गुर्दे की खरा में रोगी को दस ग्राम गुड़ में आधा ग्रा बुझा हुआ चूना मिलाकर दो गोली ब लें और गर्म पानी से सुबह-शाम एक-ए गोली दें। निश्चित आराम मिलेगा।

तिल्ली बढ़ना : दक्षिण में 'स' नाम एक ऐसा गन्ना बोया जाता है, जो बा और जोहड़ों के किनारे उगता है। गन्ना ऊंचाई में एक मीटर से कम औ मोटाई में अंगूठे के बराबर फैल पाता है इस गन्ने का रस पीने से तिल्ली सिमट अपने स्थान को लौट जाती है।

नकसीर फूटना : गन्ने का ताजा

निकालकर कुछ समय तक उसकी गंध नाक से लें। उसके बाद रस में नीबू निचोड़कर एक-एक घूंट पीने से नकसीर की शिकायत दूर हो जाती है।

पागलपन में : मस्तिष्क रोग के निवारण में विटामिन 'बी' की जरूरत पड़ती है और गुड़ तथा गन्ने के रस में यह बहुलता से पाया जाता है। अतः विक्षिप्त व्यक्ति को गन्ने चूसने को दें, गन्ने का रस पिलायें, गन्ने के रस में चावल बनाकर खीर दें जिसके प्रभाव से रोगी शांत व सहज हो जाता है।

पायरिया : गन्ने के सिरके वाले पानी से कुल्ले करके सर्वप्रथम मसूढ़ों का इलाज कर उसके बाद रोज सुबह दो गन्ने दांतों से छीलकर चूसें। नियमित करने से दांत मजबूत होते हैं व पायरिया से छुटकारा पाया जा सकता है।

पीलिया : इसका सबसे सरल इलाज है गन्ना। गन्ने को चूसने व गन्ने का ताजा रस पीने से ताजे खून की प्रक्रिया चालू हो जाती है और श्वास नलिका व फेफड़ों का विष धुल जाता है। भुने हुए जौ के सत्तू को गुड़ या गन्ने के रस के साथ लेने से भी पीलिया से छुटकारा पाया जा सकता है।

–चिलौली, टेढ़ा, उन्नाव, उ. प्र.

□

(पृष्ठ २५ का शेषांश)

प्रमुख चरित्रों के बारे में हमारी धारणाएं निश्चित हो जाती हैं और उन धारणाओं के खिलाफ़ जब कुछ पढ़ने को मिलता है तो हमें दुख होता है। हम सभी लोग यह मानते हैं कि रजिया के बाद नासिरुद्दीन जो बादशाह बने, वे अत्यंत धर्मभीरु, ईमानदार और सात्विक वृत्ति के व्यक्ति थे। उनकी बेगम खुद बर्तन मांजती थी। इसी प्रकार बलबन जैसा भी था, कातिल नहीं था। मगर रॉयल हिस्टोरिकल सोसायटी के फ़ैलो डॉ. परमात्मा शरण का कहना है कि नासिरुद्दीन ने अपने भतीजे को कपट से मरवाया था, ताकि वह खुद गद्दी पर बैठ सके और यही नहीं, बलबन ने भी सुलतान नासिरुद्दीन को जहर दिलवाकर मारा, ताकि वह खुद सुलतान बन सके।)

–कंट्रोल डिफेंस एकाउंट्स, सी. डी. ए.
ट्रेनिंग दफ्तर, मेरठ छावनी, उ. प्र.

□

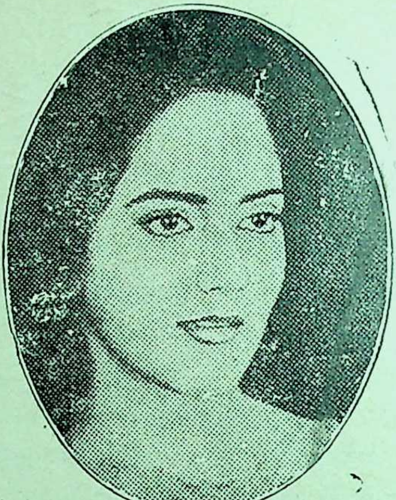

मोहक त्वचा! साफ़ी त्वचा!

SAFI
साफ़ी
SAFI

कील-मुहासे, फोड़े-फुंसियां तथा त्वचा के अन्य रोग रक्त में विकार के चिन्ह हैं। रक्त के विकार से स्वास्थ्य में विभिन्न प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। ऐसे में आपको साफ़ी के स्वास्थ्यदायक तत्वों की अत्यन्त आवश्यकता होती है।

साइन्टिफ़िक रिसर्च ने भी सिद्ध कर दिया है कि साफ़ी एक हानि-रहित रक्तशोधक औषधि और कीटाणु-नाशक है, और यह त्वचा को साफ़ और सुन्दर बनाती हैं तथा अच्छा स्वास्थ्य सुनिश्चित करती है।

निःसंदेह, साफ़ी पचास वर्षों से अधिक समय से एक सुप्रसिद्ध रक्तशोधक औषधि है।

२४ अत्यावश्यक रक्तशोधक तत्वों और
जड़ी-बूटियों का अनोखा मिश्रण

हमदर्द

साफ़ी

रक्त को साफ़ करती है। त्वचा को निखारती है।

HTA-5048BH

दो ग़ज़लें

वक्त सुन ले जब तलक तू आजमायेगा मुझे,
मुश्किलों में जिंदगी जीना सिखायेगा मुझे।
दर्द के जिस ताप से मैं तप रहा हूं रात दिन,
वो तपाकर एक दिन सोना बनायेगा मुझे।
आज जो सुनकर नहीं सुनता मेरी आवाज को,
देख लेना एक दिन वो ही बुलायेगा मुझे।
है भरोसा आज मुझको काम मेरा दोस्तो,
आसमां जितनी बुलंदी तक उठायेगा मुझे।
जिसकी ख़ातिर जान की बाजी लगा अमृत मिला,
ये न सोचा था कि वो ही विष पिलायेगा मुझे।
मैं हंसूंगा तो हंसूंगा किस तरह बोलो 'तुषार',
मैं हंसूंगा जब कभी तब दिल रुलायेगा मुझे।

[२]

धुंध सी छायी हुई है आज घर के सामने,
कुछ नज़र आता नहीं है अब नज़र के सामने।
कल सड़क पर मर गये थे ठंड से कुछ आदमी,
देश की उन्नति बताते पोस्टर के सामने।
सिर कटाओ या हमारे सामने सज़दे करो,
शर्त ये रख दी उन्होंने हर बशर के सामने।
सोचता हूं क्यूं अदालत ने बरी उसको किया,
कत्ल करके जो गया सारे नगर के सामने।
वो डगर पहचान अपनी भी बना लेती मगर,
राजपथ कुछ अड़ गये उस ही डगर के सामने।
देर तक देखा मुझे फिर वो ग़ज़ल बोली 'तुषार'
आज तो मुझको पढ़ो, मैं हूं नज़र के सामने।

—नित्यानंद 'तुषार'

१५८, आर्यनगर, गाजियाबाद-२०१००१, उ. प्र.

□

हरीश निगम की तीन कविताएं

फागुन-मछुआरे ने फेंके
रंगों वाले जाल।
गीत नदी की
नीली-पीली
लाल मछलियां
देहों में
उतरी छुअनों की
नयी तितलियां
इंद्रधनुष वाली नौकाएं
होने लगीं उछाल।
फूल हुए
कलियों के किस्से
गाती आंखें
मादक गंध
गुलाबी बातें
खोलें पांखें
फिर भीतर-बाहर का मौसम
करने लगा कमाल।

[२]

बरसे हैं
रंग भरे मेह

धुल गयीं उदासियां बैंगनी व्यथा
होंठों पर आ गयी धूपिया कथा।
महके हैं फागुन के नेह।
घुल गया गुलाल में सुआपंख-मन,
पिचकारी, अंग लिखे सरगमी-छुअन
इंद्रधनुष हो गयी देह।

[३]

फिर आयीं
चिट्ठियां गुलाबों की।
खट-मिट्ठे बोल
हवा बोली
दिन जैसे
हो गया रंगोली,
बात चली
फागुनी
किताबों की।
आंखों में छपा
अनकहा सब
खुशबू में
मन-बदन
बहा सब,
रात बची
रेशमी हिसाबों की।

१३७/२३, चौथा रास्ता, धवारी, सतना-४८५००१, म. प्र.

□

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन साहित्य, और संस्कृति का मासिक

प्रार्थना

**दूराच्च कामनाय प्रतिपाणाय अक्षये
आस्माः अश्रृण्वन्नाशाः कामेनाजनयन्स्वः ।**

अथर्व. १९.५२.३

हम कितने नादान बने थे कितने थे नादान,
प्रभु की महिमा देख डर गये, विनय सुनेंगे क्या भगवान ?
दूर-दूर से विनय किया था, मन में पर यह प्रश्न बना था
क्या त्रिलोक स्वामी है संभव तुम सुन पाओ हृदय-व्यथा ?
किंतु हमारी मनोकामना सुनी आपने द्रवित हुए,
दशों दिशाओं से करुणा के बादल उमड़े स्रवित हुए ।
एक बूंद मैंने मांगी थी अमृत की धारा बरसाई,
पृथ्वी-नभ के देवगणों ने करुणा अविरल दिखलाई ।
वसुंधरा ने गोद खिलाया दिया अमित धन-धाम,
हम कितने नादान बने थे कितने थे नादान ।

[रूपांतर : सत्यकाम विद्यालंकार]

महोत्सव

नंदगांव और बरसाने की होली

□ मदन गोपाल

होली का त्यौहार अपने आप में अनुपम सांस्कृतिक पर्व है। अनादिकाल से इसे आनंद और उल्लास के साथ मनाया जाता रहा है । इस अवसर पर हर क्षेत्र में हास्य-विनोद का मनभावन वातावरण तो दिखायी देता ही है, साथ ही मानव के साथ प्रकृति भी ठिठोली के मूड में दिखायी देती है । वसंत आगमन के साथ प्रकृति अपने नये रंग-रंगीले रूप में अत्याकर्षक दिखायी देती है । शीत का प्रकोप कम हो जाता है, थोड़ी-सी कुममुनी ठंड नाममात्र को दिखायी देती है, पृथ्वी फल-फूलों व अन्न से लद जाती है । ऐसे मनोरम और सुरम्य वातावरण में आयोजित हास-परिहास के इस पर्व में मनुष्य सब कुछ भूल मस्ती में झूम उठता है । वैसे तो होली का पर्व समूचे देश में मनाया जाता है, परंतु व्रज की होली की बात ही कुछ और है । व्रज में भी नंदगांव और बरसाने की होली जगत प्रसिद्ध है । आज भी लाखों देशवासी तथा विदेशी होली के अवसर पर यहां आते हैं और होली के मादक रंगों में अपने को रंगकर स्नेहसिक्त मस्ती में झूमते हुए वापस लौटते हैं ।

नंदगांव और बरसाना-दो प्राचीन गांव (अब कस्बा) हैं । नंदगांव के युवक श्री कृष्ण के ग्वालों का प्रतिनिधित्व हैं तथा बरसाने की युवतियां श्री की सखियों का प्रतिनिधित्व करती युवतियों के हाथ में लंबे-लंबे लट्ठ हैं, इनसे वे पुरुषों पर प्रहार करती पुरुष अपने को बचाने के लिए भाग तथा कभी-कभी लाठी की स्नेहपूर्ण मुस्कराते हुए सह भी लेते हैं। ब की होली फाल्गुन शुक्ल नवमी के होती है। श्रीकृष्ण के सखाओं के निधि के रूप में नंदगांव के लोग ब आते हैं। बरसाने में ढप, ढोल, की स्वरलहरी के साथ आमोद-प्रमो वातावरण में होली प्रारंभ होती है रंग बरसता है, गुलाल उड़ता है। की महफिलें जमती हैं। ध्रुपद, सवैया व पद गाये जाते हैं। यु युवतियां लट्ठमार होली खेलते हैं प्रदर्शन अपने आप में बहुत मनो होता है । नृत्य, गायन तथा युवति द्वारा युवकों पर चतुराई से प्रहार तथा युवकों द्वारा इस प्रहार से इस होली के प्रमुख आकर्षण हैं। कभी इस प्रेम-पूर्ण मार का रसा दर्शक भी प्राप्तकर आनंद विभोर हो हैं। सभी लोग इसे सहज रूप में

ौर होलिकोत्सव की भावमयी रस-धारा डुबकी लगाते हैं।

अगले दिन अर्थात् फाल्गुन शुक्ल दशमी ो नंदगांव में होली का आयोजन होता । इस दिन बरसाने के युवक नंदगांव ाते हैं और होली खेलते हैं। होली खेलने ाले युवकों की टोली गीत गाती और ास-परिहास करती हुई चली आती है। ारों ओर उल्लास और आह्लाद का ातावरण होता है। मादक गीतों की वर लहरी के साथ गुलाल के बादल उड़ते ै। टेसू के फूलों से तैयार किया गया रंग पिचकारियों से डाला जाता है। संकरी ब्रज गलियों में, जिन्हें कुंज गली कहा जाता है, गोपी-ग्वालों की दौड़-भाग, लाठी-प्रहार व उनसे बचना तथा दर्शकों द्वारा लाडलीलाल की जय का तुमुल उद्घोष संपूर्ण वातावरण को असाधारण आनंद-मय बना देते हैं। तभी तो इस होली के बारे में किसी भक्त कवि ने कहा है—

'ऐसो रस बरसै बरसाने में,
जो रस वैकुण्ठहु में नाहि।'

यह कथन प्रारंभिक तौर पर कुछ अतिशयोक्तिपूर्ण लग सकता है, परंतु एक बार भी जिसने इस आनंद का रसास्वादन किया है वह निश्चित रूप से बेहिचक कह सकता है कि नंदगांव और बरसाने जैसी होली का अप्रतिम आनंद कम से कम इस पृथ्वी पर अन्यत्र मिलना असंभव है। सही मानें में व्रज की होली भी प्रेमाराधना का ही एक अंग है। व्रज का प्रेम-संसार अपने आप में निराला है, जो इसमें एक बार गोता लगा लेता है वह इसमें से निकलना ही नहीं चाहता। प्रेम और भक्ति की सुधा-वृष्टि से परमानंद की प्राप्ति का मार्ग सहज-सरल हो जाता है। इस दृष्टि से विचार करने पर यह होली भी भक्तों के लिए अपने-आप में एक लीला है।

देश में हुए सामाजिक, राजनैतिक परिवर्तन का प्रभाव कुछ अंशों तक यहां की होली पर भीं पड़ा है। होली की मस्ती में कुछ कमी आयी है परंतु स्वाभाविकता में कोई कमी नहीं आयी है। यही कारण है कि आज भी नंदगांव-बरसाने की होली काफी कुछ अंशों में पहले की तरह आकर्षण का केंद्र बनी है। **—६० अनुपम नगर**
नोलखा परेड, ग्वालियर-४७४०११, म. प्र

□

इलाचन्द्र जोशी की स्मृतियां

एक अनूठा साहित्यिक व्यक्तित्व

☐ रामेश्वर शुक्ल अं

सन १९२८ में जब मैंने पं. इलाचंद्र जोशी को अपनी तेरह वर्ष की आयु में 'सुधा' कार्यालय में संपादन विभाग में बैठकर काम करते कुछ दूर से देखा था तब उनकी छायावादी, 'घने लहरे रेशम-से बाल' से सौंदर्य-स्निग्ध रूपाकृति को देखकर कभी सोचा तक न था कि ऐसे चित्ताकर्षक व्यक्ति के साथ उन्मुक्त हार्दिकतापूर्वक उठने-बैठने, खाने-पीने, मृदुल-कठोर वाद-विवाद करने और हर प्रकार की स्वच्छंदता बरतने का सुखद संयोग दस वर्षों बाद ही जीवन में पा सकूंगा। उन दिनों कविता, कहानी, साहित्यिक टिप्पणियां, आलोचनात्मक लेखादि तो वे लिखते ही थे, 'परदेशी' या 'निर्वासित' नामक उनका एक उपन्यास भी 'माधुरी' में धारावाहिक प्रकाशित हुआ था, जिसमें व्याप्त कुछ खोया-खोया-सा, बुझा-बुझा-सा भटकता, जगत में अपने को न देखकर अपने में ही जगत को देखता एक नये किस्म के मानव-मन का चित्रण था। मैं जोशीजी की रचनायें पढ़ता तो लगता—जीवन के नियमित और संयमित बंधनों के टूटने पर ऐसा ही भटकता और ऊबता सूनापन तन-मन पर छा जाता हो परिस्थितियों के दारुण कशाघात से भी की सुकुमारता रोना-कलपना तक बैठती है—एक गाढ़े विषाद में डूबी रह जाती है।

दो-तीन महीने बाद ही जोशीजी 'सु पत्रिका की नौकरी छोड़कर चले ग पर माधुरी और सुधा में उनकी रच छपती रहीं। सरस्वती के किसी पु अंक में उनकी 'तारा' नामक कहानी बीच पढ़ने को मिल गयी। उसमें एक प्रकार का मानसिक वातावरण था, रात-दिन के इस व्यस्त जीवन से स परे था। जब उदासी से घिरा अ कोई काम नहीं कर पाता, केवल अकु अकुलाकर अपने में टूटता है—टूट-टू अकुलाता है। तभी सुना था कि अ रचनाओं की भांति जोशीजी भी स्वप्नशील कलाकार हैं—अंगरेजी, बंग संस्कृत और हिंदी साहित्य के गहरे अध्ये छायावाद द्वारा भाषा, भाव, छंद, चित्रण सभी की नवीनता के सम होकर भी अपनी स्वतंत्र साहित्य रखने वाले; रवींद्रनाथ और शरद

परम प्रशंसक होकर भी यदाकदा अपने रुचि वैभिन्न के स्वर अपने साहित्यिक लेखों में मुखर करने वाले । बरसों बाद उनके पूर्व-प्रकाशित उपन्यास 'घृणामयी' की बात सुनकर उसे भी पढ़ डाला । पर उसने प्रभावित नहीं किया । प्रेमचंद का 'निर्मला,' चतुरसेन शास्त्री का 'हृदय की प्यास' और जैनेन्द्र कुमार का 'परख' सभी उससे कहीं प्रखर मानवीय करुणा, भावना का सूक्ष्म अंतर्जगत लिये थे । तब तक शरद के उपन्यास मैंने भली भांति पढ़े भी न थे ।

अनेक साहित्यिक लेख उन दिनों (मैं समझता हूं १९३५-३६ तक) डा. हेमचंद्र जोशी और इलाचंद्र जोशी के सम्मिलित नाम से प्रकाशित हुआ करते थे । डा. हेमचंद्र जोशी बी. ए., डी-लिट् (पेरिस) उनके बड़े भाई थे जो मेरी याद में उन दिनों लिखने वालों में अकेले इस बड़ी उपाधि से विभूषित थे । यह बात मैं केवल साहित्य के संदर्भ में कह रहा हूं—इतर विषयों के नहीं । इन लेखों में अनेक को लेकर हिंदी जगत में तीव्र प्रतिक्रिया होती थी । निरालाजी उत्तर स्वरूप 'कला के विरह में जोशी बंधु', 'वर्तमान धर्म' जैसे तीक्ष्ण व्यंगभरे लेख लिखते थे । सन १९२५ या २६ में माधुरी में (डा०) श्यामसुंदर दास द्वारा लिखी गयी पुस्तक 'साहित्यालोचन' की खरी, निर्भीक आलोचना डा. हेमचंद्र जोशी के एकल नाम से छपी थी जिसने हिंदी जगत में खलबली मचा दी थी । हडसन की पुस्तक से अनुच्धेद के अनुच्छेद देकर यह बताया गया था कि यह मौलिक कृति न होकर अंगरेजी की एक सर्वज्ञात पुस्तक का भावानुवाद या शब्दानुवाद मात्र है । पर एक दो-को छोड़कर अधिकांश उनके लेखों पर जोशी बंधुओं का नाम छपता था । असहमत होकर भी उन लेखों की विचारोत्तेजकता असंदिग्ध थी ।

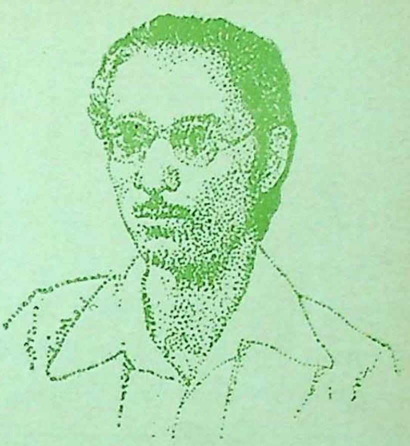

इलाचन्द्र जोशी

मैं जोशी बंधुओं के लेखों के मूल स्वर को पहचानने की बुद्धि आते-आते उनमें निहित छायावाद की कठोर भर्त्सना को भी समझ चला था । बाद में तो स्पष्ट ही हो गया कि डा. हेमचंद्र जोशी का दंभ और साहित्यिक आभिजात्य ही उनमें प्राय: हुआ करता था । इलाचंद्रजी से मेरा पत्र-व्यवहार जैसे-जैसे बढ़ता गया और मुझे उनसे अपने कवि-जीवन के उष:काल में प्रोत्साहन का जो प्रसाद मिला,

वह तब मेरी पहुंच की ऊंचाई से ऊपर था। जोशीजी तब तक अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा से हिंदी जगत को प्रभावित कर चले थे। 'माडर्न रिव्यू' में १९२८ के आसपास ही उनका लेख छपा था, जिसमें हिंदी साहित्य की तत्कालीन रूढ़िवादी तथा प्रगति-विरोधी प्रवृत्तियों के विरोध में लेखक ने एक नयी दिशादृष्टि का परिचय दिया था। उसकी बड़ी चर्चा थी और छायावादी कवियों को, समर्थक प्रेमियों को वह बुरा भी लगा था। पर काफी समय बाद जब मैंने जोशीजी से लेकर इलाहाबाद में उस लेख को पढ़ा तो मुझे उसमें छायावाद का नहीं छायावाद में बढ़ती जाती स्वप्निल भावुकता फेनोच्छ्वसित अवास्तविकता और असंबद्ध वायवीयता का विरोध ही मिला। जोशीजी तो छायावादी भावप्रवणता में स्वयं इतने ढले-ढले और रचे-रचे थे कि उसकी पूरी चित्रात्मकता और भाव व्यंजना को अपनाये ऐसी पंक्तियां लिखते थे :

पर वह भोली-भाली प्यारी निपट नवेली ललना
सरल लासमय तरल दृगों में छलका निश्छल छलना
पर्वत-पथ के विजन प्रान्त में सुन कपोत कुल कूजन
मंद हंस गति ले जाती है करने शिव का पूजन
सरल मधुर विश्वास भरा है तरुण-तरुण नयनों में
लज्जा रक्तिम लास खिला है हस्त स्थित सुमनों में
स्नेह प्रेमरस प्रतिपल उसके मधुमन में सिंचित है
निखिल चक्र की वक्र प्रगति से नहीं तनिक परिचित है।

ऐसा कवि छायावाद का विरोध न कर उसमें चारों ओर फैशन की तरह बढ़ती अमूर्तन की कृत्रिमता और 'स्यूडो' रहस्योन्मुखता का ही विरोध कर रहा था।

ऊपर दी गयी कविता के साथ ही एक और दिलचस्प बात याद आ रही है। सन १९३१ में जोशी बंधुओं ने कलकत्ते से 'विश्ववाणी' नामक मासिक पत्रिका निकाली थी, जिसके मुखपृष्ठ पर छपा काव्यांश ऊपर दिया गया है। जहां तक याद आता है 'विश्ववाणी' का एक ही अंक निकल पाया था, क्योंकि जोशी बंधुओं ने उसे अपने पैसे से निकाला था। संपादकों के नाम इस प्रकार थे—

हिंदी के सर्वश्रेष्ठ साहित्याचार्य डा. हेमचन्द्र जोशी, इलाचंद्र जोशी

निरालाजी ने तब नंददुलारे बाजपेयी द्वारा संपादित साप्ताहिक (या अर्ध साप्ताहिक) 'भारत' में इस पत्रिका की आलोचना करते हुए और डा. हेमचंद्र जोशी के नाम के पहले छपे आत्मप्रशंसात्मक विशेषण का मजाक उड़ाते हुए एक दर्जन से अधिक सम्मानवृद्ध साहित्यिकों के नाम गिनाये थे, जिन्हें ऐसा कहा जाना अधिक फबता। उस आलोचनात्मक लेख

का अंतिम वाक्य मुझे याद रह गया है— डा. हेमचंद्र जोशी को हिंदी का सर्वश्रेष्ठ साहित्याचार्य होते देखकर और कोई प्रसन्न हो या न हो पर शरद बाबू (उस युग में बंगला के सर्वाधिक लोकप्रिय कथाकार) अवश्य होंगे । उन्हें लगेगा कि जब उनका चेला हिंदी का 'सर्वश्रेष्ठ साहित्याचार्य' बन गया है तब उन तक पहुंचने में हिंदी वालों को बड़ी देर है ।

पर इसके साल भर बाद ही जब जोशी बंधुओं के संपादन में मासिक 'विश्वमित्र' कलकत्ते से प्रकाशित हुआ तब हिंदी में उसकी धूम मच गयी । प्रत्येक अंक में डा. जोशी तो अपने नाम से और अनेक छद्म नामों से (धुरन्धर शर्मा, डा. जे. डी. अग्निहोत्री आदि) विविध विषयक, भारतीय और पाश्चात्य जानकारियों से भरे, ज्ञानवर्धक, रोचक लेख लिखते ही थे, इलाचंद्र जोशी की कविता, कहानी, साहित्यिक छोटे-बड़े लेख, हिंदी-बंगला-अंगरेजी, संस्कृत और प्राचीन ग्रीक साहित्य को लेकर लिखी गयी पांडित्य और कलाकारोचित भावुकता से समन्वित विवेचनायें भी रहती थीं । साहित्यिक पाठक और हिंदी-प्रेमी समान रूप से पत्रिका के नये अंक के लिये उत्सुक रहते । मैंने उसी वर्ष कविता लिखना शुरू किया था । 'माधुरी', 'सुधा', 'वीणा', 'साप्ताहिक भारत', 'कर्मवीर', 'प्रेमा' में रचनायें छप जाती थीं । पर मासिक विश्वमित्र की साहित्यिक शान कुछ और थी । डरते-डरते वहां भी कविता भेज दी । इलाचंद्रजी की प्रोत्साहनभरी स्वीकृति पाकर मन अभिभूत हो गया । निरालाजी के सशक्त समर्थक और बनारसीदास चतुर्वेदी की प्रचारवृत्ति के कट्टर विरोधी पिता (माधुरी संपादक) का पुत्र होने के कारण 'विशाल भारत' का द्वार मेरे लिये बंद था । उससे कहीं अधिक साहित्य-प्राण और रचनात्मक दीप्ति लिये कलकत्ते के ही इस नये मासिक द्वारा अपनाये जाकर मुझे नयी स्फूर्ति मिली । इलाचंद्रजी ने मेरी 'सान्ध्य प्रदीप' और 'टूटते हुए तारे' के प्रति कविताओं की प्रशंसा की तो मुझे आत्मविश्वास की प्रतीति हुई ।

मासिक विश्वमित्र का संपादन-कार्य लगभग दो वर्ष बाद जोशी बंधुओं ने संचालक से मतभेद होते ही छोड़ दिया । पर तब तक मेरी अनेक कवितायें जोशीजी छाप चुके थे । उनकी कहानियों और साहित्यिक लेखों ने मुझे उनका पाठक बना दिया था । मैंने 'सुधा' और 'माधुरी' के पुराने अंकों में ढूंढ़-ढूंढ़कर उनकी रचनायें पढ़ीं । बी. ए. में शेक्सपियर का 'हेमलेट' नाटक हमारे पाठ्यक्रम में था । 'हेमलेट' पर मासिक विश्वमित्र में जोशीजी का एक लघु लेख छपा तो उसे पढ़कर मुझे इस महान त्रासदी का विचित्र रस-बोध हुआ । 'हेमलेट' की आत्म-विडंबित, विषम मनस्ताप में 'ओदी लाकरी निपुचै औ धुंधुआय' जैसी सुलगती अंतर्यातना को ऐसी मार्मिकता के साथ उद्घाटित

किया गया था कि पढ़कर मैं प्रभावित हुआ। अपने अंगरेजी के अध्यापक श्री ए. टी. भट्टाचार्य को मैंने उसे पढ़कर सुनाया तो उसकी भाषा के सौष्ठव और विचारों की गहराई पर मुग्ध होकर बोले थे—इसे तो बंगला में होना था—'हेमलेट' के अंतर्द्वंद्व की ऐसी गहन भावानुभूति दुर्लभ (रेयर) है।

तब तक जोशीजी से मिलने, बात करने का सुयोग मुझे न मिला था। इलाहाबाद आते ही (अक्तूबर १९३७) मुझे यह जानकर हार्दिक हर्ष हुआ कि जोशीजी स्थायी रूप से यहीं कर्नलगंज में रहते हैं। पं. भगवती प्रसाद बाजपेयी ने मुझे उनकी कविता पुस्तक 'विजनवती' पढ़ने को दी—जिसकी अधिकांश कवितायें मेरी पढ़ी ई थीं। पर उसकी भूमिका, पढ़कर और कलात्मक मुद्रण-विन्यास देखकर मैं विस्मित हुआ। पंतजी के 'पल्लव' के बाद इतनी सुंदर छपी पुस्तक मैंने न देखी थी। यों 'यामा' निकल चुकी थी। उसका रूप-वैभव अप्रतिम था। पर वह महादेवीजी के चार-चार कविता-संकलनों का वृहत संकलन था। 'विजनवती' केवल एक काव्यकृति थी। मेरे भीतर लालसा जाग उठी कि तब शीघ्र प्रकाश्य मेरा प्रथम कविता संग्रह भी इतना ही सुरुचि-श्री संपन्न हो। वाजपेयीजी ने भी हौसला बढ़ाया और 'मधूलिका' फेदरवेट कागज पर 'ला जर्नल प्रेस' की छपाई, सफाई, मनोहर कलेवर लिये लगभग वैसी ही निकली। उसकी प्रति जोशीजी को भेंट करते समय मैं कहना भी न भूला कि आपकी 'विजनवती' की कविताओं का सौंदर्य भले न हो पर सज-धज में 'मधूलिका' को मैंने वैसा ही बनाया है—पत्नी के दो जेवर भी बेच दिये हैं।

सन १९३२ के अर्थात् 'मासिक विश्वमित्र' के प्रकाशन के प्रथम वर्ष के किसी अंक में 'आस्कर वाइल्ड' पर जोशीजी का लेख पढ़ा तो जोशीजी के संबंध में मेरी यह धारणा दूर हुई कि वे कला के लिए कला के सिद्धांत पर आस्था रखते हैं। 'आस्कर वाइल्ड' की प्रतिभा की प्रशंसा करते हुए और उसकी रचनाशीलता के सौंदर्य को भलीभांति स्वीकार करते हुए भी उन्होंने विकृत मानसिकता से दूषित कलाकार 'वाइल्ड' की कला को महत्वहीन ही माना था; क्योंकि उसमें सामाजिक प्रयोजन और उससे प्रसूत मानवीय दुख, करुणा, कुरूप जीवन, सत्य और उसके भीतर भिदी जिजीविषा को सृजन-प्रक्रिया से दूर ही रक्खा गया है। 'आस्कर वाइल्ड' का कलावाद उन दिनों हम तरुणों को आकर्षित करता था—भले उसका नीतिवाद हमें अवांछनीय लगता रहा हो रवींद्रनाथ के अहेतुक सौंदर्यवाद के परम प्रशंसक जोशीजी के संबंध में सौंदर्य और कला को लेकर उनकी धारणा समय-समय पर उनके लेखों में व्यक्त पाकर मैं कुछ वैसी ही भावना बनाये बैठा था।

इलाहाबाद में जोशीजी के निश्चित आवश्यक आय-विहीन जीवन को निर

से देखने के अवसर मुझे मिलते रहे । उनके आर्थिक तनाव और संघर्ष मैंने देखे और उनके साहित्य के प्रति समर्पित जीवन को, उसके बाह्य और अंत:स्थित भाव-चक्र को पहचाना । एक बार घर पर उन्हें नारियल (हुक्का) पीते देखकर मैंने कहा था—'आप घर के बाहर जब घंटों हमारे साथ रहते हैं, तब धुआंधार सिगरेट पिया करते हैं । घर पर नारियल पीते होंगे यह बिना देखे कौन जानेगा ?' जोशीजी का उत्तर मुझे कभी भूलता नहीं । बोले थे—'जीवन की यह लालसा कभी पूरी हुई नहीं, होगी भी नहीं । फर्शी हुक्का भरने में कुशल एक नौकर इसी काम के लिये होता, उठते-बैठते, पढ़ते-लिखते लखनवी खमीरे से भरकर उसे हर बार ताजा कर लाता । नारियल अपने आप भर लेता हूं—जैसी तैसी जो मिल जाती है, उसी को जब तक घर में रहता हूं, गुड़गुड़ाया करता हूं . . . . यही जिंदगी है, अंचलजी !'

ऊपर से इतने गंभीर, लगभग दार्शनिक दिखने वाले व्यक्ति में हास्य-विनोद की कैसी परिष्कृत वृत्ति भरी है, इसे उनके निकट संपर्क में रहकर ही जाना जा सकता था । वाचस्पति पाठक के यहां हमारे साहित्यिक शामें बहुत अक्सर बीतती थीं । एक दिन हमारे एक माने-जाने आलोचक मित्र भी थे जो अंगरेजी का ए-बी-सी-डी बिना सीखे-पहचाने लेखों में 'शेली' और 'कीट्स' के उद्धरणों की भरमार किये रहते थे । अपने लेखन और बातचीत में अंगरेजी के शब्दों का प्रयोग बेरहमी से करते थे । छायावाद के समर्थन और भावप्रदर्शन के औदात्य को लेकर लिखे जाने वाले लेखों में यह उन दिनों अनिवार्य जैसा माना जाता था, क्योंकि उसके सौंदर्य-दर्शन का उत्स प्राय: वहीं से समझा जाता था। हममें से किसी ने उनकी अंगरेजी की जानकारी को चुनौती देते हुए कहा—अच्छा 'राइट' के हिज्जे तो बताइये । उन्होंने आर-आई-जी-एच-टी कहते हुए सगर्व दृष्टि से हमारी ओर देखा । जोशीजी ने कहा—'आप डब्ल्यू भूल गये ।' वे तो मज़ाक को न समझे होंगे पर हमें मजा आ गया ।

पाठकजी ने ओवरकोट बनवाया तो उसकी फिटिंग कपड़े के मूल्य को देखते हुए घटिया थी। हम लोगों ने देखा तो यही बेबाक राय दे दी । पाठकज़ी थे कपड़े पहनने के शौकीन और सुरुचि में पूर्णता के कायल ! जोशीजी कलकत्ते में दशकों रहे और अंगरेजी काट के कपड़ों की ख़ूबियों के जानकार! बार-बार कहे जा रहे थे—इतना अच्छा कपड़ा खराब हो गया । कितनी भदेस 'कटिंग' है । पाठकजी हमीं लोगों में से एक लखनऊ, इलाहाबाद में पढ़े एम. ए. पास मित्र के नाम की दुहाई दिये जा रहे थे, जिनके कहने से उन्होंने उस दर्जी से ओवरकोट सिलाया था । कुछ देर बार-बार यही सब सुनकर जोशीजी ने कहा—'आप मुझे यह बताइये . . . जी के बदन पर कोई कपड़ा आपने कभी खिलता देखा है . . . जब से उन्हें जानते हैं तब से

सोच लीजिये । जो भी पहनते हैं लगता है खूंटी पर टंगा है । 'ओवरकोट' सिलाने में टेलर के चुनाव के लिये सलाह लेने को आपको वही मिले थे ?'

हम लोगों की हंसी ने पाठकजी को तत्काल उनकी भूल बता दी । मैंने उन्हें उसे पहने शायद ही फिर कभी देखा हो ।

जोशीजी के घर जब भी जाता तो घंटे - डेढ़ घंटे से कम न बैठता । साथ में कोई न कोई कलाकार बंधु रहते । एक दिन कटरा के ही एक सज्जन अपने बीमार संबंधी के साथ जोशीजी के पास आये जो चर्चा के दौरान जोशीजी से भली भांति पूर्व परिचित मुझे प्रतीत हुए । उनके ये संबंधी गांव से इलाज के लिये आये थे– 'एनिमिया' के जबर्दस्त शिकार–बात-बात में झल्लाने-चिड़चिड़ाने वाले । जोशीजी नारियल (हुक्का) पीते हुए उनसे रोग का विस्तार सुन रहे थे। मरीज बार-बार कहता था–'नौकरों पर बहुत गुस्सा आता है, बात-बात पर बुरी तरह झल्ला उठता हूं ।' जोशीजी बोले–'हां हां ! नौकरों पर तो आयेगा ही, कलेक्टर साहब पर थोड़े आता होगा ! ' बहुत रोकने पर भी मुझे जोर की हंसी आ गयी ।

एक बार किसी ताल्लुकेदार की सरलता और सदाशयता की चर्चा करते हुए एक मित्र ने कहा–'बालों की कटिंग के लिये उनका नियमित नाई जब समय पर न आया तो उन्होंने दूसरे को बुलवाकर बाल कटा लिये। सिर साफ करके वे बैठे हमसे बातें कर रहे थे । तब तक उनका पुरा नाई भी आ गया । उन्होंने उससे भी बा कटवाये । हम लोग बैठे देखते रहे। ज वह चला गया तो मित्र ने उनसे कहा–' क्या ? अभी तो आपने कटिंग करायी थी ताल्लुकेदार महोदय बोले–'क्या करत बेचारा इतनी दूर से आया था . . . कै उसे लौटा देता ।' अपने साहित्यिक सा की बात पर हम सभी समान रूप से चकि ही नहीं औदार्य-पीड़ित भी थे । जोशीजी कहा–'मैं मान नहीं सकता । जरूर प वाले नाई के काटने में कुछ कमी रह ग होगी ! '

शांतिप्रिय द्विवेदी सुमित्रानंदन को दूसरा खुदा समझते थे । प्रासंगिक या अप्रासंगिक उनके गुणगान से अघाते न थे । 'रूपाभ' के संपादन में अपने कर्मी के रूप में पंतजी ने ज़ब नरेंद्र को लिया था तब शांतिप्रियजी निराशा का आघात लगा था । उन्ह दो-तीन बार इन पंक्तियों के लेखक अपनी मनोवेदना प्रकट भी की थी। इससे शांतिप्रियजी की पंत के व्यक्ति और काव्य के प्रति निष्ठा में या न शर्मा के प्रति स्नेह में कोई कमी न अ थी । एक दिन हम लोगों के बीच पुरातन के ध्वंस और नवीन के उ जागरण की बात चलाते हुए पंत कविता–'गा कोकिल, बरसा पावक की प्रशंसा करनी उन्होंने शुरू कर बोले–'पंत ने केवल नूतन का आवाह

नहीं किया, अपनी जीवन-साधना में उसे अपनाया भी है। वे तो नवजागरण के अग्रदूत हैं आदि-आदि।' जोशीजी ने उनके प्रवचन से ऊबते हुए कहा–'आपने रवींद्रनाथ की 'बलाका' पढ़ी है ? न पढ़ी हो तो निराला के 'रवींद्र कविता कानन' में या हजारीप्रसाद द्विवेदी के रवींद्र काव्य पर लिखे गये लेखों में उसकी कुछ कवितायें विशेष कर 'वर्ष शेष' पढ़िये। तब आप समझेंगे नूतन का आह्वान कैसा होता है–उन्मादिनी काल बैसाखी आनंद, आतंक, क्रंदन, उल्लास के गर्जन के साथ मत्त हाहाकार के स्वर में अपने पैरों में झंझा का मंजीर बांध कर नृत्य करती है। तब नवीन का अवतरण होता है।'

मैंने शांतिप्रियजी को कुछ कहने का मौका दिये बिना कहा–कोकिल भी तो पलाश की आग दहकाती है... जोशी जी तेजी के साथ बोले–'आप भी चिड़ियों की बोली बोलने लगे ... प्रगतिशील होकर वज्रमंत्र की नववाणी के स्थान पर कुहकुहाने की बात करने लगे ! कोकिल जैसा मरियल सुकुमार पक्षी भला पावककण बरसावेगा ? क्या पिद्दी–क्या पिद्दी की आवाज ? 'स्काईलार्क' और बुलबुल से तो शेली, कीट्स ने ऐसी विराटता की सृष्टि नहीं करवायी। उनके अनुरूप माधुर्य, विषाद और स्मृतियों की टीस ही उनमें पायी है।'

कुछ मिनट बाद फिर वे बोले थे–'कोकिल अपने कूजन से ज्यादा से ज्यादा पेड़ों के सूखे पत्ते गिरा देगी, इससे ज्यादा क्या कर लेगी ? अपने अंडे तक तो उससे सेये नहीं जाते। हां, नयी-पुरानी विरहिणियों-विरहियों की पीर जरूर वह पक्षी जगायेगा, उन्हें मिलनातुर भी कर देगा ऋतु परिवर्तन का अहसास जगाकर।' मैंने कहा–'कोयल तो बारह मास बोलती है–खाली बरसात में मेढ़कों का मौसम जानकर चुप रहती है।'

जोशीजी 'मूड' में आ गये थे। बोले–'जीर्ण पुरातन पर जब तक रवींद्रनाथ की 'काल-वैसाखी' वज्रवर्षा नहीं करेगी, तब तक जड़ता-प्राप्त कठोर पुरातन चिड़ियों के चहचहाने से विनष्ट न होगा। आश्चर्य है परिवर्तन जैसी सशक्त कविता का कवि युग-परिवर्तन के लिये ऐसे पोपलेपन की बातें करता है। सुकुमारता अपनी जगह है... पर काल-चक्र का भीम आवर्तन...'

रामचन्द्र टंडन ने कहा था–'कविता मैं ज्यादा तो नहीं समझता पर पंत ओज के कवि हैं ही नहीं। वे तो कोमल प्रकृति के कवि हैं।'

वाचस्पति पाठक की भांति जोशीजी नशे की सार्थकता किसी गंभीर साहित्य चर्चा के जमाने और उसके अधिकाधिक गहराने में मानते थे। १९३९ की लड़ाई छिड़ते ही जीवन महंगा हो चला था। हममें से प्रायः सभी की मासिक आय सारी कोशिशों के बावजूद तीन अंकों तक न पहुंच पाती थी। अक्सर मधुपान करने की

इच्छा को (पैसे की कमी के कारण) जब दबा न पाते तो अपने अगुवा जोशीजी से कहते–आज 'कन्ट्रीब्यूशन ड्रिन्कस' की हो जाय। जोशीजी को कभी नाहीं न थी। ह्वीवेट रोड पर उन दिनों स्थित 'सिन्ध बाम्बे रेस्ट्रां' के एक पूरे कमरे में ऊपर हम बैठते। प्राय: जोशीजी, भगवतीप्रसाद बाजपेयी, वाचस्पति पाठक, राजवल्लभ ओझा, निर्मलजी, सर्वदानंद वर्मा और मैं उसमें रहते। जब नंददुलारे बाजपेयी साथ होते तो उनके लिये लोकनाथ से भांग की छोटी गोली उनके मना करने पर भी होटल के नौकर को भेजकर मंगवायी जाता, ताकि हमारी गोष्ठी में बैठने लायक (कुछ हद तक ही सही) वे भी हो जायें। एक या दो पेग के ही शालीन नशे में हमारी साहित्यिकता वेग पर आ जाती (हमारी इतनी ही मर्यादित सीमा भी थी)।

होटल से उठते समय वैरा बिल लाता। जोशी जी हाथ बढ़ाकर ले लेते। हम लोगों से कहते–'आपको जो देना हो दे दीजिये।' बिल का शेष बड़ा हिस्सा वे खुद चुकाते। पैसे की तंगी के उन दिनों में उनकी यह स्वभाव-सुलभ उदारता हमें एक विचित्र अपनत्व का बोध कराती। आज भी उसकी सुधि में मन भाव-स्निग्ध हो उठता है। देखने में छोटी यह बात आज भी मुझे उतनी ही बड़ी लगती है।

एक दिन मैंने ऐसे में सर्वदानंद वर्मा से कहा–'मान लो तुम परीक्षा में बैठ रहे हो–प्रश्न आता है भगवतीप्रसाद बाजपेयी को आप आदर्शवादी कथाकार मानते या यथार्थवादी? युक्तिपूर्वक उत्तर दी तो तुम क्या लिखोगे? जोशीजी जैसे परीक्षक के पास कापी जानी है। सो समझकर जवाब दो।'

बाजपेयीजी 'ड्राइ जिन' की लहर कुछ गुनगुना रहे थे। संभल कर बोले- ऐसा प्रश्न आने ही न दूंगा।'

राजवल्लभ ओझा ने कहा–'आप अ ऊपर आया प्रश्न-पत्र संशोधन के समय काट देंगे या न आया हो तो जोड़ इससे बहस नहीं। हमें सर्वदानंद से उ चाहिये। वही परीक्षा में बैठने लायक हैं।

सर्वदानंद ने ओझाजी के प्रच्छन्न व को अपनी लापरवाह हंसी में उड़ाते कहा–'बाजपेयीजी न आदर्शवादी हैं यथार्थवादी, वे शरदवादी हैं।'

बाजपेयीजी कलाकार के लिये श वाद को 'ह्यूमेनिज्म' का पर्याय हीं मा थे। बोले–'शरदवादी तो यार! तुम हो। पाठकजी की कहानियों में वही बो है। जोशीजी तो हिंदी कथाजगत के श हैं हीं। मैं . . .'

जोशीजी ने सिगरेट का आखरी उसके सिरे तक खींचकर फेंकते हुए कह 'मित्र! शरद की बात मेरे कथा-साहि के साथ बाद में जोड़ता। पर 'देवदा फिल्म बनने के बाद जो दुर्गति हिंदी भावुकता की हुई है उस पर ध्यान द देखते नहीं हो हिंदी में कैसा बाजा पतला, मतवालापन फैल रहा है। शा

प्रिय द्विवेदी जैसे छायावाद की गरिमा गाने वाले समालोचक देवदास के पतन से इतने प्रभावित हुए हैं कि उस पर कविता ही लिख डाली–'सरस्वती' में वह छप भी गयी ।

हे देवदास हे देवदास !
'पारुले' के उर के महोच्छ्वास !
किस अमृत-लाभ के लिये बंधु
कर गये गरल पर गरल पान
हे तप्त शप्त क्या मिल तुम्हें
केवल विषाद का महादान ?

सुना तो यहां तक है कि उन्होंने अपना उपनाम ही 'देवदास' रख लिया है ।

निर्मलजी ने कहा–'देवदास के असफल प्रेम के प्रति करुण संवेदनशीलता जगाकर लेखक जिस महान मानव-करुणा का मर्म-स्पर्शी, भावबोध दे रहा है वह अनुपम है अद्‌भुत है । अगणित दर्शक उस दर्दनाक अंत को देखकर रोते हुए सिनेमा हाल से निकलते देखे गये हैं । क्या यह सतही है ?'

मैंने कहा–'शरद बाबू की कृतियों में ही 'देवदास' 'पथ के दावेदार' या अन्य अनेक से घटकर है । 'चरित्रहीन', 'बड़ी दीदी,' 'अरक्षणीया', 'शेष प्रश्न' आदि उससे कहीं गंभीर, श्रेष्ठ नारीत्व के चित्रण की परिपूर्णता और अदम्य शक्ति की दृष्टि से अलग-अलग अपनी भव्यता लिये हुए हैं । मुझे तो यह भी लगता है पार्वती के प्रेम की स्वर्ग-मर्त्य विप्लाविनी धारा को देवदास ने समझा ही नहीं . . . अपना ही नाम गलत करता रह गया ।'

पाठकजी बोले–'शरद की पात्रियों में मुझे तो एक ही ऐसी मिली, जो नारी चरित्र की दृढ़ता रखती हो–दत्ता की विजया । बाकी तो बहस मुबाहसे में कितनी भी जोरदार हों–सच्चे कर्म-पथ को पहचानने में असमर्थ दिखीं । कलकत्ते में उनसे मिलकर मैंने शरद बाबू से जब विस्तार से यह सब कहा तो वे चकित जैसे लगे । शायद इसके पहले उनसे किसी ने यह न कहा हो ।'

बाजपेयीजी को शरद संबंधी जोशीजी के विचारों से हम सभी की अपेक्षा ज्यादा जानकारी थी । बोले–'जोशीजी ! आपको हिंदी का शरद हम माने बैठे हैं । मुझे आश्चर्य है ऐसे दिव्य कलाकार जैसा माने जाने में आप अपनी हेठी मानते हैं ।'

राजबल्लभ ओझा ने कहा–'जोशीजी की बातों में भी सार है । पर यह बताइये–चरित्रहीनों के प्रति सहानुभूति और संवेदना जगाने की भावना के परिप्रोत तक ले जाने की प्रवृत्ति तो सोवियत पूर्व रूसकालीन कथाकारों की भी विशेषता रही है । पापी के प्रति करुणा के नाम पर सारे संसार में यह हुआ है । आप तो फ्रेंच साहित्य के भी जानकार हैं ? स्वयं रवींद्र-नाथ और टालसटाय ने अपने सारे अभिजात नैतिक जीवनादर्शों के बावजूद नर-नारी की सभी प्रकार की दुर्बलताओं के प्रति आत्म-संवेदित मनस्विता ही प्रकट की है । आप भी दोस्तोवेस्की, गोर्की, यहां तक कि 'गेटे' का गुणगान करते कभी थकते

नहीं । फिर हिंदी के शरद कहे जाने पर आपको आपत्ति क्यों ?'

जोशीजी ने सबकी बातों को पूरे धैर्य के साथ सुनने की निराली क्षमता थी । किसी को बिना बीच में टोके सिगरेट सुलगाते बोले—'आप लोगों ने मुझे बोलने ही न दिया । अपनी बात की शुरुआत मैं जिस थोथी, नकली और फैशन बन गयी अनुकरणशीलता से करने के बाद शरद और शरदोत्तर कथा साहित्य की नवीन मानवीय भावप्रवणता की चर्चा करता वह तो रह गयी । उपन्यास के पात्रों को, विशेषकर नारी चरित्रों को सहानुभूतिमूलक और संवेदना भरे दष्टि-कोण से चित्रित किया जाय यह कतई जरूरी नहीं है । 'फ्लोबेर' और जोला की पैनी बुद्धिवादी दृष्टि में यह बात आयी थी, ओझाजी ! पर न वे इसे सांगोपांग निबाह पाये और न 'थ्री आफ देम' जैसे बेजोड़ उपन्यास का लेखक गोर्की जो 'मार्किस्ट' अर्थ में भी प्रगतिशील माना जाता है । यह बात भारतीय साहित्य में शरद पर सबसे ज्यादा लागू होती है जो पौराणिक सती नारियों को भी (प्रेमिकायें हों या विवाहितायें) आधुनिकता के लिबास में पेश करते हैं । पर रूढ़िग्रस्त सामाजिक परंपराओं के मूल पर आघात करने का साहस उन्होंने सच्चे अर्थ में कहीं नहीं दिखाया । परंपरा से दलित नारी-समाज के स्वातंत्र्य के हिमायती, अधिक से अधिक निरामिष पैर्वाकार बनकर ही वे रह गये . . . और हम है कि सा
उन्हीं को अंगद का पैर माने बैठे है

बाजपेयीजी ने सीधा सवाल कर
'इसका मतलब माना जाय कि आ
से आगे हैं ? अभी हिंदी भाषी क्षे
आपके पहाड़ी प्रदेश का समाज क्या
के समाज से आगे है जो आप
आगे निकल जायेंगे ? रवींद्रनाथ
के विशुद्ध आनंददायी अतींद्रिय
को लेकर शरद का विरीध किया है
'फ्रायड' और अन्य पाश्चात्य मन
षणवादियों के नाम पर शरद को
विलासी ठहरा रहे हैं । मैंने भी
पढ़ा है—समझकर पढ़ा है । वे
अन्य जिस दलित नारी-वर्ग का
शरद ने किया है वह आर्थिक
धन के नाजायज वितरण के कार
का सबसे अधिक शोषित, सबसे
अत्याचार पीड़ित वर्ग है । उसका
केवल भावना की छटपटाहट नहीं,
वर्गगत बंधन से प्रतिशोध भी है
छूटने को वे सब समय तिलमिलाय
हैं । कर्म की पुकार और कैसी हो

नशे के उतार में भी बाजपेयीजी
जोरदार बात कह जायंगे यह
न सोचा था । जोशीजी ने
स्वर में कहा—'आपकी समझदा
मुझे कोई शंका नहीं । शरद से आ
जाने की बात रचनाशिल्प, क
जादूगरी पर कथ्य की नवीनता और
रणा के अंतर्वेग से कम निर्भर नहीं

शरद से आगे हूं तो इसलिये नहीं उनकी सी रुलाने वाली कलम मेरे पास है, जो रल तारक मोतियों का आसव भले मारी सांसों में भर जाती हो पर वास्त- क जीवन की मूल धारा का अनुसरण रने में सहायता देना तो दूर रहा, हमें याच्छन्न और निष्क्रिय कर देती है । झाजी ने रूसी लेखकों की बात की । रित्रहीनों के प्रति सहानुभूति उभाड़ने ी चेष्टा को उन्होंने एक सीमा के बाहर हीं बढ़ने दिया । मैं यथार्थवादी होकर पनी कथाओं में चरित्रहीन और रोमांस- प्रय पात्रों की अवतारणा करता हूं तो नके पतन को मानव-महिमान्वित करने लिये नहीं, अपने धारदार मनोवैज्ञानिक स्त्र से उनकी आत्मा का स्तर प्रति स्तर लकर उनके घोर स्वरति और अहंभाव निष्पत्त छायावादी प्रेम की पूरी चीर- फाड़ करने के लिये, इस ऐंद्रजालिक ीनी को मिटाकर सामूहिक आत्मा का रिष्करण करना होगा—भग्नप्रेम के प्रति- क्रिया-खुमार को खत्म करना होगा । ठकों की आंखों पर युगों से चढ़े इस म्मोहक रंगीन चश्मे को तोड़ना होगा ।'

पाठकजी ने पूछा—'तो मनोविज्ञान को आप 'एक्सरे' किरणों का यंत्र बना देंगे ? कथा-लेखन को सर्जरी . . हम जैसों को कंपाउंडर जिनकी प्रीति-सुकोमल कहानी प्रसाद 'स्कूल' की हामी भावनायें आपकी मझ में आत्मक्षय का कीटाणु बनी हैं ।'

जोशीजी वैसी ही गंभीरता के साथ बोले—'मेरी बात समझ लीजिये । आज का यथार्थ भावुकता और आदर्श के झीने-झीने आवरण से मुक्त होना चाहता है । अब तक के मानवतावादी लेखक की सहानुभूति टाल्सटाय हों या शरद अपने दुश्चरित्र नायक के प्रति रहती थी । आज का मुझ-सा यथार्थवादी लेखक अपनी प्रगतिशील मनोवैज्ञानिक तीक्ष्णता से (अपने पात्रों की चरित्रहीनता के लिये समाज को दोषी मानने के बजाय) अपने नायक के अंतर्मन में दबी पड़ी सभी विकृतियों और गर्हित रुग्णताओं को अत्यंत निर्ममता के साथ चीरकर रख देगा । उनका मनोउत्स उद्‌घाटित कर देगा । वह जानता है ऐसे भ्रष्ट और उच्छृंखल, निकम्मे, पतनोन्मुख चरित्र के प्रति भावुकतापूर्ण करुणा दरसाने से न उसके वर्गगत स्वभाव-आचरण, चरित्र में कोई मूल्यगत सुधार होगा न समाज का कोई कल्याण । चरित्र भ्रष्टता कितनी भी चटकीली हो—उसके प्रति कितना भी क्षमा का संस्कार और सुख जगाया हो—वह मानवात्मा का परिमार्जन कर ही नहीं सकती । विकृति के अहं की प्रत्येक पर्त उधेड़नी है ।'

जोशीजी ऐसे ही अहं-विदारक यथार्थवाद की बातें किया करते थे जो बंगला, अंगरेजी, हिंदी के अश्रुविगलित, कारुण्य-भरे, कविता की बहुवर्णी भावुकता में तैरते, मौसम के मुताबिक बदलते ऋतुकालीन यथार्थवाद से आगे का था । अंगरेजी और यूरोपीय लेखकों के अलावा बंगला के बुद्धदेव

वसु, अचिंत्यकुमार सेनगुप्त, प्रेमेंद्र मित्र, अन्नदाशंकर राय आदि के कथासाहित्य का हवाला भी देते रहते थे। साहित्य की अधुनातन प्रवृत्तियों की उनकी पकड़ शुरू से ही थी। उनका चिंतन जटिल भी था, गहन भी। निरालाजी की उनकी बहस सुनकर लगता था दो साहित्य-सौंदर्योपासक अपने भीतर की अनंत भावश्री उड़ेल रहे हों। निरालाजी रवींद्र की 'उर्वशी' पर फिदा थे, जोशीजी उनकी 'स्वर्ग हइते विदाय' (स्वर्ग से विदाई) पर, 'जीवन-देवता' पर। पर बहस में गर्माने की स्थिति तक आते-आते जब निरालाजी रवींद्र का 'जामिनी जेते जागाले ना केनो' जैसा गीत अपने संगीतसिद्ध कंठ से गाने लगते तो जोशीजी की वाणी सम्मोहित हो जाती—वे सिर हिला-हिलाकर अपनी मनोमुग्धता प्रकट करते। जोशीजी के कर्नलगंज स्थित मकान में निरालाजी जब वैदिक भोजन (मटन) बनाते और घंटों हम उनके बनाये सालन के साथ उनकी गीतात्मक प्राणानुभूति का सुख लूटते तो विश्वास न होता कि इन्हीं जोशीजी को (उनके अग्रज सहित) निरालाजी ने एक युग तक अपनी तीखी चुभती हुई व्यंगावली का शिकार बनाया होगा। हमने वह सब कभी पढ़ा भी था यह तक न याद रह जाता।

उसी सिंध-बाम्बे होटल की एक वैसी ही दूसरी संध्या याद आती है। सन ४१ में नंददुलारे बाजपेयी लेखन (स्वतंत्र) की आकाशी वृत्ति से मुक्ति पाकर हिंदू
विश्वविद्यालय में व्याख्याता नियुक्त
जा रहे थे। उनकी विदाई-स्वरूप
घनिष्ठ मित्र वाचस्पति पाठक ने
'प्रेम-पर्व' आयोजित किया था।
पेयीजी हिंदी में नयी साहित्यिक
लाने का श्रेय जोशी बंधुओं को देते
जोशीजी के 'संन्यासी' उपन्यास की
बड़ी चर्चा थी। कहानी लेखक के
तो वे पहले ही उन दिनों की प्रथम
में आ चुके थे। 'गोदावरी की
यात्रा 'कहानी पर विनोदशंकर व्यास
कथा-पारखी,' 'अपत्नीक' और
और दिवाली' पर भगवतीप्रसाद वा
जैसे विदग्ध लेखक मुग्ध थे। बातची
दौरान नंददुलारेजी आदर्शों की बात
लगे, जिनके प्रति निरंतर क्षीण होती
वाली साहित्यसर्जना की निष्ठा न
हिंदी वरन् पूरे भारतीय साहित्य में
का विषय बनती जा रही है।

जोशीजी ने कहा—'सचाई तो
बाजपेयीजी! कि जो व्यक्ति सम
से जितनी दूर होते हैं, उन्हें आद
उतना ही ज्यादा नजर आता है।
तियों और विकृतियों से निपटन
यथार्थवाद है, जो अंततः आदर्शों को
वानता ही तो देता है।'

मैं भी बाजपेयीजी द्वारा अक्सर
और वार्ताओं में प्रायः दी जाती
की दुहाई से सहमत न हो पाता
उनके आलोचनात्मक विश्लेषण पर

(शेषांश पृष्ठ ५० पर)

गीत

आऊंगा . . . !
मैं जरूर आऊंगा . . . ! !
अबके इस फागुन में – गांव में तुम्हारे . . . ! ! !

सैकड़ों प्रसंग जुड़ चुके थे मुझसे तुझमें
किन्तु किसी ने वे शायद नहीं कहे होंगे
लगता है – गांव में तुम्हारे भी – अब वैसे
टेसू के ललछौंहे वन नहीं रहे होंगे

लाऊंगा . . . !
बहुत रंग लाऊंगा . . . ! !
अबके इस फागुन में गांव में तुम्हारे . . . ! ! !
हरी झील के घुटनों-घुटनों पानी में से
कमल वृंत लाने को रह-रहकर जूझना
याद तुम्हें भी आता होगा गिलहरियों के
नन्हें पदचिन्हों को मिल-जुलकर खोजना

गाऊंगा . . . !
नये गीत गाऊंगा . . . ! !
अबके इस फागुन में गांव में तुम्हारे . . . ! ! !

– कन्हैयालाल वाजपेयी

११९ / २६७ (पानी की टंकी के पास), दर्शनपुरवा, कानपुर, उ. प्र.

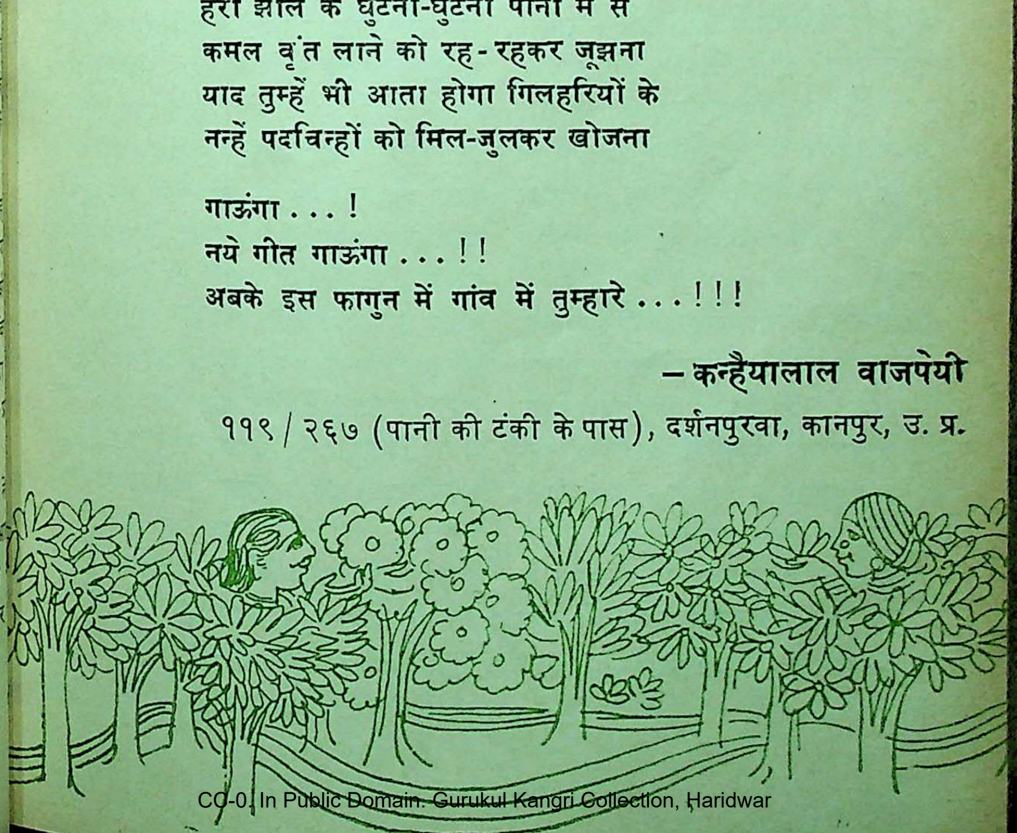

(पृष्ठ ४८ का शेषांश)

यह खोल मुझे कभी-कभी उन दिनों हिंदुत्व की सांप्रदायिकता का फैलाव जैसा लगता था । सबसे छोटा था पर बोल उठा–'सच्ची प्रेरणा का लेखक यथार्थों को लेकर ही चलता है–सामाजिक हों या आर्थिक-आचारिक नीतिगत हों या व्यक्तिगत । यह बात अलग है कि वह सफलता मिलने के बाद आदर्शवादी होता जाता हो . . .'

बाजपेयीजी ने कहा–'साहित्य जीवन जैसी इतनी उलझी और गहन वैविध्य भरी विधा है कि सुविधा-संपन्नता उसका कोई समाधान नहीं कर सकती । आदर्श ही तो उसे कालजयी परिणति देते हैं ।

भगवतीप्रसाद बाजपेयी ने कहा–'आदर्श आखिर है क्या ? धनी शासक वर्ग के हाथ में वे सदा सत्ता के हथियार रहे हैं । उन्होंने अपनी सामाजिक और सुविधाभोगी मालिक श्रेणी के लिये जो तौर-तरीके संपोषक पाये, आरामदेह पाये, वे ही आदर्श कहलाये ।'

राजबल्लभ ओझा सामाजिक समानता के स्तर पर जैसे आम और खास का भेद नहीं मानते थे, वैसे रचना में आदर्श और यथार्थ के भेद को भी नकली और मालिक-श्रेणी जन्य मानते थे । बोले–'पंडितजी ! भारत की स्वाधीनता का प्रश्न सारे संसार के गुलाम देशों की आजादी के सवाल के साथ जुड़ा है । नेहरूजी सन ३० से यही कहते आ रहे हैं । इसके पहले भी कहा होगा । आदर्श है क्या ? यथार्थ ही पूर्ण स्वस्थ, सबल, निर्विकार होकर आदर्श बन जाता है। आज समग्र मानव की मुक्ति और हितों के निपटारे की बात है। सारी दुनिया के विकसित मानव समाज की प्रबुद्धता एक है, उसके आदर्श एक हैं। कंपार्टमेन्टलाइजेशन की बात भूल जाइये !'

जोशीजी को लग रहा था कि बाजपेयीजी अकेले पड़ गये थे । जिसकी विदाई में यह 'शालीन' संध्या आयोजित हो उसी को ये प्रगतिशील कहे जाने वाले बंधु बोलने ही नहीं देते । वे बोले–'मित्रो ! यह प्रगतिशील लेखक संघ की बैठक नहीं है। आप लोगों ने नंददुलारेजी की बात का सारतत्व समझा नहीं–समझना चाहा भी नहीं । आदर्श ही हमें अपने चारों ओर की जिंदगी से जोड़ते हैं । आदर्शों के बिना सत्य की प्राप्ति संभव नहीं–उस सत्य की परिभाषा आप जो भी करें। बाजपेयीजी भारतीय आदर्शों के परिपोषक इसीलिये हैं कि वे आदर्श ही विश्व इतिहास में 'डायनेमिक' रहे हैं जबकि ग्रीस, मिश्र, रोमन सभ्यतादि के आदर्श 'स्टेटिक'–और इसीलिये वे मिट गये । वेंकटेश नारायण तिवारी की लेखमाला 'राधारानी स्वीकीया है या परकीया' का बाजपेयीजी लिखित उत्तर मैंने जब पढ़ा था तभी उनकी गूढ़ संस्कृति दृष्टि मैंने समझी थी । हमारे देश में सभ्यता के अत्याचार की अपेक्षा समाज की असभ्यता और शोषण की

पीड़ा अधिक है । गेटे के शब्दों में 'हम दासों को रखने वाले वंश के खंडहर हैं ।' पर आत्मा-आत्मा में प्रतिबिंबित पीड़ित मानवता आदर्शों की आस्था की तलाश में ही तो भटक रही है । कोई भी वाद—मानवतावाद, प्रगतिवाद, समाजवाद सभी तो साहित्य के देवता से, आप चाहे तो 'डिक्टेटर' से कह लीजिये—आज भी तो पुकार-पुकार कर यही कह रहे हैं—'रक्त दिये की लिखिबो ? प्राण दिये की शिखिबो ? की करिबो काज ?' मुझे आज्ञा दो कि अपने रक्त से मुझे क्या लिखना होगा और अपने प्राण देकर मुझे क्या सीखना होगा ?

जोशीजी का जीवन एक ऐसे कलम के सिपाही का जीवन है, जो सारे अभावों, विफलताओं और नयी-नयी नौकरियां (पत्रकार, अनुवादक, प्रकाशकों की सुरुचि का लेखन, साहित्य-सहायक, आकाशवाणी में हिंदी कार्यक्रम प्रोडूसर) करने और छोड़-छोड़कर फिर बेकारी के स्वतंत्र लेखन में लौट आने वाला नामुराद रचनाकार होकर भी अपनी आत्मस्वीकृत आधुनिकता से ही प्रतिबद्ध रहा । कितने नवमत वाद आये, चले गये या अर्धमृत पड़े रहे, पर वे अपने विश्वास की धुरी पर अडिग रहे । परंपरा से उनका सही नाता बराबर जुड़ा रहा । वे अंतस्तल और अवचेतन मनोलोक के विशेषज्ञ माने जाते रहे पर 'जहाज का पंछी' जैसा उनका उपन्यास समाज की बाह्य परिस्थितियों को उस अपराध-मानसिकता का नियामक मानता है, जिससे तरह-तरह की वीभत्सता, पाप, दुराचार जनमते हैं, जीवन में कलुष अधिकाधिक पनपता है । इस प्रकार सामाजिक और वैज्ञानिक तथ्य के समन्वय में ही वे धीरे-धीरे उस अहं से त्राण का रास्ता निकाल रहे थे, जो समाज की छाती पर घुन की तरह लगा उसे खोखला किये जा रहा है । मनोग्रंथियों के निरूपण में जोशीजी वैज्ञानिक की-सी तटस्थता लिये हैं—अज्ञेय या जैनेन्द्र की तरह वे अपनी पात्रियों की रुग्ण मानसिकता में स्वयं रस नहीं लेने लगते । उनकी यही भावावेग निस्संगता उन्हें उपरोक्त दोनों बड़े कथाकारों से भिन्न करती है । पर मुझे सर्वोपरि लगता रहा है उनका साहित्य का दार्शनिक विवेचक रूप, जिसकी वे एक अंतिम यादगार थे । जीवन की विषाक्त कटुता पी-पीकर उन्होंने जो लिखा—जितना और जैसा लिखा वह उन्हीं के जैसे जीवन-जयी के लिये संभव था ।

—पचपेड़ी, दक्षिण सिविल लाइन,
जबलपुर, म. प्र.

□

एक बार डा. हरिवंशराय 'बच्चन' ने श्री सुमित्रानंदन पंत से कहा, 'क्या बताऊं ऐसा जमाना आ गया है कि आजकल हिंदी कवियों की पूछ नहीं है ।'

इस पर मुस्कराते हुए पंतजी बोले, 'बाबा ! मेरा तो यह कहना है कि जब आदमी की पूछ नहीं रह जाती, तभी वह कवि बनता है ।'

—डॉ. भैरूंलाल गर्ग

□

ब्रज की होली

☐

गजेंद्रनाथ चतुर्वेदी

बाजैं झाँझ, झालर, मृदंग, सहनारी, तूर, चोवा, मेद केसर की कींच भई भारी है।
उड़त अबीर ऐरी बीर बहुरंगी चीर रवि-तनया के तीर होरी की तयारी है।
ताई समै औचक बिलोकि नंदलाल—भई बिबस बिहाल बृषभान की दुलारी है।
डार्‌यो चहै लाल पै न बाल पै गुलाल सधै, गयी ना संभारी छूटि गिरी पिचकारी है॥

०००

केसर पलास रंग बोरी ब्रज खोरी, मची होरी लै कमोरी बढ़ी मृदु मुसकाय कै।
कंजन सौं कोरी दृग-कोर दृग-कोरन सौं, ओ री जुरी औचक तहांई तिरछाय कै।
दोऊ ठिक ठौर ठगे, दोऊ रस ख्याल पगे, चोरा चोरी चोरी भई चित्त की लुभाय कै।
लाल तौ गुलाल की गहैं के गहैं झोरी रहे, गोरी के कपोलन पै रोरी रची धाय कै॥

०००

चरचि गयौ कैधौं परचि गयौ है, हारी बचि-बचि आपै रचि-रचि कै बढ़तु है।
नैनन जो धोऊं तौ समात रोम रोमन मैं, धोऊं रोम रोमन तौ नैनन मढ़तु है।
छूटचौ री अबीर क्यौ हूं न्हात जमुना के तीर, पै ये कै अधीर चोपि चौगुनो चढ़तु है।
होरी कहा खेली अंग-अंग संग-संग लग्यौ, ऐरी स्याम रंग रंच काढ़ैं ना कढ़तु है॥

०००

बारन मैं हारन के उरझि गये हैं तार, तार-तार सकल सिंगारऊ संजोवै ना।
बोरी लाल रंग गोरे अंग मिलि गयी सारी, देह दहकीली-सी दिपै सो दिपै, गोवै ना।
रीझि रीझि, बिहंसि-बिहंसि, हंसि-हंसि, रोवै, खोवै आपु ही मैं, उत जोवै, इत जोवै ना।
ऐरी बीर लै लै अंजुरीन ढरकावै नीर, आनन लौं ल्यावै पै गुलाल बाल धोवै ना॥

—'आरोविल', पांडीचेरी-६०५१०

☐

फागुनी परिचर्चा

क्यों फीके पड़ रहे हैं प्रेम रंग...?

संयोजक : **जगदीश किंजल्क**

पुरुष और स्त्री के अस्तित्व काल से ही यह सर्वमान्य मान्यता चली आ रही है कि प्रेम-रंग इतने गाढ़े होते हैं कि छुटाये से भी नहीं छूटते...! सच भी है वह प्रेम-रंग ही क्या जो छुटाये से छूट जाये। प्रेम-रंग तो दिन दूना रात चौगुना गाढ़ा होने वाला रंग है। जीवन में यदि यह रंग न हो तो वह जीवन ही व्यर्थ और निस्सार-सा हो जाता है। साहित्य, संस्कृति और समाज के निर्माण में प्रेम का ही सर्वाधिक महत्व होता है, परंतु आज के युग में, न जाने इस प्रेम-रंग में भी इतनी मिलावट आ गयी है कि चढ़ता ही नहीं। सामान्य रंगों की मिलावट से तो हम सब परिचित हैं ही, परंतु प्रेम-रंगों में मिलावट देखने का, इस युग का एक रोमांचक अनुभव है। अपने देश में आज वातावरण और माहौल कुछ ऐसा हो गया है कि आम चीजों जैसी ही मिलावट इस पवित्र रंग में भी आ गयी है। सहज ही प्रश्न उठता है कि आखिर इसका कारण क्या है? ऐसा क्यों हो रहा है? इस संबंध में यहां प्रस्तुत हैं कुछ अक्लमंदों के विचार।

डा. शंकर पुणताम्बेकर (जलगांव)

क्यों फीके पड़ रहे हैं प्रेम-रंग? सचमुच यह एक चिंतनीय सवाल है। प्रेम के लिए एक ओर भावुकता के नाम मूर्खता तो दूसरी ओर पुरुषार्थ के नाम आवारगी की जरूरत होती है। चिंता का विषय है कि जीवन हमारा ऐसा संघर्षमय हो गया है कि रसमय मूर्खताओं और आवारगियों को समय नहीं मिलता। प्रेम एक लक्ज़री है, भरे पेट की लक्ज़री। भरे पेट के कुछ युवा इस लक्ज़री को अपनाते हैं, पर अब प्रेम वह उपलब्धि नहीं है जो चुनाव है। आज प्रेम नीति से राजनीति बड़ी है।

हां, आज रंगों में भी इतनी मिलावट होने लगी है कि वे गाढ़े नहीं चढ़ते। प्रेम रंग में अर्थ रंग की मिलावट हो गयी है, सो वह भी गाढ़ा नहीं रहा। फिर प्रेम रंग का फिल्मों ने भी नास मारा है। अब प्रेम निष्ठावान देवदास का विषय नहीं रहा है, निर्लज्ज गुमराह युवक का हो गया है। और निर्लज्ज गुमराह बनना राजनीति में खप जाता हो, प्रेम नीति में नहीं खप पाता। प्रेम का रंग गाढ़ा इसलिये भी नहीं रहा कि लड़की घूंघट में, परदे में नहीं रह गयी

है। सहज प्राप्य हो गयी है। दहेज की विभीषिका से बचने के लिए इसके माता-पिता की ओर से तीव्र विरोध नहीं रहा। और सहज तथा सफल प्रेम के रंग जो किस्सा कहानी नहीं बनते, गाढ़े नहीं होते।

प्रेम का रंग लाल है और युद्ध का रंग भी लाल है। आज हम अपने जीवन के युद्धस्वरूप इतने विवश हैं कि समस्त लाल उसमें चुक जाता है, प्रेम के लिए बच ही नहीं रहता। नीले, शुभ्र, काले और लाल रंगों का खेल देखिये। नीले वर्ण . . . उच्च आकाशीय विचार के कृष्ण, शुभ्र वर्णीय... उदात्त संस्कृति की राधा को कैसे प्राप्त करे, जब काले कारनामों वाले व्यवस्था कंस से जूझते उसे फुरसत नहीं है और उसका लाली भरा समस्त शौर्य उसी में चुक जाता है। वैसे भी प्रेम पीले पौष्टिक दूध था –सफेद, फिर वह अंध मंदिरा बना लाल और इधर वह सामान्य कोकाकोला है–काला. ...। कोकाकोला पिया-पिया, नहीं पिया ऐसा बदरंगा दूध कृषि संस्कृति की देन था, कोकाकोला फैक्टरी संस्कृति की देन है सो बदरंग . . .।

०००

विमला रस्तोगी (दिल्ली)

'सूरदास की काली कमरिया, चढ़े न दूजो रंग,' और 'रंगरेजवा रंग दे ऐसी चुनरिया रंग न फीका पड़े' वाली उक्तियों के समाज में आज प्रेम रंग एक बटा दो नहीं, एक बटा सौ फीके पड़ते जा रहे हैं क्योंकि भारतीय सभ्यता, संस्कृति का दामन छूट रहा है। रांझा, सोहनी-महिवाल के इस केवल जज्बाती प्यार रह गया। वह गहराई, सच्चाई और पवित्रता रह गयी। हर रिश्ते के प्रेम आधार स्वार्थ की रस्सी ने जकड़ लिया है। कभी ऐसा लगता है कि बाप-बेटे मां-बेटी की, भाई-बहन की, भाई की, पति-पत्नी की, सबकी निगाह दूसरे के प्रति स्वार्थ भरी ही उठ प्रेम में प्रगाढ़ता लाता है त्याग। प सभ्यता में रंगते जा रहे आज के में त्याग की बातें करने वाला प्राणी फिरा समझा जाता हैं। आजकल के दावे करने वाले, हामी भरते थोक के भाव मिल जायेंगे, पर वाले फुटकर भी नहीं मिलते। पार्क, रेस्त्रां, नैंर-सपाटे और हाथों डाल के घूमना, ये सारी चीजें बन है प्यार की कसौटी। वह मूक प्यार, में गहराती प्यार की वेदना, दूसरे के लिये सब कुछ कर गुजरने की भरी कसक अब इने-गिनों में भी को नहीं मिलती। पश्चिमी सभ्य अंधानुकरण ने फीके कर दिये हैं रंग। 'तू नहीं और सही' की भाव धूमिल कर दी है प्रेम रंगों की च होली पर एक दूसरे को कच्चे रं रंग कर हम प्रेम प्यार का दावा हैं, पर उतर जाते हैं वे रंग कुछ दि पक्का रंग है केवल प्रेम रंग जो

होते हुए भी जिन्दगी को रंगीन रखता है।

○○○

सुधारानी श्रीवास्तव (जबलपुर)

'रंग' का शाब्दिक और भावनात्मक, दोनों अर्थ होता है। आज के युग में मिलावट का बोलवाला है। हर जगह, हर वस्तु में मिलावट है तो रंग ही कैसे शुद्ध हो। पिछले कुछ वर्षों में मैंने खास होली की रात को हत्याएं होते सुनीं, पढ़ीं और गुनीं। कहां गयी हमारी वह लोकोक्ति . . .

होली मध्ये आठ दिन, ब्याह माह दिन चार,
शठ, साधू, वेश्या, वधू, सबै भये इकसार।

आज बदले की आग में, भविष्य के प्रति असुरक्षित युवा कहता है, 'होली की रात देख लेंगे।' और तो और, आज तो खून भी मिलावटी हो गया है। उसका धंधा भी जोरों से, पनप रहा है।

अब यदि मैं कहूं कि मेरा हास्य-व्यंग्य भी मिलावटी हो गया है तो यह गलत नहीं होगा। अपना रंग चढ़ाने के लिए लोग साम, दाम, दंड, भेद सभी का उपयोग कर डालते हैं। चाहे वह राजनीति का अखाड़ा हो या साहित्यिक कुश्ती, सवाल रंग चढ़ाने का है और यह होली पूरे साल, चौबीसों घंटे चलती रहती है। आज के इस माहौल में आमों का बौर, पलाश के फूल, रंगीन चुनरी ओढ़े प्रकृति की बातें बेमानी हो गयी हैं। फुरसत ही किसे है कि जो जंगल में बैठकर प्रकृति को निरखे?

टेसू के फूलों के रंग, इतिहास की वस्तु हो गये हैं। आज तरह-तरह के रासायनिक रंगों का उपयोग मात्र एक रस्मी परंपरा ही रह गयी है। जहां तक मेरे ज्ञान का सवाल है आज मनुष्य अपनी मनुष्यता से दूर होता जा रहा है और मशीन से जुड़ता जा रहा है। मशीन का रंग ही आज सर्वोपरि है और मनुष्य के ऊपर वह हावी है।

○○○

संतोष खरे (सतना)

इस भौतिकवादी युग ने, भावनात्मक संबंधों को भी प्रभावित किया है। प्रेमिका अपने प्रेमी से केवल उसकी भावना नहीं, उसका बैंक बैलेंस भी देखती है। विवाह करनेवाला युवक और उसका पिता भी, वधू के पिता के द्वारा दिये जाने वाले दहेज पर अधिक ध्यान देता है अगर विवाह में पर्याप्त धन प्राप्त नहीं हुआ तो यह भी देखा जाता है कि पति अपने जीवन-साथी को प्रताड़ित करने अत्याचार करने और यहां तक कि उसकी हत्या तक करने के लिए तैयार हो जाता है! अब आप ही बताइये कि कहां रह गया है प्रेम का गाढ़ा रंग . . . ?

बाज़ार में मिलने वाले रंगों में तो खैर मिलावट होती ही है और पैसे खर्च कर रंग लाने और होली खेलने पर वे रंग नहीं चढ़ते। ऐसी ही कुछ मिलावट लगता है प्रेम-रंगों में हो गयी है। भौतिक सुखों की होड़ ने आदमी को भावना और संवेदना शून्य बना दिया है। रुपया, पैसा, अच्छा मकान, गाड़ी और सुख-सुविधा का

अन्य सामान ही उसके जीवन का लक्ष्य बना दिया है। समाज में उसी व्यक्ति की इज्जत होती है जो धन धान्य से संपन्न होता है। संपन्न होने के लिए अनुचित ढंग अपनाने पड़ते हैं और जो व्यक्ति इस सबमें लिप्त हो जाता है, वह धीरे-धीरे प्रेम रंग भूलने लगता है।

ऐसे वातावरण में प्रेम की पवित्रता, कसक और ईमानदारी की अपेक्षा करना निरर्थक है।

यह देश उन महापुरुषों का देश है जिन्होंने प्रेम की भावना को सर्वोच्च माना है और 'ढाई आखर प्रेम का पढ़े सो पंडित होय' विचार वाले देश में यह स्थिति क्यों और कैसे निर्मित हुई, यह किसी से छुपा नहीं है, पर विडंबना यही तो है कि हम सब जानते-बूझते इसके संबंध में विचार नहीं करना चाहते। जब तक भौतिकता, राजनीति और भ्रष्टाचार की आदमी के जीवन में मिलावट होती रहेगी, प्रेम का रंग इसी तरह फीका बना रहेगा।

०००

अनूप अशेष (सतना)

सूरज और सूरजमुखी फूल के सघन प्रेम प्रतीक को संदर्भ में रख कर कितनी ही कविताएं लिखी गयीं। कोमल और भावुक युवा मन इन प्रतीकों से अपने को जोड़ते रहे हैं। इसके वैज्ञानिक पक्ष से उनका कोई सरोकार नहीं। वे तो भीतर के नेह को बाहर की हर उस वस्तु से जोड़ना जानते रहे जो खिला हो, नेहमय हो, रस रंग हो। किंतु आज बीस-प वर्षों के अंतराल में कितना कुछ गया। वह मन ही नहीं रह गया जो जानता हो, जुड़कर घुल-मिल जाना परिणति रही हो।

कल ही तो परिचित के दरवाजे मुखी को देखा था। दो-तीन फूलों सिर्फ एक फूल सूरज की ओर खिला बाकी मुंह फेरे थे। इसे क्या कहेंगे। तो समूची प्रकृति ही उलट गयी है, गयी है। इस प्रकृति परिवर्तन और वीय मानसिक प्रदूषण की नियति के लिए हम विवश हैं। वह घरूपन, पन, आस-पास तथा शहर प्रदेशों का वह तार टूट गया है, जो आदमी को रिश्तों का नाम देता था। सब कुछ गया है, क्षीण हो गया है, केवल अपने सिमट गया है। अब स्वार्थ ही रिश्ता महात्वाकांक्षा की पूर्ति ही दूसरों से को प्रेरित करती है। प्रेम कहां है

जब प्रकृति में ही मिलावट है, में स्वार्थ है, परिचय में औपचारिकता तब प्रेम रंग फीके ही रहेंगे। और भाई, तुम अपने आस-पास ही देख लो वह तो ईसुरी और रजऊ की धरती ईसुरी का अंश मौजूद भी हो पर कहां है? जिसमें लोग हीरे की कौंध हैं वह हीरा कहां है! और आज प्रेम के रंग कहीं गाढ़े हैं, उनमें फीका हो, मिलावट न हो, कसक हो, तो मेरे के उस स्वर्ग को मेरा प्रणाम है,

□

तीन फागुनहरी रचनाएं

□

—— शिवप्रसाद 'कमल' ——

बहारों के दिन

आये फिर कुंकुमी फुहारों के दिन
रंग भरे फागुनी बहारों के दिन ।
सरसों की चूनर पर तीसी की छींट
बगिया में खिल रहे अनारों के दिन ।
हरित पीत नील हुए प्यार भरे पल
धूप लगी बांटने इशारों के दिन ।
दहक उठे सेमल वन, बहक उठा महुआ
आंगन में लौटे कचनारों के दिन ।
रूठ गया दर्पण में सोनाली रूप
बन गये गुलाबी मनुहारों के दिन ।

□

गुलाबी फागुन में

लगता महताबी फागुन में
यह रूप शबाबी फागुन में,
आंगन में उतरी ओढ़ हवा
आंचल किमखाबी फागुन में,
लगते गुलाल– कुंकुम के हैं
अब ठाठ नवाबी फागुन में,
रंगों ने मन के नाम लिखा
फिर पत्र जवाबी फागुन में,
छप गये व्याकरण फूलों के
इस बार किताबी फागुन में,
महुआ पी मौसम की आंखे
हो गयीं गुलाबी फागुन में ।

□

हम कुंकुम घोलें

मन हुए अबोले फागुन में
फिर कैसे बोले फागुन में ।
उस पार झील के दहक रहे
टेसू के शोले फागुन में ।
रंगीन झरोखे चुपके से
फूलों ने खोले फागुन में ।
उड़ रहे हजारों रंगों के
अब उड़न-खटोले फागुन में ।
खो गये प्राण तुमसे मिलकर
हम कहां टटोलें फागुन में ।
आओ गुलाल के मेघ रचें
फिर कुंकुम घोलें फागुन में ।

— कल्पना मंदिर, चुनार, मिर्जापुर, उ. प्र. —

□

वेद और गायत्री

☐ राधाकान्त

चौबीस अक्षरों वाला प्रसिद्ध गायत्री-मंत्र वैदिक मंत्रों में सर्वोपरि स्थान रखता है। यह गायत्री छंद में है; इसलिये इसका नाम गायत्री पड़ा। सविता (सूर्य तथा विश्व प्रसव-कर्ता परमात्मा) से संबंध के कारण इसका एक नाम सावित्री भी है।

इस मंत्र का महत्व इससे भी ज्ञात होता है कि यह तीनों वेदों में पाया जाता है। ऋग्वेद (३, ६२, १०) और सामवेद (उत्तरार्चिक १३, ३, ३) में तो एक-एक बार ही आया है; परंतु यजुर्वेद में अनेक बार आया है –

मंत्र यह है–

'तत्स वितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात।'

सायणाचार्य ने इसका अर्थ इस प्रकार किया है–'जो सविता हम लोगों की बुद्धि को प्रेरित करता है। संपूर्ण श्रुतियों में प्रसिद्ध उस द्योतमान जगत्सृष्टा परमेश्वर के समंजनीय तेज का हम लोग ध्यान करते हैं।' इसका अर्थ इस तरह भी किया जाता है–'विश्व के रचयिता परमात्मा (वा सूर्य) के श्रेष्ठ तेज का हम ध्यान करते हैं, जो हमारी बुद्धि को सत्कर्म में प्रेरित करे।'

मंत्र में तेईस ही अक्षर हैं, परंतु सर्व प्रथम ओंकार (ओम् ऊँ) रहता है। इसलिये चौबीस अक्षर हो जाते हैं। आचार्य ओंकार के बिना मंत्र में ही नहीं मानते। बहुत लोग गायत्र तेईस अक्षर ही मान कर इसका 'निचृद गायत्री' रखते हैं। कुछ 'वरेण्यम' का पाठ 'वरेणियम' चौबीस अक्षर मानते हैं।

इस मंत्र के पहले भूः भुवः स्व लोग लगाते हैं। इनका अर्थ है, अंतरिक्ष और द्यौ। कुछ लोग इन का अर्थ सत्, चित्, आनंद भी कर ब्रह्म परक होने से इसका एक नाम गायत्री' भी है। इसमें तीन चरण

तैत्तिरीयारण्यक (१.११.२) मंत्र का विवरण है। छांदोग्यो (३.१२.१) का कहना है कि वा इदं सर्वम्' अर्थात् ब्रह्मांड में जो वह गायत्री है। बादरायण के ब्रह्म (१.१.२५) पर शारीरिक भा शंकराचार्य ने कहा है, 'गायत्री मंत्र से ब्रह्म की प्राप्ति होती है।' मनु ने है 'तीन वर्ष तक सावधानी के साथ का जप करते रहने से जपक परब्रह्म की प्राप्ति होती है।' गीता में भगवान कृष्ण ने कहा है- में गायत्री हूं . . .'

उपनिषदों में प्रतिदिन संध्या करने की ाज्ञा दी गयी है ।

कहा गया है–'अहरहः संध्या मुपासीत।' कर्म तीन प्रकार के बताये गये हैं– नित्य, नैमित्तिक तथा काम्य । इनमें नान, संध्या गायत्री-मंत्र जप, हवन, व-पूजन और बलि वैश्वदेव आदि नित्य र्म हैं । पर्व, तीर्थ आदि के कर्म नैमित्तिक । नित्य कर्म और नित्य कर्मों में सर्व-ष्ठ गायत्री जप न करने से जीवन में घ्न होता है, पाप भी होता है । मनु-मृति में कहा गया है कि 'प्रातःकाल ासन लगाकर गायत्री जपने से रात का किया पाप नष्ट होता है, और सायंकाल ंध्या (गायत्री जप) करने से दिन का किया पाप विनष्ट होता है ।' मनुष्य के ुष्कर्मों से उत्पन्न बुरे फलों को नष्ट करने लिए गायत्री का प्रतिदिन दो बार जप रना आवश्यक है ।

याज्ञवल्क्य आदि की स्मृतियों में तीन बार जप करने की आज्ञा है । रात-दिन और दिन-रात की संधि संयोजन वेला) में, प्रातः और सायं-ाल में, करणीय माने जाने के कारण सका एक नाम संध्या है । यह 'संध्या ावित्री' साक्षात् ब्रह्मरूपिणी जगन्माता

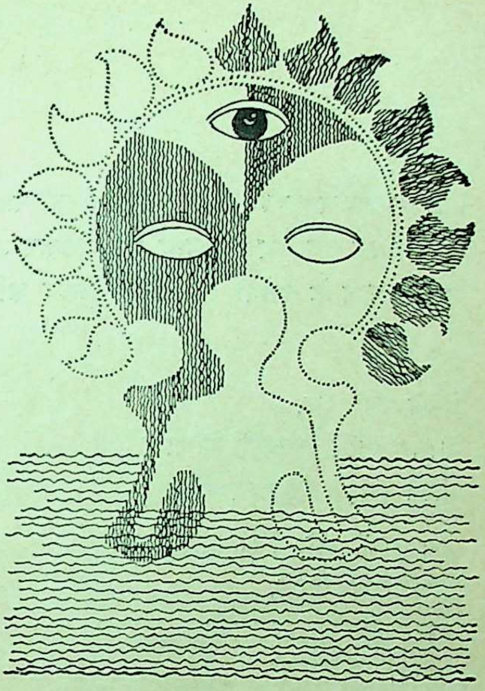

मानी गयी है –

'त्वमेव संध्या सावित्री त्वं देवि,
जननी परा ।' [दुर्गा सप्तशती]

इस प्रकार नाना शास्त्रों में गायत्री की विविध महिमाएं बतायी गयी हैं । इसमें संदेह नहीं कि वैदिक मंत्रों में सर्वाधिक प्रतिष्ठा और प्रख्याति इसी गायत्री-मंत्र की है ।

–भोपाल विश्वविद्यालय,
भोपाल, म. प्र.

☐

मां-बाप के प्रति कर्तव्य

हम अपने मां बाप के नाम को रोशन कर सकते हैं, या कम से कम इतना ध्यान रख ही सकते हैं कि उनके नाम में धब्बा न लगे । यह न हो तो हमारा कम से कम इतना र्तव्य तो है ही कि उनका पालन उनकी वृद्धावस्था में कर सकें । **– कन्फ्यूशियस**

☐

रश्मिरथी

☐ कन्हैया सिंह 'सरो

[अपराजेय महाकवि निरालाजी ने उत्तरप्रदेश के रायबरेली जनपद स्थित डलम के गंगातट पर जिस स्थान पर बैठकर अपने कई ग्रंथों का प्रणयन किया था, उसी स्थान के दर्शनों से प्रेरित होकर कवि ने इस कविता की रचना की है।]

मैंने देखा
पिरो रहा था,
जीवन और जवानी के क्षण
हंसते कांटों के धागे में ।

डूब चुकी थी, जिसकी दुनिया
कुछ दिन पहले,
नाच रहे थे, अब भी,
आंखों में,

अतीत के रंग रुपहले ।
वह सुहाग की भोली-भाली रात,
कुंचित प्रिय की बात,
बात में जीवन भर का साथ ।

या कि
आंसुओं की अर्थी संग,
व्यंग-भरी मुसकान !
कभी-कभी दुहरा जाती थी

यह दुनिया है, दुनियादारी,
मानव से मानवता हारी,
काम नहीं कुछ,
दाम नहीं तेरे गीतों का ।

भर जाती है यहां अमरता
पैसों के वश,
शासन के दलदल में धंस-धंस,
मरने वालों से ही पहले ।
चिनगारी-सी लगी,
अकिंचन,

नाच उठा निर्भय व्यक्तित्व,
गुनकर कुछ,
जीवन, उजली, काली रातें,
पूछा मैंने,

'तुम हो कौन ?'
'मौन स्वरों में भरते नूतन राग
तपस्वी !
नये सृजन का,

माटी में उगते पौधों का
करता है अभिषेक
हंसता खारा नीर नयन का !'
'मैं नहीं तपस्वी,

तप है मेरा जीवन,
इष्ट न मेरा रथी राम
त्रेता का रावण !
मैंने पांव पखारे हैं
मनु के मानव के,

ईश्वर से बढ़कर लगता वह
अपने को जो कह लेता इंसान।
सूखे चने चबाकर
मेरी श्वास जी रही,

पीती है
पीड़ा का निर्मल पानी।
कोरे काग़ज के पन्नों पर
लिखने में इतिहास
सरस स्नेह,
जन-जन जीवन का
काटी है अनमोल जवानी।
कब से देख रहे हैं
सूरज, चांद, सितारे
अपनी ही अर्थी ढोता हूं
अपने कंधों का बल देकर।
देख रहे सब
धरती के पुतले भी
करते व्यंग्य इशारे!
मुझको लगता
जैसे मर-सी गयी
निगाहें हैं दुनिया की।
अभी न मेरी लाश
थकी है
और न शीतल श्वास,
आंख मिलाकर दूर खड़ी है
मृत्यु चांद के पास।
किंतु एक दिन

जब मेरा तन
चल देगा गंगा की ओर,
पकड़ने खोये बचपन का
वह भोला छोर।

सच कहता हूं
दौड़ पड़ेगा
इंद्रपुरी का राजा नंगे पांव,
तभी छोड़कर देवालय का राज,
खड़े अश्रु के यमुना तट पर
मेरा यही समाज
बार-बार देगा आवाज।
पवन झकोरों से बोलेगा
हंस मेरा विश्वास।
झूम उठेगा
सुन धरती का हरा-भरा आंगन
नीलम जड़ा मौन आकाश।

मैं न मरा हूं, औ न मरूंगा,
सदा अमर है मेरी दुनिया
मेरा राज।
टूटे तारों से मुखरित स्वर
का न मोल है
मोती औ पुखराज।'

—मुराई का बाग, डलमऊ, रायबरेली, उत्तरप्रदेश —

□

हास्य-व्यंग्य : संस्कृत के संग

□ अरविन्द कुमार 'साहू'

विश्व की सबसे समृद्ध और वैज्ञानिक कसौटी पर खरी उतरने वाली भाषा एकमात्र संस्कृत है। सर्वाधिक गंभीरता से लिखा गया इसका साहित्य भी हास्य और व्यंग्य के प्रसंगों से अछूता नहीं रहा। लेकिन इनका चयन सागर में मोती ढूंढ़ने के समान है, तिस पर सरल संस्कृत में और कठिन। पढ़िये, कुछ ऐसे ही चुनिंदा हास्य-व्यंग्य के प्रसंग।

शंकर बेचारे गृहस्थी की समस्याओं से काफी परेशान रहते हैं। महाकवि पंडित जगन्नाथ के शब्दों में–

स्वयं पंचमुखः पुत्रौ गजानन-षडाननौ।
दिगंबरः कथं जीवेदन्नपूर्णा न चेद् गृहे ।।

स्वयं शंकर के पांच मुख हैं। पुत्र भी कम नहीं, एक गजमुखवाले हैं तो दूसरे छः मुखवाले। शंकरजी नंग-धड़ंग रहते हैं, इससे यह तो स्पष्ट ही है कि उनके पास धन कितना हो सकता है। अतः यदि साक्षात् अन्नपूर्णा देवी का निवास उनके घर में नहीं होता तो, बेचारे कैसे जी पाते ?

कभी-कभी तो उनको काफी शर्मिंदा होना पड़ जाता है। एक बार की बात है– शंकरजी अपने घर में नंग-धड़ंग बैठे थे। उसी समय भगवान विष्णु उनसे मिलने आ पहुंचे। जल्दी में क्या करें ?

विष्णोरागमनं निशम्य सहसा,
कृत्वा फणीन्द्रं गुणं,
कौपीनं परिधाय चर्म,
करिणस्तस्यागमत् सम्मुखम्।
द्रष्ट्वा विष्णुरथं सकंपहृदयः सर्पोऽपतद् भूतले,
कृतिर्विस्खलिता ह्रिया नतमुखो नग्नं
हर पातु वः।

उन्होंने गजचर्म लपेट लिया औ सर्पराज को कटि सूत्र के रूप में बांधे हु भागे-भागे ड्योढ़ी पर पहुंचे। अचान सामने विष्णुवाहन गरुण को देखकर स राज निकल भागे। गजचर्म गिर गया अब आप सोचिये शंकरजी की दशा . . .

विवाहितों को ससुराल का चस आजकल भी बहुत है और प्राचीन का में भी था। मानव तो क्या, देवता ससुराल को सबसे प्रिय स्थान मानते तभी तो –

असारे खलु संसारे सारं श्वसुरमंदिरम्
हरो हिमालयो शेते हरिः शेते महोदधौ

भगवान् विष्णु 'क्षीर सागर' (ल का जन्म स्थान) व भगवान शंकर 'हि लय' (पार्वती का मायका) में ही श किया करते हैं।

जब ससुराल की बात चल रही है दामादजी पर भी एक दृष्टि डाल ली जा बाप रे बाप ! ये तो बड़ा लालची है दहेज में बेटी के साथ सर्वस्व सौंप दि

फिर भी प्रसन्न नहीं रह सकता !

सदा वक्रः सदा क्रूरः सदा पूजामपेक्षते ।
कन्या राशिः स्थितं नित्यं जामाता दशमो ग्रहः ।।

दामाद सदा ही टेढ़ा और अकड़ा रहता है । सदा पूजा चाहता है और कन्या राशि पर स्थिर रहता है ।

देखिये, अब तो कविराज को भी पत्नी की याद आ गयी, क्योंकि ऋतु और प्रसंग ही ऐसा चल रहा है । लेकिन राजा से आज्ञा कैसे ली जाये ? कोई अति-उपयुक्त बहाना ही बनाना चाहिये, क्योंकि अब सीधे से कहा भी नहीं जा सकता । ऊहापोह में फंसे कवि महाशय ने आश्रयदाता राजा से निवेदन किया–

सुस्वादु युक्तानि सुकोमलानि,
पत्नीकराग्रांगुलि पीडितानि ।
किं-किं वदामीति सुभाषितानि,
स्मरामि राजन् ! गृह भोजनानि ।।

'मुझे घर का भोजन याद आ रहा है, जिसे मेरी पत्नी अपनी सुकोमल उंगलियों से पकाती थी । खिलाते समय अपने मीठे वचनों से कहा करती थी कि और क्या चाहिये ?'

धन्यवाद है ईश्वर को कि राजा की समझ में इसका 'भाव' आ गया और ढेर-सा धन देकर पत्नी के पास जाने की अनुमित कवि महाशय को मिल गयी ।

संसार की सबसे बड़ी मुसीबतों में 'खटमल' भी है । रोग की जड़ और नींद के कट्टर दुश्मन । खून चूसने में नंबर एक । आप कहेंगे, 'भई, वे तो केवल दीन-दुखियों को ही तंग करते हैं ।' लेकिन संस्कृत के कवि इस बात को मानने के लिए तैयार नहीं । बड़े-बड़े दिग्गजों-धुरंधरों का उदाहरण दे रहे हैं–

कमला कमले शेते, हरः शेते हिमालये ।
क्षीराब्धे च हरिश्शेते, मन्ये मत्कुणशंकया।।

अर्थात् खटमलों के डर से लक्ष्मी कमल में सोती हैं, शंकर हिमालय में और विष्णु क्षीरसागर में सोते हैं ।

एक बार कोई दरिद्र ब्राह्मण राजा भोज की सभा में धन की इच्छा से आया । विद्वता की पहचान करके सत्कार करने वाले राजा ने उससे पूछा–'महाराज ! लंका के राजा को कोई दशानन, कोई रावण आदि कहता है । सही क्या होना चाहिये ?'

ब्राह्मण महाराज को ऐसी आशा न थी । उनके तो देवता ही कूच कर गये । हड़बड़ाकर बोले–'राभन' । पंडितों ने पूछा, 'वह कैसे ?' ब्राह्मण महाराज और घबरा गये कि मुंह से तो निकल गया, पर अब सिद्ध कसे करें ? सभा में उपस्थित कवि कालिदास उसकी मनोदशा ताड़ गये, अतः तुरंत बोल पड़े –

भकारः कुंभकर्णे तु भकारश्चविभीषणे ।
द्वयोर्ज्येष्ठे,कुलश्रेष्ठे भकारः किं न विद्यते।।

'कुंभकर्ण के नाम में भकार है और विभीषण के नाम में भकार है, तब आप ही बतायें कि इन दोनों का बड़ा भाई जो कुलश्रेष्ठ है, उसी के नाम (राभन) में भकार क्यों न हो ?'

–परियावां-प्रतापगढ़-२२९४१९, उ. प्र.

सच

आत्मा के स्वर्ग में खिलता हुआ,
आंसुओं के नीर में मिलता हुआ !
जिंदगी का सच कभी हारा नहीं,
क्योंकि सच है रेत की धारा नहीं !

सच कभी बंधता नहीं सीमाओं में,
डगमगाता है नहीं विपदाओं में !
टूट सकता है नहीं ये कांच-सा,
बह नहीं सकता कभी धाराओं में !
घाटियों के बीच में गाता हुआ,
चाबुकें सद्भाव की खाता हुआ।
आदमी का सच कभी हारा नहीं,
क्योंकि सच टूटा हुआ तारा नहीं।

सच वही है दिख रहा जो आज है,
ये समय के दर्द की आवाज है !
कौन इसके सामने टिक पायेगा,
तेवरों वाला लिये अंदाज है।
झील के जल की तरह गहरा हुआ,
आंधियों के वक्ष पे ठहरा हुआ !
रोशनी का सच कभी हारा नहीं,
क्योंकि सच है सिंधु-सा खारा नहीं।

सच कहीं सुंदर कहीं विद्रूप है,
ये कहीं ज्वालामुखी का रूप है।
ये कहीं तीखा लगे विष की तरह,
सोचिये तो एक अंधा कूप है।
तीव्र जन-आक्रोश का पुतला हुआ,
भीड़ के पांवों तले कुचला हुआ।
त्रासदी का सच कभी हारा नहीं,
क्योंकि सच ने झूठ स्वीकारा नहीं।

सच कभी गांधी, कभी ईसा बना,
आग में पिघला हुआ शीशा बना !
एक बेवा की कराहों की तरह,
ये किसी घनघोर रजनी-सा बना।
शासकों की सूलियां चढ़ता हुआ,
काल के भी भाल को पढ़ता हुआ !
बेबसी का सच कभी हारा नहीं,
क्योंकि सच है झूठ के द्वारा नहीं !

— डा. अजय

कमरा नं. ४४, रोज़गार भवन (प्रशिक्षण एवं सेवा), लालकुवां रोड, लखनऊ,

□

मैं

□ उषा भटनागर

खिड़की का परदा धीरे-धीरे हवा से हिल रहा है !

आगे थोड़ा उड़ा फिर पीछे लौट गया, झूले पर ताल देता जैसा ।

पर यह हिल कैसे रहा है ?

कमरा तो ए. सी. है ।

खिड़की तो खुली नहीं रह गयी ?

उनींदी आंखों को भरसक खोलने की कोशिश करते हुए भी मेरी पलकें झपक गयीं !

शहर में ब्याही भाई की बेटी जूही का फोन आया था । बड़े लाड़-प्यार से पाली बेटी है शैलेंद्र की । महीने में दो-तीन चक्कर जरूर लग जाते हैं । 'ताऊजी, मीनू की स्कूल की किताबें नहीं मिल रही हैं। आपके आफिस के रास्ते में किताबों की बड़ी दुकान पड़ती है, जरा देख लीजियेगा ।'

'हां हां जरूर ।' आदत से मजबूर कह तो गया, किंतु फिर फोन रखते हुए सोचने लगा—कार तो है नहीं मेरे पास कि स्टेयरिंग घुमाया और जहां चाहे गली में मुड़ लिये, थम लिये, उतर गये ! लंबी-चौड़ी बस का यात्री हूं मैं तो, जो मेरे इशारे पर नहीं सरकार के इशारे पर घूमती है । घर से बस दूसरी पकड़नी होगी, जो उस गली से होकर, जाती है, फिर वहां से काफी दूर चलकर आफिस पहुंचने की बस पकड़ सकूंगा । ख़ैर, चलता है, इतना भी न कर सका तो ताऊ किस बात का ?

किताबें लेकर लदे-फंदे तीसरे दिन ही गहराती शाम को जूही के घर के दरवाजे पर खड़ा घंटी दे रहा था । दरवाजा खोलते ही चिहुंककर जूही ने स्वागत किया और मीनू उत्साह से किताबों को उलटती-पलटती कितने उमंग से उसने कहा था, 'वाह दादाजी, तर गयी । अब टीचरजी गुस्सा नहीं होंगी ।'

दोनों की मीठी हंसी देखकर ही सब मेहनत सफल हो गयी !

०००

हां, शायद कार ऐक्सिडेंट हो गया है । कोई तेज भागती कार के आगे बेवजह आ गया ! रोकते-रोकते भी टकराकर धड़ से दूर छिटककर जा गिरा । वह तो कहो जान बच गयी, पर हड्डियों का तो कचूमर निकल गया । अनिरुद्ध उसे कार में अस्पताल ले गये । जूही को फोन किया और दूसरा नंबर डायल पर मेरा घुमाया । फिर तो आफिस छोड़कर भागना पड़ा । अनिरुद्ध के चोट नहीं आयी, कार भी सही-सलामत रही, पर जो व्यक्ति चोट खा

गया, उसे लेकर पुलिस और उसके घरवालों से तो अपनों को बचाना है । मैं ठहरा यहां का पुराना बाशिंदा, चार जनों को पहचानने वाला, उनका अपना ! पुलिस के और उनके घरवालों को समझाने में हफ्तों गुजरते चले गये ।

सौदामिनी मेरी पत्नी कितनी झल्लाई थी उस दिन । अनिरुद्ध खुद तो इतना परेशान नहीं हैं, खुद आफिस जा-आ रहे हैं और तुम आफिस छोड़ इधर-उधर भटक रहे हो। अब उसे कैसे समझाऊं कि– मैं हूं, उनका अपना सगा और बड़ा इस शहर में, तभी तो वह इतना निश्चिंत है। फिर मैं ऐसे में कैसे पीछे हट जाऊं ? अपने को ही तब क्या मुंह दिखा सकूंगा ?

०००

करवट ली, परदा लगा जैसे फिर हिला । सौदामिनी हरदम पास में इसी स्टूल पर बैठती थी । यहां पहली बार तो आया नहीं । यह इन्फेक्शन की प्रोबलम दो बार पहले भी हो चुकी है। हाई बी. पी. और डायबिटीज़ का पुराना मरीज़ ठहरा । चाहे कितना ख्याल रख लो, पर झट ऊपर-नीचे होता रहता है । और खुदा न खास्ता कभी कहीं कुछ कांप्लीकेशन हो जाये तो फिर अस्पताल की ही शरण लेनी पड़ती है । तब सौदामिनी ही अस्पताल आती थी साथ में। इसी स्टूल पर बैठती थी। वही प्यास लगने पर होंठ तर करती थी, जूस पिलाती थी, बिना नमक चीनी के बेस्वाद खाने-पीने को जबर्दस्ती खिलाती-पिलाती रहती थी । 'नहीं सुं खाना तो पड़ेगा ही । बदन में ता कैसे आयेगी ।' वही किस तरह से जोर जबर्दस्ती कर खड़ा कर देती थी काम के लायक फिर बना देती थी ... दिन कितनी झल्लाई थी ।

'घर है कि मेहमानखाना ! जिसे मुंह उठाये चला आता है । अब तुम भैया की साली के देवर के दोस्त को कहने की क्या ज़रूरत थी । बस मैं गयी हूं न बे-वेतन की नौकरानी । म खपती रहूं । पकाती रहूं, परसती र तुम्हें बस दीन-दुनिया की पर्वाह है, मेरी ही नहीं ।' उसके हाथों को अपने में लेकर देर तक सहलाता रहा उत्तेजना से थरथर कांपता उसका धीरे-धीरे शांत हुआ ।

'अरे कोई अपनास मझता है, त मुंह खोलता है। दो दिन के लिए क्या कहनी । चार की पकती है एक और भी सही ।'

विवशता से भीगी आंखें उठाकर यही पूछा । 'बस दो दिन ही के आया है क्या . . . ?' मैं निरुत्तर हो सच में दो दिन कहकर दस दिन के हो गये हैं और आने वाला ठहरा का वासी । सारा घर एक तरफ और एक तरफ, फिर भी रोज जीत ज सौदामिनी सेंकती रहती, वह खाता धीरे-धीरे हम सब एक-एक कर सरकाकर उठते जाते, पर वह

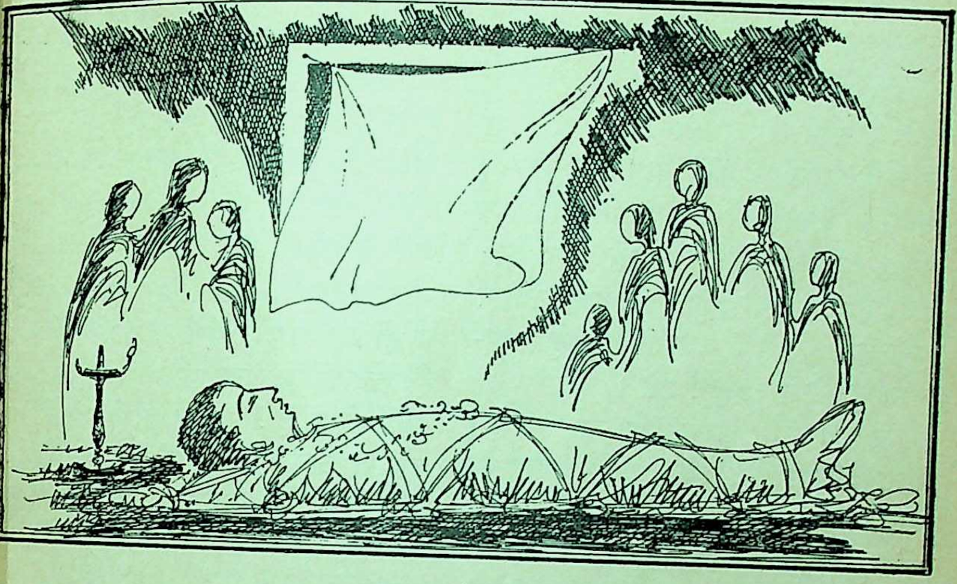

रहता। पर अब भूखे की भूख को क्या टोकना और मेहमान से क्या पूछना कि वह कब जायेगा ?

सौदामिनी ! बड़ी ही प्यास लग रही है—स्टूल से उठो न थोड़ा पानी पिला दो न। चुप ऐसी बैठी टुकर-टुकर क्यों देखे जा रही हो! अब उसी दिन की बात लो। रास्ता तो नहीं था, पर पास में तो था, तो बस से बाहर देखते हुए एकदम ध्यान आया तो झट उतर गया। टेढ़ी-मेढ़ी गलियों से घूमता हुआ पैदल शैफाली के घर चला गया। दूर की बहन की बेटी है। वर्षों से एक शहर में है, पर इधर उससे मिले महीनों हो गये थे। फोन है नहीं उसके घर तो हाल कैसे पता न करूं खुद जाकर ? पर जाकर धर्मसंकट में पड़ गया। छोड़ती ही नहीं थी। छोटा बेटा बुखार में तप रहा था। 'मामाजी कितने दिनों से मन ही मन आपको गुहार रही थी, बस भगवान ने सुन ली। ये हैं नहीं, टूर पर गये हुए हैं और इसे इतना तेज बुखार हो गया है, बताइये तो क्या करूं ?' फिर घर नहीं जा सका। उस रात देर तक सिरहाने बैठा पट्टी बदलता रहा। रात में डाक्टर को बुलाकर इंजेक्शन दिलवाया। अब बुखार काबू में आया, चैन की सांस आयी, तभी चौखट छोड़ पाया। भले ही घर जाकर सौदामिनी की लाल सूजी आंखें अनदेखी करते हुए मुंह छिपाये इधर-उधर डोलता रहा। सारी रात वहमों से लड़ती खिड़की पर खड़ी जागती वह राह देखती रही थी। कैसा है यह औरत का मन ? तब तो सारी रात भगवान से दुआएं मांगती रही और जब उन

दुआओं के फलस्वरूप मैं भला-चंगा सामने जा खड़ा हुआ तो अब झल्ला गयी । अब भला बताओ मैं क्या करूं ? उसे पता तो हैं मेरी आदतें । कोई हाथ पकड़ता है, आवाज़ देता है तो मैं अनसुना नहीं कर पाता और फिर क्या पहली बार ऐसा हुआ है ? पुरानी होकर भी वह नवोढ़ा क्यों बनी हुई है ? अब तक तो मुझे पहचान ही लेना चाहिये उसे ।

गला कितना खुश्क हुआ जा रहा है । सांस कैसी रुक-सी रही है । एक अजीब-सी छटपटाहट अंदर घूम रही है । किसी तरह आंख खोलकर देखा । पास में कितनी मशीनें लगी हैं–नहीं आंखें बंद रहनी ही भली । आंखें मींच लेता हूं । पर कोई पानी तो पिला दो, भई ।

आरती, कविता, तुम ही सुन लो न– प्यास के साथ पेट भी कितना ऐंठ रहा है खाली-खाली-सा । लगता है सालों से खाली पड़ा है वह भी, और गला भी खुश्क है । आरती बड़ी है तो लाड़ली है, कविता छोटी है इससे ज्यादा लाड़ली है । दोनों छोटी थीं तो तकिया मेरे पलंग पर फेंककर कितना आपस में लड़ती थीं । 'आज बाबूजी के पास मैं सोऊंगी', तो दूसरी पहली का तकिया परे फेंक अपना रख झट लेट जाती, 'नहीं मैं सोऊंगी ।' वहीं छोटी-छोटी-सी दोनों अब उतनी ही छोटी-छोटी बेटियों की माएं बन गयी हैं । अब के बहुत दिन हो गये हैं उन्हें घर आये । बच्चों की छुट्टियों में कितना बुलाया था, बहुत मन भटक रहा था उन्हें देखने पर दोनों ही नहीं आ सकीं । काम रुपया दोनों ही पांव पकड़ लेते हैं । गाई भी तो कितनी हो गयी है । कोई करे ? कहां तक मन की सुने । पर अब के तीजों और राखी पर तो आना ही होगा । राखी पर बेटियां घर न हों तो त्योहार कैसा । तीन-तीन हैं, कलाई सूनी रह जाये–भला ऐसा कहीं होता है ! मैं तो पुराने ज़माने आदमी ठहरा । घर में खूब रौनक चहल-पहल हो, त्यौहार जैसे रोज मनते हों, तो मन कितना खिला- रहता है ।

बड़े बेटे अक्षत की शादी सौदामि कितनी घूम से की थी – पोते को भी मनुहारों से खिलाया था–दादी बनने सुख पा गयी वह । यही सुख की बात अक्षत सौदामिनी के सामने ही ट्रां पर बड़ौदा चला गया था, पर सौदा के निधन के बाद खुद गृहन्त्यागी हो बहू-बेटे को मेरे पास रख गया था । को और छोटे भाइयों को देखरेख ज़रूरत ज्यादा है । मुझे अकेले में ऐसे छोड़ना है । कितना ख्याल रखता आ वह हम सबका । सारे दिन बहू आस मंडराती रहती थी, 'बाबूजी, चाय सेव काट लाऊं . . . कुछ चाहिये बस मैं चुपचाप कुर्सी या पलंग पर रहूं । उठा नहीं कि विभा दौड़ी पोते के दंगों में उलझता, पर उन

मन बड़ा ही उखड़ा-उखड़ा रहता था । सौदामिनी के डेथ सर्टीफिकेट कितनी जगहें देने, बैंक, मकान, शेयर जाने कहां-कहां के ढेरों काम निकलते जाते, गुमसुम-सा करता रहता । कहीं उठकर इन चार दीवारी से दूर भाग जाऊं तब यही जी होता था । धीरे-धीरे मन शांत हो पाया था, तब अक्षत की फिक्र पड़ी थी । इतने दिनों से कैसे वह अकेले बैठे हुए हैं अपनी गृहस्थी को बिगाड़े, सो यहां का जुगाड़ भी करना ही है और जल्दी । विभा की मदद से खूब ढूंढ़ खोजकर छोटी बहू घर आ गयी थी, तभी विभा ने बड़ौदा की अपनी गृहस्थी का मुंह देखा । सच, कितना भाग्यवान हूं मैं–इतना प्यार करनेवाली बेटियां, इतना मान देनेवाली बहुएं !

होंठ बेहद प्यासे हैं, प्यास कलेजे तक को चीर रही है ! अरे कोई दो बूंद पानी दे जाओ ।

शायद मेरी आवाज़ मैं ही सुन पा रहा हूं और कोई क्यों नहीं सुन पाता है ? पांच साल से रिटायर्ड हो गया हूं । लगता है बदन-जेब सभी रिटायर्ड हो गये हैं, पर मन तो नहीं हो पा रहा । अभी भी वैसे ही सभी से मिलने को अकुलाता रहता है । अमित की बहू अच्छी है, घर खूब संभाल लिया है–खूब ख्याल रखती है मेरा । सौदामिनी होती तो कितना सुख मानती ।

गहरी सांस लेना चाह रहा हूं, पर सांस रुक-रुक रही है । शायद इसी से छाती में दर्द हो रहा है । हाथ उठाकर छाती सहलाने को जी चाहता है । पर हाथ उठता ही नहीं है । थकन या कमजोरी के मारे वैसा ही अपनी जगह पड़ा है । लगता है जैसे जिस्म से अलग से पड़ा है ! जी होता है दूसरे हाथ से टटोल कर देखूं । पर वह भी तो नहीं हिल पा रहा । आंख खोलकर देखा–सामने ही मेज़ पर प्लेट में सेब रखे हैं, गिलास में पानी रखा है । कैसे उठाकर मुंह में डाल लूं–बड़ी दूर का फासला लगता है ! हाथ ऐसे ही पड़े हैं चुपचाप जैसे मेरे न हों किसी और के हों–कोई यह पानी उठाकर पिला न दे, भई ।

ooo

परदा फिर हिल रहा है । कौन आना चाहता है अंदर ? पंद्रह दिन पहले अक्षत आया था आफिस के टूर से । मेरे केटेरेक्ट के आपरेशन को जानकर ब्लैंक चेक रख गया था । 'बाबूजी, आपरेशन प्राइवेटली कराना । मुझे ख़बर दे देना, नहीं तो जूही दीदी या शैफाली दीदी को बता देना ज़रूर । वे पूरा ख्याल रखेंगी ।'

चुपचाप उसका चेक हाथ में लिये बैठा देखता रहा था । जब आंख उठायी तब तक वह आफिस के लिए जा चुका था । चेक तह करके जेब में रख लिया ।

प्राइवेटली करा लूं ।

आजकल के बच्चे पैसे की कदर कब समझेंगे ? फिर मेरा कमाया अभी भी रखा है, क्यों मैं अपने काम के लिए उससे लूं ? अमित की बहू के आठवां महीना

लग गया है । घर में कोई औरत नहीं, जो उसे ऐसे में संभाले । इस वक्त उसका अपनी मां के पास जाना ही ठीक है । उसके जाने से पहले करा लूंगा । घर आ जाऊंगा तो वह दो-दिन साथ रहकर चली जायेगी अपने मायके । फिर बस मैं व दोनों बेटे मज़े से रहते रहेंगे । क्यों किसी को हैरान करूं, इतने छोटे-से आपरेशन के लिए ? फिर भी एक बार मन नहीं माना । आरती को एस. टी. डी. लगाया था । हाल पूछा और आने के लिए कहा था । 'तीज आ रही है राखी भी, चार दिन पहले आ जा न ।' पर बच्चों के स्कूल खुल गये हैं। राखी और तीज पर बहन का मन भाई के लिए कितना अकुलाता रहे, पर मां को तो छोटे बच्चों के पास ही बने रहना है । खैर ठीक है सभी की मजबूरियां हैं, पर आज उसकी और कविता की बड़ी ही याद आ रही है । आ जाती तीज के बहाने तो मेरे पास इस वक्त बैठी होती । तब यूं आंखें खोलकर मुझे उसे ढूंढ़ना न पड़ता ।

आंख से कुछ गिरा टप से . . . पानी है क्या ? केटेरेक्ट का आपरेशन तो हो गया था ठीक से—छोटे दोनों बेटों ने संभाल लिया था और फिर अमित अपनी बहू को उसके मायके छोड़ने चला गया था, पर फिर जाने क्या गड़बड़ हो गयी—वही पुरानी प्रोबलम सिर उठाकर खड़ी हो गयी । वही इन्फेक्शन हो गया और मैं वापस फिर इसी अस्पताल में इसी आई. सी. यू. में लाकर लिटा दिया गया हूं । सुमित से खबर मिलते ही बड़ौदा से अ भागा आया था । पहला काम उसने कि बेटा होकर मुझे डांटता रहा था जोरों कितनी देर तक सिरहाने खड़े-खड़े । मुझे ख़बर नहीं दी ? चेक दे गया इलाज कराने को, वैसा ही जेब में पड़ा रहा है । क्या फायदा ऐसे पैसे का जो में काम न आये ? क्यों पब्लिक अस में आ गये ?'

वह कहता गया, मैं चुप पड़ा सु रहा । क्या कहता । मैं तो किसी का नहीं कराना चाहता था । पैसा बचा लगा था । किसी को मेरे लिए तकली हो इसी उधेड़-बुन में लगा था । पर मेरे हाथ से निकल गयी थी ।

छाती में दर्द बढ़ रहा है । सां रुक-रुक-सी रही है—जूही तू ही सुन आरती तू ही आ जाती न । तू सबसे जो ठहरी । शैलेंद्र को ही कोई बुला अक्षत तो अभी पास खड़ा था । कहां वह सारी रात का जगा उसे भी पल झपकी लेनी है । आज तीन दि आई. सी. यू. के दरवाजे पर संत बैठा है, खड़ा है । और जाने कहां से कौन-सी मशीनें मेरे चारों ओर कर भीड़-सी लगा दी है । मेरी थो तकलीफ से कितना घबरा उठा है कहीं का !

पर दर्द बढ़ता जा रहा है । गला सूखता जा रहा है । आंख खोली में लगी मशीन में एक लाइन है जो

टिप करती चलती रहती है। कभी ऊपर नीचे फुदकती-सी, कभी सीधे-सीधे। लगता है, एक छोटी-सी गेंद को खिला रही है जैसे। खिलाने दो—मुझे क्या !

मुझे तो कोई पानी पिला दे, बस थोड़ी छाती सहला दे।

लगता है अक्षत, विभा, अमित, सुमित, आरती, कविता अरे सभी आये चले जा रहे हैं। छुऊं उन्हें ? कैसे ? हाथ तो उठता ही नहीं। आंख भी पूरी खुल नहीं पा रही—कमरा कितना ठंडा है, लगता है ज्यादा ही तेज़ एयर कंडीशंड कर दिया गया है। कंपकंपी लग रही है। कमरा ज्यादा और ज्यादा ठंडा होता जा रहा है—हाथ तो कहना सुन ही नहीं रहे थे। पांव भी सुन्न होते जा रहे हैं। पांव हिलाना चाहता हूं, पर अंगुली भी नहीं हिल रही। हाथ हिलाऊं शायद कुछ कहना सुन ले—पर नहीं कोई कुछ नहीं सुन रहा—आवाज़ दूं ? किसे ? कोई भी तो नहीं है पास में। अक्षत तो खड़ा है दरवाजे पर संतरी-सा . . . उसे ही पुकारूं।

दर्द की तेज़ लहर छाती को चीर रही है—आवाज चीख बनकर निकलता चाहती है, पर होंठ खुले हैं, कुछ निकल नहीं पा रहा।

नहीं . . . निकल तो गया है।

देखो न ! मैं कितना हल्का हो गया हूं। हवा-सा तिर रहा हूं।

अरे वाह !

क्या खूब ! लो इतनी तेज़ प्यास बुझ गयी अपने आप।

चलो अच्छा हुआ न।

पर यह नीचे कौन पड़ा है ?

अरे यह तो शक्ल जानी-पहचानी है।

अक्षत पास में खड़ा हाथ की नब्ज़ टटोल रहा है। छाती पर कान लगा रहा है।

○ ○ ○

यह अक्षत को हुआ क्या है ? इतना तेज क्यों चीख रहा है ?

यह अस्पताल है। उसे पता नहीं कि यहां धीमे बोलते हैं। और भी मरीज हैं ! ऐसे तेज चिल्लाने से और वह भी आई. सी यू. में, वे सब कितने परेशान होंगे। ऐसे अस्पताल के नियम नहीं तोड़े जाते। अक्षत, धीमे बोल। पर अक्षत को तो कुछ होश ही नहीं है। वह चिल्लाये ही जा रहा है !

ओ अक्षत देख ! यहां से देख, पंखे कितने चुप खड़े हैं—परदा कहां हिल रहा है, चुप सीधे खड़े हैं खिड़की पर . . . पर तब मुझे हिलते हुए लग रहे थे। क्यूं ? राम जाने !

अरे यह क्या कर रहे हो ?

मुझे इतना कसकर लपेटे जा रहे हो। सिर-पांव-हाथ सभी कसकर बांध दिये हैं, पर मुझे कहां बांध सकते हो—मैं तो यह रहा ऊपर ! अब तुम सब हल्ला कर रहे हो, चीख-पुकार मचा रहे हो और मैं मजे से उन्हें देख रहा हूं—तब क्यों नहीं सुन रहे थे मेरी चीखें ? अच्छा, अच्छा . . . तो अब मुझे ले चल रहे हो यहां से। चलो इस ठंडे कमरे से तो छुट्टी मिली। आओ

चलें, घर चलें !

अपने उसी चिर परिचित घर में सीढ़ियों के ऊपर तैरता हुआ मैं अपने कमरे में आ गया हूं ।

सौदामिनी के जाने के बाद मैंने अपने जुड़े हुए दोनों पलंगों को अलग-अलग कर दिया था ! अब क्या सटाये रखने का फायदा ? गाहे-बगाहे जो भी मेहमान आ जाता, उसका रैनबसेरा वह बन जाता । फिर अमित की शादी हो जाने पर दोनों ही पलंग उसके कमरे में डलवा दिये थे और उसका सिंगल बेड अपने कमरे में डाल दिया था । आधी जगह खाली हो गयी थी ।

वहीं लाकर उसे नीचे लिटा दिया गया था, जिसे मुश्किलों से आड़ा-तिरछा कर सीढ़ियों से चढ़ाकर लाये थे। घर में कितनी भगदड़ और कोहराम मच गया है! आस-पड़ोस के सभी भीड़ लगाये उचक-उचक कर देख रहे हैं। जूही और अनिरुद्ध चुप से एक ओर खड़े हैं। शेफाली भी अपने पति सौमित्र के साथ पास में खड़ी है और लोग हैं कि आते जा रहे हैं !

कितनी ठंडी है बर्फ की यह खाट !

क्यों मंगा ली है इतनी ढेर–सी बर्फ ! भला इस मौसम में भी कोई बर्फ मंगाता है और वह भी इतनी ढेर सारी और जोड़-जोड़कर कहीं पलंग बनाया जाता है !

पर ये लो यह तो उसी पर लिटा दिया गया है । बदन ए. सी. रूम से मुक्ति पाकर फिर बर्फ की सिलों पर लिटा दिया है। ठंडा और ठंडा होता जा रहा है । होगा बर्फ पर कभी कोई लेट सकता है औ वह भी इतनी देर तक ।

अक्षत क्या कह रहा है ?

आरती और कविता आ रही हैं।

अरे वाह कितना चाह रहा था वे जायें, उनके गालों पर, पीठ पर हाथ सकूं, उन्हें प्यार कर सकूं । लो अक्षत कितना अच्छा किया उन्हें बुला लिया। यह क्या बेवकूफी है । बाई एअर क्यों रही है? अरे हम मिडिल क्लास वाले हैं इतना पैसा क्यों फूंक रही है? इतना अब फूंक सकती है तब बुलाया था तो ट्रे टिकट के लिए पैसा भी नहीं था और प्लेन में देने को कहां से हो गया? निक होगा अपनी संचित पूंजी में से! अ आंखों से एक बार देख लेता, तब आ ज तो। कैटेरेक्ट के मारे धुंधलाई आंखों से धुंधला दीखता था ! वह साफ हो गया सब साफ-साफ कितना दिखने लगा तब उन्हें कितना साफ देख पाता!

लो वे आ गयी हैं कैसी बदहवा हो रही हैं! आरती तो छाती पर सीधे-आकर पड़ गयी है, कूटे जा रही पर मुझे उसके मुक्के लगते क्यों नहीं लगता है जैसे हवा में हाथ पटक रही कह रही है–'क्यों धोखा देकर चले ग और रोये जा रही है !

अरे भला मैंने कब किसी को दिया ।

मैंने तो बुलाया था !

तुम्हीं ने तो नहीं सुनी ।

और मैं तो आइ. सी. यू. में भी पड़ा-पड़ा कितनी आवाजें सबको देता रहा था— प्यासा, भूखा, दर्द से तड़पता, पर किसी ने मेरी सुनी ही नहीं और अब मेरी प्यास बुझ गयी तो आकर मुझे ही दोष दे रहे हो । मैं अपनी बांहों के घेरे में उसे लेकर उसके गाल माथे को चूम रहा हूं, अपने बर्फ से ठंडे होंठों से, किंतु आरती को समझ ही नहीं पड़ रहा । क्या उसे मेरे स्पर्श की, भले ही ठंडे सही, पहचान नहीं हो पा रही ? मेरी बांहों की गिरफ्त महसूस नहीं हो रही ? जी करता है गहरी उसांस लूं, पर नहीं अब तो मैं उससे परे हो गया हूं !

दीपक सिर के पास जला दिया है ! किनी ढेर-सी अगरबत्ती जला दी है । सब मिलकर रामधुन गा रहे हैं ।

अच्छा लग रहा है !

पर मेरा जी हो रहा है कि मैं भी उठकर बैठ जाऊं । साथ-साथ गाऊं ! सब इकट्ठे हों, हंसें, मिलें, बैठें । मुझे कितना पसंद है और कितने बरसों के बाद सब मिल बैठे हैं । सौदामिनी के जाने के बाद और अमित के ब्याह में ही सब इकट्ठे हुए थे ! इस वक्त दो दिन से मैं शैलेंद्र को कितनी आवाजें दे रहा था ! अक्षत का हाथ पकड़कर कहा था—शैलेंद्र को बुला दे और उसने बुलाया भी था, पर अब जब मैं बर्फ की सिल पर लिटा दिया गया हूं तो वह आ पाया है । मैं उससे बोल रहा हूं, पर उसे तो मेरी कुछ सुनायी नहीं पड़ रही । संग साथ में बोल सुन सके तो बात करने का मजा है! भला पूछो वह तब क्यों नहीं आया ? तब मेरा जी कितना तड़प रहा था ।

तन भी, मन भी सबके लिए कितनी भूख-प्यास लग रही थी । प्यास से होंठ और जीभ ऐंठ-ऐंठ जा रहे थे, पर तब पास में कोई होता तो सुनता मेरी आवाजें । बेकार परदों से टकराकर लौट-लौटकर आ रही थीं, शायद मेरी आवाजों से ही वे हिल जाते थे । दर्द से छाती निचुड़ी जा रही थी, कोई आकर सहला दे । दो घूंट पानी टपका दे, पर तब आंखें भटक-भटक कर बंद हो जाती थीं और अब चारों ओर कितना मजमा इकट्ठा हो गया है ! शहर के, दूर के सभी तो आ रहे हैं । घर में जैसे जलसा हो और इन सबका शौकीन मैं बर्फ की सिल पर लेटा हूं और ऊपर टंगा हूं । मुझे दिख तो सब रहा है, पर मुझे और लोग क्यों नहीं देखकर अपने में शामिल कर लेते !

शामिल कर लो न !

तब हम सब मिलकर हंसेंगे । ऐसे बिटूर-बिटूर कर रोयेंगे नहीं । सबसे पीछे देखो तो वह बैठी है मिसेज चावला । मोटी-सी थुल-थुल करती आती थी और सौदामिनी को जाने कहां-कहां के किस्से सुनाती रहती थी । बच्चे उन्हें आल इंडिया रेडियो कहकर छेड़ते थे । आज क्या वह चुप बैठी है ? अरे राम भजो !

देखो न, चार मिनट रोकर वह चारों ओर देखकर फुसफुसाकर पास वाली से

बतियाने लगी है। पहले उसे देखकर मैं अपने कमरे में हो लेता था या घर से भाग खड़ा होता था! सुनूं तो वह क्या बोल रही है! ओह मेरी कंजूसी—कि पब्लिक-अस्पताल में जाकर पड़ गया—बखान रही है।

अरी भलीमानस! मुझे पता होता कि तूल का पहाड़ बन जायेगा, मामला इतनी दूर खिंच जायेगा तो मैं जाता ही क्यों वहां? आपरेशन कराता ही नहीं! धुंधलाई आंखों से ही देखता रहता, कम से कम बना तो रहता!

और लो यह मारुति कार कहां से टपक गयी? ओह हां! पिछले महीने इसकी बेटी ने खरीदी है न, तो सबको बताये बिना उसे चैन कहां?

अब सब मुझे भूल कारों की, कारों के ऐक्सीडेंटों की बातें करने लगे हैं। शैफाली ने टेलरिंग का काम नया शुरू किया है, उसे बता रही है। मिसेज नंदा पिछले दिन देखे ड्रामे की बखिया उधेड़ रही है। मुश्किल से लोगों की सोशल गैदरिंग हुई है। एक साथ इतने सबके मिलकर बैठने की जुगाड़ हुई है। कहां तक एक ही रोना रोयेंगे, और भी बोलने दो न! देखो न मेरे बहाने उन्हें कितना अच्छा सुयोग मिला है। फिर भी मुझे दोष दे रहे हैं।

कमरे से बाहर निकल जाने को जी कर रहा है। घुटन-सी लग रही है। कितना हल्कापन महसूस हो रहा है, पर बाहर निकल नहीं पा रहा! अभी भी एक तार है, जिससे मैं जुड़ा हुआ हूं। ये लोग अब सब निबटाते क्यों नहीं? किसके लिए घेरे बैठे हैं? रोते हैं फिर दुनिया की करते हैं!

ओह!

हांगकांग से मेरी छोटी बहन सुन आ रही है! इतना पैसा फूंकती वह आ रही है सो रोकना है नहीं क्योंकि उ भी इच्छा पूरी हो ले।

पड़ा हूं, बर्फ की सेज पर।

ठंडे से ठंडा होता जा रहा हूं— और सफेद!

रोने का ज्वार थम गया था कि नक तेजी से उमड़ पड़ा है। लग सुनयना आ गयी है। हां, वही है! छोटी बहन है मेरी। बड़ी लाड़ली। तीन महीने पहले ही तो आयी थी। पांच दिन साथ रहकर गयी थी। रो रही है। कैसे उसे चुप कराऊं? सिर रहा हूं, आंखों को पोंछ रहा हूं, प यूं ही पत्थर-सी बैठी बस हिचकियां जा रही है। आंसू बहते जा रहे हैं उ मेरे पोंछने से भी नहीं पुछते! अप होंठों से उसका माथा चूम रहा हूं!

रोने का ज्वार धीमा हो गया है।

सब हट रहे हैं!

अरे हां, अब कैलाशनाथ पंडित आ हैं। वही जो सौदामिनी के समय आये

नये-नये कपड़े पहना रहे हैं।

कब से सर्दी में शाल खरीदने की रहा था! पर जेब देखकर चुप हो था। वही पुरानी घिसी-पिटी

गुजारा चला रहा था । आज मेरे पसंद के रंग की नयी शाल शैलेंद्र खरीद लाया है, ओढ़ा रहा है । पर मेरी बर्फीली सर्दी तो कम नहीं हो पा रही !

कैसे कसकर बांध रहे हैं । अरे भई, अब मैं कहां भागकर जाऊंगा ? जब होश था तब हाथ हिलाना चाह कर भी नहीं हिला पा रहा था, अब तो चाह भी नहीं रही है । अब कैसे हिला सकूंगा, उठ सकूंगा । मैं नहीं भागूंगा । नहीं मुझे इतना कसो नहीं । ऐसे नहीं बांधो, पर कोई सुनता ही नहीं । फूलों की मालाएं चढ़ाकर रस्सी छुपा रहे हैं, पर अंदर रस्सी कितनी गड़ रही है मुझे ही पता है ! थोड़ी तो ढील दे दो, भई । पर कोई सुनता ही नहीं है ।

खैर जैसी उनकी इच्छा !

चलो भई, चलें ।

राम नाम सत्य है !

अपनी चिर-परिचित सड़कों से घूमता हुआ मैं जा रहा हूं । मैं यानी हम दोनों—वह जो सबके कंधों के ऊपर चढ़ा चल रहा है और मैं जो उसके ऊपर झूम रहा हूं !

अरे लो, वहीं आ गये जहां सौदामिनी को लाये थे । अच्छा तो वही करना है अब, जो तब सौदाकिनी के साथ हुआ था । वही . . . स्वाहा . . . !

करो भई करो, जो-जो तुम्हारी मर्जी हो सब करो !

शाल उतार दी । अरे कुछ देर तो और ओढ़े रहने देते भई, तब न सही अभी ही उसका सुख कुछ तो पा लेने देते ।

यह पंडित तुम्हारा कौन है, जिसे दे दी ! अच्छा चलो यह भी तुम्हारी मर्जी रही !

धू-धू करके आग जल गयी !

लपट की झुलस लगी मुझे, घबराकर सरक गया । ऊपर हो गया ! और साथ ही कितना हल्का हो गया ।

जितनी तेज आग होती गयी—सब स्वाहा होता गया, मैं उतना ही हल्का और हल्का होता गया । और गैस के गुब्बारे की तरह ऊपर और ऊपर होता चला गया !

अब बस सब ओर नीला आकाश है—निस्सीम-निस्सार ।

चारों ओर शांति ही शांति है ।

कहीं कुछ शोर नहीं, कोई आवाज नहीं ।

कुछ इच्छा नहीं, कोई मोह नहीं ।

अपनी दुनिया के झंझटों में फंसे दो मिनट रोते, दो मिनट दुनिया की बातों में मशगूल । रहो, तुम रहो, नीचे अपने रोज-रोज के झंझटों से जूझते !

मैं अब सबसे परे हो गया ।

मुझे अब कुछ चाह नहीं रही ।

मैं सच पा गया सच—ये राम नाम सत्य है !

मैं 'मैं' को पा गया !

अहम ब्रह्मास्मि !

—६० जी, वीनस अपार्टमेंट,
वरली सी फेस, बम्बई-४०००१८

□

कथा राम की, व्यथा मानव की

हरीन्द्र द

नगरत्याग के बाद राम की प्रथम रात्रि तमसा नदी के तीर बीतती है। अभी राम अकेले नहीं हैं। अयोध्यावासी भी साथ ही आये हैं और वे थककर सो गये हैं। प्रजाजनों से कुछ दूर राम, सीता और लक्ष्मण सारथि सुमंत्र के साथ रात्रि-वास कर रहे हैं। राम लक्ष्मण को सावधान करते हैं जो वे बाद में भी करेंगे। वे कहते हैं, 'यह वन की पहली रात है। अब तुम्हें नगर के लिए उत्कंठित नहीं रहना चाहिए।' राम दशरथ को, माता को—सबको याद करते हैं, उनकी व्यथा भी याद करते हैं, और कहते हैं—

भरतस्यानृशंसत्व संचिन्त्याहं पुनः पुनः
नानुशोचामि पितरं मातरं च महाभुज
(अ. ४६–८)

बार-बार भरत के कोमल स्वभाव का विचार करता हूं तब मुझे माता-पिता की अधिक चिंता नहीं होती। भरत के बारे में पहले कई संदेह प्रकट हुए हैं। भरत उनका आदर नहीं करेगा, ऐसी शंका कौशल्या माता ने व्यक्त की है। दशरथ भी भरत की महत्वाकांक्षा के बारे में चिंतित थे। किंतु यहां भरत के बारे में राम की विचारधारा निर्मल बनती है।

पर्णशैया पर राम और सीता निद्रा होते हैं। लक्ष्मण और सुमंत्र जागते हैं। सुबह होने से पहले ही राम जाग हैं। 'वृक्षमूलेषु संसक्तान्' (वृक्ष के मूलों पकड़कर) सोये हुए पुरवासियों की लक्ष्मण का ध्यान खींचते हुए राम हैं, 'हमारे प्रति जो इनका प्रेम है इन सबको यह दुख सहने के लिए प्र करता है।

पौरा ह्यात्मकृताद् दुःखाद्
विप्रमोच्या नृपात्मजैः
न तु खल्वात्मना योज्या
दुःखेन पुरवासिनः
(अ. ४६-२

राजकुमारों का यह कर्तव्य है नगरजनों को अपने कारण होनेवाले से मुक्त करें। वे हमारे दुःख से दु यह तो नहीं चलेगा। इसलिए सुमं उन सबके सोते हुए रथ तैयार करके नि चलने को कहते हैं।

सुबह पुरवासी जागते हैं। तम किनारे रात को वे सोये तब राम साथ थे, अभी जागे, तो राम

निद्रा ने राम का वियोग करवाया । वे विलाप करते हैं :

धिगस्तु खलु निद्रां तां
ययापहृत चेतसः
नाद्य पश्यामह रामं
पृथुरस्कं महाभुजम्
(अ. ४७-४)

हमारी इस निद्रा को धिक्कार है, जिससे हम अचेत हो गये । और जब चेतना आयी तब विशाल छातीवाले और महाबाहु राम के दर्शन हमें न हुए ।

राम के बिना अयोध्या लौटना इन पुरजनों के लिए विकट था । राम के पीछे जाने के लिए कोई चिन्ह मिलते न थे । वे खिन्न हृदय से अयोध्या में प्रवेश करते हैं । समस्त नगर चंद्रहीन आकाश और तोयहीन (जलहीन) समुद्र की तरह निहत-आनंद (आनंदहीन) हो गया था । वे भी इस कदर हतप्रभ हो गये थे कि कौन अपना, कौन पराया पहचान नहीं सकते थे । फिर सब अपने - अपने घर लौटे लेकिन किसी का मन न लगा । कितनी ही प्रसन्नता वाली बात उनके मन में हर्ष प्रकट न कर सकी –

नष्टं दृष्ट्वा नाभ्यनंदन्
विपुलं वा धनागमम्
पुत्र प्रथमजं लब्ध्वा
जननी नाप्यनन्दत
(अ. ४८-५)

खोयी हुई वस्तु जिसे वापस मिली उसे भी कोई आनंद न हुआ । किसी को विपुल धन मिला, तो भी उसके चित्त की प्रसन्नता बढ़ी नहीं । यहां तक कि जिस माता ने प्रथम पुत्र को जन्म दिया उसके चित्त में भी आनंद नहीं था । राम-विहीन अयोध्या की शून्यता का तथा राम-सहित की वन-पर्वत की शोभा का कवि सुंदर वर्णन करते हैं । नगरवासी स्त्रियां विलाप करती हुई कहती हैं–

जिन नदियों और जिन कमल मंडित सरोवरों में राम स्नान करेंगे वे कितने पुण्यशाली हैं । चित्र विचित्र पुष्पों के मुकुट पहनकर, विपुल मंजरी धारण करके, भ्रमरशालिन वृक्ष वन में राम को अपनी शोभा बतायेंगे । राम आयेंगे तब वहां के पर्वत अपने वनों से बिना मौसम भी उत्तम पुष्प और फल उनके चरणों में धरेंगे । राम के लिए झरने बहेंगे । राम के लिए वसंत खिलेगा । राम वन में गये हैं । वन भयंकर माना जाता है, किंतु जहां राम हों वहां भय कैसा ?

यत्र रामो भयं नात्र
नास्ति तत्र पराभवः
(अ. ४८-१५)

जहां राम हों वहां भय भी नहीं । वहां पराजय भी नहीं । राम-सहित-वन और राम-विहीन-नगर–कवि दोनों की बात कहते हैं । राम के बिना अयोध्या नगरी 'नष्ट हर्षा', 'निराश्रया' तथा 'नष्ट तार-निवाम्बरम्' (तारे नष्ट हो गये हों ऐसा आकाश) जैसी लगती है ।

राम वन में आगे बढ़ते हैं । कोसल

देश पार कर रहे हैं। गोमती नदी पार करते हैं। स्यन्दिका नदी पार करते हैं। राम अपने प्रदेश से दूर जा रहे हैं। वे सुमंत्र से कहते हैं :

कदाहं पुनरागम्य
सरय्वाः पुष्पिते वने
मृगयां पर्यटिष्यामि
मात्रा पित्रा च संगतः
(अ. ४९-१५)

सुमंत्र, मैं फिर कब लौटकर माता-पिता से मिलूंगा और सरयू के पुष्पित वन में मृगया के खातिर पर्यटन करूंगा !

'हम कब लौटेंगे' ऐसा कहने के बदले 'मैं कब लौटूंगा' ऐसा राम कहते हैं।

कोसल देश की सीमा लांघने के बाद राम अयोध्या की ओर अभिमुख होकर अयोध्या से वन जाने की इजाजत मांगते हैं। अब रथ में वे त्रिपथगामिनी गंगा तट पर आ पहुंचे हैं। यहां कवि गंगा का रमणीय वर्णन करते हैं –

हंस सारस संघुष्टां चक्रवाकोपशोभितम्
सदामत्तैश्च विहगैरभिपन्नामनिन्दिताम्
(अ. ५०-१९)

हंस और सारस की गूंज वहां सदैव है। चक्रवाक नदी की शोभा बढ़ाते हैं। सदा मग्न रहनेवाले शोभायुक्त विहंग इस जल पर मंडराते रहते हैं। कवि गंगा को 'समुद्र महिषी'–समुद्र की महारानी कहते हैं।

गंगा किनारे ही राम रतबासा करने का निश्चय करते हैं। यहां शृंगवेरपुर में राम के मित्र निषादराज गुह राज्य करते थे। गुह को समाचार मिलते हैं कि वन के लिए निकले हुए राम यहां आये वह भेंट-सौगात लेकर मिलने आता राम से कहता है : 'यह पूरा राज आपका है। जैसे अयोध्या वैसे ही इसे आपका राज्य मानें।' राम कहते हैं, वनवासी। मुझसे किसी का कुछ भी लिया जा सकता। किंतु तुम मेरे अश्वों तृप्त करो। इनकी व्यवस्था करोगे तो मेरे पूजन के बराबर की बात होगी।'

गंगातट पर तृण की शैया में राम व्यतीत करते हैं। कवि आलेखन करते

उदृष्ट दुःखस्य सुखोचितस्य सा
तदा व्यतीता सुचिरेण शर्वरी

जिसने दुख कभी देखा नहीं और ही जिसके लिए उचित है ऐसे राम ने रात बितायी। राम को भी प्रतिकूल वा वरण की आदत पड़ने में समय ल राम सो जाते हैं, किंतु लक्ष्मण जागते निषादराज गुह उनसे कहते हैं–'मैं राम रक्षा करूंगा, आप आराम करें।'

लक्ष्मण कहते हैं–'राम तृणशैया सोये हों तब मुझे कैसे नींद आ सकती है

लक्ष्मण पिता दशरथ, माता कौश माता सुमित्रा वगैरह को याद करते संतप्त रात्रि बिताते हैं। राम के कोई नहीं जी सकता ऐसा वे मानते हैं

गंगा किनारे की रात भी बीत ग सुबह राम लक्ष्मण से कहते हैं –

भास्करोदय कालोसौ गता भगवती
असौ सुकृष्णो विहगः कोकिलस्नात कू

सूर्योदय का समय हो गया है। भगवती निशा विदा हुई। यह सुकृष्ण रंगी कोकिल कूजन कर रहा है। 'अब इस सौम्य जाह्नवी को हमें शीघ्र पार करना चाहिए।' और फिर निषादराज से घाट पर नाव लाकर पार उतारने की व्यवस्था करने की विनती करते हैं।

सुमंत्र को अब राम विदा देते हैं। सुमंत्र को लौटना जरा भी पसंद नहीं। किंतु राम उनसे कहते हैं कि आपको वृद्ध दशरथ का ध्यान रखना है और वे संदेशा देते हैं –

माता कौशल्या से कहें कि आपका पुत्र स्वस्थ और प्रसन्न है। फिर सीता की ओर से, मेरी ओर से और लक्ष्मण की ओर से माता को प्रणाम करें। फिर महाराज से कहें कि भरत को सत्वर बुलाकर उसका राज्याभिषेक करें। और कहें कि महाराज के साथ वह जिस तरह का बरताव करे वैसा ही सभी माताओं के साथ करे।

कैकेयी की तरह ही सुमित्रा और कौशल्या को माने।

सुमंत्र अभी जाने के लिए तैयार नहीं हैं। वे कहते हैं :

सराममपि तावन्मे
रथं दृष्टवा तदा जनः
विना रामं रथं दृष्टवा
विदीर्यें तापि सा पुरी
दैन्यं हि नगरी गच्छेद
दृष्टवा शून्यमिमं रथम्
सूतावशेषं स्वं सैन्यं
हतवीरमिवाहवे

मैं जब निकला तब लोगों ने रथ पर राम को विराजमान देखा था। अब रामविहीन इस रथ के साथ मैं नगर में कैसे प्रवेश करूं!

वीर रथी मृत्यु को प्राप्त हो और सूने रथ को लेकर सारथी लौटे तब सेना की जो स्थिति होती है वैसी स्थिति इस शून्य रथ को देखकर अयोध्या की होगी।

और फिर कविता का एक सुंदर क्षण! सुमंत्र कहते हैं –

कथं रथ त्वयाहीनं
प्रवाहयन्ति हयोत्तमाः

आपके बगैर इस रथ को ये उत्तम अश्व कैसे वहन करेंगे?

राम सुमंत्र को लौट जाने के लिए समझाते हैं, तब सबसे प्रबल कारण देते हैं : आप नगर नहीं लौटेंगे तो हम वन में हैं फिर भी माता कैकेयी को विश्वास नहीं होगा कि हम वन गये हैं। वह पिता को अपशब्द कहती रहेंगी। इसलिए आप वापस जायें। सुमंत्र को विदा देने के बाद गुह को भी राम विदा करते हैं।

राम, सीता तथा लक्ष्मण गंगा पार जाने के लिए नाव में बैठते हैं। गंगा का आचमन लेकर गंगा को प्रणाम करते हैं। गंगा के प्रवाह में नौका गति करती है, तब सीता गंगामाता की प्रार्थना करती है : 'मेरे पति अपनी प्रतिज्ञा पूरी करके अयोध्या पुरी लौटें ऐसी कृपा करो तो हे त्रिपथगा माता, मैं आपकी पूजा करूंगी और आपकी प्रसन्नता के लिए ब्राह्मणों को एक लाख

'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' की चंदे की दरें

एक प्रति	रु. ४.
भारत में (साधारण डाक से)	
० एक वर्ष : ४५ रु.; दो वर्ष : ८५ रु.; तीन वर्ष : १२० रु.	
विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)	
० पाकिस्तान	रु. १२०.
० श्रीलंका, मध्य एशिया, सुदूर पूर्व के देश आष्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड	रु. १२०.
० अन्य देश	रु. १८५.
विदेशों में हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए)	
० पाकिस्तान	रु. ३००.
० श्रीलंका, बर्मा, अफगानिस्तान	रु. ३००.
० मध्य एशिया/सुदूर पूर्व के देश (जापान को छोड़कर)	रु. ३००.
० यूरोप, यू. के., यू. एस. एस. आर., जापान, आस्ट्रेलिया और मारिशस	रु. ३१०.
० यू. एस. ए., कनाडा और वेस्ट इंडीज	रु. ३१०

* बम्बई से बाहर चेक भेजनेवाले रु. ६ अधिक भेजें।

—व्यवस्थापक, नवनीत हिन्दी डाइजेस्ट, भारतीय विद्या भवन, बम्

तुलसी के प्रति

तेरे मानस से बही प्रेम की धारा तुलसी।
डूबते मन को है, तिनके का सहारा तुलसी।
तेरी रचना का असर आज हुआ है इतना,
जिसको देखो, वही कहता है, 'हमारा तुलसी'।

○ ○ ○

विश्व के भाल पे मानस है तुम्हारा चमका।
ज्ञान-भाजन में धरा-प्रेम का पारा चमका।
जन्म तुमने लिया, मूल नखत था, लेकिन,
हिंदी भाषा की तो किस्मत का सितारा चमका।

—डॉ. एस. एम. एच. रिजवी 'पुण्डरीक'

हिंदी अधिकारी, राष्ट्रीय परीक्षण शाला, अलीपुर, कलकत्ता-२७

गायें और उत्तमोत्तम वस्त्र-अन्न प्रदान करूंगी। आपके तट पर बसे देवताओं तथा मंदिरों का पूजन करूंगी।'

वाल्मीकि रामायण में केवट का प्रसंग नहीं है। केवट का प्रसंग गोस्वामीजी की कविकल्पना है। वाल्मीकि का केवट गुह की आज्ञा मिलते ही राम को गंगा पार करवा देता है। वह निषादराज की आज्ञा मानता है। गोस्वामीजी का केवट राम का भक्त है। राम के चरणस्पर्श से शिला अहिल्या बनी, तो मेरी नाव का क्या होगा, ऐसा नाविक का सवाल भावुक हृदय को छू जाता है। तुलसीदासजी ने फिर लोक कथानक और लोक रचनाओं में केवट के प्रसंग को जिस तरह बहलाया है वह वाल्मीकि में नहीं। 'गंगा पार उतारो, श्री राम कहें' 'मैं मझधारा का माझी हूं तुम भवसागर के केवट हो' जैसी मनोरम कल्पनाएं कई रचनाओं में की गयी हैं। वाल्मीकि के राम को नाविक गुह की आज्ञावश किसी तर्क के बिना पार उतार देते हैं, तब वाचक निराशा का अनुभव करते हैं।

वाल्मीकि का कर्णधार केवल नाविक है : लोकहृदय में बसा केवट भक्त है। वाल्मीकि का राम मनुष्य है। लोक-हृदय में बसे राम भगवान हैं। **(क्रमशः)**

[अनुवाद : नंदिनी मेहता]

□

कहानी

बुआ

□ पूरनचंद वा

मेरे एक मित्र मिस्टर रंगास्वामी, जो अभी हाल ही में पाकिस्तान के सबसे बड़े शहर कराची की यात्रा करके लौटे हैं, कई रोचक संस्मरण वहां के जीवन के सुनाते हैं जिनमें से एक का जिक्र यहां किया गया है । रंगा एक अंतर्राष्ट्रीय-सम्मेलन में भाग लेने के लिए कराची गये थे और वहां उनके रहने का बंदोबस्त एक पांच-सितारा होटल में किया गया था, परंतु उन्होंने अपने एक मित्र नियाज़ अहमद के ही घर पर ठहरना बेहतर समझा, जहां उन्हें शुद्ध शाकाहारी भोजन की सुविधा के अतिरिक्त दोस्त की मेहमाननवाज़ी का आनंद भी मिला ।

नियाज़ अहमद और उनकी बीवी नज़मा दोनों ही अखबारनवीस हैं । नियाज़ एक बहुत बड़े अखबार के प्रमुख प्रवक्ता हैं और नज़मा एक एवनींगर की स्तंभ लेखिका है, मनीला तक अकेली घूम आयी है। विमेन्स लिब की कायल है परंतु बहस नहीं करती । नजमा अपने काम में व्यस्त रहना पसंद करती है, दूसरों के काम में दखल देना या टीका-टिप्पणी करना उसे कतई पसंद नहीं । पति के रूप में नियाज़ भी उसे एक आदर्श व्यक्ति मिला है जिसका कहना है, औरत को काम करना चाहिये, वरना वो नैंगिग हो जाती है । नि प्रगतिशील विचारों का बुद्धिजीवी है बेहद मिलनसार है । पति-पत्नी ही समाज में बहुत पॉप्युलर हैं और माननवाजी के लिये तो खास तौर मशहूर ।

नियाज़ के घर में एक नौकरानी बुआ कहते हैं उसे, बड़ी तफरीह पसंद यदि आप यकायक नियाज़ के घर जायें तो कोई आश्चर्य नहीं यदि बुआ को हाल में, सोफे के ऊपर टाँगें कर आराम से बैठे वीडियो देखते पायें, और उस समय आप उसे घर मालकिन की सास ही समझ बैठेंगे। का भारी-भरकम शरीर और गुलाबी चेहरा—आपको देखते ही मानो विधाता ने उसे बैठने के लिये बनाया है । कोई उससे किसी काम लिये कहने के बाद उसके चेहरे को दे तो वह यह महसूस किये बिना न सकेगा कि बुआ को अपनी जगह से में कितना कष्ट हो रहा है—मानो किसी पहाड़ की चोटी पर चढ़ने के मजबूर किया जा रहा हो ।

रंगा काफी समय से हाल में बैठे बुआ ने सोचा शायद साहब को चाय

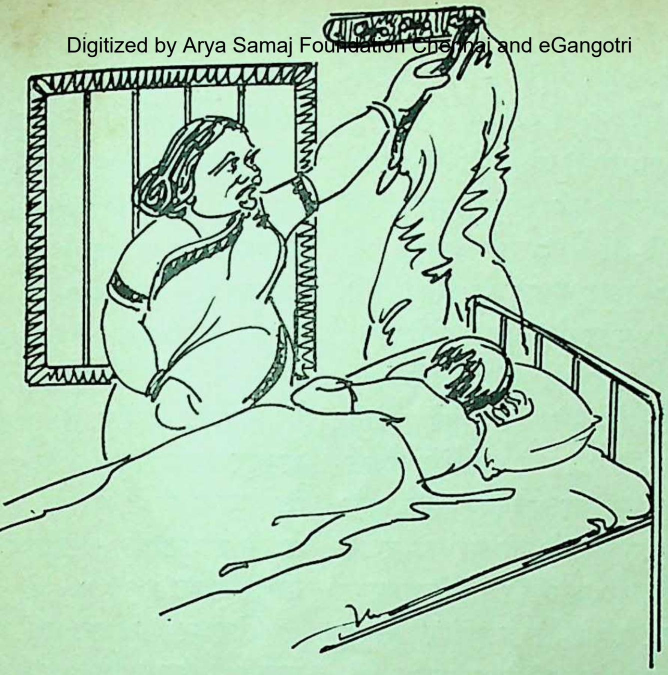

का मन हो–'साहब चाय पियेंगे ?' उसने पूछा। 'नहीं, नहीं,' रंगा ने कहा और कनखियों से बुआ के चेहरे पर उभर आयी राहत को भाँपकर मन ही मन हंसे।

बुआ बहुत लंबी-चौड़ी कद्दावर जनानी है–पेट उसका कुछ निकला हुआ है जैसा गर्भवती स्त्रियों का होता है। यों दस बच्चों की मां है, भले ही अपने बच्चों और पति से लगभग अलग ही रहती है कोई झगड़ा-फसाद लेकिन नहीं हैं, कभी-कभार मिलने आते हैं, सब लंबे-तगड़े हैं, उनको देखने से लगता है क्या जीते हैं ये लोग ! बेफिक्र, खुद जीते हैं और दूसरों के जीने में भी किसी प्रकार की रुकावट नहीं डालते, इसीलिये न इनका जीवन इतना खूबसूरत मालूम होता है !

बुआ मेहनत की कायल नहीं, फिर भी घर में सब ठीक चल रहा है। नजमा सुबह का नाश्ता बनाने स्वयं किचिन में जाती है, बुआ उसकी सहायता करती है। मालूम होती है, वही नाश्ता उसके लिये भी होता है। नजमा बुआ को कोई काम करने के लिये कहती भी हैं तो इस ढंग से जैसे उसे तरीका सिखा रही हों और बुआ भी बच्चों की तरह सिर हिला देती है।

'दूध की बोतल को पानी में उबाल लेना चाहिये बुआ, बच्चे की सेहत पर बुरा असर पड़ने का खतरा रहता है।'

बुआ ने बात को स्वीकार करते हुए सिर हिला दिया। 'अनवर को दूध वक्त

पर मिलना जरूरी है।' नजमा कहती है और चुटकी लेते हुए कहती है – 'तुम्हें तो सब पता है, दस बच्चों की माँ जो हो।'

'तुम ठीक कहती हो बीबी,' बुआ कहती है, 'मैं दस बच्चों की मां हूं, मगर मेरे बच्चों को मेरी मां ने पाला है।'

और उस समय बुआ के चेहरे पर उभर आया बचपना देखते ही बनता है। और आश्चर्य नहीं कि थोड़ी देर बाद बुआ हाल में वीडियो पर आंखें गड़ाये बच्चों के बीच बैठी मिलेंगी। नजमा कहती हैं, 'मैंने तो सोचा था बच्चे की देखभाल के लिये इस दस बच्चों की मां को रखने से मैं निहाल हो जाऊंगी, लेकिन क्या पता था कि, इसको ही बच्चों की तरह संभालना पड़ेगा।' बुआ का बचपना बुद्धिजीवी पति-पत्नी के लिये मनोरंजन और चिंतन दोनों की सामग्री प्रस्तुत करता है, जितना वे बुआ की आदतों पर विचार करते हैं, उतना ही आदमी के स्वभाव की आधारभूत सरलता को देखते हैं।

एक दिन शाम को बुआ का बड़ा लड़का आया और कह गया कि दूसरे दिन उसे लेने आयेगा। परंतु दूसरे दिन दोपहर चढ़ आयी, मगर लड़का नहीं आया तो बुआ रूठ के बैठ गयी, 'क्यों नहीं आया?' उसने खाना नहीं खाया तो नियाज़ ने कहा, 'बुआ, खाना तो खा लो, तुम्हारा बेटा तुम्हें लेने नहीं आया तो इसमें हमारा क्या कुसूर है?' मगर बुआ थी कि अड़ के बैठी रही।

नियाज़ ने बुआ को अपने छोटे बेटे अनवर की देखभाल के लिये ही विशे नियुक्त किया है, परंतु घर में और काफी काम होता है। बुआ जैसे-तैसे काम करती है बाकी नज़मा के लिये देती है। असल में अनवर की देखभा अलावा एक ही काम है जो बुआ सुहाता है, और वह है–कपड़े धो वास्तव में बुआ जो भी कपड़ा सामने देखती है, उसे धो डालती है।

नियाज अहमद के यहां रंगास् दोपहर बाद पहुंचे और मन-बहला लिये हाल ही में जा बैठे जहां बुआ से ही मौजूद थी, उसकी बगल में सो रहा था।

'पिक्चर किलीयर नहीं आ रही,' कहती है, 'आप देखिये न क्या गड़बड़ी

'कुछ अंदर की गड़बड़ है, मुझे चीजों की कोई जानकारी नहीं।' स्वामी ने अपनी असमर्थता प्रकट हुए कहा और बुआ की तबीयत की नगी पर विचार करने लगे–दुनि बहुत सारे लोग जहां बिना किसी कारण के तनाव में नजर आते हैं बुआ को इस समय किसी बात की नहीं; वह केवल टी. वी. में मगन है

थोड़ी देर के बाद रंगास्वामी का बाहर जाने का हुआ। उन्होंने सूटके से नयी कमीज निकालकर पलंग पर परंतु आखिरी क्षण में जाने क्या सू कुर्ता-पायजामा पहने ही बाहर गये, और कमीज वहीं पलंग पर ही

रह गयी। जब लौटे तो कमीज वहां नहीं थी। बहुत देखा इधर-उधर परंतु कुछ पता न चला। मन में आया नज़मा को कह दें परंतु मेहमान के लिये अच्छा नहीं होता कि ऐसी कोई समस्या खड़ी कर दे। इस लिये उस दिन बात को मन में ही दबाये रहे, परंतु दूसरे दिन कह ही डाला।

'फिकर मत करो,' नज़मा ने कहा—'कमीज धुल गयी होगी।'

'धुल गयी होगी ?' रंगास्वामी ने आश्चर्यचकित होते हुए पूछा, 'कमीज तो कोरी थी।'

मगर हुआ वही था—कमीज धुल ही गयी थी, अन्य बहुत सारे कपड़ों के साथ।

दूसरे दिन, दोपहर बाद रंगास्वामी बाहर से लौटे तो पतलून को बेल्ट-समेत खूंटी पर टांगकर स्वयं कुछ आराम करने के लिये पलंग पर लेट गये और इत्तिफाकन सो गये। उनका कमरा, मय बाथ-रूम के, अलग था। करीब एक घंटे बाद उठे तो बाहर जाने के लिये पुनः कपड़े पहनने की तैयारी करने लगे, परंतु देखते क्या हैं कि पतलून खूंटी पर नहीं थी। केवल बेल्ट, फोल्ड की हुई, पलंग के एक कोने पर पड़ी थी। 'यकीनन धुल गयी होगी।' रंगास्वामी मन ही मन हंस पड़े।

रात को खाने के बाद रंगा नियाज़ और नज़मा के साथ बैठे गप-शप कर रहे थे, उसी बीच उन्होंने बात छेड़ दी—'बुआ बाकी तमाम कामों से भले जी चुराये लेकिन कपड़ों की धुलाई की तो उसे क्रेज़ ही है।'

'बुआ की इस क्रेज से हम भी पहले उलझन में पड़ गये थे,' नियाज़ ने कहा, 'मगर कुछ रिसर्च की तो बात सामने आयी, दरअसल बुआ को कपड़े धोने की क्रेज है, क्योंकि वह जात की धोबन है।'

—४३ मनाली १-बी, एवरशाइन नगर,
मालाड (पश्चिम), बंबई-४०००६४

□

राय-बहादुर

उ. प्र. हिंदी साहित्य सम्मेलन के स्वर्ण जयंती अधिवेशन में भाग लेने मनीषी साहित्यकार पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी कन्नौज आये थे। उनके एक श्रद्धालु ने कहा, 'भैया साहब ! एक राय दीजिये।'

'जरूर दूंगा। मैं राय देने में बहादुर हूं। इसीलिये ब्रिटिश सरकार ने मुझे 'राय-बहादुर' की उपाधि दी थी।' चतुर्वेदीजी ने कहा।

०००

उक्त कन्नौज अधिवेशन में वयोवृद्ध साहित्यकार श्री वियोगी हरि अपना भाषण दे रहे थे। उन्होंने कहा कि हिंदी के संवर्द्धन हेतु हमें सरकारी तरीकों के बजाय असरकारी तरीकों पर अधिक निर्भर रहना चाहिये। अ-सरकारी ही 'असरकारी' (प्रभावोत्पादक) होता है।

—अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद'

□

वैज्ञानिक मापदंडों पर संगीत की भूमिका

☐ ऋषिमोहन श्रीवा

भारतीय तत्व ज्ञान के अनुसार प्रकृति और पुरुष का जब समागम हुआ तो उससे एक ध्वनि उत्पन्न हुई जिसे 'ब्रह्म' कहा गया।

घड़ियाल पर जब चोट की जाती है तो 'टन्' की आवाज के साथ एक थरथराहट-सी पैदा होती है। यह क्रम निरंतर चलता है। आवाज भी धीरे-धीरे कम होती जाती है। जिस प्रकार से घड़ी के कल-पुर्जे पेंडुलम के हिलने-डुलने से चलते हैं, उसी प्रकार पुरुष कुछ आघात प्रकृति के साथ करता है बदले में प्रकृति भी अपनी अभिव्यक्ति करती है। पंचतत्व, पंचप्राण आदि के माध्यम से जड़-चेतन जगत में असंख्य हलचलें अनवरत रूप से चलती हैं।

बाल-बोध की दृष्टि से मनुष्य द्वारा उच्चरित शब्दों में 'ऊं' कार ही कह सकते हैं। अमादि ऊं की थरथराहट के ऊंचे-नीचे आरोहण-अवरोहों का ध्यान रखते हुए तत्वज्ञानियों ने उसे सात स्वरों में बांटा है—'स, रे, ग, म, प, ध, नि'। इन्हीं स्वरों में समग्र स्वर-शास्त्र का आविर्भाव हुआ और उसके उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए अनेक राग-रागनियों का प्रादुर्भाव हुआ। इन्हीं स्वरों की क्षेत्रीय प्रियता के आधार पर अनेक वाद्य तैयार हुए।

गले का क्रमबद्ध गुंजन, गायन वाद्य यंत्रों की सहगति को वादन गया। गायन और वादन दोनों को कर 'संगीत' बनता है। यह जरूरी कि दोनों की संगत साथ-साथ हों। बार अकेला गायक गा सकता है उसी प्रकार वादक अपने वाद्य यंत्र अकेला ही बजा सकता है।

गायन के आधार पर ही मंत्र का विकास हुआ। सामवेद में वेदमंत्र संगीत के साथ जोड़ा जाता है। विज्ञान को शब्द 'ब्रह्म' और स्वर एवं ताल वाद्यों के समुच्चय को ब्रह्म' कहा जाता है।

संगीत के माध्यम से इलेक्ट्रोमैं लहरें उत्पन्न होती हैं, जो स्नायु प्रभा वांछित प्रभाव डालकर उनकी स बढ़ाती हैं, विकृत-चिंतन को हैं तथा मनोविकार को दूर करती स्वर शक्ति की सृजनात्मक साम वैज्ञानिकों का ध्यान गया है। जहां

तरफ शब्द शक्ति चालित बम और रोबोट तैयार किये जा रहे हैं, वहां प्रदूषण-निवारण, मनोविकार शमन, शारीरिक रोगों को दूर करने में तरंगों का प्रयोग किया जा रहा है। पशुओं की प्रजनन शक्ति बढ़ाने, पौधों के बढ़ने की गति तीव्र करने में भी वैज्ञानिक सफलता मिलती है।

वर्तमान में नये से नये वाद्य यंत्रों का निर्माण हुआ। वैज्ञानिक प्रगति ने ही इलैक्ट्रोनिक मल्टीटच्यून, 'हाई-फ्री' वाद्ययंत्रों के निर्माण में सहायता दी है जो मनुष्य के श्रम की बचत करते हैं।

संगीत का उपयोग शारीरिक और मानसिक रोगों के निदान हेतु भी किया गया है। संगीत उपचार की एक पद्धति बन गयी है।

संगीत-चिकित्सा में यह मानकर चला जाता है कि स्नायु-संस्थान में विद्युत-प्रवाह की न्यूनता या शिथिलता उत्पन्न होने से ही शारीरिक और मानसिक रोग उत्पन्न होते हैं। यदि नाड़ी संस्थान को तरंगित करना, उत्तेजित करना संभव होता है तो शिथिलताजन्य अनेक व्याधियों से मुक्ति प्राप्त की जा सकती है। नाड़ी संस्थान को उत्तेजित करने की क्षमता संगीत में विद्यमान है। संगीत का उपयोग विशेषकर मानसिक रोगों के उपचार में लाभकारी होता है।

पाश्चात्य देशों में चिकित्सा की एक प्रणाली—'संगीत प्रणाली' बनायी गयी है। अमरीका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, जापान, जर्मनी, फ्रांस, इटली, ब्रिटेन आदि देशों में अस्पतालों में विभिन्न प्रकार के रिकॉर्ड बनाकर रोगियों के उपचार में सहायता ली जाती है।

शासकीय अस्पतालों के अतिरिक्त अनेक चिकित्सकों ने अपनी उपचार पद्धति केवल संगीत पर आधारित कर ली है। वे रोगों के अनुसार रोगियों को अमुक ध्वनि के संगीत का रसास्वादन कराते हैं, ध्वनि तरंगों के द्वारा वे मानसिक रोगियों का उपचार आसानी से करते रहते हैं।

हर्षोल्लास के वातावरण को बढ़ाने के लिए ही संगीत-कार्यक्रम रखे जाते हैं। त्यौहारों, पर्वों पर भजन-कीर्तन, लोकगीत और अन्य प्रकार के गीत गाये जाते हैं।

—१६ वर्मा लेन, दतिया, म. प्र.

□

गंगाजल

गंगा किनारे स्नान के लिए आये कुछ पंडितों की परेशानी को समझकर कबीर ने अपना लोटा मांज-धोकर उन्हें देना चाहा।

वे बोले, 'वहीं रख, वहीं रख ! तेरा लोटा छूकर क्या अपवित्र होना है हमें ?'

शांत मुद्रा में कबीर ने कहा, 'गंगाजल से साफ करने पर यह लोटा पवित्र न हुआ तो कोई यहां नहाकर भी क्या पवित्र होता होगा !'

—डॉ. भैरूंलाल गर्ग

□

लोकानुरंजन का इंद्रधनुषी मेला

सांगोद का न्हाण

☐ विवेक

वन में टेसू, खेत में सरसों फूलने की स्थिति आती है तब पके अधपके धनिये, चने, और गेहूं की मादक सुगंध पूरे के पूरे वातावरण में मस्ती की अनुभूतियां जगा देती हैं। हाड़ौती अंचल के देहातों में होलिका दहन के साथ ही साथ न्हाण के आयोजन शुरू हो जाते हैं। जितने गांव उतने न्हाण, हर न्हाण के साथ जुड़ी होती है और कोई न कोई रोमांचक, अविस्मरणीय, प्रेरणाप्रद बांटती हुई किंवदंती। उसके मानने का स्वरूप भी अलग, उसमें सम्मिलित होकर उल्लास में भागीदार की प्रक्रिया भी अलग। हां, कुछ कार्यक्रम एक दूसरे से मिलते-जुलते जरूर हो सकते हैं। पर उनमें भी अपने 'विशेष' होने की पहचान करने पर आप तुल जायें तो कई नयी परंपराएं, नये करतब, नयी मनोरंजन पद्धतियां आपको मिल सकती हैं। लोकानुरंजन की दृष्टि से ये छोटे-छोटे मेले विशेष महत्त्व रखते हैं। इनमें अनेक दुर्लभ लोक कलाओं का प्रदर्शन किया जाता है, जो अन्यत्र देखी-सुनी तक नहीं जा सकती।

क्या होता है न्हाण

होली के बाद लगभग तेरह दिन की अवधि के अंदर विभिन्न गांवों-कस्
न्हाण का आयोजन होता है। कुछ
में 'न्हाण' से तात्पर्य, रंग पंचमी, शी
सप्तमी या एकादशी को रंग, गुला
होली खेलने से है। परंतु हाड़ौती में ही
राजस्थान के अन्य इलाकों में भी रंग
के अलावा बादशाह की सवारी का
निकालना, शिशु-जन्म पर बधाई देकर
के समूह का ढूंढ मांगना, मृतक के
वारिक सदस्यों से रंग खेलकर वार्षिक
समाप्ति, रात्रि में खेल तमाशे, नौ
प्रहसन, लोक भाषाई नाटक, हास्य
सम्मेलन आदि के आयोजन होते हैं।

परंतु कोटा जिले की एक पं
समिति सांगोद का न्हाण इन सबसे
रंग वाला होता है।

सांगोद का न्हाण देखकर यह
लगा कि इस क्षेत्र का सबसे बड़ा
कलाकारों का मेला हो। लगभग
हजार स्त्री-पुरुष और बच्चे इसमें
लेते हैं। यह होली के बाद षष्ठमी
सप्तमी को होता है। इससे पहले तृ
और चतुर्थी को एक और 'न्हाण' आयो
हो चुका था। पहले वाले न्हाण को बा

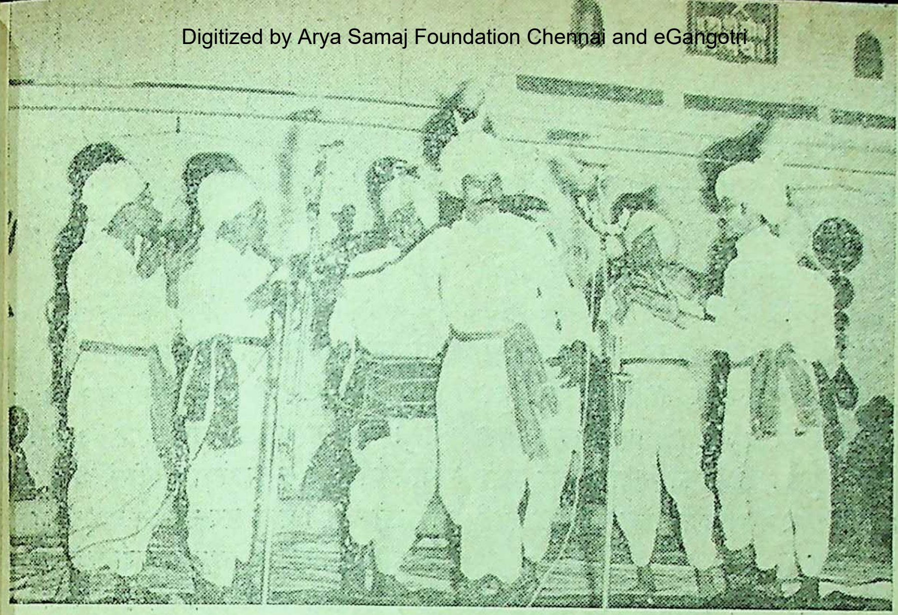

'पंछीड़ा' गाते हुए लोक कलाकार

का न्हाण कहते हैं, और बाद वाले को 'खड्ड' का न्हाण। बीच की तिथि पंचमी को कोई कार्यक्रम नहीं होता है । इसे सांगोद बसाने वाले सांगा गूजर की पुण्य तिथि के रूप में मनाया जाता है । ऐसी यहां की लोक किंवदंतियों की मान्यता है । इन दोनों न्हाण में आधा-आधा गांव भाग लेता है । इस गांव को भी मुख्य मार्ग से, उत्तर से दक्षिण तक, आधा-आधा बांट लिया गया है । एक तरफ के लोग एक न्हाण में भाग लेते हैं, तो दूसरी तरफ के निवासी दूसरे न्हाण में । किसी कारणवश एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में स्थानांतरित हो जाये, तो भी वह अपने मूल क्षेत्र के न्हाण में ही शिरकत करेगा । कई बार दूसरे न्हाण में भाग लेने पर झगड़े तक भी हो जाते हैं । यह न्हाण दो दिन और एक रात चलता है । इसके पीछे लोक जीवन में चर्चित किंवदंती यह है कि सांगा पटेल ने सांगोद कस्बा बसाया था । सांगा लौद गूजर जाति का था । यहां 'ढोल और पटेलाई' उसकी चलती थी । किंतु आस-पास से गांव से भी जाट और मीणा यहां आ बसे थे । कुछ ही समय में जाट और मीणा संख्या में बहुत हो गये । उन्होंने आधे गांव में अपना 'ढोल और पटेलाई' चलाने की सोची । बात सामने आयी तो सांगा ने यह स्वीकार नहीं किया । उसका मत था कि उनकी ऐसी इच्छा हो तो अलग गांव बसा लें । कहा जाता है एक दिन सांगा स्नान करके लौट रहा था, तब छीपों के मंदिर के पास उसे कुछ जाट और मीणों

ने घेर लिया। लड़ाई में सांगा का सिर कट गया और धड़ लड़ता रहा। मंदिर के पास सांगा की पत्नी ने उस धड़ को रोक दिया। गांव के गूजरों से कहा कि वे उसके लिए चिता सजायें। सती होने से पहले उसने श्राप दिया कि अब यहां पर जाट और मीणों का वंश नहीं चलेगा। जब-जब भी लड़ाई का अवसर आयेगा गूजरों की ही जीत होगी। कहते हैं आज तक इस गांव में गूजरों का एकाधिकार बना हुआ है। जाट और मीणों का आज भी यहां कोई घर नहीं है।

सभी लोक महोत्सवों पर आज भी सांगा के सिर और धड़ की पूजा पहले होती है। गांव में हर नव-विवाहित सांगा को ढोंकने आता है। जेठ माह में जब यहां पर पशु मेला लगता है तो मेले का झंडा पहले सांगा के स्थानक पर जाता है, फिर मेला स्थल पर। बीमार लोग सांगा को तेल, सिंदूर, लच्छा चढ़ाते हैं। लच्छा गले में बांधते हैं। मान्यता है कि वे इससे ठीक हो जाते हैं।

इस मेले को स्थानीय स्वरूप देने के लिए एक और देवी शक्ति इसके साथ जुड़ी है–वह है ब्रह्माणी माता। यहां से लगभग १० किलोमीटर दूर सौरसण गांव के पास ब्रह्माणी माता का मंदिर है। न्हाण ब्रह्माणी माता या सौरसण माता के नाम से होते हैं। होली के पहले गांव की दोनों पार्टी के लोग चने की घूघरी लेकर सौरसण जाते हैं। और ब्रह्माणी माता को न्हाण में भाग लेने व आने निमंत्रण देते हैं, गांवों में उस घूघरी बांटते हैं। इस ब्रह्माणी माता के स्था स्वरूप की भी अलग किवदंती है। जि इसे कष्टहारी माता कहा है।

एक और किवदंती है जिसने इस को सांगोद का स्थानीय मेला बना है। यहां लगान तालुकेदार वसूल क थे। तब यहां दो तालुकेदार थे। चौबे और एक चौधरी। दोनों एक दिल्ली गये। वहां पर उन्होंने देखा कि पर मुगल बादशाह की रोज सवारी निक है। ये रोज सलाम करने के लिए जा एक दिन बादशाह ने इनको बुलाकर ताछ की। इन्होंने बताया कि ये तो द करने आये हैं। बादशाह ने खुश हो इनको मनचाहा इनाम मांगन को कह इन्होंने मांगा कि जैसी आपकी सवा निकलती है, वैसी ही सवारी साल में बार हमें भी अपने क्षेत्र में निकालने इजाजत हो। बादशाह ने इजाजत दे और आज भी चौधरी चौबे (चतुर्वे परिवार के लोग अलग-अलग न्हाण बादशाह बनकर निकलते हैं। एक को क हैं–न्हाण अखाड़ा चौबे पाड़ा और दूसरे कहते हैं–न्हाण अखाड़ा चौधरी पाड़ा

यहीं नहीं सांगोद के अलावा भी को जिले में न्हाण होते हैं। हर क्षेत्र की क नियां सुनकर लगता है यह यहीं का 'न्हा होगा। एक मान्यता यह भी है कि न्हा में भाग लेने के लिए कलाकारों को बुला

नहीं जाता है । वे अपने आप आते हैं । उनमें कुछ तो अपनी कला दिखाने वाले होते हैं, कुछ इस क्षेत्र के बारहठ होते हैं, जो गाने आते हैं । सांगोद में कुछ हिजड़े भी आते हैं । हिजड़े अपनी नृत्य-कला का प्रदर्शन करके क्षेत्र की भावी शादियों में नाचने के आर्डर बुक करते हैं । हिजड़ों का बहुत बड़ा जमघट होता है । यह न्हाण दिन में बारह बायलों (मित्रों) की सवारी से होता है । अपने-अपने घोड़ों पर उमराव बनकर लोग गाजे-बाजे से सवारी में भाग लेते हैं । देखने वालों की खासी भीड़ होती है, जो मकानों पर व रास्तों के किनारे खड़े रहते हैं । रात्रि को खड्ड में एक स्टेज पर लोक-नाटिकाओं का कार्यक्रम होता है । कार्यक्रम के शुरू में हिजड़े अपना नृत्य प्रदर्शन करते हैं । हर कार्यक्रम के बाद बीच में भी इनका नृत्य प्रदर्शन जारी रहता है । लोक-नाटिकाओं के माध्यम से जीवन के विभिन्न पहलुओं की झांकियां, क्षेत्र में सम्मानित व्यक्तियों पर होली के कटाक्ष होते हैं । इनमें भी चाचा (जांचा) बोहरा, सेण-बलाई, सेट-सेटानी, देवर-भाभी, झगड़ू-पटेल, धोबी-धोबन आदि के कार्यक्रम प्रति वर्ष होते हैं । ये हर वर्ष एक दूसरे से सवाये होते हैं ।

लोकानुरंजन का कायक्रम भोर में लगभग पांच बजे तक चलता है । पांच बजे के लगभग देवियों की झांकियों का, समय हो जाता है । गांव के छोटे-छोटे बालक-बालिकाओं को सजाकर विभिन्न झांकियां निकाली जाती हैं । इन सवारियों को लोग अपने कंधों पर बिठाकर पालकी की तरह लेकर चलते हैं । इन 'स्वरूपों' के लिए बच्चों का चयन एक समिति करती है । झांकियों का सामान आसपास के गांवों से आता है । झांकियों के शृंगार का कार्यक्रम भी लंबा चलता है । कई बार तो बच्चों को नींद में ही जगाया जाता है । इन आकर्षक झांकियों में कालका, शंकर-पार्वती, गंगा, सरस्वती, दुर्गा, महिषासुरमर्दिनी, इंद्र, स्कंध, कृष्ण, कालिया-दमन आदि के स्वरूप होते हैं । सबसे अंत में ब्रह्माणी माता का स्वरूप होता है, जो बहुत ही आकर्षक होता है ।

इन झांकियों के जुलूस के आने की सूचना देने का काम दो घोड़ले भेरूं करते हैं, जो एक तरफ का दीपक लेकर जुलूस के आगे-आगे भागते आते हैं । ली को हवा में उछालकर जुलूस के आने की सूचना देते हैं । जुलूस के आगे दो मशालें चलती हैं, जिन पर एक व्यक्ति मुंह से मिट्टी के तेल की पिचकारी छोड़ता रहता है । इस जुलूस का अंतिम छोर भी खड्ड में बना ब्रह्माणी माता का मंदिर ही होता है, जहां इन स्वरूपों की आरती होती है । यहां आकर रात्रि का कार्यक्रम समाप्त हो जाया करता है ।

सुबह साढ़े सात से—आठ बजे तक इसी खड्ड में खड्ड के न्हाण का इतिहास सुनाया जाता है । किसी तरह बाजार के न्हाण वालों ने खड्ड पर अपना दावा जताया

और कैसे कोर्ट से आर्डर हुए। कैसे गांव बंटा। शायद भावना यह हो कि लोग अपने न्हाण का महत्व समझें। दिन में लोग विभिन्न स्वांग रचकर गांव में घूमते रहते हैं। पूरा बाजार लोगों से भरने लग जाता है। शाम चार बजते-बजते वहां खड़े रहने की जगह नहीं बचती। चारों ओर घोड़ों पर उमराव बने लड़के, उनके साथ बैंड, और दर्शकों की भीड़। देखते ही देखते सभी मार्ग, मकान और छतें दर्शकों से भर जाती हैं। कस्बे के एक सिरे से बादशाह की सवारी निकलती है। आगे-आगे कई तरह के स्वांग में लोग अपनी-अपनी टोली के साथ चलते हैं। कोई बोहरा, कोई रोगी, कोई हीर-रांझा। इस तरह एक के बाद एक स्वांग आते-जाते हैं। इसके बाद उमराव अपने-अपने घोड़ों पर कुछ घोड़ों को नचाते हैं, तो कुछ छेड़कर मजा लेते हैं। लगभग ३५-३६ घोड़े इस बार जुलूस में थे। इनके बीच-बीच में स्वांग की टोलियां चल रही थीं। बीच-बीच में बैंड चल रहे थे। ऊंटों पर नगाड़े (नौबत) और सबसे पीछे बादशाह की सवारी। हाथी पर कोई एक डेढ़ घंटे बाद सवारी खड्ड में पहुंची। वहां जाकर बादशाह ब्रह्माणी मंदिर पर कुर्सियां लगवाकर बैठ जाता है। कहीं कोई जगह खाली नहीं थी। खचाखच भीड़, जिसको जहां जगह मिलती है, वह वहीं टिक जाता है। इस दौरान खड्ड में चारों तरफ कुछ न कुछ होता रहता है। कहीं

रस्सा बंधा है, कहीं स्तंभ गड़ा है,
करतब दिखाने का स्टेज बनता है।
बादशाह सज-धजकर बैठते हैं ६६
पुरुषोत्तम चतुर्वेदी। ये पिछले ४३
से बादशाह बनते आ रहे हैं। परंपरा
रूप से आगे भी उनके उत्तराधिकारी
यह करेंगे।

अब देखिये, एक व्यक्ति ने
बजाया है। सबका ध्यान उधर जाना
है। तभी दूसरे व्यक्ति ने जलते
मुंह से उठाने शुरू कर दिये। उधर
पर भी एक व्यक्ति ने डमरू उठाया
अंगारे मुंह में पकड़ने लगा। सब
टकटकी बांधे देख रहे हैं। दुबारा
जोर से बजा और एक व्यक्ति
कागज की कतरनें खाने लगा।
स्टेज पर भी यही क्रम शुरू हुआ।
उन कतरनों को बाहर निकालने की
थी। एक छोर पकड़कर खींचना
हुआ। सभी कतरनें एक साथ जुड़कर
रस्सी की तरह बाहर आने लगीं।
तरह डमरू बजते रहे। और एक के
एक करतब होते रहे। कभी हाथ
कर घास में आग लगायी गयी तो
एक रस्सी में तीन गुटके पिरोकर
से बाहर कर दिया। इस बार सांप
का काम नहीं दिखाया गया, जिसके
बहुत लोग आस लगाये बैठे थे।
अधिक आकर्षण का केंद्र था गाल
(त्रिशूल फोड़ने) का काम। लोग
के आर-पार छुरे घोंपे, हाथों में,

त्रिशूल घोंपे चल रहे थे । स्टेज पर एक व्यक्ति दूसरे के मुंह के आरपार त्रिशूल फोड़ने के कार्य का प्रदर्शन कर रहा था । बहुत ही रोमांचकारी दृश्य है यह ।

इसके बाद रामलीला की तरह हनुमानजी रस्सी से फिसलकर नीचे आये । तीन लड़कों को एक के बाद एक करके नीचे उतारा । तीसरा लड़का आग लगे घेरे से निकलकर आया । इसी बीच बृज के स्तंभ पर एक व्यक्ति पेट के बल लेट कर चारों ओर घूमने लगा । जमीन से कोई बीस फुट ऊंचा था यह स्तंभ । दूसरी ओर एक स्तंभ पर दूसरा व्यक्ति उल्टा सीधा घूम रहा था । तभी पेड़ से रस्सी के सहारे एक व्यक्ति सर ... र ... र से नीचे आया । और इसके साथ बादशाह के मनोरंजन कार्यक्रम समाप्त हुए । सवारी उसी ठाठबाट से लौट गयी । घर पर सभी बारहठ लोग महफिल सजाकर बैठे और देर रात तक इस महफिल में मांड और घूमर पर आधारित संगीत का रंगारंग कार्यक्रम चलता रहा ।

पूरे लोक अनुरजन के विविध कार्यक्रमों के दौरान दर्शक वर्ग जो अनुशासित होकर सहयोग करता है, वह सचमुच ही इस बात का द्योतक है कि लोग अपने इलाके के कलाकारों के करतब प्रदर्शन में पूरा रस लेते हैं । कोई भी कलाकार अपनी इन खास कलाओं का प्रदर्शन अन्यत्र नहीं करता है । कारण यह बतलाते हैं कि तब सांगोद के न्हाण की विशेषता क्या रह जायेगी । कलाकार का कोई मजाक उड़ाता है तो वह बड़े ही रुतबे से कहता है–'अरे ई मै सरम की कोई बात छै, गाम को काम छै ।'

जादू के करतबों और रोमांचक करिश्मों का लंबा सिलसिला चलाये रखने वाले लोक कलाकार एक मूक साधक की तरह ही लोककला की साधना में रत रहते हैं । बृजमोहन अपने हाथ-पैरों में तेल के भीगे कपड़ों के चिथड़े बांधकर उनमें आग लगा लेता है । वह जले हुए चिथड़ों के साथ बहुत ऊंचाई से रस्सी के सहारे उतरता है । उसकी यह कला लोगों को चकित कर देती है । वह कई अन्य प्रदर्शनों में भी माहिर है । वह सांप जिंदा निगलकर वापस निकालने का खेल भी दिखाता है । जगन्नाथ एक काफी ऊंचे खंभे पर लगी कील पर पेट के बल पूरे शरीर का संतुलन बनाकर चक्कर लगाता है । यह प्रदर्शन साहसिक प्रदर्शनों में इलाके भर में तारीफ पाता है । रामप्रताप तलवार को पूरी निगलकर वापस निकालता है । कई लोग अपने गालों से आरपार सलाखें और लोहे के धारदार तार, चाकू, तलवार आदि निकाल लेते हैं । कोई नाक से धागा खींचकर वैसा का वैसा निकल देता है । चतुर्भुज भी ऐसे कई प्रदर्शनों में माहिर है । और कई तरह के करतबों के प्रदर्शन के साथ सांगोद का न्हाण एक बार फिर इसी तरह के प्रदर्शन देखने की ललक के साथ समाप्त हो जाता है । पूरा इलाका उसी के इंतजार में वापस काम में जुट जाता है ।

होली का एक मनोरंजक रूप यह भी

□

कमल सौगानी

हाल ही के एक ताजा सर्वे के मुताबिक विश्व के ६२ मुल्कों में जनवरी के मध्य से वसंत ऋतु की शुरुआत हो जाती है जो भिन्न-भिन्न स्थानों पर मार्च से अप्रैल तक चला करती है । महकते फूलों का यही अलबेला मौसम जब विदा होने लगता है तो लोग अपने रीति-रिवाज के मुताबिक इन फूलों की याद, आने वाले साल तक बरकरार रखने के लिए होली जैसा इंद्रधनुषी और हंसी-मजाक का उत्सव पूर्ण उल्लास के साथ मनाते हैं ।

एक ऐसा ही हंसी-मजाक का उत्सव फ्रांस में 'डिबो-डिबी' नाम से प्रतिवर्ष १९ मार्च को मनाया जाता है । मार्च के मध्य तक यहां वसंत ऋतु पूर्ण यौवन पर रहती है । लेकिन आधुनिक फ्रांस में आज भी सदियों पुरानी परंपरा जीवित है । उसके मुताबिक यहां नववर्ष पहली जनवरी या पहली अप्रैल की बजाय २० मार्च से शुरू होता है और १९ मार्च वर्ष का अंतिम दिन माना जाता है । चूंकि १९ मार्च यहां 'वसंत' और 'आखिरी साल' का अंतिम दिन रहता है, इसलिए लोग इस दिन को सदा याद बनाये रखने के लिए एक हंसी-मजाक का उत्सव खेलते हैं, जो हमारे देश की होली का ही मनोरंजक रूप कहा जा सकता है ।

इस दिन लोग एक विशाल मैदान एकत्रित होकर किन्हीं दो मोटे- आदमियों को चुनते हैं । इन्हें स्त्री-पुरुष भड़कीली ड्रेस पहनाकर ऊंचे मंच पर किया जाता है । लोग बड़े प्यार से प्रेमी-प्रेमिका कहकर पुकारते चिढ़ाते हैं

दर्शकों के सम्मुख इनकी शादी काल्पनिक नाटक रचा जाता है जि भरपूर हंसी-मजाक होती है । शादी बाद प्रत्येक दर्शक इन पर फूल के ब अधखिली कलियां, ब्रेड, टमाटर व दिनों से सड़े अंडे फेंकते हैं । इन वस् को यह आधुनिक युगल जोड़ा स्वीकार करता है ।

अब यह जोड़ा मंच पर आये दो पर बैठता है, और फिर बारी-बारी रोमांटिक व हास्य रचनाएं सुनाने ल है । दर्शक इनकी रचनाएं सुनकर हो जाते हैं ।

हां, इस रंगारंग आयोजन में जो व्य भाग नहीं लेते, उनका मुंह काला क सिर पर लंबे-लंबे सींग लगाकर का का डिस्को गधा बना दिया जाता है । मौके पर वहां के प्रेसवाले इन गधों चित्र खींचकर अपने अखबारों व पत्रिका

होली

रंग हू अबीर से रंगी हौं आजु 'ललितेश' गाल में गुलाल लाल ! लाल हू लगाव-न ।
सांवरे सलोने घनश्याम-भानुजा की सौंह, अंग मो उमंग झौरि रंग हू लगाव-न ।
मेरी सौं सनेह चारु ब्रज की नवेलिन को–पट छोरि पीत पट सांवरे लुभाव-न ।
भोर की धुरेरी ! दौरि-दौरि होरी खेलिबे को–नंद को कुमार बरजोरी हू दिखाव-न ।।

[२]

फाग फुहार-बहारन बीच, उड़ै चहुं रंग उमंग बढ़ावति ।
खेलत मंजु मनोज उमंगित, बालन-बीच अबीर सुहावति ।।
रंग लिये कर में सुकुमारि, निहारि झिझोरि कै रंग लगावति ।
नवरस भींने कपोलन पै–यह होरी ! गुलाल रचावति-आवति ।।

–ललितेश मिश्र

–९८, आर. पी. विद्यालय, पशुपतिनगर-नौबस्ता, कानपुर

में बड़ी अदा के साथ प्रकाशित करते हैं । प्रकाशित करने की अदा ऐसी होती है कि मात्र 'गधे' का चित्र देखते ही देखने वाला कई देर तक हंसा करता है । बाद में लोग इन्हें 'गधा' कहकर चिढ़ाते भी हैं ।

यहां यह उत्सव रात्रि के १२ बजे तक चलता रहता है । इसके बाद लोग अपने फटे वस्त्र, सिर के बाल और पूर्वजों के पुराने जूते जलाकर हंसते हुए वसंत और पुराने वर्ष को विदाई देते हैं । फिर एक दूजे पर रंग छिड़कने का सिलसिला शुरू करते हैं जो नववर्ष यानी २० मार्च की भोर तक चला करता है ।

फ्रांस की यह अलबेली होली विश्व में मनाये जाने वाले उत्सवों में से एक है । हर वर्ष इस होली का नज़ारा देखने यहां विदेशों से भी कई लोग जमा होते हैं ।

बदलते परिवेश के साथ यहां की फिल्मी हस्तियों ने इस उत्सव को रोमांटिक रूप दे दिया है । इस दिन यहां की जितनी भी नायिकाएं और सुंदरियां हैं ये अपने प्रेमी के संग नौका-विहार करने जाती हैं । बीच नदी में पहुंचकर ये नायिकाएं और सुंदरियां अपने प्रेमियों के जिस्म पर भिन्न-भिन्न जगह अपने गुलाबी होंठों से चुंबन जड़ती हैं ।

यह चुंबनी होली सिर्फ यहां नायक-नायिका और सुंदरियों को ही नसीब है । यही चुंबनी दृश्य जब पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते हैं तो देखने वाले भी स्वतः ही रोमांटिक होने लगते हैं ।

–स्टेशन रोड, भवानी मंडी, राजस्थान

□

सुख और दुख

— गोविन्द पाण्डेय —

यही सनातन सत्य कि जीवन है सुख-दुख की छाया।
शाश्वत सत्य, सदा संग रहते ब्रह्म और ज्यों माया।।

एक दूसरे के हैं, पूरक, मिलकर एक इकाई।
बिना प्राण के भला कहां पर तन ने प्रभुता पायी।।

और नियति के कालचक्र के दोनों देते फेरे।
कोई जीवन कहां अछूता, जहां न इनके डेरे।।

सुख के बिना पंगु है दुख यदि, बिन दुख, सुख है अंधा।
हानि-लाभ दोनों आवश्यक, यह जीवन का धंधा।।

सुख के बाने दुख के ताने मिल कर पट रच पाता।
यद्यपि परम विरोधी दोनों, पर लगाव का नाता।।

जीवन को दोनों ही प्यारे, दोनों की है सत्ता।
बिना एक के जीवन नीरस, मधु बिन हो ज्यों छत्ता।।

एक अमा तो अपर पूर्णिमा का प्रतीक बन आता।
इनके बिना सलोना जीवन, पल भर में मुरझाता।।

एक पिता है और दूसरा मां के सदृश सुहाना।
इनका काम सदा ही जीवन-शिशु को है दुलराना।।

दोनों की गोदी में रह, जीवन करता क्रीड़ाएं।
कभी बिहंसता मुसकाता है और कभी रोता भर आहें।।

रात-प्रभात सदृश सुख-दुख हैं, दोनों क्रम से आते।
और धवल जीवन को दोनों, मन चाहा रंग जाते।।

–१८/१८६ ए, फूलबाग चौराहा,
महात्मा गांधी मार्ग, कानपुर-२०८००१, उ. प्र.

□

ंध व्यवसाय

हमारे अतीत को महकाता इत्र

☐ अनुभव तिवारी

नव मन सदैव से सुगंध प्रिय रहा है। सुगंधित वातावरण में मानसिक एका- ा के साथ आनंदमयी 'स्वर्गिक' अनु- ति होती है। सांस्कृतिक एवं सामाजिक र्भों में भी सुगंधित परिवेश को मंगल- य माना गया है। वैदिक साहित्य में ोम' और 'सुरा' दोनों को ही प्रजापति अन्न कहा गया है। किंतु 'सोम' सुगंध और 'सुरा' दुर्गंध का प्रतीक है। अतएव ंध मानव की ऊर्ध्वगामी चेतना का ीक है। यजुर्वेद के मृत्युंजय सूक्त में— ंधि पुष्टिवर्धनम्' बताया गया है।

मानव सभ्यता के उषाकाल में भारत न और ईरान के सम्राट 'जगत प्रभु' लाते थे। तीनों ही देशों में आदि-काल सुगंध के बहुआयामी प्रयोग होते रहे हैं। ग्वेद' के द्वितीय अष्टक के एक सूत्र से त होता है कि 'अश्वमेध यज्ञ' के अवसर सुगंधयुक्त पदार्थों के साथ अग्नि में हुति दी जाती थी।

विश्व में सुगंध उपयोग के सबसे प्राचीन य एवं अभिलेख मिस्र देश के पिरा- डों से प्राप्त हुए हैं। ईसा पूर्व ३५०० हुए पिरामिडों में दफनाये गये फराउन शासकों के शवों के साथ उनके उपयोग में आने वाली वस्तुओं के साथ सुगंधियां भी प्राप्त हुई हैं। इन तथ्यों से यह पुष्ट होता है कि उस युग में भी सुगंधियों का प्रचलन था।

भारत में भी वैदिक युग के प्रमुख देवताओं को प्रसन्न करने के लिए किये गये यज्ञों में सुगंध का बहुतायत से प्रयोग होता था। 'अग्नि-पुराण' तथा 'श्री वाराह पुराण' में अनेक प्रकार के सुगंधित पदार्थों का उल्लेख मिलता है। वात्स्यायन ने चौंसठ कलाओं में 'गंध-युक्ति' को एक

चित्र : विनोद दुबे

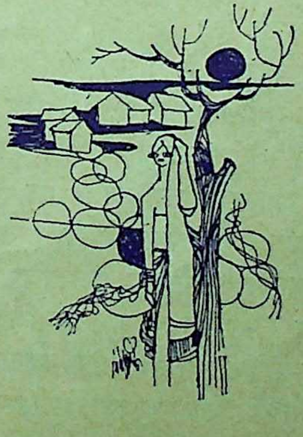

प्रमुख कला माना है। वराह मिहिर के 'गंध-युक्ति' प्रकरण में अनेक प्रकार की सुगंधियां बनाने का विवरण है। विभिन्न द्रव्यों और पदार्थों के संयोग से एक लाख चौहत्तर हजार से भी अधिक प्रकार की सुगंधियां बनाने का संकेत है।

प्राचीन भारत में सुगंधित जल, उबटन (यक्षकर्दम), मुख शोधक, पटवास (कपड़े पर लगाने की सुगंधि), धूम्र-वर्ती (धूप-जलाना) और सुगंधित चूर्ण के प्रयोग के प्रमाण मिलते हैं। महाकवि कालिदास ने 'रघुवंश' में उल्लेख किया है कि स्त्रियां सुगंधित धुएं से अपने केश सुवासित करती थीं। 'हर्षचरित' और 'कादंबरी' में भी महाकवि बाणभट्ट ने सुगंध के व्यक्तिगत और सामाजिक प्रयोगों का उल्लेख किया है। कादंबरी के राजा शूद्रक द्वारा व्यक्तिगत प्रयोग और हर्षचरित में राज्यश्री के विवाह प्रकरण में सामाजिक प्रयोग हमारी सांस्कृतिक धारा में सुगंध के विशिष्ट स्थान को चित्रित करते हैं।

'गुप्त काल' में हिमालय के पहाड़ी प्रदेशों से सुगंधित मसाले, पश्चिमी तट के बंदरगाहों से रोम राज्य को भेजे जाते थे। जहां से अपार सोना आता था, जिसके कारण भारतीय इतिहास में गुप्त काल 'स्वर्ण युग' कहलाने का वास्तविक अधिकारी हो सका। उस युग में विदेशों में भारतीय-संस्कृति कला और व्यापार की वृद्धि में 'सुगंधि' की महत्वपूर्ण भूमिका रही।

'इत्र' का काम करने वालों
काल में अपने संगठन बना लिये थे।
से कई इतने समृद्ध थे कि वे अपने
साय के नाम पर सिक्के जारी करे
उन सिक्कों पर, 'गंधिकानां' लेख है
सिक्के कौशांबी से मिले हैं, जो
दो हजार साल पुराने हैं। लेख क
है–'गंधियों की मुद्रा'।

वर्तमान युग में प्रयुक्त होने
'सुगंध' (इत्र) का इतिहास अधिक
नहीं है। लगभग सन १६१२ ई. में
जहांगीर ने अपनी आत्मकथा
जहांगीरी' में लिखा है, कि 'इत्र का
हमारे दौरे हुकूमत में हुआ। मलिका
की वाल्दा सलमा सुलताना ने गुल
इत्र मेरे सामने पेश किया था।
ही इसे 'इत्रे-जहांगीरी' नाम दिया
मैंने इस आविष्कार के बदले उन्हें
की माला प्रदान की थी। इसके
की विधि यह है कि जब फूलों
निकाला जाता है तो इन बर्त
ऊपरी भाग में चिकनाई-सी
होने लगती है। इस चिकनाई
थोड़ी-थोड़ी मात्रा में बनती रह
एकत्र कर लिया जाता है।' अब
(चंदन के तेल) को आधार
विभिन्न सुगंधों के सहयोग से बहुत
के इत्र बनने लगे हैं। सुगंध (संदल
को इस रूप में स्थायित्व प्रदान क
श्रेय साम्राज्ञी नूरजहां को है।
संरक्षण में इस कला का पूर्ण

हुआ। संदल जिस सुगंध के संपर्क में आता है, उसी को अपने में आत्मसात कर लेता है। इस प्रकार भारतीय सुगंध संसार में एक नया इंकलाब आ गया। मुगलकाल में बादशाह अपना बहुत-सा समय हम्माम के महकते, शीतल वातावरण में गुजारते थे।

सन १८४८ ई. में फारसी की हस्तलिखित पुस्तक 'दुर्जे अंबरीन' में उल्लेख मिलता है कि दिल्ली की मुगल सल्तनत कमजोर होने पर लखनऊ तथा हैदराबाद के नवाबों के संरक्षण में इत्र व्यवसाय पनपने लगा था, जिनके प्रमुख केंद्र कन्नौज व जौनपुर थे।

अंग्रेजों की विनाशलीला के कारण मुगलकालीन सुगंध के केंद्र पतनोन्मुख होने लगे, किंतु कन्नौज के इत्र व्यवसाय में अभिवृद्धि होने लगी। यहां के बहुत से इत्र-प्रतिष्ठानों ने इस व्यवसाय को जीवित रखा। चंदन की लकड़ी से संदल प्राप्त करने के लिए सारे उत्तर भारत में सबसे पहले कन्नौज में ही मिल लगायी गयी। और आज भी यह नगर अपने इत्र एवं सुगंधि व्यवसाय के लिए विश्व विख्यात है।

सुगंध व्यवसाय आज एक कला के साथ-साथ विकसित विज्ञान का रूप ले चुका है। सभी प्रकार के फूलों तथा सुगंधित मसालों से इत्र बनाने का ढंग जलीय आसवन क्रिया (डिस्टिलेशन) पद्धति पर आधारित है। सुगंध और इत्र के निर्यात से देश को विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है। आज कुल उत्पादन का ९५ प्रतिशत भाग

□

मत बजाओ गाल

क्या किया—अब तक ?
कौन से पहाड़ उल्टाये ?
अब और मत बजाओ गाल
चलो, कुछ काम करो
उठाओ हल
उठाओ कुदाल।

मशाल बनो

उठो, जी उठो !
चलो, जी चलो !
क्या टिमटिमा रहे हो ?
मशाल बन कर जलो।

नियति

मैंने तो
हमेशा ही चाहे हैं
ऊबड़-खाबड़
बीहड़ रास्ते
मैं बना ही हूं
इनके वास्ते।

—डा. प्रतीक मिश्र
—५५/१७, काहू कोठी, कानपुर

०००००००००००००००००००००००००

तंबाकू, पान-मसाला, प्रसाधन-सामग्री, टूथ-पेस्ट तथा औषधियों को सुस्वादु और ग्राह्य बनाने में उपयोग होता है। सुगंध-उद्योग अब विलासिता के युग से निकलकर मानव जीवन की उपयोगिता और सेवा के क्षेत्र में कार्यरत है।

—मकरंद नगर, कन्नौज, उ. प्र.

साहित्य-चर्चा

रघुपति सहाय 'फिराक

['फिराक' गोरखपुरी के साहित्यिक सचिव
रमेशचन्द्र द्विवेदी से के. के. सिंह की बातचीत]

□

कवि व शायर स्व. रघुपति सहाय 'फिराक' भारत के उन चंद शायरों में से थे, जिन पर भारतवासी गर्व कर सकते हैं। उन्होंने अपनी शायरी द्वारा समाज को जो कुछ दिया वह वास्तव में आज हमारी अमूल्य धरोहर सिद्ध हो रही है। पर यह हमारी अपनी कमजोरी व दुर्भाग्य है जो हम उनकी बातों को विस्मृत कर लगातार उसकी उपेक्षा करते जा रहे हैं। सच तो यह है कि फिराक को लोग तब भी नहीं समझ सके थे, जब वे जिंदा थे और आज भी उनके कृतित्व व व्यक्तित्व का सही मूल्यांकन न कर हम उनके असली रूप को पहचानने की कतई कोशिश नहीं कर रहे हैं। हालांकि अब आज के समय में उनकी शायरी व विचारों की सार्थकता किसी से छिपी नहीं है। यही नहीं खुद उनके घरवाले और करीबी दोस्त-यार तक उन्हें सही तौर पर नहीं समझ सके। पर एक ऐसी अजीम हस्ती आज भी मौजूद है जिसने 'फिराक' का हम-निवाला—हम-प्याला बनकर उनके साथ
३० साल गुजारे और उनसे
होकर उन्हें बखूबी जाना व समझा
शख्सियत का नाम है श्री
द्विवेदी। फिराक के 'साहित्यिक
होने के कारण फिराक उनसे हमेशा
तो रहे ही उनको ताउम्र अपना
भी बनाये रखा। संस्कृत, हिंदी,
और पर्शियन भाषा पर पकड़
द्विवेदीजी ने वैसे तो फिराक
काफी कुछ लिखा व कहा है,
कल 'फिराक साहब' नाम से जो
लिख रहे हैं, निश्चय ही उसकी
का अपना अलग महत्व होगा।

हाल ही में फिराक साहब के
कुछ अनछुए बिंदुओं को तलाशने
में सार्थक प्रयास स्वरूप मैंने
सहृदयता व विनम्रता की प्रतिमूर्ति
दीजी से उनके निवास स्थान
जाकर लंबी बात की थी। प्रस्तुत
श्री द्विवेदीजी से हुई मेरी बात

विकल आलेख ।

प्रश्न : वे क्या तत्व थे जिनसे वशीभूत ोकर आप फिराक साहब की ओर आकृष्ट ए ?

उत्तर : मैं इंटरमीडिएट में मिर्जापुर पढ़ता था । उसी समय मैंने फिराक की द्वता और उनके जीवन से संबंधित बहुत-ी बातों के विषय में अफवाहें सुनीं । स तरह की तमाम बातों ने मेरे दिल में क भावना पैदा की कि ऐसे व्यक्ति को खा जाये और उससे मिला जाये । जब मैंने बी. ए. में दाखिला लिया, उस समय भी इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्रांगण में फिराक साहब के विषय में अनेकानेक बातें और अफवाहें उड़ी हुई थीं । मैं एक दिन जाकर उनकी कक्षा में बैठ गया । फिराक को देखते ही मुझे लगा, यह पुरुष महान चिंतक और असाधारण व्यक्तित्व का स्वामी है । उनके बात करने का ढंग, भाषा सौष्ठव, विचार गांभीर्य और सर्वोपरि उनके विचारों की मौलिकताओं ने मुझे उनकी ओर आकृष्ट किया । ज्ञान

सुप्रसिद्ध शायर स्व. रघुपति सहाय 'फिराक'

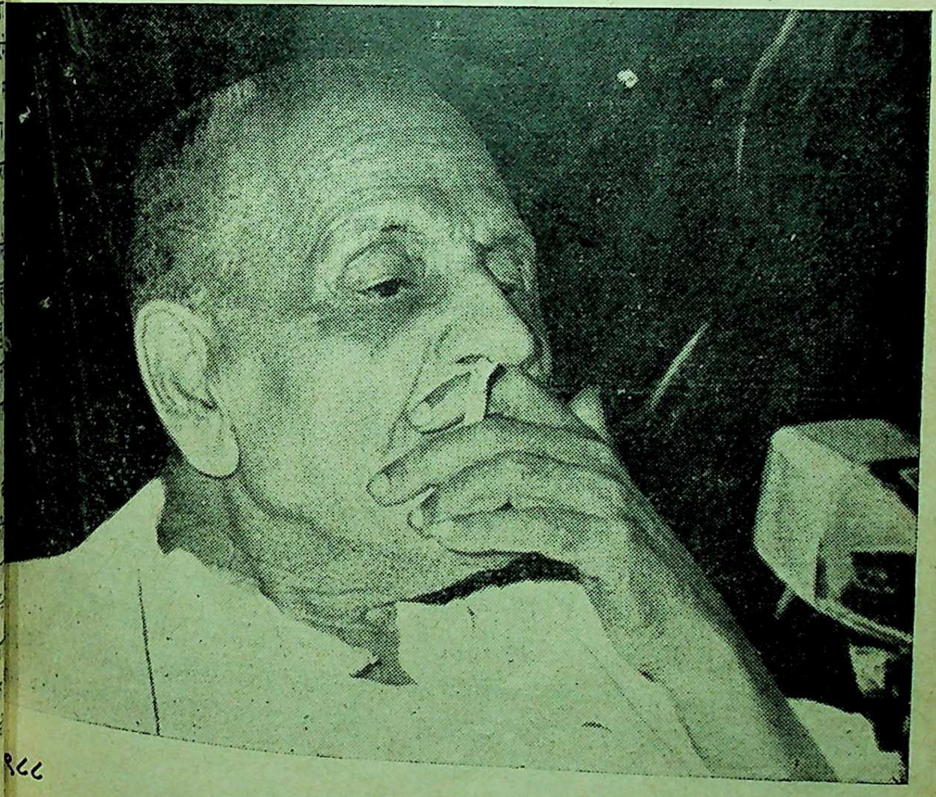

और विद्वता में एक भयंकर आकर्षण होता है और जिस व्यक्ति में जरा भी जिज्ञासा और ज्ञान पिपासा होगी, वह बिना आकर्षित हुए नहीं रह सकता। फिराक की दूसरी विशेषता यह थी कि उनमें देशप्रेम कूट-कूटकर भरा था। लेकिन फिराक का देशप्रेम किसी संस्थाबद्ध संप्रदाय का देशप्रेम नहीं था। उनका देशप्रेम उसी तरह का था, जिस तरह का देशप्रेम उपनिषदों के ऋषियों का, राजा राममोहन राय का, बालगंगाधर तिलक का, गोखले और राना डे का, गांधी और टैगोर का और जवाहरलाल नेहरू का था। तीसरी विशेषता फिराक की यह थी कि वह एक प्रबुद्ध व्यक्ति थे और आने वाले कल की तरह आधुनिक विचारधारा वाले थे। उन्हें रूढ़िवादिता, अतीतपरस्ती, फिरकापरस्ती और कुरीतियों से सख्त नफरत थी। फिराक के व्यक्तित्व में एक और विशेष बात यह थी कि वह बड़े स्पष्टवादी थे। उनका स्वभाव बड़ा सहज व सरल था। वह जैसे बाहर थे वैसे ही भीतर थे। डी. एच. लारेंस के शब्दों में : 'फिराक एक एलीमेंटल मैन (ठेठ आदमी) थे।' इन्हीं चीजों ने मुझे फिराक की ओर आकर्षित किया था।

प्रश्न : 'फिराक' की जिंदगी बड़ी खुरदरी थी। इस विषय में आपको क्या कहना है?

उत्तर : सिंह साहब, आपका यह प्रश्न बड़ा ही सारगर्भित है। आपने खुरदरी शब्द का प्रयोग बहुत ही व्यापक रूप में किया है। हमें समझना पड़ेगा कि क्या है। मेरे विचार से खुरदरी का ऊबड़-खाबड़, असमान या असमतल जिसमें स्निग्धता न हो। आपने होगा। पेड़ का सबसे मुख्य भाग जड़ है, पेड़ जितना ऊपर की ओर है उसकी जड़ें उतनी ही तेजी से गर्त की ओर बढ़ती हैं। जड़ का काम इतना है कि वह वृक्ष को पकड़े अंधकार और गंदगी को हरी-भरी सुगंधित पुष्पों और सुस्वाद फलों में परिवर्तित कर दे, ठीक यही बात के बारे में भी लागू होती है। हद तक सामाजिक मान्यताओं, दिखावटी व्यवहारों से हटकर करते थे। वह उस रस में (भद्रमानव) नहीं थे, जैसा कि व्यावसायिक भद्र मानव है। सही की परवाह किये बगैर वह अपने सच्ची जिंदगी जीते थे और जीवन दरा बनाने वाले तत्वों को कविता और साहित्य के अमृत की थे। वे लाखों और करोड़ों हृदयों बोध और सौंदर्य चेतना अपनी साहित्य के माध्यम से पहुंचाते भाव संसार के सारे महान कलाकारों का रहा है। प्रश्न कि कलाकार या साहित्यकार तक सच्चा और कलापूर्ण जीवन वही खुरदरी चीजें आपको मिटाकर रख देंगी। लेकिन यह

हान व्यक्तित्व में हज्म होने के बाद मृत बनकर उसकी कला को चिरंतन नाते हैं और तब वह महान कलाकार पनी काव्य गंगा से जनजीवन को आप्लावत कर देता है ।

प्रश्न : फिराक हिंदी के खिलाफ क्यों ला करते थे ?

उत्तर : यह एक बड़ा भ्रम है कि फिराक दी के खिलाफ थे, वस्तुतः वह उसके लत प्रयोग के खिलाफ थे । वह कहते कि खड़ी बोली एक स्वतंत्र और वाधीन भाषा है, वह न तो संस्कृत है र न अरबी न फारसी, भले ही खड़ी ली पर संस्कृत, अरबी और फारसी का भाव रहा हो। हमारी खड़ी बोली में ९० तिशत शब्द तद्भव हैं । और उसमें बहुत ड़े से शब्द संस्कृत के हैं, जो हमारे तिदिन के प्रयोग में व्यवहरित होते हैं । , अरबी-फारसी के ऐसे हजारों शब्द हैं हमारी खड़ी बोली में बिल्कुल ही लमिल गये हैं । फिराक का कहना था उर्दू के महारथियों ने इस खड़ी बोली संवारा, रचाया और निखारा है । लमुकुंद गुप्त, प्रताप नारायण मिश्र, रतेंदु हरिश्चंद्र, हरिऔध, वियोगी हरि, मचंद्र शुक्ल आदि की रचनाओं में स्वाभाकता थी और एक प्रवाह था । फिराक साहित्यकारों का हृदय से स्वागत रते थे । उनका विचार था कि भाषा वह जो बोली जाये, चाहे उसे जनसमुदाय लता हो या एक प्रबुद्ध वर्ग विशेष । पंतजी की रचनाओं में प्रयुक्त भाषा किसी की भाषा नहीं है । लेकिन पंतजी की कुछ कविताओं, निराला की अधिकतर कविताओं और स्व. महादेवीजी की रचनाओं के फिराक मुक्त-कण्ठ से प्रशंसक थे । अवधी और ब्रज के तो वे पुजारी थे । उनका मत था कि जिस प्रकार कट्टर ब्राह्मण जनसमुदाय के साथ घुलमिल नहीं पाता, वही दशा संस्कृत शब्दों की है । संस्कृत भाषा में तो यह शब्द बहुत सुंदर और सारगर्भित लगते हैं, लेकिन खड़ी बोली में प्रयुक्त होते ही अलग-थलग से मालूम होने लगते हैं । जो संस्कृत के शब्द हमारे प्रतिदिन के जीवन से मिल गये हैं उन्हें हम सहर्ष और बड़ी सरलता से प्रयुक्त करते हैं । स्वयं फिराक की कविताओं में अनेकानेक संस्कृत के सुंदर और सुघड़ शब्दों का प्रयोग बड़ी उदारता से हुआ है ।

प्रश्न : आप फिराक साहब के विद्यार्थी भी रह चुके हैं । अध्यापक के रूप में फिराक साहब आपको कैसे लगे ?

उत्तर : अगर मुझसे कोई फिराक का सिर्फ एक ही रूप जानना चाहे तो मैं उससे यही कहूंगा कि वह सबसे पहले एक अध्यापक थे, उसके बाद कुछ और । उनके क्लास में विद्यार्थी उनके लैक्चर को सुनकर तल्लीन हो जाते थे । और विशेषकर फिराक साहब जब कविता पढ़ा रहे हों तो हम ऐसी अनुभूति करते थे कि जैसे हम वही दशा, या वही अवस्था बन गये

हैं जो उस कविता में वर्णित है। जब फिराक वड्र्सवर्थ को पढ़ाते थे तो हमें अनुभूति होती थी कि हम अपने शरीर से ऊपर उठ गये हैं और कविता के माध्यम से वर्णित शाम का समय ही हो गये हैं। इसी को अंग्रेजी में 'फेल्ट टीचिंग' कहते हैं। फिराक साहब का कहना था कि अध्याबक को विद्यार्थियों पर अपनी विद्वता का रौब नहीं झाड़ना चाहिये बल्कि उनमें एक सूझबूझ और विचारशक्ति पैदा करनी चाहिये। एक अच्छा अध्यापक, फिराक के विचारों में, विद्यार्थियों के हृदयों में बैठ जाता है और उनके हृदय और मस्तिष्क की अवरुद्ध ज्ञान-ग्रंथियों को खोल देता है। अच्छे अध्यापक को उपस्थिति ही विद्यार्थियों में ज्ञान की प्रेरणा को जन्म देती है—चाहे पठन-पाठन का क्रम चलता हो या नहीं। महान अध्यापक की मूक भाषा भी अपने आप विद्यार्थियों में ज्ञान सरसाती रहती है। इसीलिए फिराक साहब जितना अच्छा शेर कहते थे उससे भी अच्छी तरह से वह शेरों की व्याख्या करते थे। एक विशेष बात और है—फिराक इस बात पर बहुत जोर देते थे कि अध्यापक को कुरूप नहीं होना चाहिये। कुरूप अध्यापक की उपस्थिति से खतरा यह रहता है कि कहीं विद्यार्थियों के भोले-भाले और कोमल मस्तिष्क पर कुरूपता अपनी छाप न छोड़ दे और उनका जीवन हमेशा हमेशा के लिए कुरूप न हो जाये। विद्यार्थियों में सौंदर्य बोध उत्पन्न करना और उनकी सौंदर्य-चेतना को अध्यापक का सबसे बड़ा कर्तव्य है।

प्रश्न : फिराक के इस मत से आ किस सीमा तक सहमत हैं?

उत्तर : मैं फिराक के इस वि २०० प्रतिशत सहमत हूं। सुंदर मेरा अभिप्राय 'स्किन' की सुंदर नहीं है। बल्कि साथ ही साथ और मन की सुंदरता अति आवश्य सुकरात एक कुरूप व्यक्ति थे, लेकिन चेहरे पर सत्य, ज्ञान और दर्शन सुंदरता हमेशा प्रतिभासित रहती प्लेटो का भी यही विचार था शहर के चौराहे पर एक सुंदर-सी स्थापित होनी चाहिये, जिससे आ वाले लोगों के मन व आत्माओं हुई सौंदर्य चेतना प्रबुद्ध हो जाये विश्वास है कि सुंदर (दी ब्यूटी बढ़कर मानव मन मस्तिष्क व पोषित करने वाला कोई दूसरा है। जो सुंदर है वही सत्य है, सत्य है वही शिव है।

प्रश्न : उर्दू साहित्य में आपको कौन सी कमियां नजर आयीं। कमियों को पूरा करने के लिए साहब ने क्या-क्या प्रयत्न किये?

उत्तर : मैंने उर्दू, हिंदी और साहित्य का अध्ययन करने के प महसूस किया कि उर्दू में प्रकृति और प्रकृति काव्य के साथ ही ना की बड़ी कमी है। प्रकृति का जो

कालिदास, वर्ड्सवर्थ, सूरदास, तुलसीदास आदि के यहां मिलता है, वह हमें उर्दू साहित्य में दूर से भी दिखायी नहीं देता। इसी प्रकार सूर का बालक कृष्ण की बाल-लीला का वर्णन भी उर्दू में बिल्कुल है ही नहीं। उर्दू साहित्य में नारी का जो वर्णन हमें मिलता है, वह हमें बिल्कुल ही संतोष प्रदान नहीं करता। उर्दू साहित्य में वर्णित नारी एक छेड़छाड़ करने वाली, महफिलों में नखरे दिखाने वाली और जबान के चटखारेपन से लोगों को अपनी ओर खींचने वाली 'औरत' है। उर्दू साहित्य में राधा, सीता का रूप नहीं है। नारी के देवीत्व और सतीत्व की बू-बास हमें उर्दू में बिल्कुल ही नहीं मिलती, यह सत्य है। साथ ही साथ उर्दू शायरी से हमें धरती की सोंधी-सोंधी महक भी नहीं मिलती। फिराक ने इन्हीं कमियों को कुछ हद तक पूरी करने की कोशिश की। और फिराक का काव्य इस दिशा में काफी हद तक एक सफल प्रयास रहा है। हालांकि ब्रजभाषा और अवधी की नरमी और रसीलापन खड़ी बोली में कदापि नहीं आ सकता, चाहे लेखक कोई भी हो लेकिन फिर भी प्रयास किया ही जा सकता है। और यह प्रयास केवल फिराक ने ही किया। उनकी रुबाइयों में बाल लीला का जिक्र बड़ा ही हृदयग्राही है। घरेलू जिंदगी की पवित्रता का वर्णन फिराक की उर्दू साहित्य को सबसे बड़ी देन है। गाय का दुहना, पति के सामने भोजन का थाल परसना, केशों में कंघी करना, स्नान करना आदि का वर्णन फिराक की रुबाइयों में बड़ा ही सुहाना है। लगता है घर-गृहस्थी के क्रिया-कलाप में एक अलौकिक दिव्यता छिपी हुई है। एक रुबाई देखें–

निखरी-निखरी नयी जवानी दमें सुब्ह
आंखों में सुकून की कहानी दमें सुब्ह
आंगन में खड़ी है नाज़नी उठाये हुए हाथ।
तुलसी पे चढ़ा रही है पानी दमें सुब्ह॥

× × ×

आंखों में आंसू से भरे-भरे ये नैना रस के
साजन कब ऐ सखी थे अपने बस के
ये चांदनी रात, ये विरह की पीड़ा
उलट गयी हो जैसे नागन डस के

फिराक की कविता में भारतमाता के मधुर बोल सुनायी पड़ते हैं। फिराक की कविता को पढ़कर हमें पहली बार यह अहसास होता है कि उर्दू भाषा भी इसी धरती की कोख से पैदा हुई है। इस भौतिक संसार की दिव्यता की अनुभूति फिराक की कविता की मुख्य देन है। उर्दू में यह तत्व फिराक के पहले बिल्कुल ही गायब थे। फिराक जब किसी पेड़ या लताओं का वर्णन करते हैं तो लगता है कि यह पेड़ और लताएं हमारा ही प्रतिरूप हैं। उनकी कविता 'जुगनू' में एक पीपल के वृक्ष का वर्णन यूं किया गया है।

मैं देखता था उसे हस्ति-ए-बशर की तरह
कभी उदास, कभी शादमां, कभी गंभीर
ये उसकी जड़ें थीं कि जिंदगी की जड़ें
पसे-सुकूत-शजर कोई दिल धड़कता था

उर्दू के अनेक आलोचकों ने फिराक पर यह इल्जाम लगाया था कि उनकी कविता में चूल्हा-चक्की और वेदांत के सिवा और है ही क्या । इसके जवाब में मुझे सिर्फ यही कहना है कि चूल्हा-चक्की और वेदांत के सिवा जीवन में भी क्या है ?

प्रश्न : संसार के महान कवियों में फिराक सबसे ज्यादा किससे प्रभावित थे ?

उत्तर : फिराक खुलकर अपने ऊपर सबसे अधिक प्रभाव तुलसीदास का मानते थे । उनका कहना था कि जब कविता अपनी सीमा को पार कर जाती है तो वह एक प्रार्थना (प्रेयर) बन जाती है । और तुलसीदास का सारा काव्य एक प्रेयर है । सुमित्रानंदन पंत के सामने फिराक ने कहा था कि तुलसीदास भक्त नहीं थे, बल्कि वह भक्ति थे । तुलसीदास की कविता में जो अमृत की बरखा होती है वह अन्यत्र दुर्लभ है । इसके अलावा फिराक ने अंग्रेजी के माध्यम से संसार के महान कवियों और दार्शनिकों का बहुत गहरा अध्ययन किया था और वे फारसी के कवियों पर भी बहुत गहरी नज़र रखते थे । कालिदास, भवभूति आदि पर फिराक की अच्छी पकड़ थी और उनके काव्य सौष्ठव से वे अच्छी तरह परिचित थे ।

प्रश्न : आप फिराक साहब के साथ ३० साल की लंबी अवधि तक रहे । इसलिए सभी आपसे अपेक्षा करते हैं कि आप फिराक पर एक छोटी-मोटी पुस्तक क्यों नहीं लिख डालते ?

उत्तर : यह काम तो बड़ा मुश्कि
लेकिन मैंने इस दिशा में कोशिश
की है और 'फिराक साहब' के न
मेरी पुस्तक छप रही है । इस पु
मैंने फिराक को उसी रूप में प्रस्तुत
का प्रयास किया है जो फिराक का
रूप था । और इस कला में मैंने
पथ प्रदर्शक बॉसवेल को माना है ।
प्रकाशक हैं—रामनारायण लाल
कुमार, कटरा, इलाहाबाद । मैं
करता हूं कि १९८८ तक आप लो
हाथों में यह पुस्तक आ जायेगी ।

प्रश्न : उनकी वृद्धावस्था कैसी

उत्तर : फिराक साहब अपनी
के अंतिम दिनों में कई बीमारियों के
हो चुके थे । लेकिन उनके चेहरे
ताज़गी और ओज हमेशा ही बना
जीवन के विषय में कभी संदि
में नहीं रहे । जीवन के तत्वों से
तरह वाकिफ थे । और लाख पूछने
अपनी तकलीफों और जाती पर
का वर्णन बहुत कम करते थे ।
हंसाना, छेड़-छाड़, जीवन-दर्शन
से गूढ़ तत्वों पर सुगमता व सहज
बातें करना ही उनका जीवन था
बड़े में वे हमेशा समान दृष्टि र
कलक्टर और कलक्टर के चपरा
दरबार में बराबर का स्थान
हां, उन्हें आर्थिक असुरक्षा

(शेषांश पृष्ठ १२३ पर)

फागुनी सवैये

— शिवचरण चौहान —

[१]

आवत नैन नचावत गावत रंग गुलाल उड़ावत फागुन ।
बांगन में घर आंगन में गलियान में रास रचावत फागुन ।।
प्रीति प्रबंध के छंद नये लिखि पातिन रोज पठावत फागुन ।
आंखिन काजरू आंजिकै सांझ को बांसुरी फूंकि बुलावत फागुन ।।

[२]

जय में लय में तरु किसलय में हैं आय बिराजे फागुन जी ।
इन कूलनि केलि के फूलन में हैं गंध से ताजे फागुन जी ।।
झंझ-ढोलक-ढोल बंसुरिया के बोल में डोल के बाजे फागुन जी ।
ऋतु की महरानी मधुऋतु के पति हैं महराजे फागुन जी !

[३]

यार के प्यार मा भूलि गयो संसार सबै इ फागुन मा ।
सब दोष लगाय रहे हम पै नहिं होश रहै इ फागुन मा ।।
तन में, मन में, ऐसी प्रीति जगे कोउ कैसे कहै इ फागुन मा ।
मदमाती जवानी कहानी गढ़ै नहिं बांधी रहै इ फागुन मा ।।

[४]

बांगन कोयलि बोल गयी तन घोल गयी है आग हमारे ।
प्यास पपीहा जगाय गयो उन्माद जगायो है फाग हमारे ।।
टीस जगावै हिए हमरे कचनार कली खिलि बाग हमारे ।
फागुन मा गुन ऐसो, लगावै कोरी चूनरि दाग हमारे ! !

–मनेथू, कानपुर-२०९१२१, उ. प्र.

सार-संक्षेप

भारत का तख्तेताऊस कहां छिपा है?

प्रस्तोता : हरि

सोने के बने जिस रत्नजड़ित तख्ते ताऊस को नादिरशाह ने लूटा था, उसके बारे में शरलॉक होम्स के जन्मदाता सर आर्थर कॉनन डायल ने अपनी आत्मकथा में लिखा था :

'दिल्ली में मुग़लों के महल में रखा था, मयूर के आकार में निर्मित यह अद्भुत सिंहासन, जो पूरी तरह सोने का बना था, और भांति-भांति के हीरों, रत्नों आदि से जड़ा था । वह स्वर्णयुक्त पांवों वाले ऐसे छोटे पलंग जैसा दिखायी देता था, जिसके पतले स्तंभों पर हीरे-पन्ने तथा रत्न बड़े कलात्मक ढंग से जड़े गये थे । सिंहासन के पृष्ठभाग में दो मयूर प्रतिष्ठित थे, जिनके शरीर तथा फैले पंखों पर भी भांति-भांति के दमकते-चमकते रत्न, हीरे और पन्ने आदि शोभायमान थे ।'

कुछ अंग्रेज इतिहास-लेखकों का कहना है कि नादिरशाह जो तख्ते ताऊस ले गया था, और जो आज भी तेहरान के शाही खजाने में रखा है, वह नकली तख्ते ताऊस है, जिसका निर्माण मुगल बादशाहों ने असली तख्ते-ताऊस को लुटरों से बचाने के उद्देश्य से कराया था । वह तख्ते ताऊस से इतना अधिक था कि जब लॉर्ड कर्जन ने उसे तेह देखा, तो उन्हें लगा कि वे उसी तख्ते-ताऊस को देख रहे हैं, जिसे दिल्ली में मुगलों के महल के स्थान में रखा देखा था ।

यदि इन अंग्रेज इतिहास-लेख यह बात सच है, तो यह कहा जा है कि जिस असली तख्ते-ताऊस को शाह नहीं लूट सका, उसे लूटने में अंग्रेजों ने सफलता प्राप्त की ।

०००

मार्च, १७८२ में, अनेक लिखि मौखिक प्रमाणों के अनुसार, 'ग्रौ नाम का एक जहाज़ भारत से इं लिए रवाना हुआ था, और उसमें सोने के अलावा, तख़्ते-ताऊस भी

उन दिनों अंग्रेजों की लड़ाई फ्रां हालैंड से चल रही थी । ये दोनों ब्रिटेन की भांति भारत पर अधिका के लिए प्रयत्नशील थे । जि 'ग्रौसवेनर' जहाज इंग्लैंड जाने तैयार खड़ा था, ठीक उसी समय

नौसेना भारत के कोरामंडल समुद्र-तट पर अचानक प्रकट हो गयी थी। 'ग्रौसवेनर' जहाज की यात्रा में इस कारण विलंब हुआ। उस काल में ईस्ट इंडिया कंपनी की फैक्टरी मद्रास के फोर्ट सेंट जॉर्ज में स्थित थी। उसके अध्यक्ष थे, लार्ड मैकार्टने, जिनके जिम्मे इंग्लैंड जाने वाले जहाज़ों के सामान की ढुलाई की व्यवस्था करना भी था। उन्होंने लंदन स्थित ईस्ट इंडिया कंपनी को इस जहाज पर लदे सामान की सूचना देते हुए लिखा, 'यद्यपि जो नगद राशि भेजी जा रही है, वह आपकी आशाओं से कम बैठेगी, तथापि उसकी क्षतिपूर्ति, कई गुना अधिक रत्नादि भारी मात्रा में भेजकर, कर दी गयी है।'

●●●

'ग्रौसवेनर' अंततः १३ जुलाई, १७८२ को इंग्लैंड के लिए रवाना हुआ। फ्रांसीसियों और हालैंडवासियों के डर से उसे मद्रास से न भेजकर, श्रीलंका के त्रिकोपाली बंदरगाह से भेजा गया था। उसे दक्षिण अफ्रीका की 'केप ऑफ गुड होप' के मार्ग से लंदन पहुंचना था; तब तक स्वेज नहर नहीं बनी थी।

जहाज़ का कप्तान कॉक्सन जितना अयोग्य व निरानुभवी था, उसके नीचे काम करने वाले कर्मचारी भी उतने ही अयोग्य व निरानुभवी थे। तूफ़ान जैसे आकस्मिक संकट का सफलतापूर्वक सामना करने की कुशलता के उनके अभाव ने ही उन्हें तथा उनके जहाज़ को जिन परेशानियों का सामना करना पड़ा, उनसे उबरने की क्षमता उन्होंने कभी प्रदर्शित नहीं की।

कप्तान तथा कर्मचारियों के अतिरिक्त 'ग्रौसवेनर' में १४२ यात्री भी थे। श्रीलंका छोड़ने के बाद उसने दक्षिण भारतीय महासागर के क्षेत्र में प्रवेश किया। ३ अगस्त तक उसकी यात्रा सुखी व विघ्नरहित रही। ४ अगस्त को सुबह के साढ़े

अगस्त, १७८२ में 'ग्रौसवेनर' नामक एक विशाल जलयान भारत से इंग्लैंड को रवाना हुआ। उसके कप्तान के अनुसार, उस पर ३००,००० पौंड मूल्य के कीमती हीरे-जवाहरात, जिनमें विश्वविख्यात 'तख्ते ताऊस' भी शामिल था, इंग्लैंड भेजे जा रहे थे। अफ्रीका के तट के समीप आने पर यह जलयान सहसा बड़े रहस्यमय तरीके से दुर्घटनाग्रस्त होकर जलमग्न हो गया।

क्या 'तख्ते ताऊस' भी जलयान की इस जल-समाधि के साथ सागर की गहराइयों में खो गया, या उसे बचा लिया गया? और, यदि बचा लिया गया, तो वह आजकल कहां है, आदि-आदि प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयास करती एक रोचक तथा सनसनीखेज पुस्तक का सार-संक्षेप यहां प्रस्तुत है।

तीन बजे के करीब जॉन हायन्स नाम के नाविक ने जो नज़ारा देखा, वह उसे एकबारगी कंपा देने के लिये काफ़ी था। उसने ज़ोर से बोलते हुए नीचे के डैक पर ड्यूटी पर तैनात 'मेट' को सूचित किया :

'आगे ज़मीन दिखायी पड़ रही है, सर ! समुद्री चट्टान के आसपास फैली जमीन !'

'मेट' ने नाविक को डांटते हुए कहा, 'दिमाग़ खराब हो गया है क्या तेरा ? या, पिये हुए है ? हम ज़मीन से हज़ारों मील की दूरी पर हैं। अपनी बकवास बंद कर !'

अपने 'मेट' की डांट सुनकर, हायन्स चुप तो हो गया, लेकिन उसने अपनी निगाह समुद्री चट्टान के इर्दगिर्द फैली ज़मीन से हटायी नहीं। उसके सौभाग्य से जहाज का क्वार्टरमास्टर विलियम निक्सन भी वहीं मौजूद था, और उसने भी उस समुद्री चट्टान को देख लिया था, जिसकी ओर हायन्स ने इशारा किया था। वह भागा-भागा कप्तान के केबिन में गया, और बोला, 'जहाज़ को फ़ौरन मोड़िये, सर ! हम एक समुद्री चट्टान से टकराने वाले हैं।,

कप्तान कॉक्सन फ़ौरन डैक पर आया, और अपने कर्मचारियों को हुक्म देने लगा, 'ख़तरा ! हमें जहाज़ को समुद्री चट्टान से बचाना है। सब लोग फ़ौरन जहाज को दूसरी दिशा में मोड़ने के काम पर लग जायें। इस काम में क्षण भर की भी देरी न हो।'

लेकिन, देरी हो चुकी थी। का आदेश पूरा भी नहीं हुआ था कि सीधा समुद्री चट्टान से जा टकराया।

○○○

जिस समय यह ज़ोरदार टक्क उस समय हवा बहुत तेज़ चल रही इस कारण 'ग्रौसवैनर' हवा के प्र साथ-साथ चलता हुआ बड़ी तेज़ी से से टकराया।

दक्षिण अफ्रीका के उस भाग के तट पर रहने वाले कुछ काले हब्शी उत्सुकतापूर्वक इस नज़ारे को देख र जैसे ही जहाज़ चट्टान से टकराया, वे भागे चट्टान पर आये, और जहाज़ गये। जहाज़ के सारे सामान व सारे या पर अब उनका संपूर्ण अधिकार था।

जहाज़ के अंदर इन हब्शियों ने के अलावा ताँबे और लोहे आदि से बनी वस्तुओं को देखा। मगर, सोने की वस्तुओं के स्थान पर ताँबे आदि धातुओं से बनी वस्तुओं को ही ठीक समझा। उनकी दृष्टि में मूल्यहीन था, कारण वे ऐसे देश में थे, जहां सोने की बहुतायत थी, सर्वत्र उपलब्ध था।

इधर, हब्शी लूटमार में व्यस् उधर, जहाज़, जो भीषण टक्कर के स्वरूप तिरछा होकर, बीच में से दो में विभक्त हो गया था, और इस तेज़ी से डूबने लगा था। जहाज़ के सामान की फ़िक्र छोड़कर, अपनी

यात्रियों की जान बचाने में लगे थे।

जिस हायन्स नाम के नाविक ने इस दुर्घटना की पूर्वसूचना अपने 'मेट' को दी थी, वह तट पर सुरक्षित पहुंचने वाले नाविकों में से एक था। ८ साल बाद, उसने एक अन्य ब्रितानी जहाज़ पर यात्रा कर रहे जॉर्ज कार्टर नाम के एक कलाकार को 'ग्रौसवेनर' के डूबने के समय घटी घटनाओं का वर्णन इन शब्दों में सुनाया था :

'मेरे अनुमानानुसार, जहाज़ २०° और ३२° दक्षिणी अक्षांश रेखाओं के मध्य में काफ़ारिया नाम के समुद्रतट से करीब ३०० गज़ के अंतर पर दुर्घटनाग्रस्त हुआ था। जब वह बीच में से फटने लगा, और तिरछा होकर जल-समाधि लेने लगा, तब हम नाविकों ने जल्दी-जल्दी जहाज़ और तट के बीच एक बेड़ा-पुल बनाया, और यात्रीगण इस पुल के सहारे ही तट पर आये। हब्शियों से बचने के लिये नाविकों और यात्रियों ने अपने को कई दलों में विभाजित कर लिया, और ये सब दल अलग-अलग दिशाओं में सुरक्षित स्थान की खोज में आगे बढ़ने लगे। मैं जिस दल में था, उसमें अनेक नाविकों और अधिकारियों के अलावा, ५-६ यात्री भी थे। तीन महीने बाद, हम स्वार्तकोप्स नदी के किनारे पर स्थित एक डच फार्म पर पहुंचे। इस फार्म के लोगों ने हमें लंदन पहुंचाने की व्यवस्था की।'

०००

जहाज़ का कप्तान कॉक्सन जिस दल में था, उसे एक अन्य डच बस्ती में पहुंचने के लिये ४० दिनों तक एक हज़ार मील का फ़ासला तय करना पड़ा। इस दल में छह अंग्रेज महिलाएं भी थीं। उनके साथ हब्शियों ने बलात्कार किया। जब कॉक्सन और उसके साथियों ने इन महिलाओं को बचाने का प्रयास किया, तो वे संघर्ष में काम आये। दल के जिन अंग्रेज सदस्यों ने इस संघर्ष में भाग नहीं लिया था, उन्हें हब्शियों ने जान से तो नहीं मारा, मगर अपना दास बना लिया। उनमें से दो—चैंबर्स और सांडर्स—किसी तरह, छह महीने बाद, दासता की बेड़ियों से मुक्त होकर लंदन पहुंचने में सफल हुए।

लेकिन, बंदी अंग्रेज महिलाएं उतनी सौभाग्यशालिनी नहीं रहीं। हब्शियों के मुखिया ने उन्हें कई महीनों तक अपने हरम में रखकर, बाद में निर्दयतापूर्वक उन्हें जान से मरवा दिया। उनके बच्चों को वे मारकर पहले ही खा चुके थे।

०००

जैसा कि हम पीछे बता आये हैं, जिन दिनों यह जहाज़ दुर्घटनाग्रस्त हुआ, उन दिनों डच और ब्रिटिश में युद्ध छिड़ा हुआ था। लेकिन, इस बात को भुलाकर, डच फार्म और बस्ती के लोगों ने जहाज़ के उन अभागे यात्रियों और नाविकों की, जो उनकी शरण में आये थे, न सिर्फ़ प्राण-रक्षा की, बल्कि उन्हें ब्रिटेन भिजवाने के अथक प्रयास भी किये। इतना ही नहीं, उन्होंने हब्शियों पर दबाव डालकर, उनके

बंधन में दास बने अनेक अंग्रेजों को भी मुक्त कराया। लेकिन, वे जहाज़ के कप्तान और अंग्रेज महिलाओं को नहीं बचा पाये, कारण हब्शी लोग उन्हें पहले ही जान से मार चुके थे।

'ग्रौसवेनर' के यात्रियों में सबसे बुरा हाल हुआ, बंगाल में रहने वाले एक अंग्रेज विलियम्स का। जैसे ही वह अन्य यात्रियों के साथ तट पर आया, तो उसकी भेंट एक ऐसे व्यक्ति से हुई, जो मूलतः अंग्रेज था, मगर पिछले दस-बारह वर्षों से हब्शियों के बीच रह रहा था। उसकी धाराप्रवाह अंग्रेजी से प्रभावित होकर, उसने तथा उसके साथी अंग्रेजों ने अपना सारा माल-मत्ता उसके सुपुर्द कर दिया, भोजन, निवास-स्थान और ब्रिटेन पहुंचाने के आश्वासन के बदले। मगर, यह व्यक्ति कभी वापस नहीं लौटा। निराश विलियम्स ने, जो 'ग्रौसवेनर' के मालिक-भागीदारों में से एक था, और जिसने उस अनजान व्यक्ति को लाखों पौंड मूल्य का स्वर्ण, तथा हीरे-पन्ने आदि दिये थे, उस व्यक्ति की खोज में आगे बढ़ना आरंभ किया। चलते-चलते वह एक नदी के किनारे पहुंचा, जहां हब्शियों ने उसे पत्थरों से मार-मारकर ख़त्म कर दिया। बाद में, लंदन स्थित ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकारियों ने विलियम्स के उत्तराधिकारियों को इस आधार पर कोई मुआवज़ा देने से इंकार कर दिया कि उसकी भागीदारी का कोई प्रमाण कंपनी के पास उपलब्ध नहीं है। लायड्स नामक ने भी, जिसने इस जहाज का बीमा था, इसी तर्क को प्रस्तुत कर, अपनी वारी से छुट्टी पा ली।

ooo

लायड्स को 'ग्रौसवेनर' के दु ग्रस्त होने की सूचना काफ़ी देर से अप्रैल, १७८३ को मिली। इसी दि 'डेली एडवरटाइजर' में प्रकाशित समाचार के अनुसार, 'लायड्स के स्थित कार्यालय को प्राप्त एक सूच अनुसार 'ग्रौसवेनर' नाम का ईस्ट कंपनी का एक जहाज १२ अक्तूबर को केप ऑफ गुड होप से १८० (१ लीग १.३ बर्तानिया मील के बर) की दूरी पर एक समुद्री च टकराकर दुर्घटनाग्रस्त हुआ। कप् छोड़कर, जहाज का कोई कर्मचारी नहीं हुआ।'

इस समाचार में जहाज पर लदे तख्ते-ताऊस, कीमती रत्नादि त राशि का कोई उल्लेख नहीं था। कुछ समय बाद, एक अन्य समाच में कहा गया कि 'जहाज पर लदे का मूल्य ३००,००० पौंड आंका ग तख्ते-ताऊस का ज़िक्र इस समा भी नहीं था। या तो, ईस्ट इंडिया और लायड्स के अधिकारी जा इस समाचार को छिपा रहे थे, या ध्यान तख्ते-ताऊस से अधिक उन और निर्दोष ब्रिटिश महिलाओं प

था, जिनके साथ, चश्मदीद गवाहों के अनुसार, नृशंसतम व्यवहार किया गया था। विशेष रूप से, ब्रिटेन की महिला-संस्थाओं ने इस कांड को बार-बार हवा में उछाल कर, कंपनी की कड़े शब्दों में भर्त्सना की।

ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकारियों को एक ओर तो इन तीखी आलोचनाओं को सहना पड़ रहा था, वहां दूसरी ओर वे पूरे एक वर्ष तक उस स्थल पर, जहां यह दुर्घटना घटी थी, पहुंच भी नहीं पाये, क्योंकि वहां उनसे पहले ही डच लोग, जिनके खिलाफ़ अंग्रेजों ने युद्ध छेड़ रखा था, वहां पहुंच गये थे।

०००

लेकिन, १७८८ में एक फ्रांसीसी यात्री ने उस प्रदेश की यात्रा कर, यह जानने का प्रयास किया कि 'ग्रौसवेनर' के उस खजाने का, जिसके बारे में यह धारणा थी कि उसे हब्शियों ने लूट लिया है, क्या हुआ? हब्शियों से पूछताछ करने पर उसे पता चला कि हब्शियों के प्रमुख ने एक बड़ा गड्ढा रातोंरात खोदकर सारे ख़जाने को वहां दबा दिया था। इस दुर्घटना के कुछ महीने बाद ही वह चल बसा था, और अब कोई नहीं जानता कि उसने ख़जाने को कहां छिपाया था।

१७९०-९१ में, फ्रांसीसी यात्री को मिली इस सूचना के आधार पर डच लोगों ने उस स्थान का पता लगाने की कोशिश की, जहां उस ख़ज़ाने को छिपाया गया था। मगर, जब उन्हें पक्के तौर पर यह पता चला कि हब्शियों के प्रमुख ने खजाने को एक ऐसे अज्ञात स्थल पर छिपाया था, जहां तक पहुंचने में चार दिन लगते हैं, और सात अनाम और दुर्गम नदियों को पार करना पड़ता है, तो वे चुप बैठ गये। वे इस कारण भी वहां नहीं जा सकते थे, क्योंकि वह क्षेत्र पुर्त्तगाल के अधिकार में था, और वे लोग वहां किसी भी बाहरी आदमी को नहीं आने देते थे।

१८२५ के आसपास द. अफ्रीका के नामी अन्वेषक-इतिहास-लेखक जॉर्ज मैक्थील ने यह अनुमान प्रस्तुत किया कि 'ग्रौसवेनर' का खज़ाना उम्जीमुबु नदी से कुछ किलोमीटर उत्तर की ओर स्थित एक गड्ढे में छिपा है। मगर, यह क्षेत्र विषैले नागों का क्षेत्र था, इसलिए किसी ने वहां जाकर उस गड्ढे को खोजने का प्रयास भी नहीं किया।

धीरे-धीरे, दुनिया और ख़ास तौर पर ब्रिटेन के लोग 'ग्रौसवेनर', उसके खज़ाने और यात्रियों के बारे में भूलने लगे। किंतु, इस दुर्घटना के प्रायः सौ वर्ष बाद, अचानक फिर गुप्त खज़ानों को खोज निकालने के शौक़ीनों का ध्यान 'ग्रौसवेनर' के खज़ाने की ओर आकर्षित हुआ। इससे भी अधिक रोचक बात यह थी कि शरलॉक होम्स नामक कल्पित जासूस के जन्मदाता सर आर्थर कॉनन डायल ने भी इस समस्या को हल करने के प्रयास आरंभ कर दिये।

०००

तब तक ब्रिटेन और द. अफ्रीका के दो

यात्रियों को समुद्रतट के उस भाग में जहां जहाज़ के यात्री व नाविक उतरे थे, एक गड्ढे के अंदर से चांदी व सोने के दर्जनों सिक्के, जिन पर उर्दू भाषा में कुछ लिखा था, मिले।

ऐसे कुछ सिक्के लेकर, ब्रिटेन का यात्री सर आर्थर कॉनन के पास पहुंचा, और इन सिक्कों के साथ-साथ एक रेखा-चित्र उन्हें देकर बोला, 'मुझे यह नक्शा इन सिक्कों के पास पड़ा मिल था। शायद आपके काम आ जाये।'

कानन डायल न वह नक्शा अपने पास रख लिया, और अपने विशिष्ट तरीके से इस मामले की जांच आरंभ कर दी। जांच के अंत में, उन्होंने जो रपट तैयार की, उसमें कहा गया था :

'मैं इस बारे में पूरी तरह आश्वस्त हूं कि उस जहाज़ पर इतिहास-प्रसिद्ध तख्ते-ताऊस भी था। मेरा खयाल है कि नाविकों ने समुद्र तट के समीप किसी अज्ञात स्थल पर, गडढा खोदकर, उसमें तख्ते-ताऊस के साथ-साथ धन-राशि तथा हीरे-जवाहरातों को छिपा दिया था, और जो नक्शा मुझे दिया गया है, वह उसी गड्ढे की ओर संकेत करता है। इस संकेत के आधार पर आगे खोज करने की जरूरत है।'

(कानन डायल की यह पूरी रपट उनकी आत्मकथा—'मैमोरीज एंड एडवैंचर्स' में पढ़ने को मिल सकती है।)

मगर, इस बारे में आगे खोज करने की ज़रूरत किसी ने नहीं समझी—न ब्रिटिश सरकार ने, न अन्य किसी साहसिक व्यक्ति ने। हां, १९०६-७ में 'ग्रौसवेनर रिकवरी सिंडीकेट' ('ग्रौसवेनर' के खज़ाने की खोज करने वाला व्यव संघ) की स्थापना हुई, जिसने ब्रिटेन द. अफ्रीका की सरकारों की अनुमति यह खोज प्रारंभ की।

०००

मगर, यह खोज-अभियान भी अस रहा। और, असफल होते-होते उसने गोताखोर के प्राणों के अलावा, सिंडी के शेयरहोल्डरों के हज़ारों पौंडों की भी ले ली। प्राप्ति सिर्फ़ हुई—सोने के सिक्कों के अलावा, कांच के बने के टूटे-फूटे अंशों और पुराने जूतों की सिंडीकेट ने अपनी रपट में कहा, 'खज़ा उस चट्टान के निकट, जहां जहाज़ दुर्घट ग्रस्त हुआ था, अवश्य छिपा है, म जहाज़ के ध्वस्तप्राय भागों की दरारों बीच, जिन्हें नष्ट करने में समर्थ विधि अ तक वैज्ञानिकों के लिए अनजानी है।'

१९२२ में तख्ते-ताऊस पुनः चर्चा विषय बना, एक नयी सिंडीकेट—'ग्रौसवे बुलियन सिंडीकेट' के सचिव द्वारा लं स्थित 'इंडिया हाउस' को लिखे गये पत्र के माध्यम से, जिसमें कहा गया 'हमारी सिंडीकेट को अपनी खोजों दौरान, दो ऐसे पत्र मिले, जो 'ग्रौसवेन की अंतिम यात्रा से पूर्व, ईस्ट इंडिया कं के दो सेनाधिकारियों ने इंग्लैंड में र वाले अपने दो रिश्तेदारों को लिखे थे इनमें से एक पत्र में पत्रलेखक ने लि था कि 'ग्रौसवेनर द्वारा दो तख्ते-ताऊ

इंग्लैंड भेजे जा रहे हैं।' दूसरे पत्र में सिर्फ़ एक तख्ते-ताऊस का ही ज़िक्र था, लेकिन साथ में यह भी लिखा था कि तख्ते-ताऊस के साथ-साथ, बेशुमार हीरे-जवाहरात, मणि, रत्न आदि भी भेजे जा रहे हैं। इन दोनों पत्रों ने तख्ते-ताऊस के रहस्य को सुलझाने के स्थान पर और अधिक उलझा दिया। इसके अलावा, दूसरे पत्र में हीरे-जवाहरातों का मूल्य ५१७,००० पौंड आँका गया था, जो अधिकृत मूल्यांकन से दुगने के करीब था।

यह मामला तब और भी ज्यादा उलझ गया, जब इंडिया ऑफिस ने एक पत्र द्वारा सिंडीकेट के सदस्यों को सूचित किया कि जहाज़ में कोई क़ीमती सामान नहीं था, सिर्फ़ नाशवान वस्तुएं थीं।

०००

भारत स्थित ईस्ट इंडिया कंपनी के 'ग्रौसवेनर' से संबंधित सब कागज़ात जहाज के श्रीलंका छोड़ने के दो दिन बाद ही, दुर्घटना से पूर्व, एक रहस्यमयी आग में नष्ट हो गये थे, इसलिए कंपनी के अधिकारी पक्के तौर पर जहाज पर लादे गये सामान के बारे में कुछ नहीं कह सकते थे। लंदन स्थित ईस्ट इंडिया कंपनी तथा लायड्स कंपनी के कार्यालयों को भेजे गये सामान संबंधी सब कागज़ात भी जहाज के साथ ही नष्ट हो गये थे।

'ग्रौसवेनर' के उद्धार का बीड़ा उठाने वाली दूसरी सिंडीकेट भी अपने प्रयास में असफल रही, और उसके सब शेयरहोल्डर हाथ मलते ही रह गये। मगर, इस सिंडीकेट के गोताखोरों ने भारतीय महासागर तथा अतलांतिक महासागर के जल की थाह लेकर दुनिया को यह जानकारी अवश्य दी कि इन दोनों महासागरों के गर्भ में हज़ारों साल पुराने तथा नये हज़ारों जहाज, मय अपनी बहुमूल्य संपदा के, ध्वस्तावस्था में पड़े हैं। 'यदि उनका उद्धार किया जाये, तो दुनिया को इतनी बेशुमार दौलत मिल जायेगी कि सारी दुनिया से गरीबी और भुखमरी का अंत हो जायेगा।'

भूगर्भ-वैज्ञानिक सिंडीकेट के इस अनुमान से एक सीमा तक सहमत हैं। उनका यह कहना है कि सागर के गर्भ में छिपी इस लुप्त संपदा को बाहर लाने के लिए, सब देशों को मिलकर एक अति-विशाल, अति-महत्वाकांक्षी तथा अति-खर्चीली योज़ना तैयार करनी पड़ेगी। लेकिन, आज विश्व के अधिकांश देश जिस प्रकार अनेकानेक पारस्परिक और शीत-युद्धों में लिप्त हैं, उस स्थिति को देखते हुए यह आशा नहीं बंधती कि ऐसी योजना, यदि बन भी गयी तो, अमल में आ सकेगी।

०००

जहां तक तख्ते ताऊस का प्रश्न है, 'ग्रौसवेनर'-दुर्घटना ने इन प्रश्नों को उभारा था, मगर ये सभी प्रश्न अभी तक अनुत्तरित हैं :

(१) क्या तेहरान के खज़ाने में रखा तख्ते ताऊस सचमुच नक़ली बनाया गया तख्ते-ताऊस है ?

ग़ज़ल

— हस्तीमल 'हस्ती' —

होश में जब से हूं मैं ये सिलसिला चलता रहा,
मुझ पे दुनिया और इस दुनिया पे मैं हंसता रहा।
फ़िक्र किसको थी कि रिश्ता टूट जाये या निभे
हमने चाहा था निभाना इसलिए निभता रहा

वो ही शिद्दत से उभर कर यादों में आता है अब,
रूबरू होने में जिससे बारहा बचता रहा।
प्यार का दीपक जले, मंजूर कब दुनिया को ये,
जलना था जिसको मगर वो ओट में जलता रहा।

याद हरगिज ना हुआ ये पाठ दुनियादारी का,
रटने को तो रोज यारो, मैं इसे रटता रहा।
तुम सलामत रहना मेरा तो ठिकाना कुछ नहीं
जन्म से ही शाख से गुल अलविदा कहता रहा।

ज्वेलरी इम्पोरियम, नेहरू रोड, सांताक्रुज (पूर्व), बंबई-४०००५५

---

(२) यदि वह नक़ली तख्ते-ताऊस है, तो क्या असली तख्ते-ताऊस वह था, जिसे 'ग्रौसवेनर' जहाज द्वारा इंग्लैंड ले जाया जा रहा था?

(३) और यदि यह सच है कि 'ग्रौसवेनर' एक नहीं, दो तख्ते-ताऊसों को इंग्लैंड ले जा रहा था, तो उनमें से कौन-सा असली था, और कौन-सा नक़ली? या दोनों ही नक़ली थे?

(४) 'ग्रौसवेनर' में लादा गया तख्ते-ताऊस क्या अभी तक जहाज के ध्वंसावशेषों के साथ उस समुद्री चट्टान के निकट समुद्र के गर्भ में छिपा पड़ा है, जि टकराकर जहाज दुर्घटनाग्रस्त हुआ था

(५) या, उसे समुद्रतट के नि कहीं, या वहां से काफ़ी दूरी पर ज़मीन गाड़ दिया गया था, और वह अभी वहीं दबा है!

(६) क्या कभी यह अंतिम रू सिद्ध हो सकेगा कि असली तख्ते-ताऊ कहां है, और यदि वह कहीं छिपा है, उसे बाहर कैसे लाया जा सकता है?

लगता है, ये प्रश्न सदा अनुत्तरित रहेंगे।

☐

मुंशी-साहित्य में राष्ट्रीयता के स्वर

☐ बनवारीलाल पुरोहित

[श्री पुरोहितजी साहित्य के अध्येता ही नहीं, सुप्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी भी हैं। सम्प्रति वे भारतीय विद्या भवन (नागपुर शाखा) के अध्यक्ष और संसद-सदस्य हैं।]

भारत मां के गुणानुवाद करने वाले अनेक सपूत हुए हैं, प्राचीन संस्कृत साहित्य से लेकर आधुनिक हिंदी साहित्य तक, किंतु भारतीय भाषाओं में राष्ट्र की छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी समस्या एवं विशिष्टता को अपने साहित्य में संजोने वाले विरले साहित्यकारों में माला के सुमेरु की तरह उज्ज्वल नाम है—कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी का।

गुजरात की शस्य श्यामला धर्म और राष्ट्र प्रेम से पगी भूमि के भारत मां पर बहुत उपकार हैं। खासकर पराधीन भारत मां की परतंत्रता की बेड़ियों को तोड़ने के लिए मोहनदास करमचंद गांधी तथा भारतीय जनता की पराधीन मानसिकता की कड़ियों को छिन्न-विच्छिन्न करने के लिए सरस्वती के वरद पुत्र कन्हैयालाल मुंशी को पैदा करने के रूप में।

श्री मुंशीजी का जन्म ३० दिसंबर १८८७ को गुजरात के भड़ौंच नामक स्थान में हुआ।

'होनहार बिरवान के होत चीकने पात'—यह कहावत मुंशीजी पर अक्षरशः लागू होती है। साहित्य और क्रांति बहुत कम उम्र से ही उनके दिमाग में हिलोरें मारने लगीं थीं। उन्होंने अपना स्वतंत्र रास्ता तय किया और निरंतर व्यक्तिगत जीवन में भी क्रांतिकारी निर्णय लेते रहे। साहित्य में सबसे सशक्त विधा है डायरी-लेखन यदि वह ईमादारी से लिखी गयी हो। मुंशीजी ने अपनी दस साल की उम्र में सर्वप्रथम डायरी लिखी। वह भी भर्तृहरि के नीति शतक के उद्धरण के साथ और उन्होंने अपनी पूरी ईमानदारी से लिखी हुई उस डायरी को बाद में 'सुदर्शन' के बाल्य-काल और युवावस्था के मनोभावों, संस्कारों के रूप में प्रयुक्त किया।

यदि हम के. एम. मुंशी द्वारा रचित विशालकाय संपूर्ण साहित्य पर नजर डालें तो आश्चर्य के साथ प्रसन्नता होती है कि विविध साहित्यिक विधाओं, जैसे कहानी, उपन्यास, नाटक, जीवनी, इति-

हास, समीक्षा, रिपोर्ताज, विवेचना आदि में सामाजिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, सामग्री के साथ रचित साहित्य में एक बात निश्चित रूप से समान है और वह है राष्ट्रीयता का स्वर । जीवन की युवावस्था में घटित पराधीनता की कुछ अपमानजनक घटनाओं ने मुंशीजी को इतना अधिक क्षुब्ध कर दिया था कि अनेक स्थानों पर उन्होंने लक्षणा और व्यंजना के माध्यम से भारतीय जनमानस को उद्वेलित करने का प्रयास किया । जैसे 'मेरे पूर्वज निर्बल, मेरा देश दरिद्र, मेरा इतिहास डरपोक, मेरा संसार संकुचित, मेरी जाति छोटी-सी, मेरे पिता नौकर' आदि-आदि । किंतु अपने पात्रों के इस तरह के वाक्यों के ठीक विपरीत भारतीय राजनीति में मुंशीजी अपने एक अन्य पात्र 'भगवान परशुराम' की तरह सदैव खड्गहस्त रहे, अर्थात् विरोध का स्वर मुखर किये रहे । उनके सुप्रसिद्ध उपन्यास हैं–'गुजरात के नाथ', 'राजाधिराज', 'प्रतिशोध', 'गुजरात का गौरव', 'जय सोमनाथ', 'भगवान कौटिल्य', 'परदे की आड़ में', 'स्वप्न द्रष्टा', 'अतीत के स्वप्न', 'लोपामुद्रा', 'गौरव का अतीत', 'भग्न पादुका', 'भगवान परशुराम' आदि ।

महर्षि अरविंद घोष का मुंशीजी के जीवन पर गंभीर प्रभाव रहा है । जब अरविंद घोष कलकत्ता आये और राजनीति में सक्रिय होकर उन्होंने 'वंदे मातरम्' का प्रकाशन आरंभ किया तो मुंशीजी इस पत्र के नियमित पाठक थे । उन्हों १५ फरवरी १९०६ की डायरी में लिखा 'अरविंद घोष का उद्घोष सुनो । भाग हमारे हाथ में सौंपा ही जायेगा । तुम्हें स का समाधान मिलेगा ही । जैसे ही स्वतंत्र मिलेगी, हमें अपना लक्ष्य प्राप्त हो जायेगा अपने आप पर विश्वास रखो । हमा मकसद अपने देश का राजकाज चलाना और यही हमारा अंतिम लक्ष्य है।'

इसी प्रकार जब नेहरूजी ने भाषावा प्रांत रचना की, जिसके परिणाम आ हम सब लोगों के सामने हैं, तब भी इ भविष्य द्रष्टा साहित्यकार ने आज क दुखांतिका की कल्पना कर ली थी औ पंडित नेहरू को एक विस्तृत पत्र लिख आगाह किया था कि भाषावार प्रांत रच इस देश में अनेक छोटे-छोटे राज्यों समूह को जन्म देगी । केंद्रीय शासन इ समूहों का सम्मेलन-स्थल भर रह जाये किन्तु उनकी आत्मा, उनकी संस्कृति, उन साहित्य, सभी बंटे हुए रहेंगे । प्रशासनि दृष्टि से भी यदि हर प्रांत अपनी भा का प्रयोग करेगा तो केंद्रीय सरकार कि भाषा में उनसे संपर्क कायम रख सकेगी।

सारा भारत एक रहे, यह उनकी हार्दि आकांक्षा थी । गुजरात की मिट्टी औ संस्कारों से जुड़े होने के कारण स्वभाव उनके साहित्य में गुजरात को अधिक स्था मिला है, किंतु उनका राष्ट्रीय भाव उन उपन्यास 'गुजरात के नाथ' के पात्र कीर्ति देव के शब्दों में स्पष्ट होता है–'मैं केव

अवंती में ही नहीं हूं । सारे आर्यावर्त्त में फिरा हूं । अनेक देशों का पर्यटन करते हुए मुझे स्पष्ट भास हुआ है कि यदि हम सब केवल एक दूसरे से ही लड़ते रहेंगे तो हमारे राज्य छिन जायेंगे, हमारा धर्म नष्ट हो जायेगा, हम लुट जायेंगे और पृथ्वी पर से हमारा नामो-निशान मिट जायेगा ।'

'हां, मैं यही चाहता हूं । जब अवंती और पाटण, कन्नौज, चित्तौड़ और सपाहलक्ष, ये सब एकत्र होकर मदुदेश (कश्मीर) की सहायता करेंगे तभी आर्यावर्त्त सही सलामत रह सकेगा ।'

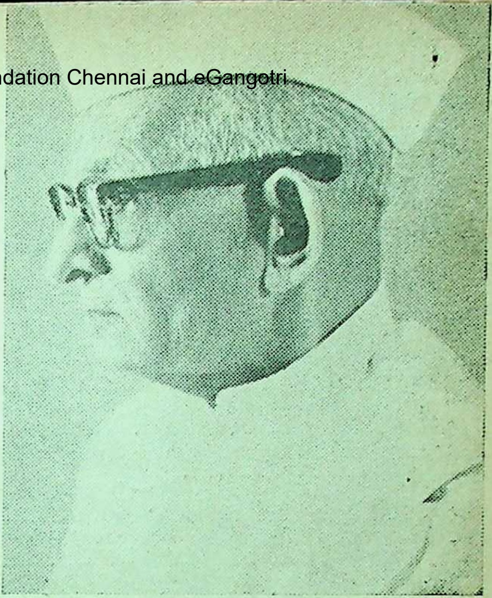

श्री क. मा. मुंशी

मुंशीजी का एक रचनात्मक रूप हमारे सामने 'भारतीय विद्या भवन' के रूप में विद्यमान है । अपने बरसों के स्वप्न 'भारत की प्राचीन सभ्यता और संस्कृति की सुरक्षा का प्रबंध सुनिश्चित होना चाहिये' को उन्होंने साकार किया 'भारतीय विद्या भवन' की सात नवंबर, १९३८ को स्थापना के साथ । भवन की रूपरेखा मुंशीजी के दर्शन और भावना का संदेश है, समकालीन विश्व के लिए । मुंशीजी की धारणा थी कि भारत का स्वर्णिम अतीत नये ज्ञान और नयी आकांक्षा के साथ भारतीयों के सम्मुख प्रस्तुत होना चाहिये । यदि हम इसे कर सकें तो ही हमारी संस्कृति पुनर्जीवित हो सकेगी । इस प्रकार हम देखते हैं कि श्री मुंशीजी के साहित्य का कण-कण राष्ट्रीय स्वर लहरियों से ओतप्रोत है । उनकी चाह, उनकी राह संपूर्ण भारत को एक अविच्छिन्न, स्वावलंबी और अतीत के गौरव से जुड़े राष्ट्र की थी, जिसे पूरी ईमानदारी के साथ अपने कृतित्व और व्यक्तित्व में, अपनी वाणी और कर्म में, अपने सोच और लेखन में बिना किसी हिचक के, और बिना किसी पूर्वाग्रह के उन्होंने प्रतिपादित किया । उनके द्वारा रोपा गया भारतीय विद्या भवन का नन्हा-सा पौधा आज विशाल वट वृक्ष के रूप में भारत के कोने-कोने में लहरा रहा है । इसे सींचना उनकी राष्ट्रीय विचारधारा की छांव में बैठना, उनके साहित्य के स्वर को मुखरित करना ही हर जागरूक भारतवासी का कर्तव्य होना चाहिये, यही उस सच्चे राष्ट्र-भक्त एवं महान साहित्यकार के लिए सच्ची श्रद्धांजलि होगी ।

—पुरोहित हाउस, वेस्ट हाईकोर्ट रोड, नागपुर

रिटायर होने का सुख

☐ उमा श

ठा. ईश्वरी सिंह तख्त पर बहुत देर से लेटे-लेटे कुछ सुन से रहे थे। इतना गहरा ध्यान-मग्न देख पत्नी शारदा ने टोका–'क्या सोच रहे हो ?'

'कुछ नहीं', वे चौंक गये ! 'शारदा आज १५ अगस्त है, तुम सुन रही हो! पुलिस लाइन से आती हुई यह आवाजें, हम भी जाते थे परेड में कलफ लगी वर्दी पहनकर। आज पुलिस लाइन में परेड हो रही होगी। कितना जोश भर जाता था वर्दी पहनकर। अपने आप सीधी कमर हो जाती, तमककर चाल चलते।'

'अब तो तुम्हें रिटायर्ड हुए कई साल हो गये। अब तो ये आवाजें सुनना बंद करो... तुम्हें क्या इस आराम से सुख नहीं मिलता ?'

'तुम इसे आराम कहती हो! रिटायर होना आराम है ? यह विश्राम है पूर्ण विश्राम, आराम नहीं। तुम नहीं जानतीं, रिटायर होकर आदमी कितनी जल्दी झड़ने लगता है तन से, मन से और धन से, मानो सारा सत निकल गया हो।'

'रिटायरमेंट देकर सरकार एक कर्मठ व्यक्तित्व को नाकारा, अयोग्य समझने लगती है–कितनी त्रासदी से गुजरता उसका मन ! तुम क्या जानो, तुम तो ना हो, जो घर के दायित्वों से कभी रिटा ही नहीं होती। कम-से-कम तुम्हें काम व्यक्तित्व से अलग होकर जीने का सुख नहीं सालता।'

ठा. ईश्वरी सिंह पुलिस में डिप्टी ए पी. थे–एक सच्चे, ईमानदार। अपने वि में अपने इस विलक्षण व्यक्तित्व के का काफी सम्मानित थे। कितने ही ऐसे सुलझाये, जो उनके विभाग के लिए गौ की बात थी। सरकार की तरफ से वे बार पुरस्कृत व सम्मानित हुए। कर्त का महत्व वे अच्छी तरह से जानते दिन-पर-दिन गिरती पुलिस वालों निष्क्रियता, कर्तव्य विमुखता को देख वे दुःखी होते। भ्रष्टाचार की जड़ें पु विभाग में जिस तेजी से गहराती जा थीं, उसके संदर्भ में वे नये पुलिस कर्मि को उपदेश देते, उन्हें कर्तव्य के प्रति स बने रहने को कहते।

ठा. ईश्वरी सिंह ने रिटायर होने कुछ महीने तो आराम से काटे, मन म उठते, देर तक अखबार पढ़ते रहते,

करते, जूतों पर पालिश करते, तो शारदा हंस पड़ती, 'कहां जाना है, जो रोज-रोज जूते चमकाने लगते हो, शेव करते हो ?'

'क्या करूं, शारदा, ठीक दस बजते ही शरीर स्वयं तैयार होकर कहीं बाहर चलने को करने लगता है। वैसे तो पुलिस-वालों को कभी भी काम से जाना पड़ जाता, इसलिए हमेशा एलर्ट बने रहते थे। अब वह दिन याद आते हैं, वक्त काटे नहीं कटता . . .' वे बोलते रहते। शारदा बेमन से उनके केस को सुनती रहती।

बस के पीछे भागते लोगों को देख झुंझलाते, 'समय से पहले तैयार हो जाओ, तो यह भागदौड़ तो नहीं करनी पड़े। नौकरी पर देर से पहुंचो, अफसर की डांट सुनो, सारा दिन तनाव में बिताओगे तो भला काम क्या करोगे।' वह अपने बेटे को लेट-लतीफी के कारण डांट चुके थे।

बेटा नयी पीढ़ी का था, 'पिताजी, आप तो अपने वक्त की बात करते हैं। क्या जरूरत है अधिक काम करने की। ज्यादा काम करने के कोई अधिक पैसे तो नहीं मिलेंगे, फिर क्यों सिर खपायें ? आज जल्दी दफ्तर जाने वालों को लोग चपरासी बोलते हैं, क्योंकि अफसर तो लेट ही पहुंचते हैं।' वक्त के पाबंद व्यक्ति के बेटे को आलसी देखकर दुखी होकर रह जाते . . . .

वक्त का तकाजा था। ज्यों-ज्यों रिटायर होने की तारीख निकट आती जा रही थी, घर के सब लोग खुशी मनाने लगे थे, पोते-पोती को बाबा के साथ खेलने का आनंद मिलेगा, बहू का किचन गार्डन हरा-भरा हो जायेगा, क्योंकि सब जानते थे ठा. ईश्वरी सिंह को बागवानी का शौक है। शारदा प्रसन्न थी कि 'चलो भला हो सरकार का, जो उसके पति को, साथ रहने-बोलने का वक्त तो दिया।' शारदा ने तो पहले ही कह दिया था, 'सारी उम्र तुम्हारी प्रतीक्षा की, तुम्हारे साथ लंच-डिनर के लिए, आज तक कोई भी ऐसा दिन नहीं आया, जब हम दोनों ने पूरे दिन साथ रहकर भोजन किया हो। अब हम दोनों एक साथ पूरा दिन बिताया करेंगे।'

पहले दिन शारदा को रोज की जल्दबाजी से राहत मिली, 'कितना अच्छा लग रहा है निश्चित होकर खाट पर पड़े-पड़े सुबह का आनंद लेना। तुम्हें बरसों बाद कितना सकून मिला होगा।'

पर ठा. ईश्वरी सिंह जैसे कर्मठ व्यक्ति को आराम कहां मिलता है ? हाथ-पैर-शरीर कुछ करते रहने को मचलते। कुछ काम नहीं दिखता तो वे पुरानी वर्दी पहन पुलिस लाइन की तरफ निकल जाते। परेड ग्राउंड की तरफ देखते रहते। मन की पीड़ा, बेदना की लहर, चेहरे पर दिख जाती। फिर वे सरकार को कोसते उसकी नीति को लताड़ते, जो स्वस्थ हैं उन्हें इतनी जल्दी रिटायर कर नपुंसक घोषित क्यों कर देती है ? वे अपने स्वस्थ शरीर से अभी और कई साल जनता की सेवा कर सकते थे। उम्र को कार्य क्षमता का आधार बनाना सरकार की गलत

नीति है। उनके समय में विभाग में ऐसे भी अनेक व्यक्ति थे, जो उम्र से पहले बूढ़े हो गये थे। बीमार व कमजोर शरीर से वे विभाग के लिए अनुपयुक्त होते, फिर भी कार्यभार संभाले रहते। यह देख उन्हें ताज्जुब होता।

रिटायर होना डाल से बिछुड़ने के दु:ख से कम नहीं। झड़े हुए पत्ते सी अनुभूतियों को वे अपने भीतर भी महसूस करने लगे थे। वे जब किसी के लिए सुनते कि वह रिटायर होने वाला है, यकायक वे दुख में डूब जाते, जब कि रिटायर होने वाले ण्यक्ति के चेहरे पर शांति का भाव होता। वे हंसकर कहते, यह सुख-शांति तुम्हें थोड़े दिन राहत देगी। फिर स्वयं महसूसोगे कि एक आदमी को रिटायर होने का क्या सुख मिलता है। पहाड़-सी जिंदगी को काटना पड़ता है। कर्मठ व्यक्ति के लिए रिटायरमेंट देना सरकार की तरफ से सबसे बड़ी सजा है, अत्याचार है, जो जीते जी अधमरा घोषित कर देता है, शेष जीवन उसका पशु जैसा बन जाता है, तब ही तो सरकारी नौकरी से निवृत्त होते ही आदमी छड़ी थाम लेता है। वह धीमी मौत जीने लगता है। अपने समाज से जहां उसने ३०-३५ साल काटे हों, अलग होकर सोचता है कि अपना शेष जीवन घर के लिए समर्पित करेगा, पर यह उसका मात्र भ्रम निकलता है। वह घर से भी धीरे-धीरे काट दिया जाता है, तब उसे सहायता का बोध होता है। उसकी अनुभूतियों की निर्मम हत्या होने लगती है। धीरे- एक दिन वह मौत को स्वयं पुकारने ल हैं। 'हे राम, मुझे उठा ले। अब तो मौत आ जाय, बहुत जी लिया,' और न जाने कितना दर्द सीने में छिपाये थे, ठा. ईश्वरी सिंह।

'एक सफल कामगार व्यक्ति को जल्दी मारना हो तो उसे रिटायर उसके हाथ का सब कुछ छीन ले। वह धीरे एक दिन स्वयं मरने लगेगा,' ईश्वरी सिंह की ऐसी हारी थकी-सी को सुन शारदा परेशान-सी हो जाती उसे खुश रखने के लिए वह हर कोशिश किया करती।

वह कहती, 'इतनी निराशा क्यों सूसते हो? इस जिंदगी को भोगने अपना अलग ही सुख है। निश्चितता मन को कितनी शांति मिलती, है जरा तो सोचो। हर समय की भाग-दौड़, हाय से राहत कितना सकून देती है- देखो बचपन से ५ साल की उम्र में घर में मां ने बैठाया और आज तक से उठकर बाहर नहीं आ सकी। मन करता है कि जब मैं भी इस घर के काम से गृहस्थी की चिंताओं मुक्त हूं, तुम्हारी तरह देर तक सुख नीद सोऊं, पर अपना कहां है ऐसा जो रिटायर हो...'

शारदा ठीक कहती थी। ज़िंदगी एक ही तरह का जीवन जीते हुए नहीं थकता। आंख बांधे कोल्हू के बैल

तरह उसी धुरी पर टहलते मीलों का सफर तय करके भी वहीं-का-वहीं। कोई तब्दीली न हो तो जीवन पहाड़ बन जाता है।

जिसे ठा. ईश्वरी सिंह दुःख मानते, उसे शारदा सुख मानती थी। वह रिटायर होने का सुख भोगना चाहती थी, दिन भर की वह एक-सी चिकचिक, जिसे सारी उम्र सुनती-कहती चली आयी थी, उससे वह अब थक गयी थी, उन आवाजों को सुनते-सुनते उसका थका मन-शरीर अब विश्राम चाहता था।

पर ठा. ईश्वरी सिंह उस आराम के विरोधी थे। उसके सुख की चिंता घर में किसी को नहीं थी—न बेटे को, न बहू को, और न स्वयं उसके पति को। वह कहती, 'उम्र के साथ-साथ कार्य करने की क्षमता घटती है—अब मुझसे इतना काम नहीं होता। थक जाता है सारा शरीर। दर्द करने लगा है तमाम शरीर।'

'शरीर में दर्द काम न करने से होता है। काम करते रहने से तो शरीर के जोड़ व नसें खुलती हैं...' घरवाले सोचते।

शारदा दिन-भर के काम के बाद रात को शरीर की थकान के कारण कराहती। अब ठाकुर समझे, तो शायद यही उम्र होती है, आराम की। एक रात शारदा की कराहट से उन्हें लगा, वाकई शारदा को अब आराम का सुख चाहिये। इसका शरीर घर के काम-काज से रिटायर होने का सुख भोगना चाहता है, पर कैसे हो सकती है यह निवृत्ति? कौन देगा इसे रिटायरमेंट!

बेटे-बहू काम करते हैं, वे नौकरी पर जायें या बच्चों को, घर को संभालें। यह काम तो शारदा का है। सारी उम्र उसे कौन देना चाहेगा यह सुख? अपना दुख बढ़ाकर दूसरे को सुख देने की प्रवृत्ति अब कहां शेष रही है?

—२००, कृष्णानगर
बुलन्दशहर, उ. प्र.

□

(पृष्ठ १०६ का शेषांश)

परेशान किये रही। हर वक्त उन्हें पैसों की चिंता रहती थी। भारत की प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी फिराक की मदद हर तरह से किया करती थीं। उनकी आंख में मोतियाबिंद के आपरेशन का सारा जिम्मा श्रीमती गांधी ने उठा रखा था। मेडिकल इंस्टीट्यूट आफ इंडिया में उनकी आंख का आपरेशन कराया गया। आपरेशन सफल हो गया था, लेकिन प्रकृति को अपने प्रिय कवि फिराक की आवश्यकता महसूस हुई और ३ मार्च, १९८२ को अपने प्रिय मित्र श्री राजेंद्र कुमार गर्ग के यहां उनके दिल्ली निवास स्थान पर दोपहर के एक बजे हरे-भरे फूलों से लदे हुए लान में फिराक साहब कल्पना लोक में सदैव-सदैव के लिए अंतर्धान हो गये।

—४१७/२३०, निवाज़ गंज,
लखनऊ-२२६००३, उ. प्र.

□

ऐतिहासिक होली

तीन शताब्दी पूर्व की काबुल की होली

□ अनिता

शायद आप यकायक भरोसा न करें, लेकिन यह हकीकत है कि तीन शताब्दियों पहले काबुल (अफगानिस्तान) में होली मनायी जाती थी।

तीन सौ बरस पहले काबुल में होली मनाने का प्रामाणिक प्रमाण एक फ्रेंच यात्री मोसियो डी. थेवेनोर की एक पुस्तक, जो १६६४ ई. में फ्रेंच भाषा में छपी थी, में मिलता है। बाद में, डच और जर्मन भाषाओं में भी यह पुस्तक शाया हुई। १६८४ ई. में लंदन में इस किताब का एक हिस्सा अंग्रेजी में छपा। १९४८ में इसी किताब को भारत सरकार ने भी छापा।

उक्त फ्रेंच यात्री थेवेनोर के जमाने में अफगानिस्तान का नाम वाला कोई मुल्क नहीं था। इसे काबुलिस्तान के नाम से जाना जाता था। उसने अपनी किताब में लिखा कि काबुलिस्तान के पूर्व में कश्मीर और पश्चिम में जाबुलस्तोन यानी गजनी है। काबुलिस्तान का प्रमुख शहर काबुल है। काबुल में दो बड़े-बड़े किले हैं, जहां शासक अपना दरबार लगाते हैं।

थेवेनोर लिखता है कि काबुल में रहने वाले अधिकांश हिंदू हैं। यह लोग अपने संवत् का हिसाब चांद से लगाते हैं। हिंदूबहुल देश होने के कारण काबुल में
तादाद में मंदिर हैं। ये लोग बड़ी
से होली मनाते हैं। यह त्यौहार दो
सीय होता है। इन दिनों मंदिर श्रद्धालु
से भरे होते हैं। ये लोग यहां आकर
पाठ में वक्त गुजारते हैं।

फ्रेंच यात्री आगे लिखता है कि
पर काबुल के हिंदू टोलियों की
जुलूस निकालते हैं और नाचते-गाते
नगर के बाजार से गुजरते हैं। इस
में सभी लोग लाल रंग के वस्त्र पहने
होते हैं और रंग फेंकते हुए अपने
और परिचितों के घर जाते हैं और
रंग लगाकर गले मिलते हैं।

होली का विस्तार से जिक्र करते
फ्रेंच यात्री ने लिखा है कि एक ही
लोग मिलकर बैठते, नाचते-गाते
साथ भोजन करते हैं। रात को
और गलियों में होली जलाते हैं। यह
हर बरस फरवरी के महीने में पूर्णिमा
दिन मनाया जाता है। इसके अंत में
राक्षस का विनाश किया जाता है।
छोटा बच्चा इस राक्षस की मूर्ति को
मारता है। मूर्ति को तीर मारकर यह
जाता है कि भगवान कृष्ण संसार में

लूट लिया मेरा अनुराग !

अलकों पर अलि-निकर लुट गया, भ्रू पर इंद्रधनुष अभिराम ।
नील नयन पर वारिद वारे, अरुण अधर पर अर्क ललाम ।।

आनन पर अरविंद लुट गया, न्योछावर हो गया मयंक ।
मुसकानों पर कली झुक गयी, चपला की लुट गयी उमंग ।।

पदगति पर बलिदान हो गये, अवलोकन कर भव्य मराल ।
बल्लरियां कर पर वलिहारीं, यौवन पर चू पड़े रसाल ।।

युग तारक जिस ओर मुड़ गये, उसी ओर लुट गया दिगंत ।
नखद्युति पर तारक सकुचाये, रूपरंग पर लुटा वसंत ।।

चितवन पर चित हुआ निछावर, वाणी पर वीणा का राग ।
मधुरिम प्रणय दिखाकर मुझको, लूट लिया मेरा अनुराग ।।

—सतीश आर्य,

भिटौरा-मनकापुर, गोंडा, उ. प्र.

राक्षस का संहार करने के वास्ते अवतार लेता है । यह राक्षस इस डर से कि यह वालक उसे मार देगा, उस पर हमला करता है । मगर वह बालक तीर से उस पर ऐसा वार करता है कि राक्षस जमीन पर गिरकर दम तोड़ देता है ।

फ्रेंच यात्री की धारणा थी कि यह नाटक करने वाले लोग ईसाई थे । लेकिन यह उसकी गलतफहमी थी। ऐसी ही गलतफहमी एक सौ वर्ष बाद एक मशहूर ईसाई पादरी को भी हुई थी । जब उसने कृष्ण-भक्तों को मंदिर में सात बार परिक्रमा करते हुए देखा तो उसने अपनी डायरी में लिखा कि 'कृष्ण' वास्तव में 'क्राइस्ट' शब्द का अपभ्रंश है ।

फ्रेंच यात्री ने लिखा है कि हिंदू स्थान-स्थान पर कुएं खोदना एक अच्छा काम मानते हैं और प्रायः सड़कों के किनारों पर मुसाफिरों के वास्ते सरायें बनवाते हैं ।

फ्रेंच यात्री ने काबुल के इस त्यौहार को रंगों से भरा त्यौहार बताया, जो बहुत दिलचस्प और मन को बहलाने वाला होता था । उसकी नज़रों में यह एक अनूठा और शोक तथा पीड़ा भुला देने वाला त्यौहार था । **—द्वारा : श्री कैलाश जैन एडवोकेट, मनोज मार्ग, भवानी मंडी, राजस्थान**

□

अकल्पनीय दुनिया

कॉमिक्स के पात्रों का संसार

ऐसा हो ही नहीं सकता कि आप 'कॉमिक्स' के शौक़ीन न हों।

यदि आप 'ना' कहेंगे, तो इसे अकल्पनीय ही माना जायेगा।

और, जब आप 'कॉमिक्स' के शौक़ीन हैं, तो गालिबन 'सुपरमैन', 'स्पाइडरमैन', 'मैनड्रेक', 'फैन्टम', 'मिकी माउस', 'डेनिस द मीनेस', 'रिचीरिच' जैसे दिलचस्प कॉमिक्स के पात्रों से आपका परिचय होगा ही। आप इन पात्रों को 'कॉमिक्स' के पृष्ठों पर ही देखते हैं। मगर, आपका परिचय उस निराली और अकल्पनीय दुनिया से शायद ही हो, जिसमें ये पात्र और उनके सृजक कलाकार रहते हैं।

आइये, हमारे साथ इस दुनिया की सैर कीजिये। तभी, आपको विश्वास हो सकेगा कि यह दुनिया कितनी अकल्पनीय है!

तैयार हैं न! तो, फिर आइये, चलें।

'कॉमिक्स' के जन्मदाता थे—एम. जी. गेन्स, जिन्होंने 'फनीज़ ऑन परेड', 'डॉन ड्रेक' और 'डॉक्टर ऑकल्ट' नामक 'स्ट्रिप्स' (चित्र-पट्टियों) की शुरुआत के साथ 'कॉमिक्स' युग की शुरूआत भी की।

'कॉमिक्स' के माध्यम से बच्चों को उद्देश्यपूर्ण मनोरंजन प्रदान करने की शुरुआत मार्कस मॉरिस नाम के पादरी लोकप्रिय 'ईगल कॉमिक्स' के ज़रिये थी। और, सबसे पहली रंगीन 'कॉ स्ट्रिप' थी—'द यैलो किड'। आज के अ कांश 'कॉमिक्स' रंगीन होते हैं।

'कॉमिक्स' की शैली पर बने कार्टूनों' के जन्मदाता थे—ऑस्बर्ट स्टर। मगर, 'जेबी कार्टून' कॉमिक्स भाँति लोकप्रिय नहीं हुए।

जानकार लोगों के अनुसार, सर्वा लोकप्रिय 'कॉमिक्स' हैं—'टिनटिन', ' रिक्स', 'फैन्टम', 'चार्ली ब्राउन', 'सुपर 'स्पाइडरमैन', 'डेनिस द मीनेस', ' माउस', 'डोनाल्ड डक', 'ब्लॉंडी', 'मैनड्रे मैजीशियन', 'ब्रिंगिंग अप फादर', आ ये मूल अंग्रेजी के अलावा, दर्जनों भाषाओं में भी प्रकाशित होते हैं करोड़ों पाठकों द्वारा सराहे जाते हैं। कॉमिक्स का वितरण बड़े-बड़े सिंडी द्वारा किया जाता है, जिनमें सबसे वि हैं—'किंग फीचर्स सिंडीकेट।'

१९५४ में 'कॉमिक्स' में हिंसा सैक्स के बढ़ते हुए प्रवाह को रोकने लिये 'कॉमिक्स कोड ऑफ अर्था नामक एक संस्था ने जन्म लिया

कॉमिक्स सर सेंसर की भूमिका निभाती है। वर्ष के सर्वश्रेष्ठ 'कॉमिक्स' को रूबेन पुरस्कार दिया जाता है।

ये तो हुए, 'कॉमिक्स' की दुनिया के कुछ नीरस और शुष्क आंकड़े। अब सुनिये, 'कॉमिक्स' की दुनिया की कुछ अजीबोगरीब सच्ची घटनाएं।

पीछे हमने 'ब्रिंगिंग अप फादर' नामक लोकप्रिय कॉमिक का ज़िक्र किया। इसके सृजक हैं–प्रख्यात चित्रकार फ्रैंक जॉन्सन, जो इस 'कॉमिक स्ट्रिप' का निर्माण पिछले २५ वर्षों से अधिक समय से करते आ रहे हैं। इतनी लंबी अवधि में मुख्य पात्र 'फादर' का अनगिनत रूपों में चित्रण करते-करते वे शारीरिक दृष्टि से अपनी पुरानी पहचान खोकर, सूरत-शक्ल से दूसरे 'फादर' ही बन गये हैं, अर्थात् सृजन ने सृजक को अपना प्रतिरूप बना दिया है।

एक अन्य 'कॉमिक स्ट्रिप' 'डेनिस द मीनेस' के सृजक फ्रैंक कैशम पिछले ३५ वर्षों से ५-वर्षीय शरारती लड़के–डेनिस की, जो उनके कथनानुसार, 'एक भला लड़का है, मगर शरारत करने से बाज़ नहीं आता, इस अर्थ में वह हम सबके समान ही है,' अपने पड़ोसी मिस्टर विल्सन, मैत्रिणी मार्गरेट, और मां-बाप के साथ हुई झड़पों का रोचक चित्रण करते आ रहे हैं। उन्होंने इस पात्र का नाम अपने ५-वर्षीय पुत्र डेनिस के नाम पर रखा था। पहले, उनकी कॉमिक-स्ट्रिप का नाम 'कुकी जार' था, लेकिन जब उनकी पहली पत्नी एलिस ने एक दिन डेनिस की शरारतों से परेशान होकर उनसे कहा, 'देखो जी, तुम्हारा बेटा डेनिस तो 'मीनेस' (मुसीबत) है,' तो उन्होंने स्ट्रिप का नाम बदल कर 'डेनिस द मीनेस' कर दिया, जो आज तक क़ायम है। विश्व भर की अनेक भाषाओं के १२०० से अधिक पत्र-पत्रिकाओं के १००,०००,००० से अधिक पाठक प्रति दिन डेनिस की शरारतों का मज़ा लेते हैं।

एक अन्य लोकप्रिय 'कॉमिक स्ट्रिप' है–'सुपरमैन' जो प्रच्छन्न रूप से 'डेली प्लैनेट' नामक समाचार-पत्र में एक संवाददाता है, और मैट्रोपोलिस नामक नगर में रहता है। यह अति-मानव ज़रूरतमंद लोगों की निःशुल्क सहायता करने के लिये अपने अति-मानवीय करतब दिखाने के लिये सदा तैयार रहता है। 'बैटमैन' और 'स्पाइडरमैन' नामक 'कॉमिक' पत्रों की कल्पना 'सुपरमैन' के आधार पर ही की गयी है।

'सुपरमैन' के कारनामों पर कई फ़िल्में भी बन चुकी हैं, जो बच्चों के अलावा वयस्कों में भी अत्यंत लोकप्रिय हुईं। हाल ही में इन फिल्मों में 'सुपरमैन' का अभिनय करने वाले अभिनेता क्रायस्टोफर रीव्स के साथ एक अजीब घटना घटी। एक चोर उनकी साइकिल चोरी करके भागा। रीव्स ने तेज़ी से भागकर उसे पकड़ लिया। चोर 'सुपरमैन बचाओ' की गुहार करने लगा। रीव्स ने कहा, 'मैं ही अपराधियों को पकड़ने वाला सुपरमैन हूं। चलो,

पुलिस स्टेशन !'

समय के साथ साथ ४०-वर्षीय 'सुपरमैन' के स्वभाव में भी बदलाव आया है। अब उसे उसकी 'कॉमिक्स' में पहले की भांति तेज़ और चुस्त नहीं दिखाया जाता। वह अब पहले से ज्यादा शांत और सज्जन भी हो गया है।

'टिनटिन' और 'एस्टैरिक्स' कॉमिक्स की गणना विश्व के चोटी के 'कॉमिक्स' में होती है, और दर्जनों अनुवादों के माध्यम से दुनिया भर के करोड़ों 'टिनटिन' प्रेमी उसके निराले पात्रों—स्नोई, कैलकुलस, कैप्टन हैडोक, आदि से भली-भांति परिचित हैं, और अब यह जान गये हैं कि वे अमुक परिस्थितियों में किस भांति व्यवहार करेंगे। वे यह भी जानते हैं कि टिनटिन जब भारत आता है, तो गायपानामा के महाराजा के पास ही वह ठहरता है।

'एस्टैरिक्स' कॉमिक्स के पात्र 'एस्टैरिक्स' और 'ओबिलिक्स' और 'कैकोफोनिक्स' भी विश्व के करोड़ों लोगों के प्रियपात्र हैं, ख़ास तौर पर 'वायब्लस्टैटिक्स' जो हमेशा कहता रहता है, 'आने वाला कल कभी नहीं आता।'

बच्चों के प्रिय 'कॉमिक्स' हैं—'मिकी माउस', 'डोनाल्ड डक', 'रिची रिच', 'वुडी वुडपैकर', 'पीनट्स', 'टाइगर' और 'चार्ली ब्राउन' आदि। इनमें 'चार्ली ब्राउन' नामक 'कॉमिक्स' न सिर्फ़ बच्चों की सर्वाधिक प्रिय 'कॉमिक्स' है, वरन् विश्व भर के वयस्क भी उसे समान रूप से प्यार करते हैं।

भावना

—रामेश्वर दयाल दुबे—

यह नहीं है, भावना को
मान मैं देता नहीं हूं।
प्रेरणा की शक्ति वह
समतुल्य मैं पाता नहीं हूं।
किंतु जब तक वह अकेली
मौन क्रीड़ा ही रही है।
कर्म में मुखरित नहीं तो
व्यर्थ व्रीड़ा ही सही है॥

भावना हो जाय मुखरित
कथन को मिल जाय करनी
स्वप्न सब साकार होंगे
कृति बनेगी मोद भरनी॥

भावना है जननि, उससे
कर्म का शिशु जन्म ले जब।
साधना की गोद में नित
वह पले, आगे बढ़े जब॥

फिर न क्यों जीवन विपिन में
फागुनी मधुमास डोले।
फिर न क्यों यश काकली भी
मोद भर दिन रात बोले?

भावना तो मात्र कलिका
खिल उठे यदि वह चिटककर।
सत्य मानो, सिद्धि सौरभ
से जगत यह जायगा भर॥

—चित्रकूट, निराला नगर, लखनऊ, उ.

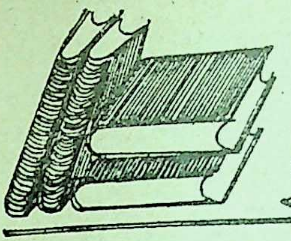

ग्रंथलोक

*** कालाकांकर और भारत का स्वतंत्रता संघर्ष * लेखक : पंचदेव सिंह; प्रकाशक : राजा अवधेश सिंह मेमोरियल एजूकेशन सोसायटी, कालाकांकर, प्रतापगढ़, उ. प्र., मूल्य : ५० रुपये ।**

कालाकांकर का राजवंश अपनी राष्ट्रीयता और साहित्य-सेवा के लिए विख्यात है। उसमें जन्मे सभी राजपुरुष अपनी राष्ट्र-भक्ति, जनसेवा तथा साहित्य की आराधना के लिए बहुश्रुत हैं। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी उनकी गरिमा सर्वोपरि है।

आजादी के लिए हो रहे संघर्ष के दिनों में महान विभूतियों ने कालाकांकर को पावन किया है। महामना मदनमोहन मालवीय, राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, पं. मोतीलाल नेहरू, पं. जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल, श्री रफी अहमद किदवई, पं. गोविंदवल्लभ पंत, सर तेजबहादुर सप्रू तथा बाबा रामचंद्र आदि ने इसकी मिट्टी से प्रेरणा ही नहीं ली, वरन् वहां बैठकर आजादी की नयी रणनीति भी निश्चित की है और वहां के राजवंश ने उन सबका हृदय से स्वागत ही नहीं किया, स्वयं को भी स्वतंत्रता की लड़ाई में होम दिया है।

आजादी की लड़ाई के प्रचार के लिए यहीं से हिंदी तथा अंग्रेजी में राजा रामपाल सिंह ने दैनिक 'हिन्दोस्थान' निकाला था। फिर तो 'सम्राट,' 'वानर,' 'कुमार' पत्रों ने यहीं से निकलकर जो उपयोगी भूमिका अदा की, वह सर्वविदित है।

राष्ट्रीय साहित्यकारों में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, श्री रामनरेश त्रिपाठी, श्री सोहनलाल द्विवेदी, श्री शांतिप्रिय द्विवेदी आदि ने अपनी सेवाएं देकर यहां की साहित्य-साधना और पत्रकारिता को खूब पुष्पित-पल्लवित किया है।

ऐसे राष्ट्रीय महत्व के राजवंश का इतिहास लिखना सामान्य काम नहीं है। लेखक ने जिस लगन से तत्संबंधी विवरण, चित्र और तिथियां जुटायी हैं, वे ही उसकी श्रम-साधना की गवाह हैं। एक स्थान पर इतनी बहुमूल्य सामग्री को इकट्ठी कर देना ऐतिहासिक महत्व रखता है। यहां से निकलनेवाले पत्रों, राजवंश के राजपुत्रों के चित्र, उनसे संबंधित पूरे विवरण व्यवस्थित ढंग से देकर लेखक ने पुस्तक का ऐतिहासिक

महत्व बढ़ा दिया है।

केवल शिकायत है तो इतनी ही कि ऐसी उपयोगी और महत्वपूर्ण पुस्तक की छपाई-सफाई पर भी यदि ध्यान दिया जाता, तो 'सोने में सुगंध' वाली बात चरितार्थ हो जाती।

हम लेखक पंचदेव सिंह से यह आशा करते हैं कि अगले संस्करण में वे इस कमी को दूर करके पुस्तक को पठनीय बना देने का प्रयास अवश्य करें। क्योंकि उनकी यह पुस्तक इतिहास, साहित्य और पत्रकारिता के विद्यार्थियों के लिए भी बहुत उपयोगी है। **–गिरिजाशंकर त्रिवेदी**

०००

***भीड़ में बांसुरी *कवि: विनोद श्रीवास्तव; प्रकाशक, पराग प्रकाशन, दिल्ली; मूल्य : ३० रुपये।**

'भीड़ में बाँसुरी' युवा गीतकार विनोद श्रीवास्तव की प्रथम प्रकाशित काव्य कृति है।

इसमें कवि ने गीत और तत्संबंधी चर्चाओं से परे रहकर अनुभूति के धरातल पर पाठक से सामरस्य स्थापित किया है। ये गीत निश्चित रूप से गीत और नवगीत की आधुनिक सीमाओं से परे हैं। विनोद के गीतों में एक ऐसी लय है और स्वरों का ऐसा प्रवाह है कि ये अत्याधुनिक होते हुए भी लोक-चेतना का संस्पर्श करने में पूर्णतया सक्षम हैं।

वस्तुतः गीत का उद्देश्य ही अनुभूति को सजग करना, संचेष्ट बनाना है। गीत वही है, जो अपनी लय और ताल न आधुनिकता गीत को सुहाती नहीं, का अपना सुनहला संसार होता है गीतकार चिंतन से कुछ हटकर निकट रहकर अपनी अनुभूति को करता है।

विनोद श्रीवास्तव के संकलित में यह सहजानुभूति पूरी त्वरा के विद्यमान है और उनका यह कहना स्वाभाविक है कि 'गीत मैं गाता कौन गाता'।

'भीड़ में बांसुरी' के गीतों की बड़ी विशेषता है प्रेम के सात्विक का वर्णन और आधुनिक यांत्रिक परे हटकर अपने को जानने का अ इसीलिए कवि ने जीवन की परिभा बड़ी सहजता से व्यक्त कर दिया है- **'जीवन क्या / बस सीधी–सादी / वाणी फकीरों की है।'**

वस्तुतः जीवन सीधा-सादा है पर आधुनिकता के चश्में से संत-फकीर दि पड़ सकते हैं? कवि ने स्पष्ट किया 'हम खड़े हैं / रेत की दीवार से / आ का रुख हमारी ओर है।' वास्त आज का आदमी रेत की दीवार पर है और वह भी आदमी नहीं आदमि पूरी भीड़। मनुष्य जब भीड़ बन है तो उसका मनुष्यत्व भी खो जाता उस भीड़ में मनुष्य अपने को पहचान यही जीवन है।

विनोद श्रीवास्तव के प्रस्तुत

संकलन में कला की दृष्टि से भी अनेक प्रयोग हुए हैं। बिंबों एवं प्रतीकों का आधार तो पुराना है पर उनकी प्रस्तुति सर्वथा नये रूप में हुई है। धुएं के बिंब से गुजरने, दिन का नकाब पहनना, चेतना को इंद्रधनु-सा बताना, मन का चंदन-चंदन होना—सर्वथा नये प्रयोग हैं। 'रूप की बारादरी में गंध की वीणा का बजना' प्रतीकों को नया आयाम देना है। । प्रेम-परक प्रस्तुत और अप्रस्तुत दोनों मानसिक प्रेम से जुड़े हैं। देह तो भीड़ बनी है, मन तो आज भी अकेला है और उस अकेलेपन को दूर करने में 'भीड़ में बांसुरी' पूरी तरह समर्थ है। **—लक्ष्मीकांत पांडेय**

०००

***कहानी एक औरत की * लेखक : एमिल ज़ोला; प्रकाशक : राजपाल एंड संज, दिल्ली; मूल्य : ३५ रुपये।**

विश्वविख्यात उपन्यासकार एमिल ज़ोला की औपन्यासिक कृति 'तरॉज़ रॉक' बेहद विवादास्पद और क्रांतिकारी रचना रही है। इस उपन्यास को अपने यथार्थवादी चरित्रांकन के कारण रूढ़िवादी आलोचकों और परंपरावादियों द्वारा भयंकर विरोधों का सामना करना पड़ा था। किंतु दूसरी ओर यह उपन्यास इतना चर्चित भी हुआ कि रातों-रात इसका पहला संस्करण समाप्त हो गया। दूसरे संस्करण के समय एमिल ज़ोला ने विशिष्ट भूमिका जोड़कर अपने उपन्यास की कलात्मकता एवम् उसके प्रकृतवादी पक्ष को स्पष्ट किया था। जो भी हो, यह उपन्यास इतना लोकप्रिय हुआ कि मूल फ्रेंच से इसका अनुवाद संसार की सभी प्रमुख भाषाओं में हुआ। प्रकृतवाद की प्रवृत्ति इसी उपन्यास से शुरू मानी गयी थी। मनुष्य की मूल प्रवृत्तियों के यथार्थवादी अंकन का यह आरंभ हर भाषा के कथाकार को तब अत्यंत उपयुक्त प्रतीत हुआ था।

एमिल ज़ोला के फ्रेंच भाषा में लिखे गये उपन्यास 'तरॉज़ रॉक' का हिन्दी अनुवाद 'कहानी एक औरत की' स्त्री-पुरुष की मूल प्रवृत्तियों का अंकन बड़ी साफगोई के साथ करता है। लोरां और थारी के रूप में ज़ोला ने यौनातुर स्त्री-पुरुष की मूल प्रवृत्तियों का अंकन अपने प्रकृत रूप में किया है। थारी विवाहिता होने पर भी पर पुरुष लोरां से शारीरिक संबंध स्थापित कर लेती है। उसके पति कामिली को बीच की बाधा मानकर लोरां उसकी हत्या भी कर देता है। कामांधता के उस आवेश में कामिली की हत्या करने के पश्चात् लोरां और थारी यद्यपि परस्पर विवाह कर लेने में सफल तो हो जाते हैं, लेकिन उनकी नैतिक चेतना उन्हें चैन नहीं लेने देती और फिर उनका जीवन नारकीय बन जाता है। ज़ोला ने स्त्री-पुरुष के सनातन संबंधों में प्रेम-वासना की प्रवृत्तियों का यथार्थवादी अंकन बड़े प्रभावी रूप में किया है।

उपन्यास आद्यंत रोचक और पठनीय है। अनुवाद ऐसा है कि मूल का माधुर्य

कहीं नष्ट नहीं हो पाता। कथा साहित्य के रसिक और जिज्ञासु इस उपन्यास को पढ़ने के बाद हिंदी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की प्रेरणा भूमि को आसानी से समझ पाने में समर्थ होंगे। —विश्वंभर 'अरुण'

०००

***महुआ वृक्ष तले* कवि सतीश आर्य; प्रकाशक : रामअंजोर चौधरी, बनबीरपुर (प्रतापगढ़), उ. प्र., पृष्ठ संख्या : ९०; मूल्य : २५ रुपये।**

'महुआ वृक्ष तले' प्रसिद्ध हिंदी कवि सतीश आर्य का **प्रथम** काव्य-संग्रह है, जिसमें उनके ४३ गीत संग्रहीत हैं।

पुस्तक के आमुख में प्रो. अनन्त रघुनाथ सहस्रबुद्धे ने ठीक ही लिखा है कि, 'कवि की गीत सृष्टि नवगीतों के नये क्षितिज पर शुक्र की भांति प्रभापूर्ण है।' उनका स्पष्ट मत है कि दार्शनिक अनुभूति के निदर्शन से लेकर सामान्य लोकानुभूति की व्यंजक रेखायें भी सतीशजी के काव्य की अपनी विशेषतायें हैं।

प्रस्तुत गीत संग्रह में नयापन और ताज़गी है। कवि का मन और दृष्टि लोक जीवन से पूर्ण रूप से जुड़ी हुई है। वह पीड़ा को गले से लगाये हैं। व्यंग्य उसे भले लगते हैं और आंसुओं से अभिसार करने में उसे आनंद की अनुभूति होती है—

तीखे शब्द मधुर लगते अब
कानों को है व्यंग्य सुहाता।
चिंता भली-भली सी लगती,
नयनों में सावन मुसकाता।
लगे गुदगुदी सी यह तड़पन
आंसू से अभिसार कर रहा॥

भावों की यह उदात्तता उसे प्रमाणित करती है। गीतों को ऐसा लगता है जैसे कवि युग की विसंगतियों को बड़े धैर्य और सा देखता और अनुभव करता है—

फटी बिवांई पांव में, हरे हो गये
नेह रहा बिक हाट में, गगन छू रहे

कवि के मुक्तक हृदय पर सीं करने वाले हैं, जिनमें भाषा और की निर्व्याज सुघरता है। अनुभूति मुखर हो उठी हैं। पीड़ा जैसे उसकी भोगी हुई है। युग का सारा दर्द पी वह मुस्करा रहा है। उसकी यह पाठकों में भी आशा और साहस का करती है—

इस तरह मुस्कराया अंधेरा,
मान बैठे उसे हम सबेरा।
रहनुमा जिसको हमने बनाया,
आजकल हो गया वह लुटेरा

'महुआ वृक्ष तले' में गीतों और के साथ दोहों का भी प्रयोग हु गीतों की लयात्मकता में अनुभू रागिनी की झंकार है। शब्द मधुर बोल उन्हें मादक बनाते हैं सहज प्रवाहमयी एवं मुहावरेदार है भी उलझाव नहीं है। बिंबों की सरिता की लहरों पर पड़ने वाली की दीप्ति जैसी लगती हैं। एक कवि का यह प्रथम संग्रह नवगीत

मेष का कीर्तिस्तंभ जैसा प्रतीत होता है। ावरण सज्जा साधारण होते हुए भी, ाकर्षक है।

—डॉ. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक'

○○○

तपस्वी की धरोहर (उपन्यास) *लेखक : **ाजेंद्र शर्मा; प्रकाशक : ग्रंथ अकादमी, ६८६ पुराना दरियागंज, नयी दिल्ली; ूल्य : ३५ रुपये।**

आचार्य चतुरसेन शास्त्री के 'वयं रक्षामः' तथा नरेंद्र कोहली के 'रामायण', र्प' आदि पौराणिक, धार्मिक उपन्यासों की ृंखला में राजेंद्र शर्मा कृत नवीनतम ौराणिक उपन्यास 'तपस्वी की धरोहर' हाभारत के अश्वमेधपर्व में आये हुए मुनि त्तंक के आदर्श चरित्र पर आधारित है। ौराणिक कथानकों में रोचकता और वीनता उत्पन्न करना राजेंद्र शर्मा की बड़ी फलता है। उन्होंने औपन्यासिक तत्व का र्वत्र ध्यान रखा है। अन्यथा ऐसे उपन्यास-ार सहज ही अति नैतिकता, उपदेश और ार्मिक तत्वों के स्पष्टीकरण में अधिक लग ाते हैं। पूरा कथानक मुनि उत्तंक, अयोध्या ५१ वीं पीढ़ी में जन्मे पराक्रमी राजा ादास, उनकी सहधर्मिणी रानी मदयंती, हामुनि गौतम और अहिल्या आदि सुपरि-त ऐतिहासिक पात्रों को लेकर निर्मित ा है। कथा रचना की श्रृंखला में लेखक कुछ ऐसी रचनाएं भी समाविष्ट की हैं निको इतिहास की दृष्टि से ग्रंथित करना ंगत कहा जायेगा। पर पौराणिक पात्रों की नित्यता के सिद्धांत से यह कोई दोष नहीं है। परिशिष्ट में आरुणि, उपकौसल, शिखध्वज और चुड़ाला, सौभारि ऋषि आदि की कथाएं विस्तार से दे दी गयी हैं। कथा में पाठक की उत्सुकता और जिज्ञासा अंत तक बनी रहती है। मुख्य कथानक उत्तंक के तेजस्वी, सत्यनिष्ठ, अहंकार शून्य, गुरुभक्तिपूर्ण व्यक्तित्व को स्पष्ट करने के लिए बुना गया है।

उपन्यासकार ने जो-जो अंतर्कथाएं दृष्टांत रूप में जोड़ी हैं, उनमें पात्रों की मनोस्थिति एवं चरित्र का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। आख्यान टी. वी. के परदों जैसे जीवंत हो उठे हैं। प्रेम कहानी होते हुए भी सर्वत्र आदर्शवादित प्रेम की पवित्रता और उच्चता को स्थिर रखा है। कहीं किंचित भी अश्लीलता नहीं आने पायी है। जैसा उदात्त चरित्र है वैसी ही शिष्ट, सभ्य, सुसंस्कृत, साहित्यिक भाषाशैली और उपमाएं भी बन पड़ी हैं। उपन्यास की रचना में पृष्ठभूमि अत्यंत प्रामाणिक है। उसके पीछे लेखक का गहन अध्ययन, मौलिक चिंतन और भारतीय संस्कृत के नैतिक मूल्यों का संरक्षण है।

लेखक ने सर्वत्र परोपकार, सेवा, त्याग, गुरुभक्ति, आदर्श प्रेम, व्रत-पालन, संयम, ब्रह्मचर्य, वचनबद्धता, कृतज्ञता आदि नैतिक मूल्यों को महत्व दिया है। भाषा अति साहित्यिक, कहीं-कहीं क्लिष्ट और संस्कृतनिष्ठ है। पूरा उपन्यास प्राचीन आदर्श और भारतीय संस्कृति का अहाता है। लेखक को

उस तथ्य का अच्छा ज्ञान है जिसे भारतीयता कहते हैं। —**डा. रामचरण महेन्द्र**

०००

***बात कर गये नयन (गीत संग्रह)* कवि: योगीश्वरी प्रसाद 'अलि'; प्रकाशक : अर्पणा प्रकाशन, कृष्ण नगर, उरई, उ. प्र. मूल्य : ३१ रुपये।**

'बात कर गये नयन' उक्त पुस्तक के नाम को कृतिकार ने सार्थक करने में महाकवि गोस्वामी तुलसीदासजी की असंभव कल्पना को भी संभव कर दिखाने का प्रयास किया है और वह सफल भी हुआ है। जहां तुलसीदासजी ने लिखा है 'गिरा अनयन नयन बिन बानी' वहीं श्री अलि लिखते हैं 'शब्द चूमते रहे अधर बात कर गये नयन'। सिद्ध है नयन वाणी विहीन नहीं है, किंतु 'नयनन की वाणी क्यों हूं श्रौवनन सुनियत नैनन के बैनन कौं नैन ही सुनत है।' (भागीरथ सिंह तकदीर)।

पुस्तक 'बात कर गये नयन' गीतों में, गजलों में, और घनाक्षरियों में कवि की अंतर्व्यथाओं, पीड़ाओं, निराशाओं को व्यक्त करने में समर्थ है।

तप्त धरा की पीर देख कर,
नभ पर छातीं श्याम घटाएं
मेरे जीवन पथ के ऊपर लिखी
अनिगिनित मधुर व्यथाएं

कवि की व्यथाएं भी मधुर हैं यह नैनों की ही वाणी है।

इस संदर्भ में यह गीत देखें—

'भटक न जाये नैन कहीं,
पथ पर दो दीप जला देना

गजलों में अभिव्यक्ति है—

हम धूप में साये का जहां भूल
दुनिया के मरुस्थल का मकां भूल

श्री अलि के गीतों में छायावाद, वाद है, गीत गेय हैं। श्रृंगार रस का परिपाक हुआ है। प्रसाद गुण नता है। —**आचार्य भागीरथ सिंह**

०००

*** 'टाफी' (बालोपयोगी काव्य कवि : कौशलेंद्र पांडेय; प्रकाशक : स्मृति संस्थान, १७, चंद्रनगर, रा २२९०१, पृष्ठ : ७२; मूल्य : २०**

काव्य-कृतियों 'जाने कैसे-कैसे 'मैं शिव नहीं' के माध्यम काव्य-जगत के चर्चित कवि पांडेय का नाम, उनके प्रथम बाल संग्रह 'टाफी' के साथ ही, स साहित्यकारों की सूची में भी हो गया है। बाल साहित्य का क्षे सही समझ न रखने वालों के लिए आसान लगता है, वस्तुस्थिति वैसी बाल संसार के प्रति एक प्रतिबद्ध यता तथा बाल मनोविज्ञान को और समझने की सही क्षमता आत्मीय समझ और पकड़ को से अभिव्यक्ति दे पाना कि वह थोपा हुआ न लगकर भी उ रचनात्मक, प्रेरणास्पद और अनुशा हो, यह सब कुछ काफी मुश्किल

कुल बहत्तर पृष्ठों के कलेवर में २७ रंग-बिरंगे स्वाद वाली कविताओं की 'टाफी' बच्चों की सामान्य काव्य पुस्तकों से कई अर्थों में भिन्न कृति है। प्रथम तो यह कि यह कृति किसी आयु-वर्ग विशेष के बच्चों के लिए ही नहीं, अपितु बाल्यावस्था की विभिन्न पायदानों के सभी बच्चों के लिए उपयोगी है। यही नहीं इसकी कई कविताएं किसी भी प्रौढ़ पाठक को उसके बचपन के चुलबुले दिनों की यादों में ले जाकर बरबस ही उसके होठों पर मुस्कान की रेखाएं बिखेर देने में सक्षम हैं।

'टाफी' की कई-कई कविताएं बच्चों का परिचय नये क्षितिजों से कराती हैं। जैसे 'गणित' कविता में मनोरंजक अंदाज में ही कुछ महत्वपूर्ण स्थलों, क्रिकेट की शब्दावली तथा कम्प्यूटर आदि की जानकारी बच्चों को आर्कषित करती है। इसी तरह 'मुनमुन' कविता भी भावात्मक एकता की पृष्ठभूमि में कई नये शब्द-समूहों के प्रति बच्चों में उत्सुकता जगाती है। रोबोट जैसी अत्याधुनिक तकनीक की परिचयात्मक जानकारी 'रोबो' कविता में बड़ी सहज भाषा में उपलब्ध है। 'अजय', 'खीर की चोरी' आदि कविताएं ऐसी हैं जिनमें बच्चों के लिए सीख के साथ मनोरंजन का ऐसा पुट है कि उससे बच्चे आह्लादित हुए बिना नहीं रह सकते। 'पंडितजी' कविता में आचार-विचारों में जीने वाले पंडितजी का कई-कई अपशकुनों के बाद भी बाज़ार जाने का निर्णय अच्छा लगता है। इसी प्रकार एक अन्य कविता 'राजू और मुरारी' में गर्मी से तंग राजू की, अपने गरीब मित्र की परेशानियों के प्रति संवेदना तथा उन परेशानियों को दूर करने का बालसुलभ उपाय भी अच्छा लगता है।

कुछ कविताओं में एकाधिक स्थलों पर प्रवाह का अवरुद्ध होना, जो किन्हीं भी कारणों से हो, अटपटा लगता है। पुस्तक में रंगीन चित्रों का अभाव पहली दृष्टि में पुस्तक को आकर्षक नहीं लगने देता।

—कमलेश भट्ट 'कमल'

* * *

समुद्र टिटिहरी के अंडे बहा ले गया। अनुरोध करने पर भी वापस करने को तैयार न हुआ। टिटिहरी चोंच में बालू भर-भरकर समुद्र में डालने लगी। अगस्ति ऋषि यह दृश्य देख रहे थे। कारण पूछने पर उसने ऋषि को सारी बात बता दी और कहा—अंडा मिलने या जीवन जाने तक मेरा प्रयास चलता रहेगा।

ऐसे संकल्पवान की सहायता करने का अगस्ति का मन हुआ। उन्होंने तीन चुल्लू में समुद्र पी लिया। घबराकर उसने अंडे वापस कर दिये। तब उसे त्राण मिला।

संकल्पवान, साहसी और कर्मठ आदर्शवादियों को सहयोगियों की कमी नहीं रहती।

—डा. गोपालप्रसाद 'वंशी'

* * *

सुबूत

□ डा. अशोक गुज

एक गांव में रामधन नाम का किसान रहता था। वह बहुत सीधा और सरल इंसान था। खेतों में बहुत मेहनत करता, गाय-भैंस पालता और अपने छोटे-से परिवार को सुख से रखता। एक बार उसकी भैंस खो गयी। चरवाहा सुबह जंगल की ओर ले तो गया था लेकिन शाम को सारे जानवरों को हांककर लौटते समय भैंस का कहीं पता न था। गांव के आसपास सब जगह भैंस को ढूंढ़ा गया, पर वह नहीं मिलनी थी, नहीं मिली।

कुछ दिनों बाद अपनी कपास की गाड़ी लेकर रामधन शहर जा रहा था। रास्ते में एक देहात पड़ता था। वहां से गुजरते वक्त रामधन को किसी के बाड़े में अपनी
दिखाई दी। वह झींगा का बाड़ा
झींगा बहुत बदमाश आदमी था। वह
चकारी, बेईमानी और दादागीरी के
बदनाम था। रामधन ने जब उससे क
बाड़े में बंधी भैंस मेरी है तो वह
गालियां बकने लगा। उसने रामध
अपमानित कर अपने घर से निकाल

उस देहात के लोग यह तमाशा दे
थे। कोई कुछ नहीं बोला। सब मन
समझ रहे थे कि रामधन ही सच्चा हो
वे उसका पक्ष लेने से कतरा गये। वे
अवश्य थे कि किसी रोज झींगा को
सिखाया जाये, किंतु आगे आने

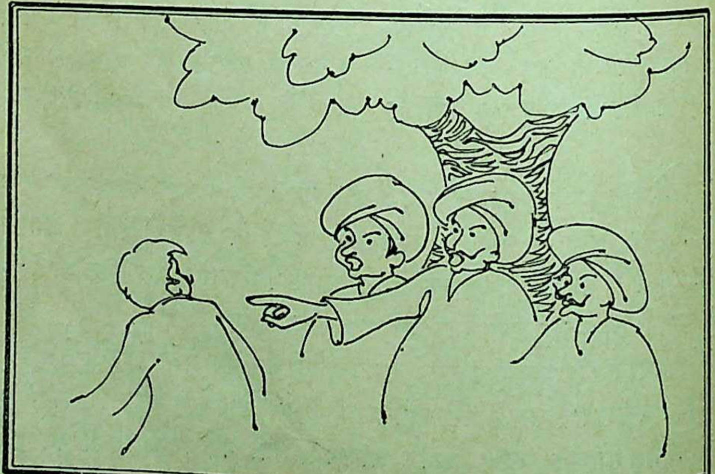

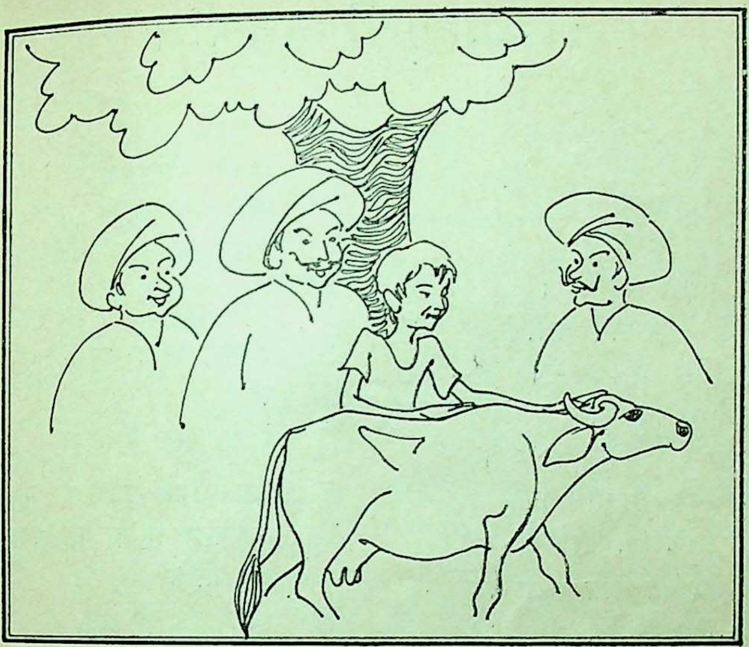

कोई तैयार नहीं था। निर्भीक रामधन ने देहात के सरपंच से शिकायत की। सरपंच ने झींगा को बुलाया और भैंस के बारे में पूछताछ की। तब झींगा रामधन की ओर क्रोध से देखता हुआ बोला, 'क्या कहते हैं, सरपंचजी! यह भैंस मेरी है। मैंने पिछले महीने ही शहर से खरीदी है।'

सरपंच ने दोनों की बातें शांति से सुनीं और कहा, 'यदि भैंस झींगा की साबित होगी तो रामधन झींगा को एक हजार जुर्माना देगा, और अगर रामधन की हुई तब झींगा को यह इलाका हमेशा के लिए छोड़ देना होगा। हमारे गांव में चोर के लिए कोई जगह नहीं है। और हां, फैसला मैं दस दिनों बाद करूंगा, तब तक यह भैंस मेरे घर बंधेगी।' दोनों ने सरपंच का आदेश मान लिया।

दस दिनों बाद सारा गांव चौपाल पर आ जुटा। झींगा और रामधन भी उपस्थित थे। सरपंच ने अपना फैसला सुनाया—'भैंस रामधन की ही है। झींगा उसे चुराकर लाया था। इस अपराध के लिए झींगा की सजा यही है कि वह आज और अभी इस इलाके से हमेशा के लिए चला जाये...'

झींगा बीच में ही उठकर खड़ा हुआ—'लेकिन इसका सुबूत क्या है?'

सरपंच ने मुस्कराते हुए उसे अपना तर्क दिया—'जब दस दिनों तक यह भैंस मेरे यहां बंधी रही, झींगा, तुम इसी गांव

दो फागुनी नवगीत

[१]

गाये फाग
हवा फगुहारी
देह छुवे इठलाये,
मन पांखी भरमाय।
चीन्हे चेहरे लगे अचीन्हे,
जैसे एक अगोचर छवि के—
सपने खुशबू भीने,
सातो रंग भरे उतरे ज्यों
इन्द्रधनुष के साये।
मन पांखी भरमाये।
वर्णभेद की बात कहां अब
सब जैसे के तैसे—
रंग बिरंगे फूल गमकते,
लता वृक्ष बौराये लगते
सिंचे प्रेम की मय से,
दिन के मंडप तले
धाम से—
छाया मांग भराये।
मन पांखी भरमाये।

०

[२]

छलक गय अब
कुंभ रसों के,
पीले हाथ हुए सरसों के।

एक नहीं, देखो सबके सब,
निकल ख़ता करते क़बूल
दिल में
छिपे चोर वर्षों के।

उड़ते दिखे हाथ के तोते,
आत्मवंचना के वह थोथे-
ढहे महल
अब आदर्शों के।

भाव नये अब पल-छिन
टूटे आश्वासन-से लगते-
झूठे—
किस्से कल परसों के।
पीले हाथ हुए सरसों के।

—बद्रीप्रसाद गुप्त 'आ

आर्यजी नगर, बिन्दकी, फतेहपुर,

के होकर भी कभी इधर नहीं फटके, क्योंकि तुम्हारा भैंस के प्रति कोई लगाव नहीं था। इसके विपरीत रामधन दो बार अपने गांव से यहां तक आया—यह देखने कि उसकी भैंस ठीक तो है . . . यह साबित करता है कि भैंस उसी की है, तुम्हारी नहीं!'

गांववालों ने सरपंच के निर्णय की ही नहीं की बल्कि रामधन को धन्यवा दिया कि उन्होंने अपनी सच्चाई के पर झींगा के अत्याचारों से सभी को के लिए बचा लिया।

आदर्श कालोनी, अकोला-४४

□

सांस्कृतिक मंच

साहित्यकार सम्मानित

भारतीय भाषा परिषद् के सभागार में वार्षिक पुरस्कार उत्सव का आयोजन किया गया। जिसमें असमिया में अजित बरुआ की रचना 'किछुमान पद्य अरु गान' (कविता) पर वाजालोनी पुरस्कार, तेलुगु में डा. पुट्टपार्ति नारायणाचार्युलु की रचना 'श्रीनिवास प्रबंधम्' (काव्य) पर भीलवाड़ा पुरस्कार, पंजाबी में गुरमुखसिंह जीत की रचना 'इक होर सूरज' (उपन्यास) पर कायां ट्रस्ट पुरस्कार, बंगला में दिव्येंदु पालित की रचना 'सहयोद्धा' (उपन्यास) पर रामकुमार भुवालका पुरस्कार, मराठी में गणेश प्रभाकर प्रधान की रचना 'साता उत्तरांची कहाणी (उपन्यास) पर रामकुमार भुवालका पुरस्कार, राजस्थानी में जहूर खां मेहर की रचना 'घर मजला घर कोसां' पर रामेश्वर टांटिया पुरस्कार तथा हिंदी में गिरिजा कुमार माथुर की रचना 'कल्पांतर' (काव्य) पर नथमल भुवालका पुरस्कार इस समारोह में प्रदान किये गये। प्रत्येक पुरस्कार की राशि रु. ११००/- की है। इसके अतिरिक्त पुरस्कृत रचनाकारों को एक मान-चिह्न भी दिया गया।

समारोह की अध्यक्षता श्री भगवती प्रसाद खेतान ने की। डा. वीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य ने मुख्य अतिथि के रूप में कहा कि—विभिन्न भारतीय भाषाओं के तथ्यात्मक और कथ्यात्मक एकता को पहचानने का प्रयास भारतीय भाषा परिषद् जैसी संस्था ही कर सकती है। **—डा. पाण्डुरंग राव**

○○○

सत्साहित्य के स्वाध्याय पर बल

नयी दिल्ली में आयोजित एक सम्मान-समारोह में बोलते हुए राष्ट्रपति आर. वेंकटरामन ने गंभीर और स्वस्थ साहित्य के पठन-पाठन एवं स्वाध्याय का महत्व बताते हुए इस बात पर बल दिया कि लोगों में पुस्तकें पढ़ने की आदत को बढ़ावा तथा प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये।

हिंदी के साहित्यकार श्री यशपाल जैन की नवीनतम पांच पुस्तकों का एक सेट राष्ट्रपति को भेंट किया गया। यशपालजी की ये पुस्तकें उनके जीवन के ७५ वर्ष पूर्ण करने पर एक साथ प्रकाशित हुई हैं।

राष्ट्रपति ने यशपालजी का अभिनंदन भी किया।

○○○

'हिमालय-दीप्ति' पत्रिका का विमोचन

गत दिनों पिथौरागढ़ (उ. प्र.) के सीमांत अंचल धारचूला में निवास करने वाली रङ जाति की सांस्कृतिक संस्था 'रङ संस्कृति परिषद' की ओर से एक पत्रिका 'हिमालय-दीप्ति' का प्रकाशन

प्रारंभ किया गया है । इस प्रथम पत्रिका के प्रवेशांक का विमोचन विधायक श्री काशी सिंह ऐरी ने किया ।

श्री भगत सिंह ने कहा कि इस क्षेत्र के लोग आदिवासी न होकर अनादिवासी हैं तथा संस्कृति की सरिता यहीं से प्रवाहित होती है । श्री जवाहर सिंह नवियाल ने स्थानीय बोली में रङ संस्कृति के महत्व पर प्रकाश डाला तथा इस पत्रिका के प्रकाशन का उद्देश्य स्पष्ट किया । **—दीपकचंद्र उप्रेती**

०००

संगीत और नृत्य कार्यक्रम

स्वामी हरिदासजी की १८ वीं पीढ़ी में आचार्य श्री गोपाल स्वामी द्वारा रमणरेती वृंदावन एवं हरिदासजी की साधना स्थली निधि वन में त्रिदिवसीय संगीत और नृत्य का कार्यक्रम रखा गया ।

राग भोपाली में हरिप्रसाद चौरसिया ने बांसुरी वादन से कार्यक्रम प्रारंभ किया । ध्रुपद गायकी के डागर बंधुओं ने राग कांबोजी में रसखान का सवैया प्रस्तुत किया, जिनके साथ पखावज पर संगत की थी मोहन श्याम शर्मा ने । जयपुर घराने की गायिका किशोरी अमोनकर ने राग केदार में 'पायो-पायो मैंने रामधन' से रसिकों का मन मोह लिया । मेवाती घराने के बुजुर्ग गायक पंडित प्रतापनारायन ने देशराज राग सुनाया तोड़ी में 'चलो सखी सौतन के घर जइये' से श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर दिया ।

उस्ताद विस्मिल्ला खां ने शहनाई पर राग यमन कल्याण गाया । डाक्टर मु पटनायक ने तीन ताल में निबद्ध भै राग में मीरा का भजन 'मत जा मत जोगी' से रसमर्मज्ञों को सराबोर दिया । ७८ वर्षीय पंडित मल्लिका मंसूर ने राग संपूर्ण मालकौस तथा परज में 'अंखिया मोरी लाग रहीं' सुनाय स्वर्गीय अमीर खां की शागिर्द कनक बनर्जी ने राग बागेश्वरी में 'बेगुन को दे दाता' तथा राग अड़ाना में 'भा कालका' की सफल प्रस्तुति की । तबले संगत उस्ताद फैय्याज खां एवं हारमोनि पर थे महमूद धौलपुरी । सारंगी वा मुनीर खां ने राग भीमपलाशी से कार्यक का समापन किया ।

कु. उमा शर्मा ने कत्थक तथा कोम वर्धन ने भरत नाटचम से स्वामीजी श्रद्धांजलि अर्पित की । संचालन कि रईस मिर्जा ने । **—महेश अव**

०००

मॉरीशस के कवि का सम्मान

एस. एन. डी. टी. महिला विश्ववि लय, बंबई के स्नातकोत्तर विभाग, राष्ट् हिंदी संस्थान एवं अंतर्राष्ट्रीय हिंदी सह परिषद के संयुक्त तत्वावधान में गत म मॉरीशस के सुप्रसिद्ध कवि श्री ब्रजेंद्र कुम भगत 'मधुकर' के सम्मान में एक का क्रम आयोजित किया गया ।

कार्यक्रम का आरंभ सरस्वती वंदना हुआ । एस. एन. डी. टी. की हिंदी-विभा ध्यक्षा डा. उमा शुक्ला ने अध्यक्ष

बसंत देव का तथा अध्यक्ष ने मुख्य अतिथि का पुष्पगुच्छ देकर स्वागत किया । श्री हरिशंकर ने स्वागत भाषण दिया । परिचय श्री ना. मा. देव द्वारा दिया गया । तत्पश्चात् मुख्य अतिथि द्वारा एम. ए. (हिंदी) परीक्षा में सर्वोच्च अंक प्राप्त अहिंदी भाषी छात्राओं को पुरस्कार दिये गये । इस अवसर पर श्री मधुकर, डा. वसंत देव तथा डा. माधुरी छेड़ा द्वारा काव्य पाठ किया गया । डा. पुष्पा जौहरी ने आभार प्रदर्शन किया ।

ooo

आचार्य द्विवेदी की ५० वीं पुण्य तिथि पर आयोजन

२१ दिसंबर ८७ को आधुनिक हिंदी के निर्माता आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी की ५० वीं पुण्य तिथि पर 'स्व. पं. देवीदत्त शुक्ल शताब्दी समारोह समिति' द्वारा एक गरिमापूर्ण साहित्यिक आयोजन इन दो महापुरुषों से दीर्घ काल तक जुड़े रहे इंडियन प्रेस प्रयाग के सभागार में सोत्साह किया गया । स्व. शुक्लजी के साहित्य-गुरु आचार्य द्विवेदी के संबंध में समारोह का आयोजन करके 'शताब्दी समारोह-समिति' ने गुरु-शिष्य परंपरा के सरस्वती के उन दो वरद पुत्रों को सार्थक श्रद्धांजलि अर्पित की।

समारोह के अध्यक्ष उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान के कार्यकारी उपाध्यक्ष श्री भक्तदर्शन ने आचार्य द्विवेदी को आधुनिक हिंदी निर्माता बताया और कहा कि 'मैं नहीं समझता कि आज तक किसी पत्रिका ने वह स्तर प्राप्त किया हो, जो आचार्य द्विवेदी और शुक्लजी द्वारा संपादित 'सरस्वती' ने प्राप्त किया था ।' उन्होंने यह उत्तम सुझाव भी दिया कि 'इस पुण्य तिथि से आचार्य द्विवेदी की अर्द्ध-शती का प्रारंभ हो रहा है । अर्द्ध-शती की पूर्णता सन् १९८८ की २१ दिसंबर को होगी । इस समय एक भव्य आयोजन करके उसमें यह विचार किया जाना चाहिये कि अभी तक हम हिंदी को उसका वास्तविक अधिकार क्यों नहीं दिला पाये हैं ।'

समारोह में पधारे वयोवृद्ध साहित्यकार-द्वय पं. ठाकुरदत्त मिश्र और ठाकुर श्रीनाथ सिंह ने आचार्य द्विवेदी की महान हिंदी सेवा का उल्लेख किया और कहा कि द्विवेदीजी के सच्चे उत्तराधिकारी थे—पं. देवीदत्त शुक्ल ।

पं. शिवनाथ काटजू, श्री रमाप्रसाद घिल्डियाल पहाड़ी, डा. मुश्ताक अली ने भी सामयिक विचार व्यक्त किये ।

समारोह का संचालन प्रो. व्रजेश्वर वर्मा ने किया । पं. रमादत्त शुक्ल ने धन्यवाद दिया ।

ooo

कमल और तलवार का संगम

२८ दिसंबर १९८७ को उन्नाव जनपद के ऐतिहासिक बकसर ग्राम में, जो कभी 'छोटी काशी' के नाम से विख्यात था, 'कलम और तलवार' का अभूतपूर्व संगम हुआ । इस दिन प्रथम स्वतंत्रता-संग्राम के महा-यज्ञ में आत्माहुति देने वाले अमर

शहीद राव रामबक्श सिंहजी का १२९ वां 'बलिदान-दिवस' तथा बक्सर ग्राम के अमर सपूत पं. देवीदत्त शुक्ल का 'जन्म-शताब्दी-समारोह' संयुक्त रूप से आयोजित किया गया।

समारोह में श्री भगवती सिंह विशारद (विधायक), श्री गयासिंह, (भूतपूर्व विधायक) (उन्नाव), पं. रमादत्त शुक्ल, श्री सतीशचंद्र उपाध्याय, श्री अशर्फीलाल शुक्ल, श्री व्रतशील शर्मा (प्रयाग), श्री रंगनाथ 'राकेश' (वाराणसी) और श्री कमलेश अवस्थी, श्री हरिनाथ द्विवेदी, श्री शारदाप्रसाद मिश्र, श्री सुरेश फक्कड़, श्री रमेश सिंह, श्री रजनीश, श्री वीरप्रताप सिंह, श्री रमेशचंद्र शुक्ल, श्री रामदेव सिंह, श्री रमेशकुमार तिवारी, कवि श्री रामनारायण शुक्ल, श्री सुरेश फक्कड़, श्री शिवाधार मिश्र, डा. वीरेंद्रकुमार शुक्ल, डा. रामकुमार, श्री सूरजप्रसाद मिश्र, श्री शारदाप्रसाद शुक्ल आदि अनेक समाजसेवियों, शिक्षकों, साहित्यकारों, कवियों और गण्यमान व्यक्तियों ने श्रद्धा के साथ महापुरुष द्वय को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

—रमादत्त शुक्ल

०००

राष्ट्रीय एकता एवं सद्भाव सम्मेलन

'विश्व लोक परिषद' के तत्वावधान में म. प्र. विधान सभा के अध्यक्ष श्री राजेंद्रप्रसाद शुक्ल के मुख्य आतिथ्य में तथा स्वायत्त शासन राज्यमंत्री श्री तनवंत सिंह कीर की अध्यक्षता में 'राष्ट्रीय एकता एवं सद्भाव सम्मेलन' का आ किया गया। श्री शुक्ल ने कहा कि एवं विकासमान देशों में जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के उनके दिल और दिमाग में जहर पैदा जाता है। उन्होंने कहा कि 'अने एकता का सिद्धांत' अपने देश के का गरिमामंडित अध्याय है।

रतनसिंह चौहान, हुकुमचंद मा संतोख सिंह जमानी आदि ने अ का पुष्पहारों से स्वागत किया।

—मांगीलाल

फागुनी उपहार

कीजिये सत्कार होली का,
आ गया त्योहार होली का।
चढ़ रहा है ज्वर उमंगों को,
बढ़ रहा है ज्वार होली का।
कर दिया बदरंग रंगों ने,
है यही शृंगार होली का।
प्यार, निष्ठा, आपसी सद्भाव,
है यही आधार होली का।
खुल गये संकोच के बंधन,
मानिये आभार होली का।
भावना की बांह फैला कर,
कीजिये विस्तार होली का।
हां, हमें हर साल मिलता है—
फागुनी उपहार होली का।

—जहीर

समीर काटेज, सूर्य नगर, ग्वालियर,

फार्म नं. ४

१. प्रकाशन का स्थान	भारतीय विद्या भवन, बम्बई-७
२. प्रकाशन का अवधिक्रम	प्रत्येक मास
३. मुद्रक का नाम	सु. रामकृष्णन्
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	भारतीय विद्या भवन, बम्बई-७
४. प्रकाशक का नाम	सु. रामकृष्णन्
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	भारतीय विद्या भवन, बम्बई-७
५. सम्पादक का नाम	गिरिजाशंकर त्रिवेदी
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	भारतीय विद्या भवन, बम्बई-७
६. उन शेयर होल्डरों के नाम और पते जिनके पास कुल पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक शेयर हैं।	भारतीय विद्याभवन, सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट २१ (१८६०) तथा बम्बई पब्लिक ट्रस्ट एक्ट (१९५०) नं. एफ. ३५८ (बम्बई) के अनुसार रजिस्टर्ड

अध्यक्ष	**मानद सचिव**	**मानद कोषाध्यक्ष**
श्री गिरधारीलाल मेहता	श्री जशवन्तलाल मटुभाई	श्री. एस. पी. जैन
उपाध्यक्ष	श्री जे. एच. दोशी	श्री चरणदास मेघजी
श्री सी. सुब्रह्मण्यम्	श्री आर. एस. भट्ट	श्री ए. जी. सोनावाला
श्री प्रवीणचन्द्र गांधी		

मैं सु. रामकृष्णन् यह घोषित करता हूं कि ऊपर दिये गये विवरण जहां तक मैं जानता हूं तथा मेरा विश्वास है, सत्य हैं।

मार्च १९८८

सु. रामकृष्णन् (प्रकाशक के हस्ताक्षर)

11 14/88

दो क्षण हंस न लें!

एक डाक्टर ने किसी वृद्ध से पूछा, 'अच्छा बताइये, आपन इतनी लंबी आयु कैसे पायी ?'

'जी, बात यह है कि मेरा परिचय किसी डाक्टर से नहीं हुआ,' वृद्ध ने मुस्कराते हुए कहा।

०००

किसी दार्शनिक से एक नेताजी ने पूछा, 'आपकी नज़र में दुनिया का सबसे बुद्धिमान व्यक्ति कौन है ?'

'देखिये, आत्मप्रशंसा करना मेरी आदत नहीं है।' दार्शनिक न कहा।

'और दुनिया का सबसे बड़ा मूर्ख ?' नेताजी ने फिर पूछा।

'मेहमान या सामनेवाले की निंदा करना भी मेरी आदत नहीं है,' दार्शनिक ने गंभीरता से कहा।

०००

किसी व्यक्ति ने अपने लेखक मित्र से पूछा, 'आप कैसे कहते हैं कि आपके लिखने-पढ़ने में आपकी पत्नी का काफी सहयोग प्राप्त है, जबकि मुझे मालूम हुआ है कि आपकी पत्नी बिल्कुल ही पढ़ी-लिखी नहीं हैं।'

'अरे भाई, जब वह मायके चली हैं, तभी तो मैं कुछ लिख-पढ़ पाता लेखक ने कहा।

०००

सरकारी वकील ने ग्रामीण ग पूछा, 'तुम्हें पूरा यकीन है कि तुम झ बोल रहे हो।'

'जी हां, हुजूर, जब मेरे वकील और आप जैसे लोग यहां मौजूद भला बताइये मुझे झूठ बोलने जरूरत ?' ग्रामीण ने कहा।

०००

एक नेताजी का विवाह होने था। उन्होंने अपने पी. ए. से आग महीने के सारे कार्यक्रम रद्द कर कहा। फिर एक दिन पूछा, 'तुम्हें रद्द करने में कोई परेशानी तो नहीं

'कोई खास नहीं, लेकिन एक से बहुत बहस करनी पड़ी, क्यों बराबर कहे जा रही थी कि अगले उसका विवाह आपके साथ है।' पी बताया।

—डा. झूल

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुशी मार्ग, बंबई-४०० ०
१के लिए प्रकाशित तथा श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास म
बंबई-४०० ०० में मुद्रित।

अप्रैल : १९८८
ूल्य : रु. ४.००

भवन की पत्रिका ‘भारती’ से प्रेरि

नवनीत

हिन्दी डाइजेस्ट

अप्रैल 1988

विश्व है हमारा कैनवास...

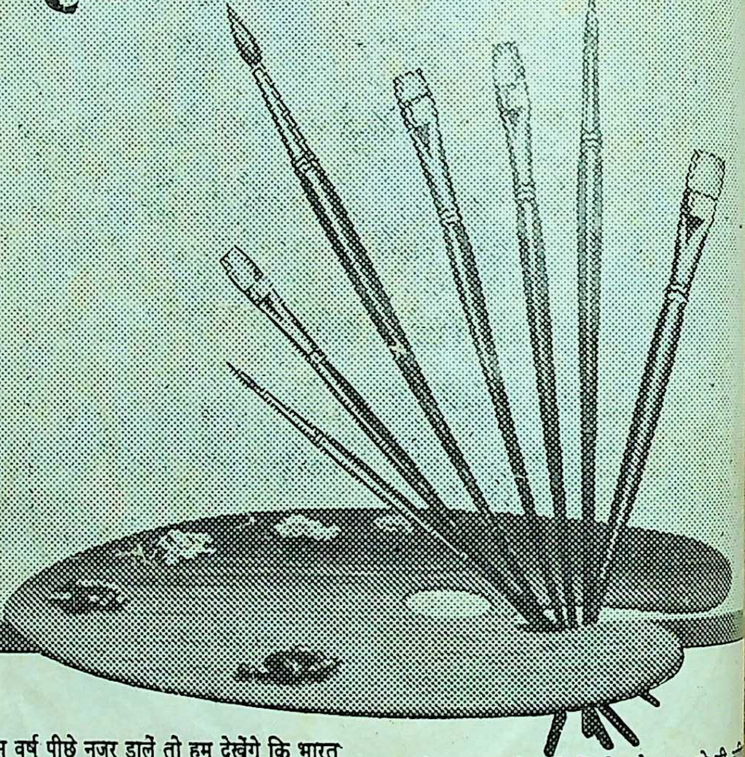

यदि चालीस वर्ष पीछे नजर डालें तो हम देखेंगे कि भारत तब पूरी तरह विदेशी डाइज़ पर निर्भर था. और तब तक इस क्षेत्र में अतुल ने कदम नहीं रखा था. स्वदेशी डाइज़ के उत्पादन क्षेत्र में पहल हमने की... एक श्रद्धांजलि के रूप में, जो हमारे संस्थापक स्वर्गीय श्री कस्तूरभाई लालभाई की दूरदृष्टि को समर्पित थी.

आज अतुल न केवल डायस्टफ़ की विशाल श्रेणी का उत्पादन करते है बल्कि बुनियादी रसायन, डायस्टफ़ के माध्यम, फार्मास्युटिकल्स तथा कीटनाशकों का उत्पादन करके क्रपड़े, चमडे, कागज़, हाथ से बने कपड़े, पिग्मेंट, पेट्रोलियम, जूट तथा साबुन जैसे विविध उद्योगों में देश को आत्मनिर्भर बनाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे है

अपनी १०० करोड़ की बिक्री और १० से भी करोड़ रुपये के निर्यात द्वारा तेज़ी से विकास की अग्रसर है. हमेशा उत्तम क्वालिटी के उत्पादन तैया करना ही हमारा उद्देश्य है जिसे हम पूरा करते है आर एंड डी विभाग की सहायता से.

भारत में उद्योगों के कदम तीव्र गति से विकास के अग्रसर है. और अतुल राष्ट्र की उपलब्धियों में सहभागी रहा है.

THE
ATUL®
PRODUCTS LTD.

अतुल ३९६०२०, गुजरात, इंडिया, टेलेक्स : ०१७३ २३२
फोन : ATUL ६१ से ६५. टेलीग्राम : TULA ATU

15/4/88

पत्र-दृष्टि

अभी हाल ही में मैंने अपनी विदेश-यात्रा के दौरान इंग्लैंड के भारतीयों को जब **नवनीत** पढ़ते पाया तो उनसे पूछा कि इसमें ऐसी क्या विशेषता है ? उत्तर में सभी ने कहा, **नवनीत** हमें भारत की दार्शनिकता, आध्यात्मिकता तथा ऐतिहासिकता से परिचित कराती है । हम दूर देशों में रहकर भी इस पत्रिका के माध्यम से अपने भारत से मिलते रहते हैं । इसमें कुछ भी घटिया नहीं होता । यदि यह अंग्रेजी में छपने लगे तो अनेक विदेशी पत्रिकाओं से भी अधिक लोकप्रिय हो जाये । आप हमारी बात उसके संपादकों तक पहुंचा दें ।'

अनेक मौलिक लेखों से सुसज्जित **नवनीत** का फरवरी अंक विदेशों में बसे भारतीयों की उपरोक्त राय की कसौटी पर खरा उतरा है । मेरे विचार से तो वह हिंदी की एकमात्र ऐसी पत्रिका है, जो न केवल भारत, बल्कि संसार भर में जो कुछ भी सत्य, शिव, सुंदर के अंतर्गत है, उसे बिना किसी पूर्वाग्रह के प्रकाशित करती रहती है । किन्हीं सीमाओं में वह नहीं बंधी है ।

आपको तथा आपके समस्त सहयोगियों को नववर्ष की शुभ कामनाओं सहित बधाई । **–मुकुंददास, जबलपुर म. प्र.**

ooo

नवनीत के फरवरी अंक में बहुत ही ज्ञानवर्द्धक और सार्थक सामग्री पढ़ने को मिली । 'स्वास्थ्य-रक्षा एवं सुधार का उपाय' लेख उपयोगी एवं सारगर्भित है । अरुण चाको की विश्व के सबसे ठंडे युद्ध-क्षेत्र में पाक के नापाक इरादों तथा भारतीय सैनिकों की वीरता पर नवीनतम रिपोर्ट प्रभावशाली थी । भारत के गौरव 'विश्वनाथन्' के बारे में लेख देकर खेल प्रेमियों को एक अच्छा लेख पढ़ने को मिला ।
–सतीश एलिया 'बेबाक', गंजबासोदा, म.प्र.

ooo

आपके **नवनीत** की ख्याति न जाने कब से सुनता आ रहा हूं । दीपावली के अंक के बाद यह फरवरी अंक पा सका हूं । खासी ज्ञानवर्द्धक सामग्री संजोयी गयी है । सांस्कृतिक और साहित्यिक विषयों पर ऐसी सामग्री संभवत: किसी अन्य पत्रिका में न मिले । ग्रंथलोक में आप नव प्रकाशित पुस्तकों पर समीक्षा देकर उपयोगी कार्य कर रहे हैं । एक अन्य सुझाव है कि आप प्रत्येक अंक में किसी न किसी भारतीय भाषा के सर्जक साहित्यकार से

साक्षात्कार करवायें ।

—डा. आर. बी. सिंह, चंडीगढ़

०००

नवनीत का पुराना ग्राहक हूं । फरवरी '८८ अंक तीन-चार बैठकों में समाप्त कर डाला । एक से एक ज्ञानवर्द्धक और विचारोंत्तेजक रचनाएं पढ़ने को मिलीं ।

—आनंदप्रसाद स्वदेशी, पटना

०००

नवनीत का पुराना पाठक हूं । किंतु व्यस्ततावश अभी तक पत्र नहीं डाल सका । बरेली से शाहजहांपुर जाते हुए मार्ग में **नवनीत** का फरवरी अंक आद्योपांत पढ़ डाला । 'क्यों की जाती है शिवलिंग की पूजा' लेख के अंतर्गत गणेशकुमार पाठक ने सर्वथा नवीनतम जानकारी दी है । लेख 'स्तालिन की परालौकिक रुचि' तथा 'कैसे-कैसे धोखे' इस अंक की श्रेष्ठतम रचनायें हैं । मलिका (ऐतिहासिक कथा) दिल पर असर-सी कर गयी । कथाएं भी स्तरीय रहीं ।

'दो क्षण हंस लें' का हास्य नवीन नहीं था, पुराने चुटकुलों पर मुलम्मा चढ़ा दिया गया है । **—शराफत अली खान, बगरैन, बदायूं, उ. प्र.**

०००

फरवरी १९८८ का आकर्षक अंक पढ़ गया । वैसे भी मैं **नवनीत** का नियमित पाठक तथा संग्रहकर्ता हूं । **नवनीत** साहित्यिक पत्रिकाओं के मंच पर अप्रतिम है । **नवनीत** परिवार को बधाई ।

—रमेशचंद्र सिंह, जमशेदपुर, बिहार

मैंने आपकी पत्रिका **नवनीत** अ
'८७ से पढ़नी शुरू की है । मुझे यह प
बहुत ही पसंद आयी है । फरवरी अं
सुधाजी की कहानी 'कुलांश' बहुत
आयी । आपसे अनुरोध है कि 'पत्र-मि
कार्यक्रम भी शुरू करें । धन्यवाद।

—सुभाष स्वामी, सोलन-१७४

०००

नवनीत का फरवरी '८८ अंक
स्टाल पर देखा और खरीदा । जैसे
गया, सामग्री मन में रमती गयी ।
अंक में प्रकाशित लेख 'कान की वैज्ञा
देखभाल', 'टिटेनस की विभीषिका'
'सर्दी-जुकाम से कैसे बचें' काफी ज्ञान
रोचक व उपयोगी हैं । इन रचना
जन साधारण को भी लाभ मिलेगा ।
अतिरिक्त 'क्यों की जाती है शिवलि
पूजा' नामक लेख भी प्रशंसनीय
कृपया इस प्रकार की रचनाएं
प्रकाशित करें । और हां ! इस त
अंक जब भी निकाला करें तो अधिक
छपवाएं, वरना नियमित पाठक को
मूल्य पर खरीदने तक की नौब
सकती है । **—सुशीलकुमार कर्ण 'अं**
छपरा, सारण-८४

०००

नवनीत का मुंशी शताब्दी अंक
जानकारीपूर्ण है । गरिमामंडित मु
तथा मुंशीजी (कन्हैयालाल माण
मुंशी) के संबंध में विस्तृत, किंतु
सामग्री से समन्वित लेख इसे सं

बनाते हैं । उनके संबंध में चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य, डा. राजेंद्रप्रसाद, डा. राधाकृष्णन, रामधारी सिंह दिनकर तथा न्यायाधीश श्री भगवती के चिंतनपूर्ण विचार उनके बहुआयामी व्यक्तित्व को रेखांकित करते हैं । 'मुंशीवाणी' स्तंभ में जीवन, साहित्य तथा संस्कृति के संबंध में एवं सामयिक समस्याओं पर उनके प्रेरक विचार देकर आपने स्तुत्य प्रयास किया है ।

इस अंक में स्वप्निल तिवारी का गीत 'जिंदगी', डा. सुरेन्द्रबहादुर सिंह का 'नववर्ष' पर गीत तथा धनेश्वर प्रसाद की कहानी 'उसका बेटा' भी अच्छी रचनाएं हैं ।

—आदर्श प्रहरी, उरई, उ. प्र.

○○○

नवनीत का मुंशी शताब्दी अंक मुंशीजी के बहुआयामी व्यक्तित्व की छोटी झलक का प्रयास प्रशंसनीय है । 'मुंशीवाणी' से उनके व्यक्तित्व का दूसरा पहलू उभरता है । हां, नये वर्ष की अगवानी का नया ढंग देख अचंभित रह गया । संदर्भ 'नये वर्ष का नया प्रभात' तथा 'नये साल की नयी सुबह' । आपकी तात्कालिक सृजनशील उर्वर मस्तिष्क की सराहना करते हुए मैं आपके साथ मिलकर नये वर्ष के नये प्रभात का हार्दिक स्वागत करता हूं ।

—प्रकाश पालीवाल, अकलतरा, म. प्र.

○○○

नवनीत का मुंशी शताब्दी अंक पढ़ा । के. एम. मुंशी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर इसमें बहुत कुछ मिला । पृष्ठ ६५-६६ पर दर्शाया है कि मुंशीजी ने वकालत भुलाभाई देसाई के जूनियर के रूप में शुरू की थी, जबकि मैंने मुंशीजी के शब्दों में ही विद्यार्थी जीवन में पढ़ा था कि उन्होंने वकालत जमय्यतराम काका के जूनियर के रूप में आरंभ की थी ? **—सर जौनसारी,**

विकासनगर, देहरादून, उ. प्र.

लेखकों से निवेदन

प्रतिदिन **नवनीत** में प्रकाशनार्थ बहुत-सी डाक आती है । कई बार अनुरोध करने पर भी कुछ लेखक वापसी के लिए रचना के साथ पर्याप्त टिकट लगा लिफाफा नहीं भेजते । भविष्य में ऐसी रचनाओं को न लौटाया जायेगा और न उन पर प्रकाशनार्थ विचार ही किया जायेगा । **—संपादक**

○○○

नवनीत हिंदी डाइजेस्ट का जनवरी १९८८ के अंक को मुंशी शताब्दी अंक के रूप में प्रकाशित करने के लिए मेरी बधाई स्वीकारें । भारतीय मनीषा के प्रकांड विद्वान्, साहित्यकार एवं शिक्षाविद का कुछ साहित्य पढ़ने की लालसा हृदय में उत्कंठित हो रही है ।

—संजयकुमार सिंह, उरई, उ. प्र.

○○○

जनवरी '८८ के अंक में शैलजा मीतू रचित 'दूसरा मन' कहानी पढ़ी । कहानी

(शेषांश पृष्ठ ६ पर)

नवनीत

संस्थापक कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल ने
नवनीत : स्थापना १९
संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग } किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ३७, अंक ४
अप्रैल १९

पत्र-वृष्टि	
सपना मुत्तुकृष्णन्	संजीव निगम
राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी	गिरिजाशंकर त्रिवेदी
राष्ट्रकवि को श्रद्धांजलि	मोहन चन्द्र मन्टन
एक वंश-परंपरा : उसका अंत और पेईचिंग की पीड़ा	रामपाल सिंह
कद्दू की भाजी और गांधीजी	गो. प्र. वंशी
मुक्तक	हरदेव सिंह भदौरिया
कथा राम की, व्यथा मानव की—१९	हरीन्द्र दवे
देवदास गांधी	सुरेश सिंह
सांस्कृतिक मंच	. . . .
पैदा होना पूत का पहली अप्रैल को	निरंकुश
व्योहार राजेन्द्रसिंह	गिरिजाशंकर त्रिवेदी
गीत	बालकृष्ण मिश्र
प्रार्थना	. . . .
निर्बल के बल राम	दुर्गाप्रसाद मंडेलिया
स्वामी अखंडानंद से वार्ता	जयन्त कृष्ण दवे
गीत	कमलापति मिश्र
नुस्खा (हास्य-व्यंग्य)	कन्हैयालाल कपूर
अथाह लालसा (कविता)	शैलेन्द्र सिंह चौहान
शान्ति का प्रतीक : कबूतर	अभिनव तैलंग

व इतिहास में मूर्खोत्सव	जितेन्द्रशंकर बजाड़	५७
न्द्र हिरवानी	आदित्य	६०
पुतली (कहानी)	दीपा त्यागी	६५
तिदूत मार्टिन लूथर किंग	अतुल गोस्वामी	७०
मुक्त पक्षी (कहानी)	शारदा त्रिवेदी	७३
वैज्ञानिक परिदृश्य	शुकदेव प्रसाद	७९
तंकवाद (कहानी)	डा. परमलाल गुप्त	८३
श्वत प्रश्न (कविता)	शास्त्री श्रीधर शुक्ल	८७
त क्या है ? दीवार या द्वार ?	वी. आर. कृष्ण अय्यर	८८
शा देखो (नाइजीरियन कविता)	रोमेनस एन इगुडु	९३
ारा इतिहास (नाइजीरिया कविता)	मवेला सोन दिपाको	९४
: पत्रों के माध्यम से	रामनारायण उपाध्याय	९५
की (कहानी)	जोसेफ मेकवान	९७
मी शरणम् आयप्पा	सुलक्षणा	१०४
देवीजी की व्रजभाषा कविता	डा. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक'	१०७
शों की दीवार (पाकिस्तानी कहानी)	जेबा बदर	१०८
ाषित	. . . .	११९
र प्रेम-दीप (सार-संक्षेप)	इरविन स्टोन	१२०
तुम्हारी रस्सियां छोटी पड़ेंगी (कविता)	कुंअर बेचैन	१३१
यलोक	दिव्यदर्शी, अनंत, शाहीन	१३२
ाजी (अंग्रेजी कहानी)	मार्क एस. लिट्विन बोस्टन	१३७
त	शतदल	१३९
ा मुन्ना (कविता)	रामेश्वरदयाल दुबे	१४१
क-संगीत आल्हा गायन का आयोजन	प्रो. रामनिवास मिश्र	१४२
क्षण हंस न लें ?	सौगानी, श्रीवास्तव, टंडन	१४४

आवरण चित्र : सुजाता बजाज
चित्र-सज्जा : ओके, शेणै, सतीश चव्हाण, एम. चंदर।
र्यालय : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई-७ **फोन :** ८११४४६२

चित्र : सतीश चव्हाण

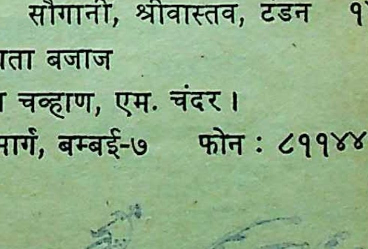

(पृष्ठ ३ का शेषांश)

बहुत पसंद आयी। स्नेह व वात्सल्य से पूर्ण यह कहानी आद्योपांत हृदय को छूती है। साथ-साथ हम आपके चयन की दाद देते हैं, जिसके कि हम हमेशा कायल रहे हैं।

—चंद्रशेखर तिवारी, रायबरेली, उ. प्र.

०००

नवनीत की जितनी प्रशंसा करूं, कम ही है। पहली दफा इसे पढ़ा और इसके तमाम लेख, कविता, संस्मरण तथा अन्य स्तंभ रुचिकर एवं ग्राह्य लगे।

नवनीत का मैं स्थायी ग्राहक बनूंगा और इसे साहित्य प्रवाह में अपना साथी समझूंगा। फरवरी '८८ के अंक ने मुझे उसके स्नेह से जोड़ दिया है।

—ए. एन. अरुण, मुजफ्फरपुर,

०००

नवनीत का फरवरी '८८ आशा के अनुरूप था। नाम के **नवनीत** पाठकों को प्राप्त होता वतावादी चिंतक गुरु नानक' लेख अच्छा लगा। लेख में नानक मनोभावों को अच्छे ढंग से प्रस्तु गया है। हमारी शोधसंस्था क सदस्य **नवनीत** को पढ़ता है और समझता है। **—बलवंत सि**

झालावाड-३२६००१,

☐

With Best Compliments From :

GEEKAY EXIM
PRIVATE LIMITED

Rahimtools House, 7, Homji Street,
Fort, BOMBAY-400 001.
Telephone : 286 0281.
Telex: 011-5206 GEPL IN * Cable : Quicklink, Bombay-1.

THE WORLD IS OUR MARKET

IMPORT
* Metal Scrap
* Paper Waste
* Chemicals
* Pulses
* Timber
* Indenting
* Agency

EXPORT
* Engineering Goods
* Chemicals
* Pharmaceuticals
* Spices & Commodities
* Feedstuffs
* Processed Foods
* Sports Goods
* Handicrafts
* Garments & Fabrics
* Leather Goods
* Turnkey Projects

सपना मुत्तुकृष्णन् !

□ संजीव निगम

ना, एक बच्ची है ।
रे पड़ोस की एक छोटी-सी
दर बच्ची है ।
ना बोल सकती है,
र बोलती भी है ।
, सपना तमिल नहीं बोलती,
ही अंग्रेजी,
दी भी नहीं बोलती
र न ही गुजराती ।
र भी, बोलती है सपना
र हम समझते हैं कि वह
या बोलती है ?

दी, तमिल, अंग्रेजी, गुजराती
ब मिलाकर,
पने मासूम विचारों की छोटी-सी
टली खोलती है;
र हम समझते हैं, सब समझ जाते हैं ।
षा का कोई बंधन
स पर लागू नहीं होता ।
षा का परहेज
सकी समझ से बाहर है ।
री भाषा भी उसके लिए
तनी ही अपनी है,
तनी उसके जन्म के बदले
ससे जुड़ने वाली भाषा ।

०००

देखो इस समय,
चुप रहो तुम ।
ये वक्त तुम्हारे बोलने का नहीं है ।
आज तक तुम अपनी भाषा से
उगलते रहे अलगाव ।
शब्दों के, भावों के
इस विराट समुद्र को मथकर
निकालते रहे कालकूट ।

अब तो चुप रहो !
और देखो
देश का सुखद सपना कैसे
अपने छुटपन में मिठास घोल रहा है !

—देना बैंक, महाप्रबंधक कार्यालय,
२ री मंजिल, देनालक्ष्मी भवन, आश्रम रोड,
अहमदाबाद-३८०००९

□

जन-जागरण के ओजस्वी गायक

राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी

□ गिरिजाशंकर

स्वाधीनता-संग्राम और स्वातंत्र्योत्तर काल के सर्वाधिक सशक्त कवि पद्मश्री सोहनलाल द्विवेदी के निधन से एक युग की समाप्ति हो गयी ।

उनकी राष्ट्रीयता से ओतप्रोत कविताओं ने आजादी की लड़ाई में चमत्कारिक प्रभाव पैदा किया था । उन्हें पढ़कर युवक स्वाधीनता-संग्राम में जूझने के लिए उतावले हो उठते थे । गांधीजी पर लिखी उनकी रचनाएं लोग प्रभात फेरियों में गाते थे। वे गांधीजी को युगावतार मानते थे । उन्होंने लिखा था :

चल पड़े जिधर दो डग, मग में
चल पड़े कोटि पग, उसी ओर
पड़ गयी जिधर भी एक दृष्टि
गड़ गये कोटि दृग उसी ओर।
जिसके सिर पर निज धरा हाथ
उसके सिर-रक्षक कोटि हाथ
जिस पर निज मस्तक झुका दिया
झुक गये उसी पर कोटि माथ।
हे कोटि चरण हे कोटि बाहु
हे कोटि रूप हे कोटि नाम
तुम एक मूर्ति, प्रतिमूर्ति कोटि
हे कोटि मूर्ति तुमको प्रणाम।

स्वाधीनता के संघर्ष में उन्हें जेल भी जाना पड़ा । एक संपन्न परिवार हुए भी उन्होंने देश के लिए झेलीं । देश का राष्ट्रीय रंगमंच आपकी ओजस्वी वाणी से गूंजता उनकी रचनाएं जहां किशोरों मे भरती थीं, वहीं नवयुवकों में देश मर मिटने का जोश जगाती थीं। लिए समर्पित हर योद्धा उनका था । समग्र देशवासियों को जा लिए आह्वान करती हुई उनकी पंक्तियां दृष्टव्य हैं :

जागो हे पांचाल निवासी
जागो हे गुर्जर मद्रासी
जागो हिंदू मुगल मरहठे
जागो मेरे भारतवासी
जननी की जंजीरें बजतीं
जगा रहे कड़ियों के छाले।

बाल-साहित्य के लेखक के रू उनका महत्वपूर्ण योगदान है। उन्हों पत्रिका 'बालसखा' का संपादन था। राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत कट्टरी गांधीवादी थे । उनका कहना गावों के विकास के बिना देश संभव नहीं होगी, इसलिए वे देश में किसानों के उत्थान के लि

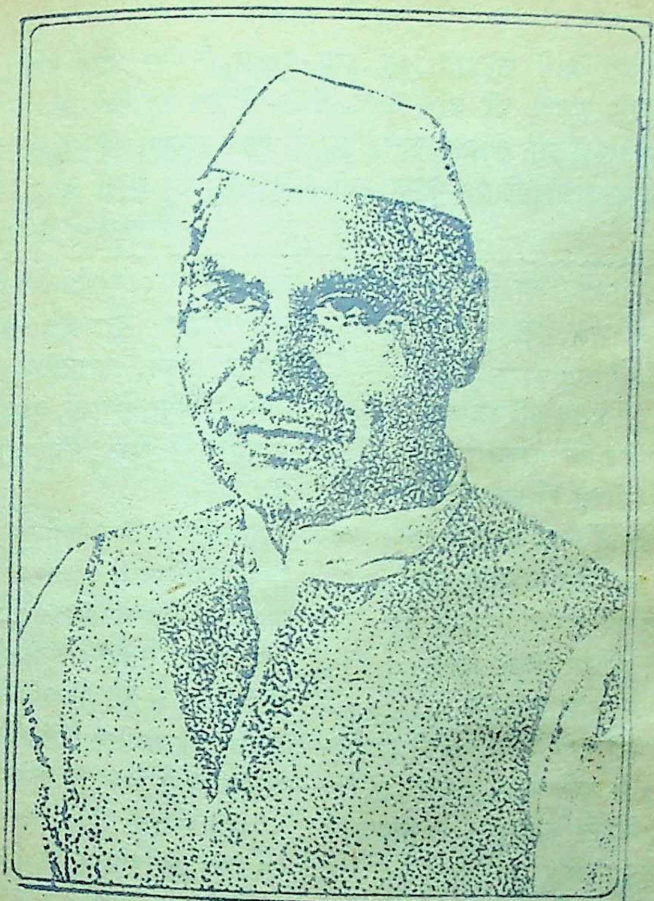

जन्म : २८ फरवरी १९०६ निधन : १ मार्च १९८८

त्नशील रहते थे । उन्होंने अपनी 'किसान' ना में लिखा है :

ये रंग महल ये मान भवन,
ये लीलागृह, ये वन-उपवन,
ये क्रीड़ागृह, अंतर प्रांगण,
रनिवास खास, ये राज सदन,
पहरेदारों की खर कृपाल
ये आन-बान ये सभी शान ।
तेरी मेहनत पर किसान ।
तेरी ताकत पर किसान ।

खादी के परिवेश में उनकी देह यष्टि-सदैव शोभित रहती थी । कद्दावर शरीर, सुंदर सौम्य-मुखाकृति और विशाल ललाट वाले मस्तक पर गांधी टोपी हर समय शोभा पाती थी । उनका व्यक्तित्व उनकी वाणी की तरह ही अत्यंत प्रभावशाली था ।

दांडी-यात्रा

सबसे आगे फहराता था, जय-ध्वजा तिरंगा ध्वज प्यारा.
पीछे बजती थी बीन मधुर, वंशी-सितार का स्वर न्यारा!
पूछा तरुओं ने आसपास 'यह है किस आसव की मात्रा?'
तब काली कोयल कुहुक उठी—'यह बापू की दांडी यात्रा!'

—सोहनलाल द्विवेदी

उनके खादी-गीत की निम्न पंक्तियां उनके मन-मस्तिष्क पर सार्थक दृष्टिगोचर होती थीं :

खादी की रजत-चंद्रिका जब
आकर तन पर मुस्काती है।
तब नवजीवन की नई ज्योति
अंतस्तल में जग जाती है।
खादी का ताज चांद-सा जब
मस्तक पर चमक दिखाता है
कितने ही अत्याचार ग्रस्त
दीनों के त्रास मिटाता है।

२८ फरवरी १९०६ को बिंदकी (फतेहपुर, उ. प्र.) में जन्मे पं. सोहनलाल द्विवेदी ने कानपुर के चिकित्सालय में जीवन के गौरवपूर्ण ८२ साल पूरे कर १ मार्च १९८८ को अंतिम सांस ली।

काशी हिंदू विश्वविद्यालय से एम. ए. करके उन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय से एल. एल. बी. किया था। उनकी पहली पुस्तक 'दूध-बताशा' १९३० में प्रकाशित हुई थी। उसमें लगभग १५ बाल रचनाएं थीं। उनकी सुप्रसिद्ध रचना 'भैरवी' १९४१ में प्रकाशित हुई। उन्होंने दैनिक 'अधिकार' का भी संपादन किया था। उनके द्वारा संपादित 'गांधी अभिनंदन ग्रंथ' गांधी पर लिखी गयी संस् उर्दू, बंगला, गुजराती, सिंधी, तमिल, तेलुगू, मलयालम, कश मिया, उड़िया, नेपाली, अंग्रेजी अं कवियों की श्रेष्ठ रचनाओं का ग्रंथ है।

उनकी साहित्य-सेवा के लिए विश्वविद्यालय ने १९७४ में उन्हें और राजस्थान विद्यापीठ उ १९६९ में 'साहित्य चूड़ामणि' नं उपाधियां दी थीं। राष्ट्रपति ने १९७० के गणतंत्र दिवस पर 'प अलंकरण से विभूषित किया था।

ऐसे मनस्वी और तेजस्वी स वरदपुत्र के निधन से हिंदी अपूरणीय क्षति हुई है। हिंदी-ज चिरऋणी रहेगा।

उनकी 'भैरवी', 'वासवदत्ता' 'पूजागीत', 'विषपान', 'युगाधार', और 'चित्रा' आदि रचनाएं हैं। इन्हीं अमर कृतियों के भारत के गौरवशाली अतीत औ त्रता के तपोनिष्ठ नेतृत्व के प्र श्रद्धाभिव्यक्ति हमेशा हर भा हृदय में सम्मान पाती रहेगी।

□

राष्ट्रकवि को श्रद्धांजलि

— मोहन चन्द्र मन्टन —

[इन पंक्तियों के रचयिता श्री मन्टन पं. सोहनलाल द्विवेदी के कई वर्षों तक छात्र रहे हैं। अपने गुरु के प्रति यहां प्रस्तुत है उनकी काव्यांजलि]

युग-युगों से देश जो
सोया हुआ था
आत्म विस्मृत–
चेतना खोया हुआ था,
'भैरवी' के स्वर गुंजा–
उसको जगाया।
देश से अपने–
तिमिर छाया भगाया,
आज वह ही सो गया है
शांतिमय चिर नींद में–
होकर समाधित ।। १ ।।

०००

सुनाई ऐसी प्रभाती–
जागृति - स्वर जो गुंजाती,
राष्ट्रवीणा के हुए सब तार ढीले
मौन कम्पन से न ध्वनि
अब और आती।
सोहनी मन मोहनी कविता तुम्हारी
वन्दना के किन स्वरों में–
आज अपने स्वर मिलाएं ?
दे चुके आशीष अगणित–
क्या उन्हें देकर चुकाएं ।। २ ।।

०००

लें विदा सबसे–
मुखर पर आज भी वाणी तुम्हारी।
युग-युगों तक प्रेरणा देती रहेगी
बन अधारी–
श्वास की प्रश्वास की विश्वास की
होकर हमारी ।। ३ ।।

०००

राष्ट्रकवि हे !
राष्ट्र का तुम सतत अभिनन्दन रचाये,
गंध गांधी की लिये–
मकरन्द छन्दों में बचाये
राष्ट्र की श्रद्धांजलि यह–
भावना तुमको समर्पित
कीर्ति गौरवमय तुम्हारी
देश जिससे रहे गर्वित ।। ४ ।।

–ए-बी-९०४, सरोजिनी नगर, नयी दिल्ली-११००२३

उसका अंत और पेइचिंग की पीड़ा

□ रामपाल

च्यांग काई शेक के पुत्र और ताइवान के राष्ट्रपति च्यांग चिंग कुओ, ७७, की गत २३ पौष (१३ जनवरी) को ताइपेई में मृत्यु हो गयी। इसके साथ एक लंबे इतिहास, एक परंपरा और एक वंश के शासन का अंत हो गया। ताइवान, द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, जापान के ५० वर्ष के शासन से मुक्त हुआ और चीन के अधिकार में आया था। ताइवानियों ने १९४७ में अपने ऊपर मुख्य भूमि के शासन का तीव्र विरोध किया और चीन के शासक च्यांग काई शेक ने ताइवानी विद्रोह को बड़ी निर्ममता से कुचला था। हजारों ताइवानी मारे गये थे। १९४९ में जब मुख्य भूमि पर च्यांग काई शेक के सैनिक माओ झेदुंग की जन मुक्ति वाहिनी से हार गये, तब उन्होंने अपनी सेना और कुमितांग पार्टी के नेताओं और कार्यकर्ताओं के साथ मुख्य भूमि छोड़ कर ताइवान में शरण ली।

ताइवान की ८५ प्रतिशत आबादी ताइवानी है पर द्वीप पर शासन मुख्य भूमि से आये च्यांग काई शेक का रहा। उन्होंने अपने को चीन का शासक घोषित किया और मुख्य भूमि को कम्युनिस्टों से मुक्त कराने का संकल्प किया।

वर्ष १९७५ में जब च्यांग का
की ८५ वर्ष की वय में मृत्यु हो ग
सत्ता उनके पुत्र च्यांग चिंग कुओ
आयी। अब च्यांग चिंग कुओ
से ताइवान पर ४० वर्ष से चले
मुख्य भूमि के शासन का अंत हो
च्यांग चिंग कुओ ने १९८५ में
की थी कि मेरे बाद मेरा उत्तरा
च्यांग परिवार का कोई सदस्य नहीं
अपनी मृत्यु से लगभग एक सप्ता
च्यांग चिंग कुओ से अपने निवा
पार्टी और प्रशासन के वरिष्ठ
कारियों को बुलाया था। इनमें उप
ली तेंग ह्वी और प्रधान मं
कुओ व्हा भी थे। अपने सबसे छो
च्यांग शियाओ युंग के सामने च्यां
कुओ ने अपनी राजनैतिक वसीयत लि
जिसमें कहा गया कि ... 'ईश्वर
इस धरती पर मेरे जीवन का अंत क
मेरी कामना यही होगी कि सर्व
लोकतंत्री विकास के कार्यक्रम को
किसी व्यवधान के आगे बढ़ाया

च्यांग चिंग कुओ का जन्म २८
(१८ मार्च) १९१० को चीन के

झेजियांग प्रांत में हुआ था । १९११ में सन यात सेन ने चीन के मांचू राजवंश के विरुद्ध विद्रोह का नेतृत्व किया और गणराज्य की स्थापना की । च्यांग चिंग कुओ का शैशव चीन की इसी राज्य क्रांति की छाया में बीता । किशोरावस्था में उन्होंने चीनी राष्ट्रवाद को उभरते देखा । बीस के दशक में उन्होंने अपने पिता च्यांग काई शेक को राष्ट्रपति सन यात सेन के उत्तराधिकारी के रूप में अपने आपको जमाने के लिए संघर्ष करते देखा । इस राष्ट्रीय उभार में किशोर च्यांग चिंग कुओ भी शामिल हुए । उन दिनों वे पेइचिंग में पढ़ते थे । चीन के आंतरिक मामलों में साम्राज्यवादियों के हस्तक्षेप के विरोध में आयोजित छात्र प्रदर्शन में भाग लेने के कारण उन्हें पुलिस ने पकड़ लिया और पेईचिंग पर जिस युयुत्सु सामंत का नियंत्रण था, उसने उन्हें कुछ दिन के लिए कैद में डाल दिया । इस घटना के बाद च्यांग चिंग कुओ ने मास्को जाकर वहां अध्ययन करना तय किया । १९२५ में मास्को जाकर वे सन यात सेन विश्वविद्यालय (बाद में इसका नाम बदलकर लेनिन विश्वविद्यालय कर दिया गया) में भर्ती हो गये । कुछ वर्ष उन्होंने लेनिनग्राद स्थित सैनिक और राजनैतिक संस्थान में भी अध्ययन किया ।

लेनिन के निधन के बाद रूस में स्तालिन और ट्राट्स्की के बीच जो राजनैतिक विवाद शुरू हुआ, उसमें च्यांग ने ट्राट्स्की का पक्ष लिया । इधर चीन में भी सन यात सेन की मृत्यु के बाद सत्ता पर च्यांग काई शेक की पकड़ मजबूत हो गयी थी । कम्युनिस्टों से च्यांग काई शेक का टकराव हुआ और १९२७ में कैण्टन हत्याकांड हुआ जिसमें, कहा जाता है कि, तीन लाख व्यक्तियों की हत्या की गयी । इस कांड के बाद सोवियत रूस में मौजूद चीनी कम्युनिस्ट कार्यकर्ता च्यांग चिंग कुओ को संदेह की दृष्टि से देखने लगे । वे स्वदेश लौटना चाहते थे, पर उन्हें रोक लिया गया । च्यांग चिंग कुओ को सोवियत कारखानों, सामुदायिक फार्मों और साइबेरिया की सोने की खानों में साधारण मजदूर की तरह काम करना पड़ा । १९२७ और फिर १९३५ में उनको अपने पिता च्यांग काई शेक के विरुद्ध पत्र लिखने को बाध्य किया गया । ये पत्र 'प्रावदा' में प्रकाशित हुए ।

च्यांग ने बताया था कि इन सब बातों से कम्युनिज्म के प्रति मेरा मोह भंग हो गया । चीन लौटने के बाद वे अक्सर कहा करते थे कि मैंने अपना खून-पसीना बहाकर कम्युनिज्म की असलियत को जाना और परखा है । जो भी हो, पर 'प्रावदा' में च्यांग काई शेक के विरुद्ध छपे पत्रों के कारण उनकी सौतेली मां सुंग मेई लिंग ने (श्रीमती च्यांग काई शेक), जिनसे च्यांग काई शेक ने १९२७ में विवाह किया और जो श्रीमती सन यात सेन की सगी बहन थीं, कभी क्षमा नहीं किया । शायद

यही वजह थी कि च्यांग काई शेक की मृत्यु के बाद श्रीमती च्यांग काई शेक सौतेले बेटे के साथ ताइवान में रहने के बजाय अमरीका चली गयीं । वे च्यांग काई शेक के जन्म शताब्दी समारोह के समय १९८६ में ताइपेई लौटीं तो पर राष्ट्रपति भवन में रहने के बजाय ताइपेई के उपनगर शीलिन में पुराने मकान में विरक्त की तरह दिन बिताने लगीं ।

च्यांग चिंग कुओ ने रूस में रहकर यदि कम्युनिज्म की सच्चाई को पहचाना तो उन्होंने एक पार्टी के शासन और युवकों को गोलबद्ध करके एक दलीय और एक व्यक्ति की सत्ता को स्थायी बनाने की कला भी सीखी । ताइवान पहुंचकर च्यांग काई शेक ने १९४९ में च्यांग चिंग कुओ को सेना के राजनैतिक विभाग का निदेशक नियुक्त किया । इस हैसियत से च्यांग चिंग कुओ ने कई गुप्तचर संस्थाएं खड़ी कीं, जो कम्युनिस्टों का पता लगाने और उन्हें खत्म करने के साथ आपस में भी एक दूसरे पर नजर रखतीं और उनकी काट करती रहती थीं । कम्युनिस्टों का सफाया करने के साथ च्यांग चिंग कुओ की नजर उन मूल ताइवानियों पर भी रहती थी जो द्वीप पर मुख्य भूमि से आये लोगों के शासन और १९४७ में हजारों ताइवानियों की हत्या से जले-भुने बैठे थे । च्यांग चिंग कुओ के गुप्तचर असंतुष्ट ताइवानियों को रात के अंधेरे में उठाकर ले जाते थे, फिर अरसे बाद या तो उनका पता किसी जेल में चलता था या
हमेशा के लिए गायब कर दिये जाते

गुप्तचर एजेंसियों के अतिरिक्त
चिंग कुओ ने ताइवान में युवा दल
किया । यह कुमितांग पार्टी का
दस्ता था और इसका काम ताइवान
युवावर्ग में कुमितांग शासन के विरुद्ध
प्रकार के विरोध को रोकना था।
के बाद दूसरे प्रयोग में सफलता
करते हुए च्यांग चिंग कुओ सत्ता की
पर एक डंडे से दूसरे पर चढ़ते हुए
मंत्री और फिर प्रधान मंत्री के पद
पहुंचे । १९७५ में अपने पिता च्यांग
शेक की मृत्यु के बाद वे १९७८ में
में स्थापित चीन गणराज्य के
बने । उस समय सत्ता के सभी कोनों
बैठे नेता और सैनिक अधिकारी
काई शेक के सहयोगी थे । अपने इन
'ताऊ' और 'चचा' को प्रसन्न
उन्होंने सत्ता पर अपनी पकड़ मजबूत
अपने पिता की तरह भय से
पाने के बजाय उन्होंने सबको स्नेह
सम्मान देकर अपना बनाने की
की । वे जानते थे कि ताइवानियों
अपना बनाने का तरीका यही है कि
साथ एकाकार हुआ जाय और
तथा डर से राज करने के बजाय
धानिक सुधारों का रास्ता अपनाया

पिछले तीन-चार वर्ष से वे ताइवान
सामाजिक राजनैतिक उदारतावाद,
पन और पुनरसंरचना की नीति पर

रहे थे। १९८६ में ताइवान में आम चुनाव के समय उन्होंने लोकतंत्री प्रगतिशील पार्टी के नाम से प्रतिपक्ष को संगठित होकर चुनाव लड़ने का मौका दिया। वर्ष १९८७ के आषाढ़ (जुलाई) मास में उन्होंने ३८ वर्ष से चले आ रहे मार्शल ला को समाप्त कर दिया। नये समाचार-पत्र शुरू करने पर लगी पावंदी खत्म कर दी और ताइवान में रहनेवाले मुख्य भूमि के व्यक्तियों को मुख्य भूमि जाकर अपने सगे-संवंधियों से मिलने की छूट दी। चीन के साथ होनेवाले अप्रत्यक्ष व्यापार को बढ़ने दिया। उनके सुधार कार्यक्रम में सबसे महत्वपूर्ण संकल्प यह था कि देश की युआन (संसद) में मूल ताइवानियों को ज्यादा प्रतिनिधित्व मिले। उनकी मृत्यु के समय ३१३ सदस्योंवाली युआन में इस विधेयक को लेकर गर्मागर्म बहस चल रही थी कि संसद के उन सब बूढ़े सदस्यों को रिटायर कर दिया जाय, जो चीन की मुख्य भूमि के प्रतिनिधि होने का दावा करते हैं और १९४९ से यहां आने के बाद संसद की दो तिहाई सीटों पर कब्जा करके बैठे हैं।

च्यांग चिग कुओ ने ताइवान को एक महान आर्थिक शक्ति के रूप में स्थापित करने के बाद इस संसार से बिदा ली है। १९८७ में ताइवानियों की प्रति व्यक्ति औसत आय ५००० डालर (लगभग ६५,००० रुपये) से भी अधिक हो चुकी थी। १९७५ में देश में प्रति व्यक्ति औसत आय ९५६ डालर (लगभग १२००० रुपये) थी। उनके नेतृत्व में देश की अर्थव्यवस्था में निर्यात को प्रमुखता मिली और देश का विदेशी मुद्रा कोष ७५ अरब डालर तक पहुंच गया। १९८७ में अमरीका के साथ व्यापार-संतुलन ताइवान के पक्ष में था। उस वर्ष आयात के मुकावले १६ अरब डालर का अधिक निर्यात हुआ। अमरीका ने ताइपेई पर दबाव डाला कि वह अपना निर्यात घटाये, जिसके कारण दो वर्ष में अमरीकी डालर के मुकाबले ताइवानी डालर के मूल्य में ४० प्रतिशत वृद्धि की गयी। हाल में ही अमरीका ने ताइवान को मिलनेवाली आर्थिक रियायतें समाप्त कर दी हैं, जिसका मतलब यह है कि अमरीका की दृष्टि में ताइवानी अर्थतंत्र और मुद्रा जापान और पश्चिम जर्मनी के समान सशक्त हो गये हैं।

च्यांग चिग कुओ एक शक्तिशाली ताइवान छोड़कर गये हैं। पर उनके जाने के बाद समस्याएं भी उतनी ही विकराल प्रतीत हो रही हैं। च्यांग काई शेक और फिर च्यांग चिग कुओ ने देश में जो राजनैतिक ढांचा खड़ा किया, वह व्यक्ति प्रधान रहा। नतीजा यह है कि नेता के जाने के बाद अब नेतृत्व का जबर्दस्त संकट पैदा हो गया है। उपराष्ट्रपति ली तेंग ह्वी, ६५, ने राष्ट्रपति का पद ग्रहण किया है, पर हांगकांग के चीनी विश्वविद्यालय के विद्वान बैरन वेंग के अनुसार वे कामचलाऊ राष्ट्रपति मात्र हैं। हो सकता है वे च्यांग चिग कुओ के १९९०

तक के कार्यकाल, को पूरा करें, पर इसके बाद क्या होगा कहना मुश्किल है । ताइवान के राष्ट्रीय विश्वविद्यालय में राजनीति शास्त्र के प्राध्यापक प्रो. लू या ली का कहना है कि 'इस समय हमें नेता चाहिये पर वह नजर नहीं आता ।'

नये राष्ट्रपति ली देश के किसी बड़े सत्ता-स्तंभ—सेना, गुप्तचर सेवा और पार्टी—से जुड़े नहीं । फिर च्यांग चिंग कुओ इधर युवा ताइवानियों को ऊपर लाने और उदारीकरण की जिस नीति पर चल रहे थे, उससे च्यांगवादी-कुमितांगवादी बूढ़े नेता नाराज थे । वे च्यांग को तो नहीं रोक सके पर परिवर्तन को रोकने के लिए अब वे अपनी पूरी शक्ति लगा देंगे । दूसरी ओर नयी पीढ़ी के उदारवादी नेता हैं जो पीछे लौटने को तैयार नहीं । नये और पुराने के बीच टकराव टालना मुश्किल होगा ।

च्यांग चिंग कुओ यदि कुछ समय और जिंदा रहते तो, हो सकता था, वे चीन और ताइवान के संबंधों की स्पष्ट व्याख्या कर जाते, पर उनके जाने के बाद देश के नये नेता के सामने सबसे बड़ा सवाल यही उठेगा । ताइवान को आजाद बनाने की बात करना अपराध है । इसी २६ पौष (१६ जनवरी) को ताइवान उच्च न्यायालय ने त्साई यू च्वान और शू त्साओ ते को ११ और १० वर्ष की कैद की सजा सुनायी । ये दोनों फारमोसा राजनैतिक बंदी संघ के सदस्य हैं । इन पर आरोप था कि ये ताइवान को मुख्य भूमि से अलग करने और स्वतंत्र राष्ट्र घोषित करने की कर रहे थे । च्यांग चिंग कुओ के निधन चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय ने एक शोक प्रस्ताव पास करके तांग की केंद्रीय समिति को भेजा। में कहा गया कि हम 'कुमितांग च्यांग चिंग कुओ के निधन की खबर बेहद दुखी हैं और च्यांग परिवार के अपनी गहरी सहानुभूति प्रकट करते महासचिव झाओ जीयांग ने अपने में कहा कि 'च्यांग चिंग कुओ चीन एकता के प्रबल समर्थक थे और आशा है कि उनके आकस्मिक निधन मातृभूमि के साथ एकीकरण की नीति कोई व्यवधान नहीं आयेगा ।' से ताइपेई को भेजे गये इस संदेश की स्पष्ट है । पेइचिंग को भय है कि हो है ताइपेई में ऐसे कट्टर कम्युनिस्ट सत्ता में आयें जो स्वतंत्र ताइवान की करना चाहें । यह भी हो सकता है मुख्य भूमि के समर्थकों और मूल वानियों में टकराव हो, देश में बढ़े और चीन को हस्तक्षेप करने नौबत आये, जिसका मतलब होगा और अमरीका से सीधा टकराव ।

जापान और अमरीका पेइचिंग संबंध बनाकर रखना चाहते हैं । हो सकता है वे स्वतंत्र ताइवान समर्थन न करें । पर ताइवान की प्रगतिशील पार्टी इस बिंदु के बहुत खड़ी नजर आती है । चीन इस खतरे

मझता है । झाओ जीयांग ने ताइवान के भी वर्ग के लोगों के साथ बात करने की च्छा प्रकट की है । एकता की दिशा में हले कदम के रूप में वे 'एक छत के नीचे ो चूल्हे' की बात मानने को तैयार हैं । तलब यह कि पूंजीवाद और कम्युनिज्म ोनों एक छत के नीचे रहना शुरू करें । र ताइपेई के सरकारी प्रवक्ता का कहना कि हमने घड़ियाल को आंसू टपकाते हुत देखा है । यह सब ताइवानियों को मित करने का बहाना है ।

पेइचिंग का चिंतित होना स्वाभाविक । अमरीका ने चीन को फिर 'शत्रुराष्ट्र' ी सूची में रख दिया है । अमरीकी संसद चीन में मानवाधिकारों के हनन की दा की है । जापान फिर सैनिक शक्ति रूप में उठ रहा है । कोकारिओ छात्रा-ास को ताइवान को सौंपने का फैसला रके जापान ने फिर दो चीन के सिद्धांत ो सुलगाया है । एशियाई विकास बैंक ताइवान को अमरीका 'चीन गणराज्य' रूप में संबोधित करता है । ये सब शुभ केत नहीं हैं । ताइवान से अधिक अब इचिंग महसूस कर रहा है कि च्यांग ग कुओ का इस समय जाना ठीक नहीं आ । पेइचिंग की कठिनाई इसलिए र बढ़ गयी है कि वह नहीं जानती कि ताइपेई में अब उसका सामना किस व्यक्ति से होगा और च्यांग चिंग कुओ के स्वप्न को 'साकार' करने कौन आयेगा ।

नये राष्ट्रपति ली तेंग ह्वी ने अपनी पहली प्रेस कांफ्रेंस में ऐसे संकेत दिये हैं कि मैं च्यांग चिंग कुओ की नीति को आगे बढ़ाऊंगा ।

राष्ट्रपति ली ने सब ताइवानियों को चीन की सैर पर जाने की अनुमति देने का फैसला किया है । ताइवान ने अतीत में जिन अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं से अपना नाता इसलिए तोड़ लिया था कि उनमें पेइचिंग को स्थान दिया गया, उनकी सदस्यता के लिए ताइपेई फिर प्रयत्न करेगा । पर राष्ट्रपति ली तेग ह्वी ने 'तीन नकार' की नीति फिर दोहरायी है यह है—पेइचिंग से कोई संपर्क स्थापित नहीं किया जायगा, कोई बातचीत नहीं की जायगी और कोई समझौता नहीं किया जायगा । मतलब यह कि सरकारी स्तर पर बर्फ पिघलने का कोई संकेत राष्ट्रपति ली ने नहीं दिया और पेइचिंग इससे चिंतित है । वह नहीं जानता कि अनुमान लगाने और पंचांग विचारने का काम कब तक और चलेगा ।

—११/१ डालीबाग कालोनी, तिलक मार्ग,
लखनऊ-२२६००१, उ. प्र.,

□

महर्षि रमण से एक दिन पूछा गया कि जानवरों में सबसे ज्यादा खतरनाक कौन ते हैं ? तो उन्होंने मनुष्यों की ओर इशारा करते हुए कहा—'जंगलियों में निंदक और लुओं में चापलूस ।'

—डा. गोपालप्रसाद 'वंशी'

□

कद्दू की भाजी और गांधीजी

साबरमती आश्रम में गांधीजी ने यह नियम बनाया था कि आश्रम में पै वाली साग-भाजी ही काम में लायी जाये, बाहर से कोई साग-भाजी न मंगायी जा

उस समय आश्रम के खेत में कद्दू खूब होता था। इसलिये रोज उसी की बनती थी। इस सब्जी को भी बड़े-बड़े टुकड़े काटकर उबालकर रख दिया जाता था। नमक नहीं डाला जाता था; जिसे जरूरत होती वह ऊपर से नमक ले सकता था।

आश्रमवासी भाई-बहनों की गांधीजी से शिकायत करने की हिम्मत न होती

श्री नरहरि भाई पारीख की पत्नी ने कददू की सब्जी पर एक गीत ही लिख बा ने यह गीत सुना तो गांधीजी के पास शिकायत लेकर पहुंचीं और उन्हें गीत सुनाती हुई बोलीं–'आपकी कद्दू की सब्जी भी अच्छी मुसीबत है। एक बहन को गयी है, दूसरी के सिर में चक्कर आते हैं। और तीसरी को डकारों के मारे चैन कद्दू का साग क्या कभी सिर्फ उबालकर ही बनाया जाता है? उसमें मेथी का लगाना चाहिये, गर्म मसाला चाहिये, तब तो ठीक रहता है, वर्ना तो नुकसान करेगा

अगले दिन प्रार्थना के बाद गांधीजी ने कहा–'हमारे आश्रम में एक पैदा हुए हैं, अब हमें उनकी कविता सुननी चाहिये।' इसके बाद गांधीजी ने भाई की पत्नी मणि बहन से कद्दू के संबंध में लिखा वह गीत गवाकर सुना

गीत पूरा होने पर गांधीजी ने हंसते हुए कहा–'अच्छा, तुम लोगों की मंजूर। जिन्हें बघार लगाकर और मसाला डालकर यह सब्जी खानी हो, वे नाम लिखा दें।' गांधीजी सोचते थे कि बहनें संकोच के मारे अपना नाम नहीं लि तभी बा बीच में ही बोल उठी–'इस तरह कोई बहन अपना नाम आपको नहीं हम सब बहनें मिलकर खुद ही नाम तय कर लेंगी।'

गांधीजी बोले–'तो ठीक ऐसा ही करो, लेकिन देखना इसमें बच्चों को शा करना! बच्चे बिना मसाले की सब्जी पसंद करते हैं।' बा के पास इसका उत्त था–'इस तरह बच्चों को बहका-बहकाकर आप अपने पक्ष में कर लेते हैं।'

इसके बाद बहनों ने अपने लिखवा दिये और गांधीजी से मसाला खाने की पा ली। मगर गांधीजी किसी को आराम से मसाला खाने देने वाले थोड़े ही थे गांधीजी के सामने वाली पंक्ति में ही खाने बैठती थीं तो गांधीजी उनको ताना कहते थे–'क्यों बघार कैसा लगा है? सब्जी चटपटी बनी है न?'

बा भी कम नहीं थीं। वे भी गांधीजी से कहतीं–'अब रहने भी दीजिये, कुछ कम थे? हर रविवार को मुझसे पूरन पोली और पकौड़ियां बनवाकर पहले जाने वाले आप ही थे या कोई और?'

गांधीजी कहते–'तू तो मेरी सारी पोल खोल देगी!' –डा. गोपालप्रसा

□

मुक्तक

चंदन बन लिपटा रहा मन केंचुल का प्यार,
ग्रहण न खुशबू कर सका विषयी रूप सिंगार,
बार-बार बदले वसन तन का काला नाग
जीवन भर भटका किया गली-गली,घर-द्वार।

० ० ०

कदमों में कभी चुभती राहों की घिसी माटी,
सौ जंगलों में लुटती यह जिंदगी की घाटी,
हंसते गुलाब मिलते कांटों का दर्द सहकर
मिलते न यहां केशव, बनते न सव्यसाची !

० ० ०

बोल दो, हलका हृदय का भार कर लूं,
थाम लो, यह धार गहरी पार कर लूं,
तुम खिला दो प्रेरणा के फूल ऐसे
मैं थकी-सी जिंदगी को प्यार कर लूं।

० ० ०

दीप नहीं तो क्या प्रभात नहीं आयेगा,
मुर्गे की बांग बिन क्या सूरज रुक जायेगा,
खींचते हो खींच लो तुम हाथ अनुकंपा के
सच्चा विश्वास तो आकाश झुका लायेगा !

– हरदेव सिंह भदौरिया

–६१/सी, सिविल लाइन, फतेहपुर, उ. प्र.

सांस्कृतिक निरूपण–१९

कथा राम की, व्यथा मानव

हरीन्द्र

सुमंत्र के जाने के बाद राम, लक्ष्मण तथा जानकी वन में प्रथम रात्रि बिताते हैं, अभी तक तो अयोध्या के मातहत, या अयोध्या के मित्र राज्यों के नगरों, और जनपदों से वे गुजरे थे। सब राम, लक्ष्मण, सीता को पहचानते थे। अब वे गंगा पार करके प्रयाग देश आ पहुंचे हैं। अनजान जनपद और अनजान वनों से उन्हें गुजरना है। राम कहते हैं–

अद्येयं प्रथमा रात्रि –
याता जनपदाद्बहिः
या सुमंत्रेण रहिता
तां नोत्कंठितुमर्हसि
जागर्तव्यमतन्द्रिभ्या–
मद्य प्रभृति रात्रिषु,
योगक्षेमो हि सीताया
वर्तेते लक्ष्मणावयोः

(अ. ५३ : २-३)

नगर की सीमा पार करने के बाद यह प्रथम रात्रि है। अब तो सुमंत्र का साथ (रक्षा) नहीं। अयोध्या का राज्यमंत्री अपने रथ के साथ लौट गया है। जब सुमंत्र था और नगरों से गुजर रहे थे, तब तक नगर की सुख-सुविधाएं साथ थीं। अब ये सुविधाएं नहीं मिलेंगी। अब प्रमाद जाने से नहीं चलेगा। सीता उसकी रक्षा के लिए भी दोनों भा बारी-बारी से जागना पड़ेगा।

ऐसा कहने के साथ ही राम को सारी सुविधाएं नहीं, नगर जीवन की सारी कटुता याद आती है। वे को याद करते हैं। कैकेयी तथा स्मरण में मात्र कटुता है। राम क 'कैकेयी मुझे वनवास और भरत को देने के लिए ही अयोध्या के राज आयी थी। भरत राजगद्दी संभा फिर महाराज का ध्यान कोई नहीं पुत्र को राज मिला है इस सौभाग्य में मोहित कैकेयी कौशल्या और सु दुख भी देती होगी।'

यहां कैकेयी के लिए 'सौ मोहिता' शब्द प्रयोग में आया है दशरथ ने प्राणत्याग कर दिया हो संभावना के बाद यह शब्दप्रयो है। 'सौभाग्य' अर्थात् पति का जी संकुचित अर्थ इस कवि को अभिप्रे राम का कैकेयी और भरत के प्रति वैसा ही बना है। वे कह बैठते हैं:

तो अपने बाणों से अकेले अयोध्यापुरी तथा समस्त भूमंडल को अपने अधिकार में कर सकता हूं : किंतु पारलौकिक हितसाधन में वीर्य-पराक्रम का कोई उपयोग नहीं—

अधर्मभयभीतश्च
परलोकस्य चानघ,
तेन लक्ष्मण नाद्याह—
मात्मानमभिषेचये
(अ. ५३-२६)

(निष्पाप लक्ष्मण, मैं अधर्म तथा परलोक से डरता हूं। इसलिए अयोध्या राज्य पर अपना अभिषेक नहीं करवाता।)

वाल्मीकि के राम मनुष्य हैं, मानवीय भावनाओं से परे नहीं। वह कैकेयी के लिए 'क्षुद्रकर्मा' (नीच काम करनेवाली) ऐसे शब्द का प्रयोग करते हैं। भरत दशरथ की अवज्ञा करेंगे ऐसी कल्पना कर सकते हैं। स्वयं अपने बल से अयोध्या पर फिर से कब्जा कर सकते हैं, ऐसी कल्पना भी करते हैं। और इसीलिए अगली सुबह लक्ष्मण से अनुरोध करते हैं कि वह माता-पिता का ध्यान रखने के लिए अयोध्या लौट जाये। राम यहां लक्ष्मण की एक और कसौटी करते हैं। लक्ष्मण जंगल के संकटों से डर गया हो तो उसे मानपूर्वक लौटने का एक मौका देते हैं। किंतु लक्ष्मण तो संक्षिप्त उत्तर ही देते हैं :

नहि तातं न शत्रुघ्नं
न सुमित्रां परंतप
दृष्टुमिच्छेमद्याहं
स्वर्गं चापित्वया विना
(अ. ५३-३२)

हे परंतप, आपके बिना मैं पिता का, भाई शत्रुघ्न का, माता सुमित्रा का या साक्षात् स्वर्गलोक का भी दर्शन नहीं करना चाहता। लक्ष्मण को यह दृष्ट उत्तर आगे किसी विवाद का अवकाश ही नहीं रहने देता।

अब तीनों वन में यथेच्छ विहार करते हैं, 'यथाक्षेमेण' (क्षेम-सुख रहे इस तरह) प्रवास करते हुए शाम को उन्होंने दूर एक आश्रम में अग्निदेह की ध्वजा समान धूम्ररेखा देखी। राम को लगा, निश्चय ही हम प्रयागराज के किनारे महर्षि भारद्वाज के आश्रम में आ पहुंचे है। इतना ही नहीं, गंगा-यमुना के परस्पर टकराने का घोष भी राम के कानों में पड़ता है।

महर्षि भारद्वाज राम से अपने आश्रम

में ही वनवास काल बिताने के लिए कहते हैं। राम का उत्तर सुंदर है। यह स्थान अयोध्या और उसके निकटवर्ती जनपदों के पास है। यहां अयोध्यावासी सरलता से आ सकते हैं। इसलिए हमारा निवास दूर हो यही ठीक है। तब भारद्वाज सुझाते हैं कि वहां से तीस कोस दूर चित्रकूट पर्वत उनके रहने योग्य स्थान है।

दूसरे दिन ऋषि मार्ग दिखाते हैं। गंगा-यमुना के संगम के बाद यमुना की दिशा में आगे जाकर, एक घाट से, नौका बनाकर उस पर जाने की सलाह देते हैं–कहते हैं–'वहां श्यामवट नामक एक महान वटवृक्ष है: उसकी छाया में बहुत से सिद्ध पुरुष रहते हैं। वहीं से आगे चित्रकूट की ओर जाने का रास्ता है। सीता वहां दोनों हाथ जोड़कर वृक्ष से आशीर्वाद मांगती है, लक्ष्मण मुनि की सलाह के अनुसार सूखे बांस की एक बहंगी बनाते हैं। राम, सीता, लक्ष्मण उस पर बैठकर उस किनारे जाते हैं। वहां श्यामवट आता है, तब सीता ऋषि की आज्ञानुसार आशीर्वाद मांगती है: 'हम वन से कृतप्रतिज्ञ और सकुशल लौटें' तब –

कौशल्यां चैव पश्येम
सुमित्रांच यशस्विनीम्
(अ. ५५-२५)

कौशल्या तथा यशस्विनी सुमित्रा माता के दर्शन कर सकें।' सीता कैकेयी या भरत के दर्शन की इच्छा न करे, लेकिन दशरथ को वापिस मिलें ऐसा क्यों नहीं कहती? दशरथ राम के बिना जीवित नहीं रहेंगे, क्या ऐसी प्रतीति इन तीनों को चुकी है? सीता अपनी देवरानी उर्मि का नाम भी क्यों नहीं लेती?

वन में सीता विविध वृक्षों या पु के बारे में पृच्छा करती है तब राम उ बारे में जानकारी देते हैं। लक्ष्मण शा या पुष्प चुनकर उसका परिचय सीता करवाते हैं। मार्ग में मयूरों और विहंगों से कूजित एक वाटिका में बिताकर सुबह राम चित्रकूट की गति करते हैं। मार्ग का वर्णन मनोरम

आदीप्तानिव वैदेहि
सर्वतः पुष्पितान् नगान्,
स्वैः पुष्पैः किंशुकान् पश्य
मालिनः शिशिरात्यये
(अ. ५६-

हे वैदेही, इस वसंत ऋतु में संपूर्ण हुए पलाश वृक्ष को देख। यह स्वयं अपने पुष्पों की पुष्पमाला धारण करके बैठा ऐसा लगता है और यह पुष्पों की प्रभा से प्रज्वलित सा हुआ लगता है।

एष क्रोशति नत्यूह–
स्तं शिखी प्रतिकूजति,
रमणीये वनोद्देशे
पुष्पसंस्तरसंकटे
(अ. ५६

वन का यह हिस्सा रमणीय है पुष्पवर्षा हो रही है। यहां चातक कूज और मोर उस कूजन का उत्तर देते (प्रतिकूजन करते हैं)

ऐसे चित्रकूट में पहुंचने के बाद ल

वहां आकर्षक पर्णकुटी बनाते हैं : उत्तम मुहूर्त है यह देखकर राम उस दिन वास्तु-पूजन करने का सुझाते हैं । उस समय राम जो भोजन तैयार करने के लिए कहते हैं उसमें 'एणैय मांसम्' तथा 'छिन्नशोणित' वगैरह शब्द हैं । राम ने वनवास के काल में 'फलानिमूलानि च भक्षयन् वने' ऐसी प्रतिज्ञा ली है : 'रामो द्विर्नाभिभाषते' (राम दुमुंही बात नहीं करता) इस हिसाब से राम ने वनवास-काल में फलफूल और कंदमूल पर रहने की प्रतिज्ञा की हो तो वे मांस पकाने की बात लक्ष्मण से कैसे कह सकते हैं? यह विवाद मुझे महत्वपूर्ण नहीं लगता । राम, कृष्ण, महावीर, बुद्ध वगैरह क्षत्रिय थे : उनका प्रेम, सत्य अहिंसा इत्यादि गुणों के साथ वे क्षत्रिय होने के नाते कभी मांसाहार करते होंगे, यह हकीकत है । राम तो इस 'सौम्य मुहूर्त' में शुभकार्य करने–वास्तुकार्य करने को तत्पर हैं । पूजन के बाद राम-सीता लक्ष्मण सहित उस पर्णकुटी में प्रवेश करते हैं । अयोध्याकांड के छप्पनवें अध्याय में प्रकृति सौंदर्य के वर्णन के अनेक श्लोक हैं : उनमें से अंतिम दो श्लोक देखें–प्रथम श्लोक में पर्णकुटी में प्रवेश का वर्णन है :

तां वृक्ष पर्णच्छदनां मनोज्ञां
यथाप्रदेशं सुकृतां निवाताम्
वासाय सर्वे विविशुः समेताः
सभां यथा देवगणाः सुधर्माम्
(ग. ५६-३४)

यह मनोहर कुटीर उपयुक्त स्थान पर बनी थी । वृक्ष के पर्णों से आच्छादित इस कुटीर में प्रचंड वायु से बचाव होता था । जैसे देवता सुधर्म सभा में प्रवेश करते हैं वैसे सीता, लक्ष्मण तथा राम ने एक साथ इस निवास में प्रवेश किया ।

आगे के श्लोक में चित्रकूट पर्वत का वर्णन है :

सुरम्यमासाद्य तु चित्रकूटं
नदीं य तां माल्यवतीं सुतीर्थाम्
ननन्द हृष्टो मृगपक्षिजुष्टां
जहौ च दुःखं पुरविप्रवासान्
(अ. ५६-३५)

चित्रकूट पर्वत अत्यंत सुरम्य है । उत्तम तीर्थों से सुशोभित माल्यवती नदी बह रही है : पशु-पक्षी भी इस नदी किनारे आश्रय ले रहे हैं । ऐसे वातावरण में आकर नगर से दूर हो जाने का दुख राम भूल गये ।

राम को दुख होता है, यह बात कहने में वाल्मीकि को कोई संकोच नहीं : और प्रकृति सौंदर्य के बीच राम इस दुख को भूल जाते हैं यह कहने में भी कोई संकोच नहीं । इसीलिए तो वाल्मीकि के राम के साथ हम तादात्म्य साध सकते हैं :

[क्रमशः]

[रूपांतर : नंदिनी मेहता]

□

उसी ने धर्म को जाना है, जो कर्म से और वाणी से सबका हित करने में लगा हुआ है और जो सभी का नित्य स्नेही है ।

□

बापू की यादगार

देवदास गांधी

☐ सुरेश सि

कैसी मधुर कल्पना रही होगी पूज्य बापू के हृदय में देश के स्वतंत्र होने पर, कैसा उत्साह रहा होगा देश के स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के मन में और कैसा उल्लास रहा होगा सारे देशवासियों को अपने सुख-स्वप्न को साकार होते देखकर—इसको कौन नहीं जानता।

ऐसे समय याद आते हैं हमारे राष्ट्रपिता के कनिष्ट पुत्र देवदास गांधी, जिन्होंने अपने सारे जीवन को ज्य बापू के सांचे में ढाल लिया था।

हम लोग जब स्वतंत्रता के प्रथम युद्ध के शहीदों की शताब्दी मना ही रहे थे, तभी समाचार-पत्रों में यह दुखद समाचार आया कि आज़ादी की लड़ाई के वीर सेनानी भाई देवदासजी गांधी इस संसार से सदा के लिए चले गये। जिसने भी यह समाचार सुना वह स्तब्ध रह गया, क्योंकि उनका यह महाप्रयाण इतनी त्वरित गति से हुआ कि वे कब बीमार हुए और कब उन्होंने यह संसार छोड़ दिया, इसको उनके स्नेही मित्र भी जान न सके।

जीवन और मृत्यु तो संसार के दो अटल नियम हैं। जो यहां आया है, उसे एक दिन यहां से जाना ही होगा। लेकिन उसी के जाने से घर और कुटुंब के अलावा बाह लोग भी दो आंसू बहाते हैं, जो जन जनार्दन की सेवा को अपने जीवन का लक्ष बना देता है। भाई देवदासजी के लि यही बात लागू होती है, क्योंकि उन्हों अपने जीवन का एक-एक क्षण मान जाति की सेवा में लगा दिया था। जि पूज्य बापू के थोड़े भी संपर्क में आने सौभाग्य प्राप्त हुआ है उसके लिए तो दे दासजी आजीवन एक साथी उद्बोध मार्ग-प्रदर्शक तथा प्रिय सखा के समान इसके अलावा वे सारे भारत के लिए महान आत्मा की एक जीवित यादगार थे, जिसने हमारे देश को आज़ाद क उसको अपने सत्य और अहिंसा की ज्यो से आलोकित कर दिया है।

श्री देवदासजी से मेरी पहली भेंट १९२९ ई. के दिसंबर मास में हुई, जब पूज्य बापू के साथ उत्तर प्रदेश का दौ करते हुए कालाकांकर पधारे थे। मह त्माजी के साथ पूज्यनीया बा और देवदासजी के अलावा श्रीमती मीरा बहि श्री जयप्रकाश नारायणजी की धर्मप श्रीमती प्रभावतीजी, सुश्री कुसुम बहि श्री प्यारेलाल तथा कांति भाई भी

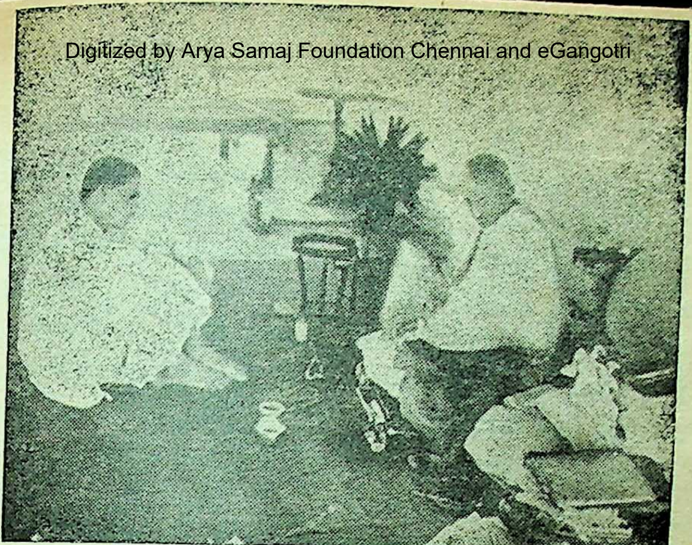

पूज्य बापू के साथ श्री देवदास गांधी कालाकांकर में–१९२९ ई.

सब लोग यहां केवल दो-ढाई दिन रहे, लेकिन इतने थोड़े समय में देवदासजी हम लोगों में इतने हिलमिल गये, जैसे वे हम लोगों के परिवार के ही एक प्राणी हों। उनके सरल स्वभाव, उनकी सादगी और उनके स्नेहपूर्ण व्यवहार की एक मधुर स्मृति मेरे हृदय में ताज़ी बनी हुई है। उसके बाद जीवन में कई बार उनसे भेंट हुई, लेकिन उनके सरल स्वभाव और नम्रता में मैंने कभी कोई कमी नहीं देखी। एक बार बनारस में, जब मैं हिंदू विश्वविद्यालय का छात्र था, वे मेरे साथ दो दिनों तक रहे भी थे। हिन्दुस्तान टाइम्स से संबंध जुड़ जाने से वे बहुत व्यस्त जरूर हो गये थे, लेकिन मानव जाति की सेवा, जो उनके जीवन का परम लक्ष्य था, उससे उन्हें किसी ने विमुख नहीं देखा। देश के स्वतंत्र हो जाने पर जब और लोग हुकूमत की कुर्सियों को सुशोभित करने लगे, तब भी भाई देवदासजी ने पत्रकार की कुर्सी को उससे कहीं अधिक सम्मानजनक समझा, नहीं तो देश के प्रधान मंत्री, किसी प्रदेश के मुख्य मंत्री अथवा राज्यपाल का पद ग्रहण करना उनके लिए कौन मुश्किल बात थी। उन्होंने सारे देश की पत्रकारिता का स्तर जितना ऊंचा किया है, उसे हमारे देशवासी सदैव याद रखेंगे। यहां उनका एक पत्र दे रहा हूं, जो उन्होंने पूज्य बापू की आज्ञा से 'वानर' नामक बालोपयोगी पत्र के लिए लिखा था।

शिमला ता. १६–२–३१

प्रिय सुरेश सिंहजी,

आपका पत्र व 'वानर' का एक अंक बापूजी को मिला है। उनको 'वानर' पसंद आया। फुरसत पाने पर वे आपको पत्र लिखेंगे।

(शेषांश पृष्ठ ३२ पर)

सांस्कृतिक मंच

'मनोबल' पर चर्चा-गोष्ठी

इंदौर की साहित्यिक संस्था 'क्षितिज' द्वारा प्रकाशित 'मनोबल' नामक लघुकथा संकलन पर चर्चा-गोष्ठी कार्यक्रम संपन्न हुआ। मुख्य अतिथि श्री शंकर पुणतांबेकर ने कहा कि 'जीवन के टुकड़ा-टुकड़ा अनुभवों में से तीव्र अनुभूतियां ही लघुकथा का आकार ग्रहण कर लेती हैं। लघुकथाएं युग के यथार्थ को प्रस्तुत करती हैं।' कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री सूर्यकांत नागर ने की। चर्चा में श्री अजय बोकिल, श्री श्री. गो. सोहोनी एवं राज केसरवानी ने भाग लिया। श्री सतीश राठी ने संचालन किया। आभार श्री अशोक शर्मा ने माना।

—अनंत श्रीमाली

०००

विमोचन समारोह

जमशेदपुर के युवा व्यंग्यकार श्री रमेश कुमार वाजपेयी के व्यंग्य संग्रह 'निंदक नियरे राखिये' का विमोचन तुलसी भवन में गुजराती साहित्यकार श्री छोटेलाल व्यास द्वारा संपन्न हुआ।

डा. बच्चन पाठक ने कहा कि व्यंग्य नकारात्मक लेखन नहीं है, बल्कि यह अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। राजस्थानी कवि आचार्य मनोहरलाल गौतम, श्री निर्मल मिलिंद, हरेराम राय हंस, कृष्णकुमार अंबर और अकुल ने भी विचार व्यक्त किये।

—धरनीधर दास

सारस्वत सम्मान

सागर विश्वविद्यालय के प्रोफेसर कृ
दत्तजी वाजपेयी ने दतिया में आयो
श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव (वर्मा
के नागरिक अभिनंदन समारोह में क
कि बुंदेलखंड की पुरातत्व धरोहर सम
देश के लिए मूल्यवान निधि है। बुंदेल
की संस्कृति का विकास वैदिक, पौरा
युग से होता हुआ लोक धर्म के रू
विकसित होता रहा है। श्रीवास्तवजी
साहित्य सेवा की सभी वक्ताओं ने स
हना की। इस अवसर पर एक अभि
स्मारिका का विमोचन भी किया ग
अंत में कवियों ने अपने-अपने भाव-सु
अर्पित किये। —

०००

सारस्वत सम्मान समारोह

पिछले दिनों जमशेदपुर की सा
त्यिक संस्था 'काव्यलोक' ने क
साहित्यकारों को विद्यालंकार एवं का
भूषण की मानद उपाधियां प्रदान कीं
समारोह की अध्यक्षता डा. बच्चन पा
सलिल ने की। मुख्य अतिथि डा. आर
शर्मा थे। विद्यालंकार की सम्मानो
पद्मश्री डा. भरत मिश्र, कविर
कुमार विद्यार्थी, डा. स्वर्णकिरण,
श्वर गोयल, बाल साहित्यकार राम
सिंह आनंद एवं रमाशंकर पांडेय,
रमेश नीलकमल तथा विद्वान सम

डा. कमल किशोर प्रसाद वर्मा को प्रदान की गयी । काव्यभूषण की उपाधि ३३ साहित्यसेवियों को दी गयी। बाद में आयोजित एक बहुभाषी कविसम्मेलन के पूर्व श्री विद्यार्थी ने डा. सलिल की पुस्तक 'लोक नायक श्रीकृष्ण' का विमोचन भी किया ।

—निर्मल मिलिंद

०००

लोकरंग : अद्भुत आयोजन

'मध्य प्रदेश आदिवासी लोककला परिषद्' के तत्वावधान में रवींद्र भवन, भोपाल के प्रांगण में 'लोकरंग' का तीन दिवसीय आयोजन हुआ । इसमें मध्य प्रदेश के आदिवासी और लोक कलाकारों के अलावा महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश तथा कर्नाटक के विभिन्न लोकांचलों के सम्मानित लोक कलाकारों ने भाग लेकर विविधतापूर्ण बनाने का सराहनीय प्रयास किया ।

'लोकरंग' का उद्घाटन प्रदेश के महामहिम राज्यपाल प्रो. के. एम. चांडी ने किया । इस अवसर पर उन्होंने परिषद् द्वारा प्रकाशित दो लघु पुस्तकों का विमोचन भी किया ।

०००

कालिदास पुरस्कार से अलंकृत

म. प्र. संस्कृति विभाग द्वारा भारत भवन में वर्ष १९८७-८८ के पुरस्कार वितरण का आयोजन हुआ । पुरस्कारों से अलंकृत कलाकारों के प्रशस्ति-पत्र पढ़े प्रदेश के संस्कृति सचिव श्री अशोक वाजपेयी ने । और पुरस्कारों से कलाकारों को अलंकृत किया प्रदेश के राज्यपाल प्रो. के. एम. चांडी ने । सर्वप्रथम एक-एक लाख रुपये के चार कालिदास पुरस्कार सर्वश्री रविशंकर (शास्त्रीय संगीत), मकबूल फिदा हुसेन (रूपंकर कला), पु. ल. देशपांडे (प्रदर्शनकारी कला), तथा शास्त्रीय नृत्य के लिए कुचिपुड़ी नर्तक वेदांतम् सत्यनारायण शर्मा को प्रदत्त किया ।

सितारवादक पंडित रविशंकर ने पुरस्कार की राशि से अपने गुरु बाबा उस्ताद अलाउद्दीन खां के नाम से एक स्कॉलरशिप शुरू करने की घोषणा करते हुए सम्मान के प्रति अपना आभार व्यक्त किया ।

लोक तथा पारंपरिक कलाओं में राष्ट्रीय मापदंड स्थापित करने वाले लोक कलाकारों को प्रोत्साहित करने की दृष्टि से शासन ने एक लाख रुपये का तुलसी सम्मान छत्तीसगढ़ क्षेत्र के परंपरागत नृत्य नाच के उत्थान के लिए समर्पित सर्वश्री मदनलाल निषाद, भुलवाराम यादव, गोविंदराम निर्मलकर, देवीलाल नाग और श्रीमती फिदाबाई मरकाम को संयुक्त रूप से दिया गया । इक्कीस-इक्कीस हजार के तीन शिखर सम्मान श्री रमेशचंद्र शाह (साहित्य), श्री बालासाहेब पूंछवाले (शास्त्रीय संगीत) तथा श्री वामन ठाकरे (प्रदर्शनकारी कला) को इस अवसर पर दिये गये ।

—अभिनव तैलंग

(शेषांश पृष्ठ ३० पर)

मनहूस तारीख

पैदा होना पूत का पहली अप्रैल को

☐ निरंकु

कैलेंडर की तिथियों में जो सम्मान पहली जनवरी को प्राप्त है, वह अन्य किसी को नहीं। इसी तरह अप्रैल की पहली तारीख जितनी अप्रतिष्ठित समझी जाती है, उतनी और कोई नहीं। जनवरी के प्रथम दिवस और अप्रैल के पहले दिन की स्थिति लगभग राजा भोज और गंगुआ तेली जैसी है। पहली जनवरी को जब लोग बधाई देने आते हैं और जोश में भरकर कहते हैं 'नया साल मुबारक हो' तो आपकी बांछें खिल उठती हैं। यह बात और है जब उस स्थान से आपका तबादला हो गया हो, जिसे आप छोड़ना नहीं चाहते। स्थानांतरण की वह बेला जनवरी के प्रथम दिवस की पूर्व संध्या पर आयी हो और कोई व्यक्ति आपसे आकर कहे 'बधाई हो' तब आप महसूस करने लगें कि किसी ने जले पर नमक छिड़कने की कोशिश की है। इसके विपरीत पहली अप्रैल को मिलने वाले संदेशों की आप कतई परवाह नहीं करते, क्योंकि आप सोचते हैं उनके द्वारा आपको बेवक़ूफ़ बनाने का उपक्रम किया गया है।

हमारे पड़ोस में एक सज्जन रहते हैं, जिनके आठ कन्याओं के बाद पहली अप्रैल की सुबह को लड़का हुआ। वह का काजी आदमी हैं, इसलिये बालक के जन्म समय नर्सिंग होम में मौजूद नहीं थे। से उनके पास टेलीफोन आया 'बधाई आपके पुत्र हुआ है।' समाचार पाकर झल्ला पड़े 'मैं ही रह गया हूं सवेरे-मूर्ख बनाने के लिए। लड़की को लड़ बताते हो। जाओ मैं नहीं आता।' को तो वह कह गये, लेकिन पुत्र की ला ने उन्हें खदेड़कर नर्सिंग होम पहुंचा दि वहां बेटे की पैदायश की बात दु सुनकर भी उन्हें यक़ीन नहीं हुआ। उन्होंने अपनी आंख से अपनी बीवी बगल में पुत्र को लेटे हुए देख लिया जाकर संतोष की सांस ली। फिर भी से पूछ ही बैठे, 'क्या आप लोगों ने पत्नी की तसल्ली के लिए कोई ढोंग नहीं रचा है, जिसका खमियाजा बाद भुगतना पड़े।'

पूर्णतया सुनिश्चित हो जाने के प उन्होंने अपनी ससुराल से टेलीफोन मिला बोले–'मैं लाल बोल रहा हूं।' उधर आवाज़ आयी 'कौन लाल। किसके ला भाई, साफ़-साफ़ बोलो कौन हो और कि बात करना चाहते हो?' उन्होंने कहा

लाल, अरे भाई अंगनेलाल बोल रहा लड़का हुआ है आज सुबह। सबसे कह ता। एस. टी. डी. काल मिलायी है। बंद र रहा हूं।'

अंगनेलाल ने चौका-बरतन करने ली माई को ख़बर दी, 'लड़का हुआ।' उसे विश्वास नहीं हुआ। फिर भी सने बाहर निकलकर आस-पास के घरों फूंक दिया कि 'लाल साहब के बुढ़ौती लड़का हुआ है। वैश्नोदेवी की किरपा खती है।' स्वयं लाल ने जहां-जहां सूचना सकते थे कहलवा दिया कि पुत्र ने घर में वेश किया है। वे आशा करते थे तीसरे हर तक उनके मित्र और नाते-रिश्तेदार सिग होम में पहुंचकर उनकी बीवी को धाई देंगे, परंतु ऐसा नहीं हुआ।

जब वह अस्पताल पहुंचे तो उनकी पत्नी पूछा–'क्या तुम्हें अभी तक लड़के के दा होने का यक़ीन नहीं हुआ जो किसी पने पराये को ख़बर तक न की। शाम ने जा रही है एक आदमी या औरत सूरत नहीं दिखायी पड़ी। मेरे मायके लों को पता चल जाता तो ज़रूर दो-र जने खुशी में शरीक होने को अब तक गये होते। यहां से फ़ासला ही कितना । रेल बस का वे इंतज़ार थोड़ी करते। नके पास तो कार है। दम भर में यहां च जाते।' अंगनेलाल क्या कहते कि होंने सबको सूचित कर दिया है। वे रहे। इतने में कमरे के बगल में लेटे ीज़ की तीमारदारी करने वाली महिला पधारीं और बोलीं, 'बेटी! तुम्हारे कुनबे या पीहर में कोई नहीं है क्या या वे लोग काली कोसों पर रहते हैं, जो अब तक किसी ने शकल नहीं दिखायी। अरे आठ बेटियों की पीठ पर बेटा हुआ है। इससे बढ़कर खुशी की बात और क्या हो सकती है।' फिर लाल साहब की ओर मुख करके कहने लगी–'आप भी बड़े कंजूस लगते हैं। बेटे के जनम पर न मिठाई बांटी, न ढोलक पिटवायी, न गीत गवाये। अगर घर में कुछ बंदोबस्त नहीं हो सकता था तो कम से कम भांड तो बुलवा लिये होते। वैसे तो वे बिना बुलाये टपक पड़ते हैं, पर आज न जाने क्या हो गया जो चुप लगाये पड़े हैं। ऐसा तो नहीं है कि आपने उन्हें पहले से टरका दिया हो। अच्छा तो मुझे भी नहीं लगता उनका ताली बजाकर नाचना-मटकना, मगर खुशी के मौक़े पर आकर गा-बजा जाते हैं तो रौनक आ जाती है।'

अंगनेलाल उस बुढ़िया की बातों से इतने उत्तेजित हुए कि रिक्शा पकड़कर हिजड़ों की बस्ती में जा पहुंचे और चिल्लाकर कहने लगे–'कहां मर गये सबके सब। आज जब मेरे घर में लड़का हुआ तो वहां पहुंचकर ऊधम मचाने के बजाय यहां पान चीर रहे हो। चलो मेरे साथ और दिल खोलकर नाचो गाओ।' हिजड़ों के सरदार ने आकर पूछा–'आपका दिमाग़ तो ठीक है। शहर में सैकड़ों बेटे रोज़ पैदा होते हैं पर आज तक उनका एक बाप भी हमें बुलाने

हमारे घर पर नहीं आया। ख़बर पाकर जब हम खुद ही खुशी मनाने पहुंचते हैं तब दुत्कार और फटकार खाकर लौटना पड़ता है। और फिर आज तो हम किसी के घर नहीं जायेंगे। जानते नहीं पहली अप्रैल है। आपको बेवकूफ़ बनाने के लिए और कोई नहीं मिला जो यहां आ धमके। अपना रास्ता नापिये वरना हम भी अपने में शामिल कर लेंगे।'

अंगनेलाल लौट पड़े। रास्ते मे जाते थे नर्सिंग होम की लेडी डा जिसने ठीक पहली अप्रैल को करायी।

-

बी-११४९, इंदिरानगर, लखनऊ

□

(पृष्ठ २७ का शेषांश)

समकालीन भारतीय कहानी

एस. एन. डी. टी. महिला विद्यापीठ के स्नातकोत्तर हिंदी विभाग और महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित 'समकालीन भारतीय कहानी' विषयक द्विदिवसीय संगोष्ठी का प्रारंभ सरिता मारवाह की सरस्वती वंदना से हुआ। विभागाध्यक्ष डा. उमा शुक्ला की प्रस्तावना के बाद कुलपति कमलिनी भंसाली ने दीप प्रज्वलित कर कार्यक्रम का उद्घाटन किया।

विशिष्ट अतिथि रशियन कॆंसुलेट के सांस्कृतिक विभाग के अध्यक्ष वेलेंटीन जाग्रेबेल्नी ने हिंदी साहित्य के रूसी भाषांतर का परिचय दिया तथा जापान के श्री शिचीरा सोमा ने हिंदी और जापानी भाषा के साहित्य की आदान-प्रदान की बात कही। विद्यापीठ की रजिस्ट्रार डा. उषा ठक्कर ने समकालीन भारतीय कहानी में अभिव्यक्त मानवीय वेदना की अभिव्यक्ति की बात कही।

उर्दू कथाकार इस्मत चुगताई कि रूसी भाषा यदि चिकित्सा व शिक्षा का माध्यम है तो हिंदी क्यों सकती? डॉ. राममनोहर त्रिपाठी वक्तव्य में भारतीय कहानी की ऐ परंपरा को याद करते हुए 'स शब्द की परिभाषा का सवाल प्रथम सत्र की समाप्ति डा. केश के आभार-प्रदर्शन के साथ हुई।

कु. वंदना शर्मा की सरस्वती से द्वितीय सत्र प्रारंभ हुआ। इस मराठी, हिंदी और कन्नड कथा- विषय में श्री गोविंद मिश्र, श्री मराठे, श्रीमती सूर्यबाला, श्री जोशी ने आलेख पढ़े। परिचर्चा लिया डा. चंद्रकांत बांदिवडेकर, शुक्ला, डा. माधुरी छेड़ा, डा. विनो डॉ. पुष्पा जौहरी तथा डॉ. सुशीला

—डॉ. मा

□

स्वानुभव से बड़ा कोई शिक्षक नहीं है—

□

साहित्यवाचस्पति व्योहार राजेन्द्रसिंह

गत २ मार्च १९८८ को सुप्रसिद्ध साहित्यकार व्योहार राजेन्द्र सिंह का ८७ वर्ष ी उम्र में जबलपुर के विक्टोरिया अस्पताल में निधन हो गया। उन्होंने स्वतंत्रता ग्राम में सक्रिय भाग लिया था और कई बार जेल गये थे। सन १९२७, १९३७ और ९४६ में वे मध्य प्रदेश विधान सभा के सदस्य चुने गये थे। उनका जन्म १२ सितंबर ९०० के दिन जबलपुर में हुआ था। पर वे एक समर्पित हिंदी-सेवक के नाते अपना न्म-दिन १४ सितंबर (हिंदी-दिवस) के दिन मनाते थे।

अपने जीवन के ७० वर्ष उन्होंने साहित्य सेवा में पूरी तरह लगाये थे। छोटी-ड़ी मिलाकर उन्होंने लगभग एक सौ रचनाओं का प्रणयन किया है। साहित्य की भिन्न विधाओं को उन्होंने संवारा है। उनके प्रकाशित ग्रंथों में 'त्रिपुरी का इतिहास' ुलसीदास की समन्वय साधना' 'आलोचना के सिद्धांत' आदि रचनाएं बहुचर्चित हैं। ोगिराज श्रीअरविंद के महाकाव्य 'सावित्री' तथा 'वाल्मीकि रामायण' आदि का हिंदी में न्होंने सफल पद्यानुवाद भी किया है। व्योहारजी संगीत में भी निष्णात् थे।

आपके पिता रायबहादुर रघुवीरसिंह बहुत बड़े जमींदार थे। उनके पास १८४ गांवों ी जमींदारी थी। पर राजेन्द्रसिंह का प्रारंभ से ही साहित्य के प्रति अनुराग था और ांधीजी के संपर्क में आने पर तो वे साहित्य और देश के लिए सारा वैभव त्यागकर पूरी रह समर्पित हो गये। आचार्य विनोबा भावे के साथ रहकर भी उन्होंने भू-दान यज्ञ में ढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। उन्हें कई भाषाओं का अच्छा ज्ञान था। हिंदी साहित्य सम्मे-न ने उन्हें साहित्यवाचस्पति की सम्मानित उपाधि देकर उनकी सेवाओं का मूल्यांकन िया था।

वे अनेक प्रतिष्ठित संस्थाओं से भी संबद्ध थे। उनका स्वभाव अत्यंत सरल और नम्र था। उनके निधन से हिंदी जगत ने एक महान साधक रचनाकार खो दिया।

दिसंबर १९८७ में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा में अस्वस्थता की हालत में ी कुछ सहायकों को साथ लेकर वे आये थे। मिलने पर जब मैंने कहा कि ऐसी गंभीर स्वस्थता में आपको वर्धा नहीं आना चाहिये था, तो उस ८७ वर्ष के 'युवक' का उत्तर —'हिंदी के काम के लिए वर्धा तो क्या मैं हिमालय पर भी जा सकता हूं। वह भारत वाणी है।' मैं तथा मेरे पास खड़े लोग यह सुनकर हतप्रभ रह गये। ऐसे समर्पित ष्ट्रसेवी को **नवनीत-परिवार** की विनम्र श्रद्धांजलि।

– गिरिजाशंकर त्रिवेदी

[संपादक : नवनीत]

गीत

मौसम के ताने सुनते-सुनते जी ऊब गया
तुम न लौटकर आये लो फागुन भी बीत गया।
रातें कटीं जेठ के दिन-सी दिन युग-सा बीता,
प्रीति अनाथ हुई है जैसे निर्वासित सीता।
सांस खोजती रही तुम्हें, गंधों की टोली में,
नयन खोजते रहे तुम्हें रंगों की रोली में।
भरा-भरा यौवन का घट, लगता है रीत गया
तुम न लौटकर आये लो फागुन भी बीत गया।
बहुत बुलाया एक सपन भी पास नहीं आया,
मुझे अपरिचित सी लगती अब मेरी ही छाया।
बैठी रही खुशी देहरी पर आंगन तक न गयी,
हंसी अधर पर दस्तक देकर वापस लौट गयी।
यौवन की वंशी से मादक स्वर संगीत गया।
तुम न लौटकर आये लो फागुन भी बीत गया॥
मुझे निरीह समझकर हर ऋतु ने की मनमानी
सबने बदला लिया किसी ने एक नहीं मानी।
पांवों लगा महावर छूटा मेंहदी धुंधलाई
सुख परदेशी हुआ रह गई दुख की पहुनाई।
पावस आंसू झरे सिसकते सारा शीत गया।
तुम न लौटकर आये लो फागुन भी बीत गया॥

— बालक

अस्पताल चौराहा, रायब

(पृष्ठ २५ का शेषांश)

आपको मालूम हुआ होगा कि कुंवर राघवेंद्र प्रताप सिंह हमारे साथ आजकल हैं। बड़े मिलनसार हैं।

यहां आज ही पहुंचे। दो-तीन रोज में यहां के काम का नतीजा मालूम हो जायेगा।

आपका—देवदास गांधी;

पूज्य बापू के चरण-चिन्हों वाले इस सरल और निरभिम को, जो हमारे राष्ट्रपिता यादगार थे और जिनमें सादगी मूर्तिमान हो उठी थी, नहीं भुला सकता।

□

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन साहित्य, और संस्कृति का मासिक

प्रार्थना

उच्चा ते जातमंधसो, दिविसद् भूम्याददे
उग्रं शर्म महिश्रवः । साम. ५.६.१ ऋक् ४.६१।१०

देवलोक के व्योम विहारी, कवि के मधुर अलौकिक स्वर ।
दिव्य गीत बनकर आते हैं, अंतरिक्ष से धरती पर ।
उन गीतों से सम्मोहित हो, सूर्य-किरण करती नर्तन ।
और सुधांशु अमृत बरसाता, गंध उड़ाता मंद पवन ।
हे कवि दूर लोक के वासी, छोड़ प्रवास धरा पर आओ ।
मूक पड़ी मानव हृद्तंत्री को झंकृत कर मुखर बनाओ ।
दिव्य उसी स्वर धारा का मैं, एक प्रवाहित जलकण हूं ।
उसकी ही प्रतिध्वनि के स्वर का एक अकिंचन कंपन हूं ।
उन्हीं स्वरों से लोक-लोक में, प्राणों का होता स्पंदन ।
मौन अचेतन जगत उन्हीं के, आघातों से है चेतन ।

[रूपांतर : सत्यकाम विद्यालंकार]

निर्बल के बल राम

☐ दुर्गाप्रसाद मं

सूरदास का 'सुने री मैंने निर्बल के बल राम' एक लोकप्रिय पद है। अगर गहराई से इसके शब्दों पर विचार किया जाये तो इसमें एक बहुत ही गूढ़ और महत्वपूर्ण तथ्य मिलता है। साधारण धारणा है कि भगवान से प्रार्थना करने पर इच्छित वस्तु की प्राप्ति होती है और जब ऐसा नहीं होता है तो एक प्रकार की निराशा होती है। कभी-कभी तो आदमी में निराशा इतनी हो जाती है कि उसकी भगवान में आस्था भी हिल जाती है। ऐसा हमारी ना-समझी के कारण होता है। सच्चे मन से पूर्ण विश्वास के साथ प्रार्थना की हुई सदा सफल होती है। परंतु प्रार्थना सफल करने के लिए कुछ नियम बनाये गये हैं और ये नियम क्या हैं, उपरोक्त पद में सूरदास ने बताया है। इसके साथ ही जिन-जिन ने इस नियम का पालन कर प्रार्थनाएं कीं और उनकी प्रार्थनाएं सफल हुईं, इसके उदाहरण भी दिये हैं।

उपरोक्त पद में 'उदाहरण' पहले दिये हैं और 'नियम' अंतिम कड़ी में हैं:

अप-बल, तप-बल और बाहु-बल चौथा है बल दाम।
सूर किशोर कृपा से सब बल हारे को हरिनाम।।

इसमें मनुष्य के पास जो चार बल हो सकते हैं, उनको गिनाया किसी मनुष्य के पास किसी दूसरे होता है, किसी के पास तपस्या होता है, किसी के पास शरीर का है तो किसी के पास धन का बल है किसी-किसी के पास इन चारों से कुछ मिश्रित बल भी होते हैं सूरदास ने बताया कि जब ये चा प्रयोग करने के बाद मनुष्य छुटकारा पाने में विफल होता है पास एक बल ऐसा है, जो अमोघ वह है: 'हारे को हरिनाम' यानी का नाम स्मरण। इसका अर्थ है कि जब अपने सभी साधनों एवं प्रयोग करके हार जाता है और अन्य साधन-विहीन हो जाता है वान का नाम स्मरण करते से सफलता मिलती है और उसकी टलती है। यदि किसी के पास इ बलों में से एक भी बल न हो, साधन-विहीन हो, यानी 'निर्बल उसका सहारा तो भगवान का नाम ही है। इस पद के प्रारम्भ में जो उ दिये हैं, उनमें एक गजराज का दूसरा द्रौपदी का। गजराज स्व

बलिष्ठ था । उसका पूर्वजन्म के श्रापवश हाथी की योनि में जन्म हुआ था । जब ग्राह ने उसका पैर पकड़ लिया और नदी में खींचकर ले जाने लगा तो पहले उसने अपना शारीरिक बल का पूरा प्रयोग किया। परंतु जब वह अपने शारीरिक बल का पूरा प्रयोग करने के बाद भी अपने को बचाने में सफल नहीं हुआ और उसके नाक और कान डूबने लगे तब उसने अपने को पूर्णतः अ-सहाय पाकर भगवान का स्मरण किया और तब उसके केवल आधा नाम यानी 'रा' मात्र उच्चारण करने से ही भगवान ने आकर उसकी रक्षा की ।

द्रौपदी एक बड़े प्रतापी राजवंश की वधू थी । उसके पांचों पति धर्मात्मा, साहसी और बलिष्ठ थे । कौरवों की सभा में जब उसके पांचों पति और अन्य गुरुजनों में किसी ने भी उसकी सहायता नहीं की और जब उसको ऐसा लगा कि अब उसके निरवस्त्र होने में विलम्ब नहीं है तो अपने कोअत्यंत निःसहाय और निर्बल पाकर उसने भगवान को याद किया और भगवान ने चीर बढ़ाकर उसकी सहायता की ।

हरेक नियम के पीछे एक सिद्धांत होता है । उपरोक्त नियम के पीछे भी एक ठोस सिद्धांत है । परमात्मा ने जब विश्व की रचना की तो विश्व का कार्य सुचारु-रूप से चलाने के लिए 'कर्म' की प्रधानता रखी । कहा भी है कि : 'कर्म प्रधान विश्व करि राखा, जो जस करहीं सो तस फल चाखा ।' यह भी एक प्रचलित

कहावत है कि 'जैसी करनी वैसी भरनी ।'

इसका अर्थ है कि मनुष्य के लिये कर्म करना अत्यंत आवश्यक है ।

इसीलिये गीता में श्रीकृष्ण ने मनुष्य को सर्वदा कर्म करते रहने का उपदेश दिया है और कहा कि :

स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः
(१८-४५)

अर्थात्, अपने-अपने कर्म करते हुए ही मनुष्य सिद्धि को प्राप्त होता है । उपनिषदों में भी कहा है 'चरैवेति, चरैवेति' चलते जाओ, चलते जाओ ।

अर्जुन जब हतोत्साह होकर निष्क्रिय

(शेषांश पृष्ठ ४६ पर)

आध्यात्मिक प्रश्नोत्तर

स्वामी अखंडानंदजी से वार्ता

☐ जयंत कृ

प्रश्न : 'कर्म में अकर्म देखने वाला और अकर्म में कर्म देखने वाला बुद्धिमान होता है और संपूर्ण कर्मों का करने वाला है'—स्वामीजी ! कृपया इस गीता-वचन का अर्थ समझायें ।

उत्तर : गीता के उक्त वचन का मूल श्लोक इस प्रकार हैं—

कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः ।
बुद्धिमान् मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत ।।
(गीता ४-१८)

इसमें समझना यह है कि कर्म देह, इंद्रयादि से किया जाता है और कर्म करने में शरीर में स्पंदन—हिलना चलना होता है; और यही कर्म जब (सकाम अथवा) निष्काम भाव से कर्तृत्वपूर्वक किया जाता है, तब उसका नाम धर्म हो जाता है । अब यदि कोई हाथ-पांव से कर्म करता रहे और अपने को असंग, अकर्ता आत्मा-परमात्मा के रूप में जाने तो उसे कर्म में भी अकर्म का दर्शन होता रहेगा । यही कर्म में अकर्म देखना है । इसके विपरीत यदि कोई अपना हाथ-पांव बांध ले और सिद्धासन लगा के पीठ की रीढ़ सीधी करके बैठ जाये और कहे कि इस अकर्मावस्था में भी वह कर्म ही रहा है, क्योंकि हाथ-पांव बांध का कर्म तो उससे हो ही रहा है अकर्म में कर्म देखना है ।

कर्म में अकर्म और अकर्म में क यह समझने की वस्तु है । बुद्धिमा मनुष्य है जो इस रहस्य को यथार्थ है । बुद्धिमान मनुष्य स्वरूपतः को कर्म-त्याग नहीं समझते, वे तत् द्वारा तत्त्व-दृष्टि से ही कर्म को और अकर्म को कर्म समझते हैं । बुद्धिमान मनुष्य कर्म-त्याग नहीं बल्कि कर्मानुष्ठान करते रहते कर्म करते हुए भी अपने को (आत् को) अकर्ता देखते हैं । उन्होंने संपूर्ण कर्म कर लिये, क्योंकि वे जो शुभाशुभ फल होते हैं, उनमें मुक्त कृतकृत्य हैं । यही 'वह संपू का करनेवाला है' इस वचन का है । यह व्याख्यान इस श्लोक के भाष्य के अनुकूल है ।

दूसरा व्याख्यान जो श्री शंक के अनुकूल है इस प्रकार है : क्रियते **इति कर्म ब्रह्मकार्यं महदादिस्थूलला**

स्मिन् कर्मणि सर्वत्र जगत्यकर्म, न विद्यते त्र कर्म तदकर्म निष्क्रियं परंब्रह्म, यः श्येत् । प्रतीतं प्रपंचं सर्वं ब्रह्मैव यः श्यति । अकर्मणि ब्रह्मणि कर्म जगत् यः श्येद् । अर्थात् महत्तत्त्वादि से लेकर स्थूल ष्टि तक जो प्राकृत जगत् है वह सब ह्मकार्य कर्मरूप जगत् है । उस कर्मरूप गत में जो अकर्मरूप निष्क्रिय परब्रह्म को देखता है अर्थात् यह संपूर्ण प्रातीतिक पंच ब्रह्मरूप ही है, ऐसा देखता है वही र्म में अकर्म को देखनेवाला है । इसी प्रकार निष्क्रिय परब्रह्म में जो यह कर्मरूप सृष्टि को अध्यस्त देखता है वह अकर्म में कर्म को देखता है । श्री शंकरानंदजी का कहना है कि इस प्रकार से जो कर्म में अकर्म और अकर्म में कर्म देखता है वही बुद्धिमान है अर्थात् ब्रह्मवेत्ता है, वही युक्त है अर्थात् ह्मनिष्ठ है और वही कृत्सूकर्मकृत् है र्थात् अपने सब कर्मों को आत्मा के ायात्म्य विज्ञान रूप खड्ग से काट डालता है, छिन्न-भिन्न कर देता है : **स एव कृत्स्न-र्मकृत् कृत्स्नानि सर्वाणि कर्माणि स्वयाथा-त्म्यविज्ञानखड्गेन कृन्तति छिनत्ति इति ।** ऐसा तत्त्वदर्शी पुरुष सब कर्म करता हुआ भी सब कर्मों से मुक्त ही है–उसके सारे र्म नष्ट हो जाते हैं ।

कुछ अन्य आचार्य इस श्लोक की याख्या एक दूसरे ही प्रकार से करते हैं। कहते हैं–**कर्मणि इति नित्यकर्मणि न्ध्यावंदनादौ तेषां फलानां अभावं अकर्म पश्येत् ।** जो कर्म में अर्थात् संध्यावंदनादि नित्य कर्मों में उनके फल का अभाव देखता है अर्थात् जो अपना नित्य-कर्म करता है, किंतु उनको अकर्मरूप देखता है यानी उन नित्यकर्मों का फल अदृष्ट का उत्पादक नहीं है, ऐसा देखता है, वही कर्म में अकर्म को देखने वाला है। और **'अकर्मणि च कर्म'** ऐसा देखता है कि संध्यावंदनादि नित्यकर्मों के परित्याग में उसको उनके उल्लंघन का पाप लगता है तो वह अकर्म में कर्म का दर्शन करता है। इसलिये जो इस दृष्टि से नित्यकर्म आदि का अनुष्ठान तो करता रहता है, परंतु सकाम कर्मों का परित्याग कर देता है। वह मनुष्यों में बुद्धिमान है और वह सब काम करते हुए भी मुक्त हो जाता है। कैसे कि सकाम कर्म न करने से उसके नवीन अदृष्ट की उत्पत्ति नहीं होती और नित्य-कर्म करने से जो पूर्वकृत कर्म हैं उनका क्षय हो जाता है और इस तरह एक दिन भगवदनुग्रह से वह मुक्त हो जाता है।

प्रश्न : 'मत्स्थानि सर्वभूतानि' और 'न च मत्स्थानि भूतानि'–गीता में इन परस्पर विरोधी वाक्यों की क्या संगति है, कृपया समझायें।

उत्तर : यह अनिर्वचनीयता के प्रतिपादन की एक प्रक्रिया है। भगवान् गीता में बार-बार कहते हैं कि :

मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव ।
(गीता ७–७)

जैसे सूत में सूत के मणके होते हैं, वैसे ही यह संपूर्ण विश्वसृष्टि मुझमें है।

'मयि' अर्थात् मुझमें ये संपूर्ण भूत स्थित हैं—अर्थात् जो प्रपंच को देख रहा है और उसको सत्य समझ रहा है, उसकी दृष्टि से प्रपंच अनेकरूप है और उसका अधिष्ठान एक है, इसलिये उसकी दृष्टि का अनुवाद करते हुए भगवान् कहते हैं कि ये जो संपूर्ण भूत हैं वे मुझ एक परब्रह्म परमात्मारूपी अधिष्ठान में स्थित हैं: **मत्स्थानि सर्वभूतानि ।** यह हुई एक दृष्टि ।

दूसरी दृष्टि यह है कि परमात्मा के सिवाय दूसरी कोई वस्तु है ही नहीं । फिर कौन किसमें स्थित हो ! इस दृष्टि से भगवान् कहते हैं कि 'भूत मुझमें स्थित नहीं हैं'—**न च मत्स्थानि भूतानि ।**

जैसे एक बालक ने पूछा—'यह नीलिमा कहां स्थित है ?' और किसी ने उत्तर दे, दिया—'आकाश में ।' उसी प्रकार 'मत्स्थानि सर्वभूतानि' से बताया कि ये वायु, अग्नि, जल, पृथिवी आदि सब भूत आकाश में, मुझ आकाशरूप ब्रह्म में स्थित हैं । अब यही प्रश्न उस बालक ने किसी दूसरे व्यक्ति से पूछा । वह तत्त्वज्ञ था । उसने उत्तर दिया कि यह आकाशरूप ब्रह्म जो है वह तो अखंड है, अद्वितीय है, और उसमें देश, काल आदि जो हैं वे कल्पित हैं; इसलिये जैसे नीलिमा आकाश में प्रतीत होते हुए भी आकाश के स्वरूप में नीलिमा है ही नहीं, वैसे ही परब्रह्म परमात्मा के स्वरूप में नीलिमा के समान प्रतीत होता हुआ यह भूत-भौतिक जगत् है ही नहीं, अतः 'न च मत्स्थानि भूतानि' ।

तो 'मत्स्थानि सर्वं भूतानि'—
की दृष्टि से है, और 'न च
भूतानि'—यह सर्वज्ञ की दृष्टि से
की दृष्टि से है। प्रबुद्ध की दृष्टि से
में परमात्मा से अलग दूसरी
ही नहीं है **'एकमेवाद्वितीयम्'**
बहुधा कल्पयन्ति', 'एकं सद् वि
वदन्ति', 'एकं सद् वा विवभू
इत्यादि जो श्रुतियां हैं, वे परमात्मा
का प्रतिपादन करती हैं । और इ
वाद कहने की हिम्मत तो मीम
भी नहीं है, क्योंकि वे मंत्र ग्रंथों
स्वीकार नहीं करते (ब्राह्मण-आ
ही वे अर्थवाद स्वीकार करते हैं)।
जो एकत्व का, अद्वितीयत्व का
है वह तज्ञ की दृष्टि से है और
नामरूप होने से—जिसमें सब स्थि
सर्वाधार है, ऐसे व्यापक तत्त्व
अल्पज्ञ की दृष्टि से है। एक तट
और दूसरा स्वरूप लक्षण—ऐसा ही

प्रश्न : गीता में कहा गया है
भूत होने के बाद हमको भक्ति
और भक्ति होने के बाद हमको ज्ञान
है'। कृपया इसका रहस्य सम

उत्तर : मूलतः यह प्रश्न गीता
से उठता है :

सिद्धिं प्राप्तो यथा ब्रह्म तथाप्नोति
समासेनैव कौन्तेय निष्ठा ज्ञानस्य
(गीता-

oo

बुद्ध्या विशुद्धया युक्तो धृत्यात्म

नियम्य च ।
ब्दादीन् विषयांस्त्यक्त्वा रागद्वेषौ
व्युदस्य च ।।
(गीता–१८-५१)

००

वविक्तसेवी लघ्वाशी यत्वाक्कायमानसः ।
यानयोगपरो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः ।।
(गीता–१८-५२)

हंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहम् ।
वमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते ।।
(गीता–१८-५३)

००

ह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति ।
मः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ।।
(गीता–१८-५४)

००

क्तया मार्माभजानाति यावान्यश्चास्मि
तत्त्वतः ।
तो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम् ।।
(गीता–१८-५५)

प्रश्न तो यह लंबा है परंतु ऐसा है कि हां भगवान को ज्ञाननिष्ठा की अंतिम वधि की प्राप्ति का क्रम-साधन बताना भीष्ट है। इसके लिये 'बुद्धचा विशुद्धचा क्तो' से प्रारंभ करके 'ब्रह्मभूतः' और मः सर्वभूतेषु' तक जो साधन बताये गये , वे सब त्वं-पदार्थ (कूटस्थ आत्मा) के धन और अधिगम में हेतु हैं। और द्भक्ति लभते पराम्' में तत्पदार्थ (जगत् अभिन्न निमित्तोपादान कारण ईश्वर) शोधन का जो असाधारण साधन भक्ति है उसका वर्णन किया गया है। 'भक्त्या मामभिजानाति' में भक्ति करण है, क्योंकि उससे परमेश्वर का 'अभिज्ञान' (पहचान होता है। माने भक्ति अभिज्ञान में साधन है यह बात स्पष्ट रूप से मूल में ही आ गयी है। इस प्रकार—**मद्भक्ति लभते पराम्—तत्पदार्थ विषया तत्पदार्थ विषयिणीं भक्ति लभते। तथा भक्त्या पराभक्त्या मामभिजानाति मां परीक्षणोति आत्मत्वेन जानाति। केन रूपेण जानाति यावान् परिमाणतः देशतः कालतः देशाधिकरणरूपेण कालाधिकरणरूपेण मामभिजानाति यश्चास्मि स्वरूपतः अभिजानाति।** भक्ति से परमात्मा किस रूप में जाना जाता है तो बताया कि देशातीत, कालातीत रूप से 'मैं' कितना बड़ा हूं, अर्थात् आदि-अंत से रहित मैं हूं इस रूप से, तथा मैं कैसा नित्य शुद्ध-बुद्ध-मुक्त-एक हूं यह तत्त्वतः अपने आत्मरूप से जाना जाता है। और इस ज्ञान का साधन भक्ति है। **'ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनंतरम्'** में त्वं-पदार्थ और तत्-पदार्थ का एकत्व हो जाता है।

इसलिये गीता की शैली यह है कि त्वं-पदार्थ और तत्पदार्थ का पृथक्-पृथक् निरूपण करके फिर दोनों की एकता का निरूपण कर देते हैं। यहां भक्ति का अर्थ परोक्ष परमात्मा (शास्त्र द्वारा परोक्षतया वर्णित परमात्मा) की भक्ति है, क्योंकि परोक्ष परमात्मा का विवेक बिना रुचि के, बिना प्रीति के नहीं हो सकता। अपरोक्ष

आत्मा (त्वं-पदार्थ) का विवेक तो बिना भक्ति के भी हो सकता है, परंतु परोक्ष परमेश्वर का (तत्पदार्थ का) विवेक बिना भक्ति के नहीं हो सकता। इसलिये तत्पदार्थ के विवेक के साथ भक्ति का होना आवश्यक है और त्वं-पदार्थ के विवेक के लिये अंतःकरण के दोषों का संकल्पों का परित्याग आवश्यक है। अपने अपरोक्ष 'अहं' को देह, इंद्रिय, मन और बुद्धि की शुद्धि करके जब कूटस्थ सच्चिदानंद रूप से ग्रहण किया जाता है तो यही 'ब्रह्मभूत' होना है। और जब भक्ति से, प्रीतिविशिष्ट वृत्ति से जगत् के अभिन्न निमित्तोपादान कारणभूत परमेश्वर का देशातीत कालातीत सच्चिदानंद रूप तत्त्व के रूप में चिंतन तन्मयता से किया जाता है तो यही पराभक्ति की प्राप्ति 'मद्भक्ति लभते पराम्' है। तदनंतर जब तत्त्वमस्यादि महावाक्यों के विचार से त्वं और तत् पदार्थों में सच्चिदानंद मात्र का ज्ञान होता है तो यही 'ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा' से सूचित किया गया है। 'विशते तदनंतरम्' से तत्पदार्थ और त्वं-पदार्थ के ऐक्य-बोध में परिनिष्ठा प्रदर्शित की गयी है। यही ज्ञाननिष्ठा की अंतिम अवधि है जिसका वर्णन श्री भगवान् को अभीष्ट था।

प्रश्न : स्वामीजी, जब पहले 'ब्रह्मभूत' हो ही गया तो बाद में भक्ति से जानने के लिये कौन-सा ब्रह्मज्ञान शेष रह गया ?

उत्तर : गीता में 'ब्रह्म' शब्द के साथ 'ब्रह्मपरमं' (८।३) 'ब्रह्म सनातनम् (४।३१) 'परं ब्रह्म परं धाम' (१ ऐसे शब्दों का भी प्रयोग मिल इससे ऐसा प्रतीत होता है कि ' हो जाने पर भी गीता के अनुसार को 'परम् ब्रह्म' का ज्ञान प्राप्त कर शेष है। जैसा पहले मैंने बताया ' से त्वं-पदार्थ का अधिगम ही यहां है। कूटस्थ आत्मा तत्त्वतः ब्रह्म परिशुद्ध अहं को 'ब्रह्मभूत' कहने आपत्ति भी नहीं है। असल में भूयाय कल्पते' कहने के बाद कहा है, इसलिये इससे यही प्रगट हो अंतःकरण के दोषों को त्यागकर को वृत्ति के आश्रय आत्मस्व पदार्थ) के अधिगम की योग्यता सामर्थ्य प्राप्त होता है और तदनंतर के अयोग्य अथवा अशक्य अवशि पदार्थ को 'यह मैं हूं' ऐसा दृढ़ होता है। यही त्वं-पदार्थ का अ जिसको यहां 'ब्रह्मभूतः' पद से व गया है। किंतु इस बोध में अपरिछिन्नता का बोध शेष रह जा तत्पदार्थ के शोधन एवं तत्-त्वं एकता के बोध से ही संभव है। सिद्धांत का अनुगमन गीता-शास्त्र गया है। उसी के लिये 'मद्भक्ति पराम्' और 'ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा तदनंतरम्' वाक्यों का प्रयोग किया है।

गीता में अन्यत्र भी इसी प निर्वाह किया गया है। जैसे गीता

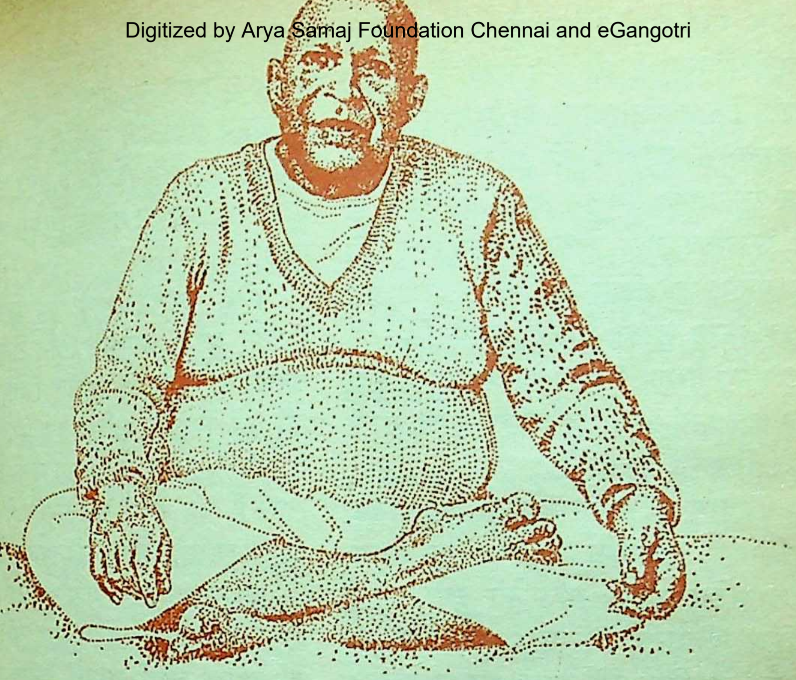

स्वामी अखंडानंदजी

ध्याय में २९, ३०, ३१ संख्या के श्लोकों है :

र्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
क्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ।।२९।।

—यह त्वं-पदार्थ का बोध हुआ । और

ो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति ।
स्याहंन प्रणश्यामि स च मे न
णश्यति ।।३०।।

से तत्पदार्थ का बोध हुआ । तथा

र्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः ।
र्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि
वर्तते ।।३१।।

में 'तत्' और 'त्वं' दोनों पदार्थों के कत्व का निरूपण किया गया है । 'सर्वथा वर्तमानोऽपि' से जीव-मुक्ति के विलक्षण सुख का भी निरूपण कर दिया है ।

गीता के संबंध में 'विचारत्रयी' में बहुत प्रौढ़ विचार हैं और उसको प्रकाशित करना चाहिये—ऐसा मेरा विचार है ।

प्रश्न : उपनिषद् में एक वाक्य आता है : यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः । इसमें वरण कौन करता है ? कृपया समझायें ।

उत्तर : उपनिषद् का पूरा मंत्र इस प्रकार है :

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो
न मेधया न बहुना श्रुतेन ।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः
तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूंस्वाम् ।।

यह मंत्र कठोपनिषद् में भी है और मुण्डकोपनिषद् में भी है। इसमें कहा यह गया है कि यह आत्मा न तो बहुत सुनने से, न बहुत-सी श्रुतियों को धारण करने से और न उनका प्रवचन करने से, किसी से भी उपलब्ध नहीं होता। किंतु जिसको यह वरण कर लेता है उसी के द्वारा यह प्राप्त किया जाता है और उसके लिये ही यह अपने यथार्थ स्वरूप को प्रकट कर देता है। अब यहां प्रश्न यह उठता है कि वरण कौन किसका करता है?

भगवान् श्री शंकराचार्यजी का मानना है कि यहां जीवात्मा के पुरुषार्थ का आत्यंतिक खंडन करना श्रुति को इष्ट नहीं है अपितु जीवात्मा के द्वारा परमात्मा की प्राप्ति के लिये जो आधा-अधूरा पुरुषार्थ किया जा रहा है, उसी का खंडन इष्ट है। कठोपनिषद् में इससे अगले मंत्र में ही श्रुति का कथन बिलकुल स्पष्ट है, जिसमें कहा गया है कि 'यह आत्मा बलहीनता से, प्रमाद से और अशास्त्रीय तप से प्राप्त नहीं किया जा सकता, अपितु 'एतैरुपायैर्यतते यस्तु विद्वान् तस्यैष आत्मा विशते ब्रह्मधाम'–इन उपायों से ही जो विद्वान् इस आत्मा की प्राप्ति का प्रयत्न करते हैं, वही ब्रह्मधाम में प्रवेश पाते हैं। यह बात भी कुछ संगत प्रतीत नहीं होती है कि परमात्मा जीवात्मा का वरण करना चाहे क्योंकि परमात्मा के लिये कुछ प्रयोजनीय नहीं है, कोई कर्त्तव्य नहीं है। अतः श्री शंकराचार्य ने इसकी संगति यह लगायी
है कि जब साधक या जिज्ञासु आ
प्रयत्न छोड़कर पूरे प्राणपण से अ
व्यक्तित्व के द्वारा परमात्मा का वर
चाहता है, वरण करता है, तब उ
इस परमात्मा का यथार्थ स्वरूप अ
जाता है:

यमेव परमात्मानम् एव एष
विद्वान् वृणुते प्राप्तुमिच्छति तेन
परमात्मा लभ्यः। अर्थात् जिस प
को यह विद्वान् यह साधक वरण
है अर्थात् प्राप्त करने की पूर्ण इ
लेता है उस वरण रूप प्रयत्न के
यह परमात्मा प्राप्त हो जाता है

श्री रामानुजाचार्यजी महाराज
ऐसे कहा–**एष परमात्मा यमेव**
शरणागतं भक्तं साधकं चेतनं
चेतनेन लभ्यः। अर्थात् जीवात्मा
में परमात्मा की प्राप्ति की
अभाव अनुभव करता है तब वह
के सर्वविध शरण हो जाता है।
यह परमात्मा जिस उस शरणाप
जीव को वरण कर लेते हैं, स्वी
लेते हैं उसको ही उनके अनुग्रह से
स्वरूप प्रकाशित कर देते हैं।

दोनों आचार्यों के अर्थ में
भेद या विरोध नहीं है, क्योंकि
उठता है कि परमात्मा किस जी
अनुग्रह करेंगे? यदि मनमाने ढं
का चयन करेंगे तो उन पर विष
और निर्दयता का आरोप लगेगा
जीव की योग्यता के अनुसार

‘साधक ही परमात्मा का वरण करता यह पक्ष सिद्ध हो जाता है। इस विषय ब्रह्मसूत्र का निर्णय यह है कि—**वैषम्य-घृण्ये न सापेक्षत्वात् तथा हि दर्शयति** २।१।३४) । भगवान् को भी जीवों के भाशुभ कर्मों की अपेक्षा रहती है अन्यथा नमें भी विषम व्यवहार और निर्दयता ा दोष रहेगा तथा ऐसा ही श्रुतियों में र्शाया गया है। भगवान् अपने अनुग्रह के वतरण के लिये जीव की तीव्र वरणेच्छा ो ही बहाना मान लेते हैं, बस यही निश्चय ता है।

एक तीसरा अर्थ इस श्लोक का इस कार है—**एष आचार्यः यमेव शिष्यं वृणुते स्मै एव भगवान् परमात्मा सच्चिदा-न्दकन्दः प्राप्तो भवतु** । जब आचार्य, रुदेव इस शिष्य का वरण कर लेते हैं ो इस शिष्य को ही परमात्मा की प्राप्ति ती है। किस प्रकार ? **तस्यैष आत्मा भवति उपास्योपि न भवति आत्मैव वृणुते तनूं स्वाम्। तस्य ए आत्मा अन्यो वति एवं स्वाम् तनूम्विवृणुते प्रकाश-ति निरावरणम् करोति।** उसके लिए ह परमात्मा उसका आत्मा ही है अन्य ोई उपास्य देव नहीं है—इस रूप में, त्मत्वेन प्राप्ति हो जाती है और अपने त्मा का अविद्या-आवरण भंग हो जाता —यह आचार्य की कृपा का प्रसाद है।

इस प्रकार तीन अर्थ मिलते हैं।

प्रश्न : ‘ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या’—इस क्ति का सद्शास्त्र से, सद्गुरु से, कथा-सत्संग से परोक्ष ज्ञान तो होता है, किंतु अपरोक्ष अनुभव नहीं होता। इसकी अपरोक्षानुभूति के लिये क्रम-साधन क्या है?

उत्तर : इसके लिए उपनिषदों ने ही पहले वैराग्य को साधन बताया हुआ है। वैराग्य में परीक्षण आवश्यक है, विचार करके वैराग्य होना चाहिये :

परीक्ष्य लोकान् कर्मचितान् ब्राह्मणो निर्वेदमायात्

‘कर्म से प्राप्त होने वाले लोकों की परीक्षा करके ब्राह्मण निर्वेद अर्थात् वैराग्य को प्राप्त हो जाय’। इसमें परीक्षण विवेक है और वैराग्य उसका फल है। इस प्रकार प्रथम विवेक और द्वितीय वैराग्य—ये दो साधन श्रुति ने बताया। तदोपरांत श्रुति षट्-संपत्ति का वर्णन करती है—**शान्तो दान्त उपरतस्तितिक्षुः समाहितो श्रद्धा-न्वित्तो भूत्वा आत्मन्येव आत्मानं पश्येत्।** ‘शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा और समाधान—इन छः वित्तों की संपत्ति लेकर साधक अपने आत्मा में ही आत्मा को देखे’। अंत में मुमुक्षा का वर्णन है—**मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये।** इसी को साधन-चतुष्टय कहते हैं। विवेक वैराग्य, षट्-संपत्ति और मुमुक्षा—इन चार साधनों से संपन्न जिज्ञासु ही वेदांत-विद्या के अधिग्रहण का अधिकारी होता है।

इस अधिकार-संपादन के पश्चात् मनुष्य में तत्त्वजिज्ञासा का उदय होता है। मैं कौन हूं, यह जगत् क्या है, इसका नियामक कौन है, उसका मेरे साथ क्या संबंध

है ? इस प्रकार के अनेक प्रश्न उसके मन में उदय होने लगते हैं। उस समय इसकी संज्ञा 'जिज्ञासु' होती है।

इसके बाद जिज्ञासु को चाहिये कि वह किसी श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु की शरण जाय । इसको गुरुपसत्ति भी कहते हैं। गुरु की प्रपत्ति के पश्चात् वह गुरुमुख से उपनिषदों का 'श्रवण' करे और उनका तात्पर्य-निश्चय करे। तदनंतर श्रुत अर्थ में अनुकूल वृत्ति से चिंतन करे और विपरीत अर्थ का निराकरण करे। इसी को 'मनन' कहते हैं । इससे उसके संशय निवृत्त हो जाते हैं तथापि पूर्व अभ्यास के कारण बुद्धि विपरीत धारणा में प्रवृत्त हो ही जाती है। इसके लिए उसे उपनिषदों के श्रुत-मत अर्थ में वृत्ति को प्रवाहित रखने का अभ्यास करना चाहिये और प्रयत्नपूर्वक विजातीय वृत्ति का तिरस्कार करते रहना चाहिये। इसी को 'निदिध्यासन' कहते हैं।

असल में श्रवण ही मुख्य साधन है। विवरणकार का मत है कि यदि कोई अत्यंत शुद्ध हृदय का जिज्ञासु हो तो उसको श्रवण मात्र से ही सत्य का साक्षात्कार हो जायेगा। लेकिन यदि उसके हृदय में संशय विपर्यय भी हों तो उसे मनन और निदिध्यासन करना भी अनिवार्य होगा। इसके बाद ही जब गाढ़ ब्रह्माकार वृत्ति होगी तब वह अविद्या का नाश कर देगी। मूल बात ब्रह्माकार वृत्ति की है, वह उत्तम जिज्ञासु को श्रवणमात्र से भी हो सकती है और श्रवण-मनन-निदिध्यासन से भी।

इस प्रकार वेदांत का जो सि कि 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो नापरः' उसका अपरोक्ष और दृढ़ अनुभव होने के लिए जो साधन गये हैं, उनका जीवन में संपादन अनिवार्य है अन्यथा तो वह एक ज्ञान ही है।

प्रश्न : यदि भक्ति सामान्य भ तो इसमें भक्त और भजनीय का अनिवार्य है; फिर अद्वैत कैसे सिद्ध क्या अद्वैत में भी भक्ति हो सकत

उत्तर : भक्ति चित्त की वृत्ति बल्कि यह कहना ठीक होगा कि विषयक प्रीतिविशिष्ट चित्त-वृत्ति भक्ति है। भजनीय में जो गुण हैं हैं, साक्षी-भास्य हैं और शास्त्र मन में आहित हैं। क्योंकि 'यह ई यह बात कोई इंद्रियों से तो ज्ञात नहीं है वह तो शास्त्र या सद्गुरु ज्ञात होती है। इस प्रकार हम देखते वस्तुजन्य जो ज्ञान है वह अंतः तदाकारता ही उत्पन्न करता है। शास्त्र या सद्गुरु से श्रवण करते हैं कि ऐसा है अथवा रामाकार या कृष्णा तो वह श्रवण-ज्ञान हमारे चित्त में कार, कृष्णाकार, रामाकार या निमित्तोपादानकारणाकार वृत्ति ही है। अब उसी वृत्ति में देखिये—वहां की विषयता की उपाधि से ईश्वर है वृत्ति की अधिकरणता की उपाधि है तो, जहां वृत्ति में अधिकरण है (

है) वहां तो जीवात्मत्व है और जहां वृत्ति में शास्त्रजन्य विषयत्व है वहां ईश्वरत्व है। अब यदि उपाधि को छोड़ दें तो जो अखंड चेतन है वही जीव में है और वही ईश्वर में भी है, दोनों में दो नहीं हैं। भक्ति की उपाधि से जीव का जीवत्व है और भजनीयत्व की उपाधि से ईश्वर का ईश्वरत्व है। और यदि भक्ति और भजनीयता दोनों को छोड़ दिया जाय तो दोनों में एक ही परमात्मा है। आशय भक्ति से भी परमात्मा की एकता से है।

इसलिये तत्त्वज्ञ पुरुष भी व्यवहार में सदा भक्ति करते रहते हैं, चाहे वे लोकसंग्रह की दृष्टि से करते हों और चाहे रसास्वादन की दृष्टि से करते हों (अपने पूर्वाभ्यास के कारण) परंतु है वह मात्र व्यावहारिक ही। श्री मधुसूदन सरस्वती गीता की गूढ़ार्थ-दीपिका टीका में कहते हैं कि : **अद्वेष्टृत्वादिवत्तेषां स्वभावो भजनं हरेः**

जैसे तत्त्वज्ञान हो जाने पर 'अद्वेष्ट' रहने का तत्त्वज्ञानी के लिए कोई प्रयोजन नहीं है, 'अराग' रहने का भी कोई प्रयोजन नहीं है–राग-द्वेषादि के होने या न होने से, मुक्ति और बंधन के होने न होने से तत्त्वज्ञ को कोई प्रयोजन नहीं, क्योंकि उसका परम प्रयोजन सिद्ध हो चुका है। अतः उसके लिये वृत्ति और उसमें भासने वाले समस्त गुणावगुण मिथ्या हो गये हैं, फिर भी उनका स्वभाव ही अद्वेष्टा, मैत्र और करुणापूर्ण हो जाता है और वे इन्हीं अद्वेष्टृत्वादि गुणों के स्वभाव को लेकर ही अपना जीवन व्यतीत करते हैं; वैसे ही भक्ति भी तत्त्वज्ञानी का एक स्वभाव है। उसने तत्त्वज्ञान को पूर्व भक्ति का अभ्यास किया है और यह बाधितानुवृत्ति से उसके जीवन में चलती रहती है। जैसे

(शेषांश पृष्ठ ६४ पर)

गीत

□

— कमलापति मिश्र —

तुम चांद नहीं दे सकते तो बादल दे दो

तुमसे तो मिली पराभव भी हो जाती जय
तुमने जो गरल दिया, देखो कितना मधुमय
यदि फागुन का उल्लास नहीं तुम दे सकते
मेरे सूने नभ को पावस के पल दे दो
तुम चांद नहीं दे सकते तो बादल दे दो !

तुम छू देते, तुम ज्योति-पुंज बन जाता है
हंस देते, मरु में सुधा-सलिल लहराता है
यदि मेरा मधुवन नहीं सुमन का अधिकारी
अपने हाथों इसको दावानल दे दो
तुम चांद नहीं दे सकते तो बादल दे दो !

तुमने सौ बार धरा पर चांद उतारा है
अनछुआ नहीं तुमसे कोई भी तारा है
रोशनी नहीं यदि मेरी किस्मत में, मुझको
किरणों के स्वामी, तुम तम का आंचल दे दो
तुम चांद नहीं दे सकते तो बादल दे दो !

–४ ए. पार्क रोड, लखनऊ-२२६००१

……

(पृष्ठ ३५ का शेषांश)

हो गया था और अपने अस्त्र रख दिये थे तब भगवान कृष्ण ने उसको 'क्षत्रियोचित कर्म' करने की प्रेरणा दी। श्रीकृष्ण ने यह भी कहा है कि मेरे लिये कुछ भी कर्म करना बाकी नहीं है फिर भी आदर्शस्वरूप मैं कर्म करता हूं।

अगर मनुष्य कर्म करना छोड़ देगा तो वह निष्कर्मी होकर आलसी हो जायेगा। योगवासिष्ठ में श्रीरामचंद्र को उपदेश देते हुये मुनि वासिष्ठ ने कहा कि 'आलस्य' ही मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है।

किसी ने कहा है कि केवल अंग्रेजी का शब्दकोश ही एक ऐसा स्थान है, जहां सफलता (Success) काम (Work) के पहले आता है।

इसी सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए यह नियम बनाया गया है कि मनुष्य अपना उद्देश्य प्राप्त करने के लिए पहले अपना पूरा बल लगाये। सफलता के लिये पहले अपने सारे बलों का उपयोग करना आवश्यक है। और जब वह अपने सारे बलों का प्रयोग करके भी सफल नहीं हो पाये तभी उसको अंतिम अमोघ अस्त्र के रूप में यानी, भगवान के नाम का सहारा लेना चाहिये। ऐसा करने से उसको सफलता अवश्य मिलती है।

रामायण में जहां-जहां दानवों से युद्ध का वर्णन आया है, वहां अमोघ शक्तियों का प्रयोग तभी किया गया, जब दूसरी शक्तियों का प्रयोग विफल हो जाता है।

सूरदास के जिस पद का ऊपर किया गया है, वह पूरा पद इस प्रका

सुने री मैंने निर्बल के बल राम।
पिछली साख भरूं संतन की आड़े
काम ॥ ध्रु
जब लग गज बल अपनो बरत्यो नेक
नहिं का
निर्बल ह्वै बल राम पुकार्यो आये आधे ना
द्रुपद-सुता निर्बल भइ ता दिन गह
निज ध
दुःशासन की भुजा थकित भइ वसन
भये श्याम
'अप-बल, तप-बल और बाहु-बल चौं
बल द
सूर किशोर कृपा से सब बल हारे
हरिनाम

०००

मैं हरि पतित पावन सुने

तुलसीदासजी का एक पद है, जि पहली पंक्ति है : 'मैं हरि पतित सुने'। यह पूरा पद निम्नलिखित है:

मैं हरि पतित पावन सुने
मैं पतित तू पतित पावन दोऊ बानक
व्याधि गणिका गज अजामिल
साखि निगमन भणे
और अधम अनेक तारे कापै जात ग
जाहि नाम अजान लीन्हे नरक सुरपुर
दास तुलसी सरण आयो, राखिये आप

इसमें तुलसीदासजी ने हरि-नाम महिमा गायी है। उन्होंने कहा है कि

का नाम पतित पावन है, यानी पापियों को पवित्र करने वाला है, पाप विमोचन है। और इसके पश्चात अगणित जो पापी हरि का नाम लेने से पवित्र हो गये उनमें से कुछ के नाम गिनाये हैं। साथ में यह भी कहा है कि हरि-नाम की महिमा को समझकर जिन्होंने नाम स्मरण किया, वे तो पवित्र हुए ही, परंतु जिन्होंने अनजान में भी नाम स्मरण किया वे भी पापों से मुक्त हो गये। अमृत जाने में पिये या अनजाने में, उसका असर तो अवश्य होगा ही।

सूरदासजी के पद में प्रार्थना का फल बताया गया है। तुलसीदासजी के पद में हरि-नाम की महिमा बतायी गयी है। प्रार्थना और हरि-नाम स्मरण में अंतर है। मनुष्य प्रार्थना भगवान से कुछ मांगने के लिए करता है। वह प्रार्थी होता है। परंतु हरिनाम स्मरण में उसका मांगने का कोई उद्देश्य नहीं है।

वह तो अपने मन की शांति के लिये एवं मन को पवित्र करने के लिए ही भगवान का नाम नित्य नियम से स्मरण करता रहता है।

नाम स्मरण दो प्रकार से होता है। एक मानसिक और दूसरा मौखिक। मानसिक नाम स्मरण में अधिकत: मनुष्य ध्यानावस्थ होकर भगवान का चिंतन करते हैं, अंग्रेजी में इसको 'मेडीटेशन' कहते हैं। परंतु मौखिक नाम स्मरण किसी भी समय कोई भी काम करते हुए, किसी भी हालत में किया जा सकता है। फिर मौखिक नाम स्मरण का अभ्यास करने से मनुष्य को ध्यानावस्थ होकर मानसिक नाम स्मरण करने में सरलता हो जाती है; मौखिक नाम स्मरण इसकी पहली सीढ़ी है।

आज के विज्ञान के युग में प्रश्न यह उठ सकता है कि भगवान का नाम स्मरण से मनुष्य पवित्र कैसे हो जाता है? मनुष्य जब पाप करता है, तब सबसे पहले पाप का विचार उसके मन में पैदा होता है, और मन में पैदा होने के बाद वह कार्यरूप में परिणित होता है। यदि मन में पाप का विचार आये ही नहीं तो फिर उसके कार्यरूप में परिणित होने का प्रश्न ही नहीं उठता है।

हरि-नाम स्मरण करने वाले के मन में पाप करने का विचार आने के लिए स्थान ही नहीं रह जाता है। यह एक शाश्वत सत्य है।

कोई भी मनुष्य स्वयं इस प्रयोग का अपने ऊपर परीक्षण कर इसकी सत्यता का अनुभव कर सकता है। यह ध्यान रखना चाहिये कि किसी भी औषधि के प्रभाव का अनुभव होने में कुछ समय लग जाता है।

पाप निवारण के लिए हरिनाम की औषधि के प्रभाव का अनुभव भी कुछ विलंब से हो सकता है। इसलिये सफलता के लिए इसका निरंतर अभ्यास करते रहना आवश्यक है। **—सेंचुरी भवन,**

डा. एनी बेसेंट रोड, बंबई-२५

□

नुस्खा

□ कन्हैयालाल क

आज़ाद पार्क में एक मजमाबाज़ न बड़ी भीड़ इकट्ठी कर रखी थी । वह स्टूल पर खड़ा था और उसने अपने दायें ओर बायें उगे हुए दो पौधों पर कुछ तसवीरें लटका रखी थीं । मजमा को संबोधित करते हुए उसने कहा, 'मेरे सम्मानित दोस्तो । मैं न हकीम हूं, न मदारी । मैं जागदूर भी नहीं । मेरे पास गंजी चांद पर बाल उगाने का कोई नुस्खा नहीं । असल में अगर आदमी एक बार गंजा हो जाये, उसके सिर पर कभी बाल नहीं उगते, जैसे बंजर जमीन में घास नहीं उगती । मैं आपको जादू का कोई खेल नहीं दिखाऊंगा, क्योंकि जिसे आम भाषा में जादू कहा जाता है, वह सहज हाथ की सफाई है । जादूगर का कमाल यह है कि वह कामयाबी के साथ दर्शकों की आंखों में धूल झोंक सकता है । मैं किसी मदारी की तरह बड़े-बूढ़ों की दाढ़ियों में से अंडे बरामद नहीं करूंगा । मेरी राय में ऐसा करना परले दर्जे की बदतमीजी है । मेरे बैग में काली खांसी, तपेदिक या यरकान की कोई दवा नहीं । अगर आप में से कोई शख्स इन नामुराद मर्ज़ों में फंसा है, तो उसे किसी डाक्टर या हकीम से संपर्क करना चा

मजमा में से किसी शख्स ने पूछा, तुम पार्क में खड़े क्या कर रहे हो? हुजूम किस लिए इकट्ठा कर रखा है

मजमाबाज़ ने जवाब दिया, 'मैं विषय की तरफ ही आ रहा था। हुआ आपने मुझसे यह सवाल सम्मानित दोस्तो ! मेरे पास एक हुआ नुस्खा है । यह मुझे किसी संन्यासी या योगी से नहीं मिला। यह अपनी ईजाद है । इस नुस्खे का करने के लिए मैं हर शहर में प्रकट हूं, लेकिन एक घंटा से ज्यादा नहीं रता, क्योंकि मेरे पास वक्त बहुत और यह दुनिया बहुत-बहुत विशाल इस वक्त पांच बजे हैं । छह बजे मैं शहर से चला जाऊंगा। और फिर कभी आऊंगा । मेरा भी जोगी वाला फेरा है

किसी और शख्स ने पूछा, 'औ तुम्हारे पास किस चीज़ का नुस्खा है

मजमाबाज़ बोला, 'मैं उसी विषय तरफ आ रहा था। सम्मानित दोस्तो! खोलकर सुन लीजिये। मेरे पास त

और झगड़ालू बीवी को ठीक करने का नुस्खा है।' सब लोग हंसने लगे। मजमाबाज़ ने बहुत संजीदगी से कहा, 'आप हंस रहे हैं। खुदा न करे, आपका वास्ता किसी बद-मिज़ाज, सड़ियल, और बदज़बान बीवी से पड़ जाये, तो फिर आप खून के आंसू रोयेंगे।

'यह देखिये, मेरे दायें तरफ एक तसवीर टंगी है। यह एक मशहूर प्रोफेसर की तसवीर है। आपने अखबारों में पढ़ा होगा कि पिछले दिनों उसने खुदकुशी कर ली। उसने ऐसा क्यों किया? उसका अभी-अभी ब्याह हुआ था। बदकिस्मती से उसे बड़ी लड़ाका और बदमिज़ाज बीवी मिली, जिसने रात-दिन उसकी जान मुसीबत में डाल रखी थी। वह ज़िंदगी से तंग आ गया। उसने सोचा, ऐसी ज़िंदगी से मौत हज़ार दर्जा अच्छी है। प्यारे दोस्तो! हिसाब लगाकर देखा गया है कि सौ में से अठावन पति इसलिए खुदकुशी करते हैं, क्योंकि उनकी बीवियां लड़ाका होती हैं। जिनमें खुदकुशी करने की हिम्मत नहीं होती, वह पागल हो जाते हैं। अब ज़रा मेरी बायीं तरफ लटकी हुई तसवीर को देखिये। यह एक खूबसूरत नौजवान की तसवीर है। आप यह सुनकर हैरान होंगे, कि यह सत्ताईस बरस की उम्र में तपेदिक में ग्रस्त हो गया। वजह? उसकी बीवी हर रोज़ उसे सख्त-सुस्त कहा करती थी। वह हर वक्त दिल में कुढ़ता रहता था। आखिर वह बम्बई के सिविल अस्पताल में एड़ियां रगड़-रगड़कर मरा। अफसोस, कितना दर्दनाक अंजाम हुआ उस नौजवान का! किसी ने सच कहा है, 'लड़ाका

कार्टून : एम. चंदर

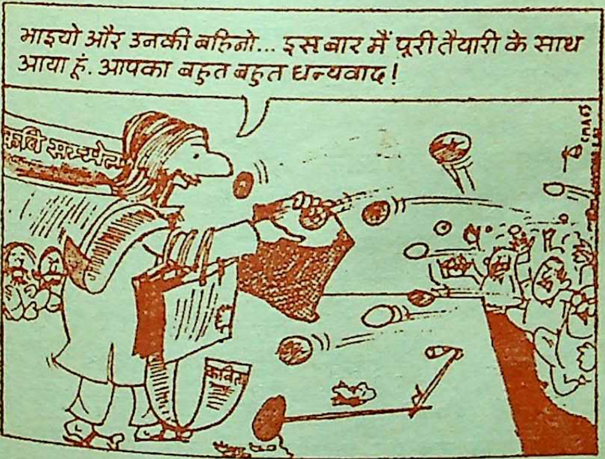
भाइयो और उनकी बहिनो... इस बार मैं पूरी तैयारी के साथ आया हूं. आपका बहुत बहुत धन्यवाद!
कवि सम्मेलन
कविता

बीवी दुनिया की सबसे बड़ी लानत है।'

मजमा पर सन्नाटा छा गया। मजमाबाज़ ने तीसरी तसवीर की तरफ इशारा करते हुए कहा, 'यह तसवीर बनारस के एक सेठ की है। आजकल वह रांची के पागलखाने में है और हर वक्त 'शकुंतला पर खुदा की लानत... शकुंतला पर खुदा की लानत' की रट लगाता है। शकुंतला उसकी बीवी का नाम है। प्यारे दोस्तो ! कहते हैं, इश्क ने हज़ारों घर तबाह किये। इश्क तो यों ही बदनाम है। इश्क से कहीं ज्यादा घर लड़ाका बीवियों ने बरबाद किये। उन्होंने तो मशहूर लेखकों को भी माफ नहीं किया। आपने रूसी लेखक टालस्टाय की बद-मिजाज बीवी का किस्सा ज़रूर सुना होगा। टालस्टाय अपने उपन्यास का एक परिच्छेद पूरा कर रहा था कि इतने में वह चाय लायी और चिल्लाकर कहने लगी, 'पहले चाय पी लो। फिर लिखते रहना।'

टालस्टाय ने जवाब दिया, 'एक मिनट ठहरो।'

बीवी को जो गुस्सा आया, तो उसने गर्म चाय टालस्टाय पर उंडेल दी। बेचारे टालस्टाय ने फिर भी मुस्कराकर कहा, 'मैं जानता था कि बादल गरज रहा है, ज़रूर बरसेगा।'

'अंग्रेज़ शायर ड्राईडन की बीवी इतनी बद-मिज़ाज थी कि जब उसका देहांत हुआ, तो ड्राईडन ने उसकी कब्र पर यह शब्द खुदवा दिये, 'यहां मिसेज़ ड्राईडन आराम कर रही है और उसकी मौत के उसका शौहर भी आराम कर रहा है।'

'मेरे प्यारे दोस्तो ! अगर आप किसी बदनसीब के पल्ले इस किस्म बीवी पड़ी है, तो घबड़ाने, शरमाने, होने या खुदकुशी करने की जरूरत, आप सिर्फ एक रुपया खर्च करके नुस्खा खरीद सकते हैं। खयाल माइये, एक रुपया क्या चीज़ है उस और शांति के मुकाबले में, जो आ अपनी लड़ाका बीवी को सीधे रास्ते लाकर हासिल होगी। देखिये, झेंपने ज़रूरत नहीं। घर-घर यही हाल खुशमिज़ाज बीवी तो आज इत्तफाक मिलती है। वह अगर नायाब (दु नहीं, तो कम मिलने वाली ज़रूर आपने गालिब का अपनी बीवी के बा लतीफा सुना होगा। उसका नाम राव बेगम था। एक दिन वह एक मकान देखने गयी। गालिब ने पूछा, आया नया मकान ?' उसने जवाब 'मकान तो अच्छा है, लेकिन सुना उसमें एक बला रहती है।' गालि टिप्पणी की, 'दुनिया में आपसे बढ़कर कोई बला है ?' हां साहब, मैं नुस्खे ज़िक्र कर रहा था। जिस शख्स को ज हो, आवाज़ देकर खरीद सकता है। नुस्खा एक लिफाफे में बंद है। इसे घ जाकर पढ़ना होगा, लेकिन किसी श ज़िक्र न कीजियेगा कि इसमें क्या लि वरना इसका असर खत्म हो जायेगा।

एक नौजवान ने नुस्खा खरीदने के लिए आवाज़ दी । बाकी लोग उसकी तरफ देखकर मुसकराये । मजमाबाज़ ने कहा, 'मैं इस नौजवान की नैतिक हिम्मत की दाद देता हूं । उस झूठी शरम को ताक पर रखते हुए अपनी गृहस्थ-ज़िंदगी को खुशगवार बनाने के लिए नुस्खा खरीदा है। प्यारे दोस्तो ! मैं यहां सिर्फ पंद्रह मिनट और ठहरूंगा । जिसे नुस्खे की ज़रूरत है, फौरन खरीद ले । फिर यह नुस्खा किसी कीमत पर भी उपलब्ध नहीं होगा ।'

बीस-पच्चीस व्यक्तियों ने नुस्खा खरीद लिया । मजमाबाज़ ने पौधों से तस्वीरें उतारीं और चलता बना ।

जिस नौजवान ने सबसे पहले नुस्खा खरीदा था, वह लंबे-लंबे डग भरता हुआ अपने घर पहुंचा, लिफाफा खोलकर नुस्खा पढ़ा ।

लिफाफे में एक कागज़ का पुरज़ा था, जिस पर लिखा था, 'लड़ाका बीवी को सीधी राह पर लाने के लिए सिर्फ तीन तरकीबें हैं : पहली हमेशा उसकी हां में हां मिलाइये, चाहे वह फिजूल और बेतुकी बात करे । आप सदा कहिये, सुभान अल्लाह, ठीक फरमाया आपने । अगर यह गुण कारगर साबित होता न देखें और वह बदज़बानी पर उतर आये, तो आप ऐसी एक्टिंग कीजिये, जैसे आप पर बेहोशी छाने वाली है ।

दो-एक मिनट के बाद आप धड़ाम से फर्श पर गिर पड़िये, जैसे सचमुच आप बेहोश हो गये हैं । अगर यह तरकीब भी बेकार साबित हो, तो फिर चुपके से घर से भाग जाइये और उस वक्त तक घर वापस न आइये, जब तक कि वह अखबारों में ऐलान न करे कि उसने बद-ज़बानी और बद-मिज़ाजी से तोबा कर ली है और आइंदा कभी आपको तंग नहीं करेगी ।'

[प्रस्तुति : सुरजीत]

□

* * *

अथाह लालसा

अथाह राग द्वेष
कहीं ग्लानि क्रोध

शांति अशांति बनी
संयम आचार का

गया बोध
सब कुछ कर डाला

मन को फिर भी नहीं मोद
अथाह लालसा जीवन में

जीवन का उद्देश्य
शोध !

—शैलेन्द्र सिंह चौहान
१२८/२४३, एच-२, किदवई नगर,
कानपुर-२०८०११

शान्ति का प्रतीक : कबूतर

□ अभिनव

कबूतर शांति के प्रतीक रूप में सारे संसार का प्रिय पक्षी माना जाता रहा है। पुराने जमाने की लोक कथाओं और धार्मिक कथाओं का कबूतर मनमोहक पात्र रहा है। राजा शिवि की पुराण कथा में इंद्र ने कबूतर का रूप धारण किया था। राजा शिवि ने कबूतर की रक्षा के लिए अपने शरीर का मांस बाज को अर्पित किया था। इस तरह की अनेकों कथाएं प्रचलित हैं, जिसमें कबूतर की महत्ता को बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत किया गया है। पुराने समय से ही चित्रकारों और मूर्तिकारों ने भी अपनी कला से कबूतर को इज्जत बख्शी है।

संस्कृत साहित्य में कबूतर का अनेक बार उल्लेख हुआ है। एक श्लोक में कहा गया है कि कबूतर मधुर वाणी बोलकर, अपनी गर्दन मटकाकर मदमस्त आंखों से कबूतरी से अनुनय-विनय करता है। कबूतरी की स्वीकृति पाकर वह जोड़ा बांधकर वैवाहिक जीवन अपना लेता है। यजुर्वेद में उल्लेख है कि मित्रता, प्रेम और परस्पर सद्भाव के लिए कबूतर का आचरण अनुकरणीय है।

हमारे देश के बादशाहों, नवाबों और राजा-महाराजाओं का कबूतर प्रेम
हास में बहुचर्चित हुआ है। कबूतरों
बढ़िया नस्लों को पालना, दाना चुगा
उन्हें लड़ाना आदि उनके प्रिय शगल
साथ ही कबूतरों से डाक भिजवाने का
पुराने जमाने से काम लिया जाता
सम्राट अशोक के काल में कबूतरों
डाक पहुंचाने का रिवाज था।
की 'कादंबरी' में उल्लेख है कि राजा
पीठ ने अपने महल की छत पर
के दड़बे और उनके बैठने के लिए
रियां बनवा रखी थीं। कौटिल्य ने
उल्लेख किया है कि कबूतरों को युद्ध
में सूचनाएं भेजने के काम में नियुक्त
जाता था। बादशाह बाबर भी
पालने का शौकीन था। अपने पिता
शेख मिर्जा की मौत के समय वह
कबूतरखाने में ही था। 'आईने अकबरी
लेखक अबुल फजल ने लिखा है कि
ने लगभग बीस हजार कबूतर पाल
जिनकी देखभाल के लिए पचासों
चाकर नियुक्त थे। ये कबूतर काफी
क्षित थे और दूर-दूर तक डाक ले
और लाते थे।

शाहजादे सलीम और मेहर-उन-

की कबूतर वाली कथा काफी प्रसिद्ध है। सलीम मेहर को दो कबूतर पकड़ाकर चला जाता है। लेकिन एक कबूतर उसके हाथ से उड़ जाता है। कुछ देर बाद जब सलीम लौटकर आता है और पूछता है कि एक कबूतर कहां गया ? तो मेहर जवाब देती है कि उड़ गया। सलीम पूछता है कि कैसे उड़ गया ? तब मेहर दूसरे कबूतर को उड़ाकर बड़े भोलेपन से उत्तर देती है कि ऐसे उड़ गया।

दिल्ली के बादशाह शाह आलम के बारे में कहा जाता है कि एक दिन वह अपनी छत पर पालतू कबूतरों को दाना चुगा रहा था तभी उसकी आंखें पड़ोस के मकान में रहने वाली एक सुंदर युवती पर पड़ीं। शाह आलम और उस सुंदरी के बीच एक जर्जर दीवार होने से वह युवती से आंखें नहीं मिला पा रहा था। सुंदरी को अच्छी तरह देख सकने की ललक ने शाह आलम को बैचेन कर दिया और उसने अपने कबूतरों को हुक्म दिया कि वे उस जर्जर दीवार को गिरा दें। स्वामी का हुक्म पाते ही कबूतरों ने उस जर्जर दीवार को गिरा दिया। शाह आलम और सुंदरी के बीच अब कोई दीवार नहीं थी, वे काफी देर तक एक-दूसरे को निहारते रहे। परंतु स्वामीभक्त कबूतरों के प्राण दीवार के नीचे दबकर निकल गये। उन कबूतरों की अकारण मौत की खबर पाकर उनके छह प्रशिक्षकों ने आत्महत्या कर ली थी।

कई पुराने राजा-महाराजा कबूतरों के इस कदर शौकीन थे कि उन पर लाखों रुपये लुटाते और कई अजूबे करते थे। बड़ौदा रियासत के महाराज खाण्डेराव गायकवाड़ (सन १८५६-१८७०) को एक अजीब शौक था। हर वर्ष वे अपने कबूतर-कबूतरियों के झुंड में से एक खूबसूरत जोड़ा चुनते और उसका विवाह बड़ी धूम-धाम से करते थे। कबूतर और कबूतरी को एक सजे-धजे हाथी पर बैठाकर विवाह

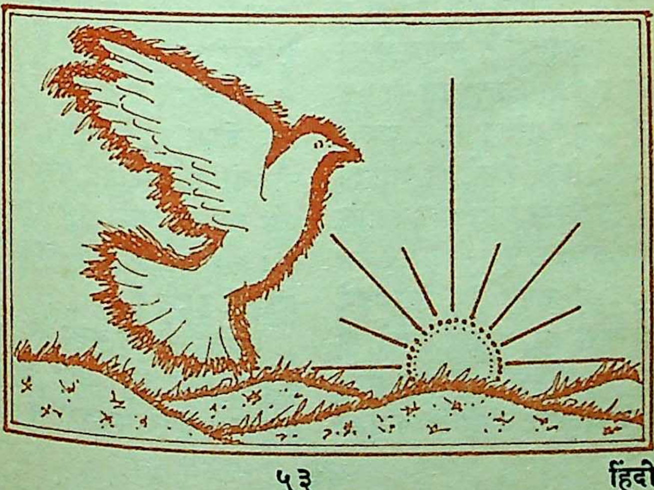

स्थल पर ले जाया जाता था । बारात में सैकड़ों जमींदारों और गणमान्य नागरिकों के साथ महाराज खाण्डेराव खुद जाते थे। बड़ा भारी भोज आयोजित होता और दूल्हा-दुल्हन को बड़े-बड़े लोग बेशकीमती उपहार देते थे ।

अपने शासन काल में महाराज खाण्डेराव ने बयालीस कबूतर-कबूतरियों का विवाह संपन्न कराया जिस पर खजाने से लगभग दो करोड़ रुपया खर्च हुए थे। महाराज के कबूतरखाने पर लगभग तीन लाख रुपये सालाना व्यय होता था ।

कबूतरों ने समाचार भेजने के काम में ऐतिहासिक प्रसिद्धि पायी है । वाटरलू के युद्ध में हार हो जाने का समाचार नेपोलियन बोनापार्ट को एक कबूतर ने ही पहुंचाया था । सन १८३० में, जब 'रायटर' नामक प्रसिद्ध संवाद समिति का गठन हुआ था तो उसके संस्थापक जुलियस रायटर ने ब्रूसेल्स और आचेन के बीच कबूतरों के जरिये ही संवाद भेजे थे । प्रथम विश्व युद्ध में भी कबूतरों से संवाद भेजने का काम लिया गया था । उस काल का एक कबूतर, जिसका नाम मॉकर था, ने अपनी जान पर खेलकर संवाद भेजने का दायित्व निभाया था । उसकी एक आंख तोप के गोले का एक टुकड़ा लगने से फूट गयी, पर उस जांबाज कबूतर ने समय पर महत्वपूर्ण संदेश पहुंचा दिया था । चोट लगने के दो साल बाद तक मॉकर जिंदा रहा था। एक अनुमान के अनुसार दोनों विश्व युद्धों में करीब पांच लाख से अधिक संदेश क तरों द्वारा भेजे गये थे । युद्ध काल में टे ग्राम व टेलीफोन के तार काट दिये ज थे और उनसे भेजे गये संदेश गोपनीय नहीं रह पाते थे पर कबूतरों ने इस का को बड़ी विश्वसनीयता से पूरा किया था

ब्रिटेन के हजारों नागरिकों ने दू विश्व युद्ध काल में अपने हजारों पाल कबूतरों को सरकार को दे दिया था भारत सरकार ने भी कबूतर को न मा का एक आदेश जारी किया था।

कबूतर एक ऐसा पक्षी है, जो करी करीब सारे संसार में पाया जाता है कबूतर हर प्रकार के मौसम में अप जीवन बखूबी बिता सकता है । कबू टिटहरी वर्ग का पक्षी है । नर-मादा रूप-रंग लगभग एक समान होता है कबूतर मिट्टी के टीले, घरों की छतों, छ और चौड़ी संधों में रहते हैं। अंडे मादा यहीं देती है । अंडे देने का स जनवरी से मई माना गया है, पर ये सा में चार बार अंडे देती है और एक बा में अधिकतम तीन-चार अंडे जनती है एक जोड़ा अपने जीवन काल में लग पौने दो सौ से अधिक बच्चे पैदा करता है एक वर्ष की मादा गर्भ धारण कर सक है । कबूतरों की आयु लगभग बारह व तक की होती है ।

कबूतरों के दो मुख्य भेद हैं, एक जंग कबूतर और दूसरे पाले जाने वाले सुंद कबूतर । सुंदर कबूतरों में चीना, मुक्खे

अं

गोला, लोटन, लक्का, शीराजी आदि लोकप्रिय नस्लें हैं, जिन्हें कबूतर पालने वालों के पास देखा जा सकता है। लक्का कबूतर अपनी टेढ़ी गर्दन व उठी पूंछ के कारण शानदार दिखता है। शीराजी सबसे सुंदर कबूतर माना जाता है। यह कद में भी बड़ा होता है। लोटन कबूतर आकाश और जमीन में भी पलटियां खाकर लोगों का मनोरंजन करता है। ओरिएंटल फिल नस्ल का कबूतर बहुरंगी होता है। मोर जैसे पंख वाले भी कबूतर होते हैं। कावुली कबूतर लंबी और ऊंची उडान के कारण बहुमूल्य माना जाता है। इसे असील भी कहते हैं। अधिकतर कबूतरबाज असील को ही पालना पसंद करते हैं।

कबूतर अपनी तेजी से बढ़ती संख्या के कारण सिर दर्द बन गये हैं। इसी कारण इटली के टूरिन क्षेत्र में कबूतरों को खिलाये जाने वाले दानों में गर्भ निरोधक दवा मिलायी जा रही है। मजे की बात यह है कि पोप के आदेशानुसार इटली में आदमी गर्भ निरोधक दवाएं इस्तेमाल नहीं कर सकते। पहले यहां के नगर निगम ने कबूतरों को दाना चुगाने वालों पर एक सौ बयालीस डालर का आर्थिक दंड लगा दिया था। बाद में अदालत ने इसे अवैधानिक करार दे कर कबूतर शौकीनों को दाना चुगाना मानवीय अधिकार बताया। इस आदेश को सुनकर वहां के नगर निगम ने गर्भ निरोधक मिले दानों को चुगाने हेतु बेचना शुरू किया, ताकि सांप भी मर जाये और लाठी भी न टूटे।

कबूतर की बीट गंदगी तो फैलाती ही है साथ ही पत्थरों को गलाती भी है। प्राचीन महत्व की इमारतों को तो कबूतर की बीट भारी क्षति पहुंचाती है, क्योंकि उनकी बीट में एक प्रकार का तेज तेजाब होता है।

शांति का प्रतीक कबूतर कई कंपनियों के मालिकों की नाक में दम किये हुए हैं। जापान की जानी-मानी कंपनी 'निप्पोन स्टील्स' के कावासा क्षेत्र स्थित गोदाम में कबूतरों ने बड़ा आतंक मचा रखा था। उनकी बीट आदि साफ करने के लिए बीस कर्मचारियों की नियुक्ति करनी पड़ी। पर कोई लाभ न हुआ। तंग आकर कंपनी ने घोषणा की—जो भी हमें कबूतरों से छुटकारा दिलाने का उपाय सुझायेगा उसे हम पचास हजार रुपये पुरस्कार में देंगे।

अंततः एक अनुसंधानकर्ता का उपाय कामयाब सिद्ध हो गया। उसने कौओं की कांव-कांव से भरे एक रिकार्ड को गोदाम में बजाया। कुछ ही देर में गोदाम के सभी कबूतर नौ दो ग्यारह हो गये। कंपनी ने उस अनुसंधानकर्ता को पुरस्कार तो दिया ही साथ ही पांच सौ 'कांव-कांव' रिकार्ड तैयार करवाये ताकि देश की विभिन्न कंपनियों को उपहार स्वरूप दे सकें।

कबूतर एक अच्छा कर्मचारी भी है, यह बात सिद्ध की मास्को के एक इंजीनियर अनातोली बाइकोव ने। अनातोली ने अपने पुर्जे बनाने वाले कारखाने में खराब

पुर्जों के निरीक्षण हेतु कुछ कबूतरों को प्रशिक्षित किया। उसने देखा कि कबूतर एक कुशल और काबिल कारीगर की तरह तैयार होने वाले पुर्जों में खराब पुर्जे ढूंढ़ सकता है। साथ ही वह बिना रुके प्रति घंटे लगभग चार हजार पुर्जे देखता है, जबकि आदमी बीच-बीच में पानी पीने, चाय पीने, बात करने आदि में अपना समय बिताते हैं। अपने प्रयोग को सफल देख अनातोली बाइकोव ने सैकड़ों कबूतरों को इसी काम के लिए प्रशिक्षित किया और दूसरी कंपनियों को मुंहमांगे दामों पर बेचने का कारोबार शुरू किया।

संसार में कबूतरों की लगभग बारह सौ किस्में पायी जाती हैं। कहते हैं यह बिना रुके कई घंटे तक यात्रा कर सकता है। एक बार में एक कबूतर ने बिना रुके, बिना कुछ खाये-पिये लगभग १५० किलोमीटर की यात्रा दो घंटे से कुछ अधिक समय में पूरी की थी। आजकल तो इनका उपयोग खोजी पत्रकारिता में भी कि जाने लगा है। न्यूयार्क से प्रकाशित वाले 'न्यूयार्क ईवनिंग पोस्ट जर्नल' संवाददाताओं में कबूतरों का दल भी है, अपने गले में माइक्रो कैमरा लटक ७५ किलोमीटर की रफ्तार से युद्ध जोखिम भरी घटनाओं की रिपो फोटो सहित कर अपने दफ्तर में पहुं हैं। इन कबूतरों की कीमत हजारों में है और कड़ी मेहनत के बाद इन्हें कार्य हेतु प्रशिक्षित किया गया है।

जंगली कबूतरों का मांस गर्म होता और लकवा, गठिया, वायु रोगियों के पथ्य और औषध का काम करता है। लग जाने पर, निमोनिया हो जाने फेफड़े के क्षय रोग में भी लाभदायी है। जख्मों और फोड़ों की बढ़िया दव बीट का लेपन। इनकी बीट एक खाद भी मानी जाती है। –ई/४३

अरेरा कालोनी, भोपाल-१६, म.

☐

महात्मा गांधी का जन्मदिन मनाया जा रहा था। सीधी सादी, साफ-सुथरी थी आश्रम की, न कोई सजावट, न झाड़-फानूस। बस कस्तूरबा ने एक घी का दिया दिया था। बापू ने प्रार्थना के बाद आंखें खोलीं और दिया देखकर बोले, 'यह घी का किसने जलाया?'

कस्तूरबा बोलीं, 'मैंने।'

बापू बोले, 'आज के दिन सबसे बुरी बात यही हुई।'

सब सुनकर स्तब्ध रह गये। फिर बापू बोले, 'गांव के लोगों को अपनी रोटी तेल तक चुपड़ने को नसीब नहीं होता और मेरे जन्मदिन पर घी का दिया जलाया रहा है। जो चीज हमारे गांव वालों को नसीब नहीं होती उसका उपयोग करने का कोई अधिकार नहीं है। जो हुआ सो हुआ कस्तूरबा, पर आगे ध्यान रखना।'

☐

विचित्र त्यौहार

विश्व इतिहास में मूर्खोत्सव

☐ जितेन्द्रशंकर बजाड़

आज पहली अप्रैल को लोग आपस में एक दूसरे को किसी का झूठा न्योता देकर, विचित्र समाचार एवं अप्रत्याशित संदेश मात्र भिजवाकर ही इस त्योहार को मनाते हैं, परंतु पुराने जमाने में इस त्यौहार को मनाने के अजब-अजब तरीके एवं रिवाज प्रचलित थे ।

सदियों पहले एथेंस में चार मित्र रहते थे । इनमें से एक बड़ा घमंडी था । अति बौद्धिकता से ग्रस्त यह मित्र अन्य मित्रों को प्रतिपल अपमानित करने पर तुला रहता था । इसी मित्र से चिढ़कर अन्य तीनों मित्रों ने मिलकर एक षड्यंत्र किया । उन्होंने अपने इन मित्र से कहा कि 'कल रात हमें स्वप्न में एक दिव्य देवी ने दर्शन देकर कहा कि वह आने वाली रात को नगर के बाहर पहाड़ी की चोटी पर प्रकट होकर सबको दर्शन देगी, तथा मनोनुकूल फल प्राप्ति का वरदान भी देगी । अत: तुम रात्रि को ठीक समय वहां पहुंच जाना ।'

बुद्धिमान महाशय ने तीनों मित्रों के इस षड्यंत्र को समझा नहीं और नियत समय पर निर्दिष्ट पहाड़ी पर पहुंच गये । खुद भी गये कुछ लोगों को भी साथ ले गये । उनकी देखा-देखी वहां रात होते-होते भीड़ बढ़ती गयी । सब लोग देवी के प्रकट होने की दिशा में दृष्टि गड़ाये रहे, परंतु आधी रात तक भी देवी के दर्शन न हुए तो ये सारे बुद्धू लौटने लगे । रास्ते में उन्हें अपने तीनों साथी मिले जिन्हें अपने षड्यंत्र की सफलता पर जब बुद्धिमान मित्र ने हंसता देखा तो खुद भी अपने आप पर हंसे बिना न रह सके । उस दिन भी पहली अप्रैल थी । बस उसी दिन से पहली अप्रैल का मूर्खोत्सव चलना शुरू हुआ और अपने परिचितों अपरिचितों को मूर्ख बनाना एक परंपरा-सी बन गयी । एथेंस की तरह अन्य देशों में भी शनैः शनैः यह त्यौहार प्रचलित हो गया ।

१५६४ ईस्वी सन से पहले, यूरोप में एक ऐसा कैलेंडर प्रचलित था, जिसमें वर्ष का प्रारंभ अप्रैल महीने से होता था । लोक पहली अप्रैल को नववर्ष के रूप में मनाते, भेंट, शुभकामना आदि देते थे परंतु १५६४ से फ्रांस के राजा चार्ल्स नवम ने कैलेण्डर में संशोधन का आदेश देकर जनवरी को वर्ष का पहला महीना घोषित कर दिया । अधिकतर लोगों ने

राजा के आदेशानुसार एक जनवरी से नववर्ष का आरंभ स्वीकार कर लिया, परंतु कुछ रूढ़िवादी एवं हठी प्रवृत्ति के लोगों ने नववर्ष एक अप्रैल से ही मानना जारी रखा, तब जो लोग जनवरी से वर्ष आरंभ के समर्थक थे, उन्होंने इन अप्रैल समर्थकों की खिल्ली उड़ाने के विचार से उन्हें झूठे उपहार देना, मजाक करना आदि शुरू किया। तभी से एक अप्रैल को 'फूल्स डे' मनाने की परंपरा चल पड़ी। लोग इस पुरानी घटना को तो भूल गये लेकिन मूर्ख दिवस की परंपरा आज भी प्रचलित है।

इस घटना के अनुसार लोगों का मत है कि अप्रैल फूल के त्यौहार का प्रारंभ फ्रांस से ही हुआ, परंतु हम विश्व इतिहास एवं देश-विदेश के ग्रंथों का अध्ययन करें तो जानकारी मिलती है कि फ्रांस से पूर्व एथेंस, प्राचीन बेबिलोन, चीन, रोम, यूनान और इटली आदि देशों में अनेक प्रकार से एक मूर्खोत्सव प्रतिवर्ष होता था। फ्रांस में पहली अप्रैल को एक सभा की जाती थी, जिसमें भाग लेने वाले किसी न किसी तरह एक दूसरे का मनोरंजन करते थे। उस दिन वहां सभी को राजा व धर्मगुरु तक की हास्यपूर्ण आलोचना करने को स्वतंत्रता मिलती थी। सभा के सभापति का विशल ऑफ फ्रान्स की उपाधि दी जाती थी। सभा में सभी अपने विचारों द्वारा प्रचलित रीति रिवाज, धर्मगुरु आदि की खिल्ली उड़ाते थे। सभा के संभागी पुरुष स्त्रियों के वेश में थे और स्त्रियां पुरुषों के वेश में। सभा अगला भाग 'गधा सम्मेलन' के होता जिसके सम्भागी सदस्य गधों मुखौटे पहने होते थे। गधों की रेंकते थे। सभा के अंत में पादरियों गोर की गाड़ियों में बिठाकर जुलूस नि जाता, जिसमें गाड़ी में बैठे पादरी पर गोबर फेंकते थे। मूर्ख बनने वालों यहां मूर्ख बनाने वाले 'पोइजन द (अप्रैल की मछली) कहा जाता प्राचीन बेबिलोन में मूर्खोत्सव पे देवता के मंदिर के सामने मनाते थे।

यह उत्सव ग्यारह दिन तक जिसमें चौथे दिन वहां का राजा भी होता था। चौथे दिन शाम को वह के समक्ष अपनी मूर्खता गिनवाता, पुरोहित उसके चांटे मारता और रोने लगता था। इसके बाद पचास कंडों को गाड़कर उनमें आग लगायी और देवता को एक बैल की बलि दी थी। पांचवें दिन पेरोज के देवता सवारी नाव पर निकलती। उनकी मूर्ति प्रार्थना भवन ले जाते और प्रार्थना के मूर्ति को पुनः मंदिर ले आते। ग्या दिन मूर्खोत्सव का समापन होता था

इटली में पहली अप्रैल को कार्निव रूप में मनाते थे। इस दिन लोग शराब पीते, नाचते, गाने का आनंद थे। इस अवसर पर औरतें व चेहरे पर नकाब लगाकर एकदम

होकर उछल-कूद करते थे।

इंग्लैंड में पुराने जमाने में 'आल फूल्स डे' मनाते थे। इस दिन पुरुष स्त्रियों के कपड़े पहनकर घोड़ों पर बैठकर गिरजाघर पहुंचते थे, जहां वे भद्दे ढंग से कभी दिन भर और कभी रात में उछल-कूद करते और नाचते-गाते। नाच-गान के साथ ढोल बाजे आदि बजते थे। जर्मनी में भी ईस्टर ठीक इंग्लैंड की तरह ही मनाते थे।

स्कॉटलैंड में मूर्ख बनाने को 'हंटिंग द फूल' कहा जाता है। मूर्ख बनने वाले को मुर्गा कहा जाता है, क्योंकि वहां मुर्गा मूर्खता का प्रतीक है।

रोम में अप्रैल महीने में एक सात दिवसीय उत्सव मनाया जाता था, इसमें शहर की सड़कों को सजाया जाता था, दास-दासियां उस पर गुजरते हुए हर किसी की हंसी उड़ाते और बाद में एक मैदान में सभा के रूप में इकट्ठे होते थे। इस सभा में दास-दासियों में से एक नकली राजा चुना जाता, जो मूर्खतापूर्ण आदेश जारी करता था, जिसका पालन असंभव-सा लगता। सभा के अंत में शुरू होता था दासियों का परस्पर ईंट-पत्थर मारने वाला युद्ध, जिसमें अधिकतर दासियां घायल भी हो जाती थीं। इस पर्व का नाम 'साटर नेलिया' था।

यूनान में प्राचीन समय में एक विशेष त्योहार मनाया जाता था, जिसमें खूब जमकर खाने-पीने की परंपरा थी, परंतु खाने-पीने का तरीका बड़ा विचित्र था। इस पर्व के बारे में यूनान के ग्रंथों में किये उल्लेख के अनुसार यूनानी परिवारों में आमंत्रित मेहमानों के पहुंचने पर सर्व प्रथम स्नान किया जाता था। मेहमानों के लेटने के लिए बिछात लगाकर उनके सिरहाने मेजें लगा दी जाती थीं। इन्हीं मेजों पर भोजन परोसा जाता था, परंतु शराब व सूप की खूब व्यवस्था की जाती थी। भोजन परोसने के बाद परिवार की लड़कियां अतिथियों के बीच आकर बांसुरी बजाती थीं और अतिथि लेटे-लेटे ही मेजों से खाना लेकर खाते थे।

चीनी ग्रंथों में उल्लिखित मूर्खोत्सव के अनुसार इस पर्व पर वहां की स्त्रियां एक मैदान में अपने-अपने सिर पर कलंगी लगाकर आतीं और एक टांग से नाचती थीं, एक ओर सारे पुरुष एकत्रित होते थे, जहां वे तरह-तरह की डींग हांकते थे।

विश्व के कई पड़ोसी देशों तक को प्रभावित करने जैसा एक पर्व 'स्याम' निवासी मनाते थे। यह त्यौहार एक देवता की मृत्यु व पुनर्जन्म के पर्व के रूप में मनाते थे। ये देवता थे 'एडोनिस'। त्यौहार एडोनिस की मृत्यु के शोक पर्व से शुरू होता, जिसमें स्त्रियां खूब रोतीं, यहां तक कि कई स्त्रियां अपने सिर के बाल भी कटवा लेती थीं। पुरुष रोते हुए एक दूसरे को आपस में चांटे मारते थे। इसके बाद आता 'एडोनिस' के पुनर्जन्म का पर्व। इस अवसर पर देवता की नंगी मूर्ति का जुलूस निकालते, जिसमें खूब शोर-शराबा हो-हुल्लड़ मचाया जाता था।

–पो. भोचौर-३१२०२२, जिला-चितौड़गढ़

चमत्कारिक लैग-स्पिनर

नरेन्द्र हिरवानी

□ आ

विश्व-टेस्ट-क्रिकेट के इतिहास में जितना चमत्कारिक प्रथम प्रदर्शन १९-वर्षी नरेंद्र हिरवानी का रहा, विश्व के अन्य किसी लैग-स्पिनर का नहीं रहा। रातोंरा यह अनजान गेंदबाज़ भारत ही नहीं, विश्व भर में क्रिकेट-प्रेमियों के लिए चर्च का विषय बन गया। प्रस्तुत है 'लेग-स्पिन' के अविश्वसनीय कौशल के धनी इस उदीयमान खिलाड़ी का जीवन-परिचय।

प्रथम दृष्टि में प्रेम !

अपने इस अजीबोगरीब 'प्रथम दृष्टि में प्रेम' की प्रेम-कथा सुनाते हुए, विश्वविख्यात 'ऑल राउंडर' विनु मांकड़ के सुपुत्र भूतपूर्व टेस्ट-बल्लेबाज़ अशोक मांकड़ कहते हैं, 'पांच साल पहले, मध्य क्रिकेट एसोसियेशन के प्रधान तथा रेल-मंत्री श्री माधवराव सिंधिया ने राज्य की क्रिकेट टीम के संचालन की बागडोर मुझे सौंपी थी। तब एक मोटू, चश्माधारी नवयुवक से मेरी भेंट हुई। वह एक प्रवीण 'लैग-स्पिनर' बनना चाहता था, और उसका नाम नरेंद्र हिरवानी था। अपने अनेक हमउम्र साथियों की, जो सभी प्रवीण क्रिकेट-खिलाड़ी बनने के इच्छुक थे, भीड़ में अकेला खड़ा, संकोची स्वभाव का लगने वाला यह नौजवान अपने प्रदर्शन तथा अद्भुत लगन के कारण मुझे असीमित तथा असाधारण संभावनाओं से पूर्ण नवों खिलाड़ी लगा था। मैंने तब उसके बा भविष्यवाणी की थी कि यह नौजवान दिन अवश्य भारत की ओर से टेस्ट-मैं खेलेगा। मुझे खुशी है कि मेरी भवि वाणी सच निकली।'

हिरवानी के बारे में इससे मिलती-जु भविष्यवाणियां वर्षों पूर्व अन्य क्रि विशेषज्ञों, जैसे उसके नामी प्रशिक्षक परामर्शदाता संजय जगदाले ने, जो मध्य प्रदेश की क्रिकेट टीम के कप्तान और आजकल एक 'सैलेक्टर' होने अलावा, अपना एक क्रिकेट-क्लब भी च हैं, भारत के कप्तान दिलीप वेंगसरकर भूतपूर्व टेस्ट-खिलाड़ी हनुमंत सिंह आ भी की थीं, लेकिन उनमें से किसी ने कल्पना सपने में भी न की होगी कि

वानी अपने पहले टेस्ट मैच में ही दोनों पारियों में ८-८ विकेट लेकर, इस प्रकार का चमत्कारिक प्रदर्शन करने वाला विश्व का चौथा गेंदबाज़ बन जायेगा, और भारत का ऐसा आठवां गेंदबाज़ जसू पटेल, कपिल देव (तीन बार), सुभाष गुप्ते, विनु मांकड़, वेंकटराघवन, प्रसन्ना व चंद्रशेखर के बाद— बन गया, जिन्होंने एक टेस्ट-पारी में आठ विकेट लिये हैं। एक टेस्ट-पारी में पांच से अधिक विकेट, अपने प्रथम प्रदर्शन के अवसर पर ही, लेने वाले पांचवें खिलाड़ी बनने का श्रेय भी उसे मिला, निसार, आबिद अली, दिलीप दोषी तथा वी. वी. कुमार के बाद।

असामान्य कौशल

यह सच है कि मद्रास का वह टेस्ट, जो भारत ने वेस्ट इंडीज के विरुद्ध खेला था, ऐसी खेल-पट्टी पर खेला गया था, जो पहले दिन से ही स्पिन-गेंदबाज़ों की मदद करने लगी थी, तो भी, जैसा कि भारत के वर्तमान कप्तान दिलीप वेंगसरकर कहते हैं, 'ऐसी खेल-पट्टी पर भी, चमत्कारिक प्रदर्शन करने के लिए असीमित धैर्य, उच्च कोटि की प्रवीणता तथा अडिग लगन की आवश्यकता होती है।' यहां यह उल्लेखनीय है कि यद्यपि खेल-पट्टी आरंभ से ही स्पिन-गेंदबाज़ी की मदद करने लगी थी, तथापि भारत व वेस्ट इंडीज के अन्य सात स्पिन गेंदबाज़ों को इस मैच में कुल मिलाकर ७ विकेट ही मिले।

वेस्ट इंडीज हमेशा से उच्च कोटि की,

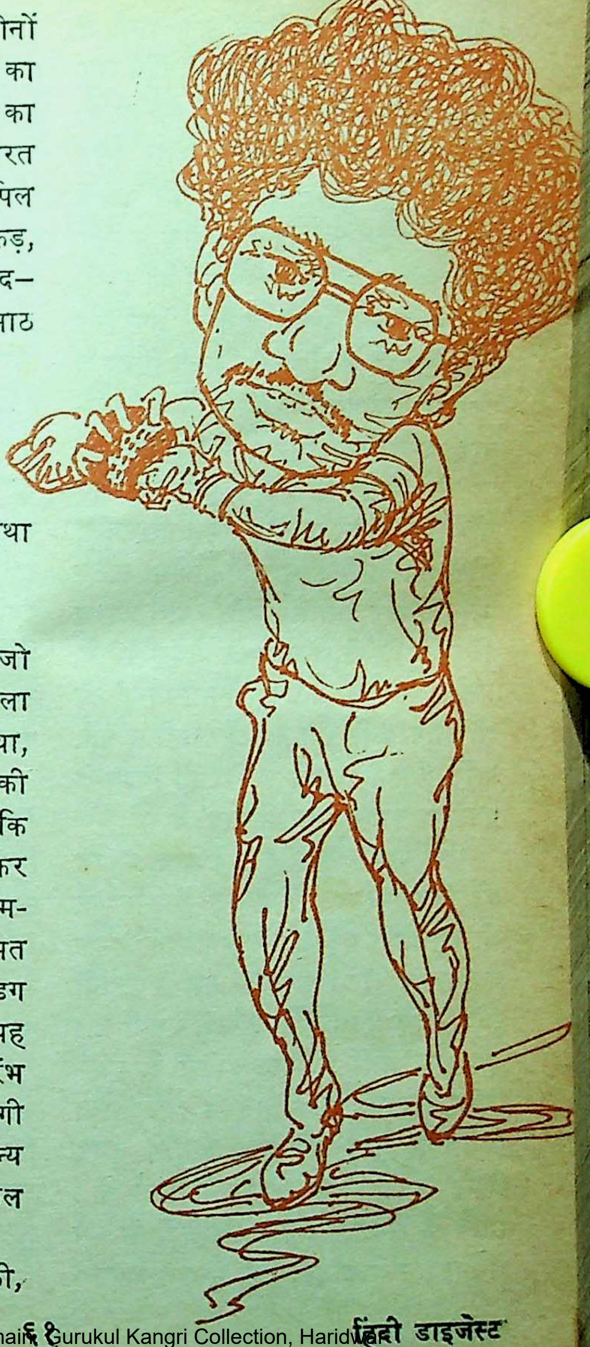

सटीक व अचूक 'लैग-स्पिन' को खेलने में असमर्थ रहा है। वेस्ट इंडीज की टीम जब १९५८-५९ में भारत आयी थी तब होल्ट, हंट, सोबर्स, कन्हाई, स्मिथ, बूचर और सोलोमन जैसे आक्रामक बल्लेबाज़ उसके पास थे। मगर, कानपुर में हुए मैच में ऐसी खेल-पट्टी पर, जिसे 'बल्लेबाजों का स्वर्ग' कहा गया था, सुभाष गुप्ते ने उपरोक्त नौ बल्लेबाजों को, जिनकी गिनती विश्व के श्रेष्ठत्तम बल्लेबाजी की की जाती थी, लगातार आउट किया, सिर्फ़ १०२ रन देकर।

'लैग-स्पिन' में प्रवीण होने के लिए दीर्घ तथा कठोर अभ्यास की आवश्यकता होती है। इने-गिने खिलाड़ी ही ऐसा कठिन अभ्यास कर पाते हैं। और, इसी कारण विश्व के क्रिकेट खेलने वाले प्रत्येक देश में, प्रत्येक काल में, प्रवीण 'लैग-स्पिनरों' की शोचनीय कमी रही है। हिरवानी से पूर्व, पाकिस्तान के अब्दुल क़ादिर ही विश्व के एकमात्र घातक 'लैग स्पिनर' थे।

वर्षों बाद, सुभाष गुप्ते के बाद, भारत को हिरवानी जैसे सिद्धहस्त लैग-स्पिनर की देन प्राप्त हुई है। गुप्ते कितने अचूक व हुनरमंद 'लैग-स्पिनर' थे, इसकी कहानी स्वयं उनके प्रदर्शनों के आंकड़े सुनाते हैं। ३६ टेस्ट मैचों में, वेस्ट इंडीज के अतिरिक्त, इंग्लैंड, पाकिस्तान व आस्ट्रेलिया के विरुद्ध भाग लेते हुए, उन्होंने १४९ विकेट २९.५५ के औसत से लिये थे। विश्व के श्रेष्ठतम क्रिकेट-खिलाड़ी के रूप में विख्यात वेस्ट इंडीज के भूतपूर्व कप्तान

गैरी सोबर्स का कहना है कि 'मैं
गुप्ते को विश्व का श्रेष्ठतम 'लैग-
मानता हूं।' १९५४-५५ में न्यू
के विरुद्ध खेले गये पांचों मैचों में
१९.६७ के औसत से ३४ विकेट लि
इस कीर्तिमान को १९७२-७३ में
के विरुद्ध खेली गयी टेस्ट मैच शृंख
चंद्रशेखर ने ३५ विकेट लेकर
किया। आस्ट्रेलिया के उप-कप्तान
हार्वे की गणना अपने काल के श्रे
बल्लेबाजों में होती थी। जब भा
उनका सामना सुभाष गुप्ते से हुआ
उन्होंने गुप्ते से कहा था, 'तुम वि
ख्याति के गेंदबाज़ हो, और मैं वि
ख्याति का बल्लेबाज़। टक्कर बराब
और दिलचस्प रहेगी।' और वह
रही भी।

जन्म व विकास

गुप्ते की भांति ही, हिरवानी भी
गेंदों में विविधता लाने, और उनमें
लियों, लैग-स्पिनरों व 'फ्लिपर्स' का
त्याशित मिश्रण कर, बल्लेबाजों को
में डालने में निपुण हैं, और अपनी
लंबाई को सही व अचूक रखने में भी
कमाल हासिल है।

लेकिन, हिरवानी की जीवन-क
बात की गवाह है कि इस प्रवी
सिद्धि-शिखर पर पहुंचने के लिए
अपने गहनतम प्राणों में असामान्य
स्पिनर होने की अटूट अभीप्सा को

हिरवानी का जन्म गोरखपुर

प्रदेश) के एक सफल ईंट-व्यापारी के परिवार में हुआ था। उनके माता-पिता ने उन्हें अपनी रुचि का व्यवसाय चुनने की पूरी छूट दे रखी थी। इसका लाभ उठाकर उन्होंने अपने लिए शिवरामकृष्णन्, की शैली का, 'लेंग-स्पिनर' बनने का 'व्यवसाय' चुना। इसके लिए सबसे पहली ज़रूरत थी, अपने लिए एक ऐसे मेहनती व सहानुभूतिशील प्रशिक्षक की, जो उन्हें 'लैग-स्पिन' की कला में पारंगत कर पाये। इस कार्य के लिए उन्होंने मध्य प्रदेश के नामी खिलाड़ी संजय जगदाले को, जो रणजी व दिलीप ट्रॉफी के मैचों में तो खूब चमके, लेकिन टेस्ट मैचों में खेलने की अपनी योग्यताओं के बावजूद, कभी टेस्ट मैचों में नहीं खेल पाये, चुना। बाद की घटनाओं ने सिद्ध किया कि यह आदर्श चुनाव था।

अपने भावी प्रशिक्षक से उनकी प्रथम भेंट कोई विशेष सुखदायी नहीं रही। जगदाले ने उन्हें देखते ही कहा, 'तुम बहुत मोटे हो, और इस कारण कभी अच्छे 'लैग-स्पिनर' नहीं बन सकोगे।' वे सुनकर मूक-स्तब्ध रह गये, किंतु शीघ्र ही इस मनःस्थिति से उबरकर उन्होंने पूछा, 'यदि मैं अपने मोटेपन को दूर करने में सफल हो जाऊं तो...' जगदाले ने चकित होकर हिरवानी की ओर देखा, और कहा, 'तब मैं अवश्य तुम्हें अपने संरक्षण में ले लूंगा, और तुम्हें अपने क्लब का सदस्य भी बना लूंगा।'

शीघ्र ही, हिरवानी ने अपना वज़न २० पौंड कम कर लिया। अभ्यास और प्रशिक्षण के लिए वह तड़के ही मैदान पर आ जाता, सुबह दस बजे से शाम के चार बजे तक एक 'अभ्यास मैच' में भाग लेता और मैच के बाद, जब तक अंधेरा न हो जाता, अभ्यास करता रहता। प्रशिक्षण व अभ्यास का यह क्रम लगातार चार वर्षों तक जारी रहा।

हिरवानी अपनी अब तक की सारी सफलता का पूरा श्रेय श्री जगदाले को देते हैं। वे विनम्रतापूर्वक कहते हैं, 'मैं आज जो कुछ हूं, उनकी बदौलत हूं।'

१९८७ की सर्दियों में १९ वर्ष से कम आयु के जिन भारतीय खिलाड़ियों ने आस्ट्रेलिया का दौरा किया था, हिरबानी उसके एक सदस्य थे। उन्होंने अपनी टीम की ओर से सबसे ज्यादा विकेट लिये। जब वेस्ट इंडीज ने अपने दौरे का एक मैच चंडीगढ़ में २५ वर्ष से कम आयु के खिलाड़ियों के विरुद्ध खेला, तो उन्होंने ६ विकेट लिये और भारतीय टेस्ट टीम एक प्रत्याशी के रूप में अपना स्थान सुरक्षित कर लिया। बाद में उन्हें टीम में शामिल भी किया गया, मगर खेलने का अवसर मद्रास में हुए अंतिम मैच में ही मिला।

वेस्ट इंडीज के खिलाफ़ अकेला हिरवानी

इस मैच में हिरवानी ने दोनों पारियों में वेस्ट इंडीज के आठ-आठ विकेट लेकर एक प्रकार से अकेले ही, भारत को जिताया। हिरवानी की चालभरी गेंद-

बाजी का स्विर्ड, रिचर्डसन, लोगी, हूपर, हेन्स, सिमन्स जैसे उच्च कोटि के बल्लेबाजों के पास कोई उत्तर न था।

मैच के बाद, हिरवानी ने कहा, 'मैच की मेरी सबसे अच्छी गेंद वह थी, जिससे मैंने पहली पारी में रिचर्ड को क्लीन बोलड किया था।'

उन्होंने कितनी कसी हुई गेंदबाजी की, इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि दोनों पारियों में उन्होंने एक भी 'फुल टॉस' या 'लौंग हॉप' नहीं फेंका।

इस अविस्मरणीय मैच के बाद उत्तर प्रदेश की सरकार तथा रेल-मंत्री श्री माधवराव सिंधिया ने पच्चीस-पच्चीस हज़ार रुपयों के पुरस्कारों की घोषणा की। उन्हें पच्चीस हज़ार का 'मैन ऑफ द मैच' का जो पुरस्कार मिला, वह कपिल देव ने खिलाड़ियों में नहीं बांटने दिया।

'मैच के अंत में गावसकर ने चु मेरी पीठ थपथपायी, तो मैं रोमांचि आया', हिरवानी ने बाद में कहा। और अमरनाथ ने उन्हें अपने-अपने उपहार में दिये।

हिरवानी आजकल उसी टाटा में काम करते हैं, जिसमें भारत के बेंगसरकर हैं।

हिरवानी ने अपने शानदार प्रदर्शन के बल पर भारतीय टीम में स्थान सुरक्षित कर लिया है। इस की पूरी आशा है कि आगामी दश हमें उनके अद्भुत प्रदर्शनों के बा बहुत कुछ सुनने को मिलेगा।

□

(पृष्ठ ४५ का शेषांश)

उसने तत्त्वज्ञान के पूर्व और तत्त्वज्ञान के अनन्तर वेदों को प्रमाण माना है और प्रयोजन न होने पर भी, प्रमेय अद्वैत का साक्षात्कार हो जाने पर भी वेद-वेदांत का आदर उसकी दृष्टि में रहता ही है, वैसे ही ईश्वर का भी आदर उसकी दृष्टि में रहता है।

'बोधसार' के रचनाकार का कहना है—

विश्वेश्वरस्तु सुधिया गलितेपि भेदे
भावेन भक्तिसहितेन समर्चनीयः।
प्राणेश्वरश्चतुरया मिलितेपि चित्ते
चैलाञ्चलव्यवहितेन निरीक्षणीयः।।

'भेद की निवृत्ति हो जाने पर भी विश्वेश्वर भगवान् की आराधना भक्ति-भाव से करते रहना चाहिये। प्राणेश्वर से चित्त मिल जाने पर भी स्त्री को कि वह घूंघट की ओट से ही उसको

प्रियतम हृदये वा खेलतु प्रेमरीत्या
पदयुगपरिचर्यां प्रेयसी वा विधत्ता
विहरतु विदितार्थो निर्विकल्पे सम
ननु भजनविधौ वा तद्द्वयं तुल्यमेव

'पति-पत्नी का प्रेम है तो पत्नी प्रियतम के पांव दबावे—उसकी अपनी है। इसी तरह तत्त्वज्ञानी पुरुष तत्त्वज्ञ अनंतर चाहे तो निर्विकल्प समा विहार करे और चाहे भजन करता दोनों बातें परिणाम में तुल्य हैं।' [क्र

कहानी

कठपुतली

□ दीपा त्यागी

सड़क के किनारे-किनारे रंग-बिरंगी कतरनों से सजे छोटे-बड़े तंबुओं की कतार लगी थी। तंबुओं के आगे चारपाई बिछाकर कुछ बूढ़े-बुजुर्ग चिलम पी रहे थे या हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे। उनके झुर्रियों से भरे चेहरे और आंखों की बुझी दीप्ति उनके बीते हुए संघर्ष को बिना बोले बयान कर रही थी।

मंजुला ने उंगली पकड़े खड़ी अपनी बेटी की तरफ देखा, वह अनजाने भाव से उस बस्ती की तरफ देख रही थी। मंजुला ने कहा–'यहीं आना था ?' 'हां, मम्मी ! कन्हैया यहीं रहता है।' रीनू ने हामी भरते हुए कहा।

मंजुला ने नजर उठाकर देखा आखिरी तंबू के पीछे सार्वजनिक नल लगा था, जिसकी पानी की मोटी धारा काले-पिचके घड़े भर रही थी और लहंगे-चुन्नी पहने युवतियां हंसती-बतियाती पानी भर रही थीं। उनकी अपनी भाषा थी, जिसे मंजुला सुनते हुए भी न समझ पा रही थी। मुख्य राजस्थानी भाषा में जगह-जगह की बोलियों के शब्द मिलकर एक अजीब बोली निर्मित हो गयी थी। अचानक उनका वार्तालाप रुक गया और उन्होंने संभ्रांत महिला की तरफ प्रश्नवाचक दृष्टि से देखा। पानी भरने वाली युवतियों में कुछ खुसर-पुसर हुई और एक युवती ने आगे बढ़कर पूछा–'कुछ काम था, जी।'

मंजुला को कुछ जवाब नहीं सूझा, वह अपनी बेटी की तरफ देखकर बोली–'क्या नाम बताया था उसका ?'

'कन्हैया।' नन्ही लड़की ने आंखें झपकाकर नाम बताया।

'मेरी बेटी को कन्हैया से मिलना है, आज हमारा नौकर छुट्टी पर गया है, इसकी जिद के कारण मुझे इसके साथ आना पड़ा।' मंजुला ने कहा।'

'ओय-होय, इन्हें कन्हैया से मिलना है, रे दैया !' नाम सुनते ही वे अपनत्व भरी हंसी हंसकर कन्हैया को पुकारने लगीं। घड़ी भर में मैला-कुचैला कुर्ता-पायजामा पहने कन्हैया नाम का लड़का एक तंबू से निकलकर सामने आ गया। रीनू को देखते ही वह खुश होकर दौड़ा-दौड़ा उसके समीप आकर बोला–'कठपुतली लेने आयी हो ना ?'

'हां।' रीनू ने नाचती हुई कठपुतली की अदा आंखों में भरकर आह्लाद से कहा !

कन्हैया रीनू की मम्मी को देखकर क्षण भर ठिठका, पर फिर वहां खुशी की

लहर देखकर रीनू का हाथ पकड़कर बोली, 'आओ।'

वे दोनों बच्चे आगे-आगे चलने लगे और मंजुला उनके पीछे चल पड़ी। पानी के घड़े अपने तंबुओं में रखकर अन्य कई युवतियां भी उनके पीछे-पीछे चल पड़ीं।

कन्हैया उन्हें अपने तंबू में ले गया। मंजुला ने देखा, वह तंबू बाहर से ही गंदा था, अंदर उसे रंग-बिरंगी कतरनों से फूल-बूटे बनाकर सुंदर सजा रखा था। जिस पलंग पर उसे कन्हैया की बहन ने बिठाया —वह भी चिथड़ों को जोड़-जोड़कर सिला एक सुंदर बिछौना था, जिसमें जगह-जगह छोटे-छोटे शीशे लगे थे और अपनी चमक से उसे बेजोड़ साबित कर रहे थे।

तंबू के एक किनारे पर उनकी रसोई का सामान रखा था और दूसरी तरफ लकड़ी का बक्सा पड़ा था। उसके आगे कठपुतलियों का ढेर लगा था। उस ढेर में तरह-तरह की कठपुतलियां थीं। कोई राजा था तो कोई रानी। कोई सिपहसालार था, तो कोई सेनापति। कोई दासी थी तो कोई दरबान। कोई पंडित था तो कोई मौलवी। हर तरह के खेल दिखाने के लिए कठपुतली मौजूद थी।

कन्हैया ने तंबू के पीछे आवाज दी, 'माईं री !' कुछ क्षण में ही राजस्थानी लहंगा ओढ़ना पहने, माथे पर बौर लगाये एक शांत, सभ्य महिला ने तंबू में प्रवेश किया। कन्हैया ने तुरंत अपनी मां को मंजुला से मिलवाया, 'ये रीनू की मम्मी
हैं। मां, रीनू ने अपने स्कूल में
अमरसिंह राठौर वाला खेल देखा
इतवार को जो हमने कृष्ण-लीला
थी वह इन्हीं का बंगला था।'

'अच्छा !' महिला ने अपना
ठीक करते हुए पीढे पर बैठते हुए

'रीनू को कठपुतली बहुत
उस दिन मैंने रीनू से कहा था कि
हमारे घर आयेगी तो मैं इसे
दूंगा। मां, मैं इसे कठपुतली दे दूं।
ने भोलेपन से अपनी मां की तरफ

आंखों में काजल की मोटी
कुछ अन्य महिलाएं जो कन्हैया
इर्द-गिर्द आकर बैठ गयी थीं,
रीनू की तरफ देखने लगीं।
मां ने कठपुतली के ढेर की
करते हुए प्रेम से कहा—'ले लो,
भी कठपुतली पसंद आये वह

रीनू शरमाकर अपनी मम्मी
छुप गयी। कन्हैया का बाल
खुश था। वह हंसकर बोला—'अरे
की क्या बात है ? जो कठपुतली
लगे वह ले लो।'

रीनू नहीं उठी तो कन्हैया
बेटे से कहा—'तू ही कोई अच्छी
पुतली दे दे, लड़की को परेशान

'मां, वह मेरे से ज्यादा
है। तुम नहीं जानतीं रीनू
है।' कन्हैया ने रीनू को अपने
होशियार साबित करते हुए

'क्या तुम स्कूल नहीं जाते,

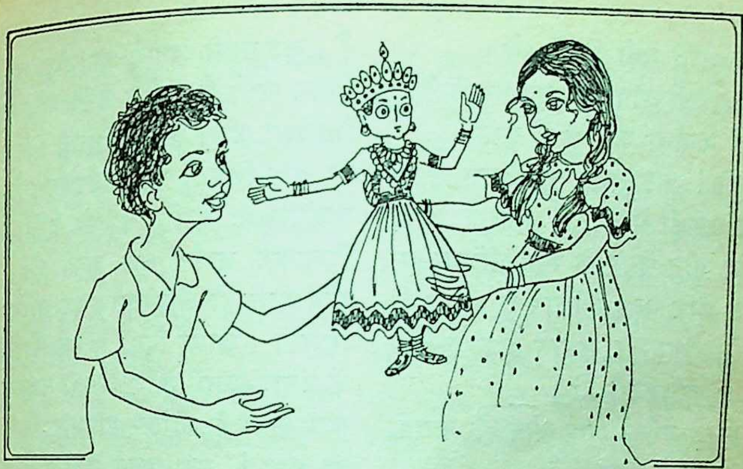

रीनू की मम्मी ने अंग्रेजी लहज़े में हिंदी बोलते हुए पूछा ।

स्कूल का नाम सुनते ही कन्हैया का खिला चेहरा मुरझा गया और वह गर्दन दायें-बायें हिलाकर अपनी मां के पीछे छुप गया । बेटे की पीड़ा समझते हुए उसकी मां ने कहा–'हमारा काम-धंधा ही ऐसा है कि हम बच्चों को स्कूल नहीं भेज सकते । शिक्षा-दीक्षा तो हमारे लिए महज जी बहलाने का सपना बन गया है, रात-दिन की रोटी का सवाल सामने रहता है, आज यहां तो कल न जाने किस शहर डेरा कूच कर जाना पड़ता है !'

वे मायूस होकर चुप लगा गयीं और गीली आंखों से मंजुला की तरफ देखने लगीं । एक अन्य महिला जो वहीं बैठी थी बोली – 'बहनजी, कुछ समय तक एक शहर में रहना भी होता है, तो भी समस्या रहती है !'

'तब क्या समस्या है ? आजकल तो कमजोर वर्ग के बच्चों के लिए सरकार ने फीस माफ कर रखी है । आप लोग बच्चों को प्राथमिक शिक्षा तो दे ही सकते हैं ।' मंजुला ने कहा ।

'फीस माफ है, यह तो आपकी बात ठीक है, बहनजी । पर सिर्फ फीस माफ हो जाने से तो समस्या हल नहीं हो जाती । स्कूल जाने के लिए बच्चों को जूता भी चाहिये और ड्रैस भी । फिर किताबें, कापी, पैन बस्ते . . . !'

'छोड़ो भी, मैं आप लोगों के लिए कुछ बनाकर लाती हूं ।' कन्हैया की मम्मी ने उठते हुए कहा ।

'नहीं जी, आप हमारे लिए बिल्कुल परेशान न होइये ।' रीनू की मम्मी ने उन्हें फिर कंधे पकड़कर बिठाते हुए कहा ।

कन्हैया उस कठपुतली के ढेर में से एक-एक कठपुतली रीनू को दिखा रहा था । रीनू एक-एक कठपुतली को ध्यान से देख रही थी, पर शायद उसे अपनी इच्छानुसार

कठपुतली अभी नहीं मिली थी।

'ये कठपुतली आप लोग खुद बनाते हैं?' मंजुला ने कन्हैया की मां से पूछा।

'हां जी! कठपुतली का चेहरा सागवान की लकड़ी से बनाया जाता है आंख, नाक, मुंह और चेहरे के भाव-भंगिमा हम लोग तेज धार वाले औजार से बनाते हैं, बाकी रंग-रोगन से सजाते हैं।' कन्हैया की मां ने जानकारी दी।

'ये कपड़े वगैरा आप लोग ही बनाती हैं?' मंजुला ने पूछा।

'हां जी! खेल के अनुसार कठपुतली को सजाना पड़ता है। वैसे ही कपड़े पहनाये जाते हैं। तरह-तरह की रंगीन कतरनों को जोड़कर हम महिलायें ही इनके कपड़े सिलती हैं।' कन्हैया की मां ने हंसकर कहा।

'खेल में आपको खूब मेहनत करनी पड़ती होगी?' मंजुला ने कहा।

'हां जी। खेल में ढोलक तो हम महिलायें ही बजाती हैं, फिर महिला स्वर का पार्ट भी हम महिलायें ही अदा करती हैं!' कन्हैया की मम्मी ने जानकारी दी।

'इसका मतलब है कि मर्द के साथ पूरी जिम्मेदारी निभाती हैं आप लोग?' मंजुला ने कहा।

'वह तो करना ही पड़ता है, जी!' अन्य महिलाओं ने हंसकर कहा।

'मर्द लोग तो फिर चैन की बंसी बजाते होंगे।' मंजुला ने हंसकर महिलाओं की तरफ देखा।

'नहीं जी, मर्द भी कहां चैन से बैठते हैं। कठपुतली चनाने का डोरा तो तैयार करते हैं। काले सुरमे और भिगोकर डोरा तैयार होता है। फि ही खेल दिखाने का आर्डर लाते हैं इम्पोरियम आदि से भी वही दिखाकर आर्डर बुक करते हैं। रोज-रोज तो खेल-तमाशे का आर्डर मिलता। खाली दिनों में मर्द लोग में रंगाई-पुताई और मिस्त्री-मजदू काम करते हैं, आखिर परिवार तो ही हुआ!' एक बुजुर्ग महिला ने छोड़कर बताया।

'आप लोग कोई और मुनाफे धंधा क्यों नहीं कर लेते?' मं पूछा।

'हम लोग तो जी, बस कठपुत नचाना जानते हैं। फिर हम सब्र रखा कन्हैया की मां ने अनजाने गर्व से मंजुला सामने बैठी उन महिलाओं रही थी जो हिंदुस्तान की प्राचीन परंपरा को आज भी जिलाये हुए जीवन-यापन करने के लिए कितनी मेहनत करके अपने परिवार को, अ बावजूद पाल रही थीं। कैसा साह उनके भीतर और सब्र का अनोखा

तभी एक नववधू जैसी सलोनी ने तंबू में प्रवेश किया। वह वह अपनी सास को बुलाने आयी थी। कहे ही एक बुजुर्ग महिला उठते हुए 'अच्छा, बहनजी, हमारी हाथ राम-राम। बेटा आ गया है, चल

'राम राम जी ।' मंजुला ने हाथ जोड़ दिये ।

वह बूढ़ी स्त्री चली गयी तो मंजुला ने छा–'यह इनकी बहू थी क्या ?'

'हां जी ।' कन्हैया की मां ने हंसकर ताया ।

'लगता है इसकी अभी नयी-नयी शादी ई है ।' मंजुला ने पूछा ।

'नहीं जी, शादी को तो दो साल हो ये । अभी पिछले महीने यह गौना होकर यी है ।' कन्हैया की मां ने बताया ।

'शादी पर तो खूब खर्च होता होगा ?' जुला ने दिलचस्पी लेते हुए पूछा ।

'खर्चा तो होता है जी, पर हमारे यहां ादी-ब्याह की व्यवस्था बहुत अच्छी है । ड़के-लड़की का संबंध मेल मिलाकर तय या जाता है । ब्याह-सगाई में सब एक सरे की मदद करते हैं, मिल-बांटकर शादी नेग और भोज होते हैं ।' एक झुर्रियों भरे हरे वाली स्त्री अपनी बिरादरी के बारे में र्व से बता रही थी । मंजुला उनकी दयनीय र्थिक स्थिति को भांपते हुए मन ही मन च रही थी कि मानवीय मूल्यों को यह स तरह निभाते होंगे ?

तभी वह नववधू सरीखी सांवली युवती खी झुलाते हुए तंबू में आ पहुंची, उसके थ में लकड़ी की ट्रे जैसी थी, जिसमें स्टील गिलासों में चाय थी । उसने मुस्कराकर ां बैठी महिलाओं को अदब से चाय पेश , मंजुला उसके चेहरे का अपनापन र अदब के आगे नानुकर नहीं कर सकी और चाय ले ली । कठपुतली परिवार में आज उसने पहली बार स्टील के गिलास में चाय पी ।

मंजुला ने देखा, यहां एक आत्मीयता का पक्का मजबूत धागा सबको अपनी मर्यादा में बांधे रखता है । रहने के लिए यही एक तंबू है और यहीं सारे रिश्ते पनपते हैं, मां-बाप, भाई-बहन, पति-पत्नी, लेकिन दूसरे को पीड़ा नहीं पहुंचती, कितना ख्याल रखते हैं ये एक दूसरे का । जरूर इनका धर्म इन्हें ऐसी शिक्षा देता होगा ।

मंजुला ने पूछा–'आप लोग धार्मिक पूजा-पाठ को भी महत्व देते होंगे ?'

महिलाओं ने उसे अनजान निगाहों से देखा, जैसे वे उसके प्रश्न का अभिप्राय न समझी हों । मंजुला ने अचकचाकर फिर से पूछा–'आप लोगों के विवाह में पूजा-पाठ भी होता है ?'

'येल्लो, बिना पूजा-पाठ के भी कहीं ब्याह-शादी होते सुने हैं ? पूरे सात फेरे होते हैं हमारे यहां अग्नि-मैया को साक्षी मान कर । फिर हम अपने घर में भी बेटे-बहू से कुल देवी की फूल-अक्षत से पूजा करवाते हैं ।' एक सफेद बालों वाली महिला ने जानकारी दी ।

'आपकी कुलदेवी ?' मंजुला ने पूछा ।

'कठपुतली देवी ही हमारी कुलदेवी हैं, बहनजी ! हम लोग रोज सुबह-शाम उनके आगे दिया-बाती करते हैं ।' कन्हैया की मां ने एक कोने में उठती धूपबत्ती की

(शेषांश पृष्ठ ७२ पर)

पुण्यस्मरण

शांतिदूत मार्टिन लूथर किंग

☐ अतुल गोस

मोंटगोमरी जाते हुए कोरेटा ने मार्टिन से पूछा, 'आप वहां क्यों जा रहे हैं? सुना है वहां पर काले लोगों पर बहुत अत्याचार किये जाते हैं। गोरे लोग हमें भी घृणा और हीनता की दृष्टि से देखेंगे। मुझे तो वहां जाने में डर लग रहा है।' कोरेटा मार्टिन ने हंसते हुए कहा, 'अत्याचार सहकर ही हम रंगभेद नीति को नष्ट कर सकते हैं। यदि हम इन छोटी-छोटी बातों से डर गये तो फिर अपने उद्देश्य में सफल कैसे होंगे?'

मार्टिन की पत्नी कोरेटा ने फिर कुछ नहीं पूछा। मोंटगोमरी पहुंचकर दोनों ने ही गोरे-काले की रंगभेद की नीति को समाप्त करने के लिये बहुत काम किया। मार्टिन लूथर किंग को अपने प्राण तक गंवाने पड़े। मार्टिन की बढ़ती हुई लोकप्रियता को देखकर किसी विरोधी ने उन्हें गोली मार दी।

मार्टिन लूथर किंग को बचपन से ही रंगभेद नीति का शिकार बनना पड़ा था। बचपन में अनेक घटनाएं ऐसी हुईं थीं, जिनके कारण मार्टिन ने बड़े होने पर इस रंगभेद को बिल्कुल समाप्त करने का निश्चय कर लिया था। मार्टिन के की एक घटना है। मार्टिन के घर के सड़क के उस पार गोरे लोगों की थी। एक दिन मार्टिन गोरे बच्चों के खेल रहा था कि तभी एक गोरे ब पिता ने आकर कहा, 'मार्टिन, तुम बच्चों के साथ नहीं खेल सकते। काले जानवर हो। यहां से चले और फिर कभी इधर नहीं आना।'

मार्टिन रोता हुआ घर लौट आ उसने अपनी मां को जब सारी बात ब तो मां ने बहुत प्यार से उसे गोरे के रंगभेद की बात समझायी। मार्टिन समय तो चुप रह गया, पर मन ही उसने प्रण किया कि वह इस रंगभे समाप्त करके रहेगा।

कुछ वर्षों के बाद एक दिन अपने पिता के साथ जूतों की ए दुकान पर गया। वहां पर कुछ कुर्सियां देखकर पिता-पुत्र दोनों बैठ तभी दुकानदार के एक नौकर ने उनसे कहा, 'तुम इन कुर्सियों पर न सकते। ये कुर्सियां गोरे लोगों के लि तुम पीछे रखी कुर्सियों पर बैठो।

मार्टिन के पिता ने पीछे बैठने से इंकार कर दिया तो दुकानदार ने उन्हें जूते नहीं दिये। दोनों खाली वापस लौट आये।

मार्टिन के बचपन में ऐसी अनेक घटनाएं हुईं। उस समय अमरीका में रंगभेद का बहुत प्रचार था। सिनेमा, स्कूल, रेस्तरां-होटल, अस्पताल, दुकान सभी जगह काले लोगों को घृणा और अछूत की दृष्टि से देखा जाता था। रेल और बस में भी काले लोगों के साथ अभद्र व्यवहार किया जाता था। बस में काले लोगों को अगले दरवाजे से टिकट खरीदनी पड़ती थी और फिर सबसे पीछे बैठना पड़ता था। बस में गोरे लोगों से छू जाने पर भी डांट पड़ती थी। बस में उनके लिए सीटें भी बहुत कम थीं, फिर भी किसी गोरे के आ जाने पर सीट से उठना पड़ता था। यदि कोई काला व्यक्ति सीट खाली नहीं करता था तो उसे गिरफ्तार कर लिया जाता था। न तो न्यायालय ही काले लोगों के प्रति सहानुभूति रखता था और न पुलिस व्यवस्था ही। काले हर तरह से असम्मानीय थे।

१९५२ में मार्टिन का विवाह एक पादरी की पुत्री कोरेटा स्काट से हुआ। उस समय मार्टिन से भी पादरी बनने का आग्रह किया गया, लेकिन मार्टिन ने मना कर दिया। असल में मार्टिन के मन में गोरे लोगों के प्रति विद्रोह जन्म ले चुका था। मार्टिन ने गोरे लोगों के अत्याचारों के विरोध में आंदोलन की योजना बनायी। ५ दिसंबर, १९५५ को एक ऐसी घटना हुई कि काले लोगों का विरोध भड़क उठा और कुछ ही समय में आंदोलन ने उग्र रूप ले लिया। उस दिन रोजा पार्क्स नामक एक नीग्रो महिला को गोरों के लिए सुरक्षित सीट पर बैठने के कारण गिरफ्तार कर लिया गया था। बस, इसी बात ने नीग्रों के अंदर आग लगा दी थी। मार्टिन के कहने पर सभी काले लोगों ने रंगभेद के विरोधस्वरूप सड़कों पर प्रदर्शन किये, नारे लगाये। अनेक जगह काले-गोरों के बीच झगड़े हुए। पुलिस ने काले लोगों पर लाठी, गोलियां चलायीं, लेकिन विरोध कम नहीं हुआ। अंत में सरकार को मार्टिन के साथ समझौता करना पड़ा।

मार्टिन गांधीजी से पूरी तरह प्रभावित थे। रंगभेद नीति को समाप्त करने के लिए गांधीजी के सिद्धांतों को अपनाया। नगर में बसों का बहिष्कार आंदोलन आरंभ हुआ। दूसरे दिन किसी भी नीग्रो ने बस में यात्रा नहीं की। आंदोलन सफल रहा और मार्टिन लोकप्रिय नेता बन गये। विदेशों में भी मार्टिन की खूब चर्चा हुई। मार्टिन ने गांधी साहित्य का खूब अध्ययन किया। मार्टिन ने एक पुस्तक में लिखा है, 'गांधीजी के विचारों को अपनाने के अतिरिक्त सामाजिक और आर्थिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने का कोई दूसरा तरीका नहीं है।'

मार्टिन लूथर किंग बहुत साहसी नीग्रो नेता थे। उनके जीवन में अनेक ऐसे समय आये, जब वह मृत्यु से बाल-बाल बचे,

लेकिन उन्होंने साहस कभी नहीं छोड़ा। रंगभेद नीति का शक्तिपूर्वक विरोध करते रहे। गोरे लोगों ने मार्टिन पर बहुत अत्याचार किये। एक बार चर्च से लौटते समय कुछ नीग्रो लोगों को लिफ्ट देने के अपराध में मार्टिन को जेल भेज दिया गया। जेल में भी उन्हें गंदी, बदबूदार कोठरी में रखा गया।

३० जनवरी, १९५६ को मार्टिन के घर पर एक बम फेंका गया। लेकिन संयोगवश वह उस समय घर पर नहीं थे, इसलिये बच गये। मार्टिन के बढ़ते हुए प्रभाव और रंगभेद विरोधी आंदोलनों से गोरे तिलमिला उठे और मार्टिन को खतम कर देने के लिए षड्यंत्र रचे ५ अप्रैल, १९६८ को मार्टिन (टेनेसी) के लोरेन मोरेल हो छज्जे पर खड़े हुए थे कि किसी गोली मारकर उनकी हत्या कर दी

मृत्यु से पूर्व मार्टिन ने कहा था, किसी दिन मैं मार भी दिया जाऊं मैं चाहता हूं कि आप (नीग्रो) लोग तरीके से उसका प्रतिशोध न चुकाएं रंगभेद विरोधी आंदोलन को अनु पूर्वक अधिक दृढ़ता से चलाते रहें। मर गये लेकिन उनका नाम सदा अ

—जनप्रिय पुस्तक मंदिर, हरियाणा
बस अड्डा, बल्लभगढ़ - १२

□

(पृष्ठ ६९ का शेषांश)

सुगंध की तरफ इशारा करते हुए बताया।

मंजुला ने देखा महिलायें धर्म की पूरी पक्की हैं, इसीलिए इतनी दयावान और सब्र-संतोषवाली हैं। रीनू को अपनी मन पसंद कठपुतली मिल गयी थी। वह कन्हैया को अपनी कठपुतली दिखाते हुए फूली नहीं समा रही थी। रंग-बिरंगे चिथड़ों से सजी वह रानी कठपुतली थी, जिसे रीनू ने अपनी छाती से लगा रखा था। वह अपनी मम्मी के पास आकर बोली—'चलिये, मम्मी, हमें कठपुतली मिल गयी है।'

मंजुला ने कठपुतली परिवार की महिलाओं की तरफ कृतज्ञता से देखा और अभिवादन कर उठ खड़ी हुई। तंबू पार कर सड़क तक आते-आते वह महिलाओं के आशीर्वाद वचन सुनती रही। रास्ता तय करते हुए मंजुला क परिवारों के अभाव-ग्रस्त बच्चों के सोचती जा रही थी। बुनियादी ज अभाव में पलते बच्चों का भवि होगा?

मंजुला को बाल-कल्याण बनायी जा रही सैकड़ों सरकारी खोखली और निरर्थक जान पड़ जिनका कोई औचित्य नहीं है। कठपुतली में ध्यान जमाये धीरे-धीरे अपनी बेटी का हाथ कसकर पक तेज-तेज कदमों से उसके साथ पार करने लगी।

—स्काई व्यू, संजौली, शि

□

कहानी

उन्मुक्त पक्षी

□ शारदा त्रिवेदी

मेडिकल कालेज से छुट्टियों के बाद अंबुजा घर पहुंची तो मां ने दौड़कर उसे गले से लगा लिया। 'तू बड़ी भाग्यवान है, दिल्लीवालों ने अपनी तरफ से तेरे रिश्ते की बात चलायी है। पिछली बार जब वे लोग यहां छुट्टियों में आये थे तो उन्होंने तुझे देखा था।'

'मां तुम यह क्या कह रही हो? अभी री डाक्टरी की पढ़ायी अधूरी है। शादी-ब्याह की क्या जल्दी है। पहले मुझे पढ़ ने दो।'

'ज़रूरत तो नहीं थी, पर घर आती लक्ष्मी को कौन ठुकराता है। जब इतने बड़े घर से रिश्ता आया है तो हम भला ना से कहते। डाक्टरी पास करके महीने र में जितना कमायेगी उतना तो उनका ड़का एक-एक दिन में कमाता है। ज़िंदगी र राज करेगी। हमने तुम्हारा भला-रा अच्छी तरह सोच लिया है। हम तुम अधिक समझते हैं।' मां ने प्यार से बेटी गाल थपथपाते हुए बड़े गर्व से कहा।

'मां मैंने कह दिया ना कि मैं अभी दी नहीं करूंगी। मैं पढ़ी-लिखी हूं। मैं अपना भला-बुरा अच्छी तरह समझ ती हूं। मुझे तुम्हारा ज़िंदगी भर का राज नहीं चाहिये। मैं डाक्टर बनूंगी।' अंबुजा ने दृढ़ता से कहा।

'आखिर बात क्या है, हम भी तो जानें। तुझे ब्याह कर हम भी चैन की सांस लें। क्या हमें यह भी नसीब न होने देगी।'

'डाक्टरी की पढ़ायी पूरी करने के बाद मैंने अनुराग से अपना विवाह करने का निश्चय किया है।'

गुस्से से अंबुजा के गाल पर चांटा मारते हुए मां चिल्लायी—'यह क्या बक रही है। वह न हमारी जाति का न विरादरी का और तू उससे ब्याह रचायेगी। तेरा दिमाग़ तो सही है ना।'

जब दो व्यक्तियों के विचार, रुचियां, आदर्श एक से हों और उन्हें बार-बार मिलने-जुलने के अवसर आते हों तो उनका एक दूसरे के प्रति आकर्षित होना बड़ा ही स्वाभाविक है। अंबुजा की सादगी, उसके गले का सुरीला संगीत, उसकी प्रखरबुद्धि अनुराग को भा गयी। अनुराग की सौम्यता उसका अद्भुत व्यक्तित्व तथा कार्य कुशलता ने अंबुजा के मन को बांध लिया। ये आकर्षण कब प्यार में बदल गया, वे दोनों ही न जान पाये।

'अंबुजा, बस अब अपनी डाक्टरी

की डिग्री मिलने में थोड़ा ही समय शेष है। डाक्टर होकर हम तुम एक क्लीनिक खोलेंगे। सप्ताह में पांच दिन जमकर काम होगा और दो दिन जमकर छुट्टी रहेगी। अपनी छुट्टियां भी हम अलग ही ढंग से बितायेंगे। खेतों और गांवों में सुनसान नदी के किनारों पर या पहाड़ों पर अपनी छुट्टी मनेगी। बांहों में बांहें डालें हम प्राकृतिक वातावरण में दूर तक लुका-छिपी के खेल खेलेंगे।'

'तुम्हारी बातें सुनकर लगता है सारी दुनिया मेरे क़दमों के नीचे है।'

'बस यही डर लगता है अंबु, कि कहीं मेरी छोटी जाति हमारे मिलन में आड़े न आ जाय। मैं राह ही देखता रहूं और तुम डोली सजाकर कहीं दूर चली जाओ।'

'क्या जाति ही सब कुछ होती है। बाबूजी तुम्हें कितना अधिक प्यार करते हैं। यदि कोई अवसर आ ही गया तो मैं बाबूजी से स्पष्ट कह भी सकती हूं।'

'ऐसा लगता है कि तुम्हारे साथ रहने के लिए एक जीवन भी बहुत थोड़ा है।'

'तुमने तो मेरे ही मन की बात कह दी है, अनु।'

'यह क्या बड़ी बात हुई। हम आखिर तुम्हारे मन के किसी कोने में ही तो रहते हैं।' दोनों हंस पड़े।

०००

अंबुजा की मां शांती बदहवासी में दौड़ती हुई बाबूजी के कमरे की ओर भागती हुई बोली, 'कुछ सुना तुमने, तुम्हारी लाड़ली दिल्लीवालों से
करके अपने सहपाठी अनुराग से
करेगी। इसी दिन के लिए इसे
लिखाया था।'

'बंद करो यह बकवास। यह
वालों का घर है। यहां उल्टे-सीधे
नहीं हो सकते। इस लड़की का
सिर फिर गया है!'

उस दिन से घर में मातमी
श्याम बाबू न घर से बाहर निक
न चारपाई से उठ सके। उनकी
बीमारी उखड़ आयी। वे रात भर
अंबुजा गुमसुम हो गयी। शांती
घर-कृहस्थी में जुट गयी। दिल्लीवा
तार आया—अंबुजा छुट्टियों में
वे सगाई के लिए आ रहे हैं। मां
अंबुजा की मेज़ पर रख दिया।
प्रतिमा जैसी अंबुजा हो गयी।
होता रहा उसे कुछ भी पता नहीं।
की वेदी पर अपने को चढ़ाती वह
पहुंच गयी।

बड़ा-सा घर। ढेरों नौकर-
सबके अलग-अलग कमरे। उसका
अलग, पति का कमरा अलग। पति
घर आते तो वह दौड़कर
खोलती। राजन कहता—नौकरों
उसे दरवाज़े तक आने की क्या
है। वह सहम जाती। खुले बाल
सूती साड़ी पहन, सिंदूर की बिंदी
तैयार होती। राजन कहता, 'मुझे यह
सावित्री की वेशभूषा कतई पसंद

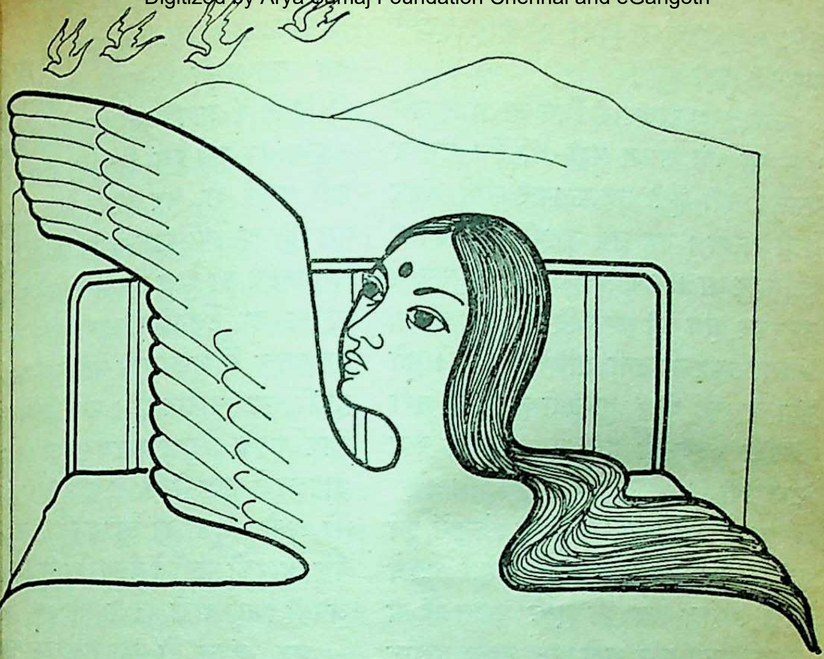

कैसी पढ़ी-लिखी, हो जो ब्यूटी पार्लर में अभी तक बाल नहीं कटवाये ।'

ऐसे क्षणों में उसे अनचाहे ही अनुराग की याद आ जाती । अंबुजा की सादगी, उसके खुले बाल अनुराग को कितने अच्छे लगते थे । एक दिन राजन को अच्छे मूड में देखकर अंबुजा ने कहा, 'यहां तो आप हर समय व्यस्त रहते हैं, चलिये कुछ दिनों को हम लोग किसी हिल स्टेशन पर चलें ।'

बड़ी अवहेलना से हंसते हुए राजन ने कहा, 'घूमना-फिरना यह सब खाली बैठे लोगों का काम है । यहां रोज़ लाखों का वारा-न्यारा होता है और हम वहां पहाड़ों पर पत्थर गिनें, भला क्यों ?'

राजन की अवहेलना से अंबुजा का कोमल मन बुरी तरह आहत हो उठा । रात के अंधेरे में वह तकिये में मुंह छिपाकर रो पड़ी । उसका मन हुआ मां से कहे, देखो अपनी बेटी का राजपाट ।

उस दिन पार्टी थी । अनचाहे ही अंबुजा को अपने बचपन से संजोये संवारे लंबे बालों को कटवा देना पड़ा । पार्टी की गहमागहमी में शराब के दौर चल पड़े । राजन का सहयोगी खन्ना अंबुजा के साथ सटकर बैठ गया और उसके गले में बांह डालते हुए बोला, 'राजन, तुम सचमुच में भाग्यवान हो जो तुम्हें इतनी सुंदर पत्नी मिली है ।'

अंबुजा की देह में हजारों कांटे उग आये और वह झटके से खन्ना का हाथ हटाते हुए उठ खड़ी हुई।

उस समय राजन ने जिन आंखों से उसे घूरा था वह समझ रही थी कि उनका मतलब क्या है? वह उठकर सीधे अंदर चली आयी। यह सब उसकी सहन-सीमा के बाहर था। राजन ने उस दिन गुस्से में उस पर हाथ भी उठा दिया और बोला, 'खन्ना के साथ इतनी अशिष्टता करने की क्या ज़रूरत थी? तुम्हारी वजह से मेरी कितनी बेइज्ज़ती हुई, तुम जाहिल क्या समझोगी!'

अब अंबुजा टूटने लगी थी। उसमें इन परिस्थितियों से जूझने का साहस चुकने लगा। रोज-रोज की ऐसी घटनाओं से उसकी घुटन बढ़ने लगी। उसे हल्का बुखार रहने लगा। एक दिन उसे खांसी उठी तो ढेरों खून की उल्टी हो गयी। डाक्टर ने बताया कि उसका एक फेफड़ा बिल्कुल खराब हो गया है, उसे तुरंत ही किसी अच्छे सैनिटोरियम में भर्ती कराना चाहिये।

राजन के पास समय कहां था। उसने गाड़ी से अंबुजा को भुवाली सैनिटोरियम में भेज दिया। डाक्टर को फोन कर दिया। बस उसका कर्तव्य पूरा हो गया।

भुवाली के सुंदर खुले वातावरण में अंबुजा का स्वास्थ्य धीरे-धीरे सुधरने लगा। सैनिटोरियम के लंबे घास के मैदानों, फूलों की क्यारियों को चुपचाप निहारते उसे एक अपूर्व शांति मिलती। घर के घुटे वातावरण से दूर उसने राहत की सांस ली।

डाक्टर ने उस दिन कहा, 'अंबु अब आप पहले से काफी ठीक हैं। ही दिनों में आप अपने घर जा सकें अंबुजा का मन हुआ कि कहे, डाक्ट यहीं रहने दो, घर जाकर फिर मे दम घुट जायेगा। उस ने एक निरीह से डाक्टर को देखा। तभी डाक्टर के राजन का टेलीफोन आया कि अ अस्पताल में आराम से लेटी है और होली का त्योहार है। उसने डाक्ट ज़िद करके अंबुजा को घर बुला लि डाक्टर ने उदासीनता से कहा, 'मेरी तो अभी अंबुजा की छुट्टी करने की वैसे आपकी पत्नी हैं जैसा ठीक समझें अपनी ज़िम्मेदारी पर ले जावें।'

घर पहुंचते ही वही आने-जाने का तांता और पार्टियों का देर रा चलना शुरू हो गया। कोई कहता- राजन, आप तो बिल्कुल सेव जैसी ल गयी हैं। कोई कहता—आप तो पह भी अधिक निखर गयी हैं। अब में इन निगाहों की चुभन सहन करने ताक़त नहीं रह गयी थी।

छह महीने बीतते-बीतते अंबुजा से सैनिटोरियम में पहुंच गयी। इ तीव्र ज्वर और खून की उल्टियों के वह भर्ती हुई। डाक्टरों ने उसके फेफड़े खराब बता दिये थे। कह दि कि अब उसके बचने की आशा बराबर है। वह आंखें मूंदे अपने

लेटी हुई थी, तभी अपने माथे पर किसी हाथ के कोमल स्पर्श से उसने आंखें खोल दीं। देखकर उसे यकीन न आया। उसने आंखें मलीं, अरे, यह तो अनुराग है—पूरा-पूरा डाक्टर—गले में स्टेथेसकोप डाले सफेद कोट पहने।

'अंबुजा, मैं यह क्या देख रहा हूं। तुम्हें क्या हो गया? तुम तो मेरी तरह से डाक्टर बनने वाली थीं। तुम मरीज़ हो गयीं।' अनुराग का गला भर आया।

अंबुजा के मुख से शब्द न निकल सके। बस आंखों की कोरों से आंसू बह निकले। वह एकटक अनुराग को देख रही थी। वह सोचने लगी कि यह सच है या स्वप्न है जो वह देख रही है।

उसके आंसुओं को अपने रूमाल से पोंछते हुए अनुराग ने कहा, 'मेरी यहां पहली पोस्टिंग है और तुम मेरी पहली पेशेंट। मैं जी-जान लगाकर तुम्हें ठीक कर दूंगा। निराश होने की कोई बात नहीं है। तुम तो बहुत साहसी और बहादुर रही हो।'

'अनुराग, नहीं अब इन परिस्थितियों से लड़ने की ताकत चुक गयी है। मैं भीतर तक टूट चुकी हूं।'

अनुराग की सहानुभूति के आगे अंबुजा ने अपनी सारी मनोव्यथा अनावृत कर दी।

'सब ठीक हो जायेगा, अंबुजा, परिस्थितियों से लड़ना ही तो मानव जीवन है। मैं राजन को समझाऊंगा। देख रहा हूं कि तुम बड़ी कंजूस हो गयी हो। मुझे बधाई तक नहीं दी, आज मेरा काम का पहला दिन है।'

'अरे मैं तो भूल ही गयी। तुमको बहुत बहुत बधाई। तुम बहुत बड़े डाक्टर बनो। मुझे मिठाई नहीं खिलाओगे?'

'हां, हां, अभी खिलाता, पर तुम जल्दी से खाने लायक तो हो जाओ।'

अनुराग की देखरेख और लगन से थोड़े ही दिनों में अंबुजा की हालत सुधरने लगी। खाली समय में अनुराग इधर-उधर की बातें करके अंबुजा को प्रसन्न रखने का प्रयास करता।

'लो देखो, आज तुम्हें बुखार नहीं है। बस अब सब ठीक हो जायेगा।'

'बुखार तो तुमको देखते ही भागने लगा था। तुम इतने बड़े हो कि तुम्हारे सामने दूसरा कोई ठहर ही कहां सकता है?'

'लेकिन अभी तुम्हारी छुट्टी नहीं होगी। कम से कम दो महीने और रहना होगा। पिछली बार तुम जल्दी चली गयी थीं, इसी से तुम्हारी तबियत बिगड़ गयी। इस बार होली-वोली कुछ नहीं। यहीं आराम करो।'

'यहां से घर जाना ही कौन चाहता है। घर से अच्छा तो यह सैनिटोरियम ही है। तुमने यह नहीं बताया कि तुम्हारे घर पर कौन-कौन है। सब लोग कैसे हैं? तुम खुश तो हो ना।'

'मेरे घर पर सभी लोग हैं। मैं बहुत ही खुश हूं। ठीक हो जाने पर तुम्हें अपने घर ले चलूंगा।' अब अंबुजा ठीक हो चली थी। अनुराग उसे सुबह शाम थोड़ा-बहुत टहलाने भी ले जाता। भुवाली की पर्वतीय सुषमा

में अनुराग के साथ अंबुजा का हृदय खुशी से खिल उठता। नदी-झरनों को देखते वह अपना दुख भूल गयी। पूर्णिमा की चांदनी रात में वह पर्वतीय नगरी चांदी-सी चमक उठी।

टहलकर लौटते सीढ़ियां चढ़ते हुए अनुराग ने उसे अपनी बांहों का सहारा देकर ऊपर चढ़ाया। उन क्षणों में अंबुजा को लगा कि वह पुनः अपने खोये हुए स्वर्ग में लौट आयी है। तभी उसे अपना घर याद आ गया और वह भीतर तक सहम गयी।

'तुम होली में घर क्यों नहीं गये ?'

'तुमको अकेला छोड़कर कैसे जाता ?'

'तुम्हारे घर पर सब लोग तुम्हारा इंतज़ार कर रहे होंगे।'

'मेरा घर तो तुम्हारे ही पास है। पहले मां थीं। अब वह भी नहीं रहीं, तो कहां जाता ?'

'पर पहले तो तुमने कहा था कि पर सभी लोग हैं। मां के बारे में नहीं बताया।'

'हां, कहा था तुमको खुश र लिए, पर सच वही है जो मैंने अपनी के दिनों में कहा था कि तुम्हारे साथ के लिए एक जीवन भी कम है।'

'तुम यह क्या कह रहे हो ? तुम्हें नहीं कहना चाहिये। मैं किसी की पत्नी तुम तो . . .'

'मैं समझकर कह रहा हूं। तुम्हारे राजन ने मिस इला से शादी कर ली तुम्हें दुख होगा, इसीलिये तुम्हें बताया।' अंबुजा स्तब्ध मौन पलं लेटी हुई एकटक आकाश में उन्मुक्त हुए पक्षियों को निहारती रही।

—३३-ए, चंद्रलोक

लखनऊ-२२

☐

काली कवि की वाक्-पटुता

बात उन दिनों की है जब काली कवि की प्रसिद्ध कृति 'छवि रत्नम्' का प्र हुआ था। जिसमें नायिका का नख-शिख वर्णन था, अतः इस दृष्टि से मुखपृष्ठ पर नायिका का चित्र प्रकाशित होना चाहिये था, पर भूलवश पुस्तक के मुखपृष्ठ पर कुत्ते का चित्र प्रकाशित हो गया। जब पुस्तक काली कवि के प्रिय शिष्य अलीपुर (स्टेट के राजा साहब के पास पहुंची तो उनसे न रहा गया, उन्होंने काली कवि से पू लिया, 'यह बात मेरी समझ में नहीं आयी कि नायिका के नख-शिख वर्णन की पु मुखपृष्ठ पर कुत्ते का चित्र क्यों ?'

काली कवि ने उत्तर दिया–'राजा साहब, यह है "छवि रत्नम्"। इसके अंदर सजी-सजाई नायिका। अतः नायक के अतिरिक्त अन्य कोई अंदर प्रवेश न कर इसलिए इसके दरवाजे (मुखपृष्ठ) पर कुत्ते को पहरेदारी के लिए बिठाया गया उत्तर सुनकर राजा साहब गद्गद हो उठे।

—भगवानदास

☐

---

२१ वीं शती

काल का
गतिमान
अनंत काल
आये भी जारी
क्यों कर आये
बेमानी होगा,
में हमारा व
सच तो यह है
के हम एक सु
का एक सूत्र
फिर भी विग
जिज्ञासा आद
कदाचित इसी
का जन्म हुआ
यानी भविष्य
वैज्ञानिक औ
से आने वाल
हैं। कुछ त
कुछ नहीं भी
काल की
महत्वपूर्ण स्थ
मौन प्रहरी
है। कुछ अं
त्रासद भी,
१९८८

२१ वीं शती का भारत

एक वैज्ञानिक परिदृश्य

☐ शुकदेव प्रसाद

काल का रथ कभी ठहरता नहीं, सदैव गतिमान रहता है। काल की यह यात्रा अनंत काल से अनवरत जारी है और आगे भी जारी रहेगी। हम कहां से और क्यों कर आये, इस बारे में कुछ भी कहना बेमानी होगा, क्योंकि इस अनंत ब्रह्मांड में हमारा वजूद न के बराबर है और सच तो यह है कि ब्रह्मांड की महारागिनी के हम एक सुर मात्र हैं। इसके ओर-छोर का एक सूत्र भी हम नहीं पकड़ पाये हैं, फिर भी विगत से लगाव और आगत की जिज्ञासा आदम जाति की प्रवृत्ति है और कदाचित इसी नाते एक सर्वथा नयी विद्या का जन्म हुआ, जिसे कहते हैं फ्यूचरोलाजी यानी भविष्य का विज्ञान। दुनिया भर के वैज्ञानिक और सांख्यिकीविद् अपनी तरह से आने वाली दुनिया की तस्वीर खींचते हैं। कुछ तस्वीरें खरी उतरती हैं और कुछ नहीं भी।

काल की महायात्रा में कुछ चीजें अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं, जिन्हें काल का मौन प्रहरी अपने पृष्ठों में अंकित करता है। कुछ अंकन सुखद होते हैं और कई त्रासद भी, जिनसे हम कुछ सीखते भी हैं।

दिन, महीने, साल और इसी तरह शतियां-दर-शतियां गुजरती जाती हैं। बीत रहे साल को विदा कर आने वाले साल की सुखद कल्पना मात्र से हम रोमांच से भर जाते हैं। विगत को अलविदा कहकर आगत के स्वागत का ही क्षण विशेष महत्वपूर्ण है, जिसको मनाने और खुशियों के इजहार की अब परंपरा बन चुकी है। जब आने वाला साल हमें रोमांचित कर जाता है तो भला आने वाली शताब्दी का वह क्षण कैसा होगा, यह रोमांच कल्पनातीत है।

एक दशक बाद जब हम नयी शती में प्रवेश करने जा रहे हैं तो यह विचार, कल्पना लाजिमी है कि नयी शती अपने दामन में हमारे लिए क्या-क्या छुपाये बैठी है। नयी शती की दहलीज पर हम आ गये हैं और चंद सालों बाद उसके दरवाजे पर दस्तक देने ही वाले हैं। ऐसे अवसर पर, आइये नयी शती की तस्वीर देखें।

काश, हमारे पास एच. जी. वेल्स की 'टाइम मशीन' होती तो हम २१ वीं शती क्या, दो-चार शतियों की झलक आपको दिखा देते। पर वेल्स की 'टाइम मशीन'

कभी बन नहीं पायी, अतः हम आपको फ्यूचरोलॉजी के सहारे आने वाली शती की चंद तस्वीरें जरूर दिखलायेंगे ।

अंतरिक्ष में पावर स्टेशन स्थापित किये जाने का विचार अगली शती में हकीकत बन चुका होगा । जिस रफ्तार से औद्योगीकरण बढ़ रहा है, उस रफ्तार को देखते हुए यही लगता है कि आने वाले १००-१५० वर्षों में ऊर्जा के प्राकृतिक भंडार चुक जायेंगे । वर्तमान में ही हम ऊर्जा-संकट के दौर से गुजर रहे हैं । विकल्पों की तलाश जारी है । विकल्पों का चुनाव करते समय हमें इस बात का विशेष ध्यान रखना होगा कि ये स्रोत या तो प्रदूषण मुक्त हों अथवा कम से कम प्रदूषण उत्पन्न करें । साथ ही कम खर्चीले हों । इस रूप में सूर्य हमारा विकल्प है ।

पिछले ५० खरब वर्षों से यह ऊर्जा की अनंत राशि बिखेरता आ रहा है और अनुमान है कि आने वाले इतने ही वर्षों तक यह प्रज्वलित रहेगा । यह ऊर्जा प्रदूषण रहित है और इसकी उपलब्धता भी सर्वाधिक है । सौर शक्ति दुनिया के हर-भू-भाग में कमोबेश हमेशा बरकरार रहती है । केवल बदली या वर्षा को छोड़कर बाकी समय में इसका उपयोग संभव है । भारत में सौर ऊर्जा की उपलब्धता सबसे ज्यादा रहती है । सौर जल ऊष्मक, सौर चूल्हा, सौर शुष्कक और सौर वातानुकूलन वजूद में आ चुके हैं ।

फोटो वोल्टेक प्रणाली द्वारा सिलिकन या कैडमियम की सौर सेलों द्वारा ऊर्जा के सीधे विद्युत में रूपांतरण भारत के कई गांवों को बिजली मुहैया जा रही है । आने वाली शती में अंत में स्थापित पावर स्टेशन सौर ऊर्जा माइक्रोवेव्स में परिवर्तित कर धरती स्टेशनों को भेज सकेंगे, जहां पर वि बनाकर जरूरत के स्थानों पर सप्लाई कि जा सकेगा । आने वाली शती में भारत गांवों में पवन चक्कियों के झुंड के दिखायी पड़ेंगे और ये हमें डेनमार्क, हा और नीदरलैंड की बस्तियों की दिलायेंगे ।

भारत का परमाणु काफिला भी का आगे तक जा पहुंचा है । पोखरन में कि गया परमाणु विस्फोट और 'साइ 'जरलीना', 'पूर्णिमा' तथा 'ध्रुव' और क पक्कम में स्थापित फास्ट ब्रीडर रिए (तीव्र प्रजनक भट्टी) हमारे परमाणु का क्रम के प्रगति के चरण चिन्ह हैं । अ शती में प्रवेश करने तक हम अपनी ऊ संबंधी जरूरतों का एक दसवां हि (१० प्रतिशत) परमाणु बिजली से कर सकेंगे ।

हमारे परमाणु वैज्ञानिक 'इंदिरा आणविक अनुसंधान केंद्र' (कलपक्कम) 'कामिनी' नामक न्यूट्रॉन रिएक्टर का नि कर रहे हैं, जो मार्च १९८८ तक 'क्रिटि हो जायेगा । यहां उल्लेखनीय है कि अ तरह का यह दुनिया का पहला रिए होगा । ईंधन के रूप में यह यूरेनियम-

का इस्तेमाल करेगा। शक्ति उत्पादन के अतिरिक्त न्यूट्रान रेडियोग्राफी जैसे शांतिपूर्ण संधानों में यह अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगा। इस तरह आसार तो यही दिखते हैं कि नयी शती के ऊषाकाल में भारत का परमाणु काफिला काफी आगे बढ़ चुका होगा और हम परमाणु संधान में आत्मनिर्भरता का दावा कर सकने की स्थिति में पहुंच गये होंगे।

यदि भारत भूमि की सुरक्षा के खतरे बढ़े, जैसा कि पड़ोसी देश की तैयारियों से लग रहा है तो हमें अपने परमाणु और अंतरिक्ष कार्यक्रमों में तेजी लानी होगी। हम परमाणु बम और मिसाइल (प्रक्षेपास्त्र) बनाने की ताकत हासिल कर चुके हैं। यदि हम चाहें तो अपने पिछले राकेट (एस. एल.वी.-३) में थोड़ा-सा परिवर्तन करके उसे 'इंटरमीडिएट रेंज बौलिस्टिक मिसाइल' में बदल सकते हैं। और अब हम इससे भी अधिक शक्तिशाली राकेट ए.एस. एल.वी. बना चुके हैं, जो १५० किलोग्राम भार तक के उपग्रह को धरती की कक्षा में ले जाने में सक्षम है।

अगली शती की पूर्व संध्या में हमारा नया उपग्रह 'इन्सैट-१ सी' भी अपनी कार्य अवधि पूरी कर चुकेगा और 'इन्सैट-१ डी' भी प्रक्षेपित किया चुका होगा। फिलहाल हम अपने राष्ट्रीय उपग्रह 'इन्सैट-१ बी' के जरिये टी. वी. प्रसारण देख रहे हैं और मौसम संबंधी जानकारियां प्राप्त कर रहे हैं और संचार माध्यम के रूप में यह बखूबी काम कर रहा है। राष्ट्रीय उपग्रह की अगली कड़ी यानी 'इन्सैट-१ सी' १९९० तक छोड़ दिया जायेगा, जो १९९७ तक हमें अपनी सेवाएं उपलब्ध कराता रहेगा। अगली शती में प्रवेश करते समय हम इतना शक्तिशाली राकेट यानी जी. एस. एल. वी. बना लेंगे, जो इन्सैट जैसे उपग्रहों को धरती की ३६,००० किलोमीटर की कक्षा में स्थापित कर सकेगा।

अभी हमने 'इन्सैट-१ ए' और '१-बी' अमरीका की मदद से छोड़े हैं, लेकिन नयी शती में हम अपने दम पर अपना बड़ा उपग्रह छोड़ सकेंगे। इन्सैट श्रृंखला के उपग्रह हम अपनी भूमि से अपने ही राकेट से अगली सदी में छोड़ने की तैयारी में हैं, और तब तक हम और बड़ी ताकत वाली मिसाइलों के निर्माण कर सकने की क्षमता अर्जित कर चुकेंगे। निस्संदेह युद्ध के मंडराते बादल अपने आप छंट जायेंगे और मेरी अपनी कल्पना में भारत एक सर्वशक्तिमान राष्ट्र के रूप में विश्व मान-चित्र में उभरेगा।

जैसा कि हमें अखबारी हलचलों से ज्ञात है कि अमरीका की तरफ के पड़ोसी देश को 'आवाक्स' जैसी अत्याधुनिक रक्षा प्रणाली मुहैया की जा रही है। इसके जवाब में हमारे रक्षा विज्ञानी और परमाणु तथा अंतरिक्ष विशेषज्ञ अपनी पुरजोर कोशिश कर रहे हैं। हिंदुस्तान एयरोनाटिक्स लि., बंगलौर की प्रयोगशाला में हिंदुस्तानी 'आवाक्स' बनाने की प्रक्रिया तेजी से चल रही है तथा रक्षा अनुसंधान में नवोन्मेष पर

जोर दिया जा रहा है। निस्संदेह अगली शती में सीमा सुरक्षा और भी चौकसी से कर सकने के आसार नजर आ रहे हैं।

जलाभाव और बढ़ती जलापूर्ति को देखते हुए भारत के अनेक अंचलों में समुद्री खारा पानी पीना होगा। मगर डरिये नहीं, वह पानी नमकीन नही होगा, विलवलीकरण संयंत्र उसका खारापन दूर करके आपके गले की प्यास बुझायेंगे। देश की कुछ प्रयोगशालाएं इस दिशा में कार्यरत हैं कि कैसे पानी को साफ करने की युक्तियां विकसित की जायें। पानी को छानकर साफ करने और संक्रमण रहित करने की दिशा में क्षेत्रीय अनुसंधानशाला, जोरहट; केंद्रीय कांच और सिरेमिक अनुसंधान संस्थान, कलकत्ता ने सस्ती कैंडलें विकसित की हैं, जो पानी छानने हेतु किसी भी सामुदायिक जल सप्लाई में प्रयुक्त की जा सकती हैं।

साथ ही यह एक दु:खद अनुभव होगा कि, अधिकांश नदियां अपनी सफाई की क्षमता खो चुकी होंगी। वे भयानक रूप से प्रदूषित होंगी और प्रदूषणजन्य रोगों तथा मिलावटों के जहर के साये में जी रही होंगी। अगली शती का आदमी अपनी मानवी संवेदनाओं से लुप्त होगा। आज ही हालत यह है कि देश के कई महानगरों में जहां समय से भी तेज भगती जिंदगी है, हर आदमी भौतिकता की दौड़ में जल्दी से जल्दी आगे निकलना चाह रहा है, वहां एक मुहल्ले तो क्या एक ही फ्लैट में रहने वाले लोग दूसरे आदमी को जानने की जहमत नहीं पालना चाहते। नहीं मालूम ,प्रगति (? की यह अंधी दौड़ हमें कहां ले जायेगी

प्रकृति से निरंतर कटते चले जाने जन्म से रही 'तकनीकी संस्कृति' वा अगली शती में आदमी-आदमी के एक लंबी-सी विभाजन रेखा खिच जाये प्रकृति और इंसान के बीच एक भयं सी खाई होगी, जो समय के साथ और गहराती चली जायेगी। आने वाली की यह एक दु:खद तस्वीर है, जि इन्कार नहीं किया जा सकता।

असांस्कृतिक, मूल्य विहीन जीवन वर्जनाहीन विरासतों तथा कंप्यूटरी ता झाम के साथ हम अगली शती में प्र करेंगे। ऐसे नाजुक क्षण में हमें भार वाङ्मय के उस आह्वान की याद आती जिसमें संपूर्ण वसुधा को परिवार मा गया है और 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' सुखद और कल्याणमयी परिकल्पना गयी है, और यह भी कि: 'परहित स धर्म नहिं भाई।'

निश्चय ही अगली सदी का भार समाज अपने पुरातन, गौरवशाली मू स्थापनाओं की विरोधी धारा में जी होगा। आइये, ऐसे नाजुक क्षण में अपनी पुरातन थाती और ऋषियों वाणी की रक्षा का शुभ संकल्प लें-'मा **भूमिः पुत्रोऽहम् पृथिव्याः'** धरती ह मां है और हम धरती के पुत्र।

–विज्ञान वैचारिकी अका
३४, एलनगंज, इलाहाबाद, उ.

□

हिंदी कहानी

आतंकवाद

☐ डा. परमलाल गुप्त

धनवती जे. के. अस्पताल के बरामदे में खड़ी हुई फटी आंखों से हरेक आने-जाने वाले को देख रही है। उसे किसी बात का होश नहीं रह गया है। वार्ड में घायलों की चीख-पुकार, कराहने के स्वर और डाक्टर तथा नर्सों के यहां से वहां तेजी से आने-जाने की पदचापें उसके कानों में बज रही हैं। उसे अपने दिमाग पर बार-बार जोर देने पर भी समझ में नहीं आता कि आखिर ऐसा क्यों हुआ? नेताओं, पत्रकारों और समाज-सेवियों की कुछ बातें उसने सुनी हैं। उन्हीं से सुना हुआ एक शब्द 'आतंकवाद 'उसके दिमाग में ठहर गया है। वह नहीं जानती कि यह आतंकवाद क्या है? यह ट्रांजिस्टरों में कैसे आ गया?

सूर्य की अंतिम लालिमा को पोंछता हुआ शाम का धुंधलका तेजी से फैलने लगा। अस्पताल तथा सड़क की ट्यूब लाइटें जल उठीं। तब उसे अपने चार साल के बच्चे का ध्यान आया। उसे वह अपने पड़ोसी को सौंप आयी थी। वह निश्शब्द रोता हुआ मां का इंतजार कर रहा होगा। आठ साल की बेटी रन्नो अभी बेहोश है। उसके पैरों और पसलियों में गहरी चोटें हैं। शायद ठीक हो जाये। परंतु उसका पति मोहन! उसके शरीर के तो चिथड़े उड़कर इस तरह खोली में छितरा गये थे, जैसे कोई मिट्टी का घड़ा ऊपर से गिरा हो और उसकी खपच्चियां दूर-दूर तक बिखर गयी हों। एक धमाके की आवाज़ के साथ पलक झपकते यह सब हो गया था। उस वक्त वह रसोई में थी और मोहन के लिए रोटियां सेंक रही थी। मोहन के साथ वह भी बहुत खुश थी। मोहन एक नया ट्रांजिस्टर लाया था। सपनों में जीने वाले गरीब मोहन तथा धनवती की यह एक बड़ी उपलब्धि थी।

मोहन रिक्शा चलाता था और धनवती दो-एक घरों में छोटा-मोटा काम करके कुछ अतिरिक्त आमदनी कर लेती थी। वे बच्चों को पढ़ा-लिखाकर बड़ा आदमी बनाना चाहते थे। मेहनत की इस जिंदगी के बावजूद पति-पत्नी दोनों में प्रगाढ़ प्रेम था। उनकी शादी को दस साल हो गये थे। परंतु उन्हें हर दिन नया दिन और हर रात नयी रात की तरह मालूम होती थी। रात को खाना खाने के बाद बच्चों के सो जाने पर वे देर तक बातें करते रहते थे। इनमें उनके भविष्य के सुखद जीवन की योजनाएं होती थीं।

मोहन रात देर से सोने के बावजूद सुबह

जल्दी उठता और रिक्शा लेकर निकलना पड़ता । इसके एवज में वह दोपहर को दो घंटे आराम करता और फिर तरोताजा होकर काम में जुट जाता । धनवती ने भी उसी प्रकार अपने को मोहन की दिनचर्या में ढाल लिया था । वह सुबह मोहन के जागने के पहले उसके लिए दो रोटियां सेंक देती । फिर रन्नो को तैयार करके स्कूल भेजती और मुन्नू को साथ लेकर खुद काम पर निकल पड़ती । वह दोपहर से पहले अपना काम निपटाकर लौट आती । तभी मोहन अपने रिक्शे से रन्नो को स्कूल से लेकर लौटता । शाम को उसके आने पर खोली में प्यार की गर्माहट भर जाती ।

पड़ोसी इस बात पर ताज्जुब करते कि मोहन और धनवती में झगड़ा क्यों नहीं होता ? उस मुहल्ले में यह आम बात थी कि मर्द दिन भर की मेहनत-मजूरी के बाद रात को अक्सर शराब के नशे में डगमगाते हुए लौटते और जरा-जरा-सी बात पर अपनी बीवियों को पीटने लगते । देर रात तक मर्दों की गाली-गलौज और औरतों का रोना-धोना सुनायी देता रहता । इसके बाद रात की चुप्पी में सब खो जाता । सबेरे से काम पर जाने की गरमागरमी बढ़ जाती । औरतों और मर्दों की शिकवा-शिकायतें गुम हो जातीं । औरतें अक्सर अपना पेट चढ़ाये और छोटे-छोटे मरियल, गंदे और नाक बहाते हुए बच्चों के साथ काम पर निकल जातीं । कुछ बूढ़े और बीमार खांसते हुए खोलियों में पड़े रहते ।

मोहन ने कभी शराब को हाथ नहीं ल था । हां, कभी-कभी वह बीड़ी के सुट्टे जरूर मारता था । धनवती बेहद प्यार करता था । धनवती खूबसूरत और सुघड़ । सांवले रंग के उसकी छवि में एक विशेष कटीलापन बेपढ़ा मोहन चाहता था कि उसकी वती हमेशा ऐसी ही सुंदर बनी रहे । लिए उसने बच्चे पैदा करने में साव बरती थी । वह अपने दो बच्चों को संभव सुविधा देकर लायक बनाना चा था । उसकी अपनी जिंदगी के कुछ रत सपने थे ।

वह सुबह बड़ी ही खुशनुमा थी । मो ने जाने से पहले हंसकर कहा था-'हम कुछ रुपये इकट्ठे कर लें, तो एक ट्रांजि खरीदेंगे । उसमें दुनिया-जहान की आती हैं, साथ में अच्छे गाने भी।'

'छोड़ो भी ! क्या होगा ट्रांजि खरीदकर ? काम-काज में टैम ही मिलता है, जो उसे सुनें ।' धनवती ने स्थिति को देखते हुए उत्तर दिया था

वह इसी तरह मोहन को चिंता करके उसे सहज बना देती थी । मोहन के हृदय में उसके प्रति प्यार गहरा उठता था ।

'काम-काज की थकावट के बाद ट्रां स्टर सुनना अच्छा लगेगा । खैर, देखेंगे । अभी तो तुझे देखकर ही थकावट छू-मंतर हो जाती है ।' कहकर मोहन धनवती को प्यार भरी दृष्टि

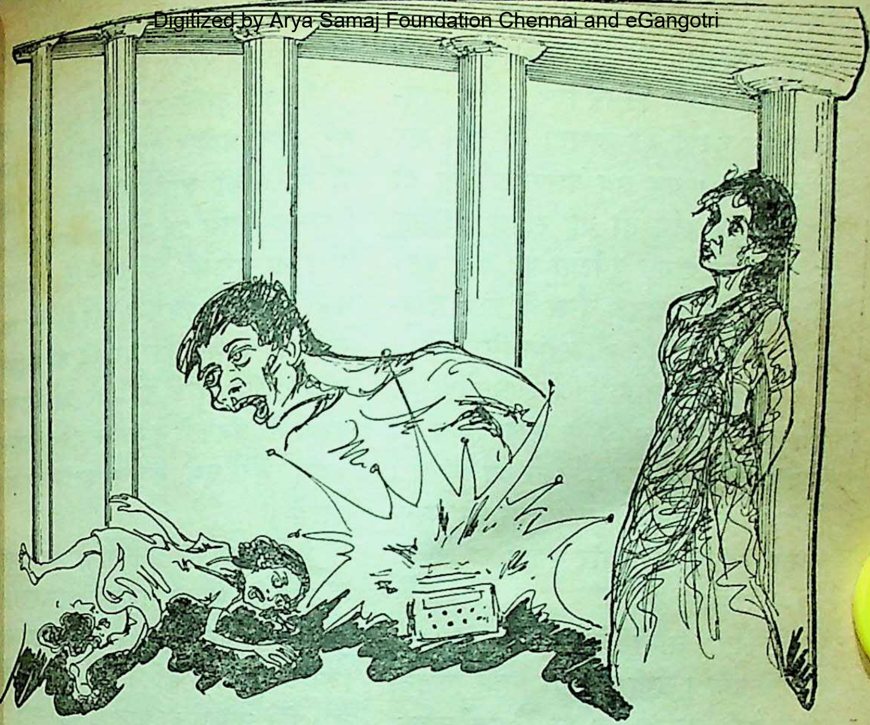

देखता हुआ चला गया था ।

उस दिन दोपहर में रन्नो को लेकर मोहन कुछ जल्दी ही लौट आया । धनवती खाना तैयार कर रही थी । मोहन ने खुशी से झूमते हुए कहा–'देखो ! मैं क्या लाया हूं?' धनवती ने देखा कि मोहन के हाथ में एक नया ट्रांजिस्टर है । उसने वहीं से पूछा–'यह कहां से लाये हो ?'

मोहन ने परिहास में जमीन पर पैर पटककर कहा–'अभी खरीदकर लाया हूं । असली मर्फी मार्का है ।'

'और रुपये ?' धनवती ने जिज्ञासा से पूछा ।'

'अरी, रुपये कहां रक्खे हैं ? ट्रांजिस्टर ही मिल गया । मैं जब शाह लेन में रिक्शा रोककर एक झाड़ी के पास पेशाब करने गया, तब वहां यह ट्रांजिस्टर पड़ा था । मैंने किसी की चोरी तो की नहीं । मैं नहीं उठाता, तो कोई और ले जाता । भगवान बड़ा दाता है । आज ही ट्रांजिस्टर खरीदने की इच्छा हुई और उसने इस तरह उसे पूरी कर दी ।'

धनवती कुछ कहती कि मोहन ने ट्रांजिस्टर बजाने के लिए उसका बटन घुमाया । बटन घुमाते ही एक जोर का धमाका हुआ और मोहन के शरीर के

चिथड़े-चिथड़े उड़ गये । उसके पास में खड़ी उत्सुकता से ट्रांजिस्टर देख रही थी । वह घायल होकर गिर पड़ी । धनवती इस घटना की कल्पना भी नहीं कर सकती थी । यह सब पलक झपकत हो गया । कुछ क्षण तो वह स्तब्ध देखती रही । फिर दारुण दुर्घटना का बोध होते ही वह हृदय-विदारक चीख के साथ सत्वहीन होकर कटे वृक्ष की भांति गिर पड़ी ।

धमाके की आवाज और धनवती के चीत्कार से आस-पास के लोग एकत्र हो गये । पुलिस भी सूचना पाकर आ पहुंची । कानूनी कार्यवाही के बाद रन्नो को अस्पताल ले जाया गया और मोहन का अंतिम संस्कार किया गया ।

धनवती आधी बेहोशी में यह सब देखती रही । अभी कुछ देर पहले कितना हंसी-खुशी का माहौल था । अब उसका सारा जीवन जैसे अंधेरे में डूब गया हो । उसे विश्वास नहीं था कि कोई मोहन को इस तरह मार सकता है । उसका पति एक नेक और ईमानदार इंसान था । उसने किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा था, न ही उसकी किसी से शत्रुता थी । उसने हरेक को अपना प्यार बांटा था । तब उसकी मौत इस तरह क्यों हुई ? यह आतंकवाद कौन है ? वह उसके पति को इस तरह धोखा देकर क्यों मारना चाहता था ? इससे उसे क्या मिला ? जबकि स्वयं उस पर दुख का पहाड़ टूट पड़ा। आतंकवाद क्या इतना क्रूर है कि वह बिला वजह लोगों को मारे ? तब वह इंसानी
कैसी जघन्य पशुता है ?

मैं जब ट्रांजिस्टर बमों के हाद
मरे और घायल हुए लोगों तथा
परिवारों की जानकारी एकत्र कर
लिए अस्पताल पहुंचा, तब धनवती
ताल के बरामदे के एक खंभे के
खड़ी हुई तेज़ नज़र से मेरी ही ओर
रही थी । जैसे ही बरामदे की सी
चढ़कर मैंने वार्ड के अंदर प्रवेश क
चाहा कि धनवती ने मुझे रोकते हुए क
'पहले मेरे एक सवाल का जवाब
जाइये ।'

मैंने ठिठककर धनवती को देखा।
में उठा कि शायद पागल है । उस वक्
अंदाज़ न कर सका कि मेरी कहानी
रिपोर्ट (जो भी कहिये) की नायिका
है । मैंने उपेक्षा के भाव से पूछा-'क

धनवती का सीधा सवाल था-
आतंकवाद क्या है और यह ट्रांजिस्
कैसे आ गया ?'

मैं कुछ देर सोचता रहा कि क्या ज
दें । फिर मैंने जल्दी पिंड छुड़ाने की
से सीधे शब्दों में कहा-'कुछ लोग
देशों के बहकावे में आकर हिंसा कर
हैं । वे सीधे सेना और पुलिस से नहीं
सकते । जन-समर्थन भी उन्हें नहीं है
लिये वे धोखा देकर नागरिकों को
देते हैं । इसके लिए वे नये-नये त
अपनाते हैं । जैसे अभी उन्होंने ट्रांजि
में बम रख दिये । इस तरह लोगों

शाश्वत प्रश्न

—श्रीधर शुक्ल—

लव निमेष से ये संवत्सर बीत गये युग कितने द्रुततर ?
आवर्तों में घूम-घूम कर चल पाये बढ़ पाये पग भर ?
कृतियों संस्कृतियों की रचना कर दी भूतल ओर छोर पर।
एक नयी कविता-सी लिख दी, पढ़ो इसे फिर पोर पोर पर।
नव्य और वह भव्य पुरातन, दोनों लगते सत्य सनातन।
युग युग के इस अंतराल में नियति चक्र का अविरल नर्तन।
मूल वृत्तियां खेल रही हैं, यथापूर्व देखो अधुनातन।
भाव वही है, भूमि वही है, केवल आज वेश परिवर्तन।
मुक्त नहीं हम राग-द्वेष से, लिप्सा के उस महाज्वार से,
जिसमें डूब गयी थी लंका धरती भर के व्यथा भार से।
कुरुक्षेत्र में शौर्य सो गया—चक्र सुदर्शन की छाया में।
गीता में अज्ञान खो गया, फिर उपजा अपनी माया में।
संस्कृतियों का शोध निरंतर देता क्या कुछ बोध महत्तर ?
उपनिषदों के ऋषि की प्रज्ञा प्रश्न कर रही जैसे गुरुतर।

—प्राचार्य, जनपद इंटर कालेज, हरचंदपुर, रायबरेली, उ. प्र.

मारकर भय पैदा करना आतंकवाद कहलाता है।'

मेरा पति बेमतलब मारा गया, तो इससे उनका उद्देश्य पूरा हो जायेगा ?'

'वे खुद नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं? उन्हें तो एक तरह के नशे में रखा जाता है। उनकी इंसानियत मर जाती है।'

'काश, वे प्यार और इंसानियत का नशा जान पाते ? उसमें कितना सुख होता है ?' धनवती ने गहरी सांस खींचकर कहा।

धनवती ने सहज रूप में बहुत बड़ी बात कह दी थी। तब मैंने जाना कि बेपढ़े और गंवार लोग हम जैसे पढ़े-लिखे लोगों से कहीं बहुत सभ्य और सच्चे इंसान हैं।

धनवती के मन में जैसे अब भी अविश्वास था। उसके मन में कई प्रश्न घुमड़ रहे थे; परंतु वह उन्हें शब्द देने में असमर्थ थी। तभी एक शब्द 'मां !' की तीखी अनुगूंज से प्रेरित होकर वह एक गाय की तरह तेजी से रन्नो के बैड की ओर दौड़ी। रन्नो को होश आ गया था।

मैं कुछ देर उसे देखता रहा। फिर मैं वार्ड के लोगों से अपने अखबार के लिए जानकारी लेने में व्यस्त हो गया।

—एस. एच ६, गोपाल कॉलोनी,
शास्त्रीनगर, सतना, म. प्र

□

धर्म और विज्ञान

मौत क्या है ? दीवार या द्वार ?

वी. आर. कृष्ण अय

ऐसे वैज्ञानिक भी हैं, जो अध्यात्म या रहस्यवाद को अज्ञान का प्रतीक मानते हैं। उ आइन्सटाइन की इन दो उक्तियों की याद दिलानी ज़रूरी है कि 'इस विश्व में रहस्या भूति से अधिक आह्लादक अनुभूति नहीं है,' और 'धर्म के बिना विज्ञान लंगड़ा है, औ विज्ञान के बिना धर्म अंधा है।'

क्या मृत्यु के बाद जीवन है ? या, जीवन कोशिकाओं की ऐसी रासायनिक-प्रक्रिया है, जिसका अंत मौत के बाद तुरंत हो जाता है, और शेष रह जाते हैं, प्राणहीन अणु, जिनमें जीवन के कोई चिह्न दृष्टिगोचर नहीं होते।

इस प्रश्न का उत्तर हम वैज्ञानिक विश्लेषण के माध्यम से भी पा सकते हैं, और ध्यान में जाकर भी। प्लेंचेट, स्वचालित लेखन, एलेक्ट्रोनिक प्रलेखीकरण आदि विधियों से भी इस प्रश्न का उत्तर पाने के प्रयास किये गये हैं। ये सभी प्रयास आदमी के बौद्धिक साहस के परिचायक हैं। इस संबंध में हमें हरबर्ट स्पैन्सर की इस चेतावनी को सदा ध्यान में रखना चाहिये—'परीक्षण से पूर्व ही यदि हम किसी संभावित परिणाम की उपेक्षा करने लगें, तो हम ज्ञान के क्षेत्र में कभी प्रगति नहीं कर पायेंगे।'

ऐसे वैज्ञानिक भी हैं, जो अध्यात रहस्यवाद को अज्ञान का प्रतीक मा हैं। उन्हें आइन्सटाइन के इन शब्दों याद दिलाना आवश्यक है कि 'इस वि में रहस्यानुभूति से अधिक आह्ला अनभूति नहीं है।' इसी बात को लां वाटसन ने इन शब्दों में कहा है, 'वि अब किसी भी सत्य को अंतिम सत्य मा से घबराता है। लौकिक तथा परालौकि के विभेद अर्थहीन हो गये हैं।' और, ज तक धर्म और विज्ञान के बीच की त कथित टक्कर का सवाल, धर्म में आस्था रखने वाले वैज्ञानिकों के लिये आइ टाइन का यह कथन विचारणीय हो 'धर्म के बिना विज्ञान, लंगड़ा है, औ विज्ञान के बिना धर्म अंधा है।'

○○○

'थानाटोलॉजी' (मृत्यु-विज्ञान) मरण का वैज्ञानिक अध्ययन करने वाली विद्या का नाम है। मृत्यु-वैज्ञानिक अब एक आत्मा के दूसरे शरीर में प्रवेश करने, तथा शरीर से बाहर आकर ब्रह्मांड की यात्राओं की घटनाओं का अध्ययन भी करते हैं। वैज्ञानिक अब पुनर्जन्म की घटनाओं का शोध भी कर रहे हैं। अमरीका के अलावा रूस में भी पूर्वज्ञान, पारेंद्रिय-ज्ञान, मानस लेखन (आत्मा द्वारा लेखन), मन: प्रभाव आदि पर काफ़ी समय से गहन वैज्ञानिक प्रयोग चल रहे हैं। अतींद्रिय विज्ञान को इन दोनों देशों के अलावा ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस आदि विकसित देशों ने विज्ञान की एक शाखा-विशेष मान लिया है। मृत्यु के बाद जीवन विषय पर अनेक दिशाओं में वैज्ञानिक प्रयोग हो रहे हैं।

'मैं कौन हूं' यह प्रश्न जो पहले धार्मिक व्यक्तियों की उत्सुकता व जिज्ञासा ही का विषय था, अब गंभीर किस्म के वैज्ञानिकों को भी परेशान करने लगा है। अत्यंत प्राचीन काल से भारतीयों को यह बोध था कि मनुष्य अमर है। अमरत्व की इसी चाह ने नचिकेता को यम से सतत प्रश्न करने को बाध्य किया था। सावित्री ने भी यम से अपने पति सत्यवान् को नवजीवन (मरणोपरांत जीवन) इसी बोध के आधार पर प्राप्त किया था। भारतीय मनीषियों को यह प्रत्यानुभूति भी थी कि मृत्यु एक सुखदायी अनुभव हो सकती है।

○○○

मृत्यु क्या है? दीवार या द्वार? आदमी अब यह मानने लगा है कि मृत्यु के बाद, शरीर भले ही समाप्त हो जाये, आत्मा जिसे हम देख नहीं सकते, सिर्फ़ अनुभव ही कर सकते हैं, का अस्तित्व कभी समाप्त नहीं होता। अनेक धर्मों ने इस बारे में गहन शोध की है कि मृत्यु के बाद, आत्मा किन-किन रूपों में प्रकट होती है। अब वैज्ञानिक भी अपने ढंग से शोध करके यह जानने का प्रयास कर रहे हैं कि मृत्यु के बाद, प्राणी की आत्मा किन आधारों पर अपने भिन्न-भिन्न रूपांतरण करती है।

इस वैज्ञानिक शोध के अनेक आयाम हैं। हमारे वैदिक ऋषियों ने समाधि में जाकर, यह शोध की थी। समाधिस्थ व्यक्ति मृत व्यक्तियों की आत्माओं से सीधा संपर्क स्थापित कर सकता है। मैं गोरखपुर के एक साधु कृष्ण प्रेम को जानता हूं, जो मृत्यु-रेखा के उस पार स्थित प्रेतात्माओं के दर्शन कर, उनका वर्णन कर सकते थे। उनके प्रियजन को ये वर्णन अत्यंत सच्चे व सटीक लगते थे। मैं यह कहना चाहता हूं कि कृष्ण प्रेम के ये वर्णन वस्तुपरकता की दृष्टि से देखने पर काफ़ी विश्वसनीय लगते हैं।

मैं उनके वर्णनों को महज़ कल्पना का खेल मानने को तैयार नहीं। उन्होंने मेरे अनेक प्रिय मित्रों तथा परिजनों की, जिनकी मृत्यु हो चुकी है, और जिनसे उनका कभी कोई परिचय नहीं रहा, मरणोपरांत जीवन का वर्णन कर, उनसे हुई बातचीत

के जो अंश मुझ तक पहुंचाये, उससे मुझे विश्वास हो गया कि 'उस पार' भी मरे हुए लोग सिर्फ़ दूसरे ढंग से जीते ही नहीं, सक्रिय भी रहते हैं। चूंकि ये मित्र व परिजन मेरे काफ़ी निकट थे, इसलिए मैं उनकी बातों को सार्वजनिक रूप से प्रकट नहीं कर सकता। किंतु, उनकी प्रामाणिकता, मेरे लेखे, असंदिग्ध है।

मैं यह स्वीकार करता हूं कि मुझे कभी स्वयं किसी 'प्रेतात्मा' से बातें करने का अवसर नहीं मिला। लेकिन, मेरे एक मित्र हैं, श्री एस. वी. कामथ, जो मंगलौर में रहते हैं। मैं यह पक्के तौर पर जानता हूं कि श्री कामथ के मृत पिता कई बार अपने बच्चों के सामने, उसी रूप में, जिनमें वे उन्हें देखने के अभ्यस्त थे, प्रकट होकर, उन्हें कठिनाइयों से उबार चुके हैं।

एक बार मुझे अपने चार सहयोगी-न्यायाधीशों के साथ एक मामले में उनके साथ निर्णय देना पड़ा। हम सबके निर्णय अलग-अलग थे। बाद में मेरे एक सहयोगी ने मुझे बताया कि उनकी पूर्व-जानकारी एक आत्मा को पहले ही हो चुकी थी, और उसने उनके मत को निर्णय से पूर्व हुई एक 'प्रेताह्वान बैठक' में सही-सही बता भी दिया था। है न चकरा देने वाली बात!

मुल्ला एंड मुल्ला बंबई कानूनी परामर्शदाताओं की एक विख्यात फर्म है। इस फर्म के एक भागीदार ने एक बार मुझे अपने एक मुवक्किल का अजीबोगरीब किस्सा सुनाया था। यह मुवक्किल थीं एक महिला, जिन्हें अपने मृत पति
जायदाद मिलने में परेशानी हो रही
क्योंकि मृत पति की वसीयत उनसे
गयी थी। परेशानी के दिनों में उन्हें
यत पर गवाही देने वाले व्यक्ति ने,
पति की मृत्यु के बाद ही चल बसे थे,
में प्रकट होकर बताया कि खोयी
वसीयत किस जगह छिपी है। उन्हें
उसी स्थान पर वसीयत को खोजा,
वह मिल गयी। वसीयत के मिल जाने
उन्हें आसानी से अपने पति की जायद
मिल गयी।

○○○

मेरे एक सहयोगी-न्यायाधीश ने
अपना एक अनुभव सुनाते हुए कहा
कि एक बार उन्होंने अपने एक परि
बच्चे से उसकी मृत्यु के बाद बातें कीं

यदि आपने प्रख्यात कथाकार,
के. नारायण की 'द इंग्लिश टीचर' कह
पढ़ी है, तो आपको कहानी का वह
याद होगा, जिसमें मृत पत्नी के विछोह
व्यथित अध्यापक अपनी पत्नी से वैसे
बात करता है, जैसे वह उसके जीवित
पर किया करता था। पत्नी मृत होने
भी पूर्व-परिचित साड़ी पहने, और
में फूल लगाये उसके सामने हो जाती
सारी घटना नारायण के अपने अनु
पर आधारित है, और नारायण ने न
बोला है, न कल्पना से काम लिया
उन्होंने एक सीधे-सच्चे अनुभव को
कलाकार-उपन्यासकार के शब्द

किये हैं।

यहां यह उल्लेख करना भी आवश्यक है कि उपन्यासकार नारायण ने सुप्रसिद्ध माध्यम एना टुइग के ज़रिये अपनी मृत माता से भी बातें की थीं।

मृत्यु के बाद भी जीवन है—ये दोनों घटनाएं इस सच्चाई का एक प्रमाण प्रस्तुत करती हैं।

मैंने भी अनेक माध्यमों के ज़रिये प्रेतात्माओं से संपर्क करने के प्रयास किये हैं। इनमें से कई माध्यम खरे थे, कई खोटे। बंबई की श्रीमती ऋषि को मैंने काफ़ी विश्वसनीय पाया। भारत के भूतपूर्व उप-राष्ट्रपति श्री बी. डी. जत्ती ने मेरा परिचय एक अन्य विश्वसनीय माध्यम श्रीमती त्यानी त्यागराजन् से कराया था। सिकंदराबाद में रहने वाली पाकिस्तानी मूल की एक मुस्लिम स्वचालित लेखन में अत्यंत निपुण हैं, और उन्होंने मुझे चमत्कृत भी किया है, और निराश भी।

मरणोत्तर जीवन के क्षेत्र में शोध के संबंध में अमरीका के डॉक्टर मूडी ने एक नया आयाम जोड़ा, ऐसे अनेक व्यक्तियों से बातचीत करके, जिन्हें डाक्टरों ने एक बार मृत घोषित कर दिया था, मगर जो बाद में जीवित हो गये। इन सब व्यक्तियों के जीवन व मृत्यु की सीमा-रेखा पर हुए अनुभव आश्चर्यजनक रूप से समान हैं। मृत्यु के तुरंत बाद कुछ क्षणों के लिये इन लोगों को असह्य पीड़ा होती है, और फिर वे अपनी मृत देह पर एक निगाह डालकर अपनी सूक्ष्म देह को एक अंधेरी सुरंग में बड़ी तेज़ी से जाते हुए पाते हैं। सुरंग पार करने के बाद, उन्हें अनुभव होता है, जैसे कई सूक्ष्म शरीर उन्हें सहारा दे रहे हैं।

ooo

विश्वविख्यात मनोवैज्ञानिक सी. जी. जुंग ने, जिन्हें प्रीस्टले ने 'आत्मा का एक कुशल चिकित्सक' कहा था, अपनी आत्मकथा में अपने एक ऐसे मित्र का वर्णन किया है, जो मृत्यु के अगले दिन अपने पुस्तकालय में उन्हें बताते हैं कि उसे मृत्यु के बाद कैसे-कैसे अनुभव हुए।

विश्वविख्यात लेखक तथा दार्शनिक अल्डुअस हक्सले की प्रेतात्मा ने राइनहार्ट नाम के एक पादरी से संपर्क कर उन्हें अपने मरणोत्तर जीवन के अनुभव सुनाये थे, इसके प्रमाण उपलब्ध हैं। लाउरा आर्चेरा हक्सले ने हक्सले के अंतिम वर्षों का वर्णन करने वाली पुस्तक 'दिस टाइमलैस मोमेन्ट' में २२९ से २४० पृष्ठों में इस घटना का वर्णन किया है।

मरणोत्तर जीवन के अनुभवों का रोमांचक वर्णन करने वाली दो और पुस्तकें पिछले दिनों प्रकाशित हुई हैं—'द एयरमैन हू वुड नॉट डाई', और 'द घोस्ट ऑफ फ्लाइट ४०१।' इन दोनों पुस्तकों को पढ़ने की सिफारिश मुझसे एक अवकाश प्राप्त न्यायाधीश ने की थी, जिन्हें स्वयं भी अपने मृत मित्रों व परिजनों से संपर्क करने के अवसर मिले थे।

'द घोस्ट ऑफ फ्लाइट ४०१' में

मियामी के दलदली क्षेत्र में एक जंबो वायुयान के गिरकर नष्ट होने का प्रामाणिक वर्णन है । एक स्थान पर वायुयान का मृत कैप्टेन अपनी वेशभूषा में अपनी सीट पर आकर बैठ जाता है, और दुर्घटना के बाद घटने वाली घटनाओं का बड़ा ही प्रभावशाली वर्णन करता है ।

मेरे पास एक टेप है, जिसमें डॉक्टर जॉर्ज मीक को 'मृत्यु के उस पार' रहने वाले लोगों से बातें करते हुए सुना जा सकता है । मेरे पास वेदांतियों, दार्शनिकों तथा चिकित्सकों के ऐसे वक्तव्य मौजूद हैं, जिनसे यह मानने की संभावना काफ़ी प्रबल हो जाती है कि मृत्यु के बाद भी जीवन है ।

प्रोफेसर इयान स्टीवेन्सन ने पुनर्जन्म-संबंधी हज़ारों घटनाओं का विधिवत वैज्ञानिक परीक्षण कर, उनका वर्णन अपनी कई पुस्तकों में किया है । मैं उनसे मिल चुका हूं, और मैंने इस विषय पर उनसे विस्तृत चर्चा की है । उन्होंने जो तथ्य संग्रहीत किये हैं, उनसे इस विश्वास को बल मिलता है कि पुनर्जन्म एक हक़ीक़त है, और मृत्यु के बाद मृत व्यक्ति की वासनाओं के अलावा, उसके शारीरिक चिह्न, जैसे तिल, मस्सा आदि भी अगले जन्म में प्रकट होते हैं ।

○○○

स्वामी योगानंद कृत 'एक योगी की आत्मकथा' भारत के बुद्धिजीवियों में बहुत लोकप्रिय हुई है । इस आत्मकथा में उन्होंने रीजेन्ट होटल में अपने मृत गुरु के साथ हुई अलौकिक बातचीत का स्तार वर्णन किया है ।

जब मैं लेनिनग्राद स्थित 'साइ इन्स्टीटयूट' देखने गया था, तब मैंने के सदस्यों से जीवन व मरण के रह के बारे में बातें की थीं । तब उन् मुझे बताया था कि वे स्वामी योग द्वारा उनकी आत्मकथा में वर्णित अलौकि अनुभवों के बारे में शोध कर रहे काश ! इन रहस्यों के बारे में पद वादियों का दृष्टिकोण भी लेनिनग्राद 'साइकिक इन्स्टीटयूट' के सदस्यों खुला होता ।

अंत में, मैं यह कहना चाहता हूं जहां तक अलौकिक व आध्यात्मिक नाओं और अनुभवों का प्रश्न है, मैं स्व से संशयवादी हूं और बंचकात्मक अध्या वादियों का तीव्र आलोचक रहा हूं । इ बावजूद, मरणोत्तर जीवन मुझे एक वा विकता प्रतीत होती है, और इस संबं मेरा दिमाग काफ़ी खुला है । एक जि की हैसियत से मैं इस प्रश्न पर विचार करता रहता हूं, तथा उप प्रमाणों को सच्चाई के निकष पर प और जांचने का प्रयास भी करता हूं । हो सकता है कि अब तक मैं निष्कर्षों पर पहुंचा हूं, वे सब गलत और यह भी हो सकता है कि इस स का पता मुझे तब लगे, जब मैं दुनिया साथ संपर्कों से परे चला जाऊंगा ।

['द वीक' से सा

नायजीरियन कविता

शीशा देखो

मूल : रोमेनस एन. इगुडु

रोमेनस एन. इगुडु एक नायजीरियन कवि है। नायजीरिया के नुसाका विश्वविद्यालय और अमेरिका के मिशिगन विश्वविद्यालय में अध्ययन किया। अमेरिका में प्रसिद्ध कनेडियन कवि ए. ज. एम. स्मिथ के संरक्षण और संस्कार में रहा। पहले पहल कविताओं को 'ब्लेक आरफियस' और 'ट्राजिशन' नामक पत्रिकाओं में जगह मिली और अच्छे कवि के रूप में पहचाना गया। 'कामन वेल्थ पोएम्ज आफ टुडे' और 'न्यू व्हाइसेज आफ द कामन वेल्थ' में छपने से प्रतिष्ठा मिली। डाक्टर डोनेटस न्वोगो के साथ 'इगबो पोएटिक हेरीटेज' नामक ग्रंथ लिखा। 'इगबो ट्रेडिशनल वर्स' का संपादन किया और 'फेस्टेक ऑफ नायजीरियन न्यू रायटिंग' के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया।

शीशा देखो
उसमें मिलेगा तुम्हें
चीनी का कटोरा
जो आधा खड़िया और
आधा कोयले से बना है
जो आग भी पकड़ता है और
राख भी होता है
जो शेर भी, मेमना भी
कछुआ भी, भेड़ भी।

बैठी-बैठी चील
देख रही गिद्ध को
भांप लगाये आंख
देख रहा चूहा,
बाज झपट रहा चूज़े पर
खेल रहे वहां
बरसात और बरसाती-घुटन एक साथ
बैठे हों जैसे दिन-रात पास-पास
बातचीत करते, सलाह करते।
इनमें से हर एक
उस बरतन में कर रहा
एक मीठी धुन पैदा
उसकी गहराई में
रख दिया गया हो जैसे
कोई नपा-तुला बाजा,
समय और स्थान बजा रहे बाजा
और बुन रहे संगीत किस्म-किस्म का
जैसे भजन, मरसिया, सिम्फनी, कोरस जॉज़
और उच्च गतिमय जिंदादिल ट्विस्ट।

रूपांतर : डा. रमेश दवे

□

नायजीरियन

हमारा इतिहास

मूल : **मबेला सोन दिपाको**

केमरून के दाउला नगर में सन १९३६ में दिपोका जन्मा। भिंगा नदी के किनारे में अपने दादा-दादी के साथ रहा। कमरून और नायजीरिया में पढ़ा-लिखा। नायजी ब्राडकास्टिंग कारपोरेशन में न्यूज रिपोर्टर रहा। आजकल फ्रांस में 'प्रेजेन्से नामक अफ्रीकी साहित्य एवं कला संस्थान में कार्यरत। 'इलेविन शार्ट अफ्रीकन प्लेज' 'ए फ्यू नाइट्स एंड डेज़' नाम का उपन्यास लिखा। दूसरा बेस्ट सेलर 'ब्रिज़ आफ उपन्यास लिखा। प्रेम उपन्यास 'ब्लैक एंड व्हाइट' भी बहुत मशहूर हुआ।

और आ गयीं
लहरें
कूबड़ वाले गोताखोरों की तरह तैरतीं
सुदूर समुद्र से—
अपनी दूरबीनों के साथ।

चमक उनकी
भ्रम पैदा करती मोतियों का,
लहरों को बुहारते-से
छोड़ते जब मल्लाह अपनी मज़बूत डोंगियां
लगता जैसे तैर रही हो
किसी व्हेल मछली की लाश,
और सभी नज़रों ने हमारी धोखा दिया
भाले की नोक पर
सूरज की रोशनी जब

चमकी बिजली की तरह
धमाका हुआ और बारूदी विजय
लगा जैसे गिरी हो गाज
और जंगल झुलसकर हो गये हों
हरियाली-विहीन।

इसी तरह बदलते रहे भेस
हमारे दिन
कभी खाल पहनते तेंदुए की
कभी छापेदार चीते की
मगर नकली पोशाकें हो जातीं
चिथड़ा-चिथड़ा थोड़ी ही देर बाद
और टुकड़े पंख नोची तितली की
उड़ते इधर-उधर।

रूपांतर : डा.

स्मृति के झरोखे से

याद : पत्रों के माध्यम से

☐ रामनारायण उपाध्याय

मुझे डाक का शौक है। डाक दिन में दो बार आती है। मैं किसी आत्मीय जन की तरह उसकी राह देखता हूं। डाक के आते ही हर पत्र पहले अपने आप को पढ़ने का जिद करने लगता है। सबसे पहले मैं छपे-छपाये पत्रों को एक ओर रख देता हूं। सोचता हूं, इनमें लिखी कामकाजी बातों को बिना काम के समय भी निपटाया जा सकता है। पिन टंकित पत्रों की ओर ध्यान जाता है, लगता है इनके और मेरे बीच में एक मशीन है, जो प्रेम की गली के संकरे होने की तरह बीच में किसी के होने से आंख की किरकरी की तरह सालने लगती है। और तब अनायास ही हाथ से लिखी चिट्ठियां अपने लेटे तिरछे अक्षरों को, तिरछी नजर से बतियाने का इशारा कराने लगती हैं। भला कौन इनके इस एकांतित आग्रह को टाल सकता है।

पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखा था–'थोरो की जिंदगी में कुल दो चिट्ठियां ऐसी मिली थीं, जिन्हें वह कीमती समझता था।' मुझे भी बस दो ही ऐसे पत्र मिले हैं जिनकी, मैं कद्र करता हूं।

एक चौदह हजार मील दूर बैठी महिला को मैंने काव्यमयी भाषा में लिखा था–'क्या रात को आप गाना गाती हैं? मुझे यहां नींद नहीं आती।'

उसका जवाब आया, 'हां मैं वायलिन और मैंडोलिन बजाती हूं। मुझे खुशी है कि आप इतनी दूर से सुन लेते हैं।'

दूसरे पत्र की लेखिका का जिक्र नहीं करूंगा, पर उसके भी दर्शन नहीं किये।

आज से चालीस वर्ष पूर्व एक दिन मेरे पास एक पत्र आया था, लिखा था –

'तुमसे मिलने की जीवन में आशा कम विश्वास बहुत है। शायद किसी दिन पूरा हो।' लेकिन आज तक मैं उनकी राह देख रहा हूं।

और यह दूसरा पत्र सुदूर चेकास्लोवाकिया के प्रसिद्ध लेखक ओदोलेन स्मेकल का है। लिखा है–

'आज दिल्ली आकर आपसे, विशेष रूप से मिलने की बहुत इच्छा थी। विश्व हिंदी सम्मेलन की अव्यवस्था के कारण लगता है यह असंभव था। मुझे विश्वास है कि अगले वर्ष जब मैं यहां फिर से आऊंगा आपसे मिलने का सौभाग्य प्राप्त होगा।'

लेकिन अभी तक मुझे यह सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ।

और यह तीसरा पत्र सुदूर पटना से शंकर दयाल सिंह का है। लिखा है –

'अभी-अभी सबेरा हुआ है, और पहला काम आपको पत्र लिखने का कर रहा हूं। रात भर करवटें बदलता रहा, कि आपको क्यों नहीं पहले कभी पत्र लिखा? जिससे मैं भी कभी कहीं 'चिट्ठी-पत्री' में टंक जाता। आपकी पुस्तक ने झकझोर दिया है। बिना मिले ही आपका मुरीद हो गया हूं। जबलपुर तक दादा द्वारकाप्रसाद मिश्र से मिलने आ जाता हूं। और कभी खंडवा भी आ जाऊंगा।'

और मेरी आंखें पटना की राह उनकी बाट जोहती रहती हैं।

और यह चौथा पत्र सुदूर आसाम के एक गांव के मानिक चंद्र कालिकत्ता का है। लिखा है –

'आज यहां की लायब्रेरी से आपकी पुस्तक 'मन के मृगछौने' पढ़कर यह खत लिख रहा हूं। आसाम आज जिस तरह जल रहा है, उसमें मैं कभी भी राख बन सकता हूं। मेरा नाम आपकी फाइल में अंकित रहे इसलिए यह खत लिख रहा हूं।'

और उसके अक्षर अंगारे से ध
उसकी याद दिलाते रहते हैं।

और यह पांचवां पत्र प्रसिद्ध
न्यासकार कलकत्ता से विमल मित्र
लिखा है –

'आपका पत्र मिला। मैंने अपने
में हर भाषा में बेशुमार पाठक
पाये, लेकिन अपने घर में मैं अके
गया हूं। यहां के बंगला भाषा के
के साथ मेरा विशेष मेलजोल नहीं
मैं अकेला ही अनजाने आदमियों के
फुटपाथ पर टहलता हूं। प्यार
की बात मेरे मित्र मेरे ऊपर ज्याद
ज्यादा आघात ही करते रहे हैं।
कारण एक ही है कि मेरी किताबें
बिकती हैं और मेरी रचनाओं को
की सर्वदा सराहना मिली है।

अगर मेरी कहानी हिंदी पत्रि
नहीं छपती तो आप जैसे सुहृद बंधु का
भी नहीं मिल पाता। जब तक जिंदा
आपकी बात याद रखूंगा।'

क्या मैं इन्हें भूल सकता हूं?

–'साहित्य कुटीर', ब्राह्मणपुरी, खंडवा,

□

क्या फायदा !

एक महिला ने दूसरी महिला से पूछा कि स्वर्ग में पुरुषों को अप्सराएं मिलेंगी,
औरतों को क्या मिलेगा?

दूसरी ने जवाब दिया–'यही अपने-अपने पति।'

पहली महिला ने जरा कटु स्वर में कहा, 'माफ करो। फिर मरने का क्या फा

–डा. गोपालप्रसाद

□

कहानी

चक्की

□ ज़ोसेफ़ मेकवान

अलार्म बजते ही उमाकांत उठता है । ब्रश पर पेस्ट लगाते हुए उसे पिता के शब्द रोज याद आते हैं–'गला खंखारते मुर्गे की तीसरी बांग पर तो हम उठकर खड़े हो जाते थे, लेकिन सारा गांव गूंजने पर भी तुम्हारी नींद नहीं उड़ती । बबूल की पकी दातौन, बड़ी लाभदायक होती है, बेटा ! मसूड़े मजबूत होते हैं ।'

उसने न तो कभी उन्हें जवाब दिया और न ही कभी उनकी बात मानी । 'ये तो बोलते ही रहेंगे, आदत पड़ गयी है ।'

घंटी बजती है और शीला दरवाज़े की आंख से नज़र गड़ाकर खोलती है। पास की झोपड़ी में रहनेवाली ग्वालिन रधिया मक्के की गरमागरम रोटी आंचल की ओट से निकालकर चुपचाप शीला को दे देती है। शीला वह रोटी और दूध का गिलास ससुरजी के कमरे में रख आती है। दद्दा को रोज सवेरे मक्के की एक गरम रोटी नाश्ते में लेने की गंवारू आदत पड़ी हुई है। शीला को मक्के की रोटी बनाना नहीं आता, इसलिये रधिया ग्वालिन को पटा रखा है और वह रोज सवेरे एक रोटी बनाकर दे जाती है।

वह रोज उनके लिये मक्के की रोटी बनाती है–पिता के इस भ्रम को तुष्टि मिलती है और पुत्र होंठों में मुस्कराता हुआ दाढ़ी पर मुलायम ब्रश फेरता रहता है ।

'भई, इतनी बेगार तो करनी ही पड़ेगी; इन्हीं की बदौलत मिला है यह फ्लैट । अभी तो फिक्स में भी अच्छी-खासी रकम है ! ज़रा-सा भी कोई बहाना मिला तो न जाने कहां धर्मादा कर देंगे; दद्दा बड़े उस्ताद हैं। तुझे जो गहने दिये हैं वे तो आधे भी न होंगे, लाकर में कितने पड़े हैं यह तो मैं भी नहीं जानता !'

लेकिन यह तो रोज की सरपच्ची है ! हर आंतरे रोज मक्का पिसवाना पड़ती है । तीन दिन का आटा हो जाय तो तुरंत परख लेते हैं। बड़ी मुसीबत है ! और नखरे तो देखो, रोज कोई न कोई सूचना देते हैं रोटी में सुधार करने की ! परसों ही मैंने रधिया को खड़ी रखकर उनकी बातें सुनवायी थीं । कह रहे थे :

'मुझे तो फूली हुई रोटी अच्छी लगती है, जिस पर पापड़ जैसा करारा पर्त उठ गया हो और नीचे लाल-लाल सिकी हो । तुमने कभी अपनी सास के हाथ की रोटी खायी होती, बहू, तो ये गेहूं के गुणगान भूल जातीं । क्या रोटी बनाती थीं मक्के की ! '. . . मुझे तो ये मक्का-पुराण जरा भी अच्छा नहीं लगता !'

'और रधिया को कैसा लगा ?'

'अरे, वह तो मन लगाकर रोटी के पीछे पड़ी है ! कह रही थी कि असली कंडों की आंच पर सेकती हूं। देखना, अब दद्दा को कोई कसर नहीं लगेगी। आज जब दद्दा रोटी की तारीफ कर रहे थे तब खड़ी-खड़ी मुस्करा रही थी। मुझसे कहने लगी : तुम्हीं सीख लो, सेठानी ! बुजुर्गों की दुआ लगेगी तो जनम सफल हो जायगा।'

'तो सफल कर क्यों नहीं लेती . . . ?'

'मुझे नहीं करना है। अब तो तुम्हीं कुछ करो। जब तक चोरी-छुपी चल रहा है तब तक ठीक है, जिस दिन दद्दा के सामने भेद खुल गया उस दिन मैं मुंह दिखाने काबिल नहीं रहूंगी।'

'लेकिन इसमें इतना घबराने की कौन-सी बात है ? और तो कुछ नहीं है ?'

'कह रहे थे : बेटी, मक्के की रोटी तो तुम अच्छी बनाने लगी हो ! अपने गांव के घर एक छोटी-सी चक्की पड़ी है, वो अगर आ जाये तो ये आटा–चक्की का अशुद्ध आटा खाना मिट जाये। घर की चक्की के आटे में जो शुद्धता और मिठास होती है वह इसमें कहां ? फिर तंदुरस्ती भी अच्छी रहती है। दलिया, थूली और बांटी-बाफले का आटा भी बहुत अच्छा पिसता है। तुम्हारी सास का स्वर्गवास पचपन वर्ष की उम्र में हुआ, लेकिन कभी कराहने की आवाज़ नहीं सुनी। मेहनत से शरीर बनता है। अब तो तुम कहीं मेरी नौकरी, लगवा दो, नहीं तो दद्दा मुझे पिसनारी बना देंगे।'

'थोड़ा धीरज तो धर . . . औ चक्की लानी भी पड़ी तो तुझे कहां है . . . रधिया जो है।'

'इससे अच्छा तो बिजली की ही ला दो न, जिससे वह गांव की लाने की बात ही ख़तम हो जाय . . पूछो दद्दा की।'

'अभी मेरे पास गुंजाइश नहीं है

और वह गुंजाइश हो उससे प दद्दा एक दिन गांव जाकर पूरी चक्की सहित लेकर आ गये।

रधिया की खुशी का तो ठिका था। वह तो बड़े उत्साह से पी गयी। दद्दा भी बड़े खुश हो रहे थे। 'हां . . . बराबर . . . ऐसे ही पीसा ज तुम भी सीख लो, बहू। बड़े भूखे पेट पीसने से शरीर के अंग असर पड़ता है; फिर तुम्हें इन शीशियों की जरूरत नहीं पड़ेगी। जब पेट में था तब आखिरी दि तुम्हारी सास ने चक्की नहीं छोड़ अरे, अपनी सौर का हलुवा और भी इसी चक्की के आटा का खाया शीला तो मानो शिला बन गयी आसमान टूट पड़ा हो।

शाम को दद्दा मंदिर गये और घर आया। शीला एकदम भन्नाती कुछ भी बोले बिना उसका हाथ दीवानखाने में खींच ले गयी और इशारे से इस तरह कुछ अजीबोग़रीब

ने लगी जैसे सीताजी रामचंद्रजी को
मृग दिखा रही हों। पहले तो उमाकांत
ीम की भांति सारा कमरा ही दिखायी
ा, लेकिन शीला की रोषपूर्ण मुद्रा देख-
उसकी इंद्रियां अर्जुन की आंख बन गयीं
र सामने ही अड्डा जमाकर बैठी हुई
की दिखायी दी। उसने सोफे का चौथाई
ा हड़प लिया था। बेचारे सोफे को ठेट
ड़की तक हटना पड़ा था और दूसरी तरफ
सयां भी दरवाज़े तक खिसक गयी थीं।
रा फर्नीचर अव्यवस्थित हो गया था।

'यह सब किसने किया ?' ऐसी पृच्छा
भाव उसकी आंखों से झांकने लगा
शीला का मुंह खुला।

'तुम्हारे बाप ने . . . !'

उमाकांत को बहुत बोलना तो नहीं
ता था, लेकिन बिलकुल बुद्धू भी नहीं
। उसने समझ लिया कि 'तु . . म्हा . . .
. .' शब्द के एक-एक अक्षर से गुस्सा
क रहा है, फिर भी चुपचाप कान
ाये खड़ा रहा। शीला बोली :

'हाथठेले में रखवाकर लाये हैं। दो
दूर थे फिर भी उनकी औरत को भी
ा लाये। कहने लगे : तीसरी मंजिल पर
ाना है, एकाध आदमी अधिक हो तो
ठा। यह तो असली राजस्थानी पत्थर है,
पीढ़ियां हो गयीं, लेकिन पत्थर को
च नहीं आयी और न थाले को ! सारा
की पुराण समझाया उन लोगों को और
ने लगे : क्यों रे, तुम लोग तो हाथ से
सते होगे ? तो वह औरत बोली :

'कहां से पीसें, दद्दाजी ! इस मजदूरी से फुर्सत मिले तब तो पीसने बैठें ? सारा दिन ये ठेला खींचते-खींचते शाम को थककर चूर हो जाते हैं। नस-नस दुखती है। और शहर में कहां चक्कियों का टोटा है जो हाथ से पीसें ? तुम भी दद्दाजी, बेकार उठा लाये हो !'

'तब तो वह औरत बहुत अच्छी लगी होगी तुझे ?'

'हां-हां, लेकिन दद्दा उनकी कब सुनने वाले थे ? चक्की जमवाकर मजदूरी के दस और ऊपर से इनाम के पांच रुपये देकर मुझसे बोले :

'देखो बहू, अब ये घर घर जैसा लगता है। चक्की के बिना मुझे तो सूना-सूना लगता था। अब मन और आंखों को भी अच्छा लगेगा ! रधिया ने गेहूं का आटा और दलिया भी पीस दिया है। शाम को हलुवा बनाने की कहकर मंदिर गये हैं। कल से तो रधिया मुझे पीसना भी सिखायेगी।'

'क्या मतलब ?'

'देख नहीं रहे हो, अपने कमरे के ठीक सामने रखवायी है चक्की, जिससे बराबर नजर रख सकें। रोज भिनसारे मुझे पीसने का हुक्म दिया है।

'दद्दा ने खुद तुझसे पीसने को कहा ?'

'हां, रधिया से कहने लगे : कल से जरा जल्दी आया कर, दो दिन में तो बहू रोटी की तरह पीसना भी सीख लेगी, बड़ी चतुराई है इसके हाथों में . . . मैं कहे देती हूं, मुझसे यह सब नहीं होगा।'

'तो क्या करूं . . . ? अरे, सीख तो ले, थोड़े दिन तो यह सब सहना ही पड़ेगा। 'फ्लैट' और 'फिक्स' उनके नाम पर हैं; गहने लाकर में रखे हैं; चाबी अपने पास ही रखते हैं। लेकिन कब तक जियेंगे ?'

'अभी तो भले-चंगे हैं, एक दांत भी नहीं गिरा ! देखते नहीं हो रोज सवेरे दतौन चबाते हैं, चने-मटर का नाश्ता कर सकते हैं ?'

'ठीक है, लेकिन पैंसठ के तो हो चुके हैं ! खींच-खींच कर कहां तक खींचेंगे ? अरे, भले-चंगों को ही जल्दी बुलवाते हैं भगवान !'

'लेकिन मुझसे ये राह नहीं देखी जायेगी। तुम इतने दब्बू न होते तो मुझे ये सब नहीं सहना पड़ता। चूल्हे में जाय ऐसी जायदाद। मैं तो कहती हूं वृद्धाश्रम में भेज दो इन्हें।'

तो फिर गांव में ही क्या बुरे थे ? तू ही तो उतावली हो रही थी कि दद्दा को जल्दी यहां ले आओ, नहीं तो सब संपत्ति इधर-उधर कर देंगे ? अब जो वृद्धाश्रम की बात सुनेंगे तो सीधे गांव चले जायेंगे, मुड़कर देखेंगे तक नहीं इधर . . तू . नहीं जानती उन्हें। जैसे-तैसे तो सब लेकर आये हैं !'

'मुझे तो तुम्हारी बुआ का भरोसा नहीं था; जब देखो तब दद्दा के पास गांव में पड़ी रहती थीं। यहां आती हैं तब भी भाई-बहिन की बातें पूरी ही नहीं होतीं . . . मैं कभी पहुंच जाऊं तो एकदम चुप . . . मुझे ऐसे घूरेंगी जैसे कोई दुश्मन आ गया हो !'

'तूने पहले से ही शहर में आकर अलग रहने की ज़िद न पकड़ी होती दद्दा भी खुश रहते और तब ये भी न आती। अब दूसरा कोई दिखायी नहीं देता, अगर उनकी लेना है तो ! नौकरी की अपेक्षा अधिक फायदा रहेगा।'

'तुम्हारे सिवा दूसरा है कौन सब जायदाद अपने नाम कर देने को क्यों नहीं करते ? कहीं अचानक दौरा पड़ गया तो . . . ?'

'मेरी एक बहिन भी है, उसे क्यों जाती है ?'

'वे तो विदेश में हैं, और उन्हें बात की कमी है जो इस ज़रा से नीयत डालेंगी ? लेकिन दद्दा तो वहां भी जाने की बात कर रहे थे, जाने क्या है उनके पेट में ?'

'तू तो अपने हाथ के आटे से पेट को शांत रख, जो होगा वह सब पच जायेगा।'

'ठीक है, लेकिन चक्की तो मैं नहीं पीसूंगी। रधिया के मन में कोई नहीं पचती; कल सोसायटी में बात तो मुझे शर्म से मुंह छिपाना पड़ेगा; दद्दा से साफ-साफ कह दो कि शीला नहीं पीसेगी !'

'मैं नहीं कह सकता। कभी सामने बोलते सुना है मुझे ? तू कह हो तो कह दे।'

'मैं किस मुंह से कहूं ? गांव से

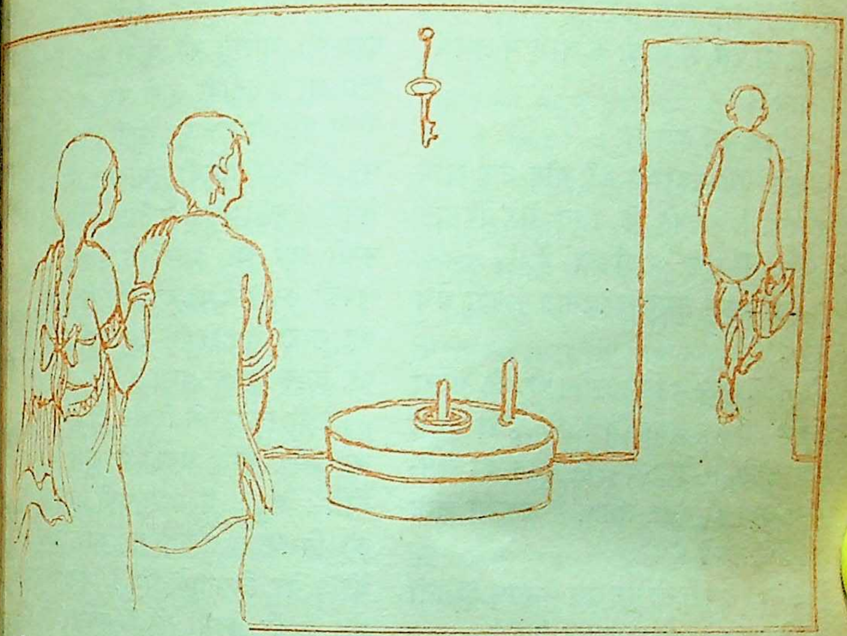

बुलाने का पत्र तो तुमने मेरे हाथ से लिखवाया था, उसमें अलग रहने के लिए माफी मंगवायी थी कि आप यहां आ जाइये, अब हम आपकी हर बात मानेंगे, हमारी जो भूल हुई है उसे माफ कर दें। फिर मैं ही उन्हें लेने गांव गयी थी। गांव के लोग मेरी तारीफ कर रहे थे कि कितनी अच्छी है उमा की बहू! बुढ़ापे में बुड्ढे ससुर का सहारा बन गयी... अब मैं कैसे इस भावना के विपरीत जाऊं? . . . और जब से दद्दा आये हैं मेरी हर बात का खयाल रखते हैं, मैं भी कभी उनके सामने ऊंचे स्वर में नहीं बोली, अब कैसे बोलूं? जिस दिन ये चक्की-पुराण शुरू हुआ था उसी दिन कह दिया होता तो अच्छा था, अब कहां उनसे झगड़ने बैठूं? तुमसे कुछ बन सकता हो तो करो।'

क्षण भर सोचने के बाद उमाकांत एकदम उछल पड़ा : 'बस ठीक है, यही बराबर रहेगा।'

'लेकिन क्या? . . .'

'यही कि रधिया कद-काठी में ठीक तेरी जैसी है, उसे अपने साड़ी-ब्लाउज्ज पहना दे; बालों को भी जरा अपने ढंग का बना दे; दो-चार दिन तू उसके साथ पीसने बैठ; फिर सीखकर एक-दो दिन खुद पीस और उसके बाद रधिया को रोज तड़के पीसने बैठा दिया कर। दद्दा कहां तेरा चेहरा देखने आते हैं? उन्हें तो इस बात का संतोष होगा कि बहू पीसने भी

लगी है ! बस, तेरा बेड़ा पार . . . और रधिया तो पैसे या साड़ी के लोभ में ललचा ही जायेगी ।'

'लेकिन कब तक ?'

'अरे, बस मंडराती हुई मौत टल जाय तब तक ! चक्की के लिए मेरे दिमाग़ में और भी एक 'आइडिया' है ।'

'देख लिया तुम्हारा दिमाग़ । क्या बेच दोगे ?'

'नहीं, अपने को जो रंगीन टी. वी. लाना है वह उस पर जमा देंगे ! मैंने देखा भी है एक जगह ! पुरातन और नूतन का समन्वय बड़ा ही सुंदर लगता है—कहकर लोग तारीफ करते हैं !'

'लेकिन दद्दा तो यमराज के साथ दुश्मनी करके आये हों ऐसा लगता है ।'

'अरी, कुछ दिन तो ठहर जा ! . . . अपने स्वार्थ के लिए हम उन्हें ज़हर तो नहीं दे देंगे ?'

'मौत तो चाहते ही हैं ।'

'यह तो जमाने की रफ्तार है । वृद्धों के लिये वृद्धाश्रम यों ही थोड़े खुले हैं ?'

घंटी बजी और बात अटक गयी । दद्दा मंदिर से आ गये थे । शाम को घर की चक्की के आटे का जो किसमिस-मेवा-इलायची युक्त हलुवा बना था वह तबियत से खाया ।

०००

बहू अब पीसना भी सीख गयी थी । बड़े भिनसारे चक्की के गले में मुट्ठी-मुट्ठी भर ओरे जाने वाले अनाज के साथ घम्मर-घम्मर घूमती चक्की की लय में दद्दा की आत्मा को मानो स्वर्ग दिखा देता था । उनींदी आंखें भोर का उजास पीतीं पल-दो पल मुंद जातीं और गांव का घर, पीसना पीसती उमाकांत की मां का चेहरा उनकी आंखों में तैरने लगता । कभी-कभी खुद भी पत्नी के सामने बैठकर चक्की का दंड पकड़ते और पिसवाते... वह सारा वातावरण जैसे उनके स्मृति पट पर महक उठता था ।

उसी स्मरण से विह्वल हो एक दिन वे उठे और सीधे चक्की के पास पहुंचकर बोले : 'बहू ! मैं कभी-कभी उमा की मां को पिसवाने लगता था, आज तुम्हें मैं थोड़ी देर पिसवाने लगूं ?' तुम बिलकुल उठ जाओ, इतना तो मैं अकेला ही पीस दूंगा । आदत न होने से तुम्हें अड़चन तो लगती होगी !'

उनका हाथ दंड पर पहुंचे उससे पहले ही रधिया जड़वत्—अवाक् हो गयी । झटके से खड़े होकर बोले : 'रधिया ! .... ओ मेरी मां ! . . . एक अक्षर भी मत बोलना इस बारे में ! शाम को मुझे मंदिर में जरूर मिलना । रोटी भी रोज तू ही बनाती है न ?'

स्वीकृति में रधिया की आंखें ढल गयीं । उमाकांत का शयन कक्ष अभी भी बंद था । दद्दा की दतौन का कूचा जल्दी-जल्दी टूट रहा था और नल आने में अभी देर थी ।

उस शाम को दद्दा देवालय से बड़ी देर में लौटे । 'आज तो एकाशन है' कहकर अर्थ

ब्यालू करने से भी इंकार कर दिया। सवेरे नौ बजे करीब तैयार होकर बाहर निकले : 'कुछ दिनों के लिए तुम्हारी बुआ के घर जा रहा हूं'—कहकर देहरी लांघते हुए वे फिर लौटे और किसी आशंका के भय से अनमनी बड़ी बहू के सिर पर हाथ रखकर बोले :

'सिर्फ तुमसे पिसवाने के लिए चक्की नहीं लाया था, बेटी! मुझे तो उसमें उमा की मां के प्यार का एहसास होता है। तुम लोगों का अपनत्व भी देखना चाहता था।'

और वे चल दिये। उमाकांत के हृदय में भी पिता के प्रति कहां इतना प्यार या अपनत्व था कि उनका हाथ पकड़कर रोकता। किसी अनहोनी के डर से शीला का हृदय अब भी कांप रहा था।

उमाकांत नौकरी पर जाने की तैयारी कर रहा था, उसी समय रधिया दौड़ती आयी : 'दद्दा यह चिट्ठी दे गये हैं!' वह पढ़ने लगा:

'बहुत दिन से बेटी बुलाती थी, इसलिए जा रहा हूं। इच्छा तो यही थी कि यह शरीर वतन की खाक में मिलता, लेकिन भाग्य में वह नहीं है। सुना है कि विदेशों में वृद्धाश्रम अच्छे होते हैं, भाग्य में लिखा होगा तो वह लाभ भी लूंगा। घर में जवान कमाऊ बेटा हो और बाप को वृद्धाश्रम में रहना पड़े उसमें तेरी जवानी के साथ मेरा बुढ़ापा भी लज्जित होता। बाप की रोटियां भारी पड़ती सुनी थीं, लेकिन मौत की मुराद मांगते बहू-बेटे पहली बार सुन रहा हूं। जहां मृत्यु की कामना की जा रही हो वहां स्वर्ण महल होने पर भी नहीं रहना चाहिये, बेटा! कलजुग मनुष्य के मन में होता है, लेकिन रधिया के मन में आज भी जीता-जागता सतयुग है। तेरी मां की अंतिम स्मृति रूप चक्की रधिया को देता हूं। तेरे टी. वी. की अपेक्षा उसकी झोंपड़ी में वह अधिक शोभा देगी। पच्चीस हजार उसके नाम किये जाता हूं; बड़ी ममता से मक्के की रोटियां खिलायी हैं उसने। बाकी बचा अनाथाश्रम को दिये जा रहा हूं। फ्लैट तुम्हारे नाम कर दिया है। लॉकर की चाबी भगवान की तस्वीर के नीचे लटक रही है। बैंक में दस्तखत कर दिये हैं। गहने पहनकर शीला सुखी हो!'

न जाने क्यों शीला का कंठ भर आया। वह दौड़ती दद्दा के कमरे में पहुंची। ऊपर भगवान श्रीकृष्ण लीला कर रहे थे, नीचे लॉकर की चाबी लटक रही थी और उसके भी नीचे तिपाई पर भगवान को चढ़ायी हो इस तरह रधिया की रोटी खाने वाले की राह देख रही थी!

—चंद्रनिलय, सेंट जेवियर्स रोड, सूर्यनगर
सोसायटी, आनंद-३८८००१, गुजरात

□

पति-पत्नी दोनों हिंदी के अध्यापक थे। एक दिन तू-तू मैं-मैं हो गयी। पति ने कहा—'तुम्हारी आंखों पर परदा पड़ गया है। . . .'

'और तुम्हारी अकल पर पत्थर!' तुरंत पत्नी ने जवाब दिया। **—उषा टंडन**

□

'स्वामी शरणम् अय्यप्पा'

□ सुल

जिस प्रकार उत्तर भारत में वैष्णो देवी का मंदिर प्रसिद्ध है, उसी प्रकार दक्षिणभारत में 'स्वामी अय्यप्पन' का मंदिर प्रसिद्ध है। सब उत्तर भारतवासी जैसे वैष्णो देवी के नाम से परिचित हैं, उसी प्रकार दक्षिण भारतवासी स्वामी अय्यप्पन के नाम से परिचित हैं। दक्षिण भारत में यह ही एक ऐसा मंदिर है, जहां युवा-स्त्रियों का प्रवेश निषिद्ध है। मासिक धर्म प्रगट होने से पूर्व और समाप्ति के पश्चात ही कन्यायें और महिलायें मंदिर में प्रवेश कर सकती हैं। इसीलिए दर्शन करनेवाली महिलाओं की संख्या कम है।

स्वामी अय्यप्पन का यह प्रसिद्ध मंदिर केरल में स्थित है। अरनाकुलम और कोयलन स्टेशनों के मध्य 'सबरी' नामक पहाड़ी घाटी पर यह मंदिर बना हुआ है। इस मंदिर के निर्माण के पीछे एक कहानी जुड़ी हुई है जो इस प्रकार है—केरल में पंचालम नामक राज्य में राजशेखर नाम का राजा राज्य करता था। उसकी कोई संतान नहीं थी। राजा और रानी ने शिव की उपासना की। एक दिन राजा को जंगल में एक अत्यंत ही सुंदर बालक पड़ा हुआ मिला। आकाश से आकाशवाणी हुई कि राजा बच्चे को घर ले जा बच्चे के गले में सोने की घंटी पड़ी हुई इसीलिए राजा ने उसका नाम 'म नाथन' रखा। यह बच्चा मोहिनी विष्णु और शिव का पुत्र था जो कि म नामक राक्षसी को समाप्त करने के रचा गया था। महिषि को वरदान प्र था कि उसे विष्णु और शिव भी नहीं सकते हैं। पर उसका अंत अनिवार्य इसीलिए उस अद्भुत बच्चे का जन्म हु जो कि बाद में 'अय्यप्पन' के नाम से प्र हुआ। १२ वर्ष की आयु में ही म नाथन ने 'महिषि' का वध कर दि तभी राजा को पता चला कि वह भग का अवतार है। राजा ने उनके मंदिर बनाने की अनुमति मांगी। म नाथन ने एक तीर छोड़ा। तीर जहां वहीं मंदिर बनना निश्चित हुआ। 'सबरी' नामक पहाड़ी पर जाकर गि उसके बाद भगवान अदृश्य हो गये। राजा ने पाया कि पहाड़ी पर चढ़ना ही कठिन है। उस पर मंदिर कैसे बने राजा की चिंता को स्वयं भगवान ने किया। स्वर्ग से विश्वकर्मा स्वयं मंदिर निर्माण करने आये। देखते ही देखते मं

बन गया। अब मूर्ति स्थापना की समस्या थी। उस समस्या को हल करने आकाश से परसुराम आये। परसुराम ने स्वयं उस मूर्ति को मकर संक्रांति के पवित्र दिन मंदिर में स्थापित किया। मानिक नाथन की यही मूर्ति बाद में 'स्वामी अय्यप्पन' के नाम से प्रसिद्ध हुई। उसी मूर्ति का दर्शन करने प्रतिवर्ष लाखों भक्तगण आते हैं।

साल में दो बार मंदिर दर्शन के लिए खुलता है–एक बार दिसंबर और जनवरी में और दूसरी बार अप्रैल में। दर्शनाभिलाषी पुरुषों को मंदिर जाने से पूर्व ४१ दिन का व्रत लेना पड़ता है। जिससे वे मानसिक शारीरिक रूप से मंदिर की कठिन यात्रा के लिए तैयार हो जायें।

नवंबर और फरवरी के महीने शुरू होते ही भक्तगण भारी संख्या में नजर आने शुरू हो जाते हैं। उन भक्तगणों की विशेष पहचान है। वे काले और भगवे रंग के वस्त्र पहनते हैं। पूरा दक्षिण भारत ही उन दो रंगों में रंग जाता है। मार्ग में चलते जनसमूह में हर दसवां व्यक्ति उन रंगों को पहने नजर आता है। काले या भगवे रंग की वेष्टि पहने, माथे पर चंदन और कुमकुम का तिलक लगाये, गले में तुलसी माला पहने और नंगे पांवों घूमते पुरुष सभी वर्गों से होते हैं। गरीब और अमीर, पढ़ा लिखा और अनपढ़, सेठ और मजदूर, जवान और बूढ़ा सभी ४१ दिन का व्रत लिये नजर आते हैं। इस व्रत में कुछ बातें निषिद्ध हैं जैसे–बिस्तर पर सोना, स्त्री से संपर्क, सिगरेट, शराब और मांस का खाना, दाढ़ी बनाना, रात को भर पेट भोजन खाना आदि।

१९८८

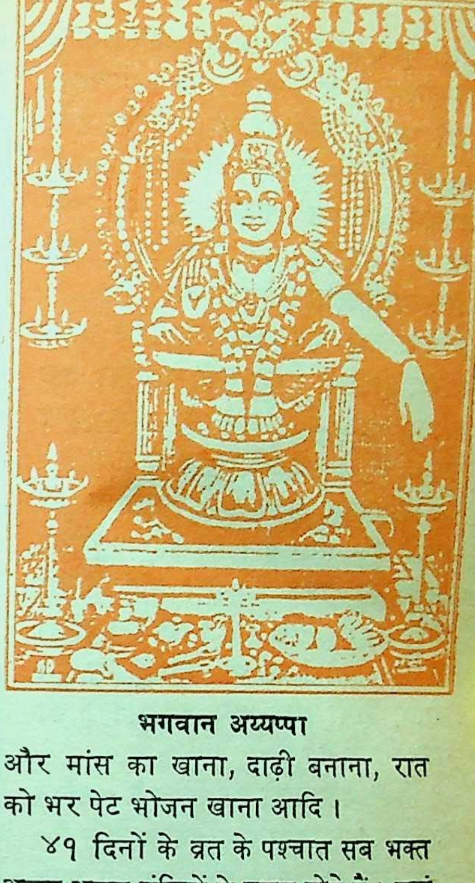

भगवान अय्यप्पा

४१ दिनों के व्रत के पश्चात सब भक्त अलग-अलग मंदिरों से एकत्र होते हैं। वहां पूजा-अर्चना के बाद अपने-अपने सिरों पर दो गठरियां रखकर यात्रा आरंभ करते हैं। इन गठरियों में से एक गठरी में खाने-पीने का सामान और दूसरी गठरी में पूजा की सामग्री होती है। पूजा की सामग्री में तीन नारियल होते हैं। एक नारियल में शुद्ध घी भरा जाता है, जिससे स्वामी की अर्चना होती है। भक्त जोर से 'स्वामी शरणम अय्यप्पन' कहते हुए यात्रा शुरू करते हैं।

स्टेशनों और बस अड्डों पर भी देखन

वाला दृश्य होता है। सैकड़ों और हजारों की संख्या में काले और भगवे वस्त्र पहने, दाढ़ी बढ़ाये, सिर पर दो गठरियां रखे, नंगे पांव भक्त 'शरणम अय्यप्पा, स्वामी शरणम अय्यप्पा' कहते हुए प्लेटफार्मों पर जमा होते हैं। इन दिनों स्पेशल बसें और रेलगाड़ियां चलायी जाती हैं।

पंबा नदी तक पहुंचकर पैदल यात्रा आरंभ होती है। इस नदी से मंदिर तक रास्ता आठ मील लंबा है। एक अन्य रास्ता भी है, जो कि ४५ मील लंबा है। पर अधिकतर भक्त छोटे रास्ते से ही चढ़ाई शुरू करते हैं। यह पहाड़ी रास्ता अत्यंत ही दुरूह है। पूरा मार्ग जंगली झाड़ियों और पत्थरों से घिरा है। जंगल में भी जानवरों का भय बना रहता है। चीता, हाथी और सांप कई भक्तों की जान भी ले लेते हैं।

मंदिर एक घाटी पर स्थित है। मंदिर के बाहर एक विशाल बरगद का वृक्ष है। प्रथम बार आने वाले हर भक्त को अपने नाखून द्वारा वहां निशान बनना होता है। फिर मंदिर में प्रवेश होता है। मंदिर में अठारह सीढ़ियां है। प्रथम बार आने वाला भक्त प्रथम सीढ़ी पर एक नारियल तोड़ता है, दूसरी बार आने वाला दूसरी सीढ़ी पर और तीसरी बार आने वाला तीसरी सीढ़ी पर—इसी प्रकार क्रम चलता रहता है। फिर मुख्य मंदिर में स्वामी की अर्चना घी से भरे नारियल के द्वारा होती है। प्रसाद में भी घी ही मिलता है। दर्शन के पश्चात स्वामी की ओर पीठ करके उतरा जाता है। उल्टे पांव सीढ़ियों से जाता है। इस बार भी ऊपर से प्र द्वितीय और तृतीय सीढ़ी पर नारि तोड़ने का क्रम चलता है। यह सीढ़ि 'पंच धातु' से बनायी गयी हैं।

लाखों की संख्या में भक्तगण क बांधकर खड़े रहते हैं। यह कतार से पांच किलोमीटर तक लंबी होती है सब भक्त केवल सूती लुंगी पहने होते हैं भगवान के समक्ष सभी समान। ऊंच-नी और अमीर-गरीब का भेदभाव होता। किसी को भी स्पेशल दर्शन कराये जाते। सब एक ही कतार में होकर स्वामी दर्शन पाते हैं। ऐसा जाता है कि मकर संक्रांति के दिन भग स्वयं ज्योति बनकर यहां आते हैं मंदिर में प्रकाश करते हैं।

आजकल 'सबरी मलै' जाने वालों संख्या बढ़ती ही जा रही है। पर व्रत पा करने वालों की संख्या घटती जा रही है व्रत के केवल एक ही नियम का पा सब करते हैं। शारीरिक वस्त्र या रावे से तो सभी साधु लगते हैं पर नियमों का पालन नहीं कर पाते। रंग की वेष्टि पहने पुरुष बीड़ी-सि और शराब पीते नजर आते हैं। दक्षि आजकल 'सबरी मलै' जाने का फैशन हो गया है।

—नं. ६५ डा. सी. पी. रामस्वामी रो
चौथी स्ट्रीट, अभिरामापुरम्, मद्रास-

□

महादेवीजी की ब्रजभाषा कविता

☐ डॉ. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक'

पं. सुमित्रानन्दन पन्त को छोड़कर छायावाद के प्रायः सभी कवियों का ब्रजभाषा से लगाव था। प्रसादजी ने प्रारंभ में ब्रजभाषा में समस्यापूर्तियां की थीं। निरालाजी को ब्रजभाषा के कवियों के सैंकड़ों छंद कंठस्थ थे। श्रीमती महादेवी वर्मा ने भी ब्रजभाषा में अनेक सवैये लिखे थे। सवैया उनका प्रिय छंद था। 'रश्मि' संग्रह में 'अलि से' और 'पपीहे से' शीर्षक कवितायें सवैया छंद में हैं, किंतु वे खड़ी बोली में हैं।

पद्मविभूषण महादेवी वर्मा

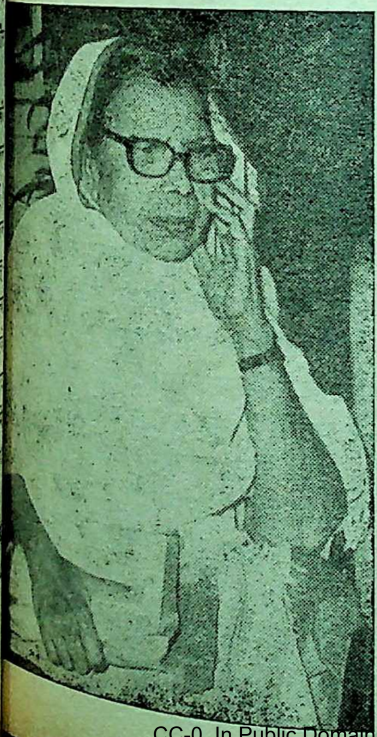

मैं यही समझता था कि महादेवीजी ने ब्रजभाषा में कोई कविता नहीं लिखी है। एक बार लखनऊ में उनसे भेंट हुई तो ब्रजभाषा कविता की चर्चा चली। बात करते-करते उन्होंने स्वयं कहा कि बहुत पहले मैंने भी ब्रजभाषा में छंद लिखे थे। मेरे आग्रह पर उन्होंने बहुत याद करके निम्नलिखित छंद सुनाया। मैंने उसे लिखना चाहा तो पहले तो उन्होंने टालना चाहा, परंतु बाद में हंसीं और कहा–'तुम चाहते हो तो लिख लो, पर कहीं छापना नहीं। उन्होंने कहा कि ब्रजभाषा कविता में विषय-वस्तु बदलने की आवश्यकता है। अधिकांश कवि पिष्टपेषण कर रहे हैं। उनका छंद इस प्रकार है :

फूल से

बांधे मयूखन डोरिन पै,
किसलै के हिंडोरन मैं चढ़ि झूलियो।

सीतल-मंद बयार तुम्हैं
दुलराइहै, अंक लगाय कबूलियो।

भौंर के राग पै रीझियो, औ
तितलीन के नर्तन पै नित भूलियो।

फूल तुम्हैं तबहीं कहि हैं,
जब कांटन मैं धंसि कै हंसि फूलियो।

–जयनारायण डिग्री कॉलेज, लखनऊ

☐

शीशे की दीवार

□ ज़ेबा

अपनी इकलौती बच्ची मरियम की बेजान लाश मेरे सामने पड़ी थी। मेरे हाथ-पांव ठंडे हो रहे थे और मैं रो-रोकर बेहाल हो चुकी थी। पूरा हाल शोक प्रकट करने के लिए आने वालों से भर चुका था। हर व्यक्ति की आंखों में, चेहरे पर और होंठों पर एक ही सवाल था—यह एक रात में क्या हो गया?

अभी कल ही की तो बात थी। मरियम की चौदहवीं सालगिरह थी। यह कमरा बल्बों से सजा हुआ था और यही उदास चेहरों वाले लोग तड़क-भड़क लिबास पहने ऊंचे-ऊंचे कहकहे लगा रहे थे। आज यही लोग मुझसे सवाल कर रहे हैं। एक ऐसा सवाल, जिसका जवाब देना मेरे बस में नहीं। मैं उन्हें कैसे बताऊं कि अपनी मासूम और प्यारी बच्ची की कातिला मैं खुद हूं।

अहमद दोस्तों की भीड़ में घिरे, दिल थामे बैठे थे।

अचानक मुझे हृदयविदारक चीखों की आवाज़ सुनायी दी। मैंने सिर उठाकर देखा, तो फरह अंदर दाखिल हो रही थी। फरह, जो मेरी सबसे प्यारी सहेली और हमदर्द थी, और मरियम की होने वाली सास भी। हमने मरियम के के बाद ही फरह के बेटे सलीम से रिश्ता कर दिया था।

'ज़ेब... अभी तो सारी दुनिया मत है, ज़ेब... कयामत सिर्फ तेरे ही पर क्यों आयी? मरियम क्यों चली ज़ेब! अभी कल ही तो उसने मेरे आने का वायदा किया था। वह ऐसी न थी, ज़ेब, कि मुझसे किया हुआ भी भुला देती!' फरह तड़प रही रो रही थी। मुझसे पूछ रही थी कि क्यों मर गयी?

कई बार सच बोलना कितना कठिन जाता है। मैं अपनी इतनी प्रिय सहेली भी सच न बता सकी और सजल आंखों अपनी मरियम को देखती रही... चेहरे पर अजीब-सी मुसकराहट थी, मेरा मज़ाक उड़ा रही हो, जैसे मुझसे रही हो कि मम्मा, बताइये न इन कि मैं क्यों मर गयी? कैसे मर गयी मैं घुटनों में मुंह छुपा कर रो दी।

पूरा हाल दबी-दबी सिसकियों से रहा था। अभी मुझे शहाब का इंतज़ार अभी तो एक और कयामत आने

थी। शहाब तो जानता था कि मरियम क्या चाहती थी? वह उससे कोई बात भी नहीं छुपाती थी। एक-एक बात उसे बता देती थी। मैं जानती थी कि शहाब मेरा गरेबान पकड़ेगा, चीख-चीखकर मुझे हत्यारिन ठहरायेगा। उसने मुझसे कहा था, 'ज़ेब आपा! तुम छोड़ क्यों नहीं देतीं यह सब कुछ! मरियम तुम्हारे प्यार को तरसती है, ज़ेब आपा! तुम्हें किस चीज़ की कमी है। हर शहर में तुम्हारी कोठियां हैं। हज़ारों एकड़ ज़मीन सोना उगल रही है। इतना बड़ा अस्पताल है। हर साल तुम नये माडल की कार खरीदती हो। फिर क्या कमी है? ...और तुम यह सब कुछ किसके लिए करती हो... मरियम के लिए? उसे कुछ नहीं चाहिये ज़ेब आपा! सिर्फ तुम्हारा प्यार चाहती है वह... तुम्हारा नज़दीक होना उसके लिए सबसे बड़ी दौलत है। वह तड़पती है मां-बाप के प्यार के लिए! तुम्हें दौलत की इतनी हवस क्यों है आपा?'

'शहाब, नहीं बेटा, मुझे दौलत की हवस नहीं है। मेरे पास अल्लाह का दिया सब कुछ है, मगर मेरे भाई, अल्लाह ने मेरे हाथ में ऐसी शफा रख दी है कि लोग मेरे पास आकर रोते हैं। अल्लाह और रसूल के वास्ते देते हैं। मुझे और मेरी औलाद को दुआएं देते हैं, तो मैं मजबूर हो जाती हूं। शहाब! क्या करूं? वैसे अब मैं पूरी कोशिश करूंगी कि मरियम को बहुत-सा वक्त दे सकूं।' मैंने ठंडी सांस लेकर कहा।

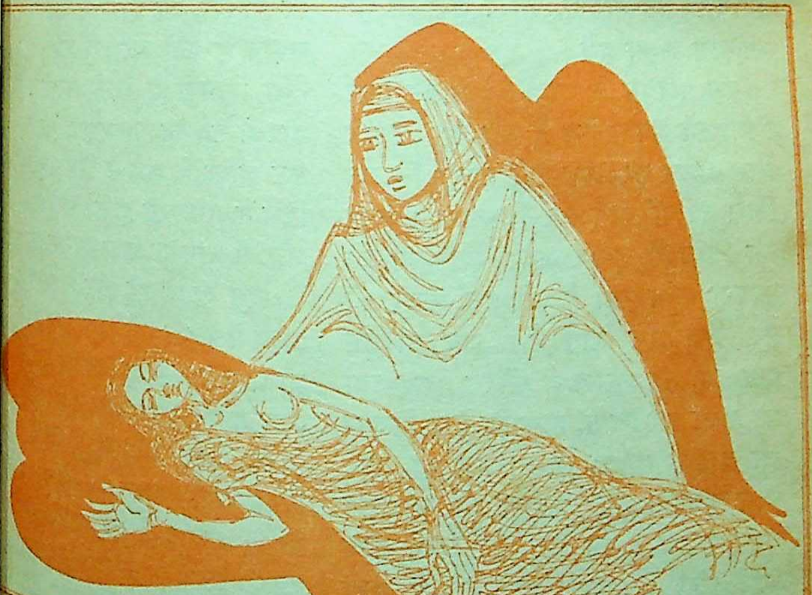

मैं सचमुच [illegible] कर लेती थी कि अब अहमद से कहूंगी कि वह अकेले हर केस 'डील' किया करें। यह सच है कि मैं मुल्क की सबसे मशहूर लेडी-सर्जन थी और अहमद भी माने हुए सर्जन थे। फिर सबसे बड़ी बात यह है कि हम हफ्ते में तीन दिन मुफ्त आपरेशन करते थे। मरीज़ों को मुफ्त दवाएं देकर अपनी देखरेख में रखते थे। हमारा यह अमल बहुत से गरीब लोगों के लिए खुशी की खबर थी। लोग हमसे आपरेशन कराने से पहले ही मरीज़ की सलामती पर ईमान ले आते थे। यह खुदा का अहसान था कि मुल्क और मुल्क से बाहर हमें अच्छी शोहरत हासिल थी, मगर यही शोहरत हम पर टूटने वाली कयामत की वजह बन जायेगी, इसका ज़रा-सा भी अहसास न था हमें।

हम पश्चिम के अनुकरण में हर ऐसी क्रिया को अपना लेते हैं, जो खुद हमारे लिए बेहतर हो। यह नहीं सोचते कि इस क्रिया का परिणाम क्या निकलेगा। अगर इस क्रिया से हमारे अपने व्यक्तित्व को फायदा पहुंच रहा है, तो हम बाहर की हर चीज़ भूल जाते हैं। जब मरियम पैदा हुई, तो अहमद ने फौरन एक आया का प्रबंध कर लिया, हालांकि मेरा कितना जी चाहता था कि मैं मरियम को अपने पास सुलाऊं, मगर अहमद को यह बात पसंद न थी। वह मेरे और अपने बीच कोई चीज़ बाधक न होने देते थे, यहां तक कि औलाद को भी बर्दाश्त न कर सके। मैं अक्सर उनसे कहती मद, उसे मां की आगोश की गर्मी मैं चाहती हूं कि उसे अपने पास

'ज़ेब! जाहिलों वाली बात बच्चे को हमेशा अलग सोना बिलकुल अलग कमरे में। इस उसमें आत्मश्विास पैदा होगा।' लहजे में जवाब देते और मैं दिल रह जाती।

मरियम दो माह की हुई, तो अस्पताल जाना शुरू कर दिया से शाम तक हम व्यस्त रहे। घर तो थकन से हमारा जोड़-जोड़ होता। फिर भी हम कुछ देर साथ बिता ही लेते। वह छोटी-सी, सी गुड़िया, जो आया से अपनी ज़बान में बातें कर रही होती, नवी निगाहों से देखने लगती। गोद में लेने को हाथ बढ़ाती, तो कर आया के कंधे से चिमट जाती दिल में चुभन-सी होती। आंखें और मैं भागकर अपन कमरे में घुस

दिन बीतते रहे और मरियम हाथों में पलती रही। एक रोज़ हमें जाना पड़ा। पंद्रह दिन का टूर और अहमद आया और नौकरों को निर्देश देकर चले गये। शहाब दिनों आर्मी ज्वाइन कर ली थी। वह एबटाबाद में था, वरना वह वक्त मरियम के साथ ही लगा रहता शहाब मुझसे उम्र में बहुत

मी के मरने के बाद उसे मैंने ही पाला और वह मुझे बेटों की तरह प्यारा । बिलकुल उसी तरह मरियम तो की जान थी । सुबह सवेरे उठकर वह रियम के कमरे में चला जाता था । रियम तीन बरस की हो चुकी थी । हाब ही ने उसे मोंटेसरी में दाखिल रा दिया था । मैं और अहमद सुबह ते, तो वह स्कूल जा चुकी होती और हर को आते, तो उसे सोता हुआ वते । शाम को या तो हमें कहीं जाना ता या फिर कोई आ जाता । यों दिन र में कुछ ही लम्हे मिलते, जो मैं मरियम के करीब गुज़ारती थी और इस दौरान मरियम यों सिमट जाती, जैसे मैं कोई र हूं । मेरा दिल दुख जाता, मगर यह हसास कुछ देर तक रहता । फिर मैं नी विभिन्न व्यस्तताओं में खो जाती ।

हां, तो मैं बता रही थी कि मुझे और अहमद को कनाडा जाना पड़ा । पंद्रह दिन बाद मैं घर वापस आयी, तो हाल में टके गुब्बारे और रंगीन छोटे-छोटे फानूस खकर दिल धक से रह गया । मुझे याद आया कि आज तो मरियम की सालगिरह थी । अभी मैं उसके कमरे की तरफ बढ़ी ही थी कि शहाब मेरे करीब आ गया, 'आ गयीं आप ! मगर शायद थकी हुई बहुत होंगी । अपने कमरे में जाकर बेड पर गिर जायेंगी और फिर बेखबर हो जायेंगी । आपके पास तो बेटी को 'हैपी बर्थ-डे' कहने का वक्त भी नहीं होगा ।'

शहाब की व्यंग्यपूर्ण बातचीत ने मुझे कंपा दिया, 'मैं . . . मैं सख्त शर्मिंदा हूं ! मुझे बिलकुल याद नहीं था, वरना मैं कल ही . . .'

'बस, जेब आपा, कुछ और न कहियेगा !' उसने मेरी बात काट दी, 'यही बहुत है कि आपको याद नहीं रहा । अपनी इकलौती बच्ची की सालगिरह का दिन भी याद नहीं रहा आपको । मालूम है, मरियम आज कितना रोयी है ? वह छोटी-सी बच्ची, जो आपसे बड़े तकल्लुफ से मिलती है, जैसे किसी घर आये मेहमान से मिल रही हो । आज सारा दिन आपको और अहमद भाई को याद करती रही है । हर गाड़ी की आवाज़ पर बाहर भागती थी कि मम्मी आ गयी और अब . . . इस वक्त बुखार में फुंक रही है । आप तो मुल्क की बेहतरीन डाक्टर हैं । गरीबों का मुफ्त इलाज करती हैं । आपके हाथ में तो बड़ी शफा है । मैं भी लोगों की तरह आपको अल्लाह और रसूल का वास्ता देता हूं कि मरियम का इलाज कर दें । उसे ठीक कर दें । उसकी वंचनाएं दूर कर दें, आप !' शहाब यह कहते-कहते रो पड़ा ।

मैं रोने लगी और भागती हुई मरियम के कमरे में दाखिल हुई, 'मरियम ! . . . . मेरी बच्ची . . . मेरी जान . . क्या हो गया तुझे ?' मैंने उसे गोद में भर लिया ।

मरियम ने धीरे से आंखें खोल दीं । उसकी सुलगती आंखों में क्षण भर को खुशी भर गयी । उसके मासूम चेहरे पर मुस-

कराहट बिखर गयी, मगर दूसरे ही क्षण उसने आंखें मूंद लीं।

उस रात बहुत थकन के बावजूद मैं रात गये तक मरियम के पास लेटी रही। उस के माथे पर ठंडी पट्टियां रखीं। उसे हवा दी। कुछ देर बाद वह बेखबर सो गयी। आया और शहाब को मैंने भेज दिया था कि मैं मरियम के पास हूं। रात को तीन बजे अहमद कमरे में आये और बोले, 'कैसी है अब मरियम?'

'अब तो बेहतर है। सो रही है!'

'तुम भी अपने कमरे में जाकर आराम करो। बहुत थकी हुई हो।' उन्होंने धीरे से मरियम के माथे को छूते हुए कहा।

'नहीं, अहमद! प्लीज़... मरियम अकेली है... मैंने आया को भी भेज दिया है। आप... आप आराम करें। मैं बिल्कुल ठीक हूं।'

'क्या फिजूल बातें करती हो। भई, वह अब ठीक है। सो रही है और ज़ाहिर है कि सुबह होने से पहले नहीं उठेगी। फिर सुबह तक तो आया आ ही जायेगी। चलो, उठो!' अहमद ने निर्णयात्मक लहजे में कहा।

मैं हौले से उठ गयी, ताकि मरियम की नींद खराब न हो। वहां से उठने को दिल नहीं चाह रहा था, मगर अहमद से बहस करना भी मेरे बस में नहीं था। मैं कमरे में चली आयी और बिस्तर पर लेटते ही बेखबर सो गयी।

सुबह अहमद ने मुझे उठाया, 'ज़ेब, अस्पताल से फोन आया है। डिलीव एक बहुत नाज़ुक केस है। तुम फौरन हो जाओ।'

मैं तेज़ी से उठकर बाथ-रूम की दौड़ी और जल्दी-जल्दी तैयार हो इस दौरान अहमद नाश्ता मंगवा चुके मैंने जल्दी से चाय पी और गाड़ी चाबी उठाकर तेज़ी के साथ कमरे निकल आयी। सामने ही शहाब मुझे घूर रहा था, 'बहुत जल्दी में हैं

'ओह! हां, शहाब, वह एक आया है... बहुत नाज़ुक केस है...'

'अपनी बच्ची की खैरियत नहीं आप?' उसके लहजे में गज़ब का और रोष था।

'मैं उसी को देखने जा रही हूं। वह बेखबर सो गयी, तो मैं अपने कमरे चली आयी थी।' मैंने झेंपकर कहा।

मरियम के कमरे में पहुंची, तो जाग रही थी। मुझे देखकर उसके चेहरे कोई प्रभाव न उभरा। मैं उसके करीब बैठी। उसकी आंखें सुर्ख और सूजी थीं। साफ लग रहा था कि वह देर रोती रही है। मैंने जल्दी-जल्दी दवा दी और उससे जल्दी आने का कह बाहर निकल आयी। मेरे दिमाग लगातार केस सवार था। बहुत देर चुकी थी और मैं दिल ही दिल में मांग रही थी कि खुदा करे, सब कुशल वरना मेरी साख को बहुत नुक पहुंचेगा।

मैं अस्पताल पहुंची, तो कुशलता ही थी, मगर केस सचमुच बहुत नाज़ुक था। वह केस 'डील' करते हुए मैं पसीने में नहा गयी। मैंने अपनी सारी मुहारत इस्तेमाल की और खुदा ने मुझे कामयाब कर दिया। तब मैंने खुदा का शुक्रिया अदा किया और एक दूसरी लेडी-डाक्टर को कुछ अन्य केसों के बारे में ज़रूरी निर्देश देकर घर चली आयी।

शहाब और मरियम दोनों रूठे-रूठे से थे। वह सारा दिन मैंने मरियम के साथ बिताया।

ऐसे ही झमेलों में वक्त बीतता रहा। मरियम अब मैट्रिक में आ गयी थी। जिन दिनों उसका रिस्ता सलीम से किया गया उन दिनों मैंने उसके चेहरे पर जगमगाहट देखी, वरना तो एक अजीब तरह की प्यास थी उसके चेहरे पर! वह अब समझदार हो गयी थी। मैंने उससे बहुत-सी बातें की थीं। उसे समझाने का प्रयत्न किया था कि हम उससे बेहद प्यार करते हैं, मगर हमारी व्यस्तताएं हमें इतना समय नहीं देतीं कि हम समय का लम्हा-लम्हा उसके साथ बिता सकें। मैं समझी थी कि बात उसकी समझ में आ गयी है। इसी-लिए अपने तौर पर आश्वस्त हो गयी थी। वक्त बीतने के साथ-साथ जो तजुर्बा मैंने हासिल कर लिया था, वह मेरी अति व्यस्तताओं को और बढ़ाने का कारण बना। मुझे तो यह भी मालूम न था कि मरियम किन लड़कियों में उठती-बैठती है, तालीम से उसे कितनी दिलचस्पी है और उसके मनोविनोद क्या हैं? संभव है कि उसके कुछ मनोविनोद हों, मगर मैंने उसे कभी कुछ करते नहीं देखा। अगर कभी मैं जल्दी आ जाती, तो उसे लान में अकेले बैठे हुए देखती। उसके हाथों में किताब होती और वह पेड़ पर चुहलें करने वाली चिड़ियों को बड़ी तन्मयता से देख रही होती। उस समय उसके चेहरे पर बेहद उदासी होती, जो क्षण भर को मुझे ठिठका देती, मगर दूसरे ही क्षण मैं सिर झटककर उसके करीब पहुंच जाती, 'हैलो, बेबी, हाऊ आर यू?'

वह धीरे से मुस्कराकर मुझे देखती और सिर हिला देती। फिर चिड़ियों को देखने लगती, जैसे वह अकेली हो।

मैं कुछ क्षण वहां खड़ी रहती। फिर चुपचाप चली आती। मेरे खयाल में चिड़ियों के घोंसले से सिर निकाले छोटे-छोटे बच्चों को देखते रहना ही मरियम का दिलचस्प मनोविनोद था। जब चिड़िया और चिड़ा अपनी चोंचों से दाना बच्चों के मुंह में डालते, तो उसका चेहरा अंधेरा हो जाता। उस क्षण उसे देखना मेरे बस से बाहर होता और मैं वापस आ जाती।

जिन दिनों शहाब आया होता, मरियम यों खुश रहती, जैसे उसे कारूं का खज़ाना मिल गया हो। वह शहाब के साथ खूब घूमती। शरारतें करती। ऐसे बातें करती कि मैं एक अनजानी-सी खुशी महसूस करती, मगर जैसे ही मैं उसके करीब जाती, वह

चुप हो जाती । बेहद तकल्लुफ से बात करती । मेरे लिए कुरसी बढ़ा देती और मैं उसे खिलखिलाता देखने की हसरत दिल में लिये लौट आती ।

सलीम से मंगनी होने के बाद मैंने महसूस किया कि वह मुझसे करीब होने की कोशिश कर रही है । मैं अगर पढ़ रही होती, तो वह चुपचाप करीब आकर खड़ी हो जाती । 'हूं, क्या बात है, बेटे ?' मैं बड़े प्यार से पूछती ।

'कुछ नहीं, मम्मा . . . बस ऐसे ही ।' वह धीरे से मुस्कराकर कहती ।

'आओ . . . बैठो . . . कुछ कहना चाहती हो क्या ?'

'नहीं . . . मम्मा . . आप काम करें . . . प्लीज़ . . . ' और वह तेज़ी के साथ कमरे से बाहर चली जाती ।

फिर एक अजीब बात हुई । मैं रात को पूर्ववत थकी हुई घर पहुंची । अपने कमरे में जाने से पहले मैंने मरियम के कमरे का दरवाज़ा खोला । वह बेखबर सो रही थी । मैंने यह सोचकर कि कहीं उसकी नींद न खराब हो जाये । उसे प्यार भी नहीं किया और दबे कदमों लौट आयी । चूंकि मैं थकी हुई बहुत ज्यादा थी, इसलिए लेटते ही सो गयी । अहमद मालूम नहीं, किस वक्त आकर सोये । मुझे कोई खबर ही नहीं हुई । रात के किसी पहर मुझे किसी ने छुआ, मैं हड़बड़ाकर उठ बैठी । मद्धिम रोशनी में मरियम का सुता हुआ चेहरा देखकर मैं घबरा गयी । वह बहुत भयभीत लग रही थी–'क्या हुआ... क्या बात है ?'

'मुझे डर लग रहा है, मम्मा !' यह कहते-कहते वह रो पड़ी । सरगोशियों से अहमद की भी आंख खुल गयी । 'क्या बात है, भई ! आधी रात को क्या मुसीबत आ गयी ?' वह अप्रियता से बड़बड़ाये ।

'मुझे डर लग रहा है, पापा ?' मरियम ने कांपते हुए लहजे में कहा ।

'फॉर गाड सेक, मरियम ! तुम अब जवान हो गयी हो . . . क्या बेवकूफी की बात करती हो ? जाओ, जाकर सो जाओ।' उन्होंने तेज़ लहजे में कहा और करवट लेकर लेट गये ।

इतना सुनते ही मरियम भागती हुई कमरे से निकल गयी । मैंने देखा, वह रो रही थी । अहमद के रवैये पर मुझे बहुत अफसोस हुआ और मैंने पहली बार उनकी मर्ज़ी के खिलाफ कदम उठाया और सीधे मरियम के कमरे में चली आयी । वह तकिये में मुंह छुपाये रो रही थी । मैंने जाकर उसे प्यार किया और अहमद के रवैये की माफी मांगी । फिर मैं सारी रात उसी के साथ रही । वह भी रात भर मुझसे चिमटी सोती रही ।

हमारे चौकीदार शहबाज़ की अचानक तबीयत खराब हो गयी और वह छुट्टी पर चला गया । दूसरी तरफ एक और मुसीबत खड़ी हो गयी । मरियम की आया मिसेज़ डेविड, जो अब काफी बूढ़ी हो चुकी थीं, और जिनका बेटा पांच बरस पहले

अमरीका चला गया था, वह उसका [illegible] लेकर आयीं, जिसमें उसने मिसेज़ डेविड को बुलवाया था। वह खुद भी बेटे के पास जाने की इच्छुक थीं। हमने उनकी इच्छानुसार उन्हें टिकट और कुछ रकम दे दी। उन दिनों शहाब भी एबटाबाद में था और मरियम की चौदहवीं सालगिरह होने वाली थी। मैंने शहाब को टेलीफोन किया कि वह चला आये, क्योंकि मैं अकेली हूं और सारे प्रबंध मैं अकेले नहीं कर सकती।

'ज़ेब आपा, कुछ थोड़ा-सा वक्त निकाल कर मरियम को दे दो। यकीन करो, उससे तुम्हारी दौलत और तुम्हारी शोहरत में कमी नहीं आयेगी।' उसने आदतन व्यंग्यपूर्ण बातचीत शुरू कर दी। मैंने फोन बंद कर दिया और यह फैसला कर लिया कि मैं अपनी सारी व्यस्तताओं को छोड़कर मरियम की सालगिरह के सारे इंतज़ाम अकेले संभालूंगी।

सारी समस्या चौकीदार की थी, जो अहमद ने हल कर दी। उन्होंने किसी के ज़रिये एक चौकीदार भी रख लिया। प्रकट में वह शरीफ आदमी लगता था और जिसके ज़रिये वह हम तक पहुंचा था, उनका कहना भी यही था, लेकिन किसी नौकरानी का प्रबंध न हो सका।

मरियम की सालगिरह अगले महीने थी। मैं जल्दी-जल्दी अपने अस्पताल का काम निपटा रही थी, ताकि उन दिनों कोई व्यस्तता न निकल आये। एमरजेंसी के लिए भी मैंने एक लेडी-डाक्टर का प्रबंध कर लिया। जिन दिनों मैं अपने काम निपटा रही थी, उन दिनों मैंने मरियम को बहुत व्यग्र पाया। वह अकसर मेरे कमरे में आ जाती। कुछ देर अकारण खड़ी रहती। फिर वापस चली जाती। यों लगता था, जैसे वह मुझसे कुछ कहना चाह रही हो। मैं कुछ इतनी व्यस्त थी कि उससे बात करने की फुरसत ही नहीं थी। मुझ पर एक अजीब-सा भूत सवार था। मरियम की सालगिरह मेरे दिल-दिमाग पर सवार हो ग़यी थी। मैं चाहती थी कि यह सालगिरह मैं इतनी धूम-धाम से मनाऊं कि मरियम सारे गिले-शिकवे भूल जाये।

सालगिरह से एक हफ्ते पहले ही से मैंने इंतज़ाम करने शुरू कर दिये। मैं जो कुछ भी करती, उसे बड़े गर्व से मरियम को बताती, ताकि वह देखे कि उसकी मां उसकी सालगिरह खुद अपने हाथों से कर रही है। वह मेरी तैयारियां देखती रही। कभी-कभी वह मुझे 'थैंक यू' कह देती और मैं उसका ललाट चूमकर फिर व्यस्त हो जाती।

आखिरकार वह दिन आ ही गया। मैंने चौकीदार के साथ मिलकर खुद हाल को सजाया। मरियम के लिए ढेरों तोहफे खरीदकर लायी। उसके लिए बेहतरीन लिबास सिलवाया और अपनी निगरानी में सारे इंतज़ाम करवाये। मैं समझती थी कि मरियम बहुत खुश होगी। अगर मरियम किसी वक्त हाल में आयी

भी, तो फौरन ही वापस चली गयी । एक बात मैंने खास तौर पर महसूस की कि वह चौकीदार को देखते ही वापस चली जाती थी । अब उसने लॉन में बैठना भी छोड़ दिया था और सारा-सारा दिन अपने कमरे का दरवाज़ा बंद किये पड़ी रहती थी । मैंने कई बार उससे कहा कि वह हमारा हाथ बटाये । मैं इस तरह यह वक्त उसके साथ बिताना चाहती थी । मेरे कहने पर वह आ भी जाती, मगर जैसे ही चौकीदार अंदर आता, वह कोई न कोई बहाना करके चली जाती । मेरे मस्तिष्क में यही खयाल आया कि वह नया आदमी है और मरियम उससे हिली-मिली नहीं है ।

सालगिरह पर मैंने मरियम को तैयार होने को कहा और खुद भी तैयार होने चली गयी । मैंने उस समारोह में बहुत से लोगों को बुलाया था । शहर के बहुत-से सम्मानित घराने आमंत्रित किये थे । सलीम और फरह बहुत पहले से आ गये थे, लेकिन शहाब नहीं आया था । मरियम ने बताया कि उन्हें छुट्टी नहीं मिली । इसलिए वह नहीं आ सकते । वह हर दृष्टि से ए शानदार समारोह था । पूरा हाल रंगीन बल्बों और रंगीन झिलमिलाते आंचलों से दहक-सा रहा था । मरियम गुलाबी कुरते-पाजामे में बेहद हसीन लग रही थी । काश ! इस मौके पर शहाब होता, तो देखता कि मैंने किस तरह सारे समारोह के इंतज़ाम संभाल रखे थे ।

समारोह खत्म हुआ, तो मैं थकन से चूर हो चुकी । तीव्र मानसिक तनाव मुझे निढाल कर दिया था । रात को पर लेटी, तो पूरा बदन दर्द से टूट था । 'अहमद, आज तो शायद मैं की वजह से सो भी नहीं सकूंगी।' मैंने मद से कहा ।

'मेरे खयाल में तुम भी 'ट्रंकोलाइज़ ले लो ।' अहमद ने मुझे सलाह दी । खुद तो गोलियां खाकर सोने के आदी थे

मुझे ऐसा लगा कि अगर मैंने गोलि न खायीं, तो शायद पलक भी न सकूं । सुबह मुझे अस्पताल भी जाना एक हफ्ते से मैंने अस्पताल से छुट्टी रखी थी । यही सोचकर मैंने तीन- गोलियां फांक लीं । गोलियां खाने के ही देर बाद मैं बेखबर सो गयी।

मैं सुबह उठी, तो दिन काफी चुका था । अहमद अभी तक बेखबर खर्राटे ले रहे थे । बाथ-रूम चली गयी बाथ-रूम से फारिग होकर मैं किचन जाकर चाय बनाने लगी । नौकर भी थक चुका था कि अभी तक नहीं था । मैं चाय का कप लिये मरियम कमरे में दाखिल हुई, तो कमरे में परदों की वजह से गहरा अंधेरा था । आगे बढ़कर खिड़की का परदा दिया । परदा सरकाकर जैसे ही मैं मेरे मुंह से चीख निकल गयी ।

मरियम बेतरतीबी से फर्श पर थी । उसके कपड़े जगह-जगह से फटे थे । उसके चेहरे पर तीव्र यातना के

थे और जो कयामत उस पर गुज़री थी, वह उसके मासूम चेहरे से स्पष्ट थी।

मैंने लपककर उसे सीने से लगा लिया और फूट-फूटकर रोने लगी। उसमें ज़िंदगी के चिन्ह तो न जाने कब के खत्म हो चुके थे। आज मुझे अहसास हुआ कि मरियम जवान हो गयी थी और मैं मरियम की मां हूं और जिसकी मां उसकी हिफ़ाज़त न कर सके, उसकी भला गैर लोग क्या हिफ़ाज़त करेंगे। मैं मरियम को सीने से लगाये अपनी ममता के दुख को आंसुओं में समेट रही थी कि उसकी मुट्ठी में दबा हुआ कागज़ नज़र आ गया। मैंने जल्दी से वह खत उसकी भिंची हुई मुट्ठी से निकाल लिया।

'प्यारी मम्मा! मेरी इस हालत की ज़िम्मेदार आप हैं, पापा हैं। मैंने कई बार आपको चौकीदार की खूंख्वार निगाहों के बारे में बताना चाहा, मगर आपकी व्यस्तताओं ने मुझे इतना वक्त ही न दिया। आपने तो कभी मुझे जी भरकर न देखा। फिर भला मेरे इर्द-गिर्द मंडलाने वाले खतरे को आप कैसे देखतीं? आज मैंने अपने को खतरे में देखकर आपके पास पनाह लेनी चाही, मगर आपके दरवाज़े न खुले। मैंने सारे दरवाज़े और खिड़कियां भड़भड़ायीं, मगर आज खुद मेरे घर में मेरे लिए कोई ऐसी जगह न थी, जहां मैं अपने आप को बचा सकती। मम्मा! माएं तो रातों को जाग-जागकर जवान बेटियों की हिफ़ाज़त करती हैं, मगर आप कैसी मां थीं, कि मुझे गैर लोगों के हवाले करके सुकून से सो गयीं और यह उम्मीद करती रहीं कि एक गैर आदमी, जो आपने घर की हिफाज़त के लिए रखा है, वह आपकी बेटी की हिफाज़त भी करता रहेगा! जब घर के वासी ही बेहोश हों, तो भला... मम्मा! मैं खुदकुशी नहीं कर रही। मुझे मालूम है कि अब मैं ज़िंदा नहीं रह सकती और ज़िंदा रहकर करूंगी भी क्या! आप भी खुश हो जाइये मम्मा, अब आप बिलकुल आज़ाद हैं। अब आप शोहरत के आसमान पर पहुंच जायेंगी। सोने-चांदी के महल बनायेंगी। अब आप.. आज़ाद.. हैं... मम्मा!'

मैं खत पढ़कर सिसक पड़ी। मेरा जी चाहा, कि मुझे भी उसी वक्त मौत आ जाये। उसी लम्हे मुझे अहमद की आवाज़ आयी, जो मुझे आवाज़ें दे रहे थे। मैं घबराकर खड़ी हो गयी। मैं नहीं चाहती थी कि अहमद मरियम को इस हालत में देखें। अगर वह देख लेते, तो शायद खुदकुशी कर लेते। इसीलिए मैंने अपने आपको संभाला और मरियम के कपड़े बदले। उसकी तरफ से एक अन्य खत लिखा, जिसमें उसने खुदकुशी का इकरार किया था। मरियम के हाथ से मिलने वाला खत मैंने जलाकर वाश-बेसिन में बहा दिया। वाकई लोग सही कहते हैं कि डाक्टर संज्ञाहीन और निर्दयी होते हैं। मैं भी एक माहिर डाक्टर की तरह यह सब कुछ कर रही थी। मरियम को बैड पर लिटाकर ज़ब्त का दामन छोड़ बैठी।

मरियम के मरने की खबर जंगल की आग की तरह हर तरफ फैल गयी। अहमद ने सबको यही बताया कि उसे सांप ने डस लिया। वह खुदकुशी वाली बात बताकर बदनाम नहीं होना चाहते थे। मरियम के ऊपर गुज़रने वाली कयामत को छुपाने के लिए उसे मैंने ही स्नान कराया। मैं किस तरह बताऊं कि यह सब मैंने कैसे किया ? क्या हालत थी मेरी !

अब मेरी मासूम, भोली-भाली बच्ची फूलों से लदी मेरे सामने शांत और चिर-निद्रा में सो रही है और मुझे शहाब का इंतज़ार है। वह ... वह शायद मुझे जान से मार देगा ... वह पागल हो रहा होगा। ठीक है, वह मुझे मार दे, तो अच्छा है। मैं हूं भी तो इसी काबिल !

'मेरी मरियम वापस करो, ज़ेब आपा .. मेरी मरियम वापस करो।' शहाब की चीख गूंजी, तो मैं बिलख-बिलखकर रोने लगी।

हाल में सिसकियों की आवाज़ें और भी तेज़ हो गयीं।

'मरियम ... देख, तेरा मा गया .. तेरा मामा आ गया, म आंखें खोल, बेटा ... मैं तो ते था ... मुझसे क्यों रूठ गयी, उठ जा। देख, मैं तेरी साल तोहफा लाया हूं।' वह पागलों मरियम को चूम रहा था। मेरी तरफ लपका। उसकी आं की तरह दहक रही थीं, 'ज़ेब आ तुम कातिला हो ... तुम का मरियम की ...।' वह मेरी ओर और फिर मुझे होश न रहा और अंधेरी कब्र में उतरती चली गयी। यम ने मरकर मुझे गफलत से तो क्या ! अब अगर मैं होश में तो क्या हासिल ! मोहब्बत की तो टूटकर गिर भी गयी, जो शी ज्यादा नाज़ुक होती है।

प्रस्तुति :

□

उन्नीसवीं शती के अंतिम दशक की बात है। फ्रेडरिक सालमन ग्राउज में ज्वाइंट मजिस्ट्रेट थे। उनकी अदालत में चोरी के अभियोग में एक साधु पर चल रहा था। फैसले के पूर्व श्री ग्राउज ने पूछा, 'तुम्हें कुछ कहना है?' इस पर साधु

'होइहि सोई जो राम रचि राखा, को करि तरक बढ़ावै साखा।'

श्री ग्राउज 'मानस' के गहन अध्येता थे। उन्होंने 'मानस' का अंग्रेजी में अनुवाद किया था। उन्होंने उत्तर दिया—'तुलसीदास ने यह भी तो कहा है:

'करम प्रधान बिस्व रचि राखा
जो जस करइ सो तस फल चाखा'

यह कहकर उन्होंने साधु को दो वर्ष की सख्त सजा घोषित की।

—डॉ. भं

□

सुभाषित

□

या सांधूंश्च खलान्करोति विदुषो मूर्खान्हितान्द्वेषिणः,
प्रत्यक्षं कुरुते परोक्षममृतं हालाहलं तत्क्षणात् ।
तमाराधय सत्क्रियां भगवतीं भोक्तुं फलं वांछितं,
हे साधो व्यसनैर्गुणेषु विपुलेष्वास्थां वृथा मा कृथाः ।।

सज्जनो ! यदि आप मन चाहे फल भोगने की इच्छा रखते हों तो दूसरे दूसरे गुण समूह में व्यर्थ ही आसक्त न होकर केवल सदाचार की ही आराधना करें। सदाचार दुर्जनों को सज्जन, मूर्खों को पंडित, शत्रुओं को मित्र, परोक्ष को प्रत्यक्ष और हालाहल को अमृत बनाने की तात्कालिक सामर्थ्य रखता है ।

गुणवदगुणवद्वा कुर्वता कार्यमादौ
परिणति रवधार्या यत्नतः पण्डितेन ।
अतिरभसकृतानां कर्मणामाविपत्तेः,
भवति हृदयदाही शल्यतुल्यो विपाकः ।।

कोई कैसा भी कार्य हो, विचारशील पुरुषों को कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व ही उसके, गुण, दोष और परिणाम का विचार भली भांति कर लेना चाहिये । बिना ठीक से विचारे शीघ्रता में किए हुए कार्य का फल मृत्युपर्यंत मनुष्य के हृदय को कचोटता रहता है ।

स्थाल्यां वैदूर्यमय्यां पचति तिलकणानिन्धनैश्चन्दनाद्यैः,
सौवर्णैर्लाङ्गलाग्रैर्विलिखति वसुधामर्कमूलस्य हेतोः ।
छित्त्वा कर्पूरखण्डान्वृतिमि ह कुरुतो को द्रवाणां समन्तात्,
प्राप्येमां कर्म भूमिं न चरति मनुजो यस्तपो मन्द भाग्यः ।।

जो मन्दभागी इस कर्मभूमि संसार में जन्भ लेकर तपश्चरण नहीं करता वह निस्संदेह उस मूर्ख के समान है जो तुच्छ तिलकणों को वैदूर्यमणि के पात्र में रखकर चन्दनादि के सुगंधित ईंधन से पकाना चाहता हैं, अथवा अर्क (आक) की जड़ प्राप्त करने के लिए सुवर्णमय हल से पृथ्वी को खोदता है अथवा सामान्य कोदूं के खेत की रक्षा के लिए कपूर की बाड़ लगाता है ।

[भर्तृहरि कृत 'नीतिशतक' से]

□

अमर प्रेम-दीप

☐ इर्विंग स्टो

अमरीकी राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन की पत्नी मेरी जब शुक्रवार १४ अप्रैल, १८६५ की सुबह को उठीं, तो बहुत खुश थीं। उनके पति के प्रयासों से एक लंबे अर्से से चला आ रहा गृह-युद्ध समाप्त हो गया था, और उन्होंने आज सारे उत्तरी-अमरीका में 'कृतज्ञता-प्रकाशन-दिवस' मनाने की घोषणा की थी।

सुबह निहायत खुशनुमा और सुहानी थी। उनके पति उनसे पहले ही उठ चुके थे, और मेज़ पर कुछ लिखने में व्यस्त थे। उनके कक्ष में अनेक सेनाधिकारी मौजूद थे। उन्होंने अपने पति के कार्य में व्यवधान करना उचित न समझा, और उनके तथा बच्चों के लिए नाश्ता बनवाने के कार्य में लग गयीं।

एक घंटे के बाद, अपने परिवार के सदस्यों के साथ नाश्ता करते-करते, लिंकन ने मेरी से कहा, 'आज शाम हम दोनों फोर्ड थियेटर में 'अवर अमरीकन कज़िन' नामक नाटक देखने जायेंगे। मैंने जनरल ग्रांट और उनकी पत्नी को भी उनके कुछ साथियों के साथ चलने को कहा है।'

मेरी को इस घोषणा से बड़ी प्रसन्नता हुई। गृह-युद्ध के कारण उसे काफ़ी समय से किसी थियेटर में जाकर नाटक दे का मौक़ा नहीं मिला था। लिंकन ने क 'गृहयुद्ध की समाप्ति पर मैं बड़ी रा महसूस कर रहा हूं। लेकिन, जो शां हमें मिली है, हमें उसकी रक्षा प्राण से करनी होगी।' फिर वे अपनी भा योजनाओं के बारे में बताने लगे, मे इरादा अपना शासन काल समाप्त हो ही शिकागो या स्प्रिंगफील्ड में एक न कार्यालय खोलकर, नये सिरे से क वकालत की प्रैक्टिस शुरू करने का है मैंने थोड़ी रक़म बचायी है, और क शासन-काल की समाप्ति तक कुछ औ बचा लूंगा।'

'इस रक़म का कुछ हिस्सा हम यू में छुट्टियां मनाने में भी खर्च करेंगे। अपना वायदा भूले तो नहीं हो, न!'

'नहीं, मुझे अपना वायदा याद है राष्ट्रपति की जिम्मेवारियों से मुक्त हो ही, हम सबसे पहले यूरोप जायेंगे, छुट्टि मनाने! सिर्फ़ मैं और तुम।'

दिन भर लिंकन के पास बधाई दे वाले लोगों का तांता बना रहा। वे परामर्शदाताओं के साथ बातचीत उन्होंने युद्धग्रस्त क्षेत्रों में शांति स्था

करने से संबंधित अनेक महत्त्वपूर्ण निर्णय भी लिये। शाम तक, जब मेरी ने उन्हें संदेश भेजकर थियेटर जाने के लिए तैयार होने की याद दिलायी, वे काफ़ी थक चुके थे, और थियेटर जाने के स्थान पर आराम करना चाहते थे। फिर भी, अपनी अनिच्छा को दबाकर वे थियेटर में जाने के लिए तैयार हो गये, कारण वे जानते थे कि थियेटर जाने का मेरा कितना मन था।

थियेटर के विशेष बॉक्स में मेरी ने लिंकन को एक ऐसे कोने में बैठाया, जहां से वे भलीभांति पूरा स्टेज देख सकते थे, लेकिन कोई दर्शक उन्हें नहीं देख सकता था। फिर भी नाटक में अभिनय करने वाले कुछ कलाकारों ने उन्हें देखा और पहचान लिया, और उन्होंने स्टेज से ही उनका आदरपूर्ण अभिवादन किया। इससे दर्शकों को भी राष्ट्रपति की उपस्थिति का आभास हो गया।

नाटक के दो अंकों तक लिंकन-दंपति ने उसके चुटीले संवादों का खूब आनंद लिया। जब तीसरा अंक आरंभ हुआ, तो मेरी ने देखा, लिंकन ठंड के अचानक बढ़ जाने की वजह से थोड़ा कांप रहे हैं। उन्होंने अपने पति को उनका ओवरकोट पहना दिया, और उनसे और सटकर बैठ गयीं।

. . . तभी, बॉक्स में एक ज़ोरदार धमाका हुआ, जैसे कोई बम फूटा हो। शंकित और भयभीत मेरी ने सबसे पहले अपने पति की ओर देखा, और यह देखकर सन्न रह गयीं कि उनके शरीर और आंखों में कोई हरक़त नहीं है। एक चीख उनके कंठ से निकली।

अगले क्षण उन्होंने देखा कि उनके साथ आये एक सेनाधिकारी मेजर रॉथबोन एक कोने में एक अजनबी से जूझते हुए उसके हाथ से एक चाकू लेने की कोशिश कर रहे हैं। एक बिजली-सी कौंधी, और मेरी को याद आया कि उन्होंने इस अजनबी को पहले कहीं देखा है, पर कहां और कब, यह उन्हें याद नहीं आ रहा था।

वह खूंखार और हत्यारा अजनबी बॉक्स से नीचे छलांग लगाकर भाग गया, और मेरी सजल नेत्रों से अपने पति को ताकती रहीं। ०००

सता के विरुद्ध तथा अमरीका की एकता व अखंडता के लिए सतत संघर्ष करने वाले मरीकी राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन के असाधारण जीवन व व्यक्तित्व का एक अनजान लू था, अपनी सहधर्मिणी मेरी के प्रति उनका अमर . . . अटूट तथा अलौकिक आभा पूर्ण सच्चा प्रेम। प्रख्यात अमरीकी उपन्यासकार इर्विंग स्टोन ने 'लव इज एटर्नल' मक अपने उपन्यास में इस अमर प्रेम की कहानी को बड़े सीधे-सच्चे ढंग से सुनाया है।

रूपांतर : हरिमोहन शर्मा

मन ही मन वे जानती थीं कि लिंकन अब शायद जीवित नहीं हैं, फिर भी पागलों की नायीं, वे उनसे पूछे जा रही थीं, 'अब्राहम ! बोलो, तुम्हें कहां चोट लगी है । बताओ न ! तुम बोलते क्यों नहीं ? मैं . . . . तुम्हारी मेरी . . . तुमसे पूछ रही है । कुछ बोलो, मेरे प्रियतम !'

बॉक्स के बाहर काफ़ी भीड़ जमा हो गयी थी । उसे चीरते हुए, डॉक्टर लील ने अपने कुछ सहायकों के साथ बॉक्स में प्रवेश किया । मेरी डॉक्टर लील को जानती थी । वे अमरीका के नामी शल्य चिकित्सकों में से एक थे ।

लिंकन का निरीक्षण करते हुए डॉक्टर लील उनके मुंह से अपना मुंह लगाकर उनके फेफड़ों में हवा फूंकने का प्रयास कर रहे थे, और बीच-बीच में ब्रांडी की कुछ बूंदें भी उनके हलक में उतारते जाते थे ।

मेरी ने उनसे कहा, 'डॉक्टर ! क्या इन्हें व्हाइट हाउस ले जाना ठीक न होगा ?'

'मुझे बेहद अफ़सोस है, श्रीमतीजी ! राष्ट्रपति महोदय के प्राण अब निकलने वाले ही हैं । वे व्हाइट हाउस की यात्रा के बीच में ही समाप्त हो जायेंगे । उन्हें गर्दन के पीछे के भाग में गोली लगी है ।'

मौत का काला, सर्द चेहरा अब मेरी को दिखायी देना आरंभ हो गया था । लगता था, जैसे मौत उसके इर्दगिर्द ही मंडरा रही है ।

. . . एक लंबे अर्से के बाद, पादरी को सामने देखकर वह प्रार्थना की
घुटने मोड़कर ज़मीन पर बैठ
लेकिन, वह लिंकन की आत्मा की
लिए नहीं, उसके शीघ्र ही 'स्वस्थ'
की प्रार्थना कर रही थीं । वह यह वि
करना नहीं चाहती थीं कि उनके
पति अब जीवित नहीं हैं, वह पति
साथ उसने सुखी वैवाहिक जीवन के
वर्ष व्यतीत किये थे ।

डाक्टरों ने लिंकन की गर्दन से
निकालकर उन्हें बचाने की भरसक
की, लेकिन उनके सब प्रयास निष्फ
हुए । मेरी ने जब उन्हें सर झुका
तो उसके धीरज का बांध टूट ग
उसने आर्तनाद करते हुए चिल्लाना
किया, 'उठो, अब्राहम ! अपनी प
अपने बच्चों से बात करो । हम स
बात करने के इच्छुक हैं ।'

वह रोती रही, आर्तनाद करती
कोई उसे सांत्वना देने नहीं आ
गमगीन थे, उसके आर्तनाद को
युद्ध-सचिव स्टैंटन अपने सैनि
भीड़ को खदेड़ने के आदेश देते
लिंकन के शव के निकट आये, तो
मेरी को रोते-चिल्लाते सुना । वे न
को चाहते थे, न मेरी को । उन्हों
सैनिक को बुलाकर, बुलंद आ
उसे आदेश दिया, 'इस औरत को
ले जाओ, और यहां मत आने
अपने लिए 'इस औरत' का
सुनकर, मेरी का रोना-चिल्ला

गया। वह सोच रही थी, अब्राहम के रहने पर वह अब राष्ट्रपति की पत्नी–रीका की प्रथम महिला–के गौरवमय से गिरकर एक मामूली औरत भर रह है। अब्राहम के बिना जीवन सूना हो ही गया है, कड़वा भी हो गया है। अब उसे शेष जीवन न जाने कैसे-अपमान सहकर बिताना पड़ेगा।

ooo

मिनट... घंटे... बीतते रहे, किंतु न काल की चेतना थी, न अपने आस-की परिस्थितियों की। समय जैसे के लिए थम गया था, और दुनिया की चेतना के दायरे के बाहर पहुंच गयी। वह कितनी जीवित थी, और कितनी, उसे कुछ पता नहीं था, और न जानने इच्छा ही थी।

उसे किंचित होश तब आया, जब सुबह उसके पुत्र रॉबर्ट ने उससे अपने साथ ने को कहा। वह जब उसका हाथ कर, उसके कमरे तक ले जा रहा तो मार्ग में उसने अपने पति अब्राहम के शव को अंधेरे हॉल में रखे देखा। दर्जन से अधिक सैनिक शव की कर रहे थे। जब वह लपककर शव के गयी, तो सैनिकों ने अपने मुंह फेर ताकि उसे अपने पति के अंतिम दर्शन में कोई परेशानी न हो।

वह शव से लिपटकर उसके होंठों पर की वर्षा करने लगी। बीच-बीच वह कहती जाती थी, 'हाय! कैसी अभागिन हूं मैं कि अपने प्यारे पति की मृत देह को देख रही हूं। असल में, मुझे उनके सामने मर जाना चाहिये था।'

हॉल से बाहर आयी, तो उसने सूरज को चमकते देखा। रुंधे कंठ से उसने रॉबर्ट से कहा, 'कैसा निर्दयी है सूरज! मगर मेरी जिंज़गी का अंधेरा उसके चमकने से थोड़े ही दूर हो जायेगा? ना ही यह सूरज सारे अमरीका पर छाये अंधेरे को ही दूर कर सकेगा।'

रॉबर्ट ने अपनी मां को सांत्वना प्रदान करते हुए कहा, 'मां, सूरज का चमकना इस बात का संकेत है कि पिताजी स्वर्ग में प्रसन्न हैं।'

ooo

जब मेरी को पता चला कि सरकार ने लिंकन के शव को एक ट्रेन में रखकर, सब नगरों में ले जाने की व्यवस्था की है ताकि अधिक से अधिक अमरीकियों को उनके दर्शनों का अवसर मिल सके, तो उसने कहा, 'कितने असंवेदनशील हैं ये लोग! मेरे प्यारे पति की मौत को तमाशा बना रहे हैं। क्या वे नहीं जानते कि लिंकन को ऐसे तमाशों से सख्त चिढ़ थी।'

फिर, अपना गुस्सा व आक्रोश अपने पति के हत्यारे पर उतारते हुए, कहने लगी, 'मैं उसे कभी क्षमा नहीं कर पाऊंगी। क्या बिगाड़ा था, मेरे पति ने उस ज़ुल्मी का कि उसने उनकी जान ही ले डाली।'

'मुझे पूरा विश्वास है कि पिताजी की आत्मा ने हत्यारे को अवश्य क्षमा कर दिया

होगा,' रॉबर्ट ने शांत स्वर में कहा ।

४ मई को, हत्या के प्रायः तीन सप्ताह बाद, लिंकन को पूरे सम्मान के साथ उनके निवास स्थान–स्प्रिंगफील्ड–के निकट स्थित कब्रिस्तान में दफना दिया गया । मेरी उस समय उपस्थित नहीं थी । 'मैं लिंकन को दफनाते हुए कभी नहीं देख पाऊंगी' यह था उसका तर्क ।

और वह 'व्हाइट हाउस' (राष्ट्रपति भवन) छोड़कर स्प्रिंगफील्ड जाने को भी तैयार न थी, 'क्योंकि वहां जाकर हर स्थान, हर व्यक्ति मुझे अपने प्यारे पति की याद दिलाता रहेगा ।'

लेकिन, राष्ट्रपति भवन को नये राष्ट्रपति जॉन्सन के लिए खाली करना लाज़िमी था ।

व्हाइट हाउस खाली करने से पूर्व, उसने उन सभी छोटी-बड़ी चीज़ों को फिटिंग्स समेत-जमा करना आरंभ किया, जो उसके अनुसार, किसी न किसी रूप में लिंकन के जीवन से जुड़ी थीं । रॉबर्ट को यह देखकर बड़ा गुस्सा आया, और उसने नाराजगी भरे स्वर में कहा, 'क्या तुमने अपने होशों-हवास पूरी तरह से गंवा दिये हैं, मां ? जिन चीज़ों को तुम बतौर यादगार अपने साथ ले जाना चाहती हो, उन पर तुम्हारा कोई हक़ नहीं है; वे अमरीकी सरकार की संपत्ति हैं । क्या तुम उन्हें अपने साथ ले जाकर, हम सबको चोर कहलवाना पसंद करोगी ? नहीं, नहीं मैं हरगिज ऐसा नहीं होने दूंगा ।'

मेरी काफ़ी देर तक सुन्न-सी बैठी रही । फिर वह उठी, और एक-एक करके हाउस की सब वस्तुओं को यथा लगवा दिया । लेकिन, नौकरों को आदेश देते समय उसका मन बैठा जा था, और उसे लग रहा था, जैसे वह पति की यादों के विशाल भंडार को जा रही है ।

○○○

स्प्रिंगफील्ड में वापस आकर मेरी पुरानी यादों ने घेर लिया । ये सभी लिंकन से जुड़ी थीं, सिर्फ़ लिंकन से । अतीत से जुड़े अन्य सभी व्यक्ति लिए निरर्थक और महत्वहीन हो

उसे याद आ रहा था कि एक के रूप में वह कितनी सुंदर मोहक अनेक परिचित तथा अपरिचित उस पर फ़िदा थे । उसकी सुंदरता कुशाग्र बुद्धि से प्रभावित होकर ष्ठित परिवारों के लोग उसे में पुत्रवधू के रूप में लाने के लिए यित थे। इनमें से अनेक युवकों वह भी आकर्षित हुई थी, किंतु यह अस्थायी था । उसे क्षणिक प्रेम ही दी जा सकती थी ।

संभवतः उसके अवचेतन मन था कि उसके जीवन में कुछ दिन स्थायी, अमर प्रेम आने वाला है प्रेम जो जीवन भर उसके जीवन आलोकित किये रहेगा ।

उसे याद आ रहा था कि पहली बार अपने अमर प्रेम

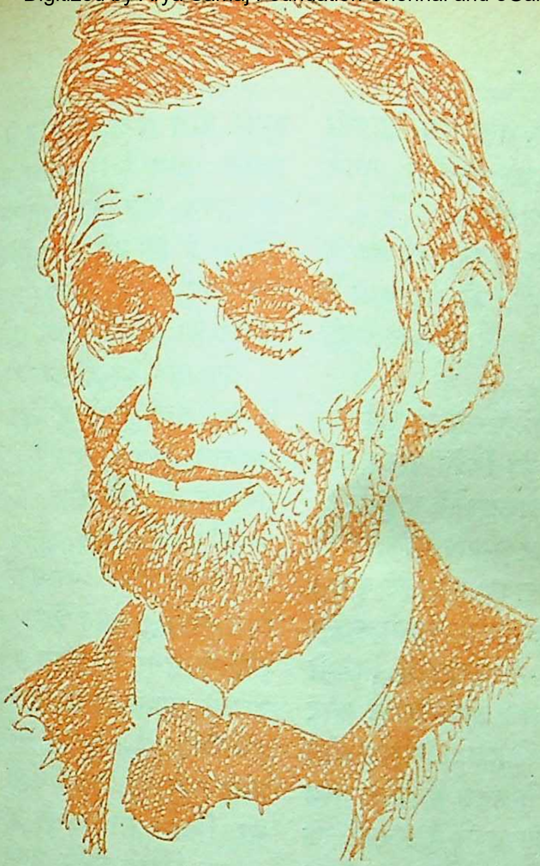

राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन

रे में कब और कैसे सुना था। लिंकन बंधी सब यादों के साथ-साथ, यह याद उसके अंतर्मन में अभी तक सुरक्षित थी। उसका एक चचेरा भाई था, जॉन टुअर्ट। हंसमुख स्वभाव वाला वकील।

एक शाम जब वह मेरी के घर आया, तो ने मेरी के परिवार के सदस्यों को बताया वह शीघ्र ही कांग्रेस के अधिवेशन में लेने के लिए वाशिंगटन जायेगा, और सप्ताह बाद लौटेगा। मेरी ने उससे पूछा, 'मगर इस बीच तुम्हारी प्रैक्टिस का होगा?' उसकी एक सहेली के परिवार का एक मुकदमा जॉन के पास था।

'वह लिंकन है न, मेरा दोस्त! उसने मुझे आश्वासन दिया है कि मेरी अनुपस्थिति में वह मेरा सब कामकाज देख लेगा। वह एक जहीन इंसान और काबिल और भरोसेमंद वकील है, मगर बड़े संकोची स्वभाव का है, इसलिए फिलहाल उसकी वकालत अभी तक जमी नहीं है। मैं आज उसे अपने साथ यहां लाना चाहता था, तुम सब लोगों से उसका परिचय कराने के उद्देश्य से। मगर, वह इतना शर्मीला है, ख़ास तौर पर लड़कियों के मामले में, कि वह साथ आने को

तैयार नहीं हुआ। वैसे, बड़ा नेक, मेहनती और ईमानदार लड़का है–मेरा सबसे प्यारा और भरोसेमंद दोस्त।'

मेरी चुपचाप उस अनजान युवक के बारे में सोच रही थी, जो लड़कियों से दूर भागता है, मगर उसके भाई का सबसे प्यारा दोस्त है।'

जॉन लिंकन के बारे में कहे जा रहा था, 'बेचारे का जन्म अत्यंत निर्धन परिवार में हुआ। शुरू में उसने डाकखाने में मामूली-सी नौकरी की, और फिर भू-मापन की परीक्षा में उत्तीर्ण होकर सहायक भू-मापक बना। मेरे कहने से उसने कानून की पढ़ायी आरंभ की, और १८३४ में चुनाव में विजयी होकर विधायक बना। उसने खुर्राटे और अनुभवी विधायकों को हराया, कारण लोग उसकी ईमानदारी से प्रसन्न थे, और आज भी उस पर विश्वास करते हैं। वर्षों तक उसके साथ एक कमरे में रहने के बाद मैं भी उसे भलीभांति जान गया हूं, और आंखें मूंदकर उस पर विश्वास कर सकता हूं।'

०००

मेरी को याद आ रहा था, जॉन के जाने के बाद भी, वह उसके सबसे प्यारे और भरोसेमंद दोस्त अब्राहम लिंकन के बारे में काफ़ी देर तक सोचती रही थी, जिसके बारे में जाने से पूर्व जॉन ने कहा था, 'हम सब साधन-संपन्न और सुखी लोग जिस जमीन पर खड़े हैं, उससे मीलों नीचे स्थित एक खड्ड से अपनी जिंदगी शुरू करके, कर्मठ और ईमानदार लिंकन आज हमारे बीच खड़ा हो सका है। मगर, वह उदास रहता है। क्योंकि वह अपने को अनाकर्षक और कुरूप समझता है, और सोचता है कि उसे कभी किसी लड़की का प्यार नसीब नहीं होगा। लड़कियों से दूर भागने का उसका शायद यही कारण है।

उसे याद आ रहा था कि जॉन के मुंह से यह शब्द सुनते ही वह, अनजाने में अनजान लिंकन के प्रति आकर्षित और समर्पित हो गयी थी।

और, संयोगवश, अगले दिन ही उसे लिंकन को देखने और सुनने का मौका मिल गया। उसने लिंकन को एक राजनीतिक सभा में भाषण करते सुना, और उसकी सादगी तथा ईमानदारी से अत्यंत प्रभावित हुई। भाषण शब्दाडंबर से भरा हुआ नहीं था, कपट-रहित आत्म-निवेदन था, जिसने सीधे उसके हृदय को छुआ।

घर लौटते समय, उसने निश्चय किया कि वह जल्दी से जल्दी लिंकन नाम के इस आदमी से अवश्य मिलेगी।

एक सप्ताह के भीतर ही, उसकी यह कामना भी पूरी हो गयी। परिवार के एक मित्र के यहां एक पार्टी थी। वहां पहुंचने पर उसे पता चला कि लिंकन भी इस पार्टी में भाग ले रहा है। उसके मेहरबान दोस्त ने उसका परिचय लिंकन से कराते हुए कहा, 'ये हैं लिंकन इन्हें तो तुम जानती ही होगी, कारण ये तुम्हारे चचेरे भाई के पार्टनर हैं।' और परिचय कराके, वे आगे बढ़ गये।

लिंकन से बातचीत करने का सिलसिला आगे बढ़ाने के उद्देश्य से मेरी ने उनसे पूछा, 'बड़े आश्चर्य का विषय है कि हम दोनों स्प्रिंगफील्ड में इतने वर्षों से रह रहे हैं, और आप मेरे भाई के पार्टनर हैं, मगर हम दोनों की भेंट पहली बार ही हो रही है।'

मेरी पर एक चाहभरी दृष्टि डालकर, निगाहें नीची करके अब्राहम लिंकन ने कहा, 'इसकी वजह यह है कि मैं लोगों से कम मिलता-जुलता हूं। यहां सिर्फ़ आपके भाई से ही मेरा घनिष्ठ परिचय है। मैं आज तक आपसे नहीं मिला, इसमें कसूर मेरा है, आपका नहीं।'

'आपको कभी चर्च में भी नहीं देखा?'

'मैं एक धार्मिक व्यक्ति हूं, मगर चर्च इस डर से नहीं जाता कि मुझे वहां के तौर-तरीकों की जानकारी नहीं है।'

'काश! आप इतने शर्मीले और संकोची स्वभाव के न होते, तो हम दोनों की जान-पहचान बहुत पहले ही हो जाती, और मैं कभी-कभी जीवन में जो एक खालीपन महसूस करती हूं, वह महसूस करने की नौबत न आती।'

लिंकन ने आश्चर्य से अपनी निगाहें ऊंची करके, क्षण भर के लिए मेरी की ओर देखा, और यह समझने की कोशिश करने लगे कि मेरी के इन सीधे-सरल शब्दों के पीछे कौन-सा अर्थ छिपा है। और, इससे पहले कि वे उस अर्थ को समझ पाते, उन्होंने कहा, 'मेरा विश्वास है कि आप जैसी आकर्षक, हंसमुख और मिलनसार लड़की के जीवन में खालीपन के लिए कोई जगह नहीं होनी चाहिये।'

कुछ देर खामोश रहने के बाद, मेरी ने कहा, 'मेरे जीवन में रिक्तता होनी तो नहीं चाहिये, लेकिन है। ठीक उसी तरह, जिस प्रकार आपके जीवन में भी एकाकीपन नहीं होना चाहिये, लेकिन है।'

लिंकन से कोई जवाब न बन पड़ा। वे सिर्फ़ मुस्कराकर रह गये। मेरी को उनकी यह मुस्कराहट बड़ी स्निग्ध, और अपनेपन से भरी लगी।

दोनों ने आमने-सामने बैठकर, खाना खाना शुरू किया। काफ़ी देर तक दोनों खामोश रहे, इसलिए नहीं कि उनके पास कहने को कुछ न था, बल्कि इसलिए कि दोनों के बीच, किसी वार्तालाप की आवश्यकता ही नहीं रही थी, और शब्द, इसीलिए, अर्थहीन हो गये थे। दोनों को मौन के इस अंतहीन सागर में डूबकर, एक अवर्णनीय आनंद की अनुभूति हो रही थी।

सहसा, इस आनंदानुभूति को भंग करते हुए, मेरी ने लिंकन से पूछा, 'स्प्रिंगफील्ड आपको कैसा लगता है?'

'मैं तो एक मामूली इंसान हूं, लेकिन मैंने सुना है कि अमरीका से सैक्रेटरी ऑफ स्टेट जब एक बार स्प्रिंगफील्ड आये थे, तो यहां एक-दो दिन बिताने के बाद, उन्होंने एक भेंट में स्प्रिंगफील्ड को 'साक्षात् स्वर्ग' कहा था।'

'आप एक मामूली इंसान कतई नहीं हैं मिस्टर लिंकन, निहायत गैरमामूली

इंसान है। मैंने आप जैसा निराला व्यक्तित्व वाला इंसान नहीं देखा।'

'शुक्रिया! मगर आपने मेरे निराले व्यक्तित्व के बारे में बड़े सौम्य ढंग से कहा है। नहीं तो, अक्सर लोग मेरे मुंह पर ही कह देते हैं कि मैं एक सिरफिरा इंसान हूं।'

लोगों के इस मत के बारे में अपनी प्रतिक्रिया को मूर्त्त रूप देते हुए, मेरी ने मुस्कराते हुए अपना दायां हाथ आगे बढ़ाते हुए कहा, 'मुझे आप अच्छे लगे। उम्मीद है कि मैं भी आपको बुरी नहीं लगी हूंगी। मैंने आपके सामने दोस्ती का हाथ बढ़ाया है, इस उम्मीद से कि यह दोस्ती आपको कबूल होगी।'

'आपके इस प्रस्ताव से मुझे जो हर्ष हुआ है, उसका बयान शब्दों में कर पाना मेरे लिए असंभव होगा। आप पहली लड़की हैं, जिसने मुझ में दिलचस्पी दिखायी है।'

'इसकी वजह कहीं यह तो नहीं है कि अपने संकोची स्वभाव के कारण आपने ही किसी लड़की में कभी कोई दिलचस्पी जाहिर नहीं की।'

कुछ याद करते हुए, लिंकन ने कहा, 'एक रेल-यात्रा के दौरान अपने डिब्बे में बैठी एक नवयुवती में मैंने थोड़ी सी दिलचस्पी जरूर दिखायी थी, और उसने भी अपनी दिलचस्पी जाहिर की थी। मगर, सफर पूरा होते ही, सब कुछ, एक मीठे सपने की भांति टूटकर बिखर गया। आज आपको देखकर . . . देखकर . . मुझे पहली बार वह अनभूति क्रमशः प्रबल होती लग रही है, जिसे कवि प्रेमानुभूति का नाम आये हैं।'

मेरी धक्क रह गयी। लिंकन यह सचमुच कह रहे थे, या वह महज कर रही है कि उन्होंने ऐसा कहा है।

क्षण भर के लिए लिंकन की आंखें अपनी आंखें डालते हुए कहा, 'मुझे सिर्फ यह महसूस हो रहा है कि... और महसूस होना ही बंद हो गया है क्या ... क्या ... इसी को प्रेमानुभूति नाम देते हैं कवि ?'

○○○

मेरी को याद आ रहा था कि लिंकन से भेंट करने के बाद, अधिक बदल गयी थी। इस भेंट के दिन ही उसने अपनी सबसे प्यारी घनिष्ठ सखी एलिज़बैथ से, जो भेदों की भागीदार थी, कहा था, नहीं, मुझे क्या हो गया है? सारा वेश नया-नया सा, खिला-खिला-सा आने लगा है। मेरा हृदय सहसा प्रेम आनंद से लबालब भर गया है। सहसा, मुझे प्यारे लगने लगे हैं, लगता है कि मैं भी अचानक सबकी बन गयी हूं।'

'तुम्हें सहसा क्या हो गया है, मैं नहीं जानती, लेकिन इतना अवश्य सकती हूं कि आज तू मुझे जितनी और मोहक दिखायी दे रही है, पहले कभी दिखायी नहीं दी थी,' बैथ ने कहा।

'हां, वह मैंने भी महसूस किया है । रातोंरात मेरी आंखों के नीचे का अंधेरा सहसा गायब हो गया है। मेरी आंखों में पहले से ज्यादा चमक है। मैं बहुत हल्की, प्रफुल्लित और जीवंत अपने को महसूस करने लगी हूं।'

'सच-सच बता, तू क्या किसी से प्रेम करने लगी है ? कौन है वह सौभाग्यशाली युवक?'

कुछ क्षण तक मुस्कराने के बाद, मेरी ने कहा, 'हां, तेरा अनुमान एकदम सही है । मैं सचमुच प्यार करने लगी हूं, एक ऐसे आदमी से जिसे मैं परसों तक जानती भी नहीं थी और जिसे स्प्रिंगफील्ड में मेरे चचेरे भाई के अलावा, शायद ही कोई जानता हो। जो जितना कुरूप है, उतना ही संकोची भी है। और, जो लिंकन–अब्राहम लिंकन–के नाम से जाना जाता है ।'

'ऐसे आदमी को अपना दिल देने से पहले तूने यह नहीं सोचा कि वह तुझे धोखा भी दे सकता है ।'

'मुझे उस पर विश्वास है, और सदा रहेगा। बिना विश्वास के प्रेम हो ही नहीं सकता।'

मगर, मेरी का यह विश्वास धीरे-धीरे डगमगाने लगा । उसे पूरी आशा थी कि लिंकन उस प्रथम भेंट के पश्चात्, उससे नियमित रूप से मिलता रहेगा, लेकिन मिलना तो दूर, वह उसे बिना बताये स्प्रिंगफील्ड से ही गायब हो गया । मेरी ने इतना अधिक तनाव कभी अनुभव नहीं किया था । उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे, क्या सोचे ।

उसे याद नहीं आ रहा था . . . न जाने कितने महीनों के बाद, एलिजबैथ ने उसे बताया कि लिंकन स्प्रिंगफील्ड वापस आ गया है । वह सूचना मेरी को देते समय एलिजबैथ, अपने पति के सामने, मेरी को यह चेतावनी देनी भी न भूली कि 'यह लिंकन . . . जिस पर तू इतना अधिक विश्वास करती है, जिससे तू इतना अधिक प्रेम करती है . . . तेरे साथ ऐसी बेरुखी बरतेगा, यह मैं कल्पना भी नहीं कर सकती थी ।'

'कोई कारण रहा होगा . . .' मेरी इतना ही कह पायी ।

. . . अगले दिन, सुबह को सात बजे के करीब, जब उसने दरवाजे के बाहर लिंकन को खड़े पाया, तो उसे विश्वास ही न हुआ कि उसके सामने खड़ा आदमी वही आदमी है, जो चुपचाप उसके जीवन के केंद्र में आ चुका था ।

'इतनी सुबह ? अचानक यह सुखद आश्चर्य कैसे ? आइये, नाश्ता तैयार है,' दरवाजा खोलते हुए मेरी ने कहा ।

'मैं नाश्ते के लिए नहीं आया हूं ।'

'फिर ? वैसे आपको देखने से तो लगता है कि जून से, जब मैंने आखिरी बार आपको देखा था, आपने शायद कुछ खाया ही नहीं है ।'

'मैं चुनावों में व्यस्त था, मौली ? इसलिए, चाह करके भी तुम्हें न लिख

सका, न संपर्क कर पाया,' लिंकन ने अपनी सफाई देते हुए कहा ।

लेकिन, मेरी का ध्यान उसकी सफ़ाई की ओर क़तई नहीं था, इस बात की ओर था कि लिंकन ने उसे उसके प्यार के नाम–मौली–से संबोधित किया था । एक क्षण में, उसके मन पर छायी विषाद की छाया तिरोहित हो गयी ।

नाश्ता करते-करते, लिंकन ने उसे बताया कि वह चुनावों में कैसे और कितना अधिक व्यस्त रहा । करीब दस मिनट तक, बिना रुके बोले जाने के बाद, उसने मेरी से पूछा, 'अच्छा, तुम कैसी हो ?'

'ठीक हूं,' एक लंबी सांस लेते हुए मेरी ने कहा ।

'मेरी, तुम्हारा बोलने का ढंग इतना प्यारा और मुग्ध करने वाला है कि काश ! मेरे पास ऐसा ढंग होता तो . . .'

'. . . तो, अब तक अमरीका के राष्ट्रपति बन गये होते ! वही न ।' मेरी ने उसकी अधूरी बात पूरी करते हुए कहा ।

○ ○ ○

'अमरीका का राष्ट्रपति ?' हैरत से आंखें चौड़ी करते हुए लिंकन ने कहा, 'यह कल्पना तो मेरे मन में सपने में भी नहीं आ सकती ।'

'क्यों नहीं आ सकती ? अवश्य आनी चाहिये । जब आपने–तुमने–राजनीति में प्रवेश किया है, तो अमरीका के राष्ट्रपति बनने की महत्वाकांक्षा तुम्हारे मन में आनी ही चाहिये । मगर, चिंता मत करो । मैं तुम्हें अमरीका का राष्ट्रपति बनने में प्रदान करूंगी ।'

'तुम ?'

'हां, मैं । जब मैं तुम्हारे साथ करूंगीं, तो मुझे दहेज में ८० एकड़ भूमि तथा एक विशाल बंगला मिलने है । बंगला काफ़ी बड़ा है, और वहां पर तुम्हें व्हाइट-हाउस में, जो इस से कई गुना बड़ा है, रहने का अभ्या जायेगा ।'

'मेरे जैसे आदमी को, जो एक झोपड़ी में पैदा और बड़ा हुआ, जिसके पास संपत्ति के नाम पर किराये का एक कमरा तक नहीं है, सुनकर ऐसा लग रहा है, जैसे मैं कहानी पढ़ रहा हूं ।'

'यह कहानी . . . जिसके नायक होंगे . . . कुछ ही वर्षों में साकार जायेगी और फिर सारी दुनिया इस को सुनेगी ।' कहकर उसने अपने चुंबन के लिये लिंकन के आगे कर लिंकन ने उन मीठे होंठों का चुंबन हुए कहा, 'मेरे लिये यह पहला अव किसी लड़की का चुंबन लेने का ।'

'मैं आज से तुम्हारे लिए एक नहीं हूं, तुम्हारी हमदम और होने वाली पत्नी भी हूं । इस रिश्ते रखना, आजीवन । नहीं तो . . .'

'मैं तो अभी तुम्हारे साथ मैत्री का ही अभ्यस्त नहीं हुआ था कि . . . मैं नहीं जानता, मौली, कि

रिश्ते को निभा भी पाऊंगा या नहीं ? मैं एक निहायत कच्चा, अनाड़ी, अपरिष्कृत और संकोची इंसान हूं। मेरे अंदर गुण शायद ही कोई हो, हां कमियों की कमी नहीं है।'

कहकर, वह चुप हो गया। उसने अपनी आंखें नीची कर लीं।

'मुझे मालूम नहीं कि तुम्हारे अंदर कौन-सी कमियां हैं, लेकिन चूंकि मेरे अंदर भी कमियों की कमी नहीं है, इसलिये मैं तुम्हारी कमियों के साथ रह लूंगी, समझौता कर लूंगी। अगर तुम्हें मेरे फार्म पर मेरे बंगले में रहना पसंद नहीं है, तो मैं तुम्हारे साथ एक मामूली झोपड़ी में भी रह लूंगी। तुम जो कमाकर लाओगे, उसी में अपना गुज़ारा कर लूंगी।'

'अभी मेरी आमदनी ही क्या है ? कुछ टकों के बराबर। सच तो यह है कि मैंने तुम्हारे भाई की अनुपस्थिति में उसकी बिज़नेस का भी बंटाधार करके रख दिया है।'

'मगर तुम दोनों राजनीति में हो, विधायक हो, और लोग तुम दोनों को चाहते हैं। तुम दोनों का वर्तमान कैसा भी हो, भविष्य अत्यंत उज्ज्वल है। और जैसे-जैसे, धीरे-धीरे तुम दोनों का भविष्य उज्ज्वल होता जायेगा, वैसे-वैसे तुम दोनों की आय भी बढ़ती जायेगी।'

'न जाने किन आंखों से तुम मेरा इतना उज्ज्वल भविष्य देख रही हो ? मुझे तो अपना भविष्य बड़ा अंधेरा और अनिश्चित दिखायी पड़ता है।'

ये तुम्हारी रस्सियां छोटी पड़ेंगी

—कुंअर बेचैन

अब न निकलूंगा
अंधेरी घाटियों से
ये तुम्हारी रस्सियां छोटी पड़ेंगी।

अश्रु होकर भी न आंखों से बहा मैं
एक किस्सा हूं मगर हूं अनकहा मैं
और साधू की जटाओं की तरह ही
आज तक खुद में बहुत उलझा रहा मैं
उलझनें कुछ इस तरह लंबी हुई हैं
ये तुम्हारी कंघियां छोटी पड़ेंगीं।

एक बुझती-सी शिखा कंदील की हूं
एक अनजानी चुभन दुख-कील की हूं
है कठिन बाहर निकलना आंसुओं से
मीन मैं वो कंपकंपाती झील की हूं
व्यर्थ कोशिश कर रहे हो बींधने की
ये तुम्हारी वंशियां छोटी पड़ेंगी।

—२ एफ-५१, नेहरू नगर,
गाजियाबाद, उ. प्र.

○○○○○○○○○○○○○○○○○:○○○○○

'मैं सच्चे और अमर प्रेम की आंखों से तुम्हारे और अपने भविष्य को देख रही हूं, और इस प्रेम की अनुभूति से मुझे यह बोध हो गया है कि ऐसे प्रेम के लिए काल का कोई बंधन नहीं है। वह अतीत और भविष्य दोनों के आरपार देख सकता है।'

□

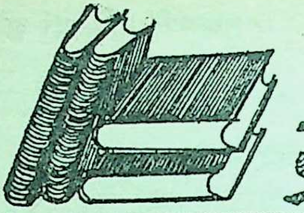

ग्रंथलोक

*** पांव तले भविष्य * लेखक : पं. भोजराज द्विवेदी; अज्ञात दर्शन कार्यालय, प्रथम बी. रोड सरदारपुरा, जोधपुर (राजस्थान), पृष्ठ २००; मूल्य : ५१ रुपये ।**

ज्योतिष साहित्य में विद्वानों ने जहां एक-एक शाखा पर, एक-एक विधा पर अनेक ग्रंथ लिखे, वहां पाद-तल व पाद-रेखाओं को लेकर अलग से कोई ग्रंथ अब तक प्रकाश में नहीं आया । इस विषय में प्रस्तुत पुस्तक को लिखकर लेखक ने ज्योतिष क्षेत्र में एक बहुत बड़े अभाव की पूर्ति करके नये आयाम स्थापित किये हैं ।

यों तो पाद-तल व पाद-रेखाओं का विवरण हमें प्राचीन साहित्य व पुराणों में यत्र-तत्र संदर्भानुकूल मिलता है, परंतु केवल 'पांव' के बारे में राष्ट्रभाषा हिंदी में यह पहली व सर्वथा नूतन पुस्तक है, जो कि पाठकों को एक नवीन विषय के चिंतन हेतु बाध्य कर देती है ।

प्रस्तुत पुस्तक में देवताओं और अवतारों के प्रामाणिक चरण-चिन्ह सचित्र प्रकाशित किये गये हैं । जिसमें भगवान् विष्णु, श्रीराम, प्रभु वेंकटेश, भगवान महावीर स्वामी, सीताजी एवम् राधाजी के बहुरंगी चित्र विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। चिह्न का विस्तार से वर्णन भी प्रस्तु में प्रामाणिक तौर से किया गया है।

पुस्तक के द्वितीय भाग में दृष्टिकोण को अपनाते हुए पांव की रेखा का विस्तार से सचित्र गया है, तथा विद्वान् लेखक पं. द्विवेदी ने यह साबित कर दिया है हाथ ही नहीं, पांव की रेखाओं से का भाग्य जाना जा सकता है।

प्रस्तुत पुस्तक सामुद्रिक जिज्ञासु अध्येताओं के लिए उपयोगी व संग्रह

-दि

०००

*** 'बेर भीलनी के' (खंडकाव्य) पंडित सियाराम मिश्र; प्रकाशक : प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ : ७०; २० रुपये ।**

रामकथा के विभिन्न पात्रों में स्थान विशेष महत्वपूर्ण है। धर्मनिष्ठ रचनाधर्मियों ने जहां समग्र जीवन पर अनेक ग्रंथ प्रणीत वहीं तत्संबद्ध पात्रों – कैकेयी, लक्ष्मण, उर्मिला, भरत, मांडवी,

ता, हनुमान, शांता, जयंत, जटायु, शंबूक, व-कुश इत्यादि पर स्वतंत्र रूप से अनेक डकाव्यों की भी सर्जना से भारती के ार की श्रीवृद्धि की है। इन पात्रों में क्तिप्रवणा शबरी का जीवन-चरित भी ेक कवियों की साधनामयी लेखनी का तिपाद्य बना है।

आज के प्रचार-निर्भर युग में एकांत धना तथा शास्त्रीय-रचना-प्रक्रिया में श्वास रखने वाले भाई श्री सियाराम श्र ने 'बेर भीलनी के' खंडकाव्य में उसी बरी के भक्तिपूत जीवनवृत्त को नवीन मूल्यों के समावेश के साथ सफलतापूर्वक स्तुत किया है। शोषण और द्वेष-दंभ के तंत अंधकार को चीरकर समता तथा व्यवहार का प्रकाश वितरण ही इस व्य का उद्देश्य है जिसे कवि ने 'समर्पण' वं 'वाणी वंदना' में सुस्पष्ट उद्घोषित या है।

विहान, हिलोर, आराधना, पतवार, ुरी और कूल शीर्षक सर्गों में विभक्त मग्र कथानक कवि की उत्कृष्ट रचना क्रिया के परिचायक हैं।

सवैया और कुछ दोहों के अतिरिक्त काव्य में सर्वत्र हिंदी-काव्य में सुचर्चित क वृत्त घनाक्षरी का अनवद्य प्रयोग ा है। इन छंदों में भी अधिकांश 'दंडक' हरण कवित्त ही हैं, यत्र-तत्र 'रूप ाक्षरी' भी समादृत हुई है।

ऐसे सुंदर काव्य के प्रणयन के लिए सियाराम मिश्र सर्वथा साधुवादार्ह हैं।

—डा. अनंतराम मिश्र 'अनंत'

१८८

'जख्मों के गवाह' संपादक : पृथ्वीनाथ पांडेय; प्रकाशक : स्मृति प्रकाशन, १२४ शहरारा बाग, इलाहाबाद, मूल्य : ५० रुपये।

विधा के रूप में लघुकथा को स्थापित करने के लिए आंदोलन रूपी गतियां एक अरसे से चल रही हैं। 'लघु आघात', 'मिनीयुग', तारिका, क्षितिज आदि पत्रिकाएं, सर्वश्री विक्रम सोनी, जगदीश कश्यप, डा. कमल चोपड़ा, सतीश राठी, सतीश राज पुष्करणा, हीरलाल ठाकुर, रमेश बत्रा आदि संपादकगण इसे एक विधा के रूप में स्थापित कराने के लिए अरसे से प्रयत्नशील हैं। अंशदान लेकर संकलन एवं प्रतियोगिताए भी आयोजित की जाती रही हैं। 'जख्मों के गवाह' इस दिशा में एक ठोस प्रयास है तथा लघुकथा के विभिन्न पक्षों पर पृथ्वीनाथ पांडेय का विभाजन एवं संपादन, वैचारिक धरातल प्रणय दर्शन, नारी-यातना, व्यवस्था के अत्याचार, युवा पीढ़ी, विचार विविधा वातायन एवं अतीत के पृष्ठ आदि उपशीर्षक के अंतर्गत लघुकथाएं देकर संकलन संदर्भ का ग्रंथ बना है, मगर उत्तम छपाई के बावजूद निरंतर लघुकथा में रचनारत सर्वश्री विष्णु प्रभाकर, रावी, शंकर पुणतांबेकर, रतीलाल शाहीन, सतीश राठी, मातादीन खरवार, आदि अनेक लोगों का नामोल्लेख भी न होना संकलन की प्रामाणिकता पर प्रश्नचिह्न लगाता है। यदि संपादक महोदय किंचित श्रम लेते तो सारिका, मिनीयुग, मानचित्र, हालात, प्रतिवाद, तारिका, सुपर ब्लेज, सानुबंध, आदि के लघुकथांकों से

पर्याप्त एवं प्रामाणिक नाम, लघुकथाकार व सामग्री मिल जाती। फिर भी ऐसे संकलन हर दृष्टि से स्वागत योग्य हैं। मोहन राकेश का नाम मोहन राजेश लिखा गया है, फिर भी, संकलन पर काफी मेहनत की गयी है, जो सराहनीय है।

०००

*** मुंहासों की उत्पत्ति एवं उससे मुक्ति * लेखक : डा. वि. हालदार; अनुवादक : रेणुका दत्ता एवं डा. एम.ए. तुटकणे; प्रकाशक : कणिका हालदार, कलकत्ता स्किन इंस्टी. १६९, ६, एम. सी. आइ. टी. योजना, कलकत्ता-५४; मूल्य : बीस रुपये।**

मुंहासों के बारे में अनेक भ्रांतियां प्रचलित हैं। जबकि मुंहासों का संबंध तैल-ग्रंथियों से है। अंतस्त्वचा में स्वेद ग्रंथियां एवं तैल-ग्रंथियां होती हैं। तैल-ग्रंथियां साधारणतया लोमकूप के साथ पायी जाती हैं। हाथ और पैर के तलुओं को छोड़कर शरीर के अन्य सभी भागों में कम-अधिक मात्रा में लोमकूप एवं तैल-ग्रंथियां होती हैं, तैल-ग्रंथि की नलिका पर केरेटिन जमा होने से प्रवाह बंद हो जाता है तब मुंहासे उभरते हैं। वंशगत प्रवृत्ति या यौन हारमोन इसके कारण हो सकते हैं। कब्ज का मुंहासों से कोई संबंध नहीं, किसी विशेष खाद्य पदार्थ की कमी या अधिकता से भी मुंहासों का कोई संबंध नहीं है। मगर मुंहासों को खुरचने से मुंहासे बढ़ते हैं। विद्वान-निष्णात चिकित्सक डा. वि. हालदार ने 'मुंहासों की उत्पत्ति तथा उससे मुक्ति' पुस्त मुंहासों के सभी पक्षों का तात्विक विवे उपाय, सावधानियां बतायी हैं, यह आप में इस विषय की अनूठी किताब सचित्र विवरण एवं अंग्रेजी दवाइ साथ-साथ उनके प्रतिकूल प्रभावों का इसकी उपादेयता बढ़ाते हैं।

०००

***'दरख्त की व्यथा'* कवि : वेद प्र पांडेय; राजशेखर प्रकाशन, बड़ौरा, डेढ़ गाजीपुर, उत्तर प्रदेश; कीमत : बीस रु**

'दरख्त की व्यथा' में युवा कवि प्रकाश पांडेय की चौंसठ कविता जो कि सन ८२ से ८७ के बीच रचं हैं। बहुत ही छोटी-छोटी बातों सच्चाइयों को कवि ने सीधी-सहज में अभिव्यक्ति दी है जैसे ये पंक्ति

साहित्यकार
कलम की खुरपी से
निराशा के खेत में
आशा के बीज बोता है
और काटता है फसल
कोहिनूरी जिंदगी का

ये पंक्तियां स्वयं कवि पर लागू हैं, जिनका प्रत्यक्ष उदाहरण उसका प्रथम कविता संग्रह है। मौन, मूक, उ क्षणों और वस्तुओं की भावनाओं को देने में कवि पूर्णतः सक्षम रहा है। ये ताएं कथ्य एवं विचार प्रधान कवि हैं। हां, सभी कविताएं एक ही शै हैं। कथ्य को इतना महत्व दिया गया है

कविता के फॉर्म तक की उपेक्षा हो गयी है। उर्दू शब्दों के इस्तेमाल करने पर स्त्रीलिंग-पुल्लिंग की भूलें भी कहीं-कहीं नजर आती हैं। जैसे 'अपनी नजरे-करम', 'बाढ़ ने हाल बेहाल कर दी' आदि। यदि इनसे बचा जाता तो संग्रह और भी संग्रहणीय होता। ों कवि में अनंत संभावनाएं हैं और ये कविताएं आश्वस्त करती हैं।

०००

***तैयार हो रही जमीन* कवि : हरनाम शर्मा; प्रज्ञा प्रकाशन, सांपला शहर, हरियाणा; सहयोग राशि : दस रुपये।**

समकालीन कविता इधर बहुआयामी हुई है। कविता कभी समाज के कीचड़ में खिला कमल रही तो कभी वह इस कीच को निकालने और फेंकने के लिए फावड़े का रूप अख्तियार करती रही है। हरनाम शर्मा की 'तैयार हो रही जमीन' ऐसी कविताओं का संग्रह है। बकौल उनके 'व्यवस्था की जब कविता से ठनती है / तब / कविता हथियार बन तनती है। इसकी सभी मात्राएं/न झुकती हैं। न फैलती/पसरती हैं, बल्कि सिर चढ़ कर तनती हैं।'

और सचमुच ये कविताएं वैयक्तिक संकटबोध की न होकर मानवीय संकटबोध की पैनी धार हैं। इन कविताओं का विद्रोही स्वर 'विद्रोही खिलौने' कविता की इन पंक्तियों में भी बेहतरीन ढंग से देखा जा सकता है।

सांप और नेवले की लड़ाई में मैं,
हमेशा सांप बना / और वह नेवला
बार-बार नेवले ने मुझे मारा,
सिर चबाया, मुंह जमीन पर मसला।
मदारी डुगडुगी बजाता रहा...
दर्शक आनंदित होते रहे
मदारी कमाता रहा।

ये कविताएं बार-बार विचारों को उत्प्रेरित करती हैं, जो उनकी अच्छी कविताएं होने का प्रमाण हैं।

०००

***आईने कलम के* प्रकाशक : संपादक : डा. रोहिताश्व अस्थाना; सहयोगी साहित्यकार प्रकाशन, अटवा अली, मर्दनपुरा, हरदोई, उ. प्र.।**

कवि समाज का द्रष्टा एवं स्रष्टा दोनों होता है और एक प्रकार से देखा जाये तो कविता का सीधा असर हृदय पर होता है। संभवतः इसीलिए कवियों की संख्या अधिक हैं। कुछ कवि प्रकाशन के अभाव में जीवनपर्यंत दबे-छिपे रह जाते हैं। ऐसे ही अनजाने मणियों को प्रकाश में लाने के उद्देश्य से सर्वश्री रोहिताश्व अस्थाना, सतीश श्रीवास्तव एवं वेदप्रकाश द्विवेदी 'प्रकाश' के संपादन में 'आईने कलम के' संग्रह का जन्म हुआ। इसमें इकतालिस कवियों का सचित्र परिचय एवं उनकी कविताएं संकलित हैं। बेहतर होता कि सभी कवियों की समान संख्या में कविताएं ली जातीं इससे एकरूपता भी बनी रहती। और भी अच्छा होता यदि सभी कवियों के कविता के प्रति वक्तव्य भी संकलित

होते, फिर भी संपादकगण इस संकलन के लिए बधाई के पात्र हैं कि विभिन्न शिल्प एवं शैली वाली विविध अयामी कविताएं एक जगह आ गयी हैं ।

०००

***मुर्दों का प्रीतिभोज* कवि : काशीपुरी कुंदन; साहित्य महानदी, राजिम-४९३८८१; मूल्य : दस रुपये ।**

आज जबकि मंचीय कविता को लेकर साहित्य में प्रदूषण रूपी एक आंदोलनधर्मी बवंडर उपज रहा है, अच्छी हास्य-व्यंग्य कविताओं की सहज ही मांग बढ़ जायेगी । इस मांग की बहुत कुछ पूर्ति हास्य कवि काशीपुरी कुंदन के प्रथम सग्रह 'मुर्दों का प्रीतिभोज' से होती है । समीक्ष्य कृति में काशीपुरी कुंदन की बत्तीस हास्य-व्यंग्य कविताएं संग्रहीत इन कविताओं में समाज की विसंग से लेकर आदमी की बेहूदा हरकतों पर हास्य की मीठी छुरी से प्रहार कि गया है । कवि के शब्दों में –'मैं को के बीच पैदा हुआ, बड़ा हुआ । विसंग ने हास्य और व्यंग्य के लिए उचकाया अंततः वक्त ने मुझे कवि बनाया।' कविताएं तुकबंदी का शिकार हो गयी

यदि छिछले हास्य और तुकबं कवि बचा रहे तो निःसंदेह एक श्रेष्ठ की कतार में वह होता है । प्रतिभा कवि काशीपुरी कुंदन से हम यही करते हैं । कविताएं निःसंदेह गुदगुदाती हंसाती हैं और रुलाती हैं ।

—रतीलाल श

□

रामकृष्ण परमहंस अपने शिष्यों के साथ टहलते हुए एक नदी के तट पर पहुं यहां मछुए के पास स्वामीजी खड़े हो गये और शिष्यों से कहा, 'तुम लोग ध्यानपूर्वक जाल में फंसी मछलियों की गतिविधि देखो ।'

शिष्यों ने देखा कि कुछ मछलियां तो ऐसी हैं जो जाल में निश्चल पड़ी हैं, उन् निकलने की कोई कोशिश ही नहीं की, कुछ मछलियां निकलने की कोशिश तो करती पर निकल नहीं पायीं और कुछ जाल से मुक्त होकर पुनः जल में क्रीड़ा करने लगीं ।

परमहंस ने शिष्यों से कहा–'जिस प्रकार मछलियां तीन प्रकार की होती हैं, प्रकार मनुष्य भी तीन प्रकार के होते हैं । एक श्रेणी उनकी है जिनकी आत्मा ने ब स्वीकार कर लिया है और इस भव-जाल से निकलने की बातें सोचते ही नहीं, दूसरी ऐसे व्यक्तियों की है जो वीरों की तरह प्रयत्न तो करते हैं पर मुक्ति से वंचित ही रह और तीसरी श्रेणी उन मनुष्यों की है जो आखिर मुक्ति प्राप्त कर ही लेते हैं ।'

एक शिष्य बोला–'गुरुदेव ! चौथी श्रेणी भी है ।

'हां चौथी प्रकार की मछलियों की तरह ऐसी महान आत्माएं भी होती हैं जाल के निकट ही नहीं आतीं, फिर उनके फंसने का प्रश्न ही नहीं उठता ।'

□

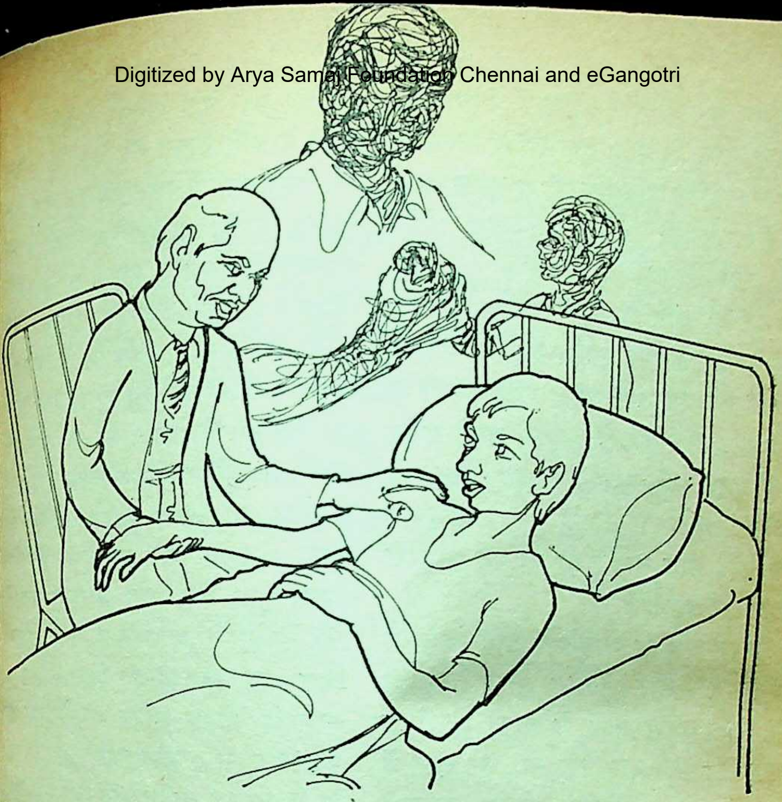

अंग्रेजी कहानी

दादाजी

☐ मार्क एस. लिट्विन बोस्टन

मुझे याद है–तुम्हारे वे सशक्त, स्नेह-सिक्त हाथ, मेरे बालों में फिरते हुए। वह अगस्त माह की एक शाम थी। हम टहल रहे थे। दक्षिण केरोलिना के शीतल पवन में झींगुरों की आवाज मिली हुई थी और चार्ल्सटन दुनिया की सबसे सुरक्षित जगह महसूस हो रही थी। यद्यपि मैं तीन भाई-बहनों में सबसे बड़ा था, पर सात साल की उम्र में भला तलाक का मतलब कैसे समझ सकता था? मैं सहमा हुआ था, तुमने मुझे राहत दी। तुमने मुझे हृदय से लगाकर रखा और अपने हाथों की शक्ति से मुझे सुरक्षा दी। 'ये फौलाद के बने हैं!' तुम मजाक में कहते, जब तुम मेरी पतली कलाइयों को अपनी मुट्ठी में जकड़ते। ये एक वृद्ध तेजस्वी आत्मा

के हाथ थे। इन्होंने तुम्हारे पिता की असमय मृत्यु के बाद, एक कठिन समय में आठ सदस्यों के परिवार को सम्हाला था। अब फिर उनकी जरूरत थी–तीन छोटे-छोटे पोते-पोतियों के संरक्षण हेतु, जो एक टूटे परिवार के सहमे हुए साक्षी थे। यहीं से मेरी शिक्षा प्रारंभ हुई। हम लोग राज्यों की राजधानियां व राष्ट्रपतियों के नाम याद कर रहे थे। तुमने अपने सफेद बालों से कहीं-कहीं ढंके हुए सिर को तर्जनी उंगली से ठोंकते हुए कहा–'जब तुम कोई बात सीखते हो तो वह तुम्हारी संपदा हो जाती है।'

तुमने मुझ में जीवन के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न की और जगाया आत्म निर्भयता का बोध। मुझे गर्मी में काफी दूर पैदल चलकर सिटी-बस पकड़ना व शहर में आफिस के फर्नीचर वाली तुम्हारी दुकान तक जाना याद है। तुम्हारी डेस्क पर एक चिड़िया का पिंजरा रहता था, जिससे सुनकर मुझे कुछ गाने याद हो गये थे। तुमने मुझे संगीत, इतिहास, कला व धर्म की शिक्षा दी। धीरे-धीरे मैं बड़ा होता गया। जब मैं बारह वर्ष का हुआ, तुम्हारा व्यापार बहुत फैल चुका था। फिर भी, प्रतिदिन स्कूल के अतिरिक्त घर पर भी मुझे पढ़ा सको, इसका तुम्हें ध्यान रहा, क्योंकि तुम मुझे एक बड़ा आदमी बनाना चाहते थे। हाई स्कूल में पहुंचने पर मुझे एक गोदाम में काम मिल गया। तुमने मुझे अच्छा सौदा खरीदना व ग्राहक को खुश रखना सिखाया कार्य के प्रति निष्ठा की शिक्षा दी। मैं अर्थशास्त्र के अध्ययन हेतु काले पहुंचा, ताकि पारिवारिक व्यापार जिम्मेदारी सम्हाल सकूं। पर मेरी विज्ञान में थी। जब तीन वर्ष बाद फोन पर तुम्हें बताया कि मैं मेडि स्कूल ज्वाइन कर रहा हूं, तो मेरा था कि तुम निराश होगे। पर तुमने आशीर्वाद दिया तथा व्यापार से निवृत्ति का अपना इरादा स्थगित दिया। अगले चार वर्ष हमने चिकि विज्ञान का साथ-साथ अध्ययन कि मेरे विज्ञान के अध्ययन के समय ही दिल का जबरदस्त दौरा पड़ा। तुम्हारी जीवन शक्ति पर विश्वास पर फिर भी तुम्हारे त्वरित स्वास्थ्य से मैं चकित था। गहन-चिकित्सा- में तुम्हारा हाथ अपने हाथ में लिये हु महसूस करता उसकी शक्ति को। शक्ति मुझे भी मजबूत बनाती थी ताकि इस आकस्मिक आघात को सह बीस वर्ष पूर्व तुमने जो अध्यापन किया था, वह अब भी जारी है। मैं विभाग में रेजीडेंट हूं। तुम मुझे समा पत्रों की ज्ञानवर्द्धक कतरनें, व्याख्यानों प्रकाशन, पत्रिकाएं आदि भेजते रहते ताकि मुझे चिकित्सा विज्ञान की नयी नयी जानकारियां मिलती रहें। पिछले में मैंने न जाने कितने बड़े-बड़े प्रोफेसरों शिक्षा ली है। तुम कभी कालेज नहीं

गीत

बटोही, तेरी प्यास अमोल !
नदियों के तट पर तू अपने प्यासे अधर न खोल !
जो कुछ तुझे मिला वह सारा, नाखूनों पर ठहरा पारा,
मर्म समझ ले इस दुनिया का, सिर्फ वही जीता जो हारा,
सागर के घर से दो आंसू का मिलना क्या मोल ?
जल की गोद रहा जीवन भर, जैसे पात हरे पुरइन के,
प्यास निगोड़ी जादूगरनी, जल से बुझे न जाय अगिन से,
जल में आग, आग में पानी और न ज्यादा घोल !

—शतदल

९/२०, महापालिका कालनी, दादानगर, कानपुर-२२

पर मेरे सबसे बड़े शिक्षक तुम्हीं हो ।

गत सप्ताह ४८ घंटों की लगातार ड्यूटी के बाद घर लौटने से पूर्व मैं एक रोगी के टांके निकालने उसके कक्ष में गया। थकान व नींद से मेरा बुरा हाल था। अपना काम समाप्त करने के बाद मेरा ध्यान उन सज्जन के अश्रुसिक्त नेत्रों की ओर गया। उन्हें इस बात की जानकारी हो गयी थी कि उन्हें कैंसर है और वे सदमे में थे।

उनकी उम्र तुम्हारे बराबर थी, पर तुमसे भिन्न–उनके हाथ कृश व दुर्बल थे। मैंने उनके पास बैठकर उनका हाथ अपने हाथ में लिया व उन्हें धीरज बंधाया। मैंने पाया कि मेरे हाथों में तुम्हारी ताकत है। मैंने उन सज्जन के हाथों को मजबूती से पकड़ा व उनसे तब तक बातें की जब तक कि वे बेहतर महसूस नहीं करने लगे ।

घर पहुंचकर मैं बहुत रोया। मैंने तुम्हें याद किया व उस उपहार को भी, जो तुमने मुझे दिया है। दूसरों ने मुझे स्टेथोस्कोप का प्रयोग सिखाया, पर सुनना तो तुमने सिखाया। दूसरों ने मुझे आपरेशन करना सिखाया, पर तुमने मुझे रोगियों को अच्छा करने का सामर्थ्य दिया। दूसरे मुझे मेरे हाथों का उपयोग करना सिखा रहे हैं, पर उनमें शक्ति तुम्हारी दी हुई है ।

शनैः शनैः मैं भी अब वृद्ध हो चला हूं। पर दिलो-दिमाग से लेकर शरीर तक कोई चिकित्सक कैसे हो सकता है, यह तुम्हीं ने मुझे सिखाया, यह मैं कभी नहीं भूल सकता ।

तुम्हें अनंत धन्यवाद . . . ।

[भावानुवाद : डा. संजीव वर्मा]

□

'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' की चंदे की दरें

एक प्रति	रु. ४.०

भारत में (साधारण डाक से)

- एक वर्ष : ४५ रु.; दो वर्ष : ८५ रु.; तीन वर्ष : १२० रु.

विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)

○ पाकिस्तान	रु. १२०.०
○ श्रीलंका, मध्य एशिया, सुदूर पूर्व के देश आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड	रु. १२०.०
○ अन्य देश	रु. १८५.०

विदेशों में हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए)

○ पाकिस्तान	रु. ३००.०
○ श्रीलंका, बर्मा, अफगानिस्तान	रु. ३००.०
○ मध्य एशिया / सुदूर पूर्व के देश (जापान को छोड़कर)	रु. ३००.०
○ यूरोप, यू. के., यू. एस. एस. आर., जापान, आस्ट्रेलिया और मारिशस	रु. ३१०.०
○ यू. एस. ए., कनाडा और वेस्ट इंडीज	रु. ३१०.०

* बम्बई से बाहर चेक भेजनेवाले रु. ६ अधिक भेजें।

—व्यवस्थापक, नवनीत हिन्दी डाइजेस्ट, भारतीय विद्या भवन, बम्ब

मेरा मुन्ना

मुन्ना को गोदी में लेकर जब मैं उसे सुलाती हूं।
कह न सकूंगी जैसा सुख मैं अनायास पा जाती हूं।।
देती हूं मैं मृदुल थपकियां लोरी मधुर सुनाती हूं।
झुकते पलक, खोल फिर देता, लखती मैं शैतानी हूं।।
आने लगी उबासी अब तो, पलक नींद में झुकते-झुकते।
खट-खट कोई करे न, देखो, नींद आ रही रुकते-रुकते।।
शिथिल हो गये अंग सभी हैं, पलक अभी लग पाये हैं।
लगता, अब निदिया रानी ने आकर गीत सुनाये हैं।।
मेरा मुन्ना जब गोदी में चुप होकर सो जाता है।
मेरा हिलना-डुलना सहसा अनजाने रुक जाता है।।
छोटी नाक, कान हैं कोमल, लट है काली घुंघराली।
ललित कपोलों को छूती है मृदु अधरों की नव लाली।।
चुंबन को आमंत्रित करती सूरत यह भोली भाली।
कैसे चूमूं, जग जायेगा, ममता तो है मतवाली।।
ओ दीदी! धीरे से बोलो, अभी-अभी मुन्ना सोया।
सोते में भी अधर हिल रहे, किन सपनों में है खोया।।
और नींद गहरी हो जावे, तब मैं इसे लिटा पाऊं।
इसके जगने के पहले ही घर-कामों को निपटाऊं।।
मेरी गोदी भरी इसी ने, मैं इसको हूं दुलराती।
'मुन्ने की मां' संबोधन सुन कितना सुख हूं मैं पाती।।
अभी सो रहा, उठ खेलेगा, लौटेगा मेरा बचपन।
मन ही मन मैं नाच उठूंगी सुनकर के उसकी रुनझुन।।
जब सोता है प्यारा लगता, जगने पर भी यह प्यारा।
मेरा मुन्ना बना हुआ है, इस जीवन का ध्रुवतारा।।

— रामेश्वर दयाल दुबे

चित्रकूट, सी / २७४, निराला नगर, लखनऊ, उ. प्र.

□

पुरातत्व संग्रहालय (कन्नौज) द्वारा

लोक-संगीत आल्हा गायन का आयोजन

☐ प्रो. रामनिवास मि

भविष्य पुराण के तृतीय खंड में आल्हा-ऊदल के चरित्र का उल्लेख मिलता है। लोककाव्य की मौखिक परंपरा का सबसे सशक्त बीर गाथा काव्य है आल्हा। ऐतिहासिक नगर कन्नौज में इसके आयोजन का सूत्रपात किया है यहां के पुरातत्व विभाग के जनक डा. जी. के. अग्निहोत्री के अथक प्रयास ने। कन्नौज के प्रो. रमेशचंद्र तिवारी को इस आयोजन में उ. प्र. संगीत नाटक अकादमी ने आल्हा विशेषज्ञ के रूप में सम्मान देकर पदक प्रदान किया है। प्रो. तिवारी ने आल्हा परंपरा का परिचय देते हुए बताया कि आल्हा ही एक मात्र ऐसा काव्य है, जो लोक-कंठों में लगभग सात सौ वर्षों तक सुरक्षित रहते हुए लोक काव्य के रूप में सामान्य जन की स्मृति के सहारे पीढ़ी दर पीढ़ी यात्रा करता चला आ रहा है। १८६५ में फर्रुखाबाद के जिलाधिकारी चार्ल्स इलियट ने इसे लिपिबद्ध कराके १८७१ में प्रकाशित कराया था। इसके बाद १९२३ में बाल्टर फील्ड द्वारा किया गया आल्हा खंड का अंग्रेजी अनुवाद 'द ले आफ आल्हा' आक्सफोर्ड प्रेस लंदन से प्रकाशित हुआ था। और कन्नोज में श्री रमेश नारायण त्रिवेदी डी. एम. फर्रुखाबाद द्वारा पहली बार १९७९ ई. में अखिल भारतीय स्तर आल्हा प्रतियोगिता का आयोजन कि गया था। और इसके बाद से प्रति कन्नौज में ही नहीं, अपितु महोबा में आल्हा समारोह की नींव पड़ गयी है।

कन्नौज के शासक जयचंद्र का देश के गद्दारों में लिया जाता है, लेकि जयचंद्र का सगा भतीजा लाखन एक म योद्धा था। अपने मित्र ऊदल की सहाय में अपनी नवयौवना पत्नी पद्मा को त्याग देता है और कहता है कि:

'कारी बदरिया सारी मोरी,
कौंधा सारो लगे हमेर।
हम ना बिलमें सतखंडा पर,
मोंहि महुबे को होति अबेर॥'

लाखन की रानी का यह कहना कि मार्मिक बेदना का प्रतीक है कि:

'चटक चूनरी ना मैली भय
ना धोबी घर गओ पटार।
मोंहि जवानी में तुम छांडो
बेड़ा कौन लगइहै पार॥'

आल्हा जैसे लोक काव्य में केवल रस ही नहीं है, अपितु करुण रस, शृं रस और बियोग तथा बिरह के क्षणों भी मार्मिक चित्रण किया गया है। आ का गायन करने के पहले मंगलाचरण

गायन अल्हैत अवश्य करते हैं। जैसे—

'सुमिरन करके गणाधीस को
भोरहिं लेत राम को नाम :
देवी सुमिरों मां कनवज की,
लैके फूलमती को नाम ।।
अस्तुति करिके गुबरधनी को
माता, धरम तुम्हारे हाथ ।'

आल्हा गायक घंटों विभिन्न रसों के माध्यम से प्रस्तुतीकरण के बाद भी कभी किसी प्रकार की ओजस्विता में सुस्ती नहीं आने देते हैं। भारत के प्रसिद्ध इतिहासकार श्री के. डी. बाजपेयी आल्हा की ऐतिहासिकता के संवंध में लिखते हैं कि 'आल्हा एक संपन्न और चेतना संपन्न लोक काव्य है। आल्हा भारतीय संस्कृति की प्राण चेतना को रूपायित करता है। क्रांतिकारियों को प्रेरणा देने का कार्य आल्हा ने किया था। आल्हा में निहित वीरत्व की भावना सदैव नयी पीढ़ी को प्रेरणा प्रदान करती रहेगी।'

डा. केरीन शोभर, कैलीफोर्निया विश्व विद्यालय अमरीका के आल्हा के संबंध में विचार हैं कि 'आल्हा की सबसे सजीव और मौखिक परंपरा आशु कवि के रूप में अल्हैतों का आल्हा गायन है।'

डा. भगीरथ लिखते हैं कि आल्हा शृंगार और वीर रसों से परिपूर्ण महाकाव्य है। इसमें कोई दो राय नहीं हैं कि आल्हा जीवन का एक ऐसा दर्शन है जिसमें—

'जाको बेरी सुख में सोवै
ताको जीवन को धिक्कार'

कन्नौज में इस समारोह में आल्हा गायन के लिए 'फुलवा रानी के खातिर ऊदन डारी नाक छिदाय'' की पंक्तियों को लेकर राम खेलावन, बच्चा सिंह, गंगाराम यादव, खेमराज सिंह, राजकुमार पांडे, जोधासिंह, श्यामलाल यादव, बलबीर सिंह, हनुमान सिंह, लल्लू बाजपेयी ने आल्हा की विभिन्न लड़ाइयों को अपनी-अपनी गायन की शैली में घंटों गा-गाकर उपस्थित जन समुदाय को आल्हा के रंग में सराबोर किया। अंतिम दिन कन्नौज के वयोवृद्ध पुरुष बाबू कालीचरण टंडन ने उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी द्वारा प्रदत्त पदकों का वितरण किया। इस अवसर पर कन्नौज के वर्तमान पुरातत्व संग्रहालय के अध्यक्ष श्याम बिहारी शर्मा को भी अकादमी द्वारा पदक प्रदान किया गया। सन १९८३ के ३–४ सितंबर को कन्नौज के अखिल भारतीय आल्हा समारोह के अवसर पर प्रकाशित स्मारिका जिसे कि डा. प्रताप नारायण और उनके अन्य सहयोगियों के परामर्श से प्रकाशित कराया गया था, उसमें प्रकाशित आल्हा की कुछ पंक्तियों को यहां उद्धृत कर रहा हूं कि—

'संस्कृति का अंतरराष्ट्रीय, राष्ट्रीय, एवं आंचलिक स्वरूप भी होता है', इसी प्रकार भारतीय संस्कृति की वीर भावना का प्रतीक आल्हा केवल मनोरंजन का काव्य नहीं है, अपितु यह भारतीय मानस वीर भावना का एक सशक्त परिचय भी है।

—पी. एस. एम. डिग्री कालेज, कन्नौज, उ. प्र.

□

दो क्षण हंस न लें!

‘अगर मोहब्बत अंधी है तो शादी क्या है ?’ एक व्यक्ति ने अपने दोस्त से पूछा।

‘आंखों का आपरेशन।’ दोस्त का जवाब था।

०००

एक साहित्य-समारोह में दो लेखक आपस में बात कर रहे थे। एक ने कहा– ‘आज की चर्चा कितनी नीरस रही। बस एक आपसे ही बात करके आनंद आया।’

दूसरा बोला, ‘आपको कोई एक तो मिला, मुझे तो एक भी नहीं मिला।’

०००

पत्नी–‘मैं जुबान की बुरी जरूर हूं, पर दिल की एकदम साफ हूं।’

पति – ‘और दिमाग की भी!’

–बेबी सौगानी

०००

एक सज्जन : ‘बच्चे तो घर की रोशनी होते हैं।’

दूसरे सज्जन : ‘लेकिन तुम्हारे घर का बिजली का बिल फिर भी ज्यादा क्यों आता है?’

०००

एक विवाहित पुरुष : ‘तुम्हें यदि करनी है तो टीचर से करनी चाहिये।’

‘क्यों ?’ अविवाहित ने सहज प्रश्न किया।

‘इसलिए कि टीचर सवाल कर बाद जवाब के लिए सबसे ज्यादा तक इंतजार कर सकती है।’

–ऋषिमोहन श्रीव

०००

‘आज बड़ा ख़राब दिन था। बो तक नहीं हुई। आप ही कुछ ले लीजि दुकानदार ने एक महिला से कहा।

‘ठीक है, लाओ, एक रुपये की रे दे दो मुझे।’

०००

एक महाशय बता रहे थे–मेरी झदार पत्नी किसी एक गलती को दोहराती नहीं है। वह हर वार गलती करती है।’

–उषा

□

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बंबई-४०० ००
के लिए प्रकाशित तथा श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग
बंबई–४०० ००४ में मुद्रित।

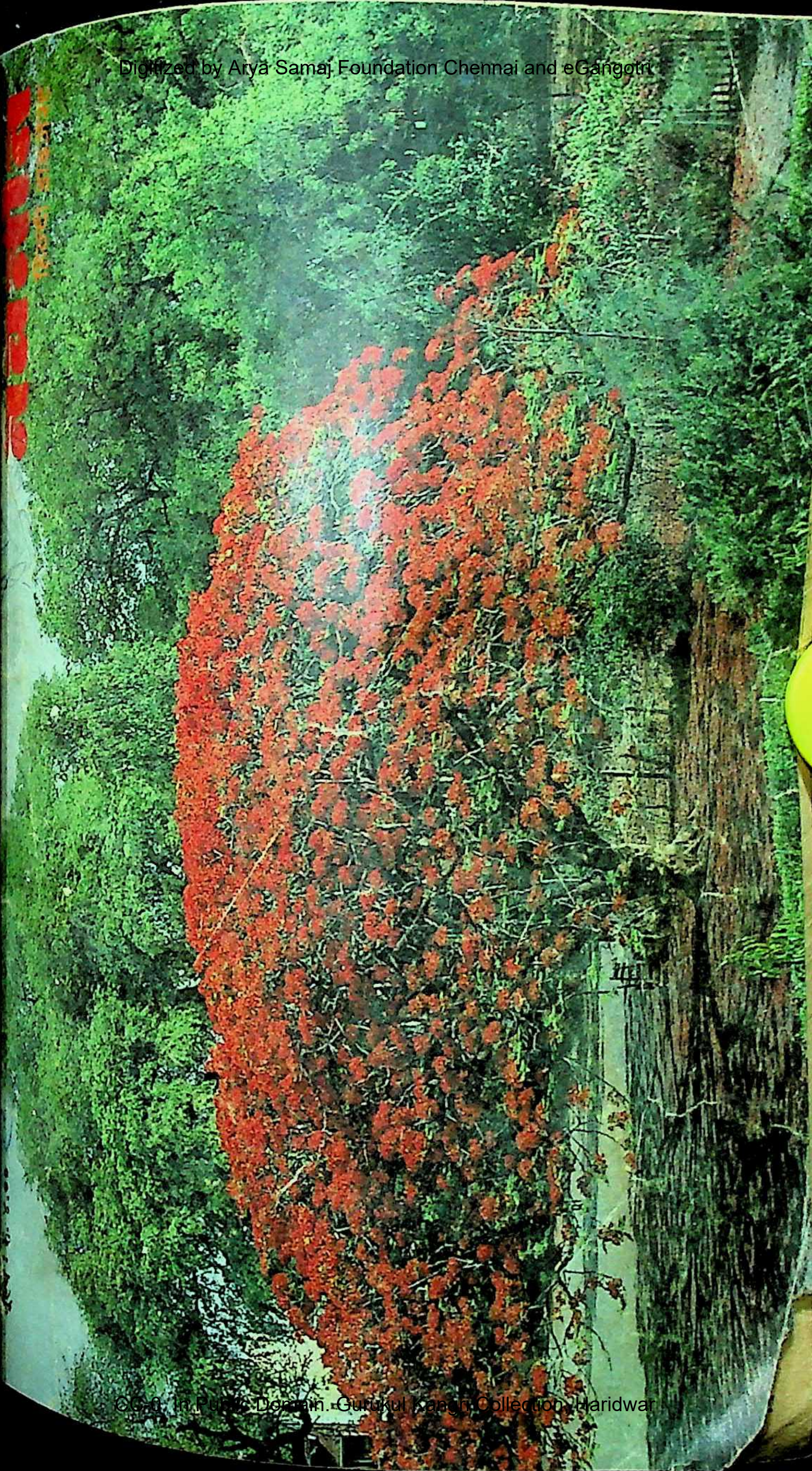

विश्व है हमारा कैनवास...

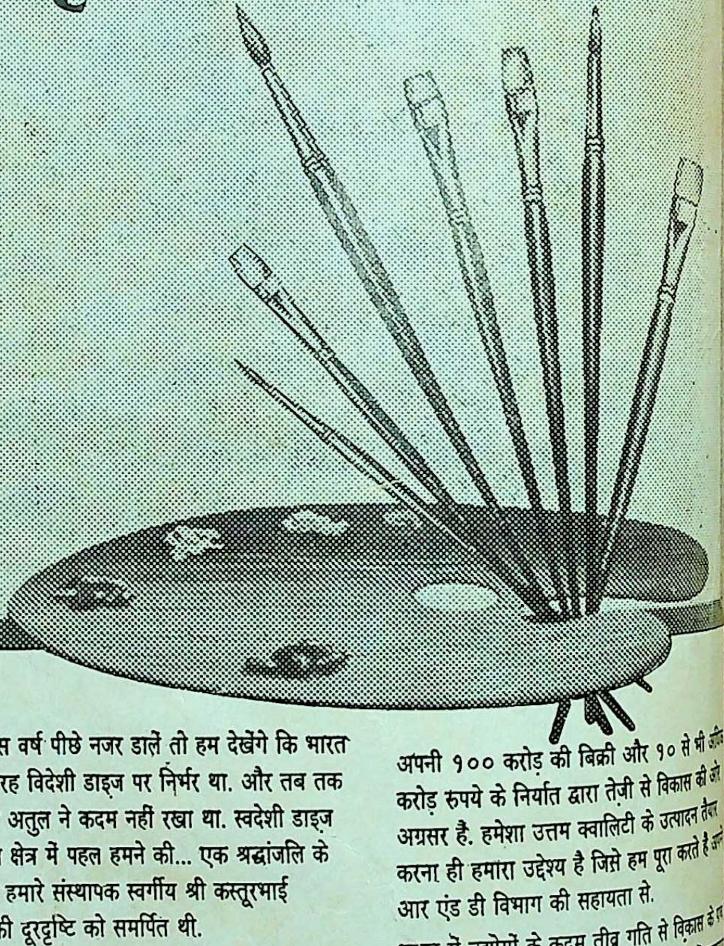

यदि चालीस वर्ष पीछे नजर डालें तो हम देखेंगे कि भारत तब पूरी तरह विदेशी डाइज पर निर्भर था. और तब तक इस क्षेत्र में अतुल ने कदम नहीं रखा था. स्वदेशी डाइज़ के उत्पादन क्षेत्र में पहल हमने की... एक श्रद्धांजलि के रूप में, जो हमारे संस्थापक स्वर्गीय श्री कस्तूरभाई लालभाई की दूरदृष्टि को समर्पित थी.

आज अतुल न केवल डायस्टफ़ की विशाल श्रेणी का उत्पादन करते हैं बल्कि बुनियादी रसायन, डायस्टफ़ के माध्यम, फार्मास्युटिकल्स तथा कीटनाशकों का उत्पादन करके क्रपड़े, चमडे, कागज़, हाथ से बने कपड़े, पिग्मेंट, पेट्रोलियम, जूट तथा साबुन जैसे विविध उद्योगों में देश को आत्मनिर्भर बनाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं

अपनी १०० करोड़ की बिक्री और १० से भी करोड़ रुपये के निर्यात द्वारा तेज़ी से विकास की ओर अग्रसर हैं. हमेशा उत्तम क्वालिटी के उत्पादन तैयार करना ही हमारा उद्देश्य है जिसे हम पूरा करते हैं आर एंड डी विभाग की सहायता से.

भारत में उद्योगों के कदम तीव्र गति से विकास के अग्रसर है. और अतुल राष्ट्र की उपलब्धियों में सहभागी रहा है.

®THE
ATUL®
PRODUCTS LTD.

अतुल ३९६०२०, गुजरात, इंडिया, टेलेक्स : ०१७३ २२२ AT
फोन : ATUL ६१ से ६५. टेलीग्राम : TULA ATUL

पत्र-वृष्टि

नवनीत के मार्च अंक की परिचर्चा 'क्यों फीके पड़ रहे हैं प्रेम रंग ?' ने चिंतन को प्रेरित किया । निश्चय ही प्रेम रंगों का यह त्योहार कितना बदरंग होता जा रहा है। अन्य रचनाएं भी आकर्षक हैं ।

—चंद्रकांत यादव, वाराणसी

०००

नवनीत बड़ी सुरुचि संपन्न पत्रिका है । पत्रिकाओं की तो इन दिनों बाढ़-सी आ गयी है । लेकिन उनमें शालीनता और भद्रता कम, उत्तेजनकता—जो गुमराह समय का सामयिक तकाजा लगती है—अधिक होती है। कहानियां भारतीयता से भीगी, स्वस्थ उदात्त-शालीन भावभूमि की ओर जाने की प्रेरणा देने वाली होती हैं ।

—आनंदविहारी सिंह, सारण, बिहार

०००

जनवरी अंक में 'कान की वैज्ञानिक देखभाल' पढ़ा । यह लेख सतही ढंग से लिखे गये लेखों से भिन्नता रखता है । इसे पढ़ने वालों को विषय की भरपूर जानकारी मिलेगी । खिलाड़ी 'विश्वनाथन आनंद' पर लेख सुंदर है । **नवनीत** की दोषपूर्ण वितरण प्रणाली से यह उपलब्ध नहीं हो पाती है, उसमें सुधार की आवश्यकता है । मुखपृष्ठ में मोटा कागज लगायें, ताकि वह थोड़ा टिकाऊ हो । हमारे शहर के अपने एजेंट का पता भी भेजें । **—आर. पी. अग्रवाल, मुजफ्फरपुर**

०००

मार्च '८८ के नवनीत में 'मुंशी साहित्य में राष्ट्रीयता के स्वर' लेख के साथ उसके लेखक श्री बनवारीलाल पुरोहित का परिचयात्मक विवरण दिया गया है, उसमें उल्लेख है कि श्री पुरोहित एक स्वतंत्रता सेनानी भी हैं । यह विवरण सही नहीं है । चूंकि श्री पुरोहित सार्वजनिक जीवन में एवं राजनीति में भी कार्यरत हैं, अतः यह विवरण कुछ भ्रांति उत्पन्न कर सकता है ।

—दीनदयाल पुरोहित, नागपुर

०००

नवनीत का मार्च '८८ अंक बेहद रोचक एवं विविधतापूर्ण लगा । सार-संक्षेप के अंतर्गत 'भारत का तख्ते ताऊस' कहां छिपा है ? बहुत अच्छा लगा । 'दिल्ली के सुल्तान : कुछ रोचक दास्तान' ने मन मोह लिया । **—संजय रोहतगी, वाराणसी**

०००

नवनीत का मार्च '८८ अंक अपनी वैविध्य छटा लेकर 'काम कुसुम धनु सायक' की तरह मन को मुग्ध कर गया ।

सका प्रत्येक अंक रोचक ज्ञानवर्धक, पठनीय और स्पृहणीय निकल रहा है। कुशल संपादन-कला हेतु साधुवाद। अब **नवनीत** सर्वत्र चर्चा का विषय बन गया है।

–कैलाश त्रिपाठी, देवरिया, उ. प्र.

०००

मैं **नवनीत** का लंबे अर्से से पाठक हूं। बिना उसके महीना जैसे प्रेमी के विरह में प्रेयसी। मार्च '८८ अंक देखा। 'दिल्ली के सुल्तान : कुछ रोचक दास्तान' वास्तव में उस समय के तथाकथित राजाओं आदि के विषय में सोचने के लिए विवश करता है। रघुपति सहाय फिराक के सचिव से ली गयी जानकारी फिराक साहब के संबंध में एक नयी प्रेरणा डालती है। उमा शर्मा की कहानी भी कुछ प्रश्न उत्पन्न करती है। कामिक्स के पात्रों के संबंध में भी जानकारी काफी रोचक लगी।

–डा. धीरेंद्र दवे, शुजालपुर, म. प्र.

०००

आज मनुष्य प्रकृति से दूर हो गया है। उसके होठों की सहज हंसी खो गयी है और ठहाके मारकर हंसना उसके लिए जैसे दूभर हो गया है। ऐसे मनहूस माहौल में जब कोई पत्र-पत्रिका अपने पाठकों को व्यंग्य-विनोद, चुटकुलों एवं कार्टूनों आदि के माध्यम से न केवल गुदगुदाती-हंसाती है, अपितु सोचने-समझने को भी बाध्य करती है। तब निश्चय ही वह साधुवाद की पात्र है। क्योंकि, स्वस्थ हास-परिहास आज की मशीनी जिंदगी में ग्रीसिंग-आयलिंग का काम करते हैं। **नवनीत** के फरवरी अंक में प्रकाशित कार्टून एवं चुटकुले बहुत पसंद आये। साथ ही अच्छा लेखक बनने के गुरुमंत्र बताने के लिए भी हार्दिक आभार स्वीकारें।

–आदित्य ओम, छतरपुर, म. प्र.

०००

इन दिनों **नवनीत** अच्छी, रोचक, संग्रहणीय और पठनीय सामग्री से भरपूर निकल रहा है। विशिष्टता और विविधता के सुंदर संयोजन से समन्वित मार्च '८८ अंक तो हृदय की अतल गहराई तक छू गया। इस अंक में प्रकाशित कविताएं होली के सरस सुहावने रंग में सराबोर कर गयी हैं। 'मूर्त्तता से अमूर्त्तता की ओर' (अनुराधा वैद्य), 'पं. नहरू की होली' (पी. डी. टंडन), 'नंदगांव और बरसाने की होली' (मदनगोपाल शर्मा), 'क्यों फीके पड़ रहे हैं प्रेम रंग' (परिचर्चा: जगदीश किंजल्क), 'एक अनूठा साहित्यिक व्यक्तित्व' (रामेश्वर शुक्ल अंचल) आदि लेख मन को बहुत भाये। इनमें रंग-अबीर की मादकता और गुलाब की मोहक महक है। 'मैं' (उषा भटनागर), 'बुआ' (पूरनचंद बाली), और 'रिटायर होने का सुख' (उमा शर्मा) आदि कहानियां भी रोचक और हृदयस्पर्शी हैं। इसके पूर्व 'मुंशी शताब्दी विशेषांक' ने भी अत्यधिक प्रभावित कर भावविभोर कर दिया था। निश्चय ही **नवनीत** पूर्व संपादक रतनलाल जोशी एवं सत्यकाम विद्यालंकार

की परंपराओं को आगे बढ़ाते रहने में सक्षम सिद्ध हो रहा है।

–वीरेंद्र शर्मा 'कौशिक', छतरपुर, म. प्र.

०००

श्री ऋषि मोहन श्रीवास्तव का लेख 'वैज्ञानिक मापदंडों पर संगीत की भूमिका' महत्वपूर्ण जानकारियां देने के साथ-साथ भारतीय संस्कृति और परंपरा में संगीत को दिये गये महत्व के रहस्य को भी प्रतिपादित करता है। अब तो विदेशों में भी संगीत के प्रभाव का वैज्ञानिक परीक्षण करके पाया गया है कि गाय दुहने के समय यदि सही संगीत का उपयोग किया जाये तो उससे निश्चित रूप से अधिक दूध प्राप्त किया जा सकता है। यह कैसी विडंबना है कि आज जब विदेशों में लोग चिकित्सा आदि क्षेत्रों में संगीत का उपयोग कर रहे हैं, हम अपनी पुरानी परंपरा को भूल कर शोर-शराबे वाले संगीत से बीमारियां खरीद रहे हैं।

–सीमा श्रीवास्तव, पटना सिटी

०००

नवनीत मार्च-८८ अंक में प्रकाशित सामग्री बहुत रुचिकर लगी। आपके संपादन में **नवनीत** निरंतर प्रगति की ओर अग्रसर है।

यहां **नवनीत** कठिनाई से ही प्राप्त हो पाती है, फिर भी इसे पढ़ने के लिए ग्वालियर से मंगाना ही पड़ता है।

–अतुलकुमार त्रिपाठी, डबरा, म. प्र.

०००

नवनीत के मार्च-८८ अंक में **गजेंद्रनाथ** चतुर्वेदी व शिवचरण चौहान के **सबैये** सीधे हृदय में समा गये। पुंडरीकजी के तुलसी के प्रति मुक्तकों की मुक्तकंठ से प्रशंसा करता हूं। अजय प्रसून का गीत 'सच कभी गांधी, कभी ईसा बना' इस अंक की उपलब्धि है।

आपका संपादन सनेही, महावीरप्रसाद द्विवेदी एवं देवीदत्त शुक्ल के स्तर का है। अब तो प्रशंसा करने में भी संकोच होता है, पर पत्र लिखे बगैर रहा भी नहीं जाता।

–अरुण नागर, उरई, उ. प्र.

०००

नवनीत का अप्रैल '८८ का अंक पढ़ा। यह अंक ज्ञानवर्द्धक और संग्रहणीय है।

संपादक महोदय का लेख 'राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी' बहुत ही रोचक है। हम सभी गुनगुनाते रहते हैं।

चल पड़े जिधर दो डग मग में,
चल पड़े कोटि पग उसी ओर।

मैं भी राष्ट्रकवि को शत-शत नमन करता हूं। 'अथाह लालसा' (कविता), 'एक कठपुतली' (कहानी) अच्छी लगी।

नये लेखकों के लिए संपादक महोदय को एक स्वतंत्र मंत्र देना चाहिये ताकि भारत में पनपती साहित्य सृजन की रुचि **ननीवत** के माध्यम से फले-फूले।

जिंदगी में जीत का मार्गदर्शक है नवनीत।
जीवन में आस्था का गीत है नवनीत।

–अमरेंद्रनाथ 'अरुण',
मुजफ्फरपुर-८४३

नवनीत

संस्थापक कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल नेवटि
नवनीत : स्थापना १९५
संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग } किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ३७, अंक ५
मई १९८

पत्र-वृष्टि	... ...
रवींद्रनाथ ठाकुर और चित्रकला	डा. हरिदत्त भट्ट 'शैलेश'
केला : मुख्य भोजन बनाइये	सत्यकाम विद्यालंकार
भारतीय वैज्ञानिक और आइंस्टीन के सिद्धांत	हरि
ग्रीष्म ऋतु का अमृतफल खरबूजा	नृसिंह देव अरोड़ा
मासिक भविष्यफल : मई १९८८	पं. वी. के. तिवारी
इतिवृत्तक (उड़िया कहानी)	डा. प्रतिभा राय
प्रार्थना	... ...
त्याग से पाप का मूलधन चुकता है	अरविंद मिश्र
भारतीय संगीत का आध्यात्मिक पक्ष	महेंद्र सिंह लालस
आंतरिक प्रक्षेप पथ (कविता)	प्रकाश दुबे
आकाश होता (कविता)	कु. ममता त्रिपाठी
कथा राम की, व्यथा मानव की	हरींद्र दवे
स्वामी अखंडानंदजी से वार्ता	जयंत कृष्ण दवे
आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी	डा. दुर्गाशंकर मिश्र
जापानी भविष्यवक्ता मुराकामी	हंस
मध्याह्न (कविता)	रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'
मेरा संघर्ष भरा जीवन	शैलकुमार जैन
मोहभंग (कहानी)	राजेंद्र परदेसी

ग़ज़ल	जहीर कुरेशी	७३
मुंशीजी : महान साहित्यकार	विष्णुप्रसाद त्रिवेदी	७४
मजाक के साथ मजाक	हरि	७८
जहां कौरव-नरेश दुर्योधन की पूजा होती है	डा. शिवानंद नौटियाल	८३
'न सखि क्रिकेट . . . न सखि मुकदमा !'	के. पी. सक्सेना	९७
गफ्फार खां : देश-प्रेम और कुरबानी की कहानी	पी. डी. टंडन	१००
चुप्पी (तिब्बती कहानी)	जामयाङ्-नोर्बू	१०४
नबी बख्श फलक	बद्रीनारायण तिवारी	११३
वही मोड़ (कहानी)	लक्ष्मीनारायण श्रीवास्तव	११६
अलौकिक दिव्य फूलों की घाटी	सुधीर शाह	१२०
श्रम की महत्ता	गौतमकुमार दास	१२६
गीत	जवाहर इन्दु	१२८
ग्रंथ-लोक	डॉ. घोष, डॉ. पांडेय, डॉ. मिश्र, 'अरुण', मिश्र,	१२९
ऐसी वफादार थी लक्ष्मी कुट्टी (बालकथा)	बाल मुकुंद	१३६
सांस्कृतिक मंच	. . . .	१३८
दो क्षण हंस न लें ?	सुरेंद्र अग्निहोत्री	१४४

आवरण-चित्र : निहालचंद जैन

चित्र-सज्जा : ओके, शेणै, भाऊ समर्थ, टी. राणा, दिनेश सिसोदिया, डा. भटनागर, एम. चंदर

कार्यालय : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई-७   फोन : ८११४४६२

चित्र :
डॉ. विष्णु भटनागर

रवींद्रनाथ ठाकुर और चित्रकला

□ डॉ. हरिदत्त भट्ट 'शैले

रवींद्रनाथ ठाकुर के जीवन में अचानक एक नया मोड़ आया और कवि की लेखनी यकायक कलाकार की तूलिका बन गयी। अपने जीवन के ६७ वें वर्ष में गुरुदेव ने चित्रकला क्यों अपनायी, यह भी एक अनबूझ पहेली है, क्योंकि जो व्यक्ति अपनी साहित्यिक कृतियों से जन- का प्राणवल्लभ बन गया था, जि दिग्दिगंतव्यापिनी विराट दृष्टि ने सु चकित कर दिया था, जिसकी बहु प्रतिभा की छाप लोक-मानस पर लग थी, जिसकी सूक्ष्मातिसूक्ष्म अनुभूतियों सारे विश्व को विस्मित कर दि था, जिसकी अमर स्वर-लहरियां ज जन की कंठहार बन गयी थीं, उ अचानक ऐसा अप्रत्याशित परि क्यों हुआ ? उसके अंतस् की छट हट, रेखाओं, रंगों और रूपों में साकार होन लगी ? कुछ लोगों तो इसे 'बुढ़ापे की सनक' सम किंतु गुरुदेव ने पहले ही कई इस पृष्ठभूमि के पृष्ठ खोल थे—'मैं जो कुछ लिखना चाहता लिख न सका। जो कुछ कहना चा था, कह न सका। मेरे मन की मेरे मन में ही रह गयी।'

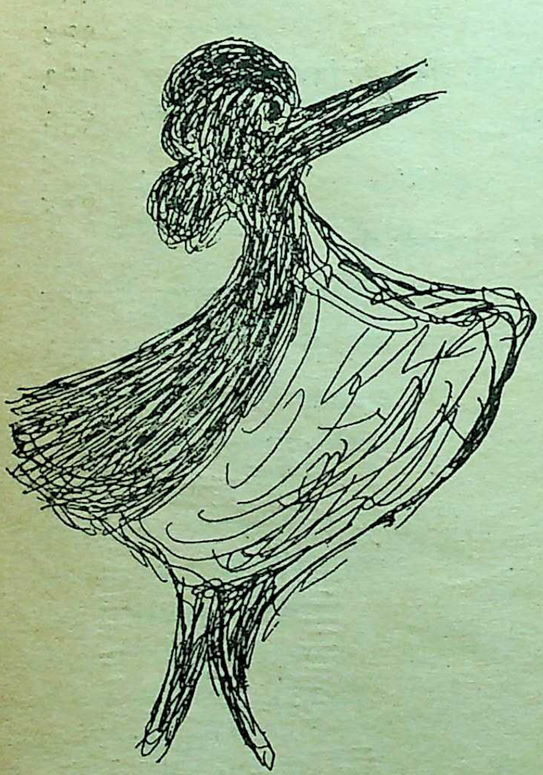

○○○

एक बार दीनबंधु एंड्रयूज ने देव से पूछा कि आपको ऐसी अद कलाकृतियां बनाने की प्रेरणा से मिलती है ? गुरुदेव उन चित्रकला की ओर विशेष झुक

थे और घंटों बैठकर अजीब-अजीब आकृतियां बनाते रहते थे। एंड्रयूज के पूछने पर गुरुदेव कुछ क्षण तो पलकें बंद किये अपने ध्यान में खोये-से रहे, फिर यकायक पलकों के साथ-साथ उनके अधर हिलने लगे और आकाश में उमड़ते-घुमड़ते बादलों की घटाएं देख उनकी स्वर-लहरियां गूंजने लगीं।

अपने एक गीत की कुछ कड़ियां गाते हुए उन्होंने कहा कि जब मैं आकाश में बादलों की अजीब-अजीब बनती-बिगड़ती आकृतियां देखता हूं तो मेरा मन उन्हें चित्रित करने के लिए छटपटाने लग जाता है। अपने आप ही हाथ चलने लग जाते हैं और वैसी ही बनती-बिगड़ती आकृतियां उन पर स्वतः खिंच जाती हैं।

वैसे गुरुदेव का अंतःकरण तो अनेक दिशाओं में प्रस्फुट हुआ। हिमालय की अनवरत धाराओं की तरह उनकी भाव-धारा नये-नये माध्यमों से फूट पड़ी। कवि, गायक, कथाकार, नाटककार, अभिनेता, आलोचक, विचारक, वक्ता—उनके सभी रूप एक दूसरे से होड़ लगाये बैठे हैं, फिर भी अभिव्यक्ति के लिए वह इस नये माध्यम की ओर क्यों झुके? इसके मुख्य कारण थे—बुढ़ापे में लिखते-लिखते जब गाड़ी अटक जाती थी या जब वह किसी शब्द को काटना चाहते थे तो उसे बिलकुल ही मिटा देने के लिए टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओं का ताना-बना बुन देते थे और इस प्रक्रिया में रेखाओं द्वारा कुछ अजीब-अजीब आकृतियां बनती-बिगड़ती रहतीं। जहां शब्दों की गाड़ी चरमराने-लड़खड़ाने लगती, वहां ये 'स्वयंभू' आकृतियां सांसें लेने लगतीं।

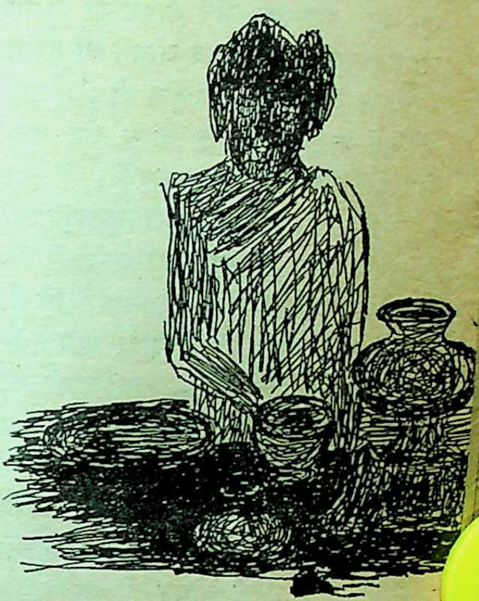

लेखन में पर्याप्त प्रसिद्धि पाने के बाद जब उन्होंने विश्वयात्रा की, उस दौरान उन्हें एक नये माध्यम की नितांत आवश्यकता प्रतीत हुई। गीतों की भाषा शब्दों और अक्षरों की सीमा में बंधी रहती है, विश्व के जन-साधारण उस सीमा को लांघने में असमर्थ रहते हैं। इसलिए उनसे मिलने के लिए एक ऐसे माध्यम की आवश्यकता है, जो सार्वभौम हो, सर्वसुलभ हो, सर्वबोधगम्य हो। जिसे प्रत्येक व्यक्ति बिना किसी दूसरे की सहायता से स्वयं समझ सके। इसी अनुभूति ने उन्हें चित्रकला की ओर अग्रसर किया। वैसे भी, उन्होंने

एक बार कहा था—'मेरे जीवन का प्रभात मधुर गीतों से हुआ, अब जीवन की संध्या रंगों की रेशमी डोरों में होने दो।' (माई मोर्निंग वाज़ फुल आफ सांग्स, लेट सनसेट डेज़ बी फुल आफ कलर)।

गुरुदेव की लगभग सभी कलाकृतियों को देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि उनके चित्र विशेष रूप से भाव-प्रधान ही हैं। उनमें संवेदनाओं की सच्चाई, भावनाओं की गहराई और मन के तानों-बानों की बुनायी मिलती है। रूप-शिल्प की ओर उन्होंने विशेष ध्यान नहीं दिया, क्योंकि कवि-हृदय होने के कारण उनका झुकाव भाव-शिल्प की ओर ही रहा। उनकी कलाकृतियां उनके जीवन की अविभाज्य अंग रहीं, क्योंकि वे कला का उत्स जीवन ही मानते थे। अभ्यासजन्य तथा श्रम-साध्य के पीछे यदि व्यक्तित्व की प्राण-दायिनी प्रेरणा-शक्ति न होगी तो वह कभी जीवंत नहीं होगी। कला-सृजन के लिए जीवन का विकास और व्यक्तित्व का पाथेय अपेक्षित है। एक प्रकार से व्यक्तित्व का प्रतिफलन ही कला है। यह सत्य है कि कलाकार प्राणिमात्र की अनुभूतियों, आकांक्षाओं और भावनाओं की अभिव्यंजना करता है, किंतु सबके प्रतिनिधित्व की पृष्ठभूमि उसका व्यक्तित्व ही है।

गुरुदेव की कला पहले तो एक रहस्य-सी लगती है, किंतु धीरे-धीरे एक-एक रेखा उस रहस्य को स्वयं ही खोल देती है। उन्होंने अपने चित्रों को बनाते हुए

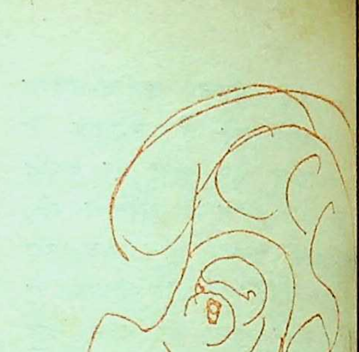

चित्रकला के परंपरागत नियमों का अ सरण नहीं किया। उन्होंने स्वयं लिखा मेरी चित्रकला के स्रोत निश्चित नि नहीं, परंपरा नहीं, अंकन के पिटे-पि रूप नहीं।

गुरुदेव ने कला के क्षेत्र में नये प्रयोग भी किये। पत्तों, फूलों और बेलों रस से रंग का काम लिया। कभी-क नारियल और सरसों के तेल का भी योग किया। उन्होंने कला के क्षेत्र में कि प्रकार का बंधन या परंपरा को नहीं नाया। मन में जो तरंग उठी, उसको

(शेषांश पृष्ठ ११ पर)

केला : मुख्य भोजन बनाइये

□ सत्यकाम विद्यालंकार

'न्यूयार्क टाइम्स' के १५ मई १९८७ के अंक में मेरीलैंड की हापकिन यूनिवर्सिटी के डाक्टर एलन वाकर ने अनेक वर्षों के अनुसंधान के बाद अपने लेख में लिखा है कि हमने पुराने खंडहरों में प्राप्त ऐसे मानव कंकालों के शरीर के सूक्ष्म परीक्षण के बाद यह नतीजा निकाला कि हमारे ऐतिहासिक काल के पूर्वज फलाहारी थे। वे कभी रोगी नहीं होते थे।

आज के जमाने में फलाहार पर यह आक्षेप किया जाता है कि यह केवल अमीर लोगों की खुराक हो सकती है। गरीब इस पर स्वस्थ-सक्षम जीवन यापन नहीं कर सकते। और यह भी कि इनमें विटामिन या अन्य पोषक तत्वों की पूरी मात्रा नहीं होती।

इस भ्रम का निवारण भी अनेक अमरीकी डाक्टरों ने किया है। उनका उल्लेख उन्हीं के शब्दों में यहां अमरीका की 'हेल्थ रिपोर्टर' के एक लेख से किया जा रहा है।

चित्र : दिनेश सिसौदिया

'अमरीका का १५० पौंड वजन का एक आदमी औसतन प्रतिदिन ७ पौंड खूराक खाता है। इसमें जितनी केलरीज होती हैं, वे शरीर-पोषण के लिए आवश्यकता से बहुत अधिक हैं। इतनी खुराक पूरी तरह पचती नहीं। इसलिए शरीर में विषाक्त तत्व पैदा करके रोगों को जन्म देती है।'

किसी भी बहुत मेहनत करने वाले १५० पौंड भारी मनुष्य को प्रतिदिन २३०० कैलरीज़ पोषक तत्व की खूराक की जरूरत होगी, जो ६ पौंड वजन के केलों के भोजन से प्राप्त हो सकती है।

मनुष्य के लिए पोषक तत्वों की सूची और केलों से प्राप्त पोषक तत्वों का अनुपात निम्नलिखित दिया जाता है –

प्रोटीन : केले में वे सब आठ प्रकार के अम्लीय तत्व हैं, जो शरीर के पोषण के

लिए आवश्यक हैं। १५० पौंड भारी मनुष्य को प्रतिदिन खुराक से २५ ग्राम प्रोटीन चाहिये। ६ पौंड भारी केलों में ३१ ग्राम प्रोटीन प्राप्त हो जाती है।

विटामिन (ए) : ६ पौंड केलों में ५३०० यूनिट विटामिन मिल जाता है। यह आवश्यकता से शत-प्रतिशत अधिक है।

विटामिन (बी. कम्पलेक्स) : ६ पौंड केलों में १.४ मिलीग्राम विटामिन (बी.) मिलता है, यह भी आवश्यकता से कुछ अधिक है। विटामिन बी–२ भी आवश्यकता से अधिक मिल जाता है।

नेसीन : साधारण भोजन से १५ मिलीग्राम और केलों से १९ मिलीग्राम-मिलता है।

विटामिन (सी) : साधारण भोजन से केवल २५ मिलीग्राम मिलता है; केलों से २५० मिलीग्राम।

कैल्शियम : अन्य प्रकार के भोजन से २०० मिलीग्राम मिलता है, केलों से २५० मिलीग्राम।

मेग्नीशियम : हम प्रतिदिन के भोजन से ३०० मिलीग्राम प्राप्त करते हैं, केलों से ९२४ मिलीग्राम प्राप्त हो सकता है।

फास्फोरस : प्रतिदिन का भोजन हमें ८०० मिलीग्राम देता है, केलों से ७२६ मिलीग्राम।

पोटेशियम : साधारण भोजन से प्रति दिन ३००० मिलीग्राम; और केलों से १०४०८ मिलीग्राम मिलता है।

लौह : अन्य भोजन से १० मिलीग्राम, केलों से २० मिलीग्राम।

जिंक, आयोडीन, सोडियम तथा अ धातु तत्व भी केलों में अन्य प्रकार भोजन से कम नहीं हैं।

प्राकृतिक जीवन-विज्ञान के समर्थ का अभिमत है कि हम केलों से पर्या पोषक तत्व प्राप्त कर सकते हैं। फि यदि केलों के साथ ताजी हरी सब्जि तथा अन्य मौसमी फलों का भी सेवन क लिया जाये तो हम कभी अस्वस्थ नहीं ह सकते और हमारी शारीरिक एवं मानसि शक्ति भी कभी क्षीण नहीं होगी।

जिन्हें खांसी, सिरदर्द, जुकाम, मा ग्रेन, कब्ज या इसी प्रकार की शिकाय रहती है, वे बिना कोई दवाई लेते हु केवल केलों के अधिक सेवन से पूर्ण स्वस्थ हो सकते हैं।

किंतु याद रखें केले पूरी तरह पके हों चाहिये। कच्चे या अधपके केलों का भोज सुपच नहीं होगा।

अन्न, मिष्टान्न, घी, तेल आदि को मु भोजन बनाने के स्थान पर केला, संतर अमरूद, अंगूर आदि फलों को भोजन ब वालों के लिए केला बहुत बड़ा वरदान है क्योंकि, एक तो केला हर मौसम में उ लब्ध होता है, दूसरे सस्ता होने के का इसकी उपज भी पौधा लगाने के बाद ब जल्दी प्रारंभ हो जाती है। स्वादिष्ट हो के साथ यह सुपच भी होता है।

एक बात ध्यान में रखनी उचित है केलों के साथ अंगूर और संतरा

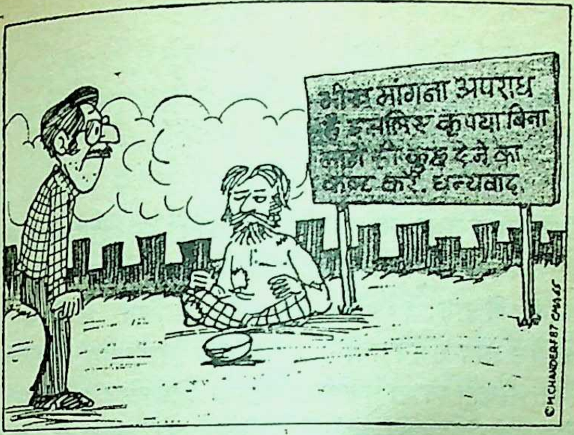
भीख मांगना अपराध है इसलिए कृपया बिना मांगे ही कुछ देने का कष्ट करें. धन्यवाद
©M.CHANDER'87

कार्टून : एम. चंदर

लेना चाहिये। केले के साथ खजूर, अंजीर, अमरूद, आम, सीताफल आदि अधिक गूदे वाले मीठे फल लें सकते हैं। संतरा, अनन्नास, मौसंबी, अंगूर आदि रसवाले और खट्टे फलों का सेवन केलों के साथ न करना ही अभीष्ट है।

लेख के प्रारंभ में अमरीका के नागरिकों की औसतन खूराक की मात्रा दी गयी है। यह भारत के नागरिकों के लिए बहुत अधिक है। स्वास्थ्ययुक्त दीर्घायु के लिए यथासंभव कम खुराक ही उपयोगी होती है।

भूख से कम खाना ही अच्छे स्वास्थ्य के लिए उत्तम होता है, इसका ध्यान रखिये। **—चंद्रेश्वर भवन,**

२/१७८ सायन पथ, बंबई-४०००२२

□

(पृष्ठ ८ का शेषांश)

ढंग से सामने रखा।

गुरुदेव ने बारह बरसों में लगभग दो हजार चित्र बनाये। सर्वप्रथम १९३० में पेरिस, बर्लिन, लंदन और न्यूयार्क में जब उनकी चित्र-प्रदर्शनियां हुईं तो सारे विश्व में तहलका-सा मच गया। भारत में १९३२ में कलकत्ता में पहली बार गुरुदेव के चित्रों की प्रदर्शनी हुई, फिर सन १९३३ में बंबई में। तीसरी १९५८ में देहरादून में।

सही मानों में, गुरुदेव ने, सभी कलाओं का सही प्रतिनिधित्व किया, और कला की सभी विधाओं में अपनी अनोखी सूझ-बूझ और अद्‌भुत प्रतिभा का चमत्कार दिखाया। कला के क्षेत्र में ही उनके परिवार में गगनेंद्रनाथ और अवनींद्रनाथ ठाकुर जैसे अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के कलाकार हुए। वैसे उनका रुझान स्वाभाविक ही था।

—शैलशिखर, मसूरी-२४८१७९

□

भारतीय वैज्ञानिक और आइंस्टीन के सिद्धां

□ हो

आइंस्टीन के सर्वमान्य तथा क्रांतिकारी 'सापेक्षता सिद्धांत' के अनुसार प्रकाश की गति, जो १ सेकंड में प्राय: ३००,००० किलोमीटर है, से तेज़ गति संभव नहीं है। अत:, उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

भारत के तीन युवा वैज्ञानिकों—सर्वश्री डॉक्टर दीपंकर होम (आयु : ३२ वर्ष), डॉक्टर अमिताभ दत्त (आयु : ३७ वर्ष) तथा डॉक्टर अमिताभ रायचौधरी (आयु : ३५ वर्ष) ने इस मान्यता को 'चुनौती' सी देते हुए कहा है कि 'अनेक विशेष परिस्थितियों में, जब भौतिकी की एक विशेष शाखा—क्वांटम भौतिकी—के नियमों का प्रयोग किया जाता है, इस गति में वृद्धि संभव है।'

जब इस सनसनीखेज सिद्धांत को अक्तूबर, १९८६ में ग्रीस में आयोजित अंतरराष्ट्रीय विज्ञान सम्मेलन में प्रस्तुत किया गया, तो विश्व भर के भौतिक विज्ञानियों में यह बहस आरंभ हो गयी कि क्या यह सिद्धांत आइंस्टीन के 'सापेक्षता सिद्धांत' को खुली चुनौती देता है, या स्वयं वैज्ञानिक ही अभी तक यह जानने में असमर्थ रहे हैं कि प्रकृति कैसे कार्य करती है।

तीनों भारतीय वैज्ञानिकों का क
है कि जो नियम उप-परमाणु ज
को संचालित करते हैं, उनका प्र
करके, आइंस्टीन के 'सापेक्षता सिद्धां
द्वारा निर्धारित गति-सीमा का उल्लंघ
किया जा सकता है। वे कहते हैं, '
क्वांटम भौतिकी के नियमों को उप-प
माणु जगत के एक दुर्लभ कण—काओं
के साथ संयुक्त किया जाता है, तो
ब्रह्मांड में 'भयानक' गतियां उत्पन्न हो
सकती हैं, ऐसी भयानक गतियां, जिन
कल्पना स्वयं आइंस्टीन ने भी की
किंतु उन्हें असंभव माना था।'

तीनों का कहना है कि 'हमने आइं
स्टीन के 'सापेक्षता-सिद्धांत' को को
चुनौती नहीं दी है, अपितु उसे एक न
आयाम ही प्रदान किया है।' लेकि
प्रचार-माध्यमों ने उनकी इस धारणा
बावजूद, उनके सिद्धांत का प्रचार इ
रूप में किया, और कर रहे हैं, मानो उन्हों
सचमुच आइंस्टीन के सापेक्षता-सिद्धां
को चुनौती दी हो।

तो भी, इसमें कोई संदेह नहीं कि य
इन तीनों भारतीयों का सिद्धांत स
सिद्ध हुआ, तो वह 'भौतिकी के चेहरे

एकदम बदल कर रख देगा।' तब इन तीनों को उनके इस क्रांतिकारी सिद्धांत के लिये संयुक्त रूप से नोबेल पुरस्कार भी मिल सकता है। इस वर्ष, इटली में क्वांटम मिकेनिक्स फाउंडेशन से संबंधित एक अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में इस विषय पर विस्तृत चर्चा होगी, और तब यह निश्चित हो सकेगा कि इस सिद्धांत में कितना दम है।

तीनों वैज्ञानिकों ने अलग-अलग तरीके से इस सिद्धांत पर शोध आरंभ की थी, किंतु जब वे कई अंतरराष्ट्रीय सेमीनारों में मिले, तब उन्होंने मिलकर कार्य करने का निश्चय किया। डॉक्टर होम कलकत्ता स्थित बोस इंस्टीटय़ूट के भौतिकी विभाग से संबंधित हैं। डॉक्टर अमिताभ दत्त जादवपुर विश्वविद्यालय में प्राध्यापक हैं, और आजकल एक अध्येतावृत्ति पर शोधार्थ, एक वर्ष के लिये प. जर्मनी के दार्तमुंद विश्वविद्यालय में गये हुए हैं। डॉक्टर अमिताभ रायचौधरी कलकत्ता विश्वविद्यालय के विज्ञान-महाविद्यालय से संबद्ध हैं। दोनों अमिताभ 'हाय एनर्जी फिजिक्स' के विशेषज्ञ हैं, जबकि डॉक्टर होम 'क्वांटम भौतिकी' के विशेषज्ञ हैं।

तीनों अपने कार्य के बारे में कोई भी दावा करने से कतराते हैं। जब से 'न्यूयार्क टाइम्स' जैसे विश्वविख्यात पत्र ने उनके कार्य को अपने पाठकों के सामने बहुत बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत किया, तब से वे समाचार-पत्रों सहित सब प्रचार माध्यमों से दूर भागने लगे हैं। वे न अपने सिद्धांत की संभाव्यता के बारे में कुछ कहने को तैयार हैं, न इस बारे में कि यदि उनका यह सिद्धांत वैज्ञानिक प्रयोगों की कसौटी पर खरा उतरा, तो इसके क्या-क्या दूरगामी परिणाम निकलेंगे।

लेकिन, प्रोफेसर पेनरोज, प्रोफेसर वाइटमॅन जैसे अनेक विश्वविख्यात भौतिक-विज्ञानियों का कहना है कि उनके सिद्धांत के वैज्ञानिक प्रयोगों की कसौटी पर खरे उतरने की पूरी संभावना है, कारण, आइंस्टीन की इस मान्यता पर कि प्रकाश की गति से अधिक तीव्र गति संभव नहीं है, बहुत पहले से ही प्रश्नचिह्न लगा हुआ है। स्वयं न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण वाले सिद्धांत में यह तथ्य निहित है कि भौतिक संकेतों की गति प्रकाश की गति से तीव्रतर है। यह गति इतनी आश्चर्यजनक है कि उसे अकल्पित दूरियों को तय करने में एक पल भी नहीं लगता। आइंस्टीन ने ऐसी ही 'भयानक गति' को असंभव माना था।

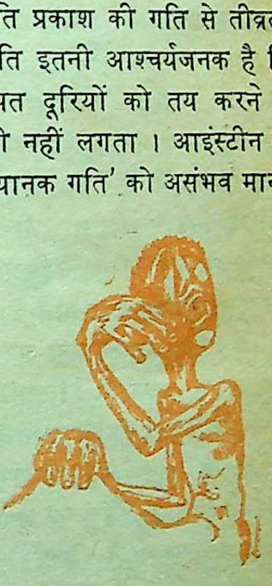

'लुप्त' सरस्वती राजस्थान में

'जोधपुर स्थित 'द सेंट्रल एरिड ज़ोन रिसर्च इंस्टीटयूट' से संबंद्ध वैज्ञानिक वैदिक काल की 'लुप्त' सरस्वती नदी का, जो राजस्थान होकर गुजरात के समुद्र-तट तक पहुंचकर, महासागर में मिली थी, पता लगाकर अब उसकी सहायता से राजस्थान व गुजरात के इन जल-विहीन भागों, जिनके तलों से होकर सरस्वती महासागर तक पहुंची थी, जल-सिंचित करने के महात्वाकांक्षी प्रयासों में जुटे हैं।

अब तक उन्होंने इस प्राचीन तथा विस्मृत नदी के अज्ञात मार्ग की शोध कर, उस पर ३० टयूबवैल लगाये हैं, जिनसे स्थायी रूप से २००० से ४०,००० लीटर पानी प्रति घंटे प्राप्त होकर इन सूखे तथा पानी के अभाव से ग्रस्त भागों को सजल व कृषि योग्य बना रहा है।

प्रख्यात भारतीय भू-आकृतिज्ञ श्री विमल बोस ने अपने सहायकों की सहायता से १९७९ में भूगर्भ में छिपे सरस्वती के सारे मार्ग का पता लगाया था, जो वेदों में वर्णित उसके जल-मार्ग से काफ़ी मिलता है।

वैदिक काल में इस जल-मार्ग के आस-पास का भू-प्रदेश काफ़ी हरा-भरा था, जिसका श्रेय उस काल के इतिहासज्ञों के अनुसार सरस्वती नदी को ही जाता है। श्री बोस का कहना है, 'भूगर्भ में छिपी सरस्वती नदी आज भी इस भू-प्रदेश को हरा-भरा और जलमय कर सकती है। हमारी खोजों से यह भी पता चला है कि वैदिक काल से अब तक सरस्वती ने अपना मार्ग कम से कम पांच बार बदला है। आरंभ में यह शिवालक से कच्छ प्रदेश तक बहती थी, और वहां एक अन्य प्राचीन नदी लूनी उसमें आकर मिलती थी। शोध से हमें यह भी पता चला है कि कभी सतलज की एक शाखा शताद्रु भी सरस्वती में मिलती थी। हमारी शोधों ने हमें यह भी बताया है कि सरस्वती के प्राचीन जल-मार्ग के आस-पास अन्य 'लुप्त' नदियां भी वैदिक काल में बहती थीं। इनमें से अपाया नामक नदी का उल्लेख ऋग्वेद में कई स्थलों पर आया है।

संवत्सर की समाप्ति

२९ मार्च, १९८७ को संवत्सर का ६०-वर्षीय चक्र समाप्त हुआ था, और उसके अगले दिन से 'प्रभव नाम संवत्सर' के प्रथम वर्ष का श्रीगणेश हुआ था।

४०० वर्ष पूर्व, सोम देवाद्यन नामक भारतीय खगोलज्ञ ने 'कल्पतरु' नामक अपनी पुस्तक में इस ६०-वर्षीय चक्र का निर्धारण किया था, बृहस्पति ग्रह के पृथ्वी पर होने वाले अनेकानेक प्रभावों के आधार पर। पाश्चात्य खगोलज्ञ इन प्रभावों को 'जुपिटर एफैक्ट्स' के नाम से जानते हैं।

इस प्राचीन भारतीय खगोलज्ञ की मान्यता थी कि इस चक्रावधि के प्रथम २० वर्ष शुभ होते हैं, अगले २० वर्ष साधारण तथा अंतिम ३० वर्ष अशुभ। खास तौर पर, अंतिम चार वर्ष तो महा-अनिष्टकारी होते हैं।

बृहस्पति ग्रह हमारे सौर-मंडल का

सबसे बड़ा ग्रह है। वह बारह वर्षों में सूर्य की एक परिक्रमा पूरी करता है। ६० वर्षीय चक्रावधि में वह हर राशि पर पांच विभिन्न कोणों से उन राशियों वाले लोगों को अलग-अलग ढंग से प्रभावित करता है।

विगत संवत्सर के प्रथम बीस वर्षों में विश्व के शांतिप्रिय देशों ने मिलकर सारी दुनिया पर राज्य करने की महत्वाकांक्षा वाले जर्मनी देश को द्वितीय महायुद्ध में पराजित किया था। इस काल में महात्मा गांधी, पंडित नेहरू तथा सरदार वल्लभभाई पटेल जैसे नताओं ने भारत को स्वाधीन करने के लिए अनवरत संघर्ष किया, और पहले बीस वर्षों के अंतिम दौर में देश को आज़ादी दिलवायी।

द्वितीय महायुद्ध के बाद, सारे विश्व को मुद्रास्फीति ने प्रभावित किया, राष्ट्रसंघ ने जन्म लिया, विश्व के देश साम्यवादी तथा ग़ैर-साम्यवादी गुटों में बंटे, 'तृतीय विश्व' भी जन्मा, परमाणु तथा हायड्रोजन-बमों का निर्माण हुआ, मानव ने अंतरिक्ष पर विजय पायी, और तेज़ी से बढ़ते हुए औद्योगीकरण के कारण वायु तथा जल का बढ़ता हुआ प्रदूषण विश्व के लिए एक अभिशाप बना–'जुपिटर एफैक्ट्स' के कारण।

अंतिम ४ वर्ष –१९८३ से १९८६ तक–भारत के लिए अशुभ सिद्ध हुए–बृहस्पति के प्रभावों के कारण ही। पंजाब में आतंकवाद पनपा, श्रीमती गांधी की हत्या हुई। भोपाल में भीषण गैस-दुर्घटना हुई। एयर-इंडिया का कनिष्क विमान बम विस्फोट के कारण सागर में डूबा, आदि-आदि।

सूक्ष्म रोगाणुओं के कारण अपार हानि

कानपुर स्थित सुरक्षा-विभाग की वैज्ञानिक प्रयोगशाला से संबद्ध वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि अत्यंत सूक्ष्म रोगाणु, जिन्हें खुर्दबीन की सहायता से ही देखा जा सकता है, भूमि के अंदर बने स्टोरेज टैंकों, पानी की लाइनों तथा आधारशिलाओं को धीरे-धीरे कमज़ोर कर, अंत में उन्हें व्यर्थ बना देते हैं, और इस प्रकार देश की अपार आर्थिक हानि करते हैं।

इन रोगाणुओं पर काबू पाने के अचूक उपाय ढूंढ़ निकालने के लिए ये वैज्ञानिक शोधरत तथा प्रयत्नशील हैं।

भारतीय छोटे होते जा रहे हैं

काशी स्थित बनारस हिंदू विश्वविद्यालय की इन्स्टीटयूट ऑफ मेडिकल साइंसेस द्वारा आयोजित एक विचार गोष्ठी में अनेक चिकित्सकों तथा वैज्ञानिकों ने अपनी शोधों के आधार पर यह रहस्योद्घाटन किया कि १५ प्रतिशत भारतीयों का कद काफी कम है, और औसत भारतीय धीरे-धीरे छोटा होता जा रहा है। उन्होंने यह भी पता लगाया है कि ५० प्रतिशत भारतीयों के शरीर पर पर्याप्त मात्रा में गोश्त नहीं होता।

उनकी शोधों से यह भी ज्ञात हुआ है कि जिन महिलाओं का विवाह अल्पायु में हो

(शेषांश पृष्ठ १८ पर)

ग्रीष्म ऋतु का अमृतफल : खरबूजा

☐ नृसिंह देव अरो

देश के विभिन्न भागों में पाया जाने वाला खरबूजा कब्ज नाशक, तृप्तिकारक, बलवर्द्धक, वीर्यवर्द्धक, कफकारक, शीतल, पित्त और वात की वेदना को शांत करने वाला, मूत्रजनक और अत्यंत सुगंधित फल है। इस फल में विटामिन 'सी', कैलशियम, लोहा, फास्फोरस आदि जीवन के सभी उपयोगी तत्वों के साथ कैरोटीन प्रचुर मात्रा में पाया जाता है जिससे शरीर में विटामिन 'ए' बनता रहता है।

ग्रीष्म ऋतु में खरबूजा बाजार में खूब जोर-शोर के साथ आता है और सस्ता भी काफी होता है। टोंक (राजस्थान), लखनऊ-इलाहाबाद (उ. प्र.), होशंगाबाद (म. प्र.), जलगांव (महाराष्ट्र) आदि स्थानों पर तो ऐसे मीठे खरबूजे मिलते हैं, जिनकी प्रशंसा खानेवाला ही कर सकता है।

खरबूजे जैसे उत्तम, पवित्र और स्वादिष्ट सर्वसुलभ फल को प्रकृति ऐसे समय में उपजाती है, जब खूब गर्मी और लू होती है। इसे इस ऋतु में खाने से किसी तरह का रोग शरीर में नहीं रह सकता। अतः जहां तक संभव हो सके व जब तक सीजन हो तब तक खरबूजा तथा इसके बीज खाने चाहिये, क्योंकि हर चीज अपनी ऋतु में अच्छी लगती है और हितकारी भी रह है। खाने से दस-पंद्रह मिनट पूर्व, साबु खरबूजे को गीले-तर कपड़े में लपेटकर र देना चाहिए जिससे इसकी गर्मी, बाहर अ जावे। इसके खाने से शरीर में एकत्रि मल-दोष एकदम बाहर निकलने लगते हैं। तदनंतर शरीर की शुद्धि होने लग है, खासकर संग्रहणी और आंव के रोगि के लिये तो यह एक अमृत-फल है। पे की गर्मी तथा पथरी में खरबूजा अत्यं लाभप्रद रहता है। यह त्वचा के हर रो (विशेषकर अकौता में) हितकारी रह है। इसके खाने से एक ही नहीं अनेक रो ठीक हो जाते हैं। इसमें प्राकृतिक जलां अंश की मात्रा ज्यादा होने से मूत्र-नलिका खूब साफ हो जाती हैं और गुर्दे संबं रोग भी दूर हो जाते हैं। यदि माता को शिशु होने के बाद, मीठा-पका खरबूज दिया जावे तो उसके स्तन में दूध की मात्र में वृद्धि होती है। खरबूजे का गूदा हृद के लिए बड़ा शक्तिदायी रहता है। फलों की चीनी, मामूली चीनी की अपेक्षा सरलता पूर्वक पच जाती है।

परंतु ध्यान रहे कि खरबूजा खाने के तुरंत बाद पानी पीने से पेचिश या उल्टी होने की संभावना रहती है, अतः इ

खाकर एक दम पानी नहीं पीना चाहिये।

बीज के गुण

खरबूजे के बीज (मींगियां) भी मूत्रल तथा पोषण प्रदान करने वाले होते हैं। बीजों को कामोद्दीपक एवं वाजीकरण माना गया है। फोड़े को फोड़कर बहाने के लिए भी इनकी पुल्टिस काम करती है। विशेषकर ग्रीष्मऋतु में मींगियां ठंडाई में पड़ती हैं, जो स्वास्थ्य एवं मस्तिष्क के लिए लाभप्रद रहती हैं।

छिलके की विशेषता

खरबूजे के छिलके में कई क्षारतत्व होते हैं, जिनसे बहुत से रोग अच्छे हो जाते हैं। थोड़ा छिलके सहित खरबूजा खा लिया जाये तो पेट की अच्छी तरह सफाई हो जाती है तथा कब्ज दूर होता है। प्रायः वृद्ध लोगों के दांत नहीं होने से छिलके नहीं खाये जायें तो उसके लिए छिलकों को सुखाकर चूर्ण बनाकर प्रयोग करना चाहिये। छिलके में पोटाश लवण प्रचुर मात्रा में होता है, अतः इसका सूप बनाकर पीने से मूत्रल प्रभाव होता है और सामान्य नमक द्वारा रुका हुआ जल जैसे जलोदर आदि तेजी से निष्कासित होता है। यही नहीं बल्कि मूत्राशय के पत्थर को तोड़कर निकाल देता है।

खरबूजे के छिलके को दाल में डालकर पकाने से बड़ा सुपाच्य एवं स्वादिष्ट व्यंजन बनता है। सामान्यतः अलग से भी इसकी सब्जी स्वादिष्ट बनती है। वैसे कच्चे खरबूजे की सब्जी बनायी जाती है, जो बड़ी रुचिकारक एवं पाचक होती है। इस प्रकार खरबूजे का प्रत्येक भाग खाद्य के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक डा. किशन लाल तो खरबूजे द्वारा काया-कल्प करके रोगियों को ठीक कर देते थे। वे तो लोगों को खरबूजा खाने की सलाह देते हुए कहते थे कि इसमें ऐसे गुण विद्यमान हैं जो संतरा, मौसमी, अंगूर आदि महंगे फलों में नहीं मिलते।

संक्षेप में खरबूजा मूत्रज, बलवर्धक, कब्ज दूर करने वाला, शीतल, वीर्यवर्धक, उन्माद का नाश करने वाला है। यह पसीना लाता है, पेशाब को साफ करता है। दूध को बढ़ाता है।

जलोदर, पीलिया में भी उपयोगी है। यह पेट की गर्मी और खराबी निकालता है। गुर्दे के रोगों को मिटाता है। पथरी को निकाल देता है। सीने का दर्द और यकृत की सूजन मिटाता है। गले की जलन दूर करता है।

देहातों में जहां आम तौर से फल उपलब्ध नहीं होते वहां खरबूजा तो मौसम में सब जगह ही मिल जाता है। ग्रामीण जन खरबूजे के साथ रोटी खाते देखे जाते हैं जो अनुकरणीय है। और यह सर्वमान्य तथ्य है कि मौसमी फल खानेवालों में बुढ़ापे तक चुस्ती-फुरती और स्वास्थ्य की कमी नहीं होती।

—चौक सौदागर मोहल्ला,
अजमेर, राजस्थान

□

जाता है, उनके बच्चे शारीरिक तथा मानसिक दृष्टि से पूर्णतया विकसित नहीं होते।

जड़ी-बूटियों से बनी कीटनाश दवा

भोपाल में हुई भीषण गैस-दुर्घटना के बाद जिन अनेक वैज्ञानिकों का ध्यान जड़ी-बूटियों से बनी कीटनाशक दवाओं का आविष्कार करने की ओर गया है, उनमें पूना के एक वैज्ञानिक एम. एन. सुखात्पे का नाम सबसे पहले ज़हन में आता है। वे एक ऐसी दवा का निर्माण भी कर चुके हैं।

पूना स्थित 'हाई एक्सप्लोसिक फैक्टरी में एक रसायन-शास्त्री की हैसियत से कार्य करने वाले सुखात्मे के मन में ऐसी दवा बनाने का विचार तब आया, जब उन्होंने एक दिन देखा कि एक गाय ने जमीन पर सुखाने के लिये डाली गयी दो किलो राई खाकर प्राण त्याग दिये। इसके कुछ समय बाद उन्हें अपनी फैक्टरी की प्रयोगशाला में राई, लहसुन और अदरक पर प्रयोग करने का अवसर मिला। इन प्रयोगों के आधार पर उन्होंने एक ऐसा मिश्रण तैयार किया, जिसमें जीव-विषाक्तता अत्यल्प थी। उन्होंने अपनी इस दवा का नाम अपने देश के नाम पर 'इंडियारा' रखा है, और उन्हें उसके निर्माण के लिए एक अस्थायी लायसेंस भी प्राप्त हो चुका है।

प्रयागों से सिद्ध हुआ है कि जहां इंडियारा का छिड़काव किया जाता है, वहां एक घंटे बाद आधे के करीब कीटाणु समाप्त हो जाते हैं, और शेष को समाप्त होने में कुछ घंटे और लगते हैं। कहीं भी ऐसी स्थिति नहीं आती, जिसके परिणामस्वरूप, यह दवा निष्प्रभावी सिद्ध हुई हो, या डी. डी. टी. की भांति कीटाणु उससे प्रभावित होना बंद कर दें।

वर्षा औच बाढ़ की भविष्यवाणी संभव

क्या आप इस बात पर आसानी से विश्वास कर लेंगे कि मध्य भारत में आने वाली बाढ़ की शुरुआत दक्षिण चीन सागर में होती है, और तिब्बत का मौसम गंगा का जल-स्तर निर्धारित करता है?

आप विश्वास करें या न करें, किंतु भारतीय वेधशालाओं के भूतपूर्व महानिदेशक, ८०-वर्षीय डॉक्टर सी. रामास्वामी इस बात में पक्का विश्वास करते हैं। उन्होंने १९२३ से लेकर १९ तक आयी भारतीय बाढ़ों का वैज्ञानिक अध्ययन कर यह मत प्रतिपादित किया है कि 'मौसम अंतरराष्ट्रीय सीमाओं को नहीं मानता, और मौसम की अचूक भविष्यवाणी पड़ोसी देशों से उनके यहां के मौसम की सही जानकारियों के आधार पर ही की जा सकती है।'

अपनी पूर्वी सीमा पर हवाई हमला करने से पूर्व, चीनियों ने डॉक्टर रामास्वामी से विचार-विमर्श किया था, यह बात भी सच है।

ख़ैर, बात बाढ़ों की हो रही थी। अब

विस्तृत वैज्ञानिक शोध के आधार पर डॉक्टर रामास्वामी इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि 'बाढ़ों को रोकने के लिए जो भी योजनाएं बनायी जायें, उनमें कई बातों का ख़याल रखना जरूरी होगा। पहला–जलग्रहण क्षेत्र में वर्षण की मात्रा, बाढ़ को प्रवर्तित करने वाले साधन, आदि। जब तक इन बातों का खयाल नहीं रखा जायेगा, अमरीका से आयातित किये जाने वाले सुपरकंप्यूटर भी कोई खास मदद नहीं कर पायेंगे। इन सब बातों का ध्यान रखकर, सुपरकंप्यूटर की मदद से हम बाढ़ के प्रकोप को रोक कर अपार जन-संपत्ति की हानि को रोक सकते हैं। इस, प्रकार बचाया गया हर घंटा करोड़ों रुपयों की संपत्ति का नाश रोकने के अलावा लोगों तथा पशुओं के प्राणों की रक्षा करने में समर्थ हो सकेगा।

बाढ़ को प्रवर्तित करने वाले साधनों की खोज में हमें अपने देश की सीमा को लांघकर विदेशों की शरण में जाना होगा। महानदी तथा सौराष्ट्र की नदियों में आयी बाढ़ का कारण जानने के लिए हमें दक्षिण चीनी सागर की हलचल पर निगाह रखनी होगी। कोसी और ब्रह्मपुत्र में बाढ़ रोकने के लिए हमें तिब्बत के २०,००० फुट से अधिक ऊंचाई पर स्थित स्थलों पर होने वाले हिमस्खलनों पर नज़र रखनी होगी। डॉक्टर रामास्वामी बड़े ज़ोरदार शब्दों में कहते हैं कि 'हमारे पड़ोसी देशों का मौसम भारत की नदियों में बाढ़ लाने का मूल कारण है। उसका पता लगाकर, हम बाढ़ों को नियंत्रित कर सकते हैं। भारतीय द. प. मानसून का अपने आप में कोई पृथक अस्तित्व नहीं है, वह भारत के आसपास के परिवेश के मौसम का साधारण प्रसार मात्र है। गंगा के ऊपरी क्षेत्र में बाढ़ का जो प्रकोप प्रायः प्रति वर्ष देखने को मिलता है, वह निचली और माध्यमिक ऊंचाइयों पर अवतरित होने वाले मानसून की अंतःक्रियाओं का ही परिणाम है। मध्य भारत की नदियों में आने वाली बाढ़ों के लिये भी मुख्यतः दक्षिणी चीनी सागर की कम दबाव वाली लहरें ज़िम्मेवार होती हैं।'

टेकीओंस की प्रकाश की गति से तेज यात्रा

इस लेख के आरंभ में यह कहा गया था कि अब कुछ वैज्ञानिक आइंस्टीन की इस मान्यता पर प्रश्नचिन्ह लगाने लगे हैं कि कोई भी कण या पदार्थ प्रकाश की गति से तेज़ यात्रा नहीं कर सकता है। इटली के एक भौतिकविद् रेकामी का कहना है कि टेकीओंस नाम के कण प्रकाश की गति से अधिक गति से यात्रा कर सकते हैं। उन्होंने इन कणों के बारे में काफी शोध की है, और उनकी शोधों के परिणाम अनेक विज्ञान-पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हो चुके हैं।

श्री रेकामी का विश्वास है कि टेकीओंस का आविष्कार आइंस्टीन की मान्यता को चुनौती नहीं देता, सिर्फ़ उसमें एक नया आयाम जोड़ता है।

□

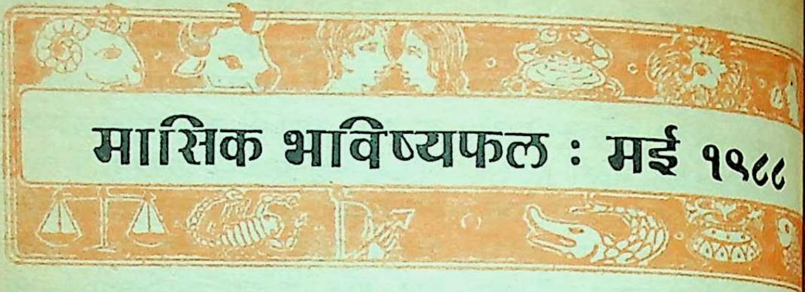

मासिक भविष्यफल : मई १९८८

□ पं. वी. के. तिवा

मेष :

(१४ अप्रैल–१३ मई)

आपको मिश्रित प्रभाव मिलेंगे। प्रवासयोग प्रबल है। धन की आकस्मिक व्यययोजना बन सकती है। वाहन व अग्नि से सतर्कता बरतें। मन उद्विग्न रहेगा। सुखद समाचार मिलेंगे। स्थायी लाभ के अवसर आयेंगे। परिवार के सदस्यों का वांछित सहयोग मिलेगा। संतान पक्ष से सुख-वृद्धि होगी। १५ मई के पश्चात उत्तरोत्तर अनुकूलता बढ़ेगी।

वृष :

(१४ मई–१४ जून)

इस माह सामान्यतः ग्रहों की सौजन्यता अपेक्षित नहीं है। स्वास्थ्य-बाधा के अवसर हैं। व्यस्तता व कार्य आधिक्य रहेगा। आकस्मिक प्रवास होगा। स्थान परिवर्तन एवं परिवार सुख में कमी होगी। शिक्षक एवं कलाकार वर्ग के लिए सामान्यतः अनुकूलता रहेगी। राजनीतिज्ञों की स्थिति कमजोर होगी। नये रोजगार अथवा विवाह की वार्ता होगी। व्य जोखिम न लें।

मिथुन :

(१५ जून–१६ जुलाई)

माह का पूर्वार्ध यश, लाभ, आ महत्वपूर्ण कार्य से यात्रा, सफलता अनुकूल अपेक्षित समाचार का सिद्ध हो इसके उपरांत उत्तरोत्तर मासांत तक सिक उत्पीड़न, विवाद, अनावश्यक कार्य व्यवधान, असहयोग स्थानांतर लंबी कष्टप्रद यात्रा के संयोग ब राजनीति में प्रतिष्ठा पर आंच आ स है। प्रशासक वर्ग चिंतित रहेगा। प एवं लेखक व्यस्त रहेंगे। परिवार सु न्यूनता प्रत्येक वर्ग के लिए रहेगी।

कर्क :

(१७ जुलाई–१५ अगस्त)

आपका यह माह कार्यों में सफ व्यवसाय में लाभ, नये दीर्घकालीन बंध, भविष्योपयोगी योजना एवं स संपत्ति से लाभ का सिद्ध होगा।

समाचार मिलेंगे। परिवार के सदस्यों के सौहार्द्र का अद्‌भुत समन्वय रहेगा। मांगलिक कार्य पर व्यय होगा। मनोबल के आधिक्य से कटुता उत्पन्न होगी। उत्तरार्ध में विवाद एवं अपव्यय से बचने का प्रयास करें। राजनीतिक उत्कर्ष होगा।

सिंह :

(१६ अगस्त–१६ सितंबर)

पूर्वार्ध में यात्रा के कारण व्यय एवं कष्ट रहेगा। अधिकारी वर्ग से पीड़ा होगी। परिवार एवं मित्रों का श्रेष्ठ सहयोग व सुख प्राप्त होगा। विवाद एवं विलंबित कार्यों में स्थिति आपके पक्ष में रहेगी। मध्य माह से यश व प्रभाव में वृद्धि दृष्टिगत होगी। धन-लाभ का सुयोग रहेगा। भाग्य की अनुकूलता दृष्टिगोचर होगी। अपेक्षित समाचार, महत्वपूर्ण वार्ता एवं उच्च वर्ग से लाभ की स्थिति बनेगी। पत्रकार, लेखक, शिक्षक वर्ग के लिए वर्ष के श्रेष्ठ समय की शुरुआत सिद्ध होगी।

कन्या :

(१७ सितंबर–१६ अक्तूबर)

१५ मई तक प्रत्येक क्षेत्र में प्रतिकूलता से मुकाबला करना पड़ेगा। कार्य-बाधा, व्यवधान, विवाद, आकस्मिक व्यय एवं परिवार सुख में कमी एवं आर्थिक निर्बलता प्रतीत होगी। समस्याएं सुलझेंगी नहीं। परंतु आप प्रयास करते रहें। १६ मई से मासांत तक क्रमशः प्रतिकूलता पर नियंत्रण होता जायेगा। रोग पर व्यय होगा। राजनीतिज्ञ, पत्रकार, कलाकार एवं व्यवसायी वर्ग के लिए समय विशेष प्रतिकूल सिद्ध होगा। नौकरी पेशा को स्थानच्युति एवं यात्रा कष्ट ही रहेगा। जोखिम न लें।

तुला :

(१७ अक्तूबर–१५ नवंबर)

आपको वाहन एवं अग्नि से सावधानी बरतना चाहिये। व्यवसाय एवं राजनीति में विशेष सतर्कता बनाये रखें। अपयश, रोग व शोक के अवसर उपस्थित हो सकते हैं। पत्नी की ओर से चिंता होगी। संघर्ष एवं परिश्रम की सुखद परणिति होगी। व्यय एवं लाभ के समान अवसर होने से असंतोष कम रहेगा। भाइयों से विवाद हो सकता है। कोई नये निर्णय या समझौतों पर कार्रवाई नहीं करना चाहिये। रोजगार में उद्विग्नता की स्थिति रहेगी।

वृश्चिक .

(१६ नवंबर–१५ दिसंबर)

१२ मई तक अपने प्रयासों से समय का श्रेष्ठ दोहन कर लेना चाहिये। इस अवधि में मनोवांछित अनुकूलता, यश, अधिकार, सज्जनों से मेल-मिलाप एवं सहयोग मिलता रहेगा। इसके उपरांत १३ मई से यात्रा, चिंता, रोग आदि बढ़ सकते हैं। व्यय में वृद्धि होगी। विवाद एवं उलझनों का ज्वार उठता प्रतीत होगा। संतान एवं परिवार के सदस्यों से मिलना होगा। किसी शुभ कार्य एवं भौतिक वस्तुओं पर व्यय होगा।

लेखक एवं प्रशासकीय वर्ग के लिए विशेषतः प्रतिकूलता के मेघ घने हो उठेंगे।

धनु :
(१६ दिसंबर–१३ जनवरी)

१५ मई तक पूर्व की स्थितियों में आंशिक सुधार होगा। स्वास्थ्य, परिवार एवं कार्यालयीन कार्यों में वांछित अथवा अपेक्षित स्थिति निर्मित करने में कठिनाई प्रतीत होगी। व्यय पक्ष सबल रहेगा। परंतु १६ मई से मासांत तक सुखद समाचार, स्थायी संपत्ति से लाभ, महत्वपूर्ण व्यक्ति से मिलन, पारिवारिक कार्यों में वांछित प्रगति, रोजगार व राजनीति में लाभ व उत्कर्ष के अवसर मिलेंगे। अधूरे प्रकरण निपटेंगे। विवाद में विजय मिलेगी।

मकर :
(१४ जनवरी–१२ फरवरी)

आपको प्रत्येक कार्य निष्पादित करने के पूर्व भली भांति मनन, चिंतन करना उपयोगी सिद्ध होगा। सूर्य, मंगल, शुक्र एवं बुध ग्रह की राहु के साथ कुदृष्टि आपके यश, लाभ, परिवार-सुख, सामाजिक कार्य पर रहेगी। राजनीति में जनसंपर्क न करें। व्यवसाय में नये अनुबंध हानिप्रद रहेंगे। रोजगार में कार्याधिक्य एवं दबाव के अतिरिक्त स्थान परिवर्तन की संभावना अथवा आकस्मिक यात्रा का योग बनेगा। पत्नी की ओर से चिंता बनेगी। धैर्य व संयम रखें।

कुंभ :
(१३ फरवरी–१४ मार्च)

मिश्रित प्रभाव धूप-छांव की तरह आपको इस माह दृष्टिगोचर होंगे। वाहन-सतर्कता व स्वास्थ्य का ध्यान रख। श्रम बढ़ेगा। परिवार के सदस्यों एवं कनिष्ठ वर्ग से सहयोग मनोनुकूल मिलेगा। सर्विस में कार्य बढ़ेगा। राजनीति में जनमानस पर प्रभाव बढ़ेगा। व्यवसायी वर्ग लाभ में रहेगा। स्वजनों से मिलना होगा। संतान पक्ष से संतोष रहेगा। मनोनुकूल समाचार मिलेगा। भौतिक सुख पर व्यय होगा। मांगलिक कार्य की योजना बनेगी।

मीन :
(१५ मार्च–१३ अप्रैल)

यह माह सुखदानुभूति एवं हर्षदायी सिद्ध होगा। विद्यार्थी वर्ग को विशेष सफलता मिलेगी। रोजगार में पद-प्रतिष्ठा बढ़ेगी। राजनीति में अधिकार व यश बढ़ेगा। व्यवसायी वर्ग को वांछित व स्थायी लाभ की संभावना प्रबल है। प्रयासों की परिणिति अपेक्षानुसार ही होगी। पत्रकार व कलाकार वर्ग का श्रेष्ठ समय सिद्ध होगा। उत्तरार्ध में विवाद एवं कटुता की पीड़ा से बचने के लिए वाणी संयम आवश्यक है। आर्थिक स्थिति श्रेष्ठ रहेगी।

इस मास के व्रतादि

चतुर्थी व्रत–५ मई
प्रदोष व्रत – १३ मई
वट सावित्री व्रत – १५ मई
अधिक मासारंभ–१६ मई
कमला एकादशी व्रत – २७ मई–२८ मई
अपराजिता एकादशी व्रत –१२ मई

–देवलोक कालोनी (सी.टी.ओ), बैरागढ़,
भोपाल, म.प्र.

□

उड़िया कहानी (बुद्ध पूर्णिमा पर विशेष)

इतिवृत्तक

मूल : **डॉ. प्रतिभा राय**
अनु : **डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मिश्र**

'सत्य का एक मात्र स्वरूप सत्य ही है— सत्य का कोई गोपनीय अर्थ नहीं है, प्रत्यक्ष में भी सत्य और अप्रत्यक्ष में भी सत्य इस तरह सत्य के दो विभाग नहीं है। सत्य को मुट्ठी में बांधा नहीं जा सकता। हे आनंद! तीन तरह के लोग सत्य और ज्ञान में गोपनीयता बनाये रखने का काम करते हैं। वे हैं स्त्री, पुजारी, अज्ञानी या असत्य सिद्धांतवादी।'

न्यग्रोध वन के प्रवेशद्वार पर तथागत की अनुमति की प्रतीक्षा कर रही गौतमी, भिक्षुणी यशोधरा, सुजाता, खेमा इत्यादि नारियों के हृदय पटल पर बुद्ध की यही वाणी गूंज रही थी।

मगध के राजा बिंबसार को अपने धर्म में दीक्षित करने के बाद राजगृह के वेणुवन विहार में बौद्ध श्रमणों के साथ बुद्धदेव ने कुछ दिनों तक निवास किया था। इसी दौरान पिता शुद्धोदन का हृदय पुत्र गौतम को देखने के लिए उद्वेलित हो उठा। गौतम के बाल सखा उदयन को वृद्ध राजा शुद्धोदन ने गौतम को लिवा लाने हेतु भेजा। पिताश्री के बुलावे पर तथागत अपने बीस हजार शिष्यों सहित कपिलवस्तु के न्यग्रोध उद्यान में आ पहुंचे। शाक्यवंशीय अनेक युवकों ने बुद्धदेव से पहली मुलाकात में ही शिष्यत्व ग्रहण कर गृहत्यागी संन्यासी बन गये। शुद्धोदन के द्वितीय पुत्र नंद ने राजपद से अभिषिक्त होने के ठीक पहले बुद्धदेव से दीक्षा ग्रहण कर संन्यास ले लिया। अंत में सात वर्ष का शाक्यवंशीय अंतिम उत्तराधिकारी राहुल ने भी हाथ में भिक्षा-पात्र लिये हुए पिता तथागत का मार्ग अनुसरण किया। वृद्ध पिता शुद्धोदन, अमात्य, और सभी बंधु परिजनों ने भी बुद्ध का शिष्यत्व ग्रहण किया। वे राजप्रासाद छोड़ न्यग्रोध वन में बुद्ध के साथ रहने लगे। खाली राजप्रासाद में माता प्रजापति गौतमी और अकेली यशोधरा का जीवन बिताने का आधार ही क्या रह गया!

वृद्धा माता गौतमी, वधू यशोधरा, दासी, परिचारिकाओं, आत्मीय महिलाओं सहित उद्यान के प्रवेशद्वार पर प्रतीक्षा कर रही हैं। दर्शन के लिए अनुमति मांग रही हैं। लेकिन तथागत ने निर्विकार रूप से प्रार्थना की उपेक्षा कर गौतमी को वापस भेज दिया।

उपेक्षिता गौतमी आंखों में आंसू भर न्यग्रोध वन के प्रवेशद्वार पर ही तथागत को प्रणाम कर सूने राजमहल की ओर चल पड़ीं। उनके पीछे निर्वाक स्पंदनहीन

खड़ी हैं शाक्यवंश की राजवधू, कपिलवस्तु की राजरानी यशोधरा। दुःख, विरह उपेक्षा और अभिमान की अग्नि में वर्ष-दर-वर्ष जलने के कारण उनका रूप सौंदर्य होमशिखा-सा पवित्र, उज्ज्वल, दीख रहा था–उसमें जला डालने की उग्रता नहीं है–खुद जल-जलकर दूसरे को आलोकित करने के समर्पण भाव से वह रूपशिखा स्थिर, निष्कपट, कोमल दिखायी दे रही है। लेकिन उस कोमल होमशिखा में भी एक तरह की उष्मता है–लगता है वह उष्मता अभिमान के वास्तविक अभियोग का है–जहां तथागत भी निरुत्तर हैं।

याद आती है–सब कुछ याद आती है, गौतमी को। कपिलवस्तु की पटरानी सहोदरा प्रिय भगिनी माया देवी पुत्र के जन्म के सातवें दिन जब चल बसीं, तब मौसी तथा छोटी रानी प्रजापति गौतमी ने उस बच्चे को गोद में उठा लिया था। मां की ममता देकर बच्चे का पालन-पोषण किया था। सिद्धार्थ को यह मालूम नहीं होने दिया कि वह मातृहीन है। सिद्धार्थ की शिक्षा, सेहत, मनोरंजन और अंत में विवाह की सारी जिम्मेवारी जननी गौतमी ने बड़े सुचारू रूप से निभायी थी। सिद्धार्थ की वास्तविक जननी गौतमी नहीं, बल्कि माया देवी है, यह बात नगर-वासी, महल निवासी, यहां तक कि राजा शुद्धोदन भी भूल गये। गौतमी के नामानुसार सभी उसे गौतम नाम से ही बुलाने लगे। जब राजा शुद्धोदन वृद्ध हुए और गौतमी राजमाता बनने का सपना दे लगीं, तभी एक दिन रात्रि की नि में गौतम राजमहल छोड़कर चले ग वही गौतम आज बुद्ध बनकर कपिल लौटे हैं। घुटा हुआ सिर, गेरुआ व तथागत के अंदर पुत्र गौतम को ढूंढ़ की व्यर्थ चेष्टा से प्रजापति गौतमी ह नहीं हुई थीं, बल्कि किसी अपूर्व आशा ज्योति से आदि से अंत तक का द्वार खु गया था, चेतना के क्षितिज में उदित-सू की तरह तथागत चमके थे। गौतमी घर त्याग दिया था बुद्ध का मार्ग अनुस करने के लिए। क्या सिर्फ़ नारी जाति तथागत विमुख हैं?

तथागत के जीवन में ऐसी कोई ना नहीं आयी, जिसने उन्हें उनके मार्ग च्युत करने की कोशिश की है–पुत्र साधना पथ में कहीं बाधक न बन यही सोच शायद माया देवी बेटे के ज के सातवें दिन चल बसीं। पत्नी होते हु भी यशोधरा ने बुद्ध का रास्ता नहीं रो बल्कि खामोश रहते हुए वे पति तथा की उपयुक्त सहधर्मिणी बनीं। हालां मंदबुद्धि 'मार' की कन्याओं ने गौतम तपस्या तोड़ने की काफी कोशिश की थ किंतु क्या यह बात तथागत नहीं जा कि मार की कन्याओं को 'मार' ही उनकी तपस्या भंग करने के लिए भेजा था क्या तथागत को यह मालूम नहीं है पुरुष के बिना सहयोग के नारी भ्रष्ट न हो सकती। क्या यह बात तथागत स

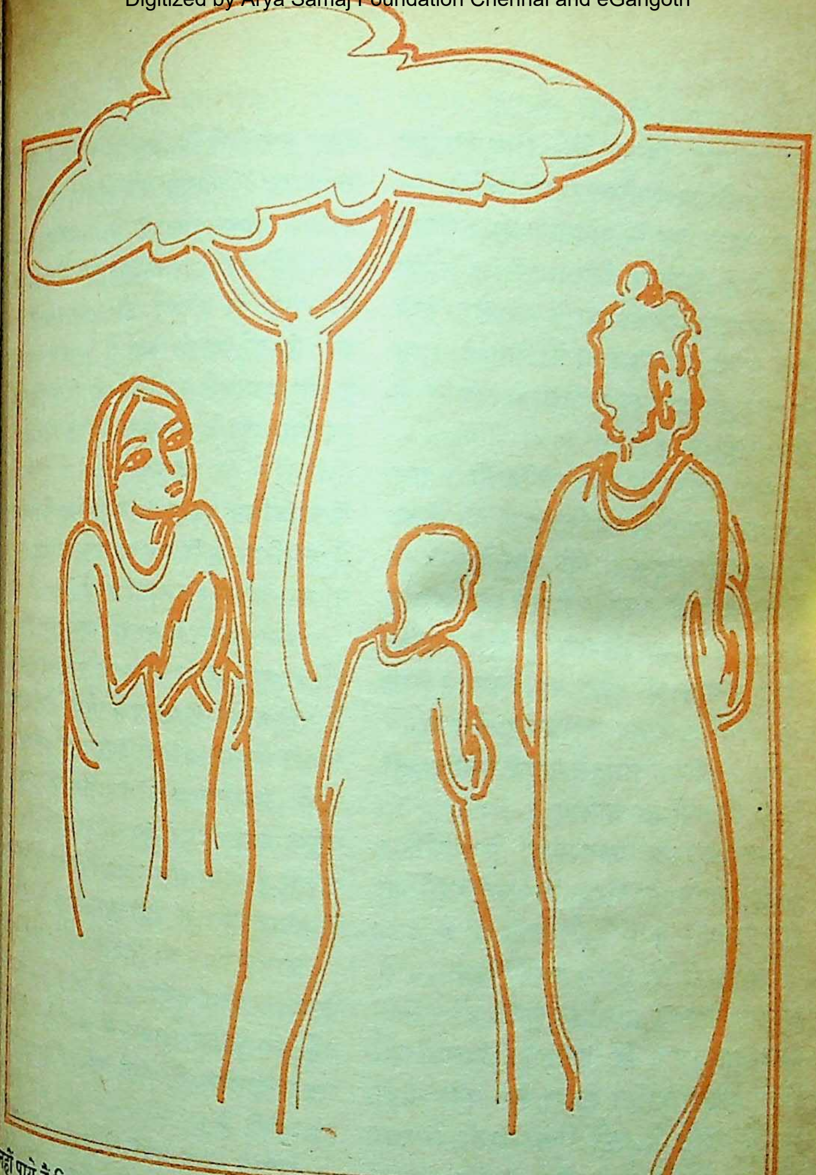

नहीं पाये हैं कि हर युग में पुरुष के साधना-पथ में 'मार' एवं 'मार कन्याएं', बाधा उत्पन्न करती हैं और अंत में बोधिसत्वों के आगे हार मान लेती हैं। क्या तथागत इस बात से अवगत नहीं हैं कि 'मार' एवं 'मार कन्याओं' को जीतने पर ही बोधिसत्वों को बुद्धत्व प्राप्त होता है। तो फिर तथागत नारियों को संघ की सदस्या बनाने से क्यों हिचकिचा रहे हैं?

उपेक्षिता यशोधरा के मन में कई प्रश्न हैं—कई भावनाएं हैं—जिनका कोई उत्तर नहीं है। भिक्षुणी संघ स्थापित करने के

लिए तथागत विमुख हैं – भिक्षुणी संघ में भी यशोधरा के लिए स्थान नहीं है।

यशोधरा एक के बाद एक प्रश्न पूछती जा रही हैं–निरुत्तर, निरुपाय भिक्षु आनंद से–क्या मनुष्य की सारी साधना, सारे कर्म, सारी तपस्या मृत्यु के लिए है, मृत्यु के बाद की अवस्था के लिए है–जीवन के लिए नहीं ?

स्वर्ग-प्राप्ति ही यदि मर्त्यवासी मनुष्य का परम लक्ष्य है, तो फिर मर्त्य की आवश्यकता ही क्या है ? यदि मृत्यु के बाद ही स्वर्ग की प्राप्ति होती है, तो फिर जीवन की आवश्यकता ही क्या है ? हे आनंद, यदि संन्यास ही मुक्ति का एकमात्र मार्ग है, तो फिर जीवन का प्रवाह कैसे संभव होगा ? मोक्ष के नाम से मानव समाज कहीं ध्वंस तो नहीं हो जायेगा !

यशोधरा के प्रश्न-वाणों से जर्जरित भिक्षु आनंद के लिए निरुत्तर रहने के सिवाय और कोई चारा नहीं था।

यशोधरा ने पुनः प्रश्न किया – 'हे आनंद, तथागत ने मानव जाति को जन्म–जरा–मृत्यु-चक्र से छुटकारा दिलाने के लिए बुद्धत्व प्राप्ति किया है। क्या नारी मानव जाति में नहीं गिनी जाती ? क्या तथागत किसी नारी-रहित मानव समाज की कल्पना करते हैं ?'

आनंद अब भी निरुत्तर हैं।

यशोधरा ने तीसरी बार प्रश्न किया–'हे आनंद, मेरे लिए तथागत का क्या संदेश है ? तथागत द्वारा गृहत्यागी संन्यास ग्रहण कर लेने के उपरांत राहुल के यशोधरा के जीवन की आवश्यकता लेकिन बालक राहुल के संन्यास कर लेने और राजमहल त्यागने के यशोधरा के जीवन की आवश्यकता क्या है–उद्देश्य ही क्या है ? क्या है कि तथागत नारियों को भिक्षुणी स्थापित करने की अनुमति नहीं दे नारियों ने दूर रहकर ब्रह्मचर्य पालन में चारित्रिक दृढ़ता नज़र नहीं आती– से सुरक्षित दूरी पर रहकर दहनीय है, कहना कहां तक उचित है ?

'सोना आग में तपकर दग्ध नहीं बल्कि शुद्ध होता है–उसी तरह बौद्ध में महिलाओं के प्रवेश करने से बौद्ध अपनी कामनाओं का दमन कर रहेंगे। नारी पुरुष को कमजोर नहीं बल्कि कमजोरियों का दमन करने में करती हैं–क्या यह बात तथागत ने जीवनानुभूति से नहीं समझी है ?'

आनंद फिर भी निरुत्तर हैं। के सारे प्रश्न तथागत के लिए हैं। देने की शक्ति आनंद में कहां ? जहां खामोश हैं, वहां पृथ्वी भी हो जाती है।

पिछले सात वर्षों से तथागत से के लिए जिन प्रश्नों को यशोधरा ने मन दुहराया है, उन्हें पूछने पर उत्तर पायेंगी ? तथागत के अंदर के प्रिय को तो वे ढूंढ़ ही नहीं पायी हैं।

कुमार सिद्धार्थ की यदि ऐसी ही

थी, तो फिर यशोधरा को पाने के लिए यशोधरा के पिता शाक्य दंडपाणि के आगे अपना पौरुष प्रदर्शित करने के लिए प्रतियोगी क्यों बने थे ? क्यों शाक्य वंश के अप्रतिद्वंद्वी योद्धाओं को प्रतियोगिता में बुरी तरह हराया था ?

वसंत ऋतु के उस रोमांचित क्षण में यशोधरा ने सिद्धार्थ की आंखों में जिस सपने का संकेत देखा था क्या वह झूठा था ।

०००

कपिलवस्तु राजप्रासाद का तीसरा खंड-सुसज्जित प्रशस्त कक्ष में राजसिंहासन पर अनिंद्य रूपवान तेजोदीप्त तरुण युवराज सिद्धार्थ विराजमान थे । शास्त्र, संगीत, कला, क्रीड़ा प्रतियोगिताओं में भाग लेने वाली सभी संभ्रांतवंशीय कुमारियों को युवराज अपने हाथों से पुरस्कार प्रदान करें । मंत्रिपरिषद से सलाह-मशविरा करके राजा शुद्धोदन ने यह व्यवस्था की थी । जिस तरुणी की ओर युवराज सिद्धार्थ आकर्षित होंगे, उसी से राजा शुद्धोदन उनकी शादी कर देंगे ।

कोली राजनंदिनी विदुषी, कलावती, शास्त्र-निपुणा, अनन्य रूपवती यशोधरा ही सिद्धार्थ का वैराग्य समाप्त करने को पैदा हुई है, यह बात महामंत्री बहुत पहले से जान चुके थे । उन्होंने जान-बूझकर यशोधरा का नाम प्रतियोगियों की सूची में सबसे अंत में रखा था एवं प्रतियोगियों की संख्या से पुरस्कार की संख्या एक कम रखी थी ।

ध्यानमग्न तपस्वी की तरह निरासक्त रूप से युवराज सिद्धार्थ यंत्रवत पुरस्कार वितरण कर रहे थे । किसी भी प्रतियोगी का रूप-यौवन उनके तंद्रा जड़ित तारुण्य तट पर एक छोटी-सी लहर तक उत्पन्न नहीं कर रहा था । अंत में रूप की आभा और व्यक्तित्व से समूचे कक्ष को प्रकाशमय कर राजनंदिनी यशोधरा पुरस्कार लेने हो लिए युवराज के सामने जा पहुंचीं ।

वसंत ने मानो एकाएक सिद्धार्थ की सुप्त तरुणाई को जगा दिया । विस्मित नजरों से वे यशोधरा को एकटक देखते रहे । उन्हें ऐसा लग रहा था जैसे अनंत-काल से उस नारी से उनका परिचय हो । यशोधरा भी चुप्पी साधे सिद्धार्थ के सौंदर्य को मूर्तिवत निहार रही थीं ।

कौन कहता है युवराज सिद्धार्थ नीरस, आवेगहीन, प्रेमी बनने के योग्य नहीं ? जो अपार्थिव प्रेम-धारा अकस्मात् यशोधरा के कुवांरे मन के पवित्र तट को भिगो रही है, सिद्धार्थ के दर्शन बिना तो वह कभी यशोधरा के जीवन में संभव ही नहीं हुआ ।

महामंत्री के इशारे पर सिद्धार्थ ने पुरस्कार की थैली के लिए हाथ बढ़ाया । थैलियां खत्म हो चुकी थीं । तो क्या यह अपूर्वसुंदरी राजकन्या खाली हाथ लौट जायेगी । रह-रहकर आकुल होने लगती थी राजनंदिनी । सिद्धार्थ की सम्मोहनी दृष्टि के आगे हाथ पसारे सबके सामने और कब तक वे खड़ी रह सकेंगी ?

सिद्धार्थ ने मधुर कोमल स्वर में कहा—'प्रतीक्षा करें, देवी, पुरस्कार समाप्त हो

गये हैं। भंडार से तुरंत मंगवाता हूं।'

'यशोधरा पुरस्कार की कामना नहीं रखती। क्या यह किसी सफल प्रतियोगी का अपमान नहीं?' यशोधरा ने निर्भीकता-पूर्वक कहा।

युवराज ने तत्काल अपने गले का रत्न-हार उतारकर यशोधरा के गले में पहनाते हुए कहा–'प्रियंवदे! यही तुम्हारा वास्तविक पुरस्कार है।' दोनों एक-दूसरे को अपलक निहारते रहे। ठीक उसी क्षण महानायक के तत्वावधान में पहले से सुसज्जित सैनिकों ने तूर्यनाद करते हुए युवराज का अभिवादन किया। युवराज की जय-जयकार से भवन की तीसरी मंजिल का कक्ष तक गूंज उठा। उल्लास की बाढ़ नगर के कोने-कोने तक फैल गयी।

उस समय यशोधरा नाम की स्वर्ग-लता से उदित अरुणिमा अनंत युगों के सपने को साकार कर रही थी। राजा शुद्धोदन ने अपने पुत्र के साथ यशोधरा के विवाह का प्रस्ताव शाक्यदंडपाणि को भिजवाया।

लेकिन शाक्यदंडपाणि ने शुद्धोदन के महार्घ प्रस्ताव को आदरपूर्वक ग्रहण नहीं किया। राजा का भूषण केवल रूप-गुण नहीं होता–राजा का भूषण है उसकी वीरता, उसका शौर्य। कुमार सिद्धार्थ दयालु, विनम्र, ज्ञानी, और रूपवान हो सकते हैं–परंतु वे अत्यंत सुकुमार हैं। वे यशोधरा का पाणिग्रहण करने योग्य वीर नहीं हैं। यदि वीरता की परीक्षा में वे उत्तीर्ण होंगे, तो ही शाक्यदंडपाणि दामाद के रूप में स्वीकार करेंगे। था यशोधरा के पिता का पलटकर गया प्रस्ताव।

इतने से ही यशोधरा का दु:ख सम हो जाता। शुद्धोदन अपने पुत्र का को स्वभाव व संसार विरागी मनोभाव जा थे। यशोधरा को पाने के लिए सि अपनी वीरता की परीक्षा देंगे व उत्तीर्ण होंगे, यह बात सपने से भी थी। यशोधरा की आशा छोड़कर सं शुद्धोदन अपने पुत्र के लिए किसी राजकन्या की तलाश करते।

यशोधरा क्या करती। शायद उ क्षण भर का दु:ख नये सपनों में खो होता। कुंवारी कन्याओं के जीवन में अक्सर होता है वही हुआ होता।

देवदत्त, आनंद, नंद, सुंदरानंद में से किसी भी योग्य राजकुमार के में वरमाला डालकर वह राजरानी गयी होतीं–स्वामी, सुहाग, सुख, संतान-संतति के बीच अपने नारीत्व सफल करतीं।

लेकिन दु:ख का अंत नहीं हो यशोधरा के जीवन में दु:ख की शुरु ठीक सिद्धार्थ से है। सिद्धार्थ ने पिताश्री से अनुरोध किया–'मुझे एक बार शाक्य वीरों से युद्ध कर पौरुष प्रदर्शित करने का अवसर दें

वह अवसर मिला और सिद्धार्थ हुए। यशोधरा को पाने की प्रति

मानो वे अलौकिक शक्ति और वीरता के अधिकारी बन बैठे । केवल शास्त्र ही नहीं, स्त्र विद्या में भी उन्होंने सबको पछाड़ दिया। गौतम के जन्म से पहले माया देवी ने जो सपना देखा था, पंडितों ने उसकी व्याख्या करते हुए कहा था–'यदि माया देवी का गर्भ-शिशु बूढ़े व्यक्ति, रोगी, मृत व्यक्ति और संन्यासी को नहीं देखेगा, तो वह पृथ्वी का एकमात्र चक्रवर्ती सम्राट होगा–किंतु यदि उसने उपरोक्त चारों को देख लिया तो वह गृह त्यागकर बुद्धत्व प्राप्त करेगा और संसार को प्रकाश का मार्ग दिखायेगा ।'

गौतम के संबंध में की गयी भविष्यवाणी राजा शुद्धोदन समेत कपिलवस्तु के प्रत्येक व्यक्ति को याद है–सभी गौतम की निरासक्ति, चिंतामग्न, एवं तपस्वी सुलभ गंभीर कैशोर्य पर गौर करते । खासकर शाक्यदंडपाणि का विचार है कि गौतम भावुकता तथा ज्ञान रूपी राज्य का सम्राट बन सकते हैं, परंतु कपिलवस्तु का सम्राट बनने जैसा कोई लक्षण उनमें नहीं है । राजा शुद्धोदन गौतम को संसार के दुःख, शोक, वैराग्य, जरा, व्याधि एवं मृत्यु इत्यादि घटनाओं से दूर रखने के प्रयास में ग्रीष्म, शीत और बसंत ऋतु के लिए र्गों के अमरावती जैसे तीन प्रासाद बनवाकर गौतम के चारों ओर नृत्य, गीत, विलास, आनंद का वातावरण बनाये ने के बावजूद जरा, व्याधि, मृत्यु रूपी य से उन्हें दूर नहीं रख पायेंगे। इसलिए संन्यास व गृहत्यागी होने की भविष्यवाणी गौतम के जीवन में एक न एक दिन ज़रूर सच होगी । अपनी अनन्य सुंदरी सुकुमारी कन्या का विवाह गौतम से करने का अर्थ है जान-बूझकर उसके भाग्य में विरह और दुःख को आमंत्रित करना । अतः राजा शुद्धोदन के प्रस्ताव को टालने के लिए यशोधरा के पिता ने इस तरह की परीक्षा का आयोजन किया था । किंतु उन्हें क्या मालूम था कि गौतम परीक्षा में विजयी होंगे और निरुपाय होकर यशोधरा को दुःख में धकेलने के सिवाय उनके पास और कोई चारा नहीं होगा ।

यशोधरा भी गौतम के जीवन की भविष्यवाणी से अवगत थीं । उन्होंने यह भी सुना था कि गौतम सांसारिक सुख, विलासिता के प्रति उदासीन रहते हैं । किंतु गौतम से आंखें चार होते समय उन्हें जिस प्रेमानुभूति का अहसास हुआ, वह तो झूठा नहीं था । उन्हें यह लगने लगा था कि गौतम के साथ क्षणिक दांपत्य जीवन बिताना किसी भी किशोरी की कामना हो सकती है । जिस दिन बड़े आडंबरपूर्ण ढंग से गौतम के साथ उनका विवाह हुआ, उसी दिन से उन्होंने सारे दुःख सहने के लिए खुद को तैयार कर पति-गृह में प्रवेश किया था ।

वह एक अविस्मरणीय अपूर्व दांपत्य जीवन था । पृथ्वी में शायद ऐसे दांपत्य प्रेम का उदाहरण नहीं है । यशोधरा को यह अनुभव हो रहा था कि विवाह का

लक्ष्य भोग नहीं—त्याग है; पाना नहीं, देना है; ग्रहण करना नहीं, समर्पण है। यही है दांपत्य जीवन का वास्तविक आनंद। विरह, दूरी, देशांतर, यहां तक कि मृत्यु भी दांपत्य प्रेम को मलिन नहीं कर सकता। गौतम के साथ पल भर का दांपत्य जीवन अनंत युगों के प्रेम को मात दे सकता है।

दांपत्य जीवन के हर पल में विरही पल का सामना करने के लिए यशोधरा खुद को तैयार कर रही थी; क्योंकि गौतम सुख के हर क्षण में न जाने किस अलग दुनिया में खो जाते थे। जिस दिन यशोधरा ने एक बुरा सपना देखने का वृत्तांत पति को सुनाया, गौतम ने निर्विकार रूप से कहा—'इस सपने का अर्थ है, मेरा भौतिक सुखों से दूर होने का समय करीब आ गया है।' यह सुन यशोधरा को ठेस पहुंची, लेकिन उन्होंने कोई विरोध नहीं किया।

अपने अनुभव से वे जानती थीं कि गौतम को अधिक दिनों तक पार्थिव सुख के बंधन में बांधकर नहीं रखा जा सकता। वे इंतजार कर रही थीं उस पल का। गौतम की सही पत्नी के रूप में खुद को समझाने का वही उपयुक्त मौका था। लेकिन गौतम ने यह मौका भी नहीं दिया। जब यशोधरा अपने नन्हें पुत्र के साथ किसी स्वप्न की दुनिया में खोयी हुई थी; गौतम यशोधरा की उपेक्षा कर, उसे पत्नीत्व की परीक्षा का अवसर दिये बिना उस प्रकाशमय पूर्णिमा रात्रि में यशोधरा के संपूर्ण जीवन को अंधकारमय करते हुए घर छोड़कर चले गये।

यह सच है कि गौतम की उपयुक्त
होते हुए भी यशोधरा उनकी सा
आंखें बंद करके स्वीकार नहीं कर
थीं। गौतम का 'दु:खवाद' ही यशो
जीवन का सबसे बड़ा दु:ख था और
धरा इस दु:खवाद का विरोध भी
थीं। सुख के हर पल को गौतम दु
दर्शन से विषादमय कर देते थे। सु
भी दु:ख मानकर वे वैराग्य भा
डूब जाते थे। यशोधरा के मन में
तार सवाल उठते—'यह मानकर कि
दु:खमय है, क्या सुख को भी दु:ख
कर जीवन को दु:खमय करना
जीवन का लक्ष्य है? दु:ख में सुख
उचित है या सुख में दु:ख? मृत्यु
का एक अटल सत्य है तो क्या
मिथ्या है? वार्द्धक्य अटल है तो क्या
मिथ्या है? जीवन, यौवन, क्षणस्था
सकते हैं—पर मिथ्या नहीं।'

कभी-कभी यशोधरा गौतम के
नित्य, अनित्य, जीवन, मृत्यु; सुख
के संबंध में गंभीर तत्व आलोचना
जातीं। उन्हें गौतम से हार मानने
नहीं, बल्कि गर्व और आत्मसंतो
है। वे जानती हैं कि गौतम भिन्न
से बने हैं—उन्हें अधिक दिनों तक
बनाकर नहीं रखा जा सकता।
संसार के लोगों के दु:ख दूर करने
उनका जन्म हुआ है। इस भाव
के साथ एक गौरवमय तात्विक

शामिल हो जाता—सारे अप्राप्तियों के बीच वे गौतम-पत्नी यशोधरा हैं—यही तो उनके जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

लेकिन गौतम उन्हें बिना बताये, आधी रात को घर छोड़कर क्यों चले गये? यदि गौतम अपने सिद्धांत में दृढ़ थे, तो भय किसका था? खुद का या यशोधरा का?

यदि गौतम यशोधरा को कहकर गये होते तो शायद यशोधरा छलछलायी आंखों से उन्हें विदा करतीं—या फिर दुःख सहने के लिए उसी क्षण बेहोश हो जातीं। क्या गौतम यशोधरा के आंसू और वेदना से विचलित होकर रुक जाते? क्या उन्हें खुद पर इतना भी भरोसा नहीं था, या यशोधरा पर भरोसा नहीं था?

एक सुंदर प्रभात में, सुख निद्रा से उठते ही जब किसी प्रियतमा पत्नी को यह मालूम पड़े कि उसका पति बिना कोई कारण बताये, कोई संदेश छोड़े, घर छोड़कर चला गया है, तब केवल विरह-दुःख ही नहीं, बल्कि नारीत्व के अपमान से भी उसका सिर झुक जाता है। यदि गौतम यशोधरा को कहकर गये होते तो विरह-दुःख को सहने का एक आधार होता—यशोधरा गर्व से सोच सकती थीं कि मेरे पति बुद्धत्व की प्राप्ति के लिए मुझसे दूर हैं एवं पति के बुद्धत्व प्राप्ति के मार्ग पत्नीत्व के सपनों को मैंने जान-बूझकर न्योछावर कर दिया है। लेकिन गौतम ने इतना तुच्छ कैसे समझा? पत्नी, पिता के दुःखों का सामना नहीं कर पायेंगे, यह सोच चुपचाप चले गये? कभी-कभी दुनिया कहती, गौतम निष्ठुर थे—हृदयहीन थे। पत्नी-पुत्र के प्रति निष्ठुर साबित हुए। लेकिन यशोधरा जानती हैं कि गौतम निष्ठुर नहीं हैं, वे अति कोमल हृदय के हैं। निष्ठुरता का सामना नहीं करना चाहते थे, इसीलिए यशोधरा को बिना बताये चले गये। किंतु यशोधरा का आरोप सिर्फ इतना ही है कि गौतम ने उन्हें अपना पत्नीत्व साबित करने का मौका क्यों नहीं दिया? स्त्री-जाति से इतनी विमुखता क्यों? जो दुःख का सामना नहीं कर सकता, क्या उसके लिए संसार का दुःख दूर कर पाना संभव है।

०००

उस दिन अनेक प्रश्न अनकहे रह गये। तथागत उस दिन यशोधरा के दरवाज़े पर खड़े थे। तथागत के घर छोड़कर चले जाने के बाद यशोधरा सिर मुड़वाकर गेरुए वस्त्र धारण कर सादगीपूर्ण संन्यासिनी का जीवन बिता रही थीं। दिन में एक बार शाकान्न खाकर, तृण शैय्या पर शयन कर तथागत की उपयुक्त पत्नी होने की साधना में सात वर्षों तक उनींदी रातें बितायी थीं। उन्होंने सोचा था, लौटकर गौतम उन्हें पत्नी की मर्यादा देंगे—बिना बताये घर छोड़कर चले जाने की कैफियत देते हुए उनका अभिमान दूर करेंगे।

यह सच है कि तथागत लौटकर आये भी, पर यशोधरा के पति गौतम कभी नहीं लौटे। यशोधरा के सारे अभिमान;

सारे प्रश्न, सारे आंसू तथागत के चरणों में खामोशी से समर्पित हो गये। उन्होंने सोचा था, तथागत असहाय विरहणी यशोधरा को अपने सीने से लगा लेंगे। अमृतमय वाणी से सांत्वना देंगे। लेकिन तथागत ने प्रव्रज्या देने की मुद्रा में निर्विकार स्वर में कहा–'देवी, चार महासागर का जल अधिक है या तुम्हारी आंखों का जल? इस संसार की सारी वस्तुएं अनित्य व क्षणभंगुर हैं। मनुष्य का जीवन दु:खमय है, जीवन की महायात्रा में जितना अश्रुजल तर्पण करना पड़ता है वह चार महासागरों के जल से अधिक है। तुम्हारे चहुंओर अंधकार है! जल से अंधकार का विनाश नहीं होता, बल्कि अंधकार और घना हो जाता है। तुम दिव्य प्रकाश की खोज क्यों नहीं करतीं?' यशोधरा निरुत्तर रह गयीं। जिन्हें पति समझकर आंसू बहा रही थीं, वे गौतम नहीं हैं–भगवान बुद्ध हैं, यशोधरा के दीक्षा-गुरु। सारे प्रश्न अनुच्चारित अनुत्तरित रह गये।

ooo

आज भी न्यग्रोध वन के प्रवेश द्वार से प्रश्नों का पहाड़ अगोरे वे लौट रही हैं।

कभी-कभी तथागत खामोश क्यों रहते हैं इस प्रकार?

जीवन के सारे प्रश्नों का उत्तर कहां है? या जीवन ही एक प्रश्न है, जिसका कोई उत्तर नहीं।

यशोधरा ने प्रश्न किया–'आनंद, क्या संघ में शामिल होने के लिए तथागत की अनुमति नहीं मिलेगी?'

'अनुमति नहीं मिलेगी, ऐसा तथा
नहीं कहा है।'

'नारी जाति से वे विमुख क्यों

'उन्होंने नहीं कहा कि वे विमुख

'तो वे नारी जाति से विमुख नहीं

'उन्होंने नहीं कहा विमुख नहीं

'हे आनंद, नारी जाति समाज से
नहीं है एवं संघ की शरण में आने का
कार व सामर्थ्य उसमें है, इस बारे में तु
क्या राय है?'

'मेरी राय के बारे में तथागत ने
नहीं कहा।'

'तो क्या संघ के सदस्य की रा
कोई मूल्य नहीं?'

'उन्होंने ऐसा नहीं कहा कि मूल्य नहीं

'तो क्या संघ के सदस्य की रा
मूल्य है?'

'उन्होंने यह भी नहीं कहा कि मूल

आनंद का उत्तर ही एक-एक नया
था। यशोधरा चुपचाप लौट आयीं।

पुन: वैशाली नगरी के महावन में
प्रवेश के लिए तथागत की अनुम
प्रार्थना करतीं सिर घुटाये, गेरुं
धारण किये, धूल-धूसरित अश्रुपूर्ण
यशोधरा एवं शाक्यवंशीय अनेक
प्रतीक्षारत हैं।

यह सच है कि यशोधरा और
के दु:ख से विचलित होकर आनंद
संघ स्थापित करने की दिशा में

(शेषांश पृष्ठ १४२ पर)

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः
भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन साहित्य, और संस्कृति का मासिक

प्रार्थना

असर्जि वक्वा रथ्ये यथाजौ धिया मनोता प्रथमा मनीषा ।
दश स्वसारा अभिसानो अव्ये मृजंतिवह्निऽसदनेष्वच्छ ।।

साम-पूर्वार्चिक ६-५-११

आज हमारा है अभिषेक ।
दशों दिशाएं सखियां बनकर, महासिंधु से स्वर्ण कलश भर,
नभमंडल से उतरीं भूतल पर, सबका अभिनंदन करतीं,
रक्तिम आज क्षितिज की रेख । आज हमारा है अभिषेक ।
आज मनीषा है मंगलमय, उल्लासों से पूर्ण हृदय,
पृथिवी नभ के अंतराल में, गूंज रहा स्वर जय जय जय ।
आज हर्ष का है अतिरेक । आज हमारा है अभिषेक ।
लोक-लोक के पुष्प सुगंधित, करने को श्रद्धा निज अर्पित,
लाते सभी देवता जग के, तू ही है सबका अभिनंदित ।
आज सागरों के अंतर में, भरा भावना का आवेग ।

[रूपांतर : सत्यकाम विद्यालंकार]

त्याग से पाप का मूलधन चुकता है

☐ अरविन्द मि

भोग और त्याग संसार में मानव के साथ ही उत्पन्न हुए। इनका आदि काल वही है, जो सृष्टि का है। भोग जीवन का एक पहलू है और त्याग दूसरा। जहां भोग है, वहां त्याग नहीं और जहां त्याग है, वहां भोग नहीं। भोग तब उत्पन्न होता है, जब इंद्रियां अपने विषयों में रुचि लेती हैं, उन्हें ग्रहण करती हैं और उनमें प्रवृत्त होती हैं। भोग के में सुख पाना और उसके वियोग में दु होना आसक्ति है। भोग की प्रवृत्ति म में स्वाभाविक है। भोग की आ बढ़ते ही भोग के सहचर लोभ, मद, मत्सर, काम और क्रोध की उ होती है। विषय भोग सुलभ होने पर लोभ, मद और मोह अपने आप

वनगमन द्वारा राम ने त्याग का आदर्श स्वीकार किया

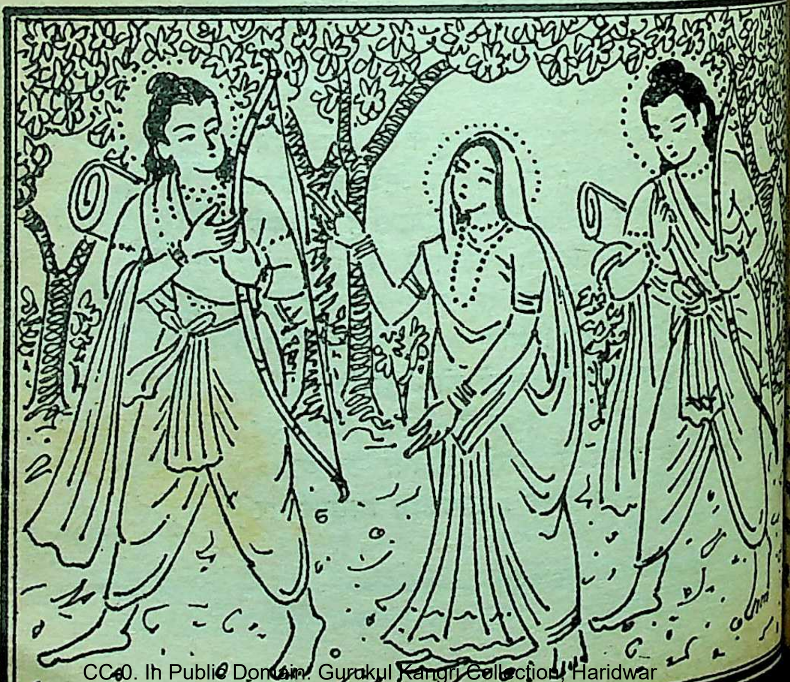

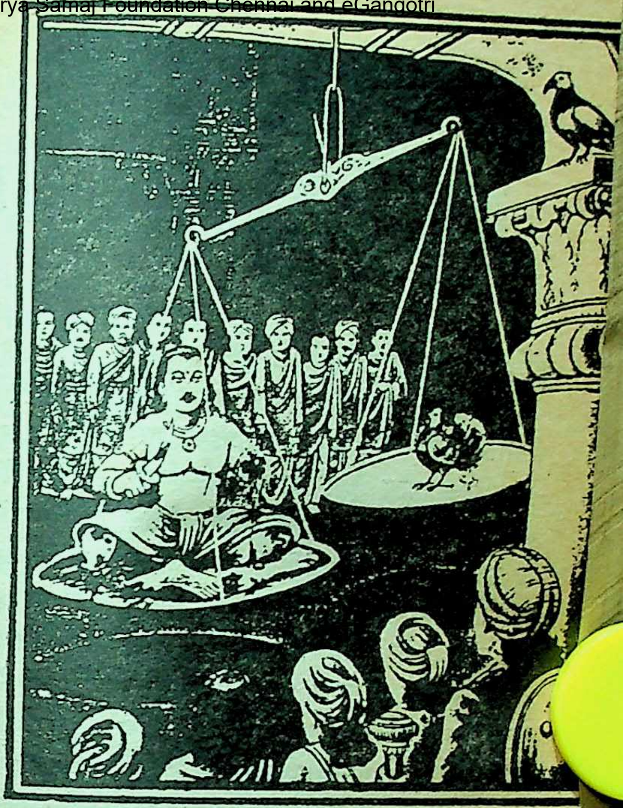

राजा शिवि कबूतर की रक्षा के लिए बाज को अपने शरीर का मांस देते हुए

घेर लेते हैं। जब ऐसे विषय भोग दूसरे को प्राप्त होते हैं और अपने को नहीं, तो मनुष्य मत्सर और क्रोध का शिकार होता है। भोग की प्रेरणाभूमि रजोगुण है और त्याग की मूलभूमि सतोगुण। त्याग के साथी हैं–संतोष, तृप्ति, शांति, प्रेम, आनंद आदि।

पौराणिक कथाओं से ज्ञात होता है कि इंद्र आदि देवता भी भोग से नहीं बच पाये। इंद्र को स्वर्ग-भोग की इतनी प्रबल लालसा रहती है कि वे महान से महान तपस्वी के संबंध में यही सोचते हैं कि वह इंद्र-पद छीन लेगा। तपस्वियों को तपोभ्रष्ट करने के लिए उन्होंने क्या-क्या षड्यंत्र नहीं रचे? दारुण देवासुर संग्राम इसी निष्कंटक भोग की लालसा का परिणाम था। सती सीता के हरण के पीछे रावण की भोग-लालसा ही थी। उसकी इस अनुचित भोग-लालसा का क्या परिणाम निकला– लंका और उसके साथी बड़े-बड़े निशाचरों का सर्वनाश! दुर्योधन राज्य और यथेष्ट सुख-भोग पाकर भी पूरी तरह संतुष्ट न हुआ। उसने षड्यंत्र रचकर भाइयों की संपत्ति को ही नहीं, महनीय चरित्र वाली सती द्रौपदी को भी अधिकृत करना चाहा। दुर्योधन की इस अनुचित अभिलाषा और अनुचित व्यवहार के कारण भयानक संग्राम हुआ। दुर्योधन को अपने किये का फल मिला।

कहना अनुचित न होगा कि भोग की लालसा मनुष्य में सरलता से शांत नहीं होती। मनुष्य जितना ही भोग की लालसा को पूर्ण करना चाहता है, उतना ही वह बढ़ती जाती है। ययाति ने शुक्राचार्य की कन्या देवयानी से विवाह किया। देवयानी के साथ शुक्राचार्य के शिष्य असुरराज

(शेषांश पृष्ठ ४६ पर)

नाद से ब्रह्म तक

भारतीय संगीत का आध्यात्मिक पक्ष

☐ महेन्द्र सिंह ला

संगीत की भारत में बड़ी सुस्पष्ट एवं प्राचीन परंपरा है। 'सामवेद' में संगीत-विज्ञान पर विश्व की प्राचीनतम् सामग्री संग्रहीत है। साम-गायन यज्ञ-शालाओं में होता था। धीरे-धीरे संगीत के स्वर सरस्वती के मंदिरों में प्रस्फुटित हुए। उस समय तक संगीत को मनोरंजन की वस्तु नहीं माना जाता था।

राजस्थान में नाथ संप्रदाय के भक्त (जसनाथी) अग्नि पर जब गीतों के साथ नाचते हैं, तब वे गीत विशेष रूप से वैदिक-कालीन तीन स्वरों (आधुनिक पांच स्वरों) के आसपास ही रहते हैं। इनकी गायन शैली साम-गायन के समान है। जसनाथियों के इस अनोखे अग्नि नृत्य में संगीत के तीनों अंगों का पालन होता है। वादन में होता है नगारों और सजीरों का प्रयोग तथा गायन में विविध राग रागिनियों में गाये जाते हैं सबद। नाच में तो विभिन्न मुद्राओं का प्रदर्शन होता ही है। जसनाथियों का मानना है कि पृष्ठभूमि का संगीत उन्हें आध्यात्मिक आवेश के शिखरों तक ले जाने में बड़ी भूमिका अदा करता है।

यद्यपि हमारे संगीत की लिपिबद्ध संरचनाएं नहीं होने से प्राचीन कालीन संगीत के बारे में हमें अधिक जानकारी
मिल पाती, परंतु इतना निश्चित् है
हमारे प्राचीन संगीतज्ञों ने बहुत पहले
मानव के कंठस्वर को सर्वांगपूर्ण ध्वनि
के रूप में स्वीकारा है। इसलिए भा
संगीत प्रधानत: कंठ स्वर के तीन
में निबद्ध है। इसी कारण हिंदू संगी
स्वर संगति (एक साथ उत्पन्न होने
स्वरों में पारस्परिक संबंध) की
स्वरमाधुर्य (आनुक्रमिक सुरों में
को प्रधानता दी गयी है। भारतीय
अंतर्मुखी, आध्यात्मिक और व्यष्टि
कला है, जिसका लक्ष्य वाद्य संगीत
चमक-दमक न होकर परमात्मा के
व्यक्तिगत ऐक्य (समरसता) की
लब्धि है। भारत के सभी विख्यात
की रचना भागवतों अर्थात् ईश
द्वारा की गयी है। इसलिए संगीत
लिए संस्कृत पर्यायवाची शब्द
है, जिसका अर्थ है 'भगवान् का गु
करने वाला व्यक्ति'।

स्वामी परमहंस योगानंद ने
संगीत का जिक्र करते हुए लिखा है,
तंन या संगीत-समारंभ, योग या
त्मिक साधना का एक प्रभावशाली

है, जिसमें गहन एकाग्रता तथा मूलविचार और बीज शब्दों के प्रति गंभीर मनोयोग आवश्यक है। चूंकि मनुष्य स्वयं 'नाद-ह्म' का मूर्त रूप है, उस पर ध्वनि का एक प्रबल तथा तत्काल प्रभाव पड़ता है। हमारा महान् धर्मसंगीत मनुष्य को आनंद-लावित करता है, क्योंकि वह उसके गुप्त तींद्रीय चक्रों में से एक को अस्थायी रूप संदित कर देता है। उन आह्लादकारी णों में उसे अपने ईश्वरीय मूल का क्षीण मरण आ जाता है।'

हमारे प्राचीन ग्रंथों में संगीत का माध्यम नाद माना गया है। यह माना गया है कि संपूर्ण जगत नाद के अधीन है, पांच महातत्त्वों (पृथ्वी, जल, तेज, वायु एवम् आकाश) में भी नाद है। जहां जीवन वहां नाद (ध्वनि) है, इसीलिए 'नाद ब्रह्म' कहा जाता है।

तेरहवीं शताब्दी के पं. शारंग देव ने 'संगीत रत्नाकर' ग्रंथ में नाद की उत्पत्ति के संबंध में कहा है–

नकारं प्राण नाभानं दकारमनलं विन्दुः।
जातः प्राणाग्निसंयोगात्तेन नादोऽभिधीयते।।

अर्थात् 'न' कार अर्थात् प्राण व 'द'

स्वामी हरिदासजी के आश्रम में तानसेन, पीछे खड़े हुए हैं सम्राट अकबर

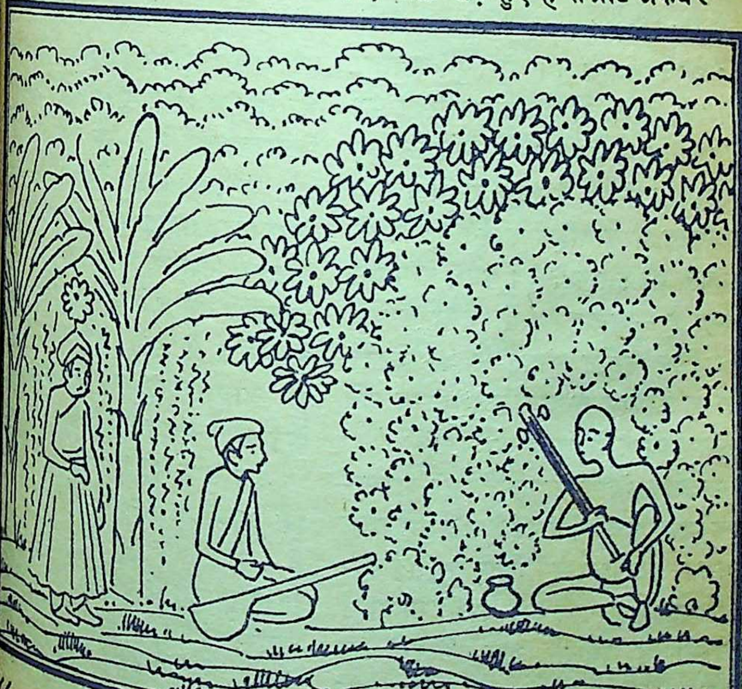

कार अर्थात् अनल-अग्नि, इन दोनों (प्राण' एवं अग्नि) के संयोग में नाद की उत्पत्ति होती है।

नाद मनुष्य के प्राण से लेकर प्राणांत (अग्नि) तक विद्यमान है। नाद ईश्वर की देन है और संगीतोपयोगी नाद ईश्वर तक पहुंचने का माध्यम।

हमारा इतिहास भरा पड़ा है उन नामों से, जिन्होंने ईश्वरोपासना के लिए संगीत का आश्रय लिया।

मथुरा, वृंदावन एवं नाथद्वारा आदि वैष्णव मंदिरों में पनपी विष्णुपदी गायकी तो अब लुप्त हो गयी है, परंतु दक्षिण के मंदिरों में कीर्तन या कृति गायन शैली आज़ भी विद्यमान है। संत पुरंदरदास, त्यागराज, दीक्षितार व श्यामा शास्त्री की संगीत कृतियों में धार्मिक पक्ष ही प्रबल है।

शास्त्रीय संगीत के साथ ही भारत के जन जीवन में सामूहिक कीर्तन एवं गीतों का महत्व भी कम नहीं है। समर्थ रामदास ने कहा है –'आत्मानंद में विघ्न न पड़े, इसके लिए कीर्तन संगीत में कीर्तनकार तीनों के माध्यम से रागोद्धार अवश्य करे पर आत्मोद्धार के लक्ष्य को न भूले।'

भारतीय संगीत की उत्पत्ति ही आध्यात्मिक मूल्यों के संदर्भ में हुई है, उसे आध्यात्म से अलग कर पाना इसीलिए असंभव है। सूर ने जहां गीत गाये वहीं नरसी मेहता ने सांवरिया से मिलने राग 'केदार' का सहारा लिया। नानक के साथ सदैव रबाब लेकर मरदाना चले तो मीरा के हाथ में

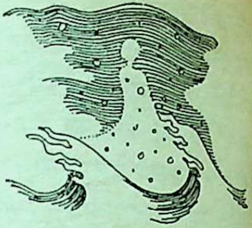

इकतारा रहा। चैतन्य महाप्रभु
लय में स्वमं को परमात्मा के
विलीन कर देते थे तो रामकृष्ण
को समाधिस्थ होने के लिए सुर
गया नाम ही पर्याप्त था।

भारतीय संगीत की आध्यात्मिक
को न सिर्फ भारतीय संगीतज्ञों,
प्रसिद्ध पाश्चात्य संगीतज्ञ यहूदी
भी महसूस किया है। पश्चिम के
गिटारवादकों में से एक जॉन
इसे 'शक्ति' मानते हैं। प्रसिद्ध
कलाकार तनाश खानुम ने कहा
'जितना स्वर्गिक और दिव्य
भारतीय संगीत में आया उतना
के संगीत में नहीं। वास्तव में
की आध्यात्मिक साधना भारतीय
के विशाल अंचल में दैदीप्यमान हो

इस तथ्य को नकारा नहीं जा
कि आध्यात्म भारतीय संगीत की
है। और यदि हम अपने संगीत
विशेषता को न बचा सके तो
हमारा संगीत मृतप्राय हो जायेगा।

–२ टी/ए, रेल्वे स्टेशन,
जि. जोधपुर,

□

आंतरिक प्रक्षेप पथ

— प्रकाश दुबे —

ध्यान की प्रक्रिया में
आवर्ती स्थलीय आयाम
लहरदार मरीचिका है।
स्थलीय प्रेक्षा का जाल
दृष्टिगत प्रस्तुतीकरण ही तो है।
भीतर के सेक्स्टेंट से
उच्चतर वांछा के
परिमापन का प्रयास
ज्ञान विभ्रम ही तो है।
मेरे भीतर की मौन कल्पना
अंत: प्रज्ञात्मक कल्पना है।
यह कल्पना अमूर्त व अक्षय है।
कुछ सतही कल्पनाएं
प्रकाश विकिरण की भांति
वर्ण क्रमीय है, मरीचिका है
मांसल निहारिका है।
मन की परिधि से बाहर
तीनों आयामों से निकलकर
आत्मनिष्ठ होकर जब
अनायास अंत: प्रेरित हो
अति मानसिक सत्ता का
अंतरिक्षीय रेखाचित्र खींचता हूं
तो आत्म उल्लास से अभिभूत हो
सूक्ष्म जगत में नर्तन करने लगता हूं।

—व्याख्याता भौतिक शास्त्र,
८/७ शास्त्रीनगर, रतलाम-४५७००१

. . . आकाश होता

— कु. ममता त्रिपाठी —

सबकी बांहों में,
अगर
आकाश होता
तो
कितना अच्छा होता !
अगर
जो भी टंगता
प्रथाओं की सलीब पर,
ईसा की तरह
उसे मसीहा का नाम मिलता।
कितना
अच्छा होता अगर
जो भी पीता जहर
दूसरों के
हितों के लिए
शिव है वही
सुकरात है वही
कोई उससे भी यह कहता !
कितना अच्छा होता अगर
जो भी तजती नगर, घर
साधिका की तरह
आस्था के लिए
उसे मीरा का मान मिलता।
कितना अच्छा होता अगर
सबकी बांहों में आकाश होता !

—१९३ श्यामलाल गली, मास्टर कन्हैया
लाल रोड, ऐशबाग, लखनऊ, उ. प्र.

सांस्कृतिक निरूपण–२०

कथा राम की, व्यथा मानव

हरीन्द्र

राम, सीता और लक्ष्मण को वन में छोड़कर अयोध्या के मंत्री सुमंत्र लौटते हैं, तो उन्हें अयोध्या 'निरानंदा' (आनंदहीन) 'निःशब्द' तथा 'शून्य' लगती है। सुमंत्र राम को वन में छोड़कर अकेले लौटे हैं, इस समाचार मात्र से अयोध्या के नगरजन आहत हो जाते हैं। राम की माताएं भी आपस में बातें करती हैं–

सहरामेण निर्यातो
विना राममिहागतः
(अ. ५७–२१)

राम के साथ यहां से गये थे : राम के बिना वापस लौटे हैं। राम को छोड़कर लौटना यह कैसी परिस्थिति है इसका सुमंत्र को अनुभव होता है। राम-बिना माताएं जीवित हैं, दशरथ भी जीवित हैं। सुमंत्र राम को लौटा लायेंगे, ऐसी आशा दशरथ को थी। किंतु सुमंत्र तो अकेले ही लौटे हैं और राम का संदेश महाराज को 'बाष्प-परिबद्धया' (अश्रुरुंधी वाणी से) कहते हैं–

'महाराज, राम ने आपको प्रणाम कहा है : माताओं को प्रणाम कहा है। कौशल्या से महाराज की सेवा करने की और भरत छोटा है, फिर भी राजा है यह याद रखकर भरत का आदर करने की सिफारि है।' राम की वाणी सौम्य है, लक्ष्मण कुछ भी मन में नहीं रखते। कहते हैं –

अहं तावन्महाराजे
पितृत्वं नोपलक्षये
भ्राता भर्ता च बंधुश्च
पिता च मम राघव
(अ–५८

'अब मैं महाराज में पिता के दर्श करता। मेरे लिए तो भाई, स्वामी बंधु सब राघव (राम) हैं।' 'जो देश निकाला दे सकते हैं, उन्हें रा मानें ?' ऐसा प्रश्न भी लक्ष्मण पूछ सुमंत्र कहते हैं : 'सीता तो अश्रु से कुछ बोल ही न सकी।' सुमंत्र ने से विदा ली उस दृश्य को इस तरह करते हैं –

तथैव रामोश्रुमुखः कृतांजलिः
स्थितोब्रवील्लक्ष्मण बाहु पा
तथैव सीता रुदती तपस्विनी
निरीक्षते राजरथं तथैव माम्
(अ–५८

लक्ष्मण की बाहु से रक्षित राम

हाथ जोड़कर खड़े थे। तपस्विनी सीता भी रो रही थीं। एक क्षण वे राजरथ को देख रही थीं, दूसरे क्षण मुझे।

सुमंत्र राम-विहीन अयोध्या का करुण वर्णन करते हैं। दशरथ सब सुनकर मूर्च्छित हो जाते हैं। होश में आने पर कहते हैं, 'राम के बिना मैं शोक समुद्र में डूबा हूं। कैकेयी समुद्र की अनल है। कुब्जा (मंथरा) का वाक्य 'महाग्रह' (विशाल मत्स्य) है। कैकेयी के दो वरदान समुद्र के दो किनारे हैं और राम का वनवास यह शोक सागर का विस्तार है।' ऐसे सागर से मुक्ति की आशा कैसे रहे?

कौशल्या आक्रोश में दशरथ को कटु-वचन कहती है। दशरथ क्षमा मांगते हैं तब कौशल्या फिर मृदु वचनों से दशरथ को सांत्वना देती है। दशरथ को नींद आती है, किंतु तुरंत ही उड़ जाती है।

मनुष्य ने जो दुष्कर्म किये हों, दुर्भाग्य के समय उसे उनका स्मरण होता है। सुख और यश में रमे दशरथ अपने यौवनकाल में किया एक अपराध लगभग भूल ही गये थे। अब पुत्र का विरह व्यथित कर रहा है तब दशरथ को याद आता है कि यौवन के मद में उन्होंने सरयू तीर पर हाथी सूंड़ से पानी पी रहा है, ऐसी आवाज सुनकर शब्दवेधी बाण चलाया था और वह श्रवण नामक युवक के मर्म में लगा था। श्रवण के अंध माता-पिता के पास दशरथ अपना अपराध कबूल करने और 'शाप या अनुग्रह जो कुछ मिले' स्वीकारने जाते हैं। श्रवण के पिता श्रवण के मृत देह को स्पर्श करके (देख नहीं सकते थे) जो कहते हैं उसे सुनकर महाभारत में उत्तरा ने परीक्षित के मृतवत्स रूप में जन्म के समय कहे हुए शब्द याद आते हैं। श्रवण के वृद्ध पिता कहते हैं:

नाभिवादयसे माघ
न च मामाभि भाषसे,
किं च शेषे तुं भुमौत्वं–
वत्स किं कुपितोहसि
(अ. ६४-३०)

वत्स, आज तुम मुझे प्रणाम नहीं करते; मेरे साथ बोलते नहीं। तुम हमसे नाराज हो? आज तुम धरती पर क्यों सोये हो? (उत्तरा ने कृष्ण को सूतिका गृह में आते देखकर मृत पुत्र को गोद में लेकर कहा था: 'वत्स, तुम धर्मज्ञ पिता के पुत्र हो फिर भी अधर्म का आचरण कर रहे हो, इसका तुम्हें खयाल नहीं? वृष्णि वंश के वीर स्वयं आकर खड़े हैं और तू उन्हें प्रणाम भी नहीं करता?)

श्रवण के पिता का विलाप भी हृदय-विदारक है।

तिष्ठ मा मा गमः पुत्र
यमस्य सदनं प्रति,
श्वो मया सह गंतासि
जनन्या च समेधितः
(अ. ६४-३६)

पुत्र, जरा रुक जा। आज यम सदन न जा। कल मेरे और अपनी माता के साथ ही चलना।

स्वयं पुत्रविरह की अग्नि में झुलस रहे हैं, तब दशरथ को खयाल आता है कि श्रवण के विरह में उसके माता-पिता का क्या हाल हुआ होगा । श्रवण के पिता ने दशरथ को भी 'उनकी तरह पुत्रविरह का अनुभव हो और उनकी तरह पुत्र-वियोग में तड़पकर मरे,' ऐसा शाप दिया था । दशरथ इस घटना को बिलकुल भूल ही चुके थे । इस क्षण वह सब याद आता है ।

दशरथ की वेदना अपार थी । कौशल्या के कटु वचनों का भार भी मन में था । उन्होंने वृद्ध और असहाय माता-पिता को पुत्र-वियोग करवाया था, यही घटना उनके स्मरणपट पर छा गयी और दशरथ ऐसे सोये कि फिर जागे नहीं । दशरथ की मृत्यु हो गयी है, यह जानकर तीनों रानियां वहां एकत्र हुईं । दशरथ के अवसान के बाद कौशल्या के प्रथम शब्द पतिविरह की वेदना के नहीं हैं । कैकेयी को दिया हुआ उपालंभ है –

सकामा भव कैकेयी
भुंस्व राज्यमकंटकम्
त्यक्त्वा राजानमेकाग्रा
नृशंसे दुष्टचारिणी

(अ. ६६-३)

'दुराचारिणी, क्रूर कैकेयी ले, अब तो तेरी कामना पूरी हुई । अब राजा को भी छोड़कर, एकाग्र होकर निष्कंटक राज्य सुख भोगना ।'

अयोध्या के राजमहल की कटुता दशरथ, लक्ष्मण, कैकेयी, कौशल्या और क्वचित् राम के मुख से भी हमने सुनी है, ऐसी घड़ी में कौशल्या के प्रथम उद्गा राजा के प्रति उसका शोक ऐसे क्रूर उ की तरह प्रकट होने में क्या रहस्य है?

इससे विपरीत भरत दो अंगुल साबित होता है । दशरथ के अवसा बाद राज्य राजाविहीन न रहे, इस वसिष्ठ भरत को लिवाने दूत भेजते भरत उनके साथ सात दिन तक प्र करके आठवें दिन अयोध्या पहुंचता है अयोध्या को सूनी देखकर उसके म अमंगल की आशंका पैदा होती है। कुछ कहते नहीं । वह सीधे अपनी कैकेयी के पास जाता है । महाराज द हमेशा कैकेयी के भवन में ही मि कैकेयी के भवन में महाराज को न कर भरत को आघात-सा लगता है कैकेयी जब दशरथ की मृत्यु के सम देती है तब पिता के लिए शोकम जाता है, कुछ स्वस्थ होने के बाद भर प्रतिभाव इस तरह है –

यो मे भ्रातापिता बंधुर्
यस्य दासोस्मि सम्मतः
तस्य मां शीघ्रमाख्याहि
रामस्याकिलष्टकर्मणः

(अ. ७२-

अब तो जो मेरे भाई, पिता और हैं और जिनका मैं दास हूं, ऐसे महान क्रमी राम को मेरे आगमन के स दीजिये ।

अब कैकेयी को कहना ही पड़ा

ने ही तेरे लिए राज्य और राम के लिए वनवास मांगा। अब तो यह नगर तेरे अधीन है। यह अनामय राज भी तेरा ही है।

कैकेयी के ये शब्द भरत को 'क्षार-मिवाददा:' (घाव पर नमक छिड़कने जैसे) लगे। भरत के बारे में दशरथ, राम, लक्ष्मण, कौशल्या वगैरह ने जो कल्पना की थी, उसके बाद कवि जब उसकी अस-लियत सामने लाते हैं, तब इस पात्र की अनोखी द्युति प्रकट होती है।

कुलस्य त्वमभावाय
कालरात्रिरिवागता
अंगारमुखगूह्य स्म
पिता मे नावबुद्धवान्

(अ. ७३-४)

'तू कुल का विनाश करनेवाली काल-रात्रि बनकर आयी है। पिता ने तुझे—अंगारे को गले लगाया तब उन्हें इसका पता न था।'

भरत आक्रोश से आगे कहते हैं—

'तू लालच में रही। तुझे इस बात का खयाल भी न रहा कि राम के प्रति मेरी भावना कैसी है!'

आनाय्य च महाबाहु
कोसलेंद्र महाबलम्
स्वयमेव प्रवेक्ष्यामि
वनं मुनिनिवेषितम्

(अ. ७४-३१)

महाबाहु राम को (राम के लिए भरत कोसलेंद्र, कोसल देश के राजा—ऐसा शब्द इस्तेमाल करते हैं) मैं वन से लौटा कर लाऊंगा और स्वयं मुनिवेष धारण करके वन में प्रवेश करूंगा।

फिर से एक बार वाल्मीकि अन्य पात्रों के संदर्भ में भरत को उजागर करते हैं। उसे अपनी माता के प्रति घृणा होती है। अब वह माता कौशल्या के दर्शनों को जाता है। कौशल्या भी भरत के आगमन का समाचार सुनकर अगवानी के लिए आती है। मार्ग में भरत-शत्रुघ्न तथा कौशल्या की मुलाकात हो जाती है। भरत माता से लिपट जाता है। परंतु कौशल्या अभी भरत को पहचानती नहीं। भरत को देखते ही उनके मन में तो वही कटुता भर जाती है। वह कहती है—

'तुझे तो निष्कंटक राज मिल गया। अब तो कैकेयी अथवा तू मुझे तथा सुमित्रा को राम जहां हो, छोड़ आओ।'

वाल्मीकि कौशल्या की वाणी के बारे में कहते हैं—

इत्यादि बहुभिर्वाक्यैः
क्रूरैः सम्भर्त्सितोनघः
विव्यथे भरतोतीव
व्रणे तुद्येव सूचिना

(अ. ७५-१७)

इस तरह कौशल्या ने बहुत-सी कठोर बातें कहीं और निरपराध भरत की भर्त्सना की। भरत को अत्यंत वेदना हुई, जैसे किसी घाव में सुई चुभोई हो ऐसा अनुभव उन्हें हुआ।

भरत कौशल्या को प्रणाम करके ऐसी कटु वाणी का भी कैसा जवाब देते हैं?

भरत का व्यक्तित्व इन शब्दों में प्रकट होता है :

विपुलां च मम प्रीति
स्थितां जानासि राघवे
(अ. ७५-२०)

'आप तो जानती हैं माता, कि राघव में मेरी पारावार प्रीति है ।'

फिर तो राम को वन में भेजने वाली अपनी माता की कटु शब्दों में निंदा करता है । भरत को देखने भर से कौशल्या की कटुता उभरी थी । किंतु भरत द्वारा कैकेयी की भर्त्सना सुनकर उसे शांति मिलती है और तब कौशल्या भरत को 'सत्यप्रतिज्ञ' कहकर संबोधित करती है ।

पिता के अंतिम संस्कार के समय भी भरत के मन में से राम की छवि हटती नहीं । भरत और शत्रुघ्न सतत राम को याद करते रहे । महाराज की अंतिम विधि होने के बाद शत्रुघ्न रोष में आकर अपने बड़े भाई लक्ष्मण की तरह ही बोलता है :

बलवान् वीर्यसम्पन्नो
लक्ष्मणो नाम योप्यसौ
किं न मोचयते रामं
कृत्वापि पितृनिग्रहम्
(अ. ७८-३)

लक्ष्मण तो बलवान और पराक्रमी हैं । (नारी के वश) पिता को कैद करके उन्होंने राम को संकटमुक्त क्यों नहीं किया ?

तभी मंथरा प्रवेश करती है । भरत राज मिलने की खुशी में उसे अभिनंदन देंगे, ऐसी मानने वाली मंथरा को घसीटते हैं । उसके आभूषण राजभ फर्श पर छिन्न होकर बिखर जाते हैं

अशोभत तदा भूयं
शारदं गगनं यथा

शरदाकाश की तरह यह भूमि रही थी ।

कैकेयी मंथरा की मदद को दौड़ी है । भरत शत्रुघ्न से कहते हैं कि मंथरा छोड़ दो–किंतु भरत का तर्क श्रवणीय

हन्यामहमिमां पापां
कैकेयी दुष्टचारिणीम्
यदि मां धार्मिको रामो
नासूयेन्मातृघातकम्
(अ. ७८-

धर्मात्मा राम मुझे मातृघातकी मेरी घृणा करेंगे, ऐसा भय अगर मुझे होता तो मैं इस दुष्ट कैकेयी को भी डालता ।

भरत दृढ़ संकल्प करते हैं कि राम लौटायेंगे । इसलिए राज स्वीकार पुरोहितों के आग्रह की अवहेलना हुए कहते हैं : 'हमारे कुल में ज्येष्ठ ही राजा बनता है। राम हमारे ज्येष्ठ हैं। वे राजा बनेंगे । उनके बदले मैं वर्ष वन में रहूंगा ।'

यह सुनकर अयोध्या के पुरजनों खुशी का ठिकाना नहीं रहता । भरत और नगर जनों के साथ वन में जा लिए रास्ता तैयार करवाते हैं । प्रात राजा को जगाने के लिए होने वाले

वाद्यों के घोष को भरत 'नाहंराजेनि' (मैं राजा नहीं) ऐसा कहकर रोक देते हैं।

वाल्मीकि भरत के पात्र को और विकसाते हैं। वसिष्ठ भरत को राजदरबार में बुलाते हैं। महाराजा दशरथ का जैसा सत्कार होता था, वैसा ही भरत का सत्कार करते हैं और कहते हैं : 'पिता ने यह राज तुम्हें सौंपा है। तुम्हें पिता की आज्ञा का पालन करना चाहिये।'

भरत कहते हैं : 'राज्यं चाहं च रामस्य' (राज्य और मैं दोनों राम के ही हैं)।

राम को वापस लौटाने के लिए भरत समग्र राज्य को, समग्र सेना को लेकर प्रयाण करते हैं : निषादराज गुह के राज्य के पास गंगा तट पर वे रात्रि विराम करते हैं। गुह को शंका होती है कि भरत निष्कंटक राज भोगने के लिए राम को वन में ही खत्म करना चाहता है। भरत से भेंट होने के बाद उसकी शंका दूर होती है, फिर भी वह पूछ लेता है, 'आप राम के प्रति कोई दुर्भावना लेकर तो नहीं जा रहे ?'

भरत की महत्ता उसके उत्तर में प्रकट होती है :

या भूत् स कालो यत् कष्टं
न मां शंकितुमर्हसि
राघवः स हि मे भ्राता
ज्येष्ठः पितृसमो मतः

(अ. ८५-९)

'ऐसा समय कभी न आये, निषादराज, आपकी शंका से मुझे कष्ट हुआ है। राघव तो मेरे बड़े भाई हैं : मेरे पिता-समान हैं।'

राम वचन पालन के लिए राज तजकर वन में जाते हैं, किंतु भरत बिना प्रयत्न हाथ में आये राज का त्याग कर रहे हैं। गुह कहते हैं :

धन्यस्त्वं न त्वया तुल्यं
पश्यामि जगतीतले

(अ. ८५-१२)

'तुम्हें धन्य हो। तुम्हारे जैसा अन्य कोई इस धरणीतल पर नहीं।'

गुह से राम, सीता तथा लक्ष्मण की वन-निवास की बातें भरत सुनता है। गुह कुश तृण दिखाकर कहता है : 'इसी कुश पर राम सोये थे,' भरत उसी घड़ी निश्चय करते हैं :

'आज से मैं पृथ्वी पर या घास पर ही सोऊंगा। फलमूल ग्रहण करूंगा और नित्य जटा-वल्कल धारण करूंगा।'

ऐसा करने से राम की प्रतिज्ञा उसके द्वारा पूर्ण होगी और स्वयं राम का राज्याभिषेक कर सकेगा—ऐसा स्वप्न भरत देख रहा है।

इस तरह अयोध्या कांड में वाल्मीकि भरत को संपूर्ण रूप से निखारते हैं।

[क्रमशः]

[रूपांतरकार : नंदिनी मेहता]

□

करोड़ मुहरें खर्च करने पर भी आयु का एक पल भी नहीं मिल सकता, वह यदि वृथा गयी तो उससे अधिक हानि और क्या होगी। **--शंकराचार्य**

□

(पृष्ठ ३५ का शेषांश)

वृषपर्वा की कन्या शर्मिष्ठा भी दासी के रूप में आयी। राजा शर्मिष्ठा के सौंदर्य पर मुग्ध हो गया और उसके साथ अनुचित व्यवहार किया। देवयानी रूठकर पिता के यहां पहुंची। राजा भी पीछे-पीछे पहुंचा। शुक्राचार्य को जब सारी बातें मालूम हुईं, तो उन्होंने राजा को शाप दे दिया। फलस्वरूप उसकी इंद्रियां शिथिल पड़ गयीं। जब राजा बहुत गिड़गिड़ाया, तो शुक्राचार्य बोले कि तुम किसी से यौवन उधार लेकर विषय भोग कर सकते हो। जब ऊब जाना, तो यौवन देकर बुढ़ापा प्राप्त कर लेना। राजा ने अपने लड़कों से यौवन उधार मांगा। किंतु लड़कों ने तिरस्कार पूर्वक उसकी अभिलाषा ठुकरा दी। हां छोटे पुत्र पुरु ने पितृ-भक्तिवश उसे अपना यौवन दे दिया। कैसी विडंबना है कि पिता विषय भोग के लिए अपने पुत्रों से निर्लज्जतापूर्वक यौवन की याचना करे! भोग की लालसा मनुष्य को कहां से कहां पहुंचा देती है!

जब सृष्टि में रूप, रस, गंध आदि मौजूद हैं और उनके भोग के लिए इंद्रियां प्रकृति ने मनुष्यों को दे दी हैं, तो उनका भोग न किया जाय–यह भी तो उचित नहीं प्रतीत होता। यदि मनुष्य उनका भोग छोड़ दे, तो ईश्वर की यह सृष्टि ही बेकार हो जायेगी। सीमा के अंदर उचित ढंग से भोग का उपयोग उसका सदुपयोग है। त्याग का आशय यह नहीं है कि उचित भोग से विरक्ति हो। वस्तुतः भोग में लिप्त न होना और उसमें स्पृहा या आस का न रखना ही त्याग है। इसके लिए मनु को अपने मन पर काबू करना होगा ऐसे नियंत्रण के प्रभाव से इंद्रियों अपना अधिकार रहेगा। मन को वश करके उतने ही विषयों का भोग किया जा जितना सांसारिक जीवन के लिए आ श्यक हो। इसके अतिरिक्त दूसरों को विषयों या धन का यथावश्यक भो करने दिया जाय। फिर क्या इस प्रक विषयों का भोग हानिकर सिद्ध होगा! यदि आवश्यकता से अधिक सामग्री कि के पास है, तो दूसरों के लिए उसका त्या करना उसके लिए परम कर्त्तव्य हो जाता है

राम का राज्याभिषेक होने ही वा था कि अकस्मात् उसमें बाधा आ पड़ी उन्हें चौदह वर्षों के लिए वन जाने आदेश मिला। इस पर वे किंचित् दुःखी न हुए। भोग पर लात मार त्याग का आदर्श उन्होंने स्वीकार किया खुशी-खुशी वे वन को चले गये। लक्ष्म और भरत के त्याग की कहानी भी अ है। भरत ने तो हाथ में आये हुए रा भोग को ही तृणवत् समझा और वे उ राम के हवाले करने के लिए उन्हें वन लौटाने भी गये। राम के न लौटने उन्होंने सब भोग त्याग दिया और उन पादुकाओं को सिंहासन पर बिठाकर प्र निधि के रूप में राजकाज संभाला। कृ शिवि, दधीच, हरिश्चंद्र, जनक आदि

त्याग से सभी परिचित हैं। महर्षि दधीच ने तो दूसरों की भलाई के लिए अपने जीवित शरीर की अस्थियां ही दान में दे दीं और अनुपम आदर्श त्याग का उदाहरण प्रस्तुत किया। महाराणा प्रताप के कोषाध्यक्ष भामाशाह का त्याग भी अनुकरणीय है।

महाराणा प्रताप के पास शत्रु से मोर्चा लेने के लिए सैनिक और धन दोनों में से कोई शेष न रहा। महाराणा प्रताप निरुपाय हो गये। उनके सामने अब एक ही चारा था कि दिल्लीपति की अधीनता स्वीकार कर लें। उस अवसर पर देश-भक्त भामाशाह के हृदय में त्याग की इतनी प्रबल लहर उठी कि उन्होंने मातृभूमि की रक्षार्थ अपने पुरखों तक की सारी की सारी कमायी महाराणा प्रताप के चरणों में अर्पित कर दी।

अकेला भोग मनुष्य को बर्बाद कर देता है। जिनमें भोग और त्याग का सामंजस्य होता है, वही सच्चे यश के भागी हैं। त्याग से बढ़कर दुनिया में कोई दूसरी महत्ता नहीं है।

त्याग से संबंधित कथनों पर जब हम दृष्टिपात करते हैं, तो पाते हैं कि त्याग के समान कोई सुख नहीं हैं। कोई मनुष्य त्याग किये बिना सुख नहीं पाता, त्याग किये बिना परमात्मा को नहीं पा सकता और त्याग किये बिना निर्भय सो नहीं सकता। सच्चा त्याग सुखद होता है और मनुष्य को ऊंचा ले जाता है। त्याग से पाप का मूल धन चुकता है। सर्वस्व का त्याग मोक्ष है। **—बी-६०१, लालबाग, कम्पलेक्स, लखनऊ-२२६००१, उ. प्र.**

□

चिरकुमारी

संसार में अगर कोई चिरकुमारी है, तो वह है 'कीर्ति'। जो लोग कीर्ति का वरण करना चाहते हैं, कीर्ति उनके पास फटकती तक नहीं। और फिर कीर्ति जिनका हाथ थामना चाहती है, वे कीर्ति को दूर से ही नमस्कार कर देते हैं। इसीलिए आज तक कीर्ति का विवाह नहीं हो सका, वह चिरकुमारी है।

०००

'डेमोक्रैसी' की व्याख्या

भारतीय संस्कृति संसद्, कलकत्ता की अध्ययन-गोष्ठी की एक शाम...। एक सज्जन ने कहा—'अंग्रेजी के बहुत-से शब्द हिंदी से लिये गये हैं। उदाहरणस्वरूप 'प्रोसपेरिटी' को ले लीजिये। 'प्रोसपेरिटी' और कुछ नहीं, हिंदी की 'परस्पर प्रीति' ही है।'

गोष्ठी में कविवर गुलाब खंडेलवाल भी संयोग से उपस्थित थे। उन्होंने हंसते हुए कहा—'क्यों नहीं, 'डमोक्रैसी' को भी ले सकते हैं। 'डेमोक्रैसी' यानी 'दे मोहे कुरसी...।'

—शंभुनाथ पाड़िया 'पुष्कर

□

स्वामी अखंडानंदजी से वार्ता

☐ जयंत कृष्ण

(२)

प्रश्न – अद्वैत वेदांत में योग का क्या उपयोग है ? कृपया बतलायें।

उत्तर – योग के अंग हैं–यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। ये आठ अंग हैं और अंगी है योग। योग अर्थात् चित्तवृत्ति का निरोध। इसका फल है द्रष्टा की अपने स्वरूप में अवस्थिति।

इनमें यम, नियम तो सर्वोपयोगी हैं ही। सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्तेय और अपरिग्रह–ये पांच यम हैं। दुर्वृत्तियों के निवर्तक होने से ये सर्वोपयोगी हैं। असत्य का निवर्तक है 'सत्य'; क्रोध और हिंसा की निवर्तक है 'अहिंसा'; काम का निवर्तक है 'ब्रह्मचर्य'; और लोभ के निवर्तक दो हैं– 'अस्तेय' और 'अपरिग्रह'। 'अस्तेय' माने दूसरे के हिस्से को न लेना, और अपरिग्रह' माने अपना जो वैध हिस्सा है उसका भी परित्याग कर देना–इससे वृथा लोभ का परित्याग हो जाता है। तो यम के पालन करने से असत्य, लोभ, काम और क्रोध–इन चार दोषों का जीवन से परित्याग हो जाता है। ये व्यक्ति और समाज सब के लिये उपयोगी हैं।

इसी प्रकार शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान–ये पांच नि हैं। ये व्यक्ति के स्वयं के जीवन के सं में महान उपयोगी हैं–भले उसके जीवन साधन की दिशा किसी भी आध्याति लक्ष्य के लिये हो।

'आसन' से शरीर में स्थिरता आती है 'प्राणायाम' से क्रिया की शांति होती है 'प्रत्याहार' से इंद्रियाँ शांत होती हैं 'धारणा' में एक देश में चित्तवृत्ति का बं होता है। ध्यान में चित्त को एकाग्र करके रखना–काल में बंधन होता है; और समाधि में एक ही विषय का, एक ही व का चिंतन करना–वस्तु में बंधन हो है। यह सब धारणा, ध्यान और समाधि होता है। तो धारणा, ध्यान और समाधि हैं देश, काल और वस्तु में एकाग्रता; प्रत्याहार है–इंद्रियों का अपने-अपने गोलक में स्थित हो जाना; प्राणायाम है क्रि की शांति और आसन है स्थूल शरीर की शांति। योग का इतना हिस्सा अ वेदांत में भी सहायक है; और यदि य योग्यता मुमुक्षु में पहले से ही आ जाये तो तत्त्वज्ञान होने के बाद वह जीवन में जीवन्मुक्ति का विलक्षण सुख देने वाली हो जाती है।

अब प्रश्न यह है कि योगियों की

निरोध-समाधि है वह अद्वैत-वेदांत में कहां तक उपयोगी है? इसमें निर्णय यह है कि निरोध-अवस्था में चित्त की सब वृत्तियों का निरोध हो जाता है। इसलिये अज्ञान की निवर्तक वहाँ कोई सामग्री नहीं है, क्योंकि यदि ब्रह्माकार वृत्ति होवे तब तो ब्रह्मविषयक अज्ञान की निवृत्ति करे परंतु वहां तो निरोध और अज्ञान का कोई विरोध ही नहीं है। अत: केवल निरोध के द्वारा समाधि तो हो सकती है, परंतु तत्त्वज्ञान नहीं हो सकता, अज्ञान की निवृत्ति नहीं हो सकती। हां, विक्षेप की निवृत्ति संपूर्णतया हो सकती है।

गीता के भगवान् भी बहुत करके निरोध-समाधि के पक्ष में नहीं हैं। उनका कहना है-

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन।
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो
मतः॥ गीता ६-३८

श्री मधुसूदन सरस्वतीजी इस श्लोक की व्याख्या में ऐसा कहते हैं कि जो निरोध-समाधिवान है वह अपर योगी है और यह जो 'आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति' वाला योगी है वह परम योगी है।

प्रश्न – गीता के छठे अध्याय में ध्यान योग के अंतर्गत जिस 'ब्रह्मसंस्पर्श'—योग का वर्णन किया है उसमें और मांडूक्य-कारिका में जो 'अस्पर्शयोग' बताया है उसमें क्या अंतर है? कृपया समझाएं।

उत्तर – 'अस्पर्शयाग' से संबंधित मांडूक्य-कारिका के अद्वैत-प्रकरण का श्लोक यह है:

अस्पर्शयोगो वै नाम दुर्दर्शः सर्वयोगिभिः।
योगिनो बिभ्यति यस्मादभये भयदर्शिनः।

इसके शांकरभाष्य में यह कहा गया है कि 'सर्वसंबंधरूप स्पर्श से रहित होने के कारण उपनिषदों में इसे 'अस्पर्शयोग' कहा गया है। जो योगी वेदांत-विज्ञान से रहित हैं उनके लिये यह दुर्दर्श है। दूसरे शब्दों में केवल आत्मसत्य के अनुबोध के आयासों—श्रवणादि के द्वारा ही यह योग सिद्ध होता है अन्यथा तो अविवेकी लोग इस अभय स्वरूप आत्मा में आत्मनाश का ही भय करने लगते हैं। इस प्रकार परमार्थदर्शी के लिये यह साधन-साध्य से रहित सिद्ध 'अस्पर्श योग' है क्योंकि उसके लिये तो मन, इंद्रिय आदि उसके ब्रह्म-स्वरूप में रज्जु-सर्पवत् कल्पित प्रतीति हैं। किंतु जो लोग मन को आत्मा से भिन्न आत्मा का संबंधी मानते हैं, उन अपरमार्थदर्शी योगियों के लिये मन के निग्रह के साधन का विधान किया जाता है। इसी संदर्भ में उक्त श्लोक के आगे के श्लोकों की संगति है जैसे **'लये संबोधयेच्चित्तं विक्षिप्तं शमयेत्पुनः'** इत्यादि।

गीता के अध्याय में ध्यान योग के प्रकरण में भी ऐसा ही समझना चाहिये। वहां तो स्पष्ट ही है कि ब्रह्मसंस्पर्श के सुख का अनुभविता **'युञ्जान-योगी'** है:

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी विगपकल्मषः॥
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते॥
(गीता ६—२८)

यहां मन के प्रशांत होने से जो मन की शांति से उपहित ब्रह्मसुख है उसको ही ब्रह्मसंस्पर्श का महान् सुख बताया है । परंतु 'अस्पर्शयोग' में मन की शांति अथवा विक्षेप का आत्मा से कोई संबंध स्थापित नहीं होता, क्योंकि दोनों ही अवस्थाओं में आत्मा के स्वरूप में कोई विकृति नहीं होती । क्या किसी जलाशय के शांत अथवा तरंगायित होने पर भी जल अपने स्वरूप का परित्याग कर सकता है ।

वेदांत का योग 'अस्पर्शयोग' है । अस्पर्शयोग है माने द्वैत है ही नहीं, द्वैत में ही स्पर्श की संभावना रहती है, अद्वैत में तो स्पर्श की संभावना रहती ही नहीं ।

प्रश्न – बौद्धों के निर्वाण और गीता के ब्रह्म-निर्वाण में क्या फर्क है–कृपया समझायें ।

उत्तर – निर्वाण होने के बाद कुछ न रहना–यह तो है बौद्ध निर्वाण; और निर्वाण के पश्चात् भी ब्रह्मरूप से आत्मा का रहना–यह है ब्रह्मनिर्वाण । माने, जो स्वप्रकाश अधिष्ठान है उसका कभी नाश नहीं हो सकता, वह कभी परोक्ष नहीं हो सकता और कभी घट-पटादि के समान प्रत्यक्ष भी नहीं हो सकता–वह तो साक्षात् अपरोक्ष है ।

बौद्धों का जो निर्वाण है वह तो ऐसा ही है कि दीपक बुझ गया और दीपक बुझ जाने के बाद जो तेजस् तत्त्व है वह ज्यों-का-त्यों है; बस इतना ही है । **'ज्योतिषामपि तज्ज्योतिः'** । और हमारा जो ब्रह्मनिर्वाण है उसके लिये तो गीता में कहा गया है–**स योगी ब्रह्मनिर्वाणं भूतोऽधिगच्छति** । इसके भाष्य में शंकराचार्य भगवान् का कहना है कि **योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मणि निर्वृत्ति इह जीवन एव ब्रह्मभूतः सन् अधिगच्छ प्राप्नोति'** अर्थात् वह योगी यहीं अवस्था में ही ब्रह्मरूप होकर प्रलीनरूप मोक्ष को प्राप्त कर लेता है इसी से निर्वाण के साथ यहां 'ब्रह्म' का प्रयोग किया है ।

बौद्ध-निर्वाण मृत्योपरांत की का सूचक है, जबकि ब्रह्म-निर्वाण अवस्था में ही स्वयं का ब्रह्मरूप है । आत्मा 'ब्रह्म' है और उसमें की स्थिति रज्जु में सर्पवत् मिथ्या है, फिर उनकी प्रतीति रहे (जैसे काल में) अथवा न रहे जैसे, (परान्त), क्या अंतर पड़ता है, बस बोध ही ब्रह्मनिर्वाण है :

अभितो ब्रह्मनिर्वाणं वर्तते विदितात्मनाम्

प्रश्न – कहा जाता है कि कलियुग ज्ञान दुर्लभ है और भक्ति सुलभ है– इस विषय में कुछ कहें ।

उत्तर – ज्ञान और भक्ति के क्षेत्र अलग हैं; उनके निवर्त्यनिवर्तक भाव अलग हैं। अतः परमात्मा की प्राप्ति में और सुलभ सभी साधनों की अपेक्षा है । अज्ञान की निवृत्ति ज्ञान से ही है और आसक्ति की निवृत्ति में का असाधारण योग है ।

ऐसा है कि लोगों के जीवन में

स्वाभाविक होती है, किंतु वे इस प्रीति के कारण स्वार्थ भी करते हैं और अनर्थ भी करते हैं। जैसे कि जिनसे शारीरिक संयोग होना शक्य है उनसे प्रीति करने से उनके लिये पक्षपात हो जाता है और दूसरों के प्रति निर्दयता भी हो जाती है। इसलिये यदि हमारी प्रीति का मुंह मुड़ जाय, माने हमारी प्रीति एक ऐसे भगवान् से हो जाय जिनसे शारीरिक संयोग होना शक्य नहीं हो, या इसको यों कह लीजिये कि एक परोक्ष वस्तु में महत्त्व-बुद्धि स्थापित करके यदि हम उनसे प्रीति करने लगें तो यह जो हमारे जीवन में पक्षपात और क्रूरता है, उसकी निवृत्ति हो जाय। इस तरह हम देखते हैं कि हमारी आसक्ति को भगवान् के उन्मुख करने के लिये भक्ति बहुत आवश्यक है। हृदय में भगवदासक्ति का उदय होने से ही प्रपञ्चासक्ति का परित्याग हो जाता है और प्रापञ्चिक पक्षपात की निवृत्ति अर्थात्—राग-द्वेष की निवृत्ति हो जाती है। इसलिये आसक्ति की निवृत्ति में भक्ति बहुत उपयोगी है।

आचरण की शुद्धि में धर्म, आसक्ति की निवृत्ति में भक्ति, विक्षेप की निवृत्ति में योग और अज्ञान की निवृत्ति में वेदांत का प्रत्यक्ष उपयोग है।

प्रश्न – वेदांत-ज्ञान का व्यवहार में क्या उपयोग है? आर्थिक और सामाजिक व्यवस्थाओं में इसकी क्या उपयोगिता होगी? कृपया प्रकाश डालें।

उत्तर-व्यक्ति के जीवन में जब वेदांत-ज्ञान प्रतिष्ठित होता है तो तीन बातें उसके जीवन में आ जाती हैं—एक तो एकत्व का अनुभव अर्थात् आत्मतत्त्व का याथात्म्य अनुभव, दूसरे चित्त में समता और तीसरे व्यवहार में असंगता। उसका कहीं भी राग-द्वेष नहीं रहता। राग से पक्षपात होता है और द्वेष से क्रूरता, हिंसा जीवन में आती है। इसलिये राग-द्वेष से रहित व्यवहार के लिये वेदांत-ज्ञान का सब से अधिक उपयोग है। राग-द्वेष की आत्यन्तिक निवृत्ति वेदांत-विचार के द्वारा ही होती है, अन्यथा नहीं। इसलिये आजकल जो वैमनस्य है, संघर्ष है पार्टीबंदी है, जातीयता है, प्रांतीयता है, सांप्रदायिकता है—इन सबके निवारण में वेदांत का ज्ञान बहुत ही उपयोगी है। यदि तत्त्व का अनुभव न भी हो और वेदांत का साधारण ज्ञान भी लोगों को दिया जाय तो वह भी बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

वेदांत-ज्ञान से जीवन में अभय की प्रतिष्ठा होती है। अत: समाज में आर्थिक अथवा सामाजिक कोई भी व्यवस्था क्यों न हो, जहां भी मनुष्य कार्य करेंगे वहीं वेदांत-ज्ञान से संपन्न मनुष्य निर्भय होकर तथा राग-द्वेष से रहित रहकर उस व्यवस्था में चार चांद लगा देंगे, ऐसा हमारा विश्वास है।

प्रश्न – वेदान्त की दृष्टि से जातिवाद और कम्यूनिज़्म को कैसे दूर किया जा सकता है?

उत्तर – 'कम्यूनिज़्म' के बारे में हमारी कुछ अधिक जानकारी नहीं है और राज-

नीति की बात तो हम बिलकुल जानते ही नहीं हैं तथा इस विषय में कभी सोचते भी नहीं हैं। लेकिन मनुष्य के हृदय में सदा सद्भाव रहे, आचरण में सदाचार रहे और बुद्धि में विवेक रहे—इसके लिए हमने इसका विभाग अपने मन में बैठाया हुआ है :

आत्मा सच्चिदानंद अद्वय है—माने आत्मा सत् है, आत्मा चित् है, आत्मा आनंद-स्वरूप है और आत्मा अद्वितीय है। तो आत्मा सत् है—इस ज्ञान का व्यावहारिक फल होना चाहिये कि 'स्वयं मृत्यु से डरे नहीं, किसी को मृत्यु का भय दें नहीं; स्वयं जीवित रहें और दूसरों को भी जीवित रहने में मदद करें।' इस तरह सत्-धर्म की ये चार कलायें सिद्ध होती हैं।

'आत्मा चित् है'—इस ज्ञान का व्यावहारिक फल होना चाहिये कि 'स्वयं मूर्ख बनें नहीं, किसी को मूर्ख बनावें नहीं; स्वयं विद्या-संपादन करें और दूसरों को विद्या-संपादन में मदद करें।' इस प्रकार चित्-धर्म की भी ये चार कलायें सिद्ध होती हैं।

'आत्मा आनंद है'—इस ज्ञान का व्यावहारिक फल यह है कि 'स्वयं दुःखी न हों, किसी को दुःखी न करें; स्वयं सुखी रहें और दूसरों को सुखी रखें।' ये आनंद-धर्म की चार कलायें हैं।

'आत्मा अद्वय है'—इसकी चार कलाएं हैं कि 'स्वयं फूटें नहीं, दूसरों को फोड़े नहीं—भेद-बुद्धि उत्पन्न न करें; अभेद-बुद्धि से रहें—माने मिल-जुलकर रहें और मिला-जुला कर रखें।'

इस तरह आत्मा के स्वरूप धर्म की ये सोलह कलाएं विकसित हैं। 'सत्-भाव का प्रकाश' है कि निर्भय रहकर अच्छे काम करें, भी मृत्यु का भय उत्पन्न न करें, धर्म का पालन करें; अपने जीवित के लिए उद्यम करें और दूसरों को रखने के लिए निवास, अन्न, वस्त्र, आदि की सुविधा उपलब्ध करायें। भाव का प्रकाश' है कि स्वयं अज्ञानी रहें, लोगों के अज्ञान को निवृत्त करें; ज्ञान प्राप्त करें और दूसरों को करें—विद्यालय, वाचनालय, सत्संग की सुविधा उपलब्ध करायें। 'आनंद-का प्रकाश' है कि स्वयं दुःखी न हों किसी को भी किसी कारण से भी न पहुंचायें, स्वयं सुखी रहें और को अन्न-वस्त्रादि जिस-किसी निमित्त सुखी हो सकते हों सुखी रखें 'अद्वय-का प्रकाश' यह है कि स्वयं किसी से गाव का भाव मत रखिये और समाज फूट मत डालिये; सबसे मिल-जुल रहिये और सब में मेल-मिलाप करा प्रयत्न कीजिये। इस प्रकार यह कर्म धर्म अद्वय सच्चिदानंद में से होता है और हमारा ख्याल है कि पृथ्वी पर कितना भी परिवर्तन हो धर्म की ये सोलह कलाएं बौद्धिक सब को मान्य होंगी, भले आचरण कभी कम, कभी अधिक होवें! जितनी भी व्यवस्थायें हैं उन सब

धर्मों का कोई विरोध नहीं है, उलटे ये सहायक हैं। व्यवस्था जब 'वाद' बन जाती है तब उसका पतन प्रारंभ हो जाता है। वेदांत किसी व्यवस्था का आधार हो सकता है किसी 'वाद' का पोषक नहीं।

प्रश्न – स्वामी विवेकानंदजी ने कहा था कि भविष्य में वेदांत मानव-जाति का धर्म होगा। महाराजश्री, इस संबंध में आपका क्या विचार है? कृपया बतलावें।

उत्तर – स्वामी विवेकानंदजी ने चाहे जिस भी दृष्टिकोण से कहा हो, परंतु अब कर्मकांड, यज्ञयागादि के प्रति लोगों की जैसी वृत्ति होती जा रही है, उससे ऐसा लगता तो है कि अब दंडी स्वामी होकर के रहने में अथवा कट्टर-धर्म के पालन में लोगों की रुचि नहीं रह गयी है। और भविष्य में विचार-प्रधान लोग ही अधिक रहेंगे और छोटी-छोटी बातों में लोगों की निष्ठा नहीं रह जायेगी। और सार्वजनिक रूप से तो नहीं, परंतु जो लोग परमार्थ के पथिक होंगे वे अब कर्मकांड वाले वेदांत की ओर कम झुकेंगे तथा सदाचार-प्रधान, सेवा-प्रधान, आध्यात्मिक भावना-प्रधान वेदांत की ओर उनकी रुचि अधिक होगी और उनकी सेवा मनुष्य जाति– बल्कि विश्व-मानवता के संरक्षण-संवर्द्धन के लिये होगी, क्योंकि मानवता की दृष्टि से तो प्रांतीयता, जातीयता, सांप्रदायिकता, राष्ट्रीयता–सभी संकीर्ण घेरे हैं।

प्रश्न – भविष्य के संबंध में आपके क्या विचार हैं?

उत्तर – भविष्य के संबंध में तो हम लोग आशावान हैं :

युवा स्यात्साधु युवाध्यायक आशिष्ठो दृढिष्ठो बलिष्ठः – साधु स्वभाव वाला हो नवयुवक हो, विद्वान् हो, अत्यंत आशावान् हो, दृढ़, और बलिष्ठ हो–फिर निराशा, की क्या बात है! भगवान् का संकल्प यदि हमारे संकल्प के साथ जुड़ जाय तो क्षणों में ही परिवर्तन हो सकता है। भविष्य के प्रति हम अत्यंत आशावान् हैं।

प्रश्न – भगवन्! आप संन्यासाश्रम में कैसे आये और आपकी साधना का क्या स्वरूप रहा, कृपया बतलायें।

उत्तर – देखो, हमारे पिता, पितामह कर्मकांडी थे, कर्मकांड कराते भी थे, कुंडली भी बना देते थे और गांव के लोगों के गुरु भी थे। इसलिये कभी-कभी महात्मा लोग भी घर में आते थे, भोजन-भजन भी करते थे। तो, मुझे बचपन से ही साधु-महात्माओं का साथ मिला, जिससे मेरी रुचि इस ओर हो गयी। और एक दूसरा लौकिक कारण यह हुआ कि ज्योतिषियों ने मेरी आयु निश्चित कर दी थी कि उन्नीस बरस से अधिक इस बालक की आयु नहीं है। महामहोपाध्याय पंडित अयोध्यानाथजी ने कैसे-कैसे क्या-क्या बताया था, हमको सब याद है। हमारे पितामह को ज्योतिष में बहुत विश्वास था। पिता की मृत्यु तो जब मैं सात वर्ष का था तब ही हो गयी थी और हुई भी बहुत विलक्षण–उनका सिर फट गया और

उसमें से कुछ निकलकर गंगाजी में गिर गया था ! तो मेरी मृत्यु की कल्पना परिवार में हो जाने से उन लोगों ने मेरा विवाह भी जल्दी कर दिया और विवाह जल्दी हो जाने से संतान भी जल्दी हो गयी । १९ वर्ष के पूर्व ही एक पुत्र और एक पुत्री हुए– अभी हैं दोनों ! अब '१९ वर्ष की उम्र में मृत्यु' की कल्पना ने मेरे मन में भी भय उत्पन्न कर दिया, पर ईश्वर ने सद्बुद्धि दी और मैं इधर-उधर न भटककर महात्माओं के पास जाने लगा । उसमें भी भगवान् की ऐसी कृपा हुई कि किसी भी महात्मा ने मुझसे यह नहीं कहा कि हम तुम्हें मृत्यु से बचा सकते हैं, सबने यही कहा कि हम तुम्हें मृत्यु के भय से छुड़ा सकते हैं, मृत्यु से नहीं । तुम्हारी बुद्धि में जो मृत्यु का भय है उसका निवारण हमारा विभाग है, शरीर में जो मृत्यु आती है उसका निवारण हमारा विभाग नहीं है । उन महात्माओं ने कुछ ऐसा समझाया-बुझाया कि मेरी रुचि संसार में कम और वेदांत-विचार में अधिक हो गयी; और मेरी उम्र १९ वर्ष की होते-होते मेरा गृहस्थ जीवन करीब-करीब समाप्त हो गया । उसके बाद २३–२४ वर्ष की उम्र तक, मैं संतों में ही विचरण करता रहा और वेदांत-श्रवण करता रहा । बाद में मैं गीता-प्रेस में चला गया और 'कल्याण' के संपादन विभाग में करीब छः वर्ष तक–२५ से ३१ वर्ष की उम्र तक रहा और साधनांक, संताङ्क, भागवतांक, महाभारतांक तथा और भी बहुत-सी पुस्तकों के संपाद प्रणयन में जितना योग दे सकता था दिया और फिर संसार में तो मेरी थी नहीं, इसलिये मैंने स्वामी ब्रह्मा सरस्वती से दंड-ग्रहण कर लिया। उ बाद श्री उड़िया बाबाजी महाराज के प आ गया । वैसे श्री उड़िया बाबाजी म राज से परिचय तो पहले से ही था पर उ पास आया बाद में । तो, हमारे ज्ञान गुरु श्री उड़िया बाबाजी महाराज हैं आश्रम के गुरु श्री ब्रह्मानंदजी महारा सन १९४१ के अंत में हमने संन्यास ग्र किया था और तब से अब तक–कोई वर्ष हो गये, सिवाय वेदांत के और द शास्त्र के हमारी रुचि कहीं नहीं रही, ब विशेषत: दर्शन-शास्त्र में ही रही। प श्री मद्भागवत की कथा भी करता परंतु अब तो केवल प्रश्नोत्तर करता हूं।

प्रश्न – महाराज श्री ! श्री मुंशीजी शताब्दी आनेवाली है और 'भारती विद्या भवन' की स्वर्ण-जयंती । भारती विद्या भवन को क्या करना चाहिये भारतीय विद्या भवन के लिए आपका संदेश है ? कृपया बतलायें।

उत्तर – श्री मुंशीजी तो हमसे ब ही प्रीति रखते थे । हमसे वे ऐसे कहते थे कि 'भारतीय विद्या भवन कुलगुरु हैं आप !' अधिपति नहीं, कु गुरु । एक बार उन्होंने यह भी कहा कि ऊपर का जो 'गीता-हाल' है उसमें आते रहिये और सत्संग करते रहिये

बहुत ही प्रेम करते थे मुझसे वे।

भारतीय विद्या भवन तो देश में, विदेश में बहुत ही उत्तम काम कर रहा है। यह तो भारतीय संस्कृति का, वैदिक संस्कृति का देश-विदेश में प्रचार कर रहा है और लोगों को सद्भाव के मार्ग पर ला रहा है। उसके बारे में हमारा यही विचार है कि इसके द्वारा बहुत-से उत्तम कार्य होंगे, इससे लोगों को बहुत लाभ मिलेगा और यह खूब-खूब बढ़ेगा और इसको खूब-खूब बढ़ना चाहिये, हमारी तो यही शुभाशंसा है, यही संदेश है। **[समाप्त]**

□

एक रास्ता यह भी

कोई बड़ी उपलब्धि अपने साथ अपार प्रसिद्धि भी लाती है। नोबेल पुरस्कार के साथ भी यही है। जैसे ही हर साल अक्तूबर मास में नोबेल पुरस्कार की घोषणा होती है, विजेताओं के आस-पास मंडराने वालों की भीड़ एकाएक बढ़ जाती है। अखबार, रेडियो; टी. वी. से लेकर फिल्म बनानेवाले, फोटोग्राफर और न जाने कौन-कौन?

इतना ही नहीं, रोज आने वाली डाक की संख्या में बढ़ोतरी हो जाती है। हजारों संख्या में जब पत्र आयें तो क्या किया जाये!

इससे बचने के लिए डी. एन. ए. की संरचना ज्ञात करन वाले अंग्रेज-भौतिक वैज्ञानिक एफ. एच. सी. क्रिक (जिन्हें जेम्स डी. वाटसन के साथ १९६२ में नोबेल पुरस्कार मिला था) ने एक आसान-सा तरीका निकाला।

उन्होंने एक पोस्ट कार्ड छपवाया जिसका प्रोफार्मा इस तरह था –

प्रिय महोदय/महोदया,

पत्र के लिए धन्यवाद! मुझे खेद है कि मैं:

- ० हस्ताक्षर भेजने में
- ० फोटो भेजने में
- ० रोग दूर करने में
- ० इंटरव्यू देने में
- ० टी. वी. पर आने में
- ० रेडियो वार्ता देने में
- ० रात्रि भोज के बाद व्याख्यान देने में
- ० व्याख्यान देने के लिए आने में
- ० संगोष्ठी में भाग लेने में
- ० संपादन करने में
- ० पुस्तक लिखने में
- ० समारोह की अध्यक्षता करने में
- ० मानद उपाधि लेने में
- ० आपकी परियोजना में सहायता करने में
- ० आपकी पांडुलिपि की समीक्षा करने के लिए

असमर्थ हूं। कृपया क्षमा करें।

और इस पत्र में वांछित प्रश्न के जवाब में टिक लगाते और डाक में उसे डाल देते। इस तरह लंबे-चौड़े पत्र लिखने से बचने का रास्ता उन्होंने निकाला।

–शुकदेव प्रसाद

□

५० वीं पुण्य-तिथि पर

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी

□ डा. दुर्गाशंकर मिश्र

अपने महामहिम व्यक्तित्व और कृतित्व से भारतीय नवजागरण को प्रभावित करने वाले, आधुनिक साहित्य निर्माता, और युग-प्रेरक आचार्य द्विवेदी का निधन २१ दिसंबर, १९३७ को उनके जनपद रायबरेली में हुआ था। आधुनिक गद्य के निर्माताओं में आचार्य द्विवेदी के असाधारण महत्व से हिंदी जगत सुपरिचित है।

द्विवेदीजी का जन्म २ मई सन १८६४ ई. को दौलतपुर में ही हुआ था। इनके पिता श्री राम सहाय दुबे ईस्ट इंडिया कंपनी की पलटन में सिपाही थे। वे मामूली हिंदी जानते थे। उनका वेतन १० रुपये था। वे राम-लक्ष्मण के पुजारी थे। इसलिए उनके साथी उन्हें लछिमनजी कहकर पुकारते थे। सन १८५७ ई. के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में इनकी पलटन ने विद्रोह कर दिया, अंगरेजों ने अनेक सिपाहियों को तोपों से उड़ा दिया। दैववशात् द्विवेदीजी के पिता किसी भांति बच निकले। कालांतर में वे बंबई पहुंचे और वल्लभ संप्रदाय के एक गोस्वामी के यहां ठाकुरजी की सेवा करने लगे।

द्विवेदीजी के बाबा संस्कृत के अच्छे विद्वान थे। अतः घर पर इन्हें थोड़ी-सी संस्कृत भाषा की शिक्षा प्राप्त हुई। किंतु गांव की पाठशाला में इन्हें अपनी प्रा भिक शिक्षा उर्दू में प्रारंभ करनी पड़ी। उस समय संस्कृत व हिंदी स्कूलों के लि अछूत भाषा मानी जाती थी। अपनी आत्मकथा में उन्होंने स्वयं लिखा है कि संस्कृत भाषा उस समय स्कूल में वैसे ही अछूत समझी गयी थी, जैसे मद्रास के सुं दरी ब्राह्मणों में वहां की शूद्र जाति समझी जाती है।' विवश होकर बालक द्विवेदी को रायबरेली के जिला स्कूल में अंगरेजी के साथ फारसी पढ़नी पड़ी। १३ वर्ष की अवस्था में दौलतपुर से ५८ किलोमीटर दूर रायबरेली पैदल चलकर आटा-दाल पीठ पर लादकर उन्हें ले जाना पड़ता था। उस समय आवागमन के साधनों का सुदूर ग्रामों में अभाव जो था। रायबरेली में एक वर्ष तक बड़े कष्टों के साथ उन्होंने अध्ययन किया। इसके उपरांत इन्होंने रनजीतपुरवा (उन्नाव) और फतेहपुर के वर्नाक्युलर मिडिल स्कूलों में चार वर्ष तक शिक्षा ग्रहण की। आर्थिक कठिनाइयों के कारण मिडिल पास करने के बाद इन्हें स्कूली शिक्षा को बंद करना पड़ा।

नौकरी के लिए अपने पिताजी के साथ द्विवेदीजी बंबई चले गये। स्वाध्याय में इनकी रुचि थी ही। बंबई में इन्होंने भी

गुजराती, मराठी और अंगरेजी भाषाओं का अच्छा अध्ययन किया । साथ में तार का काम भी सीखते रहे, जिसके कारण इन्हें रेलवे में नौकरी मिल गयी । रेलवे सेवा में विभिन्न पदों पर कार्य करते हुए द्विवेदीजी झांसी में जी. आई. पी. रेलवे के डिस्ट्रिक्ट ट्रैफिक सुपरिंटेंडेंट कार्यालय में बड़े बाबू हो गये । पांच वर्ष उपरांत एक अंगरेज अधिकारी से कुछ कर्मचारियों को दस बजे के स्थान पर प्रातः आठ बजे कार्यालय बुलवाने के विषय को लेकर विवाद हो गया । द्विवेदीजी न्यायप्रिय व्यक्ति थे। इन्होंने अंगरेज अधिकारी से कहा कि 'मैं स्वयं अन्याय सह लूंगा किंतु अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को अन्याय सहने के लिए बाध्य नहीं करूंगा ।' वे स्वयं आठ बजे कार्यालय पहुंचने लगे, किंतु अपने अधीनस्थ लिपिकों को ८ बजे आने का आदेश नहीं दिया । इस प्रकार बात बढ़ गयी और द्विवेदीजी ने त्यागपत्र दे दिया ।

झांसी में रहते हुए रेलवे सेवाकाल में इन्होंने बंगाली बाबुओं से संपर्क स्थापित करके बंगला भाषा का सम्यक ज्ञान प्राप्त कर लिया । कार्यालय के समय के उपरांत स्वाध्याय तथा साहित्य-सेवा में संलग्न रहते थे। भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र की 'कवि-वचन सुधा' नामक मासिक पत्रिका के वे नियमित पाठक थे । इसी समय 'इंडियन प्रेस' प्रयाग से प्रकाशित एक स्कूली हिंदी रीडर-पाठ्य पुस्तक की समीक्षा के कारण इनका परिचय 'इंडियन प्रेस' के स्वामी बाबू चिंतामणि घोष से हुआ । संयोग से वे बंगाली होते हुए भी हिंदी भक्त थे और द्विवेदीजी की समीक्षा का उन पर अच्छा प्रभाव पड़ा । इंडियन प्रेस से 'सरस्वती' मासिक पत्रिका का प्रकाशन भी हो रहा था । रेलवे-सेवा से द्विवेदीजी द्वारा त्यागपत्र देने का समाचार पाते ही बाबू चिंतामणि घोष ने 'सरस्वती' के संपादन का भार संभालने के लिए उन्हें आमंत्रित किया । हिंदी के सौभाग्य से द्विवेदीजी ने सन १९०३ ई. में यह कार्य सहर्ष स्वीकार कर लिया । रेलवे सेवा में उन्हें उस समय २५० रुपया प्रति मास वेतन मिल रहा था । सरस्वती सम्पादक के रूप में उन्होंने मात्र २३ रु. मासिक पारिश्रमिक पर कार्य प्रारंभ करके अपने हिंदी-प्रेम और न्यायप्रियता के लिए इतने बड़े त्याग का अभूतपूर्व उदाहरण प्रस्तुत किया । 'सरस्वती' ने हिंदी के नवीन युग का आरंभ किया ।

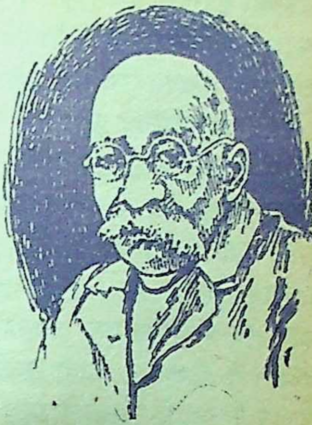

सरस्वती संपादक के रूप में उन्हें महत्वपूर्ण कृतित्व की चर्चा करने के पूर्व उनके असाधारण व्यक्तित्व की कुछ जानकारी प्राप्त कर लेना प्रासंगिक होगा।

संयोग से मुझे अपने पितामह स्व. पं. सिद्धेश्वर मिश्र बैद्य के साथ दौलतपुर जाने का सुयोग बाल्यावस्था में यदाकदा मिल जाया करता था। पितामह प्रायः परिवार की शादी-विवाह अथवा आमों की फसल में दौलतपुर जाया करते थे। अपने घर में कम, द्विवेदीजी के साथ उनका समय अधिक व्यतीत होता था। द्विवेदीजी उनके साथ प्रारंभिक कक्षाओं में पढ़े थे, दोनों ही आम के प्रेमी थे, वैद्यक शास्त्र का अध्ययन भी द्विवेदीजी का अच्छा था। इन अनेक कारणों से मेरे पितामह और उनकी अधिक घनिष्ठता थी। मैं उनके साथ लग लेता था। मेरी अवस्था तब १०-११ वर्ष की थी।

आचार्य द्विवेदी ठिगने कद और भरे हुए शरीर के थे। उनका मुखमंडल तेजस्वी था। बड़ी-बड़ी घनी श्वेत धवल मूंछें तथा भौंहें उनके उज्ज्वल ललाट और अंग-प्रत्यंग के अलौकिक तेज से मिलकर उनके व्यक्तित्व को रोबीला बनाती थीं। ग्रामनिवासी बतलाते हैं कि वे अत्यधिक परिश्रमी एवं अध्ययनशील थे। सन १९१८ ई. में सरस्वती के संपादक-पद से अवकाश-ग्रहण कर वे दौलतपुर में ही रहते थे। प्रातःकाल और सायंकाल खेतों और बागों का भ्रमण नित्य करते थे। अधिकांश समय अध्ययन में तथा पंचायत के प्रधान हो के कारण उन्हें कुछ समय ग्राम-समस्या के निराकरण हेतु भी देना होता था द्विवेदीजी मितव्ययी के रूप में प्रसिद्ध थे अपने वेतन के एक तिहाई से वह आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे। शेष वेतन पत्रिकाओं के चंदों में, पुस्त खरीदने में, तथा जरूरतमंद विद्यार्थि विधवाओं, निराश्रित व्यक्तियों की सहा तार्थ व्यय करते थे। वे दयालु और प्रकृति के स्वाभिमानी व्यक्ति थे, कि बाहर से बड़े कठोर प्रतीत होते थे।

द्विवेदीजी निस्संतान थे। उनके कमला किशोर उनके साथ रहते थे। प गंगा में डूबकर दिवंगत हो गयी थीं उनकी स्मृति में अपने घर के सामने संदिर का निर्माण कराया, जिसमें स्वती और लक्ष्मी की मूर्तियों के अपने पत्नी की मूर्ति की स्थापना कराई इससे कुछ गांव वाले वृद्ध लोग उ रुष्ट रहा करते थे।

आचार्य द्विवेदी कट्टर देश-भक्त थे वे स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग पर बल दे थे और स्वयं उनके प्रयोग को बढ़ावा दे थे। यथासंभव विदेशी वस्तुओं से वे द रहते थे। उनके स्वदेश-प्रेम का उदाह देते हुए लखीमपुर निवासी एक हिं लेखक पं. सूर्य नारायण दीक्षित, एडवो ने अपने एक संस्मरण में लिखा है कि 'एक बार लखनऊ में द्विवेदीजी ने मु कहा कि चलो किसी अच्छे दर्जी के

अच्छा सूट दे आवें। अमीनाबाद में एक मूल्यवान रेशमी वस्त्र का थान खरीदा और एक बहुत बड़ी दुकान में सिलने दे दिया। आपके पास एक गाढ़े का थान भी था। वह भी आपने सिलने के लिए दे दिया पर गाढ़े के सूट ठीक सिलने के लिए इतनी बार चिंता प्रकट की जितनी चिंता रेशमी सूट के लिए नहीं की थी। उनकी यह चिंता देखकर मुझे हंसी आ गयी और मैंने व्यंग्यपूर्वक कहा कि द्विवेदीजी आप विचित्र हैं। २० रुपए के रेशमी थान के लिए परवाह नहीं, परंतु दो रुपए के गाढ़े के थान के लिए इतनी चिंता। इस पर वे हंसकर बोले, 'तुम्हें मालूम नहीं कि यह गाढ़ा थान हमारे जिले का बना हुआ है, इसलिए इस पर हमारी इतनी ममता है।'

इसके अतिरिक्त द्विवेदीजी के असाधारण व्यक्तित्व का परिचय उनके द्वारा लिखे गये पत्रों से मिलता है। हिंदी और संस्कृत के अनेक विद्वानों के साथ उनका पत्र-व्यवहार चला करता था। द्विवेदीजी के पत्र हिंदी-साहित्य की अमूल्य निधि हैं। वेद-विद्या के गंभीर अध्येता तथा पुरातत्ववेत्ता आचार्य डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल को द्विवेदीजी के एक पत्र दिनांक १३ दिसंबर सन २२ के माध्यम से यह भ्रम हो गया कि द्विवेदीजी को कुछ आर्थिक कष्ट है। द्विवेदीजी के उक्त पत्र का अंतिम वाक्य था 'मेरी कौटुम्बिक दशा दयनीय है, परमात्मा से मेरी शुभचिंता कीजिये।' अतः वासुदेवशरणजी ने अपने एक मित्र से मिलकर कुछ धन एकत्रित किया और उसे भेंट करने के लिए उनकी अनुमति मांगी। गोपनीयता के कारण पत्र संस्कृत में लिखा। पत्र हिंदी में न लिखने के कारण अंत में क्षमायाचना भी की। यह पत्र उन्होंने मथुरा से २०-१२-३२ को लिखा, जिसका आदि एवं अंत निम्न प्रकार है :–

'महावीर प्रसादाय द्विवेदिकुल जन्मने
श्रीविभूषिताय भूयात्सततं मे नमो नमः
हिंदीमपहाय संस्कृतायश्रयणं क्षन्तव्य
गुह्या मिधेये स्मिन्
भावस्थो यं जनः वासुदेवाभिधानः।

संस्कृत में लिखित इस पत्र को पाकर द्विवेदीजी आश्चर्यचकित रह गये और उन्होंने पत्र पाते ही दिनांक २२-१२-३२ के निम्नलिखित पत्र के माध्यम से उन्हें ऐसा अनर्थ करने से रोक दिया–

भाई वासुदेव,

यह क्या लिख मारा। ज़रा भी याद नहीं मैंने अपने पत्र में क्या लिखा था जो आपको ऐसा ख्याल हुआ। अगर मैंने कौटुम्बिक दुरवस्था का जिक्र किया है तो उसका कारण अर्थकृच्छता नहीं, कलह है। मेरा भानजा अपढ़ रह गया, वह आवारा भी है। वही कष्ट मुझे खलता है। काफी पेंशन मुझे मिलती है। ५२ बीघे का काश्तकार हूं। अन्न-वस्त्र की कमी नहीं। जो कुछ पास था अधिकांश काशी विश्वविद्यालय और नागरी प्रचारिणी सभा को दे दिया। अब भी कुछ न

(शेषांश पृष्ठ ६२ पर)

एक चर्चित व्यक्तित्व

जापानी भविष्यवक्ता मुराकामी

जापान के भविष्यवक्ता योशियावी मुराकामी का कहना है कि वे शायद विश्व एकमात्र व्यक्ति हैं, जिन्हें भगवान ऊपर से अपने संदेश सीधे भेजते हैं। मिलिये, इ अविश्वसनीय भविष्यवक्ता से।

राजनीतिज्ञों को उचित परामर्श देने वाले भविष्यवक्ता सिर्फ़ हमारे देश में ही नहीं हैं, जापान जैसे आधुनिकतम और विकसित देश में भी हैं। और, उनमें सबसे अधिक चर्चित व लोकप्रिय हैं – योशियावी मुराकामी, जिनका कहना है कि वे शायद विश्व के एकमात्र व्यक्ति हैं, जिन्हें भगवान ऊपर से अपने संदेश सीधे भेजते हैं।

ऊपर बैठे भगवान से उनका 'संपर्क' कब और कैसे हुआ, इस बारे में वे एक घटना सुनाते हैं, 'सत्रह साल पहले मैं बुलेट ट्रेन में सफ़र कर रहा था कि मुझे अपने अंतर में गूंजती एक आवाज़ सुनायी दी, जो मुझसे कह रही थी, 'मैं इस समूचे ब्रह्मांड का एकमात्र स्वामी बोल रहा हूं। मैं तुम्हें समय-समय पर कुछ संदेश भेजता रहूंगा, जिन्हें सही व्यक्ति तक पहुंचाने की जिम्मेदारी तुम्हारी होगी।'

'इस आवाज ने मेरा जीवन ही बदल कर रख दिया। मैंने दंत-चिकित्सिक का अपना धंधा छोड़कर, भगवान का संदेश-वाहक बनने का नया 'धंधा' अपनाया। अब मैं लोगों को बताता हूं कि भगवान मेरे पास क्या संदेश भेजा है। इस सं में मैं यह भी बता दूं कि जब मैंने बुले ट्रेन में पहली बार भगवान की आवा सुनी थी, तब मेरे मन में भगवान की छबि उभरी थी, वह बौद्ध धर्म की दया अनुकंपा की मूर्ति देवी कान्नन की मूर्ति की प्रतिकृति लगती थी, जो तोकि में मुख्य सरकारी कार्यालय के प्रांगण प्रतिष्ठित है।'

१९८२ में जापान के प्रधान मंत्री प पर आसीन होने वाले यासूहिरो नाकासों पहले जापानी राजनीतिज्ञ थे, जो 'दै संदेश-वाहक' मुराकामी की ओर आक षित हुए। मुराकामी के संसर्ग में आक स्वयं उन्हीं के शब्दों में, 'मेरे सब संदेह संशय दूर हो गये।' वे पार्लमेंट में विरोधियों के प्रश्नों व आक्षेपों के उत विश्वासपूर्वक देने लगे। नाकासोने देखादेखी उनके अनुयायी भी मुराकामी

भक्त व अनुयायी बन गये ।

घर के बाहर राजनीतिज्ञों की लाइन

जब नाकासोने का कार्यकाल समाप्त होने को आया, तो प्रधान मंत्री पद के उम्मीदवार और उनके समर्थक मुराकामी के घर के चक्कर लगाने लगे । सब यह जानने को इच्छुक थे कि भगवान ने जापान के अगले प्रधान मंत्री के चुनाव के बारे में मुराकामी के पास क्या 'संदेश' भेजा है । उनके घर के बाहर राजनीतिज्ञों की लाइन लगी रहने लगी । उनके घर फोन करने वाले सत्ता-लोलुप राजनीतिज्ञों की संख्या भी बढ़ती जा रही थी ।

जापान की लिबरल डैमोक्रेटिक पार्टी में अनेक गुट बन गये थे, और हर गुट का नेता प्रधान मंत्री की कुर्सी पर बैठने के लिए जोड़तोड़ करने में लगा था । पार्टी के महासचिव नोबोरू ताकेशिता इस कोशिश में थे कि नाकासोने से पूर्व आम राय से शासन करने की वह प्रणाली, जिसे नाकासोने ने ध्वस्त करके रख दिया था, पुनः आरंभ हो । पार्टी के सब गुटों में उनके गुट की शक्ति सबसे अधिक थी, कारण पार्टी के ४४५ सदस्यों में से ११४ सदस्य उनके गुट के ही थे । उनके प्रतिद्वन्द्वी शिंतारो आबे ने उनके साथ एक समझौता स्थापित किया, किंतु दोनों में इस बात पर सहमति नहीं थी कि प्रधान मंत्री कौन बनेगा ।

तोशियो कोमोतो के एक छोटे से गुट ने भी ताकेशिता के साथ संधि की, इस आशा से कि यदि ताकेशिता प्रधान मंत्री बने, तो उनके गुट को भी कुछ मंत्री-पद मिल जायेंगे । सुसुमू निकायदो का गुट कभी अत्यंत शक्तिशाली हुआ करता था, लेकिन अब उस गुट में सिर्फ़ १५ सदस्य रह गये हैं, और उन्हें कोई नहीं पूछता ।

लेकिन इसी निकायदो को 'भगवान के संदेश वाहक' मुराकामी ने अपने संरक्षण में लिया । जब निकायदो उनसे मिलने गये, तो मुराकामी ने उनसे कहा, 'तुम अमरीका में रहे हो, और विदेशी मामलों से बखूबी परिचित हो । जापान का भविष्य तुम्हारे हाथों में सुरक्षित रहेगा । अपने नेता के प्रति विश्वासघात करने वाला ताकेशिता कैसे जापान की तरुण पीढ़ी के सामने आदर्श प्रस्तुत कर, उनका नेतृत्व कर सकेगा ? मुझे 'दिव्य संदेश' प्राप्त हुआ है कि नाकासोने के बाद तुम ही प्रधान मंत्री बनो ।'

जब वे निकायदो से इस प्रकार बात कर रहे थे, तब ताकेशिता भी उनके पास ही बैठे थे, और गुस्से से तिलमिला रहे थे ।

'भगवान के संदेश-वाहक' का यह संदेश कितना सच निकला, यह तो आप जानते ही हैं ।

['टाइम्स आफ इंडिया' से साभार]

◆

इंद्रियों पर जिसका अधिकार है, उसी की बुद्धि प्रतिष्ठित अथवा सुस्थिर हो सकती है ।

—गीता

◆

(पृष्ठ ५९ का शेषांश)

कुछ दान दिया ही करता हूं। जिसे-जिसे थैली की बात लिखी हो फिर लिखिये कहीं उसकी चर्चा न हो। उससे मुझे कष्ट होगा। यह सब कुछ है, पर आपकी कृपा का जो अनुभव मुझे अब हुआ है, वह कभी भूलने का नहीं। बहुत-बहुत धन्यवाद। इसकी पहुंच लिखिये। **—म. प्र. द्विवेदी**

हिंदी के इस पत्र के साथ द्विवेदीजी ने संस्कृत पत्र के उत्तर में संस्कृत के तीन श्लोक भी भेजे और अंत में यह भी लिखा कि संस्कृत से अनभिज्ञ होने के कारण मैं परीक्षा भय से भयभीत भी हूं।

संस्कृत पद्य के द्वारा द्विवेदीजी ने डॉ. वासुदेव के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित की और यह भी लिखा कि मैं इस समय नकुली नहीं चाहता। कृपया आप मेरा अपराध क्षमा करें। आप किसी अन्य दानपात्र, विद्वान्, साहित्यरत्न, और प्रशंसित व्यक्ति को प्राप्त कर अपनी अभिलाषा पूरी करें।

इन पत्रों से द्विवेदीजी के व्यक्तित्व की महानता, कौटुम्बिक दुरवस्था के बावजूद त्यागमय वृत्ति, दानशीलता, संस्कृतभाषा पर सम्यक् अधिकार, विनयशीलता आदि का परिचय मिलता है।

आचार्य द्विवेदी बहुज्ञ थे। विभिन्न भाषाओं के ज्ञान के साथ-साथ इन्होंने व्याकरण, पिंगल, दर्शन, अर्थशास्त्र, ज्योतिष और आयुर्वेद का अच्छा अध्ययन किया था। यद्यपि अंगरेजी शासन से मुक्ति पाने के आंदोलन में इन्होंने कोई
सक्रिय भाग नहीं लिया, किंतु
की बेड़ियों से जाति और राष्ट्र की
को मुक्त कराने की उनकी सतत
बनी रहती थी।

सरस्वती की संपादकीय
के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो
है कि किस प्रकार सोती हुई
आत्मा को द्विवेदीजी ने हिंदी की
आकृष्ट किया। उस समय
ने कहा था कि 'भारत की
लिए अंगरेजी की गुलामी से मुक्ति
जरूरी है।'

'भारत स्वतन्त्र राष्ट्र होगा।
के बल पर नहीं, किंतु अपनी
भाषा के बल पर।' यह निर्विवाद
है कि आचार्य महावीर प्रसाद
की कठिन तपस्या और आजीवन
के फलस्वरूप ही हिंदी-भाषा
के सौध-शिखर पर आसीन होकर
भाषा' पद को ग्रहण करने में
हो सकी है। हिंदी-साहित्य के
का द्वार भी द्विवेदीजी ने ही
किया।

आपके कृतित्व का मूल्यांकन
के संपादनकाल (सन १९०३-१८ ई.)
हिंदी-सेवाओं के परिप्रेक्ष्य में करना
समीचीन होगा। महान संपादक,
लेखक, विचारक, निबंधकार, सुधी
क्षक, काव्य भाषा के रूप में खड़ी
के प्रतिष्ठापक आचार्य के अनेक

तथा विभिन्न विषयों के विविध शैलियों के अनेक लेखकों को प्रोत्साहन देकर द्विवेदीजी ने अपने साहित्यिक-जीवन में हिंदी भाषा को जो दिया, वही उनके कृतित्व का चिरस्मरणीय स्मारक है। द्विवेदीजी का समय रचनात्मक विकास का नहीं, वरन् हिंदी के अभावों की पूर्ति का था। इन्होंने एक सच्चे गुरु, पथ प्रदर्शक, प्रेरक के रूप में हिंदी के लेखकों का मार्ग प्रदर्शन किया। इनका महत्व स्वयं बड़े लेखक के अथवा महाकवि के रूप में न होकर बाबू मैथिलीशरण गुप्त सदृश आधुनिक युग के प्रतिनिधि राष्ट्रकवि, प्रेमचन्द सदृश कहानीकार, रामचन्द्र शुक्ल सदृश समालोचक, गणेशशंकर विद्यार्थी, हरिभाऊ उपाध्याय, पं. देवीदत्त शुक्ल जैसे कुशल संपादकों के निर्माण में है। द्विवेदी युग के कतिपय लेखक और कवि आचार्य द्विवेदी के शिष्यत्व को स्वीकार करने में अपना गौरव समझते थे।

द्विवेदीजी ने ज्ञान के विविध क्षेत्रों– जैसे इतिहास, अर्थशास्त्र, विज्ञान, पुरातत्व, चिकित्सा, राजनीति, नारी-समस्या, जीवनी आदि से सामयिक एवं प्रेरणादायक सामग्री लेकर हिंदी की समृद्धि की। संस्कृत, बंगला, अंगरेजी के महत्वपूर्ण ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद प्रस्तुत करके इन्होंने साहित्य के अभावों की पूर्ति करने की चेष्टा की। इनके मौलिक तथा अनूदित पद्य व गद्य ग्रंथों की संख्या लगभग ८० है। साहित्य और भाषा के क्षेत्र में सुधार एवं आदर्शवादी प्रवृत्तियों के कारण सच्चे अर्थों में इन्होंने गांधीवादी युग का प्रतिनिधित्व किया। वस्तुतः कहना तो यह चाहिये कि गांधीवादी युग की नींव द्विवेदी-युग है, क्योंकि गांधी का राजनीतिक वर्चस्व सन १९१७-१८ से प्रारंभ हुआ। ठीक उसी समय द्विवेदीजी ने 'सरस्वती' के संपादक पद से अवकाश ग्रहण किया। भारतीय नवजागरण का जो बीज तिलक, गोखले, अरविंद आदि ने बोया, द्विवेदी ने जनभाषा हिंदी के माध्यम से उसे अंकुरित किया, उसे खाद-पानी प्रदान की, उसी को आगे चलकर गांधीजी ने पल्लवित किया।

मानवतावादी दृष्टिकोण, आस्तिकता, कर्त्तव्य-निष्ठा, न्यायप्रियता, आत्मसंयम, मितव्ययता, सादा-जीवन उच्च विचार, परहित साधना, राष्ट्रभाषा प्रेम, स्वदेशी भावना, समाज सुधार, रूढ़िवादिता का विरोध, स्त्री शिक्षा एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रबल समर्थन करके द्विवेदीजी ने गांधीजी को एक सुदृढ़ पृष्ठभूमि प्रदान की। ये विशेषताएं द्विवेदीजी के व्यक्तित्व की महानता की परिचायक हैं। आपके गौरवशाली कृतित्व के पीछे आपके महान व्यक्तित्व की गरिमा क्रियाशील रही है। संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि यदि उनका कृतित्व प्रशंसनीय रहा है, तो उनका व्यक्तित्व पूजनीय था।

—सद्भावना नगर, बिरहाना,
लखनऊ—२२६००४, उ. प्र.

□

मध्याह्न

□

रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'

रक्तिम पलाश के फूल झर गये मुरझ-मुरझ
बच गये प्रबालांकुर-से कुछ अधढ़रे शाल
फीके धुंधले पड़ गये विजन के रंगे छोर
बुझ गयी शिखा, पर कटे विहग से धंसे ताल

मधु विगत हुआ, सूखे टेसू, कचनार, कुटज
कट गयीं फसल-सी खड़ी घनी छांहें सारी
धू-धू बैसाखी प्रांतर की नीरव घाटी
सिर-मुड़ी चीवरा-सी तृष्णार्त दिशा-हारी

आवर्त धूल के सूखे पत्तों में उड़ते
औंघाये कौओं का विषण्य रव स्तब्ध पड़ा
भूली पर्वत संध्या की सुधि में थका-थका
लाठी लेकर काबुली शून्य तरु तले खड़ा

अधजली चिता-सी झुलसी तंद्रालुप्त दिवा
प्रेतों-से उखड़े अंधड़ दबे-दबे आते
झां-झां करते रुद्रातप में आक्षितिज फुंके
मध्याह्न ऊसरी ढली शून्यता भर जाते

गृहहीन उदासी तनी रश्मियों से गलती
आलोक सुलग कर पिघला पारद रंग जाता
परित्यक्त केंचुली जैसा निष्प्रभ सन्नाटा
पर्तों-पर्तों अवनी-नभ में जमता जाता

—पचपेढ़ी, साउथ सिविल लाइन, जबलपुर, म. प्र.—

□

प्रेरक व्यक्तित्व

मेरा संघर्ष-भरा जीवन

□ शैलकुमार जैन

जन्म के दसवें महीने से आंखों की जो बीमारी शुरू हुई तो पांच वर्ष की अथक चिकित्सा के पश्चात आंखों की ज्योति लेकर ही उसका समापन हुआ। अब मैं था—और था आंखों के सामन फैले अंधकार का अनंत विस्तार और पूरी उम्र—अनजान, अनदेखा और अनजिया संपूर्ण जीवन!

मुझे आज भी अच्छी तरह याद है कि नेत्रों की ज्योति जाने के कारण न तो मैं कुंठित ही हुआ और न ही निराश।

अब मैं लगभग तेरह वर्ष का हो चला था। अपने जीवन को अच्छी तरह समझने लगा था। जीवन में आने वाली कठिनाइयों को चुनौती समझ कर उनका सामना करने लगा था। अठारह वर्ष की उम्र होते-होते मैंने हरियाणा में पानीपत के एक अंध-विद्यालय तथा पंजाब बोर्ड से आठवीं की परीक्षा पास कर ली। साथ में हाथ करघे का काम और बेंत की बुनाई का काम भी सीख लिया था। बाईस वर्ष की उम्र होने तक मैंने पंजाब बोर्ड से मैट्रिक और सोनीपत के हिंदू कालेज से प्री-यूनीवर्सिटी की परीक्षा पास की। यहां तक पहुंचने में मुझे न जाने कितनी शारीरिक और मानसिक समस्याओं से जूझना पड़ा।

अब मेरे अंदर इतना आत्मविश्वास आ गया था कि मुझे ऐसा लगता था कि जीवन के विकास में दृष्टि का अभाव आड़े नही आयेगा। मुझे लगा कि अब हरियाणा में मेरे विकास का जो चक्र शुरू हुआ है वह कहीं यहीं थमकर रह न जाय, इसके लिए मुझे जरूर ही किसी महानगर में जाना चाहिये। यही सोचकर आज से २५ वर्ष पहले मैं दो जोड़ी कपड़े तथा चालीस रुपये लेकर हरियाणा छोड़कर बंबई महानगरी में आ गया। जब स्टेशन पर उतरा तो ऐसा लगा कोई शक्ति मुझे प्रेरणा दे रही है कि मैं यहां उन ऊंचाइयों तक पहुंच सकूंगा, जिन तक कोई सामान्य नेत्र-दृष्टिवाला व्यक्ति पहुंच सकता है।

बंबई आकर सर्वप्रथम मैंने नैशनल एसोसिएशन फार दि ब्लाइंड की सहायता से विक्टोरिया मेमोरियल अंध-विद्यालय से तीन वर्ष का फिजिओथैरेपी का कोर्स किया, जिसके लिए भारतीय सरकार और नैशनल एसोसिएशन फार दि ब्लाइंड ने मिलकर मुझे १२५ रु. की मासिक छात्रवृत्ति दी। इस कोर्स को पूरा करने में मुझे रात-दिन मेहनत और न जाने कितनी ठोकरें खानी पड़ीं, न जाने कितनी रातें फुटपाथों, रेलवे प्लेटफार्मों पर तथा

झोपड़ियों में बितायीं।

तत्पश्चात् मैंने एलफिंस्टन कालेज में प्रथम वर्ष में दाखिला ले लिया। अब मैं फिजिओथैरेपी का धंधा करता तथा साथ में पढ़ायी भी करता। इस तरह करते-करते मैंने टेपरिकार्डर, पढ़कर सुनाने वालों और लेखकों की सहायता से एम. ए. की परीक्षा पास की। इसी दौरान मैंने कुछ राशि एकत्रित करके और कुछ अपने बनाये मित्रों से लेकर एक कमरा तथा रसोई का घर ले लिया, साथ ही रुइया कालेज में हिंदी के विभागाध्यक्ष डा. देवेश ठाकुर के निर्देशन में हिंदी में शोध कार्य की तैयारी शुरू कर दी। धीरे-धीरे मैंने दो कमरों वाला मकान ले लिया। फिर सन १९७९ में मैंने एक पोलियो-ग्रस्त लड़की से शादी कर ली।

१९८० में मुझे डा. देवेश ठाकुर के निर्देशन और उनकी सहायता से रुइया कालेज बंबई विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. की उपाधि मिल गयी। यहां तक पहुंचने में मुझे जितनी कठिनाइयों और संघर्षों का सामना करना पड़ा, जिसके परिणामस्वरूप मैं शरीर और मस्तिष्क दोनों से ही थक-सा गया। किंतु एक बात का संतोष अवश्य था कि यदि मनुष्य चाहे तो अपने जीवन में घोर विकलांगता के अभिशाप को वरदान में बदल सकता है। अतएव मैंने अपना साहस नहीं छोड़ा और मेहनत करता चला गया।

मैं जिस इमारत में रहता हूं उसी इमारत में एक बंद गैरज है, जिसको १९८३ में खरीद लिया। मेरे मन विचार आया कि यह सुंदर-सी ओथैरेपी की क्लीनिक खोली जाय। क्लीनिक खोलने के लिए जिन की आवश्यकता है उनके लिए तो पास पैसा है ही नहीं। अब मैं अपने मित्र से पैसा ले भी नहीं सकता था, गैरज खरीदने के लिए मैं उनसे पहले काफी रकम ले चुका था।

गैरज खरीदने के बाद जब मैं डॉई के मालिकों से मिला तब उन्होंने बातों से अंदाज लगा लिया कि क्लीनिक खोलने के लिए जिन मशीनों आवश्यकता है उसके लिए पैसा चाहिए वे बोले, 'जैन, तुम ऐसा क्यों नहीं करते हमारे ट्रस्ट 'अमर मेडिकल सेंटर' का बनवा लो और क्लीनिक का नाम मेडिकल सेंटर' रख दो। ट्रस्ट चलाने के लिए सभी आवश्यक दिला देगा।'

मेरी तो खुशी का ठिकाना न रहा।

अब मेरी २५ वर्षों से संजोयी मनोकामना पूरी होने जा रही थी। मैं सोचने लगा कि अपनी क्लीनिक उद्घाटन के लिए श्री विजय मर्चेंट से और कौन व्यक्ति हो सकता है। मैंने प्रार्थना की। १६-१०-८३ को दशहरे उन्होंने मेरी क्लीनिक में ज्योति उसका उद्घाटन किया। विजय न जाने मुझ जैसे कितने लोगों के

उजाला किया होगा। उस दिन मुझे अनेक व्यक्तियों की शुभकामनाएं मिलीं।

सन ८३ का अंत हमारे लिए अत्यंत शुभ रहा। एक ओर मेरी बेटी का जन्म और दूसरी ओर क्लीनिक का उद्घाटन। किंतु मुझे पता न था कि सन १९८४ मेरे लिए नये संघर्षों को लेकर आ रहा है। १९८४ की जनवरी के शुरू में महानगरपालिका का उच्च अधिकारी सफेद फीएट कार में तथा हाथ में ५५५ की सिगरेट की डिब्बी दबाये अपने साथ महानगरपालिका के दो आदमियों को लेकर आया। उसके अर्दली ने मेरी क्लीनिक की घंटी बजायी। मैंने बाहर आकर उनसे नमस्ते की और साथ ही कहा, 'कहिए मेरे लायक क्या सेवा है?' अधिकारी महोदय यकायक ऊंचे स्वर में बोलने लगे कि 'तुमने यह क्लीनिक किसकी इजाजत से खोली है?' और धमकी भरे शब्दों में बोलते ही गये। तब मैं बोला, 'जनाब, मैं न तो गलत काम करता हूं और न करने का आदी हूं। आप इतना बोल चुके हैं जो काफी है। ध्यान रहे यद्यपि मुझे दिखायी नहीं देता फिर भी मैं अपने अधिकारों को यूं ही नहीं जाने दूंगा। आपको ज्ञात होना चाहिये कि आपके ही आदमियों ने इस जगह को पास किया है लिखित रूप में। शायद आप गलती से किसी और क्लीनिक में जाने के बजाय मेरी क्लीनिक में आ गये हैं।'

इस पर वे कहने लगे, 'तुम मुझे मूर्ख बनाने की कोशिश मत करो। तुम्हारी ही इमारत में से किसी न तुम्हारी शिकायत की है।' मैंने कहा—'जनाब, कोई दुखों का मारा ही मेरी शिकायत कर सकता है। उसको मेरी क्लीनिक से क्या दुःख हुआ है यह तो मुझे नहीं मालूम है किंतु मुझे मालूम है आपका यकायक आना और मुझ पर चिल्लाना। कोई बात नहीं, आज तो आप आ गये हैं, लेकिन आगे से आप मुझे पत्र लिखिये या मुझे बुलाइये। मैं आपके पत्र का जवाब भी दूंगा और आपके दफ्तर में भी आऊंगा, परंतु अपने अधिकारों के लिए अंत तक लड़ूंगा।'

इस पर अधिकारी महोदय कहने लगे, 'ठीक है, डा. जैन, तुमको दिखायी नहीं देता, लेकिन इसका मतलब यह तो नहीं है कि मैं तुम्हें कानून को भंग करने दूं और मनमाने ढंग से क्लीनिक चलाने दूं।' मेरे कुछ कहने से पहले ही वे चले गये।

वह दिन पता नहीं कैसा था कि कितने ही दिनों का खाना और कितनी ही रातों की नींद हराम हो गयी। मन में अनेक विचार आने लगे यह कैसा समय आ गया है कि हम अपनी ही जगह के मालिक नहीं रह गये। अब महानगरपालिका से कभी पत्र आते, तो अधिकारी महोदय कभी खुद आ जाते और कभी मुझे बुलाते। मैं उनके दफ्तर जाता रहा, प्रश्नों के उत्तर देता रहा, परंतु संघर्षों का अंत न था। फिर भी मैंने हिम्मत नहीं हारी है और कभी न हारूंगा।

—गुलमोहर ए-८, जुहू क्रास लेन,
अंधेरी (प.), बंबई—५८

□

कहानी

मोह-भंग

□ राजेन्द्र परदे

मंगरुवा और समय चाहे जहां रहे, लेकिन रात को खाने के समय थाली लेकर जरूर पहुंचा जाता। कौशल्या भी जानती थी, इस कारण उसके लिए दो-चार रोटियां जरूर सिकवा देती। मंगरुवा जिस दिन ताड़ी पीकर दिन भर गायब रहता, उन्हें बहुत गुस्सा आता। वह जब खाना मांगने पहुंचता तो अंदर से ही कह देती, 'आज खाना नहीं बनाया है रे!'

मंगरुवा ने तो जैसे कौशल्या की नस ही पकड़ रखी हो, तुरंत ही बात बदल कर कहता, 'लगता है, भौजी हम से आज नाराज हैं।'

कौशल्या को अधिक गुस्सा न आता तो खाना लाकर दे जाती, अन्यथा गुस्से का पुनः प्रदर्शन करती हुई कहती–'एक बार कह तो दिया, आज खाना नहीं बना।,

इन सब बातों को सुनने का अभ्यस्त मंगरुवा पूछता, 'तबियत तो ठीक न है भौजी, शकुंतला कहां है?'

कौशल्या क्या जवाब देती। वह जानती थी कि खाना तो उसकी बेटी शकुंतला ही बनाती है। उसका काम तो मात्र व्यवस्था तक ही सीमित है। पहले प्रकाश की बहू बनाती थी, वह जब से प्रकाश के साथ चली गयी, शकुंतला ही बना रही है। मंगरुवा यह सब जानता है। जानता क्यों नहीं? घर से बाहर तक कोई काम होता, वही करता था। एक बा पानी भी जरूरत होती तो शकुं बाल्टी और डोर मंगरुवा के सामने ला रख देती और कहती 'मंगरू काका, बाल्टी पानी ला दो, थाल धोकर मैं तुम्हारे लिए भोजन लाती हूं।'

मंगरुवा समझता था कि शकुंतला पानी की जरूरत किसी और कार्य के होगी, लेकिन बहाना बना रही है, धोने का। इसीलिए बाल्टी-डोरी हुए उलाहना देता, भाई, इतना अफसर बन गया है। यह नहीं होता उससे कहकर घर में एक चाप (हैण्ड पाइप) लगवा लें। सोचती मंगरुवा तो है ही फिर क्यों भाई का खर्च करायें।

शकुंतला चुपचाप उसकी बातें सु अपने काम में लग जाती और मं बुदबुदाते हुए आत्माराम के कुएं से लाकर दे जाता।

कौशल्या हारकर मंगरुवा को दे आती और अपने गुस्से के गुबार उतारते हुए बोलती–'लें पिछले जन तेरा भी कर्ज खाये थी, सो ही भर रही

कौशल्या की तीखी बातें मंगरुवा को खलती थीं कि नहीं, यह तो वही जानता, लेकिन यह जरूर था कि अगर उसकी जगह कोई दूसरा होता तो शायद ही दशरथ सिंह के यहां रुकता। मंगरुवा की सेहत पर उसका असर न पड़ता। उल्टा वह कहता, भौजी अगले जनम में हमने कोई बहुत बड़ा पुण्य किया था जो आज आप लोगों की कृपा हो गयी। नहीं तो... भौजी।'

यह सब सुनते ही कौशल्या का गुस्सा काफूर हो जाता और बोलती, 'अच्छा, जा चुपचाप खा।'

खाना लेकर मंगरुवा दुआर पर बैठकर खाने लगता। अगर दुआर की चौकी पर दशरथ सिंह बैठे मिलते तो खाने के साथ-साथ मंगरुवा कहता—'भइया! लगता है, भौजी! आज मुझसे बहुत नाराज हैं।'

दशरथ सिंह ऐसी बातों का क्या जवाब देते। चुप रहते। दशरथसिंह को चुप देखकर मंगरुवा फिर बोलता, 'लगता है आप भी मुझसे नाराज हैं।'

दशरथ सिंह को आखिर बोलना ही पड़ता, 'नहीं रे। हम क्यों नाराज होंगे?'

'तो फिर बोलते क्यों नहीं ।'

'क्या बोलूं ।'

'चातरवाले खेत में इस साल अगर आर. आर. २१ बोया जाय तो खूब होगा ।'

'लेकिन बिना खाद-पानी का प्रबंध किये कैसे होगा ?'

'तो प्रकाश को लिख नहीं देते कि वह खेत में पंप सेट लगवा दे । उसके लिए तो यह कोई बड़ी बात नहीं है ।'

'उसके लिए तो नहीं हैं, लेकिन मेरे लिए तो है न ।' दशरथ सिंह एक उच्छ्वास छोड़कर बोले । वह उससे अधिक बहस नहीं करना चाहते थे, सो कहा, 'चुपचाप खा । तुझे कितनी बार समझाया कि खाना खाते समय बोला नहीं जाता ।'

ऐसे मौके पर मंगरुवा समझ जाता कि दशरथ सिंह की कोई दु:खती नस दब गयी है, तभी ऐसी बातें बोल रहे हैं । वह बात के रुख को मोड़ देता, 'शकुंतला का ब्याह तो इस साल करेंगे न ?'

'सोचता तो यही हूं ।' वार्ता में भाग लेते हुए दशरथ उत्तर देते ।

'तो कहीं निकलते क्यों नहीं ? अब तो दशहरा भी बीत गया है . . . लोग-बाग कहते हैं कि दशहरे से दशों दुआर खुल जाते हैं, जिधर जायें कोई हरज नहीं रहता ।'

'वह तो ठीक है ।'

दशरथ ने उसकी बातों का समर्थन किया तो मंगरुवा का उत्साह बढ़ गया । बोला, 'शिवपुर वाले लड़के का क्या हुआ ? आप कह रहे थे कि लड़का तथा परिवार सब ठीक है . . न हो तो आप जाक को क्यों नहीं ठीक कर लेते ?' जिम्मेदारी को जताते हुए मंगरुवा 'यहां की चिंता आप न करें . . हैं ही जानवरों को देखने के लिए ।'

'सो तो ठीक है . . . लेकिन . . . एक बैल खरीदना जरूरी है, उसके चार दिन बाद जुताई-बुआई कैसे हों

दबी आवाज में दशरथ ने समस्या रखी, तो मंगरुवा ने तुरंत प्रस्तुत कर दिया–'प्रकाश को लिख नहीं देते ।'

जहां मंगरुवा हर समस्या का प्रकाश के पास ढूंढ़ता था, वहीं दशरथ समस्या के मूल में प्रकाश को ही पा इसीलिए प्रकाश का नाम आते ही चुप हो जाते थे, लेकिन इतना सब पर भी उनका दिल यह मानने को न था कि प्रकाश इतना बदल विश्वास करने का वे जब-जब प्रयास तब-तब उनके मानस पटल पर, वह उभर आता, जब प्रकाश छोटा था उन्हें कभी उदास देखता तो कितने भो से कहता, 'बापू ! क्यों उदास हो ? गया . . . बहुत काम करना पड़ता है इसीलिए थक जाते होंगे, घबराओ नहीं हम जब बड़े हो जायेंगे तो तुम्हें कोई काम करने नहीं दूंगा और देखना, बड़ी कोठी बनाऊंगा कि लोग दूर देखकर कहेंगे, वह देखो दशरथ सिं भव्य कोठी ।'

बेटे की भोली बातों को सुनकर दशरथ ह अपनी पीड़ा भूल जाते । जब प्रकाश हता, 'बापू, अभी आप पैदल जाते हो न? तब मैं आपके लिए सोनपुर के मेले से क घोड़ी ला दूंगा । फिर उसी से आया-या करना . . . पैर भी नहीं थकेंगे ।'

बेटे को पिता की पीड़ा कितनी सालती ी, वह कहता था, 'बापू, ऐसा करना-ससे पहले एक बैल और जरूर खरीद ना... अच्छा नहीं लगता जो तुम चौधरी से बैल मांगते हो । पता नहीं चौधरी अपने आपको क्या समझते हैं जो तना नखरा दिखाते हैं ।'

वह पिता की समस्याओं को हल करने का विचार ही नहीं रखता था बल्कि सलाह ते हुए चेतावनी भी देता था–'देखो बापू! त लाना तो चौधरी को कभी मत देना . . . कितना भी मांगे ।'

बेटे की बातों को सुनकर कभी-कभी सी आ जाती तो प्रकाश टोकते हुए हता, 'बापू; तुम हंस रहे हो । देखना पढ़कर कितना बड़ा आदमी बनता । कौन पिता नहीं चाहता कि उसका पुत्र ड़ा होकर नाम कमाये ? दशरथ सिंह ने भी विद्यालय का मुंह नहीं देखा था, तो ी उन्होंने प्रकाश को पढ़ाने के लिए कोई र-कसर नहीं छोड़ी थी ।

ायद, पिता की निष्ठा और पुत्र के का फल था कि प्रकाश सदैव प्रथम णी में उत्तीर्ण होता चला गया । जब शिक्षा हेतु विदेश जाने की बात आयी तो दशरथ ने अपने पूर्वजों की धरोहर को भी दांव पर लगा दिया था । लोगों ने सलाह भी दी थी, 'पागल हो गये हो क्या? बेटे को विदेश भेजने के लिए अपने परिवार के सभी सदस्यों के पेट पर लात मार रहे हो ? पढ़-लिखकर प्रकाश कहीं, वहीं रह गया और तुम्हें नहीं पूछा तो तुम्हें जीवन काटना मुश्किल हो जायेगा ।'

बेटे के भविष्य को सवारने के लिए दशरथ इतना आतुर थे कि उन्हें किसी की भी सलाह रत्ती भर नहीं भाती थी । ऐसे में भूलासिंह की यह बात उन्हें और विह्वल बना देती कि दशरथ सिंह अगर प्रकाश लिख-पढ़कर लायक हो जायेगा तो कितनी ही जमीन खरीद देगा ? मान लो, तुम्हारे लिए कुछ नहीं करेगा, तो लोग यह कहेंगे ही कि देखो, दशरथ का लड़का कितना बड़ा आदमी बन गया है ।'

यह सोचकर दशरथ ने पूर्वजों से प्राप्त जमीन में से मात्र दो बीघा छोड़कर शेष सब जमीन बेच दी थी । भविष्य की उज्ज्वल आशा में समय बीत गया । प्रकाश विदेश से पढ़कर आया तो शहर में ही एक बड़ा अधिकारी बन गया ।

नवीनता की चमक में कुछ दिनों तक सभी मौन रहे थे, लेकिन धीरे-धीरे गांव-जवार के लोग यह चर्चा करने लगे कि प्रकाश तो एकदम नालायक निकला । भूल ही गया कि गांव में उसके मां-बाप भी मौजूद हैं । दशरथ भी अपने मन को समझाने का प्रयास कर रहे थे । उनका मन इस बात को

स्वीकार करने को तैयार नहीं था कि प्रकाश इतना बदल जायेगा। वे अगर ऐसा जानते तो शायद भूलकर भी शहर नहीं जाते।

वे जाना भी नहीं चाहते थे। उनकी पत्नी कौशल्या जब जिद करती तो कहते, जीवन भर तो गांव रहे . . . अब शहर जाकर क्या होगा? परंतु पति की पीड़ा और बेटे की मानसिकता से अनभिज्ञ कौशल्या ने जिद की तो दशरथ पत्नी को साथ लेकर शहर चल दिये।

मकान ढूंढ़ने में अधिक परेशानी नहीं हुई। गेट पर ही चपरासी मिल गया। उसी से पूछा 'प्रकाश चंदर का मकान यही है।'

एक अजनबी देहाती को साहब का नाम इस तरह से लेते हुए देख चपरासी रोब से बोला–'किसको ढूंढ़ रहे हो।'

'प्रकाश चंदर की कोठी यही है।'

'हां, कहो क्या है?' चपरासी लापरवाही से बोला।

दशरथ बिना किसी औपचारित्ता के बोले–'हम उनके पिता हैं। गांव से मिलने आये हैं।'

दशरथ और उनकी पत्नी कौशल्या की दीन-हीन दशा को देखकर चपरासी को उनकी बातों पर विश्वास नहीं हुआ, लेकिन फिर सोचा अगर सच्चाई यही हो तो उसकी स्थिति दयनीय हो जायेगी। इसीलिए उनको बरामदे में रखी कुर्सियों की ओर इशारा करके बैठने को कहा और स्वयं अंदर चला गया।

समाचार मिलते ही प्रकाश आया, माता-पिता की स्थिति देखकर चपरासी के सम्मुख बहुत ग्लानि लेकिन सच्चाई को ही निगल जाये, साहस उसमें नहीं था। वह चुपचाप हो गया।

अभी तक यही होता था कि प्रकाश भी गांव जाता, अपने मां-बाप के अवश्य छूता, चाहे वे लोग जहां भी लेकिन आज उसी काम को चपरा सम्मुख दोहराने में उसे लज्जा की भूति हो रही थी। दशरथ भी बेटे मानसिकता को परख रहे थे, लेकिन थे। अब और अधिक मौन रहना प्रकाश को असह्य हो गया तो स्वयं बोला। 'बिना चिट्ठी-पत्री दिये आप कैसे आ गये? गांव में सब ठीक तो है

बेटे के अंदर आये परिवर्तन को कर दशरथ यह अंदाजा लगा चुके प्रकाश के सम्मुख उनके अस्तित्व का महत्व नहीं हैं, फिर भी अपनी पीड़ा छुपाते हुए बोले, 'क्या बताऊं, तुम्हारी मां ने सपने में तुम्हें देखा, होते ही शहर चलने की रट लगाने मैंने बहुत समझाया कि प्रकाश कोई है जो इतना परेशान हो रही हो! कुछ होता तो खबर न भेजता? जब तुम्हारी मां को कुछ समझ में न तो यहां आना पड़ा।' वह कुछ देर स्थिति का विश्लेषण करते रहे,

ग़ज़ल

भोर ले जायेगी अथवा दोपहर ले जायेगी,
जो भी ले जाये—मुझे तो दर-ब-दर ले जायेगी।
मैं भी शामिल हो गया हूं एक अंधी दौड़ में
क्या पता, अंधी गली मुझको किधर ले जायेगी।
कल्पना उसकी, धरा पर पांव धरती ही नहीं,
कल्पना उसको सितारों के नगर ले जायेगी।
कुछ भी गुजरे सीप के दिल पर, उसे मतलब नहीं,
सीप के दिल से वो मोती चीरकर ले जायेगी।
बोलना चाहूंगा, लेकिन, बोल पाऊंगा नहीं,
वो मुझे उपहार देकर, मेरा 'स्वर' ले जायेगी।
ये हुनर मैंने सिखाया है, न मानेगा कोई,
इस कलाकारी से वो मेरा हुनर ले जायेगी।
पेट भरने के लिए की है जो मैंने नौकरी,
स शहर के बाद जाने किस शहर ले जायेगी।

—जहीर कुरेशी

—समीर कॉटेज, सूर्य नगर, शब्द-प्रताप आश्रम के पास, ग्वालियर-४७४ ०१२, म. प्र.

बोले, 'अब तो तुम लोगों को देख ही लिया सोचता हूं—दोपहर वाली गाड़ी से ही वापस लौट जाऊं। किरण डूबते-डूबते पहुंच जाऊंगा। वहां शाम होते ही जानवर राह जोहने लगते हैं।

अपने मन्तव्य को पूरा होते देखकर प्रकाश बीच में ही बोल पड़ा, 'आप लोग, अभी तो गांव से आ रहे हैं, थक गये होंगे, मेरी राय है कि आज आप लोग आराम करें। कल लौट जाइयेगा। वहां तो मंगरुवा है ही?'

'मंगरुवा का क्या भरोसा, कहीं ताड़ी पीकर सो गया तो जानवर रात भर भूखे रह जायेंगे।'

प्रकाश कुछ बोले, इसके पहले ही दशरथ पत्नी की ओर मुखातिब होकर बोले, 'आओ चलें। अभी गाड़ी मिल जायेगी। शाम तक गांव पहुंच जायेंगे।'

दशरथ अपने साथ लायी गठरी को उठाकर चल पड़े।

पति को लौटते देख कौशल्या भी उनका अनुकरण करते हुए लौट पड़ी, उसी तरह जिस तरह दिन भर भटकने के पश्चात शाम होते ही पंछी अपने नीड़ की ओर लौट पड़ते हैं।

—मालवीय रोड, बस्ती-२७२००१, उ. प्र.

□

मुंशीजी : महान साहित्यकार

□ विष्णुप्रसाद त्रि

इस सदी के दो महानतम गुजराती साहित्यकार हैं–महात्मा गांधी और कन्हैयालाल मुंशी । वर्तमान गुजराती साहित्य को समृद्ध और सशक्त बनाने में साहित्य के इन दोनों महारथियों का बड़ा योगदान है । दोनों ने गुजराती के समकालीन लेखन को बहुत अधिक प्रभावित किया है । दोनों की साहित्यिक कृतियां उनकी अनेक प्रवृत्तियों की भांति ही उनकी शैली की गतिशीलताओं से पूर्ण हैं ।

गांधीजी का प्रभाव मुख्यत: नैतिक था, और उन्होंने एक ऐसी गद्यशैली का सर्जन किया, जो सरल, संयत, पवित्र तथा प्रभावी थी । मुंशीजी की लेखन-शैली का प्रभाव मुख्यत: कलागत और सौंदर्यबोधात्मक था । उनकी शैली ऊर्जस्वी तथा नितांत व्यक्तिगत थी । गांधीजी की लेखन-शैली भी उनकी विशिष्ट छाप लिये हुए, दूसरी शैलियों से पृथक थी, और उसका उद्देश्य समाज-सुधार था । वह सादगी और सच्चाई से पूर्ण भी थी । दोनों की लेखन-शैलियों में एक समानता भी थी; दोनों अभूतपूर्व ढंग से सहज और मुक्त थीं । दोनों ने ऐसे साहित्य का सर्जन किया, जो साधारण पाठक की समझ में आने के अलावा, उद्देश्यपूर्ण भी था, उसके नैतिक विकास तथा ज्ञानव भी सहायक होता था ।

मुंशीजी को अंग्रेजी साहित्यिक पढ़ने का शौक तब से ही था, ज कॉलेज में पढ़ते थे । उनके इस शौ उनकी रचनात्मक कल्पनाशक्ति तथा दनशीलता को और अधिक प्रखर तीव्र किया । कालेज के दिनों में उ श्री अरविंद का प्रभाव पड़ा, जो अं क़ायम रहा । जहां पाश्चात्य साहि उनकी रोमानी, नाटकीय और वी प्रधान भावनाओं को विकसित किया, श्री अरविंद के प्रभाव के कारण मानस-भूमि में राष्ट्र-प्रेम तथा अ के बीजों का रोपण हुआ ।

मुंशीजी के उपन्यासों, नाटकों, नि पत्रों, यात्रा-वर्णनों आदि की संरचना पेचीदे व्यक्तित्व को प्रतिबिंबित करते उनमें तरंगिल बुद्धिचातुर्य, सजीव चित्रण, भव्य दृश्य-विधान, तथा भरपूर दर्शन होते हैं । हल्का वि मजाक भी उनकी रचनाओं में कहीं दिखायी देता है ।

०००

गुजराती में लिखना मुंशीजी ने सं

या । उनका लेखन-क्रम तब आरंभ ा, जब वे एक प्रवीण अधिवक्ता के में जमकर, एक सुहाने और समृद्ध विष्य के सपने देख रहे थे। साहित्य के ध्यम से उन्हें आत्माभिव्यक्ति तथा त्म-सिद्धि का एक सशक्त, नम्य तथा भावी माध्यम प्राप्त हुआ, जिसका उप- ग उन्होंने प्रचुरता व सफलता के साथ या । यद्यपि इस बात से इंकार नहीं या जा सकता कि एक अधिवक्ता सदैव की रचनाओं में से झांकता दिखायी ड़ता है, तथापि यह भी सच है कि एक अधिकृत व राजनीतिज्ञ के रूप में होंने आत्म-सिद्धि के जो शिखर छुये, से कहीं ऊंचे शिखर उन्होंने एक सर्जन- साहित्यकार के रूप में छुये।

हास्योत्पादकता तथा रोमानी वाता- रण उत्पन्न करने में मुंशीजी को कमाल सिल था । किंतु उन्होंने गंभीर उप- सों, नाटकों व कथाओं का सर्जन भी या है । पौराणिक तथा ऐतिहासिक थाओं पर आधारित उनके उपन्यासों में री त्रासदी के दर्शन होते हैं, तथापि का सबसे ऊंचा स्वर उनकी हास्य तथा प्रधान रचनाओं में सुनायी देता है। की 'तर्पण' नामक रचना बाध्य- री त्रासदी से परिपूर्ण है, फिर भी उसे र्ण त्रासदी' नहीं कहा जा सकता । स्वामिनी देवी' एक ऐसी उदासी- कामेडी है, जिसकी करुणाजनक- ना उसकी प्रमुख विशिष्टता है।

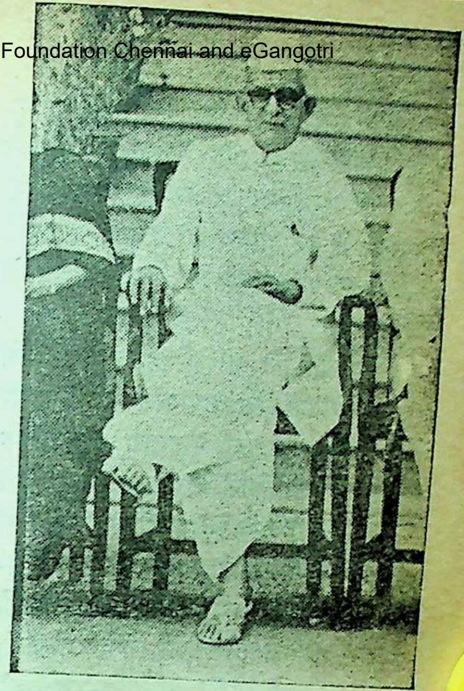

साहित्यकार मुंशीजी

इसके विपरीत 'काकानी शशि' एक विशुद्ध कामेडी है । उसके प्रसंग में मुंशीजी की यह उक्ति अनायास याद आ जाती है, 'जीवन के हर क्षेत्र की भांति साहित्य में भी किसी श्रद्धेय व्यक्ति या वस्तु का मज़ाक करना मेरे लिये वर्जित नहीं है।' यह मुंशीजी के साहित्य की ताक़त व कमज़ोरी दोनों हैं। वे किसी का भी मज़ाक उठाने का लोभ संवरण नहीं कर सकते थे।

०००

मगर, इस वृत्ति के बारे में मेरी प्रतीति है कि जीवन को हमेशा मज़ाक द्वारा नहीं जाना-समझा जा सकता । शायद, सहानुभूति के आंसुओं के ज़रिये, उसे बेहतर ढंग से जाना-समझा जा सकता है । सम-

कालीन जीवन के प्रति मुंशीजी की सहानुभूति काफ़ी अवरुद्ध है । समकालीन जीवन की घटनाओं पर आधारित उनके उपन्यासों में हमें जीवन की अंतस्थ धाराओं के स्थान पर तौर-तरीके ज्यादा दिखायी देते हैं ।

मुंशीजी की साहित्यिक प्रतिभा हमें उनके ऐतिहासिक उपन्यासों में दिखायी देती है । वस्तुत: उन्हें गुजराती ऐतिहासिक उपन्यासों का जनक माना जा सकता है । 'गुजरात नो नाथ', 'पृथ्वीवल्लभ', 'जय सोमनाथ', और 'राजाधिराज' में घटना-क्रम का नाटकीय विकास, और रोमानी तथा साहसिक भावनाओं का चरमोत्कर्ष, रसों का उद्रेक, और परिणति–इन सभी का समावेश दिखायी देता है । उनके सभी ऐतिहासिक उपन्यास सफल रहे हैं । दो विशेषताएं मैंने इन उपन्यासों में पायीं । शूरवीर चरित-नायक व सुंदर चरित-नायिकाओं के जीवन की घटनाओं का चुनाव और गुंफन इस भांति किया जाता है कि प्राय: सारी जीवन-कथा का दिग्दर्शन होने पर भी पाठकों को इतिवृत्तात्मकता का अभास नहीं होता । दूसरी विशेषता है, कथा के उद्घाटन के साथ-साथ पात्रों की अंतर्छबि का विश्लेषण होता रहता है, मात्र वर्णन नहीं । इन दोनों विशेषताओं के कारण उनकी प्रेमातुर नायिकाएं, जैसे मीनल, मृणाल, मंजरी और चौला तथा शौर्यपूर्ण नायक, जैसे मुंजाल, काक, जयसिंह, मुंज और भीमदेव की छवि ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में पाठकों के
प्रतिबिंबित हो जाती है ।

मुंशीजी के ऐतिहासिक उपन्यास
से अंत तक रोचक हैं । पात्रों के
प्राय: काव्य के स्तर पर विचरते हैं
निश्शब्द बादलों के बीच पल भर के
कौंधती बिजली की तरह बहुत कुछ
घाटित कर जाते हैं, बहुत कुछ कह जा

लेकिन, जिन नाटकीय तत्वों
विकास और चरमोत्कर्ष, हमें मुं
ऐतिहासिक उपन्यासों में देखने को
है, वह उनके सामाजिक उपन्यासों
दिखायी नहीं पड़ता । उनके सामा
उपन्यास 'तपस्विनी' में इसकी
गुंजाइश थी, कारण, उसका कथानक
नैतिक उथल-पुथल और आंदोलन
पृष्ठभूमि में नैतिक संकट की सम
से संबंधित हैं ।

०००

जहां तक मुंशीजी के उपन्यासों का
है, प्राय: सभी के कथानक में मुख्य
के माध्यम से, आवेशपूर्ण संवादों
नाटकीय घटनाओं द्वारा विचक्ष
वीर नायक और सुंदरी तथा वी
नायिका की जयजयकार ही होती
उनकी सारी अनुभूतियां, उनका
अस्तित्व मुख्यत: अपने नायक-नायि
ही केंद्रित रहता है, और इस का
अपने युग व समाज की ज्वलंत सम
पर दृष्टि नहीं डाल पाये, और जन
रण के सुख दुखों के प्रति विमुख

पढ़ते हैं।

फिर भी, मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि उनके प्रारंभिक ऐतिहासिक उपन्यास–'पाटन नी प्रभुता', 'गुजरात नो नाथ' व 'राजाधिराज' सौंदर्य-संवेदना से ओतप्रोत हैं, किंतु उनमें उस परिपक्व बुद्धिमत्ता का अभाव है, जो बाद के उनके पात्रों तथा अन्य लेखन में दिखायी देती है। उपन्यासों का सर्जक कलाकार तब तक कुलपति और राजनीतिज्ञ बन गया था।

उपन्यास-लेखक ने अपने उत्तरवर्ती गुजराती उपन्यासकारों को सही रास्ता दिखाया, इसमें संदेह नहीं है। उनके उपन्यासों से इन उत्तरवर्ती उपन्यासकारों ने सीखा कि उपन्यास का काम रोचक ढंग से कहानी सुनाना है, उपदेशादि देना नहीं।

घटना-क्रम सतत प्रवाहपूर्ण हो, और संवाद अर्थपूर्ण तथा नाटकीय। उपन्यासकार को विनयदंभ से दूर रहना चाहिये, अन्यथा वह जीवन के यथार्थ को जैसा है, वैसा चित्रित नहीं कर पायेगा। कलाकार उपन्यासकार अपने पात्रों तथा घटनाओं के प्रति सर्वथा निस्संग रहता है। भाषा सीधी और सरल होनी आवश्यक है। सत्याभास के सर्जन के लिए उपन्यासकार को अपनी भाषा और शैली का प्रयोग यथार्थ के निकट से निकट रहकर करना चाहिये। पाठक को लगना चाहिये कि वह उपन्यास नहीं पढ़ रहा है जीवन को ही देख रहा है।

मुंशीजी ने अपने नाटकों व कहानियों को बतौर शौक़ ही लिखा, और उन्हें अधिक गंभीरता से नहीं लिया। फिर भी उन्होंने अपनी कहानियों व नाटकों द्वारा गुजरात के आधुनिक कथाकारों व नाटककारों–सर्वश्री बटुकभाई, धनसुखलाल, चंद्रवदन मेहता तथा यशवंत पंड्या आदि का मार्ग प्रशस्त किया।

मुंशीजी के व्यक्तित्व के आकर्षण तथा मैत्रीपूर्ण व्यवहार के कारण अनेक गुजराती साहित्यकार उनके अंतरंग मित्र बन गये थे। इनमें सर्वश्री नरसिंहराव दिवाटिया, चंद्रशंकर पंड्या, विभाकर, विजयराय वैद्य, बटुभाई उमरवादिया, ज्योतीन्द्र दवे आदि का समावेश था। उन्होंने 'साहित्य संसद' नामक संस्था को जन्म दिया, और 'गुजरात' नामक मासिक पत्र का प्रकाशन भी आरंभ किया था। वे गुजराती साहित्य परिषद के संस्थापकों में से एक थे। अपनी इन तथा अन्य प्रवृत्तियों द्वारा उन्होंने सर्जनात्मक तथा समीक्षात्मक गुजराती लेखन को बढ़ावा दिया। नरसिंह, प्रेमानंद तथा नर्मद पर लिखे उनके निबंध कल्पनाशील समीक्षात्मक लेखन के अनुपम उदाहरण हैं।

अंग्रेजी में लिखी उनकी पुस्तक 'गुजरात एंड इट्स लिटरेचर' गुजराती साहित्य का संपूर्ण प्रामाणिक इतिहास है। अभी तक इतनी शोधपूर्ण तथा गुजरात के साहित्य व साहित्यकारों का सही मूल्यांकन करने वाली पुस्तक नहीं लिखी गयी।

□

मजाक के साथ मजाक

□ हरि

आप खुद ही देख लीजिये कि कैसे-कैसे लोग बेचारे, सीधे-सच्चे मज़ाक के साथ ही मज़ाक कर रहे हैं, उसकी टांग खींच रहे हैं, और बाल की खाल निकाल रहे हैं!

'लोगों का, और ख़ास तौर पर राजनीतिज्ञों का, मज़ाक उड़ाना, और उनकी टांग खींचना यही मेरा पेशा है। अपने सिंडीकेटेड कॉलम द्वारा, जो विश्व के सौ से अधिक प्रमुख समाचारपत्रों में प्रकाशित होता है, यह काम मैं १९५२ से अंजाम देता आ रहा हूं। कभी कोई दक्कत पेश नहीं आयी, क्योंकि ऐसे लोगों की और राजनीतिज्ञों की कोई कमी नहीं थी, जो चलते-फिरते कार्टून होने की वजह से, जैसे मुझे आमंत्रित करते रहते थे कि आइये साहब, हमारा मज़ाक उड़ाइये। आपका और आम आदमी का सिर्फ़ यही भला तो हम कर सकते हैं।

'मगर, इधर, वाक़ई मुझे परेशानी महसूस होने लगी है। परेशानी यह है कि अब ऐसे लोग और राजनीतिज्ञ सामने आ रहे हैं, जिन्हें किसी भी नज़रिये से देखिये, वे मज़ाक के लायक बन ही नहीं पाते। अपने प्रेसीडेंट रेगन को ही लें लीजिये। उन पर आप रहम ही कर सकते हैं, उनकी मज़ाक उड़ाने की कल्पना भी आप नहीं कर सकते, इतने बोर इंसान हैं वे। उन्हीं की रिपब्लिकन पार्टी के एक और साहब हैं, रॉबर्ट डोल, जो रेगन की कुर्सी पर आंख लगाये बैठे हैं। लड़ाई में बहादुरी से लड़े थे, और अपनी एक बांह क़रीब-क़रीब गवां बैठे थे। अब बताइये, वे किधर से मजाक उड़ाने के काबिल हैं?'

अभी-अभी आपने अमरीका ही नहीं, विश्व के ख्यातनामा व्यंग्य-लेखक आर्ट बुकवाल्ड की दर्दभरी दास्तां का एक हिस्सा सुना। वे आगे कहते हैं, 'दूसरी पार्टी—डैमोक्रेटिक पार्टी—के राष्ट्रपति-पद के उम्मीदवारों के हुलिये तो ऐसे हैं कि वे मुझे सब एक से लगते हैं। चूंकि मुझे न उनके चेहरे याद रहते हैं, न नाम, इसलिए मैं उन्हें नंबर देकर, उन नंबरों से याद रखना ज्यादा पसंद करूंगा। हां, उनमें से एक—जैवी जैक्सन—दूसरों से थोड़ा अलग हैं। मगर, वे नीग्रो हैं। और, जैसे ही मैं उनका मज़ाक उड़ाना शुरू करूंगा, लोग

हंसी-मज़ाक उड़ाने के लिए यह बेचारा भला ही मिला ! छिः !'

हां, डेमोक्रेटिक उम्मीदवारों में जोसेफ बिडेन भी काफ़ी दिलचस्प आदमी लगे । मैंने जब उनके बारे में पढ़ा कि एक सभा में उन्होंने एक ऐसा भाषण दिया, जिसमें उनके भाषण - लेखक ने ब्रिटेन की लेबर पार्टी के नेता नील किन्नोक द्वारा दिये गये एक तेज़-तर्रार भाषण के अधिकांश अंश, सीधे उठाकर भर दिये थे, तो मुझे लगा, हां यह आदमी है कुछ ! राजनीति में कुछ करके दिखायेगा । मैं उस पर नज़र रख रहा हूं, और आप उससे मेरे कॉलम में बार-बार मिलेंगे ।

अभी-अभी मैंने कहा था कि रेगन काफ़ी 'बोर' आदमी हैं । थोड़ी ज्यादती हो गयी मुझसे उनके साथ, क्योंकि कभी-कभी वे ऐसा वाक्य मुंह से निकाल देते हैं कि सुनकर मज़ा आ जाता है । कुछ दिन पहले उन्होंने पत्रकारों के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा था 'मेरा खयाल है कि मुझे याद नहीं है कि मैंने कभी इज़रायल को ईरान को हथियार बेचने की इजाज़त दी हो ।' मुझे इस वाक्य का 'मेरा खयाल है कि मुझे याद नहीं है' वाला अंश इतना भाया कि मैंने अपने व्यंग्य-लेखों के अगले संग्रह का नाम ही रख दिया है-'मेरा खयाल है कि मुझे याद नहीं है ।' संग्रह को यह शीर्षक देने के बाद मुझे, मेरा खयाल है, यह भी याद नहीं रहा कि वह मेरी २३ वीं पुस्तक थी या २४ वीं ! और बात जब राष्ट्रपति की हो रही है, तो अर्ज़ कर दूं कि निक्सन को मैं सबसे मज़ेदार राष्ट्रपति मानता हूं । कोई और शुष्क, गंभीर किस्म का प्रेसीडेंट वाटरगेट-कांड खड़ा नहीं कर सकता था, और ना ही टेलीविजन पर राष्ट्र को संबोधित करते हुए कह सकता था, 'मैं बेईमान और धोखेबाज़ नहीं हूं ।' मैंने जब उन्हें यह कहते सुना, तो उन्हें इसमें से ग्यारह अंक फौरन दे दिये । रेगन साहब का 'ईरानगेट' जब 'वाटरगेट' की बुलंदियों तक पहुंच जायेगा, तो मैं उन्हें भी १० में से ११ अंक दे दूंगा ।'

०००

आर्ट बुकवाल्ड साहब की लोकप्रियता और आर्थिक सफलता की एक वजह यह है कि अमरीकी लोग मज़ाक देखना, पढ़ना व सुनना पसंद करते हैं । इसका प्रमाण पेश कर सकते हैं, अमरीकी हास्याभिनेता बिग कास्बी, जिन्होंने पिछले दो वर्षों में ८४,०००,००० डॉलर कमाये, अर्थात्, साल में अमरीका के सबसे ज्यादा कमाने वाले ली इकोका (वार्षिक आय ३२,०००,००० डालर) उनके आगे कहीं नहीं ठहरते ।

मगर, ऐसे अमरीकी भी हुए हैं, जो मज़ाक से सख्त परहेज करते हैं । वे मज़ाक को भी हंटर लगाते हैं, और मजाक करने वाले के भी । काल्विन कूलिज का एक किस्सा सुनिये । कहीं भूल से भी मज़ाक के चंद शब्द ज़बान से न निकल जायें,

इसलिए उन्होंने हमेशा ख़ामोश रहने का नियम बना रखा था, और बड़ी सख्ती से उस पर अमल करते थे। एक दफ़ा वे एक भोज में सम्मिलित हुए। उनके पास बैठी एक महिला उनसे बतियाने के लिए ज़मीन-आसमान एक कर रही थी, लेकिन कूलिज पर उसका कोई प्रभाव नहीं हो रहा था। अंत में, महिला ने झल्लाते हुए उनसे कहा, 'कुछ तो बोलिये। कम से कम तीन शब्द ही बोलिये, नहीं तो मैं वह शर्त हार जाऊंगी, जिसमें मैंने बदा था कि मैं आपके मुंह से, इस भोज में, कम से कम तीन शब्द तो बुलवा कर ही रहूंगी।' कूलिज न उठते हुए सिर्फ़ दो शब्द कहे, 'आप हारीं।' लगे हाथ आपको यह भी बताते चलें कि हाल की रेगन-गोर्बाचोव वार्त्ता से पूर्व, रेगन ने अपने सहकारियों से कहा कि वे उन्हें कुछ उम्दा रूसी मज़ाक सुनायें, ताकि वे उनका उपयोग, आवश्यकतानुसार, वार्ता के दौरान कर सकें। जो मज़ाक उन्हें सुनाये गये, उनमें से एक ऐसे ग्राहक के बारे में था, जो रूस में बनी कार खरीदने का इच्छुक था। उसने अपना ऑर्डर देते हुए, दुकानदार से पूछा, 'क्या आप बता सकेंगे कि कार मुझे कब तक मिल जायेगी?' दुकानदार ने जबाब दिया, 'भाई साहब, दस साल तो लग ही जायेंगे।' ग्राहक ने कहा, 'कोई बात नहीं, मगर, यह और बताने की कृपा करें कि आप कार की डिलीवरी दिन में किस समय देंगे, सुबह को या शाम को?' दुकानदार ने पूछा, 'मगर इससे आपको क्या पड़ जायेगा?' ग्राहक ने कहा, 'फ़र्क लिए पड़ जायेगा, जनाब, कि ने भी आज से दस साल बाद आने टाइम दिया है, और वह सुबह त लाने वाले हैं।'

ooo

अब तक यह माना जाता रहा था अर्थशास्त्री, विधि-विशेषज्ञ, शिक्षाशा इंजीनियर जैसे लोग गंभीर किस्म लोग होते हैं, और कम से कम, काम वक्त, मज़ाक से दूर ही रहते हैं। इन 'प्रोफेशनल' लोगों ने भी अब मज़ा का उपयोग (दुरुपयोग?) करना आ कर दिया है। जापान में आजकल प्रौ गिकी, अर्थशास्त्र, दर्शन, कंप्यूटर-विज्ञ यौन-विज्ञान आदि विषयों पर जो पु भारी संख्या में बिक रही हैं, वे कॉमि की शक्ल में हैं, अर्थात्, मज़ाक-मज़ाक गैर-मज़ाकिया विषयों की जानका पाठकों को दे रही हैं। ऐसी ही कॉमिक पुस्तक 'एन इंट्रोडक्शन टू जा नीज इकानोमी' के लेखक-कलाका शोतारो इशीनोमोरी की इस पुस्तक ५ लाख से अधिक प्रतियां बिक चुकी हैं।

असल में, मज़ाक के साथ इस म की शुरूआत प्रबंध-शास्त्र तथा शास्त्र की अपनी पुस्तकों के लिये वि विख्यात नॉर्थकोट पारकिन्सन ने की जब उन्होंने इन दोनों शास्त्रों के गूढ़ को मज़ाकिया ढंग से और कार्टूनों

मदद से समझाने की परंपरा को जन्म दिया था। तब उनके आलोचकों ने कहा था कि 'पारकिन्सन ऐसा करके न सिर्फ़ इन गंभीर शास्त्रों के साथ मज़ाक कर रहे हैं, खुद मज़ाक के साथ भी मज़ाक कर रहे हैं, कारण उनकी मज़ाकिया शैली काफ़ी दुरूह है, परिष्कृत नहीं।'

○○○

आप सोच रहे होंगे कि 'परिष्कृत मज़ाक' कैसा होता है? तो, आइये मज़ाक के 'परिष्कृत' रूप का जायज़ा लेने के लिए ताइवान चलें, जो चीन का एक भाग होते हुए भी, अमरीका के संरक्षण में हैं।

वहां के एक अमरीकी युवक की प्रेम-याचना जब एक युवती ने नामंजूर कर दी, तो उसने अमरीकी राष्ट्रपति को एक पत्र लिखकर पूछा कि वे बतायें कि क्या युवती ने उसकी प्रेम-प्रार्थना अस्वीकार करके अमरीकी संविधान का, जो अपने सब नागरिकों को जीवन, स्वतंत्रता तथा सुख की गारंटी प्रदान करता है, निरादर नहीं किया है? कहा जाता है कि यह पत्र राष्ट्रपति से पाकर उनके विधि-सलाहकार काफ़ी परेशानी में पड़े, क्योंकि यदि युवक की प्रश्न में निहित मांग सच है, तो उन्हें युवती को मजबूर करना पड़ेगा कि वह युवक के प्रेम का प्रतिदान करे। मगर, उनकी परेशानी तब कम हो गयी, जब उन्होंने संविधान की संबंधित धारा के शब्दों को ध्यान से पढ़ा। तब, उन्हें पता चला कि संविधान में सुख नहीं, सुख के शोध की गारंटी दी गयी है। फलस्वरूप, उन्होंने राष्ट्रपति की ओर से युवक को सलाह दी कि संविधान में प्रत्येक अमरीकी नागरिक को सुख की नहीं, सुख की शोध करते रहने की गारंटी दी गयी है।

सुख-प्राप्ति के लिये ताईवानवासी और लोगों से कुछ ज्यादा ही बेक़रार लगते हैं। लॉटरी तो प्राय: सब देशों में प्रचलित है, लेकिन ताईवान में एक विलक्षण लॉटरी प्रचलित है, जिसका नाम है–'सब को सुख मिले, और फ़ौरन मिले।' इस लॉटरी में सही नंबर पर नहीं, विशिष्ट नंबरों के अंतिम दोनों अंकों पर इनाम मिलता है।

पुलिस इस लॉटरी को बंद करने पर विचार कर रही है, क्योंकि उसके अनुसार, 'जब से यह लॉटरी चालू हुई है, तब से मुल्क में तलाकों, हत्याओं, चोरियों और हड़तालों आदि की संख्या कई गुना बढ़ गयी है। वाहनों की दुर्घटनाओं की बढ़ती दर के लिये भी हम इस लॉटरी को ही जिम्मेवार ठहराते हैं, कारण लोग उनके रजिस्ट्रेशन नंबर के अंतिम दो अंकों को, जो उनकी राय में लाटरी के इनामी नंबर भी होंगे, देखने के लिए उन्हें रोक लेते हैं।'

सुख दिलाने का दावा करने वाली यह लॉटरी, एक मज़ाक की तरह कष्टों का कारण बन गयी है। कैसा क्रूर मज़ाक है!

○○○

स्वीडन के डॉक्टर जुंगथाल ने जब यह घोषणा की कि 'मज़ाक करने वाला दीर्घायु

होता है' तो उन्होंने कोई नयी बात नहीं कही, कारण एक लंबे अर्से से कहते चले आ रहे हैं कि 'मज़ाक से बेहतर कोई दवा नहीं है।'

जानते हैं, डॉक्टर जुंगथाल अपने रोगियों का इलाज कैसे करते हैं? वे उससे कम से कम एक मिनट तक लगातार हंसने और मज़ाक करने को कहते हैं। उनका कहना है कि हंसी-मज़ाक से शरीर को अपने रोग स्वयं ठीक करने की क्षमता प्राप्त हो जाती है।

यह तो मालूम नहीं कि डॉक्टर जुंगथाल के कितने रोगी अब तक पूर्णतया स्व हुए हैं, लेकिन अपनी इस नयी उप विधि से अपना स्वास्थ्य पहले से बेह अवश्य कर लिया है। 'इतना ही न मैं अब पहले जैसा गंभीर व्यक्ति नहीं र और खूब मज़ाक करने लगा हूं, जो सामने पड़ जाये, उसके साथ। और मुझे लगता जा रहा है कि मज़ाक कर भी एक नशे के समान है, जिसकी ल लग जाये, तो आसानी से नहीं छूटत उनका कहना है।

□

सती होने को प्रस्तुत स्त्री और गोस्वामी तुलसीदास

स्वामी तुलसीदासजी गहन विचारों में डूबे हुए गंगा तीर के निकट श्मशान घाट समीप घूम रहे थे। तभी उन्होंने देखा कि एक स्त्री अपने पति के मृत शरीर के चर की ओर बैठी है।

गोस्वामीजी के चरणों में प्रणाम करके वह कहन लगी, 'महाराज, आप आशीर्वाद के साथ मुझे अपने पतिदेव के साथ स्वर्ग जाने की आज्ञा दीजिये।'

'इतनी उतावली क्यों हो, बेटी!' गोस्वामीजी ने प्रश्न किया। 'क्या यह उसकी नहीं है, जिसने स्वर्ग को बनाया है?'

'मुझे स्वर्ग की आकांक्षा नहीं, महाराज। मुझे अपना पति चाहिये।' स्त्री ने कहा

'जाओ, अपने घर को लौट जाओ, बेटी। इस महीने के समाप्त होने के पूर्व ही तुम्हारे पति मिल जायेंगे।' गोस्वामी तुलसीदासजी ने मुस्कराकर कहा।

प्रसन्न होकर साथ स्त्री लौट गयी। गोस्वामीजी प्रतिदिन उसके घर आते थे और चिंतन मनन करने के लिए उसे अच्छे उपदेश सुनाते थे। तब तक स्त्री का हृदय दिव्य से परिपूर्ण नहीं हो गया, वे उसके घर आते रहे। महीना जब समाप्त होने पर आया उसके पड़ोसियों ने आकर उससे पूछा, 'क्यों बहन, क्या तुम्हें तुम्हारे पति मिल गये

'हां, मुझे मिल गये हैं,' मुस्कराकर स्त्री ने उत्तर दिया।

पड़ोसियों ने उत्सुकता से 'पूछा, वे कहां हैं?'

'मेरे स्वामी मेरे हृदय में विद्यमान हैं, वे मुझसे एकाकार हो गये हैं।' स्त्री ने उत्तर दिया।

—सुरेश सि

□

जहां कौरव-नरेश दुर्योधन की पूजा होती है

□

डॉ. शिवानंद नौटियाल (विधान सभा सदस्य, उ. प्र.)

'हर-की-दून' उत्तर प्रदेश के गढ़वाल मंडल के अंतर्गत पड़ने वाले सीमांत नपद उत्तरकाशी के हिमाचल प्रदेश की मा में लगे बंदरपूंछ पर्वत शृंखला के नी ढालवाले 'बुग्याल' (मखमली के मैदान) में स्थित है। हिमाचल हुए फतेह पर्वत से 'रूपिन' नदी ती है। फतेह पर्वत से जुड़ी बंदरपूंछ शृंखलाओं की हिमानियों से निसृत जलधाराओं के मिलन से 'सूपिन' का जन्म होता है। यही 'सूपिन' 'हर-दून' की जान है। रूपिन और सूपिन अलग दिशाओं से बहकर नैटवाड़ के पास आकर संगम बनाती हैं। इन दोनों नदियों के संगम स्थल पर 'पोखू' वीर का काठ का मंदिर है। इसके संगम हो जाने के बाद यह 'तमसा' (टोन्स) के नाम से विख्यात हो जाती है और कालसी के पास यमुना में बड़ी आत्मीयता से मिल जाती है।

पर्यटक, पर्वतारोही, सैलानी और प्रेमी इस अंचल को 'हर-की-दून' का क्षेत्र मानकर चलते हैं। परंतु, यह संपूर्ण क्षेत्र 'समसू' देवता का अपना क्षेत्र है। यहां केवल उन्हीं का राज है। यहां का भगवान 'समसू' देवता ही है।

कौरव-क्षेत्र के भेड़-पालक

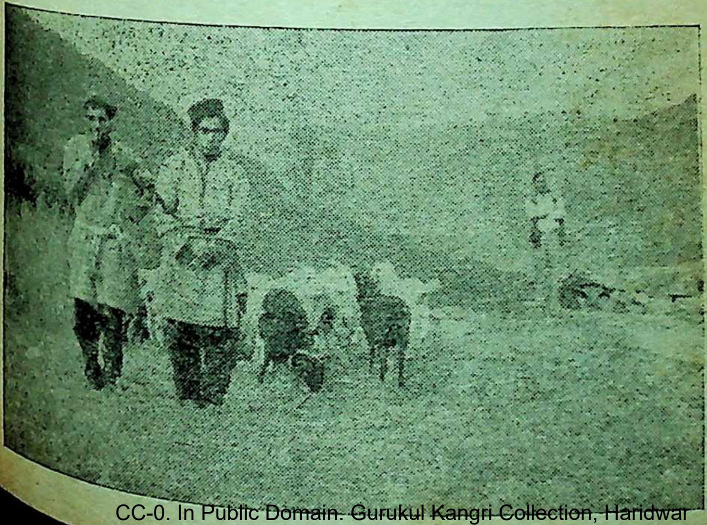

'समसू' माने कौरव नरेश दुर्योधन

'नैटवाड़' से हर-की-दून और जखोल क्षेत्र तक पंचगाई क्षेत्र है। आज शासन की दृष्टि से इस क्षेत्र को पंचगाई, अडोर और बड़ासू पट्टियों में बांटा गया है। जिसमें २१ गांव (कोटगांव, सिदरी, सांकरी, सौड़, डामीर, सटूड़ी, धारा, फिताड़ी, डाट रेकचा, गंगाड़, पंवाणी, ओसला, सिरगा, जखोल, पांवमल्ला, पांव तल्ला, सुनकुंडी, सौणी, कासला, राला और लेवाड़ी) हैं। इन सभी गांवों में 'समसू' (दुर्योधन) को ही मुख्य देवता माना और पूजा जाता है। दुर्योधन की आज्ञा पर ही यहां का सारा काम-काज चलता है। सरकारी अधिकारी एवं कर्मचारी भी यहां के रीति-रिवाजों के आगे कुछ नहीं कर सकते। जिस व्यक्ति पर दुर्योधन की 'आत्मा आती है' वह व्यक्ति (माली) नाचकर जो कुछ भी आदेश अपनी प्रजा को देता है, वही इस क्षेत्र के लोग करते हैं। गत दो वर्ष पहले की एक घटना है कि 'दुर्योधन' के 'माली' ने आदेश दिया कि हिमाचल के सीमावर्ती गांववालों ने इस क्षेत्र में अतिक्रमण किया है, अतः उनकी सभी भेड़ों को लूटकर ले आओ। परिणामस्वरूप जखोल (दुर्योधन का मुख्य स्थान) में पंचायत हुई और रात में सभी गांवों के लोग एकत्र हुए और हिमाचल क्षेत्र के गांवों की ३०० से अधिक भेड़ों को अपने क्षेत्र में ले आये। बड़ा झगड़ा हुआ। हिमाचल और उत्तर प्रदेश सरकार तक बात
पहुंची। काफी बीच-बचाव किया
पर यहां के लोग नहीं माने। अंत में
के पास ही इन लोगों ने अपनी
कि क्या किया जाये? दुर्योधन ने
कि हिमाचल के गांववाले दंड दें तभी
भेड़ें वापस की जायें। 'समसू' का
हिमाचल के गांववालों को सुनाया
शासन की बात न मानकर दुर्योधन
को माना गया। दंड मिलने पर ही
चल वालों की भेंड़ें वापस की गयीं।

इस सारे क्षेत्र में शासन का उतना
नहीं है, जितना कि दुर्योधन का।
कानूनगो तथा तहसीलदार तक वे
अपनी शिकायतें पहुंचने ही नहीं
दुर्योधन की मुख्य गद्दी जखोल में
इन गांवों की पंचायत यहीं बैठती है
भी निर्णय करना हो, यहीं जाकर
जाता है। क्षेत्र में यदि कोई घटना
हो जाये तो इन गांवों के 'सयाणा'
निर्णय लेते हैं। वह निर्णय सबको
अनिवार्य होता है। इस क्षेत्र में
राजीनामा का विशेष महत्व है।
बड़ी समस्या का हल आपसी
(ठाटीमारो) से कर लेते हैं। यदि
कोई विकट स्थिति आ जाये और
नामे' से भी हल न निकल सके तो
(दुर्योधन) के मंदिर में जाकर
के माली' को पूजा जाता है। नचाया
है। जब वह नाचने लगता है तो
सामने समस्या रख दी जाती है।
(देवता) जो भी आदेश दे, उसे

शिकायत किये सारे समाज द्वारा मान लिया जाता है।

'समसू' (दुर्योधन) के इस क्षेत्र में पदार्पण करने की कहानी कोटगांव के बाजगी श्री दिलदास और सुदरदास ने 'दुर्योधन' के जागर को गाकर इस प्रकार सुनाया :

द्वापर की बात है कि दुर्योधन महाराज, कुल्लू कश्मीर से घूमते-घूमते जौनसार-बावर के हनोल क्षेत्र में पहुंचे। हनोल में तब तक महासू देवता का पूर्ण प्रभाव जम चुका था।

दुर्योधन ने 'महासू' देवता के सामने जाकर निवेदन किया कि हिमालय से लगे इस भू-भाग के अंचल को उन्हें देने की कृपा करें। दुर्योधन की प्रार्थना को महासू देवता ने सहर्ष स्वीकार किया और कहा कि दुर्योधन, तुम्हारी प्रार्थना के अनुसार तुम्हें केदारकांठा और बंदरपूंछ हिमालय का अंचल देता हूं। जाओ। उस क्षेत्र में जाकर प्रसन्नता से राज करो। परंतु, ध्यान रहे कि वहां की प्रजा को कष्ट न हो, क्योंकि तुम प्रजा का ध्यान कम ही रखते हो। दुर्योधन ने महासू देवता को वचन दिया कि वह अपने वचन का पालन करेगा और सदैव प्रजा के हित-चिंतन में अपना समय बितायेगा।

महासू से आशीर्वाद लेकर दुर्योधन चल पड़ा। हनोल से वह पंचगाई क्षेत्र की रमणीय धरती की ओर चलने लगा तो 'संदरा' के पास किरमिर दानों (दानव) से उसका मुकाबला हो गया। किरमिर दानौ ने कहा कि इस सारे क्षेत्र का राजा तो मैं हूं। तुम कहां जा रहे हो? दुर्योधन और किरमिर दानौ का 'संदरा' में यद्ध हो गया। दुर्योधन ने आकाशी बिजली गिरा कर किरमिर दानौ का सिर काट दिया। किरमर का सिर 'तमसा' में जाकर उल्टा बहने लगा। अर्थात् नदी के उद्गम क्षेत्र की ओर जाने लगा। जब दुर्योधन रूपिन और सूपिन के संगम स्थल पर पहुंचा तो किरमिर के सिर को देखकर आश्चर्य में पड़ गया। कटे सिर से किरमिर दानौ ने दुर्योधन से कहा—दुर्योधन महाराज! यहां से आगे मैं नहीं जा सकता। मुझे भी कुछ भाग दे दें। दुर्योधन ने रूपिन और सूपिन के संगम पर ही किरमिर दानव को स्थापित किया और कहा कि यह इलाका तुम्हारा रहा। यहां पर तुम्हारी पूजा होती रहेगी।

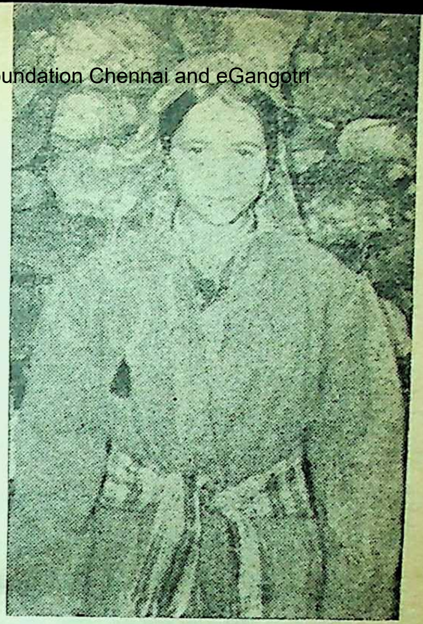

बाजगी युवती

आज इस स्थान पर एक मंदिर है। जिसे 'पोखू' देवता के नाम से स्थानीय लोग पूजते हैं। इस संगम के गांव का नाम नैटवाड़ है। नैटवाड़ के पोखूवीर का काठ का मंदिर ही किरमिर दानव का मंदिर है। इस 'पोखू' की उस क्षेत्र में बड़ी मान्यता है। नैटवाड़ से ऊपर हर-की-दून और जखोल क्षेत्र में दुर्योधन ने अपना राज स्थापित किया। दुर्योधन तब से वचन निभा रहे हैं।

नैटवाड़ से ऊपर जखोल व हर-की-दून के क्षेत्र के लोगों की मान्यता है कि महाभारत काल से उनके 'समसू' (दुर्योधन) देवता अपनी प्रजा का निरंतर ध्यान करते आ रहे हैं। सुनकुंडी, रेकचा, राला, सांकरी, सौणी, सटूड़ी और पंवाणी में मंदिर नहीं हैं। बाकी सभी गांवों में दुर्योधन के तीन खंडी काठ के मंदिर हैं। प्रवेश वाले खंड तक वाजगीर और औरतें ही जा सकती हैं। जिन गांवों में दुर्योधन के मंदिर हैं, उनमें मंदिर के नजदीक बाजगियों के घर निश्चित रूप से होते हैं। मंदिर के आंगन में प्रात: और सायंकाल तथा रात्रि में देवता (दुर्योधन) की 'नौवती' बजती है। दुर्योधन की भव्य मूर्ति जखोल के मुख्य मंदिर में ही रहती है। अन्य गांव के मंदिरों में कोई मूर्ति नहीं रहती। जब मुख्य मंदिर से दुर्योधन की मूर्ति की डोली आती है तो वही मूर्ति सभी गांवों के मंदिरों में स्थापित कर सजायी जाती है। मूर्ति की डोली के दूसरे गांव जाने पर मूर्ति भी चली जाती है। इस तरह ये मंदिर बिना मूर्ति के ही रह जाते हैं। परंतु पूजा तो इन मंदिरों में सुबह-शाम नियमित रूप से होती रहती है। जि गांवों में मंदिर नहीं हैं–वहां गांव के पं यती चौक में मूर्तिवाली डोली को स्थापि कर पूजा की जाती है और मेला लगा जाता है।

जैसा कि पहले कहा गया है कि दुर्योधन अपनी प्रजा का ध्यान स्वयं रखते हैं उनका देश भ्रमण आषाढ़ महीने के गते से प्रतिवर्ष प्रारंभ होता है। जखो में गांवों के सयाणा एकत्र होते हैं। व निश्चय किया जाता है कि दुर्योधन की राज्य भ्रमण यात्रा में कहां-कहां के सयाण लोग और किस-किस गांव के बाजगी भा लेंगे? परंतु जखोल के मुख्य पुजारी और मुख्य बाजगी तो निरंतर सभी गांवों में चलते ही हैं। प्रत्येक गांव के सयाणा और बाजगी स्थान-स्थान पर मिलते रहते हैं। दुर्योधन के पुजारी जखोल के और फिताड़ी ग्राम के खस राजपूत होते हैं। जखील के पांच और फिलाड़ी का एक पुजारी इस शोभा यात्रा में भाग लेता है। पुजारियों के परिवार निश्चित हैं। उन्हीं में से पुजारी इस राज्य भ्रमण यात्रा में भाग लेते हैं।

पुजारी दुर्योधन की पूजा-अर्चना कर मूर्ति को सजाते हैं। २१ गते आषाढ़ दुर्योधन की डोली जखोल से सौड़ गांव के मंदिर में गाजे-बाजों के साथ पहुंचायी जाती है। सायंकाल देवता की पूजा धूप-दीप से की जाती है। आरती उतारी जाती

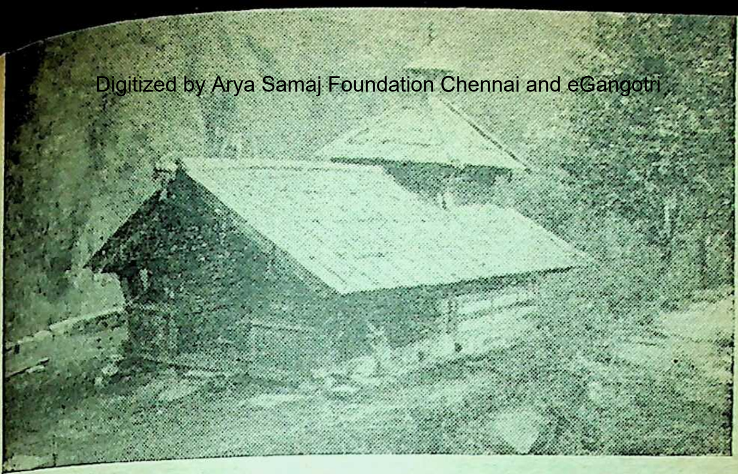

सिदरी का दुर्योधन मंदिर

है। रात भर नाच-गाना चलता रहता है। देवता की वंशावली बाजगी गा-गाकर सुनाते रहते हैं। वैसे ही बाजा बजाया जाता है और उसी के अनुरूप नृत्य भी किया जाता है। २२ गते देवता का मेला लगता है। २३ गते 'समसू' (दुर्योधन) सिदरी गांव पहुंचाये जाते हैं। वहां भी उसी तरह का आयोजन होता है और २४ से आषाढ़ मेला गलता है। २५ गते आषाढ़ दुर्योधन महाराज अपनी दूसरी राजधानी कोटगांव पहुंच जाते हैं। कोटगांव में जखोल की तरह पूरे २१ गांवों की ओर से दुर्योधन का भव्य स्वागत किया जाता है। २५,२६ तथा २७ गते आषाढ़ कोटगांव में मेला लगता है और रात-दिन नाच-गाना होता रहता है। २८ गते आषाढ़ दुर्योधन की डोली बड़ासू पट्टी के डाटमेर गांव में पहुंचती है। वहां २९ गते विशाल मेला लगता है। ३० गते देवता को विश्राम दिया जाता है। विश्राम के दिन केवल धूप-दीप और आरती ही होती है। रात में नृत्यों का आयोजन किया जाता है। ऐसे अवसरों को 'बैठा मेला' कहते हैं। सावन के पहले दिन दुर्योधन का आगमन फिलाड़ी गांव में होता है। सावन के महीने में दूध-घी से बने व्यंजनों से देवता को प्रसन्न किया जाता है। २ गते वहीं (फिलाड़ी गांव में) 'सौणी' का प्रसिद्ध मेला लगता है। 'सौणी' के मेले के दिन ही रात को दुर्योधन की डोली अपने मुख्य स्थान जखोल पहुंच जाती है। जखोल के दुर्योधन मंदिर के विशाल प्रांगण में ३–४ गते सावन का विशाल मेला लगता है। ऐसे मेलों में स्त्री-पुरुषों के सम्मिलित नृत्य देखने योग्य होते हैं। सावन पांच गते देवता का विश्राम का दिन होता है। उस दिन 'बैठा मेला' लगता है।

इसी तरह दुर्योधन पुनः ६ गते सावन को धारा गांव पहुंचते हैं। वहां भी उसी तरह मेला लगता है। गांववाले दुर्योधन की डोली उठाकर दूसरे गांव पहुंचा जाते

हैं। यह क्रम सभी गांवों में इसी तरह संपन्न किया जाता है। धारा में कासला, लेवाड़ी, सिरगा, गंगाड़, पवाणी होते हुए ओसला गांव में दुर्योधन की डोली सावन १९ गते पहुंच जाती है। यहां देवता २०.२१ और २२ गते सावन तक रहता है। मेला लगता है। नृत्य होते हैं। मस्ती का आलम चारों ओर दिखायी देता है। खाना-पीना चलता रहता है। इस प्रकार ओसला में दुर्योधन की यात्रा का एक चक्र पूरा हो जाता है।

दुर्योधन की यात्रा का दूसरा चक्र 'रक्षा फेर' के नाम से शुरू होता है। इसमें भी वही कार्यक्रम होता है। परंतु इस यात्रा में देवता पुनः एक गांव से जाने के बाद दुबारा उसी गांव में आ जाता है। १५ गते पौष को अपनी यात्रा पूरी कर दुर्योधन महाराज अपनी राजधानी जखोल पहुंच जाते हैं। उस दिन जखोल के प्रांगण में संपूर्ण 'कौरव' क्षेत्र के स्त्री-पुरुष एकत्र हो कर मस्ती में नाचते-गाते हैं। ऐसे वातावरण में संपूर्ण जखोल क्षेत्र की सुंदरता देखने योग्य होती है। दुर्योधन प्रजा की रक्षा कर लौट आते हैं। और कहा जाता है कि कोई भी उनका मुकाबला नहीं कर सकता। चारों ओर उनकी यश गाथा गायी जाती है। खुशी में स्त्री-पुरुष नाच-गाना करते रहते हैं। खाते-पीते और नाचते-गाते थकते ही नहीं।

दुर्योधन के अलावा मांत्रिकाओं (अप्सराओं) का इस क्षेत्र में विशेष डर समाया होता है। प्रत्येक गांव में जैसे दुर्यो मंदिर हैं। वैसे ही गांव के बाहर मां काओं (अप्सराओं) के मंदिर भी हैं। इन अप्सराओं से ये लोग इतना डरे कि अपने मकान की छत पर एक छोटा मांत्रिका का मंदिर भी बना देते हैं। लोगों का विश्वास है कि अल्प आयु में कन्यायें मर जाती हैं वही बणकी (अप्स बन जाती हैं। ये बणकियां (मांत्रिका हर समय छल करती रहती हैं। अ करती रहती हैं। इसीलिये उनके कोप शांत करने हेतु बकरे की बलि देते हैं हलुवा का प्रसाद बांटते हैं।

पड़ौसी जनपद टिहरी-उत्तरकाशी प्रभाव में आकर यहां नाग देवता की पू भी होती है। नाग देवता को गाय का चढ़ता है। इस सारे इलाके में गाय अलावा भैंस देखने को भी नहीं मिलें पहले इस इलाके में गाय का दूध कोई पीता था। दूध से घी बनाया जाता जिसे नाग देवता के पूजन में खर्च कि जाता था। छाछ (मट्ठा) अवश्य पी थे। अब दूध की चाय पीने लगे हैं। पर एक गाय के दूध का उपयोग केवल देवता के धूप-दीप करने में ही करते हैं। सि विद्धले और नागिले का भी पूजन इस में होता है।

खस राजा के वंशज

इस क्षेत्र का प्रामाणिक इतिहास क नहीं मिलता। कथागीतों के आधार यहां के लोग अपने आपको महाभार

कालीन खस राजा के वंशज बतलाते हैं। कहते हैं कि उस समय भी उनके राजा ने कौरव नरेश दुर्योधन का साथ दिया था। इन सारे क्षेत्र के लोग अपने आपको 'खस राजपूत' कहते हैं और दुर्योधन को अपना कुल देवता मानते हैं। इस इलाके में हिंदुओं के अन्य देवताओं का कोई महत्व नहीं है। वे अन्य देवताओं के विषय में जानते तक नहीं हैं। अब धीरे-धीरे हिंदू संस्कार यहां प्रवेश पा रहे हैं।

दुर्योधन की प्रजा के इन इक्कीस गांवों में पूर्णतः 'खस राजपूत' ही रहते हैं। अपना सभी काम ये लोग स्वयं ही करते हैं। ब्राह्मणों का प्रभाव इस क्षेत्र में बिलकुल भी नहीं है। उपले कोटगांव में कुछ ब्राह्मण परिवार है। परंतु वे दुर्योधन को न मानकर लव-कुश को मानते हैं। इसी तरह दो-चार परिवार जखोल में भी ब्राह्मणों के हैं—वे भी अपले कोटगांव के ब्राह्मणों की तरह लव-कुश के भक्त हैं। दुर्योधन को यहां के ब्राह्मण अपना इष्ट नहीं मानते।

'खस राजपूतों' के इलाके में बाजगियों का विशेष आदर है। बाजगी इनके जीवन के अभिन्न अंग हैं। बिना बाजा बजाये और पूजा-अर्चना किये ये लोग भोजन तक नहीं करते। मंदिर के आगे प्रातः दिन में और रात में 'नौबती' अवश्य बजती है। बाजगियों के अतिरिक्त अन्य हरिजन जाति के लोग भी होते हैं—जो

डॉ. शिवानंद नौटियाल सौड़ के बाजगी-दम्पति के साथ

इस समाज के लिए खेती के लिए औजार, बर्तन बनाने और लकड़ी के विभिन्न कार्यों को संपन्न करने में लगे रहते हैं।

इस संपूर्ण क्षेत्र में लकड़ी के दुपुरे, तिपुरे और चौपुरे मकान होते हैं। लकड़ी पर नक्कासी का अति सुंदर कार्य देखने को मिलता है। नीचे की मंजिल में गाय-बैल दूसरी व कभी-कभी तीसरी मंजिल तक भेड़-बकरियां और सबसे ऊपरी मंजिल में परिवार के सदस्य रहते हैं। अनाज, वस्त्र और जीवनोपयोगी सामग्री के लिए प्रत्येक घर के सामने एक लकड़ी का ही 'कोठार' होता है। 'कोठार' के 'दरवाजे' पर सांकल लगी रहती है। जिसका एक छोर घर के मालिक के कक्ष तक पहुंचा होता है। सांकल पर घंटियां लगी रहती हैं। यह प्रबंध इसलिए करना आवश्यक समझते हैं कि यदि कोई चोर या दुष्ट व्यक्ति इनके संग्रह वाले कोठार से कुछ चुराने का कुप्रयास करे तो उन्हें स्थिति का ज्ञान हो जाये, ताकि वे उसका मुकाबला कर सकें।

'खस राजपूतों' के इस इलाके में सफाई को कोई महत्व नहीं दिया जाता। इलाका काफी ठंडा है। लोग नहाते भी कम ही हैं। यहां तक कि शौच करने के बाद में पानी का उपयोग तक नहीं करते। वैसे घर के अंदर जूते नहीं ले जाते। इस इलाके की एक विलक्षण बात यह अवश्य है कि हर व्यक्ति को ये लोग 'नमस्कार' करना नहीं भूलते। जान-पहचान न होने पर भी हर छोटा-बड़ा, स्त्री-पुरुष आगंतुक का स्वा हाथ जोड़ कर 'नमस्कार' कहकर क है। घर के सामने पहुंचने पर भी घर अंदर आने के लिए नहीं कहेंगे। प आप अगर घर के अंदर प्रवेश कर लें आपका स्वागत एक मेहमान की त करेंगे। पहचान होने पर घर आये मेह को भोजन देने से पहले 'टीका' करते यदि कोई इन्हें प्रतिदान में कुछ देना च तो बहुत बुरा मानते हैं।

इन लोगों का मुख्य भोजन चौ (रामदाना), आलू, फाफरा, मुंडुवा दाल में सेम मुख्य है। कुछ गांवों में की खेती होती है। परंतु उपज बहु कम होती है। यह सारा इलाका मख घास की पहाड़ियों का है। चुगान के भेड़-बकरियों के लिए उपयुक्त है। इ लिए इस क्षेत्र के लोगों का मुख्य व्यव भेड़-बकरी-पालन है। गरीब से ग व्यक्ति के भी ५० से १०० तक भेड़ रियां होती हैं। संपन्न परिवारों में भेड़-बकरियों की संख्या हजारों में है। पड़ौसी जिला टेहरी के कुछ लोग भेड़ों व बकरियां को ये लोग चुगान लिए ले आते हैं। इस कार्य के लि उनसे चुगाने के रुपये लेते हैं।

भेड़ों की ऊन से बने वस्त्रों का ही प्र यहां के निवासी करते हैं। बल्कि कहें कि यहां के जन-जीवन को भेड़ रियों ने ही संवारा है तो अत्युक्ति न हो भेड़ की ऊन से स्वयं बनाये हुए

कौरव-क्षेत्र की एक वृद्धा

पुरुष 'फर्जी' (कोट), सोंतण (पायजामा) और दौड़ू (कमरबंधा का रस्सा) बनाते हैं। उसी तरह महिलायें भी 'फर्जी' और 'सोंतण' पहनती हैं। सिर पर 'ढॉटू' लगाती हैं। गहनों का यहां बहुत रिवाज है। सोने की बड़ी-बड़ी नथ महिलायें पहनती हैं। हरिजन महिलायें चांदी की नथ पहनती हैं।

भेड़-बकरियों के मांस से इनका सारा साल कटता है। भेड़ों की खाल से ये लोग बड़े-बड़े 'फांठे' (थैले) बनाते हैं। जिनमें अनाज भरकर अपनी पीठ पर लादकर ले आते हैं। भेड़-बकरियों को बेंचकर अपने लिए चावल, गेहूं, गुड़ आदि वस्तुयें खरीद कर ले आने का यहां आम रिवाज है।

कौरव-नरेश दुर्योधन के इस इलाके में कर्मकांड को कोई महत्व नहीं दिया जाता।

न ही यहां कोई संस्कार किये जाते हैं। बच्चे का जब जन्म होता है तो ये लोग जच्चा से कोई 'छुआ-छूत' नहीं करते। जिस व्यक्ति पर 'समसू' (दुर्योधन) नाचता है—वह केवल उस महिला के हाथ

का पानी नहीं पीता। शेष सभी लोग उसके हाथ का बना भोजन करने में अशुद्धि नहीं समझते। तीन महीने तक बच्चे को धूप नहीं दिखायी जाती है। जिस दिन धूप दिखायी जायेगी, उसी दिन उसका नाम रख दिया जाता है। जिस व्यक्ति को पुत्र या पुत्री पैदा होती है—उसकी टोपी में हरी दूब के तिनके खोंस दिये जाते हैं। ये हरी दूब के तिनके नामकरण के दिन तक टोपी के कोने पर खोंस दिये जाते हैं।

इसी तरह परिवार में यदि कोई मृत्यु हो जाती है तो कोई संस्कार नहीं होता। मरने वाला चाहे बूढ़ा हो, जवान हो या बच्चा, उसे गाजे-बाजों के साथ नदी के किनारे ले जाकर जला देते हैं। नदी दूर हो तो जंगल में ही जला देते हैं। तीन दिन के बाद हलुवा-पूरी पकाकर गांव वाले साथ-साथ खाते हैं और फिर हर काम पूर्ववत् चलने लगता है। कहीं-कहीं मृतक के परिवार का मुखिया घर से अपनी रिश्तेदारी में चला जाता है। १०-१५ दिन में जब लौटता है तो सब मिलकर हलुवा-पूरी का भोजन खाते हैं। पहले बकरे काटे जाते थे। बाजगी अथवा हरिजन आज भी तीसरे दिन भेड़ या बकरा काटकर मृतक का श्राद्ध करते हैं। वैसे यहां 'श्राद्ध या वर्षी' करने का रिवाज ही नहीं है। बस केवल एक त्योहार न मना कर अपना शोक प्रकट करते हैं। माघ महीने में यदि किसी परिवार में मृत्यु हो गयी तो फागुन के महीने का त्योहार वह परिवार नहीं मनायेगा। चैत्र के
मनाने के लिए गांव वाले उन्हें
करेंगे कि चलो जो हो गया सो हो
हम तो जिंदा हैं। जिंदा रहने का
लब ही खुशी मनाना है और फिर
बारहों महीनों के त्योहार अथवा
सब मिलकर खुशियां मनाने लगते है

विवाह के समय भी यहां कोई
नहीं किये जाते हैं। लड़के का पि
घर का मुखिया लड़की के पिता के
जायेगा। लड़की पसंद आने पर लड़के
पिता रुपयों की बात करता है।
कभी लड़की का मूल्य पांच से दस
तक चांदी के रुपयों में आंका जाता
जब सारी शर्तें पूरी हो जाती हैं तो
का पिता अपने परिवार या गांव के
आदमियों के साथ लड़की के पि
यहां रुपया देकर कन्या को वहू
'ढोल-दमाऊं' (गाजों-बाजों) के
अपने गांव ले आता है। बारात में
(दूल्हा) नहीं जाता। 'दूल्हा' घर
रहकर 'दुल्हन' की बारात की
करता है। लड़की के गांव व परिवार
बारात के पीछे-पीछे आकर लड़के
घर बाराती बनकर आते हैं। लड़के
कन्यापक्ष के बरातियों का भव्य
करते हैं। लड़की के परिवार को
गांव के लोगों की दावत में मांस-
का अधिक से अधिक प्रयोग किया
है। हां, यदि लड़की 'छुटेड़' है,
एक घर से उसका छुटकारा हो गया

के किसी के घर जाने में बाजों का नहीं होता, परंतु दावत उसी प्रकार ती है।

इस इलाके में 'छूट' प्रथा है। आज इस क्षेत्र में ८-१० वर्ष की लड़कियों शादियां उपरोक्त ढंग से संपन्न की ती हैं। रुपये लेकर लड़की को लड़के र पहुंचा देना ही यहां की शादी का ता है। लड़की छोटी आयु की होती है। विवाह का अर्थ तक नहीं समझती। उसे शादी का अर्थ समझ में आने ता है तो वह अपने लिए उपयुक्त साथी की कल्पना करने लगती है। दि उसे अपना पति पसंद हो तो सब कुछ ठीक चलता है। नापसंदगी की ति में वह अपने मन के मुताबिक घर सकती है। कई 'छूट' करने वाली हिला का इस समाज में विशेष आदर ता है। अर्थात् सबसे अधिक 'पति' र अनेक घर बदलने वाली महिला इस समाज में बहुत आदर की दृष्टि से जाता है, क्योंकि उसका मूल्य हर घर में बढ़ता ही जाता है।

'छूट' का अर्थ साधारण नहीं है। जब महिला 'छूट' चाहती है तो वह या अपने पति का घर छोड़ कर अपने के रहने लगती है या किसी मनचाहे क के घर में जाकर रहने लगती है। के से वह अपने मनचाहे युवक या सी पुरुष के घर जाकर रहने लगती । कभी-कभी युवती का पिता स्वयं अपनी पुत्री के लिए दूसरे घर का प्रबंध करता है। ऐसी दशा में लड़के का पिता पहले वाले पति के पिता के द्वारा दिये गये रुपयों के अलावा कुछ राशि लड़की के पिता को और लड़की के गांव वाले पंचों को भी 'छूट' का हक देकर लड़की को ब्याह कर अपने लड़के के लिए ले आता है। मान लीजिए पहले पति से लड़की के पिता को पांच हजार मिले थे। अब दूसरा पति या उसका पिता पांच हजार उस युवती के पहले पति का चुकायेगा, लगभग इतनी ही राशि युवती के पिता को और दो-तीन हजार गांव की पंचायत को देकर पहले पति से युवती की 'छूट' करवा कर अपने घर ले जायेगा। अगर दूसरे घर में भी युवती का मन न लगा और उसका चाहने वाला मिल गया तो वह महिला उस घर से भी तीसरे घर में जा सकती है। इसी तरह 'छूट' की राशि बढ़ती ही जाती है। हमारे देखने में ऐसी महिलाएं भी आयी हैं जिनकी सात-सात, आठ-आठ बार 'छूट' हुई है और उनकी 'छूट' का रुपया लाखों तक पहुंचा है।

जो महिला अपने मायके न जाकर स्वयं किसी के घर बैठ जाती है, उसके पूर्व पति को, उसके पिता को और उस गांव की पंचायत को 'छूट' की राशि का धन दिया जाता है। ऐसी महिला के भी यदि कई 'छूट' हो जाते हैं तो उसका भी समाज में आदर बढ़ता जाता है। परंतु छूट की रस्म में जब तक पहले पति के रुपये नहीं

दिये जाते, तब तक समाज में विवाह होने की मान्यता नहीं मिलती ।

महिलाओं का इस समाज में बहुत सम्मान होता है । पुरुष अपनी पत्नियों के इशारों पर नाचते रहते हैं । उन्हें सदा भय बना रहता है कि कहीं उसको (पत्नी को) कष्ट हुआ तो वह कहीं 'छूट' न करवा ले । 'छूट' होने की स्थिति में पहले पति को भी दूसरी पत्नी अधिक रुपये देकर मिलती है । या उसे भी कहीं से किसी महिला को अपने घर में बिठाना पड़ता है । आखिर उसकी 'छूट' के रुपये तो उसे ही देने होते हैं । अतः इस समाज का प्रत्येक पुरुष ऐसी स्थिति को नहीं आने देता है कि उसकी पत्नी 'छूट' करवाये ।

जहां इस क्षेत्र में 'छूट' की प्रथा है—वहां बहुपति प्रथा के भी दर्शन होते हैं। तीन-चार भाइयों की एक पत्नी का होना भी इस क्षेत्र में देखा गया है । दो भाइयों की एक पत्नी का होना तो यहां साधारण सी बात है । पुरुष तथा महिलाओं ने यह स्वीकार किया कि दो भाइयों की एक पत्नी का होना सबसे उत्तम है । पुरुषों ने आर्थिक दृष्टि से इस प्रथा को उत्तम बताया । उन्होंने कहा कि इस तरह से परिवारों का बंटवारा नहीं होता । संपत्ति की सुरक्षा रहती है । पारस्परिक प्रेम बना रहता है । बच्चों में भी प्रेम बना रहता है । फिर मुख्य कारण यह भी है कि हम बार-बार छूट के झंझट से बच जाते हैं ।

महिलाओं का तर्क तो और भी सार्थक लगा । उन्होंने बताया कि दो भा
पत्नी बनना तो सौभाग्य की बात है
पति घर में रहता है तो दूसरा
रियों के साथ होता है । घर की जि
दोनों मिलकर निभाते हैं । दोनों
भी भरपूर मिलता है । बच्चों
का अगाध प्रेम प्राप्त होता है । कु
लाओं ने तो सम्मिलित प्रतिक्रिया
और स्पष्ट कहा—बहुत से पति
से मिलते हैं । मिलने पर दुर्भा
समय आता ही नहीं । दैवयोग
कोई एक-दो पति मर भी गये तो
सुहागिनें ही रहती हैं । हमारे
कोई विधवा होती ही नहीं । हम
कभी रहती ही नहीं । आर्थिक
कभी दूसरे परिवार के लोगों
नहीं ढूंढ़ना पड़ता । हमें आपके
तरह कोई पुरुष दहेज के लिए नहीं
रुपयों के लिए सुना है कि आपके
वाले लड़कों को बेचते हैं ।
औरत की इज्जत है—जिसे हमारी
होगी—वह दाम चुकाकर हमारे
चूमेगा । हम जिसे चाहेंगी, उसके
रहेंगी । जो धोखा देगा या प्यार
देगा, उसे छोड़कर दूसरा घर
भला कोई हाथ उठाकर तो देखे

सचमुच, इस क्षेत्र में औरतों
इज्जत है । पुरुष समाज उनके
सम्मान की रक्षा ही नहीं करता
उन्हें पूर्ण स्वच्छंदता भी प्रदान
यहां महिलाएं, पति अथवा प

हते हुए भी यौन स्वच्छंदता प्राप्त करने पीछे नहीं रहतीं। पति अपने स्थान पर है। जो मन को भाया, उसे पाना कोई अपराध थोड़े ही है? यह मानकर ये जाती हैं। गांवों में कभी सवर्ण महिला का अवैध संबंध किसी बाजगी तक से हो जाता है तो कभी किसी बाजगी अथवा हरिजन महिला का यौन संबंध किसी सवर्ण पुरुष से भी हो जाता है। ऐसी स्थिति में तो मानते हैं, परंतु समाज से उन्हें नहीं करते। यदि ऐसे संबंधों के स्वरूप बच्चे का जन्म हो जाता है तो वह बच्चा उसी का माना जाता है, जिसकी पत्नी होती है। माना राणा या रावत या ठाकुर की पत्नी के साथ बाजगी पुरुष अवैध प्रेम के कारण बच्चा हो जाता है तो वह बच्चा राणा या रावत का ही माना जायेगा। उसी तरह यदि हरिजन अथवा बाजगी महिला के गर्भ से किसी राणा या ठाकुर का बच्चा पैदा होगा तो वह बच्चा उसी हरिजन अथवा बाजगी का माना जायेगा, जिसकी वह पत्नी होगी। में भी इस समाज का अपना विशिष्ट है। उनका कहना है कि बीज चाहे डाले-फसल तो उसी की मानी जायेगी, जिसके खेत में फसल उगेगी। अर्थात जिसका है, उसकी ही फसल होगी।

यदि इस क्षेत्र की महिलाएं पर पुरुष से अवैध संबंध रखती हैं तो समाज उन्हें अनुचित नहीं समझता। यदि चार भाइयों की अलग-अलग पत्नियां हों और कोई पत्नी किसी अपने देवर या अन्य तीन जेठ अथवा देवरों से यौन संपर्क स्थापित करना चाहे तो उसे बुरा नहीं समझा जाता, जिसे औरत दिल से चाहे–उससे संबंध बना सकती है। महिलाओं को पूर्ण स्वतंत्रता रहती है कि वे स्वच्छंद होकर जीवन यापन करें। यहां की मान्यता है कि महिलाओं की स्वतंत्रता पर कोई रोक नहीं लगायी जानी चाहिये।

ऐसी मान्यता पर यहां के नवयुवक भी कहते हैं कि आंखों की ओट होनी चाहिये। हमारी नजर में पत्नी ऐमा कृत्य न करे–बस! पीठ पीछे क्या होता है कौन जाने? उन्होंने कहा कि आपके सभ्य समाज में क्या आंखों की ओट में ऐसे ही कांड नहीं होते? प्रसंग को संक्षिप्त करते हुए एक युवक ने कहा–'पिता तो मां ही बता सकती है कि कौन है? चाहे वह किसी की भी मां क्यों न हो?'

वैसे इस क्षेत्र के युवक एक ही पत्नी रखने के पक्षधर होते जा रहे हैं। पुरानी प्रथाओं को समाप्त करने पर लगे हैं। अब इस क्षेत्र में समीपवर्ती क्षेत्रों के संस्कारों का प्रभाव पड़ता जा रहा है। फिर भी बहुपति प्रथा के साथ बहुपत्नि प्रथा भी इस क्षेत्र में है। परंतु बहुपत्नि प्रथा के उदाहरण बहुत कम हैं। अधिक संपत्ति वाले कई व्यक्तियों की सात-आठ पत्नियां तक हैं। पुत्र उत्पन्न न होने की स्थिति में भी कई पुरुषों की ३–४ या इससे अधिक पत्नियां हैं। फिर भी स्त्रियों में स्वच्छंदता पर्याप्त

मात्रा में देखने को मिलती है।

विवाह के लिए आम रिवाज यह है कि खस राजपूतों के विवाह खस राजपूतों में, हरिजनों के हरिजनों में, बाजगियों के बाजगियों में ही होते हैं। ममेरे-फुफेरे भाई-बहनों में भी विवाह हो जाते हैं। पर यह रिवाज इतना कठोर नहीं है कि ऐसे विवाह होने ही चाहिये। एक मुख्य बात यह है कि खस राजपूत अपनी लड़कियां ब्राह्मणों को ब्याह देंगे, पर उनकी लड़कियों से कोई भी खस राजपूत ब्याह नहीं करता। इसे वे पाप समझते हैं। कोटगांव की खस राजपूत लड़कियों का ब्याह उपले कोटगांव के ब्राह्मणों के यहां होता रहा है। इन ब्राह्मणों की लड़कियों का विवाह फतेह पर्वत के अंचल में बसे ब्राह्मणों के यहां यहीं की रीति के अनुसार होता है।

दुर्योधन के राज में जहां इस प्रकार की सामाजिक रीतियों के दर्शन होते हैं—वहां इस क्षेत्र की अपनी भौगोलिक विशेषताएं भी हैं। भौगोलिक स्थिति के कारण सर्दियों में यहां बर्फ से सभी पहाड़ियां ढंक जाती हैं। बाहर का आना-जाना प्रायः बंद सा हो जाता है। स्वच्छंद होकर लोग घरों में गीत गाते और नाचते हैं। २८ गते पौष 'हतोंली' के दिन वर्ष भर से विशेषरूप से पाले हुए बकरों को काटते हैं। माघ के महीने में ससुराल से सभी लड़कियां मायके आ जाती हैं। इष्ट-मित्र भी इन्हीं दिनों आते हैं। मायके आयी हुई युवतियां स्वच्छंद हो कर गाती नाचती हैं। माघ महीने भर मांस शराब का भोजन होता है। रात-दिन और नृत्यों का आयोजन होता रह इनका 'मघौज' का त्योहार सबसे और महत्वपूर्ण त्योहार है। वैशा महीने का त्योहार भी अपने ढंग का नि त्यौहार है। यों तो वर्ष भर यहां त्योह मनाये जाते है और मेले ही लगे हो

दुर्योधन की भूमि में जहां प्रकृति स्व होकर सौंदर्य प्रदान करती है-वहां धरती के मानव भी स्वच्छंद होकर गा गाते ही नहीं, बल्कि स्वच्छंद होकर जीते भी हैं। हर-की-दून की ओर वाले पर्यटकों, पर्वतारोहियों, सैला एवं प्रकृति प्रेमियों के लिए यह क्षेत्र षंण से भरा हुआ है। यहां की प्रकृति रमणीय है, वहां यहां के मानव भी भोले-भाले और सरल प्रकृति के जीव

इस क्षेत्र में पहुंचने के लिए देहर मंसूरी, नैनबाग, डामटा, नौगांव, पु मोरी और नैटवाड़ का मार्ग पकड़ना है। नैटवाड़ से कौरवों का क्षेत्र जाता है। यों तो मोटर मार्ग नैटव सांकरी होते हुए तालुका तक वन परंतु सांकरी तक ही मोटर मार्ग अ

इधर दुर्योधन की डोली सजते है, तो उधर हर-की-दून की फू फूलों से भरने लगती है—दोनों के द परम आनंद की प्राप्ति होती है।

—१, कालिदास मार्ग, लखनऊ

'न सखि क्रिकेट . . . न सखि मुक़दमा !'

□ के. पी. सक्सेना

आपकी क़सम, हमसे तो मरते वक्त भी अगर किसी ने कान में पूछा कि अगले न में किन दो चीज़ों से छुटकारा चाहोगे, हम कहेंगे कि मुकदमेबाज़ी और पांच का क्रिकेट टेस्ट मैच ! हमारी औलादें हैं कि पांच दिन का मैच शुरू होने रात पहले ही हम टी. वी. का कोई -मोटा पुर्जा अलग करके गेहूं के कनर में छुपा देते हैं कि सुबह से शाम तक सिरदर्द और जुकाम से बचे रहें। धीरे ठुक-ठुककर के अंततः ड्रा गति हो जाने के पक्ष में हम कभी नहीं । हां, इसके विपरीत 'वन डे' मैच पर हम जान छिड़कते हैं। नाश्ता, अखबार, टेलीफोन, तोते का पिंजड़ा वग़ैरा टी. वी. के पास ही रख लेते हैं, और सांस रोककर प्रतीक्षा करते रहते हैं कि भारतीय टीम की परंपरागत शानदार हार में अभी कितनी गेंदें और बाकी हैं ? यही हाल मुक़कमेबाजी का है। धीरे-धीरे तारीखें बढ़ती जाती हैं और वह नौबत आती है कि केस दादा दायर करे और फैसला पोता सुने।

हमें खूब याद है कि कई दशक पहले, हमारे दोस्त खज़ानचंद खन्ना ने ख़ानदानी भैंस के बंटवारे का केस दायर किया था। हर तारीख पर भैंस और ख़ज़ानचंद

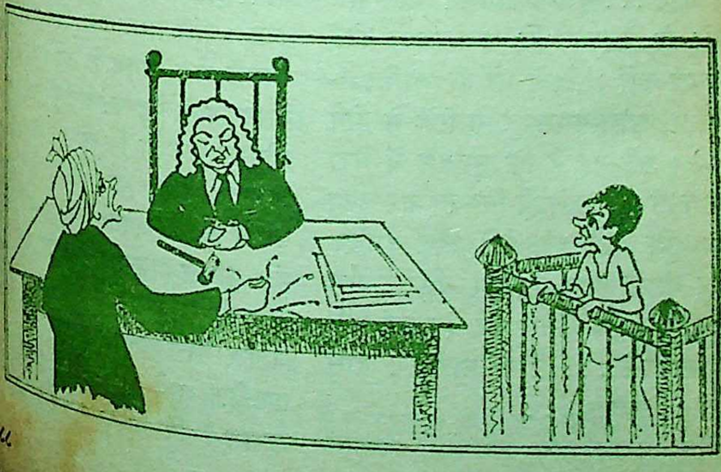

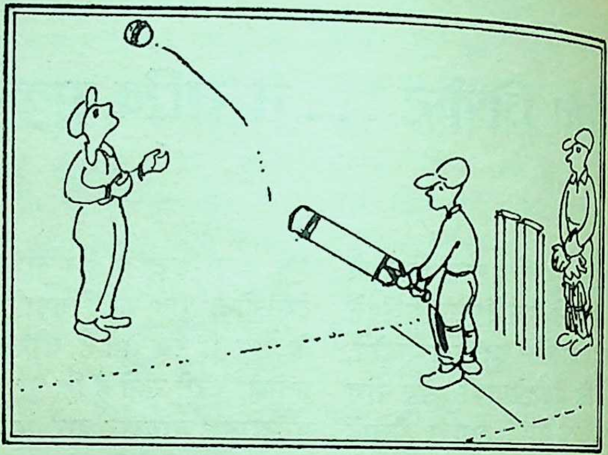

कचहरी में हाजिर होते गये । फैसले की तारीख हवाई चप्पल के पट्टे जैसी खिंचती चली गयी ! कई वर्ष बाद जब फैसला हुआ तब भैंस और खज़ानचंद दोनों ही स्वर्गवासी हो चुके थे । फैसले की नक़ल खज़ानचंद के बेटों ने मरघट पर दफ़ना दी कि सीधे खज़ानचंद और भैंस तक इत्तिला पहुंच जाये . . . मुझे खज़ानचंद और भैंस से भले ही शिकायत हो, अदालत से कोई शिकायत नहीं । फ़ैसले यों ही आहिस्ता-आहिस्ता, सोच-समझकर सलीके से होने चाहिये । शर्त यह है कि मुक़दमे में मेरा दख़ल न हो । मैं पहले ही निवेदन कर चुका हूं कि शुद्ध देशी घी, मेवे और टानिक खाकर भी मैं पाच दिनका क्रिकेट मैच और कचहरी के फैसले का इंतज़ार नहीं झेल सकता ! . . . न मैं नारायण दास स्वामी हो सकता हूं . . .

कौन नारायणदास स्वामी ? बताता हूं । एक जगह पढ़ता क्या हूं कि द
कोई जगह तिपतूर है, जहां एक
नारायणदास स्वामी नाम के
हैं । कहते हैं कि नारायणदास स्वा
किसी जुर्म में जेल में बंद कर दिया
पूरा एक वर्ष बीत गया और मुक़द
नहीं हुआ । नारायणदास स्वामी
बोर होते गये और मुक़दमा पेश
हुआ । झुंझलाकर एक दिन नारा
स्वामी जेल प्रांगण में लगे एक
नारियल के पेड़ पर चढ़ गये और
घोषणा कर दी कि या तो मेरा
अदालत में पेश करो, वरना मैं
पेड़ से कूदकर अपना फ़ैसला खुद
हूं । पुलिस घबरा गयी और त
अदालत के हवाले कर दिया ।
जाकर नारायणदास स्वामी पेड़
तशरीफ़ लाये । . . . मेरे साथ
इल्लत है कि नारियल के पेड़ तो

के पौधे पर भी नहीं चढ़ सकता। कहां से?

बहरहाल, इस जन्म के सत्तावन साल कोर्ट-कचहरी के बीत गये। अब लड़ने की ताक़त न शरीर में रही में। अगले जन्म का भगवान मालिक। चुनांचे आगामी इक्कीसवीं सदी में माता-पिता मुझे दोबारा जन्म देने का रखते हों, उनसे मेरी अभी से अपील कि कृपया मुझे पंच-दिवसीय क्रिकेट और बाज़ी से बचाकर रखें। ये दोनों ही खेल हैं जिन्हें न मैं इस जन्म में पाया, न अगले में झेल पाऊंगा! बाकी ख़ैरियत है।

७२, नारायण नगर,
रामसागर, लखनऊ-२२६०१६, **उ. प्र.**

□

थोड़ी सी मूर्खता और ढेर सारी उत्सुकता का नाम ही पहला प्यार है।

– बर्नार्ड शा

ooo

वह व्यक्ति जो रात भर में ही नाम पा गया—सच मानिये रात में सोया नहीं
।

– रोबर्ट बेंसन

ooo

याद रखिये, क्रोध-भरे शब्दों को पी जाने से आज तक किसी को बदहजमी नहीं
है।

– राबर्ट बेन्सन

ooo

ऐसे व्यक्ति फौरन पहचाने जाते हैं, जिन्हें जीवन फूलों की सेज लगता है।
पहचान सरल है, वह सदैव उन कांटों की शिकायत करते मिलेंगे जो उन्हें फूलों में
है।

– इमोजीन के.

ooo

विद्वता यह जानने में नहीं है कि अंत में क्या किया जाये वरन इसमें कि इस समय
किया जाये।

– हेबर्ट हुनर

□

जीवन-सौरभ

गफ्फार खां : देश-प्रेम और कुरबानी की कहा

— पी. डी.

मनुष्य मात्र का इतिहास उसके सच्चे नेताओं की कुरबानी की कहानी है। उनकी वीरता की गाथाएं इंसान की हैसियत को बढ़ाती हैं और इस बात की जोरों से याद दिलाती हैं कि मनुष्य को अपने सिद्धांतों पर जमा रहना चाहिये, चाहे उसे कितना ही कष्ट झेलना पड़े। कभी-कभी तो ऐसा मालूम होता है कि ऐसी महान आत्माएं संसार में सिर्फ कष्ट भोगने के लिए ही आती हैं। गफ्फार खां आज के युग के एक शानदार नेता थे। उनकी और उनके साथियों की कुरबानी के कारण दो देशों ने आजादी पायी, परंतु आजादी के बाद उन्हें घोर अपमान और कष्ट झेलना पड़ा। पाकिस्तान ने उन्हें सोलह साल अपनी जेलों में रखकर उनके एहसान का कर्जा चुकाया और गफ्फार खां के शब्दों में ही, 'भारत ने उन्हें आजादी के बाद भेड़ियों के हवाले कर दिया।'

गफ्फार खां ने फ्रंटियर के खूंखार पठानों को अहिंसा का सबक सिखाया और इसमें उन्होंने कमाल कर दिखाया। यह काम करके उन्होंने मनुष्य के शरीर पर कब्जा नहीं किया, बल्कि उसकी आत्मा पर। १९३८ में गांधीजी ने अपनी
प्रदेश की यात्रा के उपरांत यह लिखा
'वे (खां अब्दुल गफ्फार खां)
दैवी पुरुष हैं। ईश्वर में उनका
है। उनका यह ख्याल है कि मेरा
तभी सफल होगा जब ईश्वर चाहे
तत्परता के साथ अपना कार्य
तथा परिणाम के प्रति उदासीन
थे। उनका ख्याल था कि पठानों के
के लिए अहिंसा के अलावा और
चारा नहीं। वे पठानों को समाज
के रूप में नहीं देखना चाहते थे।
विचार था कि पठानों का अत्यधिक
कर उन्हें अज्ञानांधकार में रखा
उनकी यह इच्छा थी कि पठान अपनी
दुरी में वास्तविक ज्ञान को भी
उनका यह ख्याल है कि ऐसा केवल
के द्वारा ही संभव है।'

गफ्फार खां एक सच्चे मुसलमान
वह सारे मजहबों की दिल से इज्जत
थे। उन्होंने बाइबिल और गीता को
तरह से पढ़ा था। उनके मजहब
मनुष्यमात्र की सेवा करना सिखा
चाहे वह किसी जाति या धर्म

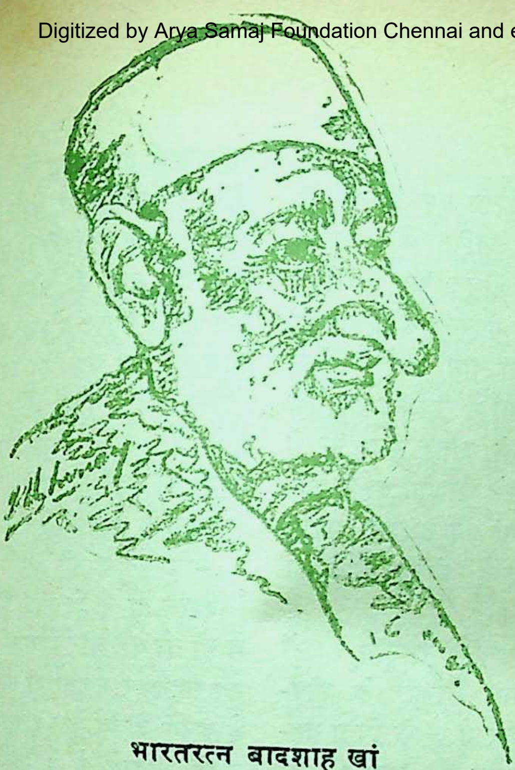

भारतरत्न बादशाह खां

उनका विचार था कि 'जब बापू किसी बड़े मसले पर फैसला करते थे तो वह उनको चुपचाप मान लेते थे क्योंकि उनका विचार था कि गांधीजी कोई भी बड़ा फैसला करने के पहले अपने खुदा को सर झुकाते थे और उससे ठीक रास्ता दिखाने की प्रार्थना करते थे। भगवान अपने किसी भक्त को गलत रास्ता नहीं दिखाता और यह सोचकर ही मैं बापू के फैसले को बिना तर्क के मान लेता था।'

गफ्फार खां विनम्रता तथा कुलीनता के प्रतीक थे। लोग उन्हें सीमांत गांधी कहते थे। एक बार मैंने उनके साथ कुछ दूर तक यात्रा की थी और मैं बराबर उन्हें 'फ्रंटियर-गांधी' कहकर संबोधित करता था। उन्होंने कुछ परेशानी के साथ मुझसे कहा था–'भाई साहब, आप बिला वजह मुझे ऐसी पदवी के असाधारण बोझ से क्यों दबाते हैं। हमें आप गफ्फार खां कहकर क्यों नहीं संबोधित करते ?' मैंने उनकी सच्ची विनम्रता का अनुभव किया। चलती गाड़ी में हमने लगभग एक घंटे तक बातचीत की और मेरे सभी प्रश्नों का उत्तर उन्होंने सरल, तथा उचित ढंग से दिया।

भारत का बटवारा एक बड़ी भारी कयामत थी। खान अब्दुल गफ्फार खां को इससे बड़ी चोट पहुंची थी। उन्होंने कहा था कि सिर्फ बापू और उन्होंने ही बटवारे की मुखालफत की थी, परंतु उनकी किसी

ने सुनी नहीं।

गफ्फार खां के पिता एक इज्जतदार तथा अत्यंत धार्मिक व्यक्ति थे। उन्होंने भी अपने पुत्र के जीवन को प्रभावित किया था। एक बार गफ्फार खां इंग्लैंड में इंजीनियर की परीक्षा पास करने के लिए जा रहे थे। उनकी मां ने रोककर कहा कि 'मेरा एक लड़का तो बाहर गया ही है और यदि तुम भी चले जाओगे तो मैं क्या करूंगी ?' अपनी मां को सांत्वना प्रदान करने के लिए उन्होंने इंग्लैंड जाने का इरादा छोड़ दिया।

अपने प्रांत में उन्होंने राष्ट्रीय स्कूलों को चलाया था तथा सरकार के कोपभाजन बने। सरकार ने उनके पिता बहराम खां से शिकायत की, 'गफ्फार खां अपनी क्रियाओं से प्रांत की शांति भंग कर रहा है। आप अपने लड़के को ऐसा करने से रोकिये।' बहराम खां ने जब यह बात गफ्फार खां से कही तब गफ्फार खां ने उसका उन्हें उत्तर दिया, 'पिताजी, यदि वे ब्रिटिश अफसर आपसे मेरी नमाज रोकने के लिए कहें तो क्या आप ऐसा करेंगे ?' 'हम ऐसा नहीं करेंगे,' उनके पिता ने तुरंत जबाव दिया। गफ्फार खां ने अपने पिता को समझाया कि राष्ट्रीय शिक्षा प्रदान करने के जिस कार्य में वह लगे हैं, वह भी उनका धार्मिक कर्त्तव्य है।

गफ्फार खां में पद लोलुपता बिलकुल नहीं थी। दो बार उनको कांग्रेस के अध्यक्ष पद के लिए कहा गया था, परंतु उन्होंने यह कहकर टाल दिया कि वह नेता न और नेतागिरी का काम वह नहीं सकते। उन्हें गांधीजी में पूर्ण विश्वास और वह बापू की फौज के एक होने में ही संतुष्ट थे। उनके लिए जवा लाल ने कहा था–'वह उस तरह के नीतिज्ञ तो हैं नहीं जैसे कि राजनी होते हैं। उन्हें राजनीति की तिक बाजी तो आती ही नहीं। वह सीधे, स्वभाव के आदमी हैं।'

यदि मनुष्य को अपने सिद्धांतों में विश्वास ही न हो और ईश्वर का न हो तो वह घोर अन्याय और दारुण को सहनकर सकता ही नहीं। गफ्फार ने अपने जीवन के २९ साल जेल में हं हंसते बिताये थे। उन्हें उनके सि जीवन से ज्यादा प्यारे थे। चाहे प्राण निकल जायें लेकिन वह अपने सि को नहीं छोड़ सकते थे। पाकिस्तान के बाद १६ साल तक वहां के जे रहे। यह बड़ी दुखदायी बात है कि बड़े आदमी को पाकिस्तान के छोटे आदमी वर्षों तक कैद में डाले रहे।

सरकार के साथ अनेक बार भीषण संघर्ष हुआ था और उन्हें कई यातनाएं भी सहनी पड़ी थीं। गां की डांडी यात्रा के उपरांत पेशावर महान राजनैतिक चेतना उत्पन्न हो थी। गफ्फार खां और उनके भा पेशावर के दरबार में आने के लिए त्रित किया गया था, परंतु इन दो

दरबार में जाने से इनकार कर दिया था। इससे कमिश्नर वगैरह बहुत नाराज हुए तथा खां भाइयों को गिरफ्तार कर लिया। गफ्फार खां अनेक बार जेल गये; परंतु उनकी भावनाएं सरकारी यातनाओं द्वारा नहीं दबायी जा सकीं। एक बार तो उन्हें जेल में अपराधियों के साथ रख दिया गया था और दूसरी बार उन्हें तनहाई दी गयी। एक बार एक जेल में तो कोई बेड़ियां उनको ठीक ही नहीं होती थीं, तब विशेषतः उनके लिए एक दूसरी बेड़ी बनायी गयी। वह भी उनके पैर में इतनी कड़ी होती थी कि उनकी एड़ी के ऊपर का कुछ हिस्सा जख्मी हो गया और उससे खून बहने लगा। जेल के सुपरिटेंडेंट ने सांत्वनापूर्ण ढंग से यह कहा था कि 'धीरे-धीरे आप उसके अभ्यस्त हो जायेंगे।'

गफ्फार खां की जीवनी त्याग की एक कविता थी। वह अपने लिए तो कुछ चाहते ही नहीं थे। उनका सबसे बड़ा अरमान यह था कि वे मरते दम तक दूसरों की सेवा करते रहें। उनको देखते ही लोगों के दिल में इज्जत होती थी। जब हमारे स्वतंत्रता संग्राम की तवारीख लिखी जायेगी बहुत से लोग जो आज बड़ा शोर-गुल मचा रहे हैं, भुला दिये जायेंगे, लेकिन गफ्फार खां को भुलाना नामुमकिन ही होगा। गफ्फार खां हमारे स्वतंत्रता संग्राम के एक बड़े भारी अगुवा थे। हमारे राष्ट्रीय संघर्ष के प्रेरक रहे हैं। वे एक त्यागी पुरुष थे और सारा संसार उनका आदर करता था। उनकी वाणी सदा संदेश प्रदायक होती थी। जवाहरलाल नेहरू ने एक बार लिखा था, 'इसमें कोई शक नहीं कि अब्दुल गफ्फार खां का नाम हमारी आजादी की तवारीख में अमर रहेगा।'

गफ्फार खां केवल भारत और पाकिस्तान के लोगों में नहीं, बल्कि संपूर्ण मानव-जाति में दिलचस्पी रखते थे। वह हर मनुष्य में ईश्वर का रूप देखना चाहते थे और आशा करते थे कि इंसान अपने आपको हैवानियत से हमेशा दूर रखेगा। ९८ साल के होते हुए भी वह जो कुछ भी लोगों के लिए कर सकते थे, उन्होंने किया। उसूलों पर समझौता करना तो उन्हें आता ही नहीं था। गांधीजी के बाद सबसे बड़े वह गांधीवादी थे। अभी कुछ महीने पहले ही जब उन्हें एक लाख रुपये का पुरस्कार भेंट किया गया था तो उसे अस्वीकार करते हुए उन्होंने कहा था कि वह खुदाई खिदमतगार हैं, वह उस रुपये का क्या करेंगे।

उनका जीवन एक अनोखा जीवन था। वह देश भक्ति की एक बड़ी कविता और कुर्बानी की कहानी थे।

—४ एलगिन रोड, इलाहाबाद, उ. प्र.

□

भेददृष्टि, विषम व्यवहार, ऊंच-नीच की भावना अंतःकरण की स्थिति को नष्ट करते हैं। समता ही सुखकारक है।

—मुक्तानंद

□

तिब्बती कहानी

चुप्पी

मूल : जामयाङ्

अनु : बाबूराम

अस्त होते हुए सूर्य की अंतिम किरणें हिमाच्छादित पर्वत श्रेणी के विशाल पार्श्वों से टकरायीं और नारंजी और शोण लाल रंग के स्फुलिंगों में विभक्त होती उछल गयीं । सबसे ऊंची चोटी ने, जो खड़ी लपलपाती तलवार की तरह दूसरी चोटियों से ऊपर दिखायी दे रही थी, गहराते हुए आकाश में आघात किया—यह घिरती जा रही रात से लड़ने की आखिरी कोशिश थी। अकेली और गरिमामयी सबसे ऊंची उठी हुई यह चोटी आसपास के देहात में रहने वाले लोगों में तेङ री ल्हाचेन नामक महान देवता के निवास रूप में प्रसिद्ध थी । यह देवात्मा तिब्बत की भूमि के प्राचीनतम संरक्षकों में से एक तथा हिमालय-पार श्रेणी के शासक महान अर्गाली आत्मा न्येचेन थाङ ला की सच्ची संतान थी ।

इस बड़ी चोटी से नीचे दिखायी पड़ती एक कम ऊंची पर्वत माला पर लगने वाले घास के विरल गुच्छों पर भेड़ों का एक रेवड़ इत्मीनान से चर रहा था । उनका गड़रिया, एक बड़े पत्थर पर बैठा हुआ सूर्य के प्रकाश में चमकती नीचे की चोटियां देख रहा था, जो उस और अपने कुत्ते को बुलाने के लिए उसने सीटी बजा संध्या की प्रथम ठंडक महसूस कर, भी कंपकंपी उठी और भेड़ की खाल परिधान उसने खींचकर अपने कंधों पर लिया । चट्टानों के एक खंड में से निक कूदता हुआ कुत्ता पास आ गया। आद ने अपने डंडे से उसे इशारा किया आज्ञा मानता हुआ कुत्ता भागा इधर-उधर बिखरी हुई भेड़ों के झुंड इकट्ठा करने में जुट गया। बड़ी चतु से कुत्ता भेड़ों को एक ऊबड़-खाबड़ से नीचे लाने लगा—और इसी क्रिया दरम्यान झुंड के आज्ञा न मानने सदस्यों पर निरंतर झपटता और भौं रहा। गड़रिये ने अपना भेड़ की खाल मोटा झोला उठाया, जिसमें पहले उस दुपहर का खाना था, और उसे अपने पर लटका लिया । फिर एक हाथ में और दूसरे में पिवङ (दो तारों सारंगी) लिये भेड़ों के पीछे-पीछे उसी रास्ते से उतरने लगा।

वह पच्चीस के आस-पास की उम्र नौजवान था और बहुत खूबसूरत। बड़ी-बड़ी आंखें काली और बड़ी की छाया में नीचे की ओर एक

तिरछेपन में गहराई में अवस्थित थीं । उसके लंबे केश उसके चौड़े कंधों पर उलझे हुए पट्टों में लटक रहे थे और उसकी काया सुंदर समनुपात की, असाधारण ऊंचाई वाली थी। वह रुक्ष और कष्टसहिष्णु दिखायी पड़ता था और उसका कांसे जैसा मौसमों की मार खाया चेहरा साफ प्रकट करता था कि वह ऐसा आदमी है, जिसका जीवन अब तक आराम से नहीं बीता है। घंटे भर बाद, पगडंडी खत्म होकर उसकी जगह धूल भरा चौड़ा रास्ता आ गया और उसके नीचे उसे तेजी से समाप्त होते जा रहे प्रकाश में कुछ-कुछ अस्पष्ट-सा गांव भी दिखायी दे रहा था । प्रकाश के कुछ बिंदुओं से घरों की खिड़कियां दिखायी पड़ रही थीं, जिसमें मक्खनदीप जल रहे थे। उसने घूमकर उन सुदूर चोटियों को देखा जो गहरे धूसर आकाश पर गहरे [illegible] की रेखाएं बनाती-भर बची रह गयी थीं । उसने सिर झुकाया और बिना कुछ बोले संरक्षक देवता के प्रति प्रार्थना की और फिर पत्थर का एक ढोका उठाकर उसने अपने समर्पण स्वरूप पास के एक, स्तूप के ऊपर रख दिया।

ग्रामवासी अपने फड़वे और पांचे कंधों पर रखे अपने-अपने खेतों से लौट रहे थे । उनमें से कुछ ने गड़रिये के प्रति, जब वह अपना रेवड़ लिये उनके पास से गुजरा तो जोर-जोर से अभिवादन शब्द कहे । बदले में अपना हाथ उठाकर वह मुस्करा भर दिया । गांव के प्रथम घर के पास पहुंचते-पहुंचते अंधेरा छा गया था और उसका रेवड़ ईंधन-काष्ठ ले जाते गधों की पंक्ति के कारण अटक गया था । रुककर वह उन धैर्यवान पशुओं को अपने पास से होकर जाते देखने लगा । उनके

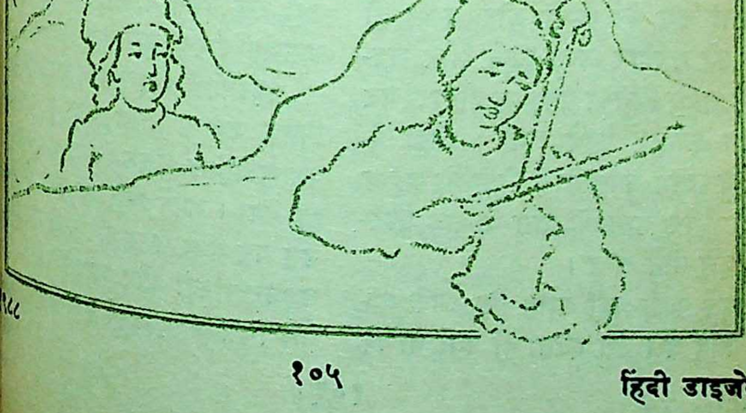

गलों में बंधी घंटियां प्रसन्नतापूर्वक बज रही थीं, जिनके साथ बीच-बीच में भेड़ें बकिया रही थीं तथा घर लौटते हुए लोगों की बातचीत के टुकड़े भी सुनायी दे रहे थे। गधों की घंटियां निकलकर चली गयीं। कुत्ता भौंका। रेवड़ आगे बढ़ा। सामने घर के खुले दरवाजे से उसके चूल्हे में से जलती हुई आग के स्फुल्लिग दिखायी पड़े, जिनके प्रकाश से एक थके हुए संतुष्ट व्यक्ति का चेहरा प्रकाशित हो रहा था जो गरम चाय का प्याला अपने सूखे होठों से लगाये उस घर में आराम कर रहा था। वह जल्दी से आगे बढ़ा।

वह अपने घर पहुंचा, भेड़ों को बाड़े में अच्छी तरह ठीक-ठाक बंद करके वह अपने अंधेरे कमरे में घुसा। उसका कुत्ता उसके पीछे-पीछे चल रहा था, दरवाजा ठेलकर वह कमरे के एक कोने में नीचायी में बने चूल्हे पर पहुंचा। नीचे झुककर उसने उसमें बचे एकाध अंगारों को फूंक मारी और उनमें से आग की एक हल्की-सी चिनगारी चमकी। उसने दो-चार सूखी टहनियां उस पर डालीं और जल्दी ही आग की मजेदार लपट उठने और लपलपाने लगी, जिसकी यकायक दीवारों पर विचित्र छायाएं पड़ने लगीं। मिट्टी के पात्र से उसने अपने लिए थोड़ी-सी शराब उंडेली और आग के पास बैठकर धीरे-धीरे उसे पीने लगा।

उसने कभी नहीं जाना कि उसके मां-बाप कौन थे। उसे इतना ही पता था कि वे उत्तर के मैदानों के घुमंतू डोक्पा और अपनी तीर्थ यात्रा पर आते हुए पर डाकुओं ने आक्रमण कर दिया उस समय वह बच्चा ही था। और से केवल वही बचा था। आस-पास बसे गांव के लोगों को वह मिला उन्होंने ही उसकी देखभाल की। वह मजबूत तगड़ा किशोर हो गया, दौड़ने और कुश्ती लड़ने में गांव के कि भी जवान लड़के को सरलता से हरा सक था। गांववाले उसे नीमा कहते, क्यों वह उन्हें रविवार के दिन मिला था सभी उसे अच्छा मानते, पसंद करते तक कि वे लड़के भी जिन्हें अपनी श दिखाने की मुठभेड़ों में वह निरंतर हरा रहता था, सिर्फ इसी कारण कि वह इत हंसमुख व्यक्ति था कि सदा मुस्कराता रहता और सभी की सहायता करने तैयार रहता। जब वह कुछ बड़ा हो तो अपेक्षतया ऐसे गरीब गांववालों भेड़ों की देख-भाल करके, जो धनवा परिवारों की तरह, अपने-अपने गड़ नहीं रख सकते थे, उसने अपनी जीवि उपार्जन करना शुरू कर दिया।

भेड़ों की देखभाल करते समय ही उ पिवङ बजाना सीखा और कालांतर वह अत्यधिक कुशल पिवङ बजाने वा हो गया। अपने जिले की सभी धुनें उस पर बजा लेता और राहों पर मि खच्चरधारियों और व्यापारियों से, उसे मिल जाते, उसने अन्य देशों के

भी सीख लिये, यहां तक कि ल्हासा की सरायों में बजाकर सुनायी जाने वाली एक-दो धुनें भी उसे बजानी आ गयी थीं। विवाह गीत, प्रणय गान, फसलों के गीत और पुराने पहेली गीत—सभी उसके सादे उपकरण के गज और तारों पर इतनी मधुरता और घनघनाते स्वरों से बजते, जैसा किसी ने पहले कभी नहीं सुना था। ग्रामवासी उसकी इस वीरता पर अभिमान करते और सभी यात्रियों को जो सुनने को तैयार हो जाते, उन्होंने बताया था कि इस भूमि में कहीं पर भी उस जैसा संगीतज्ञ नहीं है, यहां तक कि ल्हासा के श्रीमंत यदि वे चाहें तो, नीमा का गाना सुनकर, निश्चयरूप से आश्चर्य में पड़ जायेंगे। वे उसे कभी भी गड़रिया नहीं कहते थे, परंतु सदा संगीतराज नीमा कहकर उसका परिचय देते थे।

परंतु उसके जीवन का एक और पक्ष भी था और वह इतना मधुर और सुंदर नहीं था जितना उसका संगीत था। एक ऐसी चुप्पी थी जो कभी भंग नहीं हुई थी—वह बोल ही नहीं पाता था। कुछ लोग उसे गूंगा भी कह देते। परंतु गूंगों के भीतर कुछ पशुत्व जैसी बातें होती हैं, चीखना, चिल्लाना और ऊंचे शब्द करना जिन्हें वह पशुओं की तरह शक्ति लगाकर संपन्न करते हैं। परंतु वह उनसे भिन्न था। वह बस चुप रहता। अपने साथी लोगों को अपनी बात काफी समझा लेता—उसकी आंखें, कुछ थोड़े से हावभाव, तरह-तरह की मुस्कान और कभी-कभी परंतु बहुत ही कम, मामूली-सा भुकुटि चढ़ाना भी। जो भी हो गड़रिये को वाणी के वरदान की अधिक जरूरत भी नहीं पड़ती। मानव प्राणी की आवश्यकता ऐसे किसी को क्या होगी जब कि उसकी मूक बात भेड़ों, कुत्तों, तारों और पर्वतों से ही होती है।

अपनी शराब उसने समाप्त की, खाली पात्र एक ओर रख दिया और याक के सूखे गोबर के कुछ टुकड़े आग में डाल दिये। इतने में किसी ने दरवाजे पर खटखट की और बाहर से कोई चिल्लाकर बोला 'नीमा! मुझे भीतर आने दो। मैं हूं दोर्जा।'

वह उठा अपने मित्र के लिए दरवाजा खोला; वह उसी की उम्र का एक लड़का था। लड़का भीतर आया और उसने अपने ठंडियाए पैर फर्श पर जोर से पटके।

'चलो नीमा, उठाओ अपनी सारंगी और मेरे साथ चलो।'

नीमा ने प्रश्नात्मक दृष्टि से उसकी ओर ताका।

'अरे, तुम्हें पता नहीं है क्या? आज रात चोदर दादा के घर पर उत्सव हो रहा है। उनकी पत्नी के बच्चा हुआ है। बुद्ध भगवान ही जानते होंगे कि ऐसा कैसे हो पाता है... और इस उम्र में।'

नीमा अंदर से दांत दिखाने लगा।

'चलो, जल्दी करो, पेमा भी वहीं आयेगी। और मेरा ख्याल है तुम वहां नहीं जाओगे तो वह दुखी होगी।'

नीमा का हृदय दौड़ने लगा–वह भी वहां आयेगी । इस गांव की सबसे सुंदर लड़की । नहीं-नहीं तीनों लोकों में सर्वश्रेष्ठ सुंदरी । वह भी आयेगी, उसकी काली पारदर्शी आंखें, उससे इस तरह बातें करती हैं जैसे किसी ने उसके साथ बातें नहीं की, जिन्होंने उसे कितनी ही बातें बतायी हैं, और बातों के सिवाय यह, कि वह बहुत विशिष्ट व्यक्ति है–और वह उसकी प्रतीक्षा में रहेगी ।

जल्दी-जल्दी वे रात में, संकरी गलियों में से होते हुए आगे बढ़ते गये, जाने वाली सर्दियों के प्रथम हिमकण समूह चुपके-चुपके उनके सिरों पर पड़ते फिसलते गये । जब वे चोदर दादा के घर पहुंचे, उत्सव शुरू हो चुका था । नीमा के भीतर घुसते ही सभी मिलकर प्रसन्नता से चिल्ला उठे और युवा लोग अपनी-अपनी जगहों से उठे और नृत्य करने के उत्साह में अपने पैर जोर से फर्श पर पटकने लगे ।

'वाह, अब हमें थोड़ा संगीत सुनने को मिलेगा ।'

'नाच ! चलो नृत्य करें ।'

इतने में एक चिंतनशील व्यक्ति ने कहा, 'बजाने को कहने से पहले उसे थोड़ी मदिरा तो पिलाओ ।'

नीमा मुस्कराया, परंतु उसकी आंखें उसे तलाश कर रही थीं । वह एक कोने में श्रीमती चोदर की बगल में उधर बैठी हुई थी । उसने उसकी तरफ दृष्टि डाली और उसके नेत्र मुस्करा उठे । 'तुम आ गये, मुझे बहुत खुशी हुई ।' यहीं उसकी आंखें कहती लग रही थीं ।

एक अन्य लड़की मदिरा का पात्र नीमा के पास आयी, पारंपरिक प्याले पी चुकने पर चोदर दादा पास आये और उसके कंधों पर अपना हाथ रखकर दूसरा हाथ उन्होंने मेह को शांत रहने को कहने के लिए उठाया । 'आज का दिन बड़ा खुशी का है', उसने कहना शुरू किया । 'अब मैं लोगों को बता सकता हूं कि मैं बूढ़ा गया हूं और ऐसा वरदान पाने के अयोग्य हो चुका हूं, फिर भी भगवान मुझे पुत्र प्रदान कर अपना आशी दिया । मैं गर्व से इतना और कहूं कि सातवीं बार हुआ है ।'

मेहमान हंसने लगे और जोर-जो उन्हें बधाई देने लगे ।

वृद्ध उनके शांत होने तक रुका फिर आगे कहने लगा, 'अब मैं अपने दोस्त, अपने देश के सर्वश्रेष्ठ सारंगीवा संगीत के मणिरत्न, से अपने बेटे के में कोई विशिष्ट धुन बजाने का करूंगा । मेरे मन में एक पुरानी प्रिय धुन, 'कितनी सुंदर, नन्ही चि आ रही है ।' सब लोग समर्थन में चिल्ला वृद्ध ने पुनः अपने हाथ ऊंचे उठाये अभी नृत्य नहीं होना चाहिये ।'

युवा लोगों में कुछ कराहें उठीं, वृद्ध ने उन पर कोई ध्यान नहीं दि

'मुझे पैर पटके जाना अच्छा

पड़ता, इससे संगीत की धुन में विघ्न पड़ता है। परंतु मैं समझौते के लिए प्रस्तुत हूं। तुम सभी साथ मिलकर गाओ, और बाद में जब संगीत द्रुत लय में बजे तो उसके साथ नृत्य करो। तो मेरे जवान संगीतकार, बजाओ अपनी सारंगी कि उसका मृदु स्वर मेरे पुराने कानों को भी थोड़ा सुख पहुंचाये।'

नीमा ने अपने कपड़ों की तहों के भीतर से सारंगी निकाली और नीचे बैठकर एक-दो मिनट उसका स्वर ठीक करने में लगाये। फिर वह उसे बजाने लगा। पिवङ से निकलती हुई स्पष्ट झंकारों में धुन के पहले कुछ स्वर निकले और धीरे-धीरे मेहमान भी उसके साथ गाने लगे :

'कितनी सुंदर नन्ही चिड़िया
इतनी सुंदर नन्ही चिड़िया
सभी जगह नहीं गाती चिड़िया
देवगण और लामा लोग
देवगण और लामा लोग
जब वे मंदिर में आते
तभी चहकती नन्ही चिड़िया
मधुर स्वरों में गाती चिड़िया
कितनी सुंदर नन्ही चिड़िया
इतनी सुंदर नन्ही चिड़िया
सभी जगह नहीं गाती चिड़िया
बाप और बेटा जब मिलकर
बाप और बेटा जब मिलकर
तीर्थ यात्रा करने जाते
तभी चहकती नन्ही चिड़िया
मधुर स्वरों में गाती चिड़िया।'

उस रात बहुत सारे गाने गाये गये और अथक पैर उछलते रहे तथा अनेक और जटिल पग विन्यासों का नृत्य उन पैरों ने किया। और नीमा ने अपनी सारंगी दूसरे वादक को सौंप दी और स्वयं भी नृत्य करने लगा। बड़ा अच्छा नर्तक था वह और जो बहुत से मदिरा पात्र वह पी चुका था उन्होंने उसे हल्का और मनमौजी बना दिया था। अर्ध रात्रि होने से पूर्व उसे ताज़ी हवा की आवश्यकता प्रतीत हुई और कमरे के झुटपुटे वातावरण से बाहर निकलकर वह छोटे से प्रांगण में चला गया। बर्फ और भी गहरी गिरने लगी। उसने छत से बाहर हाथ निकाला और हाथ में न आने वाले कुछ श्वेत बर्फ कण पकड़ लिये।

'नीमा' आवाज आयी . . . 'उसकी है . . . ' वह घूम गया, वह आगे बढ़ आयी और उसका हाथ अपने हाथों में ले लिया।

'हाथ ठंडा है।'

उसने सिर हिलाया और उसकी तरफ देखकर मुस्कराया।

'आज की संध्या तुमने आश्चर्यजनक ढंग से सुंदर बजाया। नीमा, तुम्हें इस गांव में नहीं पड़े रहना चाहिये। तुम्हें ल्हासा जाना चाहिये और वहां के सामंतों-सामंतनियों को बजाकर सुनाना चाहिये। तुम्हारा संगीत यहां बरबाद हो रहा है।'

सुनकर उसने अस्वीकृति में अपना सिर हिलाया और उसका हाथ मजबूती से पकड़े रखकर वह उसकी आंखों के भीतर

झांकने लगा।

'मैं ! मेरी क्यों सोचते हो,' उसने कहा। 'वहां सुनती हूं, मुझसे भी सुंदर लड़कियां हैं, ल्हासा में फिर भी वह...' वह कहते-कहते रुक गयी।

उसके मस्तिष्क ने किसी चीज की एक चेतावनी दी। वह उसकी आंखों में झांकने और उनमें अपना उत्तर खोजने लगा। उसने अपना सिर दूसरी तरफ घुमा लिया।

'सर्दियां आ गयी हैं नीमा, फिर अगले बसंत में...मेरी सगाई हो जायेगी। मेरे पिता उससे वचनबद्ध हो गये हैं।'

उसकी सांस रुक गयी और ठंडक ने उसके हृदय को जकड़ लिया। अस्पष्टता की काली धुंध उसकी आंखों के सामने उतर आयी। आखिर में उसने उसकी तरफ देखा।

'मैं कुछ नहीं कर सकती, नीमा। मुझे करना ही चाहिये...आह, मुझे अपने पिता को आज्ञा माननी ही चाहिये।'

उसने अपना सिर अपनी छाती में छिपा लिया और रोने लगी। कुछ क्षणों के बाद उसने धीरे से अपने को उठाया और पश्चिम की ओर, ल्हासा की तरफ उंगली उठाकर अपना सिर हिला दिया।

'नहीं, नीमा, मैं तुम्हारे साथ भागकर नहीं जा सकती। मेरे पिता वृद्ध हैं और... मैं नहीं जा सकती तुम्हारे साथ, नहीं ही जा सकती। परंतु फिर भी मैं तुम्हें प्यार करती हूं। नीमा, मैं तुम्हें प्यार करती हूं।'

'हां, तुम मुझे प्यार करती हो,' सोचा। 'पर कितना प्यार ? प्यार बच्चों का पिल्ले के प्रति प्यार है। मैं पुरुष हूं। मेरे लिए उतना नहीं है।'

'मुझे खेद है, नीमा। ईमान से पिता तुम्हें अच्छा मानते हैं। बात ही है कि... मैं एक गूंगे से विवाह कर सकती हूं ?'

शब्दों की रुक्षता ने पीड़ा देने स्पष्टता से उस पर आघात किया समय की चरमता को समझ गया। उसके पास से अलग हट गया और अंधेरे में दौड़ता चला गया।

गांव की गलियों और उसके मृ पर होता वह दौड़ता चला गया। मोटे नम्दे के जूते बर्फ की धारा के नीचे दबाकर रौंद रहे थे दौड़ रहा था जैसे उस पर भूत सवार गया हो। उसके मस्तिष्क के भीतर कार चमक रहा था, उसकी सांस पीड़ाप्रद झटकों में बाहर निकल थी, जो निकलते ही तत्क्षण श्वेत स्थायी वाष्प के बुलबुलों में होती जा रही थी। वह निरुद्देश्य पागल-सा किसी घायल पशु की तरह भयंकर उदासी की ठंडी पकड़ से ब कोशिश में भाग रहा था, जो उ सवार होने को आ रही थी..कि वह से चूर-चूर होकर अंततः ठोकर नीचे गिर पड़ा था। कुछ समय बाद

गालों पर बर्फ का ठंडा दुलार महसूस और उसने अपना सिर उठाया। बादलों के एक टुकड़े के भीतर से शुभ्र उस समय चमक रहा था और ने अपने को पर्वतों को निहारते। ठंडे भूमेतर प्रकाश में वह चोटी विचित्र ढंग से जगमगा रही थी और भूमि को ढक रहे बर्फ के दर्पण में परछाईं पड़कर चांद का आकार बड़ा दिखाई दे रहा था।

'यह शकुन है,' उसने सोचा, 'संरक्षक का भेजा हुआ संदेश है।' बुखार से उसके मस्तिष्क ने बेढंगे विचारों की शृंखला गढ़ डाली। 'हां, संरक्षक उसमें शक्ति है, वह मेरी जीभ ठीक देंगे, मुझे वाणी दे देंगे। तब वह मेरी जायेगी, मेरी अरे हां, संरक्षक देवता। उन्हीं के पास पहुंचना चाहिये।'

गड़बड़ाता हुआ वह उठकर खड़ा हो और उसने उस पर्वत शृंग को देखा, मन से आवारा बादल फिर परस्पर गये और पर्वतमाला अंधियारे में हो गये। परंतु नीमा जान चुका कि मुझे क्या करना है। रात में वह चढ़ने लगा और बर्फ में फिसलते और खाकर गिरते हुए भी, कोई उसे बनाता आगे खींचे ले जा रहा था। वह अपनी दुखती टांगों की परवाह किये बिना जैसे-तैसे आगे ही बढ़ता। उसके काले रुक्ष केशों के किनारों कण टपकने और उसके गालों से होकर नीचे गिरने लगे। प्रत्येक सांस गले में से बड़ी कठिनता से बाहर आती जो प्यास से सूखकर लगभग बंद हो चुकी थी। प्रत्येक पग के साथ उसके भेजे में से चीखती एक ही प्रार्थना निकल रही थी 'ओ महान शक्ति, मुझे मेरी वाणी प्रदान करो . . . मुझे मेरी वाणी प्रदान करो . . . मुझे मेरी वाणी प्रदान करो।'

उसने वह पर्वतकूट पार किया जो ग्राम को पर्वतमाला से पृथक करता था और उतरते समय उसने बहुत बार ठोकर खायी और वह गिरा। और आखिरकार थकान से चूर-चूर हुआ वह उस पर्वत के आधार पर पहुंचकर वहां खड़ा हो गया। उसकी दुखती टांगों में से पीड़ की धाराएं निकल रही थीं। अपनी उंगलियों के सिरों को उसने थकान-युक्त सुन्न होते हुए अनुभव किया और वह जान गया कि तुषारहत होकर वे समाप्त हो चुकी हैं। इतने पर भी वह विश्राम करने नहीं ठहरा, परंतु उस पर्वत पर चढ़ने लगा। कुछ दूरी तक वह चढ़ा, फिसला और कई सौ गज़ तक लुढ़कता चला गया, फिर उसने अपने शरीर पर एक भारी बोझ अनुभव किया जो उसे नीचे की ओर खींचता चला जा रहा था। 'मुझे मेरी वाणी प्रदान करो . . . मुझे मेरी वाणी प्रदान करो!'

उसके घुटने उसके नीचे सिकुड़कर इकट्ठा हो गये और वह भारवत होकर नीचे बर्फ पर गिर पड़ा। आक्रांत होकर उसके पैर ठंडे हो चुके थे—बिल्कुल बेकार। उसने

पीड़ा का विचार अपने मन से जल्दी ही दूर किया और उसी के विषय में सोचने लगा—'पेमा, पेमा !' उसकी बांह और उंगलियां बड़े कष्ट से बर्फ में पकड़ने के स्थान (पोहड्डे) खोद रहे थे और इस तरह उसने कुछ फुट और अपने को किसी तरह धकेला। फिर उसकी उंगलियां जमकर इस्पाती पंजे बन गयीं और उसकी बांहें कड़ी पड़ गयीं। वह ठहर गया। 'मुझे मेरी बाणी प्रदान करो . . .' उसका मस्तिष्क दौड़ता रहा। उसने अपने दांत पीड़ा से कसकर दबाये और अपना सिर पीछे की तरफ गिराया—और फिर उसने उस पर्वत को देखा।

अचानक एक गहरी ठंडक उसके हृदय के भीतर भर गयी और उसके शरीर के कोने-कोने में फैलती चली गयी। एक भारी गरजती आवाज उसके सिर में प्रविष्ट हुई। पर्वत पालिश किये हुए माणिक की तरह चमक रहा था और उसकी अंधयाती आंखों के सामने वर्ण छटाएं प्रकट हो रही थीं।

काफी, बहुत काफी समय के बाद, अनिच्छापूर्वक ठंडक वापस चली गयी और पीड़ादायी आवाज भी घट गयी। उसकी आंखों ने दुबारा उस परिचित
की ओर देखा। शांति छायी
तब उसे महसूस हुआ—पहले
मामूली-सा—फिर धीरे-धीरे वह
उसके फेफड़ों की भित्तियों में भी
चला गया और श्वास नली में
हो गया, ऊंचे और ऊंचे। उस
सूज गया।

और वह समझ गया! ऊपर
कंठ में जाकर वह वहीं ठहर गया,
जीभ की नोक पर जाकर स्थिर हो
फिर एक विशाल जल प्रपात की
जो चट्टानों पर से होता हुआ नीचे
करता है, वह जोर से फूट पड़ा 'पेमा,
पेमा !' और उसके पश्चात् उसे
मिल गयी।

अगले बसंत में जब भारी बर्फ
गयी थी, लोगों को उसकी लाश पड़ी
एक विशाल बर्फ समूह के नीचे
गयी थी। हिमस्खलन जो कदाचित्
भारी आवाज होने के कारण वह
हो गया था।

['टिबेट जर्नल', धर्मशाला
लेखक की अनुमति से

□

इस शताब्दी के सर्वश्रेष्ठ संगीत-संचालक, तोस्कानिनी को एक बार उनके
मित्र ने महान फ्रांसीसी संगीतकार, देबसी की एक हस्तलिखित संगीत-रचना दि
जो कि कहीं से प्राप्त नहीं हो रही थी।

तोस्कानिनी ने उसे ध्यान से देखकर कहा, 'यह देबसी की हस्तलिखित रचना
बल्कि उसकी नकल है। इसकी लिखावट दिल में से निकली हुई नहीं लगती।'

बाद में पता लगा कि वह रचना सचमुच ही नकल थी।

□

नबी बक्श फलक

□ बद्रीनारायण तिवारी

वर्तमान प्रचार और विज्ञापन के युग में भी बहुधा अनुभव होता है कि बहुत कुछ अनदेखा ही रह जाता है। बहुत-सी चित्र-विचित्र सृष्टि हमसे अपरिचित रहकर ही गुजरती जा रही है, क्योंकि देश विशाल है और काल की गति तीव्र। जितना जहां भी कुछ हो रहा है, उसे आत्मसात करने के साधन कम हैं और सुविधाएं उनसे भी कम।

किंतु तत्वज्ञानी की दृष्टि इन सबसे कभी विचलित न होकर तत्व पर केंद्रित रहती है। शोधार्थी को जिज्ञासु के रूप में मान्यता प्राप्त है। वे खड़ी हुई हरी-भरी फसल को देखकर ही हर्षित नहीं होते वरन् उसके मूल उत्पादन सार का अनुमान लगाते हैं। साहित्य सृजन के अध्येता जो नींव के पत्थर के समान दिखायी तो नहीं पड़ते, किंतु प्रासाद की दृढ़ आधार-शिला के मूलाधार यही हैं। इन्हीं सशक्त रचनाकारों ने साहित्य सृजन में गागर में सागर भरने का काम किया है।

भारत में प्राचीन काल से श्रुति की परंपरा के आधार पर अनेक मनीषियों की रचनायें समाज में सुरक्षित रह सकीं। लेखनी से अधिक श्रुति पर अधिक विश्वसनीयता होने से साहित्य सृजन काल के गर्भ में न समा सका।

इधर खोजने पर एक ऐसे रचनाकार की जानकारी मिली, जिसकी भक्ति-रस से परिपूर्ण गंगा-जमुनी काव्यधारा से हर व्यक्ति प्रभावित होता रहा—वह थे बुंदेलखंड स्थित दतिया के मुंशी नबी बक्श 'फलक'। 'फलक'जी के प्रति जितना खोजा उतनी ही गहराई में उनकी रसमयी कविताओं में डूबने लगा। विगत दो वर्षों में सर्वप्रथम दतियावासी साहित्यकार राज गोस्वामी से कुछ जानकारी मिली थी। 'फलक'जी के प्रति अधिक जिज्ञासा में उनके दो मित्रों साहित्यवारिधि हरिमोहन लाल श्रीवास्तव एवं दमरूलाल सोनी तक पहुंचा दिया।

प्रस्तुत लेख में महान रचनाकार नबी बक्श 'फलक' जिनकी रचनाएं काल के गर्भ में समा रही थीं—संकलन एक छोटा-सा प्रयास मात्र है। इसमें महाकवि की बहुमुखी इंद्रधनुषी काव्यविधा की बानगी के दर्शन मात्र हैं। इनकी बिखरी रचनाओं का संकलन करके शोधकर्ताओं एवं नये

रचनाकारों को बड़ी सफलता भी मिलती।

संबत १९६० के लगभग दतिया में जन्मे मुंशी नबी बक्श 'फलक' उसी रियासत में अधिक समय तक दीवान रहे, जिनके शासन काल में अन्य रियासतों की भांति राजनैतिक चेतना तो दूर की बात थी–साहित्यिक और सामाजिक गतिविधियां संभव नहीं थीं। ऐसे सांस्कृतिक संक्रमण काल में कुछ उत्साही युवकों ने परिस्थितिवश राजपरिवार का आश्रय लेकर 'यशवंत शंकर समाज' और 'लोकेंद्र साहित्य मंडल' की स्थापना की। इसी मंडल के सदस्यों ने हिंदी के काव्य क्षेत्र में प्रवेश करने हेतु नीतिवश मुंशी नबी बक्श को भी प्रोत्साहित किया। मुंशीजी को दोहा, कवित्त और सवैया छंदों की रचना में अधिक रुचि होने से विस्मयकारी सफलता प्राप्त हुई। उन्होंने अपना उपनाम 'फलक' रखकर रचनाएं करना प्रारंभ कर दिया था। 'फलक' के कई अर्थ होते हैं। अरबी भाषा में फलक का अर्थ आकाश है। और बुंदेलखंड में इस शब्द से 'छाले' या 'फफोले' का बोध होता है।

'फलक'जी का अपना अलग व्यक्तित्व था। वे सिर पर झब्बेदार लाल रंग की तुर्की फैज टोपी लगाकर मधुर कंठ से ऊंचे स्वर में प्रभावशाली ढंग से कवि-सम्मेलनों में सर्वप्रथम अपना परिचय निम्नलिखित रचना के माध्यम से देते थे–

राम या रहीम रहमान का न भेद मान,
मंदिर में, मस्जिद में रोज-रोज जाता हूं।
आयतें कुरान की खुशी से पढ़ता हूं, पर
वेद और पुरान के तथैव गीत गाता हूं।
मेरे यहां काशी और काबा में न भेद भा
साधुओं फकीरों से प्रसन्नता दिखाता हूं।
हिंद की जबान हिंदी-उर्दू का गुमान मुझे
दतिया निवासी कवि 'फलक' कहाता हूं।

फलकजी के काव्य की चर्चा में कवि डा. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक' ने उनकी काव्य विधा की प्रशंसा करते हुए एक कवि-सम्मेलन में फलकजी जब रचना सुनाने लगे, तो उन्हें उनकी लेखनी से लिखाकर निशंकजी ने अपने पास रख लिया, जो इस प्रकार है–

राम लखन अरु जानकी रोकहु, वनहिं न जावं।
कठिन भूमि, कोमल चरन 'फलक' परें पायं।

अवधपुरी की दशा नेक तो विचार करो
आप बन रै हो यहां दुःख बन जैहं नाथ।
दशरथ वृद्ध राज्य-भार कौं संभारिहै को
कैसे फिर चौदह वर्ष कट पैहं नाथ।
आपको निवास यहां सकल प्रजा की चाह
टेक निज राखिवे कौ सब अड़ जैहं नाथ।
कोमल चरण, बन भूमि है कठोर महा
पांयन में 'फलक' तिहारे पड़ जैहें नाथ।
चलत घोर बन भूमि में लक्ष्मण सीता साथ।
चरण सरोजन में, 'फलक' परे अहो हे नाथ।

इसी प्रकार 'राम बन गमन' प्रसंग पर 'फलक'जी ने फलक का अनेक स्थानों पर मार्मिक ढंग से उपयोग कर अपनी काव्य प्रतिभा का दिग्दर्शन कराया है।

हिंदुओं के अनेक देवी-देवताओं का फलक'जी ने अद्भुत वर्णन किया है –

देवन के देव महादेव आशुतोष प्रभु,
दास की लगन लगी आप ही सों भारी है।
विश्व तारिबों को जटाजूट सों बहाई गंग,
कंठ में विविध विधि मुंडमाल धारी है।
हाथ मृगछौना त्यों बिछौना दिव्य सिंह चर्म,
भूषण भुजंग धर्म-वृष की सवारी है।
पीर हरौ दास की, ये आपके हैं सरनागत,
अरजी 'फलक' नाथ, मरजी तिहारी है।

श्री रामभक्त हनुमान के विषय में वंदना छंद में कहा है–

लंकपुर जाय सुधि लीनी है विभीषण की,
सोवे भये भाग प्रभु तुम ही जगैया हो।
करुणा की कोर कर 'फलक' बचाय लेव,
करुणानिधान जाय, पार पै लगैया हो।

श्री राधिकाजी के छंदों में फलकजी की शृंगार परक रचना उनकी बहुमुखी प्रतिभा को दिखाती है –

कौन सों कहूं री वीर, उठत करेजे पीर,
नैनन सो बहत नीर, 'फलक' सताये री।
ग्रीष्म रितु आई झर वापस बिताई अरु,
पाती न पठाई किन सौत बलमाये री।
चोर करैं कोयल मरोर करे कोकिलासी,
शोर करैं भौरा, काम ऊधम मचाये री।
बोलहि घनश्याम पै न बोलहि घनश्याम हाय,
सावन तो आये, मन भावन न आये री।

सवैया छंदों में फलकजी की एक बानगी से उनकी सशक्त काव्य शैली का नमूना प्रस्तुत है–

यदुनाथ अनाथ के दुःख हरो
गजराज की जैसे व्यथाएं हरीं।
अटकी नैया मंझधार मेरी,
तुम लाखन की फंसी पार करीं।
कहूं हाल कहा मैं बिहाल भयो
अब तो सुन लो बिनती हमरी।
जब टेर सुनी तुम द्रोपदि की,
तब थानन की दई खोल घरी।

बुंदेलखंडी में 'घरी' का अर्थ 'तह' या 'परत' में भी प्रयोग होता है। फलकजी सुमधुर कंठ से सरस्वती वंदना पढ़ते थे। तत्कालीन मित्रगण उनकी रचना सुनकर प्रशंसा करते अघाते नहीं थे –

मेरा मानस मंजु मधुर रस से सरसाता।
कल-कल करता कलित ललित जग में
जब छबि पाता।
शत सहस्रदल कमल, यहां पर अगणित
शोभित।
यहां गुंजरित भ्रमर, भ्रमग करते मधु
लोभित।।
जो चाहे जितने यहां मन के मोती लीलिये।
हंसवाहिनी भारती, अपना आसन कीलिये।
राम यहां रहमान यहां, मन्दिर-मस्जिद हैं।
कविगण शायर यहां, यहां काजी कोविद हैं।
जन की यहां पुकार यहां मुल्ला चिल्लाते।
काशी-काबा तीर्थ यहां, सब शीश झुकाते।।
मुसलमान हिंदू यहां, मस्त कुरान पुरान में।
भेद भाव तज भारती, सबकी बसहु
जुबान में।।

भारत के अन्य महाकवियों ने जिस प्रकार भक्तिरस की धारा बहाकर अपनी

(शेषांश पृष्ठ ११९ पर)

कहानी

वही मोड़

☐ लक्ष्मीनारायण श्रीवा

मैं अच्छी तरह जानता हूं कि कल सूर्य की पहली किरण के साथ मेरे जीवन का अंत हो जायेगा। मैं जेल के सींखचों के बीच में बैठा कोरिडोर में जलते हुए 'बल्ब' को देख रहा हूं। संतरी के भारी बूटों की आहट से कभी-कभी मेरी तंद्रा भंग हो जाती है। आज अपनी जिंदगी की एक-एक घटना मेरी आंखों के सामने से गुजर रही है। मुझे अच्छी तरह याद है जब मैं बहुत छोटा था शायद आठ या नौ वर्ष का, मेरे माता-पिता थे। मेरी एक छोटी बहन थी। हम सब एक छोटे से गांव में रहते थे। मुझको तब नहीं मालूम था कि पिताजी क्या काम करते हैं, पर वो ज्यादातर बाहर ही रहते थे। कभी-कभी तो वो महीनों घर नहीं आते थे।

एक दिन जब मैं सुबह उठा तो देखा कि पिताजी को पुलिस पकड़े हुए है। मैं तो डरकर मां की साड़ी का पल्लू पकड़ कर छुप गया था। जब पुलिस पिताजी को ले गयी तो गांववालों ने बताया कि पुलिस उनको एक खून के इल्जाम में ले गयी है। मैं बहुत देर तक रोता रहा। मेरी छोटी बहन भी रो रही थी और मैं उसको चुप कराते हुए और जोर से रोने लगता पर मेरी मां की आंखों में आंसू नहीं पुलिस के जाने के बाद वो यथावत घर का काम निबटाने लगीं। कुछ के बाद हमको बताया गया कि पिता उम्र-कैद की सजा सुनायी गयी है। खबर को सुनकर मेरी मां रोने लगीं पिताजी को भला-बुरा कहने लगीं। आज भी याद है कि वो रोते हुए कह रही थीं कि खुद तो चले गये और गये मुझे परेशान करने के लिए दो अब इनको कौन पालेगा? जज साह सजा सुनाते समय हम सबको भी फां सजा क्यों न सुना दी, ताकि उनके हम लोगों को भी मुक्ति मिल जाती। कहने से तो कुछ होता नहीं है। हम को उसी गांव में रहना था।

पिताजी के जाने के बाद कुछ तो घर का खर्च किसी तरह चला, दिक्कत होने लगी। मेरी मां ने ठाकुर साहब के यहां झाड़ू-पोंछा का कर लिया। पर उससे दो वक्त की ही मिल पाती थी। मेरा स्कूल जाना गया और मैं गांव के लड़कों के साथ

सुनने लगा। यह भी ज्यादा दिनों तक नहीं चला। बीच-बीच में मैंने मां को कहते सुना था कि अपराध तो 'उन्होंने' किया है पर असली सजा तो हम लोगों को ही मिलती है। ऐसे कब तक चलेगा और वास्तव में ऐसा अधिक दिनों तक नहीं चला। कुछ ही दिनों बाद मेरी मां पड़ोस के एक गांव में एक आदमी के साथ रहने चली गयी। एक-दो साल तक तो वह आदमी हम लोगों को देखता रहा पर धीरे-धीरे उसने भी आना बंद कर दिया।

मेरे सामने अब समस्या थी रोटी की। मुझे कहीं काम भी नहीं मिलता था। भला खूनी के बेटे को कौन काम देता ? कभी-कभी खेतों में काम करने के लिए मजदूरी कर लेता, पर वह भी साल में कुछ माह ही मिल पाती थी। मैं अब बड़ा हो गया था पर रोजी-रोटी की समस्या का कोई समाधान नहीं निकलता था। एक दिन जब घर में खाने को कुछ नहीं था तो एक दोस्त की मदद से मैंने पड़ोस के गांव में एक घर में नकब लगायी और उस घर के कुछ जेवरात और बर्तन उठा लाया। इनको बेचकर मेरा कुछ दिनों का खर्चा निकल आया था। जब पहली बार मैंने चोरी की थी तो मैं बहुत

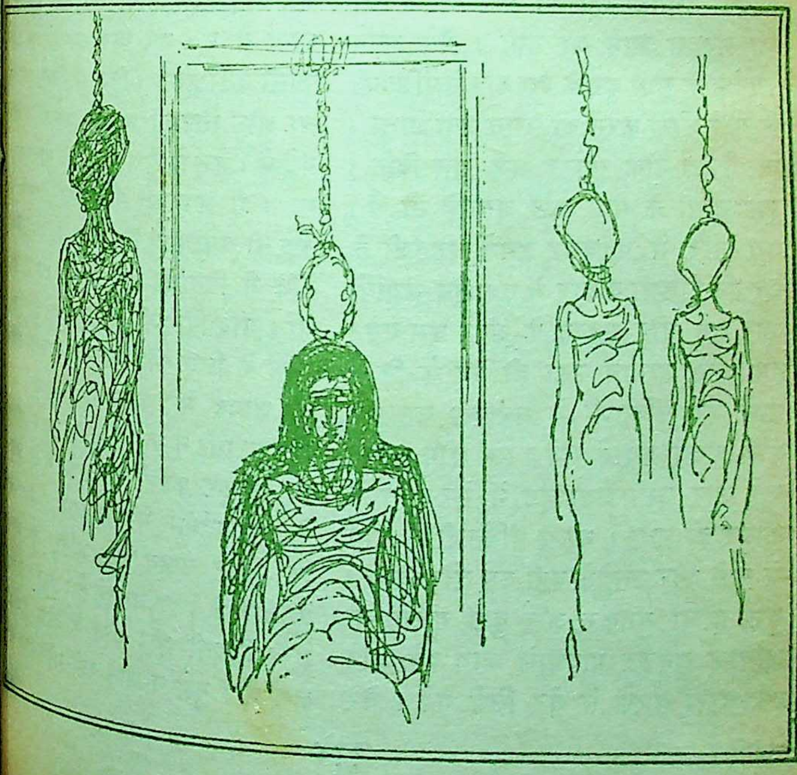

डरा हुआ था, पर जब यही चोरी मेरी रोजी-रोटी का साधन बन गयी तो वह डर भी जाने लगा । धीरे-धीरे मेरा एक छोटा-सा गिरोह बन गया और मैं दूर-दूर के गांवों में भी चोरी करने जाने लगा । इस तरह जिंदगी के मेरे लगभग दस वर्ष गुजर गये । इसी बीच मेरे दोस्तों ने मेरी शादी भी करा दी और मेरे दो बच्चे भी हो गये । ऐसा नहीं कि मेरी चोरियों का पुलिस को कुछ पता ही नहीं चला । मैं इस बीच कई बार जेल भी हो आया । पर धीरे-धीरे जेल भी मुझे घर जैसा लगने लगा ।

इसी तरह हिचकोले खाते हुए मेरी जिंदगी घिसट रही थी कि जिंदगी की वो मनहूस शाम आ गयी । मैंने अपने गिरोह के साथ दूर के एक गांव में पंडितजी के यहां चोरी करने का प्लान बना डाला । हम लोग ठीक ग्यारह बजे चल दिये । हम लोगों के पास कुछ असलहे भी थे । उस गांव में पहुंचकर हमने पंडितजी के घर की पिछली दीवार में एक सेंध लगायी और हम लोग मकान के अंदर घुस गये । हम लोग सामान उठा ही रहे थे कि न जाने कैसे पंडितजी के घरवाले उठ गये और हल्ला मचाने लगे । हम लोग घबड़ा गये और उसी घबड़ाहट में मेरे हाथ से फायर हो गया । गोली पंडितजी के सीने में लगी और उन्होंने वहीं दम तोड़ दिया । कुछ हल्ला सुनकर और कुछ गोली की आवाज सुनकर गांववाले जाग गये और हम चारों तरफ से घेर लिये गये । मेरे कुछ साथी तो भागने में सफल हो पर मैं तथा मेरे दो साथी वहीं पकड़े गांववालों ने हमको पुलिस के हवा दिया । कुछ दिनों तक मुकदमा रहा और अंत में मुझे फांसी की स दी गयी ।

जब फांसी की सजा सुनायी थी तो मैं कटघरे में ही मौजूद था। सामने एकदम से मेरा बचपन गुज़र मैंने चीख-चीखकर जज साहब था कि फांसी देते वक्त मेरे बच्चों फांसी दे दीजियेगा, वरना वो तरह जिंदगी भर मुझे कोसेंगे और भी वही हाल होगा जो मेरा हुआ आज से २० वर्ष बाद आपको फांसी देनी होगी । किंतु मैं चिल्ला था और सिपाही मुझको घसीटते गये थे । जेल में मैं अक्सर यही सोचा था । मैं अपराधी कैसे बना ? कु तक तो समाज ही जिम्मेदार है, पर दोष मैं पिताजी की उम्रकैद को ही था । यदि पिताजी को सज़ा देते हुए जीने के लिए कोई व्यवस्था कर दी तो शायद मेरे कदम न लड़खड़ाते मैं अपराधी न बनता । यही सब सोच था कि कुछ कदमों की आहट से मैं से पुनः वर्तमान में लौट आया । मैंने कि ज़ेलर साहब मुझे अंतिम मु पहुंचाने के लिए आ रहे हैं । पर मेरी जिंदगी और मौत के बीच कु क्षण हैं । मुझे न जाने क्यों मौत

लग रहा है । जेलर साहब ने [illegible] अपने साथ चलने को कहा । मैं चुपचाप उनके साथ चलने लगा । पर चलते मैं अपने बच्चों के बारे में सोचने लगा । मुझे न जाने क्यों यह एहसास हो रहा है कि कुछ दिनों के बाद वे दोनों भी इसी तरह फांसी के फंदे की तरफ जा रहे होंगे । मैं एकदम से चीख पड़ता हूं । और जेलर साहब से कहता हूं कि साहब मेरे बच्चों को इस गति से बचाइयेगा । मेरे ऊपर अब काला कपड़ा डाल दिया [illegible] गया है । [illegible] होने का इंतजार कर रहे हैं । पर मेरी आंखों के सामने मेरे दो बच्चे घूम रहे हैं । मुझे ऐसा लग रहा है जैसे मैं नहीं, बल्कि मेरे बच्चे फांसी पर चढ़ रहे हैं । मैं अपन बच्चों को फिर उसी मोड़ पर छोड़ रहा हूं, जहां कुछ वर्ष पहले मेरे पिताजी ने मुझे छोड़ा था । इतने में एक खट की आवाज होती है और मैं चेतना-शून्य हो जाता हूं ।

—पुलिस उपधीक्षक, क्षेत्राधिकारी,
कुण्डा, प्रतापगढ़, उ. प्र.

□

(पृष्ठ ११५ का शेषांश)

प्राप्ति करने का हठ प्रदर्शित किया है उससे कविवर नबी बक्श 'फलक' भी पीछे नहीं हैं–

हो दुखी हौ, दीनबन्धु है तिहारो नाम,
जिन भजे तिन्हें तैसे तुझ तारे हैं ।
पं हमारी नैक न कान दीनी आय,
टेर-टेर बाट हेर हारे हैं ।
भरी है नाथ, भौर में फंसी है नाव,
मझधारे है, न सूझत किनारे हैं ।
निज बान तुम्हें तारने परैगो मोहि,
व्याध और अजामिल से 'फलक' न
न्यारे हैं ।

अभी महाकवि नबी बक्श 'फलक' की काव्यधारा को निकट से देखने सुनने वाले अनेक लोग विद्यमान हैं, फलकजी की रचनाएं संग्रहीत करके हिंदी साहित्य सृजन की वृद्धि के साथ ही राष्ट्रीय एकता की सांस्कृतिक भावनाओं को माला में पिरोने का कार्य भी करेंगे ।

—मानस संगम,
शिवाला, कानपुर-२०८००१

□

सुकरात बहुत कुरूप थे । फिर भी सदा दर्पण पास रखते थे और बार-बार मुंह देखते रहते थे । एक मित्र ने इस पर आश्चर्य व्यक्त किया और कारण पूछा तो उन्होंने कहा–'चिन्ता यह रहता हूं कि इस कुरूपता का प्रतिकार मुझे अधिक अच्छे कामों की सुंदरता से करना चाहिये । इस तथ्य को याद रखने में दर्पण देखने से सहायता मिलती है ।'

इस संदर्भ में एक दूसरी बात सुकरात ने कही, 'जो सुंदर हैं, उन्हें भी इसी प्रकार बार-बार दर्पण देखना चाहिये और सोचना चाहिये कि इस ईश्वर प्रदत्त सौंदर्य में कहीं बुराइयों के कारण दाग-धब्बा न लग जाये ।'

—डा. गोपालप्रसाद 'वंशी'

□

अलौकिक-दिव्य फूलों की घाटी

□ सुधीर

'कभी-कभी सर्दियों की अंधेरी रातों में चुपचाप पड़े अपनी कल्पना में ही मैं सुदूर भारत की उस फूलों की घाटी में फिर-फिर पहुंच जाता हूं । बर्फीली चमकदार चोटियों, भोजपत्र के जंगलों और उजली साफ जलधाराओं के फूल बिछे चरागाह और फिर मैं अनुभव करता हूं ताजी हवा के झोंकों का और तारों भरे आसमान में गूंजती हुई ग्लेशियर की स्फीत आवाज का . . .'

ये शब्द हैं लंदनवासी फ्रेंक स्मि जिसने विश्वविख्यात 'फूलों की घा सर्वप्रथम खोज कर सभ्य संसार के उसे प्रस्तुत किया । फ्रेंक स्मिथ सन १ में जब कामेत शिखर (२५,४४१) आरोहण विजय के बाद म्यूंडार के १६,६८८ फीट ऊंचाई वाले दर्रे को करते हुए गंधमादन शिखर शृंख नीचे की ओर उतर रहे थे कि, तभी पदयात्रा में उनके सामने एक नयनाभि विस्तृत पाद प्रदेश एवं मनमोहक से आच्छादित सुवासित घाटी आ जिसके अपार सम्मोहन में अवक्ष डूबते हुए उनके मुंह से अचानक बोल फूट पड़े–'दुनिया को उनकी मुबारक, मुझे मेरी एकांतिक यह चिरशांति ।'

फूलों से भरी यह वैचित्र्यपूर्ण उत्तर प्रदेश के गढ़वाल मंडल के चमोली में अवस्थित है । 'स्कंदपु के 'केदार खंड' में फूलों की घाटी 'नंदन कानन' भी कहा गया है। यह सागर तल से लगभग १२८० फु ऊंचाई पर स्थित है। इस घाटी की लिक स्थिति उत्तर में ३०·७ अक्षांश

७९·७ देशांतर उत्तर में है । देवताओं के नास क्रीड़ा-भू कहे जाने वाली यह फूलों घाटी, लगभग साढ़े तीन किलोमीटर ड़ी और दस किलोमीटर लंबाई में पसरी ई है।

लिदास का जन्म स्थान

गंधोद्यान कहे जाने वाली फूलों की टी चारों ओर आकाश चुंबित शिखर ृंखलाओं से घिरी हुई है । घाटी के सामने तवर्ण शिखर, उत्तर दिशा में कामेत खर (२५,४४९), पूर्व में गौरी और श्चिम दिशा में नीलगिरी (२१,४८६) तथा दक्षिण में यह घाटी बद्रीनारायण और गंधमादन शिखरों से घिरी है । महाकवि कालिदास के जन्म स्थान के संदर्भ विभिन्न मत हैं। कुछ प्रमाणों के आधार र उन्हें फूलों की घाटी में जन्मा माना ता है। क्योंकि उनकी रचनाओं में बहुधा स प्रदेश, गंधमादन पर्वत, अलकापुरी, ंकिनी नदी, सुरभि कंदरा, विविध ऋतु ौंदर्य, गौरीकुंड, क्रीड़ा शैल और फूलों घाटी का वर्णन आया । यथा–'मेघदूत' १ के इस श्लोक के अनुसार :–

ाद्रेरुपतटमतिक्रम्य तांस्तान्विशेषाम्
द्वारं भृगुपतियशोवर्त्म यत्क्रौञ्चरन्ध्रम्।
दीचीं दिशमनुसरेस्तिर्यगायामशोभी
: पादो वलिनियमनाभ्युतस्येव
विष्णोः।

घाटी के मध्य बहती हुई पुष्पावती नदी नोधा ताल में मिलती है । घाटी के इस लौकिक सौंदर्य को देखकर फ्रेंक स्मिथ ने अपने घाटी प्रवास के अनुभव 'वांडरिंग्स इन द वैली ऑफ फ्लावर्स' सन १९३२ में लिखकर सभ्य संसार का ध्यान इस ओर आकर्षित किया । इस पुस्तक के छपने से विश्व के सभी वनस्पतिशास्त्रियों, यायावरों और प्रकृति प्रेमी के सोचों में, हठात् बहुत परिवर्तन आ गया ।

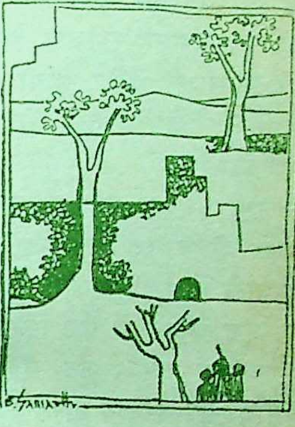
चित्र : भाऊ समर्थ

सौंदर्य मांगता बलिदान !

यायावर फ्रेंक स्मिथ पुनः सन १९३७ में फूलों की घाटी फिर पहुंचा और पुनः उसने दुर्लभ पुष्पों के २१५० नमूने तथा ५०० किस्म के फूलों की जातियों और प्रजातियों को ढूंढ़ निकाला ।

फ्रेंक स्मिथ के 'वैली ऑफ फ्लावर्स' में वर्णित रोचक, रोमांचक और लोमहर्षक वृतान्त से आप्त प्रभावित हो, तत्कालीन समय में इंग्लैंड की प्रख्यात वनस्पति विज्ञान से सम्बंधित संस्था 'न्यू बोटेनिकल गार्डेन' में कार्यरत कुमारी मार्गरेट लेग

घाटी के अध्ययन एवं फूलों की जाति-प्रजातियों के संकलन-परीक्षण हेतु सन् १९३९ में फूलों की घाटी पहुंची । वहां कुमारी मार्गरेट ने अलब्ध फूलों और उसके बीजों को ढूंढा ।

४ जुलाई १९३९ का दुर्भाग्यशाली दिन, उनके जीवन का अंतिम क्षण था । जब वह घाटी में फूलों के बीज ढूंढ़ती हुई अचानक एक चट्टान से पैर फिसलने के कारण लगभग १५० फुट नीचे गिर पड़ी । सौंदर्य का संकलन प्राणों का बलिदान मांगता है । आज भी फूलों की अगाध कोख के बीच कुमारी मार्गरेट लेग की चिर स्मृति में, एक स्थायी स्मारक अभी भी जीवंत है ।

स्वर्गीक पुष्पों का गंधोद्यान

घाटी में लगभग ३०० किस्म के बनफूल खिलते हैं । सुपरिचित लेखक गिरराज शाह ने 'फूलों की घाटी' पुस्तक में लिखा है कि–'जून की प्रथम वर्षा फुहार के साथ शनै-शनै: सागर तट से १२००० फीट की ऊंचाई पर धरती ज्यों-ज्यों हिम अवगुंठन खोलती है, त्यों-त्यों प्रकृति धरती की सुंदर वेणी को भांति-भांति के सतरंगी पुष्पों से सजाना प्रारंभ कर देती है । ऐसी स्थिति में हर पखवाड़े वेणी के फूल और उसका रंग-रूप बदल जाता है । एक ही किस्म के फूल दस-पंद्रह दिन इठलाते हैं और फिर टहनियों की गोद में सो जाते हैं ।' संभवत: तभी कविवर पंतजी ने लिखा होगा–

'यह फूलों का देश !
यहां निरंतर जीवन शोभा
सजती नव-नव वेश !'

ब्रह्मकमल–फूलों की घाटी के परिवार का एक उल्लेखनीय ना इसके अतिरिक्त अन्य दुर्लभ पु विष्णुकमल, फेनकमल, एवं हि आदि । 'फूलों की घाटी' में ब्रह्मक बारे में लिखा गया है–'ब्रह्म ११००० फीट से १५००० फुट की ऊं पर उगता है । यह हल्के सफेद रं पीली परछाई लिये होता है । इसकी हरी नयन सरीखी लंबी पंखुड़ियां कमल के सदृश सूर्योदय-सूर्यास्त के साथ खिलती एवं बन्द होती है।'

ब्रह्मकमल की पौराणिक एवं महत्ता भी है । 'महाभारत' के व में इसका विस्तृत एवं कथात्मक व आया है । ब्रह्मकमल का आज भी महात्म्य है कि यमुनोत्री, गंगोत्री, के नाथ एवं बद्रीनाथ देवालय में इष्ट को ब्रह्मकमल की माला ही चढ़ाई है । सुप्रसिद्ध कवयित्री महादेवी फूलों की घाटी का विश्लेषण इन व्यक्त करती हैं अपने संस्मरणों में 'हिमालय के उस नंदन वन को जो अनुभूति होती है उसे व्यक्त क लिए शब्द पर्याप्त नहीं हैं । के में यह घाटी मानो हिमालय की क कविता है । ब्रह्मकमल, हिमक लेकर विविध रस-रूप रंग-गंध के अनाम फूल जो वहां खिलते-मुर्झा

है, उनसे प्राप्त अनुभूति भी अनामिका ही हीं जा सकती है।'

र्लभ जीवनोपयोगी जड़ी-बूटियां

प्राकृतिक एवं अजस्र सागर होने साथ-साथ फूलों के सौंदर्य की टी दुर्लभ एवं दिव्य जड़ी-बूटियों अनुपम उद्यान भी है। इस घाटी गोद में असंख्य–जीवनोपयोगी वनी बूटियां उपलब्ध होती हैं। पुराण एवं धार्मिक साहित्य में, पायी जाने वाली जड़ी-बूटियों का लेख मिलता है। एलौपैथिक, यूनानी आयुर्वेदिक दवायें बनाने में जो प्रख्यात यहां उपलब्ध होती है, उनमें प्रमुख -एकोनाइटेम फेरामन, कालमेघ, बेलो-ना एल., केरम-कारमी, कुसुम, कुथूया-चा, डिजिटेलिस, मणिमण्डूक, स्याह-रा, जटामासी, चिरायिता, सुअरशिया, ला, गिलोय, बज्रदंती, भूतकेशी, नाम, बिलकंडार, बाहमी, सालम-मा, शंखपुष्पी, रत्नज्योति और पंकज न आदि। जीवनदायिनी इन जड़ी-यों में कोढ़, हैजा, गठिया, बुखार, की बीमारियां, वायु विकार, कृमि-क, घाव का मरहम, दमा निवारक, की रोकथाम, हृदय रोग निवारक, रीरिक शिथिलता दूर करने, घाव पकने दूर करने, सूजन एवं मूत्र रोगों की दवाइयां आदि बनायी जाती हैं। मानव जीवन की आरोग्यता और उसे जीवन प्रदान करने में, फूलों की घाटी में उपलब्ध होने वाली इन अलौकिक जड़ी-बूटियों का अपार भंडार निहित है। जिसका अपना एक सम्मोहनी सौंदर्य है साथ ही, दिव्य गंध की भरपूर उपयोगिता भी।

चित्र : दिनेश सिसौदिया

उपरोक्त के अलावा फूलों की घाटी में पायी जाने वाली जड़ी-बूटियों से मिर्गी, उन्माद नाशक, मेधावर्धक, स्मृति-वर्धक, दौर्बल्य, अनिद्रा, गठिया, कोढ़, रक्त प्रदूषण, नेत्ररोग, दंतरोग, कंठरोग, चर्मरोग और पीलिया आदि की अचूक, जड़ी बूटियां भी यहां बहुतायत से मिलती हैं। जिसका कि आज भी एक व्यापारिक महत्व है। घाटी में अभी कई ऐसी जड़ी-बूटियां हैं, जिन पर बृहद स्तर पर वैज्ञानिक अनुसंधान हो रहा है।

नंदन कानन के मनोहर खग-मृग

अलौकिक फूलों एवं जड़ी-बूटियों के

अलावा फूलों की घाटी दुर्लभ पशु-पक्षियों के प्रकारों से भी समृद्ध है। हिमालय कीं तलहटी में स्थित होने के कारण यहां अनेक प्रकार के खग-मृग पाये जाते हैं। जिसका वर्णन 'ऋग्वेद' (१०-९४-१२) में इस प्रकार हुआ है–'अर्जुयासो हरि व्वाषो हरिव्रव आद्यां रवेण पृथिवी मश्रुभुवः' अर्थात् ये अजर, अमर और हरीतिमामय वृक्षों से परिपूर्ण है और पक्षियों के मुखरित मधुर कलरव से आकाश और पृथिवी गुंजायमान करते रहते हैं।

इस घाटी के प्रसिद्ध पशुओं में कस्तूरी-मृग विशेष है। इसके पूरे शरीर में बड़ी चमक होती है।

फूलों की घाटी की प्राकृतिक शोभा के साथ निमग्न पक्षियों की क्रीड़ाएं यायावर

को बरबस ही अपनी ओर आकर्षि
लेती हैं। घाटी में पाये जाने वाले
पक्षीं हैं–मनोंवर, विलम, मेड़,
मोनाल, कोंकलास, जंगूरिया, पहाड़ी
पहाड़ी गिद्ध और चकोर
मोनाल–पहाड़ का मोर कहा जाता
इसका सर चमकीला ललछौंहे तथा
रंग की आभा लिये होता है। इसके
बैंगनी रंग के तथा पीठ और दुम
की छाया लिये होती है। इसी तरह
की घाटी का एक सुंदर पक्षी है–मनो
इसके शरीर का ऊपरी भाग
की धारियों से आच्छादित रहता है।
भाग हरे और दुम भूरी तथा सफेद
से भरी हुई होती है। ऐसा ही एक
मनमोहक पक्षी है बर्फ का तीतर
अनेक पशु-पक्षियों से भरी-पूरी यह
अपनी सुंदरता के कारण अक्सर
तीत रही है।

फूलों की घाटी के आमन्त्रण को
तन मानते हुए प्रकृतिप्रेमी लेखक
शाह ने भी लिखा है–'हिमालय
नीरव, शांत और सुरम्य प्रकृति
में पहुंचकर पथिक अचानक
हो जाता है। उसका मन ठगा-
जाता है। उसे ऐसा लगता है कि
पुष्प इठला-इठलाकर पथिकों का
कर रहे हैं। प्रकृति का यह मुक्त
रूप मनुष्य को स्थूल तत्वों से ऊपर
देता है। तब वह मूल प्रकृति से
लगाकर महातत्व में प्रवेश कर

कुल मिलाकर, फूलों की घाटी संपूर्ण स्वर्ग की पीठिका तो नहीं पर उसकी छाया कही जा सकती है। क्योंकि, वह असाधारण भी है और अलौकिक सौंदर्यवान भी।

अलौकिक फूलों की घाटी के सर्वप्रथम अन्वेषक फ्रैंक स्मिथ इसके अव्यक्त सौंदर्य के आकर्षण से खिचकर, दूसरी बार सन १९३७ में हजारों मील दूर से फिर इस घाटी में पहुंचे। इस प्रयास में पुनः उन्होंने लगभग २१५० फूलों की किस्में तथा ५०० किस्मों की जातियां और प्रजातियां खोज निकालीं।

फूलों की घाटी बनाम पर्यावरण

आयुर्वेदिक और रासायनिक बीज-जड़ी के अलावा फूलों की घाटी में पाये जाने वाले नयनाभिराम पुष्प सुंदर, बागवानी के लिए भी बड़े उपयोगी रहे हैं। जैसे– प्रिमुला, नोमाकोटिस, फिटिलिमा, ब्योरो, रिस, जैनिशयाना, सोसुरिवा, स्पर-स, और एलियम आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। बागवानी के ये दुर्लभ पुष्प एक निर्धारित समय पर बीज का निर्माण करते हैं एवं अपने प्रकृतिक्रम अनुसार स्वयं उग जाते हैं।

दिव्य प्राकृतिक सुषमा, दुर्लभ जड़ी-बूटियों का आगार, सुवासित गंधोद्यान, मनोहर पशु-पक्षियों के क्रीड़ा स्थल और

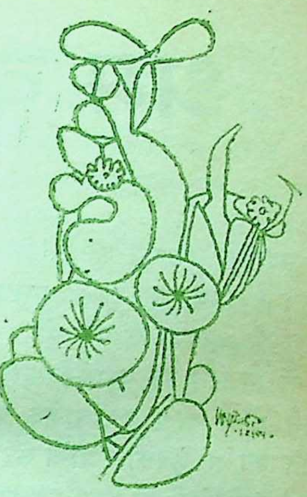

चित्र : आर. डी. पुरोहित

महाकवि कालिदास के जन्म स्थान (संभावित) के अलावा फूलों की घाटी, अपने गोद में उगने वाले पौधों और फूलों के कारण पर्यावरण शुद्धि का भी प्रमुख कारण है। फूलों की घाटी की ये वनस्पतियां आदिकाल से ही वायु मंडल को शुद्ध करने और मानव जीवन की संरक्षा-संतुलन के लिए आज भी जीवंत हैं।

सभ्यता के शोषणी क्रूर पंजे से 'फूलों की घाटी' अभी तक बची हुई है। अन्यथा, केदारखंड के मध्य में स्थित कामेत शिखर की तलहटी में पसरी फूलों की घाटी कहीं बंजर में न बदल जाये।

–परमेश्वरी भवन, अल्मोड़ा उ. प्र.

□

दिन भर आप लोगों को उपदेश देकर व्यर्थ में अपनी सांस और समय बर्बाद करते हैं, क्योंकि आजकल कोई आपकी बात सुनने को तैयार नहीं, जब तक कि आप कोई डाक्टर अथवा वकील न हों, और उस सलाह की फीस लें।

– राबर्ट बेन्सन

□

श्रम की महत्ता

□ गौतमकुमार

घटना सदाकत आश्रम की है, जिसकी स्थापना स्वयं डा. राजेंद्र प्रसाद ने देश-सेवा की भावना से की थी । इस आश्रम में बालकों की पढ़ाई-लिखाई का भी काम होता था । डा. राजेंद्र प्रसाद राष्ट्रपति पद से अवकाश प्राप्त करने के बाद यहाँ आये तो वे भी प्रायः इन बालकों की कक्षा लेते और उन्हें नैतिकता के कुछ उपदेश देते । एक दिन वे कक्षा में बतला रहे थे–'जो. व्यक्ति परिश्रम करता है, उसका कमाई में पहला अधिकार होना चाहिये । वृक्ष लगाने वाले को अपनी पसंद के अनुसार फल चुनकर खाने का सर्वप्रथम अधिकार है । इसमें जो व्यक्ति विपरीत आचरण करता है तथा श्रम करने वाले को उसका अधिकार नहीं देता वह ढोंगी, अन्यायी और शोषक है ।'

सभी बालक दत्तचित्त होकर बड़ी श्रद्धा और विश्वास के साथ उपदेश सुन रहे थे । एक बालक आश्रम में नया-नया ही आया था। उसे राजेंद्र बाबू का उपदेश दिखावे-सा लगा । उन्हें भी उसने अन्य साधारण व्यक्तियों के समान समझा जो कहते कुछ और हैं और करते कुछ और हैं । इसलिये मन ही मन उसने निर्णय लिया कि वह अपने गुरु डा. राजेंद्र प्रसाद की अवश्य परीक्षा लेगा और यह देखेगा वे वास्तव में श्रम करने वाले व्यक्ति महत्व देते हैं या नहीं।

डा. राजेंद्र प्रसाद प्रातःकाल स्नान की तैयारी करते तो मुंह धोने लिए कोई छात्र उनको दातून तोड़ ला देता । यह एक सामान्य परंप हो गयी थी । उक्त घटना के दूसरे दि उस बालक ने दातून लाकर देने की जि दारी अपने ऊपर ले ली। वह दो दा लेकर राजेंद्र बाबू के पास पहुंचा- टेढ़ी-मेढ़ी और दूसरी सीधी और सुथरी। दो दातून देखकर राजेंद्र बा बालक की ओर उत्सुकता से देखा उसने उत्तर दिया, 'गुरुजी ! यह सुथरी दातून आप ले लें, दूसरी का मैं योग कर लूंगा ।'

राजेंद्र बाबू ने मुस्कुराकर टेढ़ी- दातून उठा ली और बोले, 'परि तुमने किया है । अतः अच्छी दातून तुम्हारा अधिकार है मेरा नहीं।' बाल अच्छी दातून देने की कोशिश की, राजेंद्र बाबू नहीं माने। बालक कुछ देर मौन खड़ा रहा, फिर फफककर रो

परिस्थिति से अनजान राजेंद्र आश्चर्यचकित रह गये । उन्होंने प्र

बालक को पुचकारा और उसके रोने का कारण पूछा, किंतु बालक से कुछ बोला नहीं जा रहा था। काफी देर बाद बालक का रोना बंद हुआ तो वह राजेंद्र बाबू के पैरों पर गिर पड़ा और बोला, 'मुझे क्षमा करें, गुरुदेव। मैंने आज बहुत बड़ा अपराध किया है, जो अपने देवता समान गुरु की परीक्षा ली।'

बालक ने सारी बातें कह सुनायीं। सुनकर राजेंद्र बाबू हंस पड़े। वे बोले, 'इतनी-सी बात में रोना कैसा? परीक्षा ले ली तो इससे क्या हुआ? तुम्हें मेरी बात पर विश्वास तो हुआ। तुम सचमुच ही प्रतिभाशाली हो, जो इतना सब किया।'

—साहा लॉज, विलासी टाउन, वैद्यनाथ,
देवघर-८१४११७

□

झांकियां हिचकॉक की

दिल्ली में आयोजित एक पत्रकार-सम्मेलन में आने से पूर्व, अल्फ्रेड हिचकॉक प्रधान-मंत्री पं. नेहरू से मिलने गये थे। पत्रकार यह जानने को इच्छुक थे कि उन्होंने पं. नेहरू से क्या बात की थी।

चुप्पी।

'बताइये न!'

चुप्पी।

'आप हमें 'सस्पेंस' में क्यों रख रहे हैं?'

मुस्कराकर हिचकॉक ने कहा, 'हम दोनों ने सिर्फ़ गुलाबों के बारे में बात की थी। हम दोनों ही गुलाबों से प्रेम करते हैं।'

०००

'क्या आपको याद है कि एक बार आपने कहा था कि हालीवुड के सब कलाकार जानवर हैं?' एक पत्रकार ने पूछा।

'मैंने ऐसा कभी नहीं कहा था,' हिचकॉक ने कहा।

'हमारे पास वह कटिंग मौजूद है?'

'खबर गलत छपी थी। असल में मैंने कहा था कि उनके साथ जानवरों की तरह सलूक किया जाना चाहिये।'

०००

जब पत्रकारों ने इस बात पर आश्चर्य व्यक्त किया कि हिचकॉक ने पत्रकार सम्मेलन में समय पर आकर, कोई 'सस्पैंस' नहीं रखा, तो हिचकॉक ने उत्तर दिया, 'मैं जीवन में किसी को 'सस्पैंस' में नहीं रखता। फिल्मों की बात अलग है।'

गीत

□

जवाहर इन्दु

सुनते-सुनते बात तुम्हारी
रहा नहीं जाये।
संवेदन की भी सीमा है,
सहा नहीं जाये।

मन था शांत किसी पोखर-सा,
तुमने सिंधु सदृश कह डाला।
चक्रवात, तूफान दे दिये,
लहरों ने सब कुछ मथ डाला।।

ऊपर-नीचे आते-जाते
आघातों को सहते जाते
पर तुमने जो कहा उसे अब,
कहा नहीं जाये।

वट छाया की उपमा देकर,
उसकी ही जड़ काट रहे हो।
जो गहराई तुमने दी है
निज हाथों से पाट रहे हो।।

जितना पहुंचा गहराई में,
उतना ऊपर ऊंचाई में
अब त्रिशंकु की स्थितियों में,
हुआ नहीं जाये।

आत्मबोध से रहा अपरिचित
सहज मौन-व्रत सिखलाया है।
मैं तो हूं अज्ञान, यहां तक
ज्ञान तुम्हारा ले आया है।।

हां में हां का मेरा कहना
धारा के संग हर पल बहना
डर है यह सैलाब तुम्हारा,
बहा नहीं जाये।

—२७२, दूरभाष
रायबरेली-२२९०१०,

□

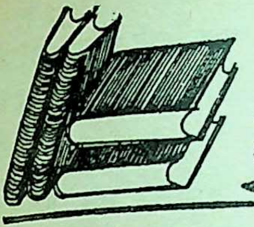

ग्रंथलोक

गोस्वामी तुलसीदास और मैं * लेखक : डा. सैय्यद महफूज हसन रिजवी 'पुंडरीक'; प्रकाशक : मानस संगम, शिवाला रोड, कानपुर; मूल्य : २५ रुपये ।

डा. सैयद महफूज हसन रिजवी 'पुंडरीक' की कृति 'गोस्वामी तुलसीदास और मैं' जब मेरे हाथों आयी तो पहले तो मुझे उनका 'मैं' खटका, लेकिन जब पूरी किताब पढ़ गया, तो समझ गया कि लेखक ने अपने 'मैं' को क्यों रखा है । इस 'मैं' में लेखक का अहंकार नहीं है, अकड़ नहीं है, हो भी नहीं सकती क्योंकि पुंडरीक पर रामकथा का आशीष-जल पड़ गया है और वे राम रस से सिक्त हैं ।

लेखक ने यह तो बताया ही है कि एक समय वह तुलसी को लेकर निर्णयानिर्णय के दंगल मैदान में खड़ा किंकर्त्तव्यविमूढ़-सा था, लेकिन आगे चलकर उसकी जो स्थिति हुई, उसका खुलासा इन पंक्तियों में है—'आचरण के वन-पथ में भगवान राम के एक-एक पग पर मुझे शत-शत बलिदान होने का मन करता है ।' पुंडरीक अपने को बालकांड से ही राम के साथ-साथ चलता महसूस करते हैं और इसका कारण बताते हैं—'हो सकता है अवधवासी होने के नाते ही मैं ऐसा अनुभव कर रहा था और यह सहज स्वाभाविक है ।'

वे यह भी बताते हैं कि उन्होंने 'गोसाई चरित मानस' नाम से एक काव्य लिखा है । वे इसकी कुछ पंक्तियां भी उद्धृत करते हैं, जैसे—

निर्गुण राम सगुण भये कैसे
बहिर पीर बन आंसुअ जैसे

वे इसकी व्याख्या इस प्रकार करते हैं—'मन की पीड़ा निर्गुण है, उसे कोई नहीं देख सकता . . . किंतु वही पीड़ा जब आंसू बन कर बाहर आ जाती है तो सगुण हो जाती है और इसका अनुभव हर देखने वाला कर सकता है । अतः निर्गुण एक अनुभूति है और सगुण उसकी अभिव्यक्ति ।' इससे स्पष्ट है कि पुंडरीक तुलसी का सम्यक् अवगाहन कर सके हैं और वैचारिकता और रचनात्मक दोनों स्तरों पर उन्होंने अपने को खोलने और रखने का प्रयास किया है ।

तुलसी के संबंध में 'ढोल गंवार शूद्र पशु नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी' को लेकर अक्सर आपत्ति की जाती है ।

लेखक ने इसका निरसन मौलिक ढंग से किया है। वे बताते हैं–'किसी भाषा द्वारा व्यवहृत शब्द का अर्थ यदि जानना चाहें तो उसके बोली रूप के पास जाना पड़ेगा। विशेष रूप से यदि क्षेत्रीय भाषा के साहित्य का शब्द हो तो उसके बोली रूप से ही उक्त शब्द के अर्थ मांगने पड़ेंगे।' इसी तर्क के आधार पर वे बताते हैं कि 'अवधी क्षेत्र के अंतर्गत अयोध्या, फैजाबाद, सुल्तानपुर, वाराणसी और लखनऊ जनपदों में 'ताड़ना' शब्द द्वारा समझना, सतर्कता (निगरानी) रखना आदि अर्थ लगाये जाते हैं।' इसलिये वे सुझाते हैं कि ताड़ना का संस्कृत वाला अर्थ नहीं लिया जाना चाहिये। यह शंका समाधान, मेरे जानते, अब तक का सबसे विश्वस्त शंका समाधान कहा माना जा सकता है।

लेखक ने मंथरा के कथन 'कोउ नृप होइ हमहिं का हानी' में 'हमहिं' की व्याख्या इस प्रकार की है–'मेरी समझ में गोस्वामीजी ने ऐसा इसलिये किया कि उन्हें मंथरा को अशिक्षित नारी के रूप में प्रदर्शित करना था। व्याकरण का ध्यान शिक्षित रखता है, मंथरा जैसे निरक्षर एक वचन बहुवचन का ध्यान नहीं रखते।' यहां मसला व्याकरण के एक वचन और बहुवचन का नहीं है। मंथरा साभिप्राय कूटनीति के रूप में 'हमहिं' का प्रयोग करती है। वह अपने को सबसे अलिप्त रखने का ढोंग कर रही है। इसलिये 'हमहिं' का उपयोग हुआ है। मुझे तो ऐसा ही लगता है।

विश्वास है पुंडरीक ऐसे अध्यवसाय में लगे रहेंगे और का दूसरा खंड भी देखने को मि

–डॉ. श्याम

०००

***कल्याणी** * कवि : मोतीलाल मिश्र शक : इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, कृष्णनगर, ११००५१; पृष्ठ संख्या : ७१; २५ रुपये।**

भगवान श्रीकृष्ण का पावन विविध रूपों में हमेशा से कवि की प्रेरणा एवं आकर्षण का केंद्र सूर की अंधी आंखों में वह वात्स प्रेम का अगाध सागर बनकर तो मीरा के हृदय में पवित्र प्रेम बनकर उमड़ा है। कालांतर में कवियों ने कृष्ण काव्य की इस परा को आगे बढ़ाने में अप्रतिम किया है। इस प्रकार हर युग के कृष्ण चरित्र को युगानुरूप अभि है। मोतीलाल मिश्र के द्वारा कृष्ण चरित्र की कल्पना में कृष्ण के मंगलकारी रूप को उजागर सफल प्रयत्न दर्शनीय है। इसी कथा काव्य को 'कल्याणी' की गयी है।

'कल्याणी' में श्रीकृष्ण की लोक का उद्गम मां यशोदा के अगाध देवकी के निश्छल स्नेह और पवित्र प्रेम से होता है। इन्हीं से एवं प्रेरित होकर कृष्ण कर्म क्षेत्र

न्मुख होते हैं। कृष्ण की सक्रिय कर्मठता के परिणामस्वरूप ही जनमानस में वह र्तव्यनिष्ठा एवं आत्मविश्वास जन्मता है, जो उन्हें जीवन-संग्राम में जूझने का हस प्रदान करता है, संघर्ष करने की र्जा देता है।

कृष्ण के जन्म का मूल उद्देश्य ही लोक-गल है। इस प्रयोजन की सिद्धि के प्रति कृष्ण निरंतर सजग बने रहते हैं। यह कार्य द्यपि आसान नहीं है, फिर भी प्रयत्न किये बिना लक्ष्य की सिद्धि असंभव है। ानव के रूप में जन्म लेना तभी चरितार्थ हा जायेगा, जब संघर्ष से युक्त इस ंसार को स्वर्गिक आनंद से भरने की शा में सक्रिय कदम बढ़ाया जाये।

'शक्ति, संगठन, साहस से ही
कुछ भी संभव हो सकता है,
पीड़ित, पतित, दलित धरती का,
लुषित रूप बदल सकता है। (पृ. ३५)

'कल्याणी' का कवि मानव धर्म की ष्ठापना का पक्षधर है। 'गीता' के ष्काम कर्मयोग में कवि की अटूट आस्था , क्योंकि कर्म ही मानव को सत्य तक चा सकता है –

'धर्म का यह मार्ग अर्जुन
सत्य तक पहुंचायेगा।
कर्म से जो भी जुड़ेगा
लक्ष्य को वह पायेगा। (पृ. ४२)

ल्याणी' कथा-काव्य का भाव-पक्ष तना उदात्त है, उसका कलापक्ष भी ना ही सशक्त है। इसकी भाषा में अवधी, खड़ी बोली और ब्रज के साथ-साथ उर्दू फारसी के भी शब्द हैं। ब्रज और खड़ी बोली के सम्मिलित प्रयोग का एक उदाहरण देखिये –

'ग्वाल बाल गोपिन सौं बोले
मैं संदेश कृष्ण का लाया।' (पृ. २६)
रूप निहारि-निहारि कहै
यह रूप लग्यो है बड़ो सुखकारी।'
(पृ. ५२)

भाषा वैविध्य की ही भांति इस कृति में छंदों की भी बहुलता है। इसमें कहीं-कहीं सोरठा, दोहा और चौपाई जैसे तुकांत मात्रिक छंदों का प्रयोग है तो अतुकांत मुक्त छंदों का भी।

संक्षेप में 'कल्याणी' कथा काव्य मानव कल्याण की भावना से प्रेरित एक ऐसी कृति है, जिसमें सत् और असत् दोनों पक्षों का चित्रण तो है, किंतु कवि का आग्रह असत्य पर सत्य की, अन्याय पर न्याय की, पाप पर पुण्य की विजय कराना रहा है। इस उद्देश्य में कवि को उल्लेखनीय सफलता मिली है। **–डा. शिवशंकर पांडेय**

०००

***बिखरे दृश्य (काव्य संकलन) * रचयिता : रमेशचन्द्र अवस्थी; प्रकाशक : मंगलाचरण, ४४ डी. कैंट रोड, हुसेनगंज, लखनऊ-१; मूल्य : सोलह रुपये।**

प्रस्तुत काव्य-संकलन में ३४ रचनाएं संकलित हैं। कुछ रचनाएं यदि आधुनिक संदर्भों से जुड़ी हुई हैं, तो कुछ आध्यात्मिक ऊर्ध्वचेतनापरक हैं। तुकांत, अतुकांत

अनूदित एवं मौलिक सभी प्रकार की रचनाओं के तेवर नयी कविता के निकट हैं।

श्री अवस्थी ने अपने को अनागत काव्यविधा का रचनाकार पोषक घोषित किया है। अपने कवि-कर्म की व्याख्या करते हुए आपने लिखा है कि 'युग-संधि की इस तमसाछन्न वेला में सांस्कृतिक सामाजिक राजनैतिक, आर्थिक एवं नैतिक अवमूल्यन से सतत जागरूक संघर्ष ही अनागत कवि-कर्म है . . .'

उपर्युक्त अपने विश्वास एवं सिद्धांत के अनुकूल ही कवि की अनेक भाव-भंगिमाएं इस काव्य संकलन में शब्द रूप पा सकी हैं। 'बिखरे दृश्य' शीर्षक रचना इस संकलन की प्रथम कविता है।

और अब पृथ्वी पर गोधूलि की धुंध,
अंधेरा होते ही दीप जल उठता है
लोग अपने घरों के अंदर घुस जाते हैं
और वह दुर्बल मानव
अब अपने बिस्तर पर दुबक जाता है
और सारा नगर तंद्रालस सो जाता है
ओठों पर मौत और आंखों में गीत लिये
घड़ियां ढलती जाती हैं
तारों के आगमन के साथ-साथ
रात्रि के आकाश तले सड़कों पर
गीत बिखर जाते हैं।

देश के स्वर्णिम भविष्य के लिए कवि का आग्रह है कि वह भौतिक समृद्धि से आगे बढ़कर प्राचीन वैदिक आध्यात्मिक समृद्धि को प्राप्त करने की कामना करे।

इस संदर्भ में 'मेरी आयु' शीर्षक कविता की निम्न पंक्तियां द्रष्टव्य हैं:

आदि चिरंतन शक्ति
कल्पना के पंखों पर उड़
धरे वासना का शरीर
अब भटक रही है-
और चकित सी भूली सी
तुम पूछ रही हो
साँसों की क्रीड़ा वेला में
विस्मृत के इस नवावरण
मुझसे मेरी आयु-
वासना की असीम अभिलाषा,
काल की सीमित परिभाषा।

संतोष का विषय है कि इस सं
वेदांतिक चिंतन की दुरूहता का
प्रेषणीयता तथा रसानुभूति के
कहीं भी अवरोध उत्पन्न करते
में नहीं है। यह कवि-कर्म की स
परिचायक है। अंत में यह संकेत
अति आवश्यक है कि मुद्रण संबंधी
अक्षम्य त्रुटियों के कारण इस काव्य
की उपयोगिता को अतीव क्षति
है। द्वितीय संस्करण में कवि को इस
धानी से बचने का प्रयास करना

–डॉ. दुर्गाशंक

०००

***अपने पराये* लेखक : डा.**
सिंहल, प्रकाशक : राजपाल ए
दिल्ली; मूल्य : ३५ रुपये।

'अपने पराये' उपन्यास की
केन्द्र-बिंदु एक पढ़ी-लिखी
वंदिता है, जो समाज में फैली कु

था की शिकार बनती है। कथाकार ने हिता के माध्यम से सुशिक्षिता युवती पर हेज के कारण मिलने वाली प्रताड़नाओं के आकलन का प्रयास किया है।

'अपने पराये' में दहेज-प्रथा के मुख्य ंग के संग-संग शिक्षा, राजनीति, आज के समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार आदि पर भी यथास्थान टिप्पणियां की हैं, जो प्रबुद्ध ठकों को पठनीय प्रतीत होंगी। कथा-कार चूंकि विश्वविद्यालीय जीवन से जुड़ा हुआ है अतः उच्च शिक्षा पर किये गये नके 'रिमार्क' विश्वसनीय ही माने जायेंगे। ध्यमवर्गीय हिंदू परिवार के अभावों और कांक्षाओं का चित्रांकन करने में भी लेखक को अच्छी सफलता मिली है। कुछ प्रसंग नावश्यक हैं। परंतु कुल मिलाकर उपन्यास रोचक ही प्रतीत होता है।

○○○

हला सूरज* लेखक : डा. भगवतीशरण श्र; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज़, ल्ली; मूल्य : ६० रुपये।

डा. भगवतीशरण मिश्र के यूं तो पांच उपन्यास 'पहला सूरज' से पहले कर चर्चित हो चुके हैं, परंतु यह कृति क के उपन्यासों से अधिक महत्वपूर्ण । डा. मिश्र का सबसे पहला ऐतिहासिक न्यास होने पर भी यह इतिहास का इतनी पुष्ट प्रामाणिकता से प्रस्तुत ता है और इतिहास से प्राप्त उन यों का साहित्यिक स्तर पर इस्तेमाल ने सार्थक ढंग से करता है कि उनका प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास मानने का मन होता ही नहीं। इस उपन्यास के सृजन में डा. भगवतीशरण मिश्र ने शिवाजी के जीवन से सबंधित पुरातन ऐतिहासिक साक्ष्यों के संग अधुना ऐतिहासिक खोजों का सहारा भी लिया है और फिर उन सबको उपन्यास के रम्य रचना-विधान में रचा-बसा दिया है।

आज के नीतिगत धर्मनिरपेक्ष युग में शिवाजी के चरित्र को हिंदुत्व का संरक्षक स्वरूप मानकर भी उन्हें 'सेक्यूलर' साबित करके सम्मानित किया जा सकता है। डा. मिश्र ने शिवाजी के स्वरूप-सृजन में सतर्कता पूर्वक जिस छवि को अपने इस उपन्यास में अंकित किया है, वह स्वतंत्रता को लाने वाले उस सूरज की ही है, जिसने सुप्त भारतीयों को जगाने का आवाहन किया था।

इस उपन्यास में शिवाजी की शौर्य गाथा को ही नहीं, वरन उनके बहाने उस समय के भारत की राजनीतिक अवस्था को भी प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। शिवाजी जैसे महानतम व्यक्ति के मन की गहराइयों में झांककर उनकी कमजोरियों को पकड़ पाना भी जोखिम भरा था। डा. मिश्र ने यह जोखिम उठाने में कामयाबी पायी। शिवाजी के प्रखर तेजस्वी स्वरूप का यह अस्तोन्गामी करुणांत द्रवित भी करता है और कड़ुवी सचाई से साक्षात्कार भी कराता है, जिससे कुछ सीखा भी जा सकता है। **—प्रो. विश्वंभर 'अरुण'**

९८८

बालकथा

ऐसी वफादार थी लक्ष्मी कुट्टी

☐ बाल मु

लक्ष्मी कुट्टी बड़ी वफादार थी। वह कोई लड़की नहीं थी, वरन सर्कस की एक हथिनी थी। उसकी वफादारी के अनेक किस्से सर्कस प्रेमी कहते-सुनते रहते हैं।

लक्ष्मी कुट्टी (हथिनी) की वफादारी बतलाती है कि पशुओं में भी कितनी आत्मीयता, अपने मालिक के प्रति सहज प्रेम और मित्र के प्रति समर्पण की भा होती है।

किस्सा उन दिनों का है जब कि सर्कस देश के बहुत बड़े नामी सर्कसों गिना जाता था। एक दिन उसके लक के. दामोदरन अखबार पढ़ रहे तभी उनकी निगाह एक विज्ञापन पड़ी। उसमें छपा था कि नीलांबर में जंगली हथिनी बिकाऊ है। उन्हें हथिनी की जरूरत सर्कस के लिए वे अपने एक सहयोगी को लेकर नीलां गये और विज्ञापनदाता से मिले। उन्हें वह जंगली हथिनी बतला दी।

पहली नजर में ही इन दोनों को ह से प्यार हो गया। क्योंकि उसकी कान, देह आदि सभी आकर्षक थे। तय करके उसे खरीद लिया। एक ट्र उसे बिठाया गया और वह जंगल की मस्त हथिनी सर्कस के खेमे में कैद हो

वहां के नये वातावरण में उसने ही अपने आप को रमा लिया। दरन ने ही यहां उसका नाम लक्ष्मी

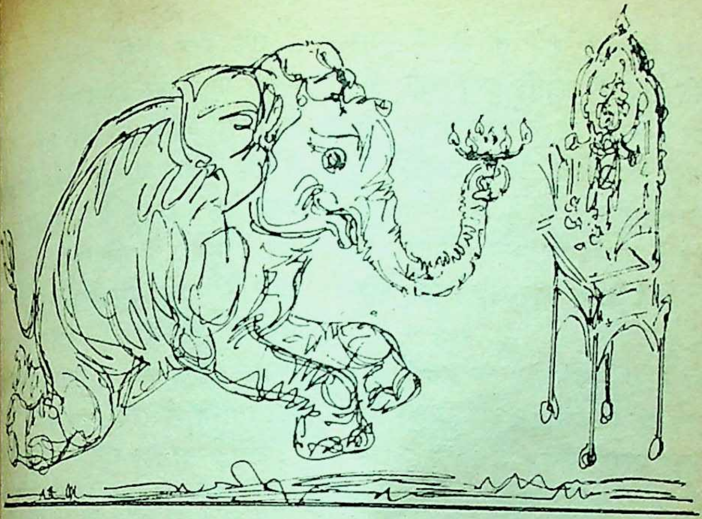

। देखते ही देखते वह सबसे हिलमिल । उसे तो जंजीर से बांधने तक की नहीं रह गयी थी । काम, धाम और की भाषा, इशारे आदि भी वह जल्दी ही सीख गयी । उसकी इस ता से सभी आश्चर्य करते थे । वह हर पशु के पास, कर्मचारी के घूमती टहलती अपने ढंग से प्रसन्नता करती । हर शाम को जब सर्कस में पशुपतिनाथ की पूजा होती तो उसमें सम्मिलित होने आ जाती और झुकाकर प्रणाम करती । प्रसाद लेकर और प्रसन्न मुद्रा में फिर सबके घूमने-फिरने में लग जाया करती थी । में और भी हाथी थे, पर उनमें प्रतिभा नहीं थी । लक्ष्मी कुट्टी वालों ने जो भी सिखाया वह सीख गयी । उन्होंने सर्कस में आने वाले मुख्य अतिथि को उससे हार पहनवाने का कार्य लेना शुरू किया । वह अत्यंत प्रसन्न मुद्रा में, किंतु बड़े ही ठसके से सूंड में माला उठाकर लाती और अतिथि को पहनाती थी ।

दामोदरन को भी वह बहुत चाहती थी । एक बार सर्कस के दरवाजे पर भारी भीड़ जमा हो गयी । लोग सारी व्यवस्था भंग करके अंदर घुसने लगे । दामोदरन चिल्ला-चिल्लाकर लोगों को शांत कर रहे थे । पर भीड़ थी कि काबू में आ ही नहीं रही थी । तभी लक्ष्मी कुट्टी आ गयी और दीवार की तरह खड़ी हो गयी । उसकी यह तरकीब काम कर गयी । थोड़ी ही देर में भीड़ काबू में आ गयी । सारी व्यवस्था फिर से ठीक कर ली गयी ।

इसी प्रकार एक बार सर्कस में आये कुछ दर्शकों में झगड़ा हो गया । मैनेजर

दामोदरन समझाने गये तो वे भी उलझ गये उनसे। तभी लक्ष्मी कुट्टी वहां तेजी से आयी। पास ही लकड़ी लेकर खड़े एक देहाती से लकड़ी छीनकर उसने सूंड से फटकारना शुरू किया। इस तरह उसने भीड़ को तितर-बितर कर दिया। ऐसी समझदारी के अनेक कारनामे उसने जीवन में किये।

उसी बीच सर्कस के एक हाथी मानी से उसका प्रेम हो गया। दोनों ही एक दूसरे को काफी चाहने लगे। अब लक्ष्मी उसके साथ ही अपना अधिकांश समय बिताती थी, पर उसके काम में, स्वभाव में और उत्साह में जरा भी कमी नहीं आयी।

एक बार दक्षिण भारत में ही
सर्कस एक नयी जगह पहुंचा।
व्यवस्था आदि के लिए बड़ी
करनी पड़ी। थककर उस दिन
दरन एक पेड़ के नीचे विस्तर
गये। सुबह वे जगे तो देखा कि
कुट्टी सिरहाने खड़ी है। 'मैं
बैठा कि क्या बात है? देखा तो
चकित रह गया।' दामोदरन
हथिनी के पैरों के नीचे जहरीला
(नाग) छटपटा रहा था।'
दारी ऐसी थी। पता लगा कि
दिन चार आदमियों की जान ले

हथिनी को दामोदरन से

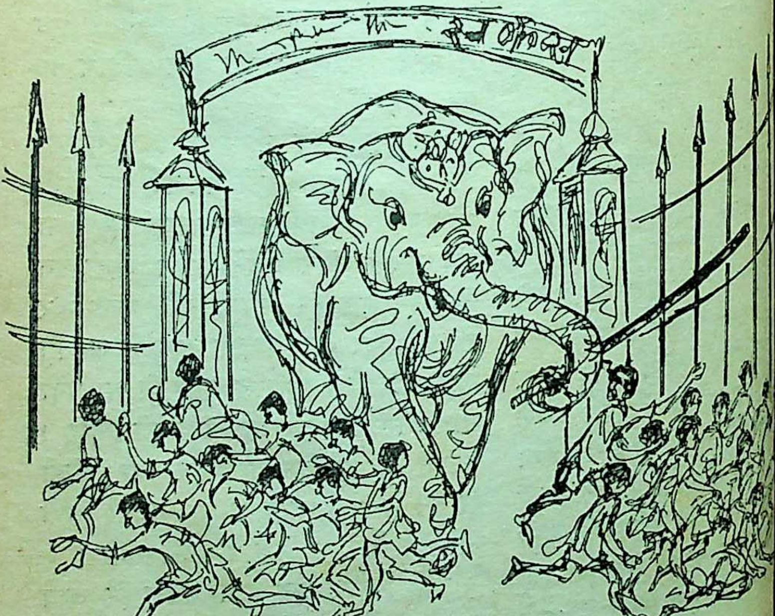

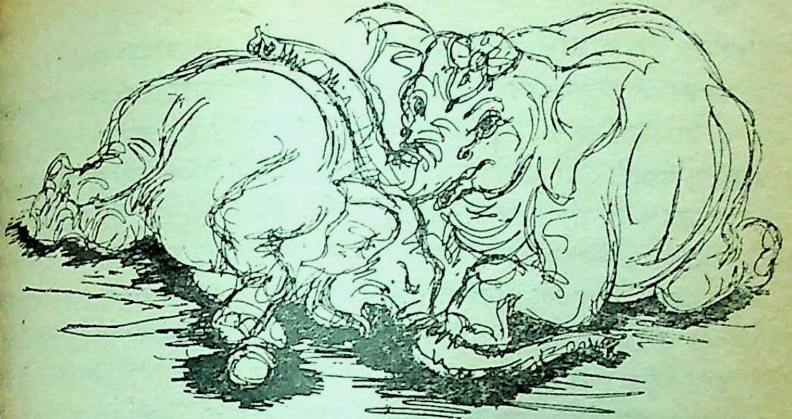

था। जब वे बाहर चले जाते थे तो वह प्रायः उदास रहती। कुछ खाती-पीती भी नहीं। जब वे आ जाते तो बड़ी प्रसन्नता जाहिर करती।

इधर हथिनी की अपने प्रेमी मानी हाथी से गहरी छनने लगी थी। तभी एक दिन मानी ने किसी गंदे गड्ढे का पानी पी लिया।

वह दर्द के मारे बुरी तरह छटपटाने लगा। सर्कसवालों ने तुरंत पशु चिकित्सकों को बताया। काफी इलाज किया, किंतु वह ठीक नहीं हुआ। कुट्टी को पूर्वाभास हो गया था, शायद इसलिए वह भी रह-रहकर कराह उठती। उसने मानी का सामीप्य जरा भी नहीं छोड़ा। वह रोने लग गयी। वह न तो पानी पीती न खाना खाती। हाथी मर गया तो वह बहुत छटपटायी! दामोदरन ने लिखा है कि लक्ष्मी ने मानी की मृत्यु पर जो शोक प्रकट किया वह वफादारी की शानदार मिसाल है। वह उस स्थान पर जहां मानी बंधता था, चली गयी और कई दिनों तक भूखी-प्यासी रोती रही।'

दामोदरन उसे पुचकारते पर वह मूक पशु कैसे समझाती अपनी पीड़ा। वह न तो पूजा की घंटी सुनकर अपनी जगह से हिलती न प्रसाद लेती। मानी के मरने के चौदह दिन के बाद भूखी-प्यासी लक्ष्मी भी इस संसार से विदा हो गयी। मरने से पहले वह काफी तेज आवाज में चिंघाड़ी तो दामोदरन तथा कई कर्मचारी दौड़ गये। उसने दामोदरन के पैरों पर सूंड रखकर आखिरी सांस ली फिर सदा के लिए शांत हो गयी।

उसकी याद में दामोदरन ने उसके बारे में काफी बातें लिखी हैं। सचमुच ही लक्ष्मी कुट्टी की वफादारी अपने आप में एक अभूतपूर्व मिसाल है।

—बी ११६, विजय पथ,
तिलक नगर, जयपुर-३०२००४

सांस्कृतिक मंच

मानसिकता ही विकास में बाधक

'हिंदी सभा' के तत्वावधान में सीतापुर में गत ६ मार्च को वरिष्ठ साहित्यकार एवं **नवनीत, माधुरी** तथा **नमस्कार** आदि के संपादक-मंडल से संबद्ध किशोरीरमण टंडन (बंबई) का अभिनंदन किया गया। डा. बनारसीदास कपूर की अध्यक्षता में कार्यक्रम का प्रारंभ कृष्णकांत दीक्षित की वाणी-वंदना से हुआ। 'हिंदी सभा' के अध्यक्ष पं. रामस्वरूप अवस्थी ने सभा के गौरवशाली इतिहास पर प्रकाश डालते हुए टंडनजी की साहित्यिक उपलब्धियों का विवेचन किया।

डा. गणेशदत्त सारस्वत ने टंडनजी को अभिनंदन-पत्र व शाल भेंट किया। क्षेत्रीय विधायक श्री राजेन्द्र गुप्त ने कहा कि हिंदी के पक्ष में लोकमत तैयार करना हम सभी का दायित्व है। अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए इस दायित्व का स्वेच्छा से निर्वाह आवश्यक है।

मुख्य अतिथि के पद से बोलते हुए टंडनजी ने कहा कि 'आज मैं चौवन वर्ष बाद अपनी जन्म-भूमि का दर्शन कर जिस आनंद का अनुभव कर रहा हूं, वह शब्दों का विषय नहीं है। मेरे लिए तो इस धरती का कण-कण प्रणम्य है।' अपनी साहित्यिक यात्रा का उल्लेख करते हुए उन्होंने श्री अनूप शर्मा तथा श्री प्रसिद्ध नारायण गौड़ का स्मरण किया, जिनके सान्निध्य में उनकी रचनार्धमिता निखरी।

अपने पत्रकारिता जीवन के अनुभवों उल्लेख करते हुए बताया कि जब उन्होंने इस क्षेत्र में प्रवेश किया था, तब वह त्या और तप का पर्याय थी, किंतु आज यह व्यवसाय मात्र बनकर रह गयी है। औ इसीलिए पत्रकार का वर्तमान समय में समाज में वह स्थान नहीं रह गया है, जो पहले था। हिंदी की वर्तमान स्थिति के संदर्भ में उन्होंने कहा कि 'हमारी बदली हुई मानसिकता ही इसके विकास के मार्ग में बाधक है। क्षेत्रीय भाषाओं से तो हिंदी सदैव परिपुष्ट हुई है, इसलिए उसकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिये।'

कार्यक्रम का समापन कवि-गोष्ठी से हुआ, जिसमें सर्वश्री किशोरीरमण टंडन, देवशर्मा बाजपेयी, शचीरानी सिन्हा, अ धेश शुक्ल, रामदत्त तिवारी 'कुलीन', रघुवीरशरण 'पथिक' (शाहजहांपुर), अनिल सक्सेना, डा. गणेशदत्त सारस्वत, रामस्वरूप अवस्थी 'रूप', रामजीदास कपूर आदि ने भाग लिया।

संपूर्ण कार्यक्रम का संचालन डा. सारस्वत ने तथा कृतज्ञता-ज्ञापन श्री रमारमण त्रिवेदी ने किया।

०००

किशोरीरमण टंडन के सम्मान में एक गोष्ठी का आयोजन उनकी जन्म-भूमि बिसवां (सीतापुर) में भी कि

ा, जिसकी अध्यक्षता सनेही मंडल के कवि, समीक्षक तथा कहानीकार पं. दत्त सारस्वत 'दत्त' ने की। इस गोष्ठी र्वश्री रामजीदास कपूर, रामस्वरूप स्वी 'रूप', डा. श्यामसुंदर मिश्र र, डा. गणेशदत्त सारस्वत तथा अवधेश आदि ने भाग लिया। इस अवसर टंडनजी ी रचनाएं विशेष रूप से गयीं। श्री दत्तजी ने, जो टंडनजी भी रह चुके हैं, टंडनजी के और वी होने का आशीर्वाद दिया।

–डॉ. गणेशदत्त सारस्वत

०००

जयंती एवं अमृत-महोत्सव

त ५ और ६ मार्च को बंबई प्रांतीय भाषा प्रचार सभा की स्वर्ण-जयंती सभा के संचालक श्री कांतिलाल की अर्ध-शतक हिंदी-सेवा एवं ७५ की आयु पूर्ण करने के उपलक्ष्य में अमृत-महोत्सव मनाया गया। उद्घाटन केंद्रीय उत्पादन रक्षा मंत्री श्री शिवाजी राव पाटिल ने । उन्होंने कहा कि संविधान में हिंदी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। उसका धिक प्रयोग होने पर ही वह पूरे को एकता में जोड़ने की अहम् भूमिका सकेगी। अध्यक्षता श्री वी. एस. ने की। सभा के मंत्री श्री जोशी ने गांधी, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन श्री जमनालाल बजाज की हिंदी के की गयी सेवाओं का स्मरण कराया।

रात में सफल कवि-सम्मेलन हुआ। जिसका आकर्षक संचालन किया **'नवनीत'** के संपादक डा. गिरिजाशंकर त्रिवेदी ने और अध्यक्षता की प्रो. नंदलाल पाठक ने। अन्य कवियों में सर्वश्री नरद्र शर्मा, सच्चिदानंदन सिंह 'समीर', यज्ञ शर्मा, डा. सुधाकर मिश्र, डा. सुशीला गुप्ता, आनंद त्रिपाठी, आलोक भट्टाचार्य, भगवत्लाल उत्पल, दिलीपकुमार तिवारी, कैलाश सेंगर, मुरलीधर पांडेय, श्रीमती लक्ष्मी भंडारी और अरुण बगल ने भाग लिया। प्रारंभ में सभा के मंत्री श्री कांतिलाल जोशी ने कवियों का शाल और चंदन के हार से स्वागत किया। आभार-दर्शन किया श्री जयदेव सिंहानिया ने।

दूसरे दिन 'अमृत-महोत्सव' के अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में महाराष्ट्र के भूतपूर्व मुख्य-मंत्री वसंत दादा पाटिल ने कहा कि राष्ट्रभाषा के अधिकाधिक प्रचार-केंद्र खुलने चाहिये। उन्होंने श्री कांतिलाल जोशी को १ लाख रुपये की थैली और अभिनंदन-पत्र भेंट किया। श्री जोशी ने यह राशि सभा को लौटा दी। इस अवसर पर कुछ हिंदी-सेवी लेखकों और प्रचारकों का भी सम्मान किया गया। अध्यक्षता राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा के मंत्री श्री शंकरराव लोढ़े ने की।

इस अवसर पर गुजराती कवि उमाशंकर जोशी, पं. नरेंद्र शर्मा, डा. एन. एन. कैलाश, डा. राममनोहर त्रिपाठी, श्री हरिशंकर, मो. दि. पराडकर आदि की उप-

स्थिति उल्लेखनीय थी । डा. उषा मेहता ने अंत में आभार व्यक्त किया । दूसरे दिन भी सुंदर सांस्कृतिक कार्यक्रम हुए ।

—अशोक जोशी

० ० ०

बाल साहित्यकार सम्मानित

भारतीय बाल कल्याण संस्थान कानपुर का दसम बाल साहित्यकार सम्मान समारोह बैरिस्टर नरेंद्रजीत सिंह की अध्यक्षता में संपन्न हुआ । स्वामी रुद्रात्मानंद ने बच्चों के लिए विशिष्ट कार्य करने के लिए सात व्यक्तियों सर्वश्री बालशौरि रेड्डी (चंदामामा), सरदार हिरदेपाल सिंह (अमृतसर), श्री रामभरोसे गुप्त 'राकेश' (भिंड), श्री प्रदीप पंत (दिल्ली), डा. सरोजीत बागची 'रत्नाकर' (जलपाईगुड़ी), डा. ओ. पी. भट्ट तथा श्रीमती मार्जरी दत्ता को शाल ओढ़ाकर पुरस्कार राशि प्रदान की गयी ।

सांसद जगदीश अवस्थी, डा. राष्ट्रबंधु, प्रेमचंद्र गुप्त, तथा तपेश्वरीप्रसाद गुप्त ने सरकार तथा अभिभावकों को सलाह दी कि वे देखें कि उनके बच्चे क्या पढ़ रहे हैं । श्री विनोदचंद्र पांडेय 'विनोद' ने कामिक्स के खतरों से सभी को आगाह किया । अंत में बच्चों का रंगारंग कार्यक्रम हुआ ।

आभार गंगाप्रसाद गुप्त तथा संचालन मेहरोत्राजी ने किया ।

—शिवचरण चौहान

० ० ०

कार्यालयों में हिंदी: प्रयोगकी

एस. एन. डी. टी. महिला विद्यालय के स्नातकोत्तर हिंदी विभाग ओर से आयोजित 'कार्यालयों में प्रयोग की दिशाएं' विषयक संगोष्ठी इस अवसर पर श्री बाबूराव तोल सम्मान किया गया । कुलपति कमलिनी भंसाली ने हिंदी विभाग सराहना करते हुए हिंदी के महत्व प्रकाश डाला । श्री बाबूराव तोल ने छात्राओं को पारितोषक दिये । डा. ठक्कर ने हिंदी के विकास पर बल दि

प्रथम सत्र में भाग लिया मणिका मोहिनी, श्री रवींद्र मिश्र श्री विश्वदेव शर्मा ने । दूसरे सत्र में आर. के. सिंह, डा. महेंद्र कार्तिकेय, चारुशीला ओक, श्री नरेश कुमार और श्री अवधेश तिवारी ने भाग लि कार्यक्रम की अध्यक्षता श्रीमती शाह ने की ।

—डा. उमा

० ० ०

निराला जयंती समारोह

२१ फरवरी १९८८ को स्मारक स्थल डलमऊ, रायबरे परिसर में महाकवि पं. सूर्यकांत निराला का जयंती-समारोह मनाया महाप्राण की प्रतिमा का अनावरण प्रदेश हिंदी संस्थान' के कार्यकारी डा. भक्त दर्शनजी ने किया । श्री उपेंद्र ने की और संचालन दयाल सिंह 'सुधाकर' ने ।

संस्था के अध्यक्ष श्री राजाराम भारतीय ने मुख्य अतिथि का स्वागत करते हुए मांग की कि डलमऊ के इस संस्थान को हिंदी संस्थान से जोड़ दिया जाये। उल्लेख्य है कि महाप्राण निराला की कर्मस्थली एवं ससुराल तथा महर्षि दालभ्य, राजा डल और चंदायन महाकाव्य के रचयिता सूफी संत मुल्ला दाऊद की कर्मस्थली होने का भी गौरव डलमऊ को प्राप्त है। इस अवसर पर राजाराम भारतीय द्वारा 'महाप्राण स्मारिका' भी प्रकाशित की गयी। रात में हुए कवि सम्मेलन में श्री ब्रजेश भट्ट 'कमल', पं. बालकृष्ण मिश्र, श्री शंभूशरण द्विवेदी 'बंधु', रागिब रायबरेलवी, वाकिफ रायबरेलवी, श्री सुधाकर, रामनिवास पंछी 'रमण', जवाहर लाल, राजेंद्र राजन, अजहर आदि कवियों ने महाप्राण को श्रद्धा सुमन अर्पित किये। अंत में श्री भारतीयजी ने धन्यवाद ज्ञापित किया।

–रामनारायण रमण

०००

भाऊ समर्थ सम्मानित

मध्यप्रदेश प्रगतिशील लेखक संघ 'ऋतुरंग' इंदौर ने भाऊ समर्थ का सम्मान उनकी षष्ठिपूर्ति पर किया। भाऊ समर्थ के तैल चित्रों की प्रदर्शनी आयोजित की गयी, जिसका उद्घाटन एस. एन. बेंद्रे ने किया।

इसके बाद भाऊ की आत्मकथात्मक कहानियों के संग्रह 'मिस्सी' तथा आलेखों की पुस्तक 'चित्रकला और समाज' एवं एक स्मारिका का विमोचन वरिष्ठ पत्रकार श्री राहुल बारपुते ने किया।

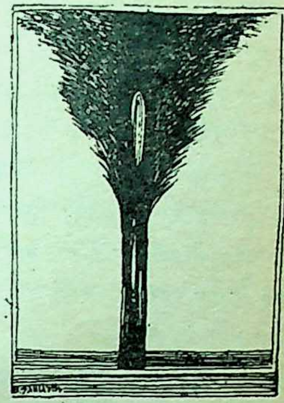

चित्र : भाऊ समर्थ

–हरेराम बाजपेयी 'आश'

०००

कानपुर में कला का अनोखा संगम

कानपुर के वृजेंद्र स्वरूप पार्क में भारत सरकार के सहयोग से राष्ट्रीय हथकरघा प्रदर्शनी-८८ (नेशनल हेंडलूम एक्पो-८८) का उद्घाटन भारत सरकार के श्री एस. कृष्णकुमार ने किया।

गंगा कवि-सम्मेलन की अध्यक्षता सांसद नरेशचंद्र चतुर्वेदी ने की। जिसमें नीरज, पं. रमानाथ अवस्थी, सोम ठाकुर, डा. रवींद्र भ्रमर, माधवीलता शुक्ला, डा. प्रतीक मिश्र, सिंदूर, इंदिरा इंदु, डा. चंद्रकिरण तथा अंसार कावरी ने डा. मधुलेखा विद्यार्थी के संचालन में काव्य रचनाओं की भागीरथी प्रवाहित की। यह था कला का अनोखा संगम।

–जयराम 'जय'

(पृष्ठ ३२ का शेषांश)

को राजी करने में सफल हो गये, किंतु तथागत ने भिक्षुणियों के लिए आठ नियम बनाते हुए अंत में कहा–'हे आनंद! यदि स्त्रियों ने संघ में प्रवेश न किया होता, तो यह धर्म सहस्र वर्षों तक टिका रहता; लेकिन चूंकि वे संघ में प्रवेश कर चुकी हैं, यह धर्म केवल पांच सौ वर्षों तक ही टिका रहेगा।'

महावन के प्रवेश द्वार पर प्रतीक्षारत यशोधरा के दिल में बुद्ध की यह वाणी झंकृत हो रही थी। दुःख, अपमान से जर्जरित यशोधरा प्रश्न पूछ रही हैं–'हे आनंद, धर्म के पतन के लिए क्या केवल नारी जिम्मेवार हैं? पुरुष जहां कामना-रहित होता है, क्या नारी वहां कामना बनकर खड़ी हो सकती है? यदि भिक्षु संघ में रहने वाले सभी पुरुष जितेंद्रिय नहीं हैं, तो ऐसे पुरुष को तथागत ने संघ में स्थान क्यों दिया है? क्या केवल इसलिए कि वे पुरुष हैं।'

आनंद ने विनम्र भाव से कहा–'देवी, तथागत ने इस बारे में कुछ नहीं कहा।'

यशोधरा ने दृढ़ स्वर में कहा–'हे आनंद, मैं जानती हूं कि उन्होंने जो भी कुछ कहा है, वह सब संघ के लिए ग्रहणीय है। मैं तो केवल एक साधारण भिक्षुणी हूं–बुद्धत्व से बहुत दूर है मेरी जगह। फिर भी इतना कहे देती हूं–जिस धर्म संघ में नारी प्रवेश करती है, उस संघ का पतन नहीं होता; बल्कि जो धर्म संघ नारी को हेय समझता है उस धर्म का पतन भावी है। क्योंकि धर्म मानव कल्याण के लिए बना है एवं मानव में आधा हिस्सा नारियों का है। का आधा हिस्सा प्रकाशमय होते जिस तरह चांद खंडित है, उसी तरह समाज को नीचे रखकर किसी भी का उत्थान संभव नहीं।'

यशोधरा की बातें भिक्षु दिल में लिपिबद्ध हो गयीं। के बाद, बुद्ध के परिनिर्वाण के तथागत के श्रेष्ठ तथा एकमात्र शिष्य आनंद के प्रति अन्य दोषारोपण थे–आनंद ने तथागत बंदना स्त्रियों से करवायी थी और आंसुओं से तथागत का पैर धुलवाया इसके अलावा संघ में भिक्षुणियों के के लिए तथागत को राजी करने महान अपराध भी उन्होंने ही किया

परंतु यशोधरा की अंतिम भी आनंद की स्मृति-पटल पर रही थीं–क्या यशोधरा की हैं। आनंद अपराध स्वीकार तैयार नहीं हैं। किंतु भिक्षुओं के आगे उन्होंने हार मान ली थी।

नारी जाति के संबंध में (बुद्ध ने जो कुछ कहा है) के आगे हो जाते थे। हृदय अनुमोदन न भी संघ के आगे क्षमा मांगते-मांगते ग्रस्त आनंद दुःख से टूटने लगे

व्याधि, दुःख से छुटकारा पाने के लिए वे जिंदगी भर संघ की शरण में रहे। क्या वास्तव में उन्होंने जरा, व्याधि, मृत्यु और दुःख से छुटकारा पा लिया था? यदि उन्हें दुःख से छुटकारा नहीं मिला, तो इस आजीवन कष्टपूर्ण साधना का मूल्य ही क्या रहा? जहां जीवन में इतने सवाल हों, वहां भला दुःख का अंत कहां?

दुःख हो तो हर युग में बुद्ध का पुनर्जन्म होता है—तो फिर यह कहना कहां तक सच है कि तथागत का यह अंतिम जन्म है? यदि पृथ्वी पर अब भी दुःख का अंत नहीं हुआ है, तो फिर प्रश्न है कि तथागत ने यह कैसे घोषणा कर दी थी—'यह मेरा अंतिम जन्म है। इसके बाद मेरा पुनर्जन्म नहीं है।' तो क्या उन्होंने जो कुछ कहा है वह . . . ? **—'आख्यायिका', तुलसीपुर, कटक—७५३००८ उड़ीसा**

□

बात उन दिनों की है, जब मौलाना आजाद कलकत्ता के अपने पैतृक दुमंजिले मकान में रहा करते थे। कुरान-शरीफ की टीका, जो इस्लामी-जगत् में आज भी काफी मशहूर, प्रामाणिक और लोकप्रिय मानी जाती है, लिखने में मशगूल थे। जब इसका पता हैदराबाद के निजाम साहब को लगा तो उन्होंने सर अकबर हैदरी को उनके पास भेजा इस पैगाम के साथ कि यदि मौलाना अपनी टीका उन्हें समर्पित करें तो वह उन्हें पारिश्रमिक रूप में ः लाख रुपये देंगे। मौलाना ने 'मैं गौर करूंगा' कहकर उन्हें लौटा दिया।

इसके चंद दिनों बाद एक दिन जब वह जीने से नीचे उतरे तो एक नवयुवक को खड़ा पाया। उन्होंने उससे उसका बूदोबाश तथा उसके वहां आने का कारण पूछा। उसने बताया कि वह सीरिया का रहने वाला है। कुरान का उसने गहन अध्ययन किया है, पर कुरान-संबंधी उसकी कुछ शंकाएं हैं, जो वह उनके सामने रखकर उनसे उसका समाधान चाहता है। मौलाना बहुत प्रसन्न हुए। बोले—'आप कल सुबह ग्यारह बजे तशरीफ लायें, मैं आपके सवालों का भरसक जवाब देने की कोशिश करूंगा।'

दूसरे दिन निश्चित समय पर वह आया और करीब दस दिनों तक रोज आता रहा। मौलाना के सामने उसने अपनी शंकाएं रखीं, मौलाना ने यथाशक्ति उन्हें दूर करने की चेष्टा की।

अंत में संतुष्ट होकर वह सीरिया वापस चला गया। मौलाना ने देखा कि उसकी कुरान में पूरी आस्था ही नहीं है, बल्कि उसने उसका गहरा अध्ययन भी किया है। वह इतना प्रभावित हुए कि उन्होंने अपनी टीका उसे ही समर्पित कर दी—निजाम के लाख रुपये की ओर उन्होंने मुड़कर भी नहीं देखा।

यह उनको जीवन की एक घटना है, जो उनकी महानता को प्रदर्शित करती है।

—डा. गोपालप्रसाद 'वंशी'

□

दो क्षण हंस न लें!

श्रीमान (अपनी श्रीमती से)–'तुम बड़ी फिजूलखर्च हो। देखती नहीं, कमरे में बिजली की अंगीठी कब से जल रही है।'

श्रीमती–'आप चिंता न करें, अंगीठी हमारी नहीं है। उसे तो मैं अपनी पड़ोसिन के यहां से मांगकर लायी हूं।'

०००

श्रीमान (श्रीमती से, क्रोध में)–'यदि मेरी शादी तुम्हारे बजाय अनीता से हुई होती तो जानती हो आज क्या होता?'

श्रीमती–'तब तुम झगड़ा करते वक्त मेरा नाम लेते?'

०००

श्रीमान (अपनी श्रीमती से)–'आपकी माताजी का बनाया हुआ खाना मुझे बहुत पसंद था।'

श्रीमती–'क्या मैं बढ़िया खाना नहीं पकाती?'

श्रीमान–'खाना तो तुम अच्छा बनाती हो, प्रिये; पर माताजी का बनाया हुआ खाना मुझे इसलिए पसंद था, क्योंकि जो कुछ बनाती थीं, उसके लिए मुझे कुछ कमाना नहीं पड़ता था।'

०००

विदेश में रहने वाले श्रीमान ने को पत्र लिखा–'प्रिये, मैंने जब छोड़ा है मुझे जरा भी चैन नहीं। ऐसा लगता है मानों मैं अपना तुम्हारे पास ही छोड़ आया हूं।'

भोली-भाली बेचारी देहाती उत्तर दिया–'प्राणनाथ, मैंने छान डाला पर आपका कोई मिला, सिर्फ एक पुरानी चप्पल उसे मैं पार्सल से आपके पास भेज

०००

श्रीमती तिनककर बोलीं– तो करम फूट गये जो तुम जैसा मेरे पल्ले पड़ा, मेरा विवाह तो के साथ हो रहा था, जो तुमसे योग्य थे।'

श्रीमान गंभीरता से बोले– थे, तभी तो अपनी योग्यता के तुम्हारे चंगुल से निकल भागे!'

–सुरेंद्र

□

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बंबई-४००
के लिए प्रकाशित तथा श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास
बंबई-४०० ००४ में मुद्रित।

बम्बई की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

हिन्दी डाइजेस्ट

रु. ६.००

10-6-1989

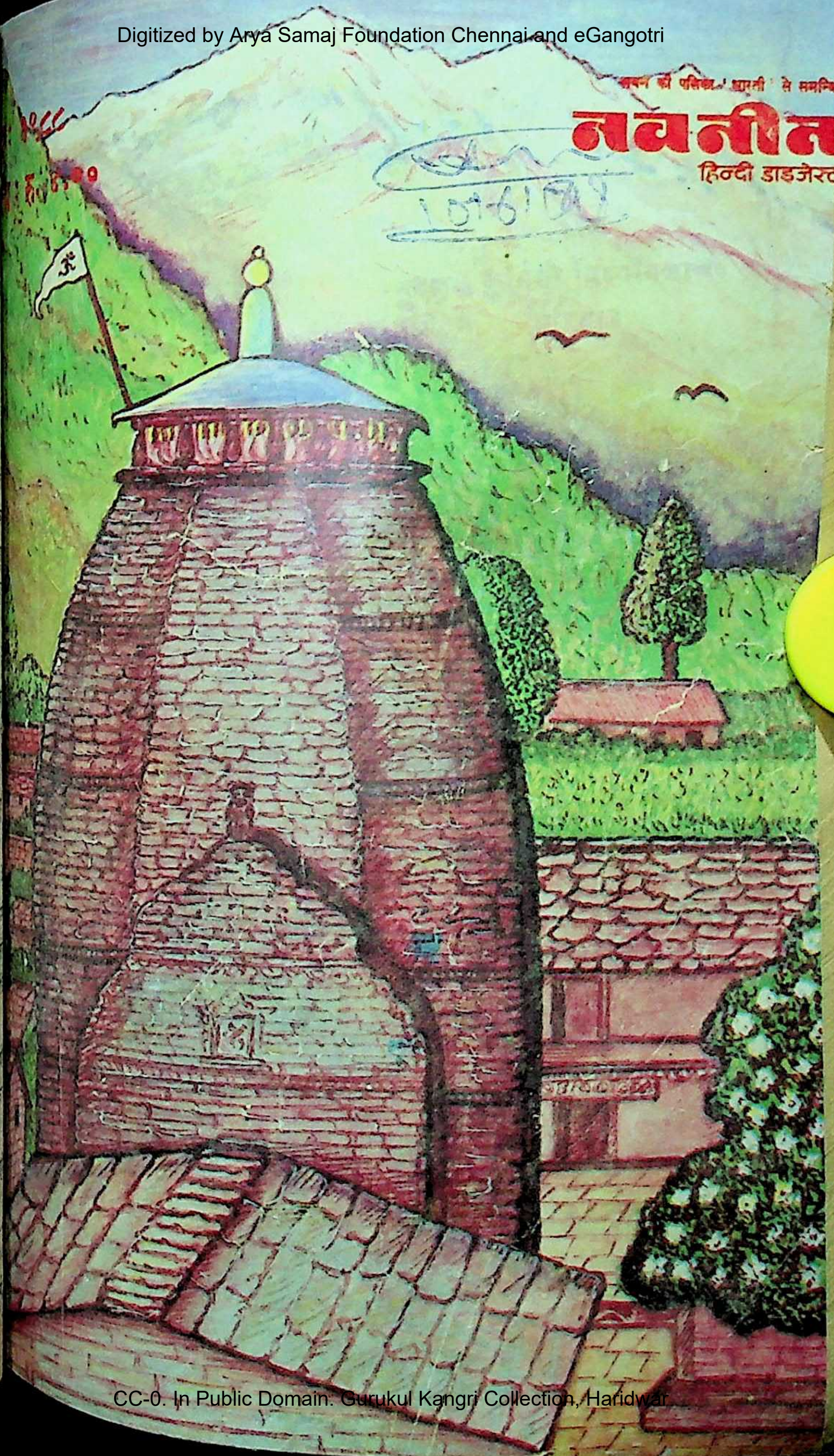

विश्व है
हमारा कैनवास...

यदि चालीस वर्ष पीछे नजर डालें तो हम देखेंगे कि भारत तब पूरी तरह विदेशी डाइज पर निर्भर था. और तब तक इस क्षेत्र में अतुल ने कदम नहीं रखा था. स्वदेशी डाइज़ के उत्पादन क्षेत्र में पहल हमने की... एक श्रद्धांजलि के रूप में, जो हमारे संस्थापक स्वर्गीय श्री कस्तूरभाई लालभाई की दूरदृष्टि को समर्पित थी.

आज अतुल न केवल डायस्टफ़ की विशाल श्रेणी का उत्पादन करते हैं बल्कि बुनियादी रसायन, डायस्टफ़ के माध्यम, फार्मास्युटिकल्स तथा कीटनाशकों का उत्पादन करके कपड़े, चमडे, कागज, हाथ से बने कपड़े, पिग्मेंट, पेट्रोलियम, जूट तथा साबुन जैसे विविध उद्योगों में देश को आत्मनिर्भर बनाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं

अपनी १०० करोड़ की बिक्री और १० से भी
करोड़ रुपये के निर्यात द्वारा तेज़ी से विकास की
अग्रसर है. हमेशा उत्तम क्वालिटी के उत्पादन
करना ही हमारा उद्देश्य है जिसे हम पूरा करते हैं
आर एंड डी विभाग की सहायता से.

भारत में उद्योगों के कदम तीव्र गति से विकास
अग्रसर है. और अतुल राष्ट्र की उपलब्धियों में
सहभागी रहा है.

THE ATUL® PRODUCTS LTD.
अतुल ३९६०२०, गुजरात, इंडिया, टेलेक्स : ०१७३ २२२
फोन : ATUL ६१ से ६५. टेलीग्राम : TULA AT

1261 कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार

पत्र-दृष्टि

रघुपति सहाय 'फिराक' शीर्षक साहित्य-चर्चा (नवनीत, अप्रैल १९८८) में सन १९३८ के करीब 'हम-निवाला, हम-प्याला' द्विवेदीजी के साथ बातचीत का विवरण छपा। बहुत कम लोगों को पता होगा कि फ़िराक साहब ने उर्दू शायरों की रचनाओं को हिंदी पाठकों को समझाने का कठिन काम हिंदी पत्र-पत्रिकाओं में छपे अपने हिंदी लेखों के माध्यम से किया। लखनऊ से प्रकाशित मासिक पत्रिका 'माधुरी' में (साहित्य-संख्या, सन १९२८) बाबू रघुपति सहाय, बी. ए. द्वारा लंबा लेख शीर्ष स्थान पर प्रकाशित हुआ था। इसमें विश्व साहित्य में कविता की परिभाषा और भावप्रवणता की विस्तृत चर्चा के साथ मशहूर उर्दू शायरों की रचनाओं के हिंदी अनुवाद और उनके काव्य-सौष्ठव दर्शाने में युवा लेखक ने शुद्ध हिंदी का गरिमामय प्रयोग किया था। इसके बाद सन १९३८ से १९४० के बीच, जब रघुपति सहाय एम. ए. परीक्षा उत्तीर्ण कर प्रयाग विश्वविद्यालय में अंग्रेजी के अध्यापक नियुक्त हो गये थे, उनके लिखे अनेक लेख इलाहाबाद से प्रकाशित होने वाले 'तरुण' मासिक पत्र में छापे गये।

—उत्तमचंद श्रीवास्तव, होशंगाबाद, म. प्र.

ооо

आपने साहित्य मनीषी कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी के बहुआयामी व्यक्तित्व वाले विशेषांक में जो सामग्री प्रकाशित की है, उसके लिए आप बधाई के पात्र हैं। 'जन-जागरण के ओजस्वी गायक राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी' विषयक आपका लेख द्विवेदीजी के प्रति पुण्य स्मरण कराता है। श्री दुर्गाप्रसाद मंडेलिया का 'निर्बल के बल राम' अत्यंत प्रेरणादायी लेख है। डा. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक' का 'महादेवीजी की ब्रजभाषा कविता' संबंधी लेख शोधपूर्ण है। कविवर बालकृष्ण मिश्र, कमलापति मिश्र एवं शतदल के गीत भी अच्छे लगे। कुंअर बेचैन की 'ये तुम्हारी रस्सियां छोटी पड़ेंगी' कविता भी स्तरीय तथा भावपूर्ण है। अतुल गोस्वामी का 'शांतिदूत मार्टिन लूथर किंग' पर लेख वर्तमान अशांतिमय वातावरण में सामयिक लगा। आपने लोक-संगीत आल्हा गायन पर लेख प्रकाशित कर भारत की लोक संस्कृति को उजागर करके स्तुत्य कार्य किया है।

भारतीय विद्या भवन जैसी उच्चकोटि

की संस्था की भांति **नवनीत** भी आपके संपादन में उत्तरोत्तर विकास-यात्रा की ओर अग्रसर है।

—बद्रीनारायण तिवारी, कानपुर, उ. प्र.

०००

नवनीत का पुराना प्रशंसक और पाठक हूं। एक ममता वात्सल्य से भरी मां के विचारों को, भावनाओं को व्यक्त किया है सीधी सरल सहज भाषा में रामेश्वर दयाल दुबे ने अपनी कविता 'मेरा मुन्ना' में, जो अप्रैल '८८ के अंक में छपी है। संजीव निगम की कविता 'सपना मुत्तुकृष्णन' अद्भुत है। राष्ट्रीय एकता को पुष्ट करने वाली इससे सुंदर कविता क्या होगी। स्वामी अखंडानंदजी के गीता पर विचार, दुर्गाप्रसादजी मंडेलिया का 'निर्बल के बल राम' शीर्षक से दो प्रसिद्ध भजनों का बड़ा सुंदर अर्थ है। रमेश दवे के दो नाइजीरियन कविताओं के अनुवाद, जोसेफ मेकवान की सुंदर कहानी 'चक्की' तथा पाकिस्तानी कहानी 'शीशे की दीवार' विशेष उल्लेखनीय हैं। आज के जीवन की भागमभाग में शाश्वत मूल्यों की परंपरा को जीवित रखने के लिए साधुवाद।

—कैलाश त्रिवेदी, इंदौर, म. प्र.

०००

संजीव निगम की कविता 'सपना मुत्तुकृष्णन' मुझे बेहद पसंद आयी। साथ ही जयंत कृष्ण दवे ने स्वामी अखंडानंदजी के बारे में पूर्ण जानकारी करायी। दीपा त्यागी की 'कठपुतली' कहानी और परमलाल गुप्त की कहानी 'आतंकवाद' लगी। महादेवीजी की ब्रजभा कविता काफी रोचक है। खाम पढ़कर मैं भाव विभोर हो गया:-

फूल तुम्हें तबही कहि हैं,
कांटन में धंसि कै हंसि फूलि

—संजीव कुमार चंदेल, अकलतरा,

०००

अचानक ही बुक स्टाल पर (हिंदी डाइजेस्ट) पर दृष्टि गयी। अप्रैल का है। हिंदी की इतनी उत्कृष्ट मासिक पत्रिका देखकर पर असीम आनंद की अनुभूति निस्संदेह हिंदी साहित्य को सम एक अनुपम पत्रिका है। आप की विभिन्न प्रकार की समस्याओं धान हेतु 'नयी राह' नाम से एक स्थायी स्तंभ का श्रीगणेश करें तो होगा। **—पुरुषोत्तम गुप्ता** 'समर्पित,

०००

मैं **नवनीत** का पुराना ग्राहक हूं। अंक बहुत ही अच्छा, ज्ञानवर्द्धक है। राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी का एवं रचना 'जन-जागरण के कवि' बहुत ही पसंद आयी है। से प्रार्थना है कि राष्ट्रकवि की रच गीत' और विषपान भी छापें। में घरेलू उपचार की रचना का

—राकेशचंद्र त्रिवेदी, इलाहाबाद

०००

आज कल कहानियों में

अधिक पढ़ने को मिलती है, लेकिन **नवनीत** के अप्रैल अंक में प्रकाशित दीपा त्यागी की 'कठपुतली' अच्छी कहानी पढ़ने को मिली । कुंवर बेचैन की कविता, 'ये तुम्हारी रस्सियां छोटी पड़ेंगी' अच्छी रचना है ।

-अंजना रंजन 'दाग', कटनी, म. प्र:

०००

नवनीत का अप्रैल '८८ अंक पढ़ा । नवनीत तो हम अपने बचपन से पढ़ रहे हैं। एक भी अंक आज तक नहीं छूटा । नवनीत अपने नाम के अनुरूप वास्तव में 'नवनीत' ही है । साहित्यिक अभिरुचि रखने वालों को **नवनीत** के समान ही स्निग्धता प्रदान करती है । इस अंक की पाकिस्तानी कहानी 'शीशे की दीवार' बहुत पसंद आयी । शारदा त्रिवेदी की मिक कहानी 'उन्मुक्त पक्षी' सरल भाषा हृदयग्राही रचना लगी । 'आतंकवाद' कहानी तो गहरे तक प्रभावित करती है । हास्य के अंतर्गत कन्हैयालाल कपूर 'नुस्खा' बड़ा ही सटीक और समया- है। उत्कृष्ट रचनाओं के चयन के आप बधाई के पात्र है ।

का पांडेय, सत्यनगर, रायबरेली, उ. प्र.

०००

नवनीत के हर अंक में कुछ-न-कुछ योग्य सामग्री होती है, पर इसका अप्रैल अंक बेजोड़ लगा । विशेषत: जयतकृष्ण दवे द्वारा स्वामी अखंडानंदजी से ली गयी वार्ता हमारे आध्यात्मिक ज्ञान को बल प्रदान करती है । 'सुने री मैंने निर्बल के बल राम' सूरदासजी के इस लोकप्रिय पद की श्री दुर्गाप्रसादजी मंडेलिया ने विशद व्याख्या प्रस्तुत की है । यह पद इस शाश्वत सत्य को उजागर करता है कि विपत्तियों से हताश एवं असहाय मनुष्य हरिनाम स्मरण द्वारा दुखों से छुटकारा पा सकता है । जन-जागरण के ओजस्वी गायक 'राष्ट्र कवि स्व. सोहन लाल द्विवेदीजी' की हिंदी सेवा की भावना हमारे लिए सदैव प्रेरणाश्रोत बनी रहेगी । सुलक्षणा का लेख 'स्वामी शरणम् अयप्पा' ज्ञानवर्द्धक एवं पठनीय है ।

—रामगोपाल शर्मा, पद्मनाभपुर, दुर्ग, म. प्र.

०००

मई-८८ के अंक में प्रकाशित मेरे लेख 'आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी' में दो भूलें रह गयी हैं। शीर्षक के साथ छपे '५० वीं पुण्यतिथि पर' के स्थान पर चाहिये था—'१२४ वें जन्म-दिवस पर' । दूसरी भूल उनकी निधन-तिथि २१ दिसंबर १९३७ न होकर २१ दिसंबर १९३८ है । कृपया पाठक इसे सुधारकर पढ़ें ।

— डा. दुर्गाशंकर मिश्र, लखनऊ

* * *

एक आदमी का डोल और रस्सी **चोरी** हो गये । उसने विज्ञापन दिया कि 'चोर कृपा करें, तो कुआं भी उठा ले **जायें, क्योंकि** अब वह मेरे लिए बेकार है ।'

—डा. गोपालप्रसाद 'वंशी'

नवनीत

संस्थापक कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल नेव
नवनीत : स्थापना १९
संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ३७, अंक ६
जून १९

पत्र-वृष्टि	...
स्वर भरने वाले राजस्थानी लोकवाद्य	प्रेमजी प्रेम
गीत	डा. अजय प्रसून
मासिक भविष्यफल	पंडित वी. के. तिवारी
भारतीय संस्कृति में पर्यावरण संरक्षण	शुकदेव प्रसाद
रामायण की शुरूआत	जी. एन. व्यास
राष्ट्रकवि पंडित सोहनलाल द्विवेदी	धनंजय अवस्थी
गांधीवादी रचनाकार वियोगी हरि	गिरिजाशंकर त्रिवेदी
सांस्कृतिक मंच	...
प्रार्थना	सत्यकाम विद्यालंकार
सफलता पर पूर्ण विश्वास	गौतमकुमार दास
सुकरात की मृत्यु जीवन से भी शानदार	अजयेंद्रनाथ त्रिवेदी
मेरी रामेश्वरम् यात्रा	शत्रुघ्नलाल शुक्ल
विख्यात क्रांतिकारी का कथ्य	...
संतकवि रैदास	डा. एन. सिंह
दो मुगलकालीन सोने की मुहरें	शांता सर्वजीतसिंह
कैसे-कैसे खुराफाती दिमाग	डा. शशि गोयल
तलाश (कविता)	अंजलि पांडेय
प्रेत (कहानी)	सुरेन्द्रसिंह गौर

दों में विधवा-विवाह का समर्थन — अशोक श्रीवास्तव 'अंजान' ७१
निंग गाउन (उर्दू कहानी) — ख्वाजा अहमद अब्बास ७५
डित सुखदेव मिश्र — डा. रामप्रसाद मिश्र ८०
त्र कंद (कहानी) — शकुन्तला वर्मा ८३
कृतिक चिकित्सा की अनोखी संस्था — मीरा भट्ट ९१
वन का एक टुकड़ा (स्वीडिश कहानी) — अगस्त स्ट्राइंडबर्ग ९७
स्वान बल्लेबाजी के प्रतीक विजय मर्चंट — हंस १००
मृग के शिकार की कथा-व्यथा — तेज सिंह १०६
और वे (कहानी) — डा. शीतांशु भारद्वाज १०८
और सिपाही विद्रोह — श्यामसुंदर घोष ११६
था राम की, व्यथा मानव की — हरीन्द्र दवे १२०
नोरा (कविता) — डा. रामशंकर द्विवेदी १२८
लोक — डा. त्रिपाठी, शाहीन, डा. सूरिदेव, भारती, 'अरुण', डा. विकल १२९
ल का भाग्य (बालकथा) — मधुकर डी. वुधे १३६
भाषित १४३
हंस न लें ? — मंजु नागौरी, सुरेंद्र अग्निहोत्री, शुकदेव प्रसाद १४४

आवरण-चित्र : गोपेश्वर (चमोली गढ़वाल) स्थित लगभग छठी शताब्दी का गोपीनाथ मंदिर [**बी. मोहन नेगी**]
चित्र-सज्जा : ओके, शेणै, आर. डी. पुरोहित, संतोष जड़िया, ओमेंद्र
लय : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई-७ फोन : ८११४४६२

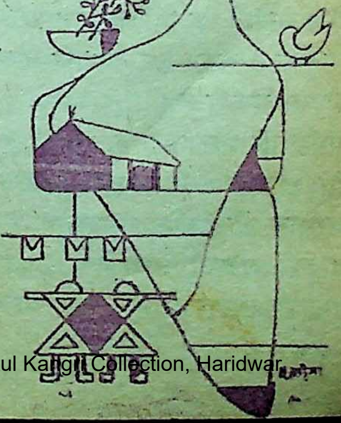

चित्र :
संतोष जड़िया

स्वर भरने वाले राजस्थानी लोकवाद्य

☐ प्रेमजी

कला ही जीवन है। इस कथन में कला का एक प्रबल पक्ष संगीत भी निहित है। संगीत को कलाओं की रानी माना जाता है। संगीत विहीन व्यक्ति को साक्षात पशु समान बताया गया है। जन्म लेतें बालक से हिलती हुई गर्दन वाले वृद्ध तक हर व्यक्ति के जीवन में हर समय एक स्वर होता है। उसी एक स्वर की साधना उसके जीवन की लय तय करती है। इसके बावजूद इंसान हमेशा स्वर की खोज में लगा रहता है। बाहर के स्वर से भीतर के स्वर को साधकर जीवन-संगीत में खोये रहना मनुष्य को प्रिय लगता है। सुरीलापन इंसान की खूबसूरती मानी जाती है। यह स्वर उसे इस लोक में परलोक की साधना करने को विवश करता है। जीवन संचालन में व्याप्त स्वर-साधना हर प्राणी के लिये आनंदायी होती है। यही कारण है कि विविध राग रागिनियों में मनुष्य से लेकर पशु तक की तल्लीनता देखी जा सकती है।

पश्चिमी भारतवर्ष का संगीत से सीधा संबंध रहा है। विशेषकर गुजरात और राजस्थान की विशिष्ट पहचान यहां की पहाड़ियों, पठारों और रेत के धोरों में अनुगुंजित संगीत ही है। राजस्थान वीरभूमि है। लेकिन वीरों की इस धरती वीरों के मन में मर मिटने की ललक करने के लिए समय-समय पर संगीत अहम भूमिका निबाही है। संगीत संचालित जीवन का सबसे बेहतरीन हरण है, राजस्थान का जन जीवन इसमें रंग हैं। इसमें लय है। इसमें है। जन्म, मृत्यु को किसी निनाद से लित होता देखने के लिए राजस्थान किसी भी अंचल में पहुंचा जा सकता है

राजस्थान अपने विविध लिए उतना ही पहचाना जाता है, लोकजीवन से जुड़ी विविधताओं के ये विविधतायें उसकी लोककलाओं सहज रूप से देखी जा सकती हैं। प्रांत में लोक संगीत की दो धरायें मान हैं। पहली प्रकार का उन लोगों से जुड़ा हुआ है, जिन्हें का विशेष वर्ग कहा जा सकता है। प्रकार के लोकसंगीत को विशेष कलाकार विशेष लोगों के लिए करते हैं। राजा-महाराजाओं और सभाओं का मनोरंजन करने के लिए कलाकारों द्वारा प्रस्तुत किया जाने संगीत आजकल लोक संगीत की ही गिना जाता है, लेकिन उसका

सीधा संबंध नहीं माना जा सकता। उसे हम विशिष्ट लोक संगीत मान सकते हैं।

जिसे सामान्य रूप से लोक संगीत कहा जा सकता है, वह यहां के जन-जीवन में मान्यताओं के साथ जुड़कर रच-बस गया है। समूहबद्ध होकर गाये जाने वाले लोक गीतों से लेकर गलियारों में गुंफित किये जाने वाले महलों तक यह संगीत व्याप्त है। ऐसा संगीत आंगन से लेकर गलियारे तक, खेतों से लेकर नगरों तक कहीं भी सुना और समझा जा सकता है। इसे हम राजस्थान का वास्तविक लोक-संगीत कह सकते हैं।

राजस्थान के लोकसंगीत के तीन हिस्से किये जा सकते हैं। नृत्य, गायन और वादन। ये तीनों एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। जहां वादन होता, वहां गायन होता है। जहां गायन होता है वहां पांव स्वतः ही थिरकने लगते हैं। नृत्य स्वतः ही प्रारंभ हो जाता है। संगीत की पहली आवश्यकता वादन बन गयी है। वादन में भी तो दो प्रकार के वाद्यों का प्रयोग होता है। ताल वाद्य और स्वर वाद्य। स्वर वाद्यों में कई प्रकार के वाद्ययंत्रों को प्रयोग में लाया जाता है। तार से स्वर पैदा करने वाले वाद्ययंत्र, वायु से स्वर पैदा करने वाले वाद्ययंत्र। इस प्रांत में तार और वायु दोनों से संचालित स्वर वाद्ययंत्रों का प्रचलन लोक संगीत में है। सारंगी, कमायचा, रावण-हत्था, जंतर, भपंग, इकतारा आदि को तार-वाद्ययंत्र की श्रेणी में उच्च-स्थान प्राप्त है। अलगोजा, मसक, सतारा, वंसी, नड, वांकिया, नफीरी, शहनाई, नागफनी आदि को वायु द्वारा संचालित प्रमुख वाद्ययंत्र माना जा सकता है। इन

धन्नालाल द्वारा अलगोजावादन
[छाया : ओमेंद्र]

वाद्य यंत्रों में केवल कुछ वाद्ययंत्र ही ऐसे हैं, जो विशिष्ट वर्ग के लोक संगीत में प्रयुक्त होते हैं। शेष वाद्ययंत्रों का प्रयोग आमतौर से संपूर्ण राजस्थानी जनजीवन में व्याप्त हैं। इनका चित्रण चित्रकारों ने अपने चित्रों में किया है। इनका वर्णन गाथाकारों ने अपनी गाथाओं में किया है। इनकी महिमा कवियों ने गा-गाकर इन्हें लोकगीतों में ढाल दिया है।

राजस्थानी लोक संगीत में वायु से संचालित लोकवाद्यों का प्रयोग बहुतायत से होता है। स्वर की साधना में ये स्वर-यंत्र सबसे बड़े सहयोगी होते हैं। वंसी, मुरली या बांसुरी का स्थान इनमें सबसे पहले आता है। आदिवासियों में बांसुरी ही सबसे लोकप्रिय है। वन-वन विचरते भीलों को अपनी कमर में बांसुरी बांध या अपने अधरों की शैया पर उसे लिटाकर उसमें स्वर भरते हुए सहज ही देखा जा सकता है। आदिवासियों के लिए तीर-कमान के बाद सबसे अधिक महत्व बांसुरी का ही होता है। बांस को अपने आकार के अनुसार काटकर उसकी बांसुरी बना लेना और फिर अपनी मस्ती में उसे टेरते जाना, यही उनका जीवन है। गिरासियों और सहरियाओं में बांसुरी का बहुत प्रचलन है। अलवर के मेव जाति के लोगों की प्रिय पेली छोटी बांसुरी का स्वर सुनने पर बार-बार उसे सुनने को जी करता रहता है। कोई आदिवासी किशोर जब अपनी धुन में ज़माने की परवाह किये बगैर बांसी टेरता रहता है तो त्रि
उससे अधिक माधुर्य उसे कहीं नहीं
जा सकता है।

बांसुरी के ही विविध स्वरूपों का
लन राजस्थान में स्थान-स्थान पर
जा सकता है। कहीं सतारा, कहीं
अलगोजा। सतारा और
बांसुरी का युगल होता है। एक
और एक बड़ी बांसुरी अधरों के
दबी हो और उनमें एक साथ स्वर
जाये तो समझिये कि सतारा बजाय
रहा है। इसमें मुंह से हवा फूंकी
है और छोटी-बड़ी बांसुरी को
दूर-दूर रखकर दायें और बायें हा
उन्हें पकड़ लिया जाता है। दोनों
बांसुरियों में चार-चार छेद स्वर
के लिए होते हैं। लोक-संसार में
बहुत लोकप्रिय है।

अलगोजा सतारा जैसा ही
युगल है, लेकिन इसमें दोनों
का आकार समान होता है। दोनों
मूल स्वर भी एक ही होता है।
दोनों बांसुरियों को बनाते समय
सावधानी से काम लेना होता है।
बनायी गयी इन दो बांसुरियों को
सीधा रखकर सामान्यतया एक
सटा लिया जाता है। कुछ लोग
दोनों हाथों की अंगुलियों को दोनों
रियों पर चलाते रहते हैं। कुछ
और बायें हाथ की अंगलियों
माल अलग-अलग बांसुरियों

संचालन के लिए करते हैं। किसानों को अलगोजा बहुत प्रिय है। अरावली पर्वत के दक्षिण पूर्व में इसका प्रचलन बहुत है। कोटा, बूंदी, झालावाड़, टोंक, सवाई माधोपुर जिलों में किसानों का यह बहुप्रिय साज है। वे इसे खेतों में जाते समय अपने साथ ले जाते हैं।

यहां यह कहना उपयुक्त होगा कि बांसुरियों के युग का प्रचलन अधिक होते हुए भी ऐसे वायुवाद्य यंत्रों का प्रचलन कम नहीं है, जिनमें एक साज से स्वर का संचालन होता है। नड नामक वाद्ययंत्र बजाने वाले बहुत कम लोग हैं। यही इसकी विशेषता है। करणा भील नामक प्रसिद्ध कलाकार द्वारा बजाया जाने वाला नड पांच फुट की वांसुरी माना जा सकता है। मुंह में भीतर की ओर रखकर दोनों हाथों से नड के छेदों पर स्वर संचालन किया जाता है। चार छेदों वाले नड में हवा भरते समय अपने कंठ में ही कलाकार को वह गीत गाना पड़ता है, जिसका वादन नड पर किया जाता हैं। नफीरी और शहनाई, वांसुरी जाति के दो साज हैं। देखने में एक जैसे लगते हैं। लेकिन बजाने में दोनों अलग-अलग हैं। नफीरी अपेक्षाकृत कम शक्ति से हवा फूंकने से ही काम चल सकता है। शहनाई में अधिक शक्ति से हवा फूंकनी होती है। दोनों का ही प्रयोग ढोली, भांड, लंगा, बारहट, आदि करते हैं।

वीरप्रसूता राजस्थान में बांकिया नामक ऐसा स्वर वाद्ययंत्र भी बहुत प्रिय है, जिसकी आवाज़ से युद्ध या जागरण के स्वर निकलते हैं। बांकिया नामक यंत्र का प्रयोग राजमहलों, दुर्ग प्राचीरों में हुआ करता था। शहनाई और सुरनाई जहां माधुर्य घोलती हैं, वहीं बांकिया जागरण का शंख फूंकता है। राजस्थान में 'शंख' का प्रयोग भी इसी प्रकार प्रासादों या देवालयों में होता है।

फूंक से बजाये जाने वाले वाद्ययंत्रों में एक विशिष्ट वर्ग भी होता है। इस वर्ग के स्वरयंत्रों में सीधे-सीधे फूंक नहीं भरी जाती। इसमें फूंक मारने वाली नली और स्वरनली मध्य कोई ऐसा रिक्त स्थान होता है, जहां हवा को एकत्रित किया जा सके। ऐसा करने से स्वर भंग नहीं होता। मुंह में एक नली लगाकर उसके माध्यम से रिक्त स्थान तक हवा पहुंचायी जाती है। उस रिक्त स्थान से जुड़ी नलिकाओं से वह हवा जब निकलती है, तो उसे उसी स्थान पर संचालित करके मनचाहे स्वर पैदा कर लिये जाते हैं। दोनों हाथों की अंगुलियों का उपयोग स्वर संचालन में होता है। कालबेंलिया जाति द्वारा बजायी जाने वाली पुंगी और लंगा लोक जाति द्वारा बजाया जाने वाला मुरला इसी कोटि में आते हैं। इनमें मुंह से फूंक मारकर तुंबी से बने एक मध्य स्थान पर हवा एकत्रित कर ली जाती है। नीचे लगी दो नलिकाओं से उसे निकाल कर उसी स्थान पर स्वर का संचालन कर

लिया जाता है। सपेरों द्वारा सांपों को वश में करने के लिए पुंगी का इस्तेमाल किया जाता है। पुंगी और मुरला प्राय: उसी प्रकार समान रहते हैं, जिस प्रकार नफीरी और शहनाई। लेकिन दोनों में मामूली अंतर है।

इसी वर्ग में एक और प्रकार है। इस प्रकार के यंत्रों में तुंबे के स्थान पर थैले का प्रयोग होता है। थैला चमड़े का भी हो सकता है और ठोस कपड़े का भी हो सकता है। इस प्रकार के साज में मशक का नाम आता है। नाथ और भोपा लोग मशक का प्रयोग करते हैं। बकरे की खाल से तैयार की गयी मशक के ऊपरी भाग में एक बांस की नली लगी होती है, जिसके द्वारा हवा भरी जाती है। नीचे की ओर दो नलिकाओं का प्रयोग हवा को निकालकर मनचाहा स्वर पैदा करने के लिए किया जाता है।

राजस्थान के लोकसंगीत में ताल वाद्ययंत्रों का साम्राज्य माना जाता है। ऐसा समझा जाता है कि राजस्थान का लोकसंगीत यहां की लयकारी से निर्धारित होता है। लेकिन इसका आशय यह कदापि नहीं है कि स्वरयंत्रों का राजस्थान के लोकसंगीत में कोई विशेष महत्व नहीं। स्वर-वाद्ययंत्रों के प्रयोग के बिना किसी समाज का कोई आयोजन संपन्न होते नहीं देखा जा सकता। जितना महत्व नक्कारे का है, उससे कहीं अधिक शहनाई का है। जितनी तरजीह ढोल को दी जाती है, उतनी ही सुरनाई को मिलती है। जि
वांछना ढोलक की होती है उतनी ही अ
गोजों की भी होती है। स्वर-सा
सबसे महत्वपूर्ण अंग है, स्वरवाद्य। इ
महत्व को कम नहीं किया जा सकता।

लेकिन अब धीरे-धीरे प्राचीन वा
यंत्रों का लोप होने लगा है। मुरला, श
नाई, अलगोजा बजाने वाले लोग क
होते जा रहे हैं। इन्हें बनाने वालों
भी कमी आयी है। रोटी और रोजी
चिंता ने मनुष्य के मन से संगीत को छी
का जो चक्र चलाया है, उसका सीधा
प्रभाव राजस्थान के लोक-संगीत पर
हुआ है। कला अब कला के लिए
रही। कला का संबंध पेट से भी हो ग
प्राचीन समाज की रचना ऐसी थी
कलाकारों को अपने बारे में और अ
परिवार के बारे में चिंता करने की आ
श्यकता नहीं होती थी। अब होती है
उन्हें राज्य का वह संरक्षण नहीं मि
जो मिलता था। उमंग को छीन लि
बाहरी प्रभाव ने। सिर्फ गिनती मात्र
गयी है। गिनती भी शायद कुछ
तक और चलेगी। फिर हमारी
वाली पीढ़ियां किसी संग्रहालय में
इन साजों को देखकर ही संतोष
करेंगी।

उनके साथ में एक छपा हुआ
होगा। कागज पर अंकित होगा, 'रा
में स्वर संचालन के लिए विविध ता
यंत्र प्रयोग में लाये जाते थे। उन्हें

बंसी, मुरला, नड, नफीरी, शहनाई, मशक आदि नामों से जाना जाता है।' उनी परचे पर छपे होंगे कुछ चित्र। अलगोजे के, बांकियों के।

क्या हम सचमुच संपन्न होते जा रहे हैं? यह सवाल सबके सामने होगा। राजस्थान के संपन्न लोकनाट्य जिस प्रकार विलुप्त होते चले गये, उसी प्रकार विलुप्त होती जा रही हैं, राजस्थानी स्वरवाद्य यंत्रों की जातियां-प्रजातियां।

–भंवर भवन, कर्बला, लाड़पुरा,
कोटा-३२४००६, राजस्थान

□

शंख और घंटा ध्वनि से रोगों का नाश

सन १९२८ ई. में बर्लिन युनिवर्सिटी ने शंख ध्वनि का अनुसंधान करके यह सिद्ध कर दिया है कि शंख ध्वनि की शब्द-लहरें बैक्टीरिया नामक कीटाणुओं को नष्ट करने के लिए उत्तम और सस्ती औषधि है। यह प्रति सेकंड सत्ताइस घन-फुट वायु शक्ति के जोर से बजाया हुआ शंख १२०० फीट दूरी के बैक्टीरिया कीटाणुओं को नष्ट कर डालता है और २६०० फुट की दूरी के जंतु इस ध्वनि से मूर्च्छित हो जाते हैं।

बैक्टीरिया के अलावा इससे हैजा, गर्दनतोड़ ज्वर, मलेरिया के कीटाणु भी नष्ट हो जाते हैं और ध्वनि विस्तारक स्थान के पास का स्थान नि:संदेह कीटाणु-रहित हो जाता है। मिर्गी, मूर्च्छा, कंठमाला और कोढ़ के रोगियों के अंदर शंख ध्वनि की प्रतिक्रिया होती है और वह रोगनाशक होती है। शिकागो के डा. डी. ब्राइन ने तेरह सौ बहरे रोगियों को शंख ध्वनि के माध्यम से अब तक ठीक किया है।

अफ्रीका के निवासी घंटा को ही बजाकर जहरीले सर्प कें काटे हुए मनुष्य को ठीक करने की प्रतिक्रिया को पता नहीं कब से आज तक करते चले आ रहे हैं। ऐसा पता चला है कि मास्को सैनीटोरियम में घंटा ध्वनि से तपेदिक रोग को ठीक करने का सफल प्रयोग चल रहा है। सन १९१६ में बर्मिंघम में एक मुकदमा चल रहा था–एक तपेदिक के रोगी ने गिरजाघर में बजने वाले घंटे के संबंध में यह दावा अदालत में किया था कि इसकी ध्वनि के कारण मेरा स्वास्थ्य निरंतर गिरता जा रहा है, तथा इससे मुझे काफी शारीरिक क्षति होती है।

इस बात ही पर अदालत ने तीन प्रमुख वैज्ञानिकों को घंटा-ध्वनि की जांच के लिए नियुक्त किया। यह परीक्षण लगातार सात महीने तक चला और अंत में वैज्ञानिक बोर्ड ने यह घोषित किया कि घंटा की ध्वनि से तपेदिक रोग ठीक होता है, न कि इससे नुकसान। साथ ही तपेदिक के अलावा इससे कई शारीरिक कष्ट भी दूर होते हैं तथा मानसिक उत्कर्ष होता है। **–दिनेश दर्पण**

□

गीत

□

डॉ. अजय प्रसून

रात की तनहाइयों में ऊबना,
दर्द की गहराइयों में डूबना!
अब हमें भाता नहीं है क्या करें!
मन कभी गाता नहीं है क्या करें!

जो भरम टूटे सुहानी शाम के,
अब रहे अपने भला किस काम के!
तोड़ डाले जो कभी हमने रचे,
इंद्रधनु कितने तुम्हारे नाम के!
देखना एकांत क्षण में आईना,
और करना सुधि-पलों का सामना!
अब हमें भाता नहीं है क्या करें!
जख्म भर पाता नहीं है क्या करें!

बह रही कोई विचारों की नदी,
संपदा मन की तुम्हीं को सौंप दी!
जो हमारा भाग्य था हमको मिला,
काम आ पायी नहीं नेकी-बदी!
देह का पल-पल चटककर टूटना,
और अपने आपसे ही रूठना!
अब हमें भाता नहीं है क्या करें!
प्रीति से नाता नहीं है क्या करें!

हो सके टूटा हुआ मन जोड़ दो,
जिंदगी के रास्तों को मोड़ दो!
जो कभी धुंधला गये दागों से हैं
मीत ऐसे दर्पणों को तोड़ दो!
चांदनी के रूप का धन आंकना,
पुष्प जूड़े में नियति के टांकना!
अब हमें भाता नहीं है क्या करें!
कोई बहलाता नहीं है क्या करें!

—७७, सरोज निकेतन, हेल्थ स्क्वायर,
लखनऊ-२२६००३, उ. प्र.

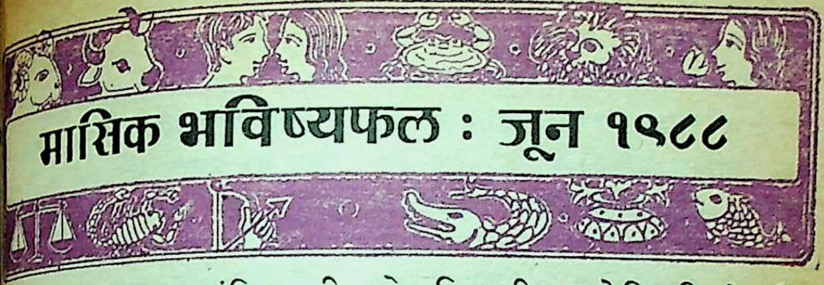

मासिक भविष्यफल : जून १९८८

□ पंडित वी. के. तिवारी, ज्योतिषशिरोमणि

मेष : (१४ अप्रैल-१३ मई)

नये व्यक्तियों से परिचय होगा । लाभ बढ़ेगा । आर्थिक सुदृढ़ता रहेगी । भूमि व स्थायी संपत्ति से लाभ का अवसर बनेगा। सफलता और श्री की वृद्धि होगी । मुकदमे में विजय प्राप्त होगी । राजनीति में उत्कर्ष होगा ।

वृष : (१४ मई–१४ जून)

बुध ग्रह मन में आशा व प्रसन्नता का संचार करेगा । धन लाभ यथेष्ठ रहेगा । वाक्शक्ति का प्रभुत्व स्थापित होगा । स्वास्थ्य के प्रति सतर्क रहें । गृह से विलगाव या अन्यत्र जाने का अवसर बनेगा । नौकरी में विघ्न उत्पन्न होंगे । पत्रकार व कलाकार वर्ग के लिए कष्टदायी समय रहेगा।

मिथुन : (१५ जून–१६ जुलाई)

यह माह विवाद एवं विरोध के योग बना है। वाक्शक्ति पर संयम व नियंत्रण रखने से सुख-शांति रहेगी । संबंधियों एवं निकटतम व्यक्तियों से लाभ की अपेक्षा न करें। राजनीति एवं व्यवसाय में भाग्य को धक्का लग सकता है । आर्थिक निर्बलता प्रतीत होगी । रोजगार में समस्याएं बढ़ेंगी । आपरेशन आदि के लिए अच्छा समय नहीं है । विरोधी सक्रिय रहेंगे ।

कर्क : (१७ जुलाई–१५ अगस्त)

१५ मई तक यश, विजय, लाभ पर नियंत्रण एवं विरोधियों पर विजय की स्थिति रहेगी परंतु इसके उपरांत मासांत तक मन संतप्त रहेगा । विरोधी वर्ग प्रभावी सिद्ध होगा । मनमुटाव होगा, कार्य में निष्फलता बढ़ेगी । रोग या चोट से शरीर पीड़ित होगा । नेत्र रोग बढ़ सकता है । मानसिक कष्ट एवं मनोबल का ह्रास होगा ।

सिंह : (१६ अगस्त–१६ सितंबर)

समूचे माह की अवधि में सुखद हर्षदायक एवं लाभप्रद संयोगों का आधिक्य रहेगा । पत्नी से क्लेश एवं उसके स्वास्थ्य की चिंता होगी । स्वजनों से वांछित सहयोग अप्राप्त रहेगा । परिवार में मेहमानों का आगमन होगा । संतान-पक्ष से पूर्ण स्नेह मिलेगा । यश बढ़ेगा । नौकरी में अधि-

कार, पद, व उच्चवर्ग से प्रशंसा मिलेगी। रोमांस में सफलता हस्तगत होगी। पिता से लाभ, व्यवसाय में लाभ एवं राजनीति में उत्कर्ष होगा। पत्रकार व शिक्षक वर्ग का मनोबल बढ़ेगा।

कन्या : (१७ सितंबर–१६ अक्तूबर)

११ मई तक पूर्ववत् स्थितियों से ही दो-चार होना पड़ेगा। इसके उपरांत गौरव एवं प्रताप में वृद्धि होगी। रोजगार में श्रेष्ठ स्थिति रहेगी। राज्याधिकारी एवं प्रतिष्ठित वर्ग से मित्रता बढ़ेगी। रुके हुए प्रकरण निपटेंगे। प्रत्येक क्षेत्र में अल्प प्रयत्न से ही वांछित सफलता सुलभ होगी। पद व अधिकार वृद्धि एवं अनुकूल स्थान पर स्थानांतरण होगा। पत्रकार एवं लेखक वर्ग यशस्वी होगा।

तुला : (१७ अक्तूबर–१५ नवंबर)

इस माह यात्रा का विचार पूर्ण होना संदिग्ध है। व्यवसाय में लाभ अपेक्षा से कम होगा। निकटतम व्यक्तियों से सजग रहें। उच्चवर्ग की कुदृष्टि रहेगी। कार्यक्षमता प्रभावित होगी। पत्नी से कलह का वातावरण सृजित होगा। राजनीति में विरोधी त्रस्त रखेंगे। संतान के स्वास्थ्य के प्रति सजग रहें। व्यय बढ़ेगा। अपयश से बचें।

वृश्चिक : (१६ नवंबर–१५ दिसंबर)

यह माह १२ जून के उपरांत आपके प्रयास और संघर्ष में सफलतादायी होगा। आरोग्यता बढ़ेगी। नौकरी में प्रभाव स्थापित होगा। व्यक्तिगत प्रभाव बढ़ेगा। मन व शरीर स्वस्थ रहेंगे। अग्नि व से सतर्कता बरतें। लेखक, संगीतकार पत्रकारों को विशेष शुभ प्रभाव मिलें सर्विस व राजनीति में रत व्यक्तियों लिए शुभ प्रभाव रहेंगे।

धनु : (१६ दिसंबर–१३ जनवरी)

मानसिक व शारीरिक सुख की अ भूति मिलेगी। व्यवसाय में धन-लाभ योग है। यात्रा सोद्देश्य व सुविधाजन रहेगी। विवाहित जीवन में सुख का वा वरण रहेगा। संतान पक्ष से सुख मिले अग्नि, अस्त्र, ज्वर से कष्ट संभव है। कार्य व निर्णय लेना लाभदायी रहे आर्थिक क्षेत्र में अनुकूलता बढ़ेगी। रो गार में सामान्य स्थिति रहेगी। लेख शिक्षक वर्ग के लिए समय अच्छा है।

मकर : (१४ जनवरी–१३ फरवरी)

धन के भारी व्यय से चिंता हो मांगलिक कार्य संपन्न होंगे। स्त्री या को कष्ट रहेगा। अपयश एवं मान के प्रति सजगता उपयोगी सिद्ध हो परिवार के सदस्यों से सहयोग मिले मेहमानों का आगमन होगा। स्थायी में वृद्धि होगी। मनोबल बढ़ेगा। ले एवं वकील वर्ग के लिए वक्त श्रेष्ठ है राजनीतिज्ञों एवं प्रशासकीय अधिका के लिए प्रतिकूल है।

कुंभ : (१५ फरवरी–१४ मार्च)

माह का प्रारंभिक चरण धन व की हानि का रहेगा। मित्रों व रिश्ते से विवाद होगा। वैसे पूरे माह में

वांछित सफलता मिलेगी । व्यक्तिगत प्रभाव बढ़ेगा । भूमि व मकान से लाभ होगा । राजनीतिज्ञों के लिए उत्कर्ष का समय सिद्ध होगा । व्यवसायी वर्ग को लाभ होगा । लेखक व पत्रकार वर्ग थोड़ा पीड़ित रहेगा ।

मीन: (१५ मार्च–१३ अप्रैल)

राजनीतिज्ञों एवं वकीलों के लिए श्रेष्ठ समय है । विद्यार्थियों की उन्नति होगी । संबंधियों से आर्थिक सहयोग व उपहार आदि मिलेगा । माह के उत्तरार्ध में विरोध, चिंता, अस्वस्थता, लाभ में कमी एवं व्यय वृद्धि का समय सिद्ध होगा । व्यवसाय में लाभ में कमी होगी एवं धन विलंब से प्राप्त होगा ।

व्रत एवं त्योहार

१० जून–एकादशी (कमला) व्रत
११ जून–प्रदोष व्रत, अधिक मास समापन
२४ जून–गंगादशमी
२६ जून–निर्जला एकादशी व्रत
२७ जून–प्रदोष व्रत
२८ जून–वट सावित्री व्रत

–देवलोक कालोनी (सी. टी. ओ.),
बेरागढ़, भोपाल, म. प्र.

□

उदारता हो तो ऐसी

लाला संतराम रेशम का कारोबार करते थे। रेशम साफ करने में जो कचरा निकलता उसे जमा कर वह छोटे दुकानदारों को बेच दिया करते थे । एक बूढ़ा दुकानदार लालाजी का काफी समय से ग्राहक था । लालाजी उसकी ईमानदारी की काफी प्रशंसा करते थे एवं उससे काफी प्रसन्न थे ।

एक दिन किसी ने बताया कि बूढ़ा पैसों की कमी की वजह से अपनी लड़की की शादी नहीं कर पा रहा है । लालाजी बोले-'मैं क्या कर सकता हूं, शादी के लिए तो काफी पैसा चाहिये । ५०-१०० रुपये की बात होती तो मैं दे देता ।'

कुछ दिन बाद बूढ़ा कचरा खरीदने आया, तो लालाजी ने कहा–'कचरा तो नहीं है, पर हमारी रेशम की गांठ चूहों ने कुतर दी है । चाहो तो इसे ले जाओ ।'

बूढ़े ने गांठ देखी । मोल-भाव में सौदा हजार रुपयों में निश्चित हो गया । घर आकर बूढ़े ने गांठ खोली तो देखा ऊपर के सिर्फ दो-तीन बंडल कटे हैं, बाकी पूरी की पूरी गांठ ठीक है । वह लालाजी के पास दौड़ता हुआ गया, और उन्हें यह बात बता दी ।

लालाजी ने कहा–'अब जो है वह तुम्हारा है । माल खराब निकलता तो मैं क्या करता ?'

बूढ़ा लालाजी को दुआएं देता चला गया । उस गांठ में उसे हजारों का लाभ हुआ, जिससे उसने अपनी लड़की की शादी काफी धूमधाम से की । यह किसी को पता नहीं चला कि गांठ पर कैंची लालाजी ने ही चलायी थी । **–अक्षयकुमार जैन**

□

भारतीय संस्कृति में

पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा

☐ शुकदेव प्र

प्राकृतिक अनुराग और प्रकृति संरक्षण की चिरंतन धारा है भारतीय संस्कृति। प्रकृति अनुराग हमारी पुरातन संस्कृति में इस कदर रचा-बसा हुआ है, इस कदर समाया हुआ है कि हम प्रकृति से अपने जुदा अस्तित्व की कल्पना भी नहीं कर सकते। सच भी है, हम प्रकृति के अविभाज्य अंग हैं, हम प्रकृति से और प्रकृति हमसे जुदा रह-सह नहीं सकते।

भारतीय मनीषियों ने समूची प्रकृति ही क्या, सभी प्राकृतिक शक्तियों को देवता स्वरूप माना। ऊर्जा के अपरिमित स्रोत को देवता माना "सूर्यदेवो भव"। वस्तुतः सूर्य हमारा यानी इस ग्रह का जीवन दाता है। बिना उसके वनस्पतियों का और परोक्ष रूप से अन्य जीवों का अस्तित्व असंभव है। तभी तो वैदिक ऋषि कामना करता है कि सूर्य से कभी हमारा वियोग न हो—

नः सूर्यस्त संदृशे प्रा युयोधाः।

(ऋक० २।३३।१)

सूर्य को स्थावर-जंगम की आत्मा कहा गया है। यथा—

सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च

(ऋक० १।११५।१)

उपनिषदों में सूर्य को प्राण की दी गई है——

आदित्यो ह वै प्राणः

(प्रश्न उप. १।

वस्तुतः सूर्य हम में, सभी प्राणि वनस्पतियों में जीवन का संचार करता सागरों की गोद में आज के अरबों पूर्व जीवन का जो आदि रूप पनपा, सूर्य रश्मियों से ही जीवन संचारित तब से निरंतर यह प्रक्रिया जारी है वनस्पतियां सूर्य रश्मियों से ऊर्जा अपना आहार तैयार करती हैं और से अन्य पराश्रयी जीवजन्तु अपना पोषण करते हैं।

ऐसे जीवन दाता के रूप में दैवी शक्ति के प्रतीक रूप की भारतीय मनीषियों ने की तो वह समीचीन थी। हमारे शाश्वत मूल्यों संवाहक आज भी प्रयास यही कि घर का द्वार पूर्वाभिमुख या उत्त मुख हो ताकि सूर्य का प्रकाश संपूर्ण रूप में वहाँ पहुँच सके।

प्राङ्मुखमदङ्मुखं वाऽभिमुखतीर्थं कारयेत्

(चरकः सू. अ. १४।

प्राग्द्वारमुदग्द्वारं वा सूतिकागारं कारयेत्

(चरक: शा० अ० ८।३३)

उपनिषदों में वायु में दैवीय शक्ति की अवधारणा निहित है। वायु ही प्राण बनकर शरीर में वास करता है। यथा–

वायुर्हं वै प्राणी भूत्वा शरीरमाविशत्

वेदों में वायु को भेषज गुणों से युक्त माना गया है–

आ वात वाहि भेषचं विवात वाहि यद्रपः।
त्वं हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयसे॥

(ऋक० १३७।३)

अर्थात्–हे वायु! अपनी औषधि ले आओ और यहाँ से सब दोष दूर करो; क्योंकि तुम ही सब औषधियों से युक्त हो।

भारतीय संस्कृति में जल को भी देवता माना गया है। सरिताओं को जीवन-दायिनी कहा गया है, कदाचित् इसी नाते आदि संस्कृतियां सरिताओं के किनारे जन्मीं और बसीं और वहीं से विस्तार पाती गयीं। वर्जनाहीन समाज और निरंतर पतनोन्मुखी जीवन शैली में भले ही मूल्य बदल गये हों पर हमारी पुरातन संस्कृति में सरिताओं, तालाबों, पोखरों में मल-मूत्र विसर्जन की तो कल्पना भी नहीं की जा सकती थी।

नाप्सु मूत्रं पुरीषं वा ष्टीवनं समुत्सृजेत्।
अमेध्यलिप्तमन्यद्वा लोहितं वा विषाणिवा॥

(मनुस्मृति ४–५६)

अर्थात्–पानी में मल-मूत्र, थूक अथवा अन्य दूषित पदार्थ, रक्त या विष का विसर्जन न करें।

इतना ही नहीं, वैदिक ऋषि पवित्र जल की उपलब्धता की कामना करता है। यथा –

शुद्धा न आपस्तन्वे क्षरन्तु...।

(अथर्व०, भूमि-सूक्त, १२।१।३०)

अर्थात्–हमारे शरीर के लिए शुद्ध जल प्रवाहित होते रहें।

सरोवरों में नहाने से पूर्व परंपरा यह थी कि एक कंकड़ी मारकर सो रही होती गंगा को जगाया जाता था, फिर उनका चरण स्पर्श कर जल स्रोत में शारीरिक आचमन किया जाता था। हमारी पुरातन संस्कृति और भारतीय वाङ्मय का यह एक ऐसा कोमल तंतु है, जिसे सोचने-समझने और उस पर विचार-मनन करने की हमारी सोच मर गयी है, हमारी संवेदन-

शीलता को इस यांत्रिकता ने लील लिया है और आज हम अपनी थाती में निहित शुभ संकल्पों के कोमल तंतु को समझ पाने में अपने को असमर्थ पाते है। इस तकनीकी संस्कृति (टेक्नो-कल्चर) की कैसी त्रासदी है यह?

और इस तकनीकी युग का तोहफा यह है कि आज गंगा समेत सारी नदियाँ दूषित हो चुकी हैं। गंगा के बारे में हमारी अवधारणा रही है कि उसके दर्शन मात्र में मुक्ति मिल जाती है –

गंगे ! तव दर्शनात् मुक्तिः

पर आज मूल्य और जीवन शैली में इतना अभूतपूर्व परिवर्तन हो गया है कि राजा भगीरथ के पुरखों का कलुष धोने वाली गंगा शहरों का मल और फैक्ट्रियों की गंद ढोते-ढोते स्वयं इस कदर दूषित हो गयी है कि आज वह पीने योग्य नहीं रही, नाना बीमारियों का घर बन चुकी है। विकास की यह कैसी धारा है, जिसने हमारी जीवनदायिनी सरिताओं की पवित्रता की अक्षुण्णता भंग कर दी है?

हमारी भारतीय संस्कृति में वृक्षों को भी देवता माना गया है। हमारे महान आयुर्विज्ञानियों की धारणा है कि संसार में ऐसी कोई वनस्पति नहीं जो अभैषज्य हो। संभवतः इसी नाते वृक्षों को वन्दनीय कहा गया है। यथा–

धत्तेभरं कुसुमपत्रफलावलीनां धर्मव्यथां
वहति शीत भवा रुजश्च ।
यो देहमर्पयति चान्यसुखस्य हेतोस्तस्मै
वदान्यु गुरवे तरवे नमोऽस्तु ।

(भामिनी विला

अर्थात्–'जो वृक्ष फूल-पत्ते और फ के बोझ को उठाये हुए धूप की तपन और शीत की पीड़ा सहन करता है तथा सुख के लिए अपना शरीर अर्पित कर है, उस वन्दनीय श्रेष्ठ तरु को नम है।' कैसी उदात्त भावना है वृक्षों के अनुराग की। इतना ही नहीं, मत्स्य पु में तो यहाँ तक कहा गया है-

दश कूप-समावापी, दशवापी-समोह्रदः
दश-ह्रद-समः पुत्रो, दश पुत्रसमो द्रुमः।

अर्थात 'दस कुओं के बराबर एक बावड़ी है, दस बावड़ियों के बराबर तालाब है, दस तालाबों के बराबर एक है और दस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष है।'

वृक्षों के प्रति ऐसे अप्रतिम अनुराग छाया भी किसी अन्य देश की संस्कृति सर्वथा दुर्लभ है।

जहां वृक्षों को पुत्र से भी उच्च स्थ प्राप्त है, जहाँ वृक्षों की पूजा की जाती है, वहाँ उनके काटे जाने की बात भी अक नीय है। परंतु आज, मूल्य बदल गये हैं। हम अपनी सांस्कृतिक वाणी सुन पाने असमर्थ हैं। और आज इसी का दु है कि प्रकृति को लूटने-खसोटने की मची है।

हमारी प्राचीन संस्कृति प्रकृति में स्वरूप का दर्शन पाती थी, उसकी अ करती थी, प्रकृति को माता की सं गयी है, पर आज के मूल्यविहीन अं

नी में हम अपनी पहचान भूल गये हैं, मूल्यों की रक्षा का तो प्रश्न ही नहीं और इसी का दुष्परिणाम यह है कि आज मानव और प्रकृति के रिश्ते नापाक हो गये हैं और अपने ही कृत्यों से हमने अपने पर्यावरण को बिगाड़ लिया है जो आज जीने लायक नहीं रह गया है।

प्राकृतिक शक्तियों में देवी स्वरूप की अवधारणा मात्र यह इंगित करती है कि हम इनकी रक्षा करें, इनसे अनुराग रखें और स्वस्थ, संतुलित जीवन यापन करें। लेकिन आज के इस वर्जनाहीन समाज में न तो जल शुद्ध रह गया है, न हवा। हवा में जहर, पानी में जहर, यहाँ तक कि वादियों, घाटियों में भी घुल गया है जहर।

भारतीय संस्कृति में निहित इन विन्दुओं को यदि नैतिकता-अनैतिकता की सीमा रेखा में न भी बाँधें तो भी ये प्रकृति और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की संवाहक प्रतीत होती हैं और भारतीय चिन्तन धारा की यही प्रमुख विशेषता रही है जो इस प्रदूषण अभिशप्त सदी में हमें अपने अतीत की याद बार-बार दिलाती है।

जिस संस्कृति में धरती और सभी संसाधन (रिसोंसेज) यथा जल, वनस्पतियां नैवेद्य की वस्तुएं समझी जाती रही हों, उसके नियामक निःसंदेह अत्यंत दूरदर्शी थे। उन्हें इस बात का भान था कि ये संसाधन हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए है, अपव्यय करने पर शीघ्र ही चुक जायेंगे, पर हमने इन्हें लूटा-खसोटा और आज प्राकृतिक संसाधनों के चुक जाने का आसन्न संकट हमारे सामने है।

भारतीय चिंतकों की मान्यता थी कि संसाधन हमारी जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति के उपादान हैं, लूट-खसोट की वस्तु नहीं। वस्तुतः यही शाश्वत तथ्य है पर हमारी लालसा ने पर्यावरण में भयानक रूप से कुछ ऐसी तबदीलियां कर दीं कि वे आज हमारी अस्तित्व रक्षा के लिए घातक बन बैठी हैं। परिणामस्वरूप हम प्रकृति से निरन्तर फटते चले गये और हमारी रगों में प्रकृति अनुराग की धड़कन ठप-सी हो गयी। आज के मशीनी युग का बच्चा यदि इन्द्रधनुषी छटा को देखकर यह समझ बैठता है कि यह किसी फर्म का विज्ञापनी नजारा है और यदि उसे यह भान नहीं है कि दूध गाय, भैंसों के थनों से निकलता है, वह समझता है कि यह फैक्ट्रियों में बनता है, तो उसमें उस बच्चे का क्या दोष? यह तो हमारी भूल है कि हमने उसे यह संस्कार ही नहीं दिये जिनसे वह प्रकृति से तादात्म्य स्थापित कर सके और प्राकृतिक वरदानों का आनंद ले सके। यदि आधुनिक पीढ़ी के जीवन में प्राकृतिक संस्पर्श नहीं है, तो यह उसकी कृत्रिम विरासत का कुफल है, इसमें उसका कोई दोष हमें नहीं प्रतीत होता।

यदि मशीनी क्रांति का नशा इसी कदर हम पर हावी रहा तो वह दिन दूर नहीं जब हम मानवीय सम्बन्धों और दिलों का रिश्ता भी भूल जायेंगे और पशुवत जीवन-

यापन करेंगे। प्रकृति से दूर, सुदूर और अपने ही ईजादों से अपने चारों ओर विनाश की कारा से हम आवृत होंगे।

प्रकृति को वश में करने की प्रवृत्ति और उसे लूटने-खसोटने का दुष्प्रभाव यह पड़ा है कि आज ऊर्जा के प्राकृतिक भंडार जबाब दे रहे हैं, वे हमारी औद्योगिक युग की बढ़ती मांगों को पूरा कर पाने में असमर्थ हो चुके हैं। धरती बांझ होती जा रही है, उसे कृत्रिम खादों का इंजेक्शन दे-देकर हम उपज ले पा रहे हैं। जीवों का विनाश हो रहा है, धरती के मानचित्र से कितनी जातियां-प्रजातियां लुप्त हो चुकी हैं, पर्यावरण में भयानक परिवर्तन हो चुके हैं जो संतुलित जीवन के सर्वथा अ हैं, फलस्वरूप बीमार, कमजोर उपज रही हैं।

बेहतर यही है कि भारतीय में निहित पवित्र अवधारणाओं के से धरती और उसके संसाधनों के का हम शुभ संकल्प लें और उनका पालन करें जिससे हरी-भरी धरती रह सके और परोक्ष रूप से मनु उसकी गोद में शरण पायें।

नयो मात्रे पृथिव्यै। नमो मात्रे पृथि

माता पृथ्वी को प्रणाम है। माता को प्रणाम है।

–३४ एलनगंज, इलाहाबाद,

□

क्रोध तो असुर है

एक संत अपने किसी शिष्य के पास बैठे बातें कर रहे थे कि तभी कोई वहां आकर संत के शिष्य को ऊलजलूल गालियां देने लगा। शिष्य कुछ देर तक उसकी गालियों को बर्दाश्त करता रहा, लेकिन फिर उसे भी गुस्सा आ गया जवाब में वह भी दुष्ट को अपशब्द और गालियां देने लगा। यह देखकर संत से उठकर जाने लगे।

शिष्य यह देखकर चौंका और बोला–'गुरुदेव, जब तक यह दुष्ट मुझे दे रहा था, तब तक तो आप बैठे रहे। लेकिन जब मैं इसकी गालियों का जवाब लगा तो आप उटकर क्यों चले जा रहे हैं?'

संत ने धीर-गंभीर स्वर में जवाब दिया–'भाई मेरे, जब तक तुम और समभाव से इसकी गालियों को सहन कर रहे थे, तब तक तो तुम्हारे देवता विराजता था। लेकिन जब तुम अपने पर संयम न रख सके और क्रोध में गालियां देने लगे तो तुम्हारे भीतर के देवता की जगह क्रोध आ बैठा। क्रोध तो है और असुरों का साथ छोड़ देना ही मैं बेहतर समझता हूं।'

संत के यह वचन सुनकर शिष्य ने अपनी गलती मानी और वह संत के गिर पड़ा।

–राजकु

□

एक संस्मरण

रामायण की शुरूआत

□ जी. एन. व्यास

इन दिनों दूरदर्शन का जो कार्यक्रम सबसे अधिक लोकप्रिय है—वह है रामानन्द सागर का रामायण। रविवार को प्रातः साढ़े नौ बजे घर-घर में, छोटे-बड़े स्त्री-पुरुष टकटकी लगाये टी. वी. की ओर अपलक दृष्टि से देखते रहते हैं। नन्हे-मुन्ने बच्चे तो अपनी कार्टून फिल्म का आनंद लेने के लिए नौ बजे से ही टी.वी. के पास एकत्रित हो जाते हैं, परंतु सवा-नौ के आस-पास उनके माता-पिता, गुरुजन और पड़ोसी भी आ मिलते हैं। सुनने में तो यहां तक आया है कि कुछ लोग टी.. वी. पर पुष्पहार चढ़ा देते हैं तथा उसके पास ही दीपक, धूप-वर्तिका तथा नैवेद्य भी रख देते हैं।

रामायण का निर्माण वास्तव में, हर दृष्टि से एक उत्कृष्ट सृजन है। उसमें दृश्य और श्रव्य का आदर्श संगम है। रामानन्द ने रामचरित्र को घर-घर पहुंचाया है। अब तो भारत के बाहर भी उनके कैसेट चले गये हैं, इसलिए हम कह सकते हैं कि उन्होंने रामकथा का अमृत विश्व के हर आंचल में बिखेर दिया है।

रविवार के इस प्रातःकालीन सत्संग में मुझे आज से पैंतीस वर्ष पहले की रविवारीय सभा का ध्यान आता रहता है, जब शायद मेरे अनुमान से इस रामायण का बीजारोपण हुआ था।

सन १९५० के सितंबर मास की बात है। कविवर पंडित नरेन्द्र शर्मा मुझे बम्बई के उपनगर दादर स्थित संगीतज्ञ अनिल विश्वास के निवास 'आशा–प्रदीप' में ले गये थे। फिल्म जगत की कुछ विभूतियां तीसरे पहर 'आशा-प्रदीप' में एकत्र होकर तीन बजे से पांच बजे तक आध्यात्मिक तथा मानसिक उन्नति के लिए सत्-साहित्य का पठन-पाठन् करती थीं। सर्वप्रथम एक घंटे तक तुलसीकृत रामायण का पाठ होता था उसके बाद एक घंटे तक किसी अन्य ग्रंथ का पठन। कोई भी सदस्य किसी ग्रंथ को ला सकता था, जो उसकी दृष्टि में उत्कृष्ट रचना हो। ग्रंथ के पाठ के बाद उस ग्रंथ पर विचार-विमर्श होता था।

मुझे वह दृश्य आज भी अच्छी तरह याद है। बड़े सोफे पर अनिल विश्वास, महेश कौल तथा पं. नरेन्द्र शर्मा बैठते थे। उनके दाईं ओर पंडित चंद्रशेखर पांडे का स्थान था। उनके पास छोटे सोफे पर सर-

दार सफदर 'आह' का स्थान था। दोनों ओर बिछे दीवान पर लोग चाहे जिस तरह बैठ जाते थे। अगर संख्या अधिक हुई तो फर्श पर बिछे गलीचे पर लोग अपनी सहूलियत के मुताबिक आसन ग्रहण कर लेते थे। गृहस्वामी अनिल विश्वास का अपने नौकर को सख्त आदेश था कि प्रत्येक आगंतुक को आते ही चाय की प्याली अवश्य दी जाये। अगर किसी की चाय के आने में देर होती तो नौकर को डांट देते थे। आगंतुकों में सर्वश्री कावीश, प्रेम धवन, के. एस. सेंगर तथा उनकी पत्नी सीमा सेंगर होते थे। यदा कदा अनिल विश्वास के अनुज स्वर्गीय सुनील विश्वास, स्वर्गीय पन्नालाल घोष, अभिनेता शेखर, यशोधरा काटजू भी इस सभा में सम्मिलित हो जाते थे।

रामानन्द सागर का कोई निश्चित स्थान नहीं था। वे जहां भी स्थान रिक्त देखते बैठ जाते थे। कभी कुर्सी पर या कभी दीवान पर गावतकिए के सहारे। वे अक्सर आंखें मूंदे सिर को दायें हाथ से थामे बैठे कथापान करते रहते थे। मैं उन दिनों अनुमान नहीं लगा सकता था कि वह शख्स जो आंखें मूंदे निर्विकार भाव से बैठा है, वह अपनी अंतर्दृष्टि से एक महान सृजन की कल्पना में संलग्न है।

उन दिनों श्रीमती आशा विश्वास फिल्म निर्माता बन गयी थीं। शेखर और निम्मी के जोड़े को लेकर वे 'बड़ी बहू' बना रही थीं। उन्हें अपने व्यावसायिक कार्यों की सलाह के लिए रामानन्द की आवश्यकता रहती थी। वे उन्हें दूसरे कमरे में, जहां उनकी टीम के सदस्य होते थे, आने का संकेत करते। वे उदासीन भाव से उठकर चल दे अनिल विश्वास को रामायण पाठ मध्य में किसी का उठकर जाना नहीं था। उनकी आंखों में आक्रोश उठता था।

पं. चंद्रशेखर पांडे अत्यंत मधुर से रामचरित मानस का पाठ किया करते थे। उनमें न कथावाचकों नाटकीय शैली थी और न किसी की राग-रागिनी। वे सरल, स्पष्ट मधुर स्वर से पाठ करते थे। उनकी सहज भक्तिभाव से प्लावित रहती श्रोतागणों को जो रस और आनंद उपलब्धि होती वह उनके मुख पर झलकती थी। हर महत्वपूर्ण स्थल डा. सफदर की 'वाह' होती तथा पं. शर्मा की 'क्या बात है', ज्ञान और के सूक्ष्मतम मार्मिक स्थल पर। प्रसंग समाप्ति पर जिनका भावोद्रेक होता वे प्रवचन आरंभ कर देते। अधिकतर शास्त्रीय विवेचन करते अनिल विश्वास की उंगलियां सोफे थिरकती रहती थीं मानो वे अदृश्य रागिनी को पकड़ने का कर रहे हैं। डाक्टर सफदर साहब नवी अंदाज से सिर हिलाकर कुछ को दुहराकर कहते–'जरा देखिये!

क्या खूब, गौर कीजिये ।' परंतु जब महेश कौल का भाव विस्फोट होता, तब सब शांत हो जाते थे ।

महेश कौल को आजकल के नौजवान शायद अधिक नहीं जानते । उनका हमारे फिल्म उद्योग को अद्वितीय योगदान है । भारतीय फिल्म के चित्रांकन, अभिनव और प्रस्तुति को उच्चतम मानदंड देने वाले वे अतुलनीय महापुरुष थे । उन्होंने हमारी फिल्म इंडस्ट्री को कितने ही श्रेष्ठ अभिनेता, अभिनेत्री तथा निर्देशक दिये हैं। वे निर्देशकों के निर्देशक थे । उनकी कला, मौलिकता और अंतर्दृष्टि का आज के सर्वश्रेष्ठ निर्देशक लोहा मानते हैं। उनकी अनेक फिल्में व्यावसायिक दृष्टि से सफल नहीं हुईं, परंतु उन फिल्मों ने भारतीय फिल्मों में नये मानदंड स्थापित किये। उन्होंने अपनी फिल्मों में उत्कृष्ट कला प्रस्तुत करके हिंदी फिल्मों को नूतन दिशा दी। उनकी असाधारण निर्देशन कला पर जब देशी या विदेशी आलोचक उनकी प्रेरणा, आदर्श या गुरु के विषय में पूछते तो उनका केवल एक ही उतर होता–मेरे आदर्श या गुरु हैं रामचरित मानस के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास । मैं अपनी कला में उनका अनुकरण करने का प्रयत्न करता हूं । मानस संसार की सर्वश्रेष्ठ फिल्म स्क्रिप्ट है ।'

महेश कौल हर प्रसंग के बाद अपनी ओजस्विनी वाणी में ही टीका करते । समस्त श्रोतागण मंत्रमुग्ध से उनकी ओर देखते रहते । साधारण प्रतीत होने वाला प्रसंग भी उनकी विवेचना में अत्यंत कलात्मक रूप लेकर उभर आता । वे फिल्मी निर्देशक के रूप में कहते–'देखिये ! यहां श्रीराम का क्लोज अप है । अब कैमरा उनके अधरों पर लगा है और अब किस खूबी से वह उनके राजीव नयन की ओर चल दिया । और अब देखिये वह किस तरह से लांगशॉट में बदल गया ।' वे हर पात्र के अभिनय को स्वयं करके दिखाते । उनके अधरों पर कभी श्रीराम की सम्मोहिनी मुस्कान होती, कभी लक्ष्मण का प्रलयकारी क्रोध उनकी भृकुटि पर थिरकता और कभी जानकी के सूक्ष्मगहन मनोभाव उनकी मुखाकृति पर तरंगित हो जाते ।

गोस्वामी तुलसीदास ने अनेक पुराणों और महाकाव्यों का अध्ययन करके उन्हें आत्मसात् कर लिया था। रामचरित मानस उनकी अपनी मौलिक कृति है। उसी प्रकार रामानंद सागर की यह अमूल्यकृति रामायण उनका अपना मौलिक व्यक्तिगत सृजन है । परंतु मुझे उनके संवाद, अभिव्यंजना और प्रस्तुति में उन समस्त प्रतिभाओं की झलक दिखायी देती है, जिन्होंने रामानंद सागर को इस महान सृजन के लिए दिव्य प्रेरणा दी । महेश कौल का अंतर्निहित व्यक्तित्व तो पल-पल प्रकट होता है । इस उत्कृष्ट रचना ने भारतीय संस्कृति का सच्चा स्वरूप प्रदर्शित किया है ।

—माधव निवास, चूनगर चौक,
बीकानेर, राजस्थान

☐

राष्ट्रकवि पंडित सोहनलाल द्विवेदी

☐ धनंजय अव

इस लेख के लेखक कवि धनंजय अवस्थी के काव्य-संग्रह 'शबरी' और 'मिसाइलों की छांव में' बहुत चर्चित हैं। लगभग तीन दशक तक वे राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी के निकट संपर्क में रहे हैं। वे कहते भी हैं कि स्व. द्विवेदीजी ने ही मेरे सुप्त कवि में चेतना का संचार किया है। वे इन दिनों उन्हीं पर एक संस्मरणात्मक पुस्तक की रचना में लगे हुए हैं। यहां प्रस्तुत है, उसके ही एक अंश की झलक। -संपादक

राष्ट्रीय चेतना की आजीवन काव्यांजलि तथा देश प्रेम की भाव-चित्रमाला के सृजन की एक लंबी यात्रा का नाम सोहनलाल द्विवेदी है। किशोर हृदय की ललक जैसी मन:स्थिति में कविता को स्वीकारा और उसकी साधना में अनवरत जीवन खपाने में रत राष्ट्रकवि पं. सोहनलाल द्विवेदी अपने स्थूल को विसर्जित करके अनंत की ओर चल पड़े—२९ फरवरी १९८८ को। महायात्रा के मंगलाचरण में स्मरण किया तो मुझ अभागे को—'धनंजय से कहना सब ठीक है चिंता न करें'। कितना मर्मभेदी उलाहना है एक अलमस्त चितेरे का।

पहली बार सन १९५४ में उनके संपर्क में आने का अवसर मिला और फिर यह अवसर बना रहा उनकी महायात्रा के समय तक। इतने लंबे समय तक उनके निकट रहने का सुयोग संभ और किसी को नहीं मिला जितना मु मिला है। इसीलिये तो उनके कवि उनकी भाव-धारा का, उनके चिंतन-म का, उनकी मन:स्थितियों के समझने भरपूर आनंद भी मुझे मिला है। द्विवे के साथ बाहर यात्राओं में भी जाने अनेक चाहे, अनचाहे अवसर मिले कभी कुछ उनसे चाहा तो यही उत्तर 'साथ रहो सब मिल जायेगा।' 'व्यक्ति विचार ही उसकी सृष्टि होते हैं। स्थितियों को अपने अनुकूल बनाने लिये दृढ़ संकल्प चाहिये, लगन औ निष्ठा।' उद्‌बोधन के वाक्य आज एक करके याद आ रहे हैं। लगता है अभी मेरे आसपास हैं, और आगे भी आसपास रहेंगे। सचमुच वह अल चितेरे जो हैं।

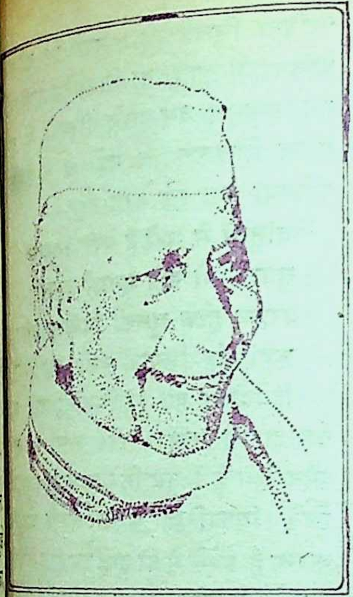

पंडित सोहनलाल द्विवेदी

भारत मां परतंत्रता की बेड़ियों में, जकड़ी थी उन्हें असह्य था वे कहते है :

वंदना के इन स्वरों में एक स्वर
मेरा मिला लो
हों जहां बलि शीश अगणित एक शिर
मेरा मिला लो ।

बलिदान के प्रति आस्थावान वही चितेरा समय की शिलापर एक चित्र यह भी गढ़ता है :

वंदना में मैं तुम्हें झुकने न दूंगा
वंदनीय तुम्हें बनाने आ रहा हूं ।

द्विवेदीजी की सशक्त तूलिका ने एक रंग भरी तसवीर बनायी गांधी की– जिसकी एक दृष्टि पड़ने पर कोटि-कोटि दृग उसके संकेत की प्रतीक्षा में उठे रह जाते थे –

हे कोटि रूप हे कोटि नाम
हे कोटि मूर्ति तुमको प्रणाम ।

राष्ट्रकवि सोहनलाल त्रिवेदी का कवि पराधीन भारत और स्वतंत्र भारत दोनों की सीमाओं से पूर्ण अभिषिक्त है । हां ! स्वतंत्रता के पूर्व कवि तरुण था, स्वतंत्रता के बाद प्रौढ़-प्रौढ़तम । स्वतंत्रता का संग्राम भी देखा, और आ रही स्वतंत्रता भी देखी । इन दोनों परिस्थितियों में अपने कवि कर्म को सार्थक करने में द्विवेदीजी ने कोई कसर नहीं की यह उनके भरवी, पूजा गीत, विषपान, जय भारत जय, और संजीवनी से जाना जा सकता है । वे देश के प्रति स्वाभिमान जगाने में तत्पर हैं । किसान से कहते हैं :–

ये मंदिर मस्जिद गिरजाघर,
पादरी मोलवी पंडितवर
ये मठ विहार, गद्दी, गुरुवर,
भिक्षुक संन्यासी यती प्रवर
जपतप व्रत पूजा ज्ञान ध्यान,
रोजा नमाज वहदत अजान
ये धर्म कर्म दीनो इमान,
पोथी पुरान कलमा कुरान
यह तेरी दौलत पर किसान
यह तेरी मेहनत पर किसान ।

परतंत्र भारत के नवयुवकों से कहते है :

न हाथ एक शस्त्र हो
न अन्न नीर वस्त्र हो
हटो नहीं, डटो वहीं, बढ़े चलो बढ़े चलो ।

स्वतंत्र भारत के कर्णधारों से तीखे

प्रश्न भी करते हैं :–

ओ लाल किले पर झंडे फहराने वालो
पहले जवाब दो मेरे चंद सवालों का।

जैसे पहले निर्भय वैसे बाद में भी निडर।

यह मुझे अच्छी तरह याद है जब द्विवेदीजी को 'पद्मश्री' की उपाधि से अलंकृत करने की प्रशासनिक जांच आयी थी तो स्वयं न जाकर अपनी कुछ पुस्तकें मेरे द्वारा जिलाधिकारी फतेहपुर को भेजी थीं। स्वाभिमानी चितेरे का यह प्रसंग अविस्मचणीय है।

द्विवेदीजी की कलम में इतना निखार आ गया था इतना लिखा भी कि जैसे लिखते-लिखते एक ऊबन-सी हो गयी थी और इसीलिये अपने सहयात्री कवि अनुज बंधुओं की रचनाओं का परिष्कार करने में बड़ी रुचि लेने लगे थे। स्व. उमाकान्त मालवीय का पहला गीत संग्रह द्विवेदीजी ने साहित्य भवन प्रा. लि. प्रयाग से प्रकशित करने के लिये संस्तुति की थी। यह प्रकाशन 'मेहंदी और महावर' के नाम से प्रकाशित हुआ है।

एक प्रसंग तो मुझे भूलता ही नहीं। उनके यहां एक वेतन भोगी बंधु आये और उन्होंने कहा कि 'मुझे नौकरी से निलंबित कर दिया गया है, द्विवेदीजी। आप जिलाधिकारी महोदय से मेरी सिफारिश कर दें कि मुझे फिर से नौकरी में बुला लें।' वे बंधु तहसील बिंदकी में पेशकार थे। उनसे द्विवेदीजी ने पूछा कि 'कविता लिखते हो। अपने इस कविता में कहो, तो सिफारिश कर बंधु सचमुच दस-बारह पंक्तियों में ग़ज़ल लिखकर लें गये थे। पंक्तियां कुछ इस तरह थीं :-

आंसुओं से भरी है मेरी जिंदगानी
सुनाऊं तो कैसे सुनाऊं कहानी
बेरहम होके मुझको निकाला
कहां मुंह छिपाऊं रुकी अब

द्विवेदीजी का स्वाभिमानी कवि दम झल्ला उठा। 'रोने वालों का कौन देता है? तुम निरे बुद्धू हो। लिये सिफारिश करना अपनी करना है। ऐसे में तो तुम्हें इस तरह था।' (सिगरेट का कश खींचकर लगे–और पंक्तियां देने लगे)। फिर लिखिये जनाब–

परेशानियां खुद परेशान होंगी
जब मुस्कुराकर कहूंगा कहानी
परेशानियों दिल का गुंचा खिला
जखम से महकने लगे जिंदगानी

इन पंक्तियों को सुनकर वेतन महाशय उछल पड़े और अपनी भरी ग़ज़ल जिसे लिखकर लाये थे फेंक दिया। एक नयी चेतना और मान से कहने 'लगे कि मुझे अब या और किसी की सिफारिश की नहीं है मुझे तो पूरा आसमान मिल मुझसे बड़ा कौन अमीर है इस में? नौकरी दे या न दे जिलाधि मुझे आपने सब कुछ दे दिया।'

के ऐसे अनगिनत किस्से हैं।

एक छोटी लेकिन बड़ी ही दिलचस्प बात जो आंखों देखी है बता रहा हूं। कानपुर के एक कवि सम्मेलन में द्विवेदीजी को अध्यक्षता करनी थी। पर वे समय से न पहुंचे। ठंडाई जो पी ली थी। मेरे स्मरण दिलाने पर चले। मैं अपनी कार में उन्हें बिन्दकी से ले गया था। वे जाने को तैयार न थे। उन्हें कानपुर घुमाने के बहाने ले गया था और यह आकर्षण कि वहां चलकर ठंडाई पियेंगे और लौट आयेंगे। चूंकि कवि सम्मेलन के संयोजक मेरे मित्र थे, मैंने वादा किया था कि मैं पं. जी को ले आऊंगा। मैंने रास्ते में उनसे इस यात्रा का वास्तविक रहस्योद्घाटन किया तो बहुत प्रसन्न हुए और कहा कि अवश्य चलूंगा और कवि सम्मेलन में धूम मचा दूंगा। एक भी पैसा नहीं लूंगा क्योंकि तुम्हारे मित्र ने कवि सम्मेलन का आयोजन किया है, उनकी भी समझ में आ जायेगा कि अलमस्ती क्या होती है? सच बात तो यह है कि मैं उनके लिये नहीं तुम्हारे लिये चल रहा हूं।' मैंने ईश्वर से प्रार्थना की, मन ही मन में, कि चलो मेरी बात रह गयी। पं. जी मान गये और प्रसन्न मुद्रा में भी हैं। स्नेह की इस अजस्र-धारा को उनसे विरले ही लोगों ने पाया है, जो मुझे मिली है। उस समय एक गीत मंगेशकर का बहुत सुना जाता था, रिकार्डर में बजता भी खूब था। इससे आपको पता भी लग जायेगा कि किस संदर्भ का गाना था। उसकी एक पंक्ति यह है: 'वतन की आबरू खतरे में है।'

द्विवेदीजी ने कहा कि क्या मुर्दानगी की बात है और मंच की ओर बढ़ते गये। लोगों ने स्वागत किया। आदर और सम्मान के साथ मंच तक ले गये, पर खिन्न मन से। इसलिये कि द्विवेदीजी विलंब से पहुंचे और कवि सम्मेलन उखड़ रहा था। श्रोता–पुरुष और महिलाएं निराश घर जाने की जल्दी में। द्विवेदीजी ने पहुंचते ही कहा कि मैं आप लोगों का अधिक समय न लूंगा, देर हो गयी मुझे आने में। लेकिन देरी इसलिये हुई कि आप लोगों के लिये ही संजीवनी ढूंढ़ता रहा। आप लोग इसे लेकर जायें। सायंकाल आठ बजे से लेकर ग्यारह बजे तक की प्रतीक्षा करते रहने पर लोग खड़े होकर ही संजीवनी लेने को तैयार थे। द्विवेदीजो ने कहा, 'आप लोग सुन रहे हैं यह रिकार्डिंग : 'वतन की आबरू खतरे में है' बस इसी पंक्ति में एक पंक्ति मैंने जोड़ी है, यही संजीवनी लेकर आप लोग अपने-अपने घर जायें। आज इस काव्य संध्या को इसी की ज़रूरत है।' और उन्होंने दो पंक्तियां गुरु गंभीर स्वर में खड़े होकर ओजपूर्ण मुद्रा में सुनायीं।

जोश जब तक खून के हर कतरे में है
कौन कहता है वतन की आबरू
खतरे में है ?

जो खड़े थे, बैठ गये, जो बैठे थे, जाग उठे। तालियों की गड़गड़ाहट से पूरा

पंडाल गूंज उठा । जाने वाले सभी जग गये । सच्चे अर्थों में कवि सम्मेलन तभी प्रारंभ हुआ और भोर की किरन तक चला ।

द्विवेदीजी इधर दस, पंद्रह वर्षों से मानस संगम, प्रयाग नारायन शिवाला, कानपुर के वार्षिक समारोह से जुड़े रहने के कारण प्रायः कानपुर में श्री बद्रीनारायण तिवारी के यहां ठहरते रहे हैं । मानस संगम के स्थायी संरक्षक रहे । मानस मर्मज्ञ पं. राम किंकरजी की कथा सुनने और समरोह के अन्य आयोजनों की रूप रेखा स्वयं निश्चित करने में बड़ी रुचि लेते थे । मानस संगम मानवीय संवेदना का एक अद्‌भुत संगम है । राम-कथा पर जिसने कुछ भी कार्य किया है चाहे हिन्दू हो या मुसलमान, सिख, या और भी विश्व की किसी जाति का हो, मानस संगम के मंच की सदस्यता सहज ही प्राप्तव्य है । इसके वार्षिक समारोह के अवसर पर कई बार मैं भी द्विवेदीजी के साथ रहा ।

उनके बाल-बोध का एक चित्र मेरे स्मृति पटल पर बार-बार उभरता है। वे बाल-गीत लिखने में भी सिद्धहस्त थे । स्वभाव में भी बालकोचित गुण सहज ही था । पूज्य किंकरजी की कथा हो रही थी । मंच पर द्विवेदीजी भी बैठे सुन रहे थे । यकायक उन्हें कलम की, कुछ लिखने के लिये, आवश्यकता का अ हुआ । उसे खोजने में लग गये । कभी ऊपर की जेब, कभी बगल की टटोल फिर कभी अपने सहायक शिष्य से पूछ और उसे झिड़कना 'मेरी कलम कहां र दी ।' यही क्रम चलता रहा कथा के स पन तक । मैं मंच के सामने बैठा सुन रहा था और देखता रहा उनकी सुलभ चेष्टा । कथा के पश्चात् आने मैंने उन्हें देखा वे बहुत उद्विग्न थे के लिये । उन्हें शांत करते हुए मैंने उ कलम ढूंढ़ दी, वह भी उन्हीं के पास कलम पाकर कवि का बाल-मन पड़ा जैसे रामकथा का सारा पुण्य गया हो ।

राष्ट्रकवि का अपना तेवर ही अ मस्ती में जिये, अलमस्ती में और जो गाया कभी भुलाया नहीं सकता । न कोई गैर था, न कोई न किसी से कुछ मांगा, न कहीं उदीयमान कवियों के पथ प्रदर्शक, के कंठ में बसे राष्ट्रकवि व्यक्ति वरन् काव्य की संस्था हैं । मां भारती अलमस्त चितेरे की पूजा में भावपु जलि कलम की अपनी जिम्मेदारी जिसके निर्वाह का अंशदान आप अर्पित है । **—कमला नगर, फतेहपुर**

□

नीति-निपुण लोग निन्दा करें या स्तुति, लक्ष्मी आये या जाये, मृत्यु आज ही आ जाये या युगान्तर के बाद, परंतु वीर पुरुषों का न्यायमार्ग से कदम नहीं डिगता।

— भर्तृहरि

□

गांधीवादी रचनाकार वियोगी हरि

स्वनामधन्य गांधीवादी विचारक, समाजसेवी और रचनाकार श्री वियोगी हरि का महाप्रयाण गत ९ मई को ९३ वर्ष की उम्र में हो गया।

हिन्दी जगत को इससे अचानक गहरा धक्का लगा है। उनके निधन से जो रिक्तता अनुभव की जा रही है, उसका पूर्ण होना संभव नहीं है। उनका जैसा कथनी और करनी में एक-सा रहने वाला व्यक्तित्व मिलना ही असंभव है।

छतरपुर (म. प्र.) में एक कान्यकुब्ज परिवार में सन १८९६ में उनका जन्म हुआ था। उन्होंने कविता, नाटक, गद्यगीत और निबंध के साथ ही बालोपयोगी साहित्य का भी सृजन किया है। उनकी लगभग ६० पुस्तकें हैं। १९३३ में वे गांधीजी की प्रेरणा से 'हरिजन सेवक' के संपादक बने। उन्होंने 'वृज भारती' का भी संपादन किया था।

उन्होंने हिंदी साहित्य सम्मेलन के कराची अधिवेशन का १९३४ में और हैदराबाद अधिवेशन का १९७६ में सभापतित्व किया था। सम्मेलन ने १९२६-२७ में उनकी 'वीर सतसई' पुस्तक पर उन्हें मंगलाप्रसाद पारितोषिक देकर सम्मानित किया था। वे सम्मेलन की पत्रिका के भी संपादक रहे। उनका मूल नाम हरिप्रसाद द्विवेदी था। उन दिनों उपनामों का चलन था। उनके मूल नाम का केवल हरि ही उनसे जुड़ा रह गया। गांधीजी ने उन्हें हरिजन-पत्र के संपादन का काम सौंपा और उन्होंने हरिजन-पत्र और हरिजन-सेवा को अपने जीवन का व्रत बना लिया।

गत वर्ष १७-१८ अक्तूबर को कन्नौज में उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्वर्ण जयन्ती के अधिवेशन में साहित्य-सेवा के लिये कुछ लेखकों को 'पदक' देकर सम्मानित किया जा रहा था। नाम पुकारे जाने पर मैं भी उठकर मंच पर सामने गया। डॉ. विद्यानिवास मिश्र ने तिलक लगाकर मुझे पदक प्रदान किया। पास ही श्री वियोगी हरि मंच पर विराजमान थे। मेरा हाथ पकड़कर अपने पास बैठाकर बोले— 'त्रिवेदीजी, तुम्हारा पत्र दीवाली-विशेषांक के लिए रचना भेजने के संबंध में मिला था, पर मैं न रचना भेज सका और न उसका उत्तर ही दे पाया। आज तुमसे उसके लिए क्षमायाचना करता हूं।' उनकी शिष्टता और विनम्रता से भरी वाणी सुनकर मैं पानी-पानी हो गया। लगभग मुझसे दूनी वय के एक साधु पुरुष के सामने मैं निरुत्तर था। मैंने अपना सिर उनके चरणों पर टिकाकर उन्हें प्रणाम किया। गांधी विचारधारा का नाम ले-लेकर भाषणबाजी करने वाले तो बहुत मिलेंगे, गांधी-नीति पर चलने वाले ऐसे सक्रिय रचनाकार अब शायद ही मिल पायेंगे? **नवनीत**-परिवार की उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि।

—**गिरिजाशंकर त्रिवेदी** [संपादक : नवनीत हिंदी डाइजेस्ट]

सांस्कृतिक मंच

□

पं. देवीदत्त शुक्ल शताब्दी समारोह

आधुनिक हिन्दी के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली 'सरस्वती' पत्रिका के भूतपूर्व संपादक स्व. पं. देवीदत्तजी शुक्ल के शताब्दी वर्ष पर देश के विभिन्न भागों में हो रहे समारोहों की श्रृंखला में दि. १६ अप्रैल को बंबई में दो दिवसीय शताब्दी समारोह पूरी गरिमा के साथ मनाया गया।

साहित्यिक गोष्ठी के मुख्य अतिथि पं. नरेन्द्र शर्मा ने गद्‌गद कंठ से श्रद्धेय शुक्लजी के साहित्य व अध्यात्म के क्षेत्र में किये गये महान योगदान का उल्लेख किया। उन्होंने कहा कि कुछ लोग सूर्य के समान जाज्वल्यमान अपने प्रताप से लोगों को चकाचौंध कर देते हैं, जबकि कुछ लोग अपने व्यक्तित्व को पचा जाते हैं। श्रद्धेय शुक्लजी में सूर्य जैसा तेज तो था, परंतु उनके व्यक्तित्व से पूर्ण चंद्र-सा अमृत निरंतर झरता रहता था, जिससे सभी तृप्त होते थे। पंडितजी मां के समर्पित उपासक थे तथा उनका हृदय भी मातृवत् था। उसी मातृभाव से उन्होंने मुझे भी आगे बढ़ाया। श्री हरिशंकर ने शुक्लजी की असाधारण संपादनकला पर प्रकाश डाला।

स्व. शुक्लजी के सुपुत्र एवं 'चण्डी' व 'संपादक की वाणी' के संपादक पं. रमादत्त शुक्ल ने अपने पिताश्री के रोचक व प्रे
दायक संस्मरण सुनाते हुए कहा कि
वह मेरे पिता ही नहीं थे, वरन् ऋषि
देवतुल्य थे। उन्होंने अंधे होने के बाद
बोल-बोलकर साहित्य-सृजन किया।

समारोह के अध्यक्ष डॉ. गिरिजा
त्रिवेदी (संपादक 'नवनीत') ने कहा
शुक्लजी ने साहित्य व समाज की अ
धारण सेवा की। संपादनकला की
दिव्य दृष्टि थी। यही कारण है कि
रचनाओं के कारण लेखक व कवि
साहित्य-जगत में प्रसिद्ध हैं, उन्हें
ने सर्वप्रथम 'सरस्वती' में प्रकाशित कि
था। वस्तुतः ऐसे समारोहों के द्वारा
पीढ़ी को शुक्लजी के महान साहि
अवदान का ज्ञान होगा। समारोह
संचालन श्री राजेंद्रप्रसाद त्रिपाठी ने कि
श्री वेणीमाधव त्रिपाठी, श्री व्रतशील
आदि ने भी अपने विचार व्यक्त किए।

समारोह के दूसरे दिन शाक्त
लन व शक्ति उपासना संबंधी प्रदर्श
आयोजन किया गया।

समारोह के मुख्य अतिथि पं. र
शुक्ल ने कहा कि जब तंत्रशास्त्र
यता के कारण गुहा में समा गया था
पं. देवीदत्तजी शुक्ल ने उसके प्रचार
का बीड़ा उठाया। १९४२ में प्रयाग में
पर 'शाक्त सम्मेलन' और 'चण्डी'

का प्रकाशन उनकी अमूल्य देन हैं ।

सर्वश्री अंजारिया, स्वामी शशांक दवे, इं. नाथ, यशवंत महादेव बाकरे, वेणीमाधव त्रिपाठी, सतीशकुमार उपाध्याय, प्रह्लादकुमार तिवारी ने शक्ति उपासना के विभिन्न पक्षों पर चर्चा की। श्री ओमप्रकाश पांडेय ने समारोह का संचालन किया ।

श्री हंस गायत्री आनंद नाथ सत्संग मंडल के अध्यक्ष श्रद्धेय के. रामाय्यरजी ने समारोह की अध्यक्षता की ।

—वेणीमाधव त्रिपाठी

०००

समकालीन कहानी पर गोष्ठी

प्राध्यापक एवं कथाकार जगदंबाप्रसाद दीक्षित ने विषय प्रवर्तन करते हुए रामनारायण रुइया कालेज (शींव-बंबई) के प्रांगण में आयोजित 'समकालीन हिंदी कहानी' विषय पर आयोजित गोष्ठी में कहा कि आज हम कहानी को पढ़ते हैं तो पहले पैरे के पढ़ने के बाद ही उसे पढ़ने की हिम्मत छूट जाती है । यह बात भी विचारणीय है ।

प्रा. सतीश पांडेय ने 'मानवीय सरोकार और समकालीन कहानी' विषय पर अपना आलेख पढ़ा । उनके आलेख में सांप्रदायिकता और आतंकवाद को लेकर लिखी गयी कहानियों पर विशेष तौर पर चर्चा की गयी थी ।

डा. देवेश ठाकुर ने 'प्रतिबद्धता और आज की हिंदी कहानी' पर अपने आलेख में साहित्यिक प्रतिबद्धता के दोनों रूपों यथा सहज प्रतिबद्धता और वादात्मक प्रतिबद्धता अर्थात् राजनैतिक प्रतिबद्धता को व्याख्यायित किया ।

डा. शिवशंकर पांडेय के आलेख 'आज की कहानी, बदलते अंचल की उभरती पहचान' की प्रतियां वितरित की गयीं ।

डा. सुशीला गुप्ता ने शंका व्यक्त की कि डा. देवेश ठाकुर ने अपने अभिपत्र में प्रतिबद्धता को लेकर बहुत से 'क्योंकि' खड़े किये हैं । उनका जवाब देते हुए वे बोले कि कोई भी रचनाकार क्रांति में कभी हिस्सा नहीं लेता । सभी रचनाकार मात्र मूक दर्शक होते हैं । वे प्रतिबद्ध नहीं कटिबद्ध होते हैं । साहित्य में कोई क्रांति नहीं होती ।

आत्माराम ने कहा कि चूहा कैसा भी हो, उसे खाते समय बिल्ली कुछ नहीं सोचती । उसके लिए सभी चूहे समान होते हैं और व्यवस्था का यही रूप है । डा. शारदाप्रसाद शर्मा ने कहा कि कहानी नीरस होती जा रही है, यह चिंतनीय विषय है ।

अध्यक्ष डा. संपत ठाकुर ने कहा कि नयी कहानी अकहानी, समांतर कहानी, ये सभी फतवेबाजियां हैं । कहानी कहानी होती है । पाठक केवल कहानी से लगाव रखता है । जिन लोगों को चर्चा करनी और करवानी होती है, वे ही ऐसे नारे लगाकर चर्चा का केंद्र बनना चाहते हैं ।

—रतीलाल शाहीन

०००

'रेखाएं' काव्य पुस्तक का विमोचन

९ मार्च १९८८ को पूजाश्री की नवीन-

तम काव्य-पुस्तक 'रेखाएं' का विमोचन नयी दिल्ली में उपराष्ट्रपति डॉ. शंकर-दयाल शर्मा ने किया । इस अवसर पर बाबू गंगाशरण सिंह सहित राजधानी के अनेक गण्यमान साहित्यकार-पत्रकार उपस्थित थे । **–ताराचंद**

○○○

ओरछा में केशव समारोह

महाकवि केशव की जन्मस्थली ओरछा (टीकमगढ़) में केशव समारोह का शुभारंभ रेलमंत्री माधवराव सिंधिया ने किया ।

डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी ने महाकवि के व्यक्तित्व व कृतित्व पर अपना आलेख पढ़ा । केशव पुरस्कार बुंदेली कवि गुणसागर को दिया गया । अध्यक्षता केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री श्री मोतीलाल वोरा ने की । संचालन श्री हरगोविंद त्रिपाठी 'पुष्प' ने किया ।

'केशव की कविताई' विषय पर एक विचार गोष्ठी हुई । जिसमें डा. जगदीश गुप्त, डा. विजयपाल सिंह, प्रो. ए. के. रावत, राजेश जोशी, डॉ. कमला प्रसाद, हरगोविंद त्रिपाठी 'पुष्प', पूर्णचंद्र रथ, डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी, कैलाश बिहारी द्विवेदी और गंगाप्रसाद ने अपने विचार प्रस्तुत किये । **–रामस्वरूप दीक्षित**

○○○

दीक्षित का सम्मान

१७ अप्रैल को टीकमगढ़ में नगर के आठ प्रमुख कर्मचारी संगठनों की ओर से व्यंग्यकार रामस्वरूप दीक्षित को सम्मानित किया गया ।

आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल, डा. कै
बिहारी द्विवेदी, वीरेंद्र शर्मा,
कौशल किशोर भट्ट और पूर्व
मगनलाल गोइल, सरदार गुरुबचन
ने श्री दीक्षित के लेखन की सराहना
प्रो. वी. के. त्रिपाठी तथा अध्यक्ष
के. रावत ने शाल, श्रीफल और
पत्र भेंट कर उन्हें सम्मानित किया ।

समारोह का संचालन प्र.
तैलंग ने किया । विनोद गुबरेले ने
व्यक्त किया । **–विनय**

○○○

मुंशी शताब्दी समारोह

भारतीय विद्या भवन के
द्वारा कुलपति क. मा. मुन्शी
समारोह के अवसर पर आयोजित
कारिता इतनी विवादास्पद क्यों?
यक राष्ट्रीय संगोष्ठी के उद्घाटन
की अध्यक्षता करते हुए मध्य
मुख्यमंत्री श्री अर्जुन सिंह ने
वर्तमान काल और युग में
उत्पन्न होना स्वाभाविक है ।
बाद हमारा देश नये मूल्यों की
लगा है । भारतवर्ष मंथन के दौर
रहा है । उन्होंने कहा कि पत्रकार
का प्रतिबिंब है तथा यदि समाज
से घिरा है तो पत्रकारिता का
स्पद बन जाना कोई आश्चर्य की
उन्होंने श्री गणेशशंकर

(शेषांश पृष्ठ १३९ पर)

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन साहित्य, और संस्कृति का मासिक

प्रार्थना

वसन्त इन्नु रन्त्यः ग्रीष्म इन्नु रन्त्यः ।
वर्षाऽनन्नु शरदो हेमन्तः शिशिर इन्नु रन्त्यः ।।
साम पूर्वार्चिक ६, ३. १३. २ ।।

हे आनंद रूप जगदीश्वर, जगत् तुम्हारा रम्य विलास ।
कितना सुंदर कितना मोहक, कितना सुखप्रद है मधुमास ।
प्रखर ग्रीष्म ऋतु की ऊष्मा भी--मन में भर देती उल्लास ।
वर्षा की रिमझिम रुनझुन में, नर्तन करता हृदय मयूर ।
शुभ्र शरद हेमन्त हर्षप्रद, शिशिर रम्यता से भरपूर ।
जहां-जहां है रमण तुम्हारा, वहीं प्राण का नवल विकास ।
विश्वपुरुष ! सब व्याप्त आप में, सबमें प्रभो आपका वास ।
देव तुम्हारी ही सुषमा से प्राणित जग यह सुंदर है ।
सूर्य - चंद्र - नक्षत्र सुशोभित, विश्व वंदना मंदिर है ।

[रूपांतर : सत्यकाम विद्यालंकार]

सफलता पर पूर्ण विश्वास

□

गौतमकुमार दास

डा. राजेंद्र प्रसाद के विद्यार्थी जीवन की यह घटना है। उन दिनों इंट्रेंस परीक्षा में प्रथम स्थान पाने वाले विद्यार्थी को ३० रुपये मासिक छात्रवृत्ति मिला करती थी। राजेंद्र बाबू को भी ये छात्रवृत्ति मिल रही थी। आगे भी यह स्थान बना रहे इस दृष्टि से उन्होंने काफी मेहनत करके आइ. ए. की परीक्षा दी। परीक्षाफल जब प्रकाशित हुआ तो उसमें उनका नाम नहीं था।

वे अच्छे अंक से उत्तीर्ण होंगे ऐसा विश्वास केवल उन्हें ही नहीं वरन् पूरे महाविद्यालय को था। अपना नाम घोषित न किये जाने पर वे थोड़ा घबराये, फिर आत्मविश्वास के साथ प्राचार्य के पास जाकर बोले, 'मेरा नाम परीक्षाफल में प्रकाशित नहीं हुआ है।'

'तुम अनुत्तीर्ण हो गये होंगे।' प्राचार्य महोदय ने उत्तर दिया।

'ऐसा नहीं हो सकता—मैं परीक्षा में अवश्य उत्तीर्ण हूं।'

'अगर तुम उत्तीर्ण होते तो तुम्हारा नाम जरूर प्रकाशित होता।'

जब राजेंद्र बाबू आगे कुछ कहना चाह रहे थे तो प्राचार्य महोदय बिगड़कर बोले, 'चुप रहो नहीं तो जुर्माना देना होगा।'

राजेंद्र बाबू ने पुनः हिम्मत के साथ कहा, 'मैं उत्तीर्ण हूं, महाशय, इसमें मुझे कोई संदेह नहीं।'

उत्तर मिला, 'तुमको पांच रुपये जुर्माना किया जाता है।'

पुनः राजेंद्र बाबू बोले, 'जुर्माना चाहे कितना भी हो, मैं तो उत्तीर्ण अवश्य हूं।'

इस प्रकार हरेक बार बोलने के जुर्म में उन पर पचास रुपये तक जुर्माना हो गया।

तभी प्रधान लिपिक जो बगल के कमरे में बैठा था परीक्षाफल की मूल प्रति लेकर आया और प्राचार्य महोदय से कहा कि उससे एक बड़ी भूल हो गयी है। दरअसल सर्वाधिक अंक पाने वाले एक छात्र राजेंद्र प्रसाद का नाम वह प्रकाशित परीक्षाफल में लिखना ही भूल गया है। अब प्राचार्य महोदय ने राजेंद्र बाबू को खड़े होकर गले से लगा लिया और कहा, 'तुम बहुत ही आत्मविश्वासी छात्र हो, तुम अवश्य ही देश का नाम रोशन करोगे।'

—साहा लाज, विलासी टाउन, वैद्यनाथ
देवघर–८१४११७, बिहार

□

लघुकथा

पौरुष देवताओं से भी बड़ा बना देता है

☐ डॉ. यदुनाथ चौबे

महाभारत में, राजा भगदत्त और अर्जुन की लड़ाई का बड़ा ही रोमांचक वर्णन मिलता है । युद्ध के दौरान अर्जुन के गांडीव-धनुष की प्रत्यंचा से एक सरसराता हुआ बाण छूटा । ठीक इसी समय आसमान में उड़ रही एक गर्भिणी चिड़िया को वेधता हुआ वह तीर राजा भगदत्त के हाथी के गले के विशाल घंटे को तोड़ता हुआ अंतरिक्ष में विलीन हो गया । संयोग कुछ ऐसा बना कि मृतक गर्भिणी चिड़िया के अंडे जमीन पर गिरने पर भी बेदाग बच गये । इसे भी एक संयोग ही कहना चाहिये कि कुरुक्षेत्र के उस मैदान में घमासान मारकाट के बीच गिरे उन अंडों पर राजा भगदत्त के हाथी के गले का घंटा कवच के रूप में गिर पड़ा ।

महाभारत की लड़ाई समाप्त होने के बाद नर-कंकालों से पटे उस भयंकर मैदान से अपने कुछ शिष्यों के साथ महामुनि शमीक किसी यात्रा से अपने आश्रम की ओर लौट रहे थे । सांय-सांय करते उस वातावरण में पक्षी - शावकों का चहचहाना सुनकर शिष्यों समेत महामुनि शमीक भी अपना कौतूहल नहीं रोक सके । ध्वनि का अनुसरण करते हुए घंटा हटाते ही उड़ने में असमर्थ लेकिन उड़ने के लिए जी-जान से छटपटाते उस युगल शावक को देखकर मुनि मंडली एकदम स्तंभित रह गयी ।

जिस युद्ध-भूमि में लाखों दुर्जेय वीरों को महाकाल एक-एक कौर के रूप में निगल चुका था, वहां बाणों से आहत गर्भिणी चिड़िया के अंडों का बच जाना विस्मित कर देने वाली एक घटना ही थी । सच है ईश्वर जिसे बचाना चाहता है, उसे मौत के मुंह से निकालकर बाहर कर देता है ।

उदार-चेता महामुनि शमीक ने अपने शिष्यों को, अंडों से बाहर निकल चुके उस पक्षी के जोड़े को आश्रम में ले जाकर भरण-पोषण की आज्ञा दी ।

महर्षि ने अपने शिष्यों को विस्मय और अचरज की दुनिया से हटकर कुछ दूसरा सोचने की प्रेरणा दी । महामुनि शमीक के कथन का सार यही है कि देवताओं का कार्य जब पूरा हो जाता है, तभी आदमी के पुरुषार्थ की शुरूआत होती है । हकीकत तो यह है कि आदमी कई बातों में देवताओं से भी महत्तर बन जाता है । हां, यह बात जरूर है कि बड़प्पन का यह सेहरा सिर्फ पौरुष-प्रिय आदमी के मस्तक पर ही बंधता है ।

–पिंजारी बिल्डिंग,
दूसरा माला, क. नं. ६, गांवठण मार्ग,
विरार (प.)-४०१३०३

सुकरात की मृत्यु जीवन से भी शानदार

☐ अजयेंद्रनाथ त्रिवे

सुकरात की मृत्यु के बाद प्रायः सवा दो हज़ार वर्षों के अध्ययन से यही सिद्ध हुआ है कि उनकी मृत्यु उनके जीवन से कम शानदार और गौरवपूर्ण न रही। सुकरात का कठोर धार्मिक जीवन जिन मान्यताओं के लिये बना था, उनकी मृत्यु भी उन्हीं मान्यताओं के लिए समर्पित हो गयी। आज भी विश्व की मनीषा सुकरात के जीवन की अपेक्षा उनकी मृत्यु से ज्यादा प्रेरित हो रही है। वस्तुतः जीवन और मृत्यु को दो समझना हमारी संकीर्ण समझ का परिचायक हैं। प्रबल आध्यात्मिक दृष्टि वाले के लिये अनंत तक फैले जीवन का धुंधला भाग ही मृत्यु है। रेल की सीधी फैली पटरियों को दूर तक देखने पर एक बिंदु ऐसा भी मालूम पड़ता है जहां से आगे पटरी दीखती नहीं। वस्तुतः पटरी उससे भी आगे और आगे तक गयी होती है। इसी प्रकार जीवन का विस्तार अनंत है। जिस बिंदु से आगे हम उसका विस्तार नहीं देख पाते उसे हम जीवन का अंत कह देते हैं।

एथेंस (यूनान) में एक मूर्तिकार के यहां सुकरात का जन्म स्थापित मान्यताओं के अनुसार ४६९ ई. पू. में हुआ था। एथेंस की सेना में शामिल होकर तीन उन्हें बाहर जाना पड़ा इसके बाद का समय सुकरात ने दर्शन को अर्पित दिया। सुकरात का दार्शनिक जीवन विचित्र था। उनका लिखा कोई आज तक नहीं पाया गया। उनके हमारा ज्ञान जीनोफन तथा प्लेटो पुस्तकों पर आधारित है।

प्लेटो ने अपने संवादों में सुकरात मुख्य वक्ता बनाया है। सुकरात समस्त शिक्षा मौखिक होती थी। युवकों को संवाद में लगा देते स्वयं भी उसमें शामिल होते। संवाद में हर युवक को सत्य का भव एक विशेष प्रकाश में होता, सुकरात वृत्त, न्याय, संयम, ज्ञान प्रत्ययों की जांच करते। सुकरात घर निकलकर भीड़-भरे स्थल पर आकर को विविध विषयों पर विचार करने कहते और स्वयं उस बातचीत का करते। धीरे-धीरे युवकों का समूह प्रतीक्षा में रहने लगा। युवकों में आने लगी और वे अब ज्यादा देर अंधविश्वास को मानने को तैयार न इससे तत्कालीन समाज व्यवस्था को

र हुआ। और सुकरात के बहुतेरे दुश्मन हो गये।

७० वर्ष की अवस्था में सुकरात पर मुकदमा चलाया गया। उन पर तीन आरोप थे (१) सुकरात राष्ट्रीय देवता को नहीं मानता, (२) वह नये देवताओं में आस्था रखता है, तथा (३) वह एथेंस के नवयुवकों को शासन के विरुद्ध भड़काता है। अदालत में सुकरात पर चलाये गये मुकदमे पर विचार हुआ। उन पर आरोप लगाये गये तथा उनको मृत्युदंड देने की सिफारिश की गयी। सुकरात की सफाई के आधार पर निर्णय दिया गया। तीन विकल्प निर्णय में थे। पहला यह कि सुकरात एथेंस छोड़कर चले जायें, दूसरा भविष्य में कुछ न बोलें, तीसरा मृत्युदंड। एथेंस छोड़ना या जबान बंद रखना सुकरात ने अपने ऊपर अन्याय माना और दिये गये मृत्युदंड को स्वीकार किया। जहर का प्याला पिलाकर सुकरात को मृत्युदंड देकर एथेंस ने स्वयं ही अपने ललाट पर कालिख पोत ली। परंतु सुकरात इस प्रकार मानवता के इतिहास में प्रेरणा स्रोत बन गये।

न्यायालय के सम्मुख मृत्युदंड के उत्तर में सुकरात ने एक लंबा भाषण दिया। उन्होंने न्यायाधीशों से कहा—

'निर्णय करनेवालो! तुम्हें भी मृत्यु को साहस के साथ स्वीकार करना चाहिये और स्वीकार करना चाहिये कि एक अच्छे पुरुष पर न जीवन में और न मृत्यु के बाद ही कोई आपत्ति आ सकती है। देवता उसके भाग्य की ओर से कभी उदासीन नहीं होते। जो दंड आज मुझे दिया गया है, वह संयोग का परिणाम नहीं, मेरा विश्वास है। मेरे लिए अब मरना और क्लेश से मुक्त होना ही अच्छा था। यही कारण है कि मेरे मार्ग-प्रदर्शक चिह्न ने मुझे बच निकलने की प्रेरणा नहीं दी। मैं न आरोप लगाने वालों से रुष्ट हूं, न दोषी ठहरानेवालों पर कुपित हूं।... अब समय आ गया है कि हम लोग यहां से चल दें—मैं मरने के लिए, और तुम जीने के लिए; परंतु यह परमात्मा ही जानता है कि मृत्यु और जीवन में कौन श्रेष्ठ है।'

समय ने सिद्ध कर दिया कि सुकरात की मृत्यु उनके जीवन से श्रेष्ठ थी।

मुख्य रूप से सुकरात जिज्ञासु थे। उन्होंने लोगों में जिज्ञासा तथा लालसा पैदा करने की चेष्टा की। अपने लिए उन्होंने फिलासफर या ज्ञानप्रेमी—यह नाम चुना। उनके अनुसार इस नाम में नम्रता झलकती थी। वे सत्य के अन्वेषण में अपने-अपने तरीके तथा साधन के साथ लगने के आग्रही थे। यही कारण है कि उन्होंने किसी संप्रदाय की स्थापना नहीं की। उनका मानना था कि स्वयं द्वारा खोजे गये सत्य के प्रति हमारा समर्पण ज्यादा होगा, अतः वही कल्याणकारी भी बनेगा। सुकरात उपदेशों के द्वारा ज्ञानदान की पद्धति में विश्वास नहीं करते थे। सुकरात की चर्चाओं में ज्यादातर नीति विषयक बातें होती थीं। पर्त-दर-पर्त वे

अपने प्रश्नों को लोगों के सम्मुख विचारार्थ रखते। स्वाभाविक ही जब चर्चा, विवाद और तार्किक प्रतिष्ठा का क्रम चलता तो ढोंग और पाखंडी व्यवहार की धज्जियां उड़ जातीं। यही कारण था कि तत्कालीन मठाधीशों को अपने अस्तित्व की चिंता हो आयी, क्योंकि उनका अस्तित्व तो मूलतः पाखंड पर ही टिका था।

सुकरात ने एथेंस छोड़ने तथा मौन रखने को अस्वीकार कर दिया। फलतः उन्हें कारागार में रखा गया। उन्हें उनके शिष्यों ने कारागार से भगा लेने की योजना बनायी तथा कारागार में इस हेतु वे सुकरात के पास पहुंचे। सुकरात ने नम्रतापूर्वक भागने से भी इंकार कर दिया। उन्होंने कहा कि इस प्रकार भागकर वे एथेंस की सरकार के कानून तथा एथेंस की जनता दोनों को ही धोखा देने के अपराधी ही ठहराये जायेंगे। स्थापित कानून को धोखा देना सुकरात को प्रिय नहीं था। सुकरात ने इस प्रकार नीति की रक्षा करने के लिए अपने प्राणों को भी त्याग दिया। सुकरात ने अपने शिष्यों से कहा था कि कानून को धोखा देकर बच निकलना उनका उद्देश्य नहीं हो सकता।

सुकरात ने अपने जीवन को धर्म और नीति को सुरक्षित करने में लगा दिया। यदि वे एथेंस छोड़ते तो यह उनका आत्मसमर्पण होता और यदि वे मौन रहना स्वीकार कर लेते तो यह प्रकारांतर से उनका दोष-स्वीकार माना जा सकता था।

अपने अंतःकरण का सौदा करके
पाना सुकरात को स्वीकार न था।
ध्येय की प्राप्ति में उन्होंने अपना
लगा दिया था। वे समझते थे मृत्यु
इसी लक्ष्य की प्राप्ति के प्रति
करके अपना ध्येय प्राप्त कर
यही कारण है कि उन्होंने मृत्युदंड
प्रतिकार नहीं किया। पूर्णतः
अविचल भाव से मृत्यु की प्रतीक्षा
सुकरात का व्यक्तित्व आज भी
के सत्याग्रहियों के लिए ध्रुवतारा
समादृत है। जब सुकरात को
से छुड़ाकर ले जाने की सारी
करके उनके शिष्य उन तक
सुकरात ने अपनी अंतरात्मा के
नुसार भागने से इंकार कर दिया।
का शिक्षक उनका अंतर्मन था,
प्रज्ञा थी। सुकरात ने अपना जीवन
विश्व को ध्येय के लिए समर्पित
उच्चतम आदर्श रखा।

यदि सुकरात मृत्युदंड से
एकसाथ ही विश्व कई आदर्शों से
रह जाता। वैसे भी सुकरात को
घेरती ही, परंतु नीति तथा अंत
सर्वोच्चता को प्रमाणित करके
मानव मात्र को जो महान
मृत्युदंड से बच निकलकर
शिक्षा नहीं दे पाते। सुकरात को
गया मृत्युदंड सत्य का मुंह बंद
सनातन चेष्टा थी। सुकरात
पीकर मृत्यु का आलिंगन करना

ए चुकायी जाने वाली सर्वोच्च कीमत ी। सुकरात ने मानवता को दिखा दिया सत्य के रक्षार्थ मान, सुख आदि ही नहीं ाण तक न्योछावर किये जाने चाहिये। वह भी सामान्य व्यक्ति के नहीं सुकरात व्यक्ति के।

सुकरात की मृत्यु उनके जीवन के दर्शों की उपलब्धि थी। जीवन भर सुकरात ने जो प्रयास किये, उनकी मृत्यु प्रयासों की सफलता की प्रमाण पत्रिका ी। उन्होंने कहा भी था—हम लोग यहां दें—मैं मरने के लिए, और तुम जीने के लिए, परंतु यह परमात्मा ही जानता है जीवन और मृत्यु में कौन श्रेष्ठ है।'

यदि जीवन को महज़ सांसों का गमना- मानें तब तो सुकरात का जीवन महत्वपूर्ण था। यदि हम जीवन को विश्व बदलने वाली शक्ति के रूप में देखें सुकरात ने जीकर वह कार्य नहीं किया, मृत्यु को गले लगाकर किया। संसार सभ्यता का प्राचीनतम पीठ यूनान स्वयं महसूस करता है कि सुकरात मृत्युदंड देकर उसने महानतम भूल ी। परंतु अनायास ही उससे हुई इस भूल संसार को एक अभूतपूर्व प्रेरणा प्रदान ी। संसार इस हेतु यूनान का चिर ऋणी हेगा।

सुकरात को विश्व के दार्शनिकों में स्थान प्राप्त है। इसका कारण की मेधा नहीं है। इसका कारण है की शिक्षा तथा उनके व्यवहार की एकरूपता। संसार के सभी दार्शनिकों ने चिंतन-मनन के द्वारा अपने सिद्धांत स्थिर किये। उपदेशों अथवा लेखों के द्वारा उन्होंने उसे जनता तक पहुंचाया। सुकरात ने न तो कुछ कहा और नहीं कुछ लिखा। फिर भी सुकरात का व्यक्तित्व आज भी जिज्ञासु शोधार्थियों के लिए चिर प्रेरणा का केंद्र बना है। ऐसा किस प्रकार संभव हो सका। आख़िर वह कौन-सी बात थी, जिसके लिए सुकरात को दंडित किया गया? यह प्रश्न उनकी मृत्यु ने ही हमारे समक्ष रखा है। भविष्य के हज़ारों वर्षों तक सुकरात की इस अंतर्निहित विशेषता का पता लगाने की चेष्टा की जाती रहेगी। उनकी यह विशेषता गूढ़ है। इसे जितने दृष्टिकोणों से देखें उतने रूप मिलेंगे और नाना रूपों में एक ही सत्य हमारे सम्मुख प्रकट होता जायेगा।

मृत्यु जीवन की उपलब्धियों की समाप्ति समझी जाती है। यही कारण है कि मृत्यु को जीवन से तुच्छ समझा जाता है। सुकरात की मृत्यु स्वयं में एक उपलब्धि थी। सत्यान्वेषण का पुरस्कार थी उनकी मृत्यु। ऐसी शानदार मृत्यु को जीवन से कम सफल कैसे मान लिया जाये। सुकरात की मृत्यु ने हमें आततायी के समक्ष मृत्यु का आलिंगन करके भी झुकना नहीं सिखाया, मूल्यों का आदर करना सिखाया और सबसे बड़ी शिक्षा दी अनुशासित रहने की। ऐसी मृत्यु को किस जीवन से कम महत्व-

(शेषांश पृष्ठ ५७ पर)

तीर्थधाम के दर्शन

मेरी रामेश्वरम् यात्रा

☐ शत्रुघ्नलाल

लखनऊ से एक बोगी गाड़ी में जुड़ती है, जो सीधे मद्रास तक जाती है। उसी में हमारा रिजर्वेशन था। यथा स्थान सामान रखकर हम अपनी-अपनी सीटों पर विराजमान हुए, तो ऐसे गर्व का अनुभव हुआ, मानो हम गाड़ी पर न होकर रामेश्वरम् के मंदिर में बैठे हैं।

८-३० पर गाड़ी चली और धरती पीछे की ओर सरकने लगी। जिस रफ्तार से हम आगे बढ़ रहे थे, अगल-बगल की दृश्यावली उसी रफ्तार से पीछे भाग रही थी। दूर क्षितिज की ओर देखने पर वह भी चक्राकार पीछे की ओर घूमता प्रतीत हो रहा था।

कानपुर के बाद गाड़ी ने रफ्तार पकड़ी और आल्हायुग के कुख्यात राजा माहिल की राजधानी उरई और राष्ट्रकवि गुप्तजी की साधनास्थली चिरगांव पार करती हुई ३-३० पर झांसी पहुंची। यहां हमारी बोगी उस गाड़ी (झांसी-छपरा) से कटकर मद्रास जाने वाली ट्रेन (जनता एक्सप्रेस) में जुड़ी। बूंदा-बांदी का आलम ज्यों का त्यों था। कई घंटे बाद, रात के १२ बजे जनता एक्सप्रेस रवाना हुई। रात भर चलती रही। हम लोग अपनी अपनी सीटों पर योगियों की भांति विभिन्न मुद्राओं-आसनों कभी मुखर कभी मौन होकर जागृत, तुरीय अवस्थाओं को पार करते, चले थे। बीना के बाद भोपाल आया। मैंने अपने पुत्र को एक पत्र भेजा।

१०-१०-८५ गुरुवार

सवेरे होशंगाबाद पार करके हम पर इटारसी पहुंचे। यहां गाड़ी को ठहरना है—जानकर हम भी उतरे और नित्य निवृत्ति के पश्चात चहलकदमी की। ९ बजे गाड़ी गतिमान हुई और हम अपनी-अपनी पर बैठकर यात्रा का आनंद लेने रास्ते में जंगल, पहाड़-खेत, मैदान प्राकृतिक दृश्य बड़े मनोरम थे। वर्षा का संत्रास झेलना पड़ा था, अब आकाश निर्मल-निरभ्र था। धूप से चित्त प्रसन्न हो गया। न जाने नदी-नाले हमने पार किये! गगनस्पर्शी ताल वृक्ष ऊर्ध्वरेता भांति खड़े थे। कहीं ग्रामीण बालक चरा रहे थे, कहीं लाइन किनारे में मछलियां पकड़ रहे थे। कहीं ग्राम्य रमणियां मुक्त हास्य मुद्रा

रो रही थीं। पास से गुज़र रही गाड़ी को देखकर वे सब परम उल्लास और कौतूहल के साथ तालियां बजाते हुए हंसने लगते थे। उनके द्वारा सलाम, बंदगी, नमस्ते और टा-टा की मुद्राओं का प्रदर्शन बड़ा लिक और आनंदमय वातावरण उत्पन्न कर रहा था। इटारसी के बाद नागपुर पहुंचे—म. प्र. की पूर्व राजधानी और टाटा तथा गांधीजी की कर्मभूमि। नागपुर के बाद वर्धा पार करके जब आगे बढ़े तो रात हो गयी थी। लगातार बैठे लेटे रहने से कुछ थकान भी मालूम हो रही थी। खाकर लेटे, तो दीन और दुनिया सब भूल गये। सारी रात सोते रहे।

११·१०·८५ शुक्रवार

सवेरे ५ बजे एकबारगी झटका खाकर हमारी नींद टूटी तो पता चला कि गाड़ी विजयवाड़ा में खड़ी है और काजीपेठ पीछे छूट गया है। आगे का रास्ता भी हरियाली, नदी, पहाड़, जंगल और लहलहाती खेती से परिपूर्ण था। इधर एक विशेष प्रकार के बैल देखे—बड़े सुंदर और देव प्रकृति के। यहां चाय महंगी है—एक रुपया कप। सायं ३ बजे विटरगुंटा स्टेशन पार किया। लाइन के दोनों ओर धान रोपती हुई ग्रामीण युवतियों का चपल हास, खजूर-ताड़ के असंख्य पेड़, गुंबदाकार छप्परों से सज्जित घरों वाले छोटे-छोटे गांव—यह सब भारतीय ग्रामीण जीवन का सही मूल रूप दिखाते हैं, जो हमारे उत्तर-प्रदेश में राजनीतिक कुत्सा और वैज्ञानिक प्रगति के कारण दुर्लभप्राय है।

नेल्लोर और वेंकटाचलम् पार करके हम सायं ६ बजे गुडूर पहुंचे। यहां हमने रेल छोड़कर बस का दामन पकड़ा और ७ बजे तिरुपति जाने वाली बस पर बैठ गये। इधर की बस व्यवस्था संतुलित है—पूर्णतया नियमित और व्यवस्थित। तिरुपति देवस्थानम् के स्वामी भगवान बालाजी (विष्णु) के दर्शनों का उत्साह हमारी थकान को न जाने कहां उड़ा ले गया!

हिन्दू धर्म की प्रमुख नगरी तिरुपति हम रात १० बजे पहुंचे। विद्युत् सज्जा ने आत्मविस्मृत कर दिया। यह देवस्थानम् मुख्य नगर से एक मील दूर ऊंचाई पर है, परंतु वहां तक पहुंचने में बस को सर्पाकार मार्ग पर १८ मील चलना पड़ा। चक्करदार मार्ग उत्तरोत्तर ऊर्ध्वगामी होता

चित्र : आर. डी. पुरोहित

गया है। दोनों ओर पहाड़, हरियाली, नाले-घाटी और बनप्रांतर। देखकर मुझे पिछली यात्रा (उत्तराखंड) की स्मृति हो आयी। उस यात्रा में भी जयकरन मेरे साथी थे। वक्र-वर्तुल मार्ग की पहाड़ी यात्रा में मुझे बहुत आनंद मिलता है। ओंकारेश्वर की यात्रा में भी यही सुखानुभूति हुई थी। तिरुपति के पहले श्री कालहस्ती नगर मिला था—बड़ा जगमग और आकर्षक। तिरुपति से मंदिर की ओर चलते समय हमने चढ़ाई वाले मार्ग से, नीचे देखा तो कालहस्ती से कई गुनी अधिक शोभाश्री दृष्टिगत हुई। बिजली की जगमग, तारों के धरती पर आ बिखरने की भ्रांति उत्पन्न कर रही थी।

मंदिर के समीप पहुंचने तक राह में स्थापत्य शिल्प के अनेक भव्य दृश्य मिले—प्रवेशद्वार, पार्क, चौराहे, हनुमानजी की प्रतिमा, गीता उपदेश और नंदी प्रतिमा। उस ५००० फीट की ऊंचाई पर स्थित तिरुपति देवस्थानम् क्षेत्र में हम रात ११ बजे पहुंचे। बालाजी के मंदिर का स्वर्ण कलश विद्युत् प्रकाश में चमक रहा था। देखकर मन श्रद्धा से भर उठा।

१०० रुपये रोज पर एक छोटा कमरा लिया। यहां बारहों महीने, चौबीसों घंटे यात्रियों का आवागमन और कोलाहल किसी भारी मेले का दृश्य उपस्थित रखता है। पानी, बिजली सफाई और सुरक्षा की व्यवस्था सराहनीय है। यात्री को कोई असुविधा नहीं होती।

१२-१०-८५ शनिवार

सबेरे नित्यकर्म से निवृत्त हो भगवान वेंकटेश्वर बालाजी के मंदिर में प्रविष्ट हुए। भारी भी प्रवेश सुविधा के लिए हमने टिकट खरीदे। इससे अपेक्षाकृत प्रवेश मिलनें पर भी दो घंटे लगा। लंबी चक्करदार लाइन में होकर लोग धीरे-धीरे सरकते हैं।

प्रतिमा की भव्यता वर्णन से प्रथम दृष्टि में ही श्रद्धा भक्ति आती है। मंदिर की व्यवस्था में कोई त्रुटि नहीं। सर्वत्र शुचिता, अनुशासन-सौहार्द और श्रद्धा। देवताओं की भी मूर्तियां हैं। मंडित मंदिर, स्तंभ, कलश आदि कर हम विस्मयविमूढ़ रह गये। शिल्प भी अद्भुत कला का प्रतिमा पर भक्तों की ओर से द्वारा पूजन सामग्री अर्पित की प्रसाद स्वरूप भक्तों को वित लड्डू मिलते हैं—बहुत ही स्वादिष्ट, घी से निर्मित। यात्री जन (इ तो) भोजन भी मिलता है। रूप में लड्डू बिकते भी हैं। लोग गांव-घर के लिए ले आते हैं। हैं—तीन रुपये का एक; आकार में कैथे या अमरूद के समान।

मंदिर का परिसर आधुनिक धाओं से सज्जित, स्वच्छ, शुचितापूर्ण और संपन्न है। बड़े-बड़े

और विश्रामगृह इसे किसी तीर्थ नगर का रूप देते हैं।

मैंने देखा कि इस क्षेत्र के निवासी श्यामवर्ण हैं। वैसे, सारे भारत से यात्री प्रतिदिन आते रहते हैं—सैकड़ों-हजारों की संख्या में। यहां क्षौरकर्म (मुंडन संस्कार) को बड़ा महत्व प्राप्त है। सभ्य-सभ्रांत परिवारों के सदस्य (नर-नारी-बच्चे-बूढ़े) भी बड़ी श्रद्धा से मुंडन कराते हैं। स्वर्णाभूषणों की प्रचुरता है। स्त्रियों के कानों में उत्तर भारत की तरह वाली नहीं, जड़ाऊ कर्णफूल या झुमके दीख पड़े। नाक में एक या दो रत्नजटित क्रीलें, जिनकी इंद्रधनुषी किरणें हीरे की तरह दर्शकों को चौंधियाती रहती हैं। जूड़े चोटी में फूल लगाना 'फैशन' की सीमा पार करके 'संस्कार' बन गया है। सभी वर्गों की स्त्रियां बालों में फूलों के गुच्छे लगाये रहती हैं। महिलाएं कद में छोटी होकर भी फुर्तीली, स्वस्थ और चपल हैं, अपनी कायिक लघुता के प्रति उनमें हीनता ग्रंथि नहीं है। वैसे, पुरुष और मांसल हैं।

हिंदी और उर्दू यहां मूक हैं, अतः अन्य प्रांतों से आये यात्री भाषा समस्या से त्रस्त हो जाते हैं। हम भी चूंकि तेलुगु भाषा नहीं जानते थे, अतः अंग्रेजी और इशारेबाजी के सहारे किसी तरह काम चलाया। मंदिर परिसर में फोटोग्राफी निषिद्ध है, शायद, सुरक्षा की दृष्टि से। हमने मंदिर के बाहर कई फोटो खींचे। दक्षिण भारत का यह (बालाजी) मंदिर सर्वाधिक संपन्न, विस्तृत, आस्था केंद्र और सुव्यवस्थित है। भारी भीड़ दूरागत यात्रियों का विभिन्न भाषा-बोलियों में कोलाहल, चहल-पहल; फिर भी सर्वत्र स्वच्छता, शुचिता और सुरक्षा देखकर हम चकित थे। बार-बार अपने महानगरों लखनऊ-कानपुर और इलाहाबाद का असंतुलित, आपराधिक और समस्याजनक वातावरण मस्तिष्क में कौंध जाता था। रात १० बजे तक घूमघाम कर हम पुनः विश्राम स्थल में आ लेटे।

१३-१०-८५ रविवार

नित्य कर्म से निपटकर हम प्रातः ७-३० पर भगवान बालाजी को प्रणाम करके बस द्वारा तिरुपति नगरी के लिए चले। राह में फिर वही सर्पाकार सड़क। दिन में दोनों ओर का दृश्य और भी लुभावना था। तिरुपति पहाड़ी से उतर कर हमारी बस तिरुपति बस स्टेशन पहुंची। वहां से मद्रास के लिए १०-३० पर दूसरी बस पर बैठे।

गिनती की सीटें। सब रिज़र्व। गाड़ी भी फ़िट। न ओवर लोड, न कांटे-कील-सी खरोंच। इधर भी बसों में शाही व्यवस्था और सैनिक अनुशासन का सौम्य-सज्जित प्रयोग देखकर हम उत्तर प्रदेश परिवहन और यातायात के लिए मन ही मन ईर्ष्यामय शब्दों का प्रयोग करते रहे। तीसरे प्रहर, दो बजे मद्रास पहुंचे। रास्ते में तूतीकोरन मिला—नमक का उत्पादन केंद्र। करोड़ों मन नमक तैयार था। बड़े-बड़े

चट्ठे लगे थे। मीलों लंबे-चौड़े क्षेत्र में यही एकमात्र उद्योग–नमक का निर्माण।

प्राकृतिक दृष्टि से रास्ता मनोरम रहा। इमली के पेड़ बहुत हैं, लाखों। धान के खेत भी कम नहीं हैं। केला, गन्ना, ताड़, नारियल, आम के पेड़ों का बाहुल्य देखकर हम चकित रह गये। मद्रास में भाषा की समस्या भीषण रूप में सामने आयी। हम उत्तरप्रदेशीय उजड्ड फिर बैसवारे के निवासी! हिंदी, अंग्रेजी और इशारों की खिचड़ी से काम चलाते रहे। मद्रास में होटलों की भरमार है। निवासी श्याम वर्ण। स्त्रियों में फूलों और आभूषणों के प्रति रुचि अधिक लगी। सबकी नाक में दो-दो जड़ाऊ कीलें। यद्यपि और बातें हमें आकर्षक नहीं लगीं; पर उनकी वे जड़ाऊ कीलें हमें बरबस आकृष्ट कर लेती थीं। मैंने देवीशंकरजी से परिहास में उनकी हसरत भी पूछी। एक होटल में ठहरे। महंगा था–१५०) रोज पर। खाना खाकर आराम करने लगे। थकान ने चूर कर डाला था।

१४-१०-८५ सोमवार

गत रात गहरी नींद में सोये थे, अतः सबेरे ताज़े होकर उठे। चायपान के बाद टैक्सी द्वारा नगर परिक्रमा आरंभ की। ड्राइवर ने गाइड की भांति सब कुछ दिखाया, बताया। संग्रहालय में ह्वेल का समूचा कंकाल (अस्थिपंजर) देखा। और भी कितने ही कंकाल, प्राचीन लुप्तप्राय जंतुओं की जानकारी दे रहे थे। जंतुशाला, उद्यान, गांधी मंदिर, कमा आदि घूमकर सायं की ट्रेन से हम श्वरम् के लिए प्रस्थित हुए। स्टेशन पर सेतु एक्सप्रेस मिली। उसने सायरन बजाकर अपना आरंभ किया। रात का समय था, रास्ते के दृश्य अदृश्य थे। हम सारे सोते-जागते चलते रहे।

१५-१०-८५ मंगलवार

सूर्य की प्रथम किरण के साथ आज हमारे पिछले सात जन्मों के का समूह–सूर्य उदित हुआ। हमारी खुलीं, तो हम मंडपम् में थे। थोड़ी बाद रामनाथपुरम् पहुंचे। इन दोनों धामों के बीच हमने जो कुछ देखा, स्मरणीय था। समुद्र पर निर्मित सेतु पर गाड़ी दौड़ रही थी। हमने झांका–यही वह मार्ग था जिधर से राम ने लंका अभियान किया था। बड़े शिलाखंड रेलवे पुल के समा समुद्र में बिखरे पड़े हैं। कहा जा कि ये रामनिर्मित सेतु के अवशेष हैं। भी हो, दृश्य बड़ा प्रभावी है। रेलवे के समानांतर, थोड़ा हटकर एक पुल बन रहा है–पैदल और मोटरों लिए। हल्के नीले रंग का स्वच्छ पा समुद्र जल देखकर मन श्रद्धापूरित उठा। रामनाथपुरम में उतरकर हम विश्राम गृह में ठहरे–'दमानी अतिथि श्री रामेश्वर मंदिर के अति समीप यह विश्राम गृह सभी सुविधाओं से

परंपरानुसार हमने समुद्र में स्नान किया और मंदिर में प्रविष्ट हुए। उस देवलोक की भव्यता का वर्णन करने के लिए उपयुक्त शब्द नहीं मिल रहे। वृहदाकार प्रस्तर खंडों पर विस्मयकारी शिल्प, पौराणिक चित्रों का उत्कीर्णन; फिर उस क्रेनरहित युग में उन विशाल शिलाखंडों से गगनचुंबी भवन का निर्माण! लंबे-लंबे सुरंग जैसे दालान। सारा शिल्प अतिमानवीय लगता है। भक्तजन नियमानुसार २२ कुंडों के जल से स्नान करके मुख्य प्रतिमा के सम्मुख पहुंचते हैं। वचन में सुना-पढ़ा विवरण कल्पनातीत सत्य के रूप में आज सामने साकार था।

भगवान राम के वर्ण से साम्य रखते हुए, काले पत्थर का भव्य शिव-विग्रह प्रथम दर्शन में ही मन का कल्मष मिटा देता है। यह प्रतिभा भीतरी भाग में है। मंदिर के अंदर प्रविष्ट होने पर कई प्रकोष्ठों का अंतराल पार करके यात्री जन वहां तक पहुंचते हैं। व्यवस्था ऐसी है कि किसी को असुविधा नहीं होती। मुख्य रामेश्वरम् प्रतिमा वाले प्रकोष्ठ के पास ही एक और प्रतिमा है—पंचमुख शिव की। यह प्रतिमा रजत पत्र से मंडित है। पार्श्व में एक अन्य प्रतिमा भी स्थापित है, जिसे हनुमानजी द्वारा लायी गयी माना जाता है।

दर्शनार्थी भक्त पंक्तिबद्ध खड़े होते हैं। पूजन सामग्री पुजारी के माध्यम से मुख्य प्रतिमा पर अर्पित की जाती है। भीड़, और चहल-पहल के बावजूद, मंदिर में व्याप्त शुचिता, शांति, व्यवस्था और भव्यता से दर्शक को साक्षात शिवलोक की आनंदानुभूति होती है। सारा अवसाद और नैराश्य न जाने कहां चला गया! एक अद्‌भुत अवर्णनीय जिजीविषा का अनुभव होने लगा।

मन्दिर में और भी कई देवविग्रहों के दर्शन हुए। एक नंदी प्रतिमा तो इतनी विशाल और जीवंत है कि उसका प्रतिरूप कदाचित् ही कहीं हो। फर्श से छत को छूती हुई यह विशालतम नंदी प्रतिमा एक समूचे शिलाखंड पर उत्कीर्ण है—न कहीं जोड़, न दरार।

यहां तिरुपति और मद्रास जैसी भाषा-व्याधि नहीं है। लोग मज़े में हिंदी बोलते-समझते हैं। सायं हमने बाजार की सैर की। शंख-कौड़ी की भरमार है—अनेक रूपाकारों में। दुर्लभ शंख व सीपियां भी यहां सुलभ हैं। नारियल का पानी सुलभ और सस्ता है।

१७-१०-८५ गुरुवार

रामेश्वरम् यात्रा हमारी कल्पना से परे थी; परंतु उन दयामय प्रभु की कृपा दृष्टि से असंभव भी संभव हो गया। रायबरेली से रामेश्वरम् आकर हमें जिस धन्यता का बोध हुआ, वह वर्णनातीत है।

सुताम्रपर्णी जलराशियोगे
निबद्ध्य सेतुं विशिखैअसंख्यैः।
श्री रामचंद्रेण समर्पितं तं,
रामेश्वराख्यं सततम् नमामि ॥

—७५७, सिविल लाइन्स, उन्नाव, उ. प्र.

विख्यात क्रांतिकारी का काव्यात्मक कथ्य

०००

अमरीकी राष्ट्रपति रेगन की मेहरबानी से नन्हे से निकारागुआ का नाम कई दिनों से अखबारों की सुर्खियों में आता रहा है। वहीं के सांस्कृतिक मामलों के मंत्री फादर अर्नेस्टो कार्डनेल आधुनिक लातिन अमरीकी के उन शीर्षस्थ क्रांतिकारी कवियों में से एक हैं, जिन्होंने कविता की एक नयी शैली को जन्म दिया है, वह शैली जो आत्म-विश्लेषण और विषयनिष्ठ होने के अलावा, सीधे जीवन की घोर वास्तविकताओं के जंगलों से उपजी लगती है।

यहां प्रस्तुत है—उनकी एक कविता, उनके संक्षिप्त परिचय के साथ।

०००

बीसवीं सदी के चतुर्थांश में प्रकाश में आये क्रांतिकारियों के बारे में जो एक बात निर्विवाद रूप से कही जा सकती है, वह यह है कि वे अपने पूर्वगामियों से कहीं अधिक आत्मालोचक हैं। अंगोला, फिलिपीन या निकारागुआ आदि के उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि उनकें वर्तमान तरक्कीपसंद क्रांतिकारियों में क्रांतिकारी-आंदोलनों के हिंसक आयामों के अंधेरे और ध्वंसकारी पक्षों का स्पष्ट बोध तो है ही, यह चेतना भी है कि क्रांतिकारी आंदोलनों से जुड़ी हिंसा की कितनी भारी क़ीमत समाज को चुकानी पड़ती है।

क्रांतिकारियों में ऐसी प्रखर चेतना की कल्पना भी इस सदी के प्रारंभिक वर्षों में असंभव थी। सच तो यह है कि ऐसी चेतना की हल्की-सी अनुभूति रूस की अक्तूबर-क्रांति की वसीयत की स्तालिन द्वारा की गयी विकृति के काल में देखने और अनुभव करने को मिली थी।

किंतु, आज यह चेतना अत्यंत प्रखर और मुखर दिखायी देती है। विश्वास न हो तो आगे दी हुई कविता पढ़ जाइये, जिसका सृजन किया है निकारागुआ के सांस्कृतिक मामलों के मंत्री फादर अर्नेस्टो कार्डनेल ने, जो आधुनिक क्रांतिकारियों में अपनी अलग पहचान रखते हैं, और उन क्रांतिकारी-कवियों के प्रतिनिधि-कवि माने जा सकते हैं. जिन्होंने कविता की एक नयी शैली को जन्म दिया है—वह शैली, जो आत्म-विश्लेषक होने के अलावा सीधे जीवन की घोर वास्तविकताओं के जंगलों से उपजी लगती है।

कार्डनेल एक अलग किस्म के फादर

भी हैं, जो ईसाइयत को सामाजिक न्याय के संघर्ष के साथ जुड़ा पाते हैं; वे क्रांति, समानता व स्वाधीनता के संघर्ष के साथ भी धर्म को जुड़ा देखते हैं। उन्होंने निकारागुआ में अनेक ऐसे मठवासी ईसाई समुदायों को संगठित किया है, जो सरकार के तत्वावधान में प्रगतिशील राजनीतिक आंदोलनों का संचालन करते हैं।

आगे प्रस्तुत है, उनकी एक कविता का उसके अंग्रेजी अनुवाद से किया गया हिंदी रूपांतर :

तोते

मेरा मित्र माइकेल सोमोतो में एक सेनाधिकारी है,
सोमोतो, जो होन्दुरान सीमा के निकट स्थित है,
उसने मुझे बताया कि उसने पाया कि कोई चोरी से
तोतों का एक भार अमरीका को भेज रहा है,
क्यों ? ताकि, वे तोते अंग्रेजी बोलना सीख जायें।
तोते कुल १८६ थे, लेकिन उनमें से ४७ पिंजरों में ही मर गये
मेरा मित्र उन तोतों को वहीं ले गया, जहां से वे लाये गये थे
और, जब उन्हें लिये लॉरी, पहाड़ों के निकट स्थित
उस इलाके में पहुंचे, जहां से उन तोतों को लाया गया था,
तो पर्वत सहसा अति-विशाल दिखायी देने लगे
तोते उत्तेजित होकर अपने पंख फड़फड़ाने लगे,
और पिंजरों से बाहर निकलने के लिए कोशिश करने लगे।
जब पिंजरे खोले गये, तो वे तीर की भांति सीधे पहाड़ों की ओर भागे।

००

मैं सोच रहा हूं कि क्या क्रांति ने हमें भी आजादी के लिए इतना बेकरार नहीं बना दिया है।
वे भी तो हमें पिंजरों में बंद करके कहीं ले जाना चाहते थे, ताकि हमें अंग्रेजी का ज्ञान हो जाये

००

क्रांति ने हमें यह देश वापस किया, जिससे हमें उन्मूलित किया गया था
क्रांतिकारियों के प्रयासों से वह हरित भूमि उन लोगों को वापस मिली, जिस पर उनका अधिकार था
इस प्रयास में वे मरे भी, जिस प्रकार ४७ तोते मरे थे।

['टाइम्स ऑफ इंडिया' से साभार]

◆

वे कितने निर्धन हैं, जिनके पास धैर्य नहीं है। क्या आज तक कोई जख्म बिना धैर्य के ठीक हुआ है ?

—शेक्सपियर

◆

संतकवि रैदास

☐ डा. एन.

हिंदी साहित्य के मध्यकालीन पूर्वार्ध को भक्ति काल के नाम से जाना जाता है। इस काल के संत कवियों ने सामाजिक मूल्यों की पुनर्स्थापना के लिए काव्य रूप में बहुमूल्य हीरे-मोती सौंपे। इसलिए इस काल को हिंदी साहित्य का स्वर्णयुग कहा जाता है। इसी युग में जहां अनेक संत कवि प्रतिष्ठा के उच्च शिखर पर पहुंचे, वहीं रैदास नाम का संत कवि विद्वान आलोचकों की दृष्टि से प्राय: ओझल ही रहा। अधिक से अधिक उसे एक साधारण भक्त, जो कुछ भजन भी गाया करता था, कहकर विद्वानों ने अपने कर्तव्य की इतिश्री कर ली। लेकिन रैदास का काव्य शताब्दियों तक पांडुलिपियों में धूल की परतों के नीचे छिपे रहकर भी अपनी अस्मितता बनाये ही नहीं रख सका, बल्कि वह निरंतर प्रांजल और परिष्कृत भी होता गया। वह आलोचकों की अलमारी में उनकी दया पर नहीं, बल्कि जनजीवन में जिंदा रहा है। अब वह धीरे-धीरे आलोचकों के सम्मुख आ रहा है। कुछ विद्वान उसके प्रस्तुतीकरण और मूल्यांकन की ओर अग्रसर हुए हैं।

रैदास वाणी में कहीं पर उनके के विषय में कोई उल्लेख नहीं मिलता संपूर्ण भारत में फैले रैदास संप्रदा उनका जन्म दिवस माघ सुदी पूर्णिमा मनाया जाता है! इसका आधार कर्मदास का निम्न दोहा है-

'चौदह सौ तेतीस की माघ सुदी पंद्रा
दुखियों के कल्याण हित प्रकटे सिरी रैदा

रैदास का जन्म पंद्रहवीं शताब्दी मध्य अनुमित किया जाता है। इस आधार रैदास और कबीर का समका होना माना जाता है। कबीर ने वाणी में लिखा है-'संतन में रैदास संत है सुपच ऋषि सो मानिया।' रैदास ने कबीर को 'गुरू समान कबीर बड़ भ्रा कहकर सम्मान दिया है। मीरा बाई ने अपने एक पद में लिखा है-'रैदास मोंहि गुरू मिलै, दिन्ही ज्ञान की गुटकी!' इसी प्रकार रैदास ने अपनी वाणी रामा को अपना गुरू मानते हुए लिखा है-

'रामानन्द मोहि गुरु मिल्यो,
पाया ब्रह्म विसास।
राम नाम अमि रस पियो,
रैदास ही भयो षलास!!'

ये ही सब तथ्य हैं जो हमें रैदास का जन्म संवत् निर्धारित करने में सहायता प्रदान करते हैं। कबीर का जन्म संवत् १४५६ अद्यावधि सर्वमान्य है तथा स्वामी रामानंद का जीवन काल 'अगस्त्य संहिता' के आधार पर रूपकला ने अपनी 'भक्त-माल की टीका' में संवत् १३५६ से सं. १४६७ तक माना है। डा. भंडारकर ने भी रामानंद के इसी काल को माना है। इसे विद्वानों का पर्याप्त समर्थन मिल चुका है। इस आधार पर निश्चय ही रैदास ने स्वामी रामानंद से उनके जीवन काल में ही दीक्षा ली होगी ! अत: उनका जन्मकाल सं. १४५६ से सं. १४६७ के मध्य माना जाना ही युक्ति संगत प्रतीत होता है। उनकी मृत्यु के विषय में प्रचलित दोहा इस प्रकार है –

'पंद्रह सै चौअसी, भई चितौर मंह भीर !
कंचन देह कंचन भई,
रवि-रवि मिल्यो शरीर !!'

उनकी मृत्यु चित्तौड़ में १५८४ में हुई थी। इस आधार पर उनकी उम्र (यदि जन्म सं. १४३३ में माना जाये) १५१ वर्ष बैठती है। जो साधारणतः विश्वसनीय नहीं है। यदि जन्म सं. १४५६ माना जाये तो उम्र १२८ वर्ष होती है। जिस पर विश्वास किया जा सकता है। अत: रैदास के जन्म संवत् को १४५६ के आसपास मान लेना ही उचित प्रतीत होता है।

संत रैदास के नाम के विषय में भी विद्वानों में पर्याप्त मतभेद रहा है। उनके– रविदास, रोहीदास, रूईदास आदि विभिन्न नाम विभिन्न पुस्तकों में मिलते हैं। लेकिन रैदास और रविदास ही अधिक प्रचलित नाम हैं। जबकि उनकी अभी तक प्राप्त सभी प्राचीन पांडुलिपियों में उनके पदों में रैदास नाम मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है, जैसे इनके संप्रदाय में जैसे-जैसे शिक्षा का प्रसार हुआ, तैसे ही उनके अनुयायियों ने उनके नाम का भी परिष्कार करके उसे रविदास कर दिया। वैसे मूल नाम 'रैदास' ही है !

उनके पिता का नाम रग्घू अथवा राघवदास था तथा माता का नाम कर्मा-बाई। कहीं-कहीं पर उनकी माता का नाम घुरविनिया भी मिलता है। उनकी पत्नी का नाम लोना था। आज भी उनके संप्रदाय में लोना को एक देवी के रूप में माना जाता है। रैदास की कोई संतान होने का कहीं पर उल्लेख नहीं मिलता। आंतरिक और बाह्य साक्ष्यों के आधार पर अब तय हो चुका है कि रैदास का जन्म स्थान 'मांडूर' जो अब मड़ूहाडीह

हो गया है, बनारस के पास है तथा उनकी जाति चर्मकार थी। लोक में प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेने के उपरांत भी रैदास ने कभी अपनी जाति छिपाने का प्रयास नहीं किया। उनके पदों में बार-बार 'कहे रैदास चमारा' की छाप सर्वत्र मिलती है। उन्होंने जीवन पर्यंत अपना पैतृक व्यवसाय जूता बनाना नहीं छोड़ा।

रैदासवाणी में ४० पद तो 'गुरुग्रंथ साहब' में मिलते हैं। इसके अतिरिक्त अभी तक लगभग दो सौ पद और ढाई सौ 'साखियां' पांडुलिपियों से प्राप्त हो चुकी हैं। एक २४ पदों का 'खंडकाव्य' 'प्रह्लाद चरित' भी उपलब्ध है। इस संपूर्ण सामग्री के आधार पर रैदास काव्य के विचार पक्ष को निम्नवत् प्रस्तुत किया जा सकता है।

रैदास का समय मध्यकालीन भारत था, जबकि भारत पर विदेशी आक्रांताओं के अत्याचार-अनाचार की आंधी जोरों पर थी। हिंदुओं के सामने उनके देवालयों को तोड़ा जा रहा था, और उनके आराध्य देवताओं का अपमान किया जा रहा था। असहाय हिंदू जनता, न तो इस अनाचार का विरोध ही कर पा रही थी और न ही इस स्थिति से उबरने का प्रयत्न! इस स्थिति को रैदास ने अपने काव्य में इस प्रकार वाणी दी है –

'त्राहि-त्राहि त्रिभुवन पति पावन
अतिशय शूल सकल बलि जाऊं।'

ऐसी स्थिति में जो एक सजग साहित्यकार का हो सकता है, उसका
पूरी ईमानदारी से निर्वाह
उन्होंने हिंदू और मुसलमानों को
मिलकर विदेशी आक्रांताओं का
करने की प्रेरणा दी। क्योंकि
तो अत्याचारी है, न वह मुसलमान
न हिंदू है। उन्होंने मानव
संदेश अपनी वाणी में इस प्रकार

'रैदास कंगन और कनक मंहि,
जिमि अंतर कछु नांहि!
तैसउ ही अंतर नहीं, हिंदुअन तुरकन
'हिंदू तुरक नहीं कछु भेदा,
सभ मंह एक रक्त और मांसा!
दोऊं एकह दूजा कोई नांहि,
पेख्यो सोध रैदासा।।'

मंदिर और मस्जिद को
भी सांप्रदायिक दंगे होते रहते हैं।
रैदास ने मंदिर और मस्जिद,
काशी, राम और रहमान को
मानते हुए स्पष्ट लिखा है-

'मंदिर मस्जिद एक हैं,
इन मंह अंतर नांहि!
रैदास राम रहमान का झगड़ऊ कोई
रैदास हमारा राम जोई, सोई है
काबा-काशी जानि यहि, दोऊ एक

इसके उपरांत वह हिंदू और
को मानवता का संदेश देते हुए
भांति रहने का उपदेश दिया है-

'मुसलमान सौ दोस्ती, हिंदुअन सौं
रैदास जोति सम राम की,
सभ हैं अपने मीत!!'

रैदास वर्ण, जाति-पांतिहीन वैदिक में विश्वास रखते थे, क्योंकि सामा- विसंगतियों की मार सबसे अधिक वर्ण अर्थात् शूद्र को ही सहनी पड़ी । यहां तो जन्म लेते ही व्यक्ति की और निकृष्टता निर्धारित हो जाती रैदास ने इस तथ्य पर दृष्टिपात करते लिखा है –

जन्म के कारणै, होत न कोई नीच !
नीच करि डारि हैं,
कर्म की कीच !!

पर व्यक्ति के सांसारिक कर्मों लेखा-जोखा किये बगैर उसे ऊंच अथवा घोषित किया जाता हो, रैदास ने धार्मिक अन्याय के विरुद्ध भी आवाज यी-

एक ही नूर ते, जिमि उपज्यो संसार !
नीच किहि विध भये,
और चमार !!'

नहीं वर्ण में भी विभिन्न जातियों करके सम्पूर्ण भारतीय समाज खंडों में विभाजित कर दिया कि पर व्यक्ति-व्यक्ति का आपस में ही कठिन हो गया । यह एक ऐसा है कि इसके लिए जितना भी दंड दिया जाये उतना ही कम है । ने इस गंभीर समाजशास्त्रीय तथ्य ही अपने विचार प्रकट किये–

जात-जात में जात है,
ज्यों केलन के पात !
रैदास न मानुष जुड़ सकै,

[illegible] !!'

वस्तुत: वर्ण और जाति से बहुत बड़ी है मानवता और यहां पर यह जाति का रोग इस मानवता को ग्रसने पर उतारू है –

'जात-पांत के फेर मंहि,
उरझि रहई सब लोग ।
मानुषता को खात हई,
रैदास जात का रोग ।।'

संत रैदास कोई समाज से उदासीन संत नहीं थे, कि वह समाज से पलायन कर अपनी भक्ति को परवान चढ़ाते । वे एक साधारण गृहस्थ की तरह समाज में रहे और उन्होंने समाज में व्याप्त प्रत्येक बुराई पर गंभीरता से दृष्टिपात किया । उन्होंने मद्यपान जैसे व्यसन को छोड़ने की सलाह दी–

'रैदास मदुरा का पीजिए,
जो चढ़ै-चढ़ै उतराय !
नाम महारस पीजिए,
जो चढ़ै नहिं उतराय !!'

इसी प्रकार उन्होंने जीव हत्या और मांस भक्षण को भी बुरा बताया –

'रैदास जीव मत मारहिं,
इक साहिब सब मांहि !
सभ मांहि एकऊ आत्मा,
दूसरऊ कोउ नाहि !!
दया भाव हिरदै नहिं,
भखहिं पराया मांस !
ते नर जमपुर जाईहिं,
सत भाषै रैदास !!'

संभवत: उपर्युक्त तथ्यों पर विचार

करने के उपरांत पद्मश्री आचार्य क्षेमचंद्र 'सुमन' ने लिखा है–'रैदास ने अपने काव्य के माध्यम से सद्भाव और सदाचार जैसे शाश्वत मूल्यों का प्रचार किया। संत रैदास सामाजिक चेतना से ओतप्रोत एक दूरद्रष्टा कवि थे। उनके काव्य में तत्कालीन भारतीय समाज की धड़कनें समाहित हैं। उन्होंने परिवेशगत सच्चाइयों का गहरा अध्ययन कर, अपने काव्य में स्थान ही नहीं दिया, बल्कि उनके शाश्वत समाधान भी प्रस्तुत किये हैं।'

कोई ऊंचे कुल में पैदा होकर महान हो जाये, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है, लेकिन कोई निम्न-आय वर्ग तथा सामाजिक दृष्टि से अछूत समझे जाने वाले कुल में पैदा होकर महान हो जाये यह आश्चर्य की बात है! संत रैदास इस तथ्य का जीवंत उदाहरण हैं। उनकी इस महानता का एक ही रहस्य है और वह है उनकी 'श्रम के प्रति आस्था'। इसलिए रैदास व्यक्ति को नेकनियत से कर्मशील रहने का उपदेश देते हैं –

'रैदास स्रम करि खाइए,
जौ लौ पार बसाय!
नेक कमाई जो करहू,
कबहूं न निहफल जाय!!
स्रम को ईसर जानि के,
जऊ पूजहि दिन रैन!
रैदास तिन्हहिं संसार में,
सदा मिलहि सुख चैन!!'

उनकी यह कर्मनिष्ठा कभी भी उनकी पूजा उपासना में बाधक नहीं
उनकी मान्यता थी कि जो
काम करता हुआ, जिह्वा से
नाम लेता रहता है, ऐसे
राम भी घर आकर मिलते हैं।
लिखा है –

'जिह्वा सों ओंकार जप,
हत्थन सौं कर कार।
राम मिलहिं घर आइकर,
कहि रैदास विचार॥'

संत रैदास को संपूर्ण संत
जो बात अलग उन्हें
करती है, वह है उनकी राजनीतिक
ऐसा एक भी संत कवि नहीं हुआ है
परतंत्रता को पाप कहकर,
उससे मुक्त होने की प्रेरणा दी हो।
ने अपने काव्य में स्पष्ट लिखा है-

पराधीनता पाप है, जान लेहु रे
रैदास दास प्राधीन को, कौन करै है
पराधीन का दीन क्या, पराधीन
रैदास दास प्राधीन को, सबहि

रैदास ने मुक्ति के लिए
का ही आह्वान नहीं किया,
एक ऐसे राज्य की कल्पना भी
पर कोई छोटा-बड़ा नहीं होगा,
उसकी आवश्यकता के
और धन की प्राप्ति होगी।
काव्य में समतावादी, समाजवादी
व्यवस्था की कल्पना आज से
सौ वर्ष पहले की थी –

(शेषांश पृष्ठ ५७ पर)

दो मुगलकालीन सोने की मुहरें

☐ शांता सर्वजीतसिंह

हाल ही में भारत सरकार ने जेनेवा में उन दो भीमकाय मुगलकालीन मुहरों की बिक्री नहीं होने दी, जिन्हें विश्व के सबसे मूल्यवान सिक्के माना जाता है। शांता सर्वजीत सिंह की जबानी सुनिये इन दोनों मुहरों की रोचक कहानी, जिनके बारे में यह संदेह भी व्यक्त किया जा रहा है कि वे भारत की संपत्ति हैं भी या नहीं।

पिछले दिनों अमरीका के स्टॉक बाज़ार में जो भयंकर उथल-पुथल हुई, उसका एक अप्रत्यक्ष लाभ भारत को इस रूप में मिला कि उसने जेनेवा में उन दो भीमकाय मुग़लकालीन मुहरों की बिक्री पर रोक लगवाने में सफलता पायी, जिन्हें विशेषज्ञ विश्व के सबसे क़ीमती सिक्के मानते हैं।

जहांगीर के काल की इन मुहरों का उल्लेख भारत भी यात्रा पर आने वाले अनेक यूरोपियन यात्री-इतिहासकारों ने किया है। इनमें मुख्य हैं—कैप्टेन विलियम हॉकिन्स जिन्होंने १६११ में लिखित अपनी 'वॉयजेज' नामक पुस्तक में उनका उल्लेख किया है। जॉन द लायत, जे.वी. बर्नियर और वेनेशियन मानुक्की ने भी अपने संस्मरणों में उनका ज़िक्र करते हुए लिखा है कि उन्होंने इन मुहरों को जहांगीर के संग्रहालय में देखा था। स्वयं जहांगीर ने अपनी आत्मकथा 'तुज़ुक-ए-जहांगीरी' में उनका वर्णन किया है। किंतु, २२ कैरेट शुद्ध सोने से निर्मित तथा सौ तोले, दो सौ तोले, पांच सौ तोले और एक हज़ार तोले वज़न की इन मुहरों का कोई अस्तित्व आज कहीं है, इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता।

लेकिन, नवंबर, १९८७ के आरंभ में स्विट्ज़रलैंड स्थित भारतीय राजदूत को पता चला कि ९ नवंबर को जेनेवा के एक नामी नीलामकर्ता हैस्वर्ग फेल्डमॅन के निवास-स्थान पर दो भीमकाय मुग़लकालीन सोने की मुहरों का नीलाम होने वाला है। इनमें से एक का वजन १२ किलोग्राम के लगभग था, और उसे जहांगीर के काल में आगरा में ढाला गया था। दूसरी मुहर का वज़न १०९४.५ ग्राम के लगभग था, और उसे १६३९ में लाहौर में ढाला गया था।

विशेषज्ञों का विश्वास था कि जहांगीर ने इस प्रकार की जिन सैकड़ों मुहरों को ढलवाया था, उनमें से सिर्फ ये दो मुहरें ही बची थीं, और शेष को सोने के लिए पिघला लिया गया था। इसलिए, फेल्डमॅन के इन दोनों दुर्लभ और मूल्यवान सिक्कों को खरीदने की होड़-सी लग गयी। भारतीय राजदूत ने स्विस-सरकार से प्रार्थना की कि चूंकि ये दोनों मुहरें प्रत्यक्षत: अवैध रूप से बिना लाइसंस के भारत से लायी गयी लगती हैं, अत: इनकी बिक्री व नीलामी पर फ़ौरन रोक लगायी जाये। मगर, स्विस सरकार ने भारतीय राजदूत की इस प्रार्थना को इस आधार पर ठुकरा दिया कि फेल्डमॅन के पास ऐसे प्रमाण मौजूद हैं कि ये सिक्के पिछले ५० वर्षों से यूरोप में मौजूद हैं। दूसरे शब्दों में उस पर १९४७-४८ का भारत का ही वह कानून लागू नहीं होता, जिसके तहत भारत से पुरावस्तुओं का निर्यात, बिना सरकारी लाइसेंस के एक गुनाह है।

'काले सोमवार' की मेहरबानी

अक्तूबर के उस 'काले सोमवार' के, जिसके कारण विश्व का आर्थिक वातावरण बहुत बदल गया था, बाद वे दोनों ग्राहक, जिन्होंने इन दोनों मुहरों को ऊंची क़ीमत पर खरीदने में रुचि दिखायी थी ग़ायब हो गये। इस घटना से पूर्व, इन दोनों मुहरों के अज्ञात मालिकों से इन दोनों ग्राहकों ने बड़ी मुहर १ करोड़ डॉलर में खरीदने की इच्छा व्यक्त की था। 'काले सोमवार' के बाद कोई ग्राहक बड़ी मुहर के लिए ८० डॉलर और छोटी मुहर के लिए ३० डॉलर से ज्यादा देने को तैयार न था।

इस प्रस्तावित सौदे की खबर भारत के विदेश-मंत्रालय को मिली, फ़ौरन इस सौदे को रोकने और पर भारत का स्वामित्व जताने दिशा में क़दम उठाये। उसके एक प्रव ने, जो मंत्रालय के सांस्कृतिक विभाग ओर से बोल रहा था, कहा, 'हम यह हैं, और ऐसा मानने के हमारे पास हैं कि इन मुहरों को चोरी-छिपे, कानूनी तौर पर भारत से बाहर ले गया था। लेकिन अभी तक अपना व्यक्त करने के अतिरिक्त हमने कोई कार्रवाई नहीं की है।'

राष्ट्रीय संग्रहालय इन मुहरों वापस लाने के लिए प्रयत्नशील है। वह उन्हें खरीदने में असमर्थ है, उन्हें खरीदने में उसके वार्षिक बजट तीन गुनी राशि व्यय हो जायेगी। तर्क है कि यदि ग्रीस के कीमती व संगमरमरों को ग्रीस से चोरी-छिपे जाने वाले लॉर्ड एल्गिन के खिलाफ मरकाउरी दुनिया भर में शोर उन्हें वापस लेने का अभियान चला हैं, तो हम भी ऐसा क्यों नहीं कर अपनी ही मुहरों को वापस लेने के हम उन लोगों को भी रक़म क्यों चालाकी से उन्हें भारत से विदेशों

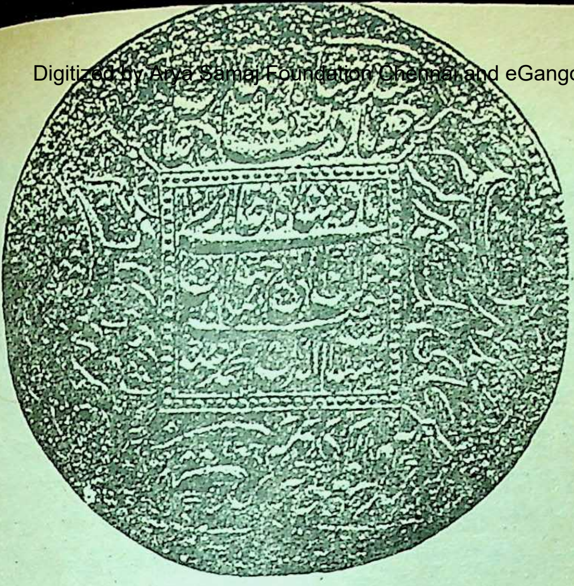

गये थे।

लेकिन, यहां यह सवाल उठाया जा सकता है-और उसका जवाब मिलना भी ज़रूरी है कि क्या ये मुहरें सचमुच हिंदुस्तान से स्विट्ज़रलैंड गयी थीं? इस बारे में संदेह होने का मुख्य कारण यह है कि इस प्रकार की करीब १ हज़ार मुहरें मुगलों द्वारा तैयार करायी गयी थीं, और उनमें से तीन-चार को छोड़कर, जिनका ज़िक्र मुगलों से संबंधित ग्रंथों में आता है, अन्य विदेशी राजदूतों में बांट दी गयी थीं। ये राजदूत मुख्यत: मुस्लिम देशों के थे, और ऐसा विश्वास करन के कारण मौजूद है कि उनके राजदूतों या शासकों ने उन्हें गला दिया था। १८२० के एक ब्रिटानी संदर्भ ग्रंथ में २०० तोले की एक मुहर का, जो ब्रिटिश संग्रहालय में मौजूद थी, जिक्र आता है, मगर वह बाद में खो गयी थी।

इन पंक्तियों की लेखिका ने इन मुहरों के बारे में अनेक नामी मुद्राशास्त्रियों से बात की, किंतु वे इन मुहरों के बारे में उसे कोई जानकारी प्रदान नहीं कर सके। अंत में, राष्ट्रीय संग्रहालय की मुद्रा-विशेषज्ञ कुमारी बनजा ने मेरा सही मार्गदर्शन किया। उसने मुझे न्यूमिसमैटिक सोसायटी ऑफ इंडिया द्वारा १९२३ में कलकत्ता से प्रकाशित शाहपुरशाह होरमसजी होदीवाला लिखित 'हिस्टॉरिकल स्टडीज इन मुग़ल न्यूमिसमैटिक्स' पुस्तक पढ़ने की सलाह दी।

शाही अनुग्रह की प्रतीक

'मासिर-इ-आलमगिरी' का हवाला देते हुए, अपनी पुस्तक में होदीवाला लिखते हैं, १००० साधारण मुहरों के वज़न के बराबर, खास तौर पर बनायी गयी एक बड़ी मुहर शहाबुद्दीन खान जंग को शाही उपहार के रूप में भेजी गयी। जंग ने शहंशाह मुहम्मद अफ़ज़ा को जब ज़रूरी

रसद भेजी थी, जब वे बीजापुर में सागर के सरदार नाईक से लड़ रहे थे।

होदीवाला की पुस्तक के अनुसार, जहांगीर ने उस काल के चांदी के १००० रुपयों की कीमत की एक आश्चर्यजनक मुहर, जिसका नाम 'कौकाब-ए-ताल, (किस्मत का सितारा) रखा गया था, हैदराबाद के जन्मदाता निज़ामुलमुल्क आसफ़ ज़ाह को उपहार में भेजी थी। इन वर्णनों से सिद्ध होता है कि सब मुग़लकालीन मुहरें मूलतः भारतीय हैं, और वे कैसे मुल्क के बाहर गयीं, यह पता लगाने की जिम्मेवारी वित्त मंत्रालय की है।

इन वर्णनों से यह भी सिद्ध होता है कि ये भीमकाय मुहरें मुद्राओं की भांति प्रयोग में नहीं लायी जाती थीं, बल्कि विशिष्ट व्यक्तियों को भेंट में दी जाती थीं। कहा जाता है कि भीमकाय मुहरों के माध्यम से उपहार देने का चलन मुगलों ने तैमूर लंग से सीखा था।

'बाबरनामा' में बाबर ने लिखा है कि जब उसने आगरा में फारस के राजदूत के स्वागतार्थ एक भोज दिया था, तो फारस के शाह को सोने व चांदी की दो भीमकाय मुहरें भेंट में दी थीं।

बाबर की बेटी गुलबदन बेगम ने 'बाबरनामा' में एक ऐसे दिलचस्प मज़ाक का वर्णन किया है, जो बाबर ने अपने एक मुलाज़िम ख्वाजा खान के साथ किया था। पानीपत की लड़ाई में बाबर की जीत के बाद ख्वाजा खान ने वापस काबुल जाने की इच्छा व्यक्त की। बाबर ने प्रार्थना स्वीकार करने से पूर्व उससे वह शाही मसखरे 'चचा असास' को ओर से एक तोहफ़ा देकर आये। तोहफ़ा एक ऐसी अशर्फी के जिसका वज़न १५ सेर (हिंद का) ख्वाजा से बाबर ने कहा, 'अगर असास पूछें कि क्या तोहफ़ा लाये उनसे कहना कि बादशाह आपके लिए एक अशर्फी भेजी है।' की बात सही थी। अशर्फी का कितना भी क्यों न रहा हो, आखिर थी एक अशर्फी ही।

गुलबदन लिखती हैं, 'बादशाह के हुक्म के मुताबिक अशर्फ़ी के एक छेद करके उसमें एक मोटा दिया गया था। ख्वाजा ने अशर्फी पहले चचा असास की आंखों पर बांध दी थी, और फिर उसके गले में लटका कर उससे कहा, 'बादशाह ने आपके लिए बतौर तोहफ़ा एक भेजी है, जो आपके गले में पड़ी है।' देर तक बेचारे चाचाजान यह नहीं पाये कि आखिर इतनी वज़नी बनायी किसने।

कलात्मक मुहरें

अकबर से पहले के मुग़ल बाबर और हुमायूं ने जिन मुहरों का निर्माण करवाया था, वे सोने की बनीं, और वज़नी तो थीं, कलात्मक और प्रियदर्शिनी न थीं।

ने मुल्ला अहमद और मौलाना मक़सूद जैसे सुलेखकों तथा चित्रकारों की मदद से उन्हें कलात्मक रूप प्रदान किया। इन मुहरों से ज्ञात होता है कि मुगल बादशाहों के ज़माने में काफ़ी भीमकाय मुहरों का निर्माण हुआ था, और उनमें से अनेक का अस्तित्व होना चाहिये। स्विट्ज़रलैंड में ऐसी दो मुहरों का पता चलने के बाद, भारत-सरकार को चाहिये कि वह देश-विदेश में छिपी इन मुहरों को बाहर लाने के लिए प्राणपण से प्रयत्न करे।

[**'एक्सप्रेस मैगजीन' से साभार**]

□

(पृष्ठ ३९ का शेषांश)

माना जाये ? भारत में नचिकेता नाम का एक बालक भी इसी प्रकार का व्यक्तित्व हुआ है। यज्ञ में बूढ़ी गायों को दान करना देख उसने पिता का विरोध किया। फलस्वरूप मृत्यु के पास भेजा गया। अपनी दृढ़ता, जिज्ञासा तथा संयम के बल पर उसने यम को प्रभावित किया और गुह्यतम ज्ञान प्राप्त किया। सुकरात ने भी ऐसा ही किया। अतः हम कह सकते हैं सुकरात की मृत्यु उनके जीवन से कम महत्वपूर्ण नहीं थी। **—दहियांवां टोला,**

रेलवे लाइन से उत्तर, छपरा-८४१३०

□

(पृष्ठ ५२ का शेषांश)

'ऐसा चाहौं राज मैं,
जहां मिले सबन को अन्न!
छोट बड़ौ सब सम बसैं,
रैदास रहैं प्रसन्न !!'

श्री प्रेमदास जस्ल ने लिखा है कि—'सच बात यह है कि जिस समाजवाद हम आज कल्पना करते हैं, वह ६०० वर्ष पूर्व ही हमारे देश में प्रवेश कर गया था।'

रैदास के संपूर्ण काव्य का गहन अध्ययन, मनन कर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि रैदास का व्यक्तित्व जितना सहज, सरल है, उनके काव्य का विचार पक्ष उतना ही गंभीर और विस्तृत है, जिसके आधार पर उनके काव्य की कुछ मुख्य विशेषताओं को सूत्र रूप में हम इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं—हिन्दू-मुस्लिम एकता, छुआछूत का विरोध, वर्गहीन समाज की कल्पना, तथा स्वातंत्र्य चेतना आदि।

श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' के कथन में सत्य ही ध्वनित हुआ है—'संत कवि रैदास की विचारधारा तत्कालीन संदर्भों में एक सांस्कृतिक चमत्कार है, उसका महत्व आज भी उतना ही है, जितना सदियों पहले उनके समय में था। परिस्थितियां बाहरी रूप में कितनी भी बदली क्यों न दीखती हों, वे उसी व्यवस्था का अंग हैं। इसीलिए रैदास काव्य की प्रासंगिकता और महत्व अक्षुण्ण है।'

—हिंदी विभाग, गवर्नमेंट कालेज,

दमण-३९६२१०

□

कैसे - कैसे खुराफाती दिमाग

☐ डॉ. शशि गोयल

ठग सम्राट नटवरलाल की गिरफ्तारी। उसका दावा कि यदि उसे दो वर्ष का समय दिया जाये तो वह इतना धन एकत्रित करके दिखा सकता है कि सरकार का कर्जा चुक जाये। और यह मात्र उसके उर्वर मस्तिष्क की उठा-पटक का ही कमाल होगा। यद्यपि चार्ल्स शोभराज भी कहता है कि अधिक दिन तक उसे कोई जेल बंद नहीं रख सकती, लेकिन उसका मस्तिष्क ठगी ही नहीं, हत्यारा भी है। उसे अनोखे मस्तिष्क में शामिल नहीं किया जा सकता।

नटवरलाल जैसे कुछ मस्तिष्क और भी हुए हैं, जिन्होंने अपने देश को हिला दिया। इनमें एक हैं काउंट विक्टर लास्टिंग।

कृषक परिवार के एन्द्रे ने पांच व्यक्तियों के साथ एफिल टावर के लोहे के कबाड़े का टेंडर भरा, जिसमें उसका टेंडर मंजूर हो गया था। बस उसके दिमाग में संदेह का कीड़ा अगर कहीं कुलबुला रहा था तो यही कि अधिकारी किसी दफ्तर में न मिलकर होटल में मिलता है। वैसे कागजात पूरे थे और समाचार-पत्र में उसने पढ़ा था 'एफिल टावर झुक गयी है, उसकी मरम्मत कराने पर लाखों फ्रेंक खर्च होंगे। सरकार यह जानकारी प्राप्त कर रही है कि क्या एफिल टावर को बनाये रखना उचित होगा या उसे तोड़ देना ठीक रहेगा।'

उसके एक सप्ताह बाद ही फ्रांस के एक डिप्टी डायरेक्टर जनरल के कार्यालय से देश के पांच बड़े लौह विक्रेताओं को पत्र मिले कि अमुक तारीख को शाम ३ बजे वे अमुक होटल में आयें, वहां सरकारी ठेके के बारे में बातचीत होगी। पांच लौह विक्रेताओं से अधिकारी लास्टिंग ने कहा, 'यह एक अत्यंत गोपनीय बात है जो केवल मुझे, प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति को ही मालूम है। सरकार एफिल टावर को तोड़ना चाहती है।' पांचों को एफिल टावर लास्टिंग ने दिखायी। मीनार में लगे गार्डरों की लंबाई, मोटाई, संख्या तथा उनका भार बताया। उन पांचों को पूर्ण गोपनीयता बनाये रखने की कसम दिलायी और होटल में मुहरबंद टेंडर मंगाये।

एन्द्रे होटल पहुंचा। सरकारी अधिकारी के नियमानुसार कमीशन के लिए एक बियरर चैक लास्टिंग को थमा दिया। उसे आश्वासन दे लास्टिंग ने चैक भुनाया और आस्ट्रिया भाग गया। बेचारा एन्द्रे मीनार खरीदने का इंतजार ही करता रह गया।

महान धोखेबाज

लास्टिंग ने बैंक के प्रधान टामेंट को

की संपत्ति २५००० डालर में खरीदी । उसके रख-रखाव के लिए उसने उनसे २५००० डालर के बांड भुनाने के लिए कहा। ग्रीन और बैंक अधिकारी २५००० डालर नगद तथा मार्स्टन फार्म का सेल डीड साथ लाये । लास्टिंग ने मेज की दराज से लिफाफा निकाला । उसे एक ओर से खोला 'पचास हजार डालर के बांड हैं' उसने कहा और फिर उस लिफाफे को पुनः दराज में रख लिया। दूसरी दराज से व्हिस्की की बोतल निकाली और फार्म खरीदने के उपलक्ष्य में जश्न मनाने के लिए आग्रह किया । गहरे नशे में लास्टिंग ने उनसे २५००० डालर नगद तथा डीड का कागज ले लिया तथा दूसरा लिफाफा पकड़ा दिया । ग्रीन ने बैंक में लिफाफा खोला तो पाया बांड की शक्ल में अखबार के कागज !

लास्टिंग को कंसास में पकड़ा गया । वहां उसने वकील से कहा कि उसे पकड़ने से बैंक की प्रतिष्ठा को धक्का लगेगा, अगर उसे छोड़ दिया जाये तो वह रुपया लौटा देगा। लास्टिंग की बातों में आकर बैंक मैनेजर ने हथकड़ियां खुलवा दीं, लेकिन लास्टिंग ने बात पलटकर मानहानि का दावा ठोंकने की बात की तथा १००० डालर मुआवजा मांगा । २५००० डालर से हाथ धोना ही पड़ा १००० डालर और देने, लेकिन यह बात फैलते ही बैंक से पैसा निकलवाने वालों की लाइन लग गयी। न केवल बैंक फेल हो गया बल्कि मार्टन ग्रीन और बैंक मैनेजर दोनों ही बर्बाद हो गये ।

रोनाल्ड डॉज नामक धनाढ्य को लास्टिंग ने खुद को फिल्म निर्माता बताकर फिल्म पूरी होने में ५०,००० डालर की कमी बतायी। डॉज ३४,००० डालर लगाने को तैयार हो गया । होटल में ही रुपये ले डॉज को नशे में धुत छोड़ वह गायब हो गया। वहां से वह फ्रांस भाग गया ।

लास्टिंग ने टीन के एक डिब्बे में कुछ बटन व घड़ी लगाकर उसे असली डालर बनाने की मशीन बताकर हर्मन नामक युवक से २५,००० डालर ठग लिये तथा १०,००० डालर रिचर्ड नामक पुलिस अधिकारी से ठगे । जाली नोटों का धंधा भी किया, लेकिन अंत में बीस साल की सजा काटते हुए जेल में ही मर गया ।

आंखों में धूल

चार्ल्स पोजी वोस्टन की आयात-निर्यात की दलाली करने वाली एक फर्म में नौकरी करता था । इस फर्म में वह पत्र-व्यवहार का कार्य करता था । एक दिन एक स्पेनी व्यापारी ने पोजी को डाक कूपन भुनाने के लिए भेजा। उन डाक कूपनों को भुनाते समय चार्ल्स पोजी को ज्ञात हुआ कि मैड्रिड में एक अमरीकी सेंट में खरीदा गया कूपन अमरीका में एक निकल के बराबर है। इसका कारण अमरीका और स्पेन की एक निर्धारित संधि थी न कि वर्तमान विनमय दर । पोजी के मस्तिष्क ने करवट ली । उसने स्कूल स्ट्रीट पर एक कमरा

लेकर अपना दफ्तर खोल लिया, नाम रखा 'सिक्योरिटी एक्सचेंज कंपनी'। पहले अपने मित्रों को उसने विश्वास में लिया। उनसे २५० डालर लेकर ३७५ डालर कुछ सप्ताह बाद लौटा दिये। धीरे-धीरे पैसा जमा करने वालों की भीड़ जमा हो गयी। यहां तक कि उसे पैसा गिनने के लिए अनेक युवक रखने पड़े। यह सब वह पोस्टल कूपन खरीदकर अमरीका में भुनाता था। वह गर्व के साथ कहता था 'मैं करोड़ों पोस्टल कूपन खरीदता हूं और किस प्रकार नगद में बदलता हूं यह मेरा गुप्त तरीका है।'

उस रुपये से उसने बड़ी-बड़ी कंपनियों के शेयर खरीदे और जमीन जायदाद खरीदी। लेकिन अमरीकी डाक विभाग में पोस्टल कूपनों की भारी बिक्री से खुफिया जांच प्रारंभ हो गयी। लेकिन पोजी का कहना था कि मैंने किसी का पैसा नहीं लिया है, लाभ सहित सबको रुपया दिया है, इसलिये मुझे किसी को जवाब देने की आवश्यकता नहीं है। पोजी ने अविश्वास प्रकट करने पर खुल्लमखुल्ला रुपया वापस करना शुरू किया तो जनता का विश्वास और भी जम गया, जब कि सरकारी अधिकारी समझ गये कि वह बाद वालों का रुपया पहले वालों को वापस दे देता है और उनके रुपये से डाक कूपन भुनवा कर मौज मना रहा है।

पुलिस ने धोखाधड़ी के आरोप में उसे गिरफ्तार कर लिया। इस समय तक वह लोगों के १·५० करोड़ डालर लूट था। पुलिस ने हिसाब लगाने पर कि केवल २५ प्रतिशत भुगतान ही संपत्ति से करना संभव है। पोजी को अपराधों की सजा दी गयी, और वर्ष के लिए जेल भेज दिया गया। वह तीन साल बाद छूटा, लेकिन तुरंत लिया गया। ऋणदाता उसके खून के हो रहे थे तो उसे इटली भेज दिया जहां वह मुसोलिनी की 'लाइएयर-का ब्राजील में मैनेजर बना दिया लेकिन मुसोलिनी के पतन के साथ भी पतन हो गया।

एफिल टावर को कबाड़ में बेचने लास्टिग के समान आर्थर फर्ग्यूसन ने का राजमहल बकिंघम पैलेस, प्रख्यात नेलसन की मूर्ति, संसार की सबसे बड़ी बेन घड़ी, अमरीका का राष्ट्रपति स्वतंत्रता की मूर्ति सबको खुले आम दिया।

ठगराज फर्ग्यूसन

आर्थर फर्ग्यूसन ब्रिटेनवासी स्कॉट एक दिन वह ब्रिटेन के प्रख्यात सेनापति लार्ड नेलसन की मूर्ति के खड़ा था। उसने देखा कि एक धन दिखनेवाला अमरीकी पर्यटक बड़े आदर उस मूर्ति को देख रहा है। फर्ग्यूसन दिमाग में बिजली कौंधी और उसने परिचय गाइड के रूप में देकर परिचय जान लिया। नेलसन विषय में बताकर दु:ख-भरे स्वर में

ह स्थान श्री हीन हो जायेगा, लेकिन
भी क्या जा सकता है!' अमरीकी
के कौतूहल प्रकट करने पर उसने
क ढंग से कहा कि ब्रिटेन पर
हो गया है, उसने कुछ ऐति-
वस्तुओं को बेच देने का निर्णय
है। अभी सर्वप्रथम इस स्तंभ को
चाहती है। और मात्र छह हजार
में कोई इसे खरीद सकता है।
पर्यटक खरीदने को उत्सुक हो
और फर्ग्यूसन मध्यस्थ बना। उसने
किया कि इंगलैंड की प्रतिष्ठा बनाये
के लिए इस बात को गुप्त रखेगा।
अधिकारियों से अनुमति लेने
कुछ देर पश्चात् लौटकर छह हजार
चैक ले उसकी रसीद देकर भुनाने
। अमरीकी ग्राहक जब स्वयं संबं-
अधिकारियों से मिला तो वह यह जान-
रह गया कि वह बुरी तरह ठगा
।

घटना के तुरंत बाद फर्ग्यूसन ने
पौंड में संसार की सबसे बड़ी
वेन बेच दी। ब्रिटेन के बकिंघम
हजार पौंड में ही बेच मारा।
में उसकी गतिविधियां अमरीका में
हो गयीं। उसने अमरीकी राष्ट्र-
ह्वाइट हाउस को ९९ वर्ष की
दे दिया; पहले साल का किराया
डालर अग्रिम ले लिया।
आस्ट्रेलियाई सौदागर को बेची
की मूर्ति आसान सिद्ध न हुई। रुपया आस्ट्रेलिया से देर से आने के कारण फर्ग्यूसन अधीर हो उठा। उसके बार-बार के तकाजे ने सौदागर को संदेह में डाल दिया। उसने फर्ग्यूसन के फोटो को पुलिस में दिखाया। पुलिस महान स्मारकों के सौदागर को पाकर प्रसन्न हुई। पांच साल की सजा भुगतकर फर्ग्यूसन नये-नये तरीकों से लोगों को ठगता रहा। १९३८ में उसकी मृत्यु हो गयी।

अद्भुत स्मरण-शक्ति का धनी

क्रोगर का जन्म २ मार्च १८८० को स्वीडन के एक उपनगर में हुआ था। अद्भुत स्मरण-शक्ति का धनी क्रोगर एक बार सुनकर पूरा पाठ याद कर लेता था, लेकिन उसने अपनी बुद्धि मक्कारी की तरफ लगायी।

स्वीडन से इंजीनियरिंग की डिग्री लेकर उसने अमरीका के बड़े-बड़े उद्योगों का अध्ययन किया। स्टॉकहोम से उसने वास्तुशिल्पी रोल के साथ व्यापार प्रारंभ किया। प्रथम विश्वयुद्ध के समय उसने यूरोप के सभी छोटे-छोटे देशों के दियासलाई उद्योग को खरीद लिया। सारी दुनिया का दियासलाई धंधा हाथ में आ जाने पर उसने असली उद्योग के साथ कई नकली उद्योग केवल कागजों पर खड़े कर दिये। शेयर मार्केट में अपना भाव बनाये रखने के लिए दो-दो तीन-तीन करोड़ की पूंजी की इन कंपनियों के आंकड़े अपनी स्मरणशक्ति के भरोसे ही तैयार कर लेता था। कुछ देशों को तो उसने

वास्तविक ऋण दे रखा था। कुछ कंपनी के डायरेक्टरों को दिखाने के लिए अरबों का ऋण कागजों पर दिखाता। विभिन्न राष्ट्रों के वित्त मंत्रियों के हस्ताक्षरों की नकल से 'बांड पेपर' तैयार कर लेता था। ब्याज अपनी तरफ से जमा करता रहता था।

अपने एक टेलीफोन में उसने इस ढंग से प्रबंध कर रखा था कि पैर से बटन दबाने पर घंटी बजने लगती थी और वह उसे उठाकर देश-विदेश के सम्राट या वित्त मंत्री, राष्ट्रपति का अभिवादन कर, काल्पनिक बातचीत शुरू कर देता। मिलने आया व्यक्ति प्रभावित हो जाता। कहने के लिए जीवन भर अविवाहित रहा, लेकिन हर बड़े शहर में उसकी एक रखैल थी। हर देश में उसके सजे-धजे आवास थे। उसको लोग 'दियासलाई सम्राट' कहते थे व उसे अरबपति समझते थे। उसका करोड़ों रुपया साल का खर्च था। आमदनी खर्च के मुताबिक थी नहीं। कितना ही उसने ऋण लिया, परंतु अंत में परेशान हो रिवाल्वर छाती में दाग कर आत्महत्या कर ली।

सरकार को झांसा

सेसिल रोडस की तरह अरबपति बनकर सत्ता पर अंकुश करने का सपना देखने वाले एल्विस ने अपना जीवन ही धोखा-धड़ी की नींव से शुरू किया। लंदन के विश्वविद्यालय की जाली डिग्री बना पोलीटेकनीक स्नातक ने अंगोला में रेलवे इंसपैक्टर की नौकरी प्राप्त की। अपनी योग्यता से दो वर्ष में ही मैनेजर बन गया।

उसके बाद अंगोला सार्वजनिक
विभाग का अधीक्षक बना।

एल्विस ने इस पद पर रहते
कि अंगोला अपार हीरे-जवाहरात,
धातुओं आदि संपदा का मालिक है।
हथियाने के लिए उसने नौकरी
एल्विस रईस लि. नाम की कंपनी
उस कंपनी को चलाने के लिए
समस्या अंगोला को रेल कंपनी
मैन बन उसमें ऋण दाताओं के
लिए रखा। लगभग एक लाख
सोना अपनी कंपनी में लगा दिया,
शीघ्र ही उसकी हेरा-फेरी पकड़ी
और वह जेल में बंद हो गया।

जेल में एल्विस ने पढ़ा कि जर्मनी
ने बिगड़ती आर्थिक स्थिति
लिए बहुत-सी मुद्रा छापकर चला
बस उसने भी पुर्तगाली मुद्रा
जुगाड़ भिड़ाना शुरू कर दिया।
मुद्रा-चलन की प्रक्रिया की
प्राप्त की। उसे ज्ञात हुआ कि
पुर्तगाल ने सीमा से अधिक नोट
हैं। दूसरी यह कि बैंक यह नहीं
कि किस राशि के कितने नोट
इसी जानकारी के दौरान उसे
कि बैंक का अपना प्रेस छोटे नोट
और ५०० और १००० क्यूडो
इंग्लैंड की वाटरलू कंपनी छापती

एल्विस ने पुर्तगाल के
व्यक्तियों को यह झांसा दिया कि
सरकार की पूर्ण सहमति से

को बचाने के लिए नोट छपवाना है। उसने हेग के प्रसिद्ध व्यापारी मारंग को प्रतिनिधि के रूप में कंपनी विंचेस्टर स्ट्रीट कार्यालय । पुर्तगाली दूत के बड़े भाई जोस ने अपने भाई से वाटरलू कंपनी मारंग को पुर्तगाल सरकार के प्रतिके रूप में परिचित कराते हुए पत्र । पुर्तगाल के गवर्नर की ओर वाटरलू कंपनी को भेजे जाने वाले एल्विस ने तैयार किये ।

बैंक अंगोला एंड मैट्रोपोल अपने पूरा करने के लिए खोला । मारंग कार्यवाही पूरी की और कंपनी जब पूर्ण आश्वस्त हो गयी क्यूडो के दो लाख नोट छापकर को दे दिये। बाद में ऐसे ही चार और भी वाटरलू कंपनी ने मारंग । एल्विस ने उन नोटों को अपने जरिये चलन में ला दिये । एल्विस था कि वह बैंक ऑफ पुर्तगाल के अधिक शेयर खरीदकर उसका बन जाय। लेकिन विदेशी मुद्रा के व्यापार के सिलसिले में पुर्तगाल की शाखा ने एक दिन लिस्बन के अंगोला एंड मैट्रोपोल की एक छापा मारा । वहां गैरकानूनी छपाये गये नोटों के अलावा ५०० असली नोटों का अंबार देखा । सिलसिलेवार नहीं थे । यही राज कमजोरी बन गयी, और एल्विस

जिंदगी का पट्टा

बगदाद के एक खलीफा ने अपना वेतन निश्चित कर रखा था । राज-काज और प्रजा की सेवा के बदले वह रोजाना शाम को तीन दिरम लिया करते थे । हालांकि राज्य के दूसरे कर्मचारी इससे भी अधिक वेतन लेते थे, लेकिन खलीफा अपने परिवार के लिए तीन दिरम ही लेते थे।

एक दफा खलीफा की बेगम ने उनसे कहा—'ईद आ रही है । आप यदि राज-कोष से तीन दिन का वेतन अग्रिम ले लें तो बच्चों के वास्ते नये कपड़े बनवा दूं।'

खलीफा ने गंभीर स्वर में जवाब दिया—'बेगम, मैं किस आधार पर तीन दिन का वेतन अग्रिम लूं ? यदि मैं तीन दिन जीवित नहीं रहा तो यह कर्ज कौन चुकायेगा ? तुम खुदा से मेरी जिंदगी के तीन दिन का पट्टा ला दो तो मैं राजकोष से अपने तीन दिन का वेतन अग्रिम ला सकता हूं ।' बेगम हतप्रभ रह गयी। खलीफा की बात में तर्क की कोई गुंजाइश ही नहीं थी । वे सच कह रहे थे !

— राजकुमार जैन

ooooooooooooooooooooooooo

जेल में २० साल के लिये बंद हो गया । लेकिन पुर्तगाल सरकार को उसने बुरी तरह हिला दिया । सजा पूरी होने से पहले ही उसकी मृत्यु हो गयी ।

—'चिदंबरा'-१, जवाहर का नगला रोड,
खंदारी, आगरा-२८२००२

□

तलाश

क्यों भटकते हो
परछाइयों की तलाश में ?
वसन्त के स्वागत में
जब मेरी प्रेम - उर्वरा धरती
मुरझायी माटी के कण - कण को
अपने ममत्व में डुबोने के लिये आतुर हो,
तुम इस नैसर्गिक सच को
झुठलाकर आग लगाते घूम रहे हो
चन्दनवन में पलाश में ?
जिस पवित्र भूमि में
कितने ही दिव्य रूप
समिधा बनकर जले,
जिसकी कोख में
शताब्दियों से अहिंसा और प्रेम के सपने पले;
वही बन्दूकों से गोलियों की अनवरत बौछार,
सड़कों, घरों, आंगनों में केवल चीत्कार ही चीत्कार
उठो बहुत हो चुका,
वातारण में फिर से करो मंत्रोच्चार
ताकि फिर से प्राण प्रतिष्ठा हो सके,
मानवता की सड़ी-गली लाश में ।
क्यों भटक रहे हो
परछाइयों की तलाश में !

—अंजलि पांडेय

सी-ब्लाक ३६, महावीर भवन, किदवई नगर, कानपुर-२०८०११

प्रेत

□ सुरेन्द्र सिंह गौर

नन्हे ठाकुर की उम्र ६ वर्ष की थी। घर में वे सभी के लाडले थे। दिन भर शैतानी करते, पूरे मकान में धमाचौकड़ी मचाते रहते थे। उन्हें ये अपने नाना-नानी का बड़ा घर बहुत भाया था। मैं अक्सर सोचने लगता था। जब नन्हे ठाकुर वापस अपने पिता के घर जबलपुर चले जायेंगे, तब ये बड़ा घर कितना अधिक सूना-सूना-सा लगने लगेगा।

नन्हे ठाकुर मेरी बहन सुमन के पुत्र थे। वे कक्षा दो में पढ़ते थे। हमारे यहां वे गर्मियों की छुट्टियां बिताने आये थे। उनका मोटा-सा शरीर, छल्लेदार बाल, गोरा रंग, बड़ी-बड़ी आंखें अत्यधिक आकर्षक लगती थीं। जो भी मेरे घर बहन सुमन से मिलने आता, नन्हे ठाकुर को गोद में जरूर उठा लेता। नन्हे ठाकुर को किसी की गोद में चढ़ना कभी नहीं भाता। जब नन्हे ठाकुर को कोई अपनी गोद में अधिक देर तक लिये रखता, तो नन्हे ठाकुर चीखना-चिल्लाना शुरू कर देते थे। उन्हें तो जमीन प्रिय थी। वे पूरे कमरों में धमाचौकड़ी मचाना, कमरों में सारे सामान की उठा-पटक करते अपना फर्ज समझते थे।

प्रतिदिन रोज मैं दफ्तर से जब शाम को घर लौटता तो नन्हे ठाकुर के लिए कुछ न कुछ अवश्य लाता था। शाम को सवा पांच बजे से नन्हे ठाकुर घर के दरवाजे पर खड़े होकर मेरे दफ्तर से आने का इंतजार करते रहते थे।

मैं जब उन्हें दूर से आता दिख जाता। वे दौड़कर मेरे पास पहुंच जाते। हम दोनों फिर साथ-साथ घर आते थे। मैं घर आकर, कपड़े बदलकर समाचार-पत्र पढ़ने लगता। नन्हे ठाकुर इसी बीच कुर्सी लाकर उस पर चढ़कर मेरे खूंटी पर टंगे कपड़ों की जेबों की तलाशी लेते। जब उनके मतलब की चीज चाकलेट, या बिस्किट मिल जातीं, वे खुश हो उठते।

हमारे यहां नन्हे ठाकुर को आये लगभग एक माह पूरा हो चुका था। एक दिन मैं रोज की तरह दफ्तर से साढ़े पांच बजे घर लौटा। आज घर सूना-सूना-सा लग रहा था। आज नन्हे ठाकुर ने मेरे दफ्तर से आने का इंतजार नहीं किया था। अंदर शायद किसी निजी काम में व्यस्त होंगे, मैंने यही सोचते हुए घर में प्रवेश किया।

'नन्हे ठाकुर कहां हैं?' मैंने अपनी बहन सुमन से पूछा।

'उसकी तबियत खराब है।' सुमन ने जवाब दिया।

मैं परेशान-सा हो उठा, 'क्या हुआ नन्हे ठाकुर को ? सुबह-सुबह तो मैं उसे इतना अच्छा-भला छोड़कर दफ्तर गया था।'

'न जाने क्या हो गया ? दोपहर को वह सभी बच्चों के साथ सामने वाले बरगद के पेड़ के नीचे खेल रहा था। अचानक न जाने क्या-क्या अनाप-शनाप अपने बाल-मित्रों से बोलने लगा, पागलों की तरह हरकतें करने लगा।' सुमन ने सिसकते हुए मुझको बतलाया।

सुमन का दुःखित होकर सिसकना स्वाभाविक ही था। वह नन्हे ठाकुर की मां थी। मैंने सुमन को सांत्वना देते हुए नन्हे ठाकुर को आवाज लगायी, 'नन्हे ठाकुर . . . ओ नन्हे ठाकुर . . .'

'मत बुलाइये भइया उसे . . . अम्मा, बाबूजी उसे झाड़-फूंक कराने के लिए ले गये हैं। उसे शायद कुछ हो गया है। किसी ने टोटका या जंतर-मंतर मारा है।' बहन सुमन ने मुझको बतलाया।

'टोटका, जंतर-मंतर . . .?' मैं अनायास ही बुदबुदा उठा।

'हां, वरना इतना स्वस्थ बच्चा, अच्छा-भला खेल रहा था, यकायक उसे क्या हो सकता है ? ऐसा तो कोई रोग मैंने नहीं देखा।' सुमन ने रोते हुए मुझसे कहा।

मेरी स्वयं कुछ समझ नहीं आया। मैं अंधविश्वास में विश्वास भी नहीं करता था।

'डाक्टर को दिखलाया ?' मैंने पुनः बहन सुमन से प्रश्न किया।

'डाक्टर की क्या जरूरत, भइया ? कौन उसे खांसी-बुखार है? वह अच्छा-खासा चलता-फिरता है। वेहूदी हरकतें भर करना शुरू कर दी है' तर्क प्रस्तुत करते हुए सुमन बोली।

मैं कुछ कह न सका। चुपचाप दूर करने के लिए समाचार-पत्र उठा पढ़ने लगा, लेकिन मन नहीं लग सका मैं नन्हे ठाकुर को तुरंत देखना चाहता सोच रहा था, सुबह जब मैं दफ्तर जाने तैयार था, तब तो वह बिलकुल ठीक

'सुमन . . . सुमन . . .' बाबूजी ने अम्मा ने नन्हे ठाकुर के साथ घर में करते हुए आवाज दी।

मैं बाबूजी की आवाज सुनकर उठ बैठा। मैंने पास जाकर नन्हे ठाकुर बातचीत करने का प्रयास किया। मुझको पहचान भी न सका, न जाने किन नामों से मुझे पुकारने लगा, उसने मुझे पापा कहा, फिर चाचा, मुझे मामा कहने लगा। उसकी हालत देखकर उसकी मां यानी मेरी सुमन घबड़ाकर तेजी से रोने लगी।

'मेरे नन्हे को, मेरे लाल को बचा बाबूजी . . . अब मैं नन्हे के पिता को मुंह दिखलाऊंगी ?' बहन सुमन रोते बोली।

'मैं राधेश्याम ओझा को कह हूं। वह आधा घंटे के अंदर ही आता तू घबड़ा मत, बेटी। नन्हे को कुछ हुआ है।' बाबूजी ने बहन सुमन को बंधवाते हुए कहा।

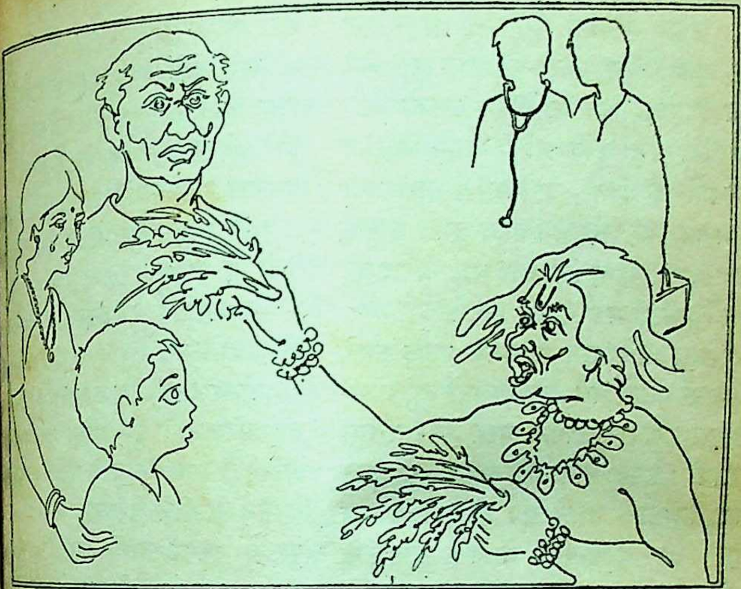

मैं अब भी समझ नहीं सका था, नन्हे ठाकुर को क्या हो गया है? मैंने फौरन ड़े पहनकर पड़ोसी के यहां से, अपने क्टर मित्र अग्रवाल को टेलीफोन किया। हें शीघ्र घर आने को कहा।

मैं ऐसा करके तुरंत उल्टे पांव घर वापस ट आया। नन्हे ठाकुर सचमुच अपनी वास खो चुके थे। उन्हें कुछ होश नहीं ा। मैं घवड़ा रहा था।

मैंने अपने बाबूजी से पूछा, 'बाबूजी, ने इसे डाक्टर को क्यों नहीं दिखलाया?'

'ा, इसे कौन बुखार-खांसी है? हम ते हैं—ये तो किसी के टोटका का फल ा किसी प्रेत की छाया है। इसे डाक्टर हीं, ओझा ही ठीक कर सकता है।' जी ने बड़े विश्वास के साथ तर्क देते हुए मेरी बात का जवाब दिया।

मैं परेशान हो चुका था। मेरी कोई मानने को तैयार नहीं था। एक तरफ मैं अकेला, दूसरी तरफ मेरे माता, पिता, बहन मेरे विचारों के प्रतिकूल थे। मैंने अभी चुपचाप रहना ही उचित समझा। मैं दूसरे कमरे में बैठकर डाक्टर के आने का इंतजार करने लगा।

'नमस्कार, बाबूजी।' जंतर-मंतर के ज्ञाता, भूत-प्रेतों को चित्त करने वाले प्रकांड विद्वान ओझा राधेश्याम ने अभिवादन करते हुए हमारे घर में प्रवेश किया।

मैं बाबूजी के क्रिया-कलापों में अंकुश नहीं लगा सकता था। उनकी बातों का विरोध नहीं कर सकता था। बाबूजी को अपने काम में किसी भी प्रकार का मेरे

द्वारा अंकुश लगाना पसंद न था। एक बार उनकी एक छोटी-सी बात का मेरे द्वारा विरोध किये जाने पर उनको दिल का दौरा पड़ चुका था। उन्हें क्रोध न दिलवाने के लिए डाक्टर ने मुझे मना किया था। मैं इस समय बहन सुमन से कुछ समझाकर कहना चाहता था, मगर वह मानने को तैयार न थी।

ओझा राधेश्याम ने सबसे पहले कमरे के चारों कोनों पर चार जलती हुई मोमबत्तियां रखवायीं, फिर चार अगरबत्तियां जलायीं। इसके बाद नन्हे ठाकुर को अपने पास बैठाया। उसने मन ही मन में मंत्र पढ़ना और बीच-बीच में नन्हे ठाकुर के ऊपर फूंक मारना शुरू किया। कुछ देर बाद नन्हे ठाकुर के कंधे को झकझोरते हुए पूछा–'कौन है तू?'

नन्हे ठाकुर कुछ नहीं बोले। बस, ऊं... हूं... ऊं... हूं... करते रहे।

'बोलता है या नहीं? बोल।' ओझा राधेश्याम ने नन्हे ठाकुर के बाल जोरों से पकड़ लिये थे। उसने बहन सुमन को दूसरे कमरे में जाने का इशारा किया।

सुमन दूसरे कमरे में चली गयी। मैं अलग दूसरे कमरे में डाक्टर के आने का बेसब्री से इंतजार कर रहा था। उन्होंने आने में बहुत देर कर दी थी।

'नहीं बोलेगा बे...?' राधेश्याम ने तेज आवाज में कहते हुए, एक थप्पड़ नन्हे ठाकुर को मार दिया।

नन्हे ठाकुर चीख पड़े 'मां... मां... बचा लो।'

'अरे तुझे कोई नहीं बचायेगा बोल कौन है रे तू?' राधेश्याम ने और ज़ोरदार थप्पड़ नन्हे ठाकुर की कनपटी पर जड़ दिया।

नन्हे ठाकुर चोट से बिलबिला उठे। तेजी से बोले–

'बरगद . . . बरगद . . . हूं मैं, छोड़ दो।'

ओझा राधेश्याम क़ी आंखें चमक उठीं। वह मुसकराते हुए बोला, 'देखा बाबूजी आपने बनाया था न? नन्हे ठाकुर बरगद के पेड़ के नीचे खेल रहा था। इसे पुराने बरगद वाला प्रेत ही लगा है। इतना कहकर राधेश्याम ने लगातार थप्पड़ और नन्हे ठाकुर की कनपटी पर छोड़ दिये। ओझा राधेश्याम शायद प्रेत को पहचानने में पूर्णतः सफल हो चुका था। वह तेजी से चीखा, 'बाबूजी, ये बरगद का प्रेत बहुत खतरनाक है। धोबी के लड़के पर इसी की छाया पड़ी बेचारा तड़प-तड़पकर मरा था। ये प्रेत भी कई लोगों की जानें ले चुका है। लोभान की धूनी का प्रबंध करो। लोभान की धूनी दिये, बिना मारे- प्रेत नहीं भागेगा। बहुत दुष्ट प्रेत है।'

बाबूजी ओझा राधेश्याम की यह सुनकर कांप उठे। उनकी सिट्टी- गुम हो गयी। तभी बहन सुमन की कमरे से आवाज आयी – 'नहीं- ओझाजी, इसका स्कूल का नाम

है। वो ही यह बतला रहा है।'

'क्या . . . क्या . . . इसका तो नाम नन्हे ठाकुर है न?' ओझा राधेश्याम अपनी बात फिसलते देखकर बोला।

'नहीं नहीं, इसका घर का लाड प्यार का नाम नन्हे ठाकुर है। स्कूल में बरगद नाम चलता है।' सुमन ने जवाब दिया। उसे राधेश्याम द्वारा अपने बेटे नन्हे ठाकुर पर अत्याचार सहन नहीं किया जा रहा था। वह अथक पीड़ा एवं दु:ख के कारण सिसक रही थी।

मुझसे अब रहा न गया। मैं ओझा राधेश्याम के पास पहुंच गया। मेरे पहुंचते-पहुंचते नन्हे ठाकुर के राधेश्याम ने ३-४ थप्पड़ और रसीद कर दिये थे।

मैंने जाते ही राधेश्याम का हाथ पकड़ लिया, 'तुम पागल हो क्या? इस तरह अगरसीट एवं लोभान के धुएं से नन्हे बच्चे की जान ही निकल जायेगी।'

'छोड़िये, सुरजीत भइया, बीच में टांग मत डालिये, नहीं तो बहुत पछताओगे...' वह अपने शब्द पूरे नहीं कर पाया था, अचानक उसकी नजर नन्हे ठाकुर पर पड़ी, नन्हे ठाकुर लहूलुहान होकर जमीन पर गिर पड़े थे। उनकी नाक से बड़ी तेजी से खून निकलने लगा था।

'अरे नन्हे ठाकुर के खून...!' बाबूजी ने घबड़ाते हुए कहा।

मैंने बाबूजी की तरफ अत्यधिक घृणा दृष्टि से देखते हुए कहा—'खून बहना भी ओझा राधेश्याम बंद कर देगा। आप क्यों परेशान होते हैं?'

मैंने देखा, ओझा राधेश्याम इतना अधिक खून देखकर घबड़ा चुका था। वह मुझसे अपनी नजर चुरा रहा था। मैंने उसके कंधे को तेजी से झकझोरते हुए कहा, 'नाटक बंद करके, खून बहना बंद कर, ढोंगी राधेश्याम! यदि नन्हे ठाकुर को कुछ हो गया तो मैं तुझे यहां से जिंदा न जाने दूंगा।'

खून बड़ी तेजी से रिस रहा था। ओझा राधेश्याम बहुत अधिक घबड़ा गया था। वह बेबस-सा होकर मुझसे बोला, 'सुरजीत भइया, जल्दी से डाक्टर को बुला लो, अब तो मेरे बस का नहीं है...'

वह आगे कुछ कहता कि बाबूजी के शब्दबाण उस पर बरस पड़े, 'हरामी... ढोंगी, अब तेरे बस का नहीं... फिर कौन प्रेत भगायेगा?'

मैंने बाबूजी को रोकना चाहा। बाबूजी गुस्से में थे। मुझे डर था कहीं उन्हें दिल का दौरा न पड़ जाये।

बाबूजी कह रहे थे, 'पुलिस को बुलाओ, यदि यह आज प्रेत को नहीं भगाता तो इसे जेल भिजवा दो।'

तभी किसी ने दरवाजे पर लगी घंटी बजायी, ओझा राधेश्याम ने सोचा शायद पुलिस आ गयी है, उसने घबड़ाकर बाबूजी के तुरंत पैर पकड़ लिये।

'बाबूजी, मुझे पुलिस से मत पकड़वाइये, मैं बरबाद हो जाऊंगा। मेरे तीन बच्चे हैं, उन्हें कौन खिलायेगा? मैं भूत-

प्रेत झाड़ना नहीं जानता, बस यूं ही लोगों से पैसे प्राप्त कर अपने बच्चों का व अपना पेट पालता हूं। खेती में गुजारा नहीं होता, इसीलिये यह कार्य करना पड़ता है। मैं यह नहीं जानता था कि नन्हे ठाकुर को मेरे हल्के-हल्के २–४ थप्पड़ों से इतना अधिक खून निकलने लगेगा। मुझे माफ कर दो, बाबूजी।' राधेश्याम गिड़गिड़ाकर मिन्नतें-सी मांगने लगा।

मैंने बाबूजी को शांत किया। उन्हें शायद अपने अंधविश्वास पर पश्चाताप हो रहा था। वह मुझसे बोले, 'बेटा, जल्दी से कुछ करो, कहीं नन्हे ठाकुर को कुछ हो न जाये। इस पाखंडी ने तो मुझे कहीं का नहीं रखा।'

दरवाजे के बाहर लगी घंटी कोई लगातार बजा रहा था। मैंने जल्दी से दौड़कर दरवाजा खोला, डाक्टर अग्रवाल खड़े मुसकरा रहे थे। मैं उन्हें लेकर अंदर आया। इसी बीच मैंने उन्हें सारी स्थिति बतलायी।

डाक्टर अग्रवाल मेरे घर के पुराने विचारों को देखकर बहुत क्रोधित हुए। उन्होंने नन्हे ठाकुर की सर्वप्रथम अच्छी तरह से जांच की। प्रारंभिक उपचार किया। नन्हे ठाकुर की नाक से खून निकलना तब बंद हो सका।

डाक्टर अग्रवाल बाबूजी से बोले, 'पिताजी, इसे भूत-प्रेत नहीं लगे हैं, इसको 'साईकोसिस' हो गया है। यह रोग रोगी को पागल की तरह बना देता है। नन्हे ठाकुर को जल्दी ही सही इलाज की आवश्यकता है। आपके भूत-प्रेत झाड़ने वाले ओझा कभी भी इसे ठीक नहीं कर सकते हैं।' आप लोग कैसे बुजुर्ग, पढ़े-लिखे अनुभवी इंसान हैं? बच्चे को लहूलुहान करवा दिया!'

मैंने देखा, बाबूजी शर्मिंदा होकर पश्चाताप कर रहे थे। वे राधेश्याम को खोज रहे थे, लेकिन वह तो न जाने कब का डर के मारे कमरे से बाहर निकलकर भाग चुका था। **–जी. ३/४ शासकीय भवन, स्वीडिश स्कूल के सामने, गोपालगंज, सागर, म.प्र.**

□

ईसा मसीह केपर नाम के नगर में पहुंचे। वे दुष्ट दुराचारियों के मुहल्ले में ठहरे और वहीं रहना भी शुरू कर दिया।

नगर के प्रतिष्ठित लोग ईसा के दर्शन करने पहुंचे तो उन्होंने आश्चर्य से पूछा, 'इतने बड़े नगर में आपको सज्जनों के साथ रहने की जगह न मिली या आपने उनके बीच रहना पसंद न किया?'

हंसते हुए ईसा ने कहा–'वैद्य मरीजों को देखने जाता है या चंगे लोगों को? ईश्वर का पुत्र पीड़ितों और पतितों की सेवा के लिए आया है। उसका स्थान उन्हीं के बीच तो होगा।

–डा. गोपालप्रसाद

□

ाजिक-विचारधारा

वेदों में विधवा-विवाह का समर्थन

☐ अशोक श्रीवास्तव 'अंजान'

को कभी झुठलाया नहीं जा सकता। यह भी पूर्ण सत्य है कि दो शरीर, पवित्र आत्माओं के मिलन से ही सारे ार की बागडोर थमी हुई है। स्त्री-पुरुष विवाह ही दो शरीरों-आत्माओं के मिलन र्वोपरि और उजागर उदाहरण है।

ाज में मौजूदा कानूनों के अनुसार ुरुष दोनों को समान रूप से अधिकार ए हैं। वैसे शास्त्रों में भी स्त्री को पुरुष से कहीं भी नहीं आंका गया। हमारे ज की पुरानी कुरीतियों के चलते ही ारी भारतीय नारी आज इतनी अधिक ड़ी हुई है।

स विषय में वेदों के मंत्रों-श्लोकों ने पुष्टि की है। वेदों में स्त्री-पुरुष के ह के क्या नियम और पद्धति हैं? स्त्री ा स्थान दिया गया? इस श्लोक से कुछ हासिल होता है –

कियती योषा मर्यतो वधूयोः
रिप्रीता पन्यसा वार्येण ।
द्रा वधूर्मवति यत् सुपेशाः
यं सा मित्रं वनुते जने चित् ॥

ऋग्वेद–१०-२७-१२

ात्, कौन स्त्री युवा पुरुष को प्यारी ी है? जो 'सुपेशाः' सुंदर, कल्याण- वधू बनने के योग्य हो! 'सा' युवती 'जने' लोगों में से एक को 'मित्रंवनुते' मित्र बना लेती है।

इस मंत्र में स्वयंवर प्रथा का वर्णन है। सुंदर और बुद्धिमती युवती युवावस्था को प्राप्त करके स्वयं अपनी इच्छानुसार ऐसे पुरुष को अपना पति चुने, जो शुभ गुण संपन्न हो और जो वधू का इच्छुक हो, वधू के प्रति प्रीति रखता हो। अथर्ववेद में लिखा है –

'ब्रह्मचर्येन कन्या युवानं विन्दते पतिम् ।'

ब्रह्मचर्य के कठोर व्रत का समुचित पालन करके ही कन्या युवा पति को प्राप्त करने की कामना करे। इस श्लोक से यह तो साफ स्पष्ट ही हो जाता है कि, न बाल-विवाह होना चाहिये और न वृद्ध-विवाह। विवाह युवावस्था में ही होना चाहिये तथा दोनों की पूर्ण इच्छा के अनुसार।

जाया पत्ये मधुमतिं वाचं वदतु शन्तिवाम् ।

अथर्ववेद–३-३०-२

अर्थात्, स्त्री अपने पति से हमेशा मधुरस की तरह मीठी और मन को शांति प्रदान करने वाली ही बातें करे। कभी कठोर शब्दों का प्रयोग न करे। तभी उसे सुख प्राप्त होगा और उसका घर सुख संपन्नता से भरा होगा।

एक पुरुष का एक साथ सिर्फ एक ही

स्त्री से विवाह होना चाहिये । एक पुरुष का अनेक स्त्रियों से या अनेक स्त्रियों का अनेक पुरुष से विवाह या शारीरिक घनिष्ठता हर्गिज नहीं होना चाहिय । वेद शिक्षा भी इसके खिलाफ है । इसी आशय का एक मंत्र है –

इहैव स्तंमा वि यौष्टम् विश्वायुर्व्यश्नुतम् ।
क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृहे ।।

ऋग्वेद–१०।८५।४२

हे पति और पत्नी तुम दोनों, 'इहैव स्तं' घर में ही रहो, 'मा वि यौष्टम्' कभी तुममें वियोग की छाया न पड़े और न ही अनबन हो, 'विश्वं आयु: व्यश्नुतम्' तुम दोनों पूरी आयु को प्राप्त होओ, 'क्रीडन्तौ पुत्रै: नप्तृभि:' पुत्रों तथा नाती-पोतों के साथ आनंदपूर्वक जीवन व्यतीत करो, 'स्वे गृहे' अपने घर में 'मोदमानौ' मौज करते रहो ।

मंत्र में कहा गया है कि परिवार के लोगों को एक दूसरे के साथ प्रेम बरतना चाहिये । जिन परिवार के लोगों में कलह होती है, वहां मन सदा ही चिंता में डूबा रहता है । बहुत-सी स्त्रियां-पत्नियां अपने पतियों के दुर्व्यवहार के कारण और बहुत पुरुष पत्नियों के दुर्व्यवहार के कारण मलीन-हृदय, शंकित, चिड़चिड़े और पागल भी हो जाते हैं ।

इस मंत्र में 'स्तं' 'मावियौष्टं', 'व्यश्नुतम्' 'क्रीडन्तौ' 'मोदमानौ' यह क्रिया शब्द और संज्ञा शब्द द्विवचनान्त हैं, इससे सिद्ध है कि एक ही पति-पत्नी का विधान है । 'दंपती' शब्द भी द्विवचनान्त है 'जाया च पतिश्च' । एक स्त्री और एक पति ।

विवाह के समय पति इन मंत्रों पढ़ता है–

पत्नी त्वमसि धर्मणाहं गृहपतिस्तव।

अथर्ववेद–१४।१।

इस मंत्र में पति द्वारा कहा गया है गृहस्थ धर्म के पालन रूप व्रत के तू मेरी पत्नी है और मैं तेरा गृहपति हूं।

आगे कहा गया है –

ममेयमस्तु पोष्या मह्यं त्वादाद् बृहस्पति
मया पत्या प्रजावति सं जीव शरदः

अथर्व–१४।१।

अत: मैं आपके पोषण का भार ऊपर लेता हूं । हे पत्नी ! ईश्वर ने जैसी पत्नी मुझको सौंपी है । मुझ पति साथ तू संतान वाली और सौ वर्षों जीती रहे ।

यहां भी एक ही पति, व एक ही का उल्लेख है । विवाह के समय पत्नी प्रार्थना के भी निम्न मंत्र हैं :-

अक्ष्यौ नौ मधुसंकाशे अनीकं नौ सम
अन्तः कृणुष्व मां हृदि मन इन् नौ सहा

अथर्व–७।

अर्थात् हे पति, हम दोनों की मधु के समान आनंद प्रदान करते हैं । हम दोनों के मुख मृदु व कोमल आप मुझे अपने हृदय में जगह देकर लें। हम दोनों के मन में, दो शरीरों हुए एक ही मन हो । अत: हम दोनों

जीवित रहें, प्रेमपूर्वक ही रहें।
पत्नी की ओर से एक मंत्र और है, पत्नी द्वारा कहा गया है –

त्वान मनुजातेन दधामि मम वाससा ।
मम केवलो नान्यासां कीर्तयाश्चन ।।
अथर्व–७।३७।१

आपको प्राचीन प्रथा के अनुसार हारे वस्त्र सौंपती हूं। जिससे आप मेरे ही बने रहें। अन्य किसी स्त्री जाल में न उलझें।

वेद प्रमाणों से सिद्ध है कि एक और एक पुरुष का ही विवाह होना । स्त्री को पतिव्रता और पुरुष नीव्रत होना चाहिये। वेदों के अनुपतिव्रता स्त्री वह है, जो दूसरी स्त्री के ध्यान न करे। इसी प्रकार जो कई स्त्रियों को पत्नी बनाते हैं, बुद की पत्नी पतिव्रत का पालन नहीं कर सकती। क्योंकि वह पति भी है और परपति भी है। इस बहु स्त्री विवाह में पातिव्रत और दोनों का खंडन होता है।

मंत्रों में कई जगह–मंत्रों में वधू को ससुराल के प्रति, कैसा सरल और व्यवहार करना चाहिये ? दर्शाया है। इसी आशय का यह मंत्र सटीक है।

श्वशुर भव, सम्राज्ञी श्वश्वां भव ।
सम्राज्ञी भव, सम्राज्ञी अधिदेवृषु ।।
ऋग्वेद–१०।८५।४६

हे वधू, तू ससुर के लिए महारानी बन, सास के लिए महारानी बन, ननद के लिए महारानी बन और देवरों के लिए भी महारानी बन।

इस मंत्र का मुख्य तात्पर्य यही है कि वधू को अपने उत्तम व्यवहार, उत्तम आचरण का परिचय देकर ही अपनी ससुराल में जगह बनानी चाहिये, तभी वह अपने ससुर-सास, देवर, ननद तथा ससुराल के अन्य लोगों के दिलों की चहेती-महारानी बन सकती है।

आज, 'दहेज प्रथा' हमारे समाज को दूषित किये हुए है। दहेज प्रथा का कुप्रभाव हमारे समाज पर अपनी जड़ें मजबूत किये हुए है। पति जब विवाह करता है, तब वह यही प्रतिज्ञा करता है कि मैं पत्नी का पालन करूंगा। जो पति यह आशा रखता है कि पत्नी भी मिले और वह अपने साथ धन-दहेज भी लावे; उनके विरुद्ध भी अथर्ववेद में एक मार्मिक-भर्त्सना है।

अश्लीला तनूर्भवति रूशती पापयामुया ।
पतिर्यद् वध्वोः वाससः स्वमंगमभ्यूर्णुते ।।
अथर्व–१४।१।२७

अतः, जो पति अपनी पत्नी के वस्त्रों से अपने अंगों को ढकने की कोशिश करता है, अर्थात् वधू द्वारा लाये हुए सामान के उपभोग की इच्छा करता है, उसका शरीर अश्लील या दूषित हो जाता है। अतः दहेज लेने या उसको चाहने की प्रथा को वेद ने पाप बताया है।

समस्त शुद्धियों में अर्थ-शुचि (ईमानदारी) सबसे श्रेष्ठ और आवश्यक है। इस विषय पर ऋग्वेद का यह मंत्र देखें–

शुचि वो हव्या मरूतः शुचीनां शुचि
हिनोम्यध्वरं शुचिभ्यः ।
ऋतेन सत्यमृतसाय आयन् शुचिजन्मानः
शुचयः पावकाः । —ऋग्वेद ७।५६।१२

(मरुतः) हे संसार के लोगों (वः शुचीनां) तुम शुद्ध लोगों के (शुचि हव्या) समान चीजें शुद्ध हों, मेरी प्रेरणा है कि तुम शुद्ध धर्म से कमाये हुए शुद्ध पदार्थों के साथ शुद्ध यज्ञ करो । शुद्ध सत्य और दूसरों को शुद्ध करने वाले वैदिक नियमों द्वारा बनें । रिश्वत लेना, जुआ खेलना, किसी का धन छीन लेना, यह सब अधर्म की कमाई है और यह घरों और देशों को नष्ट कर देती है ।

कहावत है कि चिता मुर्दे को जलाती है और चिंता जिंदा को । परंतु आज लड़कियों—बहुओं को ही जिंदा जलाया जाने लगा है । और इसमें शामिल होते हैं लड़की के ससुराल वाले और पीहर वाले ।

इसलिए कि माता-पिता कभी-कभी अपनी बेटियों को कभी तो साठ वर्ष के बूढ़े से ब्याह देते हैं या काफी छोटे उम्र के लड़के से । या फिर बाल-विवाह कर देते हैं । ऐसी हालत में अगर लड़की कुछ समय बाद ही विधवा हो जाती है तो वही माता-पिता उस लड़की को हीन दृष्टि से देखने लगते हैं, और ससुराल वाले उसे निकृष्ट समझकर यातनाएं देने से नहीं चूकते ।

ऋषि-मुनियों ने ऐसी स्त्रियों के दुःखों पर विचार कर पुनर्विवाह की आज्ञा दी है ।

उदीर्ष्वं नार्यभिजीवलोकं गतासुमेतमुपशेष एहि ।
हस्तग्राभस्य दिधिषोस्तवेदं पत्युर्जनि
भिसंबभू
अथर्ववेद-१८।

हे स्त्री ! तेरे पति का अगर स्वर्ग हो गया है तो तू जीते हुए मनुष्यों भीड़ के आगे, विधवा के हाथ पकड़ने और पुनर्विवाह करने वाले पति की हो जा ।

इसी श्रुति को मानते हुए व अपनी स्मृति के १७ वें अध्याय में लिखे

पाग्रिग्रहे मृते वाला केवलं मंत्र संस्
सा चेदक्षत योनिः स्यात्पुनः संस्कार

यदि विवाह ही हुआ और पति जावे तो अक्षत योनि स्त्री का फिर वि किया जाये ।

नष्टेमृते प्रव्रजिते क्लीवे च पतिते
पंच स्वापत्सु नारीणां पतिरन्योविधीयते
पाराशर स्मृति–अ. ४ श्लो.

अर्थात्, यदि पति नष्ट हो जावे, जाये, संन्यासी हो जाये, नपुंसक हो विधर्मी हो जाये तो स्त्रियों को इन दशाओं में दूसरा पति चुन लेना चाहिए ।

इस आशय का इससे बड़ा उदाह और क्या हो सकता है कि महाभारत भी लिखा है–'अर्जुन ने नागराज की वि कन्या से विवाह किया ।' फिर भी के युग में बालविधवा या विधवा वि को हमारा समाज मान्यता देना क्यों नहीं करता ?

लोगों में वेद-शास्त्र के प्रति

(शेषांश पृष्ठ ८२ पर)

ड्रेसिंग गाउन

□ ख्वाजा अहमद अब्बास

'एक बड़े सरकारी अफसर के बंगले में एक चोर कल सोता हुआ पकड़ा गया। उसके पास ही चोरी की हुई चीजों और कपड़ों के तीन गट्ठर पड़े थे और चोर खुद मकान-मालिक की ऊनी ड्रेसिंग-गाउन पहने ड्राइंग-रूम में दीवान पर लेटा खर्राटे भर रहा था।'

(नयी दिल्ली की एक खबर)

धीरे... बहुत धीरे... से भीकू ने बाथ-रूम की खिड़की के टूटे हुए शीशे में हाथ डालकर चिटखनी गिरायी। फिर भी रात के सन्नाटे में चिटखनी गिरने की आवाज़ ऐसी गूंजी कि भीकू समझा अब तो सारा घर जाग गया होगा। वह [illegible] दीवार के साये में दुबककर बैठ गया। उसका दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़क रहा था। छोटी-मोटी चोरियां करते, ताले तोड़ते उसे तीन महीने से ज्यादा हो गये थे लेकिन अब भी उसके दिल से पकड़े जाने का खौफ न गया था और आज तो वह इस बंगले में चोरी करने आया था, जहां वह कितन ही बरस गुज़ार चुका था। उसे मालूम था कि जिस घर का बच्चा-बच्चा उसे पहचानता है, वहीं चोरी करने जाना खतरे से खाली नहीं है लेकिन फिर भी न जाने क्यों आज उसके कदम आप से आप उसे नंबर ५५, गौतम रोड तक ले गये।

चिटखनी गिरने की आवाज़ बाथ-रूम में ही गूंजकर रह गयी और सारा घर उसी तरह लिहाफ में लेटा सोता रहा। जब कई मिनट तक न कोई रोशनी जली और न कोई आवाज़ आयी, तो भीकू के दिल की धड़कन कुछ कम हुई और वह उठा और बाथ-रूम की खिड़कियों में से घर में दाखिल हो गया।

उस बंगले का जुगराफिया भीकू को ज़बानी याद था। उस बाथ-रूम से मिला हुआ बच्चों का बैड-रूम था, जहां गोपाल और गीता और सबसे छोटा मुन्ना सोते हैं और इन तीनों पलंगों के बीच में उनकी आया मोटो गुलाबो। उसके कमरे के सामने ही मिस्टर भूषण और मिसेज़ भूषण का बैड-रूम है। फिर ड्राइंग-रूम का बड़ा हाल, जिसके दूसरे कोने पर डाइनिंग टेबुल रखी हुई है और उसके पास ही महागनी का बड़ा जन्नाती साइज़ का साइड-बोर्ड, जिसकी दराज़ों में चांदी के चमचे-कांटे

रहते हैं। आइसक्रीम खाने की चांदी की प्यालियां और चांदी का टी-सेट रहता है और इन चीज़ों की तलाश में ही भीकू आज इधर आया था।

इस हाल के बाद दूसरी तरफ भी एक बेड-रूम है, मगर भीकू को मालूम था कि उस कमरे में अब कोई नहीं रहता। खाली पड़ा रहता है। न वहां कोई कीमती सामान है। दीवारों पर पुरानी तसवीरें हैं, जो वक्त के साथ मैली पड़ चुकी हैं, और संस्कृत और हिंदी और उर्दू फारसी की पुरानी-पुरानी किताबें हैं और एक हुक्का है, जो कई महीने से भरा नहीं गया।

भीकू ने शीशों से आती हुई चांद की रोशनी में ही चीज़ें जमा करनी शुरू कर दीं। चमचे, कांटे, छुरियां, चांदी का टी-सेट, आइसक्रीम की चांदी की प्यालियां! चांदनी के धुंधलके में उसने देखा कि दीवान पर कागज़ों में लिपटे हुए कुछ बड़े-बड़े पैकेट रखे हुए हैं। उनको टटोलने पर मालूम हुआ कि लांड्री से ड्राई-क्लीन होकर सूट आये हैं और जल्दी में कोई उनको यहीं रखकर भूल गया है। भीकू ने सोचा, एक-एक सूट कम से कम चालीस पचास में तो बिक ही जायेगा। इसलिए उनको भी चोरी का कीमती माल जान कर शामिल कर लिया। वैसे उसने बच्चों के बैड-रूम में गुज़रते-गुज़रते गोपाल और गीता की सोने की घड़ियां भी मेज़ पर से उठाकर जेब में रख ली थीं, लेकिन इस बाकी सामान को उठाकर कैसे ले जाये? कोई चादर मिल जाती, तो अच्छा था। एक गठड़ी में सब कुछ बांध लेता और उठाकर चलता बनता। चादर कहां से आये? उसने सोचा, मिस्टर और मिसेज़ भूषण का बैड-रूम तो अंदर से बंद रहता है। बच्चों की चादरें, तौलिये, वगैरा तो उनकी अलमारी में रहते हैं। फिर उसे उस खाली कमरे का खयाल आया, जहां एक बिस्तर अब भी लगा हुआ होगा, मगर सोने वाला नहीं होगा।

उस कमरे के पिछवाड़े एक घना नीम का दरख्त था। इसलिए उसमें चांदनी का गुज़र नहीं था। घुप अंधेरा छाया हुआ था। भीकू ने सोचा, खिड़कियों पर तो परदे पड़े हुए हैं। एक मिनट को रोशनी कर लूं। चादर मिलते ही फिर अंधेरा कर दूंगा। बरसों उसने हर रात को पूरे दस बजे बटन दबाकर रोशनी बुझायी थी। उसका हाथ बिना किसी मुश्किल के बिजली के बटन पर पहुंच गया। एक पल के लिए तो अचानक तेज़ रोशनी होने से उसकी आंखें चुंधिया गयीं। फिर उसने देखा कि सामने वाली दीवार से उसे कोई घूर रहा है। यह 'कोई' सिर्फ एक बड़ी तसवीर थी। एक बूढ़े आदमी की तसवीर। गंजे सिर के इर्द-गिर्द सफेद बालों की झालर, चमकदार आंखें, जो तसवीर के परदे में भी दया और हमदर्दी से भरी नज़र आती थीं। चेहरे पर झुर्रियां, मगर मुसकराते हुए होंठ।

आप से आप भीकू के हाथ नमस्कार के जुड़

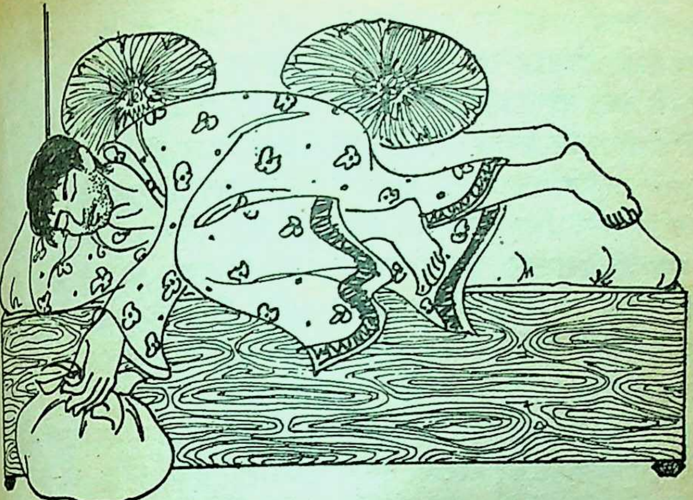

उठ गये । मन ही मन में उसने कहा; पंडितजी ।' वह यह भूल गया कि कमरे में वह चादर लेने आया था का माल गट्ठर बनाने के लिए । इस घर में इसी रात को क्यों आया ? क्या करने आया था ? वह सब भूल गया । तब वह बीस बरस का जवान नहीं था । सात बरस एक बच्चा था और उसके बदन पर पुराने चिथड़े थे और वह कनाट प्लेस बड़ा जाड़े की रात में भीख मांग रहा । फिर उसने एक राहगीर के सामने फैलाया और उसके हाथ पर इकन्नी हुए राहगीर ने पूछा, 'ए बच्चे ! बाप तुझे इस सर्दी में भीख मांगने है । शरम नहीं आती उसे ?'

'बाप नहीं है ।' बच्चे ने कहा ।

'और मां ?'

'मां नहीं है ।'

'काका, मामा, फूफा, फूफी, कोई रिश्तेदार तो होगा ?'

'कोई नहीं है !'

'तू रहता कहां है ?'

'वहां !' बच्चे ने एक पेड़ की तरफ इशारा किया, जिसके नीचे साइकिल-रिक्शा वाले अलाव जलाये आग ताप रहे थे ।

'मेरे साथ चलेगा ।'

'चलूंगा ।'

और बच्चा बूढ़े की उंगली पकड़कर उसके साथ हो लिया था और इस तरह ५५ नंबर, गौतम रोड में पहली बार दाखिल हुआ था और कोठी के अंदर आते ही उसे अपनी छोटी-सी उम्र में पहली बार छत और चहारदीवारी का अहसास हुआ

था। बूढ़े ने अपने बेटे और बहू से कहा था, 'मैं इस शरणार्थी बच्चे को ले आया हूं, मगर यह नौकर की तरह नहीं रहेगा। मेरी औलाद की तरह रहेगा।' और फिर जब पंडितजी ने देखा कि बच्चा सर्दी से कांप रहा है, तो उन्होंने अपना ऊनी कश्मीरी ड्रेसिंग-गाउन उसे ओढ़ा दिया था, और ड्राइंग रूम में दीवानपर सुला दिया था और अपनी याद में पहली बार बच्चे को नरम और गरम बिस्तर का अहसास हुआ था।

बाहर ठंडी हवा सायं-सायं चल रही थी और रात के सन्नाटे को और भी संगीन बना रही थी। भीकू को ऐसा महसूस हुआ, जैसे मुसकराते हुए होंठ हिल रहे हैं। उससे कुछ कह रहे हैं।

'क्या है, पंडितजी?' मन ही मन में उसने सवाल किया।

'पंडितजी नहीं! बाबा, कहो, बेटा!' तसवीर खामोशी की भाषा में बोल रही थी।

'क्या है, बाबा?'

'बड़े अफसोस की बात है कि में जिस घर में तुम्हें बेटा बनाकर लाया, उसी घर में तुम आज चोरी करने आये हो।'

'अब मैं तुम्हें कैसे समझाऊं, बाबा।' भीकू ने मन ही मन में उन सारे हालात को याद किया, जिनकी वजह से वह चोर बन गया था।

जब पंडित बालकृष्णजी उसे घर में लाये थे, तो कई बरस तक उन्होंने उसे सचमुच बेटे की तरह ही पाला था। लिखना-पढ़ना सिखाया था। स्कूल भेजा था, लेकिन फिर पंडितजी पर फालिज का पहला दौरा था। दायीं बांह और दायीं टांग बेकार हो गये थे। अब वह घर में चल-फिर नहीं सकते थे। बात भी मुश्किल से कर पाते थे। अब बेटा-बहू उनकी कोई खास परवाह भी नहीं करते थे। सिर्फ भीकू ही उनके पास बैठा रहता। उनकी सेवा करता। स्कूल जाना भी उसने छोड़ दिया था। फिर एक दिन उसने सुना कि स्कूल से उसका नाम कटवा दिया गया है, क्योंकि भूषण साहब का कहना था कि नौकरों के लिए ज्यादा पढ़ना-लिखना गैर-ज़रूरी है। अब उसे खाना भी नौकरों के साथ मिलने लगा। बर्ताव भी नौकरों जैसा होने लगा, मगर उसने इन बातों की खबर पंडितजी को न होने दी, क्योंकि उसे मालूम था कि उन्हें बहुत दुख होगा। वह लड़खड़ाती ज़बान से कभी पूछते थे कि 'सब ठीक है न भीकू?'

'तुझे कोई तकलीफ तो नहीं है?'

तो वह उन्हें यकीन दिला देता कि वह बिलकुल आराम से है।

और वक्त गुज़रता गया। बूढ़े पंडितजी की हालत बिगड़ती गयी, यहां तक कि सारा जिस्म पक्षाघातग्रस्त हो गया। सिर्फ आंखों में जान बाकी रह गयी, तो भीकू के साथ और भी बुरा सुलूक होने लगा। रात-दिन काम करना पड़ता। अब भूषण साहब के जूतों पर पालिश करो।

मिसेज भूषण की साड़ी पर इस्त्री करो। अब बच्चों का खाना स्कूल ले जाओ। अब रसोई में बर्तन मांजो। अब ड्राइंग-रूम की सफाई करो। तनख्वाह के नाम पर उसको एक रुपया भी नहीं मिलता था, क्योंकि मिस्टर भूषण का कहना था कि आखिर हमने पाल-पोसकर इतना बड़ा किया है। फिर खाना देते हैं। रहने को जगह देते हैं, और क्या चाहिये?

फिर एक दिन पंडितजी का वक्त आ पहुंचा। उनकी टांगें बिलकुल ठंडी और बेजान हो गयीं। भीकू ने घबराकर उन पर दो-तीन कंबल और एक लिहाफ डाल दिया। फिर भी गर्मी न आयी, तो उसने पंडितजी का वह पुराना ऊनी-ड्रेसिंग-गाउन भी डाल दिया और उस ड्रेसिंग-गाउन को देखकर पंडितजी के चेहरे पर मरते हुए भी एक मुसकराहट दौड़ गयी, जैसे उनको उसमें लिपटा हुआ एक छोटा-सा बच्चा याद आ गया हो, और उन्होंने अपनी बुझती हुई आंखों से ड्रेसिंग-गाउन की तरफ इशारा करते हुए खामोश होंठों की जुम्बिश से कहा, 'यह ते ले लीजियो।' और फिर वह चल बसे। और जिंदगी में दूसरी बार भीकू यतीम हो गया।

और फिर एक दिन भीकू जब अपनी नौकरों वाली कोठरी में सर्दी से कांप रहा था, उसे पंडितजी का आखिरी तोहफा याद आया, मगर वह उनके कमरे में से ड्रेसिंग-गाउन लेकर निकल रहा था कि मिसेज भूषण ने उसे देख लिया और चोरी के इलजाम में उसे घर से निकाल दिया।

उसने गिड़गिड़ाकर कहा, 'कम से कम सर्टीफिकेट दे दीजिये, ताकि कहीं और काम मिल जावे। मगर मिस्टर भूषण ने यह कहकर इंकार कर दिया कि 'मैं चोरों को सर्टीफिकेट नहीं दे सकता!'

वह चोर नहीं था। फिर भी उन्होंने उसे चोर समझा था और वह सचमुच चोर बन गया था और आज उसी घर में चोरी करने आया था। मगर पंडितजी की आंखें उससे कुछ कह रही थीं।

उधर मुड़कर देखा, तो दीवार पर वही ड्रेसिंग-गाउन लटकी हुई थी। अब वह समझ गया कि पंडितजी उससे क्या कह रहे हैं – बेवकूफ चुराना है, तो कोई काम की चीज़ चुरा। चांदी के चमचों से सर्दी नहीं जायेगी। उसके लिए यह ड्रेसिंग-गाउन चाहिये।

और वह ड्रेसिंग-गाउन लेकर ड्राइंगरूम में वापस आया, जहां वह चांदी के चमचों, कांटों वगैरा का ढेर लगा गया था, मगर चांदी के सामान में वह चमक नहीं रही थी।

ऊपर का रोशनदान शायद खुला हुआ था। बर्फीली हवा का एक झोंका उसकी कमीज़ के कालर में से होता हुआ उसके सारे जिस्म को कंपकंपा गया। बेखयाल और बेअख्तियार उसने ड्रेसिंग-गाउन पहन ली और सहसा उसका सारा जिस्म एक अजीब नरमी और गरमी के अहसास से भरपूर हो गया। यह गरमी ऊन की

(शेषांश पृष्ठ ९० पर)

पिंगलाचार्य

पंडित सुखदेव मिश्र

☐ डॉ. रामप्रसाद मिश्र

शास्त्रीयकाल (रीतिकाल) के आचार्य-कवियों में पिंगलाचार्य कविराज सुखदेव मिश्र (१६३३-१७०३ ई.) का स्थान बहुत ऊंचा है, जैसा कि भिखारीदास, महावीरप्रसाद द्विवेदी, मिश्र बंधु, रामचंद्र शुक्ल, व्रजकिशोर मिश्र, प्राचार्य डा. दुर्गाशंकर मिश्र (लखनऊ) इत्यादि की प्रशस्तियों, रचनाओं, आलोचनाओं एवं शोधकार्यों से स्पष्ट है। एक ओर वे देव, मतिराम एवं पद्माकर के स्तर के महाकवि सिद्ध होते हैं, दूसरी ओर चिंतामणि, कुलपति मिश्र एवं भिखारीदास के स्तर के आचार्य। अध्यात्मप्रकाश (व्रज भाषा) एवं मंत्रशास्त्र (संस्कृत) में वे दर्शनकाव्य एवं तंत्रकाव्य के प्रणेता के रूपों में प्रकट होते हैं तथा इस दृष्टि से समूचे काल में अप्रतिम हैं। शृंगारी महाकवि, दर्शनकाव्यकार एवं पिंगलाचार्य के त्रित् में सुखदेव मिश्र हिंदी साहित्य के इतिहास की एक उत्कृष्ट विभूति हैं।

अपने समय में वे एक विख्यात आचार्य एवं महाकवि माने जाते थे। शंभुनाथ मिश्र, शंभुनाथ वंदीजन, शंभुनाथ त्रिपाठी, जयदेव (कंपिलावाले) इत्यादि प्रसिद्ध आचार्य एवं कवि इनके शिष्य थे। राजगढ़ (अजमेर) के राजा राजसिंह गौड़ तथा मुग़ल सरदार अलहयार खां ने इन्हें 'कविराज' की उपाधि से विभूषित किया था।

सुखदेव मिश्र एक उच्च कोटि के कवि थे, यह उनके कुछ छंदों के अवलोकन से भी स्पष्ट हो जाता है। निस्संदेह, उनकी कविता का प्रधान रस शृंगार है, किंतु वीर एवं शांत रसों में भी उन्होंने उत्कृष्ट सृजन किया है।

सुखदेव मिश्र का स्वयंदूतिका नायिका का निदर्शन-रूप निम्नलिखित छंद भाषा लालित्य, प्रवाह एवं रसगौरव के कारण विशेष प्रसिद्ध है, यद्यपि इसमें 'लाग्यो मैंनसरु है' शब्दों के प्रयोग के कारण स्वशब्दवाच्यत्व दोष आ गया है:

ननद निनारी, सासु मायकें सिधारी,
अहै रैनि अंधियारी भरी, सूझत न करु है।
प्रीतम को गौन, कविराज न सोहात भौन,
दारुन बहत पौन, लाग्यो मेघ झरु है॥
संग ना सहेली, बैस नवल, अकेली,
तन परी तलबेली महा, लाग्यो मैंनसरु है।
भई अधिरात, मेरो जियरा डेरात, जागु
जागु रे बटोही इहां चोरन को डरु है।

म्नलिखित छंद में स्वयंदूतिका का
कथन उसे वचनविदग्धा भी सिद्ध
ता है :

ही गागरि सोऊ गिरी,
सून्यो निकेतु कंप्यो जब गातु है ।
न आइ कहाँ ते घौं रालि,
री घरी हू घरी अधिकातु है ।।
ही जू ठाढे ? इतै किन आवो ?
तखि नैसुक ज्यौं ठहरातु है !
पठाइ न आवत हौं घर,
पं अकेले गयो नहिं जातु है ।।
(रसार्णव)

म्नलिखित प्रसिद्ध छंद में शुक्लाभि-
नायिका एवं मीलित अलंकार का
सुंदर उदाहरण प्राप्त होता है :

सां मगु नंदकुमार,
चंद्रमुखी सुकुमार है ।
हो को कियो गहनो सब,
जनु कुंद की डार है ।।
हो जो लखी सो लखी,
जाहिर होत न दार है ।
जोन्हें गई मिलि यों,
ज्यों दूध में दूध की धार है ।।
(रसार्णव)

मिश्र का सौन्दर्यचित्रण उच्च-
है, जो नायक के साथ भी वैसा
करता है। जैसा नायिका के साथ,
छंद द्रष्टव्य हैं :

के होत हैं नैनई नीके,
के आनन ही में निकाई ।
की होति चितौनियै नीको,

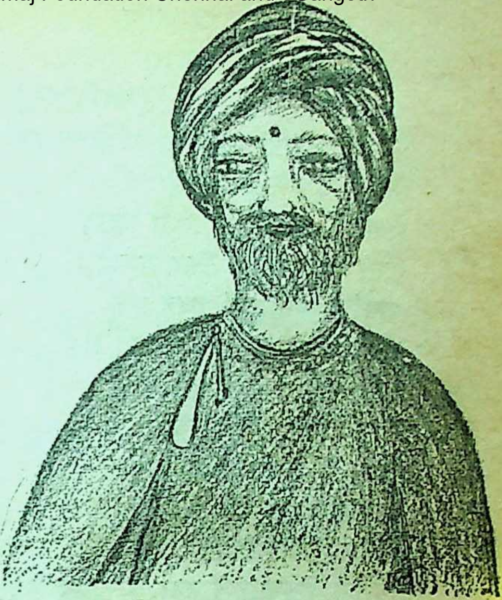

आचार्य सुखदेव मिश्र

औ काहू की चाल ही में चतुराई ।।
औरै बिरंचि न कोऊ कहूँ,
जो मनोहर मूरति ऐसी बनाई ।
नागर नंद लड़ाइते के नख
ते सिख लौं सब सुंदरताई ।।
(रसार्णव)

सुखदेव मिश्र ने वीररस की कविता में भी सफलता प्राप्त की है ।

झुक्कत गिरवर झुंड,
रुहिर मुक्कत फनिंद फन ।
लुक्कत रजभर सूर,
दरिन दुक्कत गनीम गन ।।
बड्ढिय प्रबल प्रताप निकर,
उड्ढिय अरिंद सब ।

हिम्मतसिंह नरिंद कोपि
चढ़िढय गयंद जब ।।

(छंदविचार)

'निर्वेद' स्थायी भाव का परिपाक इस सवैया छंद में द्रष्टव्य है :

वेदन के मत में न लग्यो रह्यौ,
काम की वेदन में नित सान्यो ।
दीनों न काहू कहूं कबहूँ कछु,
दीनो न कोऊ कहूँ सनमान्यो ।।
ठाकुर ठौरहि ठौर लखे अजौ,
ठीकुर ठीक नहीं पहिचान्यो ।
सूमन में भरम्यो बिन काज,
जसोमति सून मनै नहिं, आन्यो ।।

भक्ति-प्रपत्ति संबंधी एक छंद देवी स्तुति का दौलतपुर में बड़ा लोकप्रिय है :

चंडी तू है चंडिका तू चंडमुंद खंडिका तू,
कुलवेद कंडिका तू, दंडी कवि बानी है ।
मेरे एक तू है तू से और न हितू है,
देत फर में फतू है कर कठिन कृपानी है ।।
देवी तू दया तू मोह रूपा मया तू गंगा है,
गोमती गया तू है तनया गिरि जानी है ।
गरे परे तेरे रहौं और के न नेरे रहौं,
जगदंब औलंब मेरे एकै भवानी है ।।

'अध्यात्मप्रकाश' का तत्वज्ञान संबंधी कवित्त उनकी सारग्राहिका बुद्धि का परिचायक है :

नर सो जनमु न धरमु वेद शासन
विप्र सो न वर्ण दूसरो आश्रम न
कर्म सो प्रबल न अबल विपं
जग सो भरमु न भुलैइय्या और
गुरु सो न वेद उपचार न विचार
अज्ञ सो न रोगी औ असंजमी न
मन सो उपासक सुबुद्धि सो न
देह सो न द्योहरा न देव और देहो

पिंगलाचार्य सुखदेव मिश्र की शास्त्रीयकाल (रीतिकाल) की त्यिक परंपरा एवं काव्यादर्शों का प्रतिनिधित्व करती हैं। खेद का है कि अभी तक इनका समस्त सृजन पांडुलिपियों में ही लिपिबद्ध हिंदी-संस्थान ऐसी संस्थाओं को प्रकार के समर्थ आचार्य कवियों की लिपियों को नागरी प्रचारिणी सभा, के माध्यम से प्रकाशित कराने का करना चाहिये।

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के लिपि-विभाग में उनकी प्रायः सभी उपलब्ध हैं।

—एफ-२९ बी, एम. आई. जी.
हरि नगर, नयी दिल्ली-११०

□

(पृष्ठ ७४ का शेषांश)

भाव तो है, किंतु उन्हें अपनाने, मानने और उन पर अमल करने की हिम्मत व शक्ति किसी-किसी में ही है। हमें वेद-शास्त्र के नियमानुसार ही पथ-मार्ग देखना होगा तभी हम दूषित समाज पर पा सकते हैं।

—लक्ष्मीनारायण पुरी, लक्ष्मी
मंदिर के अंदर, सूरजपोल,

□

उम्र कैद

□ शकुन्तला वर्मा

आफिस पहुंचने में मुझे आज फिर देर हो गयी थी। यह कोई नयी बात है। देर से पहुंचने के लिए अनगिनत बड़े साहब से डांट ही नहीं, वार्निंग की धमकी भी मिलती है। हर मन ही मन प्रतिज्ञा की है कि अब से कुछ भी हो जाये समय से दफ्तर ज़रूर। पर क्या करूं, घर का काम द्रौपदी की तरह बढ़ता ही जाता है।

-चाय से लेकर पति, बच्चों अपना टिफिन पैक करना। बच्चों तैयार करके स्कूल भेजना। फिर बचे काम के साथ ही घर में फैले को समेटकर खुद तैयार होना। में देवेश की आवाज़ें कभी शेव सामान, तो कभी तौलिया, बनियाइन कभी चलते समय रूमाल न देने की शिकायत।

हिसाब से घड़ी के कांटों के साथ का प्रयत्न करती हूं, पर समय बंद की रेत की तरह फिसलता ही जाता देवेश बस इतना सहयोग देते हैं कि दफ्तर जाते समय मुझे मेरे आफिस पर छोड़ते जाते हैं।

ड्रावर में रखकर जैसे ही फाइलें निकालकर मेज पर रक्खीं, रामलखन चपरासी आकर बोला—'दीदीजी, बड़े साहब आपका डिगदेसन देवे के बदे बहुत देर से बुलावत हैं।'

मन में बड़ी कोफ्त हुई। आते ही आते पेशी हो गयी। जल्दी से नोटबुक और पेन लेकर केबिन की ओर बढ़ी। मन ही मन बहाना सोचा। देर से आने की क्या वजह बताऊंगी।

आज न देर से आने का कारण पूछा गया, न डांट पड़ी। खुशी-खुशी डिक्टेशन लेकर लौटी। टाइप-राइटर पर पेपर और कार्बन चढ़ाकर टाइप करना शुरू ही किया था कि रामलखन आज की डाक मेज पर रख गया। दो अंतर्देशीय और एक लिफाफा था। जल्दी से उलटकर देखा अम्मा और स्मिता के पत्र और एक विवाह का निमंत्रण-पत्र था। अम्मा बूढ़ी हो चली हैं। पहले जैसा स्वास्थ्य भी नहीं रह गया है। सोचा पहले उन्हीं का पत्र पढ़ लूं। अपने घर-परिवार के हालचाल के बाद वही पत्र देर से डालने की पुरानी शिकायत की थी।

निमंत्रण एक परिचित की बेटी के विवाह का था। स्मिता मेरी बचपन की

सहेली का जब भी पत्र आता है, इतमिनान से ही पढ़ना चाहती हूं। सो आज भी सबसे बाद में उसका पत्र खोला।

लिखा था–

प्रिय राखी,

बहुत-सा प्यार।

एक लंबे अरसे के बाद तुम्हें पत्र लिख रही हूं। इधर तुमने भी कोई पत्र नहीं डाला। ख़ैर तुम्हें दोष नहीं दे रही। तुम्हारे ऊपर घर-परिवार का दायित्व ही नहीं, नौकरी की भी जिम्मेदारी है। समय का अभाव होना स्वाभाविक है। तुम कहोगी कि तुम तो खत डाल सकती थीं, फिर क्यों नहीं लिखा। सच राखी, याद तो तुम्हारी हर दिन आती है। कई बार पत्र लिखने की इच्छा भी होती है फिर समझ में नहीं आता क्या लिखूं।

अपनी तो पिछले तीन-चार सालों से जीवन धारा एक ही रफ्तार से बहे जा रही है। सुबह - शाम बाबूजी के लिए खाना बनाना। थोड़ी देर घर की सफ़ाई। कभी-कभी कोई मैगज़ीन उलट लेना। बस उसके बाद घंटों लेटे-लेटे छत को निहारते रहना। लगता है समय मानो इस बीच ठहर-सा गया हो।

नौकरी करने की प्रबल इच्छा थी पर बाबूजी नहीं चाहते कि क्लास वन आफिसर की बेटी होकर कहीं काम करूं। उनकी मर्जी के आगे आज तक किसी की कोई बात चली है कि मेरी यह ख्वाहिश पूरी होती। मैंने तो अपनी स्थिति के आगे अब घुटने टेक दिये हैं।

खैर अपने बारे में और लिखकर बोर नहीं करूंगी। जीजाजी, विवेक मनीषा कैसे है? सबका हाल से लिखना। तुम्हारा पत्र मेरे सूने में तिनके का सहारा होता है। आने कई-कई बार पढ़ती हूं।

उत्तर जल्दी देना। इंतजार रहेगा

तुम्हारी अपनी-

पढ़कर पत्र तहाकर पर्स में रख लैटर टाइप करने बैठी तो मन था। टाइप में कई स्पैलिंग मिस्टेक गयीं। मन उड़-उड़कर बार-बार के इर्द-गिर्द घूम रहा था।

मैं और स्मिता पड़ोसी ही नहीं बचपन से बी. ए. तक साथ पढ़े थे। पिता बड़े अधिकारी थे और मेरे क्लर्क। पर हमारी दोस्ती के बीच के मधुर, कोमल, ममतामयी स्वभाव कारण कभी कोई खाई आड़े नहीं

बी. ए. फाइनल के इम्तहान होने थे। तभी स्मिता की अम्मी सख्त पड़ गयी। पहले डाक्टर समझ न सके बुख़ार क्यों नहीं उतरता है। हर पेट दर्द से वह बुरी तरह कराहती खाना-पीना एकदम छूट-सा गया था। सारे टेस्ट हुए तो पता चला कि अल्सर हैं। साथ ही आंतों के एक कैंसर भी। तुरंत ही मधुरिमा उनकी ससुराल ख़बर की गयी।

डेढ़ महीने दोनों बहनों ने जी-

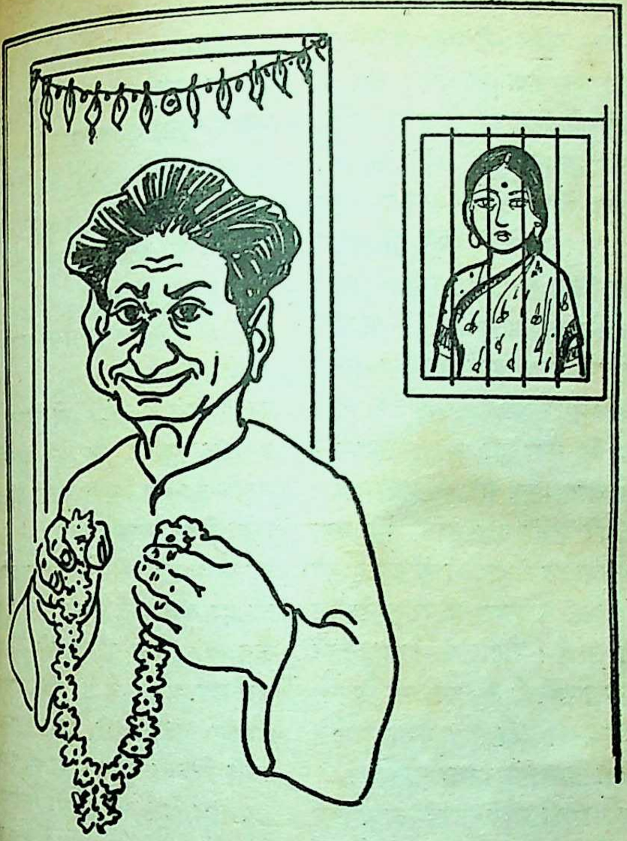

सेवा की । पर मर्ज़ बढ़ता गया । एक रात सबको रोता-बिलखता कर वह चल बसीं ।

ने की खबर सुनकर सारे नाते-दार इकट्ठा हुए । अभी दसवां-भी नहीं हुई थी कि संबंधियों ने बाबू के ब्याह की चर्चा छेड़ना कर दी ।

बुआ बोलीं–'बेचारे मनमोहन की नैया तो बीच मझधार में ही डूब गयी । दुल्हन थी तो दो जून गरम रोटियों का तो सहारा था । अब तो कोई पूछनेवाला भी नहीं रहा । लड़कियां तो पराया धन हैं । कितने दिन बाप का साथ निबाहेंगी ।'

मंझली चाची बोलीं–'अभी मनमोहन की उम्र ही क्या है । फिर इतना बड़ा अफसर है । एक नहीं अनेक लड़की वाले अपनी बेटी देने को तैयार हो जायेंगे ।'

शिरोमणि की दादी ने हां में हां मिलाते हुए कहा–'रामभरोसे की बहू, कहती तो तुम और शिब्बो ठीक ही हो । मधु तो इतने दिन बहू की तीमारदारी में रह गयी । अब कब तक बाप के घर पड़ी रहेगी । उसका अपना भी तो घर-बार है । हां, स्मिता की जब तक शादी नहीं हो जाती, तब तक वह पिता का सहारा है । वरना बेचारा मनमोहन जब दफ्तर से लौटेगा तो कोई एक प्याला चाय को भी पूछने वाला नहीं होगा ।'

मधुरिमा ने सुना तो कुढ़कर बोली–'दादी, तुम लोग क्या सठिया गयी हो । अम्मा को भरे अभी एक हफ्ता भी नहीं हुआ और तुम लोग बाबूजी के ब्याह को ले बैठीं । फिर बाबूजी चौउवन-पचपन साल के हो रहे हैं । यह उम्र क्या उनकी दुबारा शादी करने की है । मुझे तो स्मिता की फिक्र खाये जा रही है । बेचारी कैसे घर में अकेली अम्मा के बिना रहेगी ?'

और अम्मा की याद करके मधुरिमा की आंखों से आंसू बह निकले । शिब्बो बुआ ने जल्दी से मधुरिमा के आंसू अपने आंचल से पोंछे, फिर समझाते हुए बोलीं–'बिटिया हम लोग तुम्हारे कोई गैर थोड़े ही हैं । जो कुछ कहा अपना ही समझकर कहा । जाने दो इन बातों को । बाद को देखा जायेगा । अभी तो कुछ दिन हम ही रह जायेंगे । जब तक स्मिता का इम्तहान नहीं हो जाता ।'

मधुरिमा और स्मिता को शिब्बो बुआ इस समय देवदूत-सी लगीं । मधुरिमा कब तक यहां रुक सकती स्मिता फाइनल का इम्तहान चौका-चूल्हा सम्हालेगी ।

अम्मा की तेरहवीं होते ही एक कर रिश्तेदार विदा हुए, भी मधु को साथ लेते गये । बड़ी-सी में रह गये मनमोहन बाबू, शिब्बो और स्मिता । मनमोहन बाबू ने ड्यूटी ज्वाइन कर ली थी । स्मिता पढ़ाई में मन लगाने की कोशिश परीक्षा एकदम सिर पर आ गयी मुझसे जितना बनता उसकी मदद छूटे नोट्स लाकर देती । घंटों कि इम्तहान ज़रूर दे दो । अम्मा तो हो सकता है बाबूजी तेरी शादी कर दें । फिर घर-गृहस्थी के बाद मुश्किल होता है । फिर आजकल लड़का पढ़ी-लिखी पत्नी चाहता अभी शिब्बो बुआ हैं तो वह बाबूजी देखभाल कर रही हैं और खाना देती हैं । उनके जाने के बाद ज़िम्मेदारी तेरे ऊपर आ जायेगी ।

स्मिता का परिवार रूढ़िवादी बाबूजी किसी बाहर वाले के हाथ का खाना नहीं खाते । घर का ही नहा-धोकर खाना बनाये । तब वह में बैठकर खाना खाते ।

स्मिता की परीक्षा होते ही बुआ ने अपना बोरिया-बिस्तर लिया । चलने से एक रात पहले

बुआ बावूजी से कह रही थीं– मेरी मानो तो स्मिता के व्याह से तुम अपनी शादी कर लो । उसके जाने के बाद क्या अपने हाथ से दफ्तर टकर रोटियां ठोकोगे ? फिर भगवान कभी बीमारी-हारी आये तो कौन री देखभाल करेगा ?'

जी, मैंने तो कभी चौका चूल्हा किया । अब इस उम्र में क्या करूंगा । कहने से अब मुझे भी लगता है कि की शादी से पहले अपना घर बसा अकेले सूनी जिंदगी कैसे काटूंगा ?'

तुम तैयार हो तो मैं तुम्हारे ब्याह बात चलाऊं,' शिब्बो वुआ ने उत्सा- हो पूछा ।

मोहन बाबू बोले–'एक बात का रखना, जीजी । एक तो लड़की कुंआरी विधवा या परित्यक्ता न हो, दूसरे कुल-गोत्र और कुंडली सब मेल होनी चाहिये ।'

ह सब तुम मुझ पर छोड़ दो, भैया । हीं हजार रिश्ते आयेंगे । तुम इतने सरकारी अफसर हो । लड़की वाले सिर के वल दौड़े आयेंगे । कितनों को होता है इतना बड़ा अफसर दामाद ।'

मगर जीजी, अब मेरी उम्र थोड़ी,' कहते मनमोहन बाबू चुप हो गये । शिब्बो बुआ ने उनके मनोभाव को ते हुए कहा–'तुम भी कैसी बातें हो, भैया । मर्द की कहीं उम्र देखी है । आदमी तो साठा में पाठा होता है । तुम अभी छोटे हो । काहे चिंता में बाल सफ़ेद किये लेते हो । भगवान ने चाहा तो दुल्हन की बरसी के बाद ही तुम्हारा ब्याह हो जायेगा ।'

१९८८

उस रात एक पल को भी स्मिता की आंखें नहीं झपकीं । आंसुओं से उसका तकिया भीग गया था । अम्मा की सूरत रह-रहकर उसकी आंखों के आगे घूम जाती थी । पति को परमेश्वर समझने वाली सती, साध्वी अम्मा की आंखें मुंदते ही बावूजी दूसरे ब्याह के सपने देखने लगे ।

पुरुष क्या एक दिन भी स्त्री के बिना नहीं रह सकता । बाबूजी को अविवाहिता कन्या जीवन-संगिनी के रूप में चाहिये । हो सकता है नयी मां मधु जीजी ही नहीं, मुझसे भी छोटी हो । उसे कैसे मां समझ सकूंगी ?

इस जगह यदि अम्मा के बजाय बावूजी को कुछ हो जाता तो क्या अम्मा कभी इस तरह सोच सकतीं । वह तो पति का नाम लेकर सारा जीवन वैधव्य की यातनाएं सहते काट देतीं । कितना अंतर है पति और पत्नी के जीवन और उनकी विचारधाराओं में ?

शिब्बो बुआ फिर आने का आश्वासन देकर चली गयीं । स्मिता ने उनके जाने के बाद राहत की सांस ली । उसने सोचा अब शायद बाबूजी थोड़े दिनों बाद अपने ब्याह की बात मन से निकाल दें ।

मधु के ख़त उसके पास तो आते ही साथ ही वह बाबूजी को हर पत्र में स्मिता के

लिए लड़का ढूंढ़ने को लिखना न भूलतीं।

बाबूजी उन्हें दफ्तर से पत्र डालते तो स्मिता को पता न चलता कि वह दीदी को क्या उत्तर देते हैं। एक दिन वह घर में अकेली थी। दोपहर को किसी ने कॉलबेल बजायी। उसने दरवाज़ा खोलकर बाहर देखा। एक सज्जन अपनी पत्नी के साथ बाहर खड़े थे। उसे देखते ही पूछा–'क्या मनमोहन बाबू का घर यही है?'

'जी हां। आपको उनसे क्या काम है?' स्मिता ने पूछा।

'आप उनकी कौन है?' सज्जन ने उल्टे उससे ही प्रश्न किया।

'मैं उनकी छोटी बेटी हूं। आप किस काम से आये हैं? इस समय तो बाबूजी आफ़िस में हैं। वह तो शाम को ही घर लौटते हैं।' स्मिता ने उत्तर दिया।

'मनमोहन बाबू ने शादी का इश्तहार दिया था। उसी सिलसिले में बात करने आये थे हम लोग।' कहकर सज्जन ने अपनी पत्नी की ओर देखा।

शादी की बात सुनकर स्मिता सकुचा गयी। उसने आदरपूर्वक उन लोगों को ड्राइंग-रूम में बैठाया। जल्दी से चाय बनाकर लायी। वह लोग उसके घर-परिवार, नाते रिश्तेदारों, धन-संपत्ति के बारे में अनेक बातें पूछते रहे। स्मिता उनकी हर जिज्ञासा को बड़े शालीन ढंग से शांत करती रही। कई बार उसके मन में आया कि वह भी उनके पुत्र के बारे में पूछ ले। पर संकोचवश कुछ कह न सकी। सोचा बाबूजी पूछताछ कर लेंगे।

फोन करके उसने बाबूजी को लोगों के आने की सूचना दे दी। मिलते ही मनमोहन बाबू आफ़िस से जल्दी आ गये। उन्हें देखकर सज्जन का चेहरा कुछ क्षण को कुम्हला-सा गया। इधर-उधर की बातें करते रहे। फिर चलने से पहले बोले–'क्षमा कीजियेगा मनमोहन बाबू! आपका और मेरी पुत्री का यह रिश्ता न हो सकेगा। मेरी बेटी अभी अठारह वर्ष की है और आप पचास पार कर चुके हैं।'

'आप एक बार ठंडे दिल से सोच लें। आपकी बेटी मेरे घर में राज करेगी। स्मिता की शादी के बाद मेरी सारी धन-संपत्ति की वारिस अकेली वह होगी,' मनमोहन बाबू ने तुरुप फेंका।

सज्जन की पत्नी इतनी देर से खामोश बैठी थीं। उनसे रहा नहीं गया। वह तल्खी से बोलीं–'माफ़ कीजियेगा। इस तरह आपकी बेटी को इतना बूढ़ा जमाई मिले तो क्या आप उसे पैसों के लालच में ब्याह देंगे। हमें अपनी पुत्री भारू नहीं है। भले ही हम गरीब घर में उसे ब्याह दें, मगर कम से कम वर उसकी उम्र का ही ढूंढेंगे।'

यह कहकर वह दोनों वहां से उठ गये।

किंवाड़ की ओट से स्मिता ने सारी बातें सुनीं तो उसका सिर चकरा गया। इतनी देर से वह यह समझ रही थी कि बाबूजी ने अखबार में उसके विवाह का विज्ञापन दिया है और यह लोग

ता लेकर आये हैं। यहां तो पांसा ही ट गया। बावूजी अपन ब्याह के लिए ने बेचैन हैं कि उन्होंने अपने विवाह का विज्ञापन तक दे डाला। एक बार भी सोचा कि युवा अविवाहिता पुत्री र में अकेले कैसे रहती है?

स्मिता ने उसके बाद बावूजी से बोलना कर दिया। बस उतनी ही बात करती ने के बिना काम नहीं चलता। सारा घर में पड़े-पड़े उसका मन ऊबने लगा। अम्मा क्या मरी उसकी जीवन-धारा ही बदल गयी। खुले आकाश में ने वाला आज़ाद पक्षी पिंजड़े में कैद गया।

क दिन उससे रहा नहीं गया। शाम जब वह खाना परोस रही थी तो ने मनमोहन से कहा–'बावूजी, घर पर ली बैठे मेरा मन नहीं लगता। मैं एम. ए. ना चाहता हूं।'

न्होंने रोटी का कौर तोड़ते हुए ता को भरपूर नजरों से देखा, फिर ले-'घर का काम और पढ़ायी कैसे एक थ निबाह पाओगी। मुझे तो आफ़िस य से ही जाना होगा। मेरी तो इच्छा ही है कि तुम कालेज ज्वाइन करो।'

र बावूजी, अकेले पड़े-पड़े मेरा मन ऊबता है। मैं सब सम्हाल लूंगी। बस हां कर दीजिये।' स्मिता ने मिन्नत की।

ढ़ने की ऐसी ही ख्वाहिश है तो वेट इम्तहान दे दो। कालेज जाना अब उम्र से मुनासिब नहीं है,' कहकर वह खाना खाने में व्यस्त हो गये।

उस रात स्मिता ने खाना नहीं खाया। वड़ी देर तक लेटी रोती रही। बेबसी से उसका हृदय अंदर ही अंदर फुंका जा रहा था। वह सोच रही थी कि अभी तो बावूजी अकेले हैं तब उनका व्यवहार इतना बदल गया है। जब शादी कर लेंगे तो मां दूसरी होगी और पिता तीसरे व्यक्ति। कैसे निवाह होगा उसका इस घर में।

अगले दिन उसने मधु को ख़त लिखा। इतने दिनों का मन में भरा गुबार उसने लंबी चिट्ठी लिखकर निकाला। अंत में यह भी लिखा कि उसे किसी भी तरह पढ़ना ही है, या नौकरी करना है, वरना अकेले वह सोच-सोचकर पागल हो जायेगी।

पत्र पाकर मधु, विनय आये थे। स्मिता के विवाह के लिए काफ़ी ज़ोर भी दिया था। बावूजी का बस एक सीधा सपाट-सा उत्तर था कि 'मैं शादी करने से कब इंकार करता हूं। पर पहले मेरे खाने-पीने का इंतजाम हो जाये, फिर स्मिता के हाथ पीले कर दूंगा।'

अंत में हारकर मधू ने स्मिता के एम. ए. की पढ़ायी के लिए राज़ी किया था, तो उन्होंने करेस्पांडेंस कोर्स से पढ़ायी जारी रखने की इजाज़त दे दी थी।

अम्मा को मरे अब चार साल से ऊपर हो चुके हैं। स्मिता एम. ए. करके खाली बैठी है। पिता सजातीय कुंआरी कन्या आज तक अपने लिए नहीं जुटा पाये हैं।

जब तक उनकी अपनी शादी नहीं हो जाती, वह स्मिता के लिए वर की तलाश नहीं करेंगे, ऐसा उनका विचार है। स्मिता के जाने के बाद उनकी देखभाल कौन करेगा?

स्मिता ने नियति के आगे हथियार डाल दिये हैं। पिछले पत्र में उसने मुझे लिखा था–'सखी! पिता की इच्छा के आगे मुझे मजबूरन सिर झुकाना पड़ रहा है। मुझे तो अब लगता है कि न उनकी शादी होगी और न ही मेरी। मुझे इस घर में उम्र कैद की सज़ा मिली है। रो-रोकर काटने से बेहतर है कि चुचाप नीलकंठ की भांति इस ज़हर को अपने कंठ के भीतर ही रखे रहूं। एक तू थी तो अपना दुख-सुख तुझसे बांट लेती थी। अब तो तू भी इतनी दूर है। ख़ैर जहां भी रहे सदा सुखी रहे। मेरे दुख की परछाईं भी तुझे और तेरे सुखी परिवार को न छू सके। मेरा क्या है बंद सींखचों के पीछे रहने वालों का अपना निजी अस्तित्व कहां रह जाता है जो मेरा रहेगा। जाने दे जिस विधि ईश्वर रखेगा वैसे ही रहूंगी।'

मैं सोच रही थी एक पिता ने कितनी आसानी से अपने निजी स्वार्थ के अपनी बेटी की बलि चढ़ा दी है उनके चेहरे पर एक शिकन तक आयी। बेचारी स्मिता का जीवन क्या तरह एकाकी तिल-तिल करके हो जायेगा। नहीं मैं ऐसा हरगिज़ होने दूंगी। अपनी सखी को इस कुढ़-कुढ़ कर मरने न दूंगी। उसके के लिए कोई न कोई रास्ता निकाल ही होगा। चाहे मुझे मधु जीजी के जाना क्यों न पड़े। जैसे भी बनेगा कुछ कुछ करूंगी ज़रूर।

बाबूजी के प्रति मन अजब-सी से भर उठा था। मैं सब कुछ भूल इस बिखरी यादों में खो सी गयी थी। रामलखन आकर बोला–'दीदीजी, टाइप की चिट्ठी मंगावत हैं।'

मैं एक क्षण को अचकचायी, फिर हो बोली, 'रामलखन, साहब से कहो, अभी लेटर पूरा होते ही लेकर आती हूं।'

और मेरी उंगलियां तेजी से राइटर के की-बोर्ड पर दौड़ने लगीं।

–१८, विधान सभा

लखनऊ-२२६००१, उ.

□

(पृष्ठ ७९ का शेषांश)

नहीं थी, मोहब्बत की गरमी थी। एक अजीब थकन के अहसास से चूर होकर वह दीवान पर बैठ गया। उसे ऐसा लगा, जैसे पंडितजी ने अचानक उसे अपनी बांहों में ले लिया हो, मगर वह चोर नहीं था। जवान नहीं था। एक छोटा-सा बच्चा था जो था, और जिसे बड़ी सख्त नींद आ थी और जिसे ड्रेसिंग-गाउन की गरमाहट थपक-थपककर सुला रही

[प्रस्तुति :

□

दाल अस्पताल

प्राकृतिक चिकित्सा की एक अनोखी संस्था

□ मीरा भट्ट

इन डोंट फरगेट टू पोर कोल्ड वॉटर ऑन योर हेड'–मेरे निकट के स्टीम से बाहर निकलती एक अमरीकन को मैं कह रही थी । बेंगलोर-जिंदाल के कुदरती उपचार केंद्र के र कक्ष में कभी मेरे साथ पंजाबी होती है, तो कभी तमिल; कभी की बिलकुल निरक्षर महिला तो बंबई की पढ़ी-लिखी ऊंचे ओहदे पर करनेवाली । कोई भी हो उपचार-ला में तिलभर का फर्क नहीं । अमरीकन महिला रोजाना पांच सौ के हिसाब से अपना निवास-शुल्क थी और मैं थी फ्री वार्ड की निःशुल्क, किंतु दोनों के प्रति समान व्यव-। केवल पढ़े-लिखे, सुसंस्कृत डॉक्टरों ही नहीं, योग प्रशिक्षक, उपचारक-और सेविकाएं सभी का मरीजों के एक समान सहानुभूति भरा, विवेक-र व्यवहार ।

लोर से सोलह किलोमीटर दूर, रोड पर बसी हुई नेचरोपेथी तथा की एक अद्भुत संस्था की यह है । भारत भर में प्राकृतिक चिकित्सा केंद्र हैं, शायद प्रत्येक प्रांत में हैं, किंतु बंगलोर की यह संस्था कई दृष्टि से अनुपम और अद्वितीय है । वैसे इस संस्था का पूरा नाम तो है–'इन्टीटयूट ऑफ नेचरोपैथी एन्ड योगिक सायन्सेस', परंतु लोग इसे जिंदाल अस्पताल के नाम से पुकारते हैं । राजस्थान के एस. जे. जिंदाल के एक ट्रस्ट द्वारा १९७९ से यह संस्था चल रही है और १९८७ के अंत तक करीबन १६००० रोगियों ने इस आरोग्य-केंद्र का लाभ उठाया है ।

वैसे ही बेंगलोर शहर उसकी आरोग्यप्रद आबोहवा, खुशनुमा वातावरण तथा रमणीय प्रदेश होने के नाते सुविख्यात है ही । 'उद्यानों का शहर' कहलाता है वह । उसमें भी बेंगलोर की सीमा पर बसी हुई इस संस्था का वातावरण अत्यंत रमणीय और मनोहर है ।

फार्म की सुंदरता, स्वच्छता, वैज्ञानिकता का एक रूप है, विविध रचनायुक्त वस्ती की रमणीयता का दूसरा रूप है । प्रवेश करते ही लगता है हम किसी अस्पताल में नहीं, बल्कि किसी आश्रम में आ गये हैं । अस्पताल शब्द से हमारा मन कांप जाता है । रोगियों के थके-हारे चेहरे, मुरझाये से चिंतातुर स्वजन, शुभ्र वस्त्रों में सज्ज

परिचारिकाओं की ऊंची एड़ी की खट-खट आवाज जैसे दिल पर हथौड़े पड़ रहे हों—और 'डॉक्टर साहब पधार रहे हैं' का ऐलान सुनकर रुकता श्वास ! समूचे वातावरण में फैली दवाओं की एक विशिष्ट गंध, इंजेक्शन, ऑक्सीजन तथा ग्लूकोज की बोतलें, स्ट्रेचर कुल मिलाकर ऐसा माहोल होता है कि वहां ठहरने का मन नहीं होता ।

परंतु यहां ऐसा कुछ नहीं । प्रवेश द्वार पर फव्वारे का पानी जितना शीतल, शांत और आल्हादक है, उतना ही मधुर वातावरण भीतर भी है । प्रवेंश के समय जो डॉक्टर आपको जांचे, सारा इतिहास जान लें, आगे की चिकित्सा का निर्देश दे उसी डॉक्टर को आप डायट सेंटर में थाली परोसकर देते हुए देखेंगे तो कैसे विश्वास हो कि यह अस्पताल है ? किंतु प्राकृतिक चिकित्सा में निराहारिता ही दवा है और सम्यक् आहार ही पथ्य है । मरीज को जो रस, फल, सब्जी या खाना देना है उसमें कोई त्रुटि न रह जाय, इसका जिम्मा डॉक्टर साहब का है, इसलिए भोजन के समय स्वयं हाजिर रहकर कोई न कोई डॉक्टर परोसने में मदद करते हैं । परोसनेवालों में सोलह साल की एक सुकुमार कन्या अपनी मुस्कान से भोजनालय को मां अन्नपूर्णा का मंदिर बना देती है ।

इस संस्था में मरीज के तन-मन की छोटी-छोटी बातों का सूक्ष्मता से ध्यान
रखा जाता है । डायट सेंटर में
अनुसंधान में अलग-अलग आहार
है । रसाहारियों के मन पर अच्छा
देखकर तनाव न हो इसलिए उनके
की व्यवस्था अलग है । संडास भी
प्रकार के हैं । बैठे संडास में भी
मरीज को खड़े होने के लिए मजबूत
के सहारे की व्यवस्था है । कटिस्नान
बाद टब में से खड़े होने में तकलीफ
सकती है तो ऊपर से लटक रही है
सांकल । कटिस्नान के समय पैर
इसके लिए स्टूल रखे गये हैं । पंद्रह
मिनट पानी में बैठे-बैठे ऊब न जायें
लिए पढ़ने की सामग्री भी हाजिर है
पेट तथा आंखों पर मिट्टी की पट्टी
है, चुपचाप पड़े रहना है तब कमरे
संगीत के मधुर सुर गूंजते हैं । सारे
पर मिट्टी लगानी है, किंतु कान में
नहीं जानी चाहिये तो रुई हाजिर है
स्टीम या सोना बाथ में कभी कोई
हो सकता है, इसके लिए कॉलबेल
रखी है । ये सारी छोटी-छोटी किंतु
बातें मरीज के मन को संतुष्ट और
करती हैं ।

यहां की चिकित्सा पद्धति में
उपचार तथा योग चिकित्सा का
समन्वय किया गया है । यहां का सूत्र
है—नेचर क्योर्स, योग मेंटेंस-
रोग-निवारण करती हैं, योग स्वास्थ्य
टिकाये रखता है ।

यहां प्राकृतिक चिकित्सा के

ज्ञान का भी पूरा सहारा लिया गया है। निदान प्रक्रिया तथा उपचार पद्धति अद्यतन वैज्ञानिक साधनों का उपयोग ने में कोई संकोच नहीं है। यूरीन ब्लड टेस्ट के उपरांत एक्स-रे, ई. जी. आदि की पूरी व्यवस्था है। आवश्यकता हो तो फिजीओथैरपी के सब भी उपलब्ध हैं।

करीबन दो-ढाई सौ मरीजों के लिए डॉक्टर, पांच योग-प्रशिक्षक, दो- उपचारक और बीस-पच्चीस परिचारक-गण हैं।

यौगिक उपचार में सुबह की योग क्रियाओं में जलनेति, सूत्रनेति, वमन शंख प्रक्षालन आदि है। श्वसन के लिए प्राणायाम तथा विविध रोगों के लिए विविध योगासन के वर्ग भी जाते हैं। आंखों का तेज बढ़ाने के लिए त्रिफला जल से नेत्रशुद्धि तथा त्राटक-क्रिया होती है। इन सब उपचारों में तीन-चार घंटे लग जाते हैं।

रोज शाम को आधा घंटा योगनिद्रा अभ्यास करवाया जाता है। इसमें को शवासन की स्थिति में सुलाकर, के बाह्य अंगों को विराम देकर, भीतर के मन, बुद्धि, चित्त के स्पंदनों को विश्राम बिंदु तक पहुंचाना होता है। सुबह-शाम की प्रार्थना भी मरीज को की दिशा में सहायक होती है।

यहां एक व्यायाम गृह है। स्नायुओं मजबूत करनेवाले डम्बेल्स, लेज़िम जैसे साधनों के अलावा आटा पीसने की सादी चक्की के साथ ही अत्याधुनिक इलेक्ट्रिक यंत्र साधन भी हैं। जिनमें शरीर की अतिरिक्त चरबी घटाने के प्रेशर थेरेपी करने वाले विविध यांत्रिक साधन हैं। सायकल तथा गतिवर्धक यांत्रिक साधन भी हैं।

यहां की सबसे बड़ी विशेषता तो यहां का उपचार-कक्ष है। संस्था के मुख्य मकान के दोनों ओर स्त्री-पुरुषों के दो अलग जनरल वार्ड हैं—और उनके साथ दो विशाल उपचार-कक्ष हैं। इनमें बीस-पचीस प्रकार के विविध उपचार दिये जाते हैं। इन उपचारों का मुख्य आधार जल, मिट्टी, बाष्प तथा तेल है।

जलचिकित्सा में मुख्यत: अंडर वॉटर मसाज, इमर्सन बाथ, स्पाइनल स्प्रे बाथ, जेट बाथ, व्हर्ल पूल बाथ, हिप बाथ, तथा एनिमा इत्यादि हैं।

बाष्प-चिकित्सा में स्टीम-बाथ, सौना-बाथ, सीत्ज़ बाथ, कोम्प्रेसीज आदि हैं।

मिट्टी के उपचार में सुबह-शाम आंख व पेट पर मिट्टी की पट्टी, पूरे बदन का मिट्टी-बाथ देते हैं।

सूर्य-चिकित्सा में केले के पत्तों में पूरे शरीर को लपेटकर ऊपर ठंडा कंबल लपेटा जाता है और फिर कड़ी धूप में लेटना होता है। सनबाथ के लिए कड़ी धूप में रंगबिरंगी कांचवाली लंबी पेटी में लेटना होता है।

तेल की मालिश के अलावा लंबे टब में पूरा सुलाकर फरवाले कपड़े से पानी के

भीतर मसाज, कुएं जैसे बड़े और गहरे टब में उतारकर चारों ओर से गरम-ठंडे पानी के फव्वारे में गोल-गोल घूमना होता है। जेट बाथ जैसे उपचार तो जीवन का अप्राप्य अनुभव है। तीन दिन के उपचार के बाद ऐसा लगने लगता है कि यहां शरीर का एक भी कोश ऐसा नहीं रहा होगा, जिसकी पूछताछ न की गयी हो।

यहां की एक विशेषता यह भी माननी होगी कि मरीज को यहां पलभर भी फुर्सत नहीं मिलती। दूसरी जगहों पर तो अधिकतर खाली रहने से उपवास और भी लंबे और बोझिल हो जाते हैं। यहां का टाइमटेबल इतना सुगठित है कि खासी दौड़-भाग करके ही सब पूरा किया जा सकता है।

फिर भी बीमारी में होम-सिकनेस महसूस होती ही है, इसलिए मनोरंजन की भी यहां व्यवस्था है। अच्छा सा पुस्तकालय है, टी. वी. की व्यवस्था है। इनडोर, आउटडोर खेलकूद के विविध साधन भी हैं। हफ्ते में दो बार विडियो पर फिल्म भी दिखायी जाती है। रविवार को दोपहर के उपचार बंद होते हैं, सुबह जल्दी निबटकर सब लोग 'रामायण' देखने हॉल में इकट्ठे हो जाते हैं। शाम को फिल्म होती ही है।

हफ्ते में दो-तीन बार निष्णातों के आरोग्य विषयक व्याख्यान भी रखे जाते हैं। महीने में एक बार संस्था के प्रमुख वहां आते हैं, सबके सुझाव-शिकायतें सुनते हैं। एकाध शाम मरीज अपनी मर्जी से बिताते हैं।

सुबह-शाम घूमना यह भी यहां
उपचार है। हरी दूब की लॉन्स
गयी हैं, जिससे आंखों का तेज
लिए नंगे पांव उन पर चहल कदमी
सकें। पैरों के तमाम Points पर
आये, उस तरह से Reflexology
थेरेपी के लिए बगीचे में एक छोटा
होज बनाया गया है, जहां तले में टेढ़े
पत्थर लगाये हैं। उनमें सुबह-शाम
और ताजा पानी छोड़ा जाता है।
टांके में पैरों को डुबाकर दस मिनट
तो प्रेशर थेरेपी का उपचार हो जाता
बाकी घूमने के लिए समूचे आहाते
घेरे हुए लंबे-लंबे विशाल रास्ते हैं,
ओर रंग-बिरंगे फूलों से लदे वृक्ष
रहते हैं। घूमने के इस रास्ते में एक छो
सा तालाब बनाया है, जिसके किनारे
कर शाम को सूर्यास्त की रंगावलि
आनंद उठाया जा सकता है।

संस्था का एक छोटा-सा
विभाग भी है। वहां रोजमर्रा की चीजों
अलावा धोबी, नाई, दर्जी आदि की
भी उपलब्ध हैं। छोटा-सा डाक-घर
बैंक भी है।

मरीज यहां मरीज जैसा नहीं
छुट्टियां मनाता हुआ-सा जान पड़ता
फिर भी यहां के निवास दरमियान
को अहाते से बाहर जाने की अनुमति
दी जाती। आप यहां मरीज बनकर
हैं, इसकी याद दिलाने के लिए

तख्तियां लगी हैं–'बाहर जाना मना है', जो परोसा गया है उससे अधिक मांगिये' या 'भोजन में एक दूसरे की की अदला-बदली न करें, मरीज को ज के नाते, मरीज की तरह रहना याद रहना चाहिये।'

तथा खर्च की जानकारी दिये बात अधूरी रह जायेगी। यहां की मांग है कि करीब चार महीने पहले सीट सुरक्षित करवा लेनी पड़ती कभी इत्तफाक से जल्दी मिल जाये भी होता है। यहां कम से कम २० तो रहना ही पड़ता है। वैसे अक्सर महीना पूरा रहना होता है। खास कता हो तभी अपने साथ कोई या स्वजन को रखने की इजाजत ती है। निवास के लिए जनरल वॉर्ड निःशुल्क है) के अलावा कमरे, हट, नेस्ट जैसी अलग-अलग कक्षा व्यवस्था है।

वार्ड	मरीज का खर्च	सहायक
वार्ड	–	–
रूम	४०-४०––	–
रूम	६०–––	३०
	१५०-७५––	७५
(ग्राउंड र)	२५०–१२५–	७५
(फ्लोर)	२२५–१००–	७५
	२५०–२५०–	
	१२५–१२५–	७५

के उपचार तथा भोजन का कोई अलग चार्ज नहीं लिया जाता। विशेष उपचारों का अतिरिक्त खर्च लिया जाता है। फ्री वार्ड का उपचार-खर्च भी नहीं लिया जाता। सिंगल तथा डबल रूम वालों को पचास फीसदी कन्सेशन मिलता है। तीन दिन का खर्च बतौर डिपोझिट लेकर रिजर्वेशन होता है। दो दिन बाद अगर मरीज हाजिर न हो तो डिपोझिट वापस नहीं लौटाते। बारह वर्ष से नीचे तथा ६५ वर्ष के ऊपर के रोगी को प्रवेश नहीं मिलता। मेहमान या मुलाकाती रात नहीं रह सकते।

चाय, कॉफी, अल्कोहोल, सिगरेट, पान, तमाखू, मेवा-मसाला और मांसाहार यहां एकदम वर्जित है। अगर् कोई इस नियम का भंग करें तो उनकी छुटी कर दी जाती है। मेरे निवास के समय, एक बहन के कमरे से काजू-बादाम मिले तो उनकी छुट्टी कर दी गयी और उनसे पूरे दिनों का शुल्क लिया गया। यदि स्वयं नियम का पालन न करें तो इस तरह सख्ती से नियम पालन करवाया जाता है।

रात को ९॥ बजे के बाद नितांत मौन का नियम है। रात के लिए डॉक्टर नियुक्त होते हैं, जिन्हें बुलाने के लिए हर निवास में कॉलबेल है। खासकर दम के रोगी को ऐसी जरूरत पड़ती है।

सामान्यत: यहां इन रोगों की चिकित्सा होती है–क्रॉनिक जुकाम, दमा, आधीशीशी, सायनस, अस्थमा, पेट के रोग, अल्सर, हाइपर एसिडीटी, डायबिटीज,

हाई तथा लो ब्लडप्रेशर, चर्मरोग, आर्थराइटीस, स्पोन्डेलाइटीस, इत्यादि । वजन कम करने के लिए यहां किसी को प्रवेश नहीं मिलता, किंतु ओबेसिटी के कारण किसी रोग की संभावना हो तो प्रवेश मिल सकता है। अस्थमा, डायबिटीज तथा हाइपर टेन्शन जैसे रोगों का संशोधन कार्य भी यहां चलता है।

इस संस्था के बारे में अधिक जानकारी के लिए इनका पता –

इंस्टीटयूट ऑफ नेचरोपैथी एंड योगिक साइंसेज़, १६ के. एम. तुमकर रोड, बेंगलोर-५६००७३, फोन : ३८४९२६-२

इस संस्था में रहने के बाद मुझे तीव्रता से लगा कि प्रत्येक प्रदेश में केंद्र खुलने चाहिये, तभी लोग इस की अचार-पद्धति को सहजता से यंगे । केवल अमीर लोगों को ही मिलने से क्या फायदा ! जिंदाल साहब तरह यदि हर जगह निःशुल्क व्यवस्था जोड़ दी जाय तो साधारण आम लोग इससे लाभ उठा सकते हैं।

चुनौतियां अनेक हैं, आवश्यकता उत्कट पुरुषार्थ की, पराक्रम की।

□

उषा का आगमन

उदात्त देवी की तरह उषा प्रत्येक वस्तु को सहलाती-संवारती आती है। चराचर जीवन को जगाती हुई।

प्रत्येक पदचारी प्राणी को गतिमान करती है, पक्षियों में उड़ान भरती है।

आदि दिन को वह जानती है, अंधकार में से वह श्वेताभ जन्म लेती है, ऋतु के को भंग न करती हुई, वह देवी नियुक्त स्थान पर अपने देवता से मिलने आती है।

ओ उषा, अपने सौंदर्य की परितृप्ति से भरी हुई, अपने इष्ट से मिलने जाती जो तुम्हारे लिए उत्कंठित होकर प्रतीक्षा करता है।

छलकती हुई ज्योति भरे अंग अंग में, देदीप्यमान तुम, उसके समक्ष अपने को अनावृत्त करती हो।

ओ री, वरदायिनी उषा,
और भी व्यापक रूप से प्रकाशमान् होओ।
तुमने जो उपलब्ध किया है, वह और किसी ने उपलब्ध नहीं किया है।
ओ ऋत की किरणों की अनुसरिणी,
हमें प्रत्येक विचार ऐसा दो, जो अधिकतम मंगलमय हो।
ओ उषा, तुम्हें सहज ही प्रतिबुद्ध किया जा सकता है।
तुम आज हम पर प्रकाश बरसाओ,
हममें और ऋत-पुरुषों में तुम्हारी विपुलता व्याप्त हो जाये। ['ऋग्वेद'

□

डिश कहानी

कागज़ का एक टुकड़ा

☐ अगस्त स्ट्राइंडबर्ग

अगस्त स्ट्राइंडबर्ग (१८४९-१९१२) को स्वीडन के प्रमुख कथाकारों और नाटककारों में से एक माना जाता है। प्रस्तुत लघुकथा को उनकी श्रेष्ठतम कथाकृति के रूप में ता प्राप्त है।

अंतर्मुखी स्वभाव के स्ट्राइंडबर्ग ने आजीवन 'आत्म-साक्षात्कार' के प्रयास में संघर्ष- तथा कष्टमय जीवन बिताया। उनकी आत्मकथा (८ खण्ड) तथा उनकी कृतियों– जूली', 'द फादर', 'द ड्रीम प्ले' आदि में उनकी मानसिक व्यथा भली भांति चित्रित ई है।

ान ले जाने वाली आखिरी गाड़ी भी जा चुकी थी। युवा किरायेदार के हैट के चारों ओर शोकसूचक काली बंधी थी, खाली कमरों में यह देखता, रहा था कि कुछ रह तो नहीं गया हर कमरे का मुआयना करने के बाद, यकीन हो गया कि कोई चीज़ बाकी रही है। वह अब गैलरी में आकर रहा था कि इस घर को छोड़ने के वह फिर कभी यहां नहीं आयेगा। नहीं। हरगिज़ नहीं।

लेकिन, जाते-जाते, सहसा उनकी टेलीफोन के पास, दीवार पर कागज के एक टुकड़े पर पड़ी, जिस कुछ लिखा था। वह जानता था कि उस पर क्या लिखा है। उस पर लिखी थी उस रोमांस के आनंदपूर्ण क्षणों की मुख्तसिर-सी दास्तान, जो उसकी ज़िंदगी में बहार की तरह आये थे। जैसे, किसी ने कागज़ के आधे टुकड़े पर एक ज़िंदगी की लंबी दास्तान के कुछ सुहाने क्षणों को समेट दिया था। वह सब कुछ जो वह भूल जाना चाहता था, वहां लिखा था।

०००

उसने कागज़ के टुकड़े को दीवार से अलग कर, अपने हाथों में लिया। पीले रंग के इस स्क्रैच कागज की चमक अलग किस्म की थी। उसने कागज को पढ़ना आरंभ कर दिया।,

सबसे ऊपर लिखा था, उसका नाम

जो उसके लेखे सबसे प्रिय नाम था। एलिस का नाम। उस एलिस का, जो उसकी प्रेमिका थी।

उस नाम के आगे एक संख्या लिखी थी—१५,१११।

और, उस संख्या के नीचे अंकित था—एक बैंक का नाम। उस बैंक का नाम जिसमें वह काम करता था। जो उसके जीवन का आधार था। जो उसे और उसके परिवार को रोटी, रोज़ी, मकान और सुरक्षा प्रदान करता था। बैंक के नाम के नीचे एक काली लाइन खिंची थी, जो इस बात को दर्शाती थी कि बैंक बंद हो चुका है। हक़ीक़त यह थी कि उस बैंक के बंद हो जाने पर उसने दूसरे बैंक में नौकरी शुरू कर दी थी।

बैंक के नाम के नीचे अंकित थे एक पुष्प-विक्रेता तथा एक अश्वशाला के नाम और पते। दोनों का संबंध उसकी मंगनी से था। उसे याद आया कि मंगनी के समय उसकी जेबों में सिक्के खनखनाते रहते थे। इन दोनों पतों के नीचे लिखे थे—एक फर्नीचर-विक्रेता तथा एक गृह-सज्जाकार के नाम और पते। इन दोनों ने उसके इस घर को सजाने में मदद की थी।

इनके नीचे अंकित था आपेरा हाउस तथा उसके एक बॉक्स ५०-५० का नाम। मंगनी के बाद, दोनों अक्सर आपेरा हाउस में जाया करते थे। शादी के बाद भी, उन्होंने वहाँ जाना जारी रखा था। उसे याद आया कि किस प्रकार वे दोनों एक दूसरे का हाथ अपने हाथ में लिये थे कभी एक दूसरे को, और कभी ओपेरा हाउस के पर्दे के पीछे की परी-लोक की जादुई दुनिया की हलचलों को निहारा करते थे।

०००

अगला नाम और पता एक मित्र का था, जो कटा हुआ था। उनका यह मित्र बड़ा प्यारा और सफल मित्र था, मगर अचानक उसे व्यापार में घाटा हुआ, और वह सब कुछ खो बैठा। तब, उन दोनों ने जाना था कि सफलता कैसी धोखेबाज वस्तु है।

इस नाम के नीचे वाला नाम एक महिला का था, जो उस महिला ने खुद अपने हाथों से पेंसिल से लिखा था। यह नाम पढ़ते ही उसकी आंखों के सामने एक सहानुभूतिशील बहन का चेहरा एक-बारगी घूम गया। वह एक डॉक्टर थी और इतनी सुशीला थी कि उसने कभी भी उन दोनों के जीवन में कोई दखलंदाजी नहीं की, और उनसे कुछ लेने के स्थान पर, कुछ देना ही पसंद करती थी। ऐसे सहृदय रिश्तेदार उसके जीवन में कम ही आये थे।

इस नाम के नीचे उसकी सास का नाम अंकित था। उसे याद आया कि किस प्रकार एलिस ने उसे कई बार कुछ दिन अपने साथ बिताने का न्यौता दिया था, मगर वह आने में सदा हिचकती थी। कारण, उसका खयाल था कि

ने से उन दोनों के सुखी वैवाहिक जीवन एक व्यवधान उपस्थित होगा । और वह एक दिन, बहुत इसरार करने पर के साथ रहने के लिये आयी थी, तो के साथ उन दोनों के दिन बड़े सुख के व्यतीत हुए ।

०००

आगे, जो चंद नाम लिखे थे, वे लाल-पेंसिलों से लिखे थे ।

पहला नाम और पता एक रोज़गार वाली एजेंसी का था । कभी उसे इस की सेवाओं की ज़रूरत पड़ी थी ।

दो नाम दो नौकरानियों के थे । पहली, काम छोड़कर चली गयी थी, के स्थान उन्होंने दूसरी को रखा था ।

डेयरी का नाम और पता भी था, वह रोज दूध लेते थे । परचूनिये, विक्रेता आदि के नाम और पते भी साथ ही लिखे थे । उनके नामों के उनके टेलीफोन नंबर भी लिखे थे, घर की मालकिन एलिस, बीमार के बाद, सब खरीद फोन द्वारा ही थी ।

और सबसे अंत में था, एक ऐसा पता, पढ़ते ही उसकी आंखों के सामने, अंधेरा छा गया । यह पता था–शवपेटी बनाने वाला का ।

इस पते के आगे शायद उसी ने कभी पेंसिल से लिख दिया था–'मिट्टी को मिट्टी में मिलना है ।'

एलिस की शवपेटी जब कब्र में उतारी गयी, तो मिट्टी मिट्टी में ही मिली थी । सब मानवों का अंत इसी प्रकार होना है ।

उसने कागज के टुकड़े को मोड़ा, उसे चूमा, और कोट की जेब में रख लिया ।

कागज में लिखे नाम और पढ़ने में उसे सिर्फ़ दो मिनट लगे थे । मगर, इन दो मिनटों में उसने जैसे अब तक की अपनी ज़िंदगी का चलचित्र देख लिया था । उसके वैवाहिक जीवन से पहले और बाद की सब घटनाएं स्मृति चित्रों के रूप में उसकी आंखों के सामने घूम गयी थीं ।

इसका एक अच्छा परिणाम भी हुआ था । जब उसने अंतिम बार इस घर में प्रवेश किया था, तब वह बहुत दुखी था, लेकिन कागज के इस टुकड़े पर लिखे नाम और पते पढ़कर अब उसे थोड़ा संतोष और गर्व अनुभव हो रहा था । उसे लग रहा था कि पिछले कुछ वर्षों में वैवाहिक जीवन के ऐसे खट्टे-मीठे अनुभव कर लिये हैं, जो विरले पतियों को ही अनुभव के लिए मिलते हैं ।

□

यदि नेता चरित्रवान नहीं है तो अनुयायियों में उसके प्रति निष्ठा सम्भव नहीं ।

–संपूर्णानंद

जनतंत्रवाद के लिए हमें शाश्वत सतर्कता का मूल्य देना पड़ता है यह निश्चित है ।

–जे. एस. मिल

□

संकल्पवान बल्लेबाजी के प्रतीक

□ हें

विजय मर्चन्ट के निधन से भारतीय क्रिकेट ने एक ऐसे क्रिकेट-खिलाड़ी को खो दिया, जिसने भारतीय क्रिकेट के क्षेत्र में ठोस, दृढ़ तथा संकल्पवान बल्लेबाजी की परंपरा को जन्म दिया। काल-प्रवाह के साथ-साथ वे और भी गरिमायुक्त होते जायेंगे। प्रस्तुत है उनके प्रति एक श्रद्धांजलि।

'क्रिकेट का गद्य व पद्य यहां एक साथ देखने को मिल रहा है,' मैनचेस्टर टेस्ट में इंग्लैंड के विरुद्ध विजय मर्चन्ट और मुश्ताकअली की पहले विकेट की २०३ रनों की भागीदारी का प्रदर्शन देखकर विश्वविख्यात क्रिकेट-समीक्षक नेविल कारडस के मुंह से ये शब्द निकले थे। इस मैच में मर्चन्ट 'एकाग्रता से बड़ा और कोई पुरुषार्थ नहीं' वाली उक्ति के प्रतीक बन गये थे। उनके सुदक्ष हाथों को ओजस्वी और दृढ़-प्रतिज्ञ बल्लेबाजी ने ही आश्चर्य-विमोहित कारडस को उनकी शानदार और संकल्पवान बल्लेबाजी को क्रिकेट का गद्य कहने पर बाध्य कर दिया था।

सच तो यह है कि भारतीय क्रिकेट के क्षेत्र में ठोस, सुदृढ़ और संकल्पवान बल्लेबाजी की परंपरा को जन्म देने वाले विजय मर्चन्ट ही थे। गावसकर, वेंगसरकर, मांजरेकर, हज़ारे जैसे श्रेष्ठ बल्लेबाजों ने अपनी बल्लेबाजी की शैली के लिये मर्च को ही आदर्श माना – रणजी, दिली सिंहजी, नायडू, मुश्ताक और अमरना जैसे साहसी, किंतु कौतुकप्रिय बल्लेबाजों को नहीं। मर्चन्ट ने बल्लेबाजी की जो शै अपनायी, वह आकर्षक और प्रदर्शनीय न होते हुए भी पूर्णतया निर्भरणीय थी।

मर्चन्ट के निधन पर इंग्लैंड के ना खिलाड़ी ट्रेवर बेली ने, जो रिलायंस क के दौरान एक पत्रकार के रूप में भार आये थे, कहा कि 'वे भारत के श्रेष्ठ बल्लेबाजों में से एक थे।' एक विख्या अंग्रेज क्रिकेट-समीक्षक हेनरी ब्लोफे ने उनके बारे में सही ही कहा कि 'उन्हों क्रिकेट को एक विज्ञान में बदल दिया और वे उसकी व्याकरण में पारंगत थे। हर गेंद पर वे सुनिश्चितता व सूक्ष्मता साथ प्रहार करते मनचाहे स्थान पर पहुं

में समर्थ थे ।' पीटर स्मिथ एक लैग-ब्रेक गेंदबाज़ पर बार उन्होंने इतनी देरी से सुनिश्चिता के साथ प्रहार था कि क्षेत्ररक्षकों की यह कि वे साफ़ बोल्ड हो जायेंगे, सिद्ध हुई। उनका उज्ज्वल जीवन ऐसे अनगिनत उदाहरणों से भरा पड़ा है ।

कट' के उस्ताद

कट' देखने में नेत्ररंजक लगती है, किंतु उसे खेलना के लिये ख़तरे से खाली है। मगर, मर्चन्ट जिस सफ़ाई से उसे खेलते थे, उससे उल्टा क्षेत्ररक्षकों के लिये वन जाता था । में अपना अंतिम टेस्ट इंग्लैंड फ़िरोजशाह कोटला मैदान हुए, मर्चन्ट की ऐसी ही कट' को रोकने का प्रयास हुए इंग्लैंड के विकेट कीपर का हाथ कई बार बुरी झनझना उठा था, और वह देर तक उंगलियों को सहलाते रहते थे । के लेट कट की विशेषता यह थी जितनी धीमी उनके पास आती उतनी ही तेज़ी से उसे सीमा-पार देते थे। अब 'लेट कट' को इस के साथ खेलने वाले खिलाड़ी कहां आजकल?

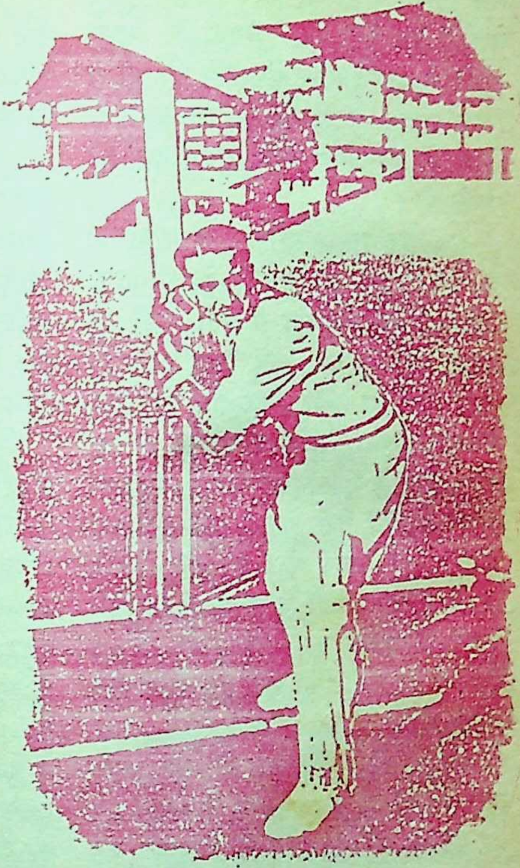

बल्लेबाज विजय मर्चन्ट

मर्चन्ट ने चूंकि एक लंबे समय तक क्रिकेट का विधिवत् अध्ययन और अभ्यास किया था, इस कारण वे तेज़ और धीमे दोनों किस्मों के गेंदबाज़ों को बखूबी खेल सकते थे । 'ओपनर' होने के कारण उन्हें तेज़ गेंदबाजों का सामना तो अनिवार्य रूप से करना ही पड़ता था, और वे उनकी उध्वस्त गेंदबाज़ी का सामना एक मन, एक

तन होकर करते थे, और निर्भयतापूर्वक तेज़ से तेज़ गेंदों पर निर्ममता से प्रहार करते थे, मगर धीमे गेंदबाज़ों को भी वे जिस साहस से खेलते थे, उसके कारण गेंदबाज़ों की जीत उनके सामने नहीं हो पाती थी।

एक बार उन्होंने स्वीकार किया था कि वे 'लैग स्पिनर' की 'गुगली' गेंद को प्रायः नहीं पढ़ पाते, लेकिन मैं ऐसी गेंदों पर प्रहार करने से पूर्व, उन्हें 'पिच' पर टप्पा खाने देता था, और फिर गेंद का 'टर्न' देखकर अपना 'शॉट' निर्धारित करता था। आज के एक-दिवसीय बल्लेबाजों की भांति वे गेंद पर उठाऊ शॉट (लैफ्टेड शॉट) नहीं लगाते थे। हर शॉट लगाते समय उनकी आँखों व पांवों का तालमेल देखते ही बनता था, और उसके कारण गेंद निरंतर ज़मीन को छूती हुई, सीमा तक जाती थी।

मर्चेन्ट की बल्लेबाजी की एक विशेषता यह थी कि वे हर किस्म के विकेट पर हर किस्म की गेंदबाजी के खिलाफ़ रन बना सकते थे, अपनी एकाग्रता, धैर्य, कौशल व तीक्ष्ण बुद्धिबल के आधार पर। जब १९३६ में 'विजडेन' ने उन्हें इंग्लैंड में उनके शानदार और गौरवपूर्ण प्रदर्शन के बाद वर्ष के श्रेष्ठतम पांच खिलाड़ियों में से एक चुना था, तब उनके खेल के बारे में उसने लिखा था, 'अपनी अपेक्षाकृत कम ऊंचाई (५ फुट, ७ इंच) को मर्चेन्ट अपने 'स्ट्रोक प्ले' में बाधा नहीं बनने देते। इस कमी को वे अपने फुर्तीले क़दमों तेज निगाह से पूरा कर लेते हैं। ड्राइव, ग्लांस आदि स्ट्रोकों को वे विश्वसनीय और आकर्षक ढंग से खेलते

यही कारण था कि उनकी प्रथम इं यात्रा के बाद, एक प्रमुख अंग्रेज क्रि समीक्षक ने उनके बारे में लिखा 'इंग्लैंड को चाहिये कि वह मर्चेन्ट शरीर पर गोरा रंग पोत कर, 'ओपनर' रूप में उन्हें आस्ट्रेलिया ले चले।'

जन्म गुजराती परिवार में

विजय माधवजी मर्चेन्ट का जन्म अक्तूबर, १९११ को बंबई में एक गुजराती परिवार में हुआ था। उन परिवार हिंदुस्तान स्पिनिंग मिल मालिक था। उनका मूल कुलनाम ठाक रसी था, और मर्चेन्ट कुलनाम उनके के आगे विचित्र परिस्थितियों में था। जब वे बंबई के भरदा हाई स् में प्रवेश लेने गये, तो अध्यापिका ने उनका कुलनाम पूछा, जो बालक वि को तुरंत याद नहीं आया। अध्यापिका फिर पूछा कि उनके परिवार का व्यव क्या है, तो बालक विजय ने कहा, ' लोग व्यापारी (मर्चेन्ट) हैं।' बस अ पिका ने उनके नाम के आगे मर्चेन्ट नाम जोड़ दिया, जिसे हटाने की ज़ बाद में किसी ने नहीं समझी, कारण, कि की दुनिया में उन्हें इसी कुलनाम से जाने लगा।

सिर्फ १५ वर्ष की आयु में भरदा हा

के विद्यार्थी विजय मर्चेन्ट ने अपने बड़े विद्यार्थियों के विरुद्ध खेलते हुए पारियों में क्रमशः १२४ और १०० नहीं) रन बनाये थे । सिडनहम में प्रवेश लेने के बाद वे अपने की क्रिकेट टीम के कप्तान बने, और नेतृत्व में पहली बार उनके कालेज ने कालेज क्रिकेट प्रतियोगिता में सर्वोच्च पाया । उन दिनों वे गेंदबाजी भी करते थे। इससे पहलें, १९२९ में १८ साल की उम्र में उन्होंने उस की राष्ट्रीय क्रिकेट प्रतियोगिता– प्रतियोगिता–में भाग लेना कर दिया था ।

१९३३ में जारडाऊन की कप्तानी में का दौरा करने वाली विश्वविजयी की टीम के खिलाफ़ बांबे प्रेसीडेंट की ओर से खेलते हुए उन्होंने क्रमशः (आउट नहीं) और ६७ (आउट नहीं) बनाये थे। दूसरी पारी में इंग्लैंड के गेंदबाजों ने बंपरों से भरपूर अपनी गेंदबाजी से उन्हें विचलित करने भरसक प्रयास किया, लेकिन वे उन्हें नहीं पाये। इसी मैच की दूसरी में निकोलस नाम के एक तेज़ गेंदबाज तेज़ गेंद 'बंप' कराके फेंकी, जो ठोड़ी में एक गड्ढा बनाती हुई । यह गड्ढा आजीवन उनकी ठोड़ी दिखायी देता रहा, उनके दृढ़ निश्चय कर्मठता से पूर्ण खेल की याद दिलाता । इस शृंखला के बाद जारडाइन ने मर्चेन्ट को 'भारत का सबसे अधिक निर्भरणीय, सुस्थिर व कृतसंकल्प बल्लेबाज' बताया था। उनकी दृष्टि में वे इस शृंखला में खेलने वाले नायडू, अमरनाथ, अमरसिंह व दिलावर हुसैन जैसे खिलाड़ियों से बेहतर थे।

जब १९३६ में इंग्लैंड की यात्रा करने वाली भारतीय टीम का चुनाव हुआ, तो मर्चेन्ट उसके लिये चुने गये। इस दौरे पर अपने शानदार प्रदर्शन के बल पर उन्होंने विजडेन के उस वर्ष के पांच सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ियों की कतार में स्थान पाया।

इस दौरे में प्रथम श्रेणी की ४ पारियों में खेलते हुए, उन्होंने १७४५ रन बनाये। इनमें दो शतक भी शामिल थे। इनमें सबसे शानदार व अविस्मरणीय शतक था, ११४ रनों का, जो उन्रोंने मैनचेस्टर के टेस्ट मैच में उस समय बनाया था, जब उनकी टीम हार के कगार पर खड़ी थी।

इस दौरे से पूर्व, उनके निंदक यह कहकर उनकी आलोचना किया करते थे कि वे तो सिर्फ़ अपने परिचित और रन बनाने के अनुकूल मैदानों पर ही रन बना सकते हैं। मगर उन्होंने १९४६ के वर्षा-सिंचित मैदानों पर जहां इंग्लैंड के बल्लेबाज भी रन बनाने में कठिनाई अनुभव कर रहे थे ७४.५२ के औसत के साथ २३८५ रन बनाकर, अपने निंदकों व आलोचकों का मुंह हमेशा के लिये बंद कर दिया। औसत के लिहाज़ से इंग्लैंड के कप्तान हैमंड ही उनसे आगे रहे। लेकिन उनके रन–

१७८३–मर्चेन्ट के रनों से कम थे।

१९४६ के इंग्लैंड के दौरे को मर्चन्ट की क्रिकेट की विजय-यात्रा की एक महत्वपूर्ण मंजिल कहा जा सकता है। उनकी गिनती भारत ही नहीं, विश्व के चोटी के बल्लेबाजों में की जाने लगी। इस दौरे के उनके दो उज्ज्वल प्रदर्शनों की छाप उनके प्रशंसकों के मन में सदा अंकित रहेगी।

इस दौरे में ससैक्स की टीम के विरुद्ध खेलते हुए, ओपनर मर्चन्ट ने दुपहर के साढ़े ग्यारह बजे से शाम के सवा चार बजे तक बल्लेबाजी की, मगर इस बीच गेंद एक बार भी नये दस्ताने पहन कर आये हुए विकेट कीपर ग्रिफिथ के हाथों में नहीं गयी। उन्होंने कोई गेंद 'मिस' नहीं की।

इस दौरे के तीसरे टेस्ट मैच में अपना शतक पूरा करके भी ऐसे विश्वसनीय ढंग से खेल रहे थे कि लगता था कि कभी आउट ही नहीं होंगे। सभी गेंदबाजों पर वे हावी हो चुके थे। इंग्लैंड के कप्तान की समझ में ही नहीं आ रहा था कि उन्हें कैसे रोका या आउट किया जाये। त ी एक चमत्कार हुआ। १२८ रन बनाकर उन्होंने 'शॉर्ट लैग' पर खड़े कांपटन से काफी दूर गेंद को 'पुश' किया, और रन लेने के लिये दौड़े। तभी, कांपटन ने जो फुटबाल के भी अच्छे खिलाड़ी थे, फुर्ती से आगे बढ़ कर, पांव से गेंद को स्टंप की ओर धकेल दिया। मर्चन्ट 'रन आउट' हो गये। एक समीक्षक ने बाद में लिखा, 'उस दिन मर्चन्ट किसी चमत्कार से ही आउट हो सकते थे, और यह चमत्कार कांपटन ने दिखाया।'

नये खिलाड़ियों को प्रोत्साहन

स्वदेश लौटने से पूर्व, कमर के द पीड़ित मर्चन्ट १९४७ से १९५० क्रिकेट खेलने में असमर्थ रहे। यदि पूर्णतया स्वस्थ होते, तो १९४७ में आ लिया जाने वाली भारतीय टीम, व १९ में भारत के दौरे पर आयी वेस्ट इंडीज टीम के विरुद्ध भारतीय टीम के कप्त अवश्य बनते। और यदि ऐसा हुआ हो तो भारतीय टेस्ट क्रिकेट का इतिहास कु और ही कहानी सुना रहा होता। १९ ५० में वे कामनवेल्थ टीम के मुका में खेलने वाली भारतीय टीम के कप्त नियुक्त हुए, पर पहले ही अनधिकृत टे में हाथ में चोट लग जाने की वजह आगे न खेल पाये।

१९५०-५१ में उन्होंने स्वेच्छा भारतीय क्रिकेट के हित में, तथा न खिलाड़ियों को खेलने व नेतृत्व करने अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से इं के विरुद्ध खेलने के लिये गठित भार टीम में साधारण खिलाड़ी के रूप में खे स्वीकार किया। सच तो यह है कि होनहार खिलाड़ियों को आगे आ चमकने देने के अवसर देने के लिये वे प्रस्तुत रहते थे। अजीत वाडेकर, सु गावसकर, मोहिंदर अमरनाथ व चौहान आदि खिलाड़ी कृतज्ञतापूर्वक प्रोत्साहन तथा खेलने के अवसर प्र

के लिये मर्चन्ट की याद करते हैं। १९५०-५१ की टेस्ट श्रृंखला में मर्चन्ट 'शॉट्स' के बल पर १५४ रन थे। कम से कम ६ बार इंग्लैंड के कीपर सूनर ने उनके तोप के गोलों अपनी ओर आते हुए 'शॉट्स' का प्रयास किया, मगर हर बार कर रह गये। किंतु, इसी टेस्ट करते समय जो गंभीर चोट उनके कारण उन्हें अपने प्रिय खेल से सदा के लिए संन्यास लेना पड़ा, जो उनके लिये एक खेल ही न ऐसा 'एडवेंचर' था, जिसमें वे सारी शक्तियों को एक करके भाग हैं।

क्रिकेट-प्रतियोगिताओं में मर्चन्ट इस बात के प्रमाण हैं कि क्रिकेट का वाक़ायदा प्रशिक्षण वाला क्रिकेट खिलाड़ी भी अपनी प्रक्रिया निर्दोष कला व अनुशासन खेल से क्रिकेट की सर्व-समा- विभूति बनकर दिखा सकता है। प्रतियोगिता में उन्होंने १६ थे, और उनका ३९५ (नाट का स्कोर इस प्रतियोगिता का स्कोर है। इस प्रतियोगिता में उन्होंने १०३.२२ के औसत पर ३६१३ रन बनाये थे।

पैंटेंगुलर प्रतियोगिता में भी उनके प्रदर्शन उतने ही शानदार थे। इस प्रतियोगिता में सर्वाधिक रन बनाने के लिए उनमें और हज़ारे में जैसे होड़ लगी रहती थी। लेकिन, इस होड़ में अंततः विजय मर्चन्ट की ही हुई, जब उन्होंने बंबई की ओर से महाराष्ट्र के विरुद्ध ३५९ रन बनाये।

इस श्रद्धांजलि के अंत में हमें किसी अज्ञात कवि की ये पंक्तियां याद आ रही हैं, जो मर्चंट कभी-कभी दोहराते रहते थे :

'और जब वह महानतम 'स्कोरर' आयेगा
तब वह आपने नाम के आगे
आपके गुणांक लिखेगा, जिनका आधार
यह नहीं होगा
कि आपने कितने मैच जीते,
और कितने हारे,
बल्कि यह होगा कि
आपने किस भावना से
खेल को खेला।'

और, मर्चन्ट ने आजीवन जीवन और क्रिकेट, दोनों खेलों को 'खेल की भावना के साथ खेला। यही उनके अमर जीवन की विशिष्टता थी।

□

घर के द्वार गरीबों के लिए नहीं खुलते, उस घर के द्वार डाक्टरों के लिए जरूर हैं।

—अज्ञात

०००

चरित्र के आधार पर अटूट श्रद्धा और विश्वास टिक सकते हैं। **—स्वामी विवेकनंद**

□

कृष्णमृग के शिकार की कथा-व्यथा

☐ तेज

हरिण या मृग वर्ग में कृष्णमृग (काला हरिण) सबसे सुंदर होता है। देश के मैदानी भागों में—दक्षिणी समुद्री किनारों के भागों, पहाड़ी तथा घने जंगली इलाकों को छोड़कर—सब जगह पाया जाता है। मादा हरिण के सींग नहीं होते। रंग पीलापन लिये होता है। नर के सींग होते हैं—घुमावदार लम्बे काले सींग—२० से २२ इंच तक। प्रौढ़ नर का रंग काला हो जाता है। लम्बे सींगों वाला काला हरिण बहुत ही सुंदर होता है। आंखों की सुंदरता अवर्णनीय होती है। कवियों ने इसीलिए आंखों की सुंदरता की उपमा में 'मृगनयनी' कहा है।

यह हरिण २० से ३० तक की संख्या में झुंड में रहता है। राजस्थान, मध्यप्रदेश पंजाब में इसे १०० से २०० तक की संख्या में झुंड में देखा गया है। इसका सुंदर चमड़ा, सींग और मांस पाने के लालच में अत्यधिक शिकार किया गया है। और इसकी संख्या में बहुत कमी आयी है।

काला हरिण घास, पत्ती, अनाज के पौधे और दाने खाता है। झाड़ियों वाले मैदानों और घनी घास अथवा खड़ी फसलों के पौधों में, दिन चढ़े धूप में, छुपे बैठे रहते हैं। लंबा-चौड़ा खुला हो तो वहां भी बीच मैदान में बैठे हैं। सुबह-शाम चरते रहते हैं और भी घूमते-चरते रहते हैं।

प्रौढ़ नर, काला हरिण आदतन (आश्विन) माह से-(याने वर्षा समाप्त हो जाने के बाद से) ज्येष्ठ तक (याने वर्षा प्रारंभ होने के पहले अपने रहने वाले स्थान के आस-पास या खेत में एक स्थान विशेष चुन लेता है वह प्रतिदिन सूर्यास्त के समय से के मध्य मल-मूत्र त्यागने अवश्य आता है यह उसकी आदत होती है। शिकारी स्थान—जिसे लेंड़ार (लेंड़ीवाला या आखड़ कहते हैं—के समीप जमीन गड्ढा खोदकर या झाड़ियों में बनाकर बैठते हैं। जैसे ही नर हरिण मल-मूत्र विसर्जन करने आता है—उसे का निशाना बना लेते हैं।

पुराने ज़माने में एक कहावत प्रचलित थी (शिकार के संबंध में) जिस राजा के राज्य क्षेत्र के भीतर नर-हरिण-बुड्ढा और शिथिल होकर जाता था तो राजा को कलंक लग था। इसलिए राजा के लिए शिकार

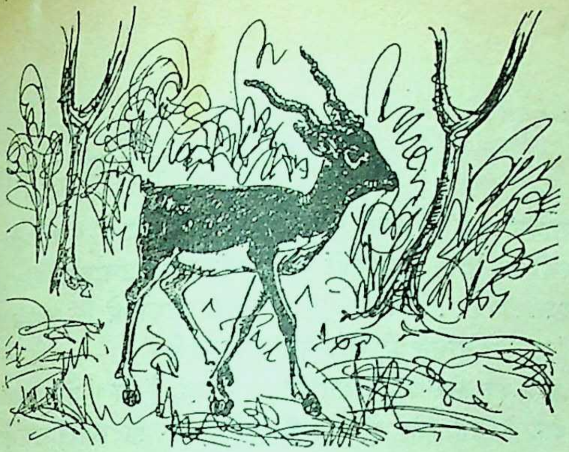

हरिण मारना ज़रूरी था ।

तो, यह तो हुई हरिण और उसके कार की बात । अब कभी-कभी ऐसा होता है कि शिकारी का निशाना चूक जाता है, वह ठीक-ठीक लक्ष्य-भेद नहीं ता तो मूर्ख भी बन जाता है । शिकार में आकर निकल जाता है । वैसी ही कहानी मैं सुना रहा हूं ।

वस्था में मैं प्रवेश कर रहा था आखड़ में बैठने और काला हरिण की शिकार कला मुझे सिखायी जा थी । पहली बार मैं पिताजी के साथ ही गया था । अर्दली में बजरंगा था– का प्रशिक्षक भी था । देवरी और तथा निपनियां–तीनों गांवों के बीच एक बड़ा मैदान था–झाड़ियां विरल-विरल थीं और घास भी वहां थी । उन दिनों वहां काले हरिणों रहे ही आते थे । और प्रौढ़ एकल नर भी अधिकांशत: रहते थे । उसी मैदानी भाग में दो आखड़ें, नज़दीक-नज़दीक ही थीं । दोनों के समीप खोदे गये गड्ढों में से एक में मैं बैठा था दूसरे में पिताजी । मुझे ठीक-ठीक समझा दिया गया था–कैसे हरिण आयेगा, ? कैसा दिखेगा ? कैसे निशाना लेकर मारना था ? आदि . . .

सूर्यास्त हो गया था । चांदनी रात खिल रही थी । जहां-तहां सियार बोल देते थे । कभी-कभी लोमड़ी की बोली भी सुनायी दे जाती थी । वातावरण शांत था । मैं बैठा था–गड्ढे के भीतर घुसा हुआ । उत्सुकता में दिल धुक-धुक कर रहा था । तभी पीछे से आती हुई क्षीण सरसराहट सुनायी पड़ी जो बगल में आ गयी थी, मेरे बायें हाथ की ओर से–छः सात फीट की दूरी से–काला हरिण बड़ी मस्ती से बड़े-बड़े सींगे हिलाता, चलता आखड़ में

(शेषांश पृष्ठ ११९ पर)

वे और वे

□ डॉ. शीतांशु भा

गोमती एक्सप्रेस हवा से बातें करती हुई दिल्ली की दिशा में भागती जा रही थी–खडर . . . खडर . . . ।

'क्यों हो !' उन्होंने सामने की सीट पर बैठे हुए तारा बाबू की ओर देखा, 'अनोपी तो खूब ठाट-बाट से रह रहा होगा । है न ?'

'हां हो ।' तारा बाबू ने गहरी सांस छोड़ी, 'इस समय वे आधी दिल्ली के मालिक हैं । उनके लिए किस चीज की कमी है ?'

'हूं ।' वे खिड़की से बाहर के दृश्य देखने लगे । बाहर खेत-खलिहान तेजी के साथ पीछे की ओर भागते जा रहे थे ।

जीवन भर वे कुएं के मेंढक ही रहते रहे । घर गृहस्थी की चक्की में पिसते हुए उनके साठ बसंत यूं ही बीत गये । पिछले ही वर्ष वे प्राइमरी स्कूल की हेड-मास्टरी से सेवा-मुक्त हुए हैं । कोल्हू के बैल की मानिंद वे अलमोड़ा में ही चक्कर काटते रहे हैं । कभी-कभार स्कूल के काम से वे रानीखेत-अलमोड़ा तक ही जा पाये हैं । रेल-यात्रा भी वे जीवन में पहली ही बार कर रहे हैं । वह भी उन्हें विवश होकर करनी पड़ रही है अन्यथा वे घर में पड़े-पड़े खाट तोड़ते रहते ।

'क्यों हो !' परसों चौथ पत्नी ने व्यंग्यभरा उलाहना दिया था, कहा करते थे कि आपके बहुत सारे दोस्त हैं ।'

'हां, हैं तो ।' वे मुस्कुरा दिये थे- ही गांव का अनोपीराम दिल्ली में दर्जे का अफसर है ।'

'फिर तो अपने ध्रुव को नौकरी वाना उनके बायें हाथ का खेल पत्नी का उल्लसित स्वर था।

'तुमने भी खूब याद दिलायी ।' जैसे सोते से जागे थे, 'अनोपी अपना लंगोटिया यार रहा है।'

ऊपर की गली के तारा बाबू काम से गांव आये हुए थे । उन्हीं के उनका दिल्ली आना हुआ है।

'ध्रुव को आपने अगर आई. टी. करवाया होता तो...' सामने की तारा बाबू बोले, 'तो उसे मैं अपनी कंपनी में लगवा देता ।'

'द !' उन्होंने सिर की टेढ़ी हो टोपी सीधी की, 'आज के लौंडे-लबार का कहना मानें तब न ।'

'ना हो । इसमें सारा दोष आप है ।' तारा बाबू ने सिगरेट सुलगाकर बात का खंडन कर दिया, 'बचपन से

अगर वह आपकी मुट्ठी में रहता तो आज आपको यूं दर-दर न भटकना पड़ता ।'

तारा बाबू ठीक ही तो कहते हैं । कभी भी तो उन्होंने अपने घोंसले के चूजों की ओर ध्यान नहीं दिया । पंख उगने के बाद से तो वे बेतहाशा ही उड़ने लगे हैं । धीरज और ध्रुव उनकी दो ही संतानें हैं । सारा कुसूर उन्हीं का है । आज भी वे पारिवारिक प्रतिबद्धता से मुक्त नहीं हो पाये हैं । इस उम्र में भी उनको बच्चों की चिंता अंदर-ही-अंदर घुन की तरह से खाती जा रही है ।

इंजिन ने जोर की किलकारी मारी । इसी के साथ गाड़ी की गति धीमी पड़ने लगी ।

'लो, दिल्ली आ गयी है ।' तारा बाबू अपना होल्डाल समेटने लगे ।

'आ गयी ?' वे बाहर देखने लगे ।

'आयी हुई ही समझिये ।' तारा बाबू बोले, 'गाड़ी आउटर सिगनल पर खड़ी है ।'

वे भी अपना बैग ठीक करने लगे ।

कुछ ही क्षणों बाद गाड़ी यमुना ब्रिज से दिल्ली जंक्शन की ओर रेंगने लगी—छीं-छिक्-छी-छिक् . . . ।

स्टेशन की उस भीड़-भाड़ से वे घबड़ाने लगे । तारा बाबू के साथ वे मेन गेट से बाहर निकल आये ।

स्टेशन रोड पर जैसे ट्रैफिक की बाढ़

ही आ गयी थी। तारा बाबू का हाथ पकड़े हुए उन्होंने सड़क पार करनी चाही। किंतु वे ऐसा न कर सके।

'आप सीधे आर्य साहब के यहीं जायेंगे या . . .।' बगल में खड़े तारा बाबू ने उनसे पूछा।

'द !' वे सिर खुजलाने लगे, 'मेरे लिए तो यह दिल्ली भूल-भुलैया ही होगी। तुम जहां भी ले चलोगे, वहीं चल दूंगा।'

किसी प्रकार तारा बाबू के साथ सड़क पार कर वे दिल्ली के पब्लिक लाइब्रेरी के फुटपाथ पर हो लिये। वहां आकर वे एक मिनी बस में बैठ गये।

नयी दिल्ली के जसवंतसिंह मार्ग पर स्थित उस विशाल कोठी के गेट पर जब वे पहुंचे तो दो झबुवे कुत्तों ने भौंक-भौंक कर आसमान सिर पर उठा लिया। तभी सामने से संतरी आता हुआ दिखायी दिया। कुत्तों को पुचकारने के बाद वह उन्हें सिर से पांव तक देखने लगा।

'अनोपी हैं ?' उन्होंने संतरी से पूछा।

'आप कौन हैं ?' संतरी ने भी पूछताछ की उनसे।

'हम उनके दोस्त हैं।' वे बोले, 'जाके बोलो कि गांव से गणेशी आया हुआ है।'

गेट से संतरी कोठी के अंदर चल दिया। वे उस आलीशान कोठी को देखते ही रह गये। अनोपी आर्य के भाग्य पर वे मन-ही-मन ईर्ष्या करने लगे। उनके सामने वे अपने को एकदम बौना समझने लगे।

'द !' उन्होंने गहरी सांस ली, 'आदमी यहीं स्वर्ग-नरक देख लेता है।'

'हां तो।' तारा बाबू ने भी उन्हों समर्थन कर दिया, 'आज के युग में फल का सिद्धांत फेल हो गया है।'

'अरेरे !' सामने से अनोपी भागे-भागे गेट की ओर आये।

संतरी गेट खोल चुका था। वे जोशी के साथ उनका स्वागत करने 'आइये न, गणेश दा!'

उन्होंने जीवन में शायद ही पह बार किसी से हाथ मिलाया हो। साहब ने उनके हाथ अपने हाथों में लिये, 'आओ न!'

तारा बाबू के साथ वे अंदर कोठी चल दिये।

'आओ, बैठो।' आर्य साहब ने उन्हें गुदगुदे सोफे पर बैठने का अनुरोध किया।

उस सुसज्जित ड्राइंग रूम को देखकर उसका माथा चकराने लगा। उसी सम अंदर दो वर्दीधारी नौकर आ गये।

'गणेश दा, चाय-पानी तो लोगे न?' आर्य साहब ने कुछ संकोच से पूछा।

'द !' उन्होंने गहरा उच्छ्वास भ 'जहां का देश, वहां का वेश। राजध में कैसा परहेज ?'

आर्य साहब ने संकेत से ही नौकरों कुछ कहा।

नौकरों के चल देने के बाद आर्य साह उन्हीं की बगल में आकर बैठ गये। दोनों बचपन से एक ही विद्यालय में प रहे थे। उन्हें सात-आठ मील पैदल आ

जाना पड़ता था। कभी वे विद्यालय [illegible] जाकर मछली मारने के लिए नदी की ओर चल दिया करते थे। असूज-कार्तिक के दिनों में वे पास वाले गांवों से ककड़ियां चुरा लाते।

'पहाड़ को तो अब भूल ही गये होगे।' उन्होंने आर्य साहब के कंधे पर हाथ रख दिया।

'नहीं हो।' आर्य साहब मुस्कुरा दिये, 'मैं कैसे भुला सकता हूं! ऐसा कौन होगा जो जननी और जन्मभूमि को . . .'

'खैर!' वे सिर खुजलाने लगे, 'भूले नहीं तो पीठ तो फेर ही ली है।'

'हां!' आर्य साहब के माथे पर बल पड़ गये, 'मैं तो यहां चौबीसों घंटे काम से ही घिरा रहता हूं। अब ऐसे में . . . .'

नौकरों ने सेंटर टेबल पर मिठाइयां और शर्बत की गिलासें ला रखीं। आर्य साहब ने उनसे आग्रह किया, 'लीजिये जलपान कीजिये।'

'तुम भी लो न!' वे बोले।

'मैं पहले ही ले चुका हूं।' कहकर आर्य साहब उठ गये, 'मैं अभी आया।'

तारा बाबू और वे जलपान करने लगे। उसी समय फोन की घंटी बज उठी। आर्य साहब फोन पर बात करने लगे। उन्होंने फोन रखा तो दूसरा फोन भी बजने लगा। वे उस पर भी बात करने लगे। फोन को रखकर वे उनके पास चले आये, 'देखा गणेश दा! मेरा जीवन कितना व्यस्त है।'

'हां हो।' वे आर्य साहब को देखने [illegible] शहर की जिंदगी [illegible] की ही हुआ करती है।'

आर्य साहब ने अपनी कलाई घड़ी देखी। उन्होंने पूछा, 'हां तो गणेश दा, कैसे आना हुआ?'

'अरे भई, कहते हैं न कि मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक।' वे मुस्कुरा दिये।

'फिर भी!' आर्य साहब को जल्दी हो रही थी।

'लौंडा घर पे बैठा-बैठा रोटियां तोड़ रहा है।' वे उनके आगे अपनी विपदा लगाने लगे, 'बड़ा तो आवारा हो गया है। छोटा अभी तक अपने काबू में है।'

'नौकरी तो आजकल . . .' आर्य साहब सिर खुजलाने लगे, 'खैर, शाम को इत्मीनान से बात कर लेंगे। इस समय तो मैं जरा . . .।'

'साब, गाड़ी लगा दी है।' एक वर्दीधारी ड्राइवर ने अंदर आकर आर्य साहब की तंद्रा भंग की।

'अच्छा गणेश दा।' आर्य साहब जाने के लिए उठ गये, 'इस समय में जरा मिनिस्ट्री तक जा रहा हूं। एक जरूरी मीटिंग है। शाम को बातें होती रहेंगी।'

'अच्छा हो।' कहकर वे शर्बत पीने लगे।

आर्य साहब चल दिये। वे तारा बाबू की ओर मुखातिब हुए।

'फिर क्या कहते हो?'

'मुश्किल ही है।' तारा बाबू का नैराश्य-भरा स्वर था, 'इन दिनों तो सरकार ने भी

नयी नियुक्तियों पर रोक लगा रखी है।'

'नहीं, भई।' उनका आत्मविश्वास उबाल खाने लगा, 'अनोपी कोई छोटा-मोटा अफसर तो नहीं है। उसके लंबे हाथ-पांव हैं। वह कुछ-न-कुछ कर ही लेगा।'

'देखो!' तारा बाबू घर जाने के लिए उठ खड़े हुए, 'मैं चलता हूं। आप तो अभी दो-चार दिन रुकेंगे न?'

'हां।' वे बोले, 'तुम ही कभी इस ओर चले आना।'

तारा बाबू के चल देने के बाद आर्य साहब की पत्नी उनके पास आकर उन्हें पायलागी करने लगी। वे गद्गद् भाव से उन्हें आशीर्वाद देने लगे, 'जियो बहू! चिरजीवी रहो।'

पृथुला समीप की कुर्सी पर बैठ गयी। उन्होंने पूछा, 'बाल-गोपाल किधर हैं?'

'बड़ा बेटा रुड़की में है। छोटा दून स्कूल में है।' पृथुला ने बताया, 'बेटी वनस्थली में पढ़ रही है।'

'अरे!' उनकी आंखों में आश्चर्य उमड़ आया।

'हां तो।' पृथुला मुस्कुरा दी, 'यहां घर पर रहकर पढ़ायी कहां होती है?'

सिर से टोपी उतारकर वे बुदबुदा दिये, 'शिव! शिव!'

'जेंता जीजी तो ठीकठाक हैं न?' पृथुला उनके घर की कुशल-क्षेम पूछने लगी।

'हां।' उनके अधरों पर फीका हास्य उभर आया, 'ठीक ही ठहरी।

आप कमरे में जाकर आराम कीजिये।' पृथुला कुर्सी से उठ खड़ी हुई, 'मैं जरा बाजार तक जा रही हूं।'

'ठीक है।'

'गोपालसिंह!' पृथुला ने एक नौकर को आवाज दी। नौकर अंदर आ गया।

'दाज्यू का ध्यान रखना।' पृथुला नौकर से बोली, 'मैं जरा क्लब तक जा रही हूं।'

'जी।' कहकर नौकर उनके पास चला आया, 'आइये, साहब।'

नौकर के साथ वे एक कमरे में चले दिये। उस सुसज्जित कमरे को देखकर वे चमत्कृत हो आये। नौकर ने सारी खिड़कियां खोल दीं। उसने पूछा, 'आप नहायेंगे?'

'हां भय्या।' वे बोले, 'दो दिन से नहाना ही नसीब नहीं हुआ।'

नौकर उन्हें टाइल लगे नहान-घर में ले गया। वह उन्हें समझाने लगा, 'आप फौव्वारे से नहाना चाहें तो इस बटन को दबा दें।'

सच में बटन दबाते ही उनके ऊपर जैसे झरना ही फूटने लगा। उसके नीचे वे घंटा भर नहाते रहे। नहा-धोकर वे बाहर आये तो उनका जी फूल-सा हल्का हो आया। कमरे में आकर उन्होंने गोपालसिंह से पूछा, 'क्यों भई, गोपाल! तुम लोग भी यहीं खाते हो?'

'जी साब।' नौकर बोला, 'कहते हैं न कि जैसा देश, वैसा वेश।'

हूं। कहकर वे पलंग पर लेट गये । रे तो वे थे ही । जल्द ही उनकी लग गयी ।

जू !' नौकर की पुकार पर उनकी उचट गयी ।

आप चावल लेंगे या . . . ।' गोपाल ने पूछा ।

हीं हो ।' उन्होंने हाथ हिलाकर कर दी, 'मैं तो पक्का भोजन ही ।'

ठीक है।' कहकर नौकर कमरे से चल दिया ।

चुपड़ी उन तंदूरी रोटियों को वे तृप्त हो आये । अभी वे हाथ के लिए उठ ही रहे थे कि नौकर उनके आइस्क्रीम की प्लेट रख गया । वे लेने लगे । उसके बाद हाथ धोकर पर लेट गये ।

आर्य साहब रात ढले ही घर लौटे । बदलकर वे सीधे उन्हीं के पास आ । उन्होंने पूछा, 'और सुनाइये, गणे-शदा! अकेले-अकेले बोर तो नहीं हुए ?'

ना हो । ऐसी कोई बात नहीं है ।' वे दिये ।

अब तो रिटायर हो आये होंगे ।'

हां, चार साल ही तो हुआ हूं ।'

बेटा कितना पढ़ा-लिखा है ?' उन्होंने ।

से इंटर किया है ।'

जानता है ?' आर्य साहब ने ।

'ना हो ।' वे बोले, 'अपने पहाड़ों में ये सुविधाएं कहां मिलती हैं ?'

'फिर तो मुश्किल ही है ।' आर्य साहब असमर्थता जतलाने लगे, 'ऐसे में . . .'

'हाइ !' उनकी आशाओं पर तुषारा-पात होने लगा, इतने बड़े अफसर होकर भी . . . ।

'एक उपाय तो हो सकता है ।' आर्य साहब ने जैसे उनकी मृताशा को जिला दिया ।

'वो क्या ?'

'लड़के का शेडूल कास्ट का सर्टिफिकेट बनवा लो ।' आर्य साहब ने सुझाव दिया, 'ऐसे मैं रिजर्व कोटे के तहत में उसे कहीं चेप दूंगा ।'

'यानी कि हमें अपनी जाति बदलनी होगी ?' उनकी आंखों में फैलाव आ गया ।

'इसमें हर्ज भी क्या है ?' आर्य साहब मुस्करा दिये, 'सर्टिफिकेट भी मैं बनवा दूंगा । पहाड़ों में आप पंडित ही बने रहिये । यहां तो . . . ।'

'हर्ज है ।' उनका जातीय उबाल उफान खाने लगा, 'आखिर जात-धात भी तो कोई चीज होती है न !' 'जमाना बहुत आगे बढ़ चुका है, गणेशदा ।' आर्य साहब उन्हें फिर से समझाने लगे, 'आजकल नौकरी मिलती ही कहां है ? आपको कुछ भी तो नहीं करना है ।'

'ना हो ।' उन्होंने हाथ हिलाकर स्पष्ट रूप से मनाही कर दी, 'भाड़ में जाये ऐसी नौकरी ।'

'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' की चंदे की दरें

एक प्रति	रु. ४.
भारत में (साधारण डाक से)	
○ एक वर्ष : ४५ रु.; दो वर्ष : ८५ रु.; तीन वर्ष : १२० रु.	
विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)	
○ पाकिस्तान	रु. १२०.
○ श्रीलंका, मध्य एशिया, सुदूर पूर्व के देश आष्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड	रु. १२०.
○ अन्य देश	रु. १८५.
विदेशों में हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए)	
○ पाकिस्तान	रु. ३००.
○ श्रीलंका, बर्मा, अफगानिस्तान	रु. ३००.
○ मध्य एशिया/सुदूर पूर्व के देश (जापान को छोड़कर)	रु. ३००.
○ यूरोप, यू. के., यू. एस. एस. आर., जापान, आस्ट्रेलिया और मारिशस	रु. ३१०.
○ यू. एस. ए., कनाडा और वेस्ट इंडीज	रु. ३१०.

* बम्बई से बाहर चेक भेजनेवाले रु. ६ अधिक भेजें।

— व्यवस्थापक, नवनीत हिन्दी डाइजेस्ट, भारतीय विद्या भवन, बम्ब

आर्य साहब के लाख समझाने पर भी उनकी समझ में नहीं आयी । दिल्ली ने का उन्हें भारी पछतावा होने लगा।

सुबह वे आदतन जल्दी ही उठ गये । त्य कर्म से निवृत्त होकर उन्होंने संध्या- न किया । उसके बाद वे गांव जाने की री करने लगे ।

यों ?' आर्य साहब उनके कमरे में ये तो उनकी आंखों में प्रश्नचिन्ह कौंध या।

मैं गांव जा रहा हूं ।' वे अपनी दुपल्ली ठीक करने लगे ।

रे ! इत्ती जल्दी ?' आर्य साहब की उस सनक को नहीं समझ पाये । होंने उनके हाथ अपने हाथों में ले लिये, चार दिन दिल्ली में घूम-फिर लेते ।'

ना हो ।' वे अपने निर्णय से टस-से- नहीं हुए, 'घर में कामकाज का हर्जा रहा होगा । तुम जानो कि इन दिनों . . .'

'खैर !' आर्य साहब उन्हें चाह कर भी तो नहीं रोक पाये । वहीं से उन्होंने ड्राइवर को आवाज दी, 'मातवर !'

'जी साब !' ड्राइवर अंदर कमरे में आ गया ।

'दाज्यू को स्टेशन तक छोड़ आओ ।' आर्य साहब बोले ।

'ना हो ।' उन्होंने मनाही कर दी, 'मैं बस से चला जाऊंगा ।'

आर्य साहब उन्हें चाहते हुए भी नहीं रोक पाये । दोनों हाथ झाड़कर वे उनकी कोठी से बाहर निकल आये । आर्य साहब उन्हें छोड़ने गेट तक चले आये । उसके बाद वे खुली हवा में सांस लेने लगे । इधर-उधर देखकर सावधानी पूर्वक उन्होंने सड़क पार की । अब वे सड़क के किनारे वाले बस स्टॉप पर थे । वहां उन्हें स्टेशन जाने वाली बस की प्रतीक्षा थी ।

–१३८ विद्या विहार, पिलानी (राज.)

□

शरीर यात्रा चलाने में हृदय का श्रम और महत्व देखकर शरीर के अन्य अवयव ठे और कहने लगे–'आप हैं तो बड़े, पर काम हमारे सहारे ही चलाते हैं ।'

फेफड़ों ने कहा–'हम वायु न दें तो ?' नाड़ियों ने कहा–'हम रक्त न पहुंचायें तो ?' ने कहा–'हम पचाकर रक्त न बनायें तो ?' हाथों ने कहा–'हम कमाकर न लायें तो ?'

बात सबकी सच तो थी । हृदय सभी के लिए कृतज्ञता व्यक्त कर रहा था और रहा था–'आकार में तो आप सभी लोग बड़े हैं । मैं तो नन्हा बच्चे जैसा हूं । एक में बैठा आप लोगों द्वारा झुलाये जाने पर झूलता रहता हूं ।'

हृदय में नम्रता और अवयवों की अहंकारिता देखकर आत्मा से न रहा गया । वह –'मूर्खों ! अगर शरीर छोड़कर मैं चल दूं तो ?'

सभी का गर्व गल गया और नम्रतापूर्वक अपनी सेवा को सराहते हुए नियत क्रिया- में लग गये ।

–डा. गोपालप्रसाद 'वंशी'

□

एक और सिपाही विद्रोह

☐ श्यामसुंदर

सन १८५७ का सिपाही-विद्रोह यद्यपि सिपाही-विद्रोह न होकर भारतीय स्वाधीनता की घोषणा और प्रयत्न था, तथापि कुछ विदेशी इतिहासकारों और उनके अनुगतों ने इसे सिपाही-विद्रोह की ही संज्ञा दी है, लेकिन इसके पहले भी सीमित पैमाने पर एक सिपाही विद्रोह हुआ था, जो सन १९५५ के संताल विद्रोह से जुड़ा हुआ था।

अंग्रेजों के खिलाफ संताल-विद्रोह की शुरूआत ८ जुलाई १८५५ ही से मानी जाती है, जबकि सिदू, कान्हू और चांद भैरव (इसे कुछ लेखकों ने भाचरा भी कहा है) के नेतृत्व में संताल संगठित हुए और उन्होंने अंग्रेजों को हराकर मुल्क पर कब्जा कर लेना चाहा। तब भारत के मानचित्र में संताल परगना जिला नहीं था। तब पूरा संताल परगना जिला भागलपुर जिले का अंग था।

संताल-विद्रोह के मूल में अंग्रेजों की दमनकारी नीति और अनावश्यक दखलंदाजी थी। संताल एक स्वतंत्र स्वच्छंद जाति रही है। प्रकृति की गोद में रहते हुए अपने ढंग से जीवन यापन करना उनका स्वभाव रहा है। उनको किसी का पसंद नहीं था, फिर अंग्रेज तो थे। जिस ढंग से हिन्दुस्तान की जातियों ने अंग्रेजों की अधीनता कबूल ली वह संतालों को सह्य नहीं था। अंदर असंतोष बहुत पहले से धुंधला था। कभी एक सबल नेतृत्व की जैसे ही उनके बीच सिदू, कान्हू और भैरव जैसे लोग हुए उनका असंतोष हो उठा।

संताल-विद्रोह के मूल में अंग्रेजों विभेदकारी नीति भी मानी गयी है। आज दामिनेकोह कहा जाता है, वहां का प्रवेश सन १८९० और १९१ के बीच माना जाता है। वे बंगाल के भूम जिले से जंगल साफ करने और जानवरों से उस अंचल को मुक्त के लिये लाये गये थे। वीरभूम के ये लोग बांकुड़ा, मेदिनीपुर, हजारी और मानभूम से भी आये थे। इसके इस पर्वतीय अंचल में पहाड़िया रहती थी। उन्हें अंग्रेजों की ओर से सुविधाएं प्राप्त थी। उनसे राजस्व वसूला जाता था, जबकि संतालों से

लिया जाने लगा। अंग्रेजों ने भागलपुर हिल रेंजर्स नाम से पहाड़ियों की एक सैनिक टुकड़ी भी बनायी थी, जिसका उपयोग वे संतालों के दमन के लिए किया करते थे। इस पर्वतीय अंचल में अनेक नीलहे गोरों ने अपनी कोठियां स्थापित कर ली थीं, जिससे आये दिन संताल-किसानों को उनके दमन का शिकार होना पड़ता था। खेतों को जोतने के बारे में संतालों का विधान यह था कि वे भैंस, गाय या बैल के हल से जितनी जमीन जोत सकते थे वह उनके जोत का क्षेत्र या सीमा होती थी और वे उस पर अपना अधिकार समझते थे, जबकि अंग्रेज अधिकारी बीघे कट्टे के हिसाब से चलते थे और उसी हिसाब से उन्हें जमीन देना या उनसे राजस्व वसूलना चाहते थे। इससे भी संतालों को चिढ़ और असुविधा थी। इन सभी कारणों का मिला-जुला प्रभाव पड़ा कि वे अंग्रेजों के खिलाफ हो गये।

संताल विद्रोह की सूचना पाते ही तत्कालीन अंग्रेज शासकों को यह आशंका हुई कि संतालों की देखादेखी अन्य समुदायों में भी विद्रोह के भाव आ सकते हैं। उस समय में भागलपुर में पांचवी अनियमित रक्षक सेना की एक टुकड़ी अवस्थित थी, और बौंसी में बत्तीसवीं देशी पैदल सेना थी, जिसमें सभी भारतीय सिपाही थे। जिले की अवस्था को देखते हुए सारे हुक्मरान चिंतित हो उठे। सरकार ने चाहा कि वह भागलपुर की पाँचवीं अनियमित रक्षक सेना को विघटित कर दें, लेकिन भागलपुर के कमिश्नर ने यह नहीं होने दिया। लेकिन शांति और विधि व्यवस्था को कायम रखने के लिये यह निश्चित किया गया कि यूरोपीय सैनिकों की एक टुकड़ी नियुक्त की जाय, जिसमें महामहिम की पांचवीं विशेष बंदूकधारी टुकड़ी के सौ सैनिक हों और ऐसे पचास सैनिकों की एक टुकड़ी मुंगेर भी भेजी जाय।

लेकिन हर ओर से पटना से, जलपाईगुड़ी से, चटगांव से, ढाका से, विद्रोह के जो सम्वाद आ रहे थे, उससे स्थानीय सैनिकों की राजभक्ति की चूलें हिलने लगी थीं। १४ अगस्त को यह खबर मिलने पर कि पटना के उनके साथियों ने विद्रोह कर दिया है, भागलपुर की पांचवीं अनियमित सेना ने भी विद्रोह की घोषणा कर दी और रोहणी की ओर बढ़ते हुए वहां अवस्थित सेना दल से जा मिलें। फिर वे संयुक्त रूप से बौंसी की ओर बढ़े, जो बत्तीसवीं देशी पैदल सेना का मुख्यालय था। यहां उनके पहुंचने की उम्मीद पहले से की जा रही थी।

यहां उनके पहुंचने की बात जानकर एक स्थानीय जमींदार ने एक हरकारे के द्वारा यह सूचना हुक्मरानों तक भिजवा दी। विद्रोहियों की गति बहुत तेज थी पर वह हरकारा आधा घंटा पहले अधिकारियों को सूचना देने में कामयाब हो गया। अंग्रेज सेनाधिकारी कर्नल बर्नी

(Col. Burney) के लिये इतना समय परिस्थितियों को अनुकूल करने के लिये पर्याप्त था। उसने अपने विश्वस्त सैनिकों को लेकर कूच किया तो विद्रोही देवघर के दक्षिण पश्चिम की ओर खिसकने को बाध्य हुए। वहां के अधिकारियों को भी इस बात की सूचना दे दी गयी थी। वहां भी बत्तीसवीं देशी सेना का मुख्यालय था जो लेफ्टिनेन्ट कूपर के कमांड में था। यहां भी विद्रोहियों के प्रवेश और आक्रमण को रोक दिया गया।

इस प्रकार वहां भी बाधा पाकर वे पश्चिम की ओर, पटना से आने वाले विद्रोहियों से मिलने के लिये, आगे बढ़े। उन्होंने दुमका में अवस्थित अपने सेनादल के दूसरे हिस्से से मिलने की कोशिश न की। यदि ऐसा हुआ होता, तो इस बात की पूरी सम्भावना थी कि दुमका की टुकड़ी उनसे आ मिलती। इसी समय जलपाईगुड़ी तिहत्तरवीं देशी सेना में भी असंतोष और क्षोभ अनुभव किया गया। सातवीं अनियमित सेना की टुकड़ी द्वारा बत्तीसवीं देशी सेना के विद्रोह को अनुशासित करने के लिए सारे प्रयास व्यर्थ हुए। उत्तेजित और क्षुब्ध सिपाहियों ने लेफ्टिनेन्ट कूपर और लेफ्टिनेन्ट रोनाल्ड की हत्या कर दी, जबकि लेफ्टिनेन्ट रेने को साफ निकल जाने दिया। यह क्यों और कैसे हुआ, यह रहस्य ही बना रह गया। इस बीच बत्तीसवीं देशी पैदल सेना का मुख्यालय बौंसीं से रानीगंज बदल दिया गया। बाद में बत्तीसवीं पैदल सेना के विद्रोही जवानों ने जाकर शस्त्र समर्पण किया। इस के रामपुरहाट के सैनिकों ने भी, भागलपुर पहुंचने पर, ऐसा ही किया।

नवंबर के अंत तक जलपाईगुड़ी में ग्यारहवीं अनियमित घुड़सवार सेना ने भी विद्रोह का बिगुल बजा दिया और वे पूर्णिया की ओर बढ़ गये जिसे नियंत्रित करने के लिये कैप्टेन बरबंक (Capt. Burbank) अपने सौ नाविक सैनिकों के साथ भेजे गये। भागलपुर के कमिश्नर मिस्टर यूले (Mr. Yule) ने महामहिम की पांचवीं विशेष बंदूकधारी टुकड़ी के पचास सैनिकों को मुंगेर से बुलाकर कैप्टन बरबंक का साथ देने के लिये पूर्णिया भेजा। वे लोग बरबंक के साथ होकर किशनगंज तक आगे बढ़ गये, जहां ग्यारहवीं घुड़सवार सेना की टुकड़ी के सहयोग से विद्रोहियों पर काबू पाया गया।

इस काम में उन्हें दार्जिलिंग के आसपास के युरोपियनों और यूरो-भारतीय चाय बागान के मालिकों से भी खूब सहायता मिली। पूर्णिया के लालबालू स्थान में भयानक युद्ध हुआ, जिसमें हुक्मरान अंततः विजयी हुए। इस प्रथम सिपाही विद्रोह को दबाने में भी भारतीय जमींदारों ने अँग्रेजों को खूब सहयोग दिया। इनमें बनैली के राजा नित्यानंद सिंह का नाम मुख्य था। कुछ मुसलमान जमींदारों ने भी अंग्रेज अधिकारियों की सहायता की थी।

१८५७ के पहले हुए इस सिपाही विद्रोही की खास बात यह है कि इसमें कोई देशी राज-रजवाड़े शामिल नहीं हुए थे। १८५७ में सम्मिलित हुए बहादुर शाह जफर, तात्या टोपे, वाजिद अली शाह, रानी लक्ष्मीबाई, नाना फडनवीस जैसे लोग इसमें नहीं थे। यह विशुद्ध सिपाही-विद्रोह कहा जा सकता है। इससे स्पष्ट है कि अंग्रेजों की सेना में विद्रोह के बीज बहुत पहले से सुलग रहे थे। इसका एक कारण तो साधारण भारतीय सिपाहियों का स्वातंत्र्य चेतना रही होगी और दूसरा यह कि फिरंगी उनसे बदसलूकी भी करते रहे होंगे और यूरोपियन सिपाहियों की तुलना में उन्हें वेतन भत्ते की सुविधाएं भी कम रही होंगी। हमें अंग्रेज-विरोधी इस संघर्ष के गौरवपूर्ण अध्याय पर ध्यान देना चाहिये और इसकी गहरी जांच-परख करनी चाहिये। १८५७ की तुलना में १८५५ का यह विद्रोह अनदेखा रह गया है। उस बड़े विद्रोह ने इस छोटे विद्रोह को ढक लिया है, जबकि हम इसे ही १८५७ के गौरवपूर्ण विद्रोह की नींव मान सकते हैं।

—'ऋतंबरा', गोड्डा, बिहार-८१४१३३

☐

(पृष्ठ १०७ का शेषांश)

कूंच खड़ा हो मूत्र-मल का विसर्जन करने रहा था। साफ़-साफ़ दिखायी दे रहा था। मैंने बंदूक से निशाना लिया और दाग दिया-धड़म्म। मैंने गड्ढे पर से खड़े होकर देखा-हरिण शांत निश्चल पसरा पड़ा था। पहली बार ही आखड़ के शिकार में काला-नर-प्रौढ़ हरिण मुझे मिल गया था-यह सोचते मेरा दिल बांसों उछल रहा था। मैंने टांगी उठायी और झट से पहुंच गया। हरिण में थोड़ी भी हरकत नहीं थी-बिल्कुल शांत-पसरा पड़ा था। टांगी को पकड़ उसकी बेंट को मैंने हरिण के लंबे, घुमावदार सुंदर सींग में मारा-चट्-बस हरिण ऐसा उछला जैसे स्प्रिंग-एक-दो-तीन-उछालें और वह गायब। मैं मुंह बाये मूर्ख बना खड़ा रह गया था।

तब तक में पिताजी और बजरंगा दोनों वहीं आ गये थे। मैंने धीरे-धीरे उन्हें कहानी सुनायी। बजरंग ने बताया कि वह बच गया था। मैंने पूछा—फिर पसरा क्यों पड़ा था—शांत निश्चल, यदि बच गया था तो? उसने जो बात बतायी थी उस दिन तो समझ में नहीं आयी थी। अनुभवों से बाद में समझी जा सकी। गोली माथा बचा कर सींग में लगी थी—उसका संतुलन खो गया था और झटके में बेहोशी (क्षणिक) आ गयी थी, इसी से पसरा पड़ा था। जैसे ही स्पर्शाघात हुआ चेतना वापस आ गयी थी और काला हरिण की उछाल को क्या कहने (सर्वाधिक होती है)! वह चला गया था। मैं मूर्ख की तरह मुंह सिकोड़े उन दोनों के पीछे-पीछे वापस घर लौट पड़ा था।

—गौतम-भवन,
धवारी, सतना-४८५००२

☐

कथा राम की, व्यथा मानव की

हरीन्द्र दवे

प्रातःकाल होने पर भरत शत्रुघ्न से कहता है, 'शत्रुघ्न, जागो (उत्तिष्ठ)।' शत्रुघ्न जवाब देता है, 'मैं जाग ही रहा हूं (जागर्मि)। मुझे भी आपकी तरह श्री राम के चिंतन में नींद नहीं आयी।' यह संवाद 'उत्तिष्ठ' और 'जागर्मि' में बहुत अर्थ समाया है। भरत तथा शत्रुघ्न की राम के प्रति जो पारदर्शक प्रीति है।

भरत भी राम के ही मार्ग का अनुसरण करते हैं। वह भरद्वाज मुनि के आश्रम में पहुंचते है। भरत को राजगद्दी, मिले इस कारण से राम को वन में जाना पड़ा है, अतः मुनि के मन में संदेह जागृत होता है। मुनि तनिक दंभ किये बगैर स्पष्ट रूप से कहते हैं, 'न हि में शुध्यते मनः। (तुम्हारे बारे में मेरा मन शुद्ध नहीं है, मेरे मन में संदेह है) अपने राज्यशासन को निष्कंटक करने के लिए राम का कांटा निकालने तो तुम नहीं आये हो?

भरत उत्तर देते हैं–

हतोस्मि यदि मामेवं
भगवानपि मन्यते
(अ. ९०-१५)

'यदि मुनिवर भी मेरे बारे में ऐसा सोचते हैं तब तो मैं सब ओर से मारा हुआ ही लगता हूं।'

सामान्य प्रजा में तो यही बात फैली है कि राम के वनवास के पीछे भरत की राज्यकामना है। किंतु भरद्वाज की कक्षा के ऋषि-मुनियों के हृदय में भी यही बात हो तो भरत की सही बात को कौन समझेगा?

इसलिए भरत स्पष्ट करते हैं कि ऐसे कठोर वचन न कहें। मैं तो राम को राजगद्दी पर बैठाने के लिए वापस लिवाने जा रहा हूं।

भरत की वाणी की सच्चाई से मुनि के मन का संदेह विगलित हो जाता है। अब वे भरत और उसकी सेना का सत्कार करना चाहते हैं।

उस जमाने में राजा लोग ऋषियों के तपोवन में जाते, तब अपनी सेना को काफी दूर छोड़कर जाते। अपने शस्त्र आश्रम के बाहर रखते। 'सेना को इतनी दूर क्यों छोड़ा?' मुनि के ऐसे प्रश्न का जवाब भरत इस तरह देते हैं:

राज्ञा हि भगवन् नित्यं

राजपुत्रेण वा तथा
यत्नतः परिहर्त्तव्या
विषयेषु तपस्विनः
(अ. ९१-७)

हे भगवन्, राजा तथा राजपुत्र को तपस्वी जनों से प्रयत्नपूर्वक भी दूर रहना चाहिये (जिसते उनकी साधना में कम से कम बाधा पड़े)। आगे भरत के कथन में पर्यावरण की जागृति दीख पड़ती है : 'सेना आश्रम के वृक्ष, जल, भूमि या पर्णशालाओं को हानि न पहुंचायें, इसलिए मैं अकेला ही आया हूं।'

मुनि समग्र सेना को निमंत्रित करते हैं। अपने तपोबल से सेना के आतिथ्य का प्रबंध करते हैं। मुनि जिस तरह सरिताओं का, वृक्षों का, मरुतों का, गंधर्वों का आह्वान करते हैं, उसका वर्णन तो रसमय है ही, साथ ही ऋषि ने इन सैनिकों के लिए पृथ्वी पर ही स्वर्ग खड़ा कर दिया। इसके बाद सैनिकों के मनोभावों द्वारा यह दिखाया है कि मनुष्य कितनी जल्दी बदल जाता है। सैनिक राम की खोज में निकले हैं। राम को अयोध्या लौटाकर उनका राज्याभिषेक करने के भरत के स्वप्न को पूर्ण करने निकले हैं। क्षणिक सुख मिलते ही सब भूल गये और एक दूसरे से कहने लगे-

नैवायोध्यां गमिष्यामो
न गमिष्याम दंडकान्
कुशलं भरतस्यास्तु
रामस्यास्तु तथा सुखम्

'अब हम अयोध्या नहीं जायेंगे। अब हम दण्डकारण्य भी नहीं जायेंगे। भरत भी कुशल रहें। राम भी सुखी रहें। जिसे जहां रहना हो वहां रहे, हम तो यहीं रहेंगे।'

मुनि से सब विदा लेते हैं, तब राजा दशरथ की तीनों रानियां भी वहां है। उनमें कैकेयी का वर्णन 'असमृद्धेन कामेन' कामना से असमृद्ध (कामना सफल न होने के कारण) 'सर्वलोकस्य गर्हिता' (सब लोगों द्वारा निंदित) ऐसा किया गया है।

भरत भी मुनि को तीनों माताओं का परिचय करवाता है, तब कैकेयी के लिए 'क्रोधी', 'गर्विष्ट', 'अनार्य आर्यरूपिणी' जैसे शब्दों का प्रयोग करता है। यह सुन

पादुका पूजन में संलग्न भरत

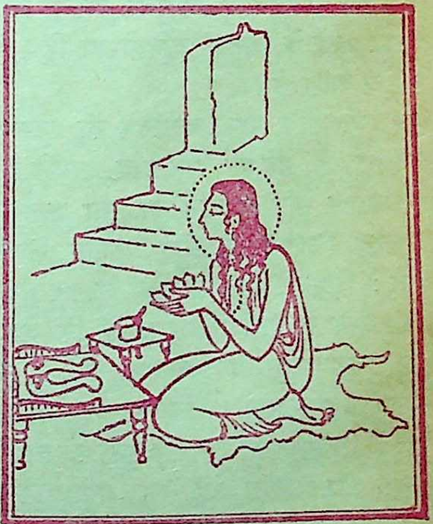

कर मुनि कहते हैं :

न दोषेणावगन्तव्या
कैकेयी भरत त्वया,
रामप्रवाजनं ह्येतत्
सुखोदकं भविष्यति
(अ. ९२-३०)

'भरत, तुम कैकेयी के प्रति दोषदृष्टि न रखो। श्री राम का यह वनवास भविष्य में बहुत ही सुखकर सिद्ध होगा।'

भरद्वाज मुनि भविष्य देख सकते हैं। भरत या और सब मात्र वर्तमान देखते हैं, इसलिए कैकेयी सब विपत्तियों की जड़ लगती है : किंतु कैकेयी ने राम के लिए वनवास न मांगा होता तो राम गिरिवन-वासी प्रजा के साथ कैसे एकरूप होते और रावण का वध करके पूरे देश को शत्रुमुक्त कैसे करते ? भरद्वाज जानते हैं कि राम के वन में जाने से देवताओं, दानवों और परमतत्व के चिंतक ऋषियों का हित ही होने वाला है।

वाल्मीकि मानों चलचित्र की पटकथा लिख रहे, हों इस तरह दृश्य बदलते हैं। भरद्वाज मुनि से राम का पता जानकर भरत चित्रकूट के लिए प्रस्थान करता है : चित्रकूट पर्वत पर धुआं देखकर भरत के सैन्य के मार्गदर्शक कहते हैं कि जरूर ही वहां राम-सीता-लक्ष्मण होंगे : या कोई तपस्वी होंगे। कवि फिर दृश्य बदलते हैं। चित्रकूट पर राम सीताजी को प्रकृति की शोभा दिखा रहे हैं। अयोध्याकांड के इस अध्याय में राम चित्रकूट का रमणीय वर्णन करते हुए कहते हैं :

यदीह शरदोनेका
स्त्वया सार्धमनिन्दिते,
लक्ष्मणेन च वत्स्यामि
न मां शोकः प्रधर्षति
(अ. ९४-१

'सीते, तुम्हारे और लक्ष्मण के
ऐसे वतावरण में अनेक शरद विताऊं
भी नगर-त्याग का शोक मुझे व्यथित
करेगा।'

फिर उस पर्वत से निकलती मंदाकि
नदी की शोभा का वर्णन करते हुए
कहते हैं :

सखीवच्च विगाहस्व
सीते मन्दाकिनीं नदीम्
कमलान्यवमज्जन्ती
पुष्कराणि च भामिनि
(ग. ९५-१

'भामिनि सीता, एक सखी दूसरी
के साथ करे, उसी तरह तू मंदाकिनी
में उतर कर इन लाल-श्वेत कमलों
डुबानेवाले जल में निमज्जन कर।'

उसी समय भरत की सेना के को
हल से वन का वातावरण विक्षुब्ध-सा
जाता है, इसलिए राम लक्ष्मण को
पता लगाने का कहते हैं, तब इस पर्वत
दुर्गमता का सुंदर वर्णन किया है।
चित पंखियों के लिए भी इस पर्वत
आना मुश्किल है।' गगनविहारी पंछी
लिए भी जो दुर्गम हो, उस स्थान
मनुष्य कैसे आयें, ऐसे राम के प्रश्न

र में लक्ष्मण कहते हैं कि यह भरत ही। इस बार तो मैं उसका वध करूंगा। वह वन में भी शांति से नहीं रहने देता।

विप्रियं कृतपूर्वं ते
भरतेन कदा नु किम्
(अ ९७-१४)

क्या भरत ने इससे पहले कभी भी ारे साथ अप्रिय व्यवहार किया है? एक ही वाक्य में राम भरत को सबसे प्रमाणपत्र दे देते हैं। वाल्मीकि भाइयों में भरत को ही दो अंगुल चित्रित करते हैं। राम लक्ष्मण को देते हुए कहते हैं कि राज्य प्राप्ति लिए ही तुम कठोर वचन कहते हो तो मैं भरत से कहूंगा तो वह तत्काल ही राज दे देगा।

लक्ष्मण को भरत के बारे में स्वयं जो ा, उसकी लज्जा अनुभव होती है।

फिर से एक बार वाल्मीकि दृश्य बदलते भरत वन में राम को ढूंढ़ रहा है, वन के वातावरण को देखकर कहता : मेरी वजह से ही 'सर्वान् कामान् य वने वसति राघव' (सर्व काम-ों का परित्याग करके राघव वन में कर रहे हैं।)

और राम को देखकर तो भरत आर्त के विलाप करने लगते हैं :

वासोभिर्वहुसाहहस्त्रैर्यो
महात्मा पुरोचिन:
मृगाजिने सोयमिह
प्रवस्ते धर्ममाचरन्

जो महात्मा पहले सहस्त्र वस्त्रों का उपयोग करते थे, वे अब यहां धर्माचरण करते हुए केवल दो मृगचर्म धारण करके बैठे हैं।

भरत राम के चरणों में गिर पड़ते हैं तब 'युगान्ते भास्करं' प्रलयकाल के अंत समय के सूर्य जैसे लग रहे हैं। राम उसकी कुशल पूछते हैं, इसमें राजनीति के बहुत से रहस्य मढ़ दिये गये हैं। प्रत्येक श्लोक मन को रोकता है। नेतृत्व के लक्षण क्या हों, यह इस श्लोक में कहा है –

कच्चिन्न सर्वे कर्मान्ता:
प्रत्यक्षास्तेविशंकया,
सर्वे वा पुनरुत्सृष्टा
मध्यमेवात्र कारणम्
(अ. १००-५२)

कामकाज करनेवाले सभी मनुष्य तुम्हारे आगे डर छोड़ कर बोलते हों, ऐसा तो नहीं होता न? अथवा तो तुम से डरकर तुम्हें कुछ भी न कहते हों ऐसा तो नहीं होता?

अनुयात्रियों के बारे में हमेशा मध्यम स्थिति रखनी चाहिये। लोग बिना संकोच कहें फिर भी चाहे जो न कहें।

राम आगे भरत से पूछते हैं :

नास्तिकता, असत्य, क्रोध, प्रमाद, दीर्घसूत्रता, ज्ञानी पुरुष का अदर्शन, आलस, पंचवृत्तियों का संयम, राजकार्यों के बारे में अकेले ही विचार करना, प्रयोजन को न समझ सके, ऐसे विपरीतदर्शी की सलाह लेनी, तय किये हुए काम को

तत्काल आरंभ न करना, गुप्त बात प्रकट करना, मंगल कार्य न करना या सब शत्रुओं पर एक साथ हमला न करना—ये चौदह दोष राजा के होते हैं। तुम इन दोषों का सदैव परित्याग करते हो न?

राजनीति के बोध के साथ किये हुए स्वागत के बाद राम भरत से उसके आगमन का कारण पूछते हैं। भरत इसका उत्तर अपने माता के प्रति कटु वचनों से आरंभ करते हैं। वैसे राम को आभास तो हो ही गया था, फिर भी राजा दशरथ के मृत्यु की पक्की खबर भरत देते और उसी अनुसंधान में भरत कहते हैं:

सा राज्यफलमप्राप्य
विधवा शोककर्शिता
प्रतिष्यति महाघोरे
नरके जननी मम

(अ. १०१-७)

मेरी माता को राजरूपी फल के बदले वैधव्य प्राप्त हुआ। अब वह शोक से दुर्बल होकर महाघोर नर्क में जायेगी।

भरत राम से लौट चलने के लिए भावनायुक्त दलीलें पेश करते हैं। समस्त प्रजा तथा विधवा माताएं आपको विनंति करने आयी हैं, यह प्रथम दलील है। माता के लिए 'विधवा' विशेषण राम का हृदय द्रवित करने के लिए समर्थ शब्द है। फिर आगे कहते हैं आप बड़े भाई के नाते राज्य के अधिकारी हैं: आप जो इस राज्य को स्वीकारें तो यह विधवा भूमि सनाथ हो जाय। तीसरा तर्क वे देते हैं कि पिताजी के समस्त मंत्रीमंडल की सलाह है कि आप लौटकर राज्य स्वीकारें।

ये सारे तर्क राम के एक ही प्रश्न के आगे तिरोहित हो जाते हैं। राम आप प्रशस्ति से प्रारंभ करते है: आप सब गु कुलीन सत्त्व संपन्न, तेजस्वी और चरित्र-व्रत मानते हैं: अब केवल राज्य के हेतु से पिता की आज्ञा के उल्लंघन का पाप मैं कैसे कर सकता हूं?

प्रारंभ में ही इस उत्तर की वजह से यह स्पष्ट हो जाता है कि राम अयोध्या तो नहीं ही लौटेंगे। राम आगे कहते हैं:

न दोष त्वयि पश्यामि
सूक्ष्ममप्यपरिसूदन,
न चापि जननीं बाल्यात्
त्वं विगर्हितुमर्हसि

(अ. १०१-१७)

'हे अरिसूदन, मैं तुममें सूक्ष्म दोष भी नहीं देखता, किंतु माता की निंदा तो तुम्हें बचपने में भी नहीं करनी चाहिये।'

जिस परिस्थिति में भरत माता की निंदा कर रहे हैं, उस परिस्थिति में यह दोष नहीं है—क्या राम ऐसा कह रहे हैं? प्रथम दो चरण में राम कहते हैं कि तुममें सूक्ष्म दोष तक नहीं देखता। भरत कैकेयी के लिए जो कह रहे हैं, उसमें दोष नहीं; किंतु माता के दोष की बालक चर्चा करे, इसमें औचित्य नहीं, इस बात को राम भारपूर्वक कह रहे हैं: और इसीलिए कैकेयी को चोट न पहुंचे इस तरह राम भरत को माता-पिता की दोनों भाव

जो भिन्न-भिन्न आज्ञायें हैं उनका करवाते हैं। इस आज्ञा के सहभागी दशरथ अब पृथ्वी पर नहीं है, इस- कैकेयी एकपक्ष के सहारे आज्ञा नहीं खींच सकती–इस बात की भी याद दिलवाते हैं।

का पिंडदान वगैरह करने के अपनी बात का पुनरावर्तन करके को प्रभावित कर सकेंगे, ऐसा भरत है। राम तो वनवास में हैं। फल कर उसी का पिंड पितृओं को हैं।

राम पितृलोक में बसे हुए को संबोधित करके ये शब्द कहते जो अन्न मनुष्य खाता है, वही अन्न देवताओं को धरता है।' फल को देखकर कौशल्या भी यही दुहराती है। लेकिन वन में रहने और कंदमूल फल खानेवाले राम फल पिंडदान कर रहे है यह बात राम से कहते हैं और कौशल्या वेदना है।

वापस लौट चलें, इसके लिए तमाम प्रयत्न करते हैं: 'पिता ने के वरदान के अनुसार राज्य मुझे मैं अब आपको देता हूं।' इतना एक रूपककथा द्वारा कहते हैं कि को ही अयोध्या का शासन संभालना। उसके उत्तर में इस प्रकार का ऐसे अनित्य जीवन में क्यों नहीं, राम इसका तत्त्व समझाते हैं।

'राम, यह दशरथ द्वारा फल की अपेक्षा से रोपा हुआ वृक्ष है। राम यदि शासन न करे तो यह वृक्ष विफल है'–इस तर्क का उत्तर दिया है कि जीवन की अनित्यता के संदर्भ में ऐसे समाधान काम नहीं आते। राम के इस विचार को वाल्मीकि ने प्रसन्न काव्यात्मक रूप में अभिव्यक्त किया है –

अत्येति रजनी या तु
सा न प्रतिनिवर्तन्ते
यात्येव यमुना पूर्णं
समुद्र मुदकार्णवम्

(अ. १०५-१९)

जो रात बीत जाती है वह वापस नहीं आती। यमुना का जो जल समुद्र में चला जाता है, वह वापस नहीं आता।

मृत्यु साथ ही चल रही है, साथ ही बैठती है: सुदीर्घ पथ की यात्रा में वह मनुष्य के साथ जाती है, साथ ही वापस लौटती है।

राम आगे कहते हैं:

'सूर्योदय होता है तो लोगों को खुशी होती है: सूर्यास्त की बेला में हर्ष का अनुभव होता है। किंतु ये दिन रात हमारे आयुष्य का नाश कर रहे हैं, यह हम नहीं जानते। महासागर में बहते हुए काठ के दो टुकड़े एक दूसरे को मिलें और कुछ समय बाद अलग हो जायें, उसी तरह जल, बाढ़, कुटुंब, धन इत्यादि के बारे में मानना चाहिये। इनका वियोग तो निश्चित ही लिखा है।'

जीवन की अनित्यता का यहां काव्य-

मय वर्णन है। किंतु भरत को इतने से समाधान नहीं। भरत तो राम की इस अलौकिक मन:स्थिति पर निछावर होते हुए कहता है :

'कोई दुख आपको व्यथित नहीं कर सकता, कैसी भी प्रिय बात आपको हर्ष से छलका नहीं सकती।'

अब राम भरत से कुछ स्पष्ट-स्पष्ट बातें कहते हैं।

दशरथ ने कैकेयी के साथ विवाह किया तभी भरत के मातामह को वचन दिया था कि कैकेयी का पुत्र राजा होगा।

यह बात पहले कहीं नहीं आयी है। अब कैकेयी के प्रतिभाव और वरदान का रहस्य स्पष्ट होता है। जिसने वचन और वरदान दिये हैं, वे महाराजा दशरथ उन्हें वापस ले सकें ऐसा संभव नहीं। इसलिए उनकी दी हुई जबान का लोप नहीं हो सकता यह राम का कहना है।

राम के निर्णय को बदलवाने के लिए सब अपना-अपना प्रयत्न करते हैं। राजा दशरथ ने जिन्हें 'याजक' नियुक्त किया था, ऐसे ब्राह्मण शिरोमणि जाबालि राम से कहते हैं।

'कौन किसका भाई और किससे किसे क्या पाना है? इस संसार में जीव अकेला ही जनमता है, अकेला ही मृत्य पाता है।'

जाबालि कहते हैं, 'राजा दशरथ आपके कोई न थे। उन्हें जहां जाना था वे गये।'

राम ने अभी जो पिंडदान किया उसके संदर्भ में ऋषि कहते हैं।

पितृदेवता, श्राद्ध का दान पितृ
मिलता है–ऐसे विचारों की
ऋषि साबित कर रहे हैं।

'जरा सोचो तो, इसमें कितने
बिगाड़ होता है? मरा हुआ मनुष्य
क्या खायेगा? ऋषि बड़ा
प्रस्तुत करते हैं: 'किसी दूसरे के
किसी दूसरे के शरीर को यदि पोषण
सकता तो परदेश जानेवाले को
खाना देने के बदले उनका श्राद्ध ही
चाहिये। दान-धर्म-पूजा वगैरह
बुद्धिमान ब्राह्मणों ने इन सब
को चालू रखने के लिए उपजायी है।
इसलिए आप इहलोक, परलोक,
माता वगैरह भेद को भूलकर अयोध्या
राज्य ग्रहण करें।'

इस क्षण तक हमने राम को
होते नहीं देखा है। जाबालि के
सुनकर राम क्रोधित हो गये। वे
की बात का खंडन कठोर वचनों से
हैं। इस खंडन हेतु जो तर्क दिया है,
वाल्मीकि रामायण के कुछ सर्वश्रेष्ठ
लिखे गये हैं–

सत्यमेवेश्वरो लोके
सत्ये धर्मः सदाश्रितः
सत्यमूलानि सर्वाणि
सत्यान्नास्ति परं पदम्
(अ. १०९-

इस लोक में सत्य ही ईश्वर है।
सदा सत्य का आश्रित है। सत्य ही
मूल है। सत्य से बढ़कर कोई

। राम गुस्से में कहते हैं : 'आपके वेदविरुद्ध बोलनेवाले को मेरे पिता ने कैसे नियुक्त किया ? पिता के इस की मैं निंदा करता हूं (निन्दाम्यहं पितृस्तर)। जिस पिता के वचन राम वनवास में गये हैं, उन्हीं के कार्य की निंदा करने का रोष के वचन से जागता है।

हि चोरः स तथा हि बुद्धः
तथागतं नास्तिकमच विद्धि,
द्धि यः शक्यतमः प्रजानां
स नास्तिके नाभिमुखो बुधःस्यात्
(अ. १०९-३४)

को कोई दलील मंजूर नहीं।

कहते हैं कि 'न मैंने राज्य मांगा ही इसके लिए मैंने अपनी माता से कहा। राम वनवास गये, इसमें भी सम्मति नहीं। फिर भी पिता की आज्ञा पालन हेतु किसी को चौदह वर्ष वन में रहना ही हो तो मैं रहने के लिए तैयार हूं।'

राम कहते हैं, 'पिता की आज्ञा बदली नहीं जा सकती। उसमें मेरे लिए स्पष्ट रूप से वनवास की आज्ञा है। फिर भी चौदह वर्ष के बाद लौटूंगा तब भाई के साथ मैं इस पृथ्वी का उत्तम पति बनूंगा।'

राम भरत को चौदह वर्ष के बाद भी गद्दी पर से हटाना नहीं चाहते। भरत के साथ रहकर राज्य करेंगे ऐसा कहते हैं।

अब राम किसी तर्क या आग्रह के वश नहीं होंगे, यह स्पष्ट होने के बाद भरत राम की पादुका का अभिषेक करने का तथा स्वयं वनवासी की तरह अयोध्या नगर के बाहर रहने का अपना संकल्प जाहिर करते हैं। **[क्रमशः]**

[हिंदी रूपांतर : नंदिनी मेहता]

□

तथागत की दूरदृष्टि

तम बुद्ध अपने धर्म-दर्शन के प्रचारार्थ गांव-गांव भ्रमण करते। सामान्य जनता विचारों को सुनकर आध्यात्मिक ज्ञान एवं प्रेरणा ग्रहण करती। अपने के दरम्यान वहां के अच्छे नागरिकों को तुरंत गांव छोड़कर अन्य स्थानों पर सलाह देते और दूसरी तरफ बुरी प्रवृत्ति के लोगों को उसी जगह में रहने ग्रह करते। उनके एक शिष्य ने एक बार इस संबंध में आशंका व्यक्त करते 'कमाल है आचार्य ! बुरे लोगों को गांव में रोककर श्रेष्ठ नागरिकों को उनके गांव से अन्यत्र जाने का उपदेश करते हैं।'

तम बुद्ध ने शिष्य की शंका का निवारण करते हुए कहा, 'वत्स, बुरे लोग रहेंगे तो बुराई उसी स्थान तक सीमित रहेगी। परंतु अच्छे नागरिक जहां भी वहां अच्छी बातें फैलेंगी। मानवीय गुणों का विकास होगा।'

—उमाकांत खुबालकर

सदानीरा

— डॉ. रामशंकर द्विवेदी —

तुम एक नदी हो सदानीरा
तेरे तट पर उगाहूं मैं। बढ़ा हूं नीर
पीकर तेरा,
तेरा दुलार मेरी नस-नस में बसा है।
उसी ने दे दी है शोखी मेरी नजरों को।
जैसे लहरों का मचलना समा गया है मेरी
आंखों की चंचलता में।
तेरी हथेलियों का गदरायापन आज मेरे मन
को दुलरा गया है।
उसने उछाल दिया है मुझे आकाश की
नीली बांहों में।
झूलते हैं जहां सतरंगी सपने। जैसे जलतरंग
बज उठती है घंटियों में।
ऐसे झनकार उठती है तेरे खिलखिलाने की।
तेरी हंसी है खील-अक्षतों की।
आज झूल गये हैं वंदनवार मेरी ग्रीवा के
आसपास तेरी बांहों के। और मन का
आकाश सिंदूरी हो उठा है
कैसी अरुणाभा बिखर गयी है तेरे
आलक्तक पगों के आसपास।
दूब कितनी हरी है।
नन्हीं-सी फुनगियों-सी डंठलों पर चमक
उठे हैं ओस के बिंदु। जैसे किसी की आंखों
से ढुलक पड़े हों आंसू!

— १९६, पाठकपुरा, उरई, उ. प्र. —

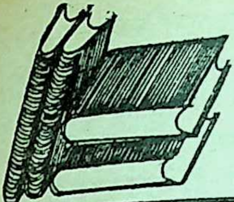

ग्रंथलोक

निरीशम् * अनुप्रणेता एवं प्रकाशक : मिश्र शास्त्री, प्रधानमंत्री हि. सा. स. (इलाहाबाद); मूल्य : २५ रुपये ।

गिरीशम्' संस्कृत भाषा में लिपिबद्ध यह रचना संगीत विषयक है । १२ सर्गों में विभक्त है । इसके श्री रामभट्ट कवि हैं ।

ग्रंथ में गुम्फित संस्कृत पद्यों का हिंदी भाषा में करके श्री प्रभात ने एक पुनीत राष्ट्रीय कार्य संपन्न है।

भाषा में लिखे गये पद्यों का इतर भाषा में करना एक दुरूह है। शास्त्रीजी ने पद्यगत भावों का अपने अनुवाद में बड़े कौशल के किया है। ताल-लय-राग में लिपि- ग्रंथ का राष्ट्रभाषा में अनुप्रणयन की कर्मठता का द्योतक है । प्रांजल रूप एवं अनुवाद में योग्य प्रयोग हठात् पाठकों के मन को तथा आह्लादित करने वाला रचना में शास्त्रीजी ने अपने अनु- सागर में सागर भरने का स्तुत्य किया है। प्रायः ग्रंथ में विप्रलंभ शृंगार के पद्यों की संख्या अधिक है । सभी पद्यों का अनुवाद शास्त्रीजी ने आलंकारिक शैली में ही किया है । संगीत-व्याकरण-अलंकार शास्त्रों का अध्येता ही ऐसे ग्रंथों को अनूदित करने में सफल हो सकता है । समग्र ग्रंथ अनुप्रणेता की सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवेचनी प्रतिभा का परिचायक है ।

—डा. रमाशंकर त्रिपाठी

०००

*** नयी कविता : नया मूल्यांकन * डा. प्रेमशंकर; अयन प्रकाशन, १/२०, महरोली, नयी दिल्ली-३०; मूल्य : चालीस रुपये ।**

डा. प्रेमशंकरजी की हाल ही में प्रकाशित 'नयी कविता : नया मूल्यांकन' पुस्तक नयी कविता को विस्तार से और संपूर्णता से समझने-समझाने का सुंदर प्रयास है । पुस्तक कुल अठारह अध्यायों में विभक्त है, जिसमें नयी कविता के उद्भव एवं विकास, परिभाषा, व्यक्तिवाद, निराशा, अस्तित्ववाद, लघुमानववाद, क्षणवाद, आत्यंतिक वैयक्तिकता, विद्रोह के स्वर, भोगवाद, अकेलापन और अजनबीपन, व्यंग्य, व्यक्ति, व्यक्ति और समाज, नयी कविता की उपलब्धियां एवं

स्थापनाएं के साथ-साथ 'अर्थ की लय' और 'आज की कविता' अध्याय इस पुस्तक को समकालीन कविता से भी जोड़ते हैं।

कोई भी आंदोलन यकायक शुरू नहीं हो जाता। नयी कविता के बीज प्रसादजी के मुक्त वृत्तात्मक कविता में ही मिलने शुरू हो जाते हैं। नयी कविता छायावादोत्तर काव्य-प्रवृत्ति के रूप में आयी, जिसका सुनियोजित रूप द्वितीय महायुद्ध के बाद आस-पास 'तार सप्तक' के रूप में मिलता है। मोटे तौर पर इसका विकास-काल सन १९३७ से १९४३ माना जाता है। नयी कविता वस्तुतः अंग्रेजी में लुई मैक्नीस, ऑडेन, स्पेंडर आदि द्वारा चलाये गयें 'न्यू पोइट्री' का हिंदी संस्करण हैं। देखा जाये तो नयी कविता अंग्रेजी में पनपे आंदोलनों के प्रभाव के परिणामस्वरूप ही उभरी। इसकी बनिस्वत नवगीत नाम केवल नयी कविता पर चला, मगर नवगीत की भावभूमि सर्वथा भारतीय है। नयी कविता आयातित बिंब और शिल्प से लदी मिलती है। नयी कविता के पुरोधा हैं अज्ञेय और पुरस्कर्ता कवि हैं डा. भारती। तार-सप्तक, दूसरा-सप्तक, तीसरा सप्तक और बहुत देर में निकला 'चौथा सप्तक' का सविस्तर बखान हिंदी साहित्य से जुड़ा व्यक्ति जानता है। यह भी चर्चा का विषय रहा कि कवि श्री वीरेन्द्र कुमार जैन से वक्तव्य एवं कविताएं लेकर भी उन्हें अज्ञेय ने 'सप्तकों' में सम्मिलित नहीं किया। जब हम नयी कविता

और नया मूल्यांकन को सामने
तो अपेक्षा यही बनती है कि ये सभी
हमें एक जगह मिल जानी चाहिए।
प्रेमशंकर ने बहुत ही संदर्भ और
दिये हैं, मगर बेहद महत्वपूर्ण कृति
'नयी कविता : विवेचन और
चौथा सप्तक आदि को छोड़ दिया है
बहुत ही अच्छी किताब होने के
भी यह कमी खलती है। इसलिए
भी कि बार-बार डॉ. भारती और
शंकर के उद्धरण। अतएव कई
पूर्ण नाम छूट गये हैं। इन कमियों
बावजूद भी लेखक ने काफी श्रम कि
जिसके लिए वे साधुवाद के पात्र हैं।

—रतीलाल

०००

*** प्रासंगिता के बहाने * लेखक : डा.**
सुंदर घोष; प्रकाशक : किताब महल,
थॉर्नहिल रोड, इलाहाबाद; मूल्य :
रुपये।

हिंदी-साहित्य में लेखन-विविधा के
दृत हस्ताक्षर डा. श्याम सुंदर
की प्रस्तुत कृति में उनके द्वारा
समय लिखे गये कुल तेईस स्फुट
संकलित हैं। भारतीय संस्कृति के
पय पौराणिक और भक्तिकालीन
च्चरित्रों के जीवन और कर्तृत्व
निबंधों के विवेच्य विषय हैं।

प्रासंगिकता की दृष्टि से लिखि
अवश्यम्पठनीय निबंधों में 'कबीर
की प्रासंगिकता', 'सूर की प्रा

त्री: समय से सरोकार', 'श्रीकृष्ण : की दृष्टि में', 'व्यक्तित्व की मौलिकता और परिपूर्णता', 'गणेश : देवता या जन-निधि', 'लक्ष्मीपूजा ही क्यों ? कुबेर क्यों नहीं ?', 'राम और जटायु' आदि आकर्षक हैं। अवधी लोकगीतों ग्राम्य राम और आदिवासी-लोकगीतों में कृष्ण के बहु-आयामी व्यक्तित्व डा. घोषकृत विवेचना तो सर्वथा नया प्रस्तुत करती है ।

इस कृति में डा. घोष के लेखन की मूल वर्तमान को अतीत के प्रति आवर्जित रता है। क्योंकि आधुनिक प्रबुद्ध पाठक तथा समाज की युगीन समस्याओं के प्रति सजग हो गया है । डा. घोष ने नान युग की इस बौद्धिक जागरूकता को लक्ष्य किया है और इसीलिए उन्होंने विचार प्रधान निबंधों में भक्ति-कालीन कतिपय प्रमुख संतों की साहित्य-रचना के माध्यम से जन जागरण के प्रयत्नों के विभिन्न आयामों का दृष्टिकोण से पुनर्विवेचन किया है।

कुल मिलाकर, यह कृति हिंदी के निबंध साहित्य में एक अभिनव आलोक विनियोग होगा, ऐसा मेरा विश्वास है ।

–डा. श्रीरंजन सूरिदेव

०००

एक और आकाश (कहानी संग्रह) * डा. क्षमा चतुर्वेदी; आनंद प्रकाशन, 'ल'-१, वाड़ी अतिरिक्त; कोटा; पृष्ठ संख्या : ; मूल्य : २० रुपये ।

१९८८

अपने आस-पास बिखर रहे जीवन से कुछ जीवन मूल्यों को प्रस्थापित करने की ललक लेकर मध्य वर्गीय जनजीवन का संत्रास क्षमा चतुर्वेदी की कहानियों में अभिव्यक्त हुआ है । इस संग्रह में ११ कहानियां संकलित हैं । 'दृष्टिकोण' सामूहिक परिवार व्यवस्था के प्रति बदलती दृष्टि को प्रभावी तरीके से प्रस्तुत करती है। 'हटता हुआ कोहरा' कौशोर्य जीवन के अन्तर्द्वंद्व को विश्लेषित करते हुए नयी दिशा तलाशने की सहज कहानी है । 'अपशकुन' हरिजन स्वर्ण समस्या पर तीखा वार करती है । 'आने वाला कल' मातृ-पितृ विहीन शकुन के अंतर्द्वंद्व और विवशताओं को रेखांकित करती है ।

'प्रायश्चित' देवर भाभी के सात्विक स्नेह का दर्पण है। 'तपस्या' अनचाही लड़की से शादी डोर से बंधे इंजीनियर शिखर की कुंठा को चित्रित करती है। 'परख' बदलते हुए मूल्यों में से अच्छे की परख को रेखांकित करती है ।

संकलन की छपाई और प्रूफ संशोधन में थोड़ा ध्यान रखा जाता तो उचित था ।

–विवेक भारती

०००

*** वत्सला (काव्य) * कवि : डा. लक्ष्मी-नारायण; प्रकाशक : चिंता प्रकाशन, पिलानी (राज.); मूल्य : तीस रुपये ।**

'वत्सला' कवि डा. लक्ष्मीनारायण शर्मा की वैष्णवी भक्ति को अभिव्यक्ति देने वाली ऐसी अभिनव काव्य-रचना है

जिसमें ममतामयी मां यशोदा और पाल-पोस कर प्यार लुटाने वाले पिता नंद के परस्पर के संवादों के सहारे सामयिक स्थितियों में संघर्षशील मानव की शाश्वत चेतना क़ो तलाशने की कवितायी कोशिश की गयी है। यद्यपि कथा पुराण पर आधारित है, पर कवि का मानना है –

'जो अयाचित प्रतीत हो
उसे इतिहास या पुराण कह देना
उस उपस्थिन अयाचित को नकारना है।
इतिहास कभी बीतता नहीं
वह सार्वभौम है
सार्वभौम है मनुष्य का अस्तित्व
पुराण प्रतिक्षण
प्रत्येक मानव में घटित सम्भाव्य है
पुराण सार्वकालिक संभवता है

मां यशोदा की वात्सल्य संचेतना को गहरी मार्मिकता से शब्दबद्ध करने में लक्ष्मीनारायण को सफलता मिली है– 'उसके बाद इस वत्सला धेनु के स्तनों में जो/ दूध उतर आया था/और उस दूध की पहली बूंद का/ जो संवाद उस सद्य जन्मा शिशु के/ रक्तनील ज्योतिसम अधर पल्लवों से हुआ था/ क्या वह संवाद झूठा था?' बड़ा होकर वही पुत्र द्वारकाधिपति बनकर अपनी वत्सला मां को शायद बिसार बैठा है।

अपने प्रिय पुत्र से बिछुड़ी बूढ़ी मां की मर्म-व्यथा को वैष्णवी भक्ति के पुराण संदर्भों में रखते हुए भी कवि ने आज की भटकती-रीतती मानवता की आर्त्त पुकार को प्रतिध्वनित करने का प्रयास किया है। कविता मूलतः मानवीय संवेदनाओं को मिथकीय प्रतीकों को लेकर चलती अवश्य है, पर आज की अभावमयी स्थितियों का अंकन भी करती है।

०००

***युगबोध (कविता),* कवि : यशपाल जैन; प्रकाशक : सस्ता साहित्य मंडल, एन-७७, कनाट सर्कस, नयी दिल्ली-१; मूल्य : दस रुपये।**

यशपाल जैन शुरू से ही सत्साहित्य के प्रचारक एवं प्रणेता भी रहे हैं। अपने नवीनतम काव्य-संकलन 'युगबोध' में उन्होंने कवि को मानवीय मूल्यों का उपासक माना है। कविता न केवल अपने समय की सच्चाइयों को दिखाने वाली आईने सरीखी होती है, अपितु व्यक्तियों की मार्गदर्शक रोशनी का काम भी क़रती है। कुछ कवि केवल पहली बात को लेकर कविता में मात्र हकीकतों का चित्रांकन करके अपने कवि-कर्म के कर्त्तव्य की पूर्ति मान लेते हैं, जबकि दूसरी पक्षधरता के कवि व्यक्ति और समाज के उन्नयन हेतु कविता को प्रकाश-स्तम्भ बतौर स्वीकारते हैं। यशपाल जैन दूसरी पक्षधरता के कवि हैं। वे शुरू से ही गांधीजी से प्रभावित आदर्शवादी विचारधारा को समर्पित साहित्यकार रहे हैं, अतः उनके इस संकलन की भी सभी कविताएं राष्ट्रीय उत्थान, सामाजिक उन्नयन तथा मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठापना से संबंधित हैं।

शपाल जैन मानवीय मूल्यों में अगाध स्था रखने वाले कवि हैं, उनकी 'जीवन ध्येय', 'जीवन की धुरी' कविताओं में विशेषता को बखूबी लक्षित किया जा ता है। इसी प्रकार राष्ट्रप्रेम के गुण को र्जित करने वाली कविताओं में 'राष्ट्रीय ', 'गणतंत्र की वर्षगांठ', 'हिमालय की ', 'लोकतंत्र' आदि विशेष रूप से उल्ले- हैं। सामाजिक उन्नयन के प्रति आशावान के स्वरूप से साक्षात्कार उनकी 'इन्सान र गरीबी', 'इन्सान की खोज', 'दोषी ', 'अंत में' कविताओं से हो जाता है। कृति-प्रेम को दर्शाने वाली उनकी कविताओं में 'सूर्य और सागर', 'वसंत', लय की प्रेरणा' उल्लेखनीय हैं। इन कविताओं का कथ्य सरल और धा है और कहीं-कहीं सपाटबयानी सीमा का स्पर्श कर लेने वाला भी है— कुछ कविताएं सामान्य स्तर भर की ही हैं।

फिर भी काव्य को प्रेरणा का केंद्र-बिंदु ने वाला पाठक वर्ग अवश्य ही इन विताओं को सराहेगा।

०००

पूर्व पर्व (काव्य) * **कवि : डा. चक्र-र्ती; प्रकाशक : काव्य-पीठ, १७-९-ए, कूर्मागुडा, हैदराबाद-५००६५९;** ल्य : बीस रुपये।

भाषी डा. चक्रवर्ती हिंदी में मौलिक साहित्य सृजन भी करते हैं। 'अपूर्व ' उनकी आध्यात्मिक पृष्ठभूमि पर रचा गया खंडकाव्य है, जिसे कवि ने श्रीमद्भागवत के पंचम स्कंध में वर्णित आलोकनायक आदित्य संबंधी कथा से प्रेरित होकर सृजित किया है। 'श्रीमद् भागवत' में द्वादस मासों में द्वादस आदित्यों का वर्णन हुआ है। प्रत्येक मास एक विशिष्ट आदित्य के स्पंदन के चित्रण में एक ऋषि, एक गंधर्व, एक अप्सरा, एक नाग, एक यक्ष, और एक राक्षस का मंडल गतिमान रहता है।

ऋषि यदि वेद-ऋचाओं का उद्गान करते हैं तो गंधर्व उस गान के साथ वीणा वादन करते हैं, अप्सरा नृत्य करती हैं, यक्ष रथ को शृंगार से शोभायमान करते हैं तो नाग रथ के धुरों को अपने पाश में बांधे रखते हैं और पीछे से राक्षस रथ की गति को संचालित करते हैं। सात तेजस्वी अश्व इस रथ को दौड़ाते हैं तो पीछे से उच्चैश्रवा रथ को पीछे की ओर खींचते हुए इसकी गति को संतुलित बनाये रखने में सहायक होते हैं। आदित्य की यह अपूर्व शोभायात्रा दैदीप्यमान वरयात्रा-सी आकर्षक प्रतीत होती है। कवि ने आलोकनाथ आदित्य की इसी वरयात्रा से कल्पना की है कि प्रियंवदा वसुंधरा ब्रह्ममुहूर्त्त में प्राकृतिक संपदा का अक्षय कोष लिये अपने इसी परम प्रिय पुरुष की बाट जोहती है। पूरे संवत्सर भर में द्वादस चैत्य आदित्यों की यह प्राण प्रिया वसुंधरा नववधू-सी भावविह्वल हो अपने प्रियतम के चरणों में विनत हो जाती है।

कवि ने प्रणयी युगल की इस रागात्मक गाथा को प्रकृति-पुरुष की प्रणयगाथा से अनस्यूत करके उसे और भी मधुर स्वरूप प्रदान कर अपनी मौलिक प्रतिभा के स्पर्श से सरस बना दिया है।

संपूर्ण ब्रह्मांड सूर्य की लीला से संपृक्त है और हमारी पृथ्वी तो सूर्य से आकृष्ट होकर ही मानों उसके चक्कर लगाती रहती है। यदि सूर्य न होता तो सारा संसार अंधकार में घिरा शून्य ही लगता। तेजस्वी सूर्य ही पृथ्वी को ऊर्जा और अग्नि प्रदान करता है। अतः पृथ्वी का सूर्य के प्रति प्रणयासक्त होना परम स्वाभाविक और कवि-हृदय के लिए परम सरस भी है। प्रबुद्ध पाठकों को 'अपूर्व पर्व' काव्य पठनीय और मननीय प्रतीत होगा।

०००

***एक परत धूल की : (कविता) *कवि : हरिशंकर पाठक; प्रकाशक : राजपाल एंड संज, दिल्ली-६; मूल्य : ३५ रुपये।**

मानव-मन पर परत भर चढ़ी धूल भी संवेदनशील कवि को स्वीकार नहीं हो पाती, इसीलिए वह अपने कवि-कर्म द्वारा उसे साफ करके निर्मल स्वरूप देने में ही विश्वास रखता है। 'पाहुन चले गये' के बाद के इस कविता-संकलन में कवि हरिशंकर पाठक ने 'अपने कवि-मन पर पड़ी एक परत धूल की' महसूस करते हुए अपनी सृजनधर्मा अंगुली से उसे छुआ है, और उसी के परिणाम स्वरूप ये कविताएं प्रकाश में आ सकी हैं। कवि ने 'अंतर के दर्दीले और गहरे हैं जो उन्हें शब्दों के द्वार से बाहर लाने की को की है और सहृदय पाठकों तक पहुं का प्रयास भी किया है। 'दूधिया म भरे नीड़ों के गीतों को' जब वह 'ढो के नाद से जन्मे संगीत पर' थिरकता मु है तो उन्हें कलम बंद करने का लोभ संवरण नहीं कर पाता।

व्यक्ति-व्यक्ति के मन में व्याप्त को महसूसते हुए कवि अपने देशवा की दुर्दशा से संतप्त है और इस तर सजगता उसकी 'बापू के प्रति', 'राष्ट्र प्रहरी', 'त्रासदी—एक युग की' आदि क ताओं में विशेष रूप से उजागर हुई है। प्रकृति के सुरम्य—सुरंगमय चित्रों का अंकन 'बांसों का झुरमुट', 'वसंत' कवि ताओं में ही हो पाया है, अन्यथा तो क व्यक्ति-मन की परतों पर छाई धूल हटाने में रत रहा है या फिर अपने की समस्याओं से साक्षात्कार कराने संलग्न रहा है। 'मासूम अल्हड़ उमं पर गंधक की गंधभरी हवा की संगीनों जो वहशियाना आक्रमण' किया है, उ दंश पाकर ही शब्द कविता के खोलकर बाहर झांकने लगते हैं।

—प्रो. विश्वंभर 'अ

०००

***निंदक नियरे राखिये * लेखक : र कुमार बाजपेयी, प्रकाशक : काव्य प्रकाशन; विष्टुपुर, जमशेदपुर-१; मू १० रुपये।**

'निंदक नियरे राखिये' व्यंग्य संग्रह श्री रमेश वाजपेयी की पंद्रह व्यंग्य रचनाओं का संग्रह है।

रमेश वाजपेयी ने आधुनिक युगबोध प्रेरणा ग्रहण कर इसकी रचना की है। संत कबीर ने अपने आंगन में कुटी बनाकर निंदकों को पास ही रखने का संदेश दिया है। रमेशजी ने पुस्तक का नामकरण कबीर के शब्दों में किया है। 'कम्प्यूटर के दर्द' में लेखक ने बताया है कि एक तरफ हम भारतवासी गरीबी से त्रस्त से लदे, क्षुधा में पीड़ित अधनंगे हैं, दूसरी तरफ कम्प्यूटर का मोह हमें सता रहा है।

'अलगाव-एकता का' में राजनीतिक अस्थिरता पर व्यंग्य है तो 'ये जनता के सेवक' में समाज सेवियों पर करारी चोट है। 'षड्यंत्र-हिंदी का' में राष्ट्रभाषा विषयक दुर्दशा का वर्णन है। 'ढाई आखर' में लेखक ने आधुनिक कहलाने वाली महिलाओं पर व्यंग्य किया है, जो स्वयं तो इधर-उधर सैर-सपाटे करती हैं और पति पर घर का भार सौंप देती हैं। 'निंदक नियरे राखिये' रचना में नेता और पुलिस पर व्यंग्य हैं। 'सैंयां भये कोतवाल' में ऐसे नेताओं पर आघात किया गया है, जो दूसरों का ध्यान नहीं रखते हुए स्वयं हर प्रकार की सुविधाओं का उपभोग करते हैं। 'कतार भावी सदी की' में सत्ता के मद में चूर रहने वाले लोगों के विषय में लेखक ने लिखा है—'सत्ता का नशा ही कुछ ऐसा होता है कि दुनिया का हर प्राणी तुच्छ नजर आता है और लोग जब उसके सामने रोते-गिड़गिड़ाते हैं तो उनके बड़प्पन को बल मिलता है, अहम् की तुष्टि होती है।'

सभी व्यंग्य रचनाएं, हमारे समाज की विद्रूपताओं का पर्दाफाश करती हैं।

हमारे साहित्यकार तो अपना कार्य कर रहे हैं और समाज को सुधारने के लिए रचनाएं लिख रहे हैं, किंतु हमारे देश और समाज के रहनुमा थोड़ा भी ध्यान देते तो हमारे देश और समाज का बहुत बड़ा कल्याण हो जाता। आगे भी साहित्य-सेवा करते लेखक से भविष्य में और भी सुंदर व्यंग्य रचनाओं की हम अपेक्षा करते हैं।

—डा. रामसेवक दिक्षल

□

परिभाषा

अंग्रेजी का पहला शब्दकोष बनाने वाले डॉ. जानसन ने शब्दों को अकारात्मक क्रम में जोड़ा, लेकिन शब्दों के आगे अर्थ लिखने की बजाय परिभाषाएं लिख दीं। ऐसा करने की वजह शायद यह थी कि शब्द का अर्थ ठीक से समझ में आ सके। मिसाल के तौर पर 'सिगरेट' का अर्थ उन्होंने लिखा :

'सिगरेट कागज में लिपटा हुआ तम्बाकू है, जिसके एक तरफ धुंआ होता है और दूसरी तरफ एक बेवकूफ!'

—शुकदेव प्रसाद

□

बालकथा

नारियल का भाग्य

☐ मधुकर डी.

नारियल एक मजबूत खोल के आवरण के अंदर स्वादिष्ट पानी और गिरी वाला पौष्टिक फल है, जो कच्चे और पक्के दोनों ही अवस्था में खाया-पिया जाता है।

नारियल को धार्मिक स्वरूप में यह प्रतिष्ठा कैसे प्राप्त हुई, इसकी भी एक दिलचस्प कहानी है। प्राचीन समय की बात है। समुद्र के किनारे एक गांव था। वहां आस-पास व दूर-दूर तक सैकड़ों नारियल के पेड़ थे, जिन पर नारियल लगते भी खूब थे। किंतु सब बेकार क्योंकि तब वहां के ग्रामीणों को इस ऊंचे पेड़ के फल के बारे में कोई जान ही नहीं थी। परिणामस्वरूप ये नारि पेड़ से गिरने के बाद समुद्र में बह जाते

एक बार हुआ यह कि एक नारियल कि तरह समुद्र के पानी में बह जाने से ब गया, जिसे उस गांव के बच्चे कुछ तक खेलने के बाद गांव की मुख्य पगडं पर लाकर छोड़ गये। गांव का एक ब्राह्मण परेशान हालत में, भरी दोपहरी

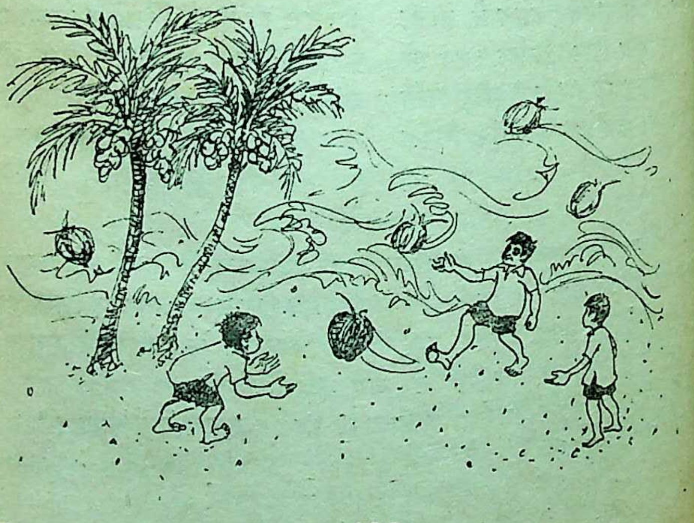

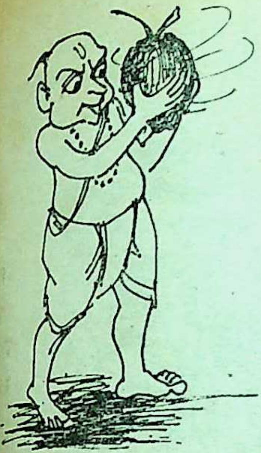

घर आने के लिए उस पगडंडी से रहा था। आज का दिन उसके लिए ही खराब रहा था। दिन भर भटकने बाद भी उसे कुछ नहीं मिला था और उसके घर में अपने भगवान को भोग के लिए कुछ था। इस चिंता में कि लिए न सही, किंतु अपने भगवान के क्या भोग लगाये, इस विचार में हुए भारी कदमों से वह ब्राह्मण घर रहा था। गांव के नजदीक आते ही पैर को किसी ठोस गेंद जैसी वस्तु ठोकर लगी। यह वस्तु वही नारियल जिसे कुछ देर पूर्व गांव के बच्चे वहां गये थे। ब्राह्मण ने उस वस्तु को में आकर उठाया और दूर फेंकने के हवा में दो-तीन मर्तबा उछाला, तभी अंदर कुछ छलकने की आवाज दी और ब्राह्मण की आंखें चमक उठीं। वह मन ही मन बुदबुदाया कि हो न हो यह विचित्र वस्तु अवश्य कोई फल है। भगवान ने उसकी सुन ली है। आज इसे ही अपने भगवान के चरणों में समर्पित करेगा।

यह विचार कर ब्राह्मण उस नारियल को सहेजकर घर लाया। स्नान आदि से निवृत्त होकर मंदिर गया। वहां उसने भगवान की मनोभाव से पूजा, आरती आदि की और रास्ते में मिले उस नारियल को भक्ति-भाव से मूर्ति के चरणों में अर्पित किया।

नारियल भी अपने को भगवान के चरणों में समर्पित होते देख प्रसन्न हो रहा था। पूजा के बाद ब्राह्मण ने उस नारियल को उठाकर उसके कठोर रेशे हटाकर उसके कठोर आवरण को तोड़ा तो उसके अंदर से कुछ स्वादिष्ट पानी और सफेद गिरी निकली। उसके टुकड़े करके उसने उपस्थित लोगों में प्रसाद के रूप में वितरित

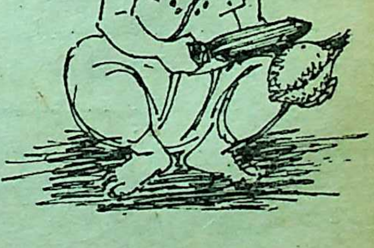

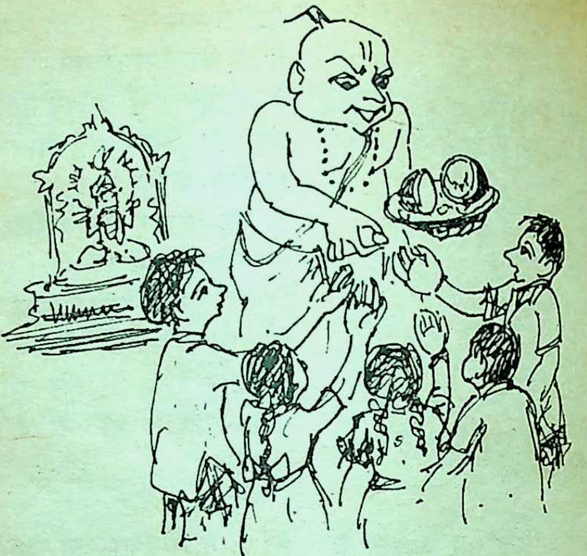

किया । नारियल को प्रसाद के रूप में पहली बार खाने के बाद इस फल का रहस्य लोगों को मालूम हुआ । तभी से नारियल 'श्रीफल' के रूप में भगवान को चढ़ाया जाने लगा । इतना ही नहीं हर धार्मिक कार्य एवं शुभ कार्यों में भी इस पूजा की जाती है और लोग बड़ी श्रद्धा औ सम्मान से इसे भेंट में देते हैं ।

—एम. ओ. जी. लाइन, डि १

इंदौर, म.

□

खलील जिब्रान की एक अभिव्यक्ति है—'जब मैं चलने लगता हूं, तब मेरा प मुझे रोककर कहता है—मुझे छोड़ कर मत जाओ । मुझमें तुम्हारा अतीत अं है, तुम्हारे शैशव की असंख्य क्रीड़ाएं मेरे कण-कण में अंकित हैं, तुम्हारे पूर्वजों मधुर स्मृतियां मुझमें भरी पड़ी हैं ।'

किंतु जब मैं रुक जाता हूं तो मार्ग पुकारता है, 'पथिक, आओ मेरा अनुसरण क मैं तुम्हारा भविष्य हूं । मेरा अनुसरण करने से तुम्हें नये-नये अनुभव और नये-नये प्राप्त होंगे । मैं तुम्हें बड़े-से-बड़े पद और ऊंचे-से-ऊंचे स्थान पर पहुंचा दूंगा ।'

'बहुत समय से यह असमंजस चला आ रहा है । न मैं चल पा रहा हूं और न पा रहा हूं । इस असमंजस के बीच कभी-कभी सोच उठता हूं कि न मेरा कोई अ और न कोई भविष्य । मैं रुककर भी गति मात्र नहीं हो सकता और न गतिशील हो स्थिर ।'

—डा. गोपालप्रसाद

□

(पृष्ठ ३२ का शेषांश)

करते हुए कहा कि आज आव- ता इस बात की है कि नयी पीढ़ी के र श्रद्धेय विद्यार्थीजी की पत्रकारिता मान्यताओं का अनुसरण करें ।

गोष्ठी का उद्घाटन करते हुए केंद्रीय एवं प्रसारण मंत्री श्री एच. के. भगत ने समाचार-पत्रों और पत्र- द्वारा खोजी पत्रकारिता के नाम पर हनन करने, मनगढ़ंत खबरें छापने, की इज्जत पर कीचड़ उछालने की परंपरा की कड़ी अलोचना की ।

रविवार' के संपादक श्री उदयन शर्मा विचार था कि पत्रकारिता के क्षेत्र में जो विवाद दिखायी दे रहा हैं, वह के तथाकथित बड़े समाचार-पत्रों महानगरों में रहने वाले पत्रकारों मालिकों के कारण है ।

दैनिक 'जागरण' के प्रधान संपादक नरेंद्र मोहन ने सूचना मंत्री को सुझाव कि सरकार यथाशीघ्र ऐसा कानून , जिसके अंतर्गत ब्रिटेन और अम- की भांति, भारतीय पत्रकारों को सरकारी फाइलों को निर्धारित शुल्क- करके देखने का अधिकार हो ।

सांसद श्री बलराम सिंह यादव, वरिष्ठ दाता राजीव शुक्ल, उ. प्र. के ऊर्जा श्री प्रमोद तिवारी, केंद्रीय जल संसा- मंत्री श्रीमती कृष्णा साही, व्यंग्य कार 'काक', 'टाइम्स आफ इंडिया' के प्रभारी संपादक सुव्रत भट्टाचार्य, 'दैनिक हिंदुस्तान' पटना के प्रभारी संपादक श्री सुनील दुबे, भारतीय प्रेस इंस्टीटयूट दिल्ली की श्रीमती विनोदिनी बनर्जी, गिरिराज किशोर, डा. यतींद्र तिवारी, श्री एन. आर. चंदन आदि ने भी अपने विचार प्रस्तुत किये ।

अतिथियों का अभिवादन स्वागताध्यक्ष डॉ. गौरहरि सिंहानियां ने किया तथा समस्त कार्यवाही का कुशल संपादन एवं संचालन वरिष्ठ पत्रकार श्री जितेंद्र मेहता ने किया । **–शेखर मिश्र**

०००

संयोग कला मंच का कवि-सम्मेलन

बंबई में १५ अप्रैल को साहित्यिक सांस्कृतिक संस्था संयोग कला मंच द्वारा आयोजित कवि-सम्मेलन संपन्न हुआ । हिंदी 'ब्लिट्ज' के संपादक श्री नंदकिशोर नौटियाल ने अध्यक्षता की । संचालन डा. सुधाकर मिश्र ने किया । मुख्य अतिथि थे प्रा. नंदलाल पाठक और आशीर्वचन दिया **नवनीत** (हिंदी डाइजेस्ट) के संपादक डा. गिरिजाशंकर त्रिवेदी ने । देना बैंक के सहायक महाप्रबंधक श्री जगमोहन शर्मा की उपस्थिति उल्लेखनीय थी ।

सर्वश्री सच्चिदानंद सिंह 'समीर', दिलीप कुमार तिवारी, रतीलाल शाहीन, अरुण सिंह 'मख्मूर', देवमणि पांडेय, हर्ष शर्मा, मुरलीधर पांडेय, रूपेंद्र 'सपना', विजय शंकर पांडेय, अर्चना गुप्ता ने काव्य-पाठ किया ।

डा. गिरिजाशंकर त्रिवेदी, प्रा. नंदलाल

पाठक एवं डा. सुधाकर मिश्र ने भी काव्य-पाठ किया। श्री मुरलीधर पांडेय ने कवियों का अभिनंदन किया, और अंत में आभार व्यक्त किया । **—अनिरुद्ध पांडेय**

०००

साहित्यकार का अभिनंदन

लखनऊ में 'मधूलिका' द्वारा आयोजित सारस्वत समारोह में कवि योगेश दयालुजी का नागरिक अभिनंदन किया गया । आचार्य डा. चंद्रिकाप्रसाद शर्मा ने कहा कि योगेश दयालुजी एक सुकुमार हृदय कवि हैं, जिनकी अभिव्यक्ति सुंदर तथा अनुभूति गहरी है । श्री परमानंद जड़िया ने योगेश दयालुजी का अभिनंदन किया । समारोह के अध्यक्ष श्री लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक' ने योगेश दयालुजी को मान-पत्र तथा नटराज की प्रतिमा भेंट करते हुए उन्हें एक ईमानदार अधिकारी, विद्वान लेखक तथा कुशल कवि की संज्ञा प्रदान की । **—परमानंद जड़िया**

०००

सीमांत में सांस्कृतिक संस्था

भारत, तिब्बत तथा नेपाल की सीमा एवं कैलास मानसरोवर तीर्थयात्रा वर्तमान मार्गक्षेत्र के जन जाति 'रङ', लोगों की संस्था 'रङ' संस्कृति परिषद के तत्वावधान में धारचूला पिथौरागढ़, उ. प्र. में वैशाली के पावन पर्व के अवसर पर एक भव्य सांस्कृतिक संध्या का आयोजन हुआ। इस अवसर पर श्री नंदन सिंह लालाजी ने इस संस्था को एक लाख रुपये की धन राशि प्रदान की। यह धन राशि अगले
वर्षों तक फिक्स्ड डिपाजिट में रहेगी
इस अवधि में रङ संस्कृति पर सर्वश्रेष्ठ
करने वाले को एक लाख रुपये पुर
दिया जायेगा। इस प्रकार प्रत्येक छ
की अवधि में यही प्रक्रिया सदा अप
जाती रहेगी। **—'हयात'**

०००

कवि उद्भ्रांत सम्मानित

हिंदी के कवि श्री उद्भ्रांत को १
के 'सुमन पुरस्कार' के लिए चुना गया है
यह घोषणा हिंदी के लोकप्रिय कवि
इस वर्ष 'सुमन पुरस्कार' प्राप्त करने
कवि श्री गोपालदास नीरज ने उन्नाव
भारती परिषद द्वारा अपने सम्मान
आयोजित एक विराट कवि-सम्मेलन
की। श्री नीरज के उक्त प्रस्ताव का
मोदन हिंदी के शीर्षस्थ प्रगतिशील
डा. शिवमंगल सिंह सुमन ने किया,
नाम पर यह पुरस्कार चलाया गया है।
पुरस्कार में पांच हजार रु. की राशि
तथा प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया जाता है।

०००

शुकदेव प्रसाद पुरस्कृत

विज्ञान औद्योगिकी विभाग (
सरकार) की ओर से हिंदी में औद्यो
विभाग भारत सरकार की ओर से
में प्रौद्योगिकी विषयक मौलिक
के लिए वर्ष १९८७ के पुरस्कारों
घोषणा कर दी गयी है। उक्त पुर
योजना के अंतर्गत सुप्रसिद्ध विज्ञान

प्रसाद को उनकी नाभिकीय पर लिखी गयी पुस्तक के लिए हजार रुपये के प्रथम पुरस्कार से किया गया है। पुरस्कार वितरण शीघ्र ही दिल्ली में आयोजित जा रहा है।

०००

राजेंद्र यादव का सम्मान

में बोकारो के महादेवी नगर में लेखक संघ के बोकारो इस्पात इकाई के स्थापना समारोह में प्रख्यात और 'हंस' के संपादक राजेन्द्र का सम्मान किया गया। इस द्विदिव- समारोह का उद्घाटन 'नया पथ' डा. चंचल चौहान ने किया। एन. के. पी. सिन्हा ने स्वागत किया भारत यायावर ने भेंट किया। सम्मान का उत्तर देते हुए राजेन्द्र ने कहा कि सत्ता समाज से किताबों स्थित कर देने की साजिशें बराबर रहती हैं। इसलिए अतीत में जहां कारियों ने पुस्तकालय जलाये, आज के शासक लगातार कागज की में वृद्धि किये जा रहे हैं।

दिन राजेन्द्र यादव की कहानियां के केंद्र में रहीं। **–निर्मल मिलिंद**

०००

तरुण संघ

पुर में सिहभूमि होम्योपैथिक कॉलेज परिसर में नवगठित तरुण संघ का उद्घाटन हिंदी राजस्थानी कवि डॉ. मनोहरलाल गोयल ने किया। श्री एस. एन. मित्तल, डॉ. बच्चन पाठक 'सलिल' ने राजस्थानी भाषियों की सामाजिक - सांस्कृतिक सेवाओं का उल्लेख किया। समारोह अध्यक्ष श्री चिमनलाल भाटिया ने कार्यकर्ताओं को कई सुझाव दिये।

श्री अशोक मोदी, संतोष अग्रवाल, दीनानाथ पांडेय, जयप्रकाश बंशल, बजरंगलाल अग्रवाल आदि ने भी विचार प्रकट किये।

कवि-गोष्ठी में डॉ. सलिल, आचार्य गोयल, व्रजमोहन 'विकल', हरेराम 'हंस', और कृष्ण कुमार 'अंबर' आदि ने कविता पाठ किया।

०००

विमोचन और सम्मान

जमशेदपुर स्थित राजस्थान भवन में जुग-सलाई साहित्य परिषद का प्रथम वार्षिकोत्सव डॉ. बच्चन पाठक 'सलिल' की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। श्री चिमनलाल भालोटिया ने कमल जालान 'कोमल' के कविता संकलन 'संघर्ष' का विमोचन किया।

आचार्य डॉ. मनोहरलाल गोयल एवं श्री आरिफ गद्दी का साहित्यिक अभिनंदन भी किया गया। श्री महेशचंद्र शर्मा ने डा. गोयल को एवं श्री बाबूलाल बोहरा ने श्री गद्दी को 'साहित्य भास्कर' की मानद उपाधि-पत्र एवं शाल भेंट कर सम्मानित किया। श्री रमेश मनचंदा रवि ने धन्यवाद दिया। **–अशोक गोयल**

०००

'निष्कृति' पर चर्चा गोष्ठी

कथा-लेखिका कृष्णा अग्निहोत्री के उपन्यास 'निष्कृति' पर 'कथामंच', इंदौर द्वारा चर्चा-गोष्ठी का आयोजन किया गया।

मुख्य अतिथि न्यायमूर्ति श्री गयूर कुरेशी ने कहा कि जिस विषय पर लिखा जा रहा है, लेखक उस विषय का खूब अध्ययन करे, खोज करे, तभी वह बेहतर ढंग से लिख सकता है। कवि श्री रामविलास शर्मा ने अपने अध्यक्षीय संबोधन में कहा कि विषय चुनने का लेखक का अपना अधिकार होता है। कथाकार सर्व श्री बिलास गुप्ते, सतीश दुबे, डॉ. शरद पगारे, राजेंद्र मिश्र, संदीप श्रोत्रिय एवं डॉ.श याम सुंदर व्यास ने 'निष्कृति' उपन्यास पर अपने-अपने विचार व्यक्त किये। कार्यक्रम का संचालन कथाकार श्री सूर्यकांत नागर ने किया। **–अनंत श्रीमाली**

○○○

मधुरिमा का वार्षिकोत्सव

विगत ९ अप्रैल '८८ को बी. आई. सी. राजभाषा के तत्वावधान में अखिल भारतीय कवयित्री सम्मेलन श्रीमती सावित्री परमार की अध्यक्षता में स्थानीय बी. आई. सी. क्लब में संपन्न हुआ। श्रीमती सरला भटनागर, चंद्ररेखा सिंह, निर्मला जाशी, मैनावती, सावित्री शर्मा एवं स्थानीय कवयित्रियों ने काव्य-पाठ कि 'माधव-गीता' की तपोनिष्ठ माधवीलता शुक्ला ने सम्मेलन का लन किया।

'मधुरिमा' की संस्थापिका श्रीमती चौहान ने स्वयं की संकलित पुस्तक गंगा' पर परिचर्चा-गोष्ठी का श्रीमती माधवीलता शुक्ला की क्षता में किया। उत्सव में प्रेस अध्यक्ष श्री एस. ए. नकवी, राजेंद्र डॉ. सावित्री परमार (जयपुर), सिंह (झांसी) तथा निर्मला (भोपाल) का सम्मान भी किया 'गीत-गंगा' परिचर्चा में रामस्वरूप तथा डॉ. सर्वदानंद द्विवेदी ने भी की समीक्षा की।

तदुपरांत सम्मानित कवयित्रियों अतिरिक्त श्रीमती सरला मनोरमा 'मधु', राजकुमारी सुमति अय्यर, गीता चौहान, पांडेय, अंजनी सरीन, मधु प्रधान, मुसद्दी, आशा बाजपेयी, ज्योति अंजु अग्रवाल एवं सत्या मिश्रा ने श्रीवास्तव के सफल संचालन में सुरसरि प्रवाहित की। **–जयराम**

□

बहुत-सी वस्तुओं का अपूर्ण ज्ञान प्राप्त करने की अपेक्षा अज्ञानता में श्रेयस्कर है।

○○○

जीवन में मित्रता से अधिक और कोई प्रसन्नता नहीं।

□

सुभाषित

मज्जत्वम्भसि यातु मेरुशिखरं शत्रूञ्जयत्वाहवे,
वाणिज्यं कृषिसेवनादिसकला विद्याःकलाः शिक्षतु ।
आकाशं विपुलं प्रयातु खगवत्कृत्वा प्रयत्नं परं,
नाभाव्यं भवतीह कर्मवशतो भाव्यस्य नाशः कुतः ।।

समुद्र में गोता लगाओ, सुमेरु के शिखर पर चढ़ो अथवा युद्ध में शत्रु को जीतो, र करो अथवा खेती और सेवा आदि की सम्पूर्ण विद्या और कलाओं को सीखो, अथवा प्रयत्न करके पक्षी के समान आकाश में उड़ो। भाग्य के वश से न तो अनहोनी कभी ती है और न होनहार कभी टल सकती है।

भीमं वनं भवति तस्य पुरप्रधानं,
सर्वे जनाः सुजनतामुपयान्ति तस्य ।
कृत्स्ना च भूर्भवति सन्निधिरत्नपूर्णा,
यस्यास्ति पूर्वसुकृतं विपुलं नरस्य ।।

जिस भाग्यवान पुरुष के पूर्वकाल के पुण्य विपुल हैं, उसके लिये भयानक वन उत्तम र, सभी मनुष्य हितैषी और समस्त पृथ्वी अनेक रत्नों की खान हो जाती है।

को लाभो गुणिसंगमः किमसुखं प्राज्ञेतरैःसंगतिः,
का हानिः समयच्युतिर्निपुणता का धर्मतत्वे रतिः ।
कः शूरो विजितेन्द्रियः प्रियतमा काऽनुव्रता किं धनं-
विद्या किं सुखमप्रवासगमनं राज्यं किमाज्ञाफलम् ।।

गुणवान व्यक्तियों की संगति के अतिरिक्त लाभ, मूर्खों की संगति के अतिरिक्त ख, अवसर चूकने के अतिरिक्त हानि, धर्म में प्रीति होने के अतिरिक्त निपुणता, अनुकूल ने वाली स्त्री के अतिरिक्त प्रियतमा, विद्या के अतिरिक्त धन, जन्मभूमि में निवास के रिक्त सुख और आज्ञा फलवती होने की शक्ति के अतिरिक्त राज्य कुछ भी नहीं है।

पातितोऽपि कराधातैरुत्पतत्येव कन्दुकः ।
प्रायेण साधुवृत्तानामस्थायिन्यो विपत्तयः ।।

जिस तरह हाथ के ज़ोर से फेंकी हुई गेंद जमीन पर गिर कर तुरन्त ही ऊपर उठ ती है, उसी तरह सज्जन पुरुषों की विपत्तियां भी प्रायः अस्थायी ही होती हैं।

[भर्तृहरि कृत 'नीतिशतक' से]

दो क्षण हंस न लें!

जयप्रकाश नारायणजी के पुराने व परम मित्र एक बार उनके घर एक-दो रोज रहन को पहुंचे। जयप्रकाशजी दोस्त को देख गद्गद् हो गये–खूब बातें की, जब थक गये तो भूख का ख्याल आया। दोस्त ने पूछा–'कुछ खाने को है रसोई में?' जयप्रकाश मुस्कराकर दोस्त को कलेजे से लगाकर बोले, 'भाई पूरी रसोई ही तुम्हें समर्पित है' फिर संकोच से बोले, 'अब ये बात और है कि वहां कुछ है ही नहीं।' जयप्रकाशजी का मतलब समझ मित्र उनसे लिपटकर हंस पड़े। **–मंजु नागौरी**

०००

एक दंपति ने कुत्ता पाला। उस पर से अक्सर चख-चख हो जाया करती।

एक दिन शाम को जब श्रीमानजी घर पहुंचे, तो देखा कि श्रीमतीजी कुत्ते के बालों को काटने और ब्रुश करने में लगी हुई हैं। यह देखकर उन्होंने चिल्लाकर कहा–'क्यों, मेरा कंघा उस कुत्ते पर चल रहा है?'

श्रीमतीजी ने बड़ी मधुरता से कहा–'हां, यह आपका ही है, लेकिन चिंतित होने की आवश्यकता नहीं है, इस्तेमाल करने से पहले ही लिया था।' –सुरेन्द्र

०००

सुप्रसिद्ध भौतिक विज्ञानी रोनाल्ड को किसी मुकदमे के में एक बार अदालत में हाजिर पड़ा। मुकदमा किसी वैज्ञानिक के सिलसिले में था।

वकील ने पूछा–'आपकी संयुक्त राज्य अमरीका में सर्वश्रेष्ठ विज्ञानी कौन है?'

रोनाल्ड ने बेसाख्ता कहा–'मैं।'

बाद में अदालत के बाहर उनके दोस्त ने उनसे कहा कि उन्हें इस तरह मुंह मियां मिट्ठू नहीं बनना चाहिये।

रोनाल्ड ने प्रतिवाद किया–'मैं मुंह मियां मिट्ठू कहां बन रहा था? अदालत में झूठ न बोलने की शपथ गयी थी, अतः जो बात सच थी, वही स्वीकारी।' –शुकदेव

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुशी मार्ग, बंबई-४०० के लिए प्रकाशित तथा श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, बंबई–४०० ००४ में मुद्रित।

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

हिन्दी डाइजेस्ट

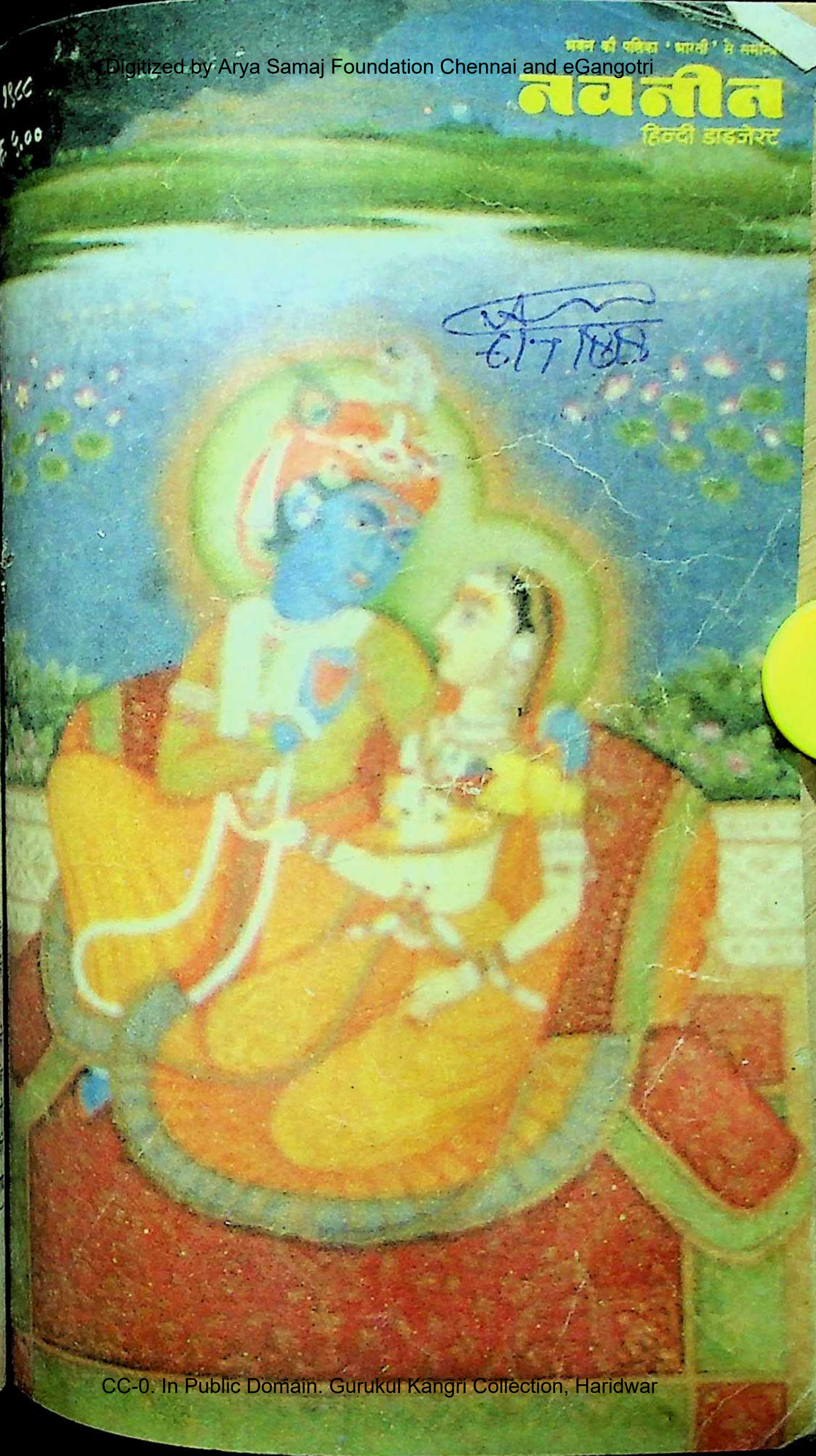

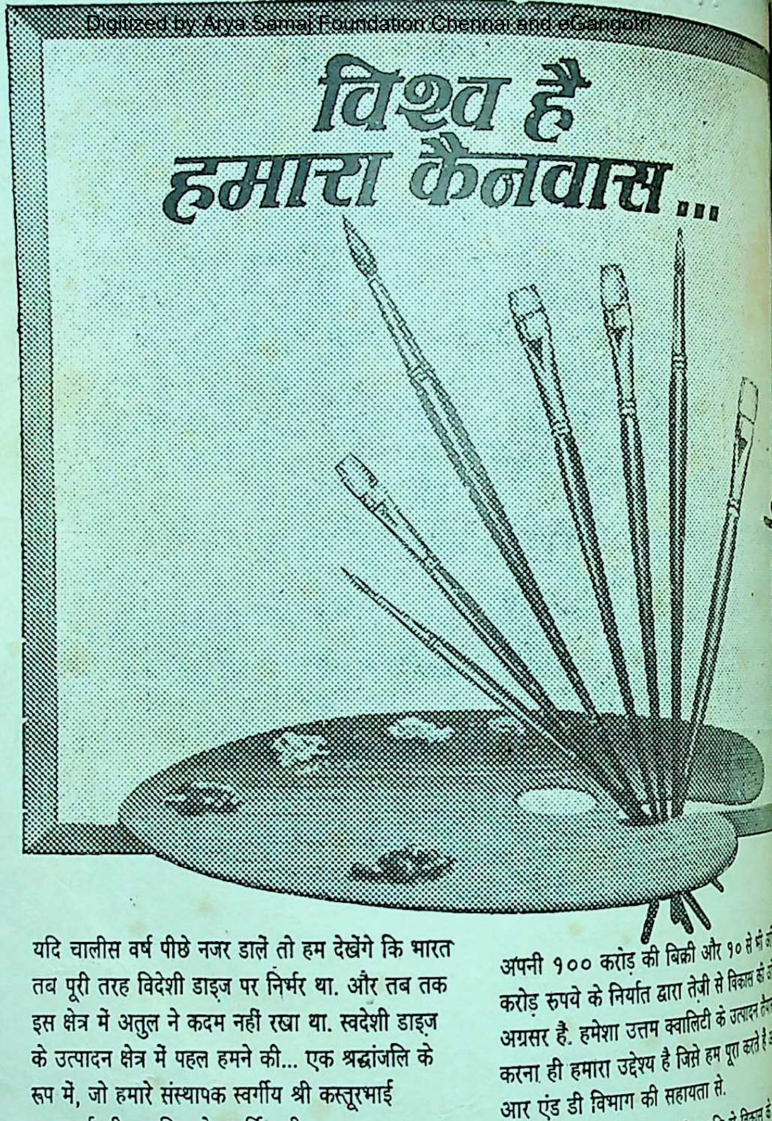

यदि चालीस वर्ष पीछे नजर डालें तो हम देखेंगे कि भारत तब पूरी तरह विदेशी डाइज पर निर्भर था. और तब तक इस क्षेत्र में अतुल ने कदम नहीं रखा था. स्वदेशी डाइज़ के उत्पादन क्षेत्र में पहल हमने की... एक श्रद्धांजलि के रूप में, जो हमारे संस्थापक स्वर्गीय श्री कस्तूरभाई लालभाई की दूरदृष्टि को समर्पित थी.

आज अतुल न केवल डायस्टफ़ की विशाल श्रेणी का उत्पादन करते हैं बल्कि बुनियादी रसायन, डायस्टफ़ के माध्यम, फार्मास्युटिकल्स तथा कीटनाशकों का उत्पादन करके कपड़े, चमडे, कागज, हाथ से बने कपड़े, पिग्मेंट, पेट्रोलियम, जूट तथा साबुन जैसे विविध उद्योगों में देश को आत्मनिर्भर बनाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं

अपनी १०० करोड़ की बिक्री और १० से
करोड़ रुपये के निर्यात द्वारा तेज़ी से विकास
अग्रसर है. हमेशा उत्तम क्वालिटी के उत्पादन
करना ही हमारा उद्देश्य है जिसे हम पूरा करते हैं
आर एंड डी विभाग की सहायता से.

भारत में उद्योगों के कदम तीव्र गति से विकास
अग्रसर है. और अतुल राष्ट्र की उपलब्धियों में
सहभागी रहा है

®THE
ATUL®
PRODUCTS LTD.

अतुल ३९६०२०, गुजरात, इंडिया, टेलेक्स : ०१७३ २३२
से ६५. टेलीग्राम : TULA ATUL

61784

पत्र-वृष्टि

अंक में लक्ष्मीनारायण श्रीवास्तव
हानी 'वही मोड़' आधुनिक कहा-
में वस्तुतः एक नया मोड़ है ।
ने अपराधी वृत्ति के मनोवैज्ञानिक
के साथ सामाजिक दायित्व का भी
किया है। अन्य रचनाएं भी ज्ञान-
है। **-मंजू श्रीवास्तव, झांसी, उ. प्र.**

०००

अंक पढ़कर लगा कि **नवनीत**
में **नवनीत** ही नहीं, सुश्रुतीय घृत
वान बुद्ध विषयक रचना 'इति-
बड़ी ही प्रेरक है। मेरी शहदीली
नायें स्वीकार करें।

-राजेन्द्र चाक्रायण, लखनऊ

०००

में 'शांति का प्रतीक कबूतर',
हिरवानी', उर्दू हास्य 'नुस्खा' रच-
पसंद आयीं।

तोष जैन, शाहगढ़, सागर, म. प्र.

०००

नवनीत मई-८८ अंक में प्रकाशित लेख 'नबी बक्श फलक' पसंद आया। 'फलक' की काव्य साधना निश्चय ही स्तुत्य है। लेख में दिये गये काव्यांश उनकी बहुमुखी प्रतिभा को प्रदर्शित करते हैं। युगानुकूल लेख के प्रकाशन हेतु हमारी हार्दिक बधाई स्वीकारें।

—अतुलकुमार त्रिपाठी, डबरा, म. प्र.

०००

अप्रैल अंक देखने को मिला। यों तो सभी रचनाएं एक से एक बढ़कर हैं। राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी का स्मरण करा कर डा. गिरिजाशंकर त्रिवेदी ने देशभक्ति की भावना को पुनः जागृत कर दिया।

स्वामी अखंडानंदजी से वार्ता को पढ़ने से सारे उपनिषदों का सार प्राप्त हो गया। बापू की मितव्ययिता पर 'घी के दीपक' का संस्मरण यदि हमारे राजनेता पढ़ें तो देश का कायाकल्प हो सकता है। 'मेरा मुन्ना' कविता बहुत सुंदर लगी।

—गोवर्धनलाल पुरोहित, जयपुर, राजस्थान

०००

नवनीत का ताजा अंक मिला। निस्संदेह दूसरी पत्रिकाओं से अलग सुरुचिपूर्ण सामग्री देने के लिए आप बधाई के पात्र हैं। इसी अंक में लेख 'भारतीय संगीत का आध्यात्मिक पक्ष' और 'अलौकिक दिव्य फूलों की घाटी' बहुत पसंद आये। भारतीय कलाओं, विशेष रूप से संगीत पर कुछ और लेखों की **नवनीत** में प्रतीक्षा रहेगी।

—रघुवीर आशियां, जोधपुर, राजस्थान

लेखकों से निवेदन

○ प्रतिदिन **नवनीत** में प्रकाशनार्थ बहुत-सी डाक आती है। कई बार अनुरोध करने पर भी कुछ लेखक वापसी के लिए रचना के साथ पर्याप्त टिकट लगा लिफाफा नहीं भेजते। भविष्य में ऐसी रचनाओं को न लौटाया जायेगा और न उन पर प्रकाशनार्थ विचार ही किया जायेगा।

○ जब तक आपकी पूर्व स्वीकृत रचना प्रकाशित न हो जाये दूसरी रचना न भेजें।

○ कुछ लेखक अभी भी वापसी के लिए बिना पर्याप्त टिकट लगे लिफाफे के रचनाएं विचारार्थ भेजते रहते हैं। ऐसी अस्वीकृत रचनाओं को आप पत्र लिखकर वापस मंगा सकेंगे, यह अपेक्षा न रखें, क्योंकि उन्हें संभालकर रखना हमारे लिए संभव न होगा। **—संपादक**

नवनीत अप्रैल-८८ अंक पढ़ा। वाकई वी. आर. कृष्ण अय्यर का लेख 'मौत क्या है, दीवार या द्वार' बहुत प्रभावशाली और आकर्षक था। आशा है आने वाले अंकों में धर्म और विज्ञान के बारे में और ज्यादा जानकारी दी जायेगी। पाकिस्तानी कहानी 'शीशे की दीवार' और 'अमर प्रेम दीप' (सार संक्षेप) दिल को छू गया। **—विनय प्रकाश तिवकी,**

'बब्बी', सागर, म. प्र.

○○○

उत्तम रचनाओं से भरपूर **नवनीत** का मई-८८ अंक बहुत रोचक,
रंजक, ज्ञानवर्द्धक, शिक्षाप्रद एवं
दायक रहा। आद्योपांत पढ़कर मन
हो उठा।

'केला मुख्य भोजन बनाइये',
ऋतु का अमृत फल खरबूजा'
महाबीरप्रसाद द्विवेदी', 'श्रम की
तथा 'ऐसी वफादार थी लक्ष्मी कुट्टी
रचनाएं विशेष रूप से रुचिकर लगीं।

—डा. शकुनचंद गुप्त, लालगंज,

○○○

मुझे **नवनीत** पत्रिका सभी दृष्टि
परिपूर्ण लगती है। आपने जो जन
रण के ओजस्वी गायक राष्ट्रकवि
लाल द्विवेदी के बारे में लिखा था,
मुझे पुलकित कर गया। इस पत्रिका
जितनी भी प्रशंसा की जाय, कम है।

कृपया आप इस पत्रिका में
भी दें तो अच्छा होगा। —पुष्पेंदु

'पुष्पित', बिरौली, समस्तीपुर,

○○○

मैं **नवनीत** का पुराना पाठक हूं।
पत्रिका मुझे और मेरे पिताजी को
पसंद है। यह एक अनूठी पत्रिका
फिर भी आप से निवेदन है कि
स्थायी और इनामी स्तंभ शुरू करने
कष्ट करें, जो शिक्षाप्रद हों।

—संजयकुमार शर्मा

○○○

नवनीत का अप्रैल अंक पढ़ा।
सामग्री रोचक एवं पठनीय थी।

'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' की चंदे की दरें

कागज और छपाई के भाव बढ़ जाने के कारण नवनीत के जुलाई अंक से उसके की दरों में वृद्धि अनिवार्य हो गयी है। आशा है, पूर्ववत नवनीत को आपका मिलता रहेगा।

क प्रति (भारत में साधारण डाक से) रु. ५.००

क वर्ष : ५५ रु.; दो वर्ष : १०० रु.; तीन वर्ष : १४० रु.

विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)

किस्तान, श्रीलंका, रु. १२०; अन्य देश रु. १८५

विदेश में हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए)

त्येक देश के लिए रु. ३१०

म्बई से बाहर के चेक भेजने वाले रु. ६ अधिक भेजें।

-व्यवस्थापक, **नवनीत हिंदी डाइजेस्ट, भारतीय विद्या भवन, बम्बई-४००००**

ओं व लेख, 'एक वंश परंपरा' रामपाल सिंह अच्छा लगा। इसके श्री हरदेव सिंह भदौरिया द्वारा मुक्तकों में एक नयी ताजगी। मैं वैसे तो **नवनीत** का नियमित हूं, किंतु इस अंचल में कभी अनुवश **नवनीत** सेवन से वंचित रह हूं, आशा है इस ओर ध्यान देंगे।

-शिवप्रताप सिंह, मिर्जापुर, उ. प्र.

०००

नीत के मई के अंक में श्री बद्री- तिवारी का लेख 'भूले-बिसरे कवि फलक' बेहद पसंद आया। **-श्यामलाल मिश्र, प्रतापगढ़ उ. प्र.**

०००

उड़िया कहानी 'इतिवृत्तक' (मई-८८) अति उत्तम लगी। शैलकुमार जैन का लेख 'मेरा संघर्ष-भरा जीवन' प्रेरणास्पद था। **नवनीत** की सभी रचनाएं भावनात्मक एवं स्तरीय होती हैं।

—सान्त्वना पाण्डे, पिथौरागढ़, उ. प्र.

०००

मई अंक का मुखपृष्ठ और डा. हरिदत्त भट्ट शैलेश का लेख 'रवीन्द्रनाथ ठाकुर और चित्रकला' बहुत पसंद आये।

— एम. पी. श्रीवास्तव, महोबा, उ. प्र.

०००

मई अंक में उड़िया कहानी 'इतिवृत्तक' और ठाकुर रवीन्द्रनाथ की कला पर लेख पसंद आये। **—विपिन आर्य, शाजापुर, म. प्र.**

नवनीत

संस्थापक कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल
नवनीत : स्थापना
संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ३७, अंक ७
जुलाई

पत्र-वृष्टि	... ...
१९८७ का हिंदी का साहित्यिक परिदृश्य	डॉ. सर्वदानंद द्विवेदी
मासिक भविष्यफल	पंडित वी. के. तिवारी
साधारण तकलीफों में प्राथमिक उपचार	प्रमोद कुमार सोनी
व्यावर की तिलपट्टी	कुमकुम शर्मा
सांस्कृतिक मंच	... ...
ग्रंथलोक	'अरुण', मिश्र, 'स्वप्न', कपूर, सरल, राय
प्रार्थना	सत्यकाम विद्यालंकार
पुंडरीक का सपना	ब्रजगोपाल दास अग्रवाल
जब वियोगी हरि को देशनिकाला मिला	जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी
वह कभी मरता नहीं (कविता)	हुल्लड़ मुरादाबादी
हम-तुम दोनों एक से (बाल-कविता)	डॉ. राष्ट्रबंधु
हर समस्या का समाधान टमाटर (व्यंग्य)	भाई महावीर
अरब-इस्राइल विवाद	रामपाल सिंह
दस द्वार (कविता)	डॉ. श्यामसिंह 'शशि'
रस-रंग (ललित निबंध)	डॉ. भालचंद्र तिवारी
जागृति की यात्रा पर उनींदे चरण	मुनिश्री राजेन्द्रकुमार 'रत्नेश'
सांझ का सुनहरा पन्ना (कविता)	रमाकान्त श्रीवास्तव
क्या करें! (कविता)	बालकृष्ण गर्ग
बुलेट ट्रेन (उर्दू हास्य-कथा)	मुज्तबा हुसैन

विशाल चक्केवाला चर्च (अंग्रेजी कहानी)	ओ' हेनरी	६९
'मानस' के सच्चिदानंद स्वरूप 'राम'	वी. वी. सिंह	८०
आधुनिक गांधारी (कहानी)	अमिता श्रीवास्तव	९२
प्रेम गीत	शिवचरण सिंह चौहान	९६
्या फूल (कविता)	दिलीपकुमार तिवारी	९६
था राम की, व्यथा मानव की	हरीन्द्र दवे	९७
पुरातत्व के पुरोधा डा. वाकणकर	डा. विष्णु भटनागर	१००
ति (कहानी)	धनेश्वर प्रसाद	१०७
च्च कोटि का काव्य...	डा. त्रिलोकीनाथ व्रजलाल	११२
र्षा पर भविष्यवाणी व कहावतें	नृसिंह देव अरोड़ा	११४
ान बंद है (कहानी)	माया प्रधान	११६
ं से उत्तिष्ठित (लंबी कहानी)	सुधा	१२०
्हा विकाऊ है (व्यंग्य)	संजीव सिंहल	१३५
र-गीत	बालकृष्ण मिश्र	१३७
िखारी से सम्राट् (बालकथा)	मदन गोपाल शर्मा	१३८
हाकवि निराला का कुर्ता	मुकुंद दास	१४१
ुभाषित	... ...	१४३
े हंस न लें ?	डॉ. झूलन सिंह	१४४

आवरण-चित्र : युगल जोड़ी (अलवर संग्रहालय के सौजन्य से)

[डॉ. जयसिंह नीरज]

चित्र-सज्जा : ओके, शेणै, डॉ. वाकणकर, आर. डी. पुरोहित, विनोद दुबे, मंजु रंजना मिश्रा, विजयकुमार।

ार्यालय : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई-७ फोन : ८११४४६२

कार्टून :
अशोक श्रीश्रीमाल

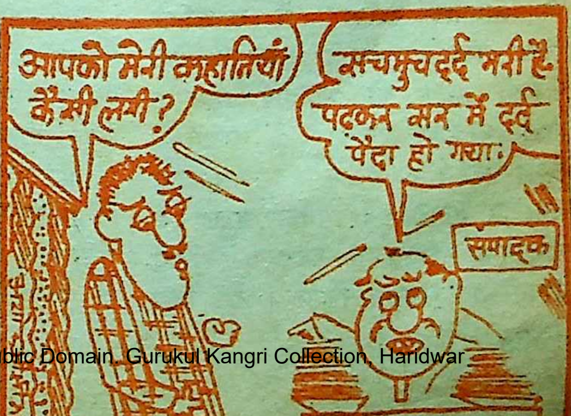
आपको मेरी कहानियाँ कैसी लगी ?
सचमुच दर्द भरी है पढ़कर सर में दर्द पैदा हो गया।
संपादक

१९८७ का हिन्दी का साहित्यिक परिदृश्य

□

डॉ. सर्वदानंद द्विवेदी

इस वर्ष हिंदी की विविधि-विधाओं में लगभग ३०००० ग्रंथों का प्रकाशन हुआ, लगभग ५०० साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्थाओं और प्रकाशन संस्थानों का जन्म हुआ।

नजीमाबाद उ. प्र. की 'अंतरराष्ट्रीय आर्ट एण्ड कल्चरल एसोसिएशन' द्वारा अहिंदी भाषी हिंदी-लेखकों की पुस्तक-पत्रिकाओं की प्रदर्शनी के साथ कलैंडर प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। अहिंदी भाषी रचनाकारों के लिए प्रथम 'कुसुम कुमारी अग्रवाल स्मृति पुरस्कार' मद्रास के बालशौरि रेड्डी को दिया गया। दैनिक जागरण कानपुर द्वारा कन्हैयालाल नंदन को 'पूर्णचंद्र गुप्त पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। ओडिया साहित्यकार डा. सच्चिदानंद राउत राय को वर्ष १९८६ के 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। गुजराती लेखक मनुभाई पंचोली 'दर्शक' को भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा 'मूर्तिदेवी पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। उ. प्र. में 'पंत जन्म-शती समारोह' मनाया गया। बिहार सरकार के राजभाषा विभाग ने पटना में हिंदी सेवियों का सम्मान किया। डॉ. शिव मंगल सिंह 'सुमन' को गांधी भवन भोपा द्वारा वर्ष १९८७ के 'सारस्वत सम्मा से सम्मानित किया गया।

भारत की किसी भी वार कौंसिल में अंग्रेजी की परीक्षा दिये बिना ही र स्ट्रेशन कराने की उपलब्धि इस वर्ष प्र हुई। सिमराहा (पूर्णिया) बिहार में ती दिवसीय 'रेणु-स्मृति-समारोह' का आयोज किया गया। ७५ वीं वर्षगांठ पर वि प्रभाकर का अभिनंदन किया गया। बं विश्वविद्यालय के प्रो. समेल की अध्य में 'अन्तर राष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन' हुआ। कवि-कथाकार पत्रकार राजे प्रसाद सिंह का निधन हुआ।

उ. प्र. पत्रकारिता संस्थान द्वारा वर्ष के 'अभिव्यक्ति पुरस्कार' निम्नलि को प्रदान किये गये–

गणेशशंकर विद्यार्थी स्मृति राष्ट्र एकता एवं समाजोत्थान पत्रकारिता पु स्कार 'चौथी दुनियां' के अरविन्द सिंह मदन मोहन मालवीय स्मृति ग्रामो पत्रकारिता पुरस्कार नवभारत टा के हमीरपुर संवाददाता महेश अवस्थी तथा खेल पत्रकारिता पुरस्कार वा के पदमपति शर्मा को दिया गया।

साहित्य का राष्ट्रीय पुरस्कार शुकदेव प्रसाद को दिया गया ।

प्रो. कैलासचंद्र भाटिया को उनकी भाषायी सेवाओं के लिए राष्ट्रपति ने उनको 'संपर्क भाषा हिंदी तथा भारतीय भाषाएं' ग्रंथ भेंट कर सम्मानित किया । अखिल भारतीय हिंदी संस्था संघ नई दिल्ली की मिलन गोष्ठी संपन्न हुई । बंबई विद्यापीठ की एकांकी प्रतियोगिता संपन्न हुई । भारतीय युवा साहित्य परिषद पटना द्वारा कविता व लघु पत्रिका प्रतियोगिता आयोजित की गयी । हैदराबाद विश्वविद्यालय में अनुवाद, हिंदी और दक्षिण भाषाओं पर व्याख्यानमालाओं का आयोजन किया गया ।

केरल हिंदी प्रचार सभा तिरुवंतपुरम के तत्वावधान में हिंदी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया । आंध्र प्रदेश हिंदी प्रचार सभा में हिंदी पंडितों का अधिवेशन बुलाया । गुलबर्गा विश्वविद्यालय के तत्वावधान में कर्नाटक के चार जिलों के हिंदी, कन्नड़ मराठी तथा तेलुगु के सर्वश्रेष्ठ रचनाकारों को उपकुलपति श्री नायक ने पुरस्कृत किया । दक्षिण भारत हिंदी प्रतिष्ठान के वार्षिक समारोह में राष्ट्रपति ने गोविन्द शिनाम (केरल), डॉ. वीर जगन्नाथन (तमिलनाडु), वी. आर. नारायणन (कर्नाटक) और डा. आर. माधवराव (आंध्र) को हिंदी साहित्य में उनके योगदान के लिए पुरस्कृत किया । आथर्स गिल्ड आफ इंडिया के तत्वावधान में डॉ. सत्यपाल चुग के काव्य-संग्रह 'अवला कहो न सबला' पर विचार गोष्ठी का आयोजन किया। दक्षिण भारत के ग्राम्यांचलों में कार्यरत एक मात्र हिंदी विद्यालय के प्राचार्य टी. स्वामी दास की अध्यक्षता में हिंदी, उर्दू, तेलुगु के कवियों, पत्रकारों और स्वतंत्रता सेनानियों को 'सेवा रत्न' उपाधि से समलंकृत किया गया । हिंदी अकादमी दिल्ली के स्थापना-दिवस पर हिंदी-उर्दू संगोष्ठी का आयोजन किया गया ।

उ. प्र. हिंदी संस्थान ने, डॉ. राम कुमार वर्मा और 'अज्ञेय' को 'भारत-भारती' पुरस्कार से सम्मानित किया । हिंदी-साहित्य जागरण समिति कादीपुर; सुल्तानपुर द्वारा राष्ट्रभाषा गोष्ठी का आयोजन किया गया । संतराम बी. ए. की जन्मशताब्दी मनायी गयी । केरल की सभी शिक्षण संस्थाओं में राष्ट्रगान, अनिवार्य किया गया । भारतीय भाषाओं में 'बाल साहित्य' विषयक संगोष्ठी का आयोजन आई. आई. टी. कानपुर में किया गया। श्रमायुक्त उ. प्र. ने 'श्रमजीवी' मासिक पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ किया । हिंदी ब्लिट्ज की रजत जयंती पर 'राष्ट्रीय एकता के निर्माण में जन प्रचार माध्यमों की भूमिका' पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया । राष्ट्रभाषा व संविधान के अपमान के अभियोग में न्यायपालिका द्वारा दंडित करुणानिधि को राज्य सरकार ने क्षमादान दिया ।

साहित्य अकादमी, भारतीय भाषा परिषद, कलकत्ता एवं बुंदेलखंड विश्वविद्यालयों ने मैथिलीशरण गुप्त शताब्दी पर तीन दिवसीय गोष्ठियों का आयोजन किया। गृहमंत्री सुश्री सरला दुबे, राम आहूजा, रमेशचन्द्र शर्मा, विष्णुदत्त शर्मा को वर्ष १९८४ के लिए और शिवचरण मंत्री, आशीष बोस, दशरथलाल खरे, सिराजुद्दीन सिद्दीक, परिपूर्णानंद वर्मा, बसंतीलाल और जगदीशचंद्र दीक्षित को वर्ष १९८६ के लिए 'पं. गोविंद बल्लभ पंत पुरस्कार' से सम्मानित किया गया।

वर्ष १९८६ का 'राष्ट्रीय आत्मा पुरस्कार' इंदू सक्सेना, हुल्लड़ मुरादाबादी और ज्ञानवती सक्सेना को दिया गया। भारत-भवन भोपाल की पांचवीं वर्ष गांठ पर रंगकर्मी इब्राहम अलकाजी, चित्रकार नारायण, संगीतकार श्रीधर वेन्द्रे और नर्तक पं. बिरजू महाराज को कालिदास सम्मान से तथा साहित्यकारों व लोक कलाकारों को 'तुलसी' और 'शिखर' सम्मान प्रदान किया गया। अल्हड़ बीकानेरी को काका हाथरसी पुरस्कार दिया गया। दिल्ली में महाभारत शोध-संदर्भ विषयक अंतरराष्ट्रीय गोष्ठी का आयोजन किया गया। चित्रकूट में रामायण मेला और अयोध्या में संस्कृत सम्मेलन हुआ। भारतीय बाल कल्याण संस्थान कानपुर ने श्रीमती शकुंतला सिरोठिया, रामबचन सिंह, आनंद, मनोहर वर्मा, हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, एवं भीष्म सिंह चौहान को पुरस्कृत किया।

साहित्य अकादमी ने भारतीय भाषाओं के लेखकों को २२ पुरस्कार दिये। साहित्य अकादमी ने भारतीय साहित्य कोश का प्रथम खंड प्रकाशित किया। भारतीय संविधान के हिंदी पाठ को विधि सम्मत व प्राधिकृत बनाने के लिए ५६ वां संविधान-संशोधन विधेयक पारित किया गया। भारतीय भाषा परिषद कलकत्ता ने राजें सेठ की कृति 'तत्सम' पर 'रामकुमार भुआलका' पुरस्कार प्रदान किया।

रमा प्रसाद घिल्डियाल, विनोद रस्तोगी, कैलाश कल्पित, श्रीमती चं मुखी ओझा, गोविंद शर्मा (राजस्थान), बालशौरि रेड्डी, शिवकुमार गोयल एवं शोभनाथ लाल को 'शकुंतला सिरोठिया बाल साहित्य पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास की पांडुलिपियों पर पटना के श्री ओंकार प्रसाद सिंह को दिल्ली प्रशासन ने पुरस्कृत किया। वाराणसी में तीन दिवसीय हिंदी-मेले का आयोजन किया गया। कुबेर सरल जबलपुर को 'रामपुरिया स्मृति पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। उ.प्र. हिंदी संस्थान ने हिंदी भाषी रचनाकारों के साथ ही १२ हिंदीतर साहित्यकारों को भी पुरस्कृत किया।

पत्रकारिता में रचनात्मक अवदान के लिए जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी, क्षेमचंद्र सुमन और मदनगोपाल को भारतेंदु पुरस्कार दिये गये। हिंदी विधि प्रति

उच्च न्यायालय खंडपीठ लखनऊ ने अपने कर्मचारियों को हिंदी में काम करने पर पुरस्कृत किया । कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर को हरिदत्त शर्मा जयंती पुरस्कार से सम्मानित किया गया । अखिल भारतीय हिंदी संस्था संघ ने 'राजभाषा सम्मेलन' आयोजित किया । उ. प्र. सरकार ने प्रदेश के २३ विपन्न-वृद्ध कलाकारों–लेखकों को मासिक वृत्ति देना स्वीकार किया । आथर्स गिल्ड आफ इंडिया का समारोह राजेन्द्र यादव की अध्यक्षता में हुआ । राजस्थान साहित्य अकादमी ने राजस्थान-लेखक-सम्मेलन का आयोजन किया । राजस्थान साहित्य अकादमी के सर्वोच्च पुरस्कार' से हरीश भदानी को समलंकृत किया गया ।

साहित्यकार शंभूनाथ वाजपेयी दिवंगत हुए । आकाशवाणी पत्रिका का प्रकाशन बंद हुआ । अवधी साहित्य संस्थान फैजाबाद का पंचम समारोह आयोजित किया गया । लक्ष्मण सिंह खन्ना देहरादून को [illegible] पर हिंदी सर्जन का प्रथम पुरस्कार दिया गया । दैनिक जागरण (कानपुर), मधुर कथाएं पत्रिका और हिंदी साप्ताहिक 'राष्ट्रपति' को 'मातृश्री' पुरस्कार से समलंकृत किया गया । हिंदी अकादमी दिल्ली में अनुवाद विषय पर गोष्ठी हुई । उ. प्र. हिंदी संस्थान ने 'प्रेमचंद जन्म शताब्दी संगोष्ठी' का आयोजन किया । राजस्थानी शब्दकोश के रचयिता पद्मश्री सीताराम लालस दिवंगत हुए । डॉ. बरसानेलाल चतुर्वेदी को 'चकल्लस पुरस्कार' से सम्मानित किया गया । उ. प्र. हिंदी संस्थान में डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी को 'प्रथम गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार १९८६' से सम्मानित किया गया । बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार ख्वाजा अहमद अब्बास का निधन हुआ । भारत भवन भोपाल में कविता की त्रैवार्षिकी पर संगोष्ठी का आयोजन हुआ । साप्ताहिक हिंदुस्तान के ईश्वर सिंह वैश्य व नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल दिवंगत हुए । सरोजिनी प्रीतम को 'कामिल बुल्के पुरस्कार' दिया गया । सूरदास की ५०९ वीं जयंती आगरा में मनायी गयी । अक्षयकुमार जैन, मोहन लाल गुप्त, डॉ. भगवानदास अरोड़ा एवं ईश्वरानंद सिंह को पत्रकारिता दिवस पर वाराणसी में सम्मानित किया गया । डॉ. प्रभाकर माचवे को 'क्रिटिक सर्किल आफ इंडिया' पुरस्कार से नयी दिल्ली में सम्मानित किया गया ।

१९८८

प्रख्यात कवयित्री महादेवी वर्मा का निधन हुआ । देवराज 'दिनेश' दिवंगत हुए । रूस में 'शाश्वत भारत' पुस्तक प्रदर्शनी आयोजित की गयी । इस प्रदर्शनी में 'महाभारत' के दो खंड रूसी भाषा में प्रदर्शित किये गये । डॉ. नारायण दत्त पालीवाल, रमेश गौड़, सुरेश नीरव, रमाकांत गोस्वामी, डॉ. रामदत्त वशिष्ठ, चेतन जैन, रामनरेश ओझा, अनीस अहमद खान एवं पुरुषोत्तम व्रज को 'के. एम. मुंशी

पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। डॉ. हरीश नवल के व्यंग्य संकलन 'बागपत के खरबूजे' को ज्ञानपीठ की नयी पीढ़ी प्रतियोगिता में सर्वश्रेष्ठ कृति का सम्मान दिया गया। 'तीसरी दुनिया' इंदौर के संपादक को 'स्व. श्रीकांत वर्मा स्मृति पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। पत्रकार नरेन्द्र तिवारी स्मृति पुरस्कार म. प्र. सरकार ने प्रारंभ किया। अहिंदी भाषी लेखकों द्वारा हिंदी में लिखित पुस्तकों के लिए म. प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति द्वारा आयोजित पुरस्कार प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार अम्बिका प्रसाद दिव्य पुरस्कार की पात्री आशा रानी व्होरा को, द्वितीय सैयद अमीर अली मीर पुरस्कार के पात्र डॉ. रामलाल कंवल तथा तृतीय हरिहर द्विवेदी पुरस्कार के पात्र डॉ. एन. वी. परांजपे को प्रदान किये गये। कवि शमशेर बहादुर सिंह को म. प्र. शासन द्वारा प्रारंभ प्रथम शासकीय पुरस्कार 'मैथिलीशरण गुप्त सम्मान' से सम्मानित किया गया। अनुवाद में सृजन सुख एवं विधि क्षेत्र में हिंदी विषयक संगोष्ठी का आयोजन नयी दिल्ली में हुआ। कानपुर में अंतरराष्ट्रीय स्तर के सांस्कृतिक केंद्र की स्थापना का शासकीय निर्णय लिया गया। महाकवि कालिदास महोत्सव का आयोजन प्रतापगढ़ में किया गया। जयपुर के साप्ताहिक पत्र 'निराला' के संपादक गोपाल गीतेश को 'शास्त्री राष्ट्रीय स्मारक' पुरस्कार प्रदान किया। जोधपुर के खोजी पत्रकार मनोज कु नागर को 'मावक अलंकरण' से समलंकृत किया गया। भारतीय पर्यावरण सोसायटी ने पर्यावरण संबंधी ३०० पृष्ठों की रिपोर्ट को हिंदी में भी प्रकाशित किया। प्रख्यात विद्वान प्रो. हरवंशलाल शर्मा का निधन हुआ।

श्री कन्हैयालाल सेठिया के काव्य संग्रह 'निग्रन्थ' पर भारतीय ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी पुरस्कार प्रदान किया गया। डॉ. नरेन्द्र कोहली को हिंदी अकादमी ने वर्ष ८५-८६ के लिए पुरस्कृत किया। बिहार सरकार ने हिंदी सेवी सम्मान-समारोह का आयोजन किया। इसी सम्मेलन में 'शिखर सम्मान-पुरस्कार' प्रारंभ करने की योजना प्रचलित की गयी। डॉ. नारायण दत्त तिवारी को काशी विद्यापीठ वाराणसी ने डी. लिट् की मानद उपाधि प्रदान की। गुयाना में 'मैथिलीशरण गुप्त शताब्दी समारोह' मनाया गया। भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयों में हिंदी में पी-एच. डी. के लिए ४५०० शोधार्थी नामित किये गये और लगभग १५०० को पी-एच. डी. के लिए अनुमोदित किया गया। राजस्थान साहित्य अकादमी में मन्नू भंडारी (दिल्ली), [illegible] राज (बूंदी) तथा गोपालदास (जयपुर) को विशिष्ट साहित्यकार सम्मान [illegible] समलंकृत किया। पं. कमलापति त्रिपाठी को 'दिनमान' का अतिथि संपादक बनाया गया। प्रख्यात नाटककार, लक्ष्मीनारायण

नत दिवंगत हुए । चिंतक अखंडानंद रस्वती ने इहलीला का संवरण किया । वीन्द्रनाथ ठाकुर की समस्त कृतियों के दी अनुवाद की प्रथम संस्करण की प्रतियां तुरंत बिकीं ।

बैसवारा (उन्नाव) के वरिष्ठ कवि नौराम द्विवेदी की पुण्य तिथि जिला-कारी उन्नाव की अध्यक्षता में मनायी गी । लंदन के स्कूलों में वाल्मीकि-ायण का अध्ययन-अध्यापन प्रारंभ आ। विश्व की समस्त भाषाओं के शब्द योग करने में सक्षम तकनीक वाला म्प्यूटर, फिलीपींस में प्रवासी भारतीय नी ने तैयार किया। स्व. अंबिका प्रसाद स के ग्रंथों का रूसी भाषा में अनुवाद आ । रामलीला मंचन समिति इटावा मलीला कोश तैयार करने में गत वर्ष यास रत रही । हिंदी साहित्य सम्मे-न प्रयाग ने वर्ष १९८५ का मंगला-साद पुरस्कार डॉ. रामानंद तिवारी तपुर को उनके ग्रंथ 'अभिनव रस-मांसा' पर प्रदान किया । २६ नवंबर ९८७ को संविधान का हिंदी पाठ द के दोनों सदनों द्वारा अनुमोदित या गया । प्राचीन वैदिक गणित पर संधान की योजना का अनुमोदन भारत कार द्वारा किया गया । म. प्र. पत्र खक संघ का प्रादेशिक सम्मेलन राजेन्द्र स्थी की अध्यक्षता में इंदौर में हुआ । . प्र. सरकार ने अयोध्या में 'रामायण ले का आयोजन किया । डॉ. धर्मवीर भारती संपादक पद से निवृत्त हुए । प्रख्यात विद्वान प्रो. दीननाथ शुक्ल दिवंगत हुए । ४५० को पी-एच. डी. और १०० को डी. लिट् हिंदी विषयों में प्रदान की गयी।

पं. मदन मोहन मालवीय की १२७ वीं पुण्य तिथि मनायी गयी । राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी पर दूरदर्शन-फिल्म का निर्माण प्रारंभ किया गया। साहित्य अकादमी दिल्ली ने सूफी कविता पर राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया । फैजाबाद में पूर्वांचल-पत्रकार सम्मेलन हुआ । डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की १०३ वीं जयंती मनायी गयी । रामचरित मानस पर प्रथम शोध कर्ता इटली निवासी डॉ. एल. पी. तैरिस-तोरी की १०१ वीं जयंती देश के १७ स्थानों पर मनायी गयी। शिक्षाविद प्रो. परमानंद का इलाहाबाद में निधन हुआ। रामकथा पर अद्यतन लिखी गयी रामायणों की संख्या ६०१ हुई । अहिंदी भाषी क्षेत्रों में हिंदी प्राध्यापकों की नियुक्ति का व्यय अनुदान केंद्र सरकार ने स्वीकार किया। लघु समाचार पत्रों के संपादकों का सम्मेलन भिवानी (हरियाणा) में हुआ । जनवादी लेखक संघ का राष्ट्रीय सम्मेलन सितंबर में भोपाल में हुआ। कन्नौज हिंदी साहित्य सम्मेलन में डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी (नवनीत संपादक) को 'अब्दुर्रहीम खानखाना' पदक से सम्मानित किया गया । इसी अवसर पर वियोगी हरि, डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन', लक्ष्मीशंकर व्यास, डॉ. वेद प्रताप वैदिक, डॉ. व्रजेश्वर वर्मा,

श्रीलाल शुक्ल, श्याम रुद्र पाठक, पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी, गिरिराज किशोर, शंभुनाथ आदि का भी सम्मान किया गया। राजधानी के प्रख्यात पत्रकार हरिकृष्ण त्रिवेदी दिवंगत हुए। अनूप जलोटा एवं डॉ. पुंडरीक को 'मानस संगम पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। रामचरितमानस पर २५२ वां शोध प्रकाश में आया। नवभारत टाइम्स के राजेन्द्र माथुर को 'सद्भावना पुरस्कार' के लिए नामित किया गया। हिंदी अकादमी दिल्ली का साहित्यिक–कृति-पुरस्कार-प्रदान समारोह आयोजित किया गया। राजस्थान साहित्य अकादमी की उपाध्यक्षा–कवयित्री डॉ. सुधा गुप्त दिवंगत हुईं। दिल्ली और कलकत्ता में पुस्तक मेलों का आयोजन हुआ। राजस्थान के सीमावर्ती जिलों में 'सचल आकाशवाणी केंद्र' खोले गये। 'हंस' के लेखकों–शिवमूर्ति, उदय प्रकाश, ललित कार्त्तिकेय, प्रेम कुमार मणि, वीर राजा, चंद्रकिशोर जायसवाल एवं रघुनंदन त्रिवेदी को हंस प्रकाशन ने पुरस्कृत किया। हल्दीघाटी काव्य के रचयिता श्याम नारायण पाण्डेय का प्रबंध काव्य 'परशुराम' समापन व तैयार होने के अंतिम चरण में पाया गया। चंद्रशेखर आजाद की १०२ वीं जयंती, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की ५० वीं पुण्य तिथि तथा विवेकानंद जयंती देश भर में मनायी गयी। राजेश जोशी को श्रीकांत वर्मा पुरस्कार से सम्मानित किया गया। सूर स्मारक मंडल आगरा ने सूरदास की कृतियों को १४ भाषाओं में अनुवादित करने का कार्यक्रम बनाया। इसी अवसर पर सूर-संगोष्ठी का आयोजन किया गया। गणितज्ञ रामानुजम् पर हिन्दी में वृत्त-चित्र निर्माण प्रारंभ किया गया।

देश के प्रख्यात एवं वरिष्ठ ५२ साहित्यकारों के साक्षात्कार दूरदर्शन पर रिकार्ड किये गये। मुद्रा तत्व के विद्वान डॉ. परमेश्वरी लाल गुप्त को अमरीकन न्यूमिस्मेटिक सोसायटी ने वर्ष १९८८ के 'हेंटिंग्टन पदक' से सम्मानित किया। कानपुर की साहित्यिक सांस्कृतिक संस्था संगमन ने विभिन्न भाषाओं के बाल साहित्यकारों को पुरस्कृत किया। हिंदी प्रचारिणी समिति कानपुर और राजभाषा परिषद कानपुर के संयुक्त तत्वावधान में हिंदी-दिवस समारोह, निबंध आलेख प्रतियोगिता का आयोजन मानद निदेशक डॉ. श्याम नारायण पाण्डेय कानपुर विश्वविद्यालय ने किया। स्व. श्रीकांत वर्मा को उनकी पुस्तक 'मगध' पर साहित्य अकादमी पुरस्कार प्रदान किया गया। वर्ष का उल्लेखनीय धारावाहिक 'रामायण' रहा।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिंदी विभागाध्यक्ष डॉ. जगदीश गुप्त ने राजभाषा अधिनियम की धारा (३) की वैधता पर उच्च न्यायालय में एक याचिका प्रस्तुत की। हिंदी अकादमी दिल्ली ने हिंदी भाषा और साहित्य की

(शेषांश पृष्ठ २० पर)

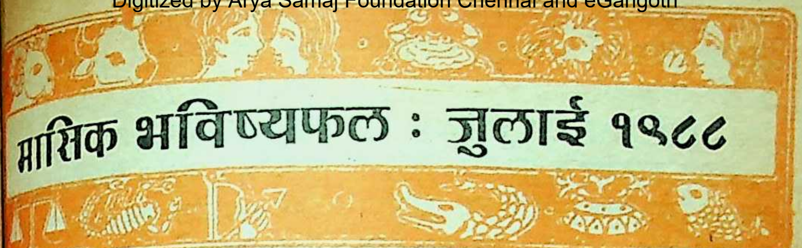

मासिक भविष्यफल : जुलाई १९८८

□ पंडित वी. के. तिवारी, 'ज्योतिषशिरोमणि'

(१४ अप्रैल–१३ मई)

जुलाई तक नये संपर्क होंगे । की संख्या बढ़ेगी । चिंता एवं में कमी रहेगी । जल्दबाजी में न लें । प्रयास से सफलता मिलेगी । १६ जुलाई से २९ जुलाई तक व्यय । आर्थिक निर्बलता प्रतीत होगी । से विवाद होगा । बाद में परिवार- रहेगा । सर्विस में यश रहेगा । में यात्रा व व्यस्तता बढ़ेगी । से प्रसन्नता मिलेगी ।

(१४ मई–१४ जून)

जून तक उत्तरोत्तर परिवार व से वांछित सहयोग एवं अनुकूल मिलेगा । खाने-पीने की सुविधाएं । महत्वपूर्ण व्यक्तियों से आशातीत होगा । विरोधी पराजित होंगे । प्रयास से ही सफलता हस्तगत होगी । में लाभ बढ़ेगा । आमोद-प्रमोद के आयेंगे । विवाह अथवा रोमांस में मिलेगी । प्रतियोगिता में विजय होगी । समय का भरपूर लाभ उठाने हेतु प्रयासों को प्राथमिकता दें ।

मिथुन : (१५ जून–१६ जुलाई)

इस माह भी आपको विशेष सुनियोजित, सुविचारित एवं चिंतन उपरांत ही कोई कदम उठाना चाहिये । शीघ्रता हानिप्रद रहेगी । कपड़े के व्यवसाय में हानि के योग हैं । संघर्षजन्य सफलता मिलेगी । यश के लिए कटिबद्ध रहना होगा । आर्थिक स्थिति सामान्य रहेगी । विलासिता पर व्यय बढ़ेगा । लंबी यात्रा में व्यवधान उपस्थित होंगे । हृदय में भावुकता संचारित होगी । शुभ समाचार मासांत में मिलेंगे ।

कर्क : (१७ जुलाई–१५ अगस्त)

विरोधी सक्रियता एवं योजनाबद्ध रूप से हानि पहुंचाने का प्रयास करेंगे । स्नेही वर्ग से अनावश्यक मतभेद एवं कटुता बढ़ेगी । मनमुटाव के दुष्परिणाम से बचने हेतु धैर्य व शांतिपूर्वक चिंतन कर अपनी राय व्यक्त करना हितकर होगा । धन लाभ में कमी होगी । विद्यार्थी, लेखक एवं शिक्षक वर्ग त्रस्त रहेगा । वकील एवं व्यवसायी

सामान्य लाभ प्राप्त करेंगे । राजनीति में विरोधी सफल होते प्रतीत होंगे । स्वास्थ्य के प्रति सजग रहें ।

सिंह : (१६ अगस्त–१६ सितंबर)

संतान की ओर से प्रसन्नता बढ़ेगी । उन पर व्यय होगा । उनसे यश बढ़ेगा । परिवार सुख उत्तम है । स्वास्थ्य ठीक रहेगा । राजनेता एवं वकीलों के लिए श्रेष्ठ समय है । रुके हुए प्रकरण निपटेंगे । सुखद निर्णय व समाचार मिलेंगे । नौकरी व व्यवसाय में समस्यायें बढ़ेंगी । स्त्री-पक्ष से कष्ट व चिंता मिलेगी । १७ जुलाई से स्वास्थ्य, धन, परिवार आय, सफलता, रोजगार आदि में मासांत तक अनुकूलता विशेष कौशल से ही मिलेगी । व्यवसायी व राजनीतिज्ञ लाभ में रहेंगे ।

कन्या : (१७ सितंबर –१६ अक्तूबर)

यह माह वर्ष का श्रेष्ठ समय सिद्ध हो सकता है। इसको स्मरणीय बनाने हेतु योजनाबद्ध लक्ष्य प्राप्ति के प्रयास करें । सफलता साथ-साथ चलेगी । यश, स्वास्थ्य, प्रतिष्ठा बढ़ेगी । वस्त्र, आभूषण प्राप्ति के योग बढ़ेंगे । स्थायी लाभ अथवा स्थायी संपत्ति से आय-वृद्धि होगी । संतान से गौरव बढ़ेगा । राजनीति व व्यवसाय में विशेष सफलता व उपलब्धि मिलेगी । लेखक व कलाकार यश प्राप्त करेंगे । नौकरी में अधिकारियों की कृपा रहेगी ।

तुला : (१७ अक्तूबर–१५ नवंबर)

इस माह में यात्रा के उद्देश्य की पूर्ति संदिग्ध है । कार्य पूरे होने में रुकावटें आयेंगी । परिवार व आत्मीय
वैचारिक मतभेद व मानसिक कष्ट
होंगे । राजनीतिज्ञों के लिए विशेष
कूलता रहेगी । लेखक, शिक्षक एवं
कार त्रस्त रहेंगे । विद्यार्थियों की
होगी । भौतिक सुख बढ़ेंगे । १६
स्थिति पूर्णत: क्रमश: पक्ष में होती
लक्षित होगी । मनोबल बनाये रखें ।
आदि के अवसर अच्छे हैं ।

वृश्चिक : (१६ नवंबर–१५ दिसंबर)

प्रतिकूलता के दौर से गुजरना
आपरेशन आदि स्थगित करें । पत्नी
स्वास्थ्य की चिंता रहेगी । प्रेम आदि
अपयश व असफलता मिलेगी ।
अधिक होगी । राजनीति में विरोधी
पहुंचायेंगे । व्यवसाय में हानि के
के प्रति सजग रहें । पुत्र एवं कनिष्ठ
से वांछित सहयोग मिलेगा । सामाजिक
कार्यकर्ता यश प्राप्त करेंगे । पत्रकार
शिक्षक वर्ग पर प्रतिकूलता का
कम होगा । धन लाभ यथेष्ठ रहेगा ।
आदि की संभावना है । १७ जुलाई
प्रतिकूलता में आंशिक न्यूनता

धनु : (१६ दिसंबर–१३ जनवरी)

२९ जुलाई तक विशेष रूप से
खराब समय सिद्ध हो सकता है ।
स्थगित करना दुष्कर होगा ।
कष्ट मिलेगा । व्यय बढ़ेगा । चिंता
मानसिक व शारीरिक कष्ट
मेहमानों से अव्यवस्था बढ़ेगी ।
अधिकारी वर्ग से पीड़ा होगी ।

रों में विवाद गहरायेगा । स्त्री-सुख मी होगी । राजनीति में शत्रु शिकस्त ता है । अग्नि, ज्वर एवं चोट के विशेष सतर्क रहें । जोखिम कतई न ं ।

: (१४ जनवरी–१२ फरवरी)

तान पक्ष पर प्रेम-वर्षा बढ़ेगी । शत्रु ित होंगे । विवाद सुलझेंगे । राज- न एवं वकील वर्ग सफल रहेगा । ार सुख संतोषप्रद रहेगा । प्रेम में परिणाम मिलेंगे । प्रतियोगिता में ता मिलेगी । लेखन व संगीत के में विशेष उपलब्धि होगी । महत्वपूर्ण से परिचय बढ़ेगा । २० जुलाई तक अनुकूलता रहेगी । लक्ष्य के अनु- प्रयासों के निश्चय ही श्रेष्ठ परिणाम ंगे ।

: (१३ फरवरी–१४ मार्च)

र्थिक स्थिति डांवाडोल रहेगी । सफलता नहीं मिलेगी । योजनाएं ता का मुंह नहीं देख सकेंगी । मान- कष्ट एवं द्विविधा की क्षणिकाएं रहेंगी । लंबी यात्रा के योग हैं । ीति व रोजगार में विशेष पीड़ा ी । लेखक व शिक्षक सामान्यत: कम ता पायेंगे । जमीन-जायदाद से लाभ कम होगा, एवं चिंता बढ़ेगी । १७ जुलाई के उपरांत प्रतिकूलता क्रमशः कम होती जायेगी । यश, गौरव एवं सफलता के प्रति आशा बंधेगी ।

मीन : (१५ मार्च–१३ अप्रैल)

परिवार से पूर्ण सुख, सौहार्द्र एवं अपनत्व प्राप्त होगा । मातृ सुख बढ़ेगा । विद्वान, उच्चवर्ग एवं महत्वपूर्ण व्यक्तियों से पूर्ण लाभ, परिचय एवं सहयोग मिलेगा । उपलब्धि का माह रहेगा । राजनीतिज्ञों के लिए विशेष अच्छा समय है । जनसहयोग व संघर्ष बढ़ेगा, सेवक-सुख मिलेगा । धर्म व अध्यात्म में रुचि बढ़ेगी । पत्रकार व शिक्षक वर्ग के लिए सामान्य समय है । सर्विस एवं प्रशासनिक वर्ग के लिए श्रेष्ठ है । १६ जुलाई से अनुकूलता की प्रखर रश्मियों की चमक कम होती जायेगी । समय का सदुपयोग करें ।

जुलाई मास के व्रत एवं त्योहार

२ जुलाई–चतुर्थी व्रत
७ जुलाई–एकादशी व्रत
११ जुलाई–प्रदोष व्रत
२३ जुलाई–श्रावण आरंभ
२५ जुलाई–देवशयनी एकादशी व्रत
२६ जुलाई–प्रदोष व्रत ।
२९ जुलाई–गुरु व्यास पूजन ।

□

महिला ने अपनी नयी पड़ोसन से कहा, 'बहन, मुझे यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि रे पति कवि हैं । कभी-कभी बोरियत के क्षणों में मेरा भी वक्त कट जाया करेगा ।'

'हां-हां, क्यों नहीं ? आखिर पिछले साल से उनके साथ मैं भी तो अपना वक्त ही रही हूं ।' पड़ोसन ने उत्तर दिया ।

□

साधारण तकलीफों में प्राथमिक उपचा

□ प्रमोद कुमार

घायलों, बीमारों को पहली सहायता पहुंचाना ही प्राथमिक उपचार है। दुर्घटनाएं कहीं भी, कभी भी हो सकती है। अगर प्राथमिक उपचार की जानकारी है तो मामूली दुर्घटनाओं को गंभीर रूप लेने से रोका जा सकता है। डाक्टर के पहुंचने से पहले घायल व बीमार को जो उपचार दिया जाता है, वह चिकित्सा के मूल सिद्धांतों पर आधारित है। इसका ज्ञान हर शिक्षित को होना जरूरी है, ताकि आकस्मिक दुर्घटना या बीमारी के समय, जब तक कि चिकित्सक न पहुंचे, रोगी की सुरक्षित देखभाल की जा सके।

हर व्यक्ति के जीवन में ऐसे क्षण आते हैं जब जान पर आ बनती है। तब उचित ज्ञान व देखभाल के बिना उसकी मृत्यु हो सकती है।

ऐसे समय में प्राथमिक सहायता मिल जाये तो उसकी जिंदगी अवश्य ही बच सकती है।

यहां कुछ ऐसे ही छोटे-छोटे संकटों की प्राथमिक उपचार की जानकारी दी जा रही है, जो कभी भी उत्पन्न हो सकते हैं, और जो डाक्टरी सहायता से पहले अति लाभकारी सिद्ध होंगे।

जल जाना :

रसोई, स्टोव, दीवाली पर आति
आदि से ज्यादातर जलने की दुर्घट
जाती हैं, जो जानलेवा भी सा
सकती हैं।

जले भाग को ठंडे पानी में डुबाकर
बर्फ हो तो बर्फ से पानी ठंडा करें,
हवा करें। आग, बिजली या अन्य
तत्काल पानी डालना लाभदायक

अगर जलने से छाले हो गये हों
उन्हें साफ कपड़े से ढक दें, ताकि गर्द
व मक्खी न बैठें। जेंटीन वॉयलेट
खुला रखें। मक्खन, तेल, चिकनाई
आदि न लगावें।

छाले फूट गये हों तो उन्हें साफ
कीटाणुनाशक दवा लगाने के बाद
पट्टी करें, ताकि संक्रमण न हो।

अगर कपड़ों में आग लग गयी है
मरीज को जमीन पर लिटाकर
रजाई से लपेटकर आग बुझावें।
हाथों को बचावें व हाथों से आग बु
कोशिश न करें।

अगर व्यक्ति अकेला हो व
आग लग जाये तो उसे चाहिये
सहायता के लिए इधर-उधर न

अन्यथा आग और भड़केगी । उसे वहीं फर्श पर इधर-उधर लेटकर आग बुझाने की कोशिश करनी चाहिये ।

कम जला है तो रोगी को गर्म चाय कॉफी आदि दें, परंतु ज्यादा जला है तो फौरन डाक्टर को दिखावें ।

कट जाना :

घर में चाकू या औजार आदि से उंगली कट सकती है, खून बहने लग सकता है ।

घाव को धोयें व हाथ से उस जगह पर सीधा दबाव डाल कर रखें । अगर कोई बड़ी नस नहीं कटी होगी तो थोड़ी देर में खून बहना बंद हो जायेगा ।

घायल को ऐसे स्थान पर स्थिर रखें जहां रक्त स्राव का वेग कम रहे । अंगों को टूटने की अवस्था को छोड़कर अन्य सभी अवस्थाओं में जिस अंग से रक्त स्राव हो रहा हो उसे ऊंचा रखें । बाहरी वस्तु शीशा आदि निकाल देवें । घाव पर हवा लगने दें । जब खून निकलना बंद हो जाये तो एंटीसेप्टीक दवा लगाकर पट्टी कर दें ।

अगर दबाव से खून बहना बंद न हो तो घाव के नजदीक हाथ या पैर बांध दें । ध्यान रखें बांधने के लिए केवल मुड़ा हुआ कपड़ा या रूमाल व बेल्ट ही काम में लावें । रस्सी, धागा, तार से हरगिज न बांधें । इतना कसकर भी न बांधें कि अंग नीला पड़ जाये । बंधन को हर आधे घंटे बाद १-२ सेकंड के लिए ढीला करके देखें कि खून बहना बंद हुआ है या नहीं, तथा खून का दौरा भी न रुकने पाये ।

रेत, किरोसीन, चूना आदि डालकर खून रोकने की कोशिश न करें ।

खरोंच, मामूली घाव या छिलना :

छोटे-मोटे घाव होने या त्वचा छिल जाने से प्रायः खून निकलकर अपने आप बंद हो जाता है । खून का थक्का बनकर घाव को बंद कर देता है । मोच-खरोंच ज्यादा गंभीर नहीं होती, परंतु काफी पीड़ा-दायक होती है व कई बार सूजन भी हो जाती है ।

पॉलीथीन की थैली में बर्फ के टुकड़े व नमक डालकर मोच-खरोंच पर रखें । सूजन कम हो जायेगी व आराम महसूस होगा ।

छिले घाव को एंटीसेप्टीक घोल से रुई के फाहे से साफ करके पट्टी बांध दें ।

अगर घाव गहरा हो व खून रिस रहा हो तो एक और कपड़े की गद्दी बनाकर पहली पर रखकर पट्टी करें, पहली वाली पट्टी को न हटावें ।

स्कूटर-कार से दुर्घटना :

दुर्घटना-स्थल से व्यक्ति को तब तक न हटावें जब तक कि सुरक्षा की दृष्टि से ऐसा करना आवश्यक न हो । घायल को धीरज बंधावें व आराम पहुंचाने की कोशिश करें ।

अगर दुर्घटनाग्रस्त व्यक्ति के मुंह, नाक, कान से खून आ रहा हो तो हो सकता है उसके सिर में कहीं गहरी चोट लगी हो, उसे हिलावें-डुलावें नहीं, इससे और ज्यादा खून बहेगा ।

अगर टांगें सुन्न पड़ती जा रही हों तो

गर्दन या पीठ पर गहरी चोट हो सकती है। तब भी उसे अनावश्यक न हिलावें अन्यथा लकवा व मृत्यु हो सकती है।

घायल को सांस लेने में तकलीफ हो रही हो तो उसका सिर पीछे की तरफ झुका दें। इससे हवा आने-जाने के रास्ते खुल जायेंगे।

अगर सिर में चोट हो तो घायल को थोड़ी थोड़ी देर में पूछते रहें कि दर्द कैसा है? उसे बेहोशी, उल्टी, दौरा तो नहीं आ रहा? आदि।

बिजली का झटका लगना :

सबसे पहले स्वीच या मेन स्वीच बंद करें। अगर आप स्वीच बंद नहीं कर पा रहे हैं तो रोगी को बिजली के तार से अलग करें। जल्दबाजी में आप उसे न छुएं, यह आपके लिए भी खतरनाक हो सकता है। इसके लिए सूखी लकड़ी, रस्सी या कपड़ा काम में लावें। आप खुद भी सूखी जगह पर खड़े रहकर यह करें।

बिजली का तार छूट जाने पर अगर उसकी नाड़ी चल रही हो तो उसे खुली हवा में लिटावें व मुंह से कृत्रिम श्वास कई बार दें।

डूबते को बचाने के बाद :

पानी से निकालने के बाद अगर नब्ज धीरे-धीरे चल रही हो तो तुरंत कृत्रिम सांस दें। याद रखें सांस लेना बंद करने के बाद केवल ४ मिनट ही जिंदगी रहती है। इसलिए उसके पेट में से पानी निकालने के फेर में न पड़कर, बिना समय गंवाये कृत्रिम सांस दें। उसके गीले कपड़े उतार कर सूखे वस्त्रों से शरीर लपेटें।

दम घुटना :

सर्दियों में बंद कमरे में सिगड़ी रखने से या कहीं आग लग जाने से, फेफड़ों में धुआं भर जाने से, बेहोशी आ सकती है।

विषैली गैस को बाहर निकालने के लिए कमरे के दरवाजे, खिड़कियां, रोशनदान आदि खोल दें। रोगी को बाहर खुले में लिटाकर कृत्रिम सांस दें।

सिर पीछे को झुकाकर निचला जबड़ा उठा दें, इससे सांस आने जाने के सारे रास्ते खुल जायेंगे। इसके बाद उसकी नाक बंद करके मुंह से मुंह में इतनी हवा भरें, जिससे उसकी छाती फूल उठे। एक मिनट में १०–१२ बार ऐसा करें, जल्दी ही रोगी को होश आ जायेगा।

जहर खा लेना :

प्राय: घरों में बच्चे सर्फ, डिटोल, फिनाइल, सिगरेट के टोटे, नेफ्थलीन की गोलियां, गलत ट्यूब आदि खा जाते हैं। तब उनके पेट में पीड़ा, वमन, टट्टियां लगनी शुरू हो जाती हैं, गले व पेट में जलन होने लगती है।

जहरीली वस्तु खा लेने का संदेह होने पर पता लगावें कि बच्चे ने क्या खाया है व उसे उल्टी करावें। बच्चे के मुंह में उंगली डालें या गर्म पानी में एक बड़ा चम्मच नमक या सरसों का तेल डालकर पिलावें। इससे उल्टी हो जायेगी।

उल्टी के बाद उसे दूध, नींबू का पानी

या सादा पानी दें जिससे पेट में बचा हुआ जहर हल्का हो जाये।

अगर बच्चे ने तेजाब या क्षार खा लिया है व उसके मुंह व होंठ जल गये हैं, जिसे आप लाल-पीले दाग देखकर आसानी से पहचान सकते हैं, तो उसे उल्टी हरगिज न करावें। इन जहर से मुंह में जलन व पेट में ऐंठन शुरू हो जायेगी। उल्टी करने से भोजन नलिका को और ज्यादा नुकसान हो सकता है। तब उसे उस विष का प्रतिविष दें व खूब पानी पिलावें ताकि शरीर में विष हल्का हो।

अगर तेजाब पी लिया है तो खड़िया, चूने का पानी, बेकिंग पाउडर पिलावें। और अगर क्षार पी लिया है तो २ प्रतिशत सिरका, नींबू-संतरे का रस पिलावें।

इन दोनों ही परिस्थितियों में बच्चे को दूध, कच्चे अंडे, जौ का पानी, पानी में सोडा घोलकर पिलावें। इनसे उसे काफी आराम मिलेगा।

बच्चों को दस्त व डीहाइड्रेशन :

बच्चों को दस्त लगने की बीमारी आम है। दस्त के दौरान शरीर से तरल जल की अत्यधिक कमी हो जाती है। तब यदि, सावधानी न बरती जाये तो निर्जलीकरण या डीहाइड्रेशन हो सकता है व बच्चे की हालत गंभीर हो सकती है, नवजात की मृत्यु हो सकती है।

इसमें बच्चे को जोरों से प्यास लगना पेशाब बहुत कम आना, मुंह और आंखें सूख जाती है।

हर बार दस्त लगने पर शिशु को एक गिलास उबले ठंडे पानी में २ चम्मच चीनी या गुड़ व थोड़ा सा नमक डालकर पिलावें। इससे शिशु के शरीर में खत्म हुआ पानी फिर से पूरा होगा। बच्चे को अन्य तरल पदार्थ जैसे हल्की चाय, छाछ, चावल का पानी देते रहें।

जुकाम :

साधारणतया सर्दियों में व कभी-कभी गर्मियों में जुकाम हो जाता है। वैसे तो यह साधारण बीमारी है, परंतु फिर भी काफी परेशान कर देती है।

जुकाम बच्चों को अत्यधिक होता है। जुकाम में छींकना, खांसना, गले में खराश, नाक बहना, नाक बंद होना आदि तकलीफें हो जाती हैं।

जुकाम में आराम करना बेहतर रहता है। दिन में ३–४ बार नमक मिले गुनगुने पानी से गरारे करने से जुकाम के कीटाणु नष्ट होते हैं।

उबले पानी में नींबू निचोड़कर पीने से फायदा होता है।

जुकाम छूत का रोग है, अतः जगह-जगह न थूकें, न नाक साफ करें, अपना तौलिया, रूमाल अलग रखें।

लू लगना :

उत्तर भारत में ग्रीष्म ऋतु में लू का प्रकोप ज्यादा रहता है। इसमें प्यास अधिक लगती है व तेज धूप के कारण शरीर से पानी व लवण की कमी हो जाती है। तब तेज तपन में कम मात्रा में पानी पीने

से, तेज धूप व गर्म झोंकों के कारण लू लग सकती है।

अचानक तेज बुखार, आंखे लाल हो जाना, चक्कर आना, कमजोरी महसूस होना, सांस तेज चलना, बेहोशी-सी आना आदि इसके खास लक्षण हैं।

रोगी को शीतल पेय, खूब सारा पानी, पानी में नींबू व धनिया डालकर, प्याज-पुदीना आदि डालकर पिलावें।

शरीर का तापमान कम करने के लिए पानी के टब में लिटावें व धीरे-धीरे उसमें [illegible] ठंडा करें। रोगी को ठंडी जगह पर रखें। सिर व गर्दन पर तौलिया ठंडा करके रखें।

रोगी अगर बेहोश होने लगे तो सावधानीपूर्वक छाया में लिटाकर कपड़े ढीले करके मुंह पर ठंडे पानी के छींटे मारें।

होश आने पर साधारण नमक मिला-कर स्वच्छ पानी पिलावें।

—डी-७७ सेक्टर ३ बी,
पो. खेतड़ी नगर-३३३५०४ (राज.)

□

(पृष्ठ १२ का शेषांश)

करणीय सेवाओं के लिए वर्ष १९८५-८६ का पुरस्कार प्रदान किया। एफ्रो-एशियाई लेखक-सम्मेलन दिल्ली में हुआ। केरल हिंदी प्रचार सभा का हिंदी-समारोह, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास का मैथिलीशरण गुप्त जन्म-शती-समारोह, बंबई प्रांतीय राष्ट्रभाषा प्रचार सभा का पदवीदान समारोह, विदर्भ राष्ट्रभाषा समिति का स्वर्ण जयंती महोत्सव, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग व इलाहाबाद के समारोह संपन्न हुए।

इस वर्ष २६ स्तरीय स्मारिकाएं व अभिनंदन ग्रंथ भी प्रकाश में आये। समग्र रूप से वर्ष १९८७ साहित्यिक दृष्टि से समृद्ध रहा। **—केन्द्रीय उत्पाद एवं सीमा शुल्क, सर्वोदय नगर,** कानपुर, उ. प्र.

□

—प्रेमचन्द

प्रेम का एक ही मूल मंत्र है और वह है सेवा।

०००

—महात्मा गांधी

संतोष तो प्रयासों में है, उपलब्धियों में नहीं।

०००

जो व्यक्ति अपने रहस्य को छिपाये रखता है वह अपनी कुशलता को अपने हाथ में रखता है।

—हजरत उमर

०००

कमजोरी को मैं बुरा नहीं समझता, मूर्ख को मैं माफ कर देता हूं। मगर बेईमानी मुझे तीर-सी चुभती है।

□

यावर की तिलपट्टी

☐ कुमकुम शर्मा

ली पर तिल, तिल से जुड़ा तिल और तिल्ली से बनी तिलपट्टी। अर्थात् र की तिलपट्टी, जो कि यहां बड़े ने पर उत्पादित होकर क्विटलों में ष्ट्रीय स्तर पर निर्यात की जाती ो कि न केवल देशी लोगों की प्रिय की है, बल्कि विदेशी लोगों की जुबान ी इस कदर भा गयी है कि यहां से भर इसका निर्यात होता रहता है।

जस्थान की धार्मिक स्थली अजमेर ा के अंतर्गत ६० किलोमीटर दूर ुर मार्ग पर एक औद्योगिक नगरी र है। लगभग डेढ़ लाख की आबादी इस उपखंड में लगभग २० हजार तिलपट्टी के इस उद्योग से जुड़े हुए हैं। द्योग अब पुश्तैनी धंधे के रूप में पित हो चुका है। यहां के पाली बाजार, ेट, अजमेरी गेट आदि प्रमुख बाजारों बस्तियों में इस उद्योग की भव्यता सहज खी जा सकती है।

मारे देश में जिस प्रकार रेवाड़ी की ड़ियां प्रसिद्ध हैं, उसी प्रकार ब्यावर तिलपट्टी भी ख्यातिलब्ध हो चुकी है। ने में उतरने पर ज्ञात होता है कि सन १९३० में स्वर्गीय रामधन ने यहां शक्कर एवं गुड़ की रेवड़ियां बनाने का कार्य शुरू किया था जो लगभग २० वर्षो बाद 'गजक उद्योग' के रूप में परिवर्तित हो गया। तत्पश्चात १९७० तक यह उद्योग तिलपट्टी के उद्योग के रूप में स्थापित हो गया। बस तिलपट्टी की तेजी से बढ़ती मांग और जबरदस्त मुनाफे को देखकर यहां के कई व्यवसायी इस उद्योग में रम गये जो कि देखते-देखते उनका खानदानी पेशा हो चला। आज यहीं ब्यावर में लगभग २० हजार लोग इस व्यवसाय में लगे हैं तथा यहां की निर्मित तिलपट्टी देश के कोने-कोने के अलावा विदेशों में अमरीका, सोवियत रूस, इंग्लैंड, पश्चिमी जर्मनी आदि देशों को निर्यात की जाती है।

इस तिलपट्टी को बनाने के संबंध में यहां के व्यापारी बताते हैं कि २० किलो तिल्ली को सर्व प्रथम १५ किलो पानी में एक घंटे भिगो दिया जाता है। तत्पश्चात् पानी सोख जाने पर उसकी लकड़ी के एक भारी हथौड़े से एक घंटा कुटाई की जाती है, फिर उसे छानकर शेष बची १५ किलो तिल्ली को सेंक लिया जाता है। बाद में

इसे २ किलो चाशनी में मिलाकर लोये बनाकर बंट लिया जाता है। तिलपट्टी निर्माण की यह समूची प्रक्रिया बढ़ती मांग और फैलते व्यापार के कारण अब मजदूरी के आधार पर फैल चुकी है।

ब्यावर की यह तिलपट्टी न केवल होठों का स्वाद-भर रह गयी है, बल्कि शादी-ब्याह पर, त्यौहारों पर मेहमान-नवाजी का एक विशेष दस्तूर हो चली है। ब्यावरवासी यहां बारात का स्वागत इसी तिलपट्टी से करने लगे हैं। नेता, राजनेता, मंत्री आदि के ब्यावर-अजमेर आगमन पर उन्हें भोजन के साथ यह जरूर परोसी जाती है तथा बेटी की विदाई एवं बुलावा पर भी ससुराल पक्ष को तिलपट्टी भेजना ब्यावर का रिवाज बन चुका है।

अब इस तिलपट्टी के भी दो रूप, दो स्वाद हो चले हैं। यद्यपि आकार-प्रकार में दोनों ही समान हैं तथापि एक सा तिलपट्टी है तो दूसरी बादशाही। ब्यावर सेठियों की नगरी है, बादाम, पिस्ता, काजू का उपयोग भी यहां के सेठों के लिए सहज बात साधारण तिलपट्टी तो आम आदमी सकता है, लेकिन यहां के धनी लोग शाही तिलपट्टी खरीदने में ही अपना समझते हैं।

दोनों में अंतर मात्र इतना है कि शाही तिलपट्टी में बदाम, पिस्ता, आदि के बारीक-बारीक कतरे मिला जाते हैं।

साधारण तिलपट्टी जहां २० किलो मिल जाती है वहीं बादशाही ति पट्टी ३० रुपये किलो तक मिलती है।

—१/१३, पट्टो कटला, गणेश
अजमेर, रा

□

कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी जिन दिनों बीजापुर जेल में थे, बड़ी यातना मानसिक स्थिति से गुजर रहे थे। उन्हें ५ वर्ष की सजा मिली थी एवं उसमें छूट की संभावना नहीं थी। उन्होंने एक लेख में लिखा है कि एक मृतात्मा ने, जिसे स्वतंत्रता में भाग लेने के कारण उसी जेल में १८५७ के दिनों फांसी लगी थी—उन्हें साकार आकर कई बार कहा, 'तुम शीघ्र ही जेल से मुक्त हो जाओगे, पर घर की हालत ठीक पर व तुम्हारा मानसिक संतुलन बनने पर फिर १ वर्ष के लिए जेल जाओगे।' चार दिन ऐसा चला और फिर वैसा ही हुआ जैसा उसने कहा था। नमक सत्याग्रह में वे गिरफ्तार हुए एवं एक वर्ष बाद छूटकर फिर आंदोलन में शामिल हो गये। इस घट उनका सूक्ष्म जगत और उसके अस्तित्व पर दृढ़ विश्वास बैठ गया। उनका कहना था लोकमान्य तिलक की आत्मा अक्सर उन्हें प्रेरणा देने आती थी तथा कहती थी कि भूमि के लिए संघर्ष करने वालों को अदृश्य जगत में विद्यमान आत्माएं सतत सहयोग रहेंगी।

—डा. गोपालप्रसाद

□

सांस्कृतिक मंच

ान' की काव्य-संध्या

ान' द्वारा आयोजित इस बार की संध्या नवनीत के संपादक और कवि गिरिजाशंकर त्रिवेदी के सम्मान में रही। इस काव्य - संध्या में वस्ती ये लेखक कवि राजेंद्र परदेसी विशेष में उपस्थित थे । गोष्ठी के प्रारंभ में ान' के संस्थापक डा. जीवन प्रकाश ने सम्मानित कविगिरिजाशंकरजी का स्वागत किया। अपनी व्यंग्य- कविताओं के माध्यम से त्रिवेदीजी समाज व राष्ट्र में पनपते अंतराल छंदों से तीखा प्रहार किया । कवि परदेसी की कविताओं में छिपा बोध बहुत प्रभावित करता रहा । कवियों में सर्वश्री डा. विजय विनोद शर्मा व डा. जीवन प्रकाश प्रमुख थे।

इस काव्य-संध्या का आयोजन दिल्ली शांति मैदान के खुले प्रांगण में किया था।

–अनीता कपूर

०००

जन्मजयंती पर कविगोष्ठी

कवि गुरु रवींद्रनाथ टैगोर के १२७ वें त्सव के उपलक्ष्य में साहित्यिक-जिक संस्था 'ज्ञान मंजरी' के तत्वा-में प्रो. श्रीकृष्ण टंडन की अध्यक्षता एक कवि-गोष्ठी हुई । संचालन जयराम सिंह यादव 'जय' ने किया । जिसमें सर्वश्री प्रो. श्रीकृष्ण टंडन, डा. गुरु प्रसाद रस्तोगी, देवकुमार देव, डा. सत्यकांत 'शिरीष', वीरेंद्र आस्तिक, जयराम सिंह 'जय', रामकृष्ण प्रेमी तथा अरविंद मधुकर ने काव्य पाठ किया।

–जयराम सिंह 'जय'

०००

कथा शिविर का आयोजन

पिछले दिनों जमशेदपुर में 'युवा रचनाकार मंच' द्वारा आयोजित कथा शिविर में 'समकालीन हिंदी कहानी की सामाजिक भूमिका' तथा 'हिंदी की ग्रामीण कहानियों का मौजूदा तेवर' पर दो सत्रों में बहस हुई । कार्यक्रम के प्रारंभ में अपने स्वागत-भाषण में डॉ. सी. भास्कर ने कार्यक्रम की परिकल्पना पर एक वक्तव्य दिया । प्रथम सत्र की अध्यक्षता श्री सुनील श्रीवास्तव ने की, आलेख-पाठ कथाकार संजीव ने किया । इस पर रामधारी सिंह दिवाकर एवं श्रवण कुमार गोस्वामी जैसे प्रखर लेखकों ने टिप्पणियां प्रस्तुत कीं ।

दूसरे सत्र की अध्यक्षता गुरुवचन सिंह ने की और आलेख पढ़ा श्री मधुकर सिंह ने । जिन कथाकारों ने इस आलेख पर टिप्पणियां कीं, उनमें मनमोहन पाठक तथा संजय के नाम प्रमुख हैं ।

डॉ. सी. भास्कर राव की अध्यक्षता में कार्यक्रम का अंतिम भाग संपन्न हुआ, जिसमें

संजय, [illegible] तथा जयनंदन ने अपनी कहानियां पढ़ीं। इस आयोजन का संचालन संस्था के सचिव श्री ध्रुवनारायण सिंह 'नीरज' ने किया। –निर्मल मिलिंद

०००

प्रेमचंद और मैथिलीशरण गुप्त

विगत दिनों दिल्ली में हिंदी के कुछ मूर्धन्य साहित्यकारों ने लीक से हटकर यहां कहा कि प्रेमचंद गांधी को पीछे छोड़ चुके थे और यह मानना गलत है कि मैथिलीशरण गुप्त हिंदू पुनरुत्थानवादी थे।

ये विचार श्री कैलाश जोशी की पुस्तक 'प्रेमचंद और मैथिलीशरण गुप्त' के विमोचन के अवसर पर व्यक्त किये गये।

समारोह को संबोधित किया सर्वश्री मन्मथनाथ गुप्त, डा. कमल किशोर गोयनका, डा. प्रभाकर माचवे तथा रघुवीर सहाय ने। विमोचन किया श्री विष्णु प्रभाकर ने। **–प्रशांत जोशी**

०००

महादेवी वर्मा चित्र प्रदर्शनी

गत ३० अप्रैल से २ मई के बीच कानपुर की प्रमुख चित्रकार संस्था 'शिल्पी' ने स्वरूपनगर स्थित सुमन आर्ट गैलरी में 'महादेवी वर्मा चित्र प्रदर्शनी ८८' का आयोजन किया। इस प्रदर्शनी के लिए देश भर से २३१ चित्र प्राप्त हुए, जिनमें से ८८ कलाकृतियां प्रदर्शनी में प्रस्तुत की गयीं।

आयोजकों ने जिन पांच कलाकृतियों को इस अवसर पर पुरस्कृत किया, उनके कलाकारों के नाम हैं अपर्णा महावीर सिंह (मुजफ्फरनगर), देव सिंह, शबाना तबस्सुम (जद्दा, अरेबिया) तथा सीमा गुप्ता (बंबई)।

प्रदर्शनी का उद्घाटन आनंद अध्यक्षता श्री डी. एन. दीक्षित ने अवसर पर कलाप्रेमियों को संबोधित किया सर्वश्री सिद्धेश्वर ज्योति बाजपेयी, डा. प्रेमा मिश्रा, साहब (लखनऊ), डा. एस. एन. डा. मकबूल अंसारी, डा. अभय तथा रेखा निगम आदि ने।

०००

राष्ट्रीय कला शिविर

मानव संसाधन विकास मंत्रालय तत्वावधान में कानपुर के जुहारी गर्ल्स पोस्ट ग्रेजुएट कालेज द्वारा माह नेहरू युवा केंद्र में एक राष्ट्रीय शिविर का आयोजन किया गया। में मणिपुर, बिहार, बंगाल, तथा उत्तर प्रदेश के विभिन्न १०० से अधिक कलाकारों ने भाग तथा १५० से अधिक कृतियां सृजित इस शिविर में मुख्य रूप से तैल रंग, रंग, कोलाज़, जयपुर फ्रेस्को, क्लेमाडलिंग, पाषाण मूर्ति, ग्राफिक्स, प्रिंटिंग, नेल (नाखून) चित्र, सिरैमिक्स आदि माध्यमों का प्रयोग गया। शिविर में भाग लेने वाले कलाकार थे राजस्थान के पंडित नंदन शर्मा, दिल्ली के आर. पी.

के आर. एस. विष्ट, वनस्थली के वानीशंकर शर्मा, काशी के आर. एस. जयपुर के डा. चिन्मय मेहता, मणि- के पी. के. सरोन सिंह, पटना के नंद तथा नागपुर के डा. मकवूल डा. राम कुंअर, वी. एन. सिंह, नेश्वर वर्मा, डा. अभय द्विवेदी, डा. एन. सक्सेना, डा. मधु अस्थाना, डा. गुप्ता, श्रीमती प्रेमकुमारी मिश्र तथा प्रसाद आदि ।

विर का संयोजन महाविद्यालय की विभाग की अध्यक्षा डा. प्रेमा मिश्रा डा. रेखा निगम ने किया ।

○○○

नंद चौबे का अभिनंदन

पुर के वरिष्ठ ग़ज़लकार तथा व्यंग्य के कवि लेखक पं. कृष्णानंद का गत एक मई को नगर की साहि- संस्था 'आज़ाद' ने पांच हजार शाल, पुष्पहार व सम्मान-पत्र देकर नंदन किया ।

अवसर पर आयोजित काव्य समा- में नगर व बाहर से सर्वश्री विष्णु- त्रिपाठी 'राकेश', विकल जलाला- अलवेला, सुरेश फक्कड़, सुकंठ, नसीर रामचंद्र नेमी, आजाद कानपुरी, अवस्थी, ओमनारायण शुक्ल, अवस्थी टोपा, डा. प्रतीक मिश्र, गुप्त, सुमन दुबे, अंसार कंबरी, मृदुल सत्यप्रकाश शर्मा, लोकेश शुक्ल, तिवारी व कमलेश द्विवेदी आदि लगभग ५० कवियों ने काव्य पाठ किया ।

समारोह की अध्यक्षता की श्री विकल जलालावादी ने, संचालन किया श्री सुमन दुबे ने तथा संयोजन किया श्री लालमन आजाद ने । समारोह के मुख्य अतिथि थे श्री रामविलास गुप्त तथा संरक्षक थे श्री दयालचंद्र केशवानी । **—डा. प्रतीक मिश्र**

○○○

दिव्य स्मृति एवं फोकस पुरस्कार

महाकवि कालीदत्त नागर की साधना-स्थली कालीकुंज (उरई) में दिव्य स्मृति एवं फोकस पुरस्कार समारोह संपन्न हुआ। महा-कवि काली शोध केंद्र के अध्यक्ष भगवान दास अग्रवाल ने अध्यक्षता की, संचालन किया कवि आदर्श प्रहरी ने ।

उद्घाटन अवसर पर कवि राममोहन शर्मा ने बुंदेलखंड के प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यासकार, कवि, चित्रकार स्व. अंबिका-प्रसाद दिव्य की स्मृति में दिव्य नगर की स्थापना तथा दिव्य साहित्य के प्रकाशन की मांग के साथ ही दिव्य-पुरस्कार की सर्वसम्मति से घोषणा की ।

हरिनारायण श्रीवास्तव 'विकल्प' को वर्ष '८७ का फोकस पुरस्कार तथा जावेद कुदारी को वर्ष ८८ का पुरस्कार दिया गया। काली कला शोध केंद्र के निदेशक अरुण नागर ने आभार व्यक्त किया। रात्रि में कवि-सम्मेलन भी हुआ। **—महेश अवस्थी**

○○○

भोला प्रशांत पुरस्कृत

संस्कृति परिषद, सिलीगुड़ी (प. बंग)

द्वारा वर्ष १९८७-८८ के लिए साहित्यिक प्रतियोगिता के अंतर्गत आयोजित हिंदी कहानी प्रतियोगिता में श्री भोला प्रशांत द्वारा लिखित 'अब यहां प्रेत बसते हैं' शीर्षक कहानी को ५०१ रु. का प्रथम पुरस्कार दिया गया । कटिहार जिलांतर्गत फलका प्रखंड के ऐतिहासिक गांव टीका पट्टी में जन्मे वे नवोदित कथाकार हैं ।

पुरस्कार वितरण समारोह १४ मई ८८ को दीनबंधु मंच प्रेक्षागृह सिलीगुड़ी में डा. श्रीगोपाल माहेश्वरी की अध्यक्षता में कार्यक्रम का प्रारंभ सत्येन बनर्जी की वाणी वंदना से हुआ । डा. भीखी प्र. वीरेंद्र, सांवर नेमानी और कामाख्या गोयल ने समकालीन कथा-लेखन एवं सस्कृति परिषद् के कार्य कलापों पर प्रकाश डाला ।

इस अवसर पर आयोजित काव्यगोष्ठी में राजस्थान के प्रख्यात कवि नरेंद्र मिश्र, गजानन वर्मा, वंकट विहारी पागल, डा. आर. इमरोज, विश्वनाथ विमलेश, ताउ शेखावटी, रामगोपाल नवल, वेदप्रकाश दाधीच आदि कवियों ने काव्य पाठ किया ।

—धर्मेंद्र कुसुम

०००

पत्र-पत्रिका पुस्तक मेला

रवींद्र जयंती के कलात्मक और साहित्यिक अवसर पर कला और साहित्य की प्रयोगशाला नीलकंठ व्यापार विकास संस्थान की ओर से दो दिवसीय समाचार-पत्र-पत्रिका पुस्तक मेला आयोजित किया गया । मेले में नवनीत (हिंदी डाइजेस्ट) के अंकों के प्रदर्शन की कलात्मक प्र दर्शकों में आकर्षण का केंद्र रही । का संयोजन युवा कवि तुलसी नील किया । मेले में पूरे भारत से ६०० चार-पत्रों, ४०० पत्रिकाओं, ५०० पु का प्रदर्शन किया गया । मुजफ्फरनगर अपनी तरह का यह पहला मेला था, लगभग तीन हजार दर्शकों ने देखा ।

—तुलसी नील

०००

स्व. वियोगी हरि को श्रद्धांजलि

गांधीवादी रचनाकार और समाज पं. वियोगी हरि के निधन पर महा हिंदी साहित्य सम्मेलन बंबई की से एक बैठक में भावभीनी श्रद्धां अर्पित की गयी । उनकी साहित्य और हरिजन-सेवा को वक्ताओं ने किया । बैठक की अध्यक्षता श्री हरि ने की । वक्ताओं में श्री जयदेव सिंग श्री नंदनलाल पाठक, श्री गिरिजा त्रिवेदी, श्रीमती कमलेश बक्शी और शैलेन्द्रपति त्रिपाठी प्रमुख थे ।

—डॉ. सुशीला

०००

प्रतापगढ़ में कवि-सम्मेलन

नगर की सम्मानित व चर्चित 'संचेतना' के तत्वावधान में राजकीय कालेज प्रतापगढ़ के परिसर में एक भारतीय कवि-सम्मेलन आयोजित हु

उस सम्मेलन का आरंभ कु. रानी (लखनऊ) की वाणी वंदना से

। समारोह की अध्यक्षता व संचालन द्र अवस्थी (बदायूं) ने किया ।

इस कार्यक्रम में भाग लेने वालों में डा. अवस्थी, श्री दयाशंकर शुक्ल (संयो-) व सरजू प्रसाद सरोज (विधायक) तिरिक्त रमेश रंजन (लखनऊ), कु. रहबर (म. प्र,), श्री वेद वाजपेयी ोई), श्री शरदेंदु शुक्ल व श्री अग्नि- शुक्ल (लखनऊ), श्री कपिल देव, डा. सागर, श्री दीपक, शायरा नकहत (लखनऊ), जैमिनी हरि- (हरियाणा), सांड बनारसी कवि), निर्झर प्रतापगढ़ी, सुरेंद्र, असलम इलाहाबादी व शायरा (कानपुर) आदि विशेष रूप से नीय रहे । **–एस. डी. मालवीय**

○○○

सिगार संसद

त एवं कला की सेवा में लंबे समय ी हुई बंबई महानगर की प्रमुख 'सुर सिगार संसद' द्वारा संचालित पीठ' का १५ वां दीक्षांत समारोह ४ १९८८ को संपन्न हुआ । 'शक्ति पीठ' पति वी. एस. पागे ने देश के कलासाधकों एवं विद्वानों को यों से अलंकृत किया ।

श्री श्रीमती पद्मावती शालिगराम और श्रीमहाराजपुरम संथानम् को विलास,' उस्ताद असद् अली खां डा. चलकुड एन. एस. नारायण को 'तंत्री विलास,' श्रीमती चित्रा विश्वेश्वरन् तथा पद्मश्री उमा शर्मा को 'नृत्य विलास' की उपाधियां प्रदान कीं।

संगीत के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य के लिए निम्नलिखित विद्वानों को शारंगदेव फेलो-शिप' से सम्मानित किया गया । सर्वश्री डा. अंबाशंकर नागर, पद्मभूषण श्रीमती अन्नपूर्णा देवी, महाराज कृष्णकुमार, प्रो. आर. सी. मेहता, गुरु के कल्याणसुंदरम् ।

एस. एन. डी. टी. महिला विश्वविद्यालय की संगीत विभागाध्यक्ष डा. प्रभा अत्रे ने अपने उद्‌घाटन भाषण में शास्त्रीय संगीत की महत्ता पर प्रकाश डाला । गुजरात विश्वविद्यालय के भाषा-भवन के भूतपूर्व निदेशक डा. अंबाशंकर नागर ने अपने विद्वतापूर्ण तथा मार्गदर्शक भाषण में हिंदुस्तानी व कर्नाटकी संगीत में एकरूपता लाने पर जोर दिया । प्रो. वी. एन. निगम ने अध्यक्षीय भाषण में कला और विज्ञान को एक दूसरे का पूरक बताया ।

प्रारंभ में संस्था के संस्थापक व संचालक श्री वृजनारायण ने संस्था की गतिविधियों पर प्रकाश डालते हुए सभी का स्वागत किया ।

संगीत पीठ के 'रेक्टर' डा. वी. पी. व्यास ने उपाधियां प्राप्त करने वाले महान कलाकारों व विद्वानों का परिचय दिया । संस्था के रजिस्ट्रार श्री किसन शर्मा ने कार्यक्रम का सुंदर संचालन किया । अंत में संस्था के सचिव श्री जयदेव सिंघानिया ने आभार प्रदर्शन किया ।

– विनोद सिंघानिया

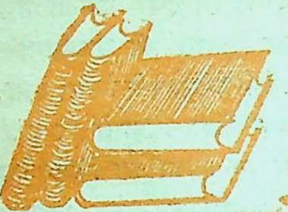

ग्रंथलोक

***मृगतृष्णा (उपन्यास) * लेखक : शांताकुमार; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली; मूल्य : सत्तर रुपये।**

हिंदी में राजनीतिक उपन्यास कम ही लिखे गये हैं और जो लिखे भी गये हैं, उनका कथ्य भोगे हुए यथार्थ के करीब कम ही आ पाया है। शांताकुमार का 'मृगतृष्णा' उपन्यास आज के राजनीतिक माहौल का न केवल कच्चा चिट्ठा सामने रखता है, वरन उन राजनीतिक उठा-पटक का तटस्थ विश्लेषण कर पाठकों के सम्मुख सही जायजा प्रस्तुत करने का प्रयास भी करता है। शांताकुमार हिमाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री भी रह चुके हैं और उनका अधिकतर जीवन राजनीतिक रारों-तकरारों के बीच से ही गुजरा है, अतः उन्हें राजनीतिक जीवन में पूर्णतः पगा हुआ ही मानना चाहिये।

करीबन साढ़े तीन सौ पृष्ठों के इस वृहदाकार उपन्यास में कथाकार शांताकुमार ने स्वर्ण-सुरा-सुंदरी के मोहपाश में जकड़े राजनीतिक पात्रों के माध्यम से आज के भ्रष्ट राजनीतिक परिवेश को पूरी जीवंतता से पाठकों के सम्मुख उपस्थित कर दिया है।

उपन्यास की कथा का केंद्र-विंदु प्रमो जो पृष्ठ दर पृष्ठ बढ़ता हुआ इस उप के घटनाक्रम का संचालक बनता है।

प्रमोद की इस मुख्य कथा के सं प्रसंगवश अनेक उपकथाएं चलकर न्यास में राजनीतिक भ्रष्टाचार को आयामी रूप में उजागर करती हैं।

'मृगतृष्णा' आज की राजनीति के कुढंगों को पृष्ठ दर पृष्ठ पर्दाफाश क हुए पाठकों के सामने उन स्थितियों बेनकाब कर देती है, जो आम पाठकों आंखों से प्रायः ओझल रहते हैं। नीति से सक्रिय रूप से जुड़े हुए होने कारण उपन्यास के पात्र और घटना विश्वसनीय प्रतीत होते हैं। कुल कर यह उपन्यास अपने आसपास जिंदगी के प्रति सजग करने वाला और राजनीतिक वातावरण के प्रति विद्रोह जगाने की प्रेरणा देने वाला है।

ooo

***रेगिस्तान * लेखक : कमलेश्वर; शक : राजपाल एण्ड संज, दिल्ली; २५ रुपये।**

आजादी पाने के बाद जो सपने हमारे देश के नौजवानों ने संजोये थे, क्या आज हम चालीस साल बाद उनको साकार कर पा रहे हैं? राष्ट्रपिता माने जाने वाले महात्मा गांधी ने आजाद भारत के लिए जो आदर्श रखे थे और जिन आदर्शों के लिए अनगिनत व्यक्तियों ने अपने जीवन को समर्पित कर दिया था और उनमें से तो कुछेक ने अपनी आहुति तक दे दी थी, क्या वह सब कुछ सार्थक हो पाया? कमलेश्वर ने अपने नये उपन्यास 'रेगिस्तान' में राष्ट्रभाषा हिंदी के आहूत विश्वनाथ के विषपायी जीवन की कथा का केंद्र बनाया है। राष्ट्रपिता गांधी ने आजाद भारत की अस्मिता का अनिवार्य आधार हिंदी को स्वीकारा था। विश्वनाथ ने अपना संपूर्ण जीवन राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए समर्पित कर दिया। कितने उत्साह और सपनों के संग वह सुदूर दक्षिण में हिंदी के प्रचार के लिए गया था। आज व्यथित मन से वह सोच रहा है–'कितना अजीब है कि वह दूर-दराज इलाकों में जाकर हिंदी का प्रचार करता रहा और हिंदी इलाकों से ही हिंदी मिटती गयी . . ।.'

जिस हिंदी के राष्ट्रव्यापी प्रचार के लिए विश्वनाथ ने अपना घर-परिवार और गांव तक छोड़ा, सुशीला जैसी सुंदर युवती को जीवन संगिनी बनाने के आकर्षण से अपने को मुक्त किया — केवल इसलिए कि वह स्वभाषा के प्रचार से देश को गूंगा होने से बचायेगा, लेकिन उसके सपने धू-धू करते जलते चले गये। उसके देखते-देखते सारा देश अपनी भाषा को भूलता हुआ गूंगा बन गया।

देश के दर्द को महसूसते हुए कमलेश्वर ने सर्वथा अछूते विषय को अपने इस उपन्यास का केंद्र बनाया है। हिंदी की दुर्दशा अपने देश की अस्मिता का ही हाहाकार है, जिसे कथात्मक ताने-बाने में बुनकर बड़े मार्मिक ढंग से इस उपन्यास में रूपांकित किया है।

अपने ही लोगों द्वारा हुए अपनी भाषा के अपमान की दारुण व्यथा-कथा को बयान करने वाला यह लघु आकार का उपन्यास पठनीय ही नहीं वरन विचारणीय भी है। **–प्रो. विश्वंभर अरुण**

○○○

पवन गया नीली घाटी में (गीत संग्रह)
कवि : रामप्रकाश शुक्ल 'शतदल'; प्रकाशक : कविवंशम्, पोस्ट बाक्स-२२, कानपुर-२०८००१; मूल्य : उल्लेख नहीं।

गीतकार रामप्रकाश शुक्ल 'शतदल' के तेंतालिस गीतों का यह नव्यतम् संकलन है। इस कृति का आद्योपांत अवगाहन, आलोड़न, विलोड़न, पाठन-मनन करने पर यह ज्ञात होता है कि शतदल के ये गीत उनकी सर्जना के निश्चय ही स्वस्थ प्रतीक हैं।

गीत के लिए जिस भाषा की, कोमलकांत शब्दावली, उदात्त भावभूमिका और अंतस को झंकृत करने वाली अर्थवत्ता की

आवश्यकता होती है, वह समग्र रूप में इस कृति के गीतों में दृष्टव्य है।

'मौन सारा मुखर कर दिया स्नेह ने,
गीत गोविंद जैसे जिया देह ने,
कंठ तक आ गयी थरथराती हुई—
ओस में भीगकर फूल की पांखुरी।'

ताजगी से भरपूर ये गीत पाठक को ऐसी अपूर्व लोकोत्तर गीत भूमि का संस्पर्श कराते हैं, एक ऐसे दिव्य भावलोक में ले जाते हैं, जिसे योगी अपनी अथक साधना से उपलब्ध करता है—

'बहुत बढ़ा कर कहने पर भी
कथा रही ढाई आखर की
गूंज उठीं सारी दीवारें—
पांच खिड़कियों वाले घर की।'

देह के धरातल से ऊपर उठकर, विराट का साक्षात्कार कर जिस आनंद की अनुभूति होती है, उसे अभिव्यक्ति देने में यह रचनाकार खूब सफल रहा है।

ऐसे सरस गीतों के रचना के लिए कवि बधाई का पात्र है। **—ब्रह्म मिश्र**

ooo

*** कहानी का सातवां दशक * लेखक : उद्भ्रांत; प्रकाशक, सर्जना प्रकाशन, ११७/४८३ पांडुनगर, कानपुर; मूल्य : २० रुपये।**

कवि उद्भ्रांत की सोच की दिशा जब कविता-गीत के साथ-साथ कहानी-लेखन की ओर मुखातिब हुई तो यह स्वाभाविक था कि वे कहानी के उतार-चढ़ाव और कहानीकारों की मानसिकता का भी सूक्ष्म निरीक्षण करते।

इस पुस्तक से स्पष्ट होता है कि उद्भ्रांत ने सातवें दशक की कहानियों, कहानी-आंदोलनों और कहानीकारों की एक-एक घटना का बारीकी से अध्ययन किया है। इस पुस्तक में इस तथ्य का भी सूक्ष्मता से विवेचन किया गया है कि कविता के छठवें दशक ने एकाएक करवट बदल कर सातवें दशक को कहानी का दशक कैसे बना दिया ? यही कारण है कि लगभग दो दशक पहले की ये घटनाएं आज भी पाठकों के लिए दिलचस्प और ज्ञानवर्धक हैं। उस दशक की साहित्य की खेमेबाजी की भी विस्तृत जानकारी इस पुस्तक में मिलती है।

आत्मकथात्मक शैली में लिखी 'कहानी का सातवां दशक' एक पठनीय पुस्तक है जो उद्भ्रांत द्वारा भोगी, देखी, सुनी और पढ़ी बातों-घटनाओं के आधार पर लिखी गयी है। इस पुस्तक में उस दशक के कहानीकारों की मानसिकता और खेमेबाजी का स्पष्ट और सजीव चित्रण है, पर अगर कमी है तो यही कि यह पुस्तक सातवें दशक में प्रकाशित मुख्य-मुख्य कहानियों की नामावली और कहानीकारों की फेहरिस्त बनकर रह गयी है, जिस कारण इस समाप्तप्राय: नवें दशक में पाठकों के लिए बहुत अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध नहीं हो सकेगी।

वैसे, पुस्तक रोचक है, पठनीय है और साहित्य के विद्यार्थी के लिए संग्रहणीय भी है।

—रमेश खुराना

'शहनाई के दर्द' * कवि : धर्मेंद्र त्यागी; प्रकाशक : प्रतीक प्रकाशन, नयी दिल्ली; मूल्य : २५ रुपये।

समय के परिवर्तन ने जहां आपसी व्यवहार बदल डाला है, पहनावा बदल डाला है, भवनों की शक्ल बदल डाली है, शहरों के नक्शे बदल डाले हैं, यातायात के साधन, युद्ध के तौर-तरीके बदल डाले हैं, धरती और नक्षत्रों के संबंध बदल डाले हैं तो वहां भला काव्य और कहानी साहित्य कैसे न बदलते। वे बदले तो इतने बदले कि कहानी को कहानी और कविता को कविता कहने में आपत्ति होने लगी। पाठकों ने उन्हें पढ़ना बंद कर दिया। उनकी पुस्तकें छपनी बंद हो गयीं। पत्रिकाओं से उनके स्थान छिनने लगे। फिर भी बेचारा कवि तो अपनी [illegible] कल्पनाओं को संजोता रहा। मुक्त वातावरण न मिलने पर भी प्रेरणा को अभिव्यक्ति देता रहा। कुछ ने उनके [illegible] को वापस प्रतिष्ठा दिलाने की कोशिश जारी रखी। उन्हीं में से हैं कवि धर्मेंद्र त्यागी। उनका अटल विश्वास है कि गीत को कोई मार नहीं सकेगा और इसी विश्वास के साथ उन्होंने 'शहनाई के दर्द' गीत संग्रह का प्रकाशन किया है, जिसमें दिल्ली प्रशासन के अधीन हिंदी अकादमी ने भी सहयोग दिया है।

लगभग पांच वर्षों की अवधि में रची गयीं ये कविताएं विविध रसों में पगी हुई हैं। विविध मौकों पर आनंद देने वाली हैं। संग्रह में 'सरस्वती वंदना' है तो दर्द भरा 'मेरा मखमली बिछौना' भी है। 'नयन मत गीले करो' की प्यारी-सी हिदायत है तो 'शबनम को भी चमकाओ' जैसी नाजुक खयाली भी है। 'मुझको नहीं मिटा पाओगे' जैसा संकल्प है तो 'खिलता रहा गुलाब' कांटों के बीच में घिरा रहने के बावजूद भंवरों को रस प्रदान करने के लिए आतुर है। **—महेंद्र सरल**

०००

***सूखी बूंदें (उपन्यास)* लेखक : डा. रतनकुमार जैन; प्रकाशक : मणिप्रभा फाउंडेशन, ई. ६/जे. १२; अरेरा कालोनी भोपाल; मूल्य : चालीस रुपये।**

हिंदी भाषा में आज असंख्य उपन्यास उपलब्ध हैं—एक से एक बढ़कर रोचक, प्रेरक और श्रेष्ठ। किंतु श्रेष्ठता का कोई एक निश्चित मापदंड नहीं है। समीक्षकों ने मतभिन्नता के लिए अनेक आधार खोज रखे हैं – कथानक, भाषा, शिल्प, आदर्श, यथार्थ, मनोविज्ञान, उद्देश्य और परिणति। फिर भी, यह निर्विवाद तथ्य है कि हिंदी वाङमय के कई उपन्यास विश्वसाहित्य की निधि बन गये हैं।

समीक्षा-कृति 'सूखी बूंदें' एक ऐसा उपन्यास है, जिसका शिल्प-विधान 'प्रिज़्म' की भांति, इसके आयामों का बहुवर्णी प्रदर्शन करता है। इसके रचनाकार डा. रतनकुमार जैन विख्यात विद्वान हैं। उन्होंने विविध भाषाओं में अनेक ग्रंथों की रचना की है। 'सूखी बूंदें' उनकी

रचनाधर्मिता, सृजन-कौशल, भाषाज्ञान और भारतीय संस्कृति के प्रति अडिग आस्था का जीवंत प्रमाण है। इस कृति में काव्य, इतिहास, पुराण, मनोविज्ञान और समाजशास्त्र का अद्‌भुत समायोजन है। 'कादम्बरी' जैसा प्रकृति चित्रण, 'मृच्छकटिकम्' जैसा अनुराग-विराग, 'चित्रलेखा' जैसा संवेगात्मक प्रवाह और 'आम्रपाली' जैसा रस-विलास इस कृति में ऐसे कौशल से अनुस्यूत है कि पाठक मंत्रमुग्ध-सा हो जाता है। **—एस. कामिनी राय**

○○○

***डूबता अवध* लेखक : योगेश प्रवीन; प्रकाशक : सुलभ प्रकाशन, अशोक मार्ग, लखनऊ; मूल्य : ३५ रुपये।**

'डूबता अवध' नाम से ही प्रकट होता है कि इसमें अवध की डूबती नाव का नजारा मिलेगा।

अवध अपनी कलात्मक परंपराओं, लखनवी नजाकत व मेलजोल की सभ्यता के लिए मशहूर है, परंतु समय के साथ अब उसके मूल्य खो रहे हैं। इस पुस्तक में ऐसे चरित्र-प्रसंग और विवरण हैं जो अवध की आत्मा की पहचान देते हैं और एक टूटते हुए खूबसूरत फानूस का दर्द प्रकट करते हैं।

इन शब्दचित्रों और कहानियों में लेखक की प्रवाहमान, चटपटी, नर्म नाजुक शैली का अच्छा प्रभाव है।

लगभग १४१ पृष्ठ वाली इस पुस्तक में २० कहानियां हैं। कोई भी कहानी कमोबेश किसी से कम नहीं है। ईद के बेगम का आईना, भाभो की चहलपहल, नयी सुई की चुभन और परदा सलाम की परदादारी तो लाजवाब ही है। [illegible] और गरारे, पान का बादशाह, [illegible] हुई धूप, अमराइयों की कोयल में रोशन प्रसिद्ध व्यक्तित्वों का आकलन है। हु[illegible] की हिफाजत में दास्तानगोई का कमाल है। ठंडी गलियां कोठे का मजेदार किस्सा है। और जम का पहलू में चौक की रौनक का बहुत सुंदर चित्रण है।

लखनऊ के इक्केवाले, यहां की ऐतिहासिक इमारतों के गाइड, मलिहाबाद के पठान और बाजारों के बांके इन किस्सों के विषय बने हैं। आवरण सज्जा और छपाई अनुकूल है। कुल मिलाकर ये पुस्तक प्रामाणिक रोचकता के साथ लखनऊ की अच्छी पहचान देती है। **—नीरज कु**

○○○

***जीवन पाथेय* लेखिका : प्रेरणा अव[illegible] ठाकोर; प्रकाशक : प्राचीन संस्कृति मंदिर, जहांगीर बिल्डिंग, १३३ एस. जी. रोड, बंबई-४०००२३; मूल्य : तीस रुपये।**

गीता के विभिन्न प्रेरणादायी अंशों एवं रामचरितमानस की कुछ चौपाइयों तथा वाल्मीकि रामायण के श्लोकों का [illegible] संकलन पाठकों को निश्चय ही स[illegible] बनाने वाला है। वर्तमान जीवन के दु[illegible] और कंटकाकीर्ण मार्गों में दिशा-बोध क[illegible] की दृष्टि से यह उपयोगी संकलन है।

—डा. गिरिजाशंकर त्रिवे

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन साहित्य, और संस्कृति का मासिक

प्रार्थना

स इत्तन्तुं स विजानात्योतुं, स वक्त्वान्ऋतुथा वदाति ।
य ईं चिकेतदमृतस्य गोपा अश्वचरन्परो अन्येन पश्यन् ॥

तू अद्भुत है तन्तुवाय, सब तेरा ही विस्तार ।
ताना भी तनता है तू ही, बाना भी बुनता है तू ही,
ताना-बाना दोनों का है, तुझ पर ही आधार ।
मौन सदा तू ही रहता है, बिन बोले सब कुछ कहता है,
एक चरण धरती पर तेरा, एक गगन के पार,
तू अद्भुत है तन्तुवाय, सब तेरा ही विस्तार ।

[रूपांतर : सत्यकाम विद्यालंकार]

पुण्डरीक का सच्चा सपना

व्रजगोपाल दास

लगभग पांच सौ वर्ष पहले की बात है । नवद्वीप में मुकुंद दत्त अपने साथी गदाधर पंडित को चटगांव से आये अपने एक अन्य साथी से भेंट कराने ले गये । गदाधर पंडित ने जाकर देखा कि एक दुग्ध-धवल शैया पर मसनदों के बीच राजकुमार की-सी वेशभूषा धारण किये एक व्यक्ति बैठा है और पान चबा रहा है । दोनों ओर खड़े दो सेवक मोरपंखी पंखा झल रहे हैं । सुंदर परिपाटीयुक्त केश-विन्यास है और केश-तैल की भीनी-भीनी गंध कमरे में फैली है । पास में सुंदर पानदान रखा है । शैया के ऊपर बड़ा आकर्षक चंदवा टंगा है । सामने एक झूला पड़ा हुआ है ।

ऐसे विलासी व्यक्ति को देखकर विरक्त-प्रकृति गदाधर के मन में घृणा उत्पन्न हो गयी । वे मन ही मन मुकुंद पर भी झुंझलाने लगे और वहां से उठने की सोचने लगे । मुकुंद ने उनके मन का भाव ताड़कर तुरंत यह श्लोक पढ़ा–

'अहो बकीयं स्तनकालकूटं
जिघांसयाऽपाययदप्यसाध्वी ।
लेभे गतिं धात्र्युचितां ततोऽन्यं
कं वा दयालुं शरणं व्रजेम ।'
(भागवत ३।२।२३)

भावार्थ : पूतना ने अपने
हलाहल विष लगाकर कृष्ण को
डालने की दृष्टि से दुग्धपान कराया
कृष्ण ने उसे भी धाय-योग्य
दी । ऐसे दयालु भगवान के
और किसकी शरण लें?

श्लोक सुनते ही उस विषयी
का कायापलट हो गया । उसका
अश्रु-कंप-पुलक आदि सात्विक भाव-
से भर गया और वह मूर्च्छित होकर
आ गिरा । उसकी सुंदर देह,
केश-विन्यास, भव्य परिच्छद सब
धूसरित हो गये । बड़ी सेवा-शुश्रू
बाद वह पुनः सहज स्वाभाविक
आया ।

मुकुंद के ये अद्भुत साथी थे
के धनी पंडित पुण्डरीक विद्यानिधि
विषयभोगों के आवरण के नीचे
यथार्थ स्वरूप और अपनी दुर्लभ
को छिपाये रखने की चेष्टा करते थे।
संपदा थी उनकी सरस वैष्णव-
पुण्डरीक गंगाजी में परम आस्था
विश्वास रखते थे । लोग गंगा में
धोते हैं, कुल्ला करते हैं, तरह-तरह
अनाचार करते हैं–इस बात को ले
दुखी होते । यह अनाचार उनकी

इसलिये वे गंगा-दर्शन करने रात्रि जाते। गंगाजी से पैरों का स्पर्श यह सोचकर वे गंगा-स्नान भी न । अपनी ठाकुर-सेवा से पूर्व गंगा- ते।

और गदाधर चैतन्य महाप्रभु प्रिय संगी थे। पुण्डरीक तो महा- मानो प्राण ही थे। उनसे साक्षा- होने के पहले ही एक दिन चैतन्य (उस समय निमाई पंडित) 'बाप ! बाप विद्यानिधि !' कहकर रोने लगे थे। बहरहाल गदाधर देर न लगी कि उन्होंने सिर्फ बोल ही देखा था, भीतर का गूदा दाधर की इच्छा पर पुण्डरीक ने क्षा देकर अपने शिष्य के रूप में र कर लिया।

तर में पुण्डरीक अपने प्रिय सखा दामोदर के साथ जगन्नाथपुरी में ष्ठी महोत्सव देख रहे थे। अगहन की शुक्ला षष्ठी को जगन्नाथजी को कोरे वस्त्र धारण कराये जाते को 'ओढ़नषष्ठी' कहा जाता है। सोचने लगे कि मांड़युक्त बिना को छूकर तो हाथ भी धोने पड़ते हैं; ये श्रुति-स्मृति - ज्ञाता पुजारी-पंडे ऐसे वस्त्र जगन्नाथजी को पहनाकर बड़ा अनाचार कर रहे हैं।

उसी रात पुण्डरीक ने स्वप्न देखा। राम (बलराम), श्याम (जगन्नाथ) दोनों भाई क्रोध से भरे पुण्डरीक के गालों पर तड़ातड़ थप्पड़ बरसा रहे हैं और कह रहे हैं–'हमारे सेवकों में दोष देखता है ! हमारे सेवकों को शुद्धि-अशुद्धि का ज्ञान नहीं ! हम छुआछूत नहीं मानते ! तुम शुद्धाचारी बनते हो तो ऐसे स्थान पर मत रुको, अपने गांव चले जाओ।'

स्वरूप दामोदर सुबह जगन्नाथ दर्शन को जाते, तो पुण्डरीक को भी ले जाते। आज आये तो देखा कि विद्यानिधि के दोनों गाल फूले हुए हैं और उन पर अंगुलियों के चिन्ह पड़े हैं; वे अभी तक उठे भी नहीं। पुण्डरीक ने पूरा वृत्तांत सुनाकर कहा–'जब तक ये गाल ठीक नहीं होते, बाहर निकलने में संकोच होगा।' अद्भुत स्वप्न की बात सुनकर स्वरूप दामोदर हंसे बिना न रह सके, पर उन्होंने अनुभव किया कि ऐसा भगवत् कृपा-दंड भाग्यवान को ही मिलता है !

–राइ अंगन्,
इन्द्रमणि पार्क के पीछे, चूरू-३३१००१

□

स्य नश्यति यशो विषमस्य मैत्री नष्टक्रियस्य कुलमर्थपरस्य धर्मः।
गुणो व्यसनिनः कृपणस्य सौख्यं राज्यं प्रमत्तसचिवस्य नराधिपस्य ॥

निष्क्रिय पुरुष का यश, असमान पुरुष की मैत्री, क्रियाहीन पुरुष का कुल, अर्थ- व्यक्ति का धर्म, व्यसनी का विद्या गुण, कृपण का सुख तथा उन्मत्त मंत्री से राजा का राज्य नष्ट हो जाता है।

□

विस्मृत स्मृति

जब वियोगी हरि को देश निकाला दिया

☐ जगदीशप्रसाद

साहित्य मनीषी और हरिजन सेवक श्री वियोगी हरि के बारे में यह धारणा है कि वियोगी हरिजी पहले ब्रजभाषा में भी भक्ति रस की कविताएं करते थे और उन्होंने 'ब्रजमाधुरी सार' का संपादन किया और इसके बाद उन्होंने ब्रजभाषा में 'वीर सतसई' लिखी, जिस पर उन्हें मंगलाप्रसाद पुरस्कार प्राप्त हुआ। साधारणतया धारणा यह भी है कि वर्ष १९३४ के इंदौर के हिंदी साहित्य सम्मेलन में, जिसकी अध्यक्षता गांधीजी कर रहे थे, वियोगी हरिजी ने यह घोषणा की थी कि उन्होंने कविता लिखना छोड़ दिया है और इसके बाद वे हरिजन आंदोलन से इतने अभिन्न हो गये कि साधारणतया यह समझा जाता है कि गांधीजी के सान्निध्य ने उन्हें हिंदी साहित्यकार से 'हरिजन सेवक' बना दिया।

बहुत थोड़े लोग ही शायद यह जानते हैं कि हरिजन उद्धार की प्रेरणा वियोगी हरिजी ने बहुत पूर्व ही, जब वे राष्ट्रीय कविताएं लिख रहे थे, तभी प्राप्त कर ली थी और उन्होंने प्रेरणा ही नहीं प्राप्त की थी, उसके लिए सक्रिय कार्य किया था, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें पन्ना राज्य से देश निकाला दे दिया गया। यह घटना बड़ी थी, पर स्वयं हरिजी भूल गये थे और उन्होंने अपनी 'मेरा जीवन प्रवाह' में इस घटना उल्लेख तक नहीं किया। परंतु विश्वविद्यालय के बुंदेली पीठ की पत्रिका 'ईसुरी' में जब वियोगी का वह पत्र छपा जो उन्होंने महाराजा श्री यादवेंद्र सिंह को देश निकाले के आदेश पर लिखा था, तो स्वयं बियोगी हरिजी उसका स्मरण आया और उन्होंने भावना प्रकट की कि यदि यह पहले प्राप्त हो गया होता तो आत्मकथा का रूप ही दूसरा होता।

वियोगी हरिजी पांच वर्षों तक महाराज के अवैतनिक शिक्षा थे। उन्हें पन्ना में मकान मिला हुआ जिसमें रहकर वे अपना साहित्यिक करते थे और पन्ना राज्य की शिक्षा नीति के कार्यान्वयन में अपना देते थे। उनका इतना प्रभाव था कि सुझाव पर पन्ना महाराज के भारतेंदु सिंह का विवाह कटनी राष्ट्रीय विचारधारा वाली

से हुआ था और उनके कहने से पन्ना के राजकुमार व उनकी पत्नी महात्मा गांधी से भी मिले थे ।

वियोगी हरिजी ने पन्ना में पाठशालाओं की संख्या बढ़ा दी थी और उनमें बड़ी उन्नति की थी । उसके साथ ही उन्होंने पन्ना में तुलसी जयंती के आयोजन करवाये, छत्रसाल जयंती का आयोजन प्रारंभ किया । छत्रसाल स्मारक की योजना बनायी, पन्ना में एक पुस्तकालय खुलवाया । नवयुवकों में भारतीय पद्धति से देशी कसरतों का प्रचार कराया । उन्होंने यह अनुभव किया कि जब तक हरिजनों को शिक्षा प्राप्त नहीं होती, उनकी उन्नति नहीं हो सकती । राज्य की पाठशालाओं में उन्हें शिक्षा मिल नहीं सकती थी, क्योंकि सवर्ण उनके साथ बैठ नहीं सकते थे । इसलिए उन्होंने पन्ना महाराज को राजी किया कि वे अपनी आज्ञा से अछूतों के लिए एक पाठशाला खुलवायें । जब यह पाठशाला खुल गयी तो श्री वियोगी हरि के विरुद्ध हर तरह के प्रचार होने लगे और अंत में पन्ना महाराजा ने यह आदेश दिया–'जितनी जल्दी हो सके वियोगी हरिजी को पन्ना छोड़ देना चाहिये ।' इस आदेश को शिरोधार्य कर हरिजी ने पन्ना छोड़ दिया । लेकिन इसके बाद उन्होंने पन्ना नरेश को जो पत्र लिखा वह जहां उनके वीरोचित स्वभाव का परिचय देता है, वहां यह भी बताता है कि किस प्रकार उनको अपने हरिजन प्रेम के कारण एक सम्मानपूर्ण पद से ही नहीं, पन्ना में ठहरने तक से वंचित होना पड़ा । फिर भी हरिजी ने अछूतोद्धार के लिए जो कदम उठाया था, उससे वे हटे नहीं और उन्होंने बाद में भी महाराजा पन्ना को यही सलाह दी कि वे अपने राज्य के सारे मंदिर हरिजनों के लिए खोल दें, जैसा अन्य कई राजाओं ने किया है । ये सब १९३४ के हिंदी साहित्य सम्मेलन से पहले हो चुका था, जिसकी साक्षी इस समय केवल वे दो पत्र हैं, जो हरिजी ने तत्कालीन पन्ना नरेश श्री यादवेंद्र सिंह को लिखे थे । वियोगी हरिजी ने अपने पत्र में लिखा था–

'चलते समय मैं एक बार श्रीमान का दर्शन करना चाहता था और जी खोलकर सारी बातें भी करना चाहता

चित्र : विजय कुमार

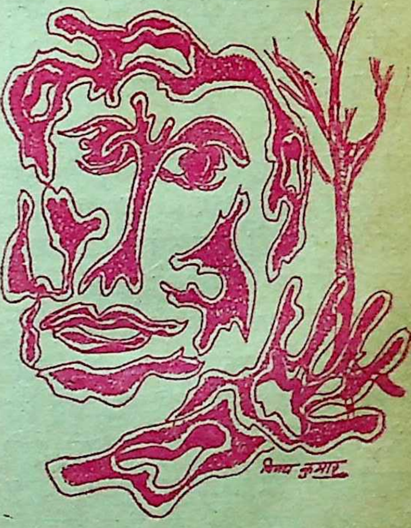

था। मेरा दुर्भाग्य था कि उस रात को आपने बात करने का मुझे मौका ही नहीं दिया। एक वह समय था, जब मैं तीन-तीन, चार-चार घंटे आपके पास बैठा करता था और एक वह समय था कि सदा के लिए पन्ना छोड़ते समय मुझे सिर्फ १५ मिनिट ही बात करने को मिले। मुझे आपकी ही भलाई की कुछ बातें करनी थी, मेरा कोई खास स्वार्थ नहीं था। खैर। मैंने पन्ना में डेढ़ मास और रहने के लिए पूछा था और उस पर आपने आज्ञा भी दे दी थी। श्रीमान की जवाई के चार दिन बाद मैं पन्ना से बाहर चला गया और एक महीने में वापस आया। डेढ़ माह ठहरने का मतलब सिर्फ यही था कि अपनी लिखी कुछ किताबें एक जगह बैठकर पूरी कर डालूं और सिर पर लदा हुआ कर्ज चुका दूं। आपका दर्शन भी एक बार और कर लेता। बस, यही बात थी। लेकिन जबकि आपके हुक्म पर हुक्म आये—'जितनी जल्द हो सके वियोगी हरिजी को पन्ना छोड़ देना चाहिये'—तब मुझे एक ठंडी सांस लेकर यों ही चल देना पड़ा। मजबूर हो आज मुझे वे सारी बातें लिखनी पड़ रही हैं, जो कि आपसे कहनी थीं। यदि ध्यान से आपने मेरा यह पत्र पूरा पढ़ लिया, तो आप अपने को 'सत्य' के बहुत निकट पायेंगे। मैं जानता हूं कि मेरे पत्र की कुछ लकीरें आपको बुरी मालूम होंगी, पर मेरी शुद्ध मंशा पर ध्यान देकर यदि आप पढ़ेंगे तो फिर नाराजी का कोई कारण नहीं। मेरा धर्म और कर्तव्य मुझे मजबूर करता है कि स्पष्ट शब्दों में ही आपके सामने ठीक-ठीक परिस्थिति रखी जाये।

'मैंने अपने को सदा सच्चा सेवक माना है। सेवा करने वाला आदमी ही सच्ची (भले ही ऊपर से कड़वी हों) बातें सुना सकता है और समय-समय पर अपने स्वामी को गलत रास्ते से हटा सकता है। मैं अपने इस दावे को बहुत अंशों में सच समझता हूं। नौकरी करने वाले भी सच्चे हो सकते हैं, पर ज्यादातर तो उनमें किराये के टट्टू ही होते हैं। जिनका सच्चाई से जरा भी संबंध नहीं, उनसे भलाई की क्या आशा की जा सकती है? दुर्भाग्यवश आप लोग ऐसे ही चापलूस नौकरों से घिरे रहते हैं जो आपको हमेशा अपने धोखे के पिंजड़े में बंद रखना चाहते हैं। आश्चर्य है कि आपको उस 'कैद' में सुख मिलता है। भगवान बचाये आपको उन भयंकर शैतानों से।

'मैं एक-एक बात की चर्चा नहीं उठाना चाहता। आप स्वयं देखें, स्वयं अनुभव करें। जब अछूत पाठशाला राजाज्ञा से खोली गयी, तब वह तूफान कैसे और कहां से उठा? किस तरह मेरे विरुद्ध प्रजा के कुछ लोग उभाड़े गये? इन पाठशालाओं की जो उन्नति हुई, उसका कैसा भ्रष्ट रूप आपके सामने रखा गया? जिन लोगों ने प्रजा में फैले हुए असंतोष को शांत किया, स्वराज्य का गलत ह

बताया, उन्हीं को बाद में किस वाहियात ढंग से कांग्रेसमैन कहा गया । फिर एक पक्का बदमाश आदमी किस तरह 'बाबा' के रूप में खड़ा किया गया और उसने पन्ना भर में कैसी भ्रष्टता फैलायी । इन सब बातों की गहराई तक क्या आप कभी गये हैं ? यदि नहीं, तो अब इनकी तह तक जायें और कृपया 'सत्य' के द्वार पर खड़े होकर आज भी पश्चाताप के दो बूंद आंसू बहायें । क्या मेरी इस प्रार्थना को आप स्वीकार करेंगे ?

'मेरे सर पर दो इलजाम सबसे भयंकर लगाये गये हैं । एक तो यह कि मैं छिपा हुआ कांग्रेसमैन हूं और दूसरा यह कि मैंने आपके भाइयों के दरमियान भेद या मनमुटाव पैदा करा दिया है । इन इलजामों को क्या कोई एक अंश में भी सच्चा साबित कर सकता है ? यह कोई छिपी हुई बात नहीं है कि कांग्रेस के साथ मेरी दिल से हमदर्दी है । कांग्रेस के बड़े-बड़े लीडर मेरे मित्र हैं । अख़बारों की दुनिया मेरे हाथ में है । मैं अपने अंदर शक्ति का अनुभव करता हूं । पर गांधीजी की नीति का मैं कायल हूं । जो कुछ जब करूंगा, सब खुलकर करूंगा, छिपे-छिपे नहीं । मैंने कभी भी पन्ना में ऐसी किसी बात का प्रचार नहीं किया, जो राज्य के या आपके विरुद्ध हो, क्योंकि मैं समझता हूं कि देशी राज्यों के सुधार में अभी कम से कम सौ वर्षों का समय लगेगा ।

'मैंने जो कुछ भी काम पन्ना में किया, वह सब राज्य की भलाई की दृष्टि से ही किया । बड़ौदा-मैसूर जैसे राज्यों में यदि मैंने इतना काम किया होता, तो वहां आज मैं 'राज्यरत्न' समझा जाता । पर यहां से तो मुझे कोई दूसरा ही पुरस्कार मिला । मेरे काम की पांच साल की जांच की गयी, लोगों में काफी बदनामी उड़ी और फिर 'देश निकाले' का पुरस्कार मिला । धन्यवाद ! मैं स्वीकार करता हूं ।

'मैं यह बहुत पहले से जानता था कि आप मुझे पन्ना से हटाने का निश्चय कर चुके हैं । दो-तीन महीने तो यों ही बात घूमती-फिरती रही । मुझे कोई आश्चर्य नहीं हुआ कि आपने आखिर ऐसी ही आज्ञा दी । मैंने काफी बेइज्ज़ती अपने सिर पर ली । दुनिया भर की झूठी बातें सुननी और सहनी पड़ीं । मैं देख रहा था कि कभी न कभी तो आप इन बातों की असलियत तक जायेंगे, पर मुझे निराश होना पड़ा । शायद यह भी एक बात थी कि गवर्नमेंट की नज़र पन्ना में मेरे रहने की वजह से अच्छी नहीं थी । पर यह भी विरोधियों के द्वारा रची हुई एक बात थी । मैं इसका कुछ-कुछ अनुमान कर सकता हूं और मेरा वह अनुमान बहुत कुछ सही है । ख़ैर, विरोधियों ने आपकी शासन-मनोवृत्ति पर अपनी लगातार कलाबाजियों के द्वारा खासी विजय पायी और अंत में, शायद संकोच के साथ, आपको यह फैसला देना पड़ा । अब आने वाला समय आपको बतलायेगा कि आपने कहां

चित्र : आर. डी. पुरोहित

कैसे गलती की और कभी आपको यह भी प्रकट हो जायेगा कि आप कितने घोर अंधकार में थे और वह अंधकार किन लोगों ने बनाया था। पर तब सिर्फ पछतावा ही हाथ में रहेगा।

'कलपती हुई प्रजा के 'हित चिंतन' में भी अपना कुछ समय निकालकर लगाया करें। छत्रसाल के वंशज के सिर पर प्राणों से प्यारी प्रजा ही आदर का ताज रख सकती है—कोई 'विलिंग्डन' या कोई 'होर' नहीं। जमाने की भी तरफ कुछ ध्यान देने की कृपा करें। महात्मा गांधी के व्रत का कुछ भी तो आदर कीजिये। सनातन धर्म के प्राण मालवीयजी की राय क्या आपने पढ़ी है ? अपने राज्य के समस्त मंदिरों को अछूत भाइयों के लिए खुलवा देने की आज्ञा जारी कर दीजिये। धन्य है टिपरा महाराज को कि जिन्होंने अ राज्य के सारे देवमंदिर अछूतों के लि खोल देने की आज्ञा दे दी। ईश्वर की इच्छा के खिलाफ न जाइये, यही आप विनय है।'

हरिजी को पन्ना छोड़ने के बाद भी उस समय भी जबकि वे इलाहाबाद के साहित्य भवन में साहित्यिक कार्य कर रहे थे, हरिजन उद्धार की बात सदा प्रेरित करती ही। जब ७ नवंबर, १९३२ को समाचार-पत्रों में यह छपा कि कश्मीर, बड़ौदा और भोर राज्यों ने अपने मंदिर हरिजनों के लिए खोल दिये तो हरिजी ने ८ नवंबर १९३२ को पन्ना नरेश के पास एक पत्र भेजा, जिसमें लिखा था-

'मैं कहीं भी रहूं, सदा इस बात का ध्यान रखूंगा कि पन्ना राज्य देश की नज़रों में ऊंचा ही बना रहे। पन्ना का गौरव बढ़ाने वाले कामों पर इसी कारण मौके-मौके पर श्रीमान का ध्यान दिलाता रहूंगा। इसे मैं अपना कर्तव्य समझता हूं। अस्तु।

'आपने पत्रों में तो पढ़ा ही होगा कि कश्मीर, बड़ौदा, भोर आदि राज्यों ने अपनी अछूत प्रजा के लिए राज्य के सारे मंदिर खुलवा दिये हैं। महात्मा गांधी ने कितने प्रेम के साथ उन सबको धन्यवाद दिया है, इसे भी आपने ७ नवंबर को पढ़ा होगा। इन राज्यों ने सचमुच ही भगवान की बड़ी सेवा की है।

'उस दिन मेरी छाती गज भर फूल

वह कभी मरता नहीं

वक्त की ठोकर लगी तो अच्छे अच्छे गिर पड़े
सबसे लड़ सकता है इंसां वक्त से कैसे लड़े
सब समय का खेल है इंसान की औकात क्या
वक्त के पांसे कभी सीधे कभी उल्टे पड़े

भाग्य से लड़ते रहे हम यह हमारा भाग्य था
चोट खायी मुस्कराये धूल झाड़ी चल पड़े
मौत आयी वह भी हमको देखकर हंसने लगी
आयी थी हमको लिवाने और खुद फंसने लगी

मैं तुम्हारी दोस्त हूं तुम तर्क में फंसना नहीं
जिन्दगी में और मुझमें फर्क है कुछ भी नहीं
देखकर के मौत को भी जो बशर डरता नहीं
बांटता मुस्कान है जो वह कभी मरता नहीं

—हुल्लड़ मुरादाबादी

५०३, 'चेतना', जयप्रकाश रोड, प्रताप नगर, अंधेरी (प.), बंबई – ५८

जायेगी और आपके प्रति दूनी श्रद्धा बढ़ जायेगी, जिस दिन अपने पन्ना राज्य के सारे मंदिर खोल दिये जायेंगे। राज्य की इज्जत देश की नज़रों में बहुत ऊंची हो जायेगी। बहती गंगा में क्यों न पैर-पखार लें, आख़िर तो कभी न कभी यह होकर ही रहेगा। क्योंकि भगवान अपने भक्तों को अलग नहीं रख सकता। हिंदू जाति के प्रायश्चित करने का यही युग है। इससे न चूकें—यही विनय है।

साहस के साथ 'घोषणा' निकालें। सत्य और साहस का फल अच्छा ही होता है। भगवान आपकी रक्षा करेंगे। अगर आपकी राय हो, तो एक पत्र मैं मझले राजा साहब को भी लिख दूं और श्री मालवीयजी का शास्त्रोक्त पत्र आपके नाम भेजवा दूं। आशा है, यह बात आपको पसंद आयेगी और इसका उत्तर देंगे।'

'हरिजन सेवक' का संपादन और 'हरिजन सेवक संघ' का काम तो वियोगी हरिजी ने इस घटना के काफी बाद प्रारंभ किया। पर यह पत्र-व्यवहार बताता है कि किस प्रकार एक समय भगवत भक्ति में विभोर और दूसरे समय राष्ट्रीयता की रसधारा में सराबोर श्री वियोगी हरि कभी भी हरिजनों के प्रति उच्च वर्ग द्वारा किये गये भेदभाव को सहन नहीं कर सके। यह कहना ठीक नहीं होगा कि

हरिजी ने कविता लिखना छोड़ दिया। उन्होंने गद्य काव्य लिखा है और खड़ी बोली में कविताएं भी लिखी हैं और मुक्त-छंद भी। पर इसका अर्थ यह नहीं कि उन्हें ब्रजभाषा से प्रेम नहीं रहा। उन्होंने १९६० में एक संकलन प्रकाशित किया जिसका नाम था–'उद्यान'। इसमें अनेक लेख हैं, जिनमें से एक ब्रजभाषा पर भी है। जिस प्रकार उन्होंने 'ब्रजमाधुरी सार' में ब्रजभाषा की श्रेष्ठ रचनाएं प्रस्तुत की थीं, उसी प्रकार इस लेख में भी ब्रजभाषा के बारे में उन्होंने लिखा –

'ब्रज-वाणी-उद्यान के वे केकी और कोकिल एक-एक करके उड़ गये। उपवन सूना-सूना - सा हो गया। भारतेंदु और राधाचरण प्रभृति कितने ही उस अमराई में जा रमे, जहां बारह मास माधवी रसालों की डालों पर नित्य विहार सहज सुना और देखा जाता है। उसी स्वर्ण व्योम-पथ का अनुसरण सत्यनारायण और रत्नाकर ने किया। सूना-बिहूनापन देखकर फिर भी निराश होने का कोई कारण नहीं। सूर ने जिस मोहन-मुरली को फूंका था वह फूंक न जाने कितने अंतस्थलों का स्पर्श करती हुई रत्नाकर तक जा गूंजी। आज भी उस कूजन से और उस गुंजन से रस का निर्झर फूट पड़ता है।

'ब्रज-वाणी की यह गूंज कितनी ही सीमाओं को तोड़ती हुई कहां-कहां पहुंची थी, और उसकी यह यात्रा सहज-सहज ही हुई थी। प्रचार के पाषाण-रथ पर बैठकर उसने अनुराग के अरुण-अरुण नव पुष्प जहां-तहां नहीं छितराये थे। राजस्थान में अपने साधना के पात्रों में मीरा और दादूदयाल और सुंदरदास ने उसका रस उड़ेला, गुजरात में भक्त नरसी ने अपने पदों का उसी रस से अभिषेक किया और पूरब में विद्यापति और चंडीदास ने कृष्ण-प्रेम की अनोखी झलक उसी दिव्य-दर्पण में देखी। वंगभूमि के अनेक वैष्णव भक्तों ने जिस भाषा में पद-रचना की उसे 'ब्रजबुलि' कहा गया।'

उन्होंने अंत में लिखा था-'ब्रज की तथा अन्य जनपदों की भाषाओं में आज बहुत कम पद्य रचना की जाती है। यह खेद का विषय है। अभिव्यंजना शक्ति इनकी बहुत बढ़ी है, जिसे ये कई शताब्दियों से प्रकट करती आ रही हैं। अतः यह उपेक्षणीय नहीं हैं। इन समर्थ भाषाओं में रचनाएं अवश्य होनी चाहिये, किंतु नव-चित्रण में अब वे पुराने रंग काम नहीं देंगे।

वियोगी हरिजी ने संत साहित्य को एक नया आयाम दिया और हिंदी के ही नहीं अन्य भाषाओं के संतों से भी हिंदी जगत को परिचित कराया। यह काम वे अंत तक करते रहे। समाज सेवा और साहित्य सेवा को उन्होंने कभी पृथक नहीं माना। साहित्य भी औरों के लिए और समाज सेवा भी उनकी, जिन्हें जरूरत थी। अपने लिए उन्होंने कुछ नहीं लिया सदा देते ही रहे।

–५५ काका नगर, नयी दिल्ली-११०००१

□

बाल-कविता

हम तुम दोनों एक से

डा. राष्ट्रबंधु

बादल भैया,
हम तुम दोनों एक से
रहे गरजते और बरसते
टेक से ।।

मैं बिजली दीदी को बहुत
चिढ़ाता हूं ।
नीली-पीली आंखें बहुत
दिखाता हूं ।।
नहीं मानता
करता काम विवेक से ।
बादल भैया,
हम तुम दोनों एक से ।।

मैं मौसी को बिल्ली कहता
प्रेम से ।
सदा अनियमित रहता अपने
नेम से ।।
पेट भरा करता
हूं टॉफी केक से ।
बादल भैया,
हम तुम दोनों एक से ।।

तुम जैसे घुस पड़ते हो हर
मौसम में
मेरा मतलब नहीं किसी के
क्षेम से ।।
मेरी गति कब रुक पायी है
ब्रेक से ।
बादल भैया,
हम तुम दोनों एक से ।।

–१०२/३०९, रामकृष्णनगर, कानपुर-१२

□

हर समस्या का समाधान टमाटर

□ भाई महावीर

संपादक गण की यह सुविचारित राय प्रतीत होती है कि किसी अंक की पाठ्य सामग्री तब तक पूरी नहीं मानी जा सकती, जब तक उसमें किसी न किसी फल या सब्जी के गुणों की विस्तृत व्याख्या करने वाला लेख न हो । अतः शबरी के बेर और शिवजी के बेल से लेकर काशी के काशीफल तक कोई अभागी ही वस्तु बची होगी, जिसका गुणानुवाद पाठकों तक न पहुंचा हो । ऐसे लेखों में मैंने यह रोचक तथ्य पाया है कि किसी भी सब्जी अथवा फल को ले लें, उसकी तारीफ को पढ़ने के बाद लगता है कि प्रायः सभी रोगों के लिए उसका सेवन लाभकारी ही नहीं, एक अचूक औषधि है । यह बात देशी बैंगन से लेकर विलायती बैंगन तक—सभी पर लागू होती है। आप 'विलायती बैंगन' से चक्कर खा गये ना ? क्या करूं, मैंने 'टमाटर' शब्द की व्युत्पत्ति के लिए अपने हिंदी शब्दकोश में जो पाया वह यही था—'खट्टा विलायती बैंगन', जो भी हो, विदेश से आयातित टोमैटो हो या पोटैटो, या फिर शुद्ध भारतीय परवल या कटहल, उसमें लेखक को शरीर भर के रोगों को दूर करने के गुण मिल जाते हैं ।

परंतु अतिशयोक्ति मालूम पड़ने वाले वर्णन के बावजूद कभी-कभी वह गुणगान अधूरा रह गया प्रतीत होता है। और यह तथ्य संपादक मंडल की सतर्क दृष्टि से भी छूट जाता है । टमाटर को ही लीजिये वह इसलिए, कि इस सब्जी में एक ऐसी विशेषता है जो शायद और किसी में नहीं है । वैद्यराज हमें बताते हैं—'टमाटर के नियमित सेवन से कमजोरी नहीं आती, शरीर में बल वृद्धि होती है एवं रक्त पैदा होता है।' पांडुरोग से लेकर नेत्र-विकारों और चर्म रोगों तक तथा मूत्र में शक्कर जाने से लेकर 'कब्जियत' और बच्चों के सूखा रोग तक सभी टमाटर से ठीक होते हैं। सूची इतनी लंबी है कि ऐसे रोग की खोज करना मुश्किल प्रतीत होता है, जो टमाटर के लिए असाध्य हो । मुझे अंग्रेजी के उस हास्य लेखक का किस्सा याद आ गया, जिसके हाथ चिकित्सा शास्त्र की पुस्तक लग गयी थी । उसने एक-एक बीमारी के चिह्न देखते हुए पाया कि प्रायः सभी के लक्षण उसमें हैं । किताब वहीं पटककर वह दौड़ा हुआ अपने डाक्टर मित्र के पास पहुंचा, और हांफते-हांफते बोला-'डॉक्टर मुझे बचाओ ।' 'क्यों, क्या हुआ, है तुम्हें?' डाक्टर ने हैरान होते हुए पूछा । 'मुझे क्या

बताऊं

है, जान ? मैं वह बताने लगूंगा, तो मुझे डर है कि सूची खत्म होने से कहीं तुम खुदा को प्यारे न हो जाओ। मैं आसान काम करूंगा—तुम्हें बीमारी बताऊंगा जो मुझे नहीं है। 'हाउसमेड्स नी' नहीं है बाकी, सब रियों के लक्षण मेरे अंदर हैं।'

तु टमाटर की कहानी फिर भी अपूर्ण। वैसे तो हमारे वैद्यों ने स्वयं को टर कहना और राष्ट्रभाषा के विकास लिए कटिबद्ध लेखकों ने अपने नामों संक्षिप्त करने के लिए अंग्रेजी वर्ण- के रामबाण अस्त्र को अपना लिया कृष्ण पाल के लिए के. पी. और प्रकाश के लिए ओ. पी. तथापि के अर्थ को शारीरिक कष्ट तक ही सीमित रखा गया है। हे भगवान्! कब हम अपने दृष्टिकोण को व्यापक बनायेंगे? कब व्यक्ति के स्वास्थ्य जितना महत्त्व समाज के स्वास्थ्य को और फिर पर्यावरण को भी देना शुरू करेंगे? वास्तविकता यह है कि न रोग इतनी छोटी चीज है और न उसका इलाज इतनी संकीर्ण चेष्टा। हमें कितनी बार नेता लोगों ने समझाया है कि रिश्वतखोरी, अहंकार, स्वार्थ, फूट आदि अनेक रोग देश को खोखला कर रहे हैं। उसी संदर्भ में वर्तमान काल के कई रोग हैं जिनका उपचार है मक्खन, क्योंकि कलियुग में जब कोई चारा न दिखायी दे तो चापलूसी से सब कार्य सिद्ध हो जाते हैं। सच तो यह है कि प्राचीन कथाओं के अनुसार भी जब कभी देवताओं

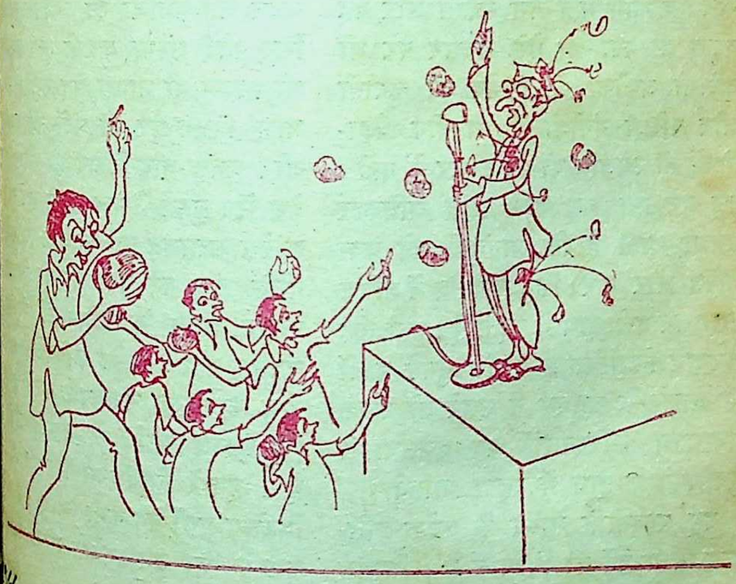

पर विपत्ति आती थी तो वे शिवजी या नारायण के पास जाकर पहले उनकी स्तुति करते थे । इस प्रकार युग-युग से चले आ रहे कष्ट निवारक मक्खन के इस गुण की चर्चा नहीं होती । कारण ? अभी तक चिकित्सा शास्त्रियों ने न सामाजिक रोगों को चिंता की है न उनके उपचार की ही

यह दुर्भाग्य नहीं तो क्या है कि टमाटर के गुणों के वर्णन में भी उसका सामाजिक लाभ उजागर नहीं किया जाता ? आज के ज़माने में समाज का एक बड़ा रोग है भाषणबाजी—हर अवसर पर टर्र-टर्र करने का । किसी गली के मूत्रालय का उद्घाटन करना हो अथवा सूखा पीड़ितों के राहत शिविर का शिलान्यास—वक्ताओं के बिना काम नहीं चल सकता और वह वक्ता ही क्या जो ऐसे अवसर पर भी दक्षिणी अफ्रीका के रंगभेद की चुनौती और दक्षिण गंगोत्री में भारतीय वैज्ञानिकों की उपलब्धियों पर 'टरटराये' नहीं । यह हर नेता का जन्म सिद्ध अधिकार समझा जाता है कि आगंतुकों को यथा शक्ति 'बोर' करे। किंतु लोकतंत्र में अंतिम सत्ता जनता के हाथ में रहती है। यहां तक कि यदि निर्वाचित प्रतिनिधि चुनने वालों की आशा के अनुरूप न उतरें तो उनके प्रत्यावर्तन ('रिकाल') का अवसर भी निर्वाचकों के हाथ में रहना चाहिये ।

यह राजनीति शास्त्र के अनेक प्रतिष्ठित विचारकों का विश्वास है । सिद्धांत रूप में यह मानते हुए भी व्यव यदि कोई दीर्घ सूत्री वक्ता न जंभाइ इशारा समझे, न घड़ी देखने के लिए हो तो क्या किया जाये ? ऐसे संक अवसर पर जनतंत्र के सच्चे प्र ('मिसाइल') के रूप में काम आ टमाटर । चार-छ: अच्छे नरम ट 'बोर' वक्ता के नाक का निशाना कर समर्पित किये जायें तो उसे मि भाषिता का लाभ तत्काल अनुभव क देते हैं। टमाटर के गुणों में व्यक्ति 'मस्तिष्क को संतुलित बनाये रखना' बताया जाता है। अतः वक्ता की प्र और श्रोताओं के धीरज में संतुलन समाज के स्वास्थ्य के लिए अत्यंत आ श्यक है। अब इस मजबूरी का क्या करें अगर भाषणबाजी को सीमित करने लिए कोई संस्था बनायी जाये तो भी भाषण ही भाषण होते रहेंगे। 'मौन लाभ' विषय पर भी घंटों लंबे व्या और अनंत वाद-विवाद हो सकते हैं देश में। सुनते " जब पहली बार प्रांतों कांग्रेस सत्तारूढ़ हुई थी और नशाबंदी नीति लागू की गयी थी तो शिमला इसका जशन 'काकटेल-पार्टी' के रू मनाया गया! अनेक कवियों को मदि पान के विरुद्ध काव्यपाठ करने के लि भी एकाध 'पौवे' की ज़रूरत होती है। हमारे विविध-आयामी देश में विरोधाभासों की कमी नहीं है। उनमें कुछ के लिए टमाटर शत-प्रतिशत वि

उपचार है और वह भी तुरंत फल-किसी भी इंजेक्शन से ज्यादा ता।

आज हमारा दुर्भाग्य यह है कि कुछ ों से टमाटर के दाम पंद्रह रुपये बीस रुपये किलो तक चढ़ गये हैं। पर भी उसे 'सर्व सुलभ' एवं 'सस्ता' रईसी या कम्यूनिस्टों की शव्दावली र्जुआ' मनोवृत्ति का द्योतक है। इससे अधिक चिंता की बात यह है महंगाई विरोधी मोर्चों और वेलन-महिलाओं के प्रदर्शनों में गरीब वर्ग पड़े हुए गृहस्थी के बोझ की ही दुहाई जाती है! देश के लोकतंत्री ढांचे के उत्पन्न हुए संकट की उपेक्षा हो रही। कोई वताये कि जब 'फेयर फ्रेक्स', ब्बियों और बोफोर्स जैसे महत्वपूर्ण हवा में गूंज रहे हों, हरियाणा में रों-अध्यापकों-डाक्टरों-नर्सों आदि के लिए हड़तालों का मौसम आया हो और देश के नेता यह साबित पर तुले हों कि यह सब कुछ विदेशी ों द्वारा हमारे अस्थिरीकरण की मात्र का फल है, तो टमाटरों—रूप से सड़े-गले प्रकार के टमाटरों—करण के बिना जनता अपने अधिकों की रक्षा कैसे करेगी? परिणाम यह कि आज पेशेवर उपदेशकों, कथावाचकों, प्रचारकों, समाध्यक्षों, व्याख्याताओं, उद्घाटनकर्त्ताओं तथा अन्यान्य प्रकार के दूसरे उद्बोधन-कर्त्ताओं की दया पर पब्लिक रह गयी हैं। शाकाहारी वर्ग गंदे अंडों को छू नहीं सकता। रहे फटे-पुराने जूते। इस गरीब देश में उनके बदले में कोई छोटा-मोटा बर्तन पाने की लालसा गृहलक्ष्मियों को नहीं छोड़ती। अंततः, एक लाचार जनता गलेबाजों के अनाचार से बचने के लिए कहां जायेगी और क्या करेगी, जब तक उसे टमाटर सुलभ नहीं होंगे?

संविधान द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकारों में भले ही यह शामिल न हो, परंतु लोकतंत्र में हमारी सरकार जिस आस्था का दावा करती है, यदि उसमें तनिक भी सच्चाई है तो उसे सार्वजनिक वितरण प्रणाली के द्वारा वाजिब कीमत पर गले-सड़े टमाटरों की बिक्री की तुरंत व्यवस्था करनी चाहिये। इस संबंध में हमारा तो दृढ़ मत है कि जितनी तीव्र आवश्यकता आतंकवादियों की हिंसा से मिनिस्टरों को बचाने के लिए बुलेट-जैकेटों और बुलेट-प्रूफ शीशे की है उतनी जरूरत है निरीह जनता को इन मंत्रियों के मौखिक आघात से बचाने लिए टमाटरों की! क्या कोई चिंता करेगा? **– ३८९ डबल स्टोरी**

न्यू राजेन्द्रनगर, नयी दिल्ली-११००६०

□

हम न पाप करते हैं न पुण्य करते हैं। हम केवल वही करते हैं जो हमें करना ता है।

—भगवतीचरण वर्मा

□

अरब-इस्राइल विवाद का अंत कहां होगा ?

☐ रामपाल

चालीस वर्ष से चल रहे अरब-इस्राइली विवाद का कहीं अंत होता नजर नहीं आता। पिछले चार मास से भी ज्यादा समय से यर्दन नदी के पश्चिमी तट और गाजा पट्टी में जारी फलस्तीनी-इस्राइली झगड़े में लगभग १५० फलस्तीनी मारे जा चुके हैं। इस झगड़े की आग ट्यूनिस तक फैली, जिसमें फलस्तीनी छापामारों के कमांडर अबू जिहाद मरे। झगड़े की शुरूआत एक मामूली सड़क दुर्घटना से हुई। गाजा पट्टी में एक इस्राइली ट्रक के नीचे आकर चार फलस्तीनी मारे गये। इस घटना के बाद इस्राइल विरोधी प्रदर्शन हुए, जिसमें इस्राइली सैनिकों ने एक ११ वर्षीय फलस्तीनी बच्चे को गोली मार दी। इसके बाद दंगे पश्चिमी तट तक फैल गये।

इस्राइल अधिकृत अरब क्षेत्र में एक राष्ट्रीय समिति सक्रिय है, जो अरब विद्रोह में तालमेल रख रही है। पर स्थिति यह है कि इस्राइल के विरुद्ध विद्रोह करने को फलस्तीनियों को तैयार करने के लिए किसी समिति की आवश्यकता नहीं। विद्रोह की आग जो फलस्तीनी मानस में एक अर्से से धधक रही थी अब अधिकृत अरब क्षेत्र में फैल गयी है। के एक युवा फलस्तीनी ने बताया 'अब हमें यह बताने की जरूरत नहीं हम इस्राइलियों से नफरत करते हैं। इतना निराश हो चुके हैं कि बंदूकों से हमें डर नहीं लगता।'

गाजा पट्टी और पश्चिमी तट इस्रालियों ने १९६७ की लड़ाई में किया था। तब से अब तक इन दोनों क्षेत्रों की उपजाऊ और जमीन से अरबों को जबरन हटाकर इस्राइली बस्तियां बसा दी हैं। तट में ऐसे ६०,००० और गाजा में २५०० इस्राइली नौबसतें आबाद गाजा पट्टी लगभग ४० किलोमीटर और आठ किलोमीटर चौड़ी है ६;३०,००० अरब रहते हैं। उनके दुनिया के 'जिन्दा नर्क' कहे जाते हैं गंदगी सड़कों पर बजबजाती है।

सब आधुनिक सुविधाओं से और इस्राइली आतंक की छाया रही जिंदगी ही इस उबाल का नहीं। शिकायतों की कभी खत्म

वाली एक लंबी सूची है । यही वजह थी कि जब इस्राइल अधिकृत अरब क्षेत्रों में अशांति भड़की, तब इस्राइली पुलिस में काम करनेवाले पुलिसकर्मी अपनी वर्दियां इस्राइली अधिकारियों को सौंपकर घर चले गये । रमल्ला में अरब कर-अधिकारियों ने इस्तीफा दे दिया और अरब व्यापारियों ने कर अदा न करने का सामूहिक फैसला किया । इस्राइलियों ने सामदाम से पुलिसकर्मियों और कर-अधिकारियों को फुसलाने की कोशिश की । फिर दंड नीति अपनायी और धमकी दी कि जो सरकारी कर्मचारी काम पर नहीं लौटेंगे वे पेंशन आदि सब सुविधाओं से वंचित कर दिये जायेंगे । अरब क्षेत्रों की पूरी तरह नाकाबंदी कर दी गयी । पर कोई प्रयोग कारगर नहीं हुआ ।

मुस्तफा अदावी पश्चिमी तट के इस्राइली पुलिस बल में पिछले २० वर्ष से हैं। १९६७ से पहले जब यह क्षेत्र यर्दन के नियंत्रण में था तब अदावी १० वर्ष तक यर्दनी पुलिस में रहे । सेवा निवृत्त होने में अब कुछ वर्ष ही बाकी हैं । पर वे पेंशन का मोह छोड़ चुके हैं । वे कहते हैं, 'साफ है, जो इस्राइली सेवा में रहता है वह फलस्तीनियों के साथ नहीं है ।'

आखिर ऐसा क्या हुआ कि २० वर्ष बाद भी अरब जख्म नहीं भरे । अदावी बताते हैं कि बातें छोटी-छोटी हैं, पर वे इतनी जमा हो गयी हैं कि जितना जप्त करते हैं जख्म उतना ही रिसते हैं । मुस्तफा अदावी को लगभग ७८०० रुपये वेतन मिलता है, जब कि समान पदवाला इस्राइली पुलिसकर्मी दूना वेतन पाता है । इस्राइली पुलिसकर्मी को पुलिस भोजनालय में मुफ्त भोजन मिलता है पर अरब पुलिसकर्मी को बाजार से कुछ खरीदकर पेट भरना पड़ता है । इस्राइली पुलिसकर्मी को पुलिस गाड़ी में उसके घर से ड्यूटी की जगह पर ले जाया और वापस घर पहुंचाया जाता है । अरब पुलिसकर्मी को पैदल या अपनी सवारी से जाना पड़ता है । अन्य सुविधाओं के बारे में भी इसी तरह का भेदभाव बरता जाता है ।

गाजा और पश्चिमी तट में जब अरब असंतोष दंगे के रूप में भड़का और बच्चे जहां-तहां इस्राइली सैनिकों पर पथराव

चित्र : विनोद दुबे

करने लगे तब इस्राइलियों ने अरबों को अपने ट्रकों से बांधकर उनका इस्तेमाल ढाल की तरह किया। ऐसे प्रसंगों का पता चला जब अरबों को पकड़कर जिन्दा दफनाया गया। इस्राइली रक्षामंत्री इसहाक रबीन ने इस्राइली नौबस्तों से कहा कि वे अरबों को जहां भी हाथ में कुछ लिये देखें वहीं उन्हें गोली मार दें। अब तक कुल जितने फलस्तीनी मारे गये उनमें लगभग १० प्रतिशत फलस्तीनी इस्राइली नौबस्तों की गोली के शिकार हुए।

अरब क्षेत्रों में फलस्तीनियों के विरुद्ध सेना का इस्तेमाल करने, पत्थर का जवाब गोली से देने और उनकी आर्थिक घेराबंदी करने के बारे में रक्षामंत्री इसहाक रबीन का कहना है कि हमारा इरादा यह है कि थोड़े से उद्दंड फलस्तीनियों को अधिसंख्य फलस्तीनियों से अलग कर दिया जाय। पर अरबों को दबाने के इस प्रयोग से आम इस्राइली सहमत नहीं। यरूशलम पोस्ट ने एक अग्रलेख में लिखा कि रबीन की नीति का नतीजा तो यह होगा कि अरबों और इस्राइलियों के बीच बाकायदा युद्ध छिड़ जायगा। अरब भी इस लड़ाई के खतरों से अपरिचित नहीं। उनका कहना है कि इस्राइली नौबस्तों पर किसी का नियंत्रण नहीं। उन्हें ऐसा मौका क्यों दिया जाय कि वे पगला जायें और अरबों की अंधाधुंध हत्या करने लगें। एक इस्राइली सैनिक अधिकारी का मत है कि यदि अरब और इस्राइली दोनों पगलायें तो फिर उनकी लड़ाई रुकवाना मुश्किल होगा।

अरब-इस्राइली झगड़ा खत्म करने के प्रयास भी कम नहीं हुए। अबू जिहाद की हत्या के बाद जो दंगे भड़के उनको देखकर तो फिर कहा जाने लगा कि शांति प्रयत्नों में तेजी लायी जानी चाहिये। १९६७ के छह दिन के युद्ध के बाद अरब-इस्राइली समझौते के कई प्रयास हुए। १९६७ में इस्राइल के श्रम मंत्री यिगाल एलन ने सुझाया कि पश्चिमी तट का दो तिहाई भाग यर्दन को सौंप दिया जाय। इस्राइल अपने पास सिर्फ यरूशलम और यर्दन नदी के तट पर आबाद कुछ नयी बस्तियों और फौजी चौकियों को रखे। पर एलन योजना इस्राइली सरकार के गले नहीं उतर सकी। इसके बाद १९७८ का कैम्प डेविड समझौता सामने आया। मिस्र के राष्ट्रपति सादात ने इस्राइल के प्रधानमंत्री बेगिन के साथ बात की और गाजा पट्टी छोड़कर समूचा सिनाई प्रायद्वीप मिश्र को लौटा दिया गया। गाजा में बड़ी संख्या में फलस्तीनी शरणार्थी हैं। मिस्र स्वयं नहीं चाहता था कि इस पट्टी को वापस लेकर वह अपने हाथ फलस्तीनी आग में जलाये। १९८२ में रेगन योजना सामने आयी, जिसमें पांच वर्ष बाद इस्राइली अधिकृत अरब क्षेत्रों को स्वायत्तता प्रदान करके उसे यर्दन के साथ संघबद्ध करने की बात सुझायी गयी थी। अब अमेरिका के विदेश मंत्री जार्ज शुल्ज का शांति प्रस्ताव सामने है। पिछली योजनाओं की

यह शुल्ज योजना का भी सार यही है कि फलस्तीनी मुक्ति संगठन इस्राइल को मान्यता दे और बदले में इस्राइल पश्चिमी तट के अधिकाश भाग को यर्दन को लौटा दे। गोर्वाचोफ ने भी फलस्तीनी मुक्ति संगठन के नेता यासर अरफात से कहा कि पश्चिम एशिया में यह शांति के हित में होगा कि इस्राइल के अस्तित्व को स्वीकार किया जाय ।

पर ये सब योजनाएं परवान नहीं चढ़ सकीं। इसका एक बड़ा कारण यह रहा कि यर्दन के शाह हुसेन अपने आपको फलस्तीनी उलझन में फंसाना नहीं चाहते। यर्दन की आबादी में पहले ही बड़ी संख्या में फलस्तीनी मौजूद हैं। शाह हुसेन नहीं चाहते कि लगभग १५-१६ लाख और फलस्तीनी यर्दन के साथ आ जायें। यर्दन में फलस्तीनी बहुमत हो जाने से उनकी गद्दी खतरे में पड़ सकती है। शायद यही वजह है कि जब बात शुरू होती है तब शाह हुसेन उसे विफल करने का प्रयास शुरू कर देते हैं। अब अरब लीग के प्रस्ताव से यर्दन के लिए इस्राइल से बात करना और मुश्किल हो गया है। पिछले वर्ष अरब लीग ने प्रस्ताव पास किया था कि कोई अरब देश इस्राइल के साथ अलग से शांति वार्ता नहीं चलायेगा। इस प्रस्ताव का परिणाम यह हुआ है कि जब तक इस्राइल सीरिया के गोलन पहाड़ी क्षेत्र को भी छोड़ने को तैयार नहीं होता तब तक उसके साथ और कोई बात नहीं हो सकती। ऐसा नहीं लगता कि इस्राइल गोलन पहाड़ी छोड़ेगा और शाह हुसेन सीरिया के असद की उपेक्षा नहीं कर सकते ।

फलस्तीनियों का सदर मुकाम पहले यर्दन में था। शाह हुसेन ने सत्तर के दशक में फलस्तीनियों को अपने यहां से निकाल दिया था। इसके बाद यासर अरफात ने अपना केंद्र दमिश्क में बनाया। इस्राइल ने लेबनान पर हमला करके जब यासर अरफात को लेबनान से निकाला, तब सीरिया ने भी अपने यहां अरफात के कार्यालय बंद कर दिये। यहां से अरफात ट्यूनिस चले गये। ट्यूनिस में अबू जिहाद की हत्या और उन्हें दमिश्क में दफनाये जाने के बाद यासर अरफात और सीरिया के हाफिज अल असद में फिर समझौते का रास्ता खुला है। फलस्तीनी मुक्ति संगठन की फूट यदि खत्म हो जाती है और हाफिज अल असद तथा यासर अरफात एक हो जाते हैं तो इस्राइल पर दबाव डालने की फलस्तीनी सामर्थ्य बढ़ जायगी। इससे समझौते का रास्ता भी खुलेगा। इस्राइल अधिकृत अरब क्षेत्र में फलस्तीनी विद्रोह से बातचीत की आवश्यकता और उजागर हुई है। यह विद्रोह इस्राइल के लिए इसलिए भी भारी पड़ रहा है कि अब उसका सामना अपने घर के भीतर बैठे अरबों से है। अब तक इस्राइल फलस्तीनी मुक्ति संगठन से बात करने से इनकार करता रहा और अरब देश इस्राइल से बात करने से कतरा रहे थे। पर

अब इस्राइल को फलस्तीनियों से सीधे बात करनी होगी।

इसका मतलब यह नहीं कि वार्ता और समझौते का रास्ता साफ और सरल हो गया है। मार्ग की बाधाएं अब भी ज्यों की त्यों हैं। फलस्तीनी पूरी गाजा पट्टी और समूचा पश्चिमी तट चाहेंगे। इस्राइल यरूशलम लौटाने के पक्ष में नहीं। फिर इस्राइली बस्तियों का क्या होगा? शुल्ज योजना इन समस्याओं के हल के लिए अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन का सुझाव देती है। इस सम्मेलन में सुरक्षा परिषद के पांचों स्थायी सदस्य भाग लेंगे। इस्राइली नागरिकों का भी एक बड़ा भाग समझौता वार्ता के पक्ष में है। इस्राइली विदेश मंत्री और लेबर पार्टी के नेता रूसी पक्ष से संपर्क बनाये हैं और चाहते हैं कि समस्या का शीघ्र समाधान निकले। हालांकि इस्राइल में ऐसे लोग भी हैं जो मानते हैं कि लड़ाई तभी खत्म होगी जब या तो हम जीतेंगे या अरब जीतेंगे। पर वे इस सच्चाई को भूल जाते हैं कि जब पड़ोसी लड़ते हैं तब दोनों जीतते या दोनों हारते हैं। फिर फलस्तीनियों के साथ इस्रालियों के युद्ध से उन मूल्यों पर भी प्रश्न चिह्न लगने लगा है, जिनको ले इस्राइल की स्थापना हुई है।

नात्सी अत्याचारों से पीड़ित यहूदी जाति को बचाने के लिए इस्राइल राज्य की स्थापना की आवश्यकता रेखांकित हुई। पर क्या इस्राइल इसलिए बना कि वह अरब जाति के साथ वैसा व्यवहार करे जैसा नात्सियों ने यहूदियों के साथ किया था? यहूदी फासिस्टों और नात्सियों द्वारा शासित यूरोप से इसलिए भागे थे कि अपनी जीवन पद्धति और विश्वासों की रक्षा कर सकें और स्वतंत्र मानव समाज में बराबरी के आधार पर रह सकें। क्या अब उन्हें यह हक है कि अरबों की जीवन पद्धति, उनके विश्वास और समानता के आधार पर जिंदा रहने की उनकी आकांक्षा को मिटा दें? ये सवाल मानव सभ्यता के बुनियादी सवाल हैं और इस्राइलियों को तय करना है कि अपने मूल्यों की रक्षा के लिए अपने पड़ोस में रहनेवालों से समझौता करके किस प्रकार रहें कि जिन मूल्यों की रक्षा करने के लिए उन्होंने संघर्ष किया उनका लाभ सबको मिल सके।

–११/१ डालीबाग कालोनी,
तिलक मार्ग, लखनऊ-२२६००१, उ.प्र.

□

लज्जागुणौधजननीं जननीमिव स्वामत्यन्तशुद्धहृदयामनुवर्तमानाम्।
तेजस्विनः सुखमसूनपि सन्त्यजन्ति सत्यव्रतं व्यसनिनो न पुनः प्रतिज्ञाम्॥

सत्यवादी तेजस्वी पुरुषों के लिये अपने को लज्जादि उत्तम गुणों में प्रवृत्त करने वाली प्रतिज्ञा का पालन करना भी अपनी माता के समान ही प्रिय होता है। अतः वे अपनी प्रतिज्ञा भंग करने की अपेक्षा प्राण-त्याग करना श्रेष्ठ समझते हैं।

□

दस द्वार

[लेखक द्वारा रचित प्रबंध काव्य 'अग्नि सागर' का एक अंश]

— डा. श्यामसिंह 'शशि' —

मनु पूर्ण पुरुष थे अब
अंधकार लील चुका था प्रकाश
जीवन का अर्थ
पा गये थे अब वे
विश्व-भ्रमण के बाद
ज्ञान गहन दृष्टि नव्य
परखा था मनु ने
अनेक सभ्यताओं को
विभिन्न संस्कृतियों को
मनु ने जिये थे
गांव-नगर
वन-पर्वत
धूप-छांव
और फिर अपना युग
अपना आज
अपना कल
सत्य अब निकट था
वैमानिकों की दुनिया
नहीं थी वह
यथार्थ का कल्पवृक्ष था
और मन
मन भी तो कल्पवृक्ष है
जब चाहे जो चाहे
मिल जाता है सब कुछ
मन के मोदक-सा
भ्रमण एक पल में
दस-दस दिशाओं का
राग वैराग जिये
एक साथ एक क्षण
मनु को मिल गया
संतुलित विवेक और
लघु और कुछ विराम भी
जीवन में संतुलन
उपलब्धि है श्रेष्ठतम
महामानव बनने का
निर्विकार क्रम है यह
और इसी सुयोग में
बोल उठे एक दिन
प्रातःवेला में मनु—

'धृतिः क्षमा
दमो अस्तेयं
शौचमिन्द्रियनिग्रहः
धीर्विद्या सत्यमऽक्रोधो
दशकं धर्मलक्षणम्'
मानव अब आ गया

अर्थ जानने को
अपने जनक से
'तात, स्पष्ट कहो
टीका भी करो न'
मनु खोयें स्मृतियों में
देने लगे अर्थ—
'सुनो मानव,
लक्षण हैं दस
धर्म के
या कहूं दिशाएं दस
प्रथम है 'धैर्य' की
कितना ही कष्ट मिले
कितने ही हों प्रहार
धैर्य न खोना वत्स !
दूसरा है 'क्षमा' धर्म
जीवन की कसौटी यह
अपकार भी करे कोई
खोना न विवेक, तात,
क्षमा ही परीक्षा है !

'दम' मन का संयम है
काम-क्रोध-लोभ-मोह
तुम्हें न डिगा सके
कर्त्तव्य-पथ याद रहे
नियंत्रित हों कामनाएं
वासनाएं शांत रहें
अस्तेय निषेध की
दिशा में सन्निहित
चौर्य से विरत प्रण
मन-वचन-कर्म से
बड़ा कठिन व्रत यह
जब समझ जाओगे
बड़ा सुख पाओगे
और जब छोड़ोगे
कष्ट ही उठाओगे

और 'शौच'
पर्याय पवित्रता का
भीतर की बाहर की
जीवन की क्रांति है
नित्य सुखद शांति है
इंद्रियां चंचल हैं
पांच कर्मेंद्रियां हैं
पांच ज्ञानेंद्रियां
वश में रखोगे इन्हें
पूर्ण कहलाओगे

सातवीं दिशा में चलो
सद्बुद्धि साथ लें
आठवीं दिशा में
फहराती विद्या-ध्वजा
अर्जित करोगे जब ज्ञान के दीप
तम के गगन में
तब ज्योति लहरायेगी
कीर्ति की पताका भव्य
विश्व में फहरायेगी

'सत्य' है शाश्वत दिशा
जीवन का सार है
ईश्वरीय प्यार है
सृष्टि का श्रृंगार है
इसे जो जीता है
अमरत्व पीता है
जितना कठिन यह पथ
उतना ही सरल है

दसवीं दिशा में चलो
'क्रोध' का विरोध हैं
उक्ति पुरानी है
क्रोध जन्माता मोह
मोह से स्मृति-भ्रंश
और फिर विनाश है
क्रोध को जीत लिया
शिवत्व पा लिया
अब न कुछ सपना है
ब्रह्माण्ड अपना है

०००

और सुनो मानव,
मैंने जो दिशाएं दीं
दिशाएं नहीं हैं केवल
जीवन के द्वार हैं
रहस्य शुभ-चिंतन के
सुख और शांति के
अतुल भंडार हैं
ये न उपदेश हैं
और न संदेश हैं
युगों-मन्वंतरों के
अनुभव अनेक के
सार-संक्षेप हैं
नहीं इनमें कर्मकाण्ड
और नहीं नया धर्म
किंतु श्रेष्ठ जीवन का
गूढ़ एक मर्म है
जीवन का दर्शन है
मानवीय धर्म है।

०००

मानवता जब विचलित होगी
ये द्वार खुले तब पायेंगे
आशा-विश्वास लिये जग में
सुख-शांति प्रेम सरसायेंगे।

—निदेशक, पब्लिकेशन डिवीजन, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली—११०००१

रस-रंग

□ डॉ. भालचंद्र तिवा

रस का नाम सुनते ही मुझे गन्ने के रस का स्मरण हो आता है और रसना रसमयी हो जाती है। साधारणत: रस किसी पदार्थ के निचोड़ने से प्राप्त वह तरल द्रव्य है, जो स्वाद वैभिन्य के बावजूद उस पदार्थ की जीवनी शक्ति का द्योतक है। सुस्वादु रस तो ग्रहणकर्ता के जीवन को हो रसमय बना देता है।

जीवन एवं रस का बड़ा निकट का संबंध है, जीवन रस यदि सूख गया तो शरीर निष्प्राण हो गया। लेकिन हमारे मान्य विश्वासों के अनुसार रस की सदैव तरलमयी स्थिति नहीं रहती। रस शुष्क भी होता है, किंतु प्रभविष्णुता में समान होता है। अत: यहां रस की सामान्य परिभाषा किंचित संशोधन चाहती है। यह कि रस किसी पदार्थ से नि:सृत केवल तरल द्रव्य ही नहीं, बल्कि शुष्क द्रव्य भी है, जो स्वरूप भेद के विपरीत समान रूप से गुणकारी है : शुष्क रस खनिज पदार्थों को रासायनिक प्रक्रिया से शोध कर बनाया जाता है, जो गुण एवं धर्म में तरल रस के समान या उससे भी अधिक शक्ति शक्ति शाली एवं प्रभावकारी होता है। इसीलिये इसे केवल रस न कहकर 'रसायन' संज्ञा से अभिहित करते हैं।
विधि से इसका सेवन करने से
निरोग हो जाता है।

भावभूमि की उच्चता को प्राप्त
को तो मेरे उपर्युक्त रस संबंधी विवेच
किंचित रसवता न झलकती होगी,
उसी भौतिकता की झलक मिलती
जिससे मुक्ति पाने के लिए रस (
की खोज है। किंतु यह अनावश्यक
है, भूत (शरीर) का सुदृढ़ीकरण आव
है। क्योंकि 'शरीर माद्यं खलु धर्मसाध
काव्य शास्त्री 'विभावानुभाव व्यभि
के संयोग से जिस रस की निष्पत्ति
हैं, उसे वे ब्रह्मानंद सहोदर कहते हैं।
साहसिक कथन है काव्य शास्त्रियों
वे एक ऐसे रस की उद्भावना कर
जो चक्षुओं से न तो दृश्य है न तो
द्वारा स्वाद्य है, और न स्पर्श्य है।
अनुभव की वस्तु है। मस्तिष्क के
में पेरा जाता है और उसकी धार
हृदय मुख में गिरकर हृदय को आ
एवं आह्लादित करती है।

काव्य शास्त्र के अवगाहन से प्रा
मन की उच्च भावभूमि पर प्र
है। कवि उसके लिए नितांत

अपनाते हैं। साहित्य में रसों भावना तथा उनका ग्रहण–जैसा कहा जा चुका है – सीधे हृदय विषय है। इसीलिये उसका स्वाद भी (बुद्धि) एवं हृदय (आत्मा) ता है। तभी तो भावबोध संपन्न ने ब्रह्मा से वरदान मांगा है– कवित्तनिवेदनं शिरसि मा , मा लिख, मा लिख।'

: रस की दूसरी परिभाषा भी चाहती है। रस मात्र तरल या द्रव्य न होकर एक भावमयी अनुभूति है, जो अदृश्य रूप से इंद्रियों के स्पर्श करती हुई जीवनी-शक्ति को प्रदान करती है।

हित्यिक लोग रस को सर्वोच्च स्थान करते है, उनका तो कथन है कि रसादृते कश्चिदर्थं प्रवर्त्तते।' जीवन गतिमान बनाने के लिए रस अनिवार्य है। इसके बिना जीवन का कोई उद्देश्य सफल हो सकता। रस स्थूल से जितना होता जाता है, उसकी प्रभावशीलता उसी अनुपात में बढ़ती जाती अपरिहार्य है, रस त्याग से जीवन जायगा। इसीलिये तो गोपिका ने :

लालच लाल की मुरली धरी लुकाय।
मोहन, हंसे, देन कहे नटि जाय॥

रस के सेवन से जिस प्रकार स्वस्थ होता है, उसी प्रकार भाव के सेवन से मस्तिष्क प्रसन्न होकर और आत्मा को पवित्र करता है। रस ही जीवन है, रस से ही जीवन ऊर्जा प्रज्ज्वलित होती है। तभी तो शकुंतला के सौंदर्य रस को आंखों के माध्यम से हृदय में ग्रहण-कर कालिदास के शब्दों में दुष्यंत (आनंद विभोर होकर) कह उठे –

सरसिजमनुवद्धं शैवलेनापि रम्यं
मलिनमपि हिमांशो लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति।
इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।

सौंदर्य दर्शन से प्रेम जाग्रत होता है। प्रेम अंग-अंग में मादक रंग भर देता है। सच पूछियै तो प्रेम और सौंदर्य का अन्योन्याश्रित संबंध है तभी तो शकुंतला के सौंदर्य को देखकर दुष्यंत के मन में

चित्र : मंजु रंजना मिश्रा

प्रेम की स्मृति जाग उठी।

रम्याणि वीक्ष्य मधुरांश्च निशम्य शब्दान्
पर्य्युत्सकी भवति यत् सुखितोऽपि जन्तुः।
तच्चेतसा स्मरति नूनमबोधपूर्वं
भावस्थिराणि जननान्तरसौहृदानि

श्रद्धा का सौंदर्य निष्क्रिय मनु के मन प्रवृत्ति-मार्गीय रस से सराबोर कर देता है। श्रद्धा उसके मन में जीवन में काममयी चेतना के रूप में उठती है। श्रद्धा का सौंदर्य जिस क्रम से स्थूल से सूक्ष्म होता जाता है उसी क्रम से शरीर मन तथा आत्मा को, ऊर्जस्वित करता है। द्रष्टव्य है—

नील परिधान बीच सुकुमार,
खुल रहा मृदुल अधखुला अंग
खिला हो ज्यों बिजली का फूल,
मेघ बन बीच गुलाबी रंग

×

कुसुम कानन अंचल में मंद
पवन प्रेरित सौरभ साकार।
रचित परमाणु पराग शरीर
खड़ा हो ले मधु का आधार।
और पड़ती हो उस पर शुभ्र
नवल मधुराका मन की साध।
हंसी का मद विह्वल प्रतिबिम्ब
मधुरिमा खेला सदृश अबाध।।

(कामायनी)

पंत की "आंसू की बालिका" में तो क्रमशः अशरीरी सौंदर्य (जिससे रसोद्रेक होता है) ही अधिक, ग्राह्य प्रतीत होता है।

उषा का था उर में आवास
मुकुल का मुख में मृदुल विलास।
चांदनी का स्वभाव में वास।
विचारों में बच्चों की सांस।

अधिकांशतः विचारकों एवं को अशरीरी सौंदर्य में ही अधिक भूति हो ी है।

रस में रंग का मिलन एक प्रा हासिक घटना है। अतः इस पर शोध अपेक्षा है, किंतु मेरे लिए तो रस में दूध में भंग के समान है। जिस प्रकार में भंग का मिश्रण पौष्टिकता के मादकता लाता है, उसी प्रकार रंग का संयोग रस से प्राप्त आनंद द्विगुणित क्या बहुगुणित करता है। निकों की दृष्टि में तो सूर्य रश्मियों चमत्कार ही रंग है। रश्मि को ही या सामान्य भाषा में रंग कहते हैं।

रंग का यह वैज्ञानिक स्वरूप हमारा अभीप्सित नहीं है। रंग रश्मि चमत्कार तो वैज्ञानिकों के लिए है लिए तो रंग मन की अबाध उद्दाम तरंग है, जो ऊर्जा से समन्वित होकर में नवजीवन की लहर उत्पन्न करती है प्रभविष्णुता की दृष्टि से रस रं समन्वित स्वरूप वाद्य के हाथ में की तरह है। रस, रंग तो आपस में घुल मिल गये हैं कि उनका चोली का साथ हो गया है। इसीलिये ने ठीक ही कहा है कि 'गोरी के रं भीज गे सांवरो सांवरो रंग में भीज गोरी।' 'कतहु निमज्जन कतहुं में ही जीवन की सार्थकता निहित है

और रस रंग जब जीवन के निवृत्ति को सराबोर कर देता है तो दृश्य ही हो जाता है। 'रसो वै सः' (तैत्तरीय द) ब्रह्मानंद का वाचक है। ब्रह्म स्वरूप है। रस ही जीवन है। अतः या मुक्ति प्राप्ति के लिए रस- अनिवार्य है। इसी साधना में सफ- प्राप्त करने पर साधक अग्नि मंडल कर सूर्य मंडल में प्रवेश करता है। मंडल के मध्य शुक्रवर्ण एवं भास्कर अखंड ब्रह्ममंडल विराजमान है।

री मुद्रा में योगिजन इसी मंडल से स्रवित सुधारस का पान हैं।

अवस्था में इस सृष्टि के संपूर्ण ब्रह्ममय ही दिखायी पड़ते हैं। विशिष्ट रंग से रंग जाता है। तो-

लवंग लता परिशीलन
मलय समीरे।
निकर करंवित कोकिल
कुंज कटीरे।

मार्गीय, भक्त मधुर रस का कर आनंदातिरेक में डूब जाते सूफी साधक मादन रस धार के प्रवाह में बहकर प्रिया के रसमय रसास्वादन करते हैं। कौल की पंचमकार रस साधना अपने निराली है। हठयोगी सहस्रार उत्पन्न रस धार का आस्वादन कर अमर बन जाते हैं। भक्ति रस का अपना अलग ही स्वाद है। ईश्वर के प्रति एक-निष्ठ श्रद्धामय प्रेम तथा उससे उत्पन्न आनंद मय रस ही भक्ति है। अतः रस ही आनंद तथा रस ही प्रेम है। इसीलिये तो वैष्णवाचार्यों ने आनंद चिन्मय रस कह कर प्रेम की व्याख्या की है।

रस के भेद विभावादि अनेक भावरंग के मिश्रण से पैदा होते हैं। इसी प्रकार अनेक प्रकार के रसों का आस्वादन करने वाले रसिया लोगों के भी भेद होते हैं। कोई 'राम चरित सुनिवे को रसिया' है, तो कोई गुलाबी गालों के स्पर्श का तथा चुलबुली चालों का रसिया है। कोई 'रस बरसै भीजै चुनरवाली' के अंगन्यास के दर्शन का रसिया है तो कोई दिव्यचक्षु प्राप्त कर भगवान के विराट स्वरूप के दर्शन लाभ का रसिक है। कोई शरबतिया है तो कोई बतरसिया है तो कोई चपरसिया है।

सामान्य रस से विशिष्ट रस तब बनता है, जब उसमें रंग का मिश्रण होता है। रस बहु-आयामी एवं बहुअर्थी है। रस का आकर्षण ही जीवन को क्रियाशील करता है।

रस लोलुपता ही रंग के मिश्रण के आधार पर जीवन को सार्थक या निरर्थक बना देती है। रस के बिना संसार की किसी वस्तु का अस्तित्व नहीं है। रस ही चेतना है, रस ही प्राण है। —५५७/१४ 'ब'

ओमनगर, आलमबाग, लखनऊ, उ. प्र.

जागृति की यात्रा पर उनींदे चरण

☐ मुनिश्री राजेन्द्रकुमार 'रत्ने

चौदह साल की किशोर वय में 'अप्प दीपो भव' का अनुसरण कर प्रव्रज्या के साधना-पथ पर बढ़ने वाले मुनिश्री रत्नेशजी ने लौकिक दुनिया के बंधनों को कैसे अपनी संकल्प-शक्ति के द्वारा मर्मांतक अनुभूति के साथ समाप्त करके वीतराग का जीवन स्वीकार किया, उसे उन्हीं के शब्दों में पढ़िये। -संपादक

मेरे जोधपुर स्थित जन्म-गृह की भित्तियां जिन्होंने मेरा नग्न शैशव देखा है, उनके पाषाण खंड भी प्राणवंत प्रतीत हो रहे थे। मेरे गमन की या अपने में आगमन की वेला में प्रस्तर खंड भी मानों बरस रहे हों, कैसे बताऊं कि जब मैं प्रव्रज्या के पंथ पर कदम बढ़ाने के लिए विदा हुआ तब मेरे परिजन ही नहीं, मेरा गृह-द्वार भी सुबक रहा था। कैसे बताऊं कि दहलीज अपनी बांहें पसारकर मुझे रोक रही थी। जिन रज-कणों से मैं कई बार नहाया था, वे भी मुझे आगे बढ़ने से रोक रहे थे।

कैसे बताऊं मैं उनकी मौन व्यथा को, उनकी अव्यक्त वाणी को, महज मैं ही अनुभव कर रहा था। कैसे दूं उस शब्दहीन वेदना को शब्दों का आवरण? कैसे दूं घर के बाहर खड़े अशोक वृक्ष के मूक-क्रंदन को शब्द, जिससे सब जुड़ सके उसकी वेदना के साथ?

घर से बाहर निकलकर मैंने एक विवश दृष्टि अपने द्वार पर फेंकी तो ऐसा अनु
हुआ कि वह कह रहा है-'अब आना
फिर अतिथि के रूप में, मैं तुम्हारी
प्रतीक्षा करूंगा।'

घर के पास वाले मंदिर में मां
ले गयी और उसी ने मेरा माथा देव
चरणों में झुकाया, और उसकी
बरस पड़ीं सावन की नदियों की
जब मानवीय व्यथा को मानव नहीं
है तो पत्थर की प्रतिमा के आगे
अपने आंसू बहाकर वह एक अतृप्त
की अनुभूति प्राप्त करता है। शायद
ही किसी भाव-प्रवाह में मेरी मां कहीं
रही थी। मां के अश्रुओं की डोरी मेरे
कदमों को नहीं बांध पायीं। इसके
मेरी वह बोध-शक्ति थी कि जीवन
नाओं का एक प्रवाह है और यह
का सिलसिला छोड़ जाता है,
सुख-दुःख, मिलन-विदाई का
संगीत बजता रहता है। और फिर

स्मृतियां जब हम करते हैं तो यथार्थ लोक से दूर.... बहुत दूर किसी सूक्ष्म वाता- त में प्रवेश कर जाते हैं, जहां हमें अपनी ता तक की स्मृति नहीं रहती । फिर गये मेरे चरण अवरुद्ध ! उस लाल रों से बने द्वार पर, जैसे वह मुझे रुक ने के लिए इशारा कर रहा हो । मैं नी स्मृतियों की जुगाली करने लगा, जो अब अतीत की भीनी-भीनी सुगंध की ह मेरे अंतर्मन में बसी जा रही थीं । तियों के उमड़ते ज्वार में मैं एकदम होकर बह रहा था । फिर मैंने श्रांत बढ़ने की ठान ली । क्योंकि मेरा पुकार रहा था कि 'ये सब तुझे नहीं रहे हैं तू तो स्वयं इनसे बंधता जा रहा है!' अपनी दुर्बलताओं को हृदय की दीवारों में कैद कर मैं बढ़ गया यात्रा की ओर, जागृति की यात्रा पर उनींदे चरण बढ़ गये । मेरे हाथ में ज्ञान का दीपक था, जिससे मैं की अंध अनिर्वार खाइयों को उजाले उपहार देकर कालिमा की सूनी मांग रोशनी के सिंदूर से ।

लोक की ओर

१७ मई १९७८ की सुनहली सुबह ! सूरज का जागरण हुआ, त्यों ही संयम संन्यास में न्यस्त होने के लिए मेरा अभिनिष्क्रमण हुआ । हजारों नर-नारी बनने के लिए मेरे पीछे-पीछे चल थे। मैं भाग्य के प्रलोभनों को ठुकराकर की प्रबल विजय की दिशा में अग्रसर संयम रथ का सारथी बनने के लिए बढ़ रहा था । मुझे यह बोध प्रेरणा दे रहा था कि क्षण का आवेग अपने पीछे विध्वंस के खंडहर छोड़ जाता है और क्षणिक संवेग सृजन का अविकल इतिहास होता है । अपनी अंतःचेतना पुकार-पुकार कर कह रही थी—जीवन के उल्लसित रूप को वासना विद्रूप कर देती है । अनुराग के अमृत को भी वासना विष बना देती है, जिससे संपृक्त होकर चेतना मरण-पीड़ा से कसमसाती रहती है । मेरे मन का महाकाश एकदम निर्लेप था । कोई विकल्प मेरे अंतस में अस्तित्वमान नहीं था ।

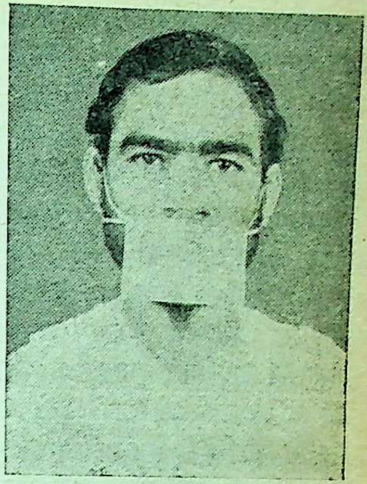
मुनिश्री राजेन्द्रकुमार 'रत्नेश'

जब सहसा मेरे कर्ण कुहरों में जनरव से एक स्वर टकराया—'चौदह वर्ष की अल्पायु में संयम का क्या बोध है इस नन्हे से बच्चे को ?' यह अपरिचित प्रश्न मेरे

किशोर-मन पर तीखे तीर-सा लगा। क्षणेक के लिए मैं अपने संलक्ष्य के प्रति सशंकित हो उठा। पर मैं अकंप रहा, हिला नहीं। चूंकि मैं जानता था कि संशय के शिखर से ही समाधान का सहस्रकिरण सूरज आंखें खोलता है और प्रश्न की अनुत्तरित पीड़ा ही अव्यक्त की अभिव्यंजक होती है। मेरे हृदय में समाधान का सूरज उग ही गया कि 'ध्रुव अतिमुक्त एवं कुणाल ने भी कैशौर्य की संकरी गलियों से गुजर कर ही तो संस्कृति सागर की लहरों पर प्रव्रज्या की पतवार से सृजन का इतिहास लिखकर अपने अस्तित्व की महत्ता स्थापित की थी। अर्हतों के शाश्वत परंपरा पथ पर चरण धरते ही अनेक अनुराग भरी आंखों से अश्रुओं की धारा बह चली। फिर भी मैं स्थिर और अकंप था। मेरी भावनाओं में किसी नवसत्ता का प्रसव हो रहा था, जिसकी मधुर वेदना से मैं कसमसा रहा था। पूज्य गुरुदेव मुनिश्री 'कुमुदजी' के द्वारा 'शिखा लुंचन' करने पर मेरा अंतर नव संस्कारों से नवनवीन हो रहा था। मेरे भीतर कोई सूक्ष्म बोध पैदा हुआ, जिससे मैं अपने भीतर के परावर्तन की, प्रत्येक पर्याय की अनुभूति कर रहा था। मेरा मानस वासना की चांदनी की अपेक्षा संयम सूर्य की आवृत किरण पर अधिक लुभा रहा था, क्योंकि चांदनी एक मिथ्या बोध है। वह तम के विभ्रम को समाप्त नहीं करती, जबकि किरण की झीनी-झीनी डोरी के सहारे उतरता सूरज तम के अखंड ध्वज को झुका ही देता है। अनिर्वच आनंद और अव्यक्त पीड़ा

एक रात!

हठात् मन की नाव से विचारों के पाल टूट गये। छूट गयी संस्कारों की पतवारें और नाव हो गयी हवा के हवाले। अब निर्भर है उसकी गति स्थिति और विध्वंस हवा पर ही वह चाहे तो डुबोये चाहे तो संभाले। निर्विचारिता का एक क्षणिक् स्पंदन जगत् के प्रगाढ़ आलिंगनों से दूर मुझे किसी सूक्ष्म संवेदन की बांहों में बांध रहा था। मैं जीवन-मरण और मरण-जीवन के बीच कसमसा रहा था पर यह कसमसाहट अनिर्वचन आनंद और अव्यक्त पीड़ा का समवेत आस्वाद प्रदान कर रही थी।

सुबह होते ही मैं पद-यात्रा के लिए निकल पड़ा। श्रमण जीवन में प्रवेश के अनंतर यह प्रथम विहार था। मैंने पग बढ़ाये और प्रयास आरंभ किया, पांवों से धरती मापने का।

मुझे अहसास हुआ कि पद-यात्रा निरंतरता का बोध है और जीवन के अनसुलझे आवर्तों की शोध है। जब पांवों की गति अविराम होती है तो नक्षत्रों की गति बदल जाती है और गतिशील मानव जीवन और जगत के शाश्वत् सत्य के बीच की कड़ी बनकर अंतर का अन्वेषण करता हुआ 'समग्र मनुज' हो जाता है। उसका क्रांत स्वर ही युगस्वर और उसकी सम्यक् दृष्टि ही युग-दृष्टि होती है।

सांध्य प्रतिक्रमण के अनंतर अंतर ने कारा– 'श्रमण'। प्रतिदिन सुबह-शाम तिक्रमण क्यों करते हो? चेतना का ब्दहीन समाधान मिला–प्रतिक्रमण यात्रा है। पर इस यात्रा में कहीं जाना नहीं ड़ता है। यह यात्रा गमन की नहीं आगन की प्रक्रिया है, जो लौटाती है, विभाव स्वभाव में, देह से गेह में, योग से अयोग , मन से अमन में। यह उस अंधी खोह लौटाती है, जहां मोह एवं मूर्च्छा की निशा व्याप्त है। अपने प्रश्न का उत्तर नी अंतःप्रज्ञा से पाकर मेरी दो आंखें ज्ञा की नव आभा पाकर अनंत में न होती जा रही थीं।

अंतस के अगाध में से चरम उल्लास रोमांचन हो उठा। श्रमणीय दीक्षा के चात् प्रथम सांवत्सरिक महापर्व पर श-लुंचन की कठोर साधना का मैं भी साधक था। केश-लुंचन श्रमणाचार में त्मस्थ होने का बीजमंत्र है। काय लेश ही आत्म संवेग प्राप्ति की नसैनी है। गुरुवर के दक्षिण कर ने काले-काले लों को एक-एक कर उखाड़ डाला। न केशों के लुंचन से मोहांधकार भरी छा का मेरुदंड टूटता जा रहा था। यह स्वीकार करूंगा ही कि केश-लुंचन से री देह के रेशे-रेशे में वेदना की एक लहर- सी व्याप गयी। फिर भी वेदना की पूर्णता आनंद का स्रोत फूट पड़ा। मैं केश चन की प्रविधि की पूर्णता पर हर्ष से उठा। चूंकि मेरा आत्म-भय समाप्त हो गया तथा निरभ्रांत होकर अंतर क्षितिज का संस्पर्श करता हुआ मुक्त निर्बंध पंछी की तरह विहर रहा था।

मन की अदृश्य निहारिका में अनुपल विचारों के तारे उग रहे थे। परस्पर विचार बिंदु आलिंगित, आश्लेषित होकर किसी पूर्ण सत्य को साकार कर रहे थे। प्रातः प्रतिलेखना करते दृष्टि बोध प्राप्त हुआ कि प्रतिलेखना भी साधना का अंग है। पर बिना विचार चिंतन के प्रतिलेखना का अर्थ वस्त्र पात्र का निरीक्षण मात्र ही ले लिया गया है। पर जब तक विचारों की प्रतिलेखना नहीं की जायेगी, तब तक राग-द्वेष का ताना-बाना चेतना पर कर्मपाश का आवरण बुनता ही चला जायेगा, विचारों की प्रतिलेखना से कार्मण वर्गणाओं का निर्झरण होता है, और चेतना अविरल, अविच्छिन्न और नव्य रमणीय रूप में रूपायित होती है।

एक दशक की काल यात्रा के बाद!

पच्चीस वर्ष का मेरा युवा मन दस वर्ष के श्रमण जीवन पर दृष्टि डालता है तो महसूस होता है कि अतीत कितना सुखद होता है। और उस सुदूर अतीत से स्मृतियों के सेतु पर खड़ा होकर जब मैं मिलता हूं तो एक असीम हर्ष की तरंग चेतना महासागर में विलीन हो जाती है।

और मैं बेबस कह उठता हूं:

अतीत! तुझे प्रणाम!

मेरे अतीत तुझे प्रणाम!

–४१ शास्त्री नगर, चित्तौड़गढ़, राजस्थान

□

सांझ का सुनहरा पन्ना

—रमाकान्त श्रीवास्तव

सांझ के सुनहरे पन्ने पर
अंकित हो रही है
दिन की गाथा।
आओ उसे बांचें
अंधेरा झुक आने के पहले।
ओ, अस्ताचलगामी सूर्य
वर्तमान को पल-छिन
भूत में बदलने में कटिबद्ध
थोड़ा ठहर जाओ
बांच लेने दो
पूरा का पूरा आलेख
भोर होने पर
जिसे बन जाना है कल का इतिहास।
लो, उग आया धुंधलके का नखत
उपहास करता-सा
मुझ अकर्मण्य पर जो
कुछ न कर सका,
कुछ न दे सका,
कुछ न पा सका।
... एक दिन और गुज़र गया
रिक्तता के गलियारे में
उड़ाता तमस-धूल
सांझ के सुनहरे पन्ने पर।

—एल ६/एल ९६ लोक विहार, कुर्सी रोड,
अलीगंज, लखनऊ-२२६०२०

□

क्या करें!

—बालकृष्ण

जख़्म खाये जा रहे हैं, क्या करें!
मुस्कराये जा रहे हैं, क्या करें!

दूर तक अंधेर ही अंधेर है
दिल जलाये जा रहे हैं, क्या करें!

नाम के अनुरूप उनका काम है
ज़ुल्म ढाये जा रहे हैं, क्या करें!

घोर महंगाई के पर्वत के तले
सर छुपाये जा रहे हैं, क्या करें!

भूख बढ़ती जा रही है इस क़दर,
खुद को खाये जा रहे हैं, क्या करें!

है निरा पतझड़, बहारों के मगर
गीत गाये जा रहे हैं, क्या करें!

बेसुरे हैं, फिर भी उनके सुर में हम
सुर मिलाये जा रहे हैं, क्या करें!

नाव डूबेगी यक़ीनन ज़ब्त की,
अश्रु आये जा रहे हैं, क्या करें!

बारहा उनको भुलाया है, मगर
याद आये जा रहे हैं, क्या करें!

सामने मंज़िल है, पर अपने क़दम
डगमगाये जा रहे हैं, क्या करें!

लोग पढ़-सुनकर हमारी पंक्तियां
तिलमिलाये जा रहे हैं, क्या करें!

—संगीत कार्यालय, हाथरस-२०४१
उत्तर

□

र्दू हास्य-यात्राकथा

बुलेट ट्रेन

☐ मुज्तबा हुसैन

साहबो! जब से जापान आये हैं, हमें अपने वतन की रेलगाड़ियों की शिद्दत से याद आ रही है। टोक्यो में हमारी आवारागर्दी का एकमात्र जरिया जापानी ट्रेनें ही हैं। यों भी सारा जापान ट्रेनों में भागता फिरता है। हम भी एक ट्रेन से उतरते हैं तो दूसरी में सवार हो जाते हैं, दूसरी से उतरते हैं तो तीसरी में चढ़ जाते हैं।

अब तो खैर हमें इन ट्रेनों में बैठने की आदत हो गयी है। शुरू-शुरू में तो इनमें बैठे हुए डर लगता था—इसलिए कि ये ट्रेनें किसी भी स्टेशन पर एक मिनट से ज्यादा नहीं ठहरतीं। इधर ट्रेन रुकती है और उधर सारी ट्रेन के दरवाजे खुद खुल जाते हैं और ट्रेन में चढ़ने वाले चढ़ जाते हैं। हमें अक्सर यह डर होता था कि अगर हमारा एक पांव डिब्बे में और दूसरा प्लेटफार्म पर हो और ऐसे में दरवाजा खुद-ब-खुद बंद हो जाये तो हमारा जो होना है सो तो हो ही जायेगा, मगर हमारे कदमों का क्या होगा?

टोक्यो में ज्यादातर ट्रेनें निजी रेल्वे कंपनियां चलाती हैं। हर कंपनी की ट्रेन का रंग भिन्न होता है—नीली, पीली, लाल, हरी, मटियाली—गरज कि हर रंग की ट्रेन होती है। कुछ रेलगाड़ियां जमीन के ऊपर चलती हैं मगर ज्यादातर जमीन के नीचे ही चलती हैं। टोक्यो जमीन के ऊपर जितना आबाद है उसके कई बड़े स्टेशन जमीन के नीचे हैं।

जापान की रेलगाड़ियां दुनिया की तरक्की-याफ्ता रेलगाड़ियां समझी जाती हैं, लेकिन फिर भी हमारी रेलगाड़ियों का मुकाबला नहीं कर सकतीं। मिसाल के तौर पर हम अपने वतन की गाड़ियों के अक्सर दरवाजे से लगे डंडे से लटककर सफर करते हैं। बड़ा लुत्फ आता है। यह सुविधा जापानी रेलगाड़ी में बिल्कुल नहीं है।

फिर जापानी ट्रेनों के मुसाफिर भी बड़े अजीब होते हैं। किसी से कोई बात नहीं करते। भला यह भी कोई सफर करने का तरीका हुआ? हम जापानी ट्रेनों में पिछले एक महीने से सफर कर रहे हैं। किसी मुसाफिर ने पलटकर यह नहीं पूछा कि, मियां, कहां रहते हो? बच्चे कितने हैं? आपके शहर में प्याज का

भाव क्या है? आलू के क्या दाम हैं? वगैरा - वगैरा। जापानी लोग ट्रेन में सफर करते वक्त 'मौन व्रत' रख लेते हैं। प्लेटफार्म पर खड़े-खड़े किताबें पढ़ते रहते हैं। ट्रेन आती है तो किताब में उंगली रखकर ट्रेन में घुस जाते हैं और सीट पर बैठते ही फिर किताब खोलकर पढ़ने में लग जाते हैं।

हमें जापानी रेलगाड़ियों से यह भी शिकायत है कि ये बहुत ठीक वक्त पर चलती हैं। इंतजार में जो लज्जत होती है, उसका मजा जापानियों को क्या मालूम? आप यकीन करें कि हमें टोक्यो में किसी भी स्टेशन पर ट्रेन के लिए दो मिनट से ज्यादा इंतजार नहीं करना पड़ा। एक ट्रेन जाती है, तो दूसरी उसके पीछे आ जाती है।

हमारी रेलगाड़ियां स्टेशन में दाखिल होने से पहले बाहरी सिगनल के पास जरूर रुकती हैं, सीटियां बजाती हैं और मुसाफिर खिड़कियों में से झांक-झांककर सिगनल को देखते हैं। कितना मजा आता है! लगता है जापानी रेलगाड़ियों का कोई सिगनल ही नहीं होता। बस मुंह उठाये किसी भी स्टेशन में घुस जाती हैं।

हमने जापानी 'बुलेट ट्रेन' की शोहरत बहुत सुनी थी। उसमें भी सफर करके देख लिया, बिल्कुल वाहियात गाड़ी है। हमें बुलेट ट्रेन में बैठकर टोक्यो से क्योटो जाना था। यूनेस्को के ओहदेदार शिंजी ताजिमा से जब टोक्यो से क्योटो का फासला पूछा तो मालूम हुआ कि लगभग पांच सौ किलोमीटर से कुछ ऊपर ही होगा। अब आदमी इतने लंबे सफर पर जाता है तो सफर की तैयारियां भी करता है। हमने पूछा, 'इतना लंबा सफर है बिस्तर बंद भी साथ रख लें?'

शिंजी ताजिमा ने हंसकर कहा, 'इसमें सोने की जगह ही कहां होती है कि आप अपना बिस्तर लगा सकें!'

हमने कहा, 'यह कैसे हो सकता है? हमने यहां छह सौ किलोमीटर के फासले वाले सफर के लिए कम से कम दो वक्त का खाना, पानी भरी हुई एक सुराही, एक लोटा, एक बिस्तरबंद और तकिये रखना जरूरी होता है।'

शिंजी ताजिमा चूंकि हिन्दुस्तान में एक साल रह चुके हैं और हमारी ट्रेन में सफर का खासा लंबा तजुर्बा रखते हैं। इसीलिए शरमाकर बोले, 'मुझे आपकी मजबूरी का अंदाजा है। हिंदुस्तान में सफर करने का लुत्फ ही कुछ और है। मुझे एक बार आपकी एक ट्रेन में चालीस घंटे तक बैठने का इत्तफाक हुआ था। इस चालीस घंटों में मेरे साथी मुसाफिर की दो सुराहियां टूटी थीं और सारे डिब्बे में जल-थल हो गया था। हर स्टेशन पर उतरकर लोटों में पानी भरने का मजा ही कुछ और होता है। हमारी ट्रेनों में यह सुविधा नहीं होती।'

०००

हमें बताया गया था कि क्योटो जाने

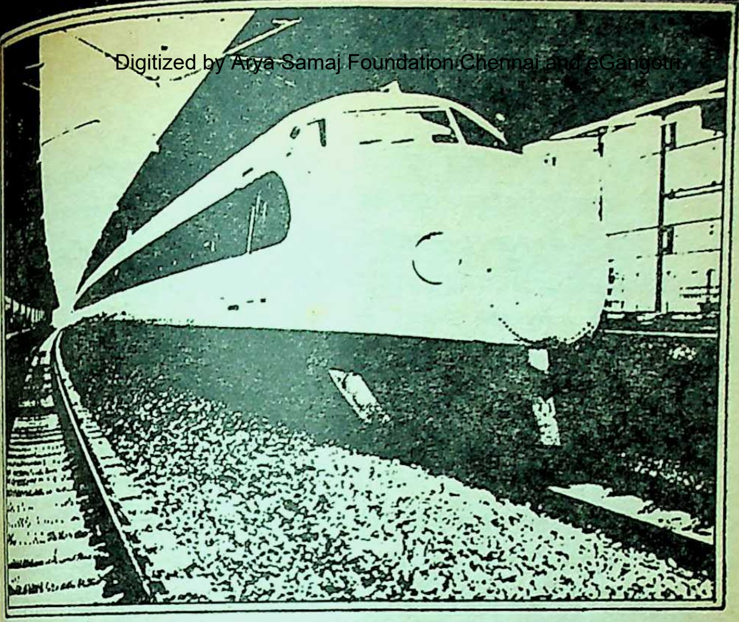

िर टोक्यो सेंट्रल स्टेशन से बुलेट ट्रेन बजकर ४१ मिनट पर निकलेगी । सोचा, यह सिर्फ एक धौंस है जो हम जमायी जा रही है । भला कौन-सी वक्त पर चलती है ? हम टोक्यो सेंट्रल शन पर पहुंचे तो साढ़े आठ बज चुके और बुलेट ट्रेन का दूर-दूर तक कोई नहीं था । हमने ताजिमा को छेड़ने अंदाज में कहा, 'हजरत, वह जो बुलेट ८ बजकर ४१ मिनट पर चलने वाली , वह कहाँ है ?'

उसने कहा, 'बस आती ही होगी ।'

ठीक आठ बजकर पैंतीस मिनट पर ट्रेन प्लेटफार्म पर आ पहुंची । उसका हवाई जहाज की शक्ल का होता है । में बहुत खूबसूरत होता है । उसमें डिब्बे लगे होते हैं । सारी ट्रेन वातानुकूलित होती है । हम ट्रेन में दाखिल हुए यों लगा जैसे हम हवाई जहाज में पहुंच गये हैं । सीटों का इंतजाम इसी तरह का होता है । यह ट्रेन हानश्र टापू में स्थित टोक्यो से कियोशो टापू में स्थित हकाता तक एक हजार सत्तर किलोमीटर का फासला लगभग छह घंटों में तय करती है । यह दुनिया की सबसे तेज-रफ्तार ट्रेन समझी जाती है ।

हम ट्रेन में बैठे अपनी घड़ी को देख रहे थे कि ठीक ८ बजकर ४१ मिनट पर ट्रेन गोली की तरह स्टेशन से निकली । तब हमें यकीन आया कि इस ट्रेन को बुलेट ट्रेन क्यों कहते हैं ।

इन ट्रेनों की सबसे बड़ी खूबी इनकी वक्त की पाबंदी है । हमें बताया गया कि अगर कभी ट्रेन दस मिनट लेट हो जाये तो मुसाफिर का सारा किराया वापस कर दिया जाता है । इन ट्रेनों में ऑटोमेटिक, कंट्रोल होता है । कभी ट्रेन की रफ्तार तेज हो जाये तो ट्रेन को खुद-ब-खुद ब्रेक लग

जाते हैं। जापान में भूकंप बहुत आते हैं, जैसे ही भूकंप आता है ट्रेन खुद-ब-खुद रुक जाती है। पटरियों की सुरक्षा के बारे में सिगनल भी सैकड़ों में मिलते हैं। हर ट्रेन का टेलीफूनी संबंध एक - दूसरे से और सारी ट्रेनों का संबंध टोक्यो के सेंट्रल स्टेशन से होता है।

बुलेट ट्रेन पर सफर करके हमें दुख इस बात का हुआ कि इसमें धक्के नहीं लगते। ट्रेन के चलने की आवाज भी सुनायी नहीं देती, क्योंकि इस ट्रेन की खिड़कियों में दो शीशे लगे होते हैं और इन दोनों शीशों के दरम्यान खाली जगह होती है, जिसकी वजह से बाहर की आवाज अंदर सुनायी नहीं देती। धक्के न लगने और आवाज न आने के कारण इसकी रफ्तार का सही अंदाज नहीं हो सकता।

साहबो! अगर आपको बुलेट ट्रेन के जरिये टोक्यो से क्योटो जाने का मौका मिले तो अपने दिल पर काबू रखिये। इसलिए कि जापान का प्राकृतिक सौंदर्य आपको मंत्रमुग्ध कर देगा। बायीं तरफ समंदर आपके साथ-साथ चलेगा। छोटे-छोटे टापू नजर आयेंगे और दायीं तरफ फ्यूजी पहाड़ नजर आता रहेगा, जो धीरे-धीरे बड़ा होता जायेगा। ट्रेन में से फ्यूजी पहाड़ का दृश्य खुद हैरान कर देने वाला होता है। इस लाइन पर नागोया जापान का चौथा बड़ा शहर है। नागोया का किला बड़ी शोहरत रखता है, जो दूसरे विश्वयुद्ध में बरबाद हो गया था। इसे १९५९ में दोबारा बनाया गया।

बुलेट ट्रेन में टेलिफोन की सहूलियत भी होती है। चूंकि बुलेट ट्रेन में सफ करते-करते हमने ओसाका को फोन किया और उर्दू के उस्ताद मिस्टर असादा को य खुशखबरी सुनायी कि हम क्योटो आ रहे हैं। ट्रेन में थोड़ी-थोड़ी देर में ऐलान होते रहे कि बाहर का मौसम ऐसा है, इतना फासला तय कर चुके हैं, अब फलां स्टेशन आ रहा है वगैरा-वगैरा।

लगभग पौने तीन घंटे बाद जब हम क्योटो पहुंचे और घड़ी देखी तो पता चला कि गाड़ी के पहुंचने के वक्त में आधे मिनट का भी फर्क नहीं है। बुलेट ट्रेन से उतरने के बाद हमारे दोस्त शिजी ताजिमा ने पूछा, 'आपका सफर कैसा रहा?'

हमने कहा, 'मिस्टर ताजिमा, हम हिंदुस्तान की ट्रेनों में सफर कर चुके हैं। हमारी ट्रेनों में जो सुविधाएं होती हैं वह आपके यहां कहां! वह सफर है क्या, जिसमें आदमी को धक्के न लगें! हमने तीन घंटे आपकी ट्रेन में सफर किया। किसी ने हमारे सिर पर संदूक नहीं रखा किसी का होल्डाल हमारे पांव पर नहीं गिरा; किसी मुसाफिर ने सीट के लिए दूसरे मुसाफिर से लड़ाई नहीं की। और फिर वह, हर स्टेशन पर 'चाय लो चाय पान-बीड़ी-सिगरेट!' वाली पुकारें आवाजें सुनायी नहीं दीं। भला यह कोई ट्रेन का सफर है!'

[अनुवाद : तरन

अंग्रेजी कहानी

विशाल चक्केवाला चर्च

□ ओ. हेनरी

लोकप्रिय ग्रीष्मकालीन सैरगाहों की सूची में लेकलैंड्स का नाम ढूंढ़े नहीं मिलेगा। वह कंबरलैंड पहाड़ी क्षेत्र में पाइन नदी के किनारे बसा हुआ है। लेकलैंड्स खुद एक छोटा-सा दो दर्जन घरों का देहात है, जो छोटी रेल-लाइन पर स्थित है। पता नहीं रेल-मार्ग पाइन के जंगल में खोने-भटकने के बाद डर और अकेलेपन से उबरने के लिए लेकलैंड्स के पास दौड़ता हुआ आया या लेकलैंड्स गुम हुए बच्चे की तरह तलाशता हुआ रेल-लाइनों तक आ पहुंचा कि रेलगाड़ी आये और उसे अपने घर ले जाये।

आपको विस्मय इसका भी हो रहा होगा कि इसका 'लेकलैंड्स' नाम क्योंकर पड़ा। न यहां झीलें या सरोवर हैं और न ही यहां की जमीन बहुत उपजाऊ है कि जिसके कारण नाम पड़े।

देहात से आधे मील की दूरी पर 'ईगल हाउस' है जो काफी बड़ा कई कमरों वाला पुराना भवन है। जिन्हें कम खर्च में पहाड़ी जीवन का आनंद लेना है ऐसे यात्रियों के ठहरने के लिए रैनकिन उसे किराये पर देता है। ईगल हाउस आधुनिक के स्थान पर प्राचीन साज-सज्जा से भरा-पुरा है। वहां आपको स्वच्छ कमरा और स्वादिष्ट तथा पर्याप्त भोजन दिया जाता है–शेष पाइन जंगल और आप पर छोड़ दिया जाता है। निसर्ग ने झरने, अंगूर की बेलें और 'क्रॉकेट' खेल की सुविधाएं दी हैं। कला के नाम पर सप्ताह में महज दो बार गिटार एवं फिडल पर संगीत सुना जा सकता है।

ईगल हाउस के किरायेदार वे लोग हैं जो आवश्यकता और आराम के रूप में मनोरंजन चाहते हैं। वे व्यस्त लोग हैं जो घड़ी के समान हैं जिसे साल भर चलने के लिए एक पखवारा चावी भरना जरूरी है। वहां विद्यार्थी भी आते हैं, अक्सर चित्रकार या पहाड़ियों के पुराने संस्तरों का अध्ययन करते भूवैज्ञानिक। कुछ शांत परिवार और एक या दो थकी हुई 'सिस्टर्स' भी अपनी गर्मियां वहां बिताती हैं।

यदि ईगल हाउस ने अपना 'कैटेलॉग' बनाया होता तो उसमें वहां से कुछ अंतर पर स्थित एक जगह को मेहमानों के लिए 'रोचक स्थान' के नाम से दर्शाया होता। यह एक पुरानी, बहुत पुरानी चक्की थी

हिन्दी रूपांतर : अशोक गुजराती

जो अब कतई चक्की नहीं रह गयी थी। रैनकिन के शब्दों में वह अमरीका में अकेला चर्च था जिसमें बड़े आकार का वह चक्का लगा था और दुनिया में वह एक ही चक्की थी जिसमें मंच और पाइप-ऑर्गन थे। ईगल हाउस के अतिथि इस पुरानी चक्की से रूपांतरित चर्च में हर प्रार्थना-दिवस पर जाते थे।

हर वर्ष शरद ऋतु के प्रारंभ में ईगल हाउस में अब्राहम स्ट्रांग आते थे और कुछ समय तक आदरणीय और प्रिय किरायेदार बनकर रहते थे। लेकलैंड्स में उन्हें 'फादर अब्राहम' कहा जाता था क्योंकि उनके बाल अत्यधिक सफेद थे; चेहरा नितांत दयावान, रक्ताभ और तेजस्वी था; उनकी हंसी अति उल्लासमय थी और उनके काले कपड़े और चौड़ी हैट बिलकुल 'प्रीस्ट' जैसे लगते थे। यहां तक कि नये किरायेदार भी तीन-चार दिन की पहचान के बाद उन्हें इसी सुपरिचित संबोधन से पुकारने लगते थे।

फादर अब्राहम काफी दूर से लेकलैंड्स आते थे। वे एक बड़े, भीड़-भरे शहर में रहते थे। वहां उनकी कई आटे की मिलें थीं—जिनमें मंच तथा ऑर्गन हों, ऐसी छोटी मिलें नहीं, अपितु विशाल, कुरूप, पहाड़-सी मिलें, जिनमें दिनभर मालगाड़ियां चीटियों की तरह रेंगती रहती थीं और अब आपको फादर अब्राहम और चक्की, जो अब चर्च थी, के विषय में बता देना चाहिये क्योंकि दोनों की कहानियां समांतर चलती हैं।

उन दिनों जब चर्च चक्की था, अब्राह स्ट्रांग उस चक्की के मालिक थे। उ इलाके में उनसे अधिक व्यस्त, खु मिजाज, सुखी और आटे की गर्द में ड चक्कीवाला और दूसरा न था। चक्की के सामने रास्ते की परली तरफ एक छोटे घर में वे रहते थे। उनकी चक्की के द मामूली होने के कारण पहाड़ी लोग अ अनाज उनके पास काफी थकान-भरे घुमा और पथरीले रास्तों से पिसाने लाते थे।

चक्कीवाले के जीवन की खुशी उनकी छोटी बच्ची एना थी। जब वह चा साल की थी, अपने पिता के साथ हर शा का उसका छोटा-सा कार्यक्रम निश्चि था, जो विपरीत मौसम के अलावा कभी नहीं टलता था। जब खाना तैयार हो जाता था, उसकी मां उसकी कंघी करने के पश्चात उसे साफ कपड़े पहनाकर अपने पिता को चक्की से बुला लाने के लिए हर रोज भेजती थी। जब चक्की-वाला उसे चक्की के दरवाजे में प्रवेश करते देखता था, आटे में लथपथ वह आगे ब आता था और उस अंचल में प्रचलित एक पुराना चक्कीवाले का गीत गाता था-

चक्का घूमे गोल-गोल,
नाज पीसे डोल-डोल,
देख झूमे चक्कीवाला।
गाता रहता दिन भर गाना,
काम को जिसने खेल ही माना,
मन में रहती प्यारी बाला।

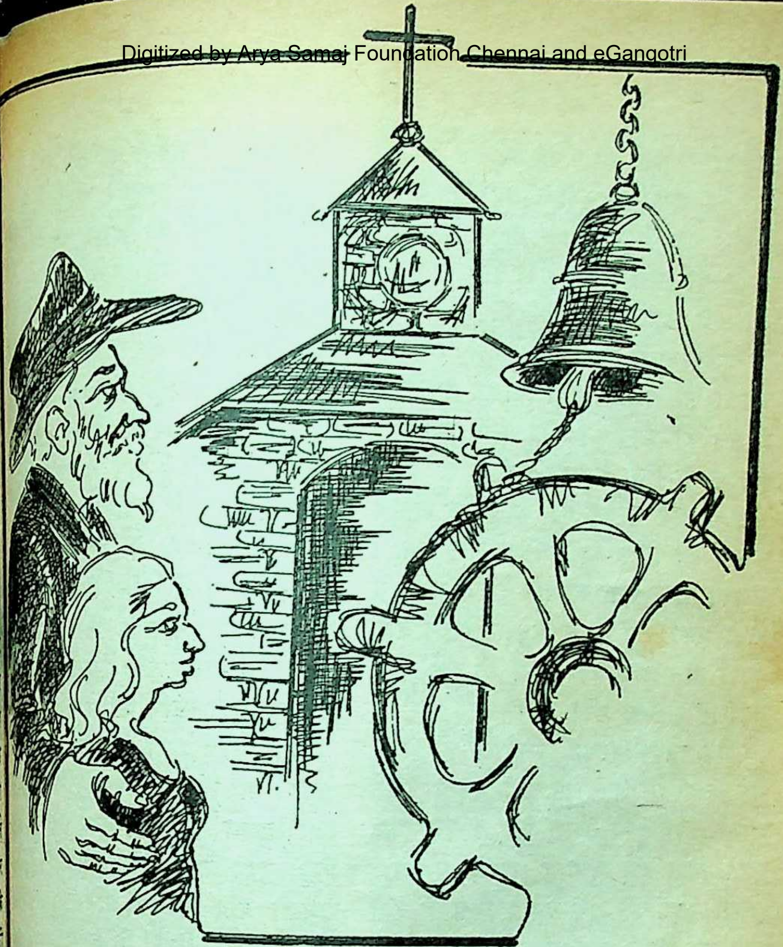

एना हंसती हुई उसकी ओर यह हुए दौड़ जाती थी—'पापा, चलो, घर ले चलो', और चक्की वाला कंधों पर बैठाकर गाता हुआ आता था। हर शाम यही दृश्य जाता था।

दिन, अपने चौथे जन्मदिन के हफ्ते बाद, एना गायब हो गयी। अंतिम बार देखी गयी, वह अपने घर रास्ते के पास जंगली फूल तोड़ रही थी। थोड़ी देर बाद जब उसकी मां उसे ढूंढ़ती हुई आयी तो दूर-दूर तक उसका कहीं पता न था।

अर्थात् उसे खोजने का हर प्रयास किया गया।

पड़ोसियों ने मिलकर मीलों तक जंगल और पहाड़ियों में उसे ढूंढा। वह नहीं मिली।

एक या दो रातों पहले पास ही के मैदान में यायावरों के एक परिवार की

छोलदारी लगी थी। यह अटकल लगायी गयी कि उन्होंने बच्ची को चुराया होगा, लेकिन जब उन्हें घेरकर उनकी चौपहिया गाड़ी की तलाशी ली गयी तो एना उनके पास भी नहीं मिली।

चक्कीवाला करीब दो साल तक उस चक्की को चलाता रहा। फिर बच्ची के मिलने की उसकी उम्मीद खत्म हो गयी। वह अपनी पत्नी के साथ शहर चला गया। कुछ ही अर्से में वह एक आधुनिक अनाज पीसने की मिल का मालिक बन गया। उसकी पत्नी एना को खो देने के सदमे से कभी मुक्त नहीं हो पायी और शहर आने के दो साल बाद चक्कीवाले को दुख सहने के लिए अकेला छोड़ गयी।

जब चक्कीवाला खुशहाल हो गया, वह लेकलैंड्स अपनी पुरानी चक्की देखने आया। वह दृश्य उसके लिए अत्यंत दुखद था। किंतु वह मजबूत आदमी था और हमेशा आनंदित एवं दयार्द्र दिखायी देता था। वह समय था जब वह पुरानी चक्की को चर्च में बदलने को प्रोत्साहित हुआ। लेकलैंड्स के गरीब निवासी और उनसे भी दरिद्र पहाड़ी लोग चर्च बना पाने में असमर्थ थे। बीस मील तक आसपास कोई पूजा-स्थान नहीं था।

चक्कीवाले ने चक्की का स्वरूप जितना कम हो सकता था, परिवर्तित किया। बड़ा विशाल चक्का अपने स्थान पर ही रहने दिया। चक्की के बाकी कल-पुर्जे हटा लिये। चर्च आनेवाले युवक-युवतियां उस चक्के की सड़ती जा रही नरम लकड़ी पर अपने नाम उत्कीर्ण करते रहते थे। दोनों ओर बेंचों की कतार, बीच में आने-जाने की जगह और एक सिरे पर ऊंचा चबूतरा तथा प्रवचन-मंच था। ऊपर तीनों दीवारों से लगी गैलरी थी, जहां कुर्सियां रखी थीं और वहां तक एक जीना जाता था। गैलरी में असली पाइप-ऑर्गन रखा था। मिस समर्स उसे बजाती थी। हर रविवार को उसे बजाने हेतु लेकलैंड्स के लड़के बारी-बारी से उसमें हवा भरते और गर्व महसूसते थे। मि. वैनब्रिज उपदेशक थे। उन्हें सालाना पांच सौ और मिस समर्स को दो सौ डालर तथा रख-रखाव का सारा खर्च अब्राहम स्ट्रांग देते थे।

इस तरह एना की याद में, पुरानी चक्की को समाज, जिसका कभी वह एक हिस्सा थी, के वंदना स्थल में बदल दिया गया था। लेकिन अब्राहम स्ट्रांग ने उसकी याद में एक और स्मारक बनाया था। उनकी मिलों के उत्पादन का नाम 'एना' आटा था, जो श्रेष्ठ से श्रेष्ठ उपलब्ध गेहूं से बनाया जाता था। देश को शीघ्र ही मालूम हो गया था कि 'एना' आटे की दो कीमतें हैं। एक, बाज़ार में सबसे ऊंची कीमत थी और दूसरी—कुछ नहीं।

जब-जब कोई विपत्ति आती थी—जो जनता को निराश्रय कर जाती थी—जैसे बाढ़, सूखा, तूफान या हड़ताल, 'एना' आटे का दयालु प्रेषण अपनी 'कुछ नहीं' कीमत पर तुरंत पहुंच जाता था। वह साव

और न्यायपूर्ण ढंग से वितरित किया ता था लेकिन मुफ्त, क्योंकि भूख से बिलाते लोग उसके लिए एक पैसा भी नहीं कर सकते थे। ऐसी कहावत स्वाभाविक ही था कि जब कभी हीन क्षेत्र में आग लग जाती थी, ग्निशामक दल से पहले घटना-स्थल पर आटे की गाड़ी पहुंचती थी।

साल ऐसा आया जो कंबरलैंड्स लिए कठिन समय ले आया। अनाज फसल हर तरफ निराशाजनक थी। की अन्य पैदावार तो बिलकुल नहीं । पहाड़ी बाढ़ ने संपत्ति को बेहद क्षति चायी थी। जंगल में शिकार भी इतना हो गया था कि शिकारी मुश्किल इतना भर घर ला पाते थे कि उनके जीवित रह सकें। विशेषत: लेक- के इर्द-गिर्द कठोर स्थिति थी।

ों ही अब्राहम स्ट्रांग ने यह सुना, संदेश प्रसारित हो गये और उस लाइन से 'एना' आटे से भरी गाड़ियां आकर वहां खाली होने लगीं। आदेश कि चर्च की गैलरी में आटे का संग्रह जाये और हर उस व्यक्ति को, जो में प्रार्थना के लिए आयेगा, आटे का बोरा दिया जाये।

ooo

इसके दो सप्ताह पश्चात् अब्राहम स्ट्रांग वार्षिक यात्रा पर ईगल हाउस आये फिर 'फादर अब्राहम' बन गये। साल ईगल हाउस में सदा से कम यात्री थे। उनमें एक मिस रोज चेस्टर थी। मिस चेस्टर वहां अतलांता से आयी थी जहां वह एक बड़े स्टोर में नौकरी करती थी। यह उसके जीवन की पहली अवकाश-यात्रा थी। स्टोर के मैनेजर की पत्नी ने एक बार अपना ग्रीष्म ईगल हाउस में बिताया था। उसने रोज से यहां की बहुत प्रशंसा की थी और तीन हफ्ते की छुट्टी में ईगल हाउस जाने के लिए उसे राजी कर लिया था। उसने रैनकिन के नाम रोज को एक पत्र भी दिया था और तदनुसार रैनकिन ने रोज का स्वागत किया था।

रोज दुबली-पतली थी। वह अंदाजन बीस वर्ष की थी और निस्तेज एवं नाजुक क्योंकि वह घर से बाहर कभी निकली न थी। लेकिन लेकलैंड्स के एक सप्ताह ने उसे तेज और उत्साह प्रदान किया था जिस वजह से उसमें आश्चर्यजनक तब्दीली आ गयी थी। यह सितंबर का शुरुआती वक्त था जब कंबरलैंड्स अपनी सुंदरता के चरम पर होता है। पहाड़ी वनस्पति के शारदीय रंग निखर आये थे, खुली हवाओं का साम्राज्य था, रातें सुखद और शीतल थीं जो ईगल हाउस के गुनगुने ब्लैंकेट में आरामदेह नींद के लिए जिम्मेदार थीं।

फादर अब्राहम और रोज चेस्टर अभिन्न मित्र बन गये थे। फादर को उसकी कहानी मिसेज रैनकिन से पता चली और उनकी दिलचस्पी उस दुबली-पतली अकेली लड़की में, जो दुनिया में अपना

रास्ता स्वयं बना रही थी, तुरंत जागृत हुई थी।

वह पहाड़ी प्रांत रोज के लिये नया था। वह कई साल अतलांता के गरम और सपाट शहर में रह चुकी थी। अतः कंबरलैंड्स की विविधता तथा भव्यता उसे प्रसन्न कर गयी थी। अपने यहां के निवास के हर पल का उपभोग लेने के लिए वह कृतसंकल्प थी। उसने अपनी मुट्ठी भर पूंजी का, अपने खर्च को लेकर, इतनी सावधानी से हिसाब बैठाया हुआ था कि वह एक-एक पैसे में बता सकती थी कि जब वह वापस जायेगी तो उसके पास बहुत कम किंतु कितनी बचत रहेगी।

फादर की दोस्ती और साथ पाने में रोज खुशनसीब थी। वे लेकलैंड्स के नजदीकी पहाड़ों के हर रास्ते, हर शिखर, हर ढाल के जानकार थे। उनके माध्यम से रोज पाइन-जंगल के टेढ़े-मेढ़े छायादार रास्तों-पगडंडियों के भारी आनंद से; अनावृत चट्टानों, स्वच्छ पारदर्शक सुबहों, अनगढ़ उदासी से सराबोर सुनहली स्वप्नीली शामों के वैभव से परिचित हो गयी थी। इसलिए उसके स्वास्थ्य में तेजी से सुधार हुआ और उसकी मनोदशा उत्फुल्ल हो आयी। उसकी हंसी फादर अब्राहम की चर्चित हंसी की तरह मिलनसार एवं हार्दिक बन गयी। दोनों ही मूलतः आशावादी थे और दोनों को खबर थी कि दुनिया के सामने प्रसन्न एवं शांत चेहरा कैसे प्रस्तुत किया जाता है?

एक दिन रोजी को किसी सहृ से फादर की खोयी हुई बच्ची का ह्रास पता चला। उसी क्षण वह झरने के पास अपनी पुरानी पसंदीदा बेंच पर बैठे फादर के पास गयी। उन्हें ताज्जुब हुआ जब उनकी इस छोटी-सी दोस्त ने उनका हाथ अपने हाथ में ले लिया और उनकी तरफ अपनी आंखों में आंसू लिये देखती रही।

'ओह, फादर', वह बोली, 'मुझे बहुत खेद है। मुझे आज तक आपकी नन्हीं बच्ची के विषय में मालूम नहीं था। आशा है वह किसी रोज अवश्य मिल जायेगी। ओह, मुझे विश्वास है, आपकी वह बेटी आपको ज़रूर मिलेगी।'

फादर ने उसकी ओर अपनी ओजस्वी और तत्पर मुस्कान के साथ देखा। 'धन्यवाद, रोजी', हमेशा के अपने प्रफुल्लित स्वरों में उन्होंने कहा। 'लेकिन मुझे अब 'एना' के मिलने की आशा नहीं है। कुछ वर्षों तक मुझे लगा कि उसे घुमक्कड़ों ने चुरा लिया है और वह अब भी जीवित है। पर अब मुझे वह संभावना नजर नहीं आती। मुझे भरोसा हो चला है कि वह डूब मरी है।'

'मैं समझ सकती हूं,' रोजी बोली, 'शायद संदेह ने आपके विश्वास को सहने लायक काठिन्य दिया होगा। फिर भी आप इतने खुश-मिजाज रहते हैं, दूसरों के बोझ हल्का करने के लिए इतने आतुर— कमाल है, फादर!'

'कमाल है, रोजी !' फादर ने मुस्कराते हुए उसकी नकल उतारी । 'दूसरों के बारे में तुमसे अधिक कौन सोचता है ?' रोजी पर सनकी मनःस्थिति आक्रमण रती लगी ।

'ओह, फादर,' वह चीखी, 'क्या ही जेदार बात होगी यदि मैं खुद को आपकी त्री सिद्ध कर दूं । कितना रोमांचक गा! क्या आप मुझे अपनी पुत्री के रूप में पसंद करेंगे ?'

'सच, मैं करूंगा,' फादर ने स्नेहपूर्वक कहा। 'अगर एना जिंदा होती तो मैंने इससे बेहतर कुछ नहीं चाहा होता कि वह तुम जैसी ही गुड़िया-सी लड़की रही होती। हो सकता है, तुम एना ही हो ।' रोजी की खिलंदड़ी मनोदशा के सैलाब में फादर भी बह गये थे । 'क्या तुम्हें पुराने दिन याद नहीं आते जब हमारी यहां रहती थी ?'

रोजी गंभीर ध्यानावस्था में शीघ्र ही खो गयी । दूर किसी अज्ञात बिंदु पर उसकी बड़ी-बड़ी आंखें टिक गयीं । उसमें अचानक आया यह गंभीर बदलाव फादर को मनोरंजक लगा । वह देर तक यूं ही बैठी रही, फिर बोली ।

'नहीं', कहीं सुदूर से उसकी विषाद भरी आवाज़ आयी । 'मुझे चक्की के बारे में कुछ भी याद नहीं आ रहा । मेरे विचार से मैंने अपने जीवन में आपका यह विचित्र घर देखने से पूर्व कोई आटा-चक्की नहीं देखी । और यदि मैं आपकी बेटी होती, मुझे उस सबकी निश्चित ही स्मृति होती । मुझे दुख है, फादर ।'

'मुझे भी दुख हो रहा है,' फादर ने उसका मज़ा लेते हुए कहा । 'लेकिन रोजी, अगर तुम्हें मेरी बेटी होने की बात याद नहीं आती तो तुम्हें किसी और की बेटी होने का निःसंदेह ध्यान आता होगा । तुम्हें अपने मां-बाप निश्चित ही याद होंगे ।'

'हां, मुझे उनकी अच्छी तरह याद है– खासकर मेरे पिता की । वह आप जैसे बिलकुल भी नहीं थे, फादर । ओह, मैं सिर्फ स्वयं को विश्वास दिलाना चाहती थी । अब चलिये, आपने बहुत आराम कर लिया है । आपने मुझे ताल में ट्राउट मछली दिखाने का वचन दिया था। मैंने उसे कभी नहीं देखा है ।'

एक ढलती हुई शाम फादर अब्राहम अकेले ही चक्की की ओर चले । वे अक्सर वहां जा बैठते थे और अपनी पुरानी स्मृतियों में खो जाते थे । बीते समय की याद का अवसाद जब तक उनके मन से धुल नहीं गया था, वक्त ने उनके दुख की तीक्ष्णता को कम नहीं किया था । लेकिन फादर जब-जब सितंबर की उदास शामों में वहां जा बैठते जहां हर दिन एना अपनी सुनहरी लटों को लहराती हुई आती थी, तब उनकी वह मुस्कान, जो लेकलैंड्स के लोग उनकी सूरत पर देखने के आदी थे, दिखायी नहीं देती थी ।

फादर ने चक्की के दरवाजे को धक्का देकर खोला और धीरे-से अंदर गये ।

और फिर वे आश्चर्यचकित स्थिर खड़े रह गये। उन्होंने भीतर किसी की शोक-विह्वल हो रोने की आवाज सुनी। उन्होंने झांका और देखा कि धुंधले प्रकाश में मंच पर रोज अपने हाथ में पकड़े एक खुले पत्र पर सिर टिकाये बैठी है।

फादर उसके समीप गये। उसके हाथ पर अपना सांत्वना-भरा हाथ विश्वास के साथ रखा। उसने ऊपर देखा, उनका नाम बुदबुदाया और आगे बोलना चाहा।

'अभी नहीं, मिस रोजी,' उन्होंने सहृदयता से कहा। 'अभी बोलने का प्रयत्न मत करो। जब तुम्हें विषण्णता प्रतीत होती हो, तब तुम्हारे लिए थोड़ी-सी शांत रुलाई से अच्छा कुछ नहीं होता।'

ऐसा लगा कि फादर, जिन्होंने स्वतः इतना अधिक दुख-दर्द भोगा था, दूसरों का रंजो-गम दूर करने का जादू जानते थे। रोज की हिचकियां हौले-हौले मंद पड़ गयीं। फिर उसने अपना छोटा-सा रूमाल निकाला और फादर के दृढ़ हाथ पर उसकी आंखों से गिर गयी एक-दो बूंदों को पोंछ डाला। तब उसने फादर की ओर देखा और अपने आंसुओं के बीच मुस्करायी। वह हरदम अपने आंसू सूखने से पहले मुस्करा सकती थी जैसे कि फादर अपने स्वयं की व्यथा के पार मुस्करा सकते थे। इस तरह वे दोनों काफी कुछ सरीखे थे।

फादर ने उससे कोई प्रश्न नहीं पूछा पर थोड़ी देर में रोज ने ही बताना शुरू किया। यह वही पुरानी कहानी थी जो युवा को सदा बहुत महत्वपूर्ण और अहम लगी है और जो उनके बुजुर्गों के चेहरों पर संस्मृति की मुस्कान बिखेर देती है। ही उस कहानी की विषय-वस्तु थी। अतलांता में एक युवक रहता था, अच्छाइयों और शालीनता से भरपूर, जिसने इन्हीं गुणों की मालकिन एना को ढूंढ निकाला था। रोज ने फादर को वह पत्र दिखाया जिसके कारण वह रो रही थी। वह प्रेम-पत्र मामूली पुरुषोचित अनुरंजना तथा आग्रह के सिवा वैसा ही था जैसा कोई युवक अपनी प्रेमिका को लालित्य एवं मनोहरता से परिपूर्ण लिखता है। उसने रोज से शीघ्र विवाह के लिए निवेदन किया था। जीवन, उसने लिखा था, जब से वह तीन सप्ताह की यात्रा पर निकल आयी थी, असहनीय हो गया था। उसने तत्काल उत्तर के लिए अनुरोध किया था ताकि यदि रोजी को मंजूर है तो वह अविलंब ईगल हाउस आ पहुंचेगा।

'तो अब परेशानी किस बात की है?' फादर ने खत पढ़ने के बाद पूछा।

'मैं उससे शादी नहीं कर सकती,' रोजी ने कहा।

'तुम उससे शादी करना चाहती हो क्या?' फादर ने सवाल किया।

'ओह, मैं उसे प्यार करती हूं,' रोजी ने जवाब दिया, 'लेकिन...' उसका सिर नीचे झुक गया और उसने फिर उसांस भरी।

देखो, रोजी,' फादर बोले, 'तुम मुझे ना विश्वास दे सकती हो, तुम मुझ पर रोसा कर सकती हो ।'

'मुझे आप पर पूरा यकीन है,' रोजी कहा, 'मैं आपको बताऊंगी, क्यों मुझे को इंकार करना चाहिये । मैं कुछ हूं, मेरे पास नाम भी नहीं है; जिस म से मैं खुद को पुकारती हूं, झूठा है । कुलीन व्यक्ति है । मैं उसे दिल से ार करती हूं लेकिन मैं उसकी कभी हीं हो सकती ।'

'ये क्या ऊलजलूल बक रही हो ?' दर बोले, 'तुम्हीं ने कहा था तुम्हारे मां-की तुम्हें याद है तुम ऐसा क्यों कहती कि तुम्हारा कोई कुल नहीं है ? मेरी में नहीं आता ।'

'मुझे उनका स्मरण है,' रोजी ने कहा, 'मुझे उनकी अच्छी तरह याद है । मेरी रंभिक स्मृतियां सुदूर दक्षिण में किसी ान के हमारे जीवन की हैं । हम बारहा भिन्न गावों और राज्यों में घूमते रहे । मैंने कारखानों में काम किया है, पास चुना है और कई बार बिना पर्याप्त न्न-वस्त्र के गुजारा किया है । मेरी मां भी-कभार मुझ पर कृपालु रहती थी, रे पिता हमेशा निष्ठुर थे और मुझे पीटते । मेरे खयाल से वे दोनों आलसी और र-आवाद थे ।'

'एक रात जब हम अतलांता के पास सी कस्बे में नदी किनारे रह रहे थे, का बुरी तरह झगड़ा हुआ था । जब वे एक-दूसरे पर ताने कस रहे थे और आपस में गाली-गलौज कर रहे थे, तब मुझे पता चला... ओह, फादर, मुझे मालूम हुआ कि मुझे जिंदा रहने का भी हक नहीं है—क्या आप समझ नहीं पा रहे ? मेरे पास किसी नाम का अधिकार नहीं था, मेरा कोई कुल नहीं था, परिवार नहीं था, वंश नहीं था ।

'मैं उस रात वहां से भाग गयी । मैं अतलांता गयी और काम ढूंढा । मैंने खुद को 'रोज चेस्टर' नाम दिया और तब से आज तक अपना जीविकोपार्जन स्वयं किया । अब समझ गये होंगे कि मैं राल्फ से विवाह क्यों नहीं कर सकती—और हां, मैं उसे कभी नहीं बता सकती कि—क्यों ।'

किसी सहानुभूति से बेहतर, दया से अधिक मददगार थी फादर की उसके प्रति अवज्ञा ।

'बस, इतना ही न ?' उन्होंने कहा, 'छिः, छिः ! मुझे लगा कोई बड़ी मुश्किल है । जो यह तुम्हारा पूर्ण युवा पुरुष जरा भी मानवी होगा वह तुम्हारी वंशावली की बिलकुल चिंता नहीं करेगा । रोजी, मेरी बात गांठ बांध लो, वह तुम्हें—तुम्हारे व्यक्तित्व को चाहता है, उसे स्पष्ट बता दो, जैसे मुझे बताया है, और मैं तुम्हें आश्वस्त करता हूं, वह तुम्हारी कहानी पर हंसेगा ही नहीं, उसके लिए तुम्हारा अभिनंदन भी करेगा ।'

'मैं उसे कभी नहीं बताऊंगी,' रोजी ने निराश मन से कहा, 'और उससे या किसी और से कभी विवाह नहीं करूंगी, मुझे

कोई अधिकार नहीं है।

उन्होंने उतरती धूप में रास्ते पर एक लंबे साये को ऊभ-चूभ होते पास आते देखा, और फिर एक छोटा साया उसके पड़ोस में डूबते - उतराते आता हुआ दीखा। ये दो विचित्र आकृतियां चर्च की ओर बढ़ रही थीं। लंबा साया मिस समर्स, पाइप-ऑर्गन की वादिका का था, जो अभ्यास हेतु आ रही थी। छोटी छाया एक बारह वर्षीय बच्चे की थी। वह ऑर्गन में हवा भरने साथ आया था।

मिस समर्स ने झुककर फादर अब्राहम का और गर्दन हिलाकर रोज का अभिवादन किया। फिर वह उस लड़के के साथ गैलरी की सीढ़ियों से ऊपर चली गयी। शाम के घिरते धुंधलके में फादर और रोजी नीचे ही ठहरे रहे। वे चुप थे, संभवत: अपने-अपने अतीत में व्यस्त। रोजी अपनी हथेली पर सिर टिकाये शून्य में देखती बैठी थी। फादर उसकी बगल में दरवाजे से बाहर अपने नष्टप्राय पुराने मकान को विचारपूर्वक देखते खड़े थे।

अचानक यह दृश्य उनके लिए कई सालों पहले के अतीत के दृश्य में परिवर्तित हो गया। क्योंकि लड़के के हवा भरने पर मिस समर्स ने ऑर्गन पर निम्न स्वर निकाला और उसे पकड़े रहीं ताकि ऑर्गन में भरी गयी हवा का परीक्षण कर सके। चर्च अपना अस्तित्व बनाये न रख सका, जहां तक फादर अब्राहम का संबंध था। वह गहरा गूंजता कंपन जिसने उस छोटी-सी इमारत को हिला दिया था, ऑर्गन से उभरा कोई स्वर नहीं था, बल्कि चक्की की मशीनरी की आवाज थी। उन्हें पूरी तरह महसूस हुआ कि वह पुराना विशाल चक्का घूम रहा है; कि वे फिर उस पुराने पहाड़ी चक्की के वही पुराने आटे की धूल में नहाये प्रफुल्लित चक्कीवाले हैं, और अब शाम हो चुकी है, और जल्दी ही एक उड़ते हुए रंगों के बीच रास्ते पर ठुमकते हुए उन्हें खाना खाने के लिए घर ले जाने आयेगी। फादर की आंखें अपने पुराने मकान के टूटे दरवाजे पर लगी हुई थीं।

○○○

और फिर दूसरा आश्चर्य हुआ। ऊपर गैलरी में ढेर सारे आटे के बोरे लंबी कतारों में रखे हुए थे। शायद चूहे ने उनमें से किसी बोरे को कुतरकर उसमें छेद कर दिया था। कुछ भी हो, ऑर्गन की भेदक स्वर-लहरी के कंपन के कारण बोरों की दरारों से होकर आटे का प्रवाह-सा नीचे वह आया। उसने फादर को ऊपर से नीचे तक सफेद बुकनी से तर कर दिया और फिर वह पुराना चक्कीवाला बोरों की खाली जगह में बढ़ आया और अपनी बांहें लहराते हुए पुराना चक्कीवाले का गीत गाने लगा :

'चक्का घूमे गोल-गोल
नाज पीसे डोल-डोल
देख झूमे चक्कीवाला...'

और फिर शेष चमत्कार घटित हुआ। रोजी अपने आसन पर आगे को झुकी हुई

थी, आटे की तरह सफेद, उसकी पूरी खुली हुई आंखें फादर को टकटकी लगा देख रही थीं, मानो जागती आंखों सपना देख रही हों। जब उन्होंने गाना शुरू किया, रोजी ने अपनी बांहें उनकी ओर पसार दीं; उसके होंठ हिले; उसने उन्हें पुकारा—'पापा चलो, एना को घर ले चलो।'

मिस समर्स ने ऑर्गन के निम्न स्वर की कुंजी ढीली छोड़ दी। पर उसका काम अच्छी तरह पूरा हो चुका था। वह चाबी जो उसने दबायी थी, उसने बंद स्मृतियों के दरवाजों को खोल दिया था। और फादर अब्राहम ने अपनी बांहों में अपनी खोयी हुई एना को संभाला हुआ था।

०००

जब आप लेकलैंड्स जायेंगे आपको इस कहानी के बारे में और ज्यादा पता चलेगा। वहां के लोग आपको बतायेंगे कि बाद में कैसे इस कहानी के छूटे तंतु आपस में जुड़े। उस सितंबर के दिन जिप्सी घुमक्कड़ों ने चक्कीवाले की बेटी को चुरा लिया था—उसकी बालोचित सुंदरता से आकर्षित होकर।

ऐसा लगता है कि यहां पर हमारे लिए कहानी खत्म हो गयी है, पर मेरे खयाल से कहानी की चरमावस्था तब ही घटित हुई जब फादर अब्राहम अपनी बेटी के साथ संध्या के झुटपुटे में ईगल हाउस की ओर पैदल चले जा रहे थे, दोनों प्रायः इतने खुश कि बोल नहीं पा रहे थे।

'फादर,' वह थोड़े संशयित और संकोची स्वर में बोली, 'आपके पास बहुत-बहुत पैसा है न?'

'बहुत - बहुत ?' फादर ने कहा, 'वह इस बात पर निर्भर करता है कि अगर तुम्हें चांद या उतनी ही कीमती कोई और वस्तु न खरीदनी हो तो काफी है।'

एना ने, जो हरदम अपना एक-एक पैसा सावधानी से गिना करती थी, पूछा, 'क्या यहां से अतलांता तार भेजने के लिए बहुत पैसा लगता है?'

'आह।' फादर अब्राहम हल्की-सी आह भरते हुए बोले, 'तो तुम राल्फ को यहां आने के वास्ते तार करना चाहती हो...'

'मैं उसे तार द्वारा प्रतीक्षा करने के लिए कहना चाहती हूं।' रोजी ने कहा, मैंने अभी-अभी अपने पिता को पाया है, और कुछ समय के लिए हम दोनों ही दोनों रहें, मैं यह चाहती हूं। मैं राल्फ से कहना चाहती हूं कि उसे इंतजार करना पड़ेगा।'

□

ईश्वर ने हमें जीवन दिया तभी स्वतंत्रता भी दी। —जैफरसन

०००

सबसे अच्छा मनुष्य वह है जो प्रगति के लिए सबसे अधिक श्रम करता है। —सुकरात

०००

अपना रखा हुआ कदम ठीक होगा तो उसका फल होगा ही। —महात्मा गांधी

□

'मानस' के सच्चिदानंद स्वरूप 'राम'

☐ वी. वी. मि

संत शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास की कृति रामचरित मानस के पूर्ववर्ती रामकथा साहित्य में महर्षि बाल्मीकि कृत आदि काव्य रामायण से प्रारंभ कर आनंद, अद्भुत, अध्यात्म आदि अनेक रामायण नामधारी ग्रंथों, हरिवंश, पद्म एवं भागवतादि नाना पुराणों तथा रघुवंश, हनुमन्नाटक और प्रसन्नराघव आदि विशुद्ध साहित्यिक रचनाओं की एक दीर्घ परंपरा दिखायी पड़ती है। इन विविधता पूर्ण रचनाओं में रामकथा के अनेक रूप तथा राम का नर, नारायण तथा शुद्ध अद्वैत ब्रह्म आदि रूपों में चित्रण दिखायी पड़ता है। भाषा के निरंतर बदलते परिवेश के कारण तथा क्लिष्ट पारिभाषिक संस्कृत शब्दावली के कारण तुलसी युग तक आते-आते इनका परिचय स्वाभाविक गति के कारण समाज के एक विशिष्ट अभिजात शिक्षित वर्ग तक ही सीमित रह गया था। साधारण जनमानस के लिए श्रीराम का देवत्व नानावादों के विविधता पूर्ण चित्रण के कारण दुरूह हो चला था। संत कवि की लोक चेतना ने जनमन रंजन की दृष्टि से, साधारण मानव के पीड़ित विवेक को गति, शक्ति तथा दिशा प्रदान करने के लिये, उन्हें मानस की रचना लोकभाषा में करने को प्रेरित किया। संत कवि ने विविध कथाओं से अपने उद्देश्य की पूर्ति तथा लोकरंजन की दृष्टि से प्रसंग चुनकर अपनी रुचि के अनुरूप उसे जिस रूप में प्रस्तुत किया वह कितना उपयुक्त सिद्ध हुआ यह रामचरित मानस की लोक प्रियता से प्रमाणित हो चुका है।

भक्त कवि ने अपने पूर्ववर्ती समस्त कथाकारों तथा रामकथा गायकों को प्रति आभार व्यक्त करते हुए लिखा है-

मुनिन्ह प्रथम हरि कीरति गाई।
तेहि मग चलत सुगम मोहिं भाई॥
(६-१३-१०)

संस्कृत में प्रबंध काव्य की रचना परंपरा से हटकर लोकभाषा में उसे स्वान्तः सुखाय प्रस्तुत करने के प्रयास के लिये क्षमायाचना करते हुए उन्होंने समकालीन एवं परवर्ती प्रबुद्ध समाज से उसे स्वीकार करने का आग्रह भी किया है। गत चार शताब्दियों से उनकी तथा उनकी कृति की निरंतर बढ़ती लोकप्रियता यह प्रमाणित करने के लिये पर्याप्त है कि उनका आत्मबोध किस सीमा तक जनबोध का

ता है । महर्षि वाल्मीकि के मर्यादा षोत्तम राम को 'सुद्ध सच्चिदानन्दमय मानुकुल केतु' तथा 'मंगल भवन गल हारी' बनाकर जन मानस में ष्ठित करने तथा 'रामायण' को धर्म बनाकर घर-घर में पहुंचाने का श्रेय उन्हें ही दिया जा सकता है । आज नस' हिंदू धर्म ग्रंथ मात्र नहीं मान- वाद का सर्वश्रेष्ठ विश्व ग्रंथ बन चुका था संत कवि विश्वकवि बन चुके हैं । उनकी महत्ता है । पर संत कवि ने चुनौतियां भी अपने अनुपम काव्य में हैं, जिनका अपेक्षित अध्ययन आज भी नहीं हुआ है और स्पष्टीकरण तथा तन की अपेक्षा रखता है ।

गोस्वामीजी ने अपनी कृति को 'नाना निगमागम सम्मतं' के साथ 'क्वचि- न्यतोऽपि' से युक्त तथा 'बुध विश्राम जनरंजनि' कहा है । 'बुध विश्राम' 'क्वचिदन्यं' इन स्थलों की ओर विद्वानों शोधार्थियों की दृष्टि अपेक्षित मात्रा नहीं पड़ पायी है । विद्वानों ने बहुधा चिदन्यतोऽपि' को आदिकाव्य से इतर यण ग्रंथों, या संस्कृत साहित्येतर हित्य से गृहीत तथ्यादि मानकर संतोष लिया है । कथा संयोजन की मौलिक भावनाओं–यथा धनुष यज्ञ प्रसंग तथा प्रसंग आदि पर दृष्टिपात तो किया है, पर आध्यात्मिक दर्शन के व्यक्त में जो सूक्ष्म विवेचन संत कवि ने किये हैं, उनकी उपयुक्त समीक्षा या विश्लेषण नहीं हो पाया है । संत कवि को मात्र शांकराद्वैत तथा विशिष्टाद्वैतवादी दार्शनिक दृष्टि से परखा गया है, पर उन स्थलों पर दृष्टि नहीं डाली गयी है, जिनमें भक्त कवि ने स्थापित मान्यताओं से हट कर ब्रह्म की सत्ता के बोधक सर्वाधिक व्याख्यायित शब्द का प्रयोग 'राम' के लिये न कर कोई अन्य शब्द विशेष भावबोध के लिये चुना है । यहां तात्पर्य, 'ॐ' के लोप तथा 'सच्चिदानन्द' के विशिष्ट व्यवहार से है । टीकाकारों तथा व्यास कथाकारों ने 'ॐ' के लोप का कारण ज्ञात करने का प्रयास नहीं किया प्रत्युत 'राम' शब्द को ही 'ॐ' के गुणों से युक्त या उससे भी श्रेष्ठ बताकर संतोष कर लिया । तथा सच्चिदानन्द को ब्रह्म का प्रतीक बताकर किसी शोध की आवश्यकता ही समाप्त कर दी है । उनकी विद्वत्तापूर्ण विवेचनायें इतनी दुरूह हो गयी हैं कि 'बिखरी अलकों' जैसे 'तर्क जाल' से उबर पाना या समाधान प्राप्त करना भी उतना ही दुर्गम हो गया है । फिर 'बुध विश्राम' क्या 'जनमन रंजनि' कथा भी खो जाती है।

रामकथा की उमा शंभु संवाद रूप में प्रस्तुति की फलश्रुति गोस्वामीजी ने इन शब्दों में व्यक्त की है :–

यह सुभ संभु उमा संबादा ।
सुख सम्पादन समन बिषादा ।।
भव भंजन गंजन सन्देहा ।
जन रंजन सज्जन प्रिय एहा ।।
(७-१३०-१-२)

भव भंजन, विषाद समन, संदेह गंजन, जन रंजन तथा सज्जन प्रिय प्रत्येक अंग पर विद्वानों तथा शोधार्थियों ने प्राय: दो सौ पचास से भी अधिक शोधग्रंथ प्रस्तुत कर भक्त कवि के भक्त की अनुभूति तथा कवि की कलागत चेतना एवं अन्य विशेषताओं को स्पष्ट करने का प्रयास किया है । उनकी बहुज्ञता तथा विशद अध्ययन एवं मानवतावादी दृष्टिकोण पर मत व्यक्त करते हुए विद्वानों ने यह तो लिखा कि संत कवि ने अपने श्रमसाध्य प्रबंध काव्य में प्राय: सभी संस्कृत उपलब्ध साहित्य का सारतत्व सुबोध भाषा में संग्रहीत कर संसार भर का सार्थक ज्ञान पाठकों को उपलब्ध कराकर ग्रंथ को संग्रहणीय बना दिया है पर संत कवि के कतिपय, अवसरवादी आलोचकों का उत्तर देना या प्रतिवाद करना उचित नहीं समझा है । उनका यह दृष्टिकोण कितना उचित है यह तो पाठक ही बता सकते हैं ।

संत कवि ने अपने 'रामचरित मानस' ही नहीं, प्राय: संपूर्ण प्राप्त साहित्य में वैदिक एवं उपनिषदिक साहित्य में सर्वाधिक चर्चित शब्द 'ॐ' का प्रयोग अपने इष्ट देव राम के लिये नहीं किया है । पूर्ववर्ती स्थापित परंपरानुसार पुराणों में प्रत्येक देव विशेष को ॐ रूप में रूपायित एवं व्याख्यायित तो देखा जा सकता है, पर मानस में राम न कहीं ॐ स्वरूप में रूपायित हैं और न किसी प्रसंग विशेष में गीता के भगवान श्रीकृष्ण की तरह को ओंकार स्वरूप बताते दिखायी हैं । ब्रह्म के अनीह, अरूप अनाम, व्याप्त आदि गुणों का आरोप उनमें हुआ है, पर सबको एक शब्द या रूप में व्यक्त करने में समर्थ ओंकार प्रयोग नहीं किया गया । 'ब्रह्म' स्थान पर कहे जाने के बाद भी एक विशेष 'सच्चिदानंद' का प्रयोग रूप से किया गया दिखायी पड़ता है विद्वानों तथा मानस मर्मज्ञों की इन तथ्यों पर दृष्टि न पड़ना आश्चर्य विषय लगता है । 'ॐ' के इस या लोप तथा 'सच्चिदानंद' के प्रयोग को 'बुध बिश्राम' का स्वत, 'क्वचिदन्यतोऽपि' का ही एक अंग आशा है, अनुपयुक्त न होगा।

संत कवि के साहित्य, दर्शन तथा पर प्राय: दो सौ से अधिक शोध प्रस्तुत हुए हैं, पर प्राय: सभी का साहित्य के कला पक्ष तथा भाव पक्ष दार्शनिक तथा शास्त्रीय विवेचनों ही सीमित दिखायी पड़ता है । विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने डा. महतो के शोध प्रबंध 'रामचरित नाना पुराण निगमागम सम्मत् 'प्राग्बचन' में शोधार्थी विद्वानों की के 'क्वचिदन्यतोऽपि' के प्रति उदासी पर क्षोभ व्यक्त करते हुए संकेत कि उनके निर्देशन में ही एक शोध 'यद्रामायणे निगदितं क्वचिदन्य

से शीघ्र पूर्ण होने वाला था। था थी कि उक्त प्रवंध से वहुत सारे प्रसंगों पर प्रकाश पड़ेगा, पर वश या तो ऐसा कोई शोध प्रवंध शित नहीं हो पाया, या उस पर इन यों के लेखक की दृष्टि नहीं पड़ पायी। प्रस्तुत निवंध में पूर्ण 'क्वचिदन्यतो पर तो नहीं, मात्र 'ॐ' के लोप या योग तथा 'सच्चिदानन्द' के विशेष हार पर, संत कवि के ही शव्दों में कछु वुधि विवेक वल मोरे। तस हिय हरि के प्रेरे।।' की भावना विचार प्रस्तुत हैं। इसे प्रवुद्ध पाठक विद्वान कवि के 'क्वचिदन्यतोऽपि' वुध विश्राम' के स्थलों से जोड़ सके स्वीकार कर सके तो लेखक का श्रम होगा।

एकाक्षर ब्रह्म' के उद्गीथ स्वस्वप के विस्तृत विवेचन से अधिकांश तथा उपनिषदिक साहित्य भरा है। महिमा मंडन के विशाल भंडार के शब्द प्रायः उसी तरह अप्राप्य जैसे संत कवि के साहित्य में यह शब्द सा दिखायी पड़ता है। छान्दोग्योपनिषद के शांकर भाष्य की विस्तृत व्याख्या 'ॐ' को व्यक्ताव्यक्त, स्थावर जंगम व्याप्त तथा उसके बाहर भी स्थित 'भूमा' की संज्ञा दी गयी है: सृष्टि, संहार, तिरोधान तथा अनुग्रह पंचशक्ति से युक्त इस शब्द विशेष 'ओमित्येतदक्षरमुद्गीथमुपासीत' कह कर एकाक्षर उद्गीथ रूप में उपास्य बताया गया है। उद्गीथ की विशद व्याख्या में कहा गया है कि चराचर भूतों का रस (आश्रयस्थल) पृथ्वी है। पृथ्वी का रस जल, जल का रस औषधियां, औषधियों का रस पुरुष, पुरुष का रस वाक् या वाणी, वाणी का रस ऋक्, ऋक् का रस साम तथा साम का रस उद्गीथ या ओंकार 'ॐ' है। इसे प्रसंग भेद से मिथुनाक्षर, सगुण एवं निर्गुण का प्रतीक सभी लौकिक एवं पारलौकिक कामनाओं को पूर्ण करने वाला तथा मोक्षदायक भी कहा गया है। उसे प्राण (स्वर), सूर्य (प्रत्यास्वर), वृहती (वाणी) का पति बृहस्पति, तथा अंगीरस भी कहा गया है। अन्य उपनिषद् भी समानार्थक विवेचन प्रस्तुत कर उसकी असीम शक्तिमत्ता का आभास देते हैं। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने एकाक्षर ॐ से अपनी एकरूपता एकाधिक स्थलों पर बताते हुए 'ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्' कहकर अपने को 'ॐ' स्वरूप में उपास्य कहा है। पौराणिक ग्रंथों में भी सभी देव शिव, विष्णु, गणपति आदि संबंधित पुराणों में पंचशक्तियों से युक्त तथा ओंकार रूप में उपास्य रूपायित हुए हैं। सभी देवनाम 'ॐ' से समन्वित मंत्रों के रूप में आज भी प्रतिष्ठित तथा प्रचलित हैं। स्वभावतया प्रश्न उठता है कि मानस को 'नाना पुराण निगमागमं सम्मतं' कहने वाले संत कवि ने जब ब्रह्म के सभी

अगुण सगुण प्रतीकात्मक नामों का प्रयोग तो अपने इष्ट देव श्रीराम के लिये किया तो फिर उन्हें मात्र ओंकार रूप में प्रतिष्ठित करने तथा उपास्य बताने में संकोच का अनुभव क्यों किया ? क्या किसी मंतव्य या योजना विशेष के कारण वे ऐसा करने को वाध्य हुए ? यदि हां– तो मंतव्य विशेष या योजना क्या थी ?

व्यास परंपरा के आचार्यों तथा कतिपय राम भक्त विशिष्ट द्वैतवादी संतों को 'राम' नाम को ओंकार स्वरूप के समान या उससे भी श्रेष्ठ प्रमाणित करने वाली व्याख्याओं को छोड़ दिया जाय तो संभवत: किसी भी शब्दकोष के आधार पर 'राम' को ओंकार स्वरूप में पारिभाषित करना या पाना कठिन ही होगा । ब्रह्मलीन महर्षि ओंकारानन्द सरस्वती ने अपनी एक लघु पुस्तक 'गौरी शंकर राम के उपासक नहीं–परन्तु ओंकार के उपासक थे' में मुख्यतया मानस की नाममहिमा प्रसंग में लिखित चौपाई –

'बन्दउं नाम राम रघुवर को ।
हेतु कृसानु भानु हिमकर को ।।
विधि हरिहरमय बेद प्रान सो ।
अगुन अनूपम गुन निधान सो ।।'
(१-१९-१-२)

की 'मानस पीयूष' में दी गयी व्यासों की व्याख्या पर आपत्ति करते हुए 'राम' नाम को ओंकार का समानार्थक बनाने के प्रयास की ही निंदा नहीं की है प्रत्युत गोस्वामीजी के निगमागम सम्मत दावे को भी दंभपूर्ण तथा सांप्रदायिक
युक्त कहने से संकोच नहीं किया
यहां यह कहना अप्रासंगिक नहीं होगा
महर्षि संत कवि को सांप्रदायिक
करने के प्रयास में अपनी ही सांप्र
भावना को छिपा नहीं पाये । उनकी
संभवत: संत कवि द्वारा काक
प्रकरण में करायी गयी शिववंदना (
ष्टक) पर नहीं पड़ी है, जिसमें कवि
स्पष्टतया भगवान शंकर को
कारमोंकार मूलं तुरीयं। गिरा ज्ञान
तमीशं गिरीशं ।।' कहा है तथा उ
शिव पुरोणोल्लिखित रूप का ही
कराया है । वैसे भी संत कवि ने
शंकर को 'सेवक स्वामि सखा सिय
कहकर राम का उपासक ही नहीं
भी बताया है । तथा अप्रत्यक्ष रूप से
को भी ओंकार का उपासक तथा
रूप में उपास्य कह ही दिया है ।
हरिहर मय' तथा 'वेद प्राण' शब्दों
प्रयोग 'ॐ' की अप्रत्यक्ष रूप से
स्वीकार ही हैं। गीता में भी 'प्रणवः
वेदेषु' तथा 'वेद्यं पवित्रमोंकार
यजुरेव च' आदि से यही संकेत
है । पर महर्षि संत कवि की योजना
मर्म शायद व्यासों की ही भांति
समझा पाये हैं ।

'मानस पीयूष' में उल्लिखित
चन या व्यास व्याख्या में बहुधा बो
के समन्वयवादी सिद्धांत, जिसे
में विशिष्टाद्वैतवाद का आधार

के आधार पर 'राम' को ॐ के ही नहीं, उससे भी श्रेष्ठ सिद्ध करने जो प्रयास महारामायण तथा पूर्व एवं रामतापनीयोपनिषद् के आधार किया गया है–वह उपयुक्त नहीं कहा सकता। 'हेतु कृसानुभानु हिमकर को' अर्थ क्रमशः वैराग्य, ज्ञान तथा भक्ति आश्रय तथा अन्य विवेचनों में 'अथर्व रस' को 'ॐ' से श्रेष्ठ तथा राम को र्व-शिरस' से श्रेष्ठ बताने का प्रयास उपयुक्त नहीं लगता।' 'ॐ' को तारक, कुण्डल, अर्धचन्द्र तथा विन्दु की कलाओं से युक्त तथा 'राम' नाम रेफ' की षष्ठ कला से भी युक्त बता 'ॐ' से श्रेष्ठ प्रमाणित करने में बुद्धि कौशल दिखाया गया है तथा नाम से ही 'ॐ की उत्पत्ति के जो प्रस्तुत हुए हैं, वे संभवतः स्वयं कवि की भावनाओं के अनुरूप नहीं जा सकते। यह तो स्पष्ट है कि संत- का उद्देश्य राम को ब्रह्म प्रतिपादित था पर किसी योजना विशेष के ही वे राम से कृष्ण की गीता वाली में उद्घोष नहीं कराना चाहते थे। उसी योजना के कारण वे मात्र चार दोहों के अंतर से ही स्पष्टतया नाम को 'सत चेतन घन आनंद रासी' हैं। इसमें संत कवि की ॐ के किसी उपेक्षा या ॐ से श्रेष्ठ सिद्ध की भावना की कल्पना, समान रूप भावना का उपहास-सा लगता है। भक्त कवि की शास्त्रबद्धता तथा राम के प्रति एकनिष्ठता के आधार पर मात्र इतना ही कहना तर्क संगत होगा कि वे, राम को ॐ न कहकर भी जनमन रंजन की दृष्टि से तथा शास्त्रों की पारिभाषिक क्लिष्ट शब्दावली से अगम के स्थान पर सुगम ही बनाने की इच्छा से, उसके दो वर्णों में ही उसका महत्व प्रतिपादित करने में अधिक रुचि रखते थे। तभी तो वे राम नाम के दो वर्णों र् तथा म् को ही उसकी सुंदरता का आधार बता कर मणियुक्त मुकुट रूप में प्रस्तुत करते हैं। देखें–

एकु छत्रु एकु मुकुट मनि सब बरननि पर
जोउ।
तुलसी रघुवर नाम के बरन विराजत
दोउ॥

भारतीय आध्यात्मिक चेतना के विकास तथा प्रगति के साथ बदलते परिवेश पर दृष्टिपात करें तो स्पष्ट होगा कि आर्य धर्म में तर्क तथा देशकाल एवं पात्रानुरूप आचरण की स्वतंत्रता ने सांख्य, बौद्ध तथा जैन जैसे स्वतंत्र दर्शनों को ही जन्म नहीं दिया, प्रत्युत समय-समय पर स्थापित मान्यताओं को भी प्रभावित एवं परिमार्जित किया है। पितृ तथा मातृप्रधान भक्ति के संघर्ष में समन्वय की भावना ने कभी देवाधिदेव भगवान शंकर को अर्ध नारीश्वर रूप से चित्रित होने को बाध्य किया होगा; बौद्ध दर्शन की उसके प्रचारकों तथा शिष्यों द्वारा जो दुर्गति की गयी

उसके कारण ही जिस भारतभूमि में कला तथा संस्कृति का यह कभी केंद्र था यहां से लुप्त होने को बाध्य हो गया। गोस्वामीजी ने भी इसका संकेत दोहावली में ऐसे दिया है–

अतुलित महिमा बेद की तुलसी किये बिचार।
जो निन्दत निन्दित भयो बिदित बुद्ध अवतार ।।

पूर्ववर्ती ज्ञानाश्रयी तथा प्रेमाश्रयी शाखा के संतों की उक्तियों का उन्होंने जो विरोध मानस में व्यक्त किया है, वह स्वयं उनकी निगमागम के प्रति भावना को व्यक्त करने के लिये पर्याप्त है। कबीर ने लिखा था :–

'दशरथ सुत तिहुं लोक बखाना।
राम नाम को मरम है आना ।।
दशरथ कुल अवतरि नहिं आया।
नहिं लंका के राव नसाया ।।'

संत कवि इस भ्रम का निवारण भगवान शंकर के माध्यम से पार्वती भ्रम भंग के प्रसंग में यह कहलाकर करते हैं –

एक बात नहिं मोहिं सोहानी।
जदपि मोहबस कहेहु भवानी ।।
तुम्ह जो कहा राम कोउ आना।
जेहि श्रुति गाव धरहिं मुनि ध्याना ।।
कहहिं सुनहिं अस अधम नर ग्रसे जो मोह पिशाच।
पाषंडी हरि पद विमुख जानहिं झूठ न सांच ।।

कवि का आक्रोश उसकी शास्त्रसम्मत भावना को ही व्यक्त करता है। फिर भी अनेक और संबद्ध धर्मों यथा शैव शा गाणपत्य आदि के प्रचार का विरोध उनके कारण फैल रहे भ्रम का निवा उन शब्दों में तो संभव नहीं था। संत ने समन्वय का मार्ग चुना। शंकर के उपासक तथा उपास्य बने स्मरण भी हुआ पर शाक्तों का विरोध तो था। 'एं ह्लीं क्लीं' के रूप में ॐ का समानार्थक मंत्र उन्हें अलग ही रखता था। संत कवि ने सूक्त ॐ और मातृबीज मंत्र द्वारा समान रूप से व्यवहृत शब्द प्रतीक 'सच्चिदानन्द' का चयन संभवत इसी भावना से करना श्रेयस्कर समझा हर वाद अपने इष्टदेव को सच्चिदानन्द स्वरूप ही कहता था तथा शाक्त भी देवी को 'सच्चिदानन्द स्वरूपिणी' कहते थे लिंग भेद से मुक्त इस शब्द का व्यवहार श्रौत एवं उपनिषदादि सम्मत भी था। संभवतः यही संत कवि की समस्या का समाधान था। संत कवि ने पूर्व पद्धति ॐ के व्यवहार का मोह त्याग सच्चिदानन्द की उपयुक्तता को वरीयता देना ही श्रेयस्कर समझा। प्रत्यक्षतः ॐ के राम के लिये अव्यवहार पीछे इस तर्क का मूल्यांकन विद्वान कर सकते हैं। क्या यह संत कवि की दृष्टि का परिचायक नहीं कहा जा सकता

सच्चिदानन्द की सत्, चिद् आनन्द की त्रयी का अपना विशेष अन्य वेदांगों में भी देखा जा सकता है

व्याकरण में उसे सर्वनाम का बोधक तथा अहम्, त्वम् तथा सः का रूप देकर दार्शनिक विवेचन का आधार बनाया गया है । छन्द शास्त्र में वह 'रसो वै सः' रूप में माधुर्य प्रसाद तथा ओज का प्रतिनिधित्व करने में समर्थ है । ज्योतिष में सूर्य, अंतरिक्ष तथा पृथ्वी के उद्गीथ स्वरूप में तथा व्यक्ताव्यक्त के चित्रणों में वाह्य तथा आंतरिक दोनों व्यक्तित्वों को स्पष्ट करने में उसका उपयोग किया गया है । संत कवि ने मानस के विविधि संदर्भों में 'सच्चिदानन्द' का जो विशिष्ट प्रयोग किया है उसे देखकर लगता है कि उनकी दृष्टि मात्र समन्वयवाद तक ही सीमित नहीं रही है प्रत्युत कुछ अन्य अप्रत्यक्ष कारण भी उन्हें इस दिशा में प्रेरित करने में सहायक हुए हैं। आइये पहले गोस्वामीजी द्वारा सच्चिदानन्द के विशिष्ट प्रयोग का मर्म समझने की चेष्टा करें ।

भक्त कवि ने श्रीराम के निर्गुण निराकार ब्रह्म तथा भगवती सीता को 'योगमाया' रूप में अवतरित चित्रित किया है । उनके अनुसार निर्गुण निराकार ब्रह्म ही भक्तों के हित में सगुण रूप में अवतरित होता है । राम भी वही निर्गुण निराकार ब्रह्म हैं। वे अपने लीलाधाम रूप में उस नट की भाति हैं, जो विभिन्न भूमिकाएं अभिनीत तो करता है, पर वह नहीं होता जो भूमिका स्वरूप में दिखायी पड़ता है। वह 'सारद सेस महेस विधि आगम निगम पुरान' के लिये भी 'नेति नेति' के अतिरिक्त किसी अन्य भाषा में व्यक्त होने योग्य नहीं हैं । उनके परिचय में संत कवि कहते हैं कि–

एक अनीह अरूप अनामा ।
अज सच्चिदानन्द परधामा ।।
व्यापक विश्व रूप भगवाना ।
तेहि धरि देह चरितकृत नाना ।।
(१-१३-३४)

यहां कल्पनातीत, 'निर्गुन नाम न रूप' का सच्चिदानन्द स्वरूप विश्व रूप विचारणीय है । इसी क्रम में नाम, जो अगुन सगुन दोनों को मात्र उपाधि ही कहा जा सकता है, का महत्व प्रतिपादित करने के क्रम में वे पुनः कहते हैं ।

एक दारुगत देखिअ एकू ।
पावक सम जुग ब्रह्म विवेकू ।।
व्यापक एक ब्रह्म अबिनासी ।
सत चेतन धन आनंद रासी ।।
(१-२३५, ६)

एक ही काष्ठ (दारु) में अदृश्य और अगोचर अग्नि तथा प्रकट एवं गोचर अग्नि की उपस्थिति जताने के लिये सच्चिदानन्द शब्द में निहित त्रयी का व्यवहार यहां विचारणीय हो जाता है । ब्रह्म तो निर्गुण एवं अदृश्य ही है पर घर्षण (या निरंतर जप) से ही उसका स्वरूप प्रकट होता है । नाम (भले ही हमारा दिया हुआ है) के निरंतर जप से ही उसका बोध होता है । यहां प्रायः छान्दोग्योपनिषद् में दी गयी उद्गीथ स्वरूप अग्नि की व्याख्या को दुहराकर ब्रह्म की व्यापकता

का दर्शन कराया गया है। इसी प्रकार आगे कथा प्रसंगों में भी सच्चिदानन्द के साभिप्राय प्रयोग दर्शनीय हैं। सती के मोह का कारण भी भगवान शंकर द्वारा सीतान्वेषण में भटकते अज्ञ 'बिरही' राम के लिये 'सच्चिदानन्द' शब्द का प्रयोग ही है। कवि का चित्रण देखें :–

भरि लोचन छबि सिन्धु निहारी।
कुसमय जानि न कीन्ह चिन्हारी॥
जय सच्चिदानंद जग पावन।
अस कहि चलेउ मनोज नसावन॥
(४-५०-२, ३)

सती की चिंता एवं मोह का उसी समय का चित्रण देखिये :–

संकर जगतवंद्य जगदीशा॥
सुर मुनि सब नावत सीसा॥
तिन्ह नृप सुतहि कीन्ह परनामा।
कहि सच्चिदानंद परधामा॥
भये मगन छवि तासु बिलोकी।
अजहुं प्रीति उर रहति न रोकी॥
ब्रह्म जो व्यापक बिरज अज अकल अनीह अभेद।
सो कि देह धरि होइ नर जाहि न जानत वेद॥

तर्क तो अंतहीन होता है। उसका अंत तो वास्तविकता से परिचय प्राप्त कर ही किया जा सकता है। परीक्षा, सत्य का आभास, ग्लानि और अंततोगत्वा देह त्याग तथा पुनर्जन्म के बाद भी जिज्ञासा बनी रहती है। तपस्या के बल से शंकर की प्राप्ति के बाद भी श्रद्धा को दृढ़ करने के लिये शंकर से कथा सुनाने का आग्रह रूप में सती करती हैं। भगवान पुन: सच्चिदानन्द के संबोधन से का परिचय देते हैं। उनके कथन विचार करें–

राम सच्चिदानन्द दिनेसा।
नहिं तहँ मोहनिशा लवलेशा॥
सहज प्रकाश रूप भगवाना।
नहिं तहँ पुनि विज्ञान विहाना॥
पुरुष प्रसिद्ध प्रकास निधि प्रगट परावर नाथ।
रघुकुल मनि मम स्वामि सोइ कहि शिव नायउ माथ॥
(१–११६ तथा चौ.

प्रभु अवतार की नाना कथाओं इदं इथं को अकथनीय बताते हुए उसी अवतार विशेष की कथा सुनाते जो सती के मोह का कारण बना था। सतरूपा की उस तपस्या कथा के वर्णन द्वादशाक्षर मंत्र (ॐ नमो भगवते देवाय) जपते मनु के ध्यान का वर्णन शब्दों में प्रस्तुत हुआ है :–

करहिं अहार साक फल कन्दा।
सुमिरहिं ब्रह्म सच्चिदानन्दा॥
संभु विरंचि विष्नु भगवाना।
उपजहिं जासु अंस ते नाना॥
(१-१४३-१,

रावण के अत्याचारों से पीड़ित के आग्रह पर ब्रह्मा द्वारा की गयी का द्वितीय श्लोक देखें जिसमें, सच्चिदा शब्द का साभिप्राय व्यवहार स्पष्ट है

जय अविनासी सव धट वासी व्यापक
परमानन्दा ।
गत गोतीतं चरित पुनीतं माया रहित
मुकुन्दा ।।
लागि विरागी अति अनुरागी
विगतमोह मुनिवृन्दा ।
बासर ध्यावहिं गुन गन गावहिं जयति
सच्चिदानन्दा ।।
(१-१८६ श्लोक २)

इतना ही नहीं रामचरित मानस का तत्वदर्शी पात्र यथा विदेह जनक, वाल्मीकि तथा काकभुसुण्डि भी चिदानन्दस्वरूप की पुष्टि करते दिखायी ते हैं। जनक राम को 'व्यापक ब्रह्म अविनाशी । चिदानन्द निरगुन गुन ॥' कहकर संबोधित करते हैं।

सच्चिदानन्द के इस विशिष्ट प्रयोग मानस में आद्यंत निर्वाह को देखकर यह असंगत नहीं होगा कि संत कवि ने व्यवहार मात्र विशिष्टाद्वैतवाद की वादी भावना या ॐ के अव्यव- की क्षतिपूर्ति के ही उद्देश्य से नहीं, योजना विशेष के लिये ही किया । सच्चिदानन्द के साथ 'दिनेसा' निधि' 'विश्व रूप' तथा 'जगत प्रकासक राम्' आदि का स्थान- पर प्रयोग तथा उनके स्वतंत्र प्रयोग देखकर लगता है कि गोस्वामीजी ने शास्त्र में की गयी काल पुरुष कल्पना से भी प्रेरणा ग्रहण की होगी । ज्योतिष शास्त्र में ही हमें सर्वप्रथम ब्रह्म के अमूर्तभाव बिम्ब को चाक्षुष विम्ब में परिवर्तित कर कालातीत अरूप अनाम ब्रह्म की काल पुरुष के रूप में कल्पना दिखायी पड़ती है । ब्रह्म के मानवीकरण द्वारा कल्पित काल पुरुष के अंगों में विविध ग्रह नक्षत्रों का न्यास किया गया है तथा उसके विश्वरूप को सुगम बनाने का प्रयास हुआ है । अतः अनुभूति के इस विम्ब को सर्जनात्मक कल्पना के आधार पर चाक्षुष वनाने के इस सफल प्रयास को ही या दूसरे शब्दों में ज्योतिष शास्त्र को ही हम अवतार वाद का जनक कहें, तो अत्युक्ति न होगी ।

ज्योतिष प्रत्यक्षतया एक अर्थार्थी काल-शास्त्र है । पर ज्योतिष शास्त्र में की गयी कालातीत ब्रह्म की कालपुरुष रूप कल्पना भारतीय महर्षियों की ऋतंभरा प्रज्ञा का ही प्रतिफल है, जिसके आधार पर उन्होंने आकाशस्थ अगणित प्रकाश पुंजों का अध्ययन तथा जगत पर उनके शुभाशुभ फलों का विवेचन किया है। गोस्वामीजी के ज्योतिष ज्ञान की चर्चा विद्वानों ने उनके साधारण ज्योतिष ज्ञान अर्थात 'जोग लगन ग्रह वार तिथि' तथा सगुन विचार आदि तक ही सीमित रखी है । उनकी विश्वरूप कल्पना को आध्यात्मिक प्रसंगों में ही स्वीकार किया गया है, पर गोस्वामीजी के ज्योतिष के तत्वज्ञान पर प्रकाश डालने का कोई प्रयास नहीं हुआ है । संत कवि के विषद् साहित्य में ज्योतिष ज्ञान संबंधी इतनी सूक्तियां बिखरी पड़ी हैं कि

उनका यदि सूक्ष्म अध्ययन किया जाय तो लगेगा कि वे स्वयं भी त्रिकालज्ञ थे पर अर्थार्थी विज्ञान का उपयोग उन्होंने अपनी विरागी भावना के कारण ही नहीं किया। अर्थ से दूर रहने का उनका यह संकल्प उनके काव्य में स्वत: स्पष्ट हुआ है।

गोस्वामीजी ने अर्थ को छोड़कर प्राय: सभी प्रयोजनों का उपयोग किया यह सर्वविदित तथ्य है, जो उनके साहित्य में स्थान-स्थान पर व्यक्त हुआ है। इसी कारण संभवत: वे न उस रूप में प्रसिद्ध हो सके न परवर्ती विद्वानों का उस रूप की ओर ध्यान आकर्षित कर सके। अर्थ प्राप्ति या राजाश्रय उनको इष्ट नहीं था। उनके इष्ट तो मात्र 'राम' थे।

काल शास्त्र के रूप में प्रतिष्ठित ज्योतिष शास्त्र में घटी, दिन, मास, वर्ष, युग, कल्पादि का ही मान निर्धारण नहीं, मनु, इन्द्र, ब्रह्मा, विष्णु आदि की भी आयु निर्धारित की गयी है। कालातीत ब्रह्म का दण्ड रूप काल पुरुष मात्र ब्रह्म के अद्वैत तथा विविध देवादि के कालाधीन रूप को व्यक्त करने को कल्पित है। संत कवि ने रावणादि के काल स्वरूप श्रीराम के इसी स्वरूप की वंदना युद्ध काण्ड (लंकाकाण्ड) के प्रारंभ में करते हुए लिखा है :–

लव निमेष परमानु जुग बरस कलप सर चंड।
भजसि न मन तेहि राम को काल जासु कोदंड॥

गोस्वामीजी की राम की तीनों प्रभावदर्शी योजनाओं में 'देखे शिव विधि विष्णु अनेका' 'राम न देखेउं आन' का जो वर्णन हुआ है वह भी प्राय: इसी रूप का सरलीकरण कहा जा सकता है। उनकी माया स्वरूपा सीता के अंश मात्र से 'अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी' तथा राम से अनेकानेक शिव, विष्णु तथा ब्रह्मा उत्पन्न हो सकते हैं। गोस्वामीजी देव पदों को तपस्या द्वारा प्राप्त पद मानते दिखायी पड़ते हैं। एक से अधिक वार वे ऐसा करते दिखाई पड़ते हैं। पार्वती अपने स्वप्न में प्राप्त उपदेश तथा कपट मुनि प्रतापभानु से यही तथ्य प्रकट करती हैं। पार्वती के शब्द देखिये।

तप बल रचइ प्रपंच विधाता।
तपबल विष्णु सकल जग त्राता।
तप बल शंभु करहिं संहारा।
तव बल शेष धरइ महि भारा॥
(१-५३-३, ४)

ज्योतिष में कालगणना का आधार सूर्य तथा चंद्र को ही बनाया गया है। सूर्य को आत्मा, चंद्र को मन, मंगल को धैर्य या शौर्य, बुध को वाणी, बृहस्पति को विवेक, शुक्र को वीर्य तथा शनि को संवेदना का प्रतीक स्वरूप काल पुरुष का अंग समझा गया है। 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' के सिद्धान्त तथा सच्चिदानंद के आंतरिक तथा बाह्य रूपों के आधार पर ही ज्योतिष शास्त्र की श्रेष्ठता प्रतिपादित करते हुए कहा गया है :–

विफलान्य शांस्त्राणि विवादस्तेषु केवलं
[illegible]

ं ज्योतिषं शास्त्रं चन्द्राकौं यत्र
साक्षिणौ ।।

त कवि के देवताओं के प्रति व्यक्त ार तथा उनकी शिव, विधि, विष्णु ीमाबद्ध शक्ति के चित्रण में ज्योतिष के सिद्धांत व्यक्त होते दिखते हैं। ात्मिक जगत में सत्य ही साध्य तथा और आनन्द का प्रतिनिधि माना है, पर लौकिक जगत में ज्ञान या ही वरेण्य माना गया है। ज्योतिष में आध्यात्मिक रूप से सच्चिदानन्द स्वरूप को सत्वगुण का प्रतिनिधि गया है, पर लौकिक क्षेत्र में उसके को सत्वगुण का प्रतिनिधि माना गया । गोस्वामीजी ने सत्, चिद् तथा आनंद स, शील और बल आदि के चित्रण लिये प्रायः इन्हीं सिद्धान्तों का आश्रय है। आध्यात्मिक क्षेत्र में चिद्, नाम या शील राजस् गुण का प्रतिनिधित्व करते हैं, पर लौकिक क्षेत्र में वे सत्वगुण का प्रतिनिधित्व करते माने जाते हैं। ज्योतिष के इसी सिद्धांत का प्रतिपादन संत कवि ने नामी के ऊपर नाम की वरीयता सिद्ध कर किया है। विद्वानों ने संत कवि के श्रीराम को ब्रह्मरूप में विवेचित करते समय उन्हें अद्वैत सिद्धान्त के उदासीन ब्रह्म से भिन्न तथा विशिष्टा द्वैत की ब्रह्म कल्पना से भी कुछ सीमा तक अभिन्न नहीं माना है। पर ज्योतिष की कालपुरुष की कल्पना के आधार पर उसका विवेचन नहीं किया है। इस सीमित निबंध में यह विस्तृत विवेचन संभव न होने के कारण मात्र इतना निवेदन है कि तुलसी साहित्य पर उपरोक्त दृष्टि से भी विचार अपेक्षित है।

–२/४९२ आजाद नगर,
कानपुर-२०८००२, उ. प्र.

◆

ऊँकार सतिनामु करता पुरखु निरभऊ।
निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभ गुरप्रसादि ।।
(जो एक है।
जो ऊँकार है।
जिसका नाम सत्य है।
जो कर्त्ता है–जो सबकी सृष्टि करता है।
जो समर्थ पुरुष है।
जो निर्भय है–जिसे किसी का डर नहीं है।
जो निर्वैर है–जिसका किसी से वैर नहीं !
जो काल की पहुंच से परे है।
जिसका जन्म नहीं है।
जो स्वयंभू है।
जो गुरु है।)

– नानक वाणी

◆

कहानी

आधुनिक गांधारी

☐ अमिता श्रीवा

मां का खत पढ़कर मुझे एक धक्का-सा लगा। इतनी चिंताओं के बाद मेरी सबसे छोटी बहन का विवाह ठीक हो गया है। परिवार संपन्न, सुशिक्षित है। लड़का लेक्चरर है, परंतु नेत्रहीन है। हम सभी भाई-बहनों का भाग्य हर विधि सहज और सुंदर रहा, फिर जीवन की संध्या में मेरी मां को अपनी सबसे छोटी संतान के इस असहज भाग्य का अंधकार किस तरह सहन हुआ होगा . . . ?

संघर्ष की इस लंबी अवधि में पापा की मृत्यु के बाद अव्यवस्थित परिवार धीरे-धीरे संभल गया और अब जब हम सभी समर्थ हैं तब ऐसा दुर्भाग्य !

हम दो बहनों का विवाह करके, विशाल परिवार का भार मां के क़ंधों पर डाल पापा चल बसे। चारों ओर का गहन अंधेरा भी उस दिन इतना गहरा नहीं लगा था, जितना आज असमर्थता का बोझ मुझे सालने लगा।

याद आये वे दिन जब मां दिन-रात पापा की सेवा में लगी रहतीं और नन्हीं दो साल की लिपि को मैं कंधे से लगाये, चुप कराती। उसके भूख से मुरझाये ओंठ दूध की कमी से काले पड़ जाते तब पानी में चीनी घोल रोटी सानकर खिलाती। मां की गोद खोजती उस नन्ही सी बच्ची को मैं अपनी कुंवारी छाती चिपका, ममता का आंचल ओढ़ाती की कोशिश करती। तब शायद हम की मजबूरी जानकर वह मेरी गोद सो जाती। अपनी बीमारी में ही पापा मेरी शादी की। उस समय उसे छोड़ ससुराल आने पर, हर शाम उसकी अदृश्य आवाज़ मुझे बेचैन कर देती।

पापा की मृत्यु के बाद तीसरी की शादी में मैं गयी तब वह सात साल थी। मुझे याद है कुछ लोग उसे बार चिढ़ा रहे थे। उस समय तमतमाया चेह लेकर वह पूरी महफिल में सिर ऊंचा अंत तक लड़ती रही थी। मंद-मंद राते रिश्तेदारों के बीच गहराई से देती उस सात साल की बालिका देख हम सभी चकित हो गये थे। आगे बढ़कर सबको झिड़क दिया अकेली नन्हीं-सी बच्ची को इस चिढ़ाना कितना अशोभनीय है। अपनी भूल पर लज्जित हो गये, पर

…नों के लिए बढ़े हाथों को झिटककर …ना रोये कमरे से निकल गयी थी।

उसकी एक कपड़े की गुड़िया थी। …कुचैली, नकचपटी, जगह-जगह से …सी। उस गुड़िया को लेकर उसकी …म मेरी मौसी की लड़की से उसकी …लड़ाई होती। मैंने सभी लड़कियों के …खड़ की नयी खूबसूरत गुड़िया खरीद …थीं। फिर भी जाने क्या बात थी कि …की जान उसी पुरानी गुड़िया में बसती। …द उस पर विजय पाने के लिए ही …लड़कियां उस गुड़िया की छीन-झपट …तीं।

एक दिन कलेजे से लगाती इस गुड़िया को देखकर मैंने लिपि से पूछा–'तुम्हें क्यों यह गंदी गुड़िया पसंद है, नयी गुड़िया क्या तुम्हें अच्छी नहीं लगती?'

कुछ देर बड़े प्यार से वह अपनी गुड़िया सुलाती रही फिर बोली–'यह गंदी नहीं है, यह तो बीमार हो गयी है। जैसे हम बीमार रहते हैं, फिर भी अम्मा मुझे बहुत प्यार करती हैं, उसी तरह यह बीमार है, गंदी हो गयी है तो क्या हम इसको प्यार नहीं करेंगे?'

एक दिन उसने अपनी उसी गुड़िया को लेकर मुझसे कहा–'दीदी, जरा इसे चुप

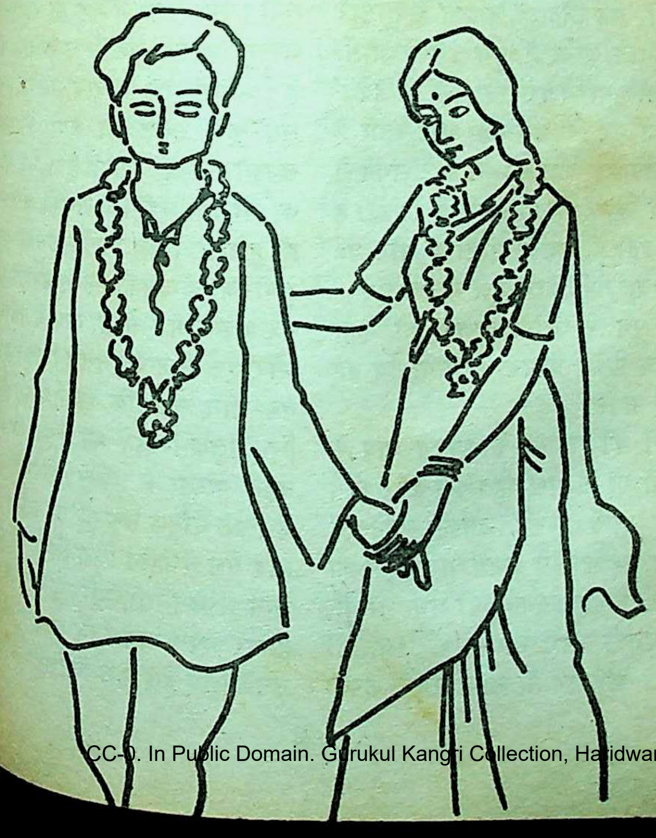

करा दीजिये, मुझे अम्मा बुला रही हैं।'

मैंने उसकी खातिर गुड़िया को हृदय से लगाया। अपनी दोनों ओरफै ली रूई-भरी कोमल बांह मेरी छाती पर पसार वह गुड़िया मुझसे चिपक गयी। उसमें एक गर्माहट थी, कोमलता थी, अदृश्य जीवन से मानो भरी वह गंदी गुड़िया एक नन्हें बच्चे-सी निरीह, बड़ी प्यारी लगी। उस अनुभव को मैं आज तक भूल नहीं पायी हूं, जिसका अहसास एक छोटी बच्ची ने कराया था।

मेरे अबोध पुत्र ने एक दिन उसे मार दिया तब जोर-जोर से रोती लिपि को मां ने समझाया–'यह छोटा है, नादान है, तुम्हारे घर मेहमान आया है, तुम इसकी मौसी हो न, इसके मारने पर रोना नहीं चाहिये।' मेरे पूछने पर कि उसे कहां चोट लगी है उसने रोते हुए कहा था–'मैं चोट लगने से थोड़ी रो रही हूं, मैं तो इसलिये रो रही हूं कि, मैं बड़ी हूं, इसकी मौसी हूं और यह मेरी इज्जत नहीं करके मुझे मारता है।'

मैंने पुत्र से सॉरी बोलने को कहा और पांव छूकर प्रणाम करवाया तब वह शांत हो पायी।

बच्चों की पढ़ायी के कारण बाद के वर्षों में मैं मां के पास बहुत कम जा सकी। जब भी उससे मिली, उसका व्यक्तित्व साधारण लड़कियों से अलग पाया। मां का आंचल पकड़े वह छोटी बच्ची अभी भी थी, लेकिन दूसरी ओर भीषण परिस्थितियों में गुजरते परिवार के साथ संघर्ष करती अपनी उम्र से अधिक सहनशील, दार। उसके भीतर एक कोमल बसी थी, जबकि अपने बाहरी के प्रति वह सदा उदासीन रही। कमी तो पूरी नहीं हो सकती थी, पर सभी भाई-बहनों का अपनी-अपनी का एक विशेष प्यार उसे मिला। अनुभव उसने अवश्य किया होगा। चीज जो उसके अंदर सदा से रही, किसी भी अन्याय का दृढ़ता से विरोध की क्षमता। किसी गलत बात के वह कभी भी झुक नहीं सकती थी।

इसलिये मां के इस खत से मैं स्तब्ध गयी। क्या लिपि ने घर की परिस्थितियों मजबूर होकर अंत में समझौता कर है? मां के पत्र के बाद उसका पत्र सब कुछ स्पष्ट हो गया। उसने समझौता नहीं किया है। मां या का भी दोष नहीं है। उनकी ओर से ही हुआ है। यह निर्णय उसका अपना सुवीरजी ने उसकी किसी प्रकाशित पर अपना मत भेजा, बाद में पत्राचार और एक दिन वह उससे मिलने आये। वह जान सकी कि वह नेत्रहीन हैं। लिए लिखने-पढ़ने का काम उनकी वहन करती है। ब्रेल की पढ़ायी में सिर्फ मैट्रिक तक ही उपलब्ध है। बाद ऐसे नेत्रहीन विद्यार्थियों को अन्य सभी विद्यार्थियों की भीड़ में होकर अपना पथ स्वयं खोजना पड़ता है। उनके लिए ब्रेल में उच्च शिक्षा के लिए

भी उपलब्ध नहीं होती। नहीं वह
परीक्षा ब्रेल में दे सकते हैं। परीक्षा
में अपना उत्तर बोलकर लिखवाना
है। जब इस देश के विद्यार्थियों को
हीनता में अपने भविष्य के लिए दिन-
संघर्ष करना पड़ता है तब एक ज्योति-
विद्यार्थी का अंधेरा कितना गहरा
होगा इस पर कौन सोचता है? ऐसी
रिस्थितियों में अपने दृढ़ मनोबल पर
एम. ए. किया और युनीवर्सिटी में
स्थान प्राप्त किया। दोस्तों द्वारा
कुछ नोट्स, टेप किये गये लेक्चर,
सहायता और अपनी मेहनत से
हुए। लेक्चरर बन जाने पर,
ईमानदार, मेहनती व्यक्तित्व से
विद्यार्थियों को वश में किया है।
विरोध करने वाले विद्यार्थी भी आज
सम्मान करते हैं।

अपने सब काम बिना किसी सहारे
हैं। यहां तक कि पढ़ाने के लिए
वह बस से अकेले जाते हैं। उनमें
असहजता, हीनता अथवा दयनी-
हीं है। आत्मसम्मान से भरा है
व्यक्तित्व। किसी भी विषय पर वह
से बात कर सकते हैं। ऐसे पुरुष
अपने जीवन का निर्माण अपने
में किया है, जब उससे विवाह का
बिना झिझक रखा तो उसे क्षण भर
नहीं लगा कि वह नेत्रहीन हैं।
भीतर का प्रकाश ही इतना उज्ज्वल
उसे अपने जीवन का लक्ष्य स्पष्ट
हो आया।

उसके विवाह में मैं अवश्य आऊं, उसने बड़े आग्रह से लिखा है और उसके निर्णय पर मेरा क्या विचार है उसने यह भी जानना चाहा है। मेरा मन उसके प्रति सम्मान से भर उठा। मैं जानती हूं उसका यह निर्णय किसी दयाभाव या भावावेश में नहीं लिया गया है। गांधारी की तरह वह छल से बांध नहीं दी गयी है। उसका त्याग उस महान नारी गांधारी-सा नहीं है, जिस पर ईश्वर की कृपा नहीं रही, जिसके तप का उचित उत्तर नहीं मिला। मेरी बहन ने तप करके किसी ईश्वर से अपने भाग्य का निर्णय नहीं मांगा है। उसने अपने मनोबल पर यह त्याग किया है। यह जानते हुए भी कि भविष्य में भी सुवीरजी की आंखें ठीक नहीं हो सकतीं। क्योंकि उनकी आंखों में खराबी नहीं है, उनकी आंखों से संबंधित नसें सात साल की उम्र में तेज बुखार के कारण मृत हो चुकी हैं। संसार का कोई भी डाक्टर उनको ठीक नहीं कर सकता। यहां तक कि वे नेत्र-विशेषज्ञ जो विश्व भर में अपनी कुशलता के लिए प्रसिद्ध हैं उनका ऑपरेशन नहीं कर सकते। फिर भी वह संसार से मुंह मोड़कर आंखों पर पट्टी नहीं बांधेगी। प्रभु! मैं जानती हूं, तुम इस बार गांधारी को ठग नहीं सकते! वह आज की गांधारी है, जो अपने पति को नेत्रज्योति बनकर उन्हें संसार में उचित पथ पर चलने की प्रेरणा देगी।

—बी-३४, सेक्टर-१९, राउरकेला-५

ग्रीष्म गीत

गर्मियां आयीं
उबासी सांस गरमाने लगी ।
पुष्प-पंखी देह कुम्हलाने लगी ।।

दूर तक
बजतीं हवा की सीटियां,
डंक गहरे तक
चुभाती चीटियां,
दोपहर दहती–
स्वेद के मेंह बरसाने लगी ! !

एक अल्हड़–
छोकरी-सी डोलती,
धूप बिन बोले
जहर-सा घोलती,
दिन बहुत ठहरे–
रात आयी अभी, जाने लगी ! !

चक्रवातों में
फंसी है चील,
पी रही जल स्वयं
प्यासी झील,
फुनगियों पर 'लू'–
पलाशी-ध्वजा फहराने लगी ।।

–शिवचरण सिंह चौहान
मनेथू, कानपुर-२०९१२१, उ. प्र.

नया फूल

धूपभरी धधकती
दोपहरी में
सूख जाता है जब
प्राण और जीवन
झुलसने लगता है
तन और मन
दहकने लगती है
प्यासी धरती
कांपने लगते, सूखे
पत्ते थर-थर
अग्नि है उगलता
ऊपर से अंबर
फूलता है तब भी
पीतवर्णी 'लेबरनम'
गमक उठता है गुलमोहर
जीवन की उत्कट
जिजीविषा लेकर
एक बात कहता है
कानों में सबके–
'जीवन का आतप जो
जितना ही झेलता है
उसके ही प्रांगण में
फूल नया खिलता है।'

–दिलीपकुमार
–दूरदर्शन केंद्र, वर्ली, बम्बई-४००

सांस्कृतिक निरूपण—२२

कथा राम की, व्यथा मानव की

हरीन्द्र दवे

भरत, विदा लेने से पहले फिर एक बार राम का हृदय पिघलाने की कोशिश करता है। परंतु राम अपने वचन पर अटल हैं। भरत के लिए किसी तर्क का स्थान ही न रहे इस तरह कहते हैं :

लक्ष्मीश्चन्द्रादपेयाद्वा
हिमवान्वा हिमं त्यजेत्
अतीयात्सागरो वेलां
न प्रतिज्ञामहं पितुः।
(अ. ११२-१८)

'चंद्रमा से उसकी श्री-लक्ष्मी अलग हो जाय, हिमालय हिम को तज दे, समुद्र अपनी सीमा को लांघकर आगे निकल जाय, फिर भी मैं पिता की प्रतिज्ञा को नहीं छोड़ूंगा।'

राम के इन शब्दों के बाद किसी भी तर्क के लिए कहां जगह है? भरत 'हेम-भूषित' पादुकाएं राम के सामने रखते हैं और उन पर पांव रखने की उनसे विनती करते हैं :

एते हि सर्वलोकस्य
योगक्षेमं विधास्यतः।
(अ. ११२-२१)

'ये पादुकाएं ही समस्त प्रजा का योगक्षेम वहन करेंगी।'

राम बिछुड़ते हुए भरत को छाती से लगाकर कहते हैं :

मातरं रक्ष कैकेयीं
मा रोषं कुरु तां प्रति
मया च सीतया चैव
शप्तोसि रघुनंदन
इत्युक्त्वाश्रुपरीताक्षो
भ्रातरं विससर्ज ह।
(अ. ११२-२७-८)

'भ्राता, मैं तुम्हें अपनी तथा सीता की सौगंध देकर कहता हूं कि तुम माता कैकेयी की रक्षा करना, उनके प्रति कभी रोष न करना।' इतना कहते-कहते राम के नयनों में अश्रु छलक उठे। व्यथित हृदय से भाई को विदा किया। भरत को कैकेयी के प्रति रोष है, राम जानते हैं। भरत इस रोष को प्रकट न करें, इसके लिए राम अपनी तथा सीता की शपथ देते हैं।

इन पादुकाओं के साथ भरत अयोध्या में प्रवेश करते हैं, तब राम-विहीन अयोध्या का हृदयंगम चित्र कवि ने प्रस्तुत किया है। वे प्रवेश करते हैं तब बिल्लियां तथा उलूक विचरण करते हुए दीखते हैं। घरों

के दरवाजे बंद हैं। पूरे नगर में अंधेरा है। प्रकाश के अभाव के कारण नगर कृष्णपक्ष की रात जैसा लग रहा है।

राहुशत्रोः प्रियां पत्नीं
श्रिया प्रज्वलितप्रभाम्
ग्रहेणाभ्युदितेनैकां
रोहिणीमिव पीडिताम्
(अ. ११४-३)

चंद्रमा की पत्नी रोहिणी उदित हो और अपने पति को राहु द्वारा ग्रसित देखे तब जैसी अकेली, असहाय बन जाती है वैसी यह नगरी निराधार लग रही है।

यज्ञ-समाप्ति के बाद की वेदी के साथ भी कवि अयोध्या की तुलना करते हैं। एक और दूसरी उपमा भी देते हैं :

क्षीणपानोत्तमैर्भग्नैः
शरावैरभिसंवृत्ताम्
हतशौन्डामिव ध्वस्तां
पानभूमिमसंस्कृताम्
(अ. ११४-१४)

यह भूमि उजड़ी हुई पानभूमि (मधुशाला) जैसी असंस्कृत—श्रीहीन लग रही है : वहां टूटे-फूटे सुरापात्र पड़े हैं, किंतु पीनेवालों का नाश हो चुका है। जिस पर युद्धकुशल सवार ने सवारी की हो और शत्रु सेना के हाथों विद्ध होकर योद्धा नीचे गिर गया हो, उसके बाद घोड़ी जिस स्थिति में रणभूमि में गिर जाती है, उसी स्थिति में बगैर राम की अयोध्या नगरी पड़ी है।

भरत कहते हैं : 'मेरे भाई के साथ ही इस नगर की द्युति भी चली गयी है। अब राम आयेंगे तभी अयोध्या की शोभा बढ़ेगी।' भरत राजमहल में जाते हैं, किंतु महल भी विभक्त-शोभाहीन हो गया है। माताओं को अयोध्या में छोड़कर, भरत इस श्रीहीन नगरी को तजकर नंदिग्राम में 'वल्कल जटाधारी मुनीश्वरः' रहते हैं और राम की पादुकाओं का राजा की तरह अभिषेक करके राम की ओर से राज करते हैं।

राम चित्रकूट में पूरा समय बिता सकते थे, लेकिन वे चित्रकूट से चलने का निमित्त ढूंढ़ निकालते हैं। रावण का भाई खर नाम का राक्षस यहां बहुत त्रास देता है, यों कहकर कई ऋषि-मुनि आश्रम छोड़कर कुछ दूर दुर्गम वन में स्थित अश्वमुनि के आश्रम में चले जाते हैं। राम भी चित्रकूट छोड़ने का विचार करते हैं : एक कारण तो राक्षसों का उन्हीं के क्षेत्र में जाकर संहार करना है। दूसरा कारण सूक्ष्म है-

इह मे भरतो दृष्टो
मातरश्च सनागराः
सा च मे स्मृतिरन्वेति
तान् नित्यमनुशोचतः
(अ. ११७-१)

राम मन ही मन विचार करते हैं कि यहां मैंने भरत को देखा, यहीं माताओं से भेंट की, यहीं सब नगरजनों से मिला। इस तरह यह चित्रकूट का आश्रम, जिनका त्याग किया है, उनकी याद दिलाने वाला है—यहां वे सारे स्मरण हैं। ये स्मरण जुदाई

तपस्वी जीवन में बाधाजनक हो सकते हैं, इसलिए इस स्थान को तो छोड़ना ही पड़ेगा।

राम वहां से अत्रि ऋषि के आश्रम में जाते हैं।

महासती अनसूया और सीता का मिलन पति की महिमा स्थापित करने वाला है।

अनसूया पतिभक्ति का उपदेश देती है। सीता पति के पीछे वन में निकल पड़ी है इस बात पर आनंद व्यक्त करती है। सीता भी कहती है : 'मेरे पति अनार्थ और वृत्तिवर्जित, निर्धन होते तो भी मैं उनकी सेवा करती, ये तो अपने गुणों के कारण प्रशंसा-पात्र, जितेंद्रिय, स्थिरानुराग, धर्मात्मा हैं। इसके अलावा सीता राम का एक और गुण बताती है। वे 'मातृवत् पितृवत् प्रिय:' (माता जैसे, पिता जैसे प्रिय) हैं। माता और पिता की ममता और वात्सल्य राम से मिलता है। इसलिए वह दृढ़ चित्त से राम का अनुसरण करती है।

अनसूया सीता को पवित्र वस्त्रालंकार भेंट में देती है। सीता-अनसूया के मिलन के बाद सुबह राम अत्रि मुनि से विदा मांगते हैं। अत्रि ऋषि भी राम को चेतावनी देते हैं :

'यह वन राक्षसों से भरा है।' किंतु अत्रि राम के पराक्रम को जानते हैं इसलिए कहते हैं :

'इन राक्षसों का संहार करके ऋषियों को निर्भय बनाओ।'

राम वन में प्रवेश करते हैं, उसका वर्णन कवि ने इस तरह किया है–

इतिरितः प्रांजलिभिस्तपस्विभि–
द्विजैः कृतस्वस्त्ययनः परन्तपः
वनं सभार्यः प्रविवेश राघवः
सलक्ष्मणः सूर्य इवाभ्रमंडलम्
(अ. ११९-२२)

तपस्वी ब्रह्मणों ने हाथ जोड़ कर वन की जानकारी दी तथा राम की मंगल यात्रा के लिए स्वस्तिवाचन किया : उसके बाद परंतप–शत्रुओं को संताप देनेवाले राघव ने पत्नी तथा लक्ष्मण के साथ सूर्य जिस तरह अभ्रमंडल में–बादलों की घटाओं में प्रवेश करे, उस तरह उस घोर दुर्गम वन में प्रवेश किया। **(क्रमशः)**

[रूपांतर : नंदिनी मेहता]

□

एक बार किसी व्यक्ति ने आइन्स्टाइन से पूछा कि क्या वे मृत्यु से डरते हैं?

आइन्स्टाइन ने निस्पृह भाव से जवाब दिया–'मैं सभी जीवित चीजों के साथ ऐसी एकात्मकता का अनुभव करता हूं कि मेरे लिए यह बात कोई अर्थ नहीं रखती कि व्यक्ति कहां से शुरू होता है और कहां समाप्त होता है।....

'संसार में ऐसा कुछ भी नहीं है, जिसे मैं क्षण भर की नोटिस पर छोड़ नहीं सकता।'

–शुकदेव प्रसाद

□

समर्पित जीवन

पुरातत्व के पुरोधा कलाचार्य डॉ. वाकणकर

☐ डॉ. विष्णु भटनागर

सौंदर्योपासक, प्राकृतिक सुषमा के अनन्य चितेरे, प्राच्य संस्कृति और सभ्यता की अमूल्य धरोहर को पृथ्वी के गर्भ से परत-दर-परत उत्खनन द्वारा निकालकर भारतीय इतिहास के पुनर्लेखन की पुरजोर मांग करने वाले राष्ट्रभक्त, ज्ञान-विज्ञान-मुद्राशास्त्र, अभिलेख, ताम्र-पत्र, हस्तलिखित पोथियों के प्रकांड विद्वान विश्वविख्यात महामना पद्मश्री डॉ. विष्णु श्रीधर वाकणकर वर्तमान युग की महर्षि-कोटि के व्यक्ति थे। ३० मार्च १९८८ को वे बम्बई से हवाई जहाज द्वारा सिंगापुर में हो रहे प्रथम प्रशांत हिंदू सम्मेलन में भाग लेने पहुंचे और वहीं ३ अप्रैल को 'पान पैसिफिक' होटल में हृदय-गति रुकने से उनका निधन हो गया।

४ मई १९१९ को नीमच (म. प्र.) में जन्मे विष्णु श्रीधर वाकणकरजी को उनके परिचित बड़ी आत्मीयता से 'हरिभाऊ' संबोधित करते थे। उनकी सामान्य शिक्षा नीमच, धार और उज्जैन में हुई। दादा यावलकर, मु. स. भाण्ड, केदारनाथ शर्मा और देवकृष्ण जटाशंकर जोशी से उन्होंने चित्र एवं मूर्तिकला की शिक्षा पायी। माडर्न आर्ट स्कूल बम्बई में उन्होंने जे. जे. स्कूल ऑफ आर्ट बम्बई के जी. डी. आर्ट के डिप्लोमा (अंतिम वर्ष) का अध्ययन कर १९५३ में प्रमाण पत्रोपाधि अर्जित की। विक्रम विश्वविद्यालय से इतिहास में स्नातकोत्तर उपाधि अर्जित करने के उपरांत वे पुरातत्व के क्षेत्र में प्रविष्ट हुए। १९५७ में उन्होंने 'भीमबेटका' की खोज की और २५ वर्षों तक निरंतर वहां के भीषण जंगलों में यायावरी करते उत्खनन कैंप लगाकर हजारों गुफाओं की खोज की और ६०० चित्रित गुफाओं के प्रागैतिहासिक काल के चित्रों की अनु-कृति तैयार कीं, तथा पुरावशेष खोजकर विश्व में भारतीय चित्रकला की सर्वा प्राचीनता को सिद्ध किया। इसी विषय पर उन्होंने डेक्कन कॉलेज पूना के डाय-रेक्टर डॉ. हंसमुखलाल धीरजलाल सांक-लिया के मार्गदर्शन में शोध प्रबंध लिखकर डॉक्टर ऑफ फिलासफी की उपाधि पायी। उस समय मैं 'नवनीत' (हिंदी डाइजेस्ट) में उप-संपासक के पद पर नियुक्त हो गया था, अतः उनका दीर्घ बम्बई में भी लगा और वे ताड़देव स्थि कार्यालय में भी आये। तत्कालीन संपादक श्री नारायणदत्तजी के आग्रह पर उन्होंने

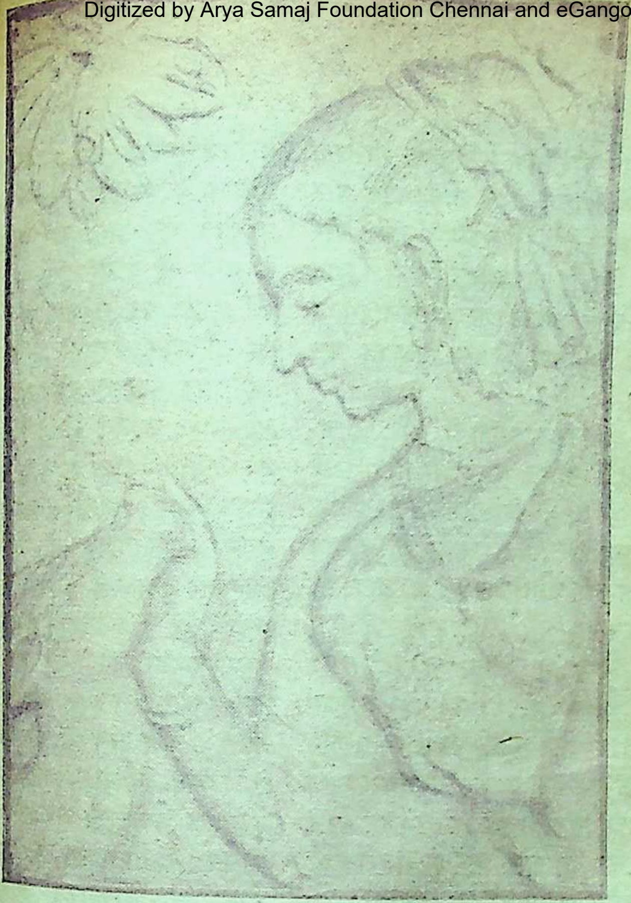

'मृगछौना और शकुंतला' डॉ. वाकणकर द्वारा निर्मित एक शिल्प फलक (भारतीय कला भवन में संग्रहीत)   छायांकन : रमेश नानवानी

नवीनतम खोज प्रागैतिहासिक मानव बड़ों, शैल चित्रकला, "भीमबेटका' विशेष अनुरोध पर शैलचित्रों के में वहां के वर्तमान आदिवासियों- द्वारा सुनायी जाने वाली गाथाओं आधारित रोचक लेख लिखा।

उनके जीवन और कार्यप्रणाली को लंबे समय तक देखा-परखा और रहा हूं। उनके द्वारा गृहनगर उज्जैन में १९५३ में स्थापित भारती कला भवन ललित कला महाविद्यालय का मैं १९६० से नियमित विद्यार्थी रहा। इसके पूर्व ग्रीष्मावकाश में चित्रकला सीखने जाता रहा, लेकिन १९६० से ७३ तक फिर १९७६ से अभी नियमित अध्ययन-अध्यापन का मेरा वहां क्रम जारी है। तीन वर्षों के अध्ययन के दौरान ही उन्होंने मुझे इस संस्था में अध्यापन का कार्य

सौंप दिया और अपना सहायक भी बना लिया, इस कारण उनके साथ अनेक बार विभिन्न खोजों के लिए भ्रमण करन और उन पर लिखने का अवसर मिला । बाद में १९७६ में उन्होंने भारती कला भवन का मुझे मानसेवी प्राचार्य नियुक्त कर दिया ।

डॉ. वाकणकर पुरुषार्थी और आत्म-निर्भर थे । शासन मुखापेक्षी होना उन्हें रुचता नहीं था । शैलचित्रों की खोज और काल निर्धारण के संदर्भ में आर्चिबोल्ड कार्लाइल एवं जॉन काकबर्न के बाद डॉ. वाकणकर का नाम इतिहास में दर्ज है । लेकिन विश्व में सबसे बड़ी शैलचित्र सम्पदा खोजने और उस पर व्यवस्थित ढंग से खोज करने में वे अग्रणी हैं । उन्होंने न केवल इस विषय पर सर्वाधिक कार्य किया वरन् विश्व में इस पर सम्मेलन करने की प्रेरणा दी और अनेक अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय सम्मेलनों में शोधपत्र पढ़े । अन्यथा यह विधा विश्व पुरातत्व में उपेक्षित शाखा थी, जिसे उन्होंने अपने पुरुषार्थ और जीवट से विश्व मान्यता दिलायी । उनके द्वारा भीमबेटका-उत्खनन एवं शुतुर्मुर्ग के चित्रित अण्डों की खोज के आधार पर भारतीय शैलचित्रों का प्राचीनतम काल-धारण ४० हजार वर्ष पूर्व तक आंका गया है ।

पुरातात्विक उत्खनन में उन्होंने विद्यार्थी काल से ही रुचि बना ली । फुरसत मिलते ही वे कहीं भी दूर-दूर तक निकल जाते और
पुरावशेष खोज लाते, इसी तरह
प्रयोगों में भी लगे रहते । संघ
के नाते जब उनके दौरे मध्यभारत
में लगते तो वे ऐसा ही करते और
को शाखा पर सबको इन पत्थरों
का इतिहास बतलाते । १९३८-
ग्वालियर पुरातत्व विभाग के एम.
गर्दे द्वारा उज्जैन में किये गये
को उन्होंने निकट से देखा और
प्राप्त किया । १९५५-५८ में डॉ.
बेनर्जी के मार्गदर्शन में उज्जैन
मोहल्ला क्षेत्र एवं चौबीस खंभा
खुदाई हुई । केन्द्रीय पुरातत्व वि
वाकणकरजी की रुचि को देखते
उन्हें निखात निरीक्षक बना दिया ।
प्रदेश के राज्यपाल श्री पाटस्कर
से विक्रम विश्वविद्यालय में १९
पुरातत्व संग्रहालय एवं उत्खनन
माधव महाविद्यालय में स्थापित
और डॉ. वाकणकर उसके
उत्खनन-प्रभारी नियुक्त हुए ।
पूर्व तक वे भारती कला भवन के
का दल बनाकर खोज किया करते

१९५४ में उन्होंने प्रथम दल (
नागदेव, एम. यू. कुरेशी और
गुट्टीवाला) द्वारा चम्बल घाटी के
आने वाले प्रागैतिहासिक शैल चि
खोज कर अनुकृतियां करवायीं ।
दल में (विष्णु भटनागर, किशोर
और लक्ष्मीकांत शर्मा) हमने उनके
दर्शन में शैलचित्रों की अनुकृति

अनेक पुरावशेष खोजे । आज वह बांध में डूबकर नष्ट हो चुका है। १९६८ में संग्रहालय विक्रम कीर्ति उज्जैन में स्थानांतरित हो गया। वाकणकर ने भारती कला भवन में मूर्तियों का अधिकांश संग्रह उसे हप दिया और फिर रात-दिन रायण भाटी के साथ परिश्रम और करके मूर्तियां, पुरावशेष एकत्र नागदा में पुरावस्तुएं, प्राचीन सिक्के मृद्भांडों के संचय हेतु वे अक्सर जाते भी एक बार छठे दशक में उनके गया था, कपड़े की पोटली बना ली वे उन चीजों से भर लाये थे। ६४-६५ एवं ६७-६८ में विक्रम विश्व-लय की ओर से डॉ. वाकणकर ने ड. डी. अंसारी एवं डॉ. एम. के. कर (डेक्कन कालेज पूना) के साथ आचार्य वराह मिहिर की जन्म 'कायथा' में उत्खनन किया। यहां ई. पू. से २२०० ई. पू. तक की के अवशेष मिले। इससे ताम्राश्म-संस्कृति पर रोशनी पड़ी। बड़ी ही मृण्मूर्तियां मिलीं। मोएन-जो-हड़प्पा के समकालीन अवशेषों की हुई। मध्यप्रदेश पुरातत्व संग्रहालय उन्होंने १९७८-७९ एवं १९७९-दंगवाड़ा में उत्खनन किया। यहां ऐतिहासिक स्तरों से यज्ञ कुण्डों के मिले। बाद में भी उन्होंने दंग-में फिर उत्खनन किया। इसी बीच आजाद नगर इंदौर, कसरावद, रूनीजा, भीमबेटका में उत्खनन कर मालवा के पुरातत्व को यशश्री दिलवायी। उन्होंने मालव ताम्राश्मीय पात्रों पर मिलने वाले चिन्हों व आहत ताम्ररजत मुद्राओं का तुलनात्मक अध्ययन कर मुद्राओं के चिन्हों का प्रागैतिहासिक स्रोत बनाने का सफल प्रयास किया। उज्जैन में मुद्रा संग्रह के दो प्रमुख संग्रहालय हैं। १—डॉ. वाकणकर का संग्रह। २—श्री हरकचन्द ज्ञानचन्द संग्रह। उन्होंने न्युसमेटिक सोसायटी ऑफ इंडिया के सम्मेलनों में इन पर अनेक शोधपत्र पढ़े और उनका इस सोसायटी के जर्नलों एवं 'उज्जयिनी दर्शन' में प्रकाशन हुआ।

उन्होंने इतिहास सम्मेलनों में भी भाग लिया और पुरातात्विक आधारों पर इतिहास के पुनर्लेखन की आवश्यकता बतायी। उनका स्पष्ट मत था कि आर्य इस देश में बाहर से नहीं आये। दशपुर उत्खनन में उन्हें औलिकर नरेशों का प्रासाद तथा भारत में पहली बार कांच की मुद्रा मिली, जिस पर प्रकाशधर्मन राजा का नाम अंकित है।

सेवा निवृत्ति के उपरांत उन्होंने नव सामाजिक जागरण के लिए असम-गोहाटी के आंचलिक क्षेत्रों का भ्रमण किया। तदुपरांत बाबा साहेब आपटे स्मारक समिति, नयी दिल्ली का प्रकल्प स्वीकार कर १९ नवम्बर से २२ दिसम्बर १९८६ तक वैदिक सरस्वती नदी शोध अभियान का नेतृत्व किया, जिसके अंतर्गत उन्होंने

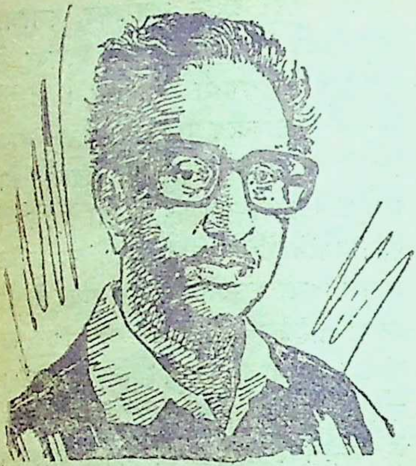

पद्मश्री डॉ. वाकणकर

वैदिक साहित्य, इतिहास, पौराणिक परंपरा तथा तीर्थ स्थानों का लोक साहित्य एवं परंपरागत मान्यताओं का विशद अभ्यास और संचय कर 'सरस्वती कोश' लिखने की रचना सामग्री जुटायी और ७६ घण्टे की वीडियो फिल्म तैयार की। विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं संस्थाओं में व्याख्यान दिये। जगह-जगह नागरिकों को अपने क्षेत्र की पुरातत्व एवं मूर्तिकला संपदा को एकत्र करके अपने क्षेत्र में संग्रहालय बनाने की प्रेरणा दी ताकि उनकी संपदा उनके क्षेत्र के बाहर जाकर महानगरीय संग्रहालयों की शोभा न बने।

उन्होंने १९५५ में नावडा तोडी, १९५४ में महेश्वर में, १९५९ में इंद्रगढ़, १९६० में मनोटी और आवरा में उत्खनन किये थे। १९६१ से १९६३ तक वे फ्रांस रहे, उन्हें फ्रांस सरकार ने शोधवृत्ति प्रदान की थी। फिर १९६३ में ही यूरोप
की और अंतर्राष्ट्रीय पुरातत्व एवं
हास सम्मेलनों में भाग लिया।
में इंग्लैण्ड में वारकोनियम रोमन
और ६२ में फ्रांस के इनकोलीब में
उत्खनन का प्रशिक्षण लिया।
व्हीलर, आर. आर. राबर्ट ब्रुस,
जेकबसन, डॉ. टिलनर, डॉ.
वानके, लेडी सुजान हास, और
जैसे विदेशी पुराविदों और डॉ. सांकलिया
काशीनाथ कृष्ण लेले, अनन्त
वाकणकर, एस. के. दीक्षित, एन.
द्विवेदी, एन. आर. बेनर्जी, डॉ.
देव, डॉ. धवलीकर, डॉ. वी. एन.
आदि भारतीय पुराविदों के साथ
किया। शैलोत्कीर्ण लेखों, ताम्रपत्रों,
मौखरी, औलिकर, परमार और
काल के शिलालेखों का वाचन,
किया। अमरीका और यूरोप में भी
चित्रों की खोज की। १९६६ में
अमरीका के संस्कृति विभाग द्वारा
विश्वविद्यालयों एवं संग्रहालयों में
देने हेतु आमंत्रित किया गया।
में कापो-दी-पोन्ते इटली में सेमिनार
उन्होंने भाग लिया। १९८४ में
में उन्होंने 'विश्व को भारत की
प्रदर्शनी लगायी और व्याख्यान
माया और अंजेटिक सभ्यता एवं
का मेक्सिको में अभ्यास किया।
में साउथम्पटन (इंग्लैण्ड) के
सेमिनार में भाग लेकर उन्होंने

हासकारों की बखिया उधेड़ते हुए मूलर, स्मिथ, अर्नेस्ट मैके एवं मार्टिमर के भारतीय इतिहास लेखन में किये षड्यंत्रों का पर्दाफाश किया।

विवेकानन्द शैली के नवजागरण थे, विदेशों में साफा बांधते थे। दृढ़ता र तर्कों सहित अपनी बात कहते थे। छायावादी कवियों के गीत कण्ठस्थ। देशभक्ति और स्वदेशी वस्तु प्रेम कूट-कूटकर भरा था। अभावों में हुए भी माता-पिता की सेवा निमित्त उज्जैन नहीं छोड़ा भले ही अम- के संग्रहालयों एवं प्रिन्स ऑफ वेल्स हालय बम्बई ने उन्हें उच्च पद पर के लिए पहल की हो। वे उत्कृष्ट कार थे। उन्होंने विदेश यात्राओं और शोध अभियान के दौरान रेखां- की शृंखला रच डाली। उन्होंने जगत को भी अपना महत्व पूर्ण दिया।

ऐतिहासिक शैलचित्रों, उत्कीर्णनों शिलालेखों की खोज में देश भर में ऐसे सुदूर आंचलिक, बीहड़, निबिड एकाकी क्षेत्रों में गये और खोज की, न उनके पहले कोई गया और न अब, जबकि वे केवल कुल्हाड़ी लेकर और जेब में खाने के नाम पर होते थे, जिन्हें चकमक पत्थर रगड़ आग जलाकर कहीं दबा देते थे। के नाम पर कुल्हाड़ी से जंगली का मुकाबला करते, जान जोखिम में डालते रहे।

प्रारंभ में तो कैमरा था नहीं, सो वहीं रेंगने वाले विषधारियों के बीच बैठकर रेखांकन करते।

छठे दशक के पूर्वार्द्ध में मैं उनके साथ नर्मदा एवं चम्बल घाटी सर्वेक्षण में गया, तो हिंगलाजगढ़, ताखाजी, मोडी, भानपुरा से हम गरोठ में एक पत्थर के पहाड़ को नीचे तक खोदकर (पाताली) बनाये मंदिर में गये। टार्च थी नहीं बस लकड़ी का डण्डा और चाकू था। एक अंधेरे गलियारे में हम दोनों घुसे, उन्होंने एक मूर्ति दिखाकर कहा, इसका रेखांकन करके आओ और वे अंधकूप में मुझे समाधिस्थ कर गये। पूरा मंदिर (धर्मराजेश्वर) ऊपर से नीचे तक कोरकर बनाया हुआ है, छिद्रदार चट्टान होने से न जाने कितने प्राणी वहां बसते हैं। रेखांकन कर मैं जैसे ही बाहर निकलने को हुआ कि हरे-कच्च सांप ने मेरा मार्ग रोक लिया, सिहरन दौड़ गयी मगर किशोर वय की चपलता थी, देखा वह आसपास के छेदों में से गुंथित होकर बाहर एक फुट निकला ताक रहा है। लंबाई का अंदाज लगाकर मैंने नीचे से गोत लगा दी और उन्हें किस्सा सुनाया तो उन्होंने एक वही पंक्ति सुना दी, जो उन्होंने उस समय भीमबेटका में दोहराई थी, जबकि उनकी अनुपस्थिति में उनके कैंप के तंबू में शेर आराम से पसरा था। और वे जैसे ही कैमरे का बन्दूकनुमा स्टैंड लेकर घुसे थे, कि शेर दूसरी ओर से निकल

भागा था। वह पंक्ति थी 'जाको राखे सांईया मार सके ना कोय।'

पक्षाघात की बीमारी के समय उन्होंने चिकित्सकों के परामर्शानुसार मालिश और व्यायाम जारी रखा, जिससे कहीं कोई शिथिलता या लकवे का प्रभाव नहीं रहा। फिर देश भर में उनके सारस्वत सम्मान समारोह आयोजित हुए, गांवों से लेकर महानगरों तक। उज्जैन में २९ फरवरी ८७ को हुए उनके सारस्वत सम्मान का साप्ताहिक कार्यक्रम हुआ जिसमें अंतर्राष्ट्रीय पुरातत्व शोध संगोष्ठी भी हुई, वीडियो फिल्म भी तैयार की गयी, अस्वस्थता के बावजूद इलाहाबाद से डॉ. जगदीश गुप्त भी आये। 'अभिनन्दन ग्रंथ' भी डॉ. वाकणकरजी को भेंट किया गया। पांचवें दशक में लिखा गया उनका नाटक 'मृत्यु का आलिंगन' भी मंचित हुआ।

उन्होंने जुलाई १९८६ में अपनी चार हजार वर्गफुट की अचल संपत्ति और मकान देकर 'वाकणकर भारती संस्कृति अ षण न्यास' की स्थापना की, जि उनके द्वारा संग्रहीत पुरातात्विक एवं सामग्री, प्राचीन मूर्तियों, चित्रों, करणों और छायांकनों के प्रदर्शन संग्रहालय, स्थायी कलादीर्घा, प्रदर्शनी कक्ष, शैलचित्र शोध सं भारतीय कला भवन ललित कला सं प्रकाशन-संपादन कक्ष निर्मित किये

डॉ. वाकणकर के जन्म दिवस के अवसर पर भोपाल में मध्यप्रदेश मुख्यमंत्री श्री अर्जुनसिंह के आतिथ्य भव्य कार्यक्रम हुआ जिसमें उन्होंने वि विश्वविद्यालय में 'डॉ. विष्णु श्रीधर वाकणकर शोध संस्थान' बनाने और उनके पर फेलोशिप देने की घोषणा की उज्जैन में बन रहे जिला संग्रहालय नाम भी 'वाकणकर पुरातत्व संग्रहालय' रखा जाना तय हुआ है।

–६, धनवन्तरि मार्ग, गली
माधवनगर, उज्जैन-४५६००१,

□

हजरत इब्राहीम को किसी ने एक हजार दीनार (सिक्के) भेंट किये। इब्राहीम ने कहा, कि 'मैं गरीबों से कुछ नहीं लेता।'

इस पर उस दाता ने कहा–'मैं तो काफी दौलतमंद और अमीर हूं, गरीब नहीं।'

संत इब्राहीम बोले–'अच्छा, तुम यह बताओ कि जितनी दौलत तुम्हारे उससे ज्यादा पाने की ख्वाहिश तुम्हारी है या नहीं ?'

'जी; ख्वाहिश तो ज्यादा पाने की हमेशा ही रहती है!' दानी बोला।

'तब तो तुम गरीब ही नहीं, बेहद गरीब हो। गरीब की भूख तो शांत हो है, परंतु उसका पेट नहीं भरता। अधिक धन पाने की हवस को मिटाना मुश्किल है।' कहते हुए इब्राहीम आगे चल दिये।

–डा. गोपालप्रसाद

□

शांति

धनेश्वर प्रसाद

मुझे बहुत देर से घूर रहे हैं । शायद आप इस अल्पायु में मुझे रूप में देखकर आश्चर्यचकित हैं । आश्चर्य की बात है भी और । किंतु, सच्चाई यह है कि मैं नहीं हूं । अलबत्ता बनना अवश्य था, पर बन नहीं पाया । साधु का रणकर लेने से ही तो कोई साधु न जाता !

हां, जीवन में कुछ घट ही गया यह रूप धारण कर लिया था । रूप धारण करने का उद्देश्य एक ही शांति की प्राप्ति ।

नहीं साहब, कहां मिली शांति ! ही बताइये, जिस व्यक्ति के शांति नहीं है, उसे साधु कैसे कहा जा है?

हा-हा... पूरी बात सुनना चाहते साहब, मुझे तो कोई आपत्ति नहीं किंतु, क्या आपके पास समय है ? एक घंटा है आपके पास । तो आज मैं भी आपके समक्ष अपने मन बोल ही देता हूं ।

०००

संयुक्त परिवार का एक सदस्य था। पढ़ने में मेरी रुचि बहुत अधिक थी। विद्यालय और महाविद्यालय की पढ़ायी अच्छे अंक प्राप्त करके पूरी की । परिवार वालों की मुझसे बहुत आशाएं थीं । किंतु, मेरी सिर्फ दो ही इच्छाएं थीं–पहली, एक अच्छा सरकारी पद प्राप्त करना और दूसरी, खूबसूरत जीवनसंगिनी प्राप्त करना । पहली इच्छा तो पूर्ण हो गयी, क्योंकि उसे प्राप्त करना मेरे अपने हाथ में था । पर दूसरी इच्छा की डोर मेरे परिवारवालों के हाथ में थी ।

मैं विद्रोह और उग्र स्वभाव का नहीं था । मुझे शांति बड़ी प्रिय थी । इस कारण परिवार के सभी सदस्य अपनी इच्छानुसार मुझसे फायदा भी उठाते रहे ।

इसी संदर्भ में आपको यह भी बता दूं कि मैं एक निर्धन परिवार का लड़का था। मेरे पिता, चाचा और बड़े भाई सभी अशिक्षित की श्रेणी में थे। मेरे परिवार की समाज में कोई मान्यता नहीं थी। मगर मुझे गजटेड सरकारी पद मिलते ही उस परिवार की काया पलट हो गयी।

अब परिवार में मेरी शादी की चर्चा आरंभ हो गयी थी। परिवारवाले मुझे 'ब्लैंक चेक' समझ रहे थे, जिस पर एक मोटी

रकम लिखकर उसे चुकाना चाहते थे।

दहेज का बोलबाला था। जहां कोई बिकाऊ वस्तु होती है, वहां अनेक खरीदार भी आते हैं। मेरे घर पर भी धनवान खरीदारों की भीड़ एकत्रित होने लगी। एक गजटेड अफसर बिक रहा था। खरीदारों में होड़ लगी हुई थी। और मेरे परिवारवाले मनमानी बोली बढ़ाते जा रहे थे।

मेरी इच्छा के बारे में किसी को चिंता नहीं थी। वैसे देखा जाय तो यह नियम विरुद्ध भी नहीं था। एक बिकाऊ वस्तु की भला क्या इच्छा हो सकती है!

एक धनी परिवार ने सबसे अधिक बोली लगाकर मुझे बुक कर लिया। अपनी बेटी के लिए एक गजटेड अफसर खरीदकर वह परिवार भी खुश और एक मोटी-रकम पाकर मेरे परिवारवाले भी खुश! मगर में उदास और चिंतित।

मैंने दबी जबान में अपने पिता से कहा–'लड़की तो देख लीजिये।'

'क्या जरूरत है?' पिता की गरजती हुई आवाज आयी, 'औरत तो होगी ही। पद पाते ही अपनी औकात भूल बैठे।'

मैंने आधे-अधूरे मन से विरोध किया तो बड़े भाई ने कहा–'मैंने लड़की देखी है। तुम्हारे लिए हर प्रकार से योग्य है।'

मैं उनकी बात पर विश्वास करके चुप हो गया। अब मेरे पास रह गयीं सिर्फ मीठी-मीठी कल्पनाएं। इन्हीं कल्पनाओं के सहारे मेरा समय व्यतीत होने लगा।

आखिर वह दिन भी आ गया
मैं दूल्हा बना। कितना अच्छा
वह दिन! ऐसा अनुभव हो रहा
जीवन में एक नया मोड़ आ गया

दूसरे दिन दुलहन के साथ घर
सुहागरात की कल्पना में डूबता-
रहा। 'इस रात' पर न जाने कितने
अपने-अपने उद्गार व्यक्त कर चुके
मुझे भी कुछ विशिष्टता का
रहा था। दिल में एक उत्सुकता थी
दिमाग में एक मीठी कल्पना।

दिन ढला, शाम हुई। रिश्तेदारों
मित्रों के सहवास में रात के कुछ
बीत गये। लगभग बारह बजे रात में
भाभी ने मुस्कराते हुए मुझे एक
में ठेल दिया।

मैं गिरते-गिरते बचा। मुस्कराकर
की ओर देखा। वह शर्मायी-सी
'दरवाजा बंद कर लीजिये, लालाजी।

मैंने दरवाजा लगा लिया। वह
पर घूंघट निकाले बैठी थी। मैं खड़ा
सोच रहा था–'अब क्या करना चाहिए
कुछ क्षण यही सोचने में बीत गये।

मैंने अंततः थर्राते हाथ से उसके
को हल्के से स्पर्श किया। वह शायद
इशारे की प्रतीक्षा कर रही थी।
उठकर खड़ी हो गयी। मैंने उसे
द्वारा लाये गये पलंग पर ला बिठा
तत्पश्चात् परिहास के लहजे में
'इस घूंघट का चांद देखने के लिए
टैक्स चुकाना पड़ेगा क्या?' वह

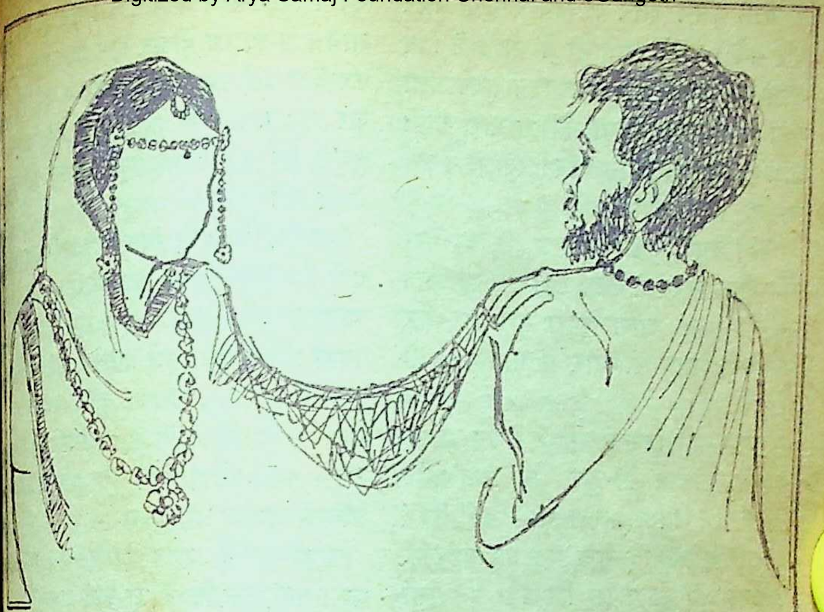

रही और गर्दन झुका ली।

मैंने मुस्कराते हुए एक स्वर्णहार उसके पास रख दिया और एक झटके से घूंघट उलट दिया। उफ्! मेरी इच्छा की माला टूटकर बिखर गयी। दिल में आया कि अभी ही कमरे से बाहर निकल जाऊं। मगर आंगन में रिश्तेदार औरतें और बाहर बरामदे में मित्र एवं रिश्तेदार सो रहे थे। किस-किस को क्या उत्तर दूंगा, यही सोचकर मेरा मन घबरा उठा।

मैं बहुत बेचैन था। सिर भिन्ना रहा था। मैं कुर्सी पर जा बैठा और टेबल पर सिर टेक दिया। पता नहीं, मुझे कब नींद आ गयी।

नींद जब खुली तो सुबह हो चुकी थी। कुछ औरतों की बातचीत की आवाज आ रही थी। मैं कुर्सी से उठने लगा तो चिहुंक पड़ा। वह मेरे पांव पकड़े बड़े इत्मीनान से फर्श पर सो रही थी। उसकी आंखों की पलकें अभी तक भीगी हुई थीं। काजल की कालिमा आंखों से बहकर गालों पर पसर गयी थी। मगर चेहरे पर संतोष और सौम्यता झलक रही थी।

न चाहते हुए भी मैं चुपचाप बैठा रहा। तभी कमरे के बाहर कोई छोटा बच्चा रो उठा। उसकी नींद खुल गयी। वह हड़बड़ाकर उठ बैठी और साड़ी के पल्लू से सिर ढंककर एक ओर हट गयी। उस पर एक नजर डालकर मैं कमरे से निकल गया।

सभी मित्र और रिश्तेदार उसी दिन चले गये। उनके जाते ही मैं भी उसी दिन शाम को अपनी ड्यूटी ज्वाइन करने चला गया। अपनी छुट्टियां कैंसिल करा दीं। बाद में पता चला कि परिवारवालों ने उसे मायके भेज दिया।

मैंने ड्यूटी अवश्य संभाल ली, पर मेरा मन काम करने में कतई नहीं लग रहा था। उसका सुबह वाला चेहरा मुझे बार-बार याद हो आता था और मैं पागल-सा हो जाता था।

पता नहीं, किस प्रेरणावश मैं उसे प्रत्येक पहली तारीख को कुछ पैसे मनीआर्डर द्वारा भेज दिया करता था। मनीआर्डर भेजने के पश्चात् मेरा मन यह सोचकर उद्विग्न हो उठता था कि क्या इन पैसों से उसके दिल की प्यास मिट सकती है?

दिनोंदिन मेरी दिमागी दशा बिगड़ती गयी। कोई भी काम ठीक ढंग से नहीं कर पाता था। एक दिन ऐसा भी आया कि मेरे अफसर ने मुझे चेतावनी दे दी।

उसी दौरान मुझे उसका पत्र मिला। पत्र पढ़कर मैं विक्षिप्त-सा हो उठा। जीवन से सर्वथा मन उचाट हो गया। न काम से दिलचस्पी रह गयी न पद से मोह। मैं पद को त्यागकर शांति की खोज में अज्ञात मंजिल की ओर निकल गया।

पर साहब, वह शांति थी कहां? मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारा—कहां-कहां नहीं भटकता रहा मैं, पर मुझे शांति कहीं नहीं मिली।

इसी प्रकार भटकते हुए छह मास बीत गये। दाढ़ी-बाल बढ़कर लंबे-लंबे हो गये। जीवन से हताश होकर एक दिन गंगा तट पर बैठा आत्महत्या की योजना पर मनन कर रहा था। कहीं से साधु के रूप में एक बुजुर्ग आ गये। वह मुझे अपने आश्रम में ले गये।

आश्रम में मेरी दिनचर्या निश्चित हो गयी। उस बुजुर्ग का प्रवचन सुनता, उनके बताये अनुसार ध्यान लगाता, धार्मिक पुस्तकें पढ़ता। भिर भी, मुझे शांति नहीं मिली। कुछ भी करता, उसका वही सुबहवाला चेहरा मेरी आंखों के समक्ष उभर आता। उसके पत्र की बातें स्मरण हो आतीं। और मैं अशांत हो उठता।

एक रात मैं बहुत उदास और उद्विग्न था। यहां तक कि मैं रो उठा। बुजुर्ग मेरे पास आये। मुझे चुप कराया। उनकी बातों से मैं कुछ शांत हुआ। वह मधुर स्वर में बोले—'सुनो बेटा, इस प्रकार अपना अमूल्य जीवन नष्ट न करो। तुम्हें शांति उसी गृहस्थ आश्रम में मिलेगी जिसे तुम भावना में बहकर त्याग आये हो। गृहस्थ-आश्रम मानव के लिए एक सर्वोत्तम कर्मभूमि है जहां सुख-दुख, प्यार-घृणा, दोस्ती-दुश्मनी की राहों से गुजरकर मानव जीने की कला सीखता है। इच्छाएं तो असीमित हैं, बेटा। क्या यह संभव है कि प्रत्येक इच्छा पूर्ण हो जाय! जो सत्य है उसे सत्य मान कर अपना लो। भावना में न बहो, घर लौट जाओ।'

०००

जी हां, वह पत्र मेरे पास अब भी है। हां, हां, लीजिये, अवश्य पढ़िये । हा-हा... अच्छा, मैं ही पढ़ देता हूं —

मेरे स्वामी, चरणस्पर्श !

आपको पत्र लिखने के लिये मैं बहुत दिनों से साहस बटोर रही थी। मेरी इसी धृष्टता के लिये मुझे क्षमा करेंगे।

मैं यह स्वीकार करती हूं कि मैं आपके योग्य नहीं हूं। काली तो हूं ही, बहुत पढ़ी-लिखी भी नहीं हूं।

पर इसमें मेरा क्या दोष है ! रंग-रूप प्राकृतिक देन है और शिक्षा-दीक्षा मां-बाप की देन है। उन्होंने शादी करके जहां भेज दिया वहां चली गयी। अब तो जो होना था सो हो गया।

हां, मुझे इस बात का फख्र है कि आप मेरे पति हैं। शादी के अवसर पर मेरी सहेलियों ने आपको देखा था और वे अब तक मुझसे ईर्ष्या करती हैं।

मुझे भी ऐसा ही लगता है। अब देखिये न, आप मुझसे घृणा करते हैं, फिर भी पैसा भेजते हैं। वैसे मुझे पैसे की कोई जरूरत नहीं है। लेकिन आपका जब मनीआर्डर आता है तो बड़ा अच्छा लगता है। सोचती हूं कि आप मुझे कम से कम याद तो रखे हुए हैं, अपना तो समझते हैं।

एक प्रश्न मेरे मन में बार-बार उठता रहता है। क्या जीवन में शारीरिक सौंदर्य का ही मूल्य है, आंतरिक सौंदर्य का कोई मूल्य नहीं? काश, आप मुझे सेवा करने का मौका देते !

मेरी सहेलियों की भी शादी हो चुकी है। उनके पति न आप जैसे खूबसूरत हैं न ऊंचे पदों पर हैं। हां, वे मां बन गयी हैं। उनकी गोद में बच्चे देखकर मेरा दिल भी मचल उठता है और मैं चुपके-चुपके रोने लगती हूं। फिर यह सोचकर शांत हो जाती हूं कि मैं तो काली हूं, मुझे मां बनने का भी अधिकार नहीं है।

यह न समझियेगा कि मैं आपसे कोई शिकायत कर रही हूं। इसमें आपका कोई दोष नहीं है। सारा दोष हमारे मां-बाप का है।

खैर, आपका प्यार न पा सकी तो क्या हुआ, आपकी पूजा तो कर ही सकती हूं। बस।

—आपकी शांति

०००

अच्छा, आप अगले स्टेशन पर उतर जायेंगे ? ठीक है। जी, क्या कहा, मैंने अब क्या निर्णय किया है ?

देखिये न साहब, जिस ट्रेन से हम जा रहे हैं, उसकी भी एक मंजिल है। दो वर्षों से भटक रहा हूं। अब कितना भटकूं।

शांति तो मैं घर पर ही छोड़ आया था और उसकी तलाश में व्यर्थ ही भटक रहा था। भावना में बहकर किये गये निर्णय से वर्तमान और भविष्य दोनों ही नष्ट हो जाते हैं।

जी हां, जी हां, आप सही फरमा रहे हैं। सुबह का कोई भूला यदि शाम को लौट आये तो उसे भूला हुआ नहीं कहते !

—ई I २००, लाजपतनगर, नयी दिल्ली

□

महाकवि दिनकर से भेंट

उच्च कोटि का काव्य सत्यानुभूति का सृजन है

☐ डा. त्रिलोकीनाथ व्रजवाल

अक्तूबर सन १९६१ की बात है। मैं एक माह की लम्बी छुट्टी लेकर पूर्वी भारत की यात्रा पर निकला था। पटना में मेरे बचपन के मित्र रहते थे। सोचा था, उनके साथ मैं पटना के प्रमुख कुछ साहित्यकारों से मिल लूंगा लेकिन, जब मैं मित्र के निवासस्थान पर पहुंचा तो पता चला कि वह सपरिवार कलकत्ता चले गये हैं। लौटकर पटना स्टेशन के क्लॉक रूम में सामान रखवा दिया और अगली ट्रेन के आने तक अकेले ही पटना के कुछ साहित्यकारों से मिलने चला गया।

सबसे पहले मैं सुप्रसिद्ध कवि श्री केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' के यहां गया और उनसे मिला। उसके पश्चात् प्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्री बटुकेश्वर दत्त के साथ, जो दैवयोग से मुझे मिल गये थे, ख्यातिप्राप्त वयोवृद्ध साहित्यकार आचार्य श्री शिवपूजन सहायजी के यहां गया और श्री शिवजी की कृपा से फिर मैं श्री दिनकरजी के निकट जा पहुंचा। दिनकरजी संयोग से उन दिनों पटना ही थे।

साथ वाले सज्जन ने मेरा परिचय महाकवि दिनकरजी को देकर कहा–'आप मथुरा से आये हैं। आपके दर्शनों को उत्सुक थे। श्री शिवजी ने आपके पास इन्हें भेजा है।'

दिनकरजी यह सुनकर कुछ हंसे। बोले–'आइये। बैठिये। मैं तो आपके नगर के बहुत पास हूं, दिल्ली में। वहां तो दर्शन बहुत कम खर्च में हो सकता था।' कहकर फिर हंस पड़े। मैं कुछ सहम गया। दिनकरजी मेरे मनोभावों को समझ कर कहने लगे–'सहज प्राप्त वस्तु अधिक प्रिय नहीं लगती। दिल्ली में रहता हूं, पर दिल्ली से अधिक मेरा मन पटना में लगता है। आप कहिये, वहां क्या करते हैं?'

मैंने उन्हें अपना संक्षिप्त परिचय दिया। वे बोले–'आपने मेरी कौन-सी पुस्तकें पढ़ी हैं?'

मैंने कहा–'हुंकार, रसवन्ती, कुरुक्षेत्र, नीलकुसुम और रश्मिरथी'। उन्होंने तुरंत पूछा–'इनमें से कुछ याद है?' मैंने कहा–'नहीं, याद तो कुछ नहीं है।'

यह सुनकर वे कुछ क्षण मौन हो गये। मैंने मौन-भंग करते हुए कहा–'मैं इन दिनों हिंदी के महाकाव्यों की कथाओं का अध्ययन कर रहा हूं। उसी अध्ययन के

दर्शन में आपसे कुछ पूछने को आया हूं ।'

'क्या ? क्या पूछना है आपको ?' दिनकरजी ने प्रश्न किया । मैंने अपूर्ण बात को पूरा करते हुए कहा–'आपके दोनों महाकाव्यों में राजनीतिक प्रसंग अधिक हैं। आप स्वयं भी राजनीति में आजकल अधिक हैं। क्या आप राजनीति को जीवन में महत्वपूर्ण मानते हैं?'... कहने को मैं यह सब कह तो गया किन्तु, मैं स्वयं अपनी बात कहने में स्पष्ट नहीं था । अतः कहते-कहते रुक गया । दिनकरजी मेरी कठिनाई समझ गये । बोले–'आजकल लोग यही आरोप लगाते हैं। दिनकर राजनीति के हाथ बिक गया है। दिनकर की सफलता राजनीति है, कविता नहीं । आपने मेरे महाकाव्यों में राजनीति देखी, कोई आश्चर्य की बात नहीं।' उनका स्वर ऊंचा हो गया ।

वे कुछ क्षण रुककर बोले–'मैं मानता हूं साहित्यकार को राजनीति से दूर रहना चाहिये पर, क्या किया जाय, आज राजनीति तो जीवन का अंग है। सबसे प्रभावशाली है। सर्वोपरि है । साहित्यकार को इसे समझना होगा ।'

कुछ क्षण रुककर फिर बोले–'सुंदर शब्द-चयन से अलंकृत छंद बन सकते हैं पर, उच्चकोटि का काव्य नहीं बन सकता । उच्चकोटि का काव्य सत्यानुभूति से बनता है। सत्य को शब्दों में निरूपित करना कठिन है पर, उसके प्रभाव से हम सभी परिचित हैं। राजनीति में यह सत्य राम के पास था, कृष्ण के पास था और वर्तमान युग में गांधी के पास था । साहित्य में यह सत्य कबीर, तुलसी, मीरा, और नानक में है । यही कारण है कि, ये सभी विलक्षण प्रभावशाली हुए है ।'

उनके विचारों को सुनकर मैं मंत्र मुग्ध-सा उनकी ओर देखता-सा रह गया । वे आंख बंदकर कुछ क्षण चिंतन में निमग्न हो गये । उसके बाद जब ध्यान भंग हुआ तब मैंने उनसे साहस करके पूछा–'नये साधक को काव्य-साधना करते समय किन बातों का ध्यान चाहिये ?'

वे बोले–'बातें तो कई हैं। पर, दो बातें मुख्य हैं। पहली यह कि–साधक साधना में प्रमाद न करें । परिश्रम से न डरें । दूसरी यह कि–सस्ती लोकप्रियता का मोह न करें। साधक को बिना तपे जो कुछ मिलता है, वह अस्थायी होता है ।' यह कहकर उन्होंने एक गहरी सांस ली । हमें बातें करते हुए काफी देर हो गयी थी अतएव, हमने उन्हें प्रणाम करते हुए जाने की अनुमति मांगी । वे हंसकर बोले– 'मथुरा से दिल्ली पास है । मिलना ।'

मैं स्वीकृति में सिर हिलाकर कमरे से बाहर आ गया । पटना में बीता वह दिन मेरे लिए अविस्मरणीय है और जब मैं महाकवि दिनकरजी की बातों को स्मरण करता हूं तो उन्हें आज भी साहित्यकारों के लिए प्रेरक मानता हूं ।

–श्रीभवन, गली कसेरान, मण्डी रामदास,
मथुरा-२८१००१, उ. प्र.

□

वर्षा पर भविष्यवाणी व कहावतें

☐ नृसिंह देव

चींटियों व पशु-पक्षियों की क्रियाओं की सही-सही जानकारी होना, अनुभवी कृषकों एवं उद्यानपालों की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। जैसे-जब ऊंटनी इधर-उधर दौड़े, पैर पटके, किंतु बैठे नहीं, भेड़ के साबुन जैसे झाग आ जायें और वायु के सामने दौड़े, गधे कान गिराकर खड़े होवें, मुर्गा आकाश की ओर देखकर बांग देने लगे तो समझो वर्षा होगी।

वर्षों पूर्व की रोचक घटना है। राजस्थान के हृदय केंद्र अजमेर में आनासागर झील पर, कृषि उद्यान में हमारा शिविर लगा था। धूप और साफ आसमान वाले दिन विद्यार्थियों का एक समूह चींटियों के बिलों के पास बैठा हुआ कुछ लिख रहा था। अचानक ढेरों चींटियां निकल पड़ीं। कुछ बिलों के दरवाजे पर घर बनाने लगीं, कुछ अपने बच्चों व भोजन को लेकर पेड़ों पर चढ़ने लगीं। मौसम विशेषज्ञ शौधकर्ता ने यह देखकर विद्यार्थियों से कहा कि देखो, इन चींटियों का संकेत है कि कल भारी वर्षा की संभावना है। इस पर जल्दी-जल्दी नये पौधे रोपे गये व अगले दिन जब मूसलाधार वर्षा हुई तो यह बड़ा लाभकारी रहा। बाद में मौसम संबंधी गोष्ठी में यह निर्णय लिया गया कि मौसम की भविष्यवाणी के में चींटियों पर भरोसा किया जा सकता

शीत लहर

यदि चीटियां बिलों के दरवाजे करने लगें या ऐसे बिलों में जाने लगें धूप में हों, तो समझना चाहिये कि लहर आन वाली है।

तूफान-वर्षा

यदि चींटियां २-३ दिन से समय तक अपने बिल मजबूत करें और झुंड के झुंड अन्य जगह जाने व अपने अंडे-बच्चे और भोजन को पेड़ों पर या ढलानों पर चढ़ने लगें समझना चाहिये कि तूफान आने वाला है यदि बिलों के पास चींटियां ऊंचे बनाने लगें तो वर्षा की संभावना होती है

सूखा (अनावृष्टि)

यदि लंबे समय तक सूखा पड़ने वा हो तो चींटियां पेड़ों व ऊंची जगहों नीचे की ओर नम और अंधेरी को जाने लगती हैं और अपने बच्चों सुरक्षित स्थान पर रख देती हैं।

कुछ प्रचलित कहावतें :

कलसे का जल गरम हो, चिड़ियां न्हावें
अंडा ले चींटी चढ़े, तो वर्षा भरपूर

यदि घड़े का जल गर्म हो जावे, चि

नहाने लगे व चींटियां पेड़ों या
पर चढ़ने लगें तो भारी बारिश
संभावना है।

जो न्हावे धूल में, मेह आवण हार ।
में न्हावे चिड़कली, मेह विदा तिण-
वार ।।

चिड़िया धूल में नहाने लगे तब
जाती है। यदि चिड़िया पानी में
लगे तो वर्षा विदा हो जाती है।

पिउ-पिउ करे, मोरा घणी आजाग ।
मोरया सिरे, नदियां बहे अथाग ।।

पिउ-पिउ करने लगे, और
बोलने लगे और सिर पर छत्र बना
नाचने लगे तो अवश्य ही वर्षा होगी।

डेडरा कीड़ी मकौड़ी जाय,
बाहर भमे, नहीं मेहण की हाण ।
रंग बिरंग हो मक्खी भटके देह,
चह-चह करें, जद आस जोरे मेंह।

गोहरा, मेंढ़क, चींटी, मकोड़े आदि
बिलों से निकलकर भूमि पर
फिरने लगें, गिरगिट बार-
बदले, मक्खी मनुष्य की देह पर
लगे तथा तिवरी लगातार शब्द
तो अवश्य वर्षा होगी।

कुण्ड अर चन्द जलेरी,
टीबा भरगी डेरी ।।

सूर्य के चारों ओर कुण्ड तथा
के चारों ओर जलेरी दिखायी पड़े
सारी वर्षा होगी कि टीले टूट
के साथ बह जावेंगे और तालाब
जावेगा।

बादल के लक्षण

अम्भर सच्चां म्हे माच्यां ।
अम्भर पीला म्हे सीला ।।

लाल आसमान वर्षा का सूचक होता है। यदि आसमान नीला हो तो घनघोर वर्षा होगी व आसमान पीला दिखायी पड़े तो वर्षा मंद पड़ जाती है।

बादल रहे रात रा बासी,
तो जाणे चौकस मेंह आसी ।

पिछली रात के बादल प्रातःकाल तक रहें तो अच्छी वर्षा होगी।

तीतर पंखी बादली, विधवा काली रेख ।
या बरसे वा धर करे, यामें मीन न मेख ।।

जैसे काजल आदि से श्रृंगार करने वाली विधवा दूसरा घर कर लेती है, वैसे ही, यदि आकाश में तीतरों के पंखों के वर्ण की बदली दिखायी पड़े तो वर्षा अवश्य होगी।

उद्योग (व्यवसाय)

कुन्दन जड़े न जड़ाव,
लेही चढ़े न चामड़, मुक्ता बरसे मेह ।

जड़ाव पर कुंदन न लगे और जूता बनाते समय चमड़े पर लेई न चिपके तो समझो कि वर्षा आने वाली है।

ढोल दमामा, आदि, बारे सादर बाज ।
कहे डोम दिन तीन में इंद्र करे आवाज ।

ढोल, दमामा, ताशा आदि चमड़े में मढ़े हुए बाजे यदि ठीक से न बजें तो तीन दिनों में वर्षा आने की संभावना है।

—चौक सौदागर मोहल्ला,
अजमेर, राजस्थान

☐

उन्होंने बालकनी से झांककर देखा, प्रीति का कहीं दूर-दूर तक पता नहीं था। वे हथेलियां मलते हुए सुगबुगाये। अब इस आयु में नित्य शाम को लापता होकर पत्नी क्यों उनसे आंख मिचौली खेलने लगी है? वे ड्राइंगरूम से टैरेस और टैरेस से फिर ड्राइंगरूम के कई चक्कर लगा डालते हैं, तब कहीं प्रीति के दर्शन होते हैं। थकी-हारी ऐसी दिखती है जैसे कार्यालय में सारे दिन वही तो कुर्सी तोड़ती रही हो।

वे पूछते हैं—'कहां गयी थीं?' तो हंस देते है। 'दो-चार दिन धीरज रखिये, सब जान जायेंगे।'

वे सब जान लेने को व्याकुल उसकी प्रतीक्षा में रोज शाम पलक पांवड़े बिछा देती हैं। प्रीति उनकी रेशमी सांसों के पांवड़ों पर कुछ अजब तरह से कूदती-फांदती आती है और कुछ भी बताने से साफ मुकर जाती है। अभी वे भुनभुनाहट की धुन में ही थे कि प्रीति आती दिख गयी। वो टैक्सी से उतर रही थी और टैक्सी की छत पर कई भारी भरकम पैकेट रखे हुए थे। कुछ पैकेट उसने अंदर से बाहर की ओर खींचे और शुतुरमुर्गी गरदन उठाकर उनकी तरफ देखा। स्पष्टतः वो

यता के लिए बुला रही थी। एक

पति की भांति वे उछलते से नीचे

और प्रीति की कोमल हथेलियों का

हल्का करने लगे।

'लगता है आज सारे घर के

उपहार खरीद लायी हो, पर ये सब

खुशी में है?' उन्हें अपने आप पर

भी संयम नहीं था।

प्रीति ने कुछ क्रोध से देखा—'टैक्सी

को जल्दी विदा करिये, फिर

करियेगा।'

वे टैक्सी की छत से सामान

लगे।

ड्राइंगरूम रंग-विरंगे पैकेट से भर

था। प्रीति के चेहरे पर

मुस्कान थी। छोटी बेटी को चाय के

बोलकर वह दीवान पर पसरते हुए

'मनमानी चीजें मिल ही नहीं रही

से आर्डर देकर आज सब कुछ मिला है।

'पर ये है क्या?' वे अधीर होकर

खोलने लगे। चाय आ गयी थी।

ने प्याला थामते हुए पूछा—'नवीन

तक नहीं आया?'

कहानी

दुकान बंद है

☐ माया प्र

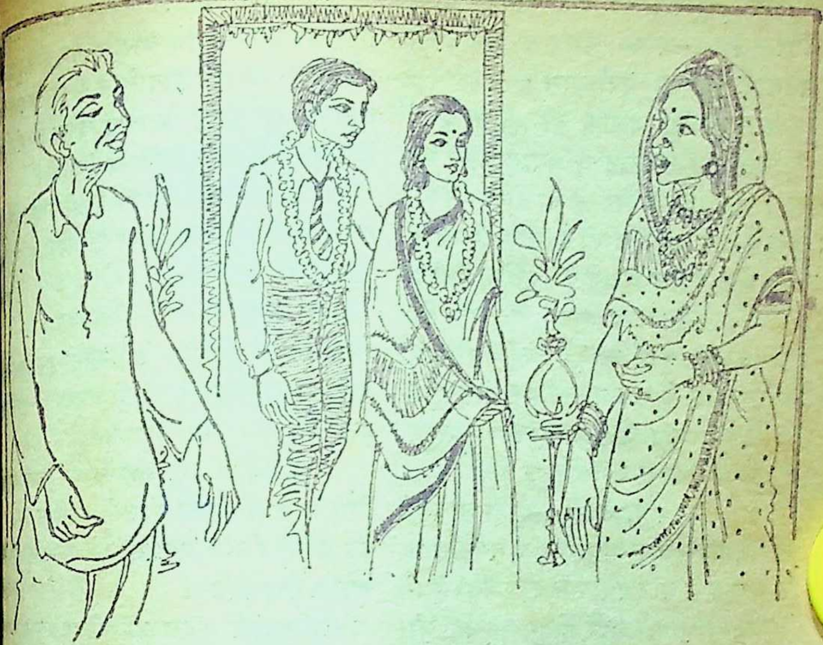

'भइया इतनी जल्दी कब आते हैं!' बेटी नेहा ने कहा। उन्होंने तब तक एक बड़ा पैकेट खोल लिया था। रंग-बिरंगे फूलों वाली टेपेस्ट्री दीवान पर अपनी छटा बिखेरने लगी। वे चौंके–'यह क्या, इतने पर्दे कहां लगाने हैं?'

प्रीति मुस्कुरायी–'ये व्यापार की बातें हैं, आप नहीं समझेंगे।'

वे चौंक पड़े–'क्या मतलब, तुम क्या कपड़ों की दुकान खोल रही हो?'

'एकदम भोले हैं आप,' प्रीति ने बिस्कुट की प्लेट उनकी तरफ बढ़ा दी। 'जिसके पति श्रीमान श्रीकांत गोयल हजारों कमा रहे हों, बेटा इंजीनियर बन गया हो, उसे कपड़ों की दुकान की क्या जरूरत है भला?'

'तुम्हारी पहेलियां तो कलेजा निकालकर ही रख देंगी,' श्रीकांत ने टेपेस्ट्री छोड़ चाय का प्याला थाम लिया। प्रीति मंद-मंद मुस्कुराती हुई बोली–'वो कहते हैं न कि जितनी अच्छी सजावट होती है, दुकान की, उतने ही अच्छे ग्राहक आते हैं।'

'पर ये दुकान है कहां?' वे झल्लाहट रोक नहीं पाये।

'देखिये, अपना बेटा विवाह योग्य हो गया है। लड़कीवाले वर देखने से पहले घर का रख-रखाव देखते हैं, मैं नये सिरे से घर की सजावट कर रही हूं।'

अब मुस्कराने की बारी उनकी थी। बोले–'अच्छा–अच्छा, योग्य वर की बोली लगवाने का यह पूर्वाभ्यास है।'

'आपको तो मज़ाक ही सूझता है।'

प्रीति का सजावट अभियान जोरों पर था। एक दिन नवीन ने भी टोका–'ममी, सुना है आप वधू पक्ष को प्रभावित करने के लिए बैंक बैलेंस घटाने पर तुली हुई हैं।'

प्रीति हंस दी। आंखों में सपने तैर उठे, बोली–'घटा रही हूं यही सोचकर कि मय सूद के सब वापस भर जायेगा।'

'मम्मी, आप जैसी आधुनिका के मुख से यह सब शोभा नहीं दे रहा है।'

'देख बेटा, कभी मैं भी ऐसा ही सोचती थी, पर अपने आस-पास देखकर लगने लगा कि भाषण में और यथार्थ में बड़ा अंतर है।'

'यथार्थ वो ही नहीं होता, मम्मी, जो आसपास घट रहा होता है। यथार्थ वो भी होता है जो मनुष्य स्वयं गढ़ता है, भले ही वो अपने आप में अकेला उदाहरण हो।' नवीन ने कहकर अधर कस लिये।

दिन व्यतीत होने लगे और वधू पक्ष वालों के प्रस्ताव बढ़ने लगे। लड़की वालों की पंक्ति जैसे-जैसे बढ़ने लगी, प्रीति की व्यस्तता और हर्ष का कोई ठिकाना नहीं था। एक दिन चाय पर टोस्ट कुतरते हुए नवीन ने कहा–'देखिये, ममी, आपके सम्मान में अब तक मैं चुप रहा, पर और अधिक ये नाटक मुझसे सहन नहीं होगा।'

'आज ऐसे बोल रहा है, पर एक दिन मुझे दुआएं देगा।'

'किस बात की ?' नवीन थोड़ा उत्तेजित हो उठा–'अपने दो हाथ-पैर होते हुए भी अपनी बोली लगवाने के लिए, अथवा इसलिये कि पिता से लाये दहेज के ढेर में डूबी पत्नी का सेवक बन जाऊं।'

'पत्नी सेवा कर सकती है तो पति नहीं कर सकता पत्नी की सेवा ?' प्रीति ने भी रोष से कहा।

'उस तरह से नहीं।' नवीन चाय में शक्कर मिलाने लगा–'पति-पत्नी हर सुख-दुख के समभागी होते हैं तो अवश्य ही एक-दूसरे का हाथ भी बटाना चाहिये, पर...।'

'मेरा विचार है यह बहस शाम के लिए टाल दी जाय।' उन्हें आफिस जाने की शीघ्रता थी, अतः मां-बेटे को टोककर चुप करवा दिया।

शाम को बहस की नौबत ही नहीं आयी।

नवीन ने आफिस से सीधा घर आना ही बंद कर दिया था। रात नौ बजे के बाद घर आता, तब तक लड़की वालों की टोली जा चुकी होती। प्रीति का हर समय फूल-सा खिला रहने वाला चेहरा क्रोध से दहक उठता, पर वे समझाते–'जवान बेटे पर क्रोध करने की अपेक्षा उसकी बात को समझने की चेष्टा करो।'

'खूब समझ रही हूं।' प्रीति तुनक उठी–'आप दोनों तो ऐसे जता रहे हैं जैसे मैं कोई दुश्मन हूं। मैं कब किसी के कुछ मांगने जा रही हूं।'

श्रीकांत समाचारपत्र उठाते हुए हंस

बोले-'पर दुकान की सजावट यही सोच-कर करती रही हो कि शो केस देखकर लेने वाला स्वयं ही दे जाये।'

प्रीति को पिता-पुत्र की बातों ने बहुत दुखी बना दिया था। अभी वो कोई नयी राह खोजने की सोच ही रही थी कि नवीन ने फिर एक धमाका कर दिया। उस दिन प्रीति ने अंतिम चेतावनी की तरह नवीन से कहा था–'आज शाम तुझे जल्दी घर आना ही होगा। मुझे डाक्टर सुकांत की लड़की हर तरह से भा गयी है, सुंदर है, सुशील है, पढ़ी-लिखी है।'

'...और इकलौती भी है, सारी जायदाद की वारिस।' उन्होंने चुटकी ली।

'है तो क्या, ये भी कोई उसका दोष है। आज वो लोग संबंध पक्का करने आने वाले हैं। पांच बजे घर पहुंच जाना।'

नवीन ने प्रीति की तरफ देखा और कोट पहनते हुए धीरे-से बोला–'जी हां ममी, पांच ही बजे आऊंगा।' प्रीति का मुखकमल उसकी बात पर फिर खिल उठा। उसके जाने के बाद बोली–'हठी बहुत है, पर आखिर मान ही जाता है मेरी बात।'

शाम पांच बजे प्रीति सारे घर को सजा-संवारकर तरह-तरह के व्यंजनों के साथ डाक्टर सुकांत की प्रतीक्षा कर रही थी। तभी नवीन की आवाज गूंजी–'देखिये तो ममी, कौन आया है?'

प्रीति डाईनिंग रूम से सरपट ड्राइंग रूम की तरफ भागी, पर ये क्या? एक सुंदर-सी कन्या मांग भरे हुए, गले में फूलों की माला पहने हुए लजाती-सी नवीन की बगल में खड़ी थी। प्रीति कुछ पूछे उससे पहले ही उसने झुककर प्रीति के पांव छू लिये।

'यह सब क्या है?' प्रीति ने घबराकर कहा। तब तक श्रीकांत भी अंदर आ चुके थे। हंसते हुए बोले–'ये तुम्हारी दुकान बंद करने का साइनबोर्ड है।'

'ममी, हम दोनों एक वर्ष से ऽऽ' नवीन ने हिचकते हुए कहा।

'तो फिर पहले कहा क्यों नहीं था?' प्रीति का चेहरा धुआं-धुआं-सा हो उठा–'मैं पगली-सी यों ही घर को सजाती-धजाती रही।'

'यों ही क्यों, ममी, तुम्हारी बहू आयी है, इस खुशी में भी तो घर सजाना ही था न।' नवीन वातावरण को उल्लसित बनाने की चेष्टा में बोला। तभी द्वार की घंटी बज उठी। प्रीति ने घबराकर सबको देखा, आंखों में हताशा के आंसू छलक आये।

श्रीकांत को लगा, अब पति-धर्म निबाहने का सही समय आ गया है। बोले–'तुम बहू को अंदर ले चलो, उसकी खातिर-वातिर करो, आर्य समाज मंदिर से सीधा यहां ले आया है नवीन।' फिर सीना तानकर हंसे–'मैं जरा दुकान बढ़ाकर आता हूं।' और नवीन की तरफ देख एक आंख झपका दी।

–बंगला नं. बी-२३,
इण्डियन एग्रीकल्चरल रिसर्च इन्स्टीटयूट,
नयी दिल्ली-१२

□

'उ' से उत्तिष्ठित

□ सुध

'उ से उल्लू, उ से उल्लू...'

'अबे चुप होता है कि नहीं ! गधा कहीं का !' बाप ने चादर से मुंह निकालकर लड़के को झिड़क दिया, फिर तानकर सो गया। खर्राटे लेने लगा। उ से उल्लू तो बिन पिये को भी ठीक नहीं लग सकता है और वह तो भोर रात तक पीता रहा था। लड़का बाप को सुनाने के लिए जोर-जोर से पढ़ रहा था। मां सुनकर खुश होती है। अभी बाहर बरतन माँज रही है। किताब हाथ में लिये रुआंसा लड़का मां के पास गया—'मैया।'

'बेटा।'

'बाबू ने चुप करा दिया। पढ़ने नहीं दिया।'

'यहाँ बैठकर पढ़ो। उसे सोने दो।'

'दिन में सोयेगा ?'

'कभी सोये। तू बाहर बैठकर पढ़।'

मां धुलें बरतन लेकर झोपड़ी के भीतर चली गयी। लड़के का उत्साह बुझ-सा गया। बासी रोटी और गुड़ खाकर वह स्कूल जायेगा। मां घरों में बर्तन माँजने जायेगीं। वह तीन बजे लौटकर खुद्दी की खिचड़ी खायेगा। खिचड़ी के साथ आम का सूखा अचार उसे बड़ा अच्छा लगता है। पिछली आंधी के बाद वह अपनी कमीज का झोला बनाकर खुद आम चुराकर लाया था। तब स्कूल नहीं जाता था। मां ने नमक डालकर अचार सूखने दिया तो वह डंडा लेकर बैठा अगोरता रहा था। एक बार भी कुत्ते को मुंह नहीं लगाने दिया। मां कहती है—अचार खोजता है विचार। विचार माने सफाई। सफाई माने कुत्ते का मुंह नहीं लगाना।

मां कहती है दारू नहीं पीना चाहिए। दारू को कुत्ता मुंह लगा देता है। जो दारू पीते हैं कुत्ते का जूठा पीते हैं। उसका बाप दारू पीता है। पीकर कुत्ते की तरह भूंकता है।

आज स्कूल से आकर वह बड़ा खुश था। 'मैया ! हम लोगों को रुपये मिलेंगे स्कोलरशिप !'

'रुपये ? किस बात के !'

'पढ़ने के लिए।'

बाप की नींद खुल गयी थी। सिनेमा घर के गेट पर उसकी रात की ड्यूटी होती है। दिन-भर सोता है। अभी जग-कर देह ऐंठ-जोंठ रहा है। गरम पानी

कर मुंह-हाथ धोयेगा । तेल-फुलेल लगाकर कंघी करेगा । पतलून पहनेगा । खिचड़ी कर बीड़ी बारेगा और चल देगा । रात या भोर में कब आयेगा; यह लड़के को हीं पता ।

'कौन दे रहा है रुपये ?'—बाप ने उकडूं कर पूछा ।

'स्कूल ।'

'स्कूल ? छप्पर पर तो फूस नहीं और र सदावरत ! स्कूल कहां से देगा पैसे ? न-सा स्कूल है ?'

देगा । कहा है ।'

'अच्छा कल मुझे ले चलना । पूछूंगा' । से वापाना टोन में पूछा गया था । सका स्कूल कहां है ?' उसी ने स्वामित्व से स्त्री को पूछा ।

'हरिजन कोलनी स्कूल । पछिआरी टोला । उसी में नाम लिखा दिया है ।'

'खिचड़ी उतरी ?'

'लगिचाई है ।'

'साला रोज एक्के बात ! कह कि हुआ है या नहीं—लगिचाया मत बोल । मन करता है . . .'

'छौड़बा के लिए सूटर बनाना है । ऊन ला दोगे ?'

'अब ई सूगर सूटर पहिरेगा ? मैं छोटा था तो गांती बांधता था । अभी से सूटर-ऊटर पिन्हाने लगोगी तो रंगदार हो जायगा । हां !'

'तुम तो बिना सूटर पहिरे ही . . .'

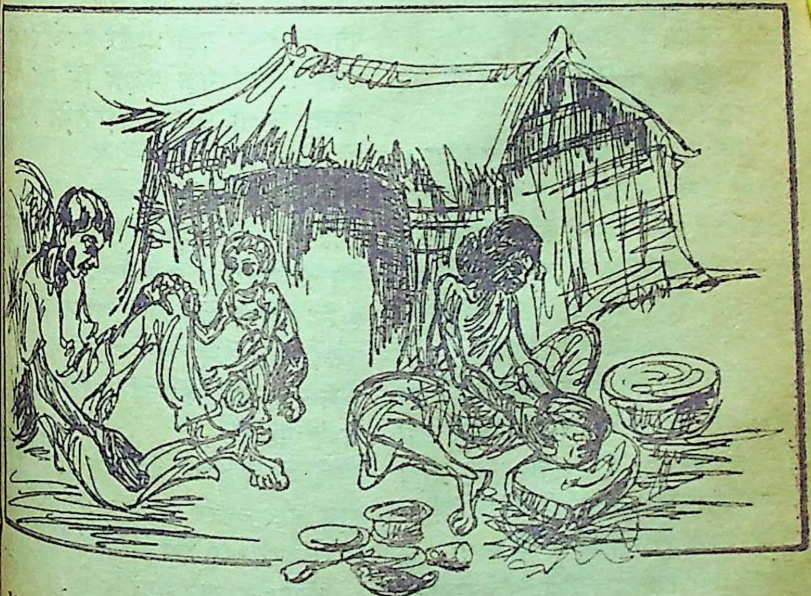

'चुप्प हरामजादी !'

'कच्ची ही दे दे ।' वह थाली लेकर बैठ गया । अधसीझी खिचड़ी खाने लगा । फूंक-फूंककर ।

लड़के ने मां को देखा । मां ने आंख के इशारे से न जाने क्या कहा कि वह चुप बैठ गया । खाली कटोरा उलटकर उस पर उंगली से लिखने लगा—ग से गधा । खिचड़ी सीझती रही ।

बाप खाकर जा चुका था । खिचड़ी भी सीझ गयी थी ।

'तुम्हारे साथ खाऊँगा ।'

'मैं तो उसकी थाली में खा लूंगी ।'

'नहीं जूठे में नहीं खाओ . . . .'

'जूठा क्या . . .'

'हाँ, मास्साब कहते हैं, जूठे में नहीं खाना चाहिए ।'

'उसके जूठे में खाने से क्या होगा, वह तो तेरा बाप है ।'

'नहीं तू उसके जूठे में भी मत खा ।' लड़का ठुनकने लगा तो मां थाली धोकर ले आयी । दोनों मां-बेटे के लिए परोसा । लड़का अचार के साथ चटखारे ले-लेकर खाने लगा ।

००

दूसरे दिन बाप स्कूल जाने को तैनात था । गया भी । लेकिन हेडमास्टर छुट्टी पर था, दूसरी टीचर-मास्टरनी थी । औरत जात से क्या पता लगता । लेकिन इतना जरूर बुझाया कि रुपये वाली बात एकदम गप्प नहीं है । इसलिए हेडमास्टर दो दिन बाद जब लौटेगा तो वह कहां जायेगा ? बेटे को कहा—'फिर पूछ लेना मस्टरवा कब आवेगा ? ऐसा नहीं कि कुछ पइसा मार जाये ।' उस रात उसने पचास के रुपये से भी ज्यादा पी ली क्योंकि बेटे के 'कोलरशिप' मिलने की संभावना उसे उत्साहित कर रही थी ।

ज्यादा पीने के कारण, वे मौसम पानी बरसने के कारण या बहुत थकने से वह दूसरे दिन बारह बजे जगा । तब तक उसकी औरत जा चुकी थी। बच्चा भी स्कूल गया होगा । कल रात पीते-पीते पतलून में ही पेशाब निकल गया था । औरत रहती तो धोने को कहता । खुद धोने का मन नहीं है । और धो भी ले तो बारह-एक बजे फैलाने से शाम तक सूखेगा ? दूसरी पतलून है भी नहीं । और इस औरत को देखो ! यह नहीं कहती कि एक और पतलून ले लो, उसे तो पड़ी है बेटे के सूट की । हुंह !

औरत आज बेटे के स्कूल गयी । मास्टरनी थी । साफ सुथरी साड़ी में । लेकिन रूपरंग नदारद । हाथ-पैर देखने से लगता है कि पढ़ाती नहीं उपले थापती हो । तो उसने बहनापे से, तनिक एकान्त देखकर पूछा—'बहनजी, कोलरशिप मिलेगा हमारे लड़के को ?'

टीचर ने लड़के का नाम पूछा, कक्षा पूछा और नकार में सिर हिला दिया ।

'लड़का कह रहा था . . .'

'क्या कह रहा था ?'

'कि रूपये मिलेंगे ।'

'बड़े क्लास में मिलेगा, पहली-दूसरी को नहीं ?' टीचर ने मालकिन की तरह कहा ।

'हेडमास्टर साहब कब आवेंगे ?'

'क्यों क्या उनके आने से पहली क्लास वाले को मिल जायेगा ?'

'सो नहीं, ठीक बता देंगे ।'

'मैं क्या गलत बता रही हूँ ।'

'सो नहीं, आप गलत काहे बतावेंगी ?'

दो अच्छर पढ़ जाने से कैसे बोल फूटते हैं जनी के ! लड़का मां को लौटते टुकुर-टुकुर देखता रहा । तब टीचर ने उसे झिड़कते हुए अंदर आकर बैठने को कहा–पढ़ोगे कि खाली स्कालरशिप चाहिए ।' फिर थोड़ा मुलायम होकर बोली–'पढ़ते रहोगे तो वह भी मिल ही जायेगी ।'

लड़के को समय, माह, वर्ष का अंदाज नहीं था । कितने दिन और पढ़ने पर पैसे मिलेंगे । यह वह नहीं जानता था । लेकिन कभी न कभी मिलेगा इस आश्वासन से उसका दुख कम हो गया, फिर साथियों से हिलमिल, खेलते वह भूल ही गया ।

लेकिन उसका बाप नहीं भूला था । उसने हेडमास्टर के आने पर कई धावे बोले । उसे विश्वास नहीं होता था ।

'हरिजन बच्चों को पढ़ाने के लिए सरकार कितना . . .'

'हां, वह तो है लेकिन पहले दूसरे में नहीं न !'

'कागज दिखाइये ।'

'कौन कागज ?'

'जिसमें ऑर्डर है देने का और नहीं देने का ।'

'वह मेरे पास नहीं है ।'

'तब ! बिना कागज पर बोलते हैं ।'

'हर बात में कागज देखना जरूरी है ?'

'जरूरी है । बिना कागज़ झूठ भी तो हो सकता है ।'

'मैं क्यों झूठ बोलूंगा ?'

'पैसे डकारने के लिए ।'

'तुम कैसी बातें करते हो !'

'देखिये, तुम-ताम पर मत उतरिये ! मैं बहुत बुरा हूं । समझे !'

'मेरा क्या बिगाड़ लोगे बुरा होकर ! हुंह । नासमझी की भी हद्द है ।'

'और बेईमानी की नहीं ।'

'मैंने क्या बेईमानी की ?'

'सो तो समझोगे खुद ।'

'जा, जा बड़े आये . . .'

'सब हेडमास्टरी भुलवा दूंगा ।'

'तो घास काटूंगा ।'

'घास कटवा के रहूंगा ।'

अच्छा खासा हंगामा हो गया । लड़के के बाप को उस समय दारू का नशा नहीं था । नशे की तलब थी । उसने घर आकर एक बरतन चुराया । बेचा । पीने चला गया ।

उसके साथियों में सब छोटे ही लोग हों ऐसा न था । वह गर्व से कहा करता था कि किस पार्टी का आदमी उसका हम-प्याला नहीं है ? सो उसने अपनी

समस्या का बखान अपने एक साथी से किया जो शिक्षा मंत्री के सिक्युरिटी गार्ड में था ।

'एक दरखास दे दो । मेरे साहब फूंक देंगे तो हेडमास्टर उड़ जायेगा ।'

'दरखास भी तुम्हें ही बनाना होगा । मैं हरिजन का पूत निरच्छर भट्टाचारज हूँ । सोचा था बेटा कोलरशिप से पढ़ लेगा . . .'

'वह पढ़ लेगा । सरकार हरिजनों को बहुत . . .'

'लेकिन यह हरामी मास्टर होने दे तब न !'

'वह कौन जात है ?'

'जादव है ।'

'तब ठीक है । मैं दरखास बना दूंगा— हरिजन कोलनी का जादव हेडमास्टर हरिजन लड़कों का कोलरशिप खा रहा है— यही न !'

'हाँ भैया । यही । मेरे लड़के के नाम पर मिल जाता !'

'सब मिल जायेगा । मुझ पर छोड़ो । मैं कोई ऐरू–गैरू हूं ? क्यों ?'

लड़के का बाप कटोरे की कीमत से अपने साथ-साथ उस सिक्युरिटी गार्ड को भी पिलाता रहा । दरखास्त का वादा देकर कहीं टाल न जाये इसलिए बार-बार याद दिलाता रहा ।

उस सिक्युरिटी गार्ड ने वादा खिलाफी नहीं की । वह सचमुच शिक्षा विभाग में एक दरखास्त दे आया । गलत भाषा, झूठी बातें और शिक्षा मंत्री की फहड़ अनुशंसा वाला वह आवेदन पत्र किरानियों, अफसरों, टेबुलों, पंजिओं, संचिकाओं से गुजरता हुआ जाँच पत्र बनकर हेडमास्टर के सिर टूट पड़ा ।

'आप अपने यहाँ के स्कालरशिप का सारा हिसाब दीजिये ।'—डी. एस. ई. को पहला मौका मिला था इस अक्खड़ हेडमास्टर को पकड़ने का ।

उत्तर देते, दफ्तरों के फेरे लगाते, अपना पक्ष समझाते हेडमास्टर की चप्पल घिस गयी । पढ़ाई से उसका जी उचट गया । वह एक दिन दफ्तर जाता तो उसके नाम पर सात दिन घर बैठा रहता ।

उसके खिलाफ कोई मामला नहीं बन सका । उसने डी. एस. ई. को भी कुछ दिया लिया नहीं । किरानियों के चाय-पान के अलावा उसने कुछ अधिक खर्च नहीं किया था । लेकिन यह रोज-रोज की भागदौड़ के अलावा बेकार की बदनामी तो हो ही गयी थी । मनचले छोकड़े भी उसको देखते ही फिकरे कसते थे–'जादव की कोलरशिप' । इसलिए जब उसकी बदली दूर देहात में कर दी गयी तो वह मन मारकर चला गया । फिर भी लड़के को स्कालरशिप नहीं मिली ।

'क्यों बे ! तुम्हारा वह जादव हरा गया ?'

'हेडमास्टर साहब ?'

'ऊँह साहब ? साहब की दुम । क्या वह ?'

'हाँ ।'

'कौन आया ?'

'म नहीं मालूम ।'

'से कोलरशिप के लिए बोला ?'

'हीं ।'

'रामी ! तू स्कूल जाता है मुंह !' बाप ने लड़के को एक चपत ा ।

'ह क्या करेगा ? क्यों मारते हो इसे ?'

'शिप इसे अभी नहीं मिलेगा ।'

हाथ का काम छोड़कर लड़के के आ गयी ।

'चुप रह । तुझे क्या पता ? शिक्षा का गार्ड मेरा साथी है । उसने कहा गा । मिलेगा क्यों नही ?'

'ं दिलवा दो ।'

'ह कुछ बोले-चाले तब न !'

'ह क्या बोले-चालेगा ?'

'ो क्या तुम्हारी तरह बनकर चौका- न करेगा ?

'रेगा । तुम्हारी तरह चप्पर होकर ने से चौंका-वरतन करना अच्छा है ।'

दमी उठा । उसका इरादा था औरत रने का । लेकिन लड़के ने झपटकर लिया । उसका मतलब रोकने भर । लेकिन दारू सेवित देह हल्के धक्के ड़ा गयी सो वह पीठ के बल गिर । पीछे सिलबट्टा था । इतनी चोट कि चक्कर-सा आ गया । वह उठकर को पकड़ता, तब तक लड़का भाग । औरत भी घर का काम ज्यों का त्यों छोड़ झटके कदम बाहर हो गयी पति की पहुँच से दूर होने ।

लेकिन अपने आदमी की पहुंच से हरदम दूर रहना औरत के लिए संभव नहीं था । इसलिए लौट-पौटकर घर आना ही था । और फिर वही बासी बातें रोज दुहरानी थीं । आदमी का दारू पीना, पगार के पैसे छीन-झपट लेना, घर के बरतन-भांड़े बेच देना—सब सहती आयी थी, सहने को तैयार थी, अब एक ही बात वह सह नहीं सकेगी – बेटे के हक पर घात ! यह वह नहीं सहेगी । चाहे कुछ हो जाये ।

०००

'मेम साहब !'

'कहो । . . . अभी तो दस रोज पहले ही पैसे दिये हैं न !'

'पैसे नहीं । बेटे की पढ़ाई है . . .'

'तेरा बेटा पढ़ता है ?'

'हरिजन कोलनी स्कूल में, दूसरे किलास में गया है ।'

'तब पढ़ तो रहा है न !'

'वहाँ क्या पढ़ेगा ! सब हरिजनों के ही बच्चे हैं ।'

'ठीक ही तो है, अपने लोगों में . . .'

'लेकिन मेम साहब ! कुछ ढंग का सीखे ।'

'तो क्या पब्लिक स्कूल में नाम लिखवाओगी ?'

'वह कैसा स्कूल है ?'

'कई हैं । एक देहरादून में है, जिसमें राजीव गांधी पढ़ते थे ।' वे हँसने लगीं ।

लड़के की मां मर्माहत हो गयी। मेम साहब से मैं मदद मांगने गयी थी, ताने सुनने नहीं। भगवान ने मेरे बेटे को जेहन-मंद बनाया है तो वही जुगाड़ भी करेगा। औरत सिर झुकाये काम में लगी रही तो मालकिन को शायद अपने परिहास की क्रूरता का एहसास हुआ—'कहाँ पढ़ाना चाहती हो ?' लेकिन उसने सिर भी नहीं उठाया, रूठी-सी चुप रही।

'एक स्कूल है, पास में ही। बड़े अच्छे लोग उसे चलाते हैं। पैसा बहुत कम लेते हैं। लेकिन यह भी सुना है कि सरकार के खिलाफ लड़कों को तैयार करते हैं।'

'मुझे यह सब . . .'

'उसमें कहो तो करा दूं। मेरी पहचान के लोग हैं।'

'यही तो, मेम साहब ! पहचान वाले के नाम दो आखर लिख देतीं तो मैं कोशिश करती।'

ooo

लड़का नये स्कूल में आ गया। फीस नाममात्र थी। लेकिन स्कूल ने जो ड्रेस और किताबें दी थीं उसके लिए मां को उधार-पैसा करना पड़ा। सफेद कमीज, खाकी पेंट, कैनवस के जूते, स्कार्फ और जिल्द लगी किताबों के साथ लेजीम और स्किपिंग की रस्सी के भी पैसे देने पड़े। इतनी चीजों की कीमत अदा करने में चार-छः महीने की कमर तोड़ मेहनत से भी काम चलने का न था।

स्कूल सरकार की खिलाफत नहीं
करता था। यह बदनामी ऐसे [illegible]
की जाती थी जो अब भी देशहित [illegible]
करने वालों को सत्ता विरोधी [illegible]
चूंकि आजादी के बाद स्कूलों में [illegible]
निर्माण की परिपाटी नहीं बन पायी
स्कूलों की स्थिति भग्न-कुठार [illegible]
हो गयी इसलिए इस स्कूल के [illegible]
वातावरण और आचार-विचार को
निहित उद्देश्य से प्रेरित माना जाता

लड़के के बाप को महीनों बाद
बेटे के रूपांतर का पता चला। [illegible]
वह दो बार हरिजन कॉलोनी स्कूल [illegible]
पूछताछ कर चुका था। एक [illegible]
कलूटे लड़कों की भीड़ में उसे [illegible]
नहीं दीखता था तो उसने [illegible]
कहीं दुबक जाया करता होगा। [illegible]
में नया हेडमास्टर था। उसने [illegible]
की, लेकिन न तो लड़के न उसे [illegible]
वाले स्कालरशिप का पता चला। [illegible]
दिन उसका धैर्य चुक गया। [illegible]
नये हेडमास्टर को धमकाते हुए [illegible]
'जादव को तो सौ जोजन फें[illegible]
लगता आप भी रहना नहीं चाहते [illegible]

'क्या कहा ? सुनो, मैं जादव [illegible]
करमा दुसाध हूं। नल्लों पकड़ [illegible]
छुड़ा नहीं सकोगे। समझे!'

'. . . . .'

'फिर कभी इधर आये तो टांगें [illegible]
धर दूंगा।'

लड़के का बाप मुंह लटकाये [illegible]
दारूघर गया। शिक्षा मंत्री के [illegible]

की राह देखते दिन ढल गया । अब का समय भी होने को आया । ड्यूटी पर हाजिर होना था । जाना ड़ा । दारूवाला एक पैसे का उधार ता है । मन मसोसकर रह गया । फूटी कौड़ी नहीं थी । औरत के आजकल वह नहीं निकाल पाता । हीं किस यार के पास छिपाकर गी है, साली ! मंसूबे धरे रह जाने पीने से, शीत लहरी से और कुछ वायु विकार से वह रात ठीक से सो या । भोर में आंख लगी कि औरत पट से नींद खुल गयी । बेटे को जाकर वह रोटी-अचार का पुलिंदा ही थी । लड़का बासी खिचड़ी के वाले निगल रहा था । उसे देखकर ई आने लगी । उठने का मन नहीं । मुंह फेरकर बोला—'इतने सवेरे रहा है ?'

जाना है ।' औरत का सपाट था ।

समय ?'

ड्रिल होता है ।'

में कभी दिखायी तो नहीं पड़ता ।'

स्कूल में ?'

रिजन कोलनी . . .'

अब यह नहीं पढ़ता ।'

? वहां क्यों नहीं पढ़ता । वहीं कोलरशिप मिलता !'

पढ़कर क्या सीखता ! भुच्चड़ ना ।'

'कौआ मोर का पंख लगाने से . . .'

'मोर का पंख नहीं लगावेगा । मोर बनेगा । अच्छी बातें सीखेगा । नहीं तो स्कूल जाने का क्या फायदा !'

'तू मुझे फायदा नुकसान सिखायेगी, साली ! पंख तो तेरे निकल गये हैं ।'

' . . . '

'यह हरिजन कोलनी जायेगा ।'

'नहीं जायेगा वहां । जहां पढ़ रहा है, पढ़ेगा ।'

'क्या बोली ? मुंह लगाती है ! चीर कर धर दूंगा ।'

'चीर दो । फांसी चढ़ोगे ।'

'देखा जायेगा ।'—वह गुदड़ी फेंककर उठा ।

औरत ने झटके से लड़के को खींचा और बाहर हो गयी । लड़के के कंधे से उसका बस्ता झूल रहा था लेकिन दोनों मां-बेटे इस फुर्ती से निकल भागे कि पेट में वायु के बोझ से लदा आदमी उनका पीछा नहीं कर सका ।—'आने दो दोनों को, आज जान से मार कर रहूंगा ।'

घर में बासी रोटी नहीं थी । आटा भी नहीं था । थाली में थोड़ी सी ठंडी, जूठी खिचड़ी थी जिसे उसने लात मारकर उलट दिया । पेट से हवा, पानी निकालकर वह हल्का हो चुका था । लौटकर फिर लेट गया । क्रोध और भूख से लड़ती नींद उस पर हावी हो गयी । वह दोपहर तक सोता रहा । औरत जल्दी लौटकर आयेगी इसकी आशा न थी लेकिन देर

से भी वह लौटेगी ही इसका विश्वास था।

शाम ढलने पर औरत ने किसी राहगीर से पूछा–'कितना बजा, भाई।'

'छः।'

अब वह चला गया होगा। घर में उसके होने का खतरा नहीं था। शाम की स्याही उतर आयी है। मोहल्ले में बिजली भी नहीं है। झोपड़ी निपट अंधेरे में पड़ती है। उसने धीरे कदमों से चलकर, रुककर झांककर देखा,। न! वह नहीं है! टाटी को टारकर भीतर गयी। अपने घर में उसका जी चोरों-सा हो रहा था। लगता था, वह पीछे से आकर वार कर देगा। मार खाने का जितना डर था उससे अधिक त्रास इस बात का था कि वह उसे इस घर में रुकने पर विवश न कर दे। अंधेरे में टटोलकर उसने अपने कपड़े चुने। बेटे के कपड़े लेते देर न लगी। सबको कथरियों में लपेटा। पीतल का लोटा, तामचीन की कटोरी, थाली, लोहे की कड़ाही, बटलोई सब समेटकर लदी-फंदी बाहर हो गयी। काठ की पेटी नहीं ले जा सकी जान का जंजाल हो जाता। सिर पर गठरी रखकर वह धड़कता कलेजा थाम निकल गयी। यह धड़कन भय से जितनी थी उतनी ही उत्तेजना से घर छोड़ते उसे भारी दुख हो रहा था। यह त्रासदायक पलायन उसे इतनी पीड़ा देगा इसका अंदाज उसे नहीं था।

बेटे को जहां बैठा आयी थी, वह वहीं बैठा था। मां को देख उठ खड़ा हुआ। उसने अपने लिए एक जगह तय कर
थी–निरापद नहीं। लेकिन कुएं में
होने के लिए काई के खतरे पर
का मौका कहां था!

शिवालय में संध्या पूजन हो चुका
कीर्त्तन मंडली जम गयी थी। झाल-
के साथ सब झूम-झूमकर गा रहे
मंदिर के पिछवाड़े की यह जगह
अपनी जात के एक सिपाही की
मिली थी। मंदिर की नाली-मोरी
सफाई, आसपास झाड़-बुहारू करना
किसी के नहीं रहने से यहां कुत्ते
गंदा कर देते थे। अब एक औरत
रहेगी तो सफाई बनी रहेगी।
पायों के बीच रस्सी बांधकर परदा
लिया और वहीं आड़ में कथरियों
बिस्तर भी लग गया। बेटा बिछावन
लुढ़क गया तो उसने कहा–'अभी
मंत। खाना लेकर आती हूं।'

'मैं भी चलूंगा।'

'चुपचाप बैठ। मैं यह गयी, वह
और देख, पेशाब लगे तो उधर
में करना, इधर मंदिर के पास नहीं

उसने दूर ही से भगवान को
किया; ऊपर चढ़ना मना था।

कटोरा अंचल में छिपाये
के यहाँ गयी।

'आज बड़ी देर कर दी!'
झिड़की मिली।

'जी मेमसाब, घर बदलना था।
नजदीक आ गयी हूं।' कमर

ोंसकर उसने बात की बात में सारे ाम कर डाले । आसी बासी जो सब मेम हब ने उसे खाने के लिए दिया था सब मेटकर कटोरा आंचल से झाँपे आ गयी । टा खाकर जो छोड़ देगा, मुंह में धर गी ।

उसे मंदिर के हाते में आते-जाते सिपाहियों ने देखा ।

'ई कौन है हो ?'

'रामकरम की गउआं है । मंदिर में र-सफाई करेगी ।'

'एकर आदमी ?'

'ओके छोड़ के आयी है ।'

'रामकरम है जुगुतिया ।'

सिपाहियों ने अपने साथी रामकरम ट्ठा किया । लेकिन लड़के की मां ने रामकरम को कभी अधिक आगे बढ़ने नहीं दिया । वह स्वेच्छा से सबके साथ हिलमिल गयी । किसी के कपड़े धो देती, किसी के टूटे बटन टांक देती । किसी के ठे बरतन धो डाला तो किसी के लिए राठे सेंक दिये । सब उसे पैसे देते थे । क दूसरे को लगता था कि उसे काम से धिक पैसे दिये जा रहे हैं । लेकिन नी बारी आने पर कोई पैसे देने में ताही नहीं करता था । वह इतना ढंक-ुककर चलती थी कि कोई आमने-सामने करा नहीं कस पाता था, लेकिन पीठ छे लोग बाज नहीं आते थे । उसके आदमी को उसके रहन-सहन का पता ल गया था लेकिन वह सिपाहियों के डर से इधर आने की हिम्मत नहीं करता था ।

इस बीच उसका बेटा बड़ा सुडौल हो गया । उसे मेधावी छात्रवृत्ति मिली थी ।

'मेम साहब ! परसाद है ।' आपके बेटे ने कोलरशिप पाया है ।'

'अच्छा !' उन्होंने खुशी जाहिर की ।

'मेम साब, ई कोलरशिप हरिजन वाली न है ।'

'तब क्या है ?'

'मेधावी कहता है ।'

'हट्ट ! उसे तो हरिजन वाला यूं ही मिला होगा । वही होगा । तुम नहीं जानती हो यह बात ।'

'न मेम साहब, मैंने मास्टर साहब से पूछा था; कहिन–इहां हरिजन-फरिजन नहीं चलता है ।'

'तो होगा ।' मेम साहब को विश्वास नहीं हो रहा था ।

विश्वास उसे भी नहीं हुआ था । यह तो साक्षात भगवान की कृपा है, नहीं तो मंदिर के पीछे सिपाहियों की गंदगी ढोते-धोते उसका कलेजा कांपा करता था । वह हर बार अंधेरे में गुहराया करती थी– 'या ठाकुरजी, छिमा करना, रच्छा करना मेरे लाल की ।' कहीं कोई रोशनी नजर नहीं आती थी; जो घर छोड़कर आयी थी न वहां और जहां आ गिरी थी वहां भी नहीं ।

मेम साहब नहीं मानती कि उसका बेटा पढ़ने में अच्छा है ।

स्कूल के पंडितजी को भी अचरज होता

है इस पर।

'यह जिस बालक ने छात्रवृत्ति परीक्षा में दूसरा स्थान प्राप्त किया, जानते हैं, किस जाति का है?'

'जानता हूँ, चर्मकार है।' प्रधानाध्यापक ने उदासीन होकर कहा।

'इसका नामांकन हमारी संस्था में कैसे हुआ?'

'क्यों? इसके नामांकन में क्या बाधा थी, श्रीमान!'

'जी, यह चर्मकार तो राजकीय सुविधायें बिना परिश्रम पा जाता। इसने किसी सवर्ण बालक के अधिकार क्षेत्र में क्यों प्रवेश किया?'

'क्यों? मेधा पर किसी जाति विशेष का अधिकार है क्या?'

'नहीं होता तो यह आरक्षण क्यों? और यदि आरक्षण है तो फिर यह दुहरा प्रवेश क्यों?'

'मेरे विद्यालय में कोई आरक्षण नहीं है और यहां वर्ण-विचार भी नहीं है।'

'लेकिन जब सरकार वर्ण-विचार करती है तब....'

'सरकार को वोट लेना है, मुझे केवल स्कूल चलाना है।'

'हाँ, सरकार ने तो हरिजनों के लिए सुविधाओं के जाल बिछाए हैं। आ चिड़ी, दाना चुग और रह जा आरक्षण के पिंजड़े में।'

'मुझे उससे कुछ लेना-देना नहीं। सरकार क्या करती इसका लेखा-जोखा मैं नहीं रखता।'

'आप तो आदर्शों पर चलते हैं, लेकिन लोग आपके विरुद्ध आरोप लगाते हैं सत्ता विरोधी काम करने का।'

'मेरे ऊपर इन आरोपों का असर नहीं होता। आप भयभीत होते हैं क्या?'

'नहीं, नहीं मैं क्यों होऊंगा भयभीत?'

'तब जाने दीजिये। लड़कों को आप आगे बढ़ने दीजिये।'

'मैं किसी को बाधा पहुंचाता हूं क्या आगे बढ़ने में?'

'मेरा मतलब यह नहीं है।'

'लेकिन हेडमास्टर साहब! जो के अनुरूप नहीं चलते वे अपने जूतों की मरम्मत भी नहीं करा पाते।'

'आप क्या कहना चाहते हैं?'

'यही कि अगर आपका रुख सुधारात्मक है और आप सत्ता के विरुद्ध आवाज कायम रख सकते हैं तब उस लाभ उठावें।'

'क्या? मैं शासन से बारगेन करूं। क्या कहते हैं पंडितजी! यह मेरा नहीं है। मैं तो सीधे रास्ते अपने आये बच्चों को पढ़ाता हूं। बस इससे अधिक कुछ नहीं।'

'नारायण ही मालिक है।'

'वह तो है ही।'

'लेकिन भगवान भी समय पर तोड़कर शस्त्र उठाते हैं।'

'मैं भगवान नहीं हूं। और उनका आदेश हो तो समय पर जो बन पड़े

कुछ

रूंगा।'

'तो चलूं!'

पंडित के जाने के बाद हेडमास्टर सोचता रहा–क्या सचमुच वह समय के साथ नहीं है! यदि होता तो आर्थिक सब सुविधायें होतीं। लेकिन बिके हुए मान और आत्मसम्मान के बदले जो मिलता वह कितना सुखदायक होता! जो नहीं है, उसके लिए सोचना क्या! और इस दुर्लभ कर्म-निष्ठा को खोना क्यों? क्या यह इस युग की अलभ्य वस्तु नहीं है! पंडित नहीं समझेगा! पंडिताइन की मांगें बहुत हैं। बच्चों का भी तांता बंधा है। एक बार टोका तो कहा–देश में पंडितों की कमी हो रही है। हमारे बच्चे न हों तो समझो देश से पंडितों का नामोनिशान ही मिट जाय। ऐसे को क्या समझाना। अच्छा हुआ जो वह स्वयं कुँवारा रहा। कभी-कभी इस खाली जीवन से मन घबराया था। लालच अभी भी पूरी तरह खतम नहीं हुआ है, लेकिन अब लगता है कट जायेगा, समय भारी नहीं पड़ता।

०००

'कौन?'

'जी, मैं।'

'अच्छा! ... आओ।'

वह खड़ी रही। हेडमास्टर ने उसे बैठने को कहा। लेकिन वह कुर्सी पर नहीं बैठ सकी। कोई मोढ़ा-बोढ़ा होता तो बैठ जाती।

'तुम्हारे लड़के ने तो बड़ा अच्छा किया'

'सब आपका परताप है।'

'वह मेहनत करता है।'

'अब आगे भी आपका सहारा है।'

'अब तो उसे और मेहनत करनी है।

'करेगा।.... बाबू...'

'....'

'मैं अपने लिए कोई काम ... स्कूल में दाई...'

'यहां तो ऐसी कोई जरूरत है नहीं।'

'किसी दूसरी जगह ...'

'दरअसल मुझे कोई जानकारी ...'

'अच्छा छोड़ दीजिये। अभी ....'

'अभी क्या करती हो?'

'मंदिर के हाते की सफाई और ... घरों में चौका बर्तन।'

'ओ।'

'अब कोई ढंग का काम चाहती थी।'

'काम तो सब काम ही है। तुमने इसी में अपने बेटे को ...'

'वह तो मेरा नहीं, अब आपका ...'

'सभी बच्चे मेरे हैं लेकिन इतनी कठिनाइयों के बीच से कम ही बच्चे आगे आते हैं।'

'इसीलिए मालिक! ...'

'अच्छा मैं सोचूंगा। कुछ मिला तो बताऊंगा।'

०००

मंदिर के पिछवाड़े भी अब पहले वाली शांति नहीं रही। कई सिपाही बदली होकर चले गये। उनकी जगह नये आये।

उनमें कुछ ऐसे टुटपुंजिये थे जो इस औरत को बिना दाम की लौंडी समझते थे।

कुछ पुराने लोग उसकी ओर से बोलते थे तो बवाल उठता था। सब अलग-अलग ढंग से उस पर हक जमाते थे। उनमें एक रंडुआ था, आगे नाथ न पीछे पगहा, वह उसे लेकर अपना घर बसाने तक तैयार था। लेकिन, इस प्रस्ताव पर उसने कभी कान दिया ही नहीं। उसका बेटा पढ़ुआवा है। वह मां होकर दूसरा घर करे तो बेटे की इज्जत दो कौड़ी की हो जायेगी। और अब कौन वह जवान-जहान रही। दुनिया में जूठे बर्तनों का टोटा नहीं है, वही धोकर जिंदगी काट लेगी।

लेकिन यह महंगाई, बेटे की पनपती उम्र अपनी घटती सामर्थ्य उसे कंपा देती थी–आगे क्या होगा, ठाकुरजी जानें। अपना तो एक-एक कदम पहाड़ था। ऊपर से यह बेटा रोज एक न एक सदाव्रत करता रहता था–कभी किसी साथी को पेंसिल दे डाली तो किसी को किताब।

'ऐसा वे लोग करें जिनके पास देने को हो, तुम कहाँ से दोगे? अपनी किताब आज जरूर वापस ले लेना।' वह बेटे को समझाती थी और भगवान से मनाती थी कि उसका बेटा ऐसा ही उदार बना रह सके।

बेटा अब किसी के लिए कुछ करते सहमता था, इसलिए हिम्मत नहीं हो रही थी कि मां से कहे। मां ने खुद उसका असमंजस भांपकर पूछा–

'काहे पड़े हो? जी नहीं अच्छा क्या? या फिर किसी को कुछ दे आये।'

'नहीं, मां।'

'तो जाओ, खेलो न! आज स्कूल में मैच नहीं है क्या?' वह हर गेम को ऐसे ही कहती थी।

'नहीं है। हमारे हेडमास्टर साहब बहुत बीमार हैं।'

'क्या हुआ है?'

'टायफायड।'

'कौन देखभाल कर रहा है?'

'कोई नहीं।'

'कोई नहीं!'

'.....'

'तो!...'

'मैं करूं, मां?'

'तुझसे होगा?'

'हाँ, हो जायेगा।'

'नहीं रे, तुझसे नहीं होगा। मैं चलूं! तेरे साथ चलूं!' उसने बेटे से इजाजत मांगने के स्वर में पूछा।

'तुम चलोगी?'

'क्यों नहीं चलूंगी, बेटे। तुम खा ना खालो। मैं यहाँ सब समेट लूं। अभी ही चलूंगी।'

उस सिमटी गृहस्थी को समेटना क्या था उसने हाथ-मुंह धोकर साफ साड़ी पहन ली–बीमार के पास गंदे कपड़ों में नहीं जाते। लंबे पल्लू से देह को ढंक-ढुंककर बेटे के पीछे-पीछे लपकती हुई चली गयी।

बिजली चली गयी थी । चारों ओर अंधेरा था । उसने रोगी के घर में तेल का एक दीपक जलाकर रख दिया—बिजली आये या जाये, यही ठीक है । आंख में रोशनी चुभती नहीं ।

पत्थर-पानी, सफाई-धुलाई, टट्टी-पेशाव का जिम्मा उसने सहज ही ले लिया । बाहर से बेटे की मदद और भीतर से उनका अपना मन सहारा देता रहा । हेडमास्टर पंद्रह दिनों में चलने-फिरने लायक हो गये तो पंडितज़ी आने लगे ।

'इस चर्मकार बालक की माता ने तो बड़ी मदद की ।'

'वह उस बालक की ही नहीं, मेरी भी माता है ।'

'....'

'क्यों ? आप चुप क्यों हो गये !'

'आप अभी दुर्बल हैं । आपको अधिक नहीं बोलना चाहिए । आराम करें ।'

'पंडितजी, दुर्बल आप हैं, मैं नहीं ।'

'अब आप जो कहें । मैं तो कह रहा था कि उस महिला ने बड़ी सेवा की उसे कुछ पैसे...'

'क्या कहा ! पैसे देने की कृतघ्नता मैं करूं ! ऐसी बात आप मुझे न सिखायें ।'

'दरअसल वे लोग बड़े गरीब हैं, पैसों से उनका उपकार होगा ।'

'उपकार नहीं, मैं सम्मान करूँगा ।'

'जी, यह भी ठीक होगा । स्कूल के वार्षिकोत्सव...'

'छी: छी: । आप लोग पता नहीं कब इन दिखावटी बातों से उबरेंगे । मंच का सम्मान तो राजनीति में होता है, घर में नहीं । घर में तो बेटे मां के पैर छूकर सम्मान जताते हैं । उसके लिए वार्षिकोत्सव की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती ।'

सचमुच बड़ी सहजता से उस लड़के की मां हेडमास्टर की अधूरी गृहस्थी की गृहमाता बन गयी । लेकिन इस बात को लेकर पंडितजी हेडमास्टर से रुष्ट हो गये । जीविका का प्रश्न न होता तो वे इस स्कूल की नौकरी छोड़ देते । ऐसे संस्कार-हीन के साथ काम करने में उन्हें कष्ट हो रहा था । वे साथियों से बतियाते थे—'अरे आप उसे लुगाई बना लेते, तब भी मैं क्षमा कर देता । वह तो मानव मन की दुर्बलता होती । लेकिन आप तो उस शूद्रा को माता कहकर पुकार रहे हैं । यह तो माता शब्द का अपमान है । क्यों ? मैं कोई अनर्गल बात कह रहा हूँ ?'—वे लोगों का समर्थन बटोरते रहे ।

लेकिन न तो हेडमास्टर ने उस स्त्री को अपने घर से हटाया न पंडित ने अपनी नौकरी छोड़ी । सब कुछ सहज चलने लगा । बस एक बार थोड़ा हंगामा-सा हुआ था । उसके पति को जब मालूम हुआ कि वह पुलिसवालों के संरक्षण से बाहर होकर स्कूल में आ गयी है तब उसे लगा कि वह उसे फिर से अपने पंजे में समेट सकेगा । पुलिस पुलिस है और स्कूल का मास्टर... धत ! एक ही डपट में चित्त । वह अब दिन-रात नशे में सराबोर रहा करता था ।

एक कदम बिना डगमगाये नहीं चल पाता था, एक शब्द साफ नहीं बोल पाता था।

रविवार था। दोपहर में जब वह स्कूल पहुंचा तो हेडमास्टर बरामदे में बैठकर अखबार पढ़ रहे थे। वहीं नीचे बैठकर स्त्री थाली में कुछ बीन रही थी और उसका बेटा हेडमास्टर के समीप बैठा गणित के सवाल हल कर रहा था। बीच-बीच में पूछता जाता था।

स्त्री ने दूर से ही अपने पति को पहचान लिया। लड़का मां के मुख पर उभरे पहचान को देखकर ही बाप को पहचान सका था। हेडमास्टर के लिए वह अपरिचित था।

'कौन ? क्या काम है ?'

'काम आप ही से है। पूछना है कि दूसरे की बीबी को . . .'

'किसकी बीबी ? कौन ?'

'मेरी और किसकी ? आपके खिलाफ मैं शिकायत . . .'

'यह मेरा कोई नहीं है . . .' स्त्री ने गरज कर कहा।

'कौन है यह ?'

'यह मेरा कोई नहीं है . . .' स्त्री का गला रूंध गया था।

'चुप चोट्टी . . . पुलिसवालों ने मारी तो यहां मरने आ गयी . . .'

लड़का भयभीत खड़ा कांप-सा रहा था। स्त्री त्रस्त थी। लगता था कुछ बैठेगी। हेडमास्टर ने अखबार मोड़कर नीचे डाल दिया और अपने एक पांव खड़ाऊं निकलकर दायें हाथ में ले लिया एकदम मंद और अकंपित स्वर में कहा- 'तुम बिना पूछे कैसे आ गये ? किसके हुक्म से ! इसके पहले कि इस खड़ाऊं से मैं तुम्हारा सिर तोड़ दूं तुम यहां से बाहर हो जाओ।'

उसने गुर्राकर हेडमास्टर को ताका, बुदबुदाकर कुछ बोला, थूक का एक लोंदा वहीं जमीन पर उगल दिया और पहले से अधिक डगमगाता बाहर हो गया।

०००

तब से बहुत साल बीत गये। इस बारे में किसी ने कुछ नहीं कहा। अछूतोद्धार के लिए हुई गोष्ठियों, नारी स्वातंत्र्य पर हुए सेमिनारों और गरीबी उन्मूलन के बारे में भी इस बात का जिक्र कभी नहीं हुआ।

—उप शिक्षा निदेशक

नया सचिवालय, पटना-८०००

□

युवक ने एक सफल व्यवसायी से पूछा—'आपकी सफलता का रहस्य क्या है ?'

'बड़ा ही आसान और सहज रहस्य है,' व्यापारी ने कहा—'छोटी-छोटी बातों पर भी ध्यान देना, चौकस निगाहें रखना और उपयुक्त अवसर गंवाना नहीं।'

युवक ने जिज्ञासा प्रकट की—'पर कैसे पता चले कि यही अवसर उपयुक्त है ?'

'कोई मुश्किल नहीं, क्योंकि प्रत्येक छोटे से छोटा अवसर भी उपयुक्त ही है, बस मेहनत व पूरा ध्यान मांगता है।'

—मंजु

□

व्यंग्य

दूल्हा बिकाऊ है

□ संजीव सिंहल

'यहां पर सस्ते, सुंदर और टिकाऊ दूल्हे मिलते हैं। अधिकांश अमीर और गरीब, सरकारी और गैर-सरकारी, टीवर और फटीचर, सड़क छाप और सड़क छाप पापाओं अर्थात् लड़की के वालों ने हमारी एजेंसी से ही 'दूल्हे खरीदे' हैं और ये दूल्हे सराहे भी गये हैं। कृपया एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें। दूल्हों के मिलने की एक मात्र दुकान—संजीव दूल्हा एजेंसी।'

यह मेरी उस मौलिक और अप्रकाशित साथ ही नवीनतम दुकान का नाम है जो कि मैंने बेरोजगारी को चित करने के चक्कर में आरंभ की है। और किस्मत देखिये इस टटपूंजिये लेखक की कि वह बेहद सफल रहा है अपने इस अप्रसारित धंधे में। इस दुकान की सफलता से मेरा वह भ्रम भी आधुनिक प्रेमियों के दिल की भांति चकनाचूर होते-होते रह गया कि देश को दुल्हनों की आवश्यकता है। अरे नामुराद, देश को लड़कियों की नहीं वरन् लड़कों की, 'दुल्हन' की नहीं दूल्हे की जरूरत है।

हाजिर स्टॉक में हमारे पास कुलजमा १०० दूल्हे हैं। इनमें से १५ 'ए' ग्रेड के अर्थात् अफसर हैं। २५ 'बी' ग्रेड के अर्थात् बाबू हैं। ३० 'सी' ग्रेड के अर्थात् चपरासी हैं। १० 'डी' ग्रेड के अर्थात् बेरोजगार बनाम 'रोडमास्टर' हैं और शेष बचे-बीस तो बिल्कुल ही कचरा और बेकार माल हैं। इन्हें कोई भी ग्रेड देना, 'ग्रेड' शब्द का अपमान है।

ग्रेड 'ए' अर्थात अफसर ग्रेड के दूल्हे, विदेशी दिमाग के देशी दूल्हे हैं। इनकी कीमत जरा (?) ऊंची है। उनकी गलफांस बनाम 'नेकटाई', जनता को आतंकित करती, अंग्रेजी और हिंदी को चिंदी बनाती हुई इनकी 'हींदी' ही इनकी ऊंची कीमत का कारण है। विशाल भवन के एयरकंडीशंड केबिन की ऊंची, रिवॉल्विंग और गद्दीदार कुर्सी पर बैठने के बदले में इनको मिलने वाला वेतन, इनके ऊपरी खर्च के काम आता है। ऊपरी आमदनी, घर का खर्च चलाने, बैंक बैलेंस बढ़ाने, बीवी के नेकलेस बनवाने और मौके बे मौके घूस देने के काम आती है। ये दूल्हे आज्ञाकारी (माता-पिता के) हैं और बिकने के बाद भी आज्ञाकारी ही रहेंगे। यह मेरी गारंटी है। इस ग्रेड में आने वाले दूल्हे की कीमत वैसे तो दो ढाई लाख है, लेकिन क्योंकि आप अपने ही आदमी हैं, इसलिये मात्र डेढ़ लाख में ही दे दूंगा। दूल्हे की

कीमत किस्तों में भी चुकायी जा सकती है, किंतु यदि किस्तें समय पर नहीं पहुंचायी गयीं तो हमारा पूरा अधिकार रहेगा कि हम 'वधू' को यम को समर्पित करके अपने प्यारे दूल्हे राजा को पुनः 'बिकाऊ हैं' की तख्ती के साथ दुकान पर बैठा दें।

ग्रेड 'बी' अर्थात् 'बाबू' ग्रेड के दूल्हे, मध्यम वर्ग के लिए, सीज़न डिस्काउंट के साथ ही आसान किस्तों पर भी उपलब्ध हैं। इनकी कीमत सामान्य है। इनकी कम कीमत का कारण, इनका कम वेतन, नीची कुर्सी और गालों में पड़े गड्ढे हैं। परंतु आप चिंता न करें। हमारी एजेंसी का माल बिल्कुल नया, ताजा और फर्स्ट हैंड है। इन दूल्हों की एक खासियत है जो कि ग्रेड 'ए' के दूल्हों को भी मात कर देती है। ये अपने श्वसुर अर्थात् अपनी प्यारी पत्नी के पूज्य पिता (और उसके पैसे) के प्रति बेहद समर्पित रहते हैं। यूं तो इनकी कीमत एक लाख रुपये है, लेकिन चूंकि आप हमारी दुकान के (अ) नियमित ग्राहक हैं अतः आपको पचहत्तर हज़ार में ही दिये देता हूं। कहिये, कर दूं पैक!

ग्रेड 'सी' अर्थात् चपरासी हमारी दुकान का 'क्लास थर्ड' माल है। इस माल को हमने परोपकार और पुण्य के लिए अपनी दुकान पर रखा है न कि लाभ के लिए। इनकी खादी की खाकी और सफेद वर्दी तथा सिर पर लगी गांधी टोपी, 'नेता' नुमा अद्भुत प्राणी की याद दिलाती है। वैसे तो इन्हें गरीब वर्ग के लोग ही खरीदते हैं, किंतु नगदऊ न होने पर अच्छे-अच्छे कथित खानदानी और तथाकथित वानी हमारे इसी टोपीधारी की आते हैं जो कि उनका दामाद बनकर कृतार्थ करता है। इस 'माल' की यह रहती है कि यह अफसर से प्राप्त डांट-फटकार रूपी जेवरात, ज्यों का धार्मिक संवादों सहित अपनी पत्नी ओर उछाल देता है। इस 'आइटम' का मूल्य मात्र पैंतीस हजार है। और आप जब पुनः धनवान हो जायें तब इस माल को वापस भी कर सकते हैं। हम अपना कमीशन काटकर, इस दूल्हे को और कहीं बिकवा देंगे। कहिये क्या विचार है, तो बुलवा लूं पंडित और बजवाऊं बाजे!

ग्रेड 'डी' में बेरोजगार बनाम मास्टर' आते हैं। इनमें से अधिकांश शिक्षित हैं जो अब प्रशिक्षित होने का प्रयत्न कर रहे हैं। ये हमारी चित्र-विचित्र, अद्भुत और अनुपम शिक्षा नीति की देन हैं। इनमें से कई प्रथम श्रेणी में एम. ए. और एम. एस-सी. भी कर चुके हैं। किंतु की कमी ने इन्हें सड़क पर घूमने, मांगने और लड़की छेड़ने के लिए स्वतंत्र (बल्कि स्वच्छंद) कर दिया है। इनके में दबी सिगरेट, लंबी जुल्फें और उनमें बसे छोटे-छोटे जीव, इनकी चिर-परिचित पहचान हैं। यदि आप इन्हें अपना दामाद बनाना चाहेंगे तो मैं यह 'माल' आपको 'मुफ्त' में दूंगा, बिना किसी टैक्स के। आखिरकार मैं भी इंसान हूं, भाई!

अंत में शेष बचे दस दूल्हों को मैंने कार की श्रेणी में डाल रखा है। जानते क्यों? क्योंकि न तो इनके पास कार न रोज़गार। इस श्रेणी में अधिकांश छात्र तथा नवोदित साहित्यकार आते हैं, अतः इनसे लोग ऐसे ही बिदकते हैं, जैसे ता से श्रोता और नेता से जनता।

इस श्रेणी के दूल्हों को अपना दामाद ने वाले वीरों को मैं पांच हजार रुपयें ी तरफ से दूंगा (बला तो टले)! य का काम है और मैं ठहरा धार्मिक सी! अतः इतना एहसान तो आप कर ही दूंगा। . . . केवल आपको रहा हूं, और किसी से मत कहियेगा मैं भी इसी श्रेणी का दूल्हा हूं।

चिये, देर न करिये! आज ही हमारी ान से अपनी सुपुत्री के लिए अच्छा-दूल्हा छांटकर ले जाइये। ऐसा सुनहरा सर फिर कहीं, आपको कभी नहीं गा। न तो आपको ऐसे दूल्हे मिलेंगे र न ही ऐसा दूल्हेवाला, जो कौड़ियों मोल अपना बहुमूल्य खज़ाना लुटा गा। माल खत्म होने को है। अतः काउंट और अधिक कर दिया है हमने। भी हमारी दुकान की तरह की ऐसी नें कम ही होंगी, जहां पर कि हर हब, हर जाति, हर भाषा के दूल्हे ते होंगे। गोरे और काले साथ ही दिल-'दूल्हे' हमने पाले हैं। अब आप ालिये और मुझे इजाजत दीजिये।

बी-१२/३८, तुलसी नगर, भोपाल, म. प्र.

□

नव-गीत

एक क्षण तुम और दे दो।
कुछ न बोलो
कुछ कहो मत,
नयन बांहों से
गहो मत,
कोष से
संवेदना के
एक कण ऋण और दे दो।

विवश शब्दों से
छुओ मत
अर्थ दाहों में
जियो मत।
मौन सागर
सीपियों से
एक मणि कण और दे दो।

व्योम-सी
सुधियां अपरिमित,
बिम्ब खंडित
अर्ध निर्मित
नीड से
संदर्भ के फिर।
एक लघु तृण और दे दो।

—बालकृष्ण मिश्र
अस्पताल चौराहा, रायबरेली-
२२९००१, उ. प्र.

□

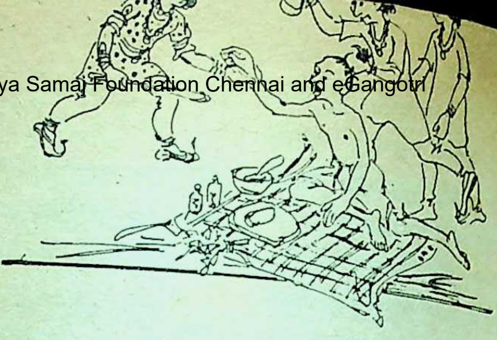

बालकथा

भिखारी से सम्राट्

□ मदनगोपाल

बहुत पुरानी बात है, मगध साम्राज्य के एक बहुत प्रतापी व लोकप्रिय राजा थे। राजा न्यायप्रिय होने के साथ-साथ अनुशासन प्रिय भी थे। उनके एकमात्र पुत्र था पुष्पराज। बचपन में लाड़-प्यार में पलने के कारण राजकुमार पुष्पराज थोड़ा उद्दंड हो गया। राजा ने कई बहुत प्यार से समझाया लेकिन उ कोई प्रभाव न पड़ा।

एक दिन पुष्पराज ने अपने कुछ [illegible] के साथ मिलकर नगर के प्रमुख [illegible] तसक के साथ न केवल अभद्र [illegible]

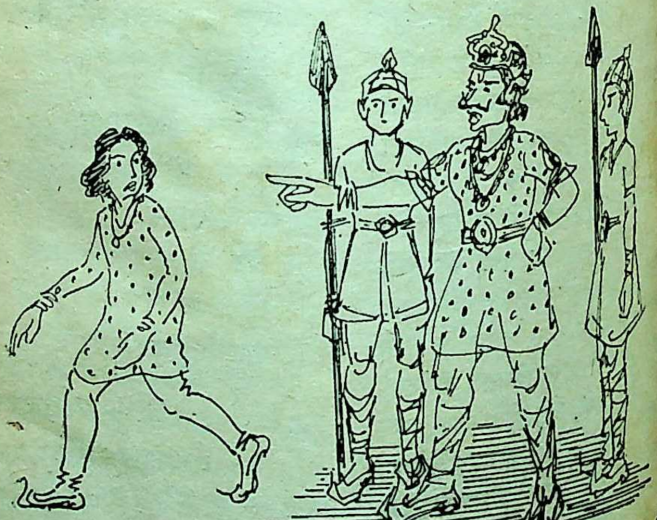

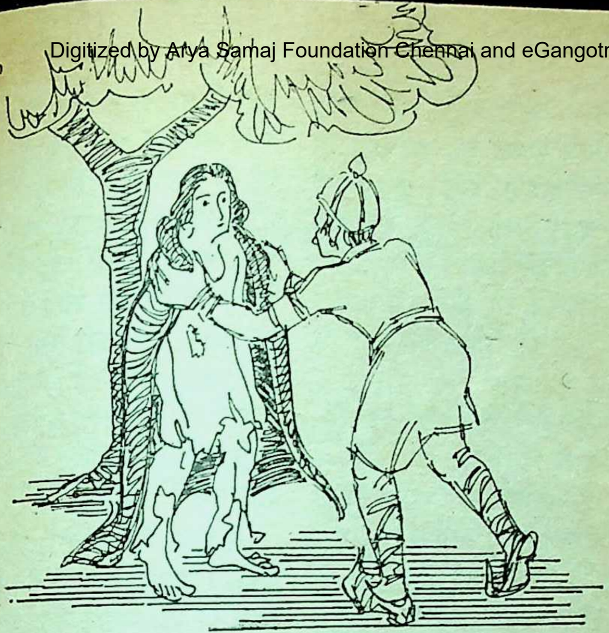

या, बल्कि मारपीट भी की। राजा के न शिकायत पहुंची । न्यायप्रिय राजा लिए अब स्थिति असहनीय बन गयी ा। उसने राजकुमार को देश निकाला दिया। दरबार के लोगों ने समझाने-झाने का प्रयास किया तथा इतना कठोर ड न देने का निवेदन किया । राजा पर न सब बातों का कोई असर न पड़ा, वह ने निर्णय पर अडिग रहा ।

राजा के इस कठोर निर्णय की समूचे ाम्राज्य में प्रशंसा तो हुई, पर निर्णय के ीजे पर सभी लोग दु:खी थे । राज-ुमार पुष्पराज को मगध साम्राज्य की ीमा से बाहर कर दिया गया । कुछ दिन ैन से बीते । एक महीने के भीतर ही ाने के लाले पड़ने लगे । ऐशो-आराम में वह पला था इसलिये शारीरिक श्रम रने का प्रश्न ही नहीं उठता था । आखिर वह भीख मांगकर पेट भरने लगा ।

राजा को कठोर निर्णय लेने में बहुत मानसिक पीड़ा पहुंची थी, परंतु एक न्यायशील राजा होने के कारण उसका यह कर्त्तव्य भी था, जिसे उसने पूरी निष्ठा के साथ पूरा किया । राजा को आशा थी

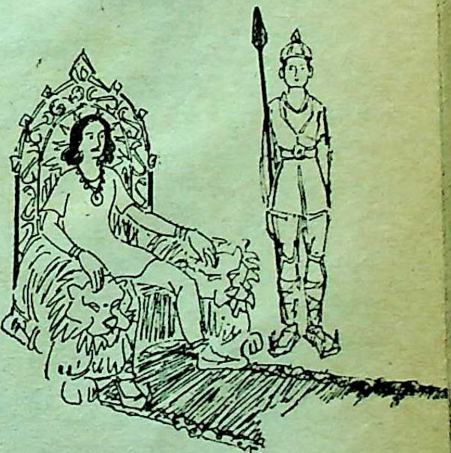

१९८८

कि राजकुमार कुछ महीने इधर-उधर भटकने के बाद वापस आ जायेगा। हो सकता है कठिनाइयां झेलने से उसकी आदतें भी सुधर जायें। कई वर्ष बीत गये, वह वापस नहीं आया।

राजा दिनोंदिन वृद्ध होने लगे। प्रजा भी सोचने लगी कि राजा की मृत्यु के पश्चात् फिर क्या होगा?

प्रजा के कुछ सम्मानीय लोगों का प्रतिनिधिमंडल राजा से मिला। उन लोगों ने राजकुमार की खोज कराने व उसे वापस बुलाने का आग्रह किया। पहले तो राजा उनकी बात से सहमत नहीं हुआ, क्योंकि उसका विचार था कि अयोग्य व्यक्ति, भले ही वह राजकुमार ही क्यों न हो, को राज्य की बागडोर नहीं सौंपी जानी चाहिये।

बाद में वह इस शर्त पर खोज कराने को तैयार हो गया कि यदि राजकुमार की आदतों में सुधार हुआ होगा तभी गद्दी सौंपी जायेगी।

आसपास के राज्यों में राजकुमार की खोज शुरू हुई। दस साल बीत चुके थे, खोज पाना बहुत मुश्किल काम था। कई खोजी दल निराश होकर खाली हाथ लौट आये थे।

अंत में राज्य के सेनापति के नेतृत्व में एक खोजी दल भेजा गया। उसने तेजी से खोज शुरू की। कई महीने भटकने के बाद भी कोई सफलता नहीं मिली। एक दिन ये लोग घूम रहे थे। चौराहे पर भीड़ दिखायी दी। से ये लोग भी कारण जानने के लि बढ़े। वहां एक भिखारी ज़ोर-ज़ोर चीख रहा था—'जाड़ा आनेवाला है, कपड़े चाहिये। मुझे कपड़े दो।' कुछ ने पैसे देने चाहे तो उसने लेने से मना हुए कहा—'पैसा नहीं लूंगा, पैसे ने ही मेरी यह हालत की है। मैं पैसा नहीं भूख लगने पर खाना मांगता हूं। अब आने वाली है इसलिये मैं आप लोगों कपड़ा मांग रहा हूं।'

सेनापति को भिखारी की बातें लगीं। उसने पास आकर देखा तो भिखारी राजकुमार जैसा लगा। सेना ने उसे अपने साथ लिया। अपना उतारकर उसे दे दिया। बातचीत में पता कर लिया कि वह राजकुमार पु राज ही है।

सेनापति ने राजकुमार पुष्पराव राजा को सौंपते हुए कहा—'महा राजकुमार कठिनाइयों व विषम स्थितियों की ज्वाला में तपकर बन गये हैं, हमें आशा है वे आपके उत्तराधिकारी सिद्ध होंगे।'

और फिर राजकुमार पुष्पराज राजा बना दिया गया। वे राजा के बाद भी सादा भोजन व वस्त्र के अतिरिक्त अपना कोई राज्य की आय से नहीं करते थे।

—६०, अनुपम नगर, नौलखा
ग्वालियर-४७४०११ म.

□

क संस्मरण

महाकवि निराला का कुर्ता

☐ मुकुंद दास

त में जन्मे तथा शरद में हमसे बिछुड़ जाने वाले हिन्दी के अमर वि निराला के फक्कड़पन, औघड़ ांतता तथा विद्रोहिणी प्रवृत्ति के ों खट्टे-मीठे संस्मरण आज साहित्य की धरोहर बन गये हैं। ऐसा ही दुर्लभ र्मिक संस्मरण प्रस्तुत है।

ना आज से चालीस वर्ष पूर्व की निरालाजी हितकारिणी महाविद्या- के कविसम्मेलन में भाग लेने पहली बलपुर पधारे। उनकी शक्ल-सूरत रिचित संयोजक युवा-छात्र-नेता जब लेने शाम को स्टेशन पहुंचे तब उन्हें लाजी कहीं नहीं दिखे। हावड़ा- ई मेल के चले जाने के बाद जब सारा ार्म खाली हो गया तब युवकों ने कि एक गौर वर्ण, उन्नत ललाट वाला भरकम दिव्य पुरुष नारियल की से अपनी पुरानी दरी का छोटा-सा र बांधे तथा जीर्ण-शीर्ण कुर्ता-धोती एक कोने में खड़ा है। युवकों ने साहस उस महापुरुष से पूछा, 'आप कौन और कहाँ से आये हैं?' जवाब में गुरु र स्वर में उस व्यक्ति ने कहा, 'मैं ाला हूं। इलाहाबाद से आया हूं। यहां के बच्चों ने मुझे कविता पाठ के लिए बुलाया है।'

बस यह सुनते ही युवकों ने प्रसन्न होकर 'निरालाजी की जय' के गगन-भेदी नारों से सारा प्लेटफार्म गुंजाते हुए महाकवि को फूलमालाओं से लाद दिया। स्टेशन के बाहर युवा छात्र नेता सुशील कुमार पटैरिया की शहर की सबसे महंगी सुन्दर कार खड़ी थी जिस पर बैठाकर निरालाजी को फुहारा क्षेत्र में स्थित खजांचीजी की कोठी में ठहरा दिया गया। उधर कोठी में कवि के नाश्ते तथा भोजन आदि का ठाठदार प्रबंध हो रहा था और इधर सभी युवक धर्मसंकट में थे कि वे पुराना फटा कुर्ता पहने निरालाजी को कविसम्मेलन में कैसे ले जायें? जनता क्या कहेगी? निरालाजी के पास दूसरे कपड़े भी नहीं थे। युवकों को कवि केशवप्रसादजी पाठक ने पहले से ही सावधान कर दिया था कि निरालाजी बड़े स्वाभिमानी और अक्खड़ स्वभाव के हैं। किसी का लिया-दिया लेते-देते नहीं हैं। उनकी शान के खिलाफ कुछ नहीं करना, वरना मार-पीट कर बैठेंगे। किंकर्त्तव्यविमूढ़ युवक परेशान थे क्योंकि कविसम्मेलन

का समय हो रहा था। तभी एक दो युवक साहस करके चुपचाप फुहारे के आसपास की कपड़ों की दुकानों में किसी लंबे-चौड़े रेडीमेड कुर्ते की तलाश में निकल पड़े। खोजते-खोजते वे एक दुकान में जा पहुंचे जहां शो केस में सफेद सिल्क का एक काफी लंबा-चौड़ा कुर्ता टंगा हुआ था। युवकों ने उसी समय दुकानदार से कुर्ते का दाम तय करते हुए उससे कहा, 'यह कुर्ता हमने खरीद लिया है मगर अभी इसे इसी प्रकार टंगा रहने दो। हम सब अभी आते हैं।' महाकवि का कुर्ता बदलने की पूर्व निश्चित योजनानुसार कवि-सम्मेलन के लिये रात्रि आठ बजे उत्साही छात्रों का दल निरालाजी को कार में बैठाकर खजांचीजी कोठी से चल पड़ा।

उन्होंने जानबूझकर कार को मोड़कर उसे कुर्ते की दुकान के सामने रोक दिया। कार के रुकते ही श्री सुशील पटैरिया ने अत्यंत विनम्र स्वर में निरालाजी से पूछा, 'निरालाजी, यह कुर्ता आपके लिए कैसा रहेगा?' निरालाजी बच्चों की तरह खिलखिलाते हुए बोल पड़े, 'अरे हां, बच्चो! मेरा कुर्ता तो फटा हुआ है।'

युवकों की खुशी का ठिकाना न रहा। ज्योंही निरालाजी ने कार में बैठे ही बैठे अपना कुर्ता उतारकर नया कुर्ता पहन लिया त्योंही कार फर्राटे से समारोह स्थल की ओर रवाना हो गयी।

महाविद्यालय के विशाल मंच पर सेठ गोविंददास, ब्यौहार राजेंद्र सिंह, केशवप्रसाद पाठक, भवानीप्रसाद तिवारी,
प्रसाद खरे तथा अनेक प्रसिद्ध साहि
एवं कवि उपस्थित थे। मंच के
स्थित प्रांगण में हजारों श्रोता मौजूद
निराला के दर्शन तथा काव्य-श्रव
प्यासे थे। जैसे ही निरालाजी मंच
पहुंचे जनता ने भारी करतल ध्वनि
जयजयकार से उनका स्वागत कि
निरालाजी गोविंददासजी के पा
पालथी मारकर बैठ गये। कविसम्मे
प्रारंभ हुआ। अपना क्रम आने पर नि
लाजी खड़े हो गये और माइक पर
हुए अपनी प्रसिद्ध कविता -'जागो
एक बार' सुनाने लगे। मंत्रमुग्ध श्रो
को अत्यंत तन्मय होकर कविता सु
सुनाते निराला ने अचानक अपने
हाथ का झटका मारा कि उनके
की दाहिनी जेब फटकर मंच पर जा
संयोजक छात्रनेता जहां एक ओर नि
के ओजस्वी काव्य-पाठ से धन्य हो
वहीं उन्हें उनके कुर्ते के फटने का
दुख हो रहा था कि जन-जन के
निराला फटा कुर्ता पहनकर जबलपुर
और फटा कुर्ता पहने ही चले गये।
नहीं जाते-जाते निरालाजी अपने
पाठ के पारिश्रमिक का सारा पैसा
सुभद्राकुमारी चौहान के बच्चों को
सुभद्राजी उन दिनों स्वतंत्रता
भाग लेने के कारण जेल में थीं।

–डी. बी.
हनुमान ताल, जबलपुर

सुभाषित

अप्रियवचनदरिद्रैः प्रियवचनाढ्यैः स्वदारपरितुष्टैः ।
परपरिवादनिवृत्तैः क्वचित्क्वचिन्मण्डिता वसुधा ॥

इस धराधाम को सुशोभित करने वाले ऐसे महापुरुष कहीं-कहीं ही होते हैं, जो य बोलने में दरिद्री और प्रिय बोलने में धनी हों, अपनी स्त्री से ही सदैव संतुष्ट और ता से दूर रहने वाले हों।

कदर्थितस्यापि हि धैर्यवृत्तेर्न शक्यते धैर्यगुणः प्रमार्ष्टुम् ।
अधोमुखस्यापि कृतस्य वह्नेर्नाधः शिखा याति कदाचिदेव ॥

धीर पुरुष अत्यन्त दुखित होने पर भी अपना धीरज नहीं खोता है। जिस प्रकार ती हुई अग्नि को उलट देने पर भी उसकी शिखा कभी नीचे की तरफ नहीं जाती, सदैव की ओर ही रहती है।

एकेनापि हि शूरेण पादाक्रान्तं महीतलम् ।
क्रियते भास्करेणैव स्फारस्फुरित तेजसा ॥

जिस तरह अकेला सूर्य अपनी देदीप्यमान किरणों से सारे संसार को प्रकाशित ता है, उसी प्रकार एक ही शूरवीर अपने असाधारण पराक्रम से इस भूमंडल पर अपना व प्रकट कर सकता है।

कान्ताकटाक्षविशिखा न लुनन्ति यस्य,
चित्तं न निर्दहति कोपकृशानुतापः ।
कर्षन्ति भूरिविषयाश्च न लोभपाशै-
र्लोकत्रयं जयति कृत्स्नमिदं स धीरः ॥

जिस पुरुष का हृदय सुंदरियों के नेत्र-बाणों से घायल न हो, जिसका अंतःकरण की अग्नि से तपता न हो और जिसके मन को विषयों के लोभपाश अपनी तरफ न सकें, वह धीर पुरुष तीनों लोकों को जीतने में समर्थ होता है।

वह्निस्तस्य जलायते जलनिधिः कुल्यायते तत्क्षणात्,
मेरुः स्वल्पशिलायते मृगपतिः सद्यः कुरंगायते ।
व्यालो माल्यगुणायते विषरसः पीयूषवर्षायते,
यस्याङ्गेऽखिललोकवल्लभतमं शीलं समुन्मीलति ॥

जो मनुष्य संपूर्ण जगत् को मोहित करने वाले शील का स्वामी है, उसके लिये अग्नि के समान, समुद्र नहर के समान, सुमेरु छोटी शिला के समान, मृगराज सिंह हरिण के न, सर्प पुष्पमाला के समान और विष अमृत के समान गुण धारण कर लेते हैं।

(भर्तृहरि कृत 'नीतिशतक' से)

दो क्षण हंस न लें!

मंत्रीजी के गांव में भ्रमण के समय एक ग्रामीण ने दूसरे से पूछा, 'मंत्रीजी इस सूखा क्षेत्र का दौरा करने आये हैं तो फिर यह हरा चश्मा क्यों पहने हैं ?'

'हो सकता है इनसे सूखे का दृश्य न देखा जाता हो। इस चश्मे से चारों तरफ हरियाली ही नजर आती होगी।' दूसरे ग्रामीण ने कहा।

ooo

एक व्यक्ति ने अपने कवि मित्र से पूछा, 'यार, क्या बात है; इधर तुम बहुत दुखी दिखायी दे रहे हो ?'

'क्या बताऊं, यार, मेरी कविता सुनने के लिए कोई श्रोता नहीं मिल रहा है।' कवि ने बताया।

'तो तुम शादी क्यों नहीं कर लेते ? सुनने वाली तुम्हारे अधीन ही रहेगी ?' व्यक्ति ने सुझाव दिया।

'तो तुम चाहते हो कि एक दुख के निवारण के लिए मैं दूसरा दुख मोल लें लूं ?' कवि ने नाक-भौं सिकोड़ते हुए कहा।

पत्नी ने पूछा, 'क्यों जी ? पहले तु साल रामलीला में रावण का 'रोल' थे; तब तो मुहल्ले की लड़कियां औरतें तुम से डरती रही होंगी ?'

'हां, इसीलिए तो वे सभी तिनके ओट में मुझसे बातें करती थीं,' प मुस्कराकर कहा।

ooo

पति-पत्नी एक मित्र के घर दो बिताकर लौटे तो रास्ते में पति ने से कहा, 'हम लोगों के यहां आने का प णाम अच्छा रहा।'

'वह कैसे ?' पत्नी ने पूछा।

'तुमने देखा नहीं, जब हम व चलने लगे थे, तब उन लोगों के चेहरे से किस तरह चमक उठे थे ?' प कहा।

ooo

'सुना है, शर्माजी, आपमें और की पत्नी में कहा-सुनी हो गयी है ?'

'जी हां, कहा तो मेरी पत्नी ने है सुना मैंने।'

—डॉ. मूल

□

मुद्रक-प्रकाशक द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बंबई-४०० ००
के लिए प्रकाशित तथा श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग

त: १९८८

: रु. ५.००

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

हिन्दी डाइजेस्ट

110166

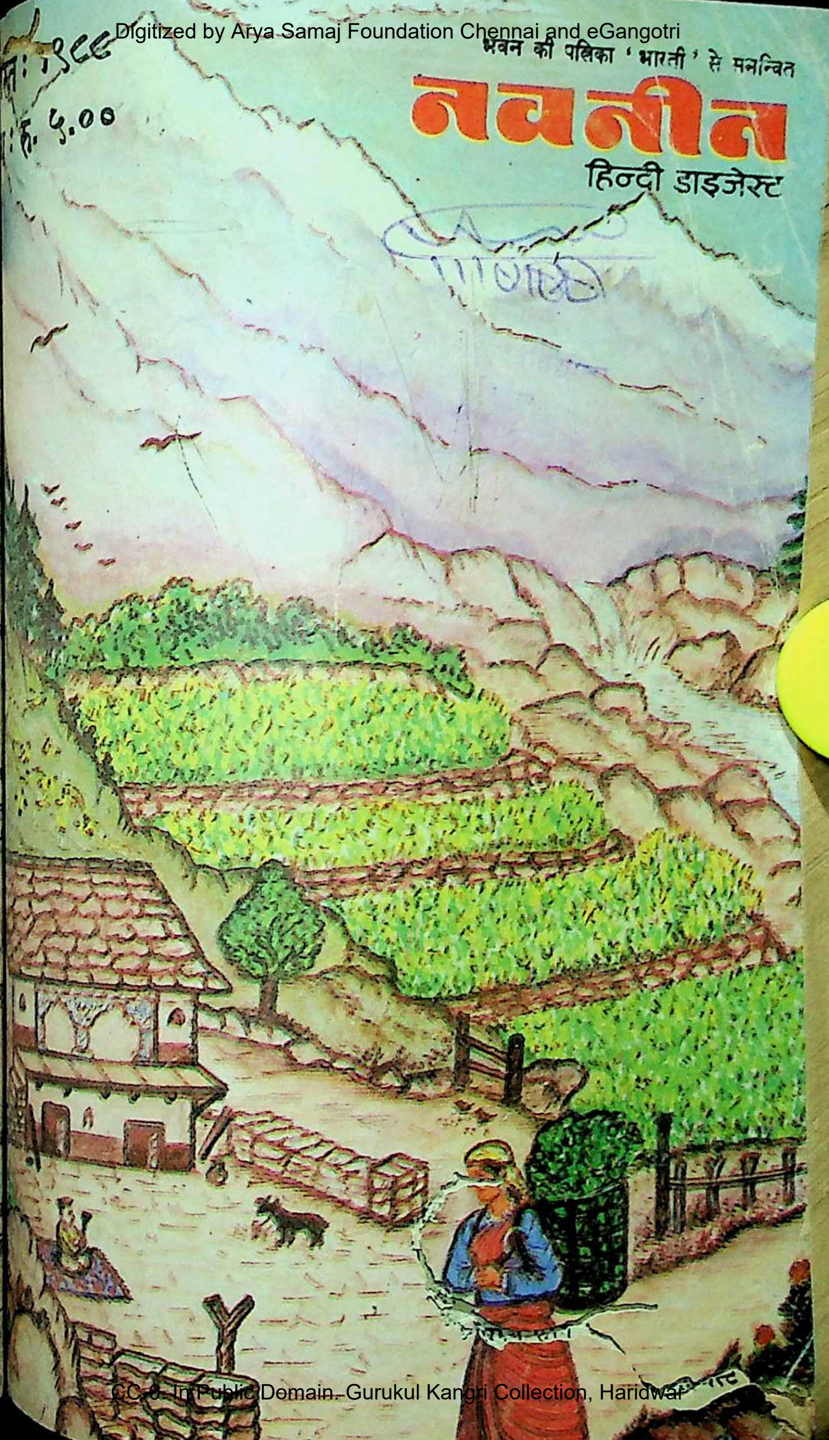

पं० द्वारका प्रसाद शर्मा (वैद्यभूष

की अनुपम भेंट आपकी आस्था

हिमताज तैल

आपका पारिवारिक

हिमताज एक लाभ अनेक

हिमताज तैल एक अपूर्व 'आयुर्वेदिक' फार्मूला द्वारा बनाया गया है, जो सिर दर्द को दूर कर, आंखों की रोशनी बढ़ाता है एवं मस्तिस्क की शीतलता प्रदान कर दिन भर तनावमुक्त एवं प्रफुल्लित रखता है। यह तैल वालों की जड़ों को आवश्यक तत्व प्रदान कर उन्हें मजबूत लम्बा, घना, एवं काला बनाये रखने में सहायक है, जन-जन की पसन्द 'आयुर्वेदिक'

हिमताज तैल

हिमताज तैल
पं० द्वारका प्रसाद शर्मा
वैद्य भूषण

कब्ज नाशक और स्वास्थ्य रक्षक

प्रत्येक पैक के अन्दर सेवन विधि

कब्ज संहार

मन्दाग्नि, अजीर्ण अरुचि, पेटदर्द, अम्लपित्त, कब्ज को दू
बढ़ाता है और पेट में बायु (गैस) का बनना, वार-वार द
महसूस करना दूर कर खुलासा दस्त लाता है।

आयुर्वेदिक औषधियों के निर्माता

पं० द्वारका प्रसाद शर्मा
१३१/१, महात्मा गाँधी रोड, (बांगड़ बिल्डिंग)
कलकत्ता- ७

पोस्ट पार्सल के लिये इस पते पर पत्र व्यवहार करें
एच. टी. कारपोरेशन डी ३९/१५ नई सड़क वारा

गु० कां० विश्वविद्यालय
हरिद्वार

पत्र-दृष्टि

र नवनीत के पिछले चार - पांच ों को मैं बराबर देखता आ रहा त्रिका को एक बार उठा लेने पर े आखिरी पन्ने तक पहुंचे बिना बंद े का मन नहीं होता । विषय-वैविध्य थ-साथ **नवनीत** में दिन-प्रतिदिन े बड़े रोचक लेख एवं कविताएं ती हैं, जो पाठक के ज्ञानवर्धन के अति- मनोरंजन भी बड़े स्वस्थ रूप में करती हैं । पत्रिका का स्वरूप आपके त्व में उत्तरोत्तर निखरता जा रहा है। संतुलित पत्रिका में सबके लिए मिल जाता है—बच्चे, युवा और बुड्ढे, ुरुष सभी को। इसीलिए **नवनीत** इतनी य होती जा रही है। चित्रों एवं रेखा- ों से पत्रिका की छवि एवं आकर्षण और ढ़ता जा रहा है। अच्छे किस्म का लगाने से उसका स्वरूप और भी होगा। **—डा. राजेन्द्र वाजपेयी, बंबई**

ooo

आज आधुनिकता एवं नवीनता के व्यामोह में पड़कर प्राचीन हमसे छूटता एवं टूटता जा रहा है। हम प्राचीनता के अपने गौरव को समझकर उससे पुनः जुड़ सकें, इसके लिए **नवनीत** का प्रयास निश्चय ही प्रशस्य है ।

जून का अंक देखा 'स्वर भरने वाले राजस्थानी लोक वाद्य' लेख से जहां राजस्थान के गांवों में बिखरी लोक-कला संपदा का ज्ञान हुआ, वहीं 'शंख और घंटाध्वनि से रोगों का नाश' से अपने प्राचीन मंगल वाद्यों के गौरव रहस्य का बोध हुआ । 'पर्यावरण-संरक्षण की अवधारणा' से हमारी तंद्रा भंग होने की आशा-किरण चमकेगी, ऐसी आशा की जा सकती है। राष्ट्रकवि श्री सोहनलाल द्विवेदी का संस्मरण जहां उत्साह दे रहा है, वहीं उनका यह पद—

जोश जब तक खून के हर क़तरे में है,
कौन कहता है वतन की आबरू खतरे में है ।

नव-जीवन प्रदान कर रहा है। **नवनीत** का पांचजन्य घोष वर्तमान के अर्जुन का मोह भंग कर सकेगा, ऐसी हमें आशा है ।

—वाचस्पति मिश्र, मेरठ, उ. प्र.

ooo

नवनीत की बहुत पुरानी पाठिका और प्रशंसिका हूं। अभी जून '८८ का अंक पढ़कर समाप्त किया है । स्तरीय साहित्यिक रचनाएं और उदात्त जीवन-मूल्यों से भरपूर कहानियां पढ़कर मन में एक अद्भुत आर्द्रता का अंकुरण होने लगता है । इतने

कम मूल्य में इतना उच्च स्तरीय साहित्य और कहीं उपलब्ध नहीं होता है । आप बधाई के पात्र हैं ।

जून के इस अंक में दो रचनाएं बहुत ही ज्ञानवर्धक लगीं, 'दो मुगलकालीन सोने की मुहरें' और 'प्राकृतिक चिकित्सा की अनोखी संस्था' । संत कवि रैदास और सुकरात के पुण्य-स्मरण के लेख भी बहुत अच्छे लगे । सामाजिक विचारधारा के अंतर्गत–'वेदों में विधवा-विवाह का समर्थन' वाला लेख शीर्षक को सार्थक नहीं करता है । इसमें केवल अंतिम पैराग्राफ में ही विधवा-विवाह की पुष्टि में थोड़ा-सा लिखा गया है । और अधिक उद्धरण देना श्रेयस्कर होता, अस्तु । **नवनीत** के माध्यम से श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यासों के अंश पढ़ने को मिल सकें, तो बड़ा संतोष होगा ।

–मंगला नारायण, भोपाल, म. प्र.

000

नवनीत भारतीय विद्या भवन की एक उत्कृष्ट पत्रिका है । मैंने **नवनीत** के अब तक सिर्फ दो अंक पढ़े हैं । यह पत्रिका अब मेरे मन में धाक जमा चुकी है । मैं इसे प्रत्येक माह पढ़ना चाहता हूं ।

–अशोककुमार, इंदौर, म. प्र.

000

नवनीत का जून '८८ का अंक बेहद रोचक, ज्ञानवर्धक एवं विविधतापूर्ण लगा । जी. एन. व्यास ने 'रामायण की शुरूआत' विषय पर सही समय पर सही कलम चलायी । धनंजय अवस्थी ने अपनी कलम से जाने-माने राष्ट्रकवि पंडित द्विवेदी के बारे में अच्छी खासी हमें दी । वास्तव में द्विवेदीजी एक कवि थे । द्विवेदीजी की कविताओं कविता को बार-बार पढ़ने को जी

वंदना के इन स्वरों में एक
मेरा मिला लो
हों जहां बलि शीश अगणित एक
मेरा मिला लो।

डा. रामप्रसाद मिश्र का लेख 'पं. देव मिश्र' के काव्य में वास्तव में झलकती है । इसके साथ ही शकुंतला की कहानी 'उम्र क़ैद' अच्छी लगी । शीतांशु भारद्वाज की कहानी 'वे और भी काफी रोचक लगी । मधुकर ने अपनी कहानी 'नारियल का माध्यम से नारियल के महत्व, उसके को पाठक वर्ग के समक्ष प्रस्तुत किया

–संजीवकुमार चंदेल, अकलतरा,

000

आज जब दोस्त के हाथों से **नवनीत** का अध्ययन किया तो दिल हो गया । क्योंकि **नवनीत** में साहित्य सभी विधाओं का समावेश मिला । कविता, लेख, संस्मरण, लघुकथा, प्रसंग आदि-आदि से लेकर बाल सामग्री का भी समावेश है । सबसे बात **नवनीत** में यह देखने को मिली भौतिकता से ज्यादा इसमें वास्तविक दर्शन हुए ।

'भारतीय संस्कृति में पर्यावरण

अवधारणा' शुकदेव प्रसाद का लेख विकता के समीप लगा। क्योंकि उसमें के वास्तविक पहलू 'प्रकृति' का ही सुंदर ढंग से कई रूपों में वर्णन गया है।

अजय प्रसून का गीत, अंजलि पांडेय कविता 'तलाश' एवं द्विवेदीजी की 'सदानीरा' पसंद आयी। मधुकर की बालकथा से नारियल की (खोज) के बारे में जानकारी मिली।

शंकर 'सूर्य', खातेगांव-४५५३३६

०००

का जून '८८ का अंक मिला। की तरह संग्रहणीय है। 'भारतीय में पर्यावरण संरक्षण' एवं 'वेदों विवाह का समर्थन' जैसे निबंध पाश में कसमसाते वर्तमान युग युग अथवा अंधज्ञान युग) का युग से मुक्ति मंत्र करने का परामर्श है। ऐसी सामग्री के चयन हेतु आप के पात्र हैं।

-शिवगोपाल शर्मा, गया, बिहार

०००

के कागज, छपाई में काफी नजर आता है। यह उसकी का सूचक है। **नवनीत** जून अंक कहानी 'प्रेत', बालकथा 'नारियल एवं उर्दू कहानी 'ड्रेसिंग गाउन' लगी।

नवनीत में लेखकों के लेख के यदि उनका छाया चित्र, संक्षिप्त परिचय और दिया जाये तो बहुत ही उचित होगा, जबकि लेखकों के पते देने की कोई आवश्यकता नहीं होती।

—हेमराज श्रीवास्तव, छतरपुर, म. प्र.

०००

मैंने **नवनीत** का जून अंक पढ़ा, बहुत अच्छा लगा। मैंने सोचा मुझे जिस मंजिल की तलाश है, वह मुझे मिल गयी। इस पत्रिका ने मेरे तन-मन को आनंदित कर दिया। जून अंक में प्रकाशित डा. शीतांशु भारद्वाज की कहानी 'वे और वे' और अंजलि पांडेय की कविता 'तलाश' अच्छी लगी। संतकवि रैदास के बारे में विस्तृत जानकारी मिली। धनंजय अवस्थी का लेख 'राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी' सराहनीय है। इस पत्रिका को मैं बराबर पढ़ती हूं, फिर भी जी नहीं भरता।

—निशा मिश्रा, लखनऊ, उ. प्र.

०००

इरविन स्टोन का अब्राहम लिंकन पर लेख पढ़कर बड़ा आनंद आया। हरिमोहन शर्मा ने लेख का रूपांतर हूबहू कर दिया। यूं लग रहा था जैसे कोई नाटक देख रहे हों। इसके लिए रूपांतरकार शर्माजी बधाई के पात्र हैं। **—नूर हुसैन भाटी,**

रामगढ़ सीकर, राजस्थान

०००

नवनीत का जून '८८ का अंक पढ़ा। यथा नाम तथा गुण: उक्ति को चरितार्थ करता हुआ यह अंक हृदयस्पर्शी रचनाओं

(शेषांश पृष्ठ ७ पर)

नवनीत

संस्थापक कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ३७, अंक ८

श्रीगोपाल ने
नवनीत : स्थापना १९
अगस्त १९

पत्र-वृष्टि
कथा राम की, व्यथा मानव की हरीन्द्र दवे
मासिक भविष्यफल : अगस्त १९८८ पं. वी. के. तिवारी
पं. लोचनप्रसाद पांडेय मुकुटधर पांडेय
सत्संग अरुणा शर्मा
आग ऐसी कि बुझाये न बुझे रामपाल सिंह
ग्रंथलोक विक्रम, मिश्र, चौहान, खडसे
प्रार्थना ... ...
जानकीनाथ सहाय करें जब, कौन बिगाड़ करे नर तेरो दुर्गाप्रसाद मंडेलिया
बरसहिं जलद भूमि नियराये रमेश तिवारी 'वीरान'
वर्षा के बादल (कविता) वीरेश कात्यायन
ललित कलाएं और संगीत डा. अंबाशंकर नागर
ग़ज़ल राकेश भ्रमर
स्वाधीनता संग्राम में नौटंकी का योगदान राजकुमार श्रीवास्तव
रमेश कृष्णन् हरिमोहन शर्मा
पारस (कविता) रामेश्वरदयाल दुबे
टूटने का दर्द (कहानी) डा. सुरेंद्रप्रसाद साह
पं. अमृतलाल नागर से बातचीत प्रस्तोता : के. के. सिंह
स्पर्श (हिंदी कहानी) प्रेम पाठक

ाडा यात्रा : एक स्मृति (यात्रा)	डा. ए. एल. श्रीवास्तव	८५
ा इस जन्म तो . . . (कविता)	कन्हैयालाल बाजपेयी	९१
हतीज के भीतर और बाहर (परिचर्चा)	आयोजक : हरिसिंह 'हरीश'	९२
(आरमेनियाई कहानी)	सीरो ख़ानजादेन	९७
	डॉ. गणेशदत्त सारस्वत	१०३
ी युवती (स्पेनिश कहानी)	रिचर्ड सेल्जर	१०४
क्का का कुत्ता (पाकिस्तानी हास्य-कथा)	मुहम्मद यूनिस हसरत	१०८
ा-पिता को सहारा दें : दुत्कारें नहीं	मंजु नागोरी	११४
की कुछ किरणें (सार-संक्षेप)	हंस	११७
ाएं	सावित्री परमार	१२८
े (बाल कहानी)	सुरजीत	१३२
क मंच	. . . .	१३५
ी व्यवहार-संहिता	सुधीर शाह	१४०
संस्कृति में शंख का महत्व	पं. बाबूलाल जोशी	१४२
हंस न लें ?	झूलन सिंह	१४४

आवरण - चित्र : गढ़वाल का एक दृश्य [बी. मोहन नेगी]
त्र-सज्जा : ओके, शेणै, विनोद दुबे, सतीश चव्हाण, कु. नलिनी मिश्रा
: भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई-७ फोन : ८११४४६२

चित्र :
सतीश चव्हाण

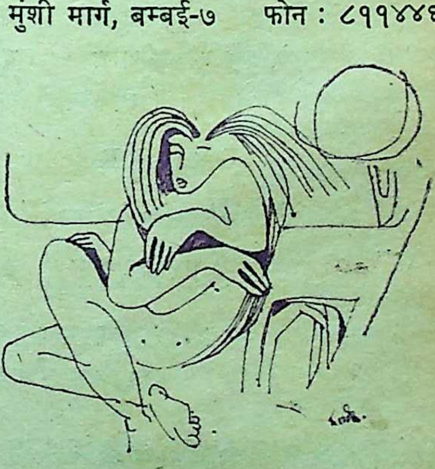

* * *

On This auspicious occasian, we are happy to announce the

A SUBSIDIZED EDITION OF

The Complete works of swami vivekananda
(In 8 volumes, each of about 550 pages)

Subsidized	price	Rs 100/-
pre - publication	price	Rs 90/-

(Postage Rs 15/-extra)

विवेकानन्द साहित्य - सस्ता संस्करण

(10 खंडों में, प्रत्येक खंड लगभग ४५० पृष्ठों का)

मूल्य	रु. १००/-
अग्रिम बुकिंग मूल्य	रु. ९०/-

(डाकव्यय रु. १५/-)

Date of Release 12 January 1989

For detailed Booklist, please write to :

ADVAITA ASHRAMA
5 DEHI ENTALLY ROAD
CALCUTTA 700 014

* * *

(पृष्ठ ३ का शेषांश)

रहा। श्री सुरेंद्रसिंह गौर की प्रेत' जो वात्सल्य और ममता से है एवं अंधविश्वासों का पर्दाफाश है, अच्छी लगी। सुश्री शकुंतला वर्मा कहानी 'उम्र कैद' जिसमें दायित्व करती एक समर्पित युवती का क्रंदन पसंद आयी। श्रेष्ठ रचनाओं के हेतु आपका बार-बार अभिनंदन।

—कमल त्रिपाठी, सागर, म. प्र.

०००

नीत का जून अंक पढ़ा। मैं **नवनीत** नियमित पाठिका रही हूं। 'उम्र कैद' शकुंतला वर्मा) कहानी हृदय के कृत कर गयी। नारी जीवन की आज भी यही विडंबना है। 'प्रेत' सिंह गौर) कहानी अंधविश्वास करता है। 'ड्रेसिंग गाउन' उर्दू कहानी अहमद अब्बास की) मनोवैज्ञा- आधार पर मानव के क्रिया-कलापों आकलन है।

नेश्वरी वाजपेयी, इलाहाबाद, उ. प्र.

०००

नवनीत का नवीन पाठक हूं। यह पहली बार सुलभ हो सकी। पढ़कर हुई। मैंने जब **नवनीत** पत्रिका पुस्तकालय में देखा और उसकी कविताएं, लेख आदि पढ़े तो पसंद आये। वास्तव में **नवनीत** एवं रोचक पत्रिका है। जहां में आर्थिक विषयों से संबंधित लेख होते हैं, वहीं धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक विषयों का उत्कृष्ट समावेश होता है।

—नारायणप्रसाद बरेठ, अकलतरा, म. प्र.

०००

नवनीत जून '८८ का अंक भारतीय परिवेश में सर्वथा ग्रहण करने योग्य है। यह हर्ष का विषय है कि इस पत्रिका में नयी प्रतिभाओं को यथोचित स्थान दिया जाता है।

सुश्री अंजलि पांडेय की कविता 'तलाश' रुचिकर लगी। कविता में भारतीय जनमानस की व्यथा पर गहरी चिंता व्यक्त की गयी है। डा. अजय प्रसून का गीत भी पठनीय है। डा. रामशंकर द्विवेदी की कविता 'सदानीरा' पढ़कर ऐसा लगा कि अभी भी समाज में सद्विचार एवं उच्चाशयता कायम है।

—जे. एन. मिश्र, लखनऊ, उ. प्र.

०००

जुलाई १९८८ के **नवनीत** में डा. श्याम सिंह 'शशि' की रचना 'दस द्वार' बहुत पसंद आयी। इस रचना में ताज़गी है और वह सब कुछ है, जो 'चेस्ट पोयट्री' में होना चाहिये।

'जब वियोगी हरि को देश निकाला मिला' अच्छा लेख है। वियोगीजी का व्यक्तित्व खूब उभरा है। मगर इस लेख में वियोगी हरि का चित्र न देकर आपने लेख को एक प्रकार से अपूर्ण बना दिया है। इस प्रकार के लेखों में संबद्ध चित्रों का अभाव पाठक को खलता है।

—सर जौनसारी, देहरादून, उ. प्र.

सांस्कृतिक निरूपण–२३

कथा राम की, व्यथा मानव

हरीन्द्र

वाल्मीकि के राम मनुष्य हैं। मानव-सहज भावनाओं से वे परे नहीं हैं। हमारे समझ-बूझकर लिये हुए निर्णय में भी जब विघ्न उपस्थित हों तब निर्णय के लिए जो निमित्त बने हैं, उनका दोष निकालने में मनुष्य कुशल होता है। राम ने शायद पितृ-आज्ञा पालन के लिए वनवास स्वीकार किया था, किंतु बाद में वन से लौट आने के पर्याप्त कारण मिल गये थे। भरत स्वयं उन्हें लौटाने आया था। फिर भी दंडकारण्य में 'भैरवनाद' से भी क्रूर राक्षस विराध वैदेही को अपने अंक में पकड़कर (अंकेनादाय वैदेही) राम तथा लक्ष्मण को ललकारता है, तब राम यह सोचने के बदले कि राक्षस का सामना कैसे करें, लक्ष्मण के आगे माता कैकेयी के प्रति अपना रोष प्रकट करते हैं—

अत्यन्त सुख संवृद्धां राजपुत्रीं यशस्विनीम्
यदभिप्रेतमस्मासु प्रियंवरवृतं च यत्
कैकेयास्तु सुसंवृत्तं क्षिप्रमद्यैव लक्ष्मण
या न तुष्यति राज्येन पुत्रार्थे दीर्घदर्शिनी

(अर. २-१८-१९)

अत्यधिक सुख में पली हुई यशस्विनी राजकुमारी की ऐसी दशा! वन में हम दुखी हों यही कैकेयी की इच्छा थी। उसे मात्र
अपने बेटे के लिए राज्य ही नहीं
था। हम पर आज ऐसे दुख टूट पड़े
कैकेयी के मनोरथ तो पूरे हो गये।

लक्ष्मण भी भूला नहीं : वह विरा
सामना करने की बात तो कहता है
किस तरह?

राज्यकामो मम क्रोधो भरते यो
तं विराधे विमोक्ष्यामि वज्री वज्रमिव

(अर.

राज्यलोभी भरत पर मुझे जो
चढ़ा है वह क्रोध मैं अब इस विराध
आजमाऊंगा—इंद्र पर्वत पर अपने
जिस तरह बार करते हैं, इस तरह

भरत राज्यलोभी नहीं है। वह
पादुका लेकर नंदिग्राम में निवास
वाला है, यह जानने के बाद लक्ष्मण
वचन बोल रहा है। वाल्मीकि ने ऐसा
क्यों रखा? विपत्ति में मानव स्वभाव
देता है यही दिखाने के लिए? वैसे
ऐश्वर्य का गान भी कवि उसी तरह
लेते हैं। राम-सीता और लक्ष्मण
शरभंग मुनि के आश्रम में जाते हैं
शरभंग ऋषि कहते हैं: 'आपके जैसे
महात्मा के दर्शन से मैं स्वर्गलोक

ऊपर के ब्रह्मलोक की प्राप्ति करूंगा। उसे स्वीकारते नहीं।

जवाब देते हैं :

वाहरिष्यामि सर्वाल्लोकान् महामुने
त्वहमच्छामि प्रदिष्टमिह कानने
(अर. ५-३३)

हे महामुनि, मैं स्वय आपको सर्व लोक करवा दूंगा। अभी तो मैं इस दुर्गम में आपके बताये स्थान पर वास करना हूं।

तस्वी ऋषि को स्वर्गलोक और ब्रह्मलोक की प्राप्ति करवा देनेवाले राम अभी अपने निवास के लिए याचना कर रहे अभी-अभी कैकेयी तथा भरत की निंदा अभी ही ऐसी याचना ! राम के वीय स्वरूप को उसके सब पहलुओं से उभारने का प्रयास कवि रहे हैं।

सुतीक्ष्ण ऋषि के आश्रम में भी संवाद दुहराया जाता है। राम हैं मैं आपको समस्त लोकों की कराऊंगा, अभी तो मेरे निवास बारे में मार्गदर्शन करें। सुतीक्ष्ण अपने ही आश्रम में निवास को कहते हैं, किंतु राम कहते मैं यहां पशु-पक्षियों को अपने से आहत करूं तो आपका अपमान होगा, इसलिए मैं आश्रम में नहीं रहूंगा।'

यहां भी विरोधाभास है। राम कहां बनाये ऐसा सवाल है, किंतु ऋषि उत्तर देते हैं

बीच में सीता-राम का एक सूचक संवाद आया है। राम ने ऋषियों को राक्षसों से रक्षा करने का वचन दिया वहां सीता उपस्थित हैं। फिर भी सीता राम से कहती हैं : 'पुरुष में काम के कारण तीन महान दोष संभवित हैं; उसमें प्रथम है मिथ्या भाषण, और यह व्यसन तो आपको कभी हुआ नहीं और होगा नहीं। पर स्त्री-गमन, यह दूसरा बड़ा दोष है। किंतु उसका तो आप स्वप्न में भी विचार नहीं करेंगे। तीसरा महादोष है :' विना वैरं च रौद्रता।' विना दुश्मनी के दूसरों के प्रति रुद्रता।'

और फिर शस्त्र रखनेवाले तपस्वियों

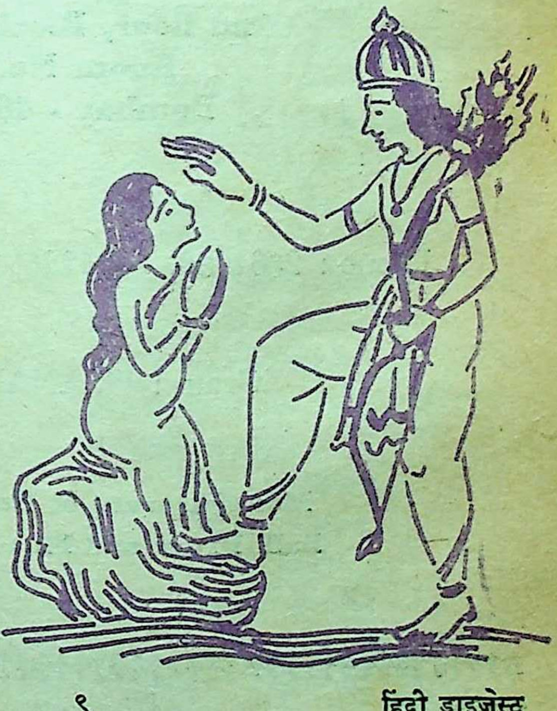

With best Compliments
from

MEHTA PHARMACEUTICAL INDUSTRIES

79, Shamaldas Gandhi Marg
Devkaran Mansion
Stair Case No. 1
2nd floor, Block No. 7
Room No. 1,
Bombay - 400 002

Phone : 2864086, 2864226, 2864003, 2864890

Gram : "VANADIUM"

Manufacturers & Exporters of
Bulk Drugs and Fine Chemicals.

ते रौद्रकर्म को ओर प्रवृत्त होती है । उदाहरण देते हुए सीता कहती है : वैर के बिना दंडकारण्य के राक्षसों का विचार आपको नहीं करना है ।'

ता ऐसा क्यों कह रही है ! राम को ों के साथ संघर्ष न करना पड़े इस- ! राम की प्रतिज्ञा को जानते हुए ता ऐसा कहे इसका आश्चर्य होता स्तव में इसके बाद दंडकारण्य में मुनियों के आश्रमों में वास करते सीता-लक्ष्मण के अगले दस वर्ष वीतते हैं । उस समय राम भी राक्षसों का आतंक है, वहां नहीं बल्कि जिन आश्रमों में उनका आतंक ा, वहीं समय व्यतीत करते हैं ।

वास के अंतिम चार वर्ष जब बाकी हैं, तब राम दक्षिण में अगस्त्य के आश्रम में जाने का तय करते हैं । मुनि से भी राम रहने योग्य स्थान छा करते हैं । यहां अगस्त्य मार्मिक देते हैं –

हृदयस्थं च ते च्छन्दो
विज्ञानं तपसा मया
ईह वासं प्रतिज्ञाय
मया सह तपोवने
अतश्च त्वामहं ब्रूमि
गच्छ पंचवटीमीति
स हि रम्यो वनोद्देशो
मथिली तत्र रंस्यते
(अर. १३-१६-१७)

मेरे साथ तपोवन में बाकी समय गुजारने की इच्छा व्यक्त करने के बाद भी अन्यत्र रहने की इच्छा प्रकट कर रहे हो इसका राज मैंने अपने तपोबल से जान लिया है । तुम्हारी इच्छा है ऋषियों की रक्षा के काज राक्षसों का विनाश करने की । (मेरे आश्रम में तो राक्षसों का आना-जाना है नहीं) इसलिए तुम पंचवटी जाओ । वहां वनभूमि रमणीय है । मैथिली (सीता) के मन को भी वहां चैन मिलेगा ।

अगस्त्य के सान्निध्य में शेष समय गुजारने की राम ने इच्छा प्रकट की थी, लेकिन अगस्त्य राम को उनका संकल्प याद करवाते हैं । इसलिए विघ्न-हीन अगस्त्य-आश्रम की अपेक्षा जहां राक्षसों का आतंक फैला है, ऐसी पंचवटी में रहने का अनुरोध मुनि करते हैं । इस पंचवटी के पथ पर ही विनितानंदन अरुण तथा ताम्रा-पुत्री श्येनी के पुत्र जटायु की भेंट राम से होती है ।

अरण्यकांड में वाल्मीकि की कविता खिल उठी है । पंचवटी में रहना आरंभ करने के बाद शरद ऋतु पूरी होती है और हेमंत का आरंभ होता है तब लक्ष्मण उसका सुंदर वर्णन करते हैं

रविसंक्रान्त सौभाग्य–
स्तुषारा रुण मंडलः
निःश्वासान्ध ईवादर्श–
श्चंद्रमा न प्रकाशते
(अर. १६ १३)

हेमंतकाल में चंद्रमा का सौभाग्य सूर्य-

देव में समा गया है। निःश्वास की भाप से मलिन हुए दर्पण की तरह चंद्रमंडल हिम कणों से आच्छादित होकर धुंधला लगता है। यही वर्णन आगे बढ़ता है। पूर्णिमा की चांदनी रात तुषारों से मलिन दीख पड़ती है—जैसे सीता अधिक धूप में श्याम दिखायी देती है।

इस मनोहर वर्णन के बाद लक्ष्मण भरत की प्रशंसा के बहाने कैकेयी की निंदा करते हुए कहते हैं :

भर्ता दशरथो यस्याः साधुश्च भरतः सुतः
कथं नु साम्बा कैकेयी तादृशी क्रूरदर्शिनी
(अर. १६-३५)

दशरथ जैसा भर्ता हो, भरत जैसा जिसका पुत्र हो, ऐसी माता कैकेयी क्यों इतनी क्रूरदर्शिनी हुई ?

अरण्य में प्रवेश करते ही विराध राक्षस सीता को अपने अंक में पकड़ लेता है, तब राम ने कैकेयी का अप्रिय स्मरण किया था और लक्ष्मण ने भरत के प्रति कटुता भरी बात कही थी। अब लक्ष्मण भरत की प्रशंसा और कैकेयी की निंदा करते हैं तब राम उन्हें उपालंभ देते हैं—

न तेऽम्बा मध्यमा तात गर्हितव्या कदाचन
तामेवेक्ष्याकुनाथस्य भरतस्य कथां कुरु
(अर. १६-३७)

तात, तुम्हें मध्यमा माता (कैकेयी) की निंदा कभी नहीं करनी चाहिये। बात ही करनी हो तो इक्ष्वाकु वंश के स्वामी भरत की बात करो।

यहां राम कैकेयी को दोषरहित नहीं
मान रहे हैं। कैकेयी के प्रति उनकी
ग्रंथियां अदृश्य नहीं हुई हैं। किंतु
नाम लेना ही रहने दो, ऐसा वे
कह रहे हैं। कैकेयी तथा भरत के
वाल्मीकि के राम-लक्ष्मण का
मनोवैज्ञानिक ढंग से जांचने लायक
इन सब विरोधाभासों की वजह
वाल्मीकि के राम हम जैसे मनु
लगते हैं।

[रूपांतर : नंदिनी

□

०००००००००००००००००

लेखकों से निवेदन

० प्रतिदिन **नवनीत** में प्रकाशनार्थ
सी डाक आती है। कई बार अनुरोध
पर भी कुछ लेखक वापसी के लिए
के साथ पर्याप्त टिकट लगा
नहीं भेजते। भविष्य में ऐसी रचनाएं
न लौटाया जायेगा और न उन पर
नार्थ विचार ही किया जायेगा।

० जब तक आपकी पूर्व स्वीकृत
प्रकाशित न हो जाये दूसरी रचना

० कुछ लेखक अभी भी वापसी के
बिना पर्याप्त टिकट लगे लिफाफे के
नाएं विचारार्थ भेजते रहते हैं।
अस्वीकृत रचनाओं को आप पत्र
वापस मंगा सकेंगे, यह अपेक्षा न
क्योंकि उन्हें संभालकर रखना हमारे
संभव न होगा।

०००००००००००००००००

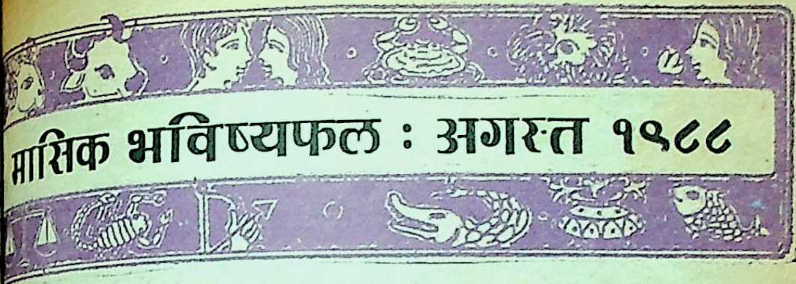

मासिक भविष्यफल : अगस्त १९८८

☐ पंडित वी. के. तिवारी 'ज्योतिषशिरोमणि'

अप्रैल–१३ मई)

माह सामान्यतः प्रतिकूल स्थितियों सिद्ध होगा । नौकरी में उच्च वर्ग से विवाद से बचें । रुके का समाधान बहुत प्रयत्नों के संभव हो सकेगा । किसी भी क्षेत्र या जल्दबाजी के परिणाम हो सकते हैं । परिवार के से सामान्यतः अपेक्षित सहयोग नहीं । राजनीतिक क्षेत्र में स्थिति संतो- रहेगी ।

मई–१४ जून)

इस माह में परिवार एवं के क्षेत्र में पूर्ण अनुकूलता व प्रस- का वातावरण मिलेगा । रुके हुए, निपटेंगे । द्वितीय सप्ताहांत से व्यय, यात्रा एवं शारीरिक कष्ट की उत्पन्न होंगी । मास के अंतिम में परिजनों व कनिष्ठ वर्ग से नहीं मिलेगा । नौकरी व व्यवसाय में समय लाभदायी सिद्ध होगा । राजनीति एवं पत्रकारिता में यश व प्रभुत्व बढ़ेगा ।

मिथुन :

(१५ जून–१६ जुलाई)

प्रथम दो सप्ताह में महत्वपूर्ण यात्रा एवं नये व्यक्तियों से मिलना होगा । राजनीति एवं रोजगार में उद्विग्नता रहेगी । व्यस्तता पूरे माह रहेगी । परिजनों का सुख एवं मित्रों का सहयोग अपेक्षानुरूप नहीं मिलेगा । मानसिक कष्ट के अवसर आयेंगे । स्वास्थ्य के प्रति सजग रहें । व्यवसाय में लाभ आशानुरूप नहीं मिलेगा ।

कर्क :

(१७ जुलाई–१५ अगस्त)

आपको आत्मीय एवं सहयोगी वर्ग का पूर्ण लाभ मिलेगा । राज्य से लाभ होगा । व्यवसायी एवं नौकरीपेशा वर्ग राहत अनुभव करेगा । राजनीतिक एवं पत्रकार वर्ग को त्रस्तता की टीस पीड़ा देगी । स्वास्थ्य के प्रति सजग रहें । यात्रा-

योग प्रबल है । किंतु यात्रा से अभीष्ट मंतव्य की पूर्ति संदिग्ध रहेगी । आर्थिक प्रतिकूलता एवं कार्य प्रगति मास के अंतिम सप्ताह में अवरुद्ध होती प्रतीत होगी ।

सिंह :

(१६ अगस्त–१६ सितंबर)

आपको मनोनुकूल स्थितियां अपेक्षानुरूप कतई नहीं मिलेंगी । राजनीति एवं पत्रकारिता के क्षेत्र में व्यस्तता रहेगी एवं मन सशंकित रहेगा । परिवार के सदस्यों पर व्यय बढ़ेगा । जोखिम के परिणाम हित के अनुरूप नहीं रहेंगे । विरोधी वर्ग के प्रति सजगता के अच्छे परिणाम रहेंगे । स्वास्थ्य-बाधा रहेगी । यश बढ़ेगा । सप्ताह के अंतिम सप्ताह में जन सहयोग एवं दांपत्य सुख में आशातीत वृद्धि होगी । चोट व रोग के प्रति सतर्कता बरतें ।

कन्या :

(१७ सितंबर–१६ अक्तूबर)

माह का पूर्वार्ध प्रत्येक दृष्टि से पूर्णरूपेण अनुकूल सिद्ध होगा । यश, सुख शांति, उपलब्धि, सफलता अन्य क्षेत्रों में मिलेगी, परंतु परिजनों से मानसिक कष्ट मिलेगा । राजनीतिज्ञों के लिए श्रेष्ठ समय सिद्ध होगा । द्वितीय सप्ताह के उपरांत व्यय बढ़ेगा, परिजनों से विवाद अस्वस्थता एवं कार्य-भार बढ़ेगा । व्यवसाय में लाभ उत्तम होगा । नौकरी में स्थिति सामान्यतः ठीक रहेगी । पत्रकार यशस्वी होंगे ।

तुला :

(१७ अक्तूबर–१५ नवंबर)

यह माह आपके सद्प्रयासों के सुखद परणिति देने वाला सिद्ध हो उच्चवर्ग पर प्रभाव बढ़ेगा । आत्मीय परिवार के सदस्यों के मध्य आमोद का वातावरण रहेगा । रुके हुए कार्य मुकदमे आदि में आपकी विजय हो स्वास्थ्य उत्तम रहेगा । व्यवसाय में श्रम के अच्छे परिणाम मिलेंगे । राज में विरोधी मुंह की खायेंगे । आर्थिक स्थि संतोषप्रद रहेगी । सप्ताहांत में दांपत्य सं एवं आत्मीयों वर्ग से कड़ुवाहट बढ़ेगी।

वृश्चिक :

(१६ नवंबर–१५ दिसंबर)

आप धैर्य, संयम, शांति के साथ स्थितियों का विश्लेषण कर निर्णय माह में उत्तरोत्तर आपके पक्ष में स्थि जुड़ती जायेंगी । भविष्योपयोगी यो के अनुरूप कार्य आरंभ कर दें । नौ में सामान्यतः स्थिति अनुकूल रहें व्यवसाय व राजनीति में उत्कर्ष संभावना प्रबल है । परिवार में कार्य की योजना बनेगी । आ सफलता मिलेगी । सप्ताहांत में समाचार या महत्वपूर्ण या प्रिय व से मिलना होगा ।

धनु :

(१६ दिसम्बर–१३ जनवरी)

आप रोग एवं यात्रा के प्रति तमक दृष्टिकोण अपनाकर सुख की

सकते हैं । परिवार एवं मित्र वर्ग के विवाद से बचें । व्यय एवं हानि के रों के प्रति सतर्कता से काम लें । राज- में जनसंपर्क के परिणाम अनुकूल नहीं होंगे । विरोधी आपके प्रति रचेंगे । आकस्मिक हानि एवं वार के सदस्यों से पीड़ित रहेंगे । जीवन में सुख का अभाव रहेगा ।

र :

(४ जनवरी–१२ फरवरी)

आपका यह माह सामान्यतः सुख- के मिश्रित प्रभाव से युक्त । दांपत्य सुख माह के प्रथम तीन हों में आशानुरूप रहेगा । आत्मीयवर्ग वांछित सहयोग मिलेगा । विरोधी रहेंगे । नये निर्णय सोच-विचार रें । आर्थिक स्थिति उत्तम रहेगी । आस्मिक रूप से समस्यायों का उदय । राजनीति एवं व्यवसाय में प्रतिष्टा पर लग सकती है ।

:

(३ फरवरी–१४ मार्च)

पूर्वार्ध में उच्च अधिकारियों पर प्रभाव । प्रयत्नों की परणिति पक्ष में होगी । नीति एवं पत्रकार वर्ग के लिए उल्लेख- सफल समय सिद्ध होगा । व्यवसाय में क सुदृढ़ता रहेगी परंतु, परिवार के स्यों से मनमाफिक सहयोग नहीं मिल गा । व्यय बढ़ेगा । उत्तरार्ध में सफ- क्षीण होती प्रतीत होगी । बाद में वार सुख में वृद्धि होगी ।

मीन :

(१५ मार्च–१३ अप्रैल)

पूर्वार्ध में परिवारजनों, मित्रों एवं कनिष्ठ वर्ग से पूर्ण सहयोग मिलेगा । प्रयास करने से ही सफलता मिल सकेगी । नौकरी में स्थिति सामान्य रहेगी । व्यवसाय में लाभ बढ़ेगा । सुखद समाचार संभावित हैं । जबकि उत्तरार्धमें परिवार-सुख में कमी होगी । परिवार के सदस्यों से सुख में बाधा होगी । राजनीतिज्ञों के यश व प्रभाव में वृद्धि होगी । संतान पक्ष से मन प्रसन्न रहेगा । आर्थिक स्थिति सामान्य रहेगी ।

बाह्य जगत में प्रभुत्व बढ़ेगा । विरोधी हथियार डाल देंगे ।

इस मास के पर्व एवं व्रतादि

३ अगस्त – पंचक समाप्त
८ अगस्त – कामिका एकादशी व्रत
९ अगस्त – प्रदोष व्रत
१२ अगस्त – हरियाली अमावस्या
१६ अगस्त – चतुर्थी व्रत
१७ अगस्त – नाग पंचमी
१८ अगस्त – नेमिनाथ जयंती
२३ अगस्त – पवित्रा एकादशी व्रत
२५ अगस्त – प्रदोष व्रत
२६ अगस्त – चतुर्दशी व्रत
२७ अगस्त – श्रावणपूर्णिमा (रक्षाबंधन)
२९ अगस्त – कज्जी तीज
३० अगस्त – गणेश चतुर्थी व्रत

–देवलोक कालोनी (सी. टी. ओ.)
बेरागढ़, भोपाल, म. प्र.

□

पं. लोचनप्रसाद पांडेय

☐ मुकुटधर पां

हमारे स्व. पूज्याग्रज पं. लोचन प्रसाद पांडेय का जन्म सन १८८७ ई. में हुआ था। उनकी प्राथमिक शिक्षा हमारे पितृदेव द्वारा स्थापित प्राइवेट स्कूल बालपुर में हुई थी। पिताजी ने मध्यप्रदेश शासन के शिक्षा विभाग द्वारा उसकी मान्यता प्राप्त कर ली थी। फलतः शासकीय अधिकारी उसका परिदर्शन किया करते थे। अंग्रेज अधिकारी उसे इंडिजिनस स्कूल अर्थात् स्वदेशीय पाठशाला कहा करते थे। इसी स्कूल में उन्होंने सन १८९८ में अपर प्राइमरी परीक्षा पास की थी।

हमारे पितामह प. शालिग्राम पांडेय बड़े शिक्षा प्रेमी थे। उन्होंने अंग्रेजी जानने वाले एक मद्रासी वैष्णव साधु रामदास को अपने यहां रखकर गांव में अंग्रेजी शिक्षा का सूत्रपात किया था। सन १९०२ में संबलपुर जिला हाईस्कूल से भाई साहब ने मिडिल की और सन १९०५ में कलकत्ता विश्वविद्यालय से एंट्रेन्स परीक्षा पास की और उच्च शिक्षा के लिए बनारस चले गये। वे सेन्ट्रल हिंदू कालेज में भरती हुए थे। हमारे पिताजी बनारस से निकलने वाले 'भारत-जीवन' साप्ताहिक-पत्र के ग्राहक थे। उसके संपादक तब गंगाप्रसाद गुप्त थे। भाई साहव उनसे मि उनके लेख 'भारत-जीवन' में लगे। उधर कालेज मैगजीन में, जि संपादिका सुप्रसिद्ध एनी वेसेंट थ अंग्रेजी में भी लिखने लगे। वना वे बहुत दिन नहीं रह सके। पिता अत्यंत आग्रह से पिताजी उन्हें ब से लौटा लाये थे।

वीसवीं सदी के प्रारंभिक व यह वह समय था, जब श्रीधर पाठक स्मिथ के 'डेज़र्टेड विलेज' का ग्राम' नाम से अनुवाद कर चुके थे। कजी खड़ी बोली हिंदी काव्य के दाता हैं। भाई साहव ने उनके में गोल्डस्मिथ के 'ट्रैवलर' के 'प्रवासी' नामक कविता-पुस्तक की की, जो अनुवाद नहीं, मौलिक थी। यह पुस्तक आगरा के राजपूत ओरिएंटल प्रेस में छपी थी। सेवा के आरंभिक दिनों में वे गोल्ड से प्रभावित हुए थे। 'प्रवासी' में गढ़ के ग्राम-जीवन की कुछ झांकी को मिलती थी। गोल्डस्मिथ की पंक्तियां हैं—

Blessed be that abode

wanted pain repair. And every
stranger finds a ready chair.

भाई साहब ने इसका अनुवाद किया था, मुझे अभी तक याद है :

आसन जहां प्राप्त होता है प्रति अभ्यागत को सस्नेह
दीन-दुखी पाते हैं आश्रय, जहां धन्य है ऐसा गेह ।।

'प्रवासी' में एक जगह मासिक-साप्ताहिक के पाठ का उल्लेख हुआ है। तब हिंदी में कोई दैनिक पत्र नहीं निकलता था। 'प्रवासी' के पूर्व उनका 'दो मित्र' नामक एक उपन्यास लक्ष्मीनारायण प्रेस, मुरादाबाद से निकला था, जो उनकी प्रथम कृति थी। धीरे-धीरे नीति-कविता, बालिका-विनोद, बाल-विनोद, प्रेम-प्रशंसा, छात्र-दुर्दशा (नाटक) और साहित्य-सेवा (प्रहसन) आदि उनकी कई पुस्तकें प्रकाशित हुईं, जिनमें से कई मध्यप्रदेश के शिक्षा-विभाग द्वारा 'प्राइज एण्ड लायब्रेरी बुक्स' के रूप में स्वीकृत हुई थीं। इसी समय के लगभग उनकी एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक 'रघुवंशसार' बंबई के श्रीवेंकटेश्वर प्रेस से प्रकाशित हुई, जो कहीं पाठ्यपुस्तक के रूप में स्वीकृत हुई थी।

मुझे स्मरण होता है, भाई साहब ने जब लिखना शुरू किया, तब छत्तीसगढ़ के इस अंचल में हिंदी लिखने वालों की संख्या उंगली पर गिनी जाने लायक थी। इनमें रायगढ़ के अनंतराम पांडेय, शवरीनारायण के मालिकराम भोगहा, धमतरी के कृष्णायनकार, कवि विसाहूराम मुख्य थे। राजिम वाले सुंदरलाल शर्मा की छत्तीसगढ़ी 'दानलीला' अभी लिखी नहीं गयी थी। माधवराव सप्रे का पेंडरा से निकलने वाला 'छत्तीसगढ़ मित्र' नामक मासिक पत्र बंद हो चुका था और वे नागपुर से 'हिंदी केसरी' नामक साप्ताहिक पत्र निकालने लगे थे। भाई साहब सप्रेजी को गुरुवत् मानते थे।

मालिकराम भोगहा से हमारे जेष्ठ भ्राता पं. पुरुषोत्तम प्रसाद पांडेय की मित्रता थी और वे शवरीनारायण से नाव की सवारी से बालपुर आते थे। वे ठाकुर जगमोहन सिंह के शिष्य थे। उनकी भाषा अनुप्रासालंकारमयी होती थी। उन्होंने 'रामराज्यवियोग' (नाटक) और 'स्वप्न–सम्पत्ति' (उपन्यास) की रचना की थी। भाई साहब उन्हें अग्रज तुल्य मानते थे। प्रारंभ से उनकी लेखनशैली से वे प्रभावित भी हुए थे। कलकत्ता की हरिदास एंड कंपनी से प्रकाशित उनके नाटक इसके प्रमाण हैं। पर आधुनिकता की दृष्टि से उन्होंने शैली बदल दी, जिससे भाषा का सहज सौंदर्य निखर उठा।

तत्सम-शब्द-प्रधान साहित्य और पुरातत्व संबंधी उनके बहुसंख्य लेख तत्कालीन मासिक पत्रों की फाइलों में बिखरे पड़े होंगे। उनको ढूंढ़-निकालना आज बड़ा कठिन है। उनके ऐसे कुछ लेखों का संग्रह रायपुर के श्री देवीप्रसाद वर्मा ने कुछ वर्ष पूर्व प्रकाशित किया था। इस

With best Comliments
from

M/s. Pure Drugs (India)

14/16, Popat Wadi
Kalbadevi Road
BOMBAY - 400 002

Phone : **294897, 312295, 317483, 253924**
Gram : **' BESTDRUGS '**

Msnufacturers & Exporters of Bulk Drugs

स्तक से पता चलता है कि भाई साहब ने त्तीसगढ़ (महाकोशल) की विस्मृतप्राय रव गाथा को ढूंढ़ निकालने का कैसा त्य प्रयास किया था। प्रारंभ में छत्तीस-ढ़ के प्राचीन प्रशस्तिकार कवियों का कुल-र्तन किया गया है, फिर 'खूब तमासा', हसागर' आदि काव्यकृतियों पर प्रकाश ला गया है।

भाई साहब ने 'छत्तीसगढ़ गौरवप्रचारक डली' की स्थापना की थी, जो पीछे हाकोशल इतिहास परिषद' के रूप में रणत हो गयी थी। भाई साहब का नम-जीवन पुरातत्व और इतिहास के ए अर्पित था। यहां उसकी चर्चा नहीं जायेगी।

पहले कहा जा चुका है कि भाई साहब जब लिखना शुरू किया, श्रीधर पाठक ड़ी बोली में काव्य-रचना का श्रीगणेश र चुके थे। पर अभी ब्रजभाषा के कुछ तिभाशाली कवि 'हरिऔध', पूर्ण कवि, लाकर' आदि मौजूद थे। भाई साहब ने काव्य-रचना ब्रजभाषा से आरंभ की। नकी 'कविता-कुसुम-माला' में ब्रजभाषा उनकी कई कविताएं पायी जाती हैं। नकी 'जीवन-चिंता' शीर्षक कविता की थम दो पंक्तियां मुझे याद आती हैं।

द तजु रे आतमा, टुक खोलु चिंता-नैन
देखु विलंब को अब समय रंचहु है न।।

पर जमाने का तकाजा था। वे खड़ी ली में कविता करने लगे।

श्रीधर पाठक को खड़ी बोली कविता का जनक कहा जाता है, यह ठीक है। पर उसका मार्ग प्रशस्त किया था 'सरस्वती' के माध्यम से श्री महावीर प्रसाद द्विवेदी ने। उन्होंने जिन कवियों का मार्ग-दर्शन किया था, उनमें मैथिलीशरण गुप्त, रामचरित उपाध्याय, गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' आदि के साथ भाई साहब भी एक थे। उनकी छोटी-बड़ी खड़ी बोली की अनेक रचनाएं 'सरस्वती' में छपी थीं। हरिऔध और पूर्ण कवि मूलत: ब्रजभाषा के कवि थे, पर समय की मांग के विचार से वे भी खड़ी बोली में लिखने लगे। हरिऔध ने 'प्रिय-प्रवास' और मैथिलीशरण ने 'साकेत' की रचना की। भाई साहब ने 'मेवाड़-गाथा' लिखी जो राणा प्रताप-स्तव था। इसकी एक कहानी है। 'मेवाड़-गाथा' को कुंवर हनुमंत सिंह रघुवंशी छापने वाले थे। पर उन्होंने यह कहकर आपत्ति की कि प्रतापसिंह ईश्वर के अवतार नहीं थे, जो उनकी स्तुति की जाये। भाई साहब ने पांडुलिपि वापस मंगा ली। वह पीछे हरिदास एंड कंपनी, कलकत्ता में छपी।

'मेवाड़-गाथा' की एक कविता का मुझे स्मरण होता है। एक बार प्रताप शत्रुसैन्य से घिरकर जंगलों में भटक रहे थे। बच्चों के लिए घास के बीजों की रोटी बनायी गयी थी। बनबिलाव उसे ले भागा था। भूखे बच्चे रोने लगे थे। प्रताप अत्यंत दु:खित और विचलित हो उठे थे और कहा था :

क्या मैंने जो न बेची निज-कुल-गरिमा,

तो किया घोर पाप !

हरिऔध ने 'मेवाड़-गाथा' की प्रशंसा की थी। भाई साहब की 'मृगी-दु:ख-मोचन' नामक कविता का उल्लेख आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने हिंदी के इतिहास में किया है। पराधीनता के काल में भाई साहब की कविता 'प्रभा' में छपी थी, जिसमें आशा प्रकट की गयी थी :–

'देवों के हस्त द्वारा हम पर फिर भी पुष्प
की वृष्टि होगी।
हे भाई है न देरी, भरत वसुमती सौख्य
की दृष्टि होगी।

कालांतर में स्वराज्य प्राप्त हो गया था, भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई थी। भाई साहब के देहावसान हो जाने पर इस बात का जिक्र करते हुए माखनलाल चतुर्वेदी ने लिखा था, 'श्री लोचन प्रसाद पांडेय को खोकर हमने बहुत कुछ खो दिया।'

मध्य प्रदेश हिंदी साहित्य सम्मेलन, जबलपुर के जब भाई साहब अध्यक्ष चुने गये थे, तब माखनलाल चतुर्वेदी उसके मंत्री थे। सम्मेलन की अध्यक्षता भाई साहब ने श्री माधवराव सप्रे के समर्थन के बल पर स्वीकार की थी।

वे मध्य प्रदेश हिंदी साहित्य सम्मेलन के ही नहीं, अखिल भारतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन के भी जन्मदाताओं में थे। तृतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन जो कलकत्ता में बदरी नारायण चौधरी की अध्यक्षता में हुआ था, उसमें भाई साहब सम्मिलित हुए थे। रायगढ़ के कई लोग उनके साथ गये थे। डा. राजेन्द्र प्रसाद स्वागतकारिणी समिति के मंत्री थे। तभी से भाई साह उनका परिचय था। एक बार जब राष्ट्रपति के रूप में रायगढ़ आये, तब भाई साहब से मिलकर बड़े प्रसन्न हुए। भाई साहब ने उन्हें 'कोशल-प्रशस्ति-रत्नमाला' की प्रति अर्पित की थी।

हिंदी साहित्य सम्मेलन का स अधिवेशन सन १९१६ में महामहोपाध्याय पं. रामवतार शर्मा की अध्यक्षता में जबल-पुर में हुआ था। भाई साहब ने उसमें योगदान किया था। सम्मेलन ने उस अधिवेशन में उन्हें 'साहित्य-वाचस्पति' की उपाधि प्रदान की थी, पर वे नहीं ज सके थे।

भाई साहब बड़े यात्रा-प्रिय थे। एक बार उन्होंने उत्तर भारत की साहित्यिक यात्रा की थी। भारतेंदु-कालीन साहित्य-कारों से जाकर साक्षात्कार किया था और श्रीधर पाठक, बालकृष्ण भट्ट, राधा-चरण गोस्वामी, बदरी नारायण चौधरी, महावीर प्रसाद द्विवेदी आदि से मिले थे। इसी यात्राक्रम में आगरा में कविरत्न पं. सत्यनारायण शर्मा से भेंट हुई थी, जो ब्रजभाषा के अंतिम कवि थे, 'ब्रज-कोकिल' कहलाते थे। भाई साहब ने उनकी कुछ कवि-ताओं को अपनी 'कविता-कसुममाला' में स्थान प्रदान किया था।

रीतिकालीन काव्य-साहित्य और तत्-स्यापूर्ति प्रयास तो तब नामशेष रह गये थे। स्वदेश-स्वभाषा-प्रेम, प्रकृति-चित्रण

अगले

'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' की चंदे की दरें

कागज और छपाई के भाव बढ़ जाने के कारण नवनीत के जुलाई अंक से उसके चंदे की दरों में वृद्धि अनिवार्य हो गयी है। आशा है, पूर्ववत् नवनीत को आपका स्नेह मिलता रहेगा।

एक प्रति (भारत में साधारण डाक से) रु. ५.००

• एक वर्ष : ५५ रु.; दो वर्ष : १०० रु.; तीन वर्ष : १४० रु.

विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)

• पाकिस्तान, श्रीलंका, रु. १२०; अन्य देश रु. १८५

विदेशों में हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए)

• प्रत्येक देश के लिए रु. ३१०

• बम्बई से बाहर के चेक भेजने वाले रु. ६ अधिक भेजें।

–व्यवस्थापक, नवनीत हिंदी डाइजेस्ट, भारतीय विद्या भवन, बम्बई-४००००७

आदि नये-नये विषयों का प्रादुर्भाव हो चुका था। देश में राष्ट्रीय भावना जागृत हो चुकी थी। कलकत्ता में १९०६ ई. में दादाभाई नौरोजी की अध्यक्षता में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ था, भाई साहब पूज्य पिताजी के साथ दर्शक रूप में उसमें गये थे। स्वराज्य-आंदोलन में वे तभी दीक्षित हुए थे, स्वदेशी वस्त्र धारण करने का व्रत लिया था। कलकत्ता से वे बहुत-सा वंग साहित्य लाये थे,—बंकिमचंद्र का 'आनंद-मठ,' नवीनचंद्र का 'प्लाशीर युद्ध' हेमचंद्र का 'वृत्र-संहार' जिसकी दो पंक्तियां याद आती हैं :

देव आराधने भारत-उद्धार
हबे ना, हबे ना, खोल तलवार'

जो पुस्तकें जब्त थीं, उन्हें वे संदूक में बंद कर रखते थे। इसी समय के लगभग अमरीका-प्रवासी स्वामी सत्यदेव के माध्यम से गदर पार्टी का मुख-पत्र उनके पास आता था। सन १९२० के लगभग जब महात्मा गांधी ने अहिंसात्मक असहयोग-आंदोलन का आरंभ किया तब वे उसके प्रबल समर्थक बन गये।

भाई साहब मात्रा-वृत्तों में ही नहीं गणवृत्तों में भी रचना करते थे। प्रथम यूरोपीय युद्ध के समय फ्रांस के युद्ध क्षेत्र में गये हुए भारतीय सैनिकों को प्रोत्साहन देने वाली जो कविताएं आपने डा. काशी-प्रसाद जायसवाल के आग्रह पर उनके संपादन में पटना से निकलने वाले साप्ता-

हिक-पत्र 'पाटलिपुत्र' में लिखी, वे अतुकांत गणवृत्तों में ही लिखी गयी थीं, जिनकी धूम मच गयी थी।

हिंदी में अंग्रेजी के 'सॉनेट' के अनुकरण में चतुर्दशपदी पद्य लिखने का सूत्रपात भाई साहब ने किया था। वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। ओड़िया और अंग्रेजी में उन्होंने कई पुस्तकें लिखी हैं। ओड़िया में उनका 'महानदी' काव्य प्रसिद्ध है, जिस पर वामण्डा-नरेश ने उन्हें 'काव्य-विनोद' की उपाधि प्रदान की थी। अंग्रेजी में 'लेटर्स टु माइ ब्रदर्स', 'द वे टु बी हैपी एंड गे', राधानाथ आदि कई पुस्तकों का प्रणयन उन्होंने किया था। भारतीय नेताओं की जीवनियां भी लिखी थीं, जिन्हें पढ़कर एनी बेसेंट ने लिखा था, 'युअर लिटल बयॉग्रफीज आर नाइसली रिटन'।

छत्तीसगढ़ी तो उनकी मातृभाषा ही थी, उसमें भी उन्होंने कई कविताएं लिखी हैं। हीरालाल काव्योपाध्याय के छत्तीसगढ़ी व्याकरण का उन्होंने मध्यप्रदेश शासन के आग्रह पर अवैतनिक रूप से संपादन किया था। यह अंग्रेजी की सजिल्द पुस्तक गवर्नमेण्ट प्रेस, नागपुर में छपी थी, जो भाषाशास्त्रियों और लिंग्विस्टिक सर्वे वालों के बड़े काम की चीज है।

उत्कल के कालिदास रायबहादुर राधानाथ राय के 'चिलिका' काव्य पर वे इतने मुग्ध हुए कि उड़ीसा में जाकर चिलिका झील का दर्शन कर आये। ओड़िया के प्रसिद्ध ग्रंथकार फकीरमोहन सेनापति के दो उपन्यास 'समाज-कण्टक' (मामु) और 'लच्छमा' (ऐतिहासिक उपन्यास) का भाई साहब के आदेशानुसार हम लोगों ने हिंदी अनुवाद प्रस्तुत किया था, जिन्हें हरिदास एंड कम्पनी ने प्रकाशित किया।

भाई साहब की स्फुट कविताओं के दो संग्रह प्रकाशित हुए थे– (१) पद्म-पुष्पांजलि; प्रकाशक नारायण प्रसाद अरोड़ा, कानपुर; और (२) माधव-मंजरी : प्रकाशक हरिदास एंड कम्पनी, कलकत्ता।

एक बार हिंदी साहित्य सम्मेलन ने हिंदी प्राध्यापक के रूप में शांतिनिकेतन, बोलपुर जाने के लिए भाई साहब का नामांकन किया था; पर वे जा नहीं सके थे। तब पं. रामनरेश त्रिपाठी को भेजा गया था। रवीन्द्रनाथ को सन १९१३ में जब नोबेल प्राइज़ मिला था, तब भाई साहब ने उन्हें बधाई देते हुए चमेली के फूल उपहार में भेजे थे। इसके लिए धन्यवाद का पत्र उन्होंने हिंदी में लिखा था।

रवीन्द्र-दर्शन के लिए एक बार भाई साहब शांतिनिकेतन गये थे। तब हजारी प्रसाद द्विवेदी वहां हिंदी के अध्यापक थे। वहां से रवीन्द्रनाथ के प्रिय पुष्प 'शेफाली' (हरसिंगार) का एक पौधा गमले में लेते आये थे। शेफाली को बंगला में 'शिउली' कहते हैं, गीतांजलि में आया है:

शिउली तलार पासे-पासे,
झरा फूलेर राशे-राशे।

ऋतुकाल में उदीयमान सूर्यनारायण को

(शेषांश पृष्ठ २८ पर)

सत्संग

महाजनस्य संसर्गः कस्य नोन्नतिकारकः। पद्मपत्रस्थितं वारि धत्ते मुक्ताफलश्रियम् ।।

भले आदमियों की संगति सदा उन्नति की ओर ले जाती है। देखिये, कमलपत्र पर गिरा हुआ पानी भी मोती-सा सुशोभित होता है।

महानुभावसंसर्गः कस्य नोन्नतिकारकः। हरिहस्तगतः शङ्खः पवित्रः प्रथितो भुवि ।।

महानुभाव का संसर्ग सभी के लिये उन्नतिकारक होता है। भगवान विष्णु के हाथ में स्थित शंख पवित्र माना गया है।

मलयाचलगंधेन त्विन्धनं चन्दनायते। तथा सज्जनसङ्गेन दुर्जनः सज्जनायते ।।

मलयगिरि की सुगंध से साधारण काष्ठ भी चन्दन हो जाता है। सज्जन की संगति से दुर्जन भी सज्जन बन जाता है।

चन्दनं शीतलं लोके चन्दनादपिचन्द्रमाः ।। चन्द्रश्चन्दनाभ्यांच शीतला साधुसंगतिः ।।

संसार में शीतल वस्तु है चन्दन, चन्दन से भी शीतल है चन्द्रमा। किन्तु चन्दन और चन्द्रमा दोनों से भी शीतल सज्जनों की संगति है।

साधूनां दर्शनं पुण्यं तीर्थभूता हि साधवः। कालेन फलते तीर्थं सद्यः साधुसमागमः ।।

साधु पुरुषों का दर्शन ही पुण्यदायी है, साधु तीर्थस्वरूप होते हैं। तीर्थ तो समय आने पर फलदायी होते हैं, किन्तु संत समागम का फल तत्काल प्राप्त होता है।

करोति निर्मलाधारस्तुच्छस्यापि महार्घताम्।
अम्बुनो बिन्दुरल्पोऽपि शुक्तौ मुक्ताफलं भवेत् ।।

निर्मल आधार होने पर तुच्छ वस्तु भी महत्व को प्राप्त हो जाती है। पानी की मामूली-सी बूंद भी सीप का आधार प्राप्त होने पर मोती बन जाती है।

हीयते हि मतिस्तात हीनैः सह समागमात्। समैश्च समतामेति विशिष्टैश्च विशिष्टताम् ।।

निम्न कोटि के पुरुषों के संग से बुद्धि में हीनता आती है, समान बुद्धिवाले पुरुषों के संग से समता तथा विशिष्ट जनों के संग से विशिष्टता आती है।

कीटोऽपि सुमनः सङ्गादारोहति सतांशिरः। अश्माऽपि याति देवत्वं महद्भिः सुप्रतिष्ठितः ।।

पुष्प के संग साधारण कीट भी बड़े लोगों के शिर तक पहुंच जाता है, जैसे प्रतिष्ठित लोगों द्वारा सुप्रतिष्ठित पत्थर भी देवत्व को प्राप्त होता है।

काचः काञ्चनसंसर्गाद्धत्ते मारकतीर्द्युतीः। तथासत्संनिधानेन मूर्खो याति प्रवीणताम् ।।

जैसे स्वर्ण में जड़े जाने पर साधारण काच भी मरकत मणि की सी शोभा को प्राप्त होता है। वैसे ही सत्संगति के प्रभाव से मूर्ख मनुष्य भी प्रवीण हो जाता है।

[प्रस्तुति : **अरुणा शर्मा**]

आग ऐसी कि बुझाये न बुझे

☐ रामपाल सिंह

स्तालिन ने कहा था कि वायदे निभाने के लिए किये जाते और समझौते तोड़ने के लिए। अफगानिस्तान के बारे में जिनीवा समझौते का भविष्य भी कुछ इसी तरह का जान पड़ता है। दिलचस्प बात है कि समझौता तोड़ने की पहल स्तालिन के उत्तराधिकारी नहीं, वे लोग कर रहे हैं, जो स्तालिन और कम्युनिज्म दोनों के कट्टर विरोधी हैं। रूस और काबुल पिछले कुछ दिनों में कई बार आरोप लगा चुके हैं कि पाकिस्तान अफगान विद्रोहियों की मदद करके अफगानिस्तान के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप और जिनीवा समझौते का उल्लंघन कर रहा है। रूस के विदेश मंत्री शेवर्नादजे का कहना है कि यदि जिनीवा समझौते के क्रियान्वयन में कोई व्यवधान आता है तो इसके लिए सारा दोष पाकिस्तान का होगा और कुछ छींटे अमेरिका पर भी आयेंगे। उधर रूस के विदेश विभाग के प्रवक्ता गेन्नादी जेरासिमोव ने कहा है कि यदि जिनीवा समझौते का उल्लंघन जारी रहा तो रूस को अफगानिस्तान से अपनी फौजें हटाने पर पुनर्विचार करना होगा।

जिनीवा समझौते के अनुसार अफगानिस्तान में मौजूद सब रूसी सैनिकों को माघ-फाल्गुन (फरवरी) तक अपने घर लौट जाना है। आधे रूसी सैनिक श्रावण मास के अंत तक (अगस्त) अफगानिस्तान से हटा लिये जाने चाहिये। अफगानिस्तान के राष्ट्रपति नजीबुल्ला ने न्यूयार्क में बताया कि लगभग ३४००० रूसी सैनिक स्वदेश लौट गये हैं। पश्चिमी सूत्रों के अनुसार अफगानिस्तान में रूसी सैनिकों की संख्या १,१५,००० है। जबकि अफगानिस्तान में रूसी अधिकारी अपने सैनिकों की संख्या एक लाख बताते हैं। लगभग आठ वर्ष तक चले युद्ध में १३००० रूसी सैनिक मारे गये और लगभग इतने ही घायल हुए।

रूसी सैनिकों का पहला दस्ता जब स्वदेश के लिए रवाना हुआ तब तो अफगान विद्रोहियों ने वापस जाते सैनिकों के साथ छेड़छाड़ नहीं की। पर, इधर कुछ समय से सूचनाएं मिल रही हैं कि इन जाते रूसी सैनिकों पर विद्रोहियों के हमले बढ़ गये हैं। कंधार से खबर आयी कि रूसी सैनिकों के हटने का काम कुछ ढीला पड़ गया है। अफगान विद्रोही इस तरह में हैं कि अफगानिस्तान के पूर्वी और अफवाह

दक्षिण-पूर्वी भाग पर, जो पाकिस्तान की सीमा से मिलता है, रूसी सेना के हटने के बाद कब्जा कर लिया जाय। मास्को और काबुल ने इस्लामाबाद तथा संयुक्त राष्ट्र संघ से बार-बार शिकायत की है कि पाकिस्तान ने अफगान विद्रोहियों को प्रशिक्षण और हथियारों की आपूर्ति बढ़ा दी है। पाकिस्तानी समाचार पत्रों ने बताया कि जिनीवा समझौता होने के बाद पाकिस्तान से ४०० ट्रक अफगान विद्रोहियों के लिए गोला बारूद और हथियार लादकर पाकिस्तानी सीमा पार करके अफगानिस्तान में प्रवेश करते देखे गये।

जिनीवा समझौते पर हस्ताक्षर करने से पहले पाकिस्तान ने यह शर्त रखी थी कि रूसी सेना की वापसी शुरू होने के साथ काबुल में एक अंतरिम सरकार गठित कर दी जाय। अमरीका के दबाव से तत्कालीन पाकिस्तानी विदेश राज्य मंत्री जैन नूरानी ने इस शर्त को वापस ले लिया था। पर इस शर्त को रखते और वापस लेते समय पाकिस्तान ने कहा था कि हम नजीबुल्ला सरकार को अफगानिस्तान पर थोपी गयी सरकार मानते हैं और उसे स्वीकार नहीं करते। 'हम इस सरकार का बना रहना रूसी हस्तक्षेप का जारी रहना मानते हैं। हस्तक्षेप खत्म होने का मतलब है इस सरकार का खत्म होना।'

रूस इस तर्क को नहीं मानता। पर मतभेद के मुद्दे और भी हैं। जिनीवा समझौते में रूसी सेना की वापसी, शरणार्थियों के घर लौटने और उनके पुनर्वास की बात कही गयी है। अफगानिस्तान फिर स्वतंत्र, प्रभुसत्ता संपन्न और गुटनिरपेक्ष देश बन जायेगा और उसके आंतरिक मामलों में किसी प्रकार का बाहरी हस्तक्षेप नहीं होगा। संयुक्त राष्ट्रसंघ और दुनिया के अधिसंख्य देश नजीबुल्ला सरकार को स्वीकार करते हैं। जिनीवा समझौते पर पाकिस्तान सरकार और नजीबुल्ला सरकार के प्रतिनिधियों ने दस्तखत किये हैं। अफगान विद्रोहियों के प्रतिनिधि को वार्ता में किसी भी स्तर पर किसी रूप में शामिल नहीं किया गया। इसका काबुल और मास्को यह मतलब लगाते हैं कि नजीबुल्ला सरकार को मान्यता प्राप्त है और वह जब बाहरी हस्तक्षेप की शिकायत करती है तब उसकी शिकायत सुनी जानी चाहिये। रूस और अमरीका इस समझौते के प्रतिभू बने हैं इसलिए उन पर भी यह जिम्मेदारी है कि अफगानिस्तान पर किसी पड़ोसी देश के क्षेत्र से होने वाले किसी हमले को रुकवायें।

पर जिनीवा समझौते की कमियां भी हैं। इसमें लड़ाई बंद करने की कोई बात नहीं कही गयी। कही भी नहीं जा सकती थी, क्योंकि लड़ाई के दूसरे पक्ष को स्वीकार ही नहीं किया गया। अलिखित रूप से रूस और अमरीका इस बात को राजी हुए कि यदि रूस काबुल सरकार को हथियार देगा तो अमरीका भी अफगान विद्रोहियों को हथियार देता रहेगा। अमरीका इसी 'बरा-

बरी के व्यवहार' के आधार पर अफगान विद्रोहियों को हथियार दे रहा है। और जब हथियार दिये जा रहे हैं, तब लड़ाई जारी रहने की बात भी स्वीकार की जाती है। रूस की आपत्ति यह नहीं कि अमरीका अफगान विद्रोहियों को हथियार क्यों देता है, उसकी शिकायत तो पाकिस्तान से है कि वह प्रशिक्षण शिविर क्यों चला रहा और हथियारबंद विद्रोहियों को अफगानिस्तान क्यों भेज रहा है? यह कार्रवाई जिनीवा समझौते के विरुद्ध है। पाकिस्तान इससे इनकार करता है। उसका कहना है कि अफगान शरणार्थियों को पाकिस्तान में सब मानवीय अधिकार और आजादी हासिल है। वे अपने देश लौट जाने को स्वतंत्र हैं। पाकिस्तान उनकी आवाजाही में बाधा नहीं डालता।

समझौते में इतने छेद हैं कि पाकिस्तान और अमरीका उससे पूरा फायदा उठा रहे हैं। अमरीका और पाकिस्तान की कोशिश अब यह है कि अफगान विद्रोही जल्दी से जल्दी अफगानिस्तान के एक भाग पर कब्जा करके अपनी अस्थायी सरकार बना लें। अमरीका ने कहा है कि यदि ऐसी अस्थायी अफगान सरकार बन जाती है तो हम उसे मान्यता दे देंगे। तब काबुल में बैठी रूस समर्थक सरकार के विरुद्ध अभियान चलाना और उसे उखाड़ फेंकना आसान होगा।

पिछले २७ कार्तिक (१८ नवंबर) को पेशावर में सात अफगान विद्रोही दलों के प्रतिनिधियों की बैठक हुई थी, जिसमें मुहम्मद यूनिस खालिस को १८ मास के लिए 'अमीर' (विद्रोहियों का नेता या अध्यक्ष) चुना गया था। इस सम्मेलन में मुहम्मद यूनिस खालिस की हिज्बे इस्लामी, सिबगतुल्ला मुजद्देदी की जिबहे निजात मिल्ली, पीर सैयद अहमद जिलानी की महाजे मिल्ली, मुहम्मद नबी मुहम्मदी की हरकते इनकिताबे इस्लामी, अब्दुल रब अब्दुल रसूल सय्याफ के इत्तहादे इस्लामी, बुरहानुद्दीन रब्बानी की जमाते इस्लामी और गुलबुद्दीन हिकमतयार की हिज्बे इस्लामी-गुलबुद्दीन ने भाग लिया था।

अफगान विद्रोही नेताओं के रब्बानी, जिलानी और मुजद्देदी गुट वैसे कट्टरतावादी नहीं जैसे गुलबुद्दीन हिकमतयार और उनके समर्थक हैं। विद्रोही गुटों के उदारवादी नेता खून-खराबी के विरुद्ध हैं और काबुल की नजीबुल्ला सरकार से मिलकर एक मिलीजुली सरकार बनाने के पक्ष में हैं। ये उदारवदी नेता इस मिलीजुली सरकार में अफगानिस्तान के पिछले शासक जहीर शाह को भी एक सार्थक भूमिका सौंपना चाहते हैं। पर गुलबुद्दीन हिकमतयार तथा उनके समर्थक कट्टरतावादी किसी समझौते के पक्ष में नहीं हैं। उनका मत है कि लड़ाई में हमारा पलड़ा भारी है। हम काबुल की रूस समर्थक सरकार को उखाड़कर उसके स्थान पर कट्टर दक्षिणपंथी इस्लामी सरकार बना सकते हैं। दुनिया के अधिसंख्य मुसलमान देश इस

दक्षिणपंथी कट्टरतावादी इस्लामी सरकार का समर्थन करेंगे ।

गुलबुद्दीन हिकमतयार के इस विश्वास का आधार वह रपट है, जो अमरीकी विदेश विभाग के अधिकारियों ने गुप्तचर विभाग और अनुसंधान विभाग के विश्लेषकों के सहयोग से तैयार की है । इस रपट में कहा गया है कि अफगानिस्तान पर रूसी नियंत्रण के आठ वर्ष की अवधि में सैनिक पहल विद्रोहियों के हाथ आ गयी है । अफगानिस्तान की रूस समर्थक शासक पार्टी—जन लोकराजी पार्टी काफी कमजोर है । खल्क और परचम गुट की अंतर्कलह थमी नहीं । परचम के नेता और पार्टी अध्यक्ष बबरक करमाल की पार्टी और राष्ट्राध्यक्ष के पद से हटाये जाने के बाद स्थिति और बिगड़ गयी है। डा. नजीबुल्ला का कोई सुदृढ़ राजनैतिक आधार नहीं है । अफगान विद्रोही सब दृष्टियों से शक्तिशाली हो रहे हैं । अफगान-जनता शांति चाहती है, पर शांति पाने के लिए वह स्वतंत्रता खोने को तैयार नहीं । यह स्थिति अफगानिस्तान से रूसी सेना के जाने के बाद जबर्दस्त गृहयुद्ध छिड़ने का संकेत देती और गुलबुद्दीन हिकमतयार उसी की तैयारी कर रहे हैं ।

इस वर्ष अमरीका और सऊदी अरब लगभग ६० करोड़ डालर मूल्य की जो फौजी सहायता भेज रहे हैं, उसका बड़ा भाग गुलबुद्दीन हिकमतयार को मिल रहा है । गुलबुद्दीन हिकमतयार ने अमरीका और पाकिस्तान को अपनी पीठ पर खड़ा रखने के लिए कहा है कि रूसी प्रभुत्व से अफगानिस्तान को मुक्त कराने के बाद हम पाकिस्तान के साथ मिलकर एक इस्लामी महासंघ की स्थापना करेंगे। पाकिस्तान के जनरल जिया उल हक यह आशा लगाये बैठे हैं कि पाकिस्तान और अफगानिस्तान का महासंघ बन जाने से वे इस क्षेत्र की एक बड़ी शक्ति बनने का स्वप्न पूरा कर सकेंगे और 'गाजी' की उपाधि धारण कर सकेंगे ।

अमरीका इस महासंघ की स्थापना में आशा की एक नयी किरण देखता है । अफगानिस्तान-पाकिस्तान इस्लामी महासंघ की कट्टरतावादी सरकार न सिर्फ दक्षिण-पश्चिम एशिया में रूस के फैलाव को रोकेगी वरन् वह रूस और चीन के मुस्लिम बहुल गणराज्यों और स्वशासित क्षेत्रों में इस्लामी कट्टरतावाद को पनपायेगी और इस प्रकार मध्य एशिया के एक बड़े भाग को कम्युनिस्ट जकड़बंदी से मुक्त करायेगी । तब रूस में नगोर्नो काराबाख जैसे कई ज्वालामुखी फट पड़ेंगे । इस इस्लामी महासंघ की सरकार ईरान के उग्रतावादी शिया मुसलमानों के विस्तारवादी स्वप्नों पर भी अंकुश लगायेगी ।

पाकिस्तान, अमरीका और गुलबुद्दीन हिकमतयार की इस योजना के बारे में भारत के प्रधानमंत्री ने कहा है कि काबुल में इस्लामी कट्टरतावादी सरकार की स्थापना और ज्यादा खतरनाक होगी । पर यह भी सही है कि अफगानिस्तान का घटनाक्रम उसी तरह नहीं घूम रहा जैसे

उसे जिया उल हक और गुलबुद्दीन घुमाना चाहते हैं। जमाते इस्लामी के बुहरानुद्दीन रब्बानी ने कहा है कि कोई इस भ्रम में न रहे कि हमारे सिर पर जबरन किसी को थोपा जा सकता है। जब रूसी ऐसा नहीं कर सके तब दूसरा कौन है जो ऐसा कर सके ?

अफगानिस्तान के राष्ट्रपति डा. नजीब ने कहा है कि आठ साल की लड़ाई में लगभग सवा दो लाख अफगान मारे गये, जिनमें ३४००० स्त्रियां और बच्चे थे। ऐसा जान पड़ता है कि जिनीवा समझौता करके भी अफगानिस्तान युद्ध और मौत के चंगुल से नहीं निकल पाया। रूसी जाते हैं तो गृहयुद्ध होता है, रूसी रहते हैं तो युद्ध होता है।

आग कुछ ऐसी लगी है कि वह पड़ोसियों को जलाये बिना शायद न रहे। पाकिस्तान इस आग में कूदने की तैयारी करता नजर आ रहा है। वैसे पाकिस्तान ने मंजूर किया है कि मास्को और काबुल ने हमारे घर में कई भयंकर विस्फोट कराये हैं। १००० व्यक्ति पकड़े गये, जिन्होंने काबुल के जासूस होना स्वीकार किया। इनमें से कुछ फांसी पर चढ़ा दिये गये।

मतलब यह कि यदि काबुल चैन से न बैठ पायेगा तो इस्लामाबाद की भी नींद हराम रहेगी।

—१/११ डालीबाग कालोनी,
तिलक मार्ग, लखनऊ-२२६००१

□

(पृष्ठ २२ का शेषांश)

प्रातःकालफूलों की अंजलि अर्पण करने वाला शेफाली का एक पेड़ आज भी मेरे आंगन में है, जो भाई साहब की याद दिलाता है।

लिखने को तो बहुत-सी बातें हैं, पर और अधिक लिखा नहीं जाता। अंत में इतना ही कहना चाहता हूं कि मुझे साहित्यिक प्रेरणा भाई साहब से ही प्राप्त हुई थी। उनके लेखों की प्रतिलिपि प्रस्तुत करने या 'कविता-कुसुम-माला' के लिए सरस्वती, सुदर्शन, स्वदेश-बान्धव आदि मासिक पत्रों की जिल्दों से चुनी हुई कविताओं की नकल करते-करते मैं भी लिखने लगा था।

मेरी सर्वप्रथम कविता 'प्रार्थना-पंचक' को, जो 'पूजाफूल' में छपी है भाई साहब ने संशोधन-क्रम से एक अभिनव रूप प्रदान किया था और 'स्वदेशबांधव' में छपवा दिया था। उससे मेरा उत्साह बढ़ा था।

उसी प्रकार 'सफल जीवन' नामक मेरी एक कविता को आचार्य महावीर-प्रसाद द्विवेदी के पास भेज दिया था। द्विवेदीजी ने लिखा, 'आपके भाई की कविता छपेगी।' 'सरस्वती' में यह मेरी प्रथम कविता' जीवन-साफल्य' के नाम से सन् १९१२ में छपी थी। उससे मैं प्रोत्साहित हुआ था।

('मध्य प्रदेश संदेश' से साभार)

□

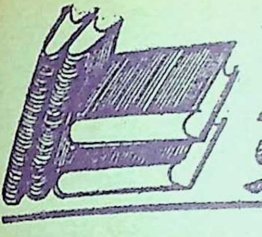

ग्रंथलोक

मारती (पुराणाधारित उपन्यास) *
का: डा. **चित्रा चतुर्वेदी 'कार्त्तिका'**
शक: भारतीय ज्ञानपीठ, नयी
ल्ली; मूल्य : ५० रुपये ।

चमवेद के नाम से विभूषित, महर्षि व्यास-रचित, द्वापर के महाभारत ही प्रतिष्ठा प्राप्त है, जो तत्पुरोगामी ग के महर्षि वाल्मीकिरचित रामा- -रघुवंश-गाथा को। रामाख्यान को लोकृत किया तुलसी ने रामचरित- स देकर ।

पर-युगावतार श्रीकृष्ण सहित महा- रत के दो अग्रणी राज्य-परिवार पांडव और कुरु कुल के प्रमुख पात्र जिस में टीकाकारों ने प्रस्तुत किये, उसी में और उन्हीं सीमाओं में उन पात्रों पाठकों ने पहिचाना है। उपन्यास- रों, नाटककारों और मीमांसाकारों ने अपने विशिष्ट और कहीं-कहीं विल- दृष्टिकोणों द्वारा उन पात्रों की छवि बनायें हमारे मनः पटल पर प्रक्षेपित की है।

स्तुत कृति में विद्वान लेखिका ने नी मौलिकता का परिचय देते हुए द्रौपदी का व्यक्तित्व-विश्लेषण जिस अनोखे दृष्टिकोण से किया है, वह अपने आप में असामान्य है। किसी पात्र के अनुच्चरित, अप्रस्तुत मनोभाव क्या हो सकते हैं, उन्हें मन की गहराइयों के तलातल से मणि-मुक्तावत् खोजकर लाना और अपने विशिष्ट तर्क-आवरण में प्रस्तुत करना एक भिन्न ही चिंतन प्रक्रिया है, जो सामान्यता से परे है। यही इस कृति की विशेष बात है, अलग पहिचान है।

इस ग्रंथ का आद्योपांत पठन अंततः कुछेक अल्प संशय के मोहरे भी छोड़ जाता है। जैसे—अन्यान्य महाभारत कथा-ग्रंथों से पृथक् हटकर इस ग्रंथ में दुर्योधन, दुःशासन, दुःशला के नामों में 'दु' के स्थान पर 'सु' का सायास प्रयोग—सुयोधन सुशासन, सुशला आदि लेखिका का निजी भाव हो सकता, जिसका सर्वग्राह्य होना आवश्यक तो नहीं।

प्रस्तुत कृति को पढ़ने के पश्चात् यह अपेक्षा शेष रही कि महाभारत हो अथवा रामायण या श्रीमद्भागवत उन पुराण-पात्रों के अंतरतम में करवटें बदलते उनके मौलिक मनोभाव क्या हो सकते हैं; उनमें

गहरे पैठा जा सके, ऐसे प्रयास इस उपन्यास की विद्वान लेखिका की भांति अन्य और भी हों । यह उपन्यास सामान्य उपन्यासों से कहीं उच्चतर है, अतः अभिनंदनीय है ।

—श्याम सरन विक्रम

ooo

*** अपराजिता (कथा काव्य) * रचयिता : श्री योगेश 'प्रवीन'; प्रकाशक : श्री बद्रीनारायण तिवारी, अध्यक्ष / संयोजक मानस संगम कानपुर; मूल्य : पचीस रुपये।**

मानस-संगम, कानपुर, गत अनेक वर्षों से राम-कथा के प्रचार व प्रसार का स्तुत्य कार्य संपन्न कर रहा है। इस पुनीत कार्य के विविध कार्यक्रमों में राम-कथा संबंधी साहित्य का प्रकाशन भी एक कार्य है। इस कार्य के कार्यान्वयन हेतु 'मानस संगम' अब तक अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन कर चुका है । इसी शृंखला की एक कड़ी सुपरिचित लेखक व कवि श्री योगेश 'प्रवीन' का 'अपराजिता' कथा-काव्य है ।

अवध के नवाबी-काल के परिप्रेक्ष्य में तत्कालीन मंदिरों और मुस्लिम भवनों के रोचक तथ्यों तथा प्रसंगों को प्रकाश में लाकर आपने इतिहास लेखन में अच्छी ख्याति अर्जित की है । अवध की राजधानी एवं भगवान राम की जन्म भूमि अयोध्या को अपने कथा-काव्य का आधार लेकर उनका कवि रूप भी हिंदी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हुआ है—यह प्रसन्नता का विषय है ।

कवि के शब्दों—में 'अपराजिता' का आशय है वो जिसे पराजित न किया
सके । चेतन संदर्भ में इसका अर्थ
है, तो अचेतन व्याख्या से 'अयोध्या'
है । वह नगरी जिससे युद्ध न किया जा
और वही है 'अपराजिता'।

'अपराजिता' के कवि ने भी राम-
प्रसंग और उससे संबंधित अंतर्द्वंद्वों
मार्मिक एवं मधुर संवेदनाओं से
करते हुए सम्यक् विस्तार से अंकित
है जो जनमानस को अवश्य
करेगा और साथ ही उसे अयोध्या
जुड़े रखेगा—ऐसा मेरा विश्वास है।
राजिता' का यह मार्मिक प्रसंग पठनीय है

रामकथा के अन्य प्रसंगों की
अभिव्यक्ति के साथ ही प्रकृति के
मनोहारी रूपों का सांगोपांग वर्णन
सर्ग में 'ऋतुपर्व' शीर्षक के अंतर्गत
किया गया है।

राजतिलक से प्रारंभ करते हुए वन
से वापसी तक की कथा 'अपराजिता'
छह सर्गों में वर्णित की गयी है।
लेखक डॉ. निशंक के विचार से-
ने ईश्वरत्व की पहचान छह ऐश्वर्यों
माध्यम से की है। इसीलिए इस
काव्य को छह खंडों अथवा ऐश्वर्यों
विभाजित किया गया है। यद्यपि
सर्ग ही 'पहला ऐश्वर्य' के नाम से
किया गया है। अन्य सर्गों के साथ
शब्द छूट गया है। यह मुद्रण की
सकती है।

मानव मन को भगवान राम के

की सुखानुभूति से पुलकित करना; जीवन के मनोरम चित्रों को उकेरना; ली माण्डवी की मनोदशा का चित्रण, जो अन्य कवियों द्वारा उपे- रहा है; चित्रकूट-सभा आदि प्रसंग कथा-काव्य की उल्लेखनीय विशे- हैं, जिनके कारण इस कृति के प्रणयन र्थकता सिद्ध होती है। प्रेम, भक्ति और रक्ति ही परम तत्व को सुलभ बनाती है। तथ्य को 'अपराजिता' के कृतिकार ने सुंदर शब्दों में प्रस्तुत किया है :

को पातें हैं सब करके त्याग तपस्या
संयम नेम
सका ही लाभ चाहता अर्पित करके
केवल प्रेम
तत्व को पा सकती है केवल एक
शक्ति अनुरक्ति
नीतियां सब खो जातीं जहां प्रकट
होती है भक्ति

अंत में यह लिखना परम आवश्यक होता है कि मुद्रण-संबंधी अनेक यों के कारण सामान्य पाठक की नुभूति में व्यवधान उपस्थित होना है।

—डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र

०००

णिका-उद्भव और विकास* लेखक : ाद रामपुरी; प्रकाशक : कमलादेवी शन; ललितपुर कालोनी, लश्कर, लियर; मूल्य : पंद्रह रुपये।

से हिंदी साहित्य में व्यंग्य ने अपनी स्थापना की है, तब से व्यंग्य के क्षेत्र में नये-नये प्रयोग किये जा रहे हैं। इन प्रयागों में 'क्षणिका' (लघु काव्य-व्यंग्य) बहुत ही प्रभावी हुई है।

आजाद रामपुरी की नयी कृति 'क्षणिका-उद्भव और विकास' इस विधा का सम्यक इतिहास प्रस्तुत करती है। इस कृति में लेखक ने 'क्षणिका' का उद्भव सत्तर के दशक में माना है। अध्याय दो में क्षणिका के स्वरूप व परिभाषा को व्याख्यायित किया गया है। लेखक ने 'क्षणिका को काव्य विधा का एक धार-दार तेवर' कहकर निरूपित किया है।

अध्याय पांच में क्षणिका का वर्णन बड़ी खूबी से किया गया है। एक श्रेष्ठ क्षणिका की परिभाषा देते हुए कहा गया है कि 'देखन में छोटी लगै घाव करै गंभीर' – एक उदाहरण दृष्टव्य है –

भारतमाता की
बंधी वेणी के केश खुलकर
कई भागों में बंट गये।
क्योंकि फीते, जनमें बंधे थे–
उद्घाटन में कट गये!

आज जब आदमी पेट की आपाधापी में इतना व्यस्त है कि उसे मरने तक का समय नहीं है; ऐसे में क्षणिका उस पर अल्प समय में एक दीर्घ प्रभाव छोड़ जाती है–

सूखा में राहत की–
हरियाली उगार रहे हैं।
जनता सूख रही हैं
नेता हरिया रहे हैं!

कुल मिलाकर आजाद रामपुरी की यह

कृति–क्षणिका को काव्य जगत में स्थापित करने में बहुत ही कारगर साबित होगी और शोधार्थियों तथा क्षणिकाकारों के लिए बहुत ही उपयोगी भी होगी।

–शिवचरण चौहान

०००

***मैं गीतों की बनजारिन (कविता संग्रह) * लीला तलरेजा; प्रकाशक : आत्माराम एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली; मूल्य: २५ रुपये।**

'मैं गीतों की बनजारिन' लीला तलरेजा का पहला कविता-संग्रह है, जिसमें गीत, गज़ल और मुक्त छंद की रचनाओं का समावेश है। संग्रह में देशभक्ति और व्यक्ति अनुभूतियों की कविताएं हैं। देश, समाज और जीवन की विसंगतियों को कवयित्री ने रेखांकित करने की कोशिश की है।

'गीत नहीं ये सुख-दुख के
साथी हैं सदा सहारे हैं,
मोल नहीं कोई इनका
जग की हर चीज से न्यारे हैं।'

गीतों की परिभाषा के साथ कवयित्री ने देश-वर्तमान के शब्द-चित्रों को यथार्थ परक भाषा में प्रस्तुत किया है। प्रदेश की विविधता में एकता के स्वर को भी उभारा गया है,

'ये काया न हिन्दू-मुसलमान होती है
ना सिख ईसाई की ही पहचान होती है
एक ही माटी के पुतले हैं हम सभी
एक-सी ही आत्मा और जान होती है।'

समानता और समभाव की कविताओं के अतिरिक्त एकांत और व्यक्तिगत अ
भूतियों की भावभूमि पर कई रचनाएं इ
सम्मिलित की गयी हैं। कवयित्री ने कोशि
की है कि उनकी विविध काव्य-
और प्रतिभा का संकलन इसमें हो सके
कवयित्री का पहला काव्य संकलन हि
पद्य के भविष्य के लिए आशा जगाता है।

०००

***'अपूर्व-पर्व' (खंड काव्य) * डॉ. चक्रवर्ती; प्रकाशक : काव्य-पीठ, १७-९-१७९। कूर्मागुडा, हैदराबाद, आंध्र प्रदेश; मूल्य: २० रुपये।**

यह काव्य पुस्तक मूलरूप से आध्यात्मि
और श्रीमद्भागवत की कल्पनाओं
उजागर करती है। डॉ. चक्रवर्ती की
त्यिक और ऋचाओं के अनुकूल शब्दा
से यह काव्यगाथा गंभीर बन पड़ी है
काल-कालिंदी फूल की निर्वेद भूमि
इस प्रणयी युगल की यह अमृत गाथा है
कवि के अनुसार रागात्मकता की
भूमि पर प्रकृति पुरुष का यह नि
सृष्टि रहस्य शाश्वत सृजनात्मक प्रक्रिया है
कवि की शब्दावली आध्यात्मिक है

'प्रचंड व्योम अश्लेषा
के चिन्मय-प्रांगण में
अनंत व्रतचारिणियां
विचरती अतिक्रमण कर
प्रतिहिंसा के
तिमिर-ज्वाल का
क्षर-अक्षर में।

(शेषांश पृष्ठ १२९ पर)

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन साहित्य, और संस्कृति का मासिक

प्रार्थना

स नः शक्रश्चिदाशकत्
दानवां अन्तराभरः ।
इन्द्रो विश्वाभिरूतिभिः ।। ऋक्८.३२.१२ ।।

जगत उद्यान के हे दिव्य माली! सकल जग के विधाता शक्तिशाली!
खड़े हम दीन कब से हाथ खाली, कृपा की दृष्टि क्यों तुमने हटा ली?
कहां पर नाथ! वह जाये भिखारी, जिसे हो नित्य ही की भीख प्यारी?
महादानी तुम्हारा नाम जग में, प्रतीक्षा में खड़ा कब से सजग मैं?
बटोही दूर से मैं आ रहा हूं, नहीं कुछ याद, मंजिल पर कहां हूं?
यहां से शीघ्र ही चलना नियत है, अगम जग-सिंधु निश्चित भी न पथ है।

[रूपांतर : सत्यकाम विद्यालंकार]

जानकीनाथ सहाय करें जब, कौन बिगाड़ करे नर तेरो!

□

दुर्गाप्रसाद मंडेलिया

उपरोक्त शीर्षक की पंक्तियां गोस्वामी तुलसीदासजी के एक प्रसिद्ध पद की हैं। चार सौ वर्ष पूर्व तुलसीदासजी ने वेद, पुराण, उपनिषद् तथा अन्य आध्यात्मिक ग्रंथों का निचोड़ निकालकर साधारण जनता के समझ में आने वाली सरल भाषा में श्रीरामचरितमानस में रख दिया। उनके लिखे अनेक ग्रंथों में श्रीरामायण के बाद दूसरा स्थान है, विनय पत्रिका का। यह पद विनय पत्रिका के पदों में से एक है। इस पद में मनुष्य को अपना जीवन सफलता से बिताने का मंत्र दिया है और वह है 'जानकीनाथ सहाय करें जब, कौन बिगाड़ करे नर तेरो'।

मनुष्य जीवन बहुत छोटे रूप में महाभारत का युद्ध ही समझना चाहिये। महाभारत युद्ध में पांडवों को बहुत-से अत्यायों का सामना करना पड़ा था। उनके विपक्षी उनके भाई ही थे, जिनके पास सत्ता, संपत्ति, वीर योद्धा, आचार्य, गुरु सब थे। पांडवों के पास यह सब कुछ नहीं था। उनके पास केवल श्रीकृष्ण का सहारा था। जब उनके लिये न्याय पाने के लिये युद्ध लड़ने के सिवाय और कोई चारा नहीं रह गया, तब अर्जुन श्रीकृष्ण के पास गया। उधर दुर्योधन को जब इसका पता लगा तब वह भी वहां पहुंच गया। श्रीकृष्ण द्वारा दोनों को पूछने पर दुर्योधन ने तो कृष्ण की सत्ता, संपत्ति, सेना सब मांग ली। अर्जुन ने यह सब कुछ नहीं चाहकर स्वयम् श्रीकृष्ण को अपने साथ रहने का अनुरोध किया। श्रीकृष्ण ने युद्ध में अस्त्र नहीं उठाने का अपना संकल्प बताया तो अर्जुन ने अविचलित रहकर इसे सहर्ष स्वीकार कर लिया, क्योंकि अर्जुन को तो केवल भगवान की कृपा उनका वरदहस्त ही पाना अभीष्ट था और अंत में दुर्योधन के पास जीत के सब साधन रहते हुए भी जीत पांडवों की ही हुई। युद्ध के अंत में जब संजय युद्ध का सारा वृत्तांत धृतराष्ट्र को सुना रहे थे तब उन्होंने भी एक ही निचोड़ निकाला। संजय ने कहा :

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम॥

इसका भावार्थ है कि जहां अर्जुन जैसा भगवान में अटल विश्वास वाला मनुष्य अपने को भगवान की शरण में ले आता

तब उसकी विजय अवश्यंभावी है।

उपरोक्त पद में हजारों वर्ष पूर्व का अनुभव प्राप्त परिणाम ही गोस्वामीजी ने प्रकट किया।

प्रश्न अब यह उठता है कि भगवान की ...यता मनुष्य किस प्रकार प्राप्त कर ...ता है? जब हम किसी की सहायता के ...क होते हैं, तब हमें उसमें श्रद्धा और ...वास तो होना ही चाहिये। इसी तरह ...वान को यदि हमें अपना जीवन साथी ...ना है तो हमें उनकी कृपा का अधिकारी बनना होगा। फिर अर्जुन की तरह ...वान से सहायता की याचना करनी ...गी और जैसे अर्जुन श्रीकृष्ण के पास ...या गया वैसे ही हमें भगवान के पास ...चना होगा; अन्यथा भगवान को हमारे ...न बुलाना होगा।

यह भी सत्य है कि यदि हमको किसी ...ो जीवन-साथी बनाना है तो उसको ...मारे पास रहने में कोई संकोच नहीं होना ...हिये। उसको हमारे पास रहने में ...ता होनी चाहिये। यह तभी संभव है ...ब हमारे घर का वातावरण और हमारा ...चरण उसके अनुकूल हो और वह उस ...र को अपना ही समझने लगे। भगवान ...े अनुकूल वातावरण का घर कैसा हो, ...और उनको जीवन-साथी बनाने वाले का ...चरण कैसा हो यह श्रीरामचरितमानस में श्रीराम के बनवास के एक प्रसंग ...ें मिलता है।

जब श्रीराम ने महर्षि बाल्मीकि के आश्रम में पहुंचकर अपने वनवास काल में रहने के लिये उनसे उपयुक्त स्थान पूछा तब महर्षि बाल्मीकि ने उनके निवास के लिये उपयुक्त उन मनुष्यों के हृदय में बताया जो उनके अनन्य भक्त हों और जो सदाचारी हों। अनन्य भक्त की व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा :

चौपाई :

जिन्ह के श्रवन समुद्र समाना।
कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना।
भरहिं निरंतर होहिं न पूरे।
तिन्ह के हिय तुम्ह कहुं गृह रूरे।
लोचन चातक जिन्ह करि राखे।
रहहिं दरस जलधर अभिलाषे॥
निदरहिं सरित सिंधु सर भारी।
रूप बिंदु जल होहिं सुखारी।
तिन्ह कें हृदय सदन सुखदायक।
बसहु बंधु सिय सह रघुनायक॥

दोहा :

जसु तुम्हार मानस बिमल हंसिनि जीहा जासु।
मुकताहल गुन चुनइ राम बसहु हियं तासु॥

चौपाई :

प्रभु प्रसाद सुचि सुभग सुबासा।
सादर जासु लहइ नित नासा।
तुम्हहि निबेदित भोजन करहीं।
प्रभु प्रसाद पट भूषन धरहीं॥
सीस नवहिं सुर गुरु द्विज देखी।
प्रीति सहित करि बिनय बिसेषी।
कर नित करहिं राम पद पूजा।
राम भरोसा हृदय नहिं दूजा॥
चरन राम तीरथ चलि जाहीं।

१६८८

राम बसहु तिन्ह के मन माहीं।
मंत्रराजु नित जपहिं तुम्हारा।
पूजहिं तुम्हहि सहित परिवारा।
तरपन होम करहिं बिधि नाना।
बिप्र जेवांइ देहिं बहु दाना।
तुम्ह तें अधिक गुरहि जियं जानी
सकल भायं सेवहिं सनमानी ॥

दोहा :

सबु करि मागहिं एक फलु राम चरन रति होउ।
तिन्ह के मन मंदिर बसहु सिय रघुनंदन दोउ ॥
स्वामि सखा पितु मातु गुर जिन्ह के सब तुम्ह तात।
मन मंदिर तिन्ह के बसहु सीय सहित दोउ भ्रात ॥
जाहि न चाहिअ कबहुं कछु तुम्ह सन सहज सनेहु।
बसहु निरंतर तासु मन सो राउर निज गेहु ॥

अर्थात् जनके कान समुद्र की भांति आपकी सुंदर कथारूपी अनेकों नदियों से निरंतर भरते रहते हैं, परंतु कभी तृप्त नहीं होते, और जिनके नेत्र चातक की तरह आपके दर्शनरूपी मेघ के लिये सदा लालायित रहते हैं, तथा जो नदियों समुद्रों और झीलों के जल से भी तृप्त नहीं होते. परंतु आपके सौंदर्य की एक बूंद जल से ही सुखी हो जाते हैं। हे रघुनाथजी, उन लोगों के हृदय में आप निवास कीजिये।

जिसकी जीभ मानसरोवर में रहने वाली हंसिनी की तरह आपके गुणरूपी मोतियों को चुगती रहती है, तथा जिनकी नासिका आपके अर्पित पवित्र और सुगंधित द्रव्यों को सादर सूंघती है, और जो आपको अर्पण करके बाद प्रसाद के रूप में भोजन करते हैं और जो वस्त्राभूषण भी आपके प्रसाद रूप में ही धारण करते हैं तथा देवता, गुरु और ब्राह्मणों को देखकर जिनके मस्तक बड़े नम्रता के साथ प्रेमसहित झुक जाते हैं और जिनके हाथ नित्य आपके चरणों की पूजा करते हैं, एवम् जिनके हृदय में केवल आपका ही भरोसा है, दूसरे किसी का भी नहीं तथा जिनके चरण आपके तीर्थों में चलकर जाते हैं, हे रामजी ! आप उनके मन में निवास कीजिये।

जो नित्य आपके मंत्रराज को जपते हैं और परिवार सहित आपकी पूजा करते हैं, जो अनेकों प्रकार से तर्पण और हवन करते हैं, तथा ब्राह्मणों को भोजन कराकर बहुत दान देते हैं, तथा जो गुरु को हृदय में आपसे भी बड़ा जानकर सर्वभाव से सम्मान करके उनकी सेवा करते हैं, और ये सब कर्म करके सबका एकमात्र यही फल मांगते हैं कि श्रीरामचंद्रजी के चरणों में हमारी प्रीति हो, उन लोगों के मनरूपी मंदिर में सीताजी और रघुकुल को आनंदित करनेवाले आप दोनों बसिये।

जिनके स्वामि, सखा, पिता माता और गुरु सब कुछ आप ही हैं और जिनके

कुछ भी नहीं चाहिये, और जिसका स्वाभाविक प्रेम है, आप उसके निरंतर निवास कीजिये, वह आपका घर है।

तरह सद् आचरण का वर्णन करते न्होंने बताया कि जिसे :

कोह मद मान न मोहा ।
न छोभ न राग न द्रोहा ।।
न्ह कें कपट दंभ नहिं माया ।
न्ह कें हृदय बसहु रघुराया ।।
के प्रिय सब के हितकारी ।
सुख सरिस प्रशंसा गारी ।
हिं सत्य प्रिय बचन बिचारी ।
सोवत सरन तुम्हारी ।।
म्हहि छाड़ि गति दूसरि नाहीं ।
बसहु तिन्ह के मन माहीं ।
नी सम जानहिं परनारी ।
पराव बिष तें बिष भारी ।।
हरषहि पर संपति देखी ।
होहिं पर बिपति बिसेषी ।
न्हहि राम तुम्ह प्रानपिआरे ।
के मन सुभ सदन तुम्हारे ।
तजि सब के गुन गहहीं ।
धेनु हित संकट सहहीं ।
निपुन जिन्ह कइ जग लीका ।
तुम्हार तिन्ह कर मनु नीका ।।
तुम्हार समुझइ निज दोसा ।
सब भांति तुम्हार भरोसा ।
भगत प्रिय लागहिं जेही ।
उर बसहु सहित बैदेही ।।
पांति धनु धरमु बड़ाई ।
प्रिय परिवार सदन सुखदाई ।
सब तजि तुम्हहि रहइ उर लाई ।
तेहि के हृदयं रहहु रघुराई ।।
सरगु नरकु अपबरगु समाना ।
जहं तहं देख धरें धनु बाना ।
करम बचन मन राउर चेरा ।
राम करहु तेहि कें उर डेरा ।।

अर्थात् जिनके न तो काम, क्रोध, मद, अभिमान और मोह है, न लोभ है, न क्षोभ है, न राग है, न द्वेष है, और न कपट, दंभ और माया ही है। जो सबके प्रिय और सबका हित करनेवाले हैं, जिन्हें दुःख और सुख तथा प्रशंसा (बड़ाई) और गाली (निंदा) समान हैं, जो विचारकर सत्य और प्रिय वचन बोलते हैं तथा जो जागते-सोते आपकी ही शरण हैं, और आपको छोड़कर जिनके दूसरी कोई गति (आश्रय) नहीं है, हे रामजी ! आप उनके मन में बसिये।

जो परायी स्त्री को जन्म देनेवाली माता के समान जानते हैं और पराया धन जिन्हें विष से भारी विष है, जो दूसरे की संपत्ति देखकर हर्षित होते हैं और दूसरे की विपत्ति देखकर विशेषरूप से दुखी होते हैं, जो अवगुणों को छोड़कर सबके गुणों को ग्रहण करते हैं, ब्राह्मण और गौ के लिये संकट सहते हैं, नीतिनिपुणता में जिनकी जगत् में मर्यादा है, उनका सुंदर मन आपका घर है।

जो गुणों को आपका और दोषों को अपना समझता है, जिसे सब प्रकार से

आपका ही भरोसा है, और रामभक्त जिसे प्यारे लगते हैं, और जो जाति, पांति, धन, धर्म, बड़ाई प्यारा परिवार और सुख देनेवाला घर – सबको छोड़कर जो केवल आपको ही हृदय में धारण किये रहता है, हे रघुनाथजी! आप उसके हृदय में रहिये!

स्वर्ग, नरक और मोक्ष जिसकी दृष्टि में समान हैं, क्योंकि वह सब जगह केवल आपको ही देखता है, और जो कर्म से, वचन से और मन से आपका दास है, हे रामजी! आप उसके हृदय में डेरा कीजिये।

उपरोक्त पद में यह भी कहा गया है कि जब भगवान सहायक हो जाते हैं तब सब ग्रह और नक्षत्र भी अनिष्टकारी न होकर– वे सब भी कल्याणकारी हो जाते हैं,

सूरज मंगल सोम भृगु सुत बुध अरु गुरु
वरदायक तेरो।
राहु केतु की नांहि गम्यता संग सनीचर
होत उचेरो।।

महर्षि बालमीकि ने भक्ति और सदाचार दोनों को प्रधानता दी है। भक्ति के साथ सदाचार होने से ही मनुष्य का अहम् मिटता है। अन्यथा बिन सदाचार के केवल भक्ति समाज के लिये घातक हो जाती है। रावण शिव भक्त तो बेजोड़ था। उसने शिव की आराधना अपने सिरों को काटकर की थी। परंतु सदाचार के अभाव में उसको अपनी भक्ति और तद्जनित पराक्रम का बहुत घमंड था, इसीलिये वह असुर जाति के विनाश का कारण हुआ।

महर्षि बालमीकि का श्रीराम के
लिये उपयुक्त हृदय बताने का
नहीं है कि भगवान दूसरे मनुष्यों के
में निवास नहीं करते हैं। भगवान
सभी के हृदय में निवास करते हैं
इसका अनुभव सबको नहीं होता है
इसका अनुभव तो भगवान की
ही होता है। यही रहस्य महर्षि
ने श्रीराम के आगमन पर उनको
करते हुए बताया।

'सोइ जानई जेहि देहु जनाई
जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई

इसका अर्थ है कि भगवान को
जान सकता है, जिसको भगवान
चाहते हैं। अब प्रश्न यह होता है
भगवान किसको चाहेंगे कि वह
जाने। यह स्पष्ट है कि भगवान
जनाना चाहेंगे जिस पर उनकी कृपा
है और भगवान उसी पर कृपा
जो उनको प्रिय हो, जो उनका
जो उनका शरणागत हो।

'अगुन अलेप अमान एक रस
राम सगुन भये प्रेम बस

भगवान के साकार रूप का
और दर्शन होने के लिए विशेष
की आवश्यकता है।

कबीर का एक पद है:

घुंघट का पट खोल, तोको राम
जाग जुगत से रंगमहल में

का अर्थ है कि रंगमहल में यानी दुनिया में 'जाग' और 'जुगत' से ने भगवान को पाया । राम नाम रंतर स्मरण ही 'जाग' है, और मैलरूपी घूंघट को मन से हटाना । का मैल पानी से साफ होता है, परंतु मैल तो निरंतर नाम स्मरण से ही होता है । श्रीरामरक्षास्तोत्र में लिखा स्वप्न में श्रीशिवजी ने बुद्धकौशिक को कहा कि :

रामभद्रेति रामचन्द्रेति वा स्मरन् ।
लिप्यते पापैः भुक्तिं मुक्तिं च
विंदति ।।'

का नाम जो मनुष्य स्मरण करता पापों से मुण्त हो जाता है । उसके पापरूपी मैल की जमी परत साफ ती है।

स्मरण से अहंकार का त्याग और भगवान में अगाढ़ प्रेम होता मनुष्य का मन निर्मल हो जाता उसके दुर्गुण नष्ट हो जाते हैं और के नष्ट होने पर उसमें सब सद्गुण हैं।और तब उसको अपने हृदय में भगवान के सहज ही दर्शन होने लग है।

मीकि मुनि ने एक और भी बात कि जब मनुष्य भगवान को जान है तब वह स्वयम् भी भगवान का हो जाता है । जब तक मनुष्य के में भगवान निराकार रूप से रहते तक वह एक साधारण शरीरधारी मानव ही होता है । परतु जब उसको अपने हृदय में निराकार भगवान की जगह साकार भगवान के दर्शन होते हैं तब उसका वह शरीर साधारण मानव का नहीं रहकर भगवान का आवरण बन जाता है और फलत: वह मानव भगवान का स्वरूप हो जाता है । भक्त और भगवान का भेद समाप्त हो जाता है ।

ऊपर दिये हुए विधानों से यह भी स्पष्ट होगा कि भगवान की प्राप्ति के लिए मनुष्य को किसी कष्टदायक तप अथवा संन्यास लेकर निर्जन वन में निवास करने की आवश्यकता नहीं है; अपना साधारण जीवन व्यतीत करते हुए भगवान को प्राप्त कर सकते हैं । गुरु नानक ने कहा है :

काहे रे ! बन खोजन जाई ।
सर्व-निवासी सदा अलेपा,
तोही संग सभाई ।।
पुष्प मध्य ज्यों बास बसत है,
मुकुर माँहि जस छाई ।
तैसे ही हरि बसें निरंतर,
घट की खोजो भाई ।।

आवश्यकता है मन में भगवान-प्राप्ति की प्रबल उत्कंठा और उसको कार्य-रूप में परिणित करने के लिए श्रद्धा और विश्वास सहित नाम-स्मरण का आधार ।

श्रीरामचरितमानस के प्रारंभ में श्री तुलसीदासजी ने सरस्वती और गणपति वंदना के बाद शिव-पार्वतीजी की श्रद्धा से वंदना की :

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।

याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम् ।।

भगवान के भक्तों में शिव अग्रगण्य हैं और उनके साथ श्रद्धारूपी भवानी हैं। श्री तुलसीदासजी कहते हैं कि मैं श्रद्धा और विश्वास के स्वरूप श्रीपार्वती और श्रीशंकरजी की वंदना करता हूं क्योंकि श्रद्धा विश्वास के बिना मनुष्य अपने अंत:करण में स्थित ईश्वर को नहीं देख सकता है। भवानी श्रद्धा का स्वरूप है। जब वह पार्वती के रूप में भगवान शंकर को वर के रूप में पाने के लिये तपस्या कर रही थी, तब उसकी भगवान शंकर में श्रद्धा की परीक्षा लेने के लिये ऋषियों ने भगवान शंकर की बहुत निंदा की और विष्णु को वरण करने की सलाह दी। परंतु पार्वती ने यही कहा कि यदि आपका कहना सत्य भी है कि शंकर में सब दुर्गुण और विष्णु में सब सद्गुण हैं तब भी मैंने तो शंकर ही से परिणय करने के लिये प्रण ले लिया है, मेरे लिये तो वे ही आराध्य हैं।

०००

जीवन धारण के लिये जितने आवश्यक कार्य हैं, जैसे खाना, सोना, विश्राम करना, वंश चलाना, भगवान ने सब सहज और सुखद बनाये हैं। अपने बनाने वाले ईश्वर का साक्षात् करना भी मनुष्य का एक आवश्यक कार्य ही समझना चाहिये और वह भी उपरोक्त कार्यों की तरह सुगम और सुखद होना चाहिये।

तुलसीदासजी ने भगवान के स्थानों के वर्णन के अंत में कहा :

'नाहि न चाहिय कबहुं कछु,
तुम्ह सन सहज सनेहु
बसहु निरंतर तासु मन,
सो राउर निज गेहु'

इस दोहे में उन्होंने बड़ा ही सुगम, रास्ता बता दिया। बस भगवान से सहज सनेह हो, यानी स्वभाव से प्रेम हो और जिसका निस्वार्थ हो, उसके हृदय को अपना मानकर उसमें भगवान कृपापूर्वक बसते हैं।

जिस मनुष्य का हृदय भगवान घर समझते हैं और यही मानकर निवास करते हैं तब उस मनुष्य का क्या विगाड़ कर सकता है।

'जानकीनाथ सहाय करें जब,
कौन बिगाड़ करे नर तेरो'

पद में ऐसे मनुष्यों का संकेत है।

अपने हृदय में स्थित भगवान को मनुष्य पहचान जाता है तो उसको का वर्णन स्वामी ब्रह्मानंदजी ने एक में इस प्रकार किया है :

रहता था पास में सदा, लेकिन छिपा
करके दया दयाल ने पड़दा उठा दिया
सूरज वो था, न चांद, बिजली न
एक दम वो अजब शान का जलवा

—शुभम्, ३२-ए, अमृता शेरगिल
नयी दि

□

बरषहिं जलद भूमि नियराये

□ रमेश तिवारी 'वीरान'

में एक शब्द है–'ट्रू-अन्ट' । ह शब्द उस विद्यार्थी का विशे- जो अध्यापक से अनुमति लिये कक्षा से भाग जाता है । सीधी- षा में कहें तो 'तड़ीमार' कहेंगे । दिनों व्योम-विद्यालय से मेघ- तड़ीमार विद्यार्थियों की भांति हे । पर त्रेता में ऐसा नहीं होता तुलसी बाबा के अनुसार 'मांगे रसहिं जल, रामचंद्र के राज' अर्थात् ग में मेघ किशोर नियमित भी थे क्चुअल' भी, पर अब ये जब चाहते ब हो जाते हैं । मेरी बूढ़ी ताई युग' का प्रभाव कहती हैं ।

किशोर इतने दिन गायब रहने आज फिर से नजर आये हैं । के कोने से दल के दल चले आ गरजते हुए ।

के रव को 'गर्जना' कहा गया है । ब्द का प्रयोग मेघ के अतिरिक्त र सिंह के लिए भी होता है । सिंह का राजा है, और मेघ को भी कहते हैं । सचमुच का अन्नदाता है, धन्य हो अन्नदाता मेघ-राजा, महाराज !

मेघ-राज की गर्जना से बड़े-बड़े भयभीत हो जाते हैं । कालिदास ने तो मेघ-गर्जना का रोमैंटिक प्रयोग किया ही है । पर मर्यादा-पुरुषोत्तम राम भी इस गर्जना से अप्रभावित न रह सके । 'घन घमंड नभ गर्जत घोरा । प्रियाहीन डरपत मन मोरा ।' राम कभी नहीं डरे, पर इस मेघ-गर्जना ने उन्हें भी डरा दिया । मेघ गरज रहे हैं और मैं भी डर रहा हूं । विंध्याचल की पर्वत शिला पर बैठा मैं, अपनी प्रिया को याद करता हूं और डरता हूं ! कैसा आदिम भय है यह ?

वर्षा मनुष्य को एकाकी बना देती है–चारों ओर से काट कर उसे झरती बूंदों की सलाखों में कैद कर देती है । श्रृंगार को उद्दीप्त करने में वर्षा से अधिक और कोई ऋतु सहायक नहीं होती । मेरा मन विश्लेषण करता है–ऋतुएं छः हैं–ग्रीष्म; पावस, शरद, शिशिर, हेमंत और बसंत । गुण तीन हैं–सत, रज और तम । ध्यान दें तो स्पष्ट है–शरद और शिशिर सतोगुणी ऋतुएं हैं । ग्रीष्म और हेमंत तमोगुणी हैं तथा बसंत और पावस रजोगुणी हैं । इसीलिए श्रृंगार साहित्य में इन्हीं दोनों ऋतुओं के अधिकाधिक बिंब

मिलते हैं । उसमें भी मेरा मन कहता है, कि बसंत अभिसार की ऋतु है—मधु-ऋतु । मिलनातुर अभिसार, सुसज्जित अलंकृत, पुष्पित, खुलने और खिलने की ऋतु है—मधु ऋतु; किंतु पावस तो मिलन की ऋतु है । संपूर्ण सम्मिलन की ऋतु 'सृष्टि की ऋतु' । यह अंकुरण की ऋतु है । धरती के गर्भ में सोये, बीज-बीज के प्रस्फुटन की ऋतु है यह । इसीलिए पुरुष और नारी को भी यह इतनी प्रबल आकर्षण शक्ति द्वारा एक दूसरे की ओर खींचती है ।

मुझे याद आता है 'कामायनी' का एक बिंब—

बार-बार उस भीषण रव से
कंपती धरती देख विशेष,
मानो नील व्योम उतरा हो
आलिंगन के हेतु अशेष।

प्रलय का चित्रण करते हुए, शृंगार की उत्प्रेक्षा ले आना; प्रसाद जैसे महाकवि की प्रतिभा द्वारा ही संभव था । स्त्री-पुरुष के प्रथम मिलन का यह बिंब कितना सार्थक है । पुरुष की बाहुओं का प्रसार, स्त्री का कंप और फिर महा-मिलन । सत्य ही यह महा-प्रलय का क्षण होता है । धरती के लिए, नारी के लिए । पुरुष और आकाश तो मेघ-मुक्त होकर शांत हो जाते हैं, किंतु नारी और धरती को नव-जीवन प्राप्त होता है । जो कुछ पुराना है, सब धुल जाता है, नष्ट हो जाता है, नया आकार ग्रहण करता है ।

सच पूछो तो पति वर्षा की
है । न हो, तो, तरुणी अकाल-
जैसा अनुभव करती है और हो
चारों ओर किचकिच-चड्डी,
की बोतल, आउं आउं!

पर मेरे विवादी मन में एक
उत्पन्न होती है । पावस का
पुरुष मिलन के लिए इतना
स्त्रियों को श्रावण मास में पिता
जाने की परंपरा क्यों चलायी
मेरे जिज्ञासु मन को मेरी
समझाती है और वह चमत्कृत
है—पूर्वजों के सामाजिक और
निक ज्ञान की गंभीरता पर ।
गांवों में यह रिवाज है कि
फसल कटी, दरिद्र से दरिद्र के घर
अन्न आया । नयी धोती
संभव हुआ तो कुछ गहना भी बना,
आयी और स्त्री पति गृह से पिता
गयी । ब्याह-जनेऊ का समय
आषाढ़-कजरारे बादलों की
घिराव । आषाढ़ गरजा, सावन
पत्नी मायके में, पति अपने घर में ।
की बूंदों ने दूरी बढ़ा दी ।
सुलगने लगा । एक दूसरे से
कामना उद्दीप्त होती गयी,
श्रावणी तक का बंधन । बहन
भाई के राखी बांधेगी तब
भर में कामना की चिनगारी,
गयी और श्रावण खतम होते
देवर हाजिर हैं, 'उसे' वापस ले जाने

आषाढ़-सावन के वियोग के बाद मिले तो, बाढ़ में आयी नदियों । जीवन में फिर से नया उत्साह । कामनाओं का जीर्णोद्धार हो । आज शहरों में तीसों दिन-बारहों साथ-साथ रहने वाले युगुलों में जो और ऊब उत्पन्न हो जाती है, नहीं है । दांपत्य को प्रकृति सींचे गाये भी, ऐसा सामाजिक प्रबंध, प्राचीन परंपरा में था, जो अब होता जा रहा है ।

ऐसी भी होती हैं, जिनके पति नहीं । तब गांव में पड़े झूलों पर से स्वर है –

री की सन न न न–सैंया दगा-वारी के भौंरा हो' । स्त्री द्वारा लगाया गया सनातन आरोप उप- आग्रह और आमंत्रण से ओत प्रोत ! बादल अब पूरी तरह घिर आये हैं चमक रही है । 'एक भारतीय की एक कल्पना मेरे मानस में उभर रही है । बड़ा मनमौजी कवि था, उसने बिजुरी द्वारा काजर आंजने की कल्पना की थी–'बिजुरी काजर आंज रही' । काजल लगाते समय तरुणी द्वारा बार-बार आंखें खोलने, बंद करने का प्रभावकारी बिंब । पंत ने भी वर्षा को 'नीलांजन नयना' कहा है–'नीलांजन नयना ! उन्मद सिंधु सुता वर्षा यह, चातक पिक बयना ।' और निराला ने तो मेघों के राग को सुना था । उनके, 'बादल–राग' से सभी परिचित हैं । मुझे तो लगता है–निराला स्वयं साकार मेघ थे । छायावाद के मेघराज–गंभीर गर्जना से अपूरित स्वर था उनका । उनका काव्य भी उनके मेघत्व का प्रमाण है । उनका पूर्ववर्ती काव्य, रस-मय बूंदों की भांति तृषित धरा के लिए पीयूष का संदेश लेकर आया, किंतु उनका परवर्ती व्यंग्य प्रधान काव्य, अपनी उपल–वर्षा द्वारा अशिव को नष्ट करने में सचेष्ट हुआ था ।

हां तो मैं कह रहा था–बादल फिर

वर्षा के बादल

ये वर्षा के बादल।
या बिरहिन की कजरारी अंखियों का पिघला काजल।
सागर पीकर हैं मतवाले, पर्वत से उजले औ काले
अम्बर के पनघट पर आकर, लिये बिजुरिया गोरी संग में-
नाच रहे घन श्यामल।
जब जब अपने कुंतल खोले, नंदन गाये मरुथल डोले
मेरी धरती के आंगन में, आकर ऐसा बरसे, लगता-
बोली छम छम पायल।
मधुघट ढुलके दशों दिशा में, सरसा रसा हुई बरसा में
भीग गये पल किसलय दल से, संध्या तट जब निशा दिवस मिल
हुई प्रणय में पागल।

—वीरेश कात्यायन

अनुरंजिका-आश्रम, ४७/९० हटिया, बान बाजार, कानपुर, उ.प्र.

घिर आये हैं और झमाझम बरसने भी लगे हैं। मेरे सिर से ऊपर टीन की छत जलतरंग बजा रही है। सामने पीपल के पत्ते ता-ता थेई-थेई थिरक रहे हैं। गली में बच्चे कूद-कूदकर, वर्षा में नहा रहे हैं। मेरा रोम-रोम पुलकित है। सब प्रसन्न हैं।

अभी जब वर्षा नहीं हो रही थी, चारों ओर मरघट की शून्यता व्याप्त हो गयी थी। किसानों के चेहरों पर राख उतर आयी थी। धान के नवांकुरों को पीलिया हो गया था। पशु-पक्षी सब अकुला गये थे। झूले थम गये थे। आल्हा के स्वर धीमे हो गये थे। पर मेघराज लौट आये—पूरा परिवेश बदल गया। प्रकृति अपने एक ही तेवर में सारे मूल्य बदल देती है, अपनी एक स्थिति से सारे घाव भर देती है। नारी स्वरूपा है न! पत्नी भी पारिवारिक जीवन में कुछ ऐसे ही
दिखाती है।

मेरी सहानुभूति है अपने होरी
के साथ जिनका श्रम-स्वप्न बन
धनिया मेरी बधाई स्वीकारे और
सहेलियों के साथ झूले पर सावन
उचारे। गोबर भइया तुम बन
गांव से बाहर न जाओगे, न शहर में
चलाकर अपनी जवानी पीसोगे।

तो तुम लौट आये मेघराज! बरसो
खूब बरसो! कण-कण को सींच
राजा, बुंदेलखंड के लोकस्वर में
मिलाकर मैं भी गा रहा हूं–

बरसो बरसो बादर राजा! बरसो रे!
चांदी के बूंदा बरसो! सोने के बूंदा
बरसो बरसो बादर राजा बरसो रे!

— मकरन्द नगर, कन्नौज,

□

ललित कलाएं और संगीत

☐ डॉ. अम्बाशंकर नागर

बंबई की कला और संगीत की अद्वितीय सेवा करने वाली विख्यात संस्था 'सुर शृंगार संसद' के ३४ वें स्वामी हरिदास संगीत संमेलन के अवसर पर संगीत-पीठ के १५ वें दीक्षांत समारोह में गत ४ जून १९८८ को बंबई के बिरला क्रीड़ा केंद्र के सभागार में गुजरात विश्वविद्यालय अहमदाबाद के साहित्य-विभाग के भूतपूर्व निदेशक डॉ. अम्बाशंकर नागर के भाषण के कुछ अंश यहां प्रस्तुत हैं। –संपादक

कला की साधना ईश्वरत्व की चरम साधना है। जो कला की साधना करता है वह प्रकारांतर से ईश्वरत्व की ही साधना करता है। कलाएं दो प्रकार की होती हैं–एक उपादेय और दूसरी ललित। पाक-कला, बढ़ईगीरी जैसी उपादेय कलाएं जीवन की स्थूल आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं। ललित कलाएं हमारी सौंदर्याभिरुचि की पूर्ति करती हैं। ललित कलाएं पांच मानी गयी हैं–वास्तु, मूर्ति, चित्र, काव्य और संगीत। इन पांचों कलाओं में क्रमश: उपादानों की न्यूनता और अभिव्यक्ति की प्रचुरता की दृष्टि से काव्य और संगीत कला सर्वोपरि है। मूल रूप में ये दोनों कलाएं अभिन्न थीं, एक थीं। काव्य संगीतमय होता था और संगीत काव्यमय। हमारे यहां संगीत विहीन काव्य को और काव्य विहीन संगीत को अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता था। सामवेद की ऋचाएं शब्द और स्वर की इस समवेत परंपरा का सुंदर उदाहरण हैं।

शब्द और स्वर की समवेत परंपरा

वैदिक युग से लेकर राजपूत युग तक साहित्य और संगीत की यह जुगलबंदी चलती रही, बाद में विदेशी आक्रमणकारियों और मुस्लिम शासकों के कारण उत्तर भारत में साहित्य और संगीत का यह अविच्छिन्न संबंध शनै: शनै: क्षीण होने लगा। मुस्लिम शासकों ने हमारी राग-रागिनियों और तालों को तो पसंद किया, पर उनमें निबद्ध देवी-देवताओं की स्तुतियां उन्हें पसंद नहीं आयीं। मुस्लिम आश्रयदाताओं की रुचि को ध्यान में रखकर दरबारी संगीतज्ञों ने बंदिशों में से धार्मिक कविता को अलग करना शुरू कर दिया।

कैप्टन डे ने तो अपने ग्रंथ में यहां तक लिखा है कि उन विपरीत परिस्थितियों में उत्तर भारतीय संगीत बच कैसे गया, यही बड़ा आश्चर्य है !

संगीत से काव्य के अलग हो जाने के कारण नुकसान दोनों कलाओं को हुआ । किंतु संगीत इस आघात को न सह सका । परिणाम-स्वरूप जयदेव, विद्यापति, सूर, तुलसी, मीरां आदि वाग्गेयकारों की युग-युग से चली आ रही प्रशस्त परंपरा लुप्त हो गयी। 'वाग्गेयकार' (वाक् + गेय = वाग्गेय + कार) उसे कहा जाता था जो—कविता बनाता था और उसे राग-रागिनियों में निबद्ध करके गेय बनाता था और गाता भी था । वाग्गेयकारों की इस परंपरा के लुप्त हो जाने के बाद कवि और गायक अलग-अलग हो गये । नतीजा यह हुआ कि कविता से संगीत का संबंध विच्छेद हो गया।

आज के संगीत में जो कर्णकटु कोलाहल सुनायी देता है और काव्य में जो अछांदस कविता दिखायी पड़ती है, उसके लिए काव्य और संगीत का यह अंतर्विग्रह ही उत्तरदायी है । आवश्यकता इस बात की है कि इन दोनों कलाओं को फिर से एक-दूसरे के निकट लाने का प्रयास किया जाय। मैं समझता हूं यह कार्य साहित्य और संगीत की संस्थाएं मिलजुलकर कर सकती हैं।

संगीत में नवोन्मेष की आवश्यकता

यह सही है कि हम पराधीनता की बेड़ियों से मुक्त हो गये, हमारा देश स्वतंत्र हो गया । किंतु इस नयी अनुभूति की अनुगूंज संगीत में क्यों सुनायी नहीं दे उसमें तो वही पुराना सामंतवादी गूंज रहा है । सब कलाओं में जब न्मेष दिखायी दे रहा है, तब शास्त्रीय सं ही उससे क्यों वंचित है ?

भाषा की दृष्टि से देखें तो देश के स्व होने के बाद खड़ी बोली हिंदी देश की राजभाषा घोषित हुई है। पर संगीत के क्षे में तो अभी भी 'व्रजभाषा' का ही राज है। उससे इनकार नहीं किया जा सकता कि व्रजभाषा अत्यंत श्रुतिमधुर और मधु भाषा है । मध्यकालीन भावबोध के लि वह सर्वथा उपयुक्त भी है। पर जमाने के साथ हमें आगे भी बढ़ना है। नये भावबोध के लिए नयी भाषा की जरूरत पड़ती है। इसीलिए आधुनिक काल के हिंदी कवियों ने व्रजभाषा को छोड़कर खड़ी बोली को अपना लिया है।

आज सारा माहौल बदल गया है। बादशाहों की सल्तनतें और राजाओं के रजवाड़े नहीं रहे । न रहे उनके दरबार हरम और रनवास । मयखानों और बुतखानों का वह आलम भी आज नहीं रहा । विज्ञान ने इतनी तरक्की की कि इंसान चांद तक जा पहुंचा। इस बदले हुए माहौल में संगीत को भी पुरानी केंचुल से बाहर निकलना है, नयी भाषा, न अनुभूति को अपनाना है। यदि सम रहते ऐसा नहीं किया गया तो हमारी नयी पीढ़ी शास्त्रीय संगीत से विमुख हो जायेगी, क्योंकि न वह शास्त्रीय संगीत की

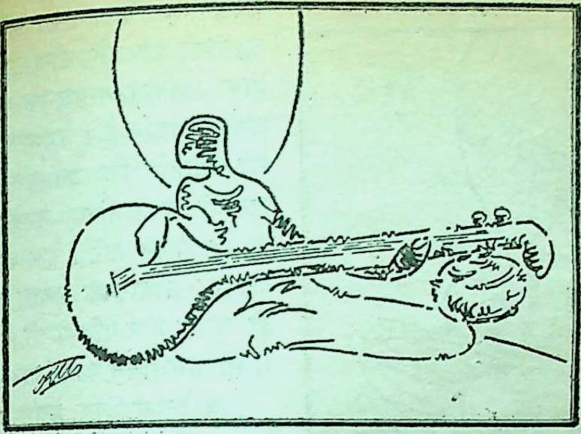

भाषा को समझ रही है और न उसमें निहित भावबोध को। 'नीरभरी गगरी ढुरकावै,' 'बाजूबंद खुल-खुल जाय,' 'झनन झनन मोरी बाजे पायलियां,' 'लट उलझी सुलझा जा बालम' जैसी पंक्तियों में निहित अज्ञात यौवन, प्रोषितपतिका, स्वाधीनपतिका, वाक्विदग्धा आदि नायिकाओं के भेदोपभेद को समझनेवाले आज कितने बचे हैं। जब सामान्य जनता समझ ही नहीं रही है तो प्रश्न उठता है कि हम किसके लिए गा-बजा रहे हैं?

जमाने के रुख को देखकर क्या हम नये जमाने के नये कवियों की चीजों को राग-रागिनियों में निबद्ध करके नहीं गा सकते? 'निराला' की 'वीणा वादिनि वर दे', 'प्रसाद' की 'बीती विभावरी जाग री', 'महादेवी'जी की 'मैं नीरभरी दुख की बदली,'। इसी तरह पंत, बच्चन, नरेन्द्र शर्मा आदि कवियों के गीतों को क्या हम शास्त्रीय संगीत के राग-तालों में निबद्ध नहीं कर सकते? जिस कला में कालानुसरण की क्षमता नहीं होती, उस कला का विकास अवरुद्ध हो जाता है। उत्तर भारतीय संगीत में गति-रोध आ गया है। उसे पुनर्जीवित कीजिये। उसे नयी भाषा, नयी अनुभूति 'नव-गति नव-लय ताल-छंद नव' दीजिये। महाकवि 'निराला' ने अपनी प्रसिद्ध कविता 'वीणा-वादिनि वर दे' में वाग्देवी सरस्वती से प्रार्थना की है: 'नवयुग के नव विहग वृंद को, नव पर, नव स्वर दे।' मैं भी इस अवसर पर उपस्थित देश के महान संगीतज्ञों से विनम्र प्रार्थना करता हूं कि आप भी नये जमाने की नयी पीढ़ी को चहचहाने के लिए नयी भाषा और पंख फड़फड़ाकर उड़ने के लिए नयी अनुभूति दीजिये।

हिंदुस्तानी और कर्नाटक संगीत

भारतवर्ष एक महान देश है। भाषाओं की दृष्टि से जैसे इस देश में आर्य और

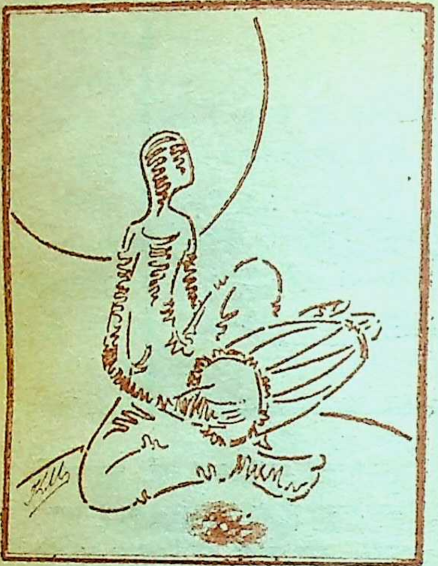

द्रविड़ दो परिवारों की भाषाएं हैं, उसी तरह संगीत की दृष्टि में भी इस देश में— १. हिंदुस्तानी और २. कर्नाटक नामक दो संगीत-पद्धतियां उत्तर और दक्षिण में प्रचलित हैं। ये दोनों पद्धतियां प्रारंभ में एक थीं किंतु, जैसे-जैसे समय बीतता गया, इनका पारस्परिक अंतर बढ़ता चला गया। मूल एक होते हुए भी इन दोनों पद्धतियों में आज इतना अंतर आ गया है कि एक पद्धति के अभ्यस्त (कल्चर्ड) कान को दूसरी पद्धति रुचिकर प्रतीत नहीं होती। आश्चर्य तो यह है कि सात समंदर पार का पाश्चात्य संगीत हमें रुचिकर प्रतीत होता है और अपने ही देश के उत्तर या दक्षिण के संगीत का हम आस्वादन नहीं कर पाते! इस मनःस्थिति को हमें जितनी जल्दी हो सके बदलना है। ऐसा करने के लिए इन दोनों पद्धतियों को हमें सीखना और समझना होगा। संगीत भावात्मक एकता का सबसे सशक्त साधन है। सरकार और संस्थाओं को चाहिये कि इन दोनों पद्धतियों के समायोजन के लिए उनकी जुगलबंदियों का आयोजन करें। इस आदान-प्रदान से देश की भावात्मक एकता तो पुष्ट होगी ही, उत्तर और दक्षिण की संगीत पद्धतियों में भी नवजीवन का संचार होगा।

इस अवसर पर, प्रसंगतः कर्नाटक और हिंदुस्तानी संगीत-पद्धति के तात्त्विक अंतर की ओर संकेत करना भी उचित होगा:

जहां तक मैं समझा हूं, हिंदुस्तानी संगीत में स्वर को लगाते समय हम उसे स्थिर, सीधा और सधा हुआ रखते हैं। भाषा में 'खड़ी बोली' की तरह संगीत में प्रयुक्त हमारा स्वर भी खड़ा (स्टेडी, स्ट्रेट और फर्म) हैं। इसके विपरीत कर्नाटक संगीत में प्रयुक्त स्वर सीधा-सपाट न होकर दोलित, अस्थिर एवं प्रकम्पित (ओसीलेटिंग, वेवरिंग, क्वीवरिंग) होता है। स्वर-प्रयोग की ये दो भिन्न प्रविधियां हिंदुस्तानी और कर्नाटक संगीत-पद्धतियों को एक दूसरे से भिन्न बना देती हैं।

इन दोनों संगीत-पद्धतियों में दूसरा अंतर यह है कि हिंदुस्तानी संगीत स्वर-प्रधान है, जबकि कर्नाटक संगीत ताल एवं लय-प्रधान। हिंदुस्तानी संगीत में जैसे हम वादी-संवादी स्वरों के सहारे राग के रंगों की अत्यंत आकर्षक रंगोली तैयार करते

वैसे ही कर्नाटक संगीत में तिश्र, चतुश्र, खंड एवं संकीर्ण—इन पांच जातियों प्रयोग के आधार पर प्रत्येक ताल का स्तार किया जाता है। संगत करते समय लय की अपेक्षा रुक-रुककर विराम और कों के द्वारा लय में चमत्कार उत्पन्न या जाता है। लय का यह वैचित्र्य ही पद्धति का वैशिष्टच है। अपवाद हर हीं हो सकते हैं, और हैं।

तीसरा अंतर जो मुझे दिखायी देता है यह कि कर्नाटक संगीत अपेक्षाकृत क प्राचीन, भक्ति-भावना पूर्ण और त्यिक है। इसका कारण यह है कि नी-पारसी संगीत का जितना व्यापक व उत्तर में पड़ा, उतना दक्षिण में हीं पड़ा। इसलिए कर्नाटक संगीत की कता, गुणवत्ता, आध्यात्मिकता और त्यिकता आज तक यथावत् सुरक्षित है। मैंने यह अनुभव किया है कि कर्नाटक गीत में आध्यात्मिकता (डिविनिटी) और सुंदरता (ब्यूटी) गौण है, जबकि स्तानी संगीत पद्धति में सुंदरता (ब्यूटी) और आध्यात्मिकता (डिविनिटी) है।

हिंदुस्तानी और कर्नाटक संगीत के क अंत को स्पष्ट करनेवाले अंतिम की ओर संकेत करके मैं इस विषय को नों के विचार-विमर्श के लिए छोड़ चाहूंगा। वह चौथा तथ्य है, उत्तर में 'घरानों' का होना और दक्षिण में उनका अभाव। उत्तर में एक

चित्र : कु. नलिनी मिश्रा

ही चीज़ अलग-अलग घराने अलग-अलग तरह से प्रस्तुत करते हैं। कोई घराना स्वर प्रधान है तो कोई ताल-प्रधान। दक्षिण में ऐसा नहीं है। वहां एक चीज़ को सब एक तरह से प्रस्तुत करते हैं। हिंदुस्तानी पद्धति में प्रायः इसका अभाव है। दक्षिण की तरह हमें भी अपने राष्ट्रीय गीतों और सूर, तुलसी, मीरा, कबीर, नरसी, नानक, नामदेव आदि प्रमुख संतों के कुछ चुने हुए पदों को सुनिश्चित रागों एवं तालों में स्वर-नियोजित करके एक रूप में प्रस्तुत करना चाहिये।

संगीत के प्रभाव के संबंध में वैज्ञानिक अन्वेषण

भारतीय मनीषियों ने नाद को ब्रह्म कहा है और उसकी साधना के माहात्म्य का सविस्तर वर्णन किया है। स्वामी हरिदास, बैजू, तानसेन आदि ने नादोपासना के द्वारा इतनी सिद्धि प्राप्त कर ली थी

कि उन [illegible] होते थे । यह विज्ञान का युग है । आज कोई भी बात वैज्ञानिक साक्ष्यों के बिना मनुष्य के गले नहीं उतरती । इसलिए इस दिशा में हुए वैज्ञानिक प्रयोगों का उल्लेख करना भी आवश्यक हो जाता है ।

हाल ही में देश-विदेशों में जो संगीत संबंधी खोज हुई है, उससे यह सिद्ध हुआ है कि मनुष्य और पशु-पक्षी ही नहीं, वनस्पति पर भी संगीत का व्यापक प्रभाव पड़ता है। जड़ प्रकृति पर भी प्रभाव सिद्ध होने की संभावनाएं उत्पन्न हुई हैं। अभी-अभी ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी में पेड़-पौधों पर ध्वनि के प्रभाव का परीक्षण किया गया । उससे यह सिद्ध हुआ है कि पेड़-पौधे गीत और वाद्य का आनंद लेने की क्षमता रखते हैं ।

'दो कमरों में दो गमले रखे गये। उनमें एक-सी मिट्टी भरी गयी, एक से बीज डाले गये, एक-सी हवा, पानी, धूप, तापमान में उन्हें रखा गया। फर्क इतना रहा कि एक कमरे में संगीत की व्यवस्था की गयी, दूसरे कमरे में नहीं। जिस कमरे में संगीत की व्यवस्था थी, उस कमरे में रखे गये गमले में अंकुर जल्दी फूटा, पौधा जल्दी विकसित हुआ, फूल जल्दी लगे । जिस कमरे में संगीत की व्यवस्था नहीं थी उस कमरे में अंकुर देर से उगा, पौधा देर से विकसित हुआ । पहले पौधे की तुलना में वह अस्वस्थ रहा और उसके फूलों का रंग भी फीका रहा ।'

आगे चलकर इसी विश्वविद्या
प्रयोगों के द्वारा यह भी सिद्ध कि
पेड़-पौधे 'पॉप' या 'जॉज़' की तुल
शास्त्रीय संगीत को अधिक पसंद कर
स्कॉटलैंड के के. डी. दंपति ने
संगीत की सहायता से बंजर भूमि को
भरा कर दिया, यह घटना विश्व-वि
है । विदेश की ही बात नहीं, हमारे दे
भी स्व. पं. ओंकारनाथ ठाकुर ने
विश्वविद्यालय में पेड़ पौधों पर
संगीत के प्रयोग किये थे। हाल ही में
टी. ए. सिंह ने पेड़-पौधों और फसलों
शास्त्रीय संगीत और नृत्य के प्रभाव के
किये हैं और यह सिद्ध किया है कि संगीत
प्रयोग से फसलों का उत्पादन ३० प्रति
तक ज्यादा बढ़ाया जा सकता है।

इन साक्ष्यों के द्वारा मुझे तो
बात सिद्ध करनी है कि संगीत एक
शक्ति है । उसमें मानव जीवन और
का कल्याण करने की क्षमता है।
के सुप्रसिद्ध नाटककार शेक्सपीयर
यहां तक कहा है कि जिस व्यक्ति का
से सरोकार न हो, वह जघन्य से
अपराध कर सकता है, उसका कभी वि
मत करो ।

जिस आदमी में संगीत न हो और
मधुर स्वर-संवादिता से विचलित न
हो, समझ लीजिये वह राजद्रोह कू
और विध्वंसों के योग्य है ;। उसकी
के स्पंदन, रात्रि के समान कुंठित
उसकी भावनाएं अंधकूप की तरह

ग़ज़ल

घरौंदे तोड़ने वालों, कहीं बेघर न हो जाना।
हवा का देख लो रुख, खुद से बेपर्दा न हो जाना।
धुआं उठता जहां पर उस जगह तुम सांस लेते हो,
यहां तुमने नहीं देखा हवा का आग हो जाना।
किसी ने कल यहां कल रात भंवरों को बुलाया था,
सुबह की धूप में देखा कली का फूल हो जाना।
अगरचे दोष मेरा है, गली हम छोड़ देते हैं,
गली के भाग्य में आया सदा वीरान हो जाना।
किसी के सामने सच बोलने की क्यों खता करते,
बहुत देखा यहां उस शख्स का नाराज हो जाना।
कहां तक पत्थरों को पूजकर बहलाओगे खुद को,
नियति है आदमी की आदमी से दूर हो जाना।

—राकेश भ्रमर

सी. बी. आई., एस. पी. ई. आफिस, ७, नवल किशोर रोड, लखनऊ-१

हैं। ऐसे आदमी का कभी विश्वास
करना चाहिये। आज विश्व में अशांति
ी हुई है, सारी मानव-सृष्टि विश्व-युद्ध
य से त्रस्त है। न्यूकलर अस्त्र-शस्त्रों
ृष्टि का विनाश निकट दिखायी दे रहा
यह सब विसंवादिता के कारण है। ऐसे
वादिता और विश्व-शांति की स्थापना
मानव की सबसे बड़ी आवश्यकता है।
समझता हूं कि संगीत इस दिशा
बहुत कुछ कर सकता है। विज्ञान ने
का चाहे जितना प्रकाश फैलाया हो,
चाहे जितनी सुविधाएं प्रदान की हों,
बात निश्चित है कि उसने एक अबोध
शिशु की तरह विश्ववीणा से छेड़छाड़ करके उसकी तरबों को बेसुरा बना दिया है। आइये, बेसुरी तरबों की खूंटियां खींचें और बेसुरे तारों को स्वर में मिलायें। आइये नादब्रह्म की उपासना करें। वही हमें असत् से सत् की ओर, अंधकार से प्रकाश की ओर और मृत्यु से अमरता की ओर ले जायेगा।

असतो मा सद्गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्मा अमृतंगमय।
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।।

—गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद—१४

☐

स्वाधीनता-संग्राम में नौटंकी का योगदान

☐ राजकुमार श्रीवा

१८५७ के गदर के साथ ही अंग्रेजों के अत्याचार और जुल्म को समाप्त करने के लिए हर वर्ग तत्पर हो उठा था। इन्हीं वर्गों में लोगों का मनोरंजन करते हुए अंग्रेजों के विरुद्ध देश में क्रांति की लहर प्रसारित-प्रचारित करने के पवित्र अभीष्ट को लेकर नौटंकी का पूरा क्षेत्र टूट पड़ा। स्वतंत्रता संग्राम के बलिदानों को उजागर कर जन समूह को एक सार्थक भावबोध प्रदान करने की दिशा में नौटंकी की पहल एक ऐतिहासिक महत्व रखती है। भारत मां की चरण-वेदी पर न्यौछावर होने वाले

त्रिमोहन लाल

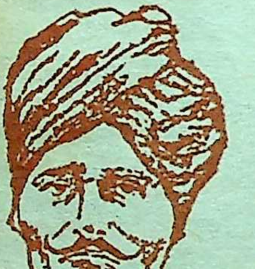

वीर शहीदों की प्रेरणा लेकर
मुरलीधरजी की शिष्य परंपरा में
गढ़ जिला निवासी मुरसान के लाला
लाल ने सांगीत 'गांधी हरन उर्फ
कमाल' लिखा। इसमें गांधीजी के
की प्रत्यक्ष घटनाओं के स्थान पर
अपहरण कर लंदन ले जाने की
घटना जोड़ी गयी, किंतु स्वतंत्रता
की परिकल्पना का साकार रूप
इस नौटंकी में प्राप्त होता है।
कमिश्नर गांधीजी को जेल में
यातनाएं देता है। कमिश्नर के पुत्र
पुत्रवधू भयंकर स्वप्न देखकर
हो जाते हैं और स्वप्न की चर्चा
से करते हैं। वह गांधीजी को मुक्त
के साथ ही भारत की स्वतंत्रता की
कर देता है। उक्त नौटंकी में
कथानक से जन मानस को अपने
नायक के लक्ष्य से परिचित कराया
है। इस काल्पनिक सांगीत की एक

कमिश्नर का पुत्र :

(लावनी) **है भारतवासी गांधी वीर**
आजाद हिंद का बजा चुका है
मेरे पिसर, जेल से उसे छोड़ दीजिए
कहना बाबा जान हमारा मान लीजिए

कमिश्नर :

(दोहा) अब सब कहना मैं पिसर करता
हूं मंजूर
अभी गांधी जेल से दूं मैं छोड़ जरूर ।
(छंद) छोडूं मैं गांधी वीर को धर धीर
दिल, लड़ते जिगर ।
कहना तेरा बेटा करूं,
तू छोड़ दे रंजों फ़िकर ।।
आया मैं सेंटर जेल में,
खोला कुलफ जिस दम मैंने ।
है सत्यधारी वीर को,
बाहर किया एकदम मैंने ।।
कीना बरी सरकार ने,
उस गांधी को जिस घड़ी ।
जो कांग्रेसी वीर थे छायी
खुशी उनको बड़ी ।।

अंग्रेजों की गिरफ्त से बचने की एक बेहद कारगर युक्ति इन लोक रचनाकारों के मस्तिष्क में उपजी । सांगीत 'पिता-पुत्र' अर्थात 'प्रह्लाद का सत्यव्रत' जैसी रचना जिसके रचनाकार पं. कन्हैयालाल चतुर्वेदी हलद्वानी निवासी थे । इस स्वांग सांगीत का प्रथम प्रकाशन सन १९२४ में हुआ था ।

'पिता-पुत्र' सांगीत में प्रह्लाद की कथा को गांधी युग के सांचे में ढालकर प्रह्लाद के चरित्र को गांधीवादी सत्याग्रही के रूप में चित्रित करके लेखक ने विशेष सूझ-बूझ और काव्यात्मकता का परिचय दिया है । प्रह्लाद इस सांगीत में अपने सखाओं को शासन के विरुद्ध ठीक गांधीवादी सत्याग्रही के रूप में ही उकसाते हैं ।

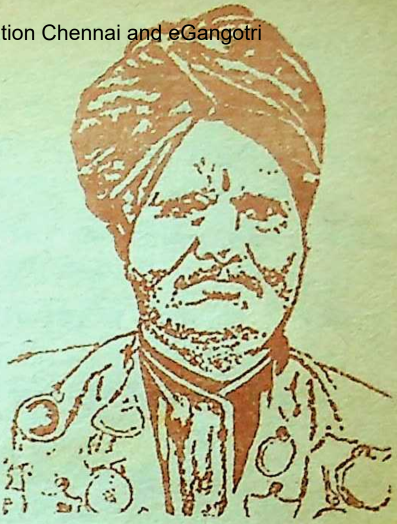

नथाराम गौड़

(दोहा) इस अधरम के शोक में,
भारत है भरपूर ।
लेकिन दहशत के सबब, हैं सब ही मजबूर ।।
(छंद) दहशत से सब मजबूर हैं,
लगता न ये किसको बुरा ।
सतधर्म पर जो चल रहा,
अन्याय, पापी का छुरा ।
ऐसा बनाया एक्ट जो,
बीरन सहा जाता नहीं ।
बंधन गुलामी के अब,
हमसे रहा जाता नहीं ।।
किस तरह पाओ फतह,
तुम शांति के हथियार से ।
भगवान ही रक्षा करें,
अन्यायियों के वार से ।।

इसी क्रम में श्रीकृष्ण पहलवान ने सन

१९३१ में 'वीर बालक' नौटंकी लिखी, जो बाहर से कुछ और है, किंतु उसका वास्तविक रूप निम्नवत् है।

(गजल) **हम देश पे कुरबां हैं,**
हम देश के शैदाई।
आजाद हो रहेंगे, आजादी पसंद आई ॥
हम देश की सेवा से मुंह को न कभी मोड़ें ॥
हिंसात्मक न होंगे–हिंसा है दुखदायी ॥
जो हमको सतायेगा उसको न हम सतावें।
नेकी जो करने वाले करते नहीं बुराई ॥
हिंदोस्तां हमारा हिंदोस्तां के हम हैं।
आबाद जो है कौमें वो सब हमारे भाई ॥
परतंत्रता मिटे तब हिलमिल के जब रहें सब।
सरसब्ज देगा उस दिन हिंदे चमन दिखाई ॥

त्रिमोहन लाल की नौटंकी 'कौमी दिलेर उर्फ भारत सपूत' में दक्षिण के विशुनगढ़ की कथा के माध्यम से देशभक्ति की भावना को प्रस्तुत किया गया है।

(शेर) **मुसीबत कौम के सर की अगर**
हो चाहती हरना।
अभी तुमको पड़ेगी और भी कुर्बानियां
करना ॥
मसलकर ममता को फेंक दो जल्दी से
सीने से।
जिये भी गर गुलामी में, तो क्या है सार
जीने से।

श्रीकृष्ण पहलवान की नौटंकी बलिया का शेर में बलिया के क्रांतिकारी नायक शहीद चित्तू पांडेय के बलिदान की रोमांचक गाथा की ओजस्विता प्रदान कर बलिया के हिंदू-मुसलमानों की एकता और उनके बलिदान को उजागर किया गया है। इ पृष्ठभूमि पर लखनऊ के श्री मनीन्द्र गोस्वामी, 'कक्कूजी' ने बलिया-बलि लिखी, जो पूर्वी उ. प्र. तथा विहार में खेली गयी।

पुरानी कहावत है कि होनहार पूत के पैर पालने में ही दिख जाता है। श्री कृष्ण पहलवानजी ने 'शहीद भगत सिं की जीवनी को नौटंकी का रस प्रदान कर नवयुवकों को स्वतंत्रता संग्राम की ज्वाला में कूदने के लिए प्रेरित किया। इस नौटंकी की लोकप्रियता इसके 'पलना गीत' से खूब बढ़ी।

भोली सूरत पे जाये निसार,
हमारे प्यारे ललना।
गोद में लेकर तुझको खिलाऊं।
मुख छवि पै बलिहारी जाऊं,
कर सोलों सिंगार झुलावें तुम्हें हम पलना।
जुग-जुग जीवों कुंवर हजारी,
अमर होय यश कीर्ति तुम्हारी,
गुण गाये संसार शत्रु दल को दलना।
वीर देश व्रतधारी बनना,
दीनों के हितकारी बनना।
भगत सिंह सरदार नहीं प्रण से टलना।

असहयोग चटनी (सात भाग), जुल की आग, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई जैसी नौटंकियों के प्रभावी प्रदर्शन से भारत की ललनाएं भी शत्रुदल के लिए रणचंडी बन चुकी थीं।

लक्ष्मीबाई नौटंकी की एक-एक ल चिंगारी को हवा देने लगी थीं।

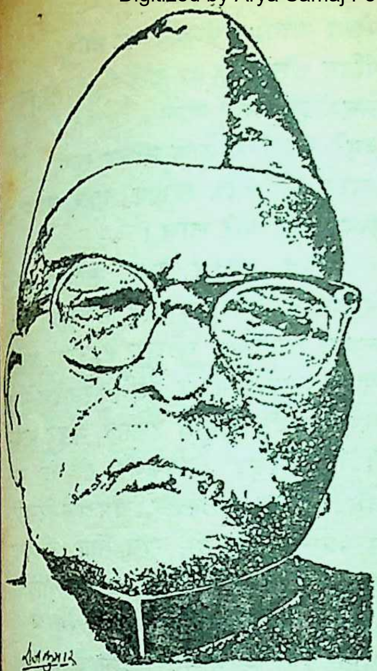

श्रीकृष्ण पहलवान

राज पाकर के इस ग्वालियर का अजी ।
पेशवा हो गये आप हो बेखबर ।
सिंधिया के खजाने की दौलत बृथा ।
खर्च करने में रक्खी नहीं कुछ कसर ।।
काम तदवीर आयेगी एको नहीं,
ऐसे मौके पे मोरे जो दें धावा कर ।
वक्त ऐसे में गफलत नहीं ठीक है ।
युद्ध करने की रखी हमेशा फिकर ।।

'तुम हमें खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा ।' के प्रेरणादायी नारे के नायक सुभाषचंद्र बोस के जीवनकाल की झांकी को संजोकर 'सुभाषचंद्र बोस नौटंकी' ने देश के अमर वीरों के प्रति श्रद्धा प्रकट की। और त्याग को दर्शाने में कामयाब हुई।

देश का एक सच्चा सिपाही हूं मैं,
यार फर्ज वतन की निभा दूंगा मैं।
खिदमते मुल्क में मुस्कराते हुए,
कहके जै हिंद सर को कटा दूंगा मैं ।।
फहरा दूंगा तिरंगे को मैं अर्श पर,
तख्त पर नेहरूजी को बिठा दूंगा मैं ।।

स्व. नथारामजी के स्वांग लेखक श्री रूपरामजी ने नथाराम की मृत्य के पश्चात उनके ही नाम से बंगाल का शेर, जवाहर जीवन, गांधी जीवन, अबुल कलाम आजाद, नेताजी, पंतजी, राजेंद्र प्रसाद जैसी रचनायें लिखीं, किंतु अपरिहार्य कारणों से वे मंच से न जुड़ पायीं।

पूर्वी उत्तर प्रदेश की नौटंकियों में प्रासंगिक लोकगीत गाने की परंपरा नौटंकी के प्रारंभ काल से ही रही है । श्री कृष्ण पहलवान के नौटंकी कलाकार मोती और अलीगढ़ के मिरासी बुद्धी मास्टर 'रंग लायेगी हिना पत्थर में घिस जाने के बाद' जैसे गीत घूम-घूमकर गाया करते थे ।

इलाहाबाद फाफामऊ के स्व. श्री रामराज त्रिपाठी के नौटंकी कलाकार स्व. श्री राम सिंह, स्व. दक्खिनी उस्ताद, स्व. श्रीमती कोकिलाबाई के साथ सर्व श्री राजाराम पांडेय, जय जय राम त्रिपाठी, बद्री पांडेय, राजा शुक्ला, परभू और सुक्खू नौटंकी के माध्यम से, बदरिकाश्रम से बंबई तक क्रांति की चेतना जगाते थे।

सन १९३९ में इस्माइलगंज में संपन्न गांधीजी की सभा में राजाराम पांडेय ने

निम्नलिखित गीत गाये थे।

सत्यव्रत धारी चारी चरखा विहारी,
बांधि कमर में लंगोटी डारि खद्दर की तनियां।
मान बिन अहिंसा विशाल दोनों हाथों से,
ऐंचि खेंचि लीनों बापू भारत को कनियां।
शत्रुन को मित्र के समान जान बापूजी,
ज्योतिषी बखाने विश्वहित की कहनियां।
जग को जगाय दियो देश राग गाय दियो,
लंदन हिलाय दियो भारत का बनियां।

सन ४२–४३ के लगभग जब स्व. श्री लालबहादुर शास्त्रीजी, श्री राजाराम के गांव मटियारा के अरहर के खेतों में छिपकर दिन व्यतीत कर रहे थे, पांडेयजी ने उनकी खूब सेवा की थी।

पं. नेहरूजी को इनका निम्न गीत बहुत ही प्रिय था :

हमारे जवाहिर लाल लंदन में पहुंचे,
पूछन लागी अग्रजवन की नारि,
पंडित छीन लिह्या काहे का टुकड़ा हमार
झमकोइया मोरे लाल।
हमरे जवाहिर लाल बोलन लागे,
भारत का नोंच खाइन तोहरं भतार।
झमकोइया मोरे लाल।

भारत स्वतंत्र हुआ, सर्वश्री कृष्ण पहलवान, नथाराम गौड़, मुरलीधर राय, लक्ष्मी नारायण, श्रीराम मेहरोत्रा, चुन्नीलाल पचासा, मोती, बुद्धी, इस्माइल, नन्हे फर्रुखाबादी, जमुना उस्ताद, शंकर बाजपेयी, 'फक्कड़', कक्कूजी, दीपचंद्र, मा. दसई, उस्ताद छक्कन, रामराज त्रिपाठी, रामप्रसाद भैयाजी, राम सिंह, कोकिला बाई एवं राजराम पांडेय, 'गायन' आदि की तपस्या और नौटंकी क्रांति रंग ले ही आयी।

—५८ मुंडेरा ग्राम, बेगम सराय,
इलाहाबाद, उ.प्र.

□

रोशन सिंह के मृत्यु-दंड के दो साल बाद रोशन सिंह की पत्नी को लड़की की शादी की चिंता हुई। एक स्थान पर बात पक्की हुई, पर इलाके के दरोगा ने लड़केवालों को धमकाया कि क्रांतिकारी की लड़की से शादी करना राजद्रोह समझा जायेगा।

जब एक संपादक को यह पता लगा तो वह पंद्रह मील पैदल चलकर रोशन सिंह के गांव गया और दरोगा की लानत मलामत की।

दरोगा ने माफी मांगी और लड़की के ब्याह का खर्च उठाने को भी तैयार हो गया। बारात आयी। जब कन्यादान के समय लड़की के पिता का सवाल उठा, तो उसी संपादक ने आगे बढ़कर कहा, 'रोशन सिंह के न होने पर मैं लड़की का पिता हूं। कन्यादान मैं करूंगा।'

और कन्यादान करने वाले संपादक थे—श्री गणेशशंकर विद्यार्थी।

काकोरी ट्रेन डकैती के अभियुक्त ठाकुर रोशन सिंह को मृत्यु-दंड मिला।

—डा. गोपालप्रसाद 'वंशी'

□

भारतीय टेनिस की नयी आशा

रमेश कृष्णन्

☐ हरिमोहन शर्मा

एक अजीब-सी दास्तान जुड़ी है, प्रतिभाशाली युवा टेनिस खिलाड़ी रमेश कृष्णन् के साथ जो आज की अंतरराष्ट्रीय टेनिस के अग्रणी खिलाड़ियों में से एक हैं। अजीब होने के साथ-साथ यह दास्तान काफी दिलचस्प भी है, और यह दर्शाती है कि कभी-कभी भविष्यवाणियां सच भी हो जाती हैं।

५ जून, १९६१ का दिन।

स्टॉकहोम में से एक मैच में भारत के रामनाथन् कृष्णन् का मुकाबला आस्ट्रेलिया के नील फ्रेजर से हो रहा था। मैच के बीच में लाउडस्पीकर पर घोषणा की गयी कि रामनाथन् कृष्णन् एक पुत्र के पिता बने हैं, अतः उन्हें मैच के आयोजकों तथा दर्शकों की ओर से बधाई। जब नील फ्रेजर ने भी बधाई दी, तो कृष्णन् ने मुस्कराकर कहा, 'धन्यवाद ! लेकिन, मुझे लग रहा है कि मेरा पुत्र बड़ा होकर एक नामी टेनिस खिलाड़ी बनेगा, और आस्ट्रेलिया के विरुद्ध खेलेगा।'

भविष्यवाणी सच्ची हुई। रामनाथन् कृष्णन्, जो अपने जमाने के विश्व के चोटी के टेनिस-खिलाड़ियों में से एक थे, और दो बार अंतरराष्ट्रीय टेनिस की सर्वोच्च प्रतियोगिता - बिंवलडन - प्रतियोगिता — के सेमी-फाइनल तक पहुंचे थे, के पुत्र रमेश कृष्णन् ने अपने पिता के समान ही अंतरराष्ट्रीय टेनिस-जगत में ख्याति अर्जित की है, और आज उनकी गिनती टेनिस के अग्रणी खिलाड़ियों में होती है। भारत के तो वे श्रेष्ठतम टेनिस-खिलाड़ी हैं ही। विजय अमृतराज के शीघ्र ही रिटायर होने के बाद, वे ही डेविस कप जैसी अंतरराष्ट्रीय टेनिस प्रतियोगिताओं में भारत का नेतृत्व करेंगे। अभी भी अंतरराष्ट्रीय टेनिस के क्षेत्र में खिलाड़ियों के क्रम-विन्यास में वे विजय से बहुत आगे हैं।

पिछले वर्ष, डेविस कपप्रतियोगिता में भूतपूर्व चैंपियन आस्ट्रेलिया को हराकर, भारत को फाइनल में ले जाने का अधिकांश श्रेय रमेश को ही मिला था। आखिरी मैच में जब रमेश ने आस्ट्रेलियाई खिलाड़ी वॉली मासूर को पराजित कर, फाइनल में भारत का प्रवेश सुनिश्चित कर दिया था, तब वहां मौजूद, आस्ट्रे-

लिया के (न खेलने वाले) कप्तान नील फ्रेजर को ५ जून, १९६१ का वह दिन अवश्य याद आ गया होगा, जब इस मैच के दौरान, रमेश के जन्म की सार्वजनिक घोषणा हुई थी, और इस सूचना ने हर्षित तथा प्रेरित, रामनाथन् ने नील फ्रेजर को हराया था ।

ooo

नाटकीय उतार-चढ़ावों से भरपूर था। सिडनी में खेला गया यह मैच, पहले दो मैच जीतने के बाद (इन दोनों मैचों में एक मैच रमेश कृष्णन् ने ही जीता था, भारत अगले दो मैच–एक डबल्स, और रिवर्स सिंगलतम हार गया था। इन दोनों मैचों में भारत के कप्तान विजय अमृतराज ने, जो पहले दोनों मैचों में हारा हुआ मैच खेले थे, ने भाग लिया था। अब भारत के जीतने और डेविस कप के फाइनल में तीसरी बार आने का पूरा दारोमदार रमेश पर था, जिसके लिये इस अंतिम मैच को जीतना बहुत जरूरी था।

रमेश का मुकाबला आस्ट्रेलियाई खिलाड़ी वॉली मासूर से हो रहा था, जो पिछले वर्ष 'आस्ट्रेलियन ओपन प्रतियोगिता में विंबलडन-प्रजेता बोरिस बेकर को हरा चुका था। पहले सेट में अपनी आक्रामक सर्विस के बल पर वह, देखते ही देखते, रमेश से ४–१ से आगे हो गया। आस्ट्रेलियाई दर्शक चिल्ला-चिल्लाकर मासूर को बढ़ावा देने लगे। रमेश को प्रोत्साहित करने वाला कोई न था, कारण भारतीय शिविर में मायूसी छायी हुई थी। सिर्फ, रमेश और मद्रास में बैठे उसके पिता रामनाथन् कृष्णन्, जो अपने ज़माने में विश्व के तीसरे नंबर के खिलाड़ी रह चुके थे, शांत और जीत के प्रति आश्वस्त थे।

रमेश कृष्णन्

हार की कगार पर खड़े रमेश ने, अपने

आत्मविश्वास के वल पर, पहला सेट ८-६ से जीता।

दूसरे सेट में मासूर शीघ्र ही ३-० से आगे हो गया। लेकिन, इसके वाद, संकल्पवान् रमेश ने उसे सिर्फ़ एक अंक ही और अर्जित करने दिया, और दूसरा सेट ६-४ से जीता।

तीसरे सेट के पहले गेम में ही, मासूर की सर्विस भंग करके आस्ट्रेलियाई दर्शकों में खलबली मचा दी। अब मासूर ने जम कर खेलना शुरू किया, और स्कोर को ४-३ कर दिया। अब वह रमेश से सिर्फ एक गेम पीछे था। अचूक सर्विस कर, वह बराबरी पर आना चाहता लेकिन, अब रमेश ने अपना कलात्मक 'टच गेम' छोड़ कर आक्रामक खेल शुरू किया, और स्कोर को बढ़ाकर ५-३ कर दिया। आखिरी गेम में ४०-१५ के स्कोर पर, मासूर ने गेंद 'नेट' में दे मारी, और रमेश ने मैच जीतकर, रमेश ने वही कमाल कर दिखाया, जो उसके पिता रामनाथन् कृष्णन् ने २१ वर्ष पूर्व, कलकत्ता में दिखाया था। इस मैच में कृष्णन् ब्राजील के थॉमस कॉश से दो सेट, ५-२ और ३०-१५ से पीछे थे, लेकिन उन्होंने इस निश्चित पराजय की स्थिति से उबरकर, कॉश को हराकर, भारत को डेविस कप के फाइनल में प्रवेश दिलाया था।

०००

मद्रास में बैठे रामनाथन् ने अपने पुत्र के इस साहसिक और अविस्मरणीय प्रदर्शन को उसके टेनिस-जीवन के सर्वोत्कृष्ट प्रदर्शनों में से एक बताया। इससे पूर्व उनके अनुसार, रमेश के ५ सर्वोत्कृष्ट प्रदर्शन क्रमानुसार इस प्रकार थे :

० १९७९ में १८-वर्षीय रमेश नें विंवलडन जूनियर प्रतियोगिता का खिताब जीता, फाइनल में अमरीका के डेविड सीगलर को ६-०, ६-२ से हराकर। उसका खेल शुरू से ही आक्रामक था।

० १९८१ की 'अमरीकी ओपन' प्रतियोगिता के क्वार्टर फाइनल में विश्व के चोटी के खिलाड़ी जॉन मैकन्रो (अमरीका) को पहले सेट में हराया, और दूसरा सेट जीतने के वहुत निकट आ गया था, लेकिन अंतिम ४ सेटों में जोरदार संघर्ष के बावजूद वह हार गया। किंतु मैक्नरो जैसे चोटी के खिलाड़ी के विरुद्ध यह एक उज्ज्वल और अविस्मरणीय प्रदर्शन था।

० १९८४ के विंवलडन में पिछले वर्ष के दूसरे नंबर के खिलाड़ी क्रिस लुई की तीन स्ट्रेट सेट्स में पराजित कर रमेश ने सनसनी मचा दी थी।

० १९८५ के विंवलडन में तीसरे दौर में जिमी कॉनर्स जैसे उत्कृष्ट खिलाड़ी से एक सेट जीतकर दूसरे में भी काफ़ी बढ़त हासिल कर ली थी। यद्यपि वह अंततः हार गया, तथापि उसके साहसिक तथा आक्रमण और सुरक्षा के मेल से युक्त उनके खेल ने टेनिस-प्रेमियों का मन जीत लिया।

० १९८६ के विंवलडन में ऊंचे दर्जे की टेनिस का प्रदर्शन कर, रमेश ने स्वीडन

के जोआकिम नायस्ट्रोय जैसे जाने-माने खिलाड़ी को चार सेटों में पराजित कर अपनी धाक जमा दी थी।

सुविख्यात टेनिस-कोच अख्तर अली, स्वयं टेनिस के जाने-माने खिलाड़ी रह चुके हैं, का कहना है, 'मैं रमेश के खेल को तब से देखता आ रहा हूं, जब उसकी आयु सिर्फ १४ वर्ष थी। शानदार प्रगति कर, वह अब विश्व के श्रेष्ठतम टेनिस-खिलाड़ियों की श्रेणी में आ गया है। खेलने की उसकी अपनी विशिष्ट शैली है, जिस पर उसके पिता रामनाथन् के 'टचगेम' की कलात्मक शैली का गहरा प्रभाव है यदि वह अपनी सर्विस को बेहतर कर ले, और अपने पिता की-सी एकाग्रता प्राप्त कर ले, तो वह विश्व का चोटी का खिलाड़ी बनकर दिखा सकता है। अनेक अवसरों पर उसने दुनिया के सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ियों के विरुद्ध जो प्रदर्शन किये हैं, उनसे यह आशा और भी ज्यादा बंधती है।'

रमेश अब 'ग्रास' पर बेहतर ढंग से खेलता है। इसका सारा श्रेय जाता है, टेनिस के भूतपूर्व नामी खिलाड़ी रॉय एमरसन को, जिन्होंने उसे गेंद को ज्यादा कठोरता के साथ मारना भी सिखाया। कीर्तिमानों की दृष्टि से रमेश अभी अपने पिता से थोड़ा पीछे हैं, लेकिन हाल के दो-तीन वर्षों में उनके खेल में जो पैनापन और निखार देखने को मिला है, वह विश्वास दिलाता है कि वह शीघ्र ही अपने पिता को काफ़ी पीछे छोड़ देगा। ०००

टेनिस के प्रति रमेश का लगाव, उसके पिता रामनाथन् के अनुसार, 'पालने में ही शुरू हो गया था।' उसके दादा जो उसके पिता रामनाथन् के प्रशिक्षक भी थे, स्वयं टेनिस के अच्छे खिलाड़ी थे, और उनके कलात्मक खेल की छाप रामनाथन् और रमेश दोनों की खेल-शैलियों पर साफ़ दिखायी देती है।

अपने दादा से टेनिस का प्रारंभिक प्रशिक्षण प्राप्त कर, दस वर्ष के रमेश को ज़िद सवार हो गयी कि वह अब टेनिस-टूर्नामेंटों में खेलेगा। टूर्नामेंटों का उसने तब तक नाम ही सुना था। उसकी जिद से तंग आकर उसके दादा ने उससे कहा, 'पहले तुम अपनी मां को तो किसी मैच में हराकर दिखाओ। यदि हरा सके, तो फिर तुम्हें टूर्नामेंटों में खिला-येंगे।' उसकी मां भी अच्छी टेनिस खेलती थी, इसलिये बेचारा रमेश उन्हें हरा न पाता था।

अपने जीवन के पहलें टूर्नामेन्ट में रमेश ने अपने चचेरे भाई शंकर के साथ उसने भाग लिया था। उसका विरोधी खिलाड़ी केरल का था, जिसने उसे जल्दी ही हरा दिया। रमेश को अपनी हार का इतना रंज नहीं था, जितना इस बात का था कि शंकर अभी तक अपने प्रतिद्वंदी से जूझे जा रहा है। उसने अपने पिता से कहा, 'यह ज्यादती है, अन्याय है। मैं बाहर आ गया और शंकर अभी तक खेले जा रहा है।' उसके पिता ने उसे समझाया, 'टूर्नामेंटों में

होता है। जो हार जाता है, उसे ट और मैच से बाहर आना है।'

ने इस पहले मैच के बाद, रमेश ने के आसपास मदुरै, विजयनगरम् स्थानों में अपने भाई शंकर के साथ अनेक टूर्नामिंटों में भाग लिया। र्ष की आयु में उसने पहली बार यशस्वी पिता के एक प्रारंभिक ान की बराबरी की–लोयोला में सर्वोत्तम स्कूली टेनिस खिलाड़ी दान किया जाने वाला स्टेनले कप र। अगले वर्ष, उसने अपनी पहली यात्रा की–इंडियन टेनिस एसो-िएशन द्वारा यूरोप की यात्रा करने एक नवोदित खिलाड़ी के रूप में। िएशन ने कुछ चुने हुए होनहार खिलाड़ियों को अनुभव प्राप्त के उद्देश्य से यूरोप भेजा था।

अनुभव से रमेश को बहुत लाभ और उसने सिर्फ १५ वर्ष की आयु टूर्नामिन्टों में भाग लेना आरंभ या। १६ वर्ष की आयु में वह अपने तथा परिवार के सब सदस्यों के विम्बलडन (इंग्लैंड) गया। यहां पिता के अनुरोध पर प्रसिद्ध टेनिस-हैरी हापमॅन ने, जो अपने ज़माने कप की प्रतियोगिताओं में भाग वाले दल के कप्तान तथा विश्व-टेनिस-खिलाड़ी थे, रमेश को वों की टेनिस का प्रशिक्षण देना आरंभ किया। इस प्रशिक्षण से लाभान्वित होकर, रमेश ने अमरीकी जूनियर प्रतियोगिता में भाग लेकर उसका सर्वोच्च पदक जीतने के अलावा, सात में से छह अन्य खिताब भी जीते।

०००

इसी वर्ष, रमेश ने अपने पिता के एक अन्य कीर्तिमान की बराबरी की, और कलकत्ता में हुई राष्ट्रीय टेनिस प्रतियोगिता के फाइनल में जसजीत सिंह को हराकर राष्ट्रीय प्रजेता पद हासिल किया। इसी वर्ष उसने पहली बार डेविस कप के एक मैच में, जो कोयंबतूर में द. कोरिया के विरुद्ध हुआ था, भाग लिया, और वह मैच जीत कर भी दिखाया।

रमेश के पिता रामनाथन् कृष्णन् ने एक बार कहा था, 'टेनिस हमारे परिवार का धर्म है, हमारी जीवन-शैली का मुख्य अंग है। हम टेनिस खाते हैं, टेनिस पीते हैं, और ज्यादातर टेनिस के बारे-में ही बात करते हैं। दूसरे विषयों का महत्व हमारे लिए टेनिस के बाद ही आरंभ होता है।' अपने पिता तथा परिवार के अन्य सदस्यों की भांति रमेश ने भी टेनिस को अपना जीवन-धर्म मान लिया था, उसका सारा जीवन अब टेनिस के इर्द-गिर्द ही घूमता था। उसने टेनिस को ही, अपना व्यवसाय बनाने का निश्चय ले लिया, पूरी गंभीरता के साथ।

पेशेवर टेनिस-खिलाड़ी के रूप में रमेश ने सर्वप्रथम १९७८ में जापान में

हुई एक अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिता में, भाग लिया, किंतु उसमें उसे कोई उल्लेखनीय सफलता नहीं मिली। उसी वर्ष, उसने हांगकांग में हुई एक अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिता के सेमी-फाइनल तक पहुंचने का श्रेय प्राप्त हुआ। इस प्रतियोगिता में उसने ज्योफ मास्टर्स जैसे श्रेष्ठ तथा विश्व-विख्यात टेनिस-खिलाड़ी को हराकर टेनिस जगत को अपने आगमन की सूचना दी। ए. टी. पी. के क्रम-विन्यास में उसका नंबर १८० वां था। आजकल इसी क्रम-विन्यास में उसका नंबर ३८ है।

१९७९ में उसने बिंवलडन की जूनियर प्रतियोगिता में सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर, अपने पिता के तीसरे कीर्तिमान की बराबरी की। २५ वर्ष पूर्व, रामनाथन् कृष्णन् ने भी इस प्रतियोगिता में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया था। मगर, 'फ्रेंच ओपन' प्रतियोगिता में भी जूनियर वर्ग का प्रजेता-पद प्राप्त कर, वह अपने पिता से एक कदम आगे बढ़ गया। सीनियर वर्ग की प्रतियोगिता में उसने पीटर फ्लीबिंग जैसे प्रतिष्ठित खिलाड़ी को पराजित करने का श्रेय तो प्राप्त किया, लेकिन जिमी कॉनर्स से, जो उस काल में विश्व के दूसरे नंबर के खिलाड़ी थे, हार गया। 'यू. एस. ओपिन' में उसने फिल डेंट जैसे मजे हुए खिलाड़ी को पराजित किया था।

१९८० में रमेश बिंवलडन के पहले दो चक्रों में बिल स्कॉलन और मार्क कॉक्स को पराजित कर, तीसरे चक्र तक पहुंचने में सफल हुआ था। लेकिन, उसके वर्ष की चरमोपलब्धि थी-मनीला आयोजित 'ग्रांड प्रिक्स टूर्नामेंट के नल में शानदार विजय।

०००

१९८१ में उसने 'यू. एस. ओपिन उसने मैकन्रो, जो उन दिनों विश्व के नंबर के खिलाड़ी थे, के खिलाफ संघर्षपूर्ण और रोमांचक खेल खेला, विश्व भर के टेनिस-प्रेमी चकित स्वयं मैकन्रो ने रमेश के जानदार की मुक्तकंठ से प्रशंसा की थी। वर्ष उसने अपनी दूसरी 'ग्रांड प्रिक्स योगिता' जीती, फ्रांस में फाइनल में मोयत्ते को हराकर।

१९८४ में जहां उसने बिंवलडन १९८३ के दूसरे नंबर के खिलाड़ी लुई को पराजित किया, वहां टोकियो आयोजित 'सीको ओपिन' प्रतियोगिता में मैक्स विलंडर, जैसे चोटी के खिलाड़ी को भी पराजित किया, और अपने तथा खेल-कौशल से सबको चकित कर दिया।

१९८६ में रमेश बिंवलडन क्वीन्स क्लब की प्रतियोगिताओं के फानइल तक पहुंचा। जापान प्रतियोगिता में रमेश ने विजयी होकर नया कीर्तिमान स्थापित किया। वर्ष उसने हांगकांग प्रतियोगिता कैश (१९८७ के बिंवलडन जिमी कॉनर्स, और एंड्री गोमेज

न्य खिलाड़ियों को धूल चटाकर, ०,००० डॉलर का पहला इनाम ा। यह इनाम जीतने वाला वह पहला तीय खिलाड़ी है।

१९८७ में उसने विंवलडन और स क्लब की प्रतियोगिताओं में क्वार्टर नल तक आने की परंपरा कायम । लेकिन, इस वर्ष डेविस कप के फाइनल में मासूर पर सनसनीखेज अप्रत्याशित विजय, स्वयं उसके के शब्दों में ‘उसके टेनिस-जीवन की तम उपलब्धि’ थी।

श्व के एक अग्रणी तथा विख्यात समीक्षक ने रमेश के खेल को री पर लगी क्रीम’ (अर्थात् श्रेष्ठतम) ा है। उसके खेल में सुरक्षा और दोनों गुणों का संतुलित मेल है। ‘पूर्व की कला’ भी है, और ‘पश्चिम क्तिपूर्ण तेवर’ भी। वह अपनी श्रेणी टेनिस-खिलाड़ियों की भांति तुनुक-ाज नहीं है, और खेल के प्रति पूर्णतया त होने के अलावा, अपने देश और परिवार के प्रति भी पूरी तरह समर्पित है। अमरीका के आठ विश्वविद्यालयों ने उसे अध्ययन करने के लिये आमंत्रित किया, ताकि रमेश अमरीका की ओर से खेल सके, लेकिन रमेश ने उन सब प्रस्तावों को ठुकरा दिया, क्योंकि वह टेनिस में अपने देश को गौरव दिलाना चाहता है, अन्य किसी देश को नहीं।

वह एक अनुशासित खिलाड़ी भी है। ऐसा कभी सुनने में नहीं आया कि उसने निर्णायक के निर्णय को चुनौती दी हो, या दर्शकों, लाइंसमॅन या अन्य खिलाड़ियों से झगड़ा किया हो। यद्यपि वह हर मैच को जीतने के उद्देश्य से खेलता है, तथापि जीत से अधिक ‘खेल की भावना’ और ईमानदारी को सर्वोपरि महत्व देता है।

वह भारतीय टेनिस की नयी आशा है, और उसके असंख्य प्रशंसकों को पूरी आशा है कि वह भविष्य में टेनिस में सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर अपने को तथा अपने देश को गौरवान्वित करेगा।

–सुयोग, भिसेगांव, कर्जत-४१०२०१

□

एक बार ब्रह्म सरोवर ने शिकायत की–‘भगवन्! आप भगवती गंगा की सराहना करते हैं, हम भी तो लोगों को शीतलता और सद्गति प्रदान करते ह पुण्य हमें क्यों नहीं मिलता?’

भगवान विष्णु ने गंभीर होकर उत्तर दिया–‘भगवती गंगा स्थान-स्थान, घर-घर र लोगों की प्यास बुझाती और सद्गति प्रदान करती हैं, जबकि आप तो केवल उन्हें हैं जो आपके पास आते हैं।’

ब्रह्म सरोवर ने अनुभव किया भगवती गंगा सचमुच महान हैं। उन्हें अपने भीतर भी विकार पैदा होने का कारण भी ज्ञात हो गया। **–डा. गोपालप्रसाद ‘वंशी’**

□

पारस

— रामेश्वर दयाल दुबे —

खोज रहा हूं उस पारस को
जो सोने को लोहा कर दे।

उस लोहे से बने कुदाली
श्रम सीकर से माथा भर दे।।

सोना, हां सोना ही तो है
सारी विकृति का निर्माता।

बिका इसी पर पत्थर बनकर
बैठा मंदिर बीच विधाता।।

महलों के वैभव ये सारे
बहुरूपिया सोने की माया।

भोग रहा है वही अंध बन
नहीं दया-करुणा की छाया।।

मृग में चमक इसी की लखकर
ठगी गयी सीता बेचारी।

इसके ही पीछे दौड़े थे
निस्पृह राम धनुष सर-धारी।।

कलियुग ने धर रूप इसी का
मुकट बीच छिपकर था बैठा।

महालोभ का रूप बदलकर
नर-नारी के उर में पैठा।।

सिंहासन में छिपा यही तो
भ्रातृ रक्त से हाथ रंगाता।

महायुद्ध का सर्जक यह ही
भव से करुणा भाव मिटाता

कैसे विजय सत्य की होवे
कर देता मुख बंद यही है।

सर्वनाश के पथ पर चक्कर
काटा करता सदा यही है।।

हंसिया खुरपा और फावड़ा
सोने से न बना करते हैं।

श्रम का साधक तो लोहा है
मिट्टी से मोती बनते हैं।।

मिटे पीत आभा श्रम उज्ज्वल
जग में ललित लालिमा भर

खोज रहा हूं उस पारस को
जो सोने को लोहा कर दे।।

— चित्रकूट, सी/२७४, निराला नगर, लखनऊ, उत्तर प्रदेश —

टूटने का दर्द

□ डॉ. सुरेंद्र प्रसाद साह

नहीं, वे बातें जानबूझकर सुनाने के लिए कही जा रही थीं या यों ही ली के बीच की नोंक-झोंक थी । करुणजी को विश्वास था कि उनकी निष्ठा, ईमानदारी एवं सच्चाई का विश्वविद्यालय के प्रत्येक व्यक्ति को हे वे शिक्षक हों, कर्मचारी हों या । फिर यह कैसे हो सकता है कि दामाद प्रियव्रत इस बात को न हो ? और यदि जानता है तो पर इस तरह के दबाव का क्या है ?

र एक सप्ताह से प्रिवव्रत तथा के बीच का संबंध कुछ तनावपूर्ण-हो गया है, ऐसा प्रो. करुण को महसूस है । वे देखते हैं कि हरदम हंसने-खिलाने वाली अलका आजकल गुम-रहा करती है ।

करुणजी वैशाख की दुपहरी में कमरे को चारों ओर से बंद किये पर लेटे-लेटे कुछ पढ़ रहे थे । पता पढ़ते-पढ़ते कब झपकी आ गयी और टे के बाद जब वे जगे तो पास के में प्रियव्रत और अलका की बातचीत की हल्की आवाज सुनायी पड़ी । पहले तो अलस तंद्रा में पड़े-पड़े वे बातचीत के संदर्भों से अपने को मुक्त रखने में सफल रहे, लेकिन जब दोनों की आवाज कुछ गर्माने लगी तो उनके कान-सजग हो गये । वे गौर से उनकी बातों को सुनने लगे ।

प्रियव्रत कह रहा था–'तुम्हें बाबूजी से यह काम कराना पड़ेगा । आखिर यह मेरे कैरियर का सवाल है । एक सप्ताह से तुम्हें कहते-कहते मैं थक गया हूं ।' अलका विवश भाव से कह रही थी–'तुम तो जानते हो प्रिय, पिताजी ने आज तक यह नहीं किया । जिन आदर्शों को उन्होंने जीवन भर ईश्वर की तरह पूजा, उन्हीं को मैं तोड़ने को कहूं ? यह मुझसे नहीं होगा ।'

प्रियव्रत की आवाज तीव्रतर होती जा रही थी–'भाड़ में जाये उनका आदर्श और तुम । यहां मेरी जिंदगी बरबाद हुई जा रही है और तुम दोनों बाप-बेटी को आदर्श सूझता है । देखो, ज्यादा भावुक मत बनो । जीवन में थोड़ा व्यावहारिक भी बनना पड़ता है । यदि एक बार वे प्रो. रणवीर को कह दें तो मुझे सौ में अस्सी नंबर मिल जायेंगे । मेरा एम. ए. में फर्स्ट क्लास आ

जायेगा और मैं कहीं लेक्चरार हो जाऊंगा। क्या तुम्हें मेरे सेटल होने की चिंता नहीं है?'

'कैसी बातें करते हो तुम? अब तो तुम्हारी खुशी के साथ ही मेरी खुशी भी बंधी है। भगवान करे तुम्हें अच्छी से से अच्छी नौकरी मिले, लेकिन पापा से यह बात कहना—यह तो मुझसे नहीं होगा। तुम नहीं जानते प्रिय, पापा के लिए यह काम कितना कठिन है। आज तक न उन्होंने किसी की पैरवी सुनी और न किसी के पास पैरवी की। बड़े-से-बड़े लोग आये पैरवी करने, पर उन्होंने अपना व्रत न तोड़ा। बहुत सारे लोग नाराज होकर चले गये और मौका मिलते ही इनको दंडित किया। इसी की वजह से वे विश्वविद्यालय के प्रोफेसर न हो सके आज तक सबसे अधिक योग्यता के बावजूद। अभी जो श्यामसुंदरजी प्रोफेसर और विभागाध्यक्ष बने हुए हैं, उनको पिताजी दस वर्ष पढ़ा सकते हैं। परंतु वे समय के साथ बहनेवाले हैं, इसलिए ऊपर चढ़ गये और पिताजी अटल चट्टान बनकर जहां के तहां रह गये। ऐसे पिताजी को मैं तुम्हारी पैरवी के लिए छोटा बनाऊं, यह मुझसे नहीं होगा, प्रिय। देखो, जैसी भी नौकरी मिलेगी, हम सुख-दुःख से उसी में गुजारा कर लेंगे, पर यह मुझसे कहने को मत कहो।'

बोलते-बोलते अलका जैसे रोने-रोने को हो आयी। लेकिन, प्रिवव्रत पर इसका कोई असर नहीं हुआ। बोला—'तुम दोनों बाप-बेटी का सिद्धांत और आदर्श वही पुराना चरखा सुन-सुनकर आजिज हो गया है। आखिर क्या आज तक उनको इस तरह आदर्श से? अपना जीवन तो नरक बना लिया, अब हम लोगों को भी तबाह कर छोड़ेंगे। प्रो. रणधीर उनके शिष्य उनको देवता की तरह मानते हैं। बार, केवल एक बार वे कह दें तो सर्वाधिक अंक मिल जायेंगे और हम का जीवन बन जायेगा। लेकिन, उनसे नहीं होगा तो क्या होगा? उनको अपने एकमात्र दामाद के की जरा भी चिंता नहीं?'

'चिंता नहीं थी, तो दिन-रात पढ़ाया क्यों? तुम्हारी योग्यता पर रीझे हुए थे। उनका विश्वास था कि अपनी मेधा और मेहनत के बल पर पछाड़ दोगे। यदि ऐसा न सोचते शायद तुमसे मेरा विवाह ही न अब पैरवी की बात कहकर अपना मत खराब करो प्रिय, जाने दो जैसा रिजल्ट हो। उनकी नजर में तुम अच्छे हो, ईमानदार और मेहनती हो। जब वे जानेंगे कि तुम पैरवी चाहते हो तो तुम्हारे प्रति उनकी बदल जायेगी। वे एक और पश्चात्ताप डूब जायेंगे कि मैंने प्रियव्रत को में गलती की। पिताजी पहले ही दुःखी हैं खासकर जब से मम्मी का हुआ, वे आधा टूट गये हैं। अब

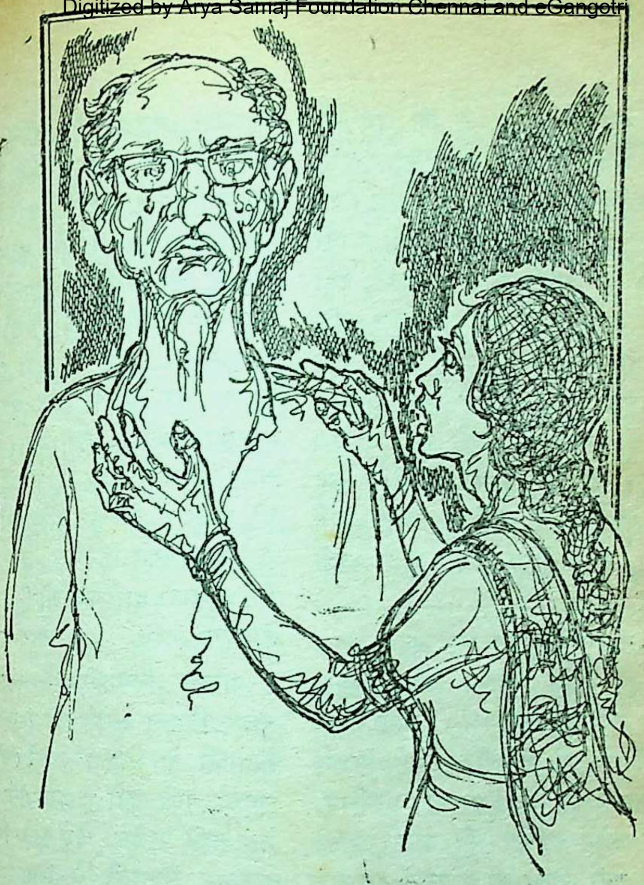

का आदर्श भी टूट गया तो वे कहीं के हीं रहेंगे . . . वे जीते जी मर जायेंगे व्रत। तुम अपनी इस जिद्द को छोड़ दो।'

'एक ओर मेरी जिंदगी है और दूसरी र तुम्हारे पिता का आदर्श-समझ में हीं आता कि तुम दोनों बाप-बेटी को या हो गया है? मुझे ऐसे आदर्श से चिढ़ ी नहीं, घृणा है। जो आदर्श अपने लोगों के जीवन को बनाने में बाधक हो उसे कोई मूर्ख ही पाल सकता है। एक बात न खोलकर सुन लो, तुम्हें पापा से कहकर मेरी पैरवी करवानी है और यदि यह नहीं हो सका तो मैं तुम्हें छोड़कर चला जाऊंगा।'

अलका सुनकर स्तब्ध रह गयी। इसके बाद उसके मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला। केवल आंखों से आंसू चू-चूकर गिरने लगे। अजीब स्थिति में फंस गयी थी वह। एक ओर पिता के जीवन-भर का आदर्श और दूसरी ओर पति की धमकी। जाल में फंसी हिरणी की तरह वह बेचैन हो गयी। पिताजी की ईमान-

१९८८

दारी का इतना आतंक है कि अब तो कोई भी उनसे नियम विरुद्ध बात करने के लिए कहने की हिम्मत नहीं करता । वह बचपन से ही पिताजी को देखती आयी है। आज तक कभी लीक से हटते नहीं देखा है। घर पर भी सबसे एकदम नपी-तुली भाषा में बात करते हैं – न एक शब्द फालतू और न एक शब्द कम । कभी उन्हें भावना में बहते नहीं देखा । ऐसे पिता को वह पैरवी के लिए कह भी कैसे सकती है ? इसलिए, आंसू बहाने के सिवा उसके पास कोई चारा नहीं रह गया था ।

प्रियव्रत अपनी बात पर अटल था । अलका का आंसू बहाना उसे एकदम समझ में नहीं आ रहा था । उसके पिता पुलिस में दारोगा थे और उसने कितने सारे लोगों से घूस लेते देखा था। इसलिए, नैतिकता और चरित्र की बात उसकी समझ में नहीं आती थी । उसने क्षणभर रुककर अलका से पूछा–'तो क्या कहती हो तुम ? पिताजी से कहोगी या मैं जाऊं ? अब कॉपी दो दिन और रहेगी । कहना हो तो अभी कहो, अन्यथा बाद में कहने से भी कुछ नहीं होगा ।'

अलका कुछ बोल नहीं पायी । एक बार प्रियव्रत को तमतमाये चेहरे को करुण दृष्टि से देखा और पलकें गिरा लीं । प्रियव्रत ने अंतिम अस्त्र चलाया, 'तो तुम नहीं कहोगी ? ठीक है, मैं चलता हूं ।'

कहते हुए प्रियव्रत ने सामने का सदर दरवाजा भड़ाक से खोल दिया और बाहर निकल पड़ा । जैसे ही कमरे बाहर निकला, सामने प्रो. करुण को दे कर चिहुंक गया । प्रो. करुण निस्तब्ध खड़े थे, जैसे कोई ठूंठ पेड़ खड़ा हो। चेहरे की लाली गायब थी और पूरा चे पीला-पीला नजर आ रहा था। मुंह विषाद की गहरी रेखा थी । प्रिय क्षणभर ठिठका और बगल से नि चला जाना चाहा । उसको जाते प्रो. करुण ने वेदना मिश्रित गंभीर आ में कहा–'रुको प्रियव्रत, तुम मत जा मैंने तुम्हारी बातें सुन ली हैं। मैं..मैं तुम्हारा काम . . . करवा दूंगा ।

अलका पिताजी की आवाज सु बाहर निकल आयी थी । उसने एक पिताजी के विकृत चेहरे को देखा उनकी बातें सुनीं । लगा कि अब पि सह नहीं पायेंगे, खड़े-खड़े गिर जा दौड़कर पिताजी से लिपट गयी- पापा . . . आप ठीक तो हैं ? क्या हो है आपको ? आपका चेहरा इस तर हुआ जा रहा है ?' 'मैं ठीक हूं बेटी। चिंता न करो । कुछ नहीं होगा मुझे । से मैं नहीं रहा . . . तुम्हारा पुराना आज से मर गया, बेटी !'

'नहीं पापा, बेटी की ममता में इस तरह अपने को मत तोड़िये । जो देखा जायेगा । मैं सब कुछ सह लेकिन आप इस उम्र में यह सद सह पायेंगे । मां तो पहले ही छोड़

और अब आप भी टूटकर कितने दिन वित रहेंगे ?'

'बेटी . . . सब ठीक है . . . जाओ आराम करो । प्रियव्रत, अलका को लो ।' कहते हुए वे अपने कमरे में कर बंद हो गये ।

प्रो. करुण भीतर जाकर तकिया में गड़ाकर रोने लगे फूट-फूटकर । 'यही जीवन भर की कमायी है ? हे ईश्वर, मुझे क्यों इस तरह की परीक्षा में ते हो ? अलका के सिवा दुनिया में है कौन ? एक तरफ बेटी की जिंदगी और दूसरी ओर अपने को तोड़ना ? जो हो, मुझे स्वयं को मारना ही गा। बेटी के भविष्य के लिए कुछ करना होगा। गलती उसी दिन हो गयी, जिस मैंने प्रियव्रत के संस्कार को नहीं था । उसकी धमनी में जो खून बह है, उसमें कहीं भी आदर्श, ईमानदारी कर्तव्य की बू नहीं है । खैर . . अब तो सामने आ गया है उसे झेलना ही गा ।'

अंततः प्रो. करुण ने रात भर बिना पीये रहकर और काफी सोच- ार के बाद यह तय कर लिया कि जाकर प्रियव्रत की पैरवी कर देनी । रात में बहुत कह-सुनकर, अपनी दिलाकर, अलका ने उन्हें एक दूध पिलाया था और स्वयं भूखी यी थी । प्रियव्रत इसे पिता-पुत्री नाटक मानता था और इससे अपने को अलग रखने के लिए सिनेमा देखने चला गया था ।

दूसरे दिन बहुत साहस कर प्रो. करुण प्रो. रणवीर के घर पहुंचे । उन्हें देखकर तो प्रो. रणवीर हक्का-बक्का रह गया । जो कभी किसी के घर नहीं जाते, आज कैसे यहां आ गये ? आगे बढ़कर उनकी अगवानी की और स्वागत-सत्कार में लग गया । प्रो. रणवीर के मन में यह बात बार-बार उठती कि सर ने कैसे आज कष्ट किया ? घंटे भर इधर-उधर की बातें होती रहीं, परंतु मुख्य बात तब भी न आयी । प्रो. करुण नाश्ता-चाय खा-पीकर चलने के तैयार हो गये । उन्हें यह साहस ही न हुआ कि जिस काम के लिए आये हुए थे, वह बात कहें ।

'अच्छा तो अब चलूं ।'

'सर, बड़ी कृपा की आपने । क्या सर, इधर कहीं घूमने निकले थे ?'

'हां, ऐसा ही समझ लो ।'

'आप तो यों ही कहीं आते-जाते नहीं ? कोई काम था, सर, तो मुझे खबर भेज देते ।'

'ना . . . ना . . . काम क्या होगा ? इधर घूमने निकला था तो तुम्हारी याद आ गयी । सोचा, जरा तुमसे मिलता चलूं । बुढ़ापे का शरीर है, जरा थक भी गया था ।' और वे अपनी बात कहे बिना चले आये । उनकी समझ में नहीं आता कि आखिर यह बात जबान पर लायें तो कैसे ? आदर्श को ढोना जितना कठिन है,

शायद उसको तोड़ना उससे भी कठिन है।

घर आते ही अलका ने पूछा—'क्या पापा, आपने प्रियव्रत का काम कर दिया?'

'गया तो था बेटी पर मुंह से बात ही नहीं निकली। बहुत कोशिश की पर... अंततः मैं बिना कहे ही चला आया।'

'अच्छा किया आपने। अब आपको वहां जाने की जरूरत नहीं है। भगवान ने हम लोगों की रक्षा कर ली।'

'भगवान भले कर ले, लेकिन सत्यव्रत तो हम लोगों की रक्षा नहीं करेगा, बेटी।' प्रो. करुण ने उदास हंसी हंसते हुए कहा—'तुम जाओ बेटी, चिंता न करो, मैं सब कुछ संभाल लूंगा।'

दूसरे दिन शाम को प्रो. करुण फिर प्रो. रणवीर के घर गये। प्रो. रणवीर समझ गया कि जरूर इनको कोई काम है, परंतु वे कह नहीं पा रहे हैं, नहीं तो ये यों ही कहीं आने-जानेवाले तो हैं नहीं। आज प्रो. रणवीर आगत-स्वागत के बाद जैसे अड़ गया—'सर, लगता है कि जरूर कोई बात है, लेकिन आप मुझसे कह नहीं रहे हैं। मैं तो आपका परम भक्त शिष्य हूं सर, मुझसे कहने में आपको क्या संकोच? जो भी काम हो, निःसंकोच कहिये, देखिये आपका यह शिष्य सेवा में कोई कसर उठा रखता है क्या?'

'बात यह है रणवीर कि...' और वे चुप हो गये।

'हां, कहिये न, सर।'

'देखो, मैं हार गया, रणवीर... बड़ी विचित्र स्थिति में फंस गया हूं। जो कर रहा हूं, समझो तुम्हारा गुरु करुण नहीं कह रहा, यह एक पिता कह रहा है।'

'आप निःसंकोच कहें, सर, क्या आपको जानता नहीं?'

'देखो...'

'हां...'

बहुत साहस बटोरकर उन्होंने बार ही उगल दिया—'जरा एक सौ रोल की कॉपी देख लेना प्रियव्रत की' कहकर ऐसा भागे जैसे शेर को हिरण भागता है। जब वे घर लौटे चारों ओर रात्रि का अंधकार फैल था। वे सीधे अपने कमरे में बिछावन पर पड़ रहे। पुत्री के मुरझाये तथा उसके भविष्य की चिंता के उन्होंने जो कुछ आज किया था, वह नश्तर-सा चुभ रहा था। किसी भी वे स्वयं को माफ नहीं कर पा रहे हरदम यही बात मन में उठती—'हाय मैंने क्या कर दिया? मेरे सारे जीवन तपस्या भंग हो गयी।'

करीब नौ बजे अलका कमरे में तो पिताजी को अंधेरे में लेटे देखकर गयी। बिजली जलाकर पूछा—'कब पिताजी? खाना ले आऊं?'

'ना बेटी, केवल एक गिलास आ और देख, रोशनी बुझा दे। मैं रहना चाहता हूं। जाते समय द बंद कर देना।'

अलका पिता की मन:स्थिति देखकर त हो गयी। कहा–'लगता है आपने व्रत का काम करवा दिया है आज। आपकी पीड़ा समझती हूं, पिताजी। जो होना था हो गया। सारी बात जाइये।'

तू जा, अलका, मैं एकदम ठीक हूं। शांति से पड़ा रहने दे।' और वे करवट कर लेट गये।

करीब एक बजे रात्रि तक वे करवट ते रहे। हरदम ख्याल आता कि कल ग मुझे क्या समझेंगे? कैसे मैं लोगों मुंह दिखा पाऊंगा? सोचते-सोचते न कब नींद आ गयी। सपने में उन्हें कॉलेज के प्रोफेसर और छात्र नजर ने लगे।

प्रोफेसर खन्ना ने इनकी ओर इशारा ते हुए कहा–'ये देखो प्रोफेसर करुणा-आ रहे हैं। आज के जमाने के हरि-द्र।'

प्रोफेसर राजहंस ने व्यंग्य किया–'आज जमाने के मत कहो, बल्कि पाखंडी चंद्र कहो। ये ईमानदार और आदर्श-ते हैं केवल दूसरे के लिए; लेकिन जब की बारी आती है तो सारा आदर्श टूट ता है।'

अंग्रेजी के प्रो. नीरज ने कहा–'नंबर हिपोक्रेट होते हैं ऐसे लोग। केवल दिखावा। अंदर से देखो तो कहीं नहीं।'

सारे छात्र इनकी ओर इशारा करते हुए हंस रहे हैं। कोई पाखंडी कह रहा है, तो कोई झूठा, कोई फरेबी तो कोई बेईमान।

क्षण भर बाद इन्हें लगा कि सारे छात्रों ने मिलकर एक जुलूस निकाला है। एक छात्र कहता–'बोलो पाखंडी की . . .'

सारे छात्र कहते–'जय!'

अभी यह जुलूस आगे बढ़ ही रहा था कि प्रो. करुण एकाएक चिल्ला पड़े–'नहीं।' और उनकी चिल्लाहट सुनकर अलका दौड़ी आयी। देखा, तो उनका सारा बदन पसीने से तर था। पूछा–'क्या हुआ, पिताजी?'

करुणजी ने एक बार चारों ओर देखा, बोले–'कुछ नहीं, एक गिलास पानी पिला दे, बेटी। गला सूखा जा रहा है।' अलका दौड़कर पानी ले आयी। पानी पीकर वे थोड़ा आश्वस्त हुए। पूछा–'कितना बजा है अभी?' 'साढ़े तीन,' अलका ने कहा।

'ठीक है, तू जाकर सो जा। मैं ठीक हूं।' दूसरे दिन भी जब दस बजे तक करुणजी पड़े रहे तो अलका ने आकर पूछा–'पिताजी, कॉलेज नहीं जाइयेगा क्या?'

'अब नहीं जाऊंगा, बेटी। अब जाने का साहस नहीं है। मेरा त्याग-पत्र है यह, हो सके तो किसी से भिजवा देना।'

और वे बच्चे की तरह फूट-फूटकर रोने लगे। लगा रात भर जो बांध बंधा हुआ था अचानक टूट गया। अलका पिता

(शेषांश पृष्ठ ८४ पर)

वरिष्ठ साहित्यकार

पं. अमृतलाल नागर से बातचीत

प्रस्तोता : के. के. सिंह

प्रायः हर शहर में एक ऐसी हस्ती होती है जो पूरे शहर की तहजीब, तवारीख और तकल्लुफ को अपने व्यक्तित्व में समेटे उस शहर की पहचान बन जाती है जैसे शाहजहां की याद और आगरा शहर या फिर मिर्जा ग़ालिब और दिल्ली का संबंध। कुछ-कुछ ऐसा ही संबंध पं. अमृतलाल नागर का लखनऊ से है। लखनऊ का नाम लेते ही साहित्य-रसिकों को अनायास ही नागरजी की पान-खाई प्रसन्न मुद्रा, आंखों पर मोटे लेंस का चश्मा और एक मस्तमौला प्रकृति का अहसास जाग उठता है। आज लखनऊ की परंपरा और इतिहास उनमें जी रहे हैं। साहित्य में लखनऊ को उभारा है नागरजी ने और लखनऊ ने संवारा है पं. अमृतलाल नागर की साहित्यिक पहचान को।

नागरजी का जन्म १७ अगस्त १९१६ को आगरे में हुआ था। उनके पितामह इलाहाबाद बैंक के सब एजेंट होकर १८९५ में लखनऊ आकर बस गये थे। नागरजी का बचपन लखनऊ में ही बीता। घर में साहित्यिक वातावरण था। 'सरस्वती' 'गृहलक्ष्मी' जैसी पत्रिकाएं पढ़ने का उन्हें शौक बचपन से ही था। चूंकि घर में साहित्यकारों का आना-जाना था
इसका गंभीर प्रभाव नागरजी के
पर पड़ा। १९२९ में "साइमन कमी
के बहिष्कार के लिए निकाले गये जुलू
लाठियों की वर्षा देख उन्होंने एक छो
कविता लिखी जो दैनिक "आ
(लखनऊ) में प्रकाशित भी हुई।

इसी बीच आपको सुप्रसिद्ध साहि
कार श्री शरतचंद्र चट्टोपाध्याय का
प्राप्त हुआ। यह बात १९३३-३४
है। शरतचंद्र के नारी पात्रों के
भूतिपूर्ण मानवीय चरित्र चित्रण
प्रभाव श्री अमृतलाल नागर की
कृति 'ये कोठेवालियां' में आसा
देखा जा सकता है। पिता के देहां
बाद आजीविका हेतु उन्होंने नौकरी
परंतु वह उनसे हो न सकी। तदुपरा
'आल इंडिया रेडियो' से संबद्ध हुए
१९५६ में उसे भी छोड़ दिया। वे
में भाग्य आजमाने बम्बई भी गये
फिल्मों का वातावरण उन्हें रा
आया।

१९४८ से नागर साहब स्वतंत्र
कर रहे हैं। कहानी, उपन्यास,
संस्मरण, रिपोर्ताज़, निबन्ध, हास्य

चीत

जाना था
रजी के वार्त
ाइमन कमीशन
ाले गये जुलूस
होंने एक छोटे
निक "आनन्द
भी हुई।
सुप्रसिद्ध साहि
ाध्याय का
१९३३-३४
पात्रों के
त्र चित्रण
ागर की
में आवाम
ाता के देहांत
होंने नौकरी
की। तदुपरान्त
संवद्ध हुए
दिया। वे
ई भी गये
उन्हें
हव स्वतंत्र
उपन्यास,
न्ध, हास्य

पद्मभूषण पं. अमृतलाल नागर

साहित्य सभी विधाओं में आपने कुछ लिखा है तथा सभी क्षेत्रों में सफलताएं भी खूब मिली हैं। आपको कृतियों पर अनेकों पुरस्कार मिल है। रंगमंच तथा पुरातत्व के क्षेत्र में आपका सराहनीय योगदान रहा है। इसके अतिरिक्त नागरजी की कई कृतियों का अन्य कई भाषाओं में अनुवाद भी हो चुका है। यही नहीं राष्ट्रपति द्वारा साहित्यिक सेवाओं के लिए आपको 'पद्म भूषण' (१९८१) की उपाधि भी प्राप्त हो चुकी है।

सच्चाई तो यह है कि नागरजी अब साहित्य सृजन की उस श्रेणी में पहुंच चुके हैं जहां यश, उपाधि और पुरस्कार उन्हें वरण कर स्वयं का गौरव बढ़ाते हैं। उनका ७१ वर्ष का जीवन उपलब्धियों के साथ ही सृजन की मीनार रहा है। वय हो जाने पर भी वे सक्रिय, सजग, प्रसन्न तथा सतत सृजनशील हैं। इस क्रम में वे आजकल "मन्वंतर" ("करवट" का दूसरा भाग) नामक कथा साहित्य के सृजन में रत हैं।

ऐसे गुणी लेखक जिनके अस्तित्व की छांव में हिन्दी साहित्य सतत प्रगति पथ पर अग्रसर है, से मेरी जो संक्षिप्त वार्ता उनके निवास पर हाल ही में हुई है उसका अविकल आलेख प्रस्तुत है।

प्रश्न : अवध की संस्कृति और लखनवी तहजीब को आपने अपने लेखन में प्रमुख अभिव्यक्ति दी है। लखनऊ से आपके इस जुड़ाव का प्रमुख कारण क्या है?

उत्तर : लखनऊ की संस्कृति और तहजीब को अपने लेखन में प्रमुखता देने का मुख्य कारण यह है कि मैं यहां का निवासी हूं। यहां मेरे पितामह आकर बसे थे, हालांकि मेरा जन्म आगरा में हुआ था, पर जब यहां मुझे बुला लिया गया तो मैंने यहां की शहरी संस्कृति के साथ ही ग्रामीण संस्कृति का भी वैभव अपनाया। इस तरह मैं लखनऊ से सदैव ही जुड़ा रहा।

प्रश्न : क्या आज का साहित्य समाज का दर्पण रह गया है अथवा यथार्थवाद और मनोविज्ञान के दुरूह चक्र फंसकर अपना यथार्थ रूप खो बैठा है?

उत्तर : मनोविज्ञान के दुरूह चक्र में फंसकर अपनी यथार्थता खोना बात है, पर देखा जाये तो यथार्थवाद मनोविज्ञान अपने आप में बुरे नहीं हैं। का ही समाज में प्रमुख स्थान है। नहीं जहां तक सामाजिक परिवेश यथार्थता की बात है उसके लिए यह माध्यम भी बनते हैं क्योंकि दोनों समाज में विशिष्ट स्थान है। यदि यह कहें कि हमारा समाज जिस दशा में साहित्य में प्रतिबिंबित नहीं हो है तो मैं इसे नहीं मानता हालांकि हम यहां साहित्य को उतनी सार्थकता प्रदान कर रहे हैं जितना करना चाहिए जिस शक्ति से समाज जागृत होता उसने आज भी अपनी यथार्थता खोयी है। इस तरह साहित्य आज समाज का दर्पण है।

प्रश्न : राजनैतिक आदर्शों और विचार धाराओं की प्रतिबद्धता लेखक की स्वतंत्रता को क्या सीमित नहीं कर देती?

उत्तर : प्रत्येक लेखक किसी न किसी राजनैतिक आदर्शों व विचारधाराओं बंधा अवश्य होता है। 'स्वतंत्रता' में का 'स्व' निहित है। 'स्व' के अंदर तो होती ही है जिसका आभास लेखक उद्वेलित करता रहता है। अब किसी व्यक्ति को अकारण कोई मारे तो वह इसका जवाब तमाचे

ता । लेखक का यह दृष्टिकोण राज-तिक मूल्यों तथा शिक्षा के प्रति भी ता है । हालांकि राजनीतिक रूप से क्षत: इससे कोई भी लेखक जुड़ा नहीं होता परंतु मानसिक रूप से मूल्यों के प्रति सामाजिक, राजनैतिक धार्मिक सभी रूप में प्रतिबद्ध होता । यह मूल्य की प्रतिबद्धता ही है जो भी प्रकार से मनुष्य को परतंत्र नहीं ती । परंतु जब यह आरोपित हो, लदी हो तब मजबूरी होती है । इस प्रकार क भी किसी न किसी रूप में मूल्य से बद्ध तो होगा ही ।

प्रश्न : साहित्य, व्यक्ति और समाज का स्परिक संतुलन क्या होना चाहिए ?

उत्तर : 'साहित्य' का अर्थ है 'सहित'। क्ति' और जिस 'समाज' में वह रहता वह भी परस्पर इससे संबद्ध रहता है । एक दूसरे के 'सहित' न हों तो चिंतन-कैसे चले ? विचार कैसे भी हों साहित्य इनका जुड़ाव अन्योन्याश्रित है । जीवन जो हम चाहते हैं वह एक विशेष व्यक्ति लिए ही नहीं चाहें, बल्कि पूरे समाज लिए चाहते हैं । समाज के लिए व्यक्ति , सुविधा का जीवन व वैभव अपनाता इस प्रकार वह पूर्णत: विकसित है । हां तक 'मेरा सुख ही सुख नहीं' वाली है, जब तक व्यक्ति अधिक लोगों हित की बात नहीं सोचता, न व्यक्ति रहता है न समाज समाज । इस कार इन मूल्यों का उद्दात्तीकरण केवल साहित्य के द्वारा ही होता है ।

प्रश्न : लेखन का उद्देश्य क्या है—अर्थोपार्जन अथवा महत्वाकांक्षा ? कभी-कभी स्वांत: सुखाय लिखा ग्रंथ लोकग्रंथ हो जाता है और लोकग्रंथ का दावा करने वाला साहित्य बुद्धिजीवियों की मेजों की शोभा बना रह जाता है । ऐसा क्यों ?

उत्तर : सामान्य लेखन से परे जो सृजनात्मक व रचनात्मक लेखन है वह स्वाभाविक है । वह अंत:प्रेरणा का खेल है । न इस प्रकार के लेखन में कोई महत्वाकांक्षा लागू होती है न कोई उद्देश्य ही निहित होता है, यह बरबस अपने आप फूटता है । महत्वाकांक्षा का स्थान इसमें बहुत बाद में आता है । बहुत से लोग सफलता पाकर गर्वित हो उठते हैं, ऐसा करके क्या वह रचनात्मक क्षमता को स्वाभाविक रूप से प्रदर्शित कर पाते हैं ? हमें रोटी चाहिए बस । रोटी भी इसी से चाहिए । मैं भी उसी हद तक काम करूंगा जब तक मैं सीधे हाथ से लिखता रहूं, यह नहीं कि सीधा हाथ बेकार हो जाने के बाद धनोपार्जन के उद्देश्य से मैं फिर बायें हाथ से लिखूं । लेखन मेरा कमर्शियल कार्य है । लेखन कार्य भी इस तरह का हो कि मन रचनात्मक मूल्यमान व मेरी मानसिकता को धक्का न लगे । हमें बस जीविका ही चाहिए । हम पहले पत्रकारिता के लिए भी करते रहे । पर यहां भी जीविका मुख्य है । कुछ लोग केवल पैसा कमाने के लिए ही लिखते

हैं। वस्तुतः लेखक में चेतना स्वाभाविक रूप से विकसित होती है। हम स्वयं लिखे बिना नहीं रह सकते। यह अपने आप में एक आकांक्षा है, एक मजबूरी है। लेखन मन की मजबूरी से होता है। जब तक मन नहीं करता, लिखा नहीं जा सकता। उसका विकास अपने आप होता है। इस प्रकार लेखन का उद्देश्य उसके अंतस्थ चेतना का विकासक्रम है।

प्रश्न : आज पुराने लोग कहते हैं कि न तो दिल्ली ही दिल्ली रह गयी है न लखनऊ ही लखनऊ रह गया है। दिल्ली में खोजने पर भी कोई दिल्लीवाला नहीं मिलता, लखनऊ में आपको छोड़कर दूसरा लखनऊवाला नज़र नहीं आता। ऐसा क्यों?

उत्तर – आप दिल्ली व लखनऊ को ही क्यों लेते हैं। आज भारतवर्ष के बाहर भी नगरों में एक ही तरह के मकानों का पैटर्न बनता जा रहा है। लखनऊ में सआदतगंज, रकाबगंज, ठाकुरगंज, बाबा हजारा बाग जैसे पुराने मोहल्ले आज भी बिल्कुल उसी तरह हैं, जैसे पहले थे। ठीक उसी प्रकार दिल्ली भी आज वही दिल्ली है जो पहले थी। जहां तक परिवर्तन का प्रश्न है, तो समय के अनुसार थोड़ा-बहुत बदलाव तो आ ही जाता है। हमारे यहां एक दिक्कत है, जो अभिशाप भी है, वह यह कि हमको गुलामी में बहुत दिन तक रहना पड़ा। फलस्वरूप हम अभी अपने को पूरी तरह नये परिवेश में नहीं ढाल सके हैं। यह काम धीरे-धीरे ही होगा। हां, हमने मानसिक व व्यावहारिक रूप में धीरे-धीरे अपने को नये परिवेश में ढालना [illegible] शुरू कर दिया है। नये भारत और नये युग निर्माण का हम ढोल चाहे जितना [illegible] पर अभी हमारे अंतर नय बनते हुए [illegible] अपने अंतरव्यक्ति को संभाल नहीं पाते हैं।

प्रश्न : आपके साथ 'हरितक्रांति' का नाम जुड़ा है—लोग इसे आपका [illegible] कहकर ग्रहण भी करते हैं परंतु आज [illegible] युवा पीढ़ी मूल्यहीनता के दिशाहीन [illegible] काव में भटक रही है तो क्या इसका कोई उचित उपाय आप समझा सकते हैं?

उत्तर : आपका मंतव्य मैं समझ गया। दरअसल 'भांग' आदि काल के साथ ही प्राचीन परंपराओं में भी यहां मनुष्य [illegible] पेय रही है, जिसको कि प्रायः समाज [illegible] मान्यता भी दी है। अब क्या कहिये कि यह भी यहां के साहित्य की संगत में [illegible] गयी। अब संगत की बात आयी तो [illegible] दूं कि मिठाई खाने के दोष से ही मैंने [illegible] आंखें व कान गंवाये हैं। भांग का [illegible] था इसलिए किया, पर आज बड़े-[illegible] लोग बड़े-बड़े नेता व राजनीतिज्ञ तो [illegible] कर 'लालक्रांति' करते हैं उससे यह 'हरि[illegible] क्रांति' हजार दर्जे बेहतर है। लोग '[illegible] क्रांति' के चक्कर में हजार तरह के [illegible] फंद करते हैं। इसके विपरीत मैंने [illegible] किया किसी के भरोसे नहीं किया। [illegible] सत्ताधीश और अनेकों बड़े-बड़े वि[illegible] के अधिकारी व नेतागण जो कर रहे [illegible] यह सब मुझे नहीं करना पड़ता। [illegible]

हरितक्रांति' (भांग) का प्रयोग कभी किया जरूर, पर अब तो सब उसका जिक्र ही जिक्र है। हां, जब किया डंके की चोट पर किया। आज भी भगवान की दया से मुझमें कोई ऐसे ऐब नहीं हैं जिसको जानने के लिए आपको किसी तरह की जासूसी करनी पड़े।

प्रश्न : पुरस्कार से साहित्यकार का सम्मान बढ़ता है या पुरस्कार स्वयं सम्मानित होता है। पुरस्कारों के राजनैतिक पक्ष को देखते हुए आपका क्या विचार है?

उत्तर : भारत में ही नहीं बल्कि सभी तरह कलाएं प्राय: समाज के निर्माण से ही पुरस्कृत ह और अब तो इसका दायरा प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। साहित्य जगत में सबसे पहले एक था इक्यावन रुपये का 'खन्ना पुरस्कार' बस। उसके लिए खींचतान होती रहती थी। सनेहीजी, जिनका उपनाम शंकर का त्रिशूल है, को जब यह पुरस्कार मिला तो इस पर कहा गया –

शंकर कविता क्या करे, क्या पावे उपहार।
पुरस्कार तो ले गया शंकर का हथियार ॥

फिर इस संदर्भ में पं. अनूप शर्मा की कविता का एक दोहा (जो मुझे याद नहीं है) भी काफी चर्चित रहा। पुरस्कार जब कभी भी वृत्तियों के दायरे में आ गया उसका उपहास उड़ाया गया। यह एक प्रकार से मानवीय वृत्तियों का उज्ज्वल व धूमिल पक्ष भी सिद्ध हुआ है क्योंकि प्रतिभा तो मुकुट मणि है।

कृतित्व के साथ इसका खिलवाड़ होता रहा है, होता रहेगा।

–४१७/२३०, निवाज़ गंज, लखनऊ-३

□

बिहार के प्रथम मुख्यमंत्री डॉ. श्रीकृष्ण सिंह एक महान् देशभक्त थे। युवावस्था में वे क्रान्तिकारियों के संपर्क में आये थे। मुंगेर में कष्टहरणी घाट पर गंगा में उतरकर एक हाथ में गीता और एक हाथ में कृपाण लेकर युवा श्रीकृष्ण ने प्रतिज्ञा की थी–'यह जीवन देश के लिए है।'

बाद में गांधीवाद से प्रभावित होने पर उन्होंने आतंकवादियों का साथ छोड़ दिया था, पर अपनी प्रतिज्ञा का आजीवन निर्वाह किया। 'गीता' को वे कर्मयोग का प्रतीक मानते तथा कृपाण को संघर्ष का।

'नमक सत्याग्रह' के दिनों में नमक बन रहा था। डॉ. श्रीकृष्ण सिंह भी उपस्थित थे। अचानक पुलिस आ गयी। अंग्रेज सार्जेंट कोड़े बरसाने लगा। लोग तितर-बितर हो गये। सार्जेंट ने आगे बढ़कर नमक के कड़ाह को उलटना चाहा। डॉ. श्रीकृष्ण सिंह के लिए वह कड़ाह 'गांधीवाद' का प्रतीक था। वे जलते कड़ाह पर पेट के बल लेट गये। काफी जल गये। सार्जेंट उनकी देशभक्ति से स्तब्ध रह गया और उन्हें 'सैल्यूट' कर चला गया।

–डॉ. बच्चन पाठक 'सलिल'

□

हिंदी कहानी

स्पर्श

☐ प्रेम पा

दिसंबर महीने की गज़ब की ठंड पड़ रही थी और नन्हीं रोमा अपनी अम्मा के साथ बैठी रसोईघर में अंगीठी सेंक रही थी कि तभी उसके मन में एक विचार कौंधा और वह मां से बातें करने लगी।

'मां, दादी अम्मा कह रही थीं कि हमारे यहां नन्हा-सा राजदुलारा भैया आयेगा। आप उसे अस्पताल से लेकर आओगी, जैसे गुड़िया को लायी थीं—टैक्सी में। मां, मेरी अच्छी मां, मेरी एक बात मानोगी?'

'हां, रोमा, बता बेटी। क्या लेना है तुझे?'

उसने कहा, 'आप मारोगी? दादी अम्मा भी मारती हैं।'

मैंने रोमा की तरफ देखा। उसके भीतर अजीब उतावलापन था और थी एक भय मिश्रित झिझक। मैंने प्यार से उसे दुलारा और अपने गोद में बिठाया और नन्हीं बिटिया को पुचकारते हुए पूछा, 'रोमा बेटी, हम नहीं मारेंगे। हां, तो जल्दी बताओ अपनी बात। देखो अभी ढेर-सा काम करने को धरा है। बोल, मेरी अच्छी रोमा। तेरे पापा भी तो आते होंगे।'

'सच मां? नहीं मारोगी ना? आप कितनी अच्छी हैं।'

यह कहते-कहते नन्हीं रोमा [illegible] नन्हीं-नन्हीं भुजाओं का झूला बना [illegible] गले के साथ झूल गयी और बोली, '[illegible] अब अस्पताल मत जाना। मुझे नहीं चाहि[illegible] भैया।'

'रोमा, क्या कह रही हो? कैसी [illegible] अम्मा जैसी बातें कर रही हो, [illegible] कहीं की। चल बाहर खेल जाकर।'

और तड़ाक से एक हाथ रोमा के [illegible] पर जा लगा।

'हां, मां, आप जब अस्पताल [illegible] और वहां से भैया लायेंगी तो मुझे [illegible] उठाना पड़ेगा, गोदी में गुड़िया की त[illegible] मैं दो-दो को कैसे उठाऊंगी, मां? [illegible] खुद कैसे खेल सकूंगी? नीलू, [illegible] कितने मज़े से खेलती हैं? और मैं... मैं तो रस्सा, खो-खो, पकड़न पकड़ाई [illegible] गुड़िया को उठाये-उठाये ही खेलती [illegible] आपको काम करना होता है और [illegible] रोती रहती है... इसलिए।'

रोमा ने सहज, बाल-सुलभ बा[illegible] अपने मन का समस्त गुबार निकाल [illegible] फेंका, परंतु मैं तो अंदर कांप-सी [illegible] मुझे लगा मैं भरे बाज़ार में चोरी [illegible] हुए रंगे हाथों पकड़ी गयी हूं।

रोमा, मेरी बच्ची, तेरी भावशून्य बुझी-बुझी आंखों का रहस्य मैं आज समझ गयी हूं कि तू क्यों इतनी खोई-खोई रहती है। मैं कैसे दिग्भ्रमित हो गयी ? जो मुझे सोचना चाहिये था वह एक नन्हीं जान ने सहज ही सोच लिया ।

सात साल की रोमा डेढ़ साल की गुड़िया को उठाये मेरे सामने हर पंद्रह मिनट के बाद आ खड़ी होती ।

'मां, यह बहुत रो रही है । चुप ही नहीं होती आज तो । मैं बहुत थक गयी हूं। अब मुझसे नहीं . . .। इधर मेरे खेलने की बारी भी आ गयी है। इसे पकड़ो. . . मैं जा रही हूं ।'

तब मेरे लाख बुलाने पर भी रोमा न लौटती।

मैं अतीत में भटक रही थी । मेरा वर्तमान मुझे अर्थहीन-सा लगने लगा । ओह. . . मानव कितना स्वार्थी बन गया है। जो मान्यतताएं उसे स्वयं को स्वीकार नहीं हैं, उन्हीं पर वह दूसरों की आस्था रखना चाहता है, आखिरकार ऐसा क्यों ?

अनायास एक छोटी-सी बालिका मेरे समक्ष आ खड़ी हुई। तीखी नासिका, मोटी-मोटी आंखें, लंबे-पतले काले-काले बाल, गोरा रंग । मैं उसे पहचानने का निरर्थक प्रयास कर रही थी। आखिर मैंने पूछ ही लिया।

'कौन हो तुम ?'

वह बालिका जोर से हंस पड़ी और बोली-'बड़ी भुलक्कड़ हो । मुझे नहीं पहचानतीं ? इतना शीघ्र भूल गयी हो ? तुमने तो मेरे साथ बहुत-से वायदे किये थे उनका क्या हुआ ? मैं कहा करती थी न कि वायदे कोई याद नहीं रखा करता । ठीक भी तो है अब तुम मुझे क्यों पहचानोगी ?'

यकाएक मैंने अनुभव किया यह मकान जिसमें मैं रहती हूं बुरी तरह हिलने लगा है । कमरे में पड़ा सोफा, कार्निस पर रखी युगल फोटो, प्यारी रोमा और गुड़िया का चित्र–कहीं कुछ भी तो स्थिर नहीं। कहीं भूकंप तो नहीं आ रहा है ?

भयभीत-सी हो मैं उठकर बाहर लॉन में आ गयी । पर वहां हाल वही था । हर पत्ता मुझे हिलता हुआ लगा । हर डाल

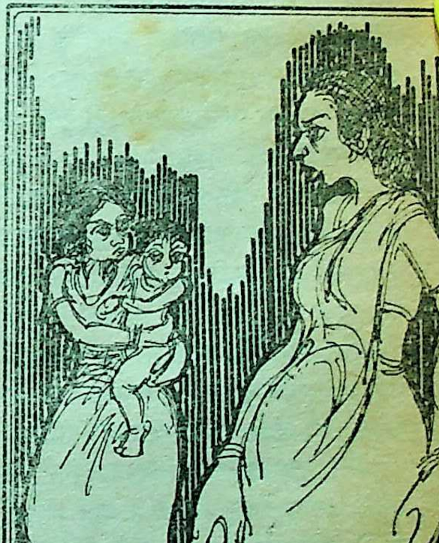

ऐसी लगी मानो अधर में हिल रही हो। मेरा सिर चकरा गया। पांव कांप उठे। मैं अनायास हरी घास पर सहम कर बैठ गयी।

तभी एक तीखी-सी आवाज़ मेरे कानों से टकरायी और मैं कई वर्ष पुरानी यादों में खो गयी।

'पम्मी, ओ पम्मी। अरी कमबख्त सुनती क्यों नहीं, कहां खो गयी? इस लड़की ने तो नाक में दम कर रखा है। आज आने दो इसे घर। कैसी इसकी हड्डियां सेकूंगी? अभी सारा काम पड़ा है करने को और इधर ये बिट्टी भी रोये जा रही है।' लाख छिपती फिरी, परंतु मां की तीखी नज़र से कहां बच सकती थी। आखिर देख ही लिया मां ने और घर लौटते ही खूब जमकर पिटायी हुई। मेरा अंग-अंग मार की पीड़ा से टीसने लगा। तत्काल मां ने तानाशाही हुक्म भी सुना डाला।

'खबरदार, जो आज के बाद घर के बाहर कदम भी रखा। चल बर्तन साफ़ कर नहीं तो बिट्टो को पकड़। मैं साफ़ कर लूं।'

और मैं जूठे बर्तन साफ़ करने बैठ गयी। नन्हें-नन्हें हाथों से जूठन से सने बर्तनों को घंटों बैठकर रगड़ती रही।

ऐसी एक नहीं असंख्य यादों ने मेरे अंदर अपना सिर उठाया। मुझे याद ही न हो रहा था कि मैंने कभी उसके बाद खेलकर देखा भी या नहीं... । मेरी हमजोलियां खेलती तो मैं एक तरफ नन्हें भाई-बहनों को उठाये खड़ी रहती, मेरी आंखें तरसती रहतीं, मन मसोसे रहता, परंतु खेलती कैसे?

कभी कोई सहेली कह देती

'पम्मी, ला पकड़ा इसे। थोड़ा तू भी खेल ले। तू तो रस्सा बढ़िया खेलती है।'

'नहीं, मुझे नहीं बंदरों की तरह तुम खेलो।'

जब कभी थक जाती तो चुपके जिस किसी को भी उठाया होता उसे जरा बाल नोंच देती। बच्चा ज़ोर से रो पड़ता और मैं मां को थमा देती।

मुझे कभी भी ऐसा नहीं लगा कि नन्हा-सा मां का लोथड़ा मेरा भाई अथवा बहन है। मुझे हमेशा उन पर बोझ हैं और मैं सोचने लगती यह क्यों आते हमारे घर?

इसी तरह महीने और साल गुज़रते गये और मैं बड़ी होती गयी। वैसे तो मैं बचपन से ही बड़ी हो गयी थी। स्कूल जाने से पहले नन्हें भाई-बहनों को नहलाना उनके बाल काढ़ना और उन्हें स्कूल भेजना मेरा नित्य क्रम था। तदुपरांत स्वयं थके-हारे भी तैयार होकर हर रोज़ स्कूल विलंब से पहुंचना मेरा 'रूटीन' था। कभी-कभी तो स्कूल जाते समय कुछ कुछ खा-पी लेती और कभी बिना कुछ खाये-पिये ही चली जाती।

'कुछ खा तो ले, क्या ऐसे ही स्कूल जायेगी?' मां कहती रहती।

लेट तो हो ही चुकी हूं, मां, और क लेट हो जाऊंगी । फिर स्कूल पहुंच बेंच पर खड़ा होना पड़ेगा-सो भी सबके ने। बड़ा लज्जित होना पड़ता है ।'

तो फिर जल्दी क्यों नहीं उठती ? जब वक्त-बेवक्त हाय-तौबा मचाती रहती । औरों के भी तो बच्चे हैं, ज़रा-सी वाज भी सुनायी नहीं पड़ती, चुपचाप र हो जाते हैं और इधर तुम हो . . . ।'

मन करता है, सब कुछ कह डालूं । दूसरों के बच्चे मेरी तरह इतनी ठंडी सर्दी में सुबह सवेरे अंगीठी सुल- हैं ? क्या उनकी माएं तुम्हारी तरह से उठती हैं ? क्या वे भी मेरी तरह ने को तरसती रहती हैं ? परंतु ये प्रश्न मेरे भीतर ही ज्वार की भांति के चले जाने पर मैं कुछ कह न पाती । र-उधर चीज़ों को पटकने में अपना शांत कर लेती और चल पड़ती ल को।

वहां भी कौन-सी चैन की सांस मिलती । कभी लेट स्कूल पहुंचने के लिए दंड कभी होम वर्क न करने के लिए सजा । दिन सोचती आगे से स्कूल का काम पर अवश्य करूंगी, परंतु घर पहुंचते मेरे सभी संकल्प हवा हो जाते और रहता वही घिसापिटा रुटीन ।

रात के दस बजे मां गोद का बच्चा लेतीं और मुझे स्कूल का काम करने बिठा देतीं । कल्पना कीजिये रात्रि स का समय और इधर नौ वर्ष की बालिका । आंखें नींद से बोझिल हो जातीं और ऊंघते-ऊंघते कुछ काम करती, कुछ काम फिर भी छूट जाता । कभी काम करते-करते मां ऊंघते हुए पकड़ लेतीं तो लगातीं दो झापड़ और कहतीं :

'अच्छा तो महारानीजी पढ़ रही हैं यह ? बंद करो किताबें और बत्ती । ऐसे ही पढ़ना हो तो जाओ सो जाओ। सुबह जल्दी उठ जाना और शेष काम पूरा कर लेना ।'

मैं शुक्र करती और जल्दी से बत्ती बुझाकर लपककर बिस्तर में घुस जाती और फिर मुझे खूब नींद आती ।

मेरे पीछे मेरी पांच बहनें और चार भाई आये । देखा जाये तो मां ने तो केवल जन्म ही दिया । उन्हें पाल-पोसकर बड़ा तो मैंने ही किया । पहली बोतल की फीड से लेकर स्कूल भेजने की तैयारी तक का काम मेरा ही दायित्व था । मुझे कभी-कभी बहुत क्रोध आता और मैं सोचने लगती क्या मैंने काम करने का ठेका ले रखा है । और लोग भी तो हैं, उन्हें भी तो करना चाहिये इत्यादि । परन्तु मुझे आभास होता कि निश्चय ही बड़ा होना अपराध से कदापि कम नहीं । जब किसी छोटे भाई - बहन से काम करने को कहो, मां के समक्ष कहीं जाने का प्रस्ताव रखो— एक ही रटा-रटाया उत्तर मिलता ।

'बेटी, तुम बड़ी हो, ये छोटे हैं । तुम समझदार हो, ये अभी नादान बच्चे हैं ।' बड़ी-बड़ी-बड़ी ! क्या बकवास है बड़ा होना

भी ? क्या बड़ों का दिल नहीं होता ?

फिर तो बारह वर्षीय बच्ची एक बहन मां तथा आया सबका पार्ट अदा करने में अब सिद्धहस्त हो चुकी थी।

दूसरी तरफ अभाव भी निरंतर बढ़ने लगे। तन के कपड़ों से लेकर पेट की भूख तक। घर में बात-बात पर आये दिन हंगामा मचा रहता और मैं उदासीनता से खिन्न बनी रहती।

मुझे अपने टेंथ के पेपरों के वे दिन खूब याद हैं। सब सहेलियों ने मिलकर सुझाया कि एक रोज़ वे मेरे घर आकर पढ़ेंगी। मैं अंदर तक कांप गयी थी। तदुपरांत मैंने कहा कुछ नहीं। मैं तो इसी सोच में डूबी रही कि हम कहां बैठकर पढ़ेंगे ?

दो कमरों का छोटा-सा घर। नौ भाई-बहनों का परिवार। हाय .... कैसे। देखती हूं कि डाक्टर आंटी अपना बक्सा खोले बैठी हैं। मैंने इधर-उधर चोर नज़रों से देखा परंतु मां कहीं न दिखी। आंटी मुझे देखते ही बोल पड़ीं।

'अरे तू आ गयी बेटी। जल्दी से ज़रा गर्म पानी तो रख दे। तेरी मां ठीक नहीं है—उन्हें 'इंजैक्शन' लगाना है।'

उस दिन मेरा रोष छिपाये भी न छिप सका। और मैं फूट पड़ी :

'मैं नहीं करूंगी पानी गर्म। मेरा इंगलिश का पेपर है कल। पता नहीं, आंटी, आप जब भी आती हैं, मां बीमार पड़ जाती हैं ?' आंटी मुझे घूरती-सी रहीं परंतु मैं अवहेलनापूर्ण ढंग से सीढ़ियां लांघ ऊपर छत पर चढ़ गयी।

ऊपर पहुंच मुझे अपनी सखी-स
से वह सब मालूम पड़ा-जिसे मैं
एक रोग समझे हुए थी वह वास्त
क्या था।

उस दिन मुझे लगा सचमुच मेरी
नहीं है। भले ऐसे भी कभी होता है
सगी मां सारा दिन मुझे काम के बोझ
लादे रखे। मुझे याद नहीं आ रहा
कभी मां ने मुझे प्यार से पुकारा
दुलारा हो।

मुझे सदा ही ऐसे प्रतीत होता
कि बहुत बड़ी हो गयी हूं—इतने ढेर
भाई-बहनों की मां।

कभी-कभी तो कितना अच्छा लगता
मैं अपने भाई-बहनों पर मां की तरह
झाड़ती। सच बड़ा मज़ा आता।

मां-पिता कभी किसी के यहां जाते
पीछे से मैं सबको संभाले रखती।
पड़ोस में सभी जगह मेरी तारीफ़ के
बंधते। साथ ही साथ पढ़ाई में
का प्रमाण-पत्र भी मिल जाता, जब
कहते कि दो-तीन बार तो मैट्रिक
फ़ेल हो चुकी है।

इन बातों को देख मेरे भीतर
जहर फ़ैल जाता। मैं गुम-सुम हो
ठगी-सी रह जाती।

खाक पढ़ूं। आखिर मेरी तरह
करना पड़े तो नानी याद आ जाये।
पानी से कपड़े धोते-धोते अंजर-पंजर
पड़ जाते हैं—दूसरों को व्याख्यान

रामू, मैंने तुम्हें पांच गधे लाने को कहा था, चार ही क्यों लाया ?
साहब, पांचवां मैं जो हूं. आप मुझे बात-बात पर गधा कहते हैं.

नान होते हैं। यह सब सोचते-सोचते आभास होने लगता कि मैं चिर प्रौढ़ यी हूं–पुरखिन जैसे।

कभी-कभी सोचने लगी कि नारी तो ती है–शिशु की स्रष्टा अभयदायिनी है। जननी की कोई गोद, आलिंगन का र्श और सान्निध्य ही बच्चे की प्रथम श्वास सीढ़ी है। जननी के प्रहार, भर्त्सना था स्नेहालिंगन में भेद ही क्या है।

अभी इन्हीं ख्यालों में डूबी थी कि भी मां का काम के बोझ से झुका शरीर मुख आता। तो मेरी अनुकंपा मां पर हो ती–कितना थककर टूट गयी है मां।

तब दोषी मैं पिता को ठहराती। मां रंतर क्षीणकाय और चिड़चिड़ी-सी होती रही थीं कभी कह देतीं–

'पम्मी बेटी, तू सब कुछ जानती है कि झसे काम नहीं होता। एक तेरा ही तो हारा है, बेटी। तेरे बिना तो मैं अधूरी हूं। जब तू अपने घर चली जायेगी राम जाने कैसे गुजर होगा। न जाने कैसे दो जून भोजन बना पाऊंगी।'

मैं मां को एक टक भ्रमित-सी निहारती, मुझे लगता मेरे भीतर एक अनोखी-सी प्यास जन्म लेने लगी है।

इधर मां भी मेरे विवाह के लिए चिंतित हो उठी थीं। जब-तब पिताजी पर ताने कसती रहतीं।

'जवान बेटी है–इसके लिए घर-बार देखो। कब तक बिठाये रखोगे ?'

मैं मन ही मन मिलन और बिछोह के झूले पर झूलती रहती। मां-बाप के बिछोह मात्र से जहां सिहर उठती वहां माथे को भगवान के आगे टेकती अपने सुखमय दीर्घ दांपत्य जीवन की कामना करती हुई कहती–'प्रभु, अब दुर्दिन के दिन दूर हुए।' अचानक मां के बोल मुखर हो उठते।

'अरे, पुरुष जिस सुख-शांति के लिए ब्याह कर धर्मपत्नी लाता है, यदि वही उसे न मिले तो उसे विडंबना नहीं तो क्या

कहेंगे ? बच्चे तो प्रसाद होते हैं प्रभु का।' मैं ध्यानपूर्वक मां का निरीक्षण करती रहती–क्या वास्तव में मां प्रसन्नचित्त हैं ? न जाने क्यों मैं मां के साथ इस विषय पर कभी सहमत न हो पाती और क्षुब्ध हो उठती।

मैं मन ही मन निश्चय करती रहती। मैं . . . मैं इस नारकीय जीवन की चाह कभी नहीं करूंगी–'मां, तुम जिसे प्रसाद कहती हो वह अभिशाप है।'

मैं चोर नज़रों से इधर-उधर देखती कि कहीं किसी ने मेरे मन के भावों को पढ़ तो नहीं लिया। फिर अपने-आप बोल पड़ती,–'छी, छी ! विवाह से पूर्व ऐसे विचार।' और मैं आश्वस्त-सी हो जाती।

विवाह के दिन निकट आते जा रहे थे और मैं इन्हीं आशंकाओं से घिरी अत्यंत गंभीर एवं चिंतित रहने लगी थी।

'मैं ये सब स्पष्ट कर दूंगी–यह सब नहीं होगा, मां की तरह।'

'मां, कहां थीं आप ? पापाजी भी आ गये हैं। आपको बुला रहे हैं।' रोमा थी, मेरी बेटी जो मुझे रही थी।

रोमा का बुद्धि-दीप्त ललाट मुझे ऐसा प्रतीत हुआ जैसे मेरे में भारी वेदना-विकृति इस शांत स्पर्श से छूमंतर हो गयी हो। की गोद, जननी का सान्निध्य और लिगन इसके सिवाय शिशु को और भी क्या ? अब मुझे अपने-आप पर भी ग्लानि नहीं हो रही थी। मैं दृढ़प्रतिज्ञ थी।

'हां रोमा, मेरा हाथ तुझे अभय जननी और संतान की परस्पर मान्यताओं को ठुकराकर सत्य, और न्याय पर आस्था टेककर हम बढ़ेंगे।' यह कहते-कहते मैंने रोमा कसकर अपने वक्षस्थल से लिपटा इस स्पर्श में आनंद, विश्वास और निश्चय का संगम था। –सी-२/१

लोधी कालोनी, नयी दिल्ली-११००

□

(पृष्ठ ७१ का शेषांश)

की हालत देखकर घबरा गयी। वहीं से पुकारकर कहने लगी। 'प्रियव्रत ... प्रियव्रत ... देखो ... यहां देखो ... आदर्श टूटने का दर्द क्या होता है ! लो, अब तो तुम खुश हो न ? अब तो तुम्हारा कैरियर बन गया न ?'

और वह रो-रोकर कहने लगी–'पिताजी, क्या कर दिया आपने यह ? चुप हो जाइये, पिताजी, नहीं तो सिर फट जायेगा ! प्रियव्रत की को क्षमा कर दीजिये।'

पिता-पुत्री के करुण रुदन के प्रियव्रत चुपचाप खड़ा था, जैसे किसी गाय की हत्या कर दी हो !

–काशी मिस्त्री लेन, छोटी

भागलपुर-८१२

□

मेरी कनाडा यात्रा : एक स्मृति

☐ डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव

१ जून १९८५ ई. को मुझ दिल्ली से माण्ट्रियाल के लिए एअर इंडिया सवेरे ढाई बजे वाली फ्लाइट लेनी । किंतु दिल्ली में दो-तीन दिन पहले ही यह अफवाह गरम थी कि १ जून को ब लोग 'घल्लीघरा' मनायेंगे । पूछने र मालूम हुआ कि 'घल्लीघरा' का तलब था अमृतसर के स्वर्ण मंदिर में रत सरकार द्वारा पहले किये गये नू स्टार' की स्मृति में 'बदला-दिवस' नाना । पता नहीं आतंकवादियों का ह उत्पात कब शुरू हो जाये और रात हवाई अड्डा जाने के लिए टैक्सी न मिल के, इस डर से मैं ३१ मई को ही खाना ने के बाद लगभग १० बजे रात को लम पहुंच गया । वहां पहुंचने के बाद निश्चित हो गया और फिर माण्ट्रियाल श्वविद्यालय में आयोजित होने वाले ड सोसाइटीज़ आफ कनाडा के वार्षिक म्मेलन के सपने देखता रहा । विदेश में सी अंतरराष्ट्रीय विद्वत्-परिषद् में सम्मि-त होने और अपना शोध-निबंध प्रस्तुत रने का यह मेरा पहला अवसर था ।

इस एकेडेमिक सम्मेलन के लिए ल्ली में मई की चिलचिलाती धूप में लगभग १० दिन मुझे यू. जी. सी., आई. सी. सी. आर. तथा आई. सी. एच. आर. के चक्कर लगाने में जो नान-एकेडेमिक पापड़ बेलने पड़े, वे मैं कभी न भूल सकूंगा। जिस देश के विद्वानों को अंतरराष्ट्रीय विद्वत्-परिषदों में अपने शोधकार्य को प्रस्तुत करने के लिए अपनी ही सरकार से यात्रा-व्यय तक सरलता से न मिल सके, उस देश के बौद्धिक उन्नयन की बात राम जाने। इस विषय में विश्वविद्यालय, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अथवा राज्य सरकार सबके सब अदालतों जैसे हो गये हैं, जहां बिना दौड़-धूप अथवा सोर्स-सिफारिश के कुछ भी नहीं मिल सकता है।

दिल्ली से चलते समय मुझे ग्वेल्फ विश्वविद्यालय में राजनीति-विज्ञान विभाग के अध्यक्ष प्रो. ओ. पी. द्विवेदी का तार मिल गया था, जिसमें उन्होंने मुझे माण्ट्रियाल के बजाय टोराण्टो में उतर जाने की सलाह दी थी । प्रो. द्विवेदी 'कनैडियन एशियन स्टडीज़ एसोसिएशन' के अंतर्गत 'साउथ एशिया काउंसिल' के तथा 'हिंदी लिटरेरी सोसाइटी ऑफ कनाडा' के अध्यक्ष थे । जब मैं टोराण्टो के हवाई अड्डे पर

उतरा तो उस समय शाम के लगभग आठ बजे थे, किंतु धूप छिटकी हुई थी। बाद में पता चला कि कनाडा में नौ-साढ़े नौ बजे सूर्य डूबता है। मैंने सोचा था कि जब प्रो. द्विवेदी ने मुझे टोराण्टो उतर जाने को कहा है तो किसी न किसी को वे मुझे लेने के लिए अवश्य भेजेंगे। कुछ देर इंतजार करने के बाद मैं एअर इंडिया के बूथ पर गया, जहां पर्यटक की समस्याओं के निदान के लिए कोई भी न था। अंत में इधर-उधर खोज करने पर मुझे एक ऐसा बूथ दिखायी दिया, जो यात्रियों की मदद के लिए था। बूथ पर फ्रेंच बोलने वाली महिला को यद्यपि काफी परेशानी हुई, किंतु उसने मेरे लिए एक होटल में कमरा बुक कराया और उठकर बाहर बस तक मुझे छोड़ने आयी। कनाडा की भूमि पर वहां के निवासियों के मानवीय व्यवहार की यह पहली झलक थी।

उस रात मैं डाउन टाउन के एक होटल में जा ठहरा। दूसरे दिन सवेरे टोराण्टो विश्वविद्यालय के सांख्यिकी विभाग के प्रो. एम. एस. श्रीवास्तव की मदद से फोन पर मेरी बातचीत प्रो. द्विवेदी से हुई। बाद में उनसे मालूम हुआ कि वे बराबर मेरे तार की प्रतीक्षा करते रहे। यदि तार उन्हें मिल जाता तो वे मुझे टोराण्टो एअरपोर्ट पर अवश्य मिलते।

दो दिन ग्वेल्फ में प्रो. द्विवेदी के परिवार के साथ रहकर मैं उन्हीं के साथ कार से माण्ट्रियाल गया। साथ जाने वाले [illegible] और भी थे—हिंदी संवाद के प्रधान संपादक श्री श्रीनाथ प्रसाद द्विवेदी, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली के प्रोफेसर वी. के. श्रीवास्तव, हैमिल्टन की मैक मास्टर यूनीवर्सिटी के बायलॉजी के प्रोफेसर डा. रमाशंकर [illegible] तथा भारत से गये उत्तर प्रदेश शिक्षा विभाग के डा. वी. एन. तिवारी। माण्ट्रियाल में ५ से ८ जून तक माण्ट्रियाल विश्वविद्यालय भवन में वार्षिक सम्मेलन संपन्न हुआ।

कनाडा में वर्ष में लगभग ६-७ महीने बर्फ जमी रहती है। इसलिए शेष [illegible] महीनों में ही वसंत, गर्मी और वर्षा के मौसम होते हैं। इसी बीच कनाडा में लगभग सभी विद्वत्-परिषदों के वार्षिक सम्मेलन एक साथ एक स्थान पर आयोजित किये जाते हैं, और इन सबके [illegible] इस महासम्मेलन को 'एनुअल कांग्रेस ऑव द लर्नेड सोसाइटीज ऑव कनाडा' भी कहा जाता है। मुझे इस सम्मेलन में 'कनैडियन-एशियन स्टडीज़ एसोसिएशन' तथा 'हिंदी 'लिटरेरी सोसाइटी ऑव कनाडा' के तत्वावधान में एक-एक निबंध प्रस्तुत करना था।

माण्ट्रियाल में

इस सम्मेलन के दौरान प्रो. द्विवेदी ने मुझे माण्ट्रियाल स्थित कान्कार्डिया विश्वविद्यालय के एक गणित के प्रो. एल. एस. दूबे (लक्ष्मी शंकर दूबे) के यहां ठहराया। डा. दूबे माण्ट्रियाल में बसे भारतीयों [illegible]

संस्था 'हिन्दू मिशन ऑव कनाडा' के अध्यक्ष थे। उन्होंने मुझे न केवल अपनी इस संस्था के भवन तथा उसमें स्थित मंदिर को दिखलाया, अपितु वहां आयोजित एक हिंदू विवाह में भी सम्मिलित होने का अवसर दिया। विवाह का समस्त कार्यक्रम लगभग डेढ़ घंटे में समाप्त हो गया। डा. दूबे ने ही हम लोगों को माण्ट्रियाल नगर के कुछ दर्शनीय स्थल दिखलाये, जिनमें माण्ट रायल पार्क, नाट्रेडेम चर्च तथा सेण्ट जोज़ेफ्स ओरेटरी चर्च मुख्य हैं। माण्ट रायल एक पहाड़ी है जिसे अब एक सुंदर पार्क के रूप में विकसित कर लिया गया है। इसी के नाम से इस नगर का नाम माण्ट्रियाल पड़ा। यह नगर सेण्ट लारेंस नामक नदी से घिरा हुआ है। माण्ट रायल से सेण्ट लारेंस का उज्ज्वल नीला जल और हरीतिमा से लिपटे इस नगर के गगनचुंवी भवन मन को मोह लेते हैं। नाट्रेडेम चर्च पुरानी वास्तुकला का और सेण्ट जोज़ेफ्स ओरेटरी आधुनिक वास्तुकला के सुंदर नमूने हैं।

कनाडा की पार्लियामेण्ट

माण्ट्रियाल से ग्वेल्फ वापस आते समय हम लोग रात ओटावा में डा. राधेश्याम पांडेय के यहां ठहरे। वे वहां कृषि एवं तकनीकी विभाग में वैज्ञानिक हैं। डा. पांडेय हिंदी लिटरेरी सोसायटी ऑव कनाडा के सक्रिय कार्यकर्ता हैं और भारतीय कला तथा इतिहास में विशेष रुचि रखते हैं। उनके ड्राइंग रूम के शेल्फ पर रखी ढेरों कला की पुस्तकें उनकी इस अभिरुचि का परिचय देती हैं। वे मेरी पुस्तक 'लाइफ इन सांची स्कल्पचर' को पाने का लोभ संवरण नहीं कर सके। दूसरे दिन हम लोग उन्हीं के साथ कनाडा का संसद भवन देखने गये, जो एक पहाड़ी पर स्थित है और जिसकी पृष्ठभूमि में ओटावा नदी बहती है। सन १८७३-७५ ई० में गोथिक शैली में निर्मित कनाडा की पार्लियामेण्ट का यह भवन अत्यंत भव्य और प्राचीन वास्तुकला का उत्तम नमूना है। संसद के मुख्य सभा-भवन से लगा हुआ संसद के पुस्तकालय-भवन का गोल गुंबद

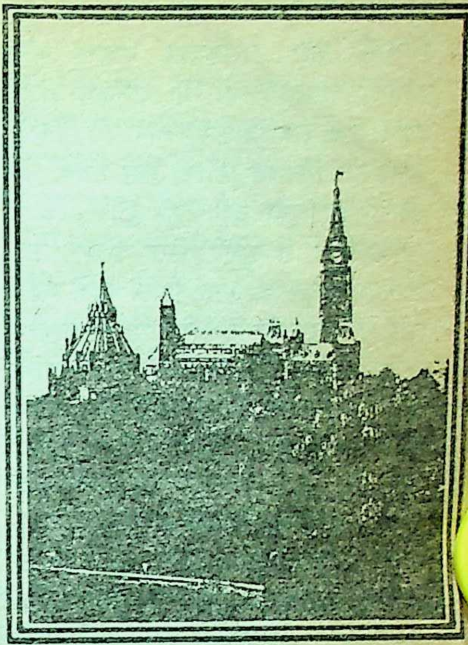

ओटावा स्थित कनाडा की संसद

उसकी भीतरी दीवालों पर लगी हुई चिकनी और चमकदार लकड़ी और मूर्तियों तथा चित्रों से अलंकृत मंडप दर्शनीय हैं। श्वेत संगमरमर की विक्टोरिया की विशाल प्रतिमा उस मंडप की शोभा कई गुना बढ़ा देती है।

ओटावा से दूसरे दिन चलकर हम लोग १० जून की रात ग्वेल्फ़ पहुंच गये। वहां मेरे साथ कैलगरी निवासी श्री श्रीनाथ प्रसाद द्विवेदी और डा. बी. एन. तिवारी भी प्रो. द्विवेदी के ही यहां ठहरे थे। श्रीनाथ प्रसाद द्विवेदी एक अच्छे कवि और साहित्यकार हैं। हिंदी लिटरेरी सोसाइटी ऑव कनाडा की लोकप्रिय पत्रिका 'हिन्दी संवाद' के वे प्रधान संपादक हैं। उन्होंने अपनी कविताओं से माण्ट्रियाल में वहां के महिला-एसोसिएशन द्वारा आयोजित कवि-सम्मेलन में एकत्रित समस्त श्रोताओं को भावविभोर कर दिया था। श्री द्विवेदी ने मुझे ग्वेल्फ़ के बाजार तथा ग्वेल्फ़ और वाटरलू के विश्वविद्यालय दिखलाये।

निआग्रा प्रपात

१५ जून को मुझे वापस आना था। १४ जून को सवेरे हैमिल्टन से डा. रमाशंकर सिंह ने फोन करके मुझे ग्वेल्फ से हैमिल्टन बुलाया। उनकी पत्नी श्रीमती रेखासिंह मेरे कालेज की छात्रा रह चुकी हैं। उन्होंने मेरे कई सहयोगी अध्यापकों की कुशल क्षेम पूछी। भोजनोपरांत वे सपरिवार मुझे जगत-विख्यात निआग्रा प्रपात दिखाने ले गये। निआग्रा प्रपात देखकर मैं आश्चर्यचकित रह गया। कनाडा तथा अमरीका की सीमा पर प्रकृति की यह अपूर्व देन संसार के लोगों के लिए आठवां आश्चर्य है। प्रपात के सौंदर्य को निहारने के लिए आने वाले दर्शकों-पर्यटकों के ठहरने की व्यवस्था से प्रारंभ होकर अब यह एक बड़े नगर 'निआग्रा सिटी' के रूप में विकसित हो चुका है। इस नगर में अनेक होटल तथा मनोरंजन के लिए क्लब और थिएटर हैं। यहां के अत्यंत ऊंचे टावर के ऊपर बने रिवाल्विंग रेस्ट्रां से निआग्रा प्रपात का दृश्य अद्भुत दिखायी पड़ता है।

निआग्रा प्रपात घोड़े की नाल के आकार में अपार जलराशि को सदियों से गिराता आ रहा है। जहां पर मीलों फैली यह जलराशि फाल के रूप में नीचे गिरती है, वहां फुहारों से गहरा धुआं-सा छाया रहता है। इसे देखकर मुझे भारत के धुआंधार प्रपात की याद आ गयी।

जिस समय हम लोग निआग्रा प्रपात का विहंगम दृश्य देख रहे थे, उस समय आकाश में बादल छाये हुए थे। यकायक बादलों के बीच से सूर्य की एक किरन फूटी और निआग्रा फ़ाल्स में उठने वाली फुहारों में इंद्रधनुष की सतरंगी छवि छिटक गयी। सैकड़ों दर्शकों के मुख से आश्चर्यमिश्रित हर्ष का स्वर फूट पड़ा—'अरे देखो, आसमान के बजाय इंद्रधनुष नीचे प्रपात में निकला है' और एक साथ दसियों कैमरों की क्लिक ने उस दृश्य को यादगार के रूप में

[illegible]

मेट लिया।

ल-यात्रा कैनेडियन ट्रेन से

अभी तक मैंने कनाडा में रेल-यात्रा नहीं थी। हवाई जहाज से ट्रेन का किराया कम है। इसलिए अपनी वापसी ाइट पकड़ने के लिए मैं ग्वेल्फ़ से ड्रियाल ट्रेन से आया। कनैडियन ट्रेंस डिब्बे और उसकी साज-सज्जा लगभग ाई जहाज जैसी ही होती है। खाने-पीने ीजों का स्टाल हर डिब्बे में रहता है, र ट्राली पर सामान लेकर भी यात्रियों क पहुंचाया जाता है। प्रत्येक डिब्बे में म्रपान करने वालों का स्थान एक ओर ता है। हर डिब्बे में एक कंडक्टर रहता जो यात्रियों के टिकट तो चेक करता है, साथ ही उन्हें चढ़ने और उतरने में द भी करता है। चूंकि यहां की ट्रेनों भीड़-भाड़ नहीं होती है, इसलिये डिब्बे ही शत-प्रतिशत टिकट-चेकिंग हो जाती । शायद इसीलिए स्टेशनों पर उतरने यात्रियों के टिकट नहीं देखे जाते हैं और टफार्म तक लोग अपनी कारें लाकर त्रियों को ले जाते हैं। यह कनैडियन -यात्रा भी एक सुखद अनुभव थी।

मेरी इस कनाडा यात्रा का सबसे क रोमांचक कारण मेरी वापसी की ई यात्रा थी। मैं १५ जून १९८५ को र इंडिया की फ्लाइट से चलकर १६ को दिल्ली वापस आ गया। किंतु २२ की अगली फ्लाइट दूसरे दिन सवेरे पहुंचते-पहुंचते विनाश के मुख में समा गयी और उस पर बैठे सभी ३२९ यात्री तथा कर्मचारी पलक झपकते काल के गाल में समा गये। २३ जून १९८५ को हुए एअर इंडिया के 'कनिष्क-क्रैश' ने समस्त संसार को शोक-संतप्त तो कर ही दिया, साथ ही मेरे शुभ-चिंतकों, इष्ट-मित्रों और सगे-संबंधियों को भी चिंतित कर दिया, क्योंकि उन्हें मेरे कनाडा जाने की तो सूचना थी, किंतु वापसी की नहीं। पूछताछ के बाद मुझे सकुशल पाकर ही सब निश्चित हो सके।

अपनी इस १५–दिवसीय कनाडा-यात्रा में मुझे जिन कतिपय बातों ने विशेष प्रभावित किया वे हैं, कनाडा की प्राकृतिक सुषमा और कनाडा में बसे भारतीयों का अतिथि-सत्कार।

कनाडा की प्राकृतिक सुषमा

मैं कनाडा के टोराण्टो, ग्वेल्फ, माण्ट्रियाल, हैमिल्टन, ओटावा, आदि बड़े तथा वाटरलू, किंग्स्टन, किचनेर, आदि छोटे नगरों में घूमा और रेल-यात्रा के दौरान कनाडा के गांवों से भी गुजरा; किंतु मुझे सब जगह हरे-भरे वृक्ष, लताएं और भूमि पर बिछी मखमली घास ही दिखायी दी। सर्वत्र हरियाली ही हरियाली। उड़ती धूल के दर्शन तो दुर्लभ ही रहे। ओटावा में तो ग्रीन बेल्ट के रूप में दसियों किलोमीटर भूमि पर घास लगाकर उसे हरा-भरा बनाया गया है। माण्ट्रियाल में माण्ट्रियाल की प्राकृतिक सुषमा तो अकथनीय थी। इसे अब एक पिकनिक स्पाट

के रूप में विकसित कर लिया गया है। चौड़ी सड़कों के अतिरिक्त घने वृक्षों और लता-कुंजों के बीच से निकलती पगडंडियां पर्यटक का मन मोह लेती हैं। कनाडा का राष्ट्रीय चिह्न बन जाने वाली मैपल वृक्ष की नयी-नयी पत्तियों की हरीतिमा बड़ी चित्ताकर्षक लगी। इसी प्रकार निआग्रा फाल्स की प्राकृतिक सुषमा वर्णनातीत है। बस देखते ही रहने का जी होता है।

अतिथि-सत्कार

कनाडा में मैं प्रो. ओ. पी. द्विवेदी के यहां ठहरा था। उनके घर पर दो दिन में ही मेरा संकोच दूर हो गया। प्रो. द्विवेदी की मां उन दिनों वहीं थीं। वे धार्मिक प्रवृत्ति की एक उदार महिला थीं। उनकी बोली में अपार स्नेह और ममता घुली थी। द्विवेदीजी की पत्नी सरलाजी 'यथा नाम तथा गुणा:' को चरितार्थ करती हैं। मेरे खाने-पीने का उन्हें पूरा ध्यान रहता था। उन्होंने मुझे एक दिन ग्वेल्फ का सब्जी-बाजार घुमाया, जहां हमने हर मौसम की सब्जियां और फल बिकते देखे। द्विवेदी-परिवार के साथ मुझे एक शाम एक भारतीय स्वामीजी के प्रवचन भी सुनने को मिले। स्वामीजी ने ग्वेल्फ के निकट थोड़ी-सी जमीन लेकर उस पर मंदिर बनाने की योजना बनायी है। स्वामीजी के प्रवचन सुनने के लिए आये भारतीयों के बीच अपने को पाकर थोड़ी देर के लिए मैं यह भूल ही गया कि मैं देश के बाहर हूं।

एक दिन वाटरलू विश्वविद्यालय घुमाकर लौटते समय किचनेर में शाम
श्री श्रीनाथ प्रसाद द्विवेदी मुझे
निवासी श्री प्रदीप वैष्णव के घर ले
श्री वैष्णव अभी-अभी अपनी 'बड़'
मोटर-फैक्टरी से लौटे थे। इस
अधिकांश काम रोबोट्स करते हैं।
यह जानकर कि मैंने कभी रोबोट को
करते नहीं देखा है, उन्होंने तत्काल
फैक्टरी के मैनेजर को फोन करके
फैक्टरी दिखाने की आज्ञा मांगी और
लोग फैक्टरी पहुंच गये। वहां
को काम करते तो देखा ही, साथ ही
देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि
कर्मचारी फैक्टरी से बाहर वापस
समय बोर्ड पर यह देखता जाता है कि
दिन उसने कितनी कमायी की।
कम्प्यूटर की माया। फैक्टरी से
आते समय मेरे मना करने पर भी
ने कनाडा की कई प्रकार की
खरीदीं और घर आकर उन्होंने
मुझे उन मिठाइयों को खिलाया
मुझे भारत से आया पाकर वैष्णव-
बड़े प्रसन्न थे। उनका अतिथि-
औपचारिक नहीं था, यह उनके
चेहरों से स्पष्ट था। यही अतिथि-
हैमिल्टन के प्रोफेसर रमाशंकर
परिवार से मिला। उन्होंने यदि
ओर से ज़ोर न दिया होता तो
संसार का आठवां आश्चर्य निआग्रा
देखे बिना ही वापस आ जाता।

माण्ट्रियाल में यही स्नेह-भरा

यह नशा इस जन्म तो...

खो चुके आधी उमर आवारगी में हम
आचरण अपने अभी तक तो नहीं सुधरे
रूप की विष-वारुणी का है नशा हम पर
यह नशा इस जन्म तो शायद नहीं उतरे...
भूल यदि हमसे हुई कोई नहीं होती
जिंदगी वीरान-सी खोई नहीं होती
दिन हमें पाषाण से भारी नहीं लगते
रात खंडित सिसकियां, रोई नहीं होती
कौन पल ऐसा रहा इस जिंदगी में, जब
दर्द की गहराइयों तक हम नहीं उतरे...
आज तक हमने चुभन पायी शबाबों से
और क्या मिलता भला हमको गुलाबों से
वे जिन्हें अब तक किसी ने भी नहीं खोला
हम रहे दीमक लगी ऐसी किताबों से
चैन हमको मिल न पाया एक-दो पल भी
किस शहर, बस्ती, गली से हम नहीं गुजरे...

— कन्हैयालाल बाजपेयी
११९/२६७ दर्शन पुरवा, कानपुर, उ. प्र.

ें डा. लक्ष्मीशंकर दूबे के परिवार से मिला। डा. दूबे के घर में भी पूर्णतः तीय वातावरण है। उनकी पत्नी नितांत रतीय महिला हैं। वापसी में जब मैं से माण्ट्रियाल ट्रेन से पहुंचा तो दूबे की बेटी अर्चना मुझे स्टेशन पर आयी। बाद में डा. दूबे और उनकी पत्नीजी मुझे एअर पोर्ट तक न केवल पहुंचाने आये, अपितु जब तक मैं जहाज में चढ़ने के लिए नहीं गया, तब तक वे बराबर मेरे साथ रहे।

मुझे इस बात से प्रसन्नता हुई कि बाद में भारत आने पर डा. दूबे मेरे यहां आये और मेरे घर पर ठहरे भी।

—५ डी/४, लिडिल रोड,
जार्जटाउन, इलाहाबाद, उ. प्र.

रोचक परिचर्चा

नारी दहलीज के भीतर और बाहर

आयोजक : हरिसिंह 'हरीश'

०००

हमारे समाज में नारी की स्थिति सदैव से ही विवादास्पद रही है। उसके कई रूप उपस्थित होते रहे हैं। नारी चाहे दहलीज के भीतर रही हो चाहे बाहर उसने ही अपने कार्य एवं व्यवहार से दूसरों का मन जीता है। कभी-कभी पुरुष-वर्ग ने अपनी और घुटन का बदला नारी जाति से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में लिया है। लेकिन नारी अपने त्यागमय बलिदान से, अपनी योग्यता से नित नये कीर्तिमान स्थापित किये कुछ युवतियों से जब इस संदर्भ में बातचीत हुई तो उन्होंने अपने विचार कुछ तरह प्रकट किये हैं जो विचारणीय हैं।

०००

नारी महान है, पूज्य है, पावन है, देवी है

☐ कु. किरन ठाकुर

जीवन संघर्ष है तो नारी संघर्षों से जूझने वाली वीरांगना है। नारी को जन्म के कुछ समय बाद से ही संघर्षों से जूझना पड़ता है, फिर भी वह कहीं भी राह में विचलित नहीं होती। नारी ने अपने जीवन में कहीं भी हार नहीं मानी, इतिहास इसका साक्षी है।

नारी ने दहलीज के भीतर और बाहर दोनों जगह अपनी एक अहम भूमिका अदा की है, जिसे सारे संसार ने सराहा है।

नारी के अनगिनत रूप हैं। उसने अपने हर रूप की रक्षा की है, लाज रखी है। नारी न तो दहलीज के भीतर पुरुष-वर्ग के बदले रूप, व्यवहार व तेवर से हुई और न दहलीज के बाहर।

पुरुष को अपनी कोख से जन्म वाली नारी ने कभी भी इस बात उपालंभ नहीं दिया कि वही संसार निर्मात्री है।

फिर भी पुरुष-वर्ग ने इस सत्य नकारते हुए नारी को तरह-तरह से किया है, ठेस पहुंचायी है। पर नारी है अपने आपको समर्पित किये हुए है वर्ग के लिए, चाहे वह दहलीज के हो या बाहर।

नारी महान है, पूज्य है, पावन है देवी है।

०००

ों जगह समस्याओं से ग्रसित

☐ कु. ज्योत्स्ना गोस्वामी

मारा समाज एक ऐसा समाज है जिसमें स्त्रियों की स्थिति निरंतर परिवर्तन- ती रही है। कभी वह अबला, गार्गी बन- र हमारे सामने आयी और कभी 'चांद ीं और झाँसी वाली रानी बनकर र कभी वह मध्य युग की पीड़ित नारी। हमारे देश में स्त्रियां घर से बाहर ल रही हैं। अनेक सामाजिक, राज- क कार्यों में भाग ले रही हैं, किंतु घर अंदर रहने वाली स्त्रियों की संख्या क है। चाहे इसका कुछ भी कारण ों न रहा हो?

घर से बाहर निकलने वाली स्त्रियों ी अपेक्षा घर से बाहर न निकलने वाली यां संकीर्ण विचारों की होती हैं। फलत: दहलीज के बाहर निकलने वाली यों से खुली बात करने में भी झिझक ूस करती हैं, जबकि बाहर निकली नारी में वह झिझक खरगोश के सींग ं गायब हो जाती है। फिर भी जो मर्यादा दहलीज के भीतर रहने वाली ी अभी तक ओढ़े है, वह दहलीज के र वाली नहीं।

र की दहलीज के भीतर जीने-मरने ी नारी चाहे जैसी हो, वह हमारे देश पावन संस्कृति को जिंदा रखे हुए है, : वह नमन और अर्चन के योग्य है। ारी के इन दोनों रूपों में उसका ीज के भीतर वाला रूप आज भी भारतीयों के लिए देवी तुल्य है, जबकि दहलीज से बाहर निकली नारी मन-मंदिर की देवी के मंदिर की एक दहलीज से ज्यादा कुछ नहीं। तभी तो भारत जैसे पावन देश में दहलीज के भीतर रहने वाली नारी का मान त्रेता, द्वापर की सीता, राधा की कोटि में आता है।

ooo

नारी घर की दहलीज है और नींव भी

☐ अपर्णा चतुर्वेदी 'प्रीता'

सन १९५० के बाद के तीस-चालीस साल और सन १९३२–३३ का समय समाज में नारी स्थापत्य का सही संघर्षपूर्ण समय माना जा सकता है। अंतर इतना ही है कि तब की नारी को दहलीज के भीतर की जिम्मेदारियों को निबाहते हुए पुरुष-वर्ग को संबल और आत्मविश्वास देना पड़ता था। और आज की नारी को घर की दहलीज के बाहर आकर कुंठाग्रस्त पुरुष-वर्ग को हमसफर कहकर संबल देना पड़ रहा है। सही

चित्र : विनोद दुबे

मायने में स्त्री-पुरुष दोनों के क्षेत्र अलग-अलग दीखने पर भी भाव, विकास, चेतना और प्रकृति के दृष्टिकोण से एक ही बिंदु पर आकर मिलते हैं, यह है 'आर्थिक-पक्ष' को सुदृढ़ करना।

आज कुछ वर्गों में एक लहर दौड़ रही है कि स्त्री की आर्थिक लड़ाई मात्र बैंक बैलेंस तक ही है। लेकिन मैं समझती हूं आज स्त्री को अपनी योग्यता, कार्यक्षमता और दूरदर्शिता जगजाहिर करने के लिए घर के बाहर आना पड़ा। वह सही वक्त पर जिस विश्वास को लेकर आगे बढ़ी है, उसमें पुरुष-वर्ग ने भी उत्साहपूर्वक उसको सहयोग दिया है। जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण है रेडियो, दूरदर्शन और पत्र-पत्रिकाओं में महिला प्रधान कथाओं का सजीव चित्रण। उनका पारिवारिक, वैवाहिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों का सटीक चित्रण।

जहां पर नारी घर की जिम्मेदारियां और बच्चों के प्रति, पति के प्रति, घर के बुजुर्गों के प्रति कर्त्तव्य बोध से समर्पित है। वहीं दूसरी ओर वह अपने शैक्षिक योग्यता से नित नये स्थान पर कार्यरत भी है।

आज अंदाजन तीस-पैंतीस प्रतिशत परिवार ऐसे हैं, जहां की स्त्रियां दहलीज की गरिमा साधे हुए आराम से आगे बढ़ रही हैं। इसमें उन परिवारों के बच्चों, बुजुर्गों और पुरुष-वर्ग, स्त्री-वर्ग आदि सभी का बराबर का योगदान है। सबसे अधिक योगदान बर्तन, झाड़ू, पोंछा करने वालियों का है, जो अपने कर्तव्य में
रखे अनेक परिवारों को सुखी
महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है।

जीवन के निर्णय एक होते हैं,
प्रभाव अलग-अलग। इस दिशा में
ही नारी की भूमिका सबसे गंभीर
महत्त्वपूर्ण हो जाती है। उसे यहीं से
भी मिलता है और निरादर भी
सकता है। चूंकि नारी ही घर की
लीज है और नींव भी है।

०००

संकीर्ण विचारधारा की शिकार नारी

☐ डा. विद्या श्री

नारी चाहे दहलीज के भीतर
या बाहर, उसने अपने
बौद्धिक मानस से अपनी प्रगति का
चय दिया है। दहलीज के बाहर
राजनीति के गढ़ जीते हैं। लक्ष्मीबाई,
बीबी, इंदिरा गांधी जैसे व्यक्तित्वों ने
जाति की प्रशंसा में अपने अध्याय जोड़े

वहीं नारी ने घर की बंद
दीवारी में त्याग और बलिदान के
प्रस्तुत किये हैं। पुरुष वर्ग एवं
के शोषण की शिकार नारी
रही है। उसकी प्रगति के रास्ते में
अटकाने के उत्तरदायी ऐसे ही
हैं। जबकि नारी ने प्रत्येक
को आगे बढ़ने की प्रेरणा अपने
प्रेम से दी है।

उसने हर पल बहुत कुछ सहा
में अधिकारियों की डांट-डपट,

र तमाम कुछ। वही सब कुछ दहलीज भीतर भी। लेकिन नारी ने अपने और बलिदान की त्यागमयी गरिमा धूमिल नहीं होने दी।

०००

ों के उल्लंघन का उत्साह

☐ कु. संगीता त्रिवेदी

आज नारी दहलीज के बाहर क्यों निकली? क्या पुरुष उसे घर के र रखने में सक्षम नहीं है? या नारी उद्दंड पुरुष और स्वार्थी पुरुष के रों को सहने की क्षमता खो बैठी है?

प्रश्न यकायक ही उठ जाते हैं, जब आज की नारी की दयनीय स्थिति को ते हैं, जो न घर के भीतर है और न र। वह दोनों स्थितियों से जूझ रही क्या वह अपनी स्वतंत्रता के अहम में हो सकी है? 'नहीं।' क्योंकि नारी जिस युग की हो वह अपनी मनः- से स्वतंत्र नहीं हो सकी। जहां एक वह अपने को पिंजड़े का पंछी सम- रही, वहीं दूसरी ओर खुले आकाश नहीं उड़ सकी। बल्कि वह नारी र के आंगन को वर्षों पहले महका थी, अपने पति के सुख की मंगल नायें करती हुई उसकी संतान को प्यार और ममता से सजा रही थी आज वर्तमान में कहां खो गयी?

नारी जिसने अपने पुत्रों को ममता कर भारत मां की लाज बचाने के बलिदान होने दिया। जिसने गाँधी, नेहरू जैसे बेटों को जन्म दिया। क्या वह आज दहलीज के बाहर सिर्फ इसलिए निकली है कि पुरुष को नीचा दिखा सके? और इसी हीन भावना को लिए वह उसके प्रहारों का बदला ले रही है, जिसके बिना वह स्वयं अधूरी है।

प्रकृति से कमजोर अपने नारी शब्द की कोमलता लिए हुए वह नारी, जो पुरुष के अविश्वास पर ठुकराई जाने वाली अबला जो सिर्फ अपने नयनों के नीर के साथ आज तक अपनी कोमल भावनाओं को पर पुरुष की वासनाओं का प्रहार सहती रही है, जो पुरुष की जननी है, शक्ति है, प्रेरणा है। क्या पुरुष नारी को अपनी जननी स्वीकार सका है? उसी पुरुष को बताना है नारी को कि वह उससे कमजोर नहीं है।

अपनी पीड़ाजन्य अनुभूतियों की चोट लिये उसमें बंधनों की सीमा का उल्लंघन करने का उत्साह है। वह अपने अधिकार पाने की लालसा में अपने कर्तव्यों को भूल रही है। अपनी सीमाओं को लांघ रही है।

०००

नारी का भी स्वतंत्र व्यक्तित्व है

☐ कु. वंदना श्रीवास्तव

नारी चाहे दहलीज के भीतर हो या बाहर पुरुष वर्ग ने और समाज के अन्य ठेकेदारों ने प्रत्येक पल नारी-प्रगति में रोड़े अटकाये हैं। जबकि नारी को भी पूर्ण अधिकार है अपनी प्रगति करने के लिए। आखिर उसका भी तो पृथक व्यक्तित्व है।

एक पुरुष की छवि यदि समाज में

अच्छी नहीं है तो उसकी स्त्री को भी ज्यादा अच्छी नजरों से नहीं देखा जाता। भले ही स्त्री कितनी ही बुद्धिजीवी, पढ़ी-लिखी, समझदार क्यों न हो। आज भले ही यांत्रिक प्रगतिशील युग कहा जाता है, लेकिन नारी की स्थिति का मूल्यांकन पुरुष से ही होता है।

आज नारी ने दहलीज के भीतर रहकर भी अपने पति, बच्चों, बूढ़े मां-बाप, बुजुर्गों को सम्मान दिया है।

अपने त्यागमय जीवन से नारी दहलीज के भीतर और बाहर दोनों कीर्तिमान स्थापित किये हैं। दहलीज बाहर उसने जीवन के प्रत्येक क्षे पुरुषों की बराबरी से बाजी हासिल ली है।

बल्कि कुछ स्थानों पर नारी को प्रथम रही है।

□

भाईजी की उदारता

एक अनजान व्यक्ति भाईजी (श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार) के पास आया। उ विनयपूर्ण तरीके से कहा, 'हम पति-पत्नी दोनों तीर्थ-यात्रा पर निकले हुए थे। गर्भवती है। उसे मैंने सरकारी अस्पताल में भर्ती करवा दिया है। मेरे पास रुप समाप्त हो गया है। इस समय आप दे दें, घर पर पहुंचते ही रुपया वापस कर दू

भाईजी ने उसी वक्त दो सौ रुपये दे दिये।

चार-पांच दिनों के पश्चात् वही व्यक्ति भाईजी के पास फिर आया। दवा का पेश करते हुए कहा 'अमुक दवा' के लिए पुनः रुपया चाहिये। भाईजी ने फिर दे दि

एक सप्ताह उपरांत वह फिर आया और कहने लगा कि 'पत्नी की मृत्यु हो ग अंतिम क्रिया हेतु रुपया दे दें।' रुपये फिर दे दिये गये।

वह फिर आया—'घर जाने हेतु किराया चाहिये।'

भाईजी जब देने को हुए तो वहीं बैठे एक सज्जन ने कहा—'भाईजी, यह बेईमान आपके भोलेपन का लाभ उठाकर बार-बार आपसे रुपये ले जाया करता है।'

भाईजी ने कहा कि 'चुप रहो।' ऐसा कहकर उसे सौ रुपये किराये हेतु दे दि बाद में भाईजी ने कहा, 'जिस दिन यह व्यक्ति पहले पहल अस्पताल के लिए रुपये आया था, उसी दिन मैंने भीतर जाकर अस्पताल के प्रधान सर्जन मित्तल साहब से फो बात कर ली थी। वहां न कोई गर्भवती स्त्री भर्ती हुई न उस नंबर का कोई कमरा था।

'फिर आप उसे रुपये बार-बार क्यों दिये जा रहे थे?'

उन्होंने कहा, 'जब वह आदमी आकर मेरे सामने बैठता तो मेरे मन में यह उत्पन्न होता कि मैं उसका पूर्वजन्म का ऋणी हूं। उसी को चुकता कर रहा हूं। मैं दान या सहायता नहीं, अपितु अपना कर्ज उतार रहा हूं।'

—विजयप्रकाश

□

र्मेनियाई कहानी

बेटा

□ सीरो ख़ानज़ादेन

माली नवासारो बादाम के पेड़ के नीचे झरने पर अपना मुंह धोने और क्षण को आराम करने लगा। मुंह पर मारते ही धूप से कुम्हलाये हुए चेहरे कुछ शांति मिली। उस क्षण उसने के लीडर की आवाज़ सुनी—'ए नवा- ो! जल्दी करो! तुम्हारा बेटा अरशक आ चुका है।'

या?' बूढ़े माली ने अपने चेहरे मुश्किल से ऊपर उठाते हुए चिंतातुर र में कहा। वह फौरन उठा और उस बढ़ा, जहां एक व्यक्ति अर्थपूर्ण और भरी आंखें खोले बरसों की उत्सुकता हुए खड़ा था।

तुमने क्या कहा था? वह अब आया और वह इस समय कहां है?'

वह अपने गांव में है। मैंने वहां उसे आंखों से देखा है। वह एक नीली चलाते हुए गांव से गुज़रा है। नवा-, तुम कितने भाग्यवान हो कि ईश्वर हें एक बेटा दे रखा है!'

पहले की तुलना में लगभग दस अधिक प्रकाश के साथ चमक रहा। नवासारो को तो यों महसूस हो था, जैसे वह हवाओं पर चल रहा। उसका चेहरा चिंता और उल्लास की मिली-जुली भावनाओं से भरा हुआ था।

नवासारो अब तो गांव की ओर देखते हुए उल्लसित हो रहा था। वह मन ही मन में खुश हो रहा था। फिर वह गांव की ओर जाने के बजाय अंगूरों के बाग की ओर मुड़ गया।

उसने अरशक को पिछले दस वर्षों से नहीं देखा था। हर साल वह आशापूर्ण नज़रों से उसकी राह देखता रहता था, लेकिन वह इस प्रतीक्षा में सदा आश्वस्त और शांत रहता था, लेकिन अब तो उसे अपना बेटा देखे हुए मुद्दतें बीत चुकी थीं। अब उसे देखने की इच्छा तीव्र हो गयी थी। अरशक अच्छे समय पर आया था। बगीचों में फल पक चुके थे, और अरशक भी अभी तक हृष्ट-पुष्ट और चुस्त-चालाक था।

नवासारो ने अपना कुदाल उठाया और फिर उससे ज़मीन खोदनी शुरू कर दी। ज़मीन भुरभुरी थी और उसमें से अंगूरों जैसी गंध निकल रही थी। ज़मीन खोदकर उसने अंगूरी रस का वह दस साल पुराना मटका निकाला, जो उसने केवल इसी समय के लिए दबाकर रखा हुआ था। अब उस ठंडे सोंधे मिट्टी के मटके में शराब बन चुकी थी। उसे सूंघकर

नवासारो मन ही मन में मुस्कराया और अपने आप से बोला–'अब तो अंगूरों का यह रस शेरनी के दूध की तरह हो चुका है।' ऐन उसी समय उसे याद आया कि एक बड़ा-सा तरबूज़ भी तो शहतूत के पेड़ के नीचे अपनी बेल पर पका हुआ मौजूद है। उसने जल्दी ही तरबूज़ को बेल से तोड़ लिया। फिर तरबूज़ को अपनी जैकेट से साफ कर के उसके छिलके को और भी चमका दिया।

'मेरे अरशक को तरबूज़ों से बड़ा प्यार है!' वह गुनगुनाहट की आवाज़ में बोला। अपने घुटनों पर झुककर उसने तरबूज़ को अपने दोनों हाथों से ज़ोर से दबाया। उसे एक हलकी-सी तड़ाक की आवाज़ सुनायी दी। तरबूज़ फट चुका था। उसके बाद वह अंजीर के पेड़ के पास गया। अंजीर पर वह खासी मेहनत और मुश्किल के साथ, लेकिन एक अनजानी ताकत के बल-बूते पर चढ़ गया। उसने यहां से पके-पके फल उतारे। कई ऐसे फलों को भी तोड़ लिया, जिन्हें पके होने के कारण पक्षियों ने भी थोड़ा बहुत खाया हुआ था। पक्षियों के खाये हुए फल निश्चय ही अधिक मीठे होते हैं। उसने उन्हें एक टोकरी में डाल दिया।

दरिया के किनारे-किनारे वह उस स्थान पर पहुंचने के लिए चलता गया, जहां छह माह का एक सफेद मेमना चर रहा था। वह उस मेमने को किसी खास समारोह के लिए बचा-बचाकर रख रहा था।

'अरशक अब घर आ चुका है।
ज़िंदा ही इसी क्षण के लिए हूं कि
जल्दी से जल्दी देख लूं।' नवासारो
आप से बातें करते हुए बोला, और
साथ ही उसने मेमने की रस्सी
छोड़ दिया। मेमना उसकी इस
पर ऊंची आवाज़ से मिनमिनाया–
अब चलो। मेरे साथ चलो!' नवा
बोला–'आओ, बस अब चलते हैं। अ
के घर। चलते आओ।'

वह गांव की ओर ढलवान
पर चढ़ता गया। उसके कंधों पर अं
से भरी टोकरी थी। जग में से
छलक रही थी, लेकिन मुन्ना-सा
मेमना कभी उसके आगे और कभी
होकर धीरे-धीरे आ रहा था।

राह में हर मिलने वाला उसे
'आज तुम इतनी जल्दी कहां जा रहे
'अरशक घर पर आया हुआ है।
मिलने के लिए आया है!' बूढ़ा
बड़े गर्व से लोगों को बताता था।

रास्ते भर हर पेड़ और झाड़ी
पत्थर और चट्टान और हर झरना
अरशक के बचपन की याद दिलाते
कई बार वह अरशक को अपने कंधों
उठाकर इन्हीं राहों से गुज़रा था।
कई बार इन्हीं पत्थरों पर बैठकर
करता था। नवासारो ने कई बार
को अंजीर खिलायी थी, और उसका
साफ किया था और फिर जैकेट के
उसका मुंह और अपना हाथ साफ

। यह सब कुछ नवासारो को एक-एक के याद आ रहा था । एक झरने का पीने के लिए तो अरशक सदा उत्सु- प्रकट किया करता था । नवासारो अपनी ओक से पानी पिलाया करता । यहां पर एक छोटा-सा बगीचा था । पर अभी तक फल लगे हुए थे । यह पेड़ हेमंत ऋतु में भी हरे-भरे रहते थे । अरशक सात साल का था, तो वह के एक पेड़ से गिर गया था । उससे टांग टूट गयी थी । इस पर नवा- रो उसे कई मील के फासले पर पर उठाये एक डाक्टर के पास ले था ।

फिर जब अरशक को शहर में पढ़ायी लिए भेजना था, तो उस समय उसने सारी चीज़ों के बारे में सोचा, जो उसे में बेचनी पड़ी थीं । समय ता रहा और अरशक ने यूनिवर्सिटी ग्रेजुएशन कर ली और फिर मास्को में र शिक्षा प्राप्त करने के लिए चला । अब तक वह दुनिया में खासा प्रसिद्ध गया था ।

नवासारो अपने साथियों और लोगों यह बताया करता था कि उसका बेटा मास्को में कितनी महत्वपूर्ण नाएं संपन्न कर रहा है और कितने बड़े में सुख के साथ रह रहा है ।

बूढ़े माली को घर पहुंचने की बेहद थी । वह बड़ी जल्दी में था । अंगूरों शराब जग में से चलते हुए छलक रही थी । कमज़ोर और कायर मेमना सहमा-सहमा उसके पीछे-पीछे आ रहा था ।

अंत में वह अपने घर पहुंच गया, लेकिन यहां पर उसे अपने बेटे की कार खड़ी दिखायी न दी । 'वह कार पर यहां तक क्यों नहीं आया ?' नवासारो ने विस्मय प्रकट किया—'आह ! मैं क्या कह रहा हूं ? यहां के कंकर और बजरी बहुत सख्त हैं । संभव है, उसे आशंका हो कि कहीं उसकी कार के टायर ही फट न जायें । यह तो उसने अच्छा ही किया कि वह अपनी कार को यहां तक नहीं लाया ।'

नवासारो का एक मंज़िला कच्चा मकान ढलवान पर एक विशिष्ट शान के साथ खड़ा था । कच्ची छत के ऊपर एक टेरेस भी बना हुआ था । बस यों लगता था कि किसी चट्टान पर उकाब का घोसला-सा बना हुआ है ।

नवासारो अपने घर के आंगन में दाखिल हुआ । जग और टोकरी को ज़मीन पर एक ओर रखा । मेमने को थोड़ी-सी घास डाली और इधर-उधर देखा । ज़िंदगी में पहली बार उसे यह घर जर्जर और दयनीय दिखायी दिया ।

'अच्छा, यह अरशक का घर है । यह वही घर है, जहां पर अरशक पैदा हुआ और बढ़ा-फूला है । उसे अपने इस घर को देख कर लज्जित नहीं होना चाहिये ।' उसने यह वाक्य अपने आप को सांत्वना देने के लिए स्वयं से कहे, और उसके बाद वह अपने घर के आंगन की सफाई करने

लगा ।

'बधाई हो नवासारो ! अरशक घर आ गया है ।' यह आवाज़ एक बूढ़ी पड़ोसिन की थी । स्त्री ने अपनी खुशी के यह वाक्य आंगन की दीवार के ऊपर से सिर निकालकर नवासारो से कहे थे ।

उसका चेहरा खुशी से तमतमा उठा– 'धन्यवाद, मैडम ! ईश्वर करे, आपका मुसाफिर भी जल्दी ही वापस घर आ जाये !'

'मैंने अरशक को देखा है !'

'क्या वह यहां आया था ?'

'नहीं ! मैं जब मोहल्ले की दुकान पर सुइयां लेने गयी थी, तो मैंने उसे फार्म-आफिस के सामने खड़े हुए देखा था । कितना अच्छा बच्चा है वह ! मैं तो उससे अपनी नज़रें ही हटा नहीं सकी । ईश्वर तुम्हें इस नियामत से सदा सुख देता रहे ।'

भावनाओं से बोझल होती हुई आवाज़ में बूढ़े माली ने उस स्त्री की उन शुभ-कामनाओं का धन्यवाद किया । उसके बाद वह फिर आंगन को साफ करने में मग्न हो गया ।

सबसे पहले उसने धूल-मिट्टी साफ की–'मैं नहीं चाहता कि मेरे बच्चे के जूते गंदे हों । और वह इस आंगन में किसी पत्थर या कंकर से ठोकर खाये ।'

नवासारो ने दरवाज़ा खोला । सामने दीवार के साथ एक चारपाई लगी खड़ी थी । 'मैं उसे कहूंगा, तुम्हें याद होगा कि तुम किस तरह इस बिस्तर पर सोया करते थे और मैं यहां फर्श के ऊपर सो था ।' वह यह सब कुछ ऊंची आवा में कह रहा था और साथ ही साथ ए चादर को झाड़ रहा था–'मैं यह भी उसे कहूंगा कि यह तुम्हारा पुराना प्याला है जिसमें तुम खाया-पिया करते थे। अरशक, यह भी देखो । इस लकड़ी के चम्मचे को पहचानने का प्रयत्न करो। उस समय को याद करो, जब तुम इसके साथ खाते थे। तुम्हें पता है कि मैंने यह किससे खरीदा था ? हां, मैंने इसे मानास बढ़ाई से खरीदा था न ! और तुम इसे पहले-पहल देखकर रूठ ही गये थे कि उसके ऊपर बेल-बूटे नहीं बने हुए थे और फिर उसके ऊ रंग-रोगन और बेल-बूटे भी बनवाये ग थे ।' इसी तरह की बातें करता हुआ व झरने पर पानी लेने चला गया। पानी लाकर उसने आंगन में छिड़काव किया। टेरेस पर भी छिड़काव किया गया और कमरे के अंदर भी। फिर उसने झाड़ू देनी शुरू कर दी।

एक बार फिर उसी बूढ़ी स्त्री का सि दीवार के ऊपर से प्रकट हुआ, 'नवासारो क्या तुम्हें पता है कि अरशक चेयरमैन हाउस में चला गया है ?'

'नहीं ! मुझे तो पता नहीं। वहां क्यों गया है वह ?'

'बस ! अभी जब तुम बाहर गये थे।'

'उसने यहां देखा होगा कि यहां कोई नहीं है, इसलिए वह कुछ देर आराम करने वहां चला गया होगा। वह यहीं

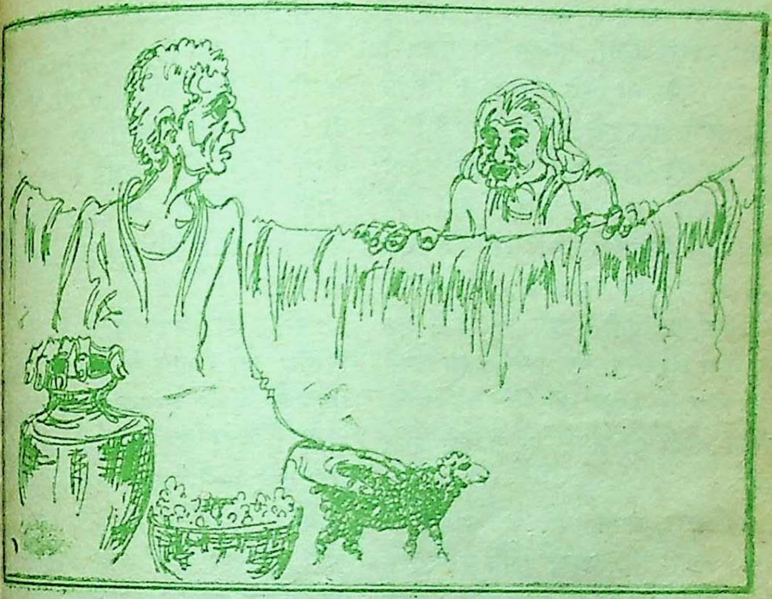

येगा । वह इस घर को नहीं भूल सकता ।'

'अवश्य ! अवश्य !'

नवासारो ने जलाने के लिए कुछ लकड़ियां इकट्ठी कीं और उन्हें संभालकर रख दिया । उसके बाद वह चाकू लेकर अपने मेमने के पास पहुंचा । आखिरी क्षण उसने अपना इरादा बदल लिया–'मैं क्यों न अरशक के आने तक प्रतीक्षा ही कर लूं ।' यह कहते हुए उसने चेयरमैन हाउस की दो-मंज़िला इमारत की ओर देखा– उसे किस बात ने रोक रखा है ? यहां सब कुछ सड़-गल जायेगा । जल्दी ही अंधेरा भी होने वाला है । अंजीरें खराब हो जायेगी । उनका तो उस समय तक स्वाद ही बदल जायेगा ।

उसने उन्हें टोकरी से निकालकर खिड़की की सिल पर रख दिया । फिर वह अपने पड़ोसी से एक मेज़पोश मांगकर लाया । और उससे मेज़ को सजाने का प्रयत्न करने लगा ।

सब कुछ तैयार हो चुका, लेकिन अरशक अभी तक नहीं आया –' आखिर यह क्या हो रहा है ? वह चेयरमैन हाउस में क्यों चला गया है ?' नवासारो विस्मय और कौतूहल से कांपने-सा लगा । उस पर एक प्रकार का कंपन-सा छा गया, फिर भी उसने अपने आप को सहारा देने के लिए कहा–'हां, अरशक अब बड़ा आदमी बन गया है । उसे सचमुच चेयरमैन के

पास जाकर गांव के हालात के बारे में अवश्य पूछना होगा, लेकिन यह मजबूरी क्या है ? कौन-सी ऐसी समस्या है, जिससे उसके आने में इतनी देर हो रही है ? मैं अपदे बेटे को अपने पास दो दिन रखूंगा और अपनी नज़रों से ओझल नहीं होने दूंगा।' सूर्य अस्त होने लगा, लेकिन अरशक अभी तक घर नहीं पहुंचा था। बूढ़े आदमी की चिंता बढ़ गयी। इसी अंतर्द्वंद्व में एक क्षण ऐसा भी आया कि उसके कदम अपने आप चेयरमैन हाउस की ओर बढ़ने लगे, लेकिन जल्दी ही उसने यह इरादा छोड़ दिया।

नवासारो अपने घर के आंगन में निकल आया और उसने अपने पड़ोसी के पोते को आवाज़ दी–'इधर आओ। भाग कर जाओ, और देखो, कि अरशक क्या कर रहा है ? उसे यह बताओ कि मैं घर पर हूं और उसकी प्रतीक्षा में परेशान हूं।' नवासारो ने बड़े धैर्य से कहा।

जल्दी ही लड़का वापस आ गया।

'क्या तुमने अरशक को देखा है ?'

'हां !'

'वह क्या कर रहा था ?'

'शराब पी रहा था !'

'क्या तुमने उसे बताया था कि मैं घर पर उसकी प्रतीक्षा कर रहा हूं ?'

'हां, बताया तो था।'

'फिर उसने क्या कहा ?'

'उसने केवल अच्छा कहा।'

नवासारो ने उसके शब्द दुहराये–'तो अच्छा इसका मतलब यह है कि वह
ही घर आ रहा है। मैं आग जलाता
जल्दी ही उसने चूल्हे में भरपूर आग
दी। फिर वह कबाबों की सींखें
करने में लग गया। कमरे के अंदर
आया। लैम्प पर से मिट्टी झाड़कर
मेज़ पर रखा और अरशक की
करने लगा।

समय की गागर में से बूंद-बूंद
रिसता रहा। गांव के घरों की
एक-एक करके घरवासियों के साथ
लगीं। घरों पर खामोशी और
धीरे-धीरे छाने लगी। गली के लोगों
आवाज़ें भी मद्धिम होती-होती खत्म
लगीं, लेकिन दूर केवल एक कुत्ते
कष्टदायक आवाज़ सुनायी दे रही थी।

लेकिन वह अभी तक प्रतीक्षा कर
था। वह क्षण-प्रति-क्षण प्रतीक्षा
रहा। सर्दियों की रात अपनी शक्तियों
साथ डेरे जमाती रही। बूढ़े माली
आंखें दर्द से बोझल हो रही थीं।
अंधेरों में से भी अपने बेटे को
रहा कि कब आता है! फिर
वह ऊंघ की अवस्था में चला गया।
सारो मेज़ पर बैठे-बैठे ही सो गया था।

उसे याद नहीं कि वह कब और
सोया! तब वह आंगन में आती हुई
सन की आवाज़ सुनकर जागा था।
वह जागा, तो सूर्य की किरणें खिड़की
पड़ रही थीं।

'नवासारो! ए नवासारो!' पड़ो

ग़ज़ल

— डा. गणेशदत्त सारस्वत —

सूर्य लगता है कि धुंधलाया हुआ है।
दृष्टि-पथ पर कोहरा छाया हुआ है।।
मान्यताएं आज विष-दंशित हुई हैं,
टूटता इन्सान घबराया हुआ है।।
नियति का तेवर चढ़ा है, क्या करेगा,
अनिश्चय का सिंधु उफनाया हुआ है।।
डूबती नैया, खिवैया सो रहे हैं,
क्षुद्र लहरों ने कहर ढाया हुआ है।।
मात्र अवमूल्यन, पराभव ही पराभव,
कुछ अजब-सा दौर ये आया हुआ है।।
देश के नेतृत्व को जाने हुआ क्या,
दोहरा व्यक्तित्व जो भाया हुआ है।।
क्रूर नज़रें घूरतीं इस मुल्क को जो
तप-निकष चढ़ कंचनी काया हुआ है।।

—सारस्वत सदन, सिविल लाइंस, सीतापुर, उ. प्र.—

वाजें दे रही थी। वह अपने कमरे से ड़ी तेज़ी के साथ निकला। पड़ोसिन वार के ऊपर से देख रही थी–'तुम तनी देर तक सोते रहे हो!'

क्या है? क्या अरशक आ गया है?'

नहीं!' वह बोली–'तुम्हारा अरशक जा चुका है। सड़क पर जाते हुए तुम देख सकते हो!'

नवासारो ने जब यह सुना, तो उसे महसूस हुआ कि जैसे उसके घर की री की पूरी छत ही उसके ऊपर आ री हो।

वह भागकर छत के ऊपर गया। अरशक की कार तेज़ रफ्तार के साथ सड़क पर जा रही थी। कार सूर्य के प्रकाश में चमक रही थी और दूर से दूर होती जा रही थी।

नवासारो के कदम मनों बोझल हो चुके थे। वह कमरे की छत पर से उतरा और फिर फलों के बगीचे की ओर चल दिया। उसकी आंखें पहले से अधिक गहरी हो चुकी थीं। कमर का झुकाव पहले से ज्यादा बढ़ गया था। वह धीरे-धीरे चल रहा था और उसका सफेद मेमना भी उसके पीछे-पीछे चला आ रहा था।

[अनुवाद : सुरजीत]

□

स्पेनिश कहानी

होंठ कटी युवती

☐ रिचर्ड से

वह प्लास्टिक सर्जरी के प्रोफेसर थे, अपने काम में निपुण। वह केवल एक ही पुस्तक पढ़ते थे—मानव-शरीर की पुस्तक। इसे वे बहुत ध्यान से पढ़ते, मानों जानते हों कि त्वचा के नीचे जीवन के सभी रहस्य छिपे हैं। लेकिन डाक्टर ह्यू फ्रांसिस्कस तुरंत देख लेते हैं कि घाव की जड़ में दानों के कोई चिन्ह हैं या नहीं? उनके चारों ओर कोई नीली-सी रेखा बन रही है या नहीं। क्योंकि घाव के ठीक होने का उसी से पता चलता है या कोई तंतु मरने तो नहीं लगा है। इसका मतलब है—सफलता नहीं मिलेगी।

मैं डाक्टरी में अंतिम वर्ष का छात्र था और पहली बार अस्पताल के किसी वार्ड में ड्यूटी पर आया था कि पीछे से डा. फ्रांसिस्कस की आवाज आयी—'तुम स्पेनिश बोलते हो?'

'मैं स्पेन में दो वर्ष तक रह चुका हूं।' मैंने उत्तर दिया।

'अगले सप्ताह मैं कुछ डाक्टरों को साथ लेकर होंडुरास जा रहा हूं। वहां कुछ लोगों के आपरेशन करने हैं। मैं हर साल एक महीने के लिए कहीं न कहीं जाता हूं। तुम हमारे साथ चलना और दुभा का काम करना।'

एक सप्ताह बाद मैं होंडुरास जाने डाक्टरों के साथ था। डाक्टरों का दल प्लास्टिक सर्जरी के लिए एक वि से जा रहा था।

मेरे लिए वहां घूमन लायक कुछ नहीं था। केवल एक साधारण अस था, जिसके सहन में पिछले दस वर्षों आ रहे रोगियों की बस खड़ी हुई सामने के मैदान में चिकित्सा कराने की भीड़ जमा थी।

दुभाषिया होने के साथ-साथ काम प्लास्टिक सर्जरी के पूर्व और बाद रोगियों के फोटो भी लेना था। इसके ही मैं डाक्टर का अंगरक्षक भी था।

डाक्टर अगले दिन दोपहर बाद के लिए निश्चित रोगियों की जांच उनसे बातें करते और उनको यह वि दिलाते कि उनकी समस्याओं को झाने का पूरा-पूरा प्रयास किया जा बात खुशी की हो या दुःख की डाक्टर निरपेक्ष भाव से प्रकट करते।

कोई दस दिन बाद अस्पताल की बि

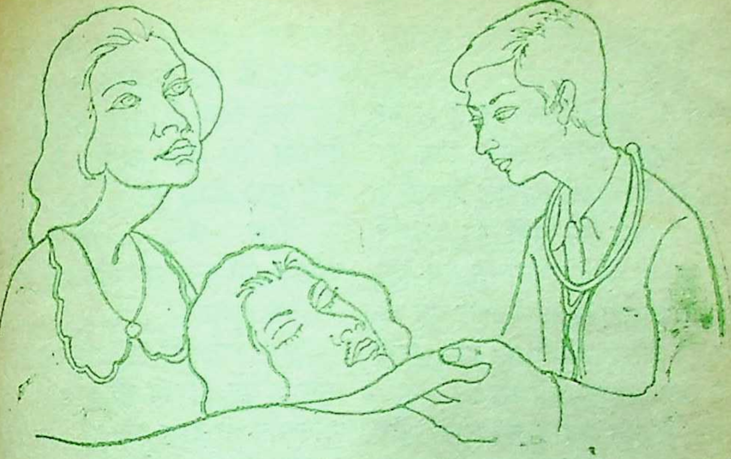

री दृष्टि एक सांवली युवती पर जा ड़ी। उसके लंबे काले बाल खुले हुए थे । ड़े भी उसने ढीले ही पहन रखे थे । वह ने मुंह पर एक कपड़े का टुकड़ा बराबर गे हुए थी । उस दिन वह अंतिम रोगी ी। उसे लगभग तीन घंटे तक प्रतीक्षा नी पड़ी थी ।

मैंने उसका नाम पुकारा तो वह मां पीछे-पीछे जांच कराने वाले कमरे की र बढ़ी ।

मैंने उसके बारे में तैयार किये हुए -पत्र को पढ़ा—आयु सत्रह वर्ष और यीं ओर का होंठ तालू तक कटा हुआ । सी प्रकार का अन्य कोई रोग या जन्म- त दोष नहीं ।

डा. फ्रांसिस्कस ने कहा—'इससे कहो, कपड़े का टुकड़ा हटाओ ।'

मैंने उस युवती से टुकड़ा हटाने को हा तो वह काफी हिचकी तथा कपड़े को और ज़ोर से दबा लिया ।

'देखो, यह क्या मूर्खता है । उससे कहो कि मुझे उसका मुंह देखना ही होगा । यदि वह ऐसा नहीं करे तो उसे वापस भेज दो ।' डाक्टर ने डांटकर कहा ।

'लाओ यह कपड़ा मुझे दो ।' मैंने उस युवती से कहा । लेकिन उसने कपड़ा दिया नहीं । दे भी नहीं सकती थी ।

तभी डाक्टर फ्रांसिस्कस उसके पास पहुंचे और एक झटके से कपड़ा खींच लिया । रोग बड़ा भयानक रूप लिये था । ऊपर का होंठ नाक तक कटा हुआ था और ऊपरी जबड़े से एक दांत साफ दिखायी दे रहा था । युवती लज्जा से गड़ी जा रही थी ।

'अपना मुंह खोलो ।' डाक्टर ने कहा । मैंने उसकी भाषा में इसका अर्थ बतलाया । युवती ने मुंह खोला । डाक्टर ने मुंह के भीतर तक देखने के लिए उसका सिर पीछे

की ओर झुकाया। फिर पूछा—'तुम्हारा नाम क्या है?'

'इमेल्डा।' उसने किसी तरह अपना शब्द पूरा किया, लेकिन इसके साथ ही उसके मुंह से सीटी जैसी आवाज निकली।

डा. फ्रांसिस्कस को वर्षों का अनुभव था तथा उन्होंने बहुतेरे भयानक रूप देखे थे। लेकिन इस लड़की को देखकर वह भी भयभीत हो गये। उनकी यह दशा उनके चेहरे से स्पष्ट झलक रही थी।

डाक्टर ने उस कटाव को नापा और उसकी ठुड्डी पर एक उंगली रखकर उसके सिर को इधर-उधर घुमाकर अनेक ढंग से रोग की जांच की। फिर उन्होंने कहा—'इसका फोटो ले लो।' और लड़की से बोले—'सामने की ओर देखो।'

कैमरे की आंख से तो युवती का मुंह और भी भयानक दिखता था। कैमरा क्लिक हुआ। लड़की ने आंखें झपकीं।

'कल सबेरे मैं तुम्हारा होंठ ठीक कर दूंगा।'

दूसरे दिन सबेरे जब हम वार्डों में घूमने के बाद आपरेशन कक्ष में पहुंचे तब उसे बेहोश करने वाली दवा सुंघा दी गयी थी। और एक नर्स ने उसका चेहरा अच्छी तरह धोकर साफ कर दिया था।

डाक्टर ने पुनः उसके होंठ का नाप लिया।

'चिन्ह लगाने वाली कलम दो।' डाक्टर ने उसके होंठ और नाक पर विकृत भाग के चारों ओर निशान लगा दिये। 'स्कैलपस' डाक्टर आपरेशन की छुरी इमेल्डा के मुंह के पास ले गये।

'सब ठीक है, शुरू करूं?' उन्होंने बेहोशी देने वाले डाक्टर से पूछा और छुरी कुछ नीची की।

'थोड़ा रुकिये।' बेहोशी देने वाले डाक्टर की आवाज कांप रही थी।

'क्या हुआ?'

'कुछ समझ में नहीं आ रहा। हे भगवान! यह तो तवे की तरह तप रही है। रक्तचाप भी बहुत काफी है। नाड़ी एक सौ अस्सी। इसका टेंपरेचर लो।'

'एक सौ सात... नहीं आठ...' जैसे उसे विश्वास ही नहीं हो रहा था।

'मैलिगमेंट हाईपर थर्मिया।' बेहोशी देने वाले डाक्टर ने कहा—'बर्फ लाओ बर्फ। जितना अधिक हो सके बर्फ लाओ।'

'मैं बाहर की ओर दौड़ा और जो नर्स सामने पड़ी उससे चिल्लाकर कहा—'बर्फ जल्दी, बहुत जल्दी।'

नर्स का चेहरा पीला पड़ गया। उसने कहा—'बर्फ नहीं है।'

दौड़कर ही मैं वापस लौटा और आपरेशन कक्ष में आकर कहा कि बर्फ नहीं है।

डा. फ्रांसिस्कस ने रबर के दस्ताने निकालकर रख दिये और इमेल्डा का पेट टटोलकर देखने लगे। उनकी आंखें उदास थीं।

'इ. सी. जी. तो गजब कर रहा है।'

'नाड़ी भी नहीं मिल रही है।'

डाक्टर ने इमेल्डा की जांघ को टटोल

देखा। वहां भी नाड़ी नहीं थी। इ. सी. जी. सपाट है। हे भगवान ! की लीला तो समाप्त हो गयी।'

'ऐसा हो नहीं सकता।'

डा. फ्रांसिस्कस ने इमेल्डा की जांघ के ड़ों में अपनी उंगलियां गड़ा दीं, लेकिन ती नाड़ी के अलावा उन्हें कुछ भी अनुभव हीं हुआ।

इमेल्डा के मरने के कुछ देर बाद ही उस कमरे से बाहर आ गये। उसकी मां में बेंच पर बैठी हुई थी। उसके हाथ में वही कपड़ा था, जिससे उसकी अपना मुंह ढके रहती थी।

'मैं उससे बात करूंगा।' डा. फ्रांसिस्कस कहा। इमेल्डा की मां को वह स्वयं ही कुछ बताना चाहते थे अपनी टूटी-फूटी भाषा में। लेकिन पास पहुंचकर कुछ कह नहीं पाये तो महिला ने आंखें और जो कुछ वह कह नहीं पा रहे वह बिना कहे ही समझ गयी तथा उठ हुई। वह किसी तरह बोल सकी– दुःख है कि . . .।'

और यकायक लगा कि उसके होंठ सिल हों।

'किसी को पता नहीं चला। नींद वाली का प्रभाव विचित्र हुआ। विष फैल , फिर तेज बुखार और . . . और वह ही नहीं।' डाक्टर के अंतिम शब्द थे। उन्होंने तेज बोलने का प्रयास मगर असफल रहे। अंत में उस ने उनके कंधे पर हाथ रख दिया। डाक्टर ने देखा कि शोक उस महिला के चेहरे को निगल रहा है।

वे देर तक चुपचाप खड़े रहे। अंत में महिला ही बोली। शब्द उसके मुंह से धीरे-धीरे निकल रहे थे।

अब वह घर वापस चली जायेगी। लड़की के शव को उसके भाई आकर ले जायेंगे। डाक्टर को परेशान होने की आवश्यकता नहीं। ईश्वर को यही स्वीकार था। हां, उसे इस बात की प्रसन्नता थी कि उन्होंने लड़की का होंठ ठीक कर दिया है और वह सुंदर होकर स्वर्ग जा रही है।

डा. फ्रांसिस्कस मौन होकर सब कुछ सुन रहे थे, लेकिन उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया।

अगले दिन प्रातः मैं वार्ड में नहीं गया। सहन से बाहर सड़क को जाने वाले मार्ग पर खड़ा था। तभी देखा कि दो लड़कों ने लड़की के शव को उठाया। उसे टाट में लपेटा और ठेले पर लाद कर ले चले।

उसी समय मां ने एकाएक मेरी ओर देखा और मुझे पहचान लिया। वह कहने लगी–'डाक्टर देवता है।' उसका चेहरा खिला हुआ था–'उसने अपना कर्त्तव्य पूरा कर दिया। अब वह ईश्वर के यहां भद्दे रूप में नहीं जायेगी। मेरी बेटी सचमुच कितनी सुंदर हो गयी है।'

मैं उसकी बातों से चकित था। होंठ के आपरेशन के पहले ही तो लड़की मर चुकी थी, फिर उसके सुंदर होने का क्या अर्थ ?

(शेषांश पृष्ठ ११३ पर)

पाकिस्तानी हास्य-कथा

मुंशी मुनक्का का कुत्ता

☐ मुहम्मद यूनिस हस

मुंशी मुनक्का बाहर आराम-कुरसी डाले बड़े मज़े से धूप सेंक रहे थे कि उनकी बेगम ने पास आकर उनका कंधा हिलाते हुए कहा, 'अजी, मैंने कहा, क्या आप मोती को नजमा के यहां छोड़कर नहीं आयेंगे ?'

नजमा उनकी बेगम की एक सहेली का नाम था, जिसका घर शहर की दूसरी तरफ था। मोती नजमा के पालतू कुत्ते का नाम था। नजमा अपने शौहर और बच्चों के साथ किसी शादी में शामिल होने के लिए एक हफ्ते के लिए किसी दूसरे शहर गयी थी और मोती को मुंशी मुनक्का के घर छोड़ गयी थी।

मोती बड़ा समझदार और तमीज़दार कुत्ता था। अंदर आने से पहले वह चटाई पर पैर साफ करता और जब उसे भूख लगती, तो प्यारी आवाज़ में भों-भों कर के खाना मांगता था।

'वैसे यह बड़ा प्यारा कुत्ता है !' बेगम ने मोती को थपथपाते हुए कहा, 'मेरा जी इसे जुदा करने को नहीं चाहता, मगर सोचती हूं कि नजमा बहन नाराज न हो जायें। आप तकलीफ करके मोती को उसके पास छोड़ आयें। उसके घर का तो आपको पता ही है।'

'हां हां !' मुंशी जी बोले, 'अभी
आता हूं।'

'बस, ठीक है !' बेगम ने कहा,
कपड़े पहन लीजिये !'

यह कहते हुए बेगम ने कुत्ते को
बिस्कुट दिया और उसके पट्टे में
बांध दी।

'अरे !' बेगम ने पट्टे को हाथ से
उधर करते हुए कहा, ऐसा लगता
मोती कि तुम यहां आकर कुछ मोटे
गये हो और यह कालर अब तुम्हारे
में तंग हो गया है। मैं ढीला किये देती

बेगम ने पट्टे को खोला और
बक्कल पहले से अगले सूराख में डाल
कुत्ता पट्टे को ढीला महसूस करके
खुश हो गया। फिर बेगम मुंशी
से कहने लगीं, 'लीजिये, अब इसे
से ले जाइये, वरना बस निकल जायेगी

मुंशीजी ने पास पड़ी हुई टोपी
पर जमायी। कोट पहना और फिर
की ज़ंजीर थामकर बाहर की तरफ
जब वह दरवाज़े से बाहर आये, तो
मालूम हुआ कि वह बगैर ऐनक लगाये
चले आये हैं। उन्होंने ऐनक को साफ

ता तो था, मगर [illegible] धुन में आगे बढ़ते गये।

न गये थे।

स आने में कुछ ही मिनट रह गये थे। होंने सोचा कि अगर वापस जाकर क ली, तो देर हो जायेगी और फिर ली बस के लिए इंतज़ार करना पड़ेगा। ह सोचकर उन्होंने तेज़-तेज़ चलना शुरू र दिया।

मुंशीजी मोती की ज़ंजीर थामे तेज़-कदम उठाते बस-स्टाप की तरफ जा हे थे कि समूर जैसे नरम और मुलायम लों वाला एक कुत्ता उनके करीब से रा। मोती उससे मिलने के लिए पहले रुका और फिर गरदन को ज़रा-सा टका देकर अपनी गरदन पट्टे में से निकाल ली। मोती वहीं उस कुत्ते के पास रह गया और मुंशीजी खाली पट्टे को पकड़े अपनी धुन में आगे बढ़ते गये।

रास्ते में उनका सामना रमज़ानी मियां से हुआ। रमज़ानी मियां यह देखकर हैरान रह गये कि मुंशी मुनक्का खाली पट्टे को खींचे लिये जा रहे हैं।

उन्होंने कहा, 'अरे, मुंशीजी! किधर जा रहे हैं आप?'

'इस कुत्ते को उसकी मालकिन के पास पहुंचाने जा रहा हूं, मियां रमज़ानी!' मुंशीजी बोले, 'बड़ा प्यारा और शरीफ कुत्ता है। देखो, कैसे खामोशी से चला आ रहा है।'

रमज़ानी मियां ने सोचा कि शायद मुंशी मुनक्का का दिमाग चला गया है। वह अपने चटपटे अंदाज़ में कुछ कहना चाहते थे, मगर उसका मौका ही नहीं मिला। मुंशीजी इतनी तेज़ी से आगे बढ़ गये कि

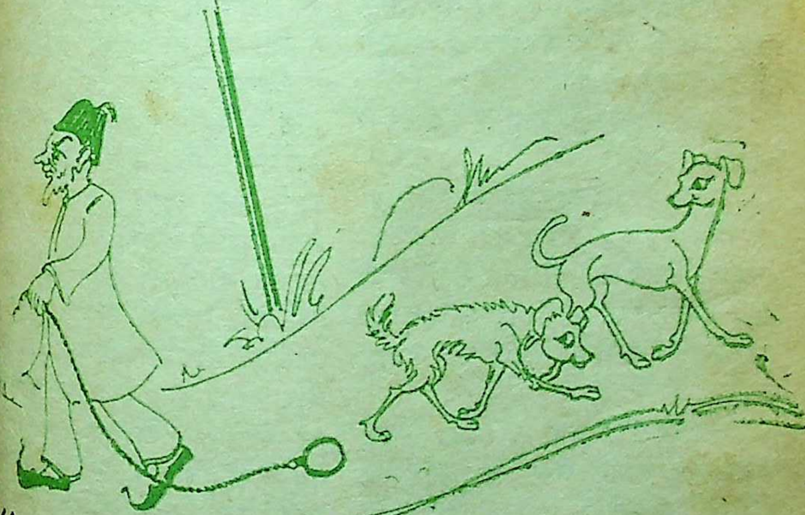

उनकी चटपटी बात ज़बान ही पर रह गयी।

इधर मुंशी मुनक्का बस-स्टाप पर पहुंचे, उधर बस आ गयी। वह ज़ंजीर को खींचते हुए तेजी के साथ बस में दाखिल हो गये और एक खाली सीट की तरफ बढ़ते हुए बोले, 'हां, शाबाश! अब खामोशी से इस सीट के नीचे चले जाओ और आराम से बैठे रहो।'

यह कहकर उन्होंने इर्द-गिर्द देखा, मगर मोती नज़र न आया। वह यह खयाल करते हुए सीट पर बैठ गये कि मोती बस में दाखिल होते ही सीट के नीचे चला गया होगा।

'बड़ा समझदार कुत्ता है।' वह खाली पट्टे की तरफ देखते हुए बोले। फिर बस-कंडक्टर से कहने लगे, 'मियां कंडक्टर, एक टिकट आखिरी स्टाप का और अगर इस कुत्ते का भी टिकट लगता है, तो एक टिकट इसका भी दे दो।'

'कुत्ता! कौन-सा कुत्ता?' कंडक्टर ने हैरानी से पूछा।

'कुत्ता, जो मेरे साथ है।' मुंशी मुनक्का ने बिगड़कर कहा, 'पता नहीं लोग अहमकाना किस्म की बातें क्यों करने लगते हैं? क्या तुम समझते हो कि मैंने यह पट्टा किसी चूहे, बिल्ली या तोते के गले में डाल रखा है?'

कंडक्टर को गुस्सा तो बहुत आया, मगर वह सोचने लगा, कि अगर यह आदमी इस कुत्ते के लिए भी एक टिकट लेना चाहता है, जो मौजूद ही नहीं, मुझे क्या! उसने आखिरी स्टाप के टिकट मुंशी मुनक्का के हवाले किये और पैसे लेकर आगे बढ़ गया।

बस अगले स्टाप पर रुकी, तो भारी-भरकम बूढ़ी महिला गोद में बिल्ली उठाये बस में दाखिल हुई और मुंशी मुनक्का की बराबर वाली खाली सीट पर बैठने लगी। मुंशी ने उससे कहा, 'मैडम, इस सीट के नीचे एक कुत्ता बैठा है। बेहतर होगा कि आप कहीं और बैठ जायें। कहीं ऐसा न हो कि मेरा कुत्ता और आपकी बिल्ली आपस में लड़ पड़ें।'

भारी भरकम महिला ने सीट के नीचे झांका, मगर उसे कोई कुत्ता दिखायी न दिया। वहां सिवाय एक खाली पट्टे के और कुछ न था। वह सोचने लगी कि इस बहाने यह आदमी यह चाहता है कि मैं कहीं और जा बैठूं और यह खुद आराम से फैलकर यहां बैठा रहे। वह कहीं और जाने के बजाय मुंशी मुनक्का के पास ही बैठ गयी और उनकी तरफ घूरते हुए बोली, 'मेरा खयाल है, आप अपने आप को बहुत चालाक समझते हैं।'

उस औरत का लहजा कुछ ऐसा था कि मुंशी मुनक्का हैरान रह गये और फिर उस औरत ने जो बात कही थी, वह और ज्यादा हैरान कर देने वाली थी। वह अपने आप को चाहे कुछ भी समझते हों, मगर उन्होंने चालाक कभी नहीं समझा था। उनमें ऐसी कोई बात तो

हीं। वह उस औरत की घूरती हुई हों से हैरान और परेशान हो कर लगे कि आखिर उसने उन्हें चालाकी ना क्यों दिया है? फिर वह कैसे उस की नज़रों से बचने की खातिर झुके उस मोती से बातें करने लगे, जो ख़याल में चुपचाप सीट के नीचे हुआ था।

ट के नीचे अंधेरा था और फिर मुनक्का अपनी ऐनक भी घर भूल थे। इसलिए वह देखने के बावजूद देख सके। वह अपनी धुन में मोती ते रहे, 'शाबाश! मोती तुम बड़े कारी हो! शाबाश, बस इसी तरह न से लेटे रहो।'

ट के नीचे से कोई आवाज़ नहीं आ थी। मुंशी मुनक्का की नज़र में यह हैरानी की बात न थी, बल्कि वह तो मोती की आज्ञाकारिता समझते थे। आप कोई मसखरे हैं या मसखरा बनने शिश कर रहे हैं?'

री-भरकम औरत के यह शब्द मुंशी का के कान में पड़े, तो वह चौंककर हो गये और न चाहते हुए भी उसकी देखने लगे। उसकी बड़ी-बड़ी आंखें उन्हें घूर रही थीं।

हीं मैडम,' मुंशी मुनक्का ने घबराये वाज़ में जवाब दिया, 'मैं न मसखरा र न मसखरा बनने की कोशिश कर हूं।'

तो फिर ज़रा संभलकर रहियेगा।' उस औरत ने कहा, 'कहीं आपका कुत्ता आपको काट न ले।'

इतने में बस एक स्टाप पर रुकी। वह औरत अपनी बिल्ली समेत उस स्टाप पर उतर गयी और मुंशी मुनक्का उसकी कही हुई बात पर विचार करते रह गये।

आखिरी स्टाप आने तक वह इन्हीं सोचों में खोये रहे। स्टाप आया, तो वह ज़ंजीर को झटका देते हुए उठे और बोले, 'मोती, आओ चलें।'

वह जल्दी से बस से उतरे और फिर दायें-बायें या आगे-पीछे देखे बगैर अपनी बेगम की सहेली नजमा के घर की तरफ चल दिये। वह अपनी धुन में ज़ंजीर थामे चले जा रहे थे कि पीछे से एक बच्चे ने हांक लगायी, 'मुंशीजी, आपका कुत्ता एक बिल्ली के पीछे भाग निकला है।'

'बेवकूफ लड़का,' मुंशी ने कहा, 'तुम समझते हो कि मैं तुम्हारी बातों में आ जाऊंगा। मोती बिल्लियों के पीछे भागने वाला कुत्ता नहीं है।'

दो-चार कदम चले होंगे कि एक और लड़के ने चिल्लाकर कहा, 'मुंशीजी! आपका कुत्ता खो गया है!'

'अरे, इन लड़कों को क्या हो गया है आज?' मुंशी मुनक्का अपने आप से कहने लगे, 'सब पागल हो गये हैं क्या? या उन्हें बड़ों का लिहाज़ ही नहीं रहा?'

सामने ही बेगम की सहेली नजमा का घर था। वह सीधे उस तरफ बढ़े और जाकर दरवाज़े पर दस्तक दी। नजमा ने

ही दरवाज़ा खोला और मुंशी मुनक्का को पहचानकर बोली, 'आइये, आइये, मुंशीजी मैं सोच रही थी कि देखें, आज मेरा मोती वापस आता है कि नहीं।'

मुंशी मुनक्का खुश होकर कहने लगे, 'फिर तो आपने बिलकुल ठीक सोचा, बहन ! मैं उसे अपने साथ लाया हूं। बड़ा प्यारा कुत्ता है। बड़ा शरीफ, बड़ा आज्ञाकारी !' यह कहते हुए वह अंदर ड्योढ़ी में दाखिल हो गये और मोती को देखने के लिए इधर-उधर गरदन घुमायी। ड्योढ़ी में कुछ अंधेरा था और उन्हें कुछ दिखायी नहीं दे रहा था। वह बोले, 'वह अंदर चला गया होगा, बहन !'

'लेकिन वह तो आपके साथ आया ही नहीं, मुंशीजी ! कम-अज़-कम मैंने उसे नहीं देखा !' नजमा कहने लगी।

'वह तो मेरे पीछे-पीछे आया है, बहन !' मुंशी मुनक्का बोले, 'मैंने रास्ते भर उसकी ज़ंजीर थामे रखी है।'

यह कहते हुए उन्होंने ज़ंजीर को खींचा और उसके साथ ही खाली पट्टा उनके कदमों में आ गिरा। उन्होंने झुककर मोती को थपथपाने की कोशिश की, तो उनका हाथ खाली पट्टे से टकराया और वह हैरान-हैरान से उस खाली पट्टे को देखने लगे, 'अरे !' वह ताज्जुब से बोले, 'उस शैतान ने अपनी गरदन पट्टे से निकाल ली, लेकिन मुझे यकीन है कि वह यहीं कहीं होगा या अंदर चला गया होगा। आप उसे आवाज़ देंगी, तो पता चल जायेगा। मैं अब चलता हूं, वरना बस निकल
खुदा हाफिज़ !'

मुंशी मुनक्का नजमा के घर से नि
बस-स्टाप पर जाकर बस में बैठे
घर की तरफ चल दिये। उधर
बेगम की सहेली सारे घर में घूम-
कर उस मोती को आवाज़ें देती रही,
वहां मौजूद ही न था।

मुंशी मुनक्का जैसे ही घर में दा
हुए, बेगम उन पर बरस पड़ी, '
मैंने कहा, आप यह सारा वक्त कहां घू
फिरते रहे ? मैंने तो आपसे कहा था
मोती को नजमा के हां छोड़ आवें।'

मुंशीजी बोले, 'बेगम, मैं मोती
तुम्हारी सहेली के यहां छोड़कर ही तो
रहा हूं। बड़ा प्यारा, शरीफ और आ
कारी कुत्ता है। रास्ते में मुझे ज़रा
परेशान नहीं किया।'

'अच्छा,' बेगम ने हैरानी और
से कहा, 'तो फिर मेरा खयाल है कि
बस में बैठकर आपसे पहले यहां आ पहुं
है। 'मोती ! यहां आओ।'

और बेगम की उस आवाज़ के साथ
मोती बावर्चीखाने से निकलकर
मुनक्का के सामने आ खड़ा हुआ। मुंशी
हैरानी से उसे देखने लगे। उन्हें
आंखों पर यकीन नहीं आ रहा था।
बोले, 'अरे मोती ! तुम ? मगर मैं
अभी-अभी तुम्हें तुम्हारे घर छोड़कर
हूं।' फिर बेगम से कहने लगे, 'ऐसा
है, जैसे मोती एक नहीं, दो हैं।'

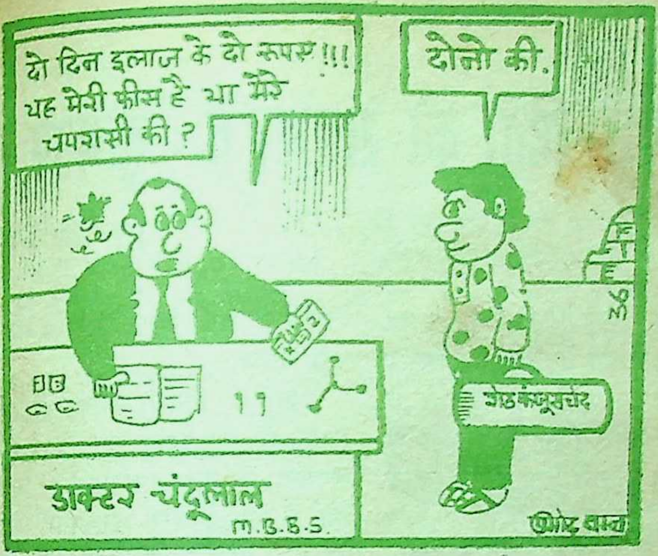
दो दिन इलाज के दो रुपए!!! यह मेरी फीस है या मेरे चपरासी की ?
दोनों की.
डाक्टर चंदूलाल
M.B.B.S.
सेठ कंजूसचंद

'शुक्र कीजिये, आप दो नहीं हैं ।' बेगम ने बिगड़कर कहा, 'जाइये, जाकर धूप में आराम कीजिये ! मोती को मैं खुद नजमा के यहां पहुंचा आऊंगी ।'

मुंशी मुनक्का शर्मिंदा-से होकर बगीचे में उस कुरसी पर जा बैठे, जहां से बेगम ने उन्हें मोती को नजमा के यहां पहुंचाने के लिए भेजा था । बाकी सारा दिन वह उस कुरसी पर ही बैठे रहे और उनका दिमाग एक ही मसले को हल करने की कोशिश करता रहा कि आखिर जब मैं मोती को नजमा के यहां पहुंचा आया था, तो फिर मोती मेरी सेवापसी पहले मेरे घर वापस कैसे आ गया ?

मगर मुंशी मुनक्का इस मसले को अब कैसे हल कर सकते थे ? उन्होंने तो मोती की जंजीर थामने के बाद एक बार भी पीछे मुड़कर यह देखने की तकलीफ नहीं की थी कि मोती उनके साथ आ रहा है कि नहीं । **[प्रस्तुति : सुरजीत]**

□

(पृष्ठ १०७ का शेषांश)

मैं ठेले के पास आया और टाट का एक किनारा उठाकर देखा—'इमेल्डा के मुंह पर जहां पहले कटाव के कारण कुरूपता थी, वहां अब छोटे-छोटे टांकें थे । ऊपर के होंठ को बड़ी कुशलता से आकार दिया गया था । नाक के चपटे भाग को भी अब दूसरी ओर की गोलाई मिल गयी थी । देखकर मैं चकित रह गया । मैंने टाट को रख दिया । ठेला आगे बढ़ गया ।

[अनु. : गुलाबचंद्र विश्वकर्मा]

□

वृद्ध माता-पिता को सहारा दें : दुत्कारें नहीं

☐ मंजु नागोरी

बुढ़ापा सबके लिए आराम का पड़ाव नहीं होता। कुछ के लिए यह अभाव और अकेलेपन का त्रास बन जाता है तो कुछ के लिए जहर, जिसे पी सकना ही मृत्युतुल्य हो। कुछ के लिए यह गौरवपूर्ण भी हो सकता है, दुःस्वप्न के विपरीत। जिन बूढ़ों को अपने परिवार व बच्चों के सामने गिड़गिड़ाना पड़ता है, हाथ फैलाकर अपनी जरूरतों की पूर्ति की भीख-सी मांगनी पड़ती है, उनके लिए यह अवस्था निःसंदेह बेहद दुखदायी है। जिनके सामने हाथ पसार कुछ मांगा जाता है, उनके लिए भी यह अवसाद भरी स्थिति है।

आधुनिक समाज की गतिशीलता, वैयक्तिक महत्व ने संयुक्त परिवारों को तो प्रायः खत्म ही कर दिया है। परिवार-इकाइयों में बंट गये हैं और बूढ़ों को परिचर्या की प्रक्रिया जटिल हो गयी है। भौतिक सुख-साधन, अपनी निजी स्वतंत्रता में आज बूढ़े बंधन व पिछड़ेपन का प्रतीक बन गये हैं। हमारा रवैया बदल गया है। जीवन का क्रम बदल गया है। तेज रफ्तार जीवन में बूढ़े फिट ही नहीं हो पाते। आज वे आदरणीय नहीं बंधन व बोझ बन गये हैं, जिन्हें उनके ही अंश ढोना नहीं चाहते।

बुढ़ापे की प्रक्रिया व्यक्ति की शक्ति व क्षमताओं का ह्रास कर देती है-रोग, अवसाद, चिड़चिड़ापन हावी हो जाता है। ऐसे में अभाव और अकेलापन तो बुढ़ापे पर बोझ डाल उसकी कमर ही तोड़ देता है। यदि जवानी बुढ़ापे को अपने अनुभवी मार्गदर्शक के रूप में स्वीकार ले तो एक स्वस्थ परंपरा शुरू हो जायेगी। मां-बाप के बूढ़े दिनों को संवारकर हम अपने बच्चों से अपने बूढ़े दिनों की सुरक्षा की गारंटी पा लेते हैं, क्योंकि माता-पिता का उनके माता-पिता से सौजन्यता व सहयोग, सम्मान का व्यवहार देखकर बच्चे भी यही सब सीखते हैं और जो देखा और सीखा है वक्त आने पर वही कर भी देंगे।

मां-बाप का जीवन संवारने के लिए उनके मन को उनकी स्थिति से सोचना जरूरी है, स्वाभाविक है। हमने बुढ़ापा जिया नहीं है पर वे जी रहे हैं, अतः उनकी समस्याओं को अपनी नहीं, उनकी दृष्टि से देखना व दूर करना बेहद जरूरी है। अपना हल उन पर थोपना या उनके प्रति

लापरवाही बरतना ठीक नहीं है।

बुढ़ापे की आम प्रतिक्रिया है मृत्यु की आहट सुनकर शोकाकुल और किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाना। अपने साथियों, मित्रों का बिछोह उन्हें ज्यादा संताप देता है, ऐसे में अपने विचार उन पर थोपना या उन्हें उनके हाल पर छोड़ देना दोनों ही रवैये गलत हैं। बुढ़ापे को अब सहारा चाहिये साथ ही यह अहसास भी चाहिये कि गैर-जरूरी नहीं हैं, बोझ नहीं हैं, ये घर, ये परिवार, ये बच्चे उनके अपने हैं। वे औलादें जो अपने माता-पिता पर अपनी इच्छाएं लाद उनकी आवश्यकता पर रोक लगाते हैं अशोभनीय जल्दबाजी दिखाते हैं और मां-बाप द्वारा स्वयं को दिये अधिकार का खुले तौर पर दुरुपयोग करते हैं।

एक जानकार परिवार में घर की मुख्त्यारी पाया बेटा अपनी मां को इस बात के लिए तरसा देता है कि वह कोई पत्रिका भी मंगा लें। मां जब भी कोई अखबार या पत्रिका मंगवाने को कहेगी, बेटा पिता के सामने ही मां की इच्छा का निरादर कर बेहिचक कहेगा–'यूं ही पैसा बरबाद करना। अखबार आता तो है। रामायण, महाभारत पढ़ लो। बेचारी मां अपनी असंहायता पर मौन रह जाती है, उसे अपने ही घर में अपनी ही बसायी गृहस्थी में अपने पर चार, छः रुपये खर्च करवाने का भी अधिकार नहीं।'

माता-पिता का मनोबल बनाये रखना चाहिये, ताकि बुढ़ापे के दिन बोझ बनकर उन्हें सालें नहीं। उन्हें वक्त, सम्मान आर्थिक सुरक्षा देकर उनका आस्तित्व बनाये रखा जा सकता है। उनके कारण पैदा हुए शारीरिक कष्ट तो उन्हें हैं ही–मानसिक तकलीफें व तनाव देकर उन्हें बेमानी कर देना तो उनके लिए समस्याएं बढ़ाना ही है। बूढ़े मां-बाप को अपनी समस्याओं में शामिल करना, उनका मंतव्य जानना, उनकी मदद की आकांक्षा करना, उनको सम्मान देना है। बूढ़ों को पारिवारिक गतिविधियों, समस्याओं को बतलाकर उन्हें आश्वस्त किया जा सकता है कि उनकी जरूरत है।

माता-पिता की चर्चाओं, गतिविधियों में दिलचस्पी लें, उसे अपना समर्थन देकर उनके जीवन में रस लाया जा सकता है। वे शौक या रुचियां जो वे जवानी में समय के अभाव के कारण नहीं कर पाये थे अब उन्हें मौका दिलाकर, साधन जुटाकर करवाये जा सकते हैं, ताकि वे सार्थकता का अनुभव करें व जीवन के अधूरे शौक पूरे कर व्यस्त रह सकें।

एक जानकार परिवार में परिवार की मुखिया स्त्री को जानवर पालने का बेहद शौक था, पर प्रौढ़ावस्था तक वे मन की यह चाह पूरा न कर पायीं। अपनी घरेलू जिम्मेदारियों और वक्त के अभाव के कारण। उनके छः वर्षीय पोते ने एक दिन अनजाने में उन्हें पुलक से भर दिया। एक नन्हा बिल्ली का बच्चा पकड़कर लाया और मां से बोला, 'इसे पालेंगे।' मां के

जबाब देने से पूर्व ही दादी की आंखों में चमक उतर आयी, वे ललककर बोलीं, 'अरे, ये तो वड़ा प्यारा है, इसका नाम किटी रखें, है न वहू ?' बहू समझदार थी। उसने सास की चाह पढ़कर हामी भर ली। सारे दिन बेकार घर में पड़ी बुढ़िया सास-पोते व किटी के संग व्यस्त हो गयी—बच्चा भी मां का पल्ला छोड़ दादी के संग हो लिया।

जब तक बूढ़े लोग घर के किसी भी काम में स्वयं बढ़कर दिलचस्पी लें उन्हें टोकना-रोकना ठीक नहीं। इससे उनके अहम को तो ठेस पहुंचेगी ही जीवन की क्रियाशीलता भी नष्ट होगी। वे जो करना चाहते हों करने दें—आपको मदद ही मिलेगी।

यदि माता-पिता किसी समस्या पर उलझ रहे हों तो स्वयं आगे बढ़ विकल्प सुझा दें, ताकि उन्हें भरोसा रहे व उनका संकोच टूटे। क्या चाहते हैं वे—क्या करना चाहिये पूछें। जगह का वदलाव वृद्धों को अच्छा लगता है। कहीं, किसी भी रिश्तेदार के पास उन्हें कुछ दिनों को भेजा जा सकता है, पर ये जतलाकर नहीं कि हम इस बीच चैन की सांस लेंगे। वृद्धों को यह अहसास करवा देना उनके हित में रहेगा कि जल्दी लौटियेगा, हम आपके बिना अकेले पड़ गये हैं, घर सूना हो जायेगा।' 'हमारी जरूरत है' यह भाव सार्थकता का अहसास कराता है, व वृद्धों को संतोष देता है, माता-पिता की जरूरतें घट जाती हैं, पर खत्म नहीं हो जातीं। उन्हें कुछ निश्चित रकम व विशेष अवसरों पर उपहार जरूर दें। वे जीवन के प्रति निश्चितता व अपना महत्व महसूस करेंगे व तसल्ली रख पायें, बुढ़ापे को विश्रांति-स्थल मान संतोष कर पायेंगे।

बुढ़ापे में हाथ-पांव कमजोर हो जाते हैं। शरीर आराम मांगता है व शक्ति क्षीण हो जाने से पोषण चाहता है जो झट खाया जा सके व पचाया जा सके। दांत कमजोर हो जाते हैं। पाचन शक्ति मंद हो जाने पर भूख लगती नहीं, अत: दिन में कई बार वे कुछ न कुछ तरल-हल्का, सुपाच्य भोजन लेते रहें, इसका ध्यान रखना भी जरूरी है। भूखे पेट व अतृप्त इच्छा रहने पर वे कुढ़ेंगे व दु:ख पायेंगे उनका दु:ख परिवार के दूसरे सदस्यों को भी दु:ख ही देगा।

बूढ़ों को समुचित आदर-सम्मान व प्रेम चाहिये। वक्त काटने का साधन चाहिये। चाहिये आर्थिक सुरक्षा, ताकि वे शांत चित्त हो जीवन के बचे दिन ढंग से काट सकें। परिस्थितियां उनके अनुकूल बना उन्हें यह संतोष अवश्य दिया जा सकता है कि उनकी संतानें नालायक नहीं निकलीं। यह स्थिति स्वयं को भी सुरक्षित आयाम देगी, जब अपना बुढ़ाया होगा व बच्चों के हाथों अपनी जीवनडोर थमी होगी। खुद बुढ़ापे को सार्थक जीना हो तो इसकी तैयारी अपने बूढ़े मां-बाप को सार्थक बुढ़ापा देकर कर लें, जैसा बोया जायेगा वैसा ही तो वक्त आने पर काटेंगे हम लोग।

—नवप्रभात, पड़ाव,
ग्वालियर-४७४००२, म.प्र.

सच्चाई की कुछ किरणें

□ हंस

पिछले दिनों दो पाकिस्तानी लेखकों की दो ऐसी पुस्तकें प्रकाशित हुईं, जो विभाजन, फ्रंटियर गांधी (जिनका दुखद देहावसान पिछले दिनों हुआ), भुट्टो की फांसी तथा ज़िया के सत्ता में आने की घटनाओं के बारे में नया प्रकाश डालती हैं, और ऐसे अनेक प्रचलित झूठों का पर्दाफाश करती हैं, जो निहित स्वार्थों ने अपने कुटिल उद्देश्य की पूर्ति के लिए फैला रखे हैं।

हम भारतीयों के लिये इन पुस्तकों का महत्व इस तथ्य में निहित है कि वे हमें पाकिस्तानी शासकों की उस विकृत मानसिकता से परिचित कराती हैं, जो उनसे ऐतिहासिक सत्यों को मनमाने ढंग से प्रस्तुत कराती है, ताकि उनका भारत तथा आम पाकिस्तानी के प्रति विद्वेष का पता किसी को न चल सके, सच्चाई पर पर्दा पड़ा रहे, और लोग गुमराह होते रहें।

पिछले दिनों पाकिस्तान में एक सनसनीखेज पुस्तक प्रकाशित हुई, जिसका नाम है–'और लाइन कट गयी।' लेखक हैं, मौलाना क़ौसर, जो भुट्टो के मंत्रिमंडल में धार्मिक मामलों के मंत्री थे, और जिन्होंने 'दीदावर' शीर्षक से भुट्टो की जीवनी भी लिखी है।

अपनी इस पुस्तक में मौलाना ने उन नाटकीय घटनाओं का अत्यंत सजीव वर्णन किया है, जो भुट्टो के अपदस्थ होकर फांसी पर चढ़ने और जनरल ज़िया द्वारा सत्ता की बागडोर संभालने से संबंधित हैं। पुस्तक का आरंभ इसी घटना के वर्णन से होता है।

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि ५ जुलाई, १९७७ को जनरल ज़िया ने भुट्टो को अपदस्थ कर, सत्ता अपने हाथ में ले ली थी। इस बलात् राज्य-परिवर्तन की पूर्व सूचना न पाकिस्तानी नौसेना को थी, न वायुसेना को। यहां तक कि ज्वाइन्ट चीफ ऑफ स्टॉफ्स कमेटी के चेयरमैन जनरल मुहम्मद भी इस उथल-पुथल की

बात से बेखबर थे।

सत्ता अपने हाथ में लेने के दो महीने बाद एक मासिक पत्र को दी गयी भेंट में ज़िया ने यह 'रहस्योद्घाटन' किया था कि उन्होंने भुट्टो को पदच्युत करने का फ़ैसला जून, १९७४ में ही कर लिया था। कारण विरोधी दलों के मंच–पाकिस्तान नेशनल एलायंस द्वारा आम चुनावों की मांग से देश की शांति भंग होने लगी थी, और सेना से हस्तक्षेप करने को कहा गया था। 'मुझे यह भी सूचना मिली थी कि भुट्टो ने सब विरोधी नेताओं की हत्या की साजिश की थी। मैंने अपने साथियों के साथ बातचीत करके भुट्टो को अपदस्थ कर, अस्थायी तौर पर सत्ता की बागडोर सेना को सौंपने का निश्चय किया। तय पाया कि यह कारंवाई ४ जुलाई की आधी रात को की जायेगी। तभी, मुझे भुट्टो की ओर से फोन पर सूचना मिली कि ४ जुलाई की रात को मंत्रिमंडल की एक बैठक होगी, जिसमें मेरी उपस्थिति ज़रूरी है; बैठक का सही समय मुझे बाद में सूचित कर दिया जायेगा। मैं घबराया कि यदि बैठक आधी रात तक चली, तो हमारी योजना बेकार हो जायेगी। इसलिये मैंने जल्दी-जल्दी अपने साथी-अधिकारियों से बात करके, कारंवाई का समय कुछ घंटे और बढ़ा दिया। रात के साढ़े दस बजे के करीब मुझे भुट्टो ने फोन किया कि बैठक स्थगित कर दी गयी है। मैंने राहत की सांस ली और अपने साथियों से मिला ताकि पूर्व निर्धारित कारंवाई पूरी जा सके।'

मौलाना लिखते हैं कि ज़िया का एकदम ग़लत है। बैठक हुई थी, उसने सचमुच उसमें भाग लिया था। ' के बाद, भुट्टो ने ज़िया के साथ अकेले देर तक बात की, और हम सब मंत्री बाहर खड़े आपस में गपशप करते रहे। सहसा, दरवाज़ा खुला, और दोनों बाहर निकले। सदा मुस्कराते रहने वाला ज़ि परेशान से नज़र आता था। मुझे लगा कि कोई अप्रत्याशित घटना घटने वाली है। बाद में मुझे पता चला कि भुट्टो ने ज़ि को बताया था कि वह अगले दिन विरोधी नेताओं से समझौते के लिए मिलने वा है। यह बात उसने आधी रात से पहले अख़बारवालों को भी बतायी। इसके कुछ घंटे बाद भुट्टो को ज़िया ने बंदी ब लिया।'

ज़िया ने भुट्टो को क्यों बंदी बनाया? इसलिए कि वह नहीं चाहता था कि भु और विरोधी नेताओं में कोई समझौ हो, और पाकिस्तान में प्रजातंत्र आये। वह और उसके साथी पाकिस्तान में सैनिक शासन जारी रखना चाहते थे।

यद्यपि मौलाना ने भुट्टो की जीव लिखी है, और उसके प्रशंसक भी थे, तथापि जिस त्रासदी से १९७७ के बाद पाकिस्तान गुज़रा, उसके लिये वे भुट्टो को भी का हद तक दोषी मानते हैं। जो तथ्य उन्होंने प्रस्तुत किये हैं, वे इस बात को प्रमाणि

प्रतीत होते हैं ।

०००

प्रधानमंत्री भुट्टो ने पाकिस्तान में चुनाव कराने का निश्चय १९६६ में कर लिया था । मगर उसका इरादा पार्टी के लिये यह चुनाव छल व की से जीतने का था । चुनाव जीतने जो कपटपूर्ण योजना उसने तैयार की, उसके तहत (१) छोटे-बड़े सब सर-अधिकारियों को यह साफ-साफ बता गया था कि पाकिस्तान पीपुल्स पार्टी की पार्टी) को चुनाव में जिताने के उन्हें हर तरह का जोड़-तोड़ करना, नहीं तो उनकी ख़ैर नहीं । (२) उन्हीं उम्मीदवारों को पार्टी के दिये गये थे, जो पार्टी के सर्वोच्च भुट्टो के प्रति सौ फ़ी सदी वफ़ादार । चुनाव जीतने के लिए भुट्टो ने जो समिति बनायी थी, खुफ़िया पुलिस प्रमुख उसके सदस्य थे ।

मार्च, १९७७ को इस कपटपूर्ण के आधार पर जो चुनाव हुए, भुट्टो की पार्टी की जीत हुई । चुनाव तीजों के बाद भुट्टो ने अपने वित्त मंत्री हाफ़िज़ पीरज़ादा से पूछा, 'कितनी कपट से जीती गयी थीं ?' 'करीब ४०, जनाब ।' पीरज़ादा का जवाब । असल में, इससे कहीं ज्यादा सीटें से जीती गयी थीं । भुट्टो को उनके पर राष्ट्रीय विधान सभा में दो बहुमत मिला ।

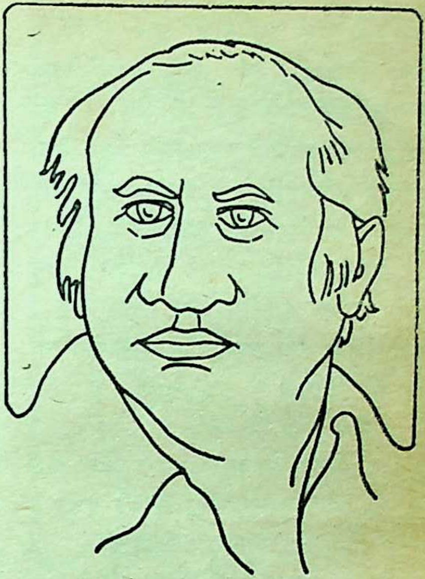

जुल्फिकार अली भुट्टो

भुट्टो की पार्टी ने चुनाव में धोखेबाज़ी से काम लिया है, इस बात का पता लगते ही, विरोधी दलों ने दुबारा, ईमानदार चुनाव कराने की मांग की । विरोधी नेताओं में भुट्टो का बड़ा विरोधी एयर मार्शल (अवकाश-प्राप्त) असगर खान था, जो अपनी पार्टी 'तहरीक़े-इस्तक़लाल' का सर्वोच्च नेता था, और जिसका दृष्टिकोण भुट्टो से अधिक आधुनिक था; भुट्टो तो, मौलाना नियाज़ी के अनुसार नजूमियों से राय लिये बिना कोई क़दम नहीं उठाता था ।

विरोधी दलों की मांग थी कि नये चुनावों से पूर्व, भुट्टो इस्तीफ़ा दे, और चुनाव फ़ौज की देखरेख में कराये जायें । जब लोगों ने भी उनकी इस मांग का समर्थन

किया, तो भुट्टो को बाज़ी अपने हाथों से जाती दिखायी देने लगी। उसने जान लिया कि अब सिर्फ़ सेना ही उसे गद्दी पर क़ायम रख सकती है। इसलिए उसने सेना के उच्च अधिकारियों से अलग-अलग और सामूहिक रूप से मिलना आरंभ कर दिया। इन सब उच्चाधिकारियों में उसे ज़िया सबसे ज्यादा नमनीय और दब्बू लगा। उसने ज़िया को अपने विश्वास में लेना शुरू कर दिया।

०००

भुट्टो ज़िया के साथ अपना खेल खेल रहे थे, और उधर ज़िया ने भी भुट्टो के साथ अपना खेल शुरू कर दिया था।

ज़िया द्वारा भुट्टो की गिरफ्तारी से कुछ घंटे पहले जो एक घटना घटी, और जिसका पता पहली बार मौलाना नियाज़ी ने ही दिया, उससे पता चलता है कि जो कुछ हुआ, वह अमरीकी सरकार की सहमति से ही हुआ है, या कम से कम अमरीका को होने वाली घटनाओं की पूर्व जानकारी अवश्य थी।

४ जुलाई की रात को जैसे ही भुट्टो ने पत्रकारों से बातचीत करते हुए उन्हें बताया कि विरोधी पक्षों के साथ उनकी बातचीत अंतिम दौर में पहुंच गयी है और सिर्फ़ कुछ मुद्दों पर समझौता होना बाकी है, वैसे ही अमरीकी राजदूत आर्थर हैमेल भुट्टो से मिलने के लिये आये। राजदूत साधारणत: आधी रात को प्रधानमंत्रियों या अध्यक्षों से मिलने नहीं आते, इसलिए भुट्टो को उनके आगमन पर आश्चर्य हुआ। यह आश्चर्य तब और बढ़ गया जब राजदूत महोदय ने उन्हें चेतावनी दी कि संभवत: सेना उन्हें अपदस्थ कर सत्ता अपने हाथ में लेने वाली है। भुट्टो सन्न रह गये, मगर ज़ाहिरा तौर पर उन्होंने कहा, 'मैं इसे एक अमरीकी धमकी मानता हूं।' स्मरण रहे कि २८ अप्रैल को विधान सभा में भाषण देते हुए भुट्टो ने अमरीका पर इल्ज़ाम लगाया था कि वह पाकिस्तान के अंदरूनी मामलों में दखलंदाज़ी करता रहता है, और पाकिस्तान इसे कभी सहन नहीं करेगा।

पत्रकार सम्मेलन के बाद, भुट्टो ने अपने मंत्रिमंडल के सदस्यों-पीरज़ादा, जटोई आदि के साथ विचार-विमर्श करके फैसला किया कि सत्ता सेना के हाथ में न जाये, इसलिए वह सुबह होते ही विरोधी नेताओं से उनकी शर्तों पर समझौता कर लेगा, और चुनाव से पहले अपने पद को छोड़ देगा।

रात के डेढ़ बजे उसके सहयोगियों ने उससे विदा ली।

ढाई बजे सेना ने भुट्टो के निवास-स्थान को घेर लिया।

०००

भुट्टो ने टेलीफोन आपरेटर से कहा, 'मुझे मेजर-जनरल इम्तयाज से बात करनी है।' आपरेटर ने कुछ क्षण बाद बताया, 'हुज़ूर, वे हैडक्वार्टर्स में हैं।'

'जनरल ज़िया से लाइन जोड़ो।'

कुछ सैकंड बाद, ज़िया लाइन पर आने, तो भुट्टो ने उनसे पूछा, 'यह... क्या हो रहा है ? फौज ने घर क्यों घेर रखा है ?'

'इसके अलावा और कोई चारा नहीं रह गया था, सर !' ज़िया ने बड़ी आज़िज़ी से कहा, और फिर पूछा, 'आप कहां जाना पसंद करेंगे, सर ? मुरी, लरकाना या करांची !'

'मुरी,' बुझे स्वर में भुट्टो ने कहा, और फोन रख दिया ।

कुछ मिनट बाद, जटोई ने भुट्टो को फोन कर कहा, 'सर, मैंने सुना है कि . . .' बात अधूरी रह गयी . . . और लाइन कट गयी ।

०००

नियाजी ने पृष्ठभूमि के बतौर अपनी पुस्तक में कुछ ऐसी घटनाओं का जिक्र भी किया है, जिनका पता पाकिस्तानियों को भी नहीं था ।

भुट्टो को मालूम था कि चुनाव यदि ईमानदारी से हुए, तो वह विरोधी दलों के संगठन के, जिसने 'निजाम-ए-मुस्तफ़ा' (इस्लामी राज्य) का नारा बुलंद करके साउदी अरब, कुवैत और लीबिया जैसे कट्टर इस्लामी मुल्कों का समर्थन प्राप्त कर लिया था, आगे कहीं नहीं टिक पायेगा ।

जब भुट्टो ने सुरक्षा के नाम पर जनरलों से सहायता की याचना की, तो जनरलों ने उससे उसके मंत्रियों के सामने ही साफ़-साफ़ कह दिया, 'राजनीतिक समस्याओं का हल राजनीतिक तरीके से ढूंढ़ना चाहिये । हम क्यों अपने ही लोगों पर आप लोगों की गद्दी की ख़ातिर गोलियां चलायें ?'

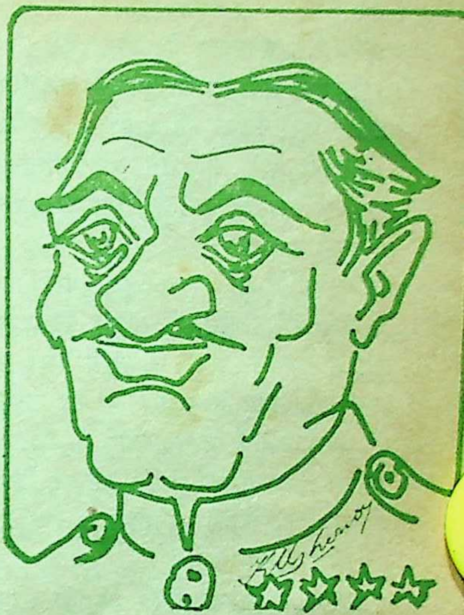

जिया-उल हक

मगर ज़िया, शायद अमरीका की शह पर, अन्य जनरलों से अलग रुख अपनाये हुए था । जब मंत्रिमंडल की एक बैठक में, लाचार-असहाय भुट्टो ने कहा कि वह पाकिस्तान के भविष्य की ख़ातिर, चुनावों से पहले इस्तीफ़ा देकर लरकाना चला जायेगा, तो ज़िया ने, जो वहां मौजूद था, अपने सीने पर हाथ रखते हुए कहा, 'नहीं, जनाब, हम आपको कहीं नहीं जाने देंगे । आप सरकार का दायां हाथ हैं, और हम

आपके प्रति वफ़ादार थे, और रहेंगे।'

नियाज़ी ने भुट्टो को बाद में समझाया कि वह धूर्त्त ज़िया की बातों में न आये, और वही करे, जो उसे अपने हित में ठीक लगे। मगर, भुट्टो ने ज़िया पर अपना विश्वास न छोड़ा।

चुनावों के दौरान चुने हुए स्थानों पर 'मार्शल लॉ' लगाने की सलाह ज़िया के मुंह से सुनकर, भुट्टो ने उससे कहा था 'मगर संविधान में मार्शल लॉ को उतना ही असंवैधानिक माना गया है, जितना ज़बरन राज्य-परिवर्तन को।' इस पर ज़िया ने कहा था, 'मगर संविधान में संशोधन तो किये जा सकते हैं।'

ज़िया ने अपने वायदे कितनी सीमा तक पूरे किये, यह जगज़ाहिर है, उन्हें दोहराने की ज़रूरत नहीं।

०○

अब, दूसरी पुस्तक पर आयें।

हाल ही में फ्रंटियर गांधी का दुखद निधन हुआ। उससे पूर्व, कुछ समाचार पत्रों में उनके सुपुत्र वली खान द्वारा लिखित 'फैक्ट्स आर फैक्ट्स' (तथ्य तथ्य हैं) के कुछ अंश प्रकाशित हुए थे, जिन्हें पढ़कर स्पष्ट होता है कि इस पुस्तक में उस झूठ का पर्दाफाश किया गया है, जो अंग्रेजों व पाकिस्तानियों ने भारत-विभाजन और बादशाह खान के बारे में जानबूझ कर फैला रखा था।

इस पुस्तक की प्रामाणिकता का आधार हैं वे सरकारी दस्तावेज, जो लंदन स्थित

ब्रिटिश संग्रहालय में सुरक्षित रखे
ब्रिटेन के क़ानूनों के अनुसार, तीस
की अवधि के वाद, सब सरकारी
सार्वजनिक संपत्ति बन जाते हैं।

पुस्तक की भूमिका में संक्षेप
कुछ कह दिया गया है, जो पूरी
विस्तार से कहा गया है। भूमिका के
अंश वली साहब के शब्दों में इस प्रकार

मैंने यह पुस्तक विचित्र
में लिखी है। पाकिस्तानी हुकूमत की
बानी से मुझे दो बार जेल जाना
पहली बार अयूब खान ने मुझे जेल
और दूसरी बार भुट्टो ने। दोनों
जेल में मुझे फुर्सत ही फुर्सत थी, लेकिन
उसका इस्तेमाल कुछ लिखने के लिए
कर सकता था, क्योंकि मेरे पास
श्यक संदर्भ सामग्री न थी। मैं चाहता
कि विभाजन-काल की घटनाओं को
रूप में लोगों के सामने पेश करूं,
लोगों को पाकिस्तान सरकार के
प्रचार के प्रभाव से मुक्ति मिल
लेकिन, भुट्टो के काल में तो मुझे
कागज़-क़लम तक नहीं दिये जाते

मुझे पाकिस्तानी सरकार का
प्रचार सरासर झूठा लगता था कि
जन धर्म के आधार पर हुआ था।
झूठे प्रचार का पर्दाफाश करना
था। इसका मौक़ा मुझे तब मिला,
भुट्टो की जेल से बाहर आकर,
लिये लंदन आया। वहां मैंने ब्रिटिश
लय में विभाजन से पूर्व तथा उसके

री दस्तावेजों का, जो वहां सुरक्षित अध्ययन किया। तीस वर्ष बाद, ब्रिटेन सरकारी दस्तावेज़ सार्वजनिक संपत्ति जाते हैं।

इन दस्तावेजों के अध्ययन से मुझे ात हो गया कि पाकिस्तान सरकार ने ाजन के कारणों व उसकी घटनाओं कितनी ग़लत और विकृत तस्वीर स्तान की जनता के सामने पेश कर ी है। मेरे वालिद के आज़ादी की ई में हिस्सा लेने, व उनके 'खुदाई मतगार' आंदोलन के बारे में भी ने बहुत झूठ बोला था। अब मेरे पास दस्तावेज़ी सबूत मौजूद था, जिसके धार पर मैं वर्तमान पीढ़ी और आने ी पीढ़ियों में सामने विभाजन-काल ा उसके पूर्व के इतिहास को सच्चे ढंग श कर सकता था।

इन दस्तावेजों से यह स्पष्ट था कि ज लोग कांग्रेस से असहयोग-आंदोलन बावजूद (और बादशाह खान का ाई खिदमतगार' आंदोलन कांग्रेस के ोलन का ही एक अंग था) भारत अपने चंगुल में रखने के लिए संकल्प- थे। इस कारण, वे मेरे वालिद को ा 'एक नंबर का शत्रु' मानते थे। ा क्यों मानते थे, यह भी इन दस्ता- ों से स्पष्ट था।

ंग्रेज मन ही मन जानते थे कि कांग्रेस स्लिम लीग या हिंदू सभा की भांति कोई ायिक संस्था नहीं है, और उसके सदस्यों के नेताओं में हिंदुओं, मुसलमानों के अलावा पारसी, सिख, और ईसाई आदि भी थे। अंग्रेजी हुकूमत ने कांग्रेस के प्रभाव को कम और अंततः नष्ट करने के लिये मुसलमानों, ईसाइयों, पारसियों व सिखों के सोच में यह ज़हर डालना शुरू किया कि अंग्रेज सरकार उन्हें हिन्दुओं से ज्यादा वफ़ादार मानती है, और इसी उद्देश्य से उन्हें अनेक रियायतें और विशेष अधिकार प्रदान किये। उन्हें यह कहकर हिंदू व राष्ट्र विरोधी बनाने का प्रयास किया गया कि यदि अंग्रेज भारत से चले गये, तो हिंदू उन्हें कुचल डालेंगे, और उन्हें उनका गुलाम बनकर जीने को मजबूर होना पड़ेगा।

बादशाह खान अंग्रेजों के ज़माने से ही पठानों के लिये एक स्वतंत्र देश—पखतूनिस्तान—के निर्माण की मांग करते चले आ रहे हैं। पाकिस्तान बन जाने के बाद भी उनकी यह मांग क़ायम रही, जिसकी सज़ा उन्हें तथा उनके परिवार के सदस्यों को भुगतनी पड़ी।

लेकिन, अंग्रेजों ने यह झूठा प्रचार भी किया कि बादशाह खान रूसियों की शह पर पखतूनिस्तान की मांग को उछाल रहे हैं। इसका प्रमाण मुझे वायसराय और सैक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर इंडिया के बीच हुए पत्र-व्यवहार से मिला। इन दस्तावेजों से मुझे यह भी पता चला कि १९१७ से ही, जब रूस में साम्यवाद की जड़ें मजबूत होनी शुरू हुईं, अंग्रेजों ने रूसियों के विरुद्ध

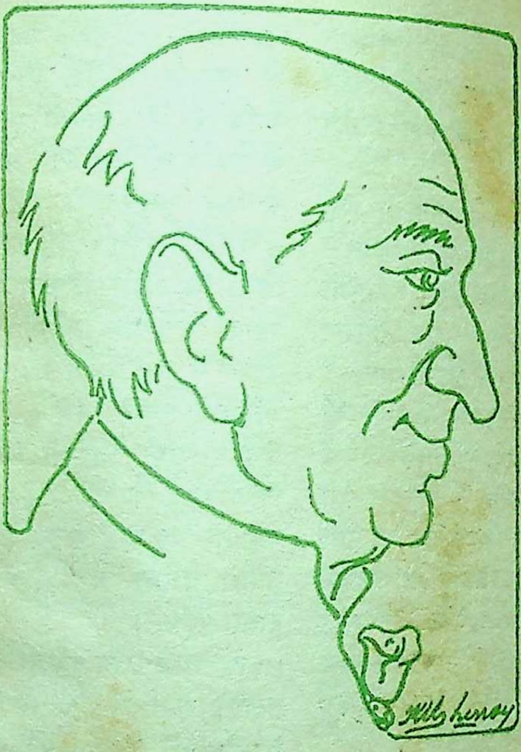

पं. जवाहरलाल नेहरू

षड्यंत्र आरंभ कर दिया था । उनके षड्यंत्रों का मुख्य उद्देश्य रूसियों को भारत व अफ़गानिस्तान की सीमा से काफ़ी दूर रखना था । अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होंने कौन-कौन से घिनौने हथकंडे अपनाये, इन सबका वर्णन इन दस्तावेजों में है ।

जब मैंने पहली बार इन दस्तावेजों को पढ़ा था, तो दहल उठा था । अपने धड़कते दिल को शांत करने के लिये मैं संग्रहालय से बाहर आकर कॉफी पीने चला गया था । अब मेरी समझ में आया कि क्यों मेरे वालिद तथा अन्य बुजुर्ग लोग अंग्रे को अपना दुश्मन मानते थे, और अंग्रेजों ने पठानों को वर्बरतापूर्वक द कुचलना अपनी नीति बना रखी है। इ पूर्व, मैं समझता था कि इन लोगों का अं के प्रति विद्वेष आधारहीन और पूर्वा से ग्रस्त है ।

इन दस्तावेज़ों को पढ़कर मैंने यह महसूस किया कि अंग्रेज लोग कि स्वार्थी और निष्ठुर होते थे । बु पसंद हिंदुस्तानियों से अपना म निकालकर उसकी उपेक्षा करना,

करना उनकी आदतों में शुमार । इन दस्तावेजों के माध्यम से मेरे ऐसे अनेक राष्ट्रीय समझे जाने वाले भी बेनक़ाब हुए, जिन्हें मैं सचमुच प्रेमी और अंग्रेजों का शत्रु मानता था। असल में ब्रितानी सरकार के दलाल और राष्ट्रीय आंदोलनों की सारी सूचना अंग्रेजों को देते रहते थे।

१९२२ से लेकर १९४२ तक के रायों और सैक्रेटरी फॉर स्टेट फॉर के बीच हुए पत्र-व्यवहार को अंग्रेजों तथा हिंदुस्तान के प्रति नीतियों के प्रति मेरी धारणा बदल गयी। मैंने अब तक इन पर जो कुछ पढ़ा, देखा या सुना , उसमें और हक़ीकत में ज़मीन-आस-का फ़र्क था।

इन दस्तावेज़ों ने मुझे यह भी बताया मुस्लिम लीग के नेताओं ने हिंदुस्तान तक़सीम करने की कम से कम चार नाएं अंग्रेज शासकों के विचारार्थ प्रस्तुत थीं। खलीकुज्जमां द्वारा प्रस्तुत की पहली योजना में, जो बंबई के गवर्नर लुम्ले को पेश की गयी थी, कहा था कि हिंदुस्तान को तीन हिस्सों तक़सीम किया जाये। एक हिस्से में हूँ, एक में मुलसमान और तीसरे व नवाब। दूसरी योजना सरदार ने नार्थ-वेस्ट-फ्रंटियर सूबे के को पेश की थी। इसमें गवर्नर सर कॉनिंघम से कहा गया था कि मुल्क को हिंदुस्तान व पाकिस्तान इन दो हिस्सों में बाँटने से बेहतर यह होगा कि उसे ६ या ७ हिस्सों में बांटा जाये। दस्तावेज़ों से स्पष्ट है कि तत्कालीन सैक्रेटरी ऑफ स्टेट लॉर्ड जेटलैंड ने इस प्रस्ताव के बारे में मुस्लिम लीग के एक प्रमुख नेता सर फीरोज़ खान नून से, जो बाद में पाकिस्तान के प्रधान मंत्री बने, विस्तार से विचार-विमर्श किया था। सर नून ने विचार विमर्श के दौरान, सुझाव दिया था कि बर्मा के समान मुल्क के उत्तरी-पश्चिमी भागों को हिंदुस्तान से अलग करके पाकिस्तान बना दिया जाये। मगर, लॉर्ड ज़ेटलैंड ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया।

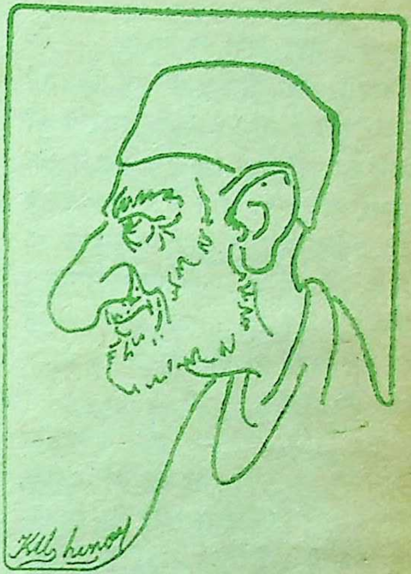
खान अब्दुल गफ्फार खान

विभाजन के दो प्रस्ताव क्रमशः शायर

इक़बाल ('सारे जहां से अच्छा ... के रचयिता) तथा कैंब्रिज़ के एक विद्यार्थी रहमत अली ने भी पेश किये, मगर वे भी अंग्रेजों को नहीं भाये। उन्होंने अंत में, सर मुहम्मद ज़फरुल्ला खान से जो वायसराय की एक्ज़ीक्यूटिव कौंसिल के सदस्य थे, धर्म के आधार पर प्रस्तावित हिंदुस्तान व पाकिस्तान का एक नक्शा तैयार करने और इस विषय पर एक स्मरण-पत्र तैयार करने को कहा।

१२ मार्च, १९४० को तत्कालीन वायसराय ने लॉर्ड ज़ेटलैंड को लिखा, 'मैंने आपको ज़फरुल्ला खान का स्मरण-पत्र भेजा है। मैंने कई बातों का स्पष्टीकरण मांगा है, जो वे शीघ्र ही देंगे। मगर, उन्होंने मुझसे यह प्रार्थना की है कि किसी को भी यह न बताया जाये कि स्मरण-पत्र उन्होंने तैयार किया है, कारण वे अहमदिया (क़ादियाने) हैं, और अगर अन्य मुसलमानों को इस बात का पता चला, तो वे बहुत बिगड़ेंगे। अत: मैंने बिना उनका नाम बताये, स्मरण-पत्र की एक प्रति लीग के प्रधान जिन्ना को भेज दी, जो उसका खूब प्रचार कर रहे हैं।

वायसराय ने यह पत्र अप्रैल, १९४० में जिस दिन लिखा था, उसके ठीक बारह दिन बाद मुस्लिम लीग ने लाहौर में हुई अपनी वार्षिक सभा में इस प्रस्ताव को 'पाकिस्तान-समझौते' के नाम से स्वीकृत किया। तभी, वायसराय ने यह भी घोषणा की कि वे जिन्ना को हिंदुस्तानी मुसलमानों का एकमात्र नेता मानते हैं।

०००

और, अब चलें–अमरीका।

अमरीकी सरकार भी ३० वर्ष बा
अपने वर्गीकृत दस्तावेजों को गुप्त सू
में से उतार देती है, और वे सार्वजनि
बन जाते हैं। १९५५ के अवर्गीकृत हु
कुछ दस्तावेजों के अनुसार, अयूब खा
को पास्कितान का सैनिक डिक्टेटर बना
में अमरीका का बड़ा हाथ था। ४ अक्
बर, १९५५ को पाकिस्तान के तत्कालीन
अमरीकी राजदूत श्री फिस्क ने अपनी स
कार से सिफारिश की थी कि जनर
अयूब खां एक भरोसेमंद व्यक्ति हैं, जि
यह आशा की जा सकती है कि वे पा
स्तान में अमरीका के हितों की रक्षा करें
वे एक प्रामाणिक व्यक्ति हैं, जिन
पाकिस्तान की जनता व सेना समान रू
भरोसा करती है।

बाद में अमरीकी ज्वाइंट चीफ्स ऑ
स्टॉफ के अध्यक्ष एडमिरल पाकि
आये, और उन्होंने अयूब खां से बातें की
के बाद अमरीकी सरकार से ज़ोर
सिफारिश की कि अयूब को शीघ्र ही
पाकिस्तान का प्रमुख बनाने में उन्हें
करनी चाहिये।

अमरीका को विश्व का एक अ
लोकतंत्रीय देश माना जाता है, कि
पिछले कुछ दशकों का उसका इति
साक्षी है कि उसने हर स्थान पर लो
तोड़ कर सैनिक तानाशाहों के हा

त्ता की बागडोर सौंपी है, और लोक-त्रीय देशों की सदा उपेक्षा की है। उसके विचार से वे अपने-अपने देशों को नियंत्रण रखने के अलावा, अपने क्षेत्र में अमरीकी हितों की भी रक्षा कर सकते हैं।

ooo

और अब एक अन्य पाकिस्तानी झूठ पर्दाफाश की कहानी।

पाकिस्तान हमेशा ही यह प्रचार करता हा है कि १९४७ में कश्मीर पर आक्रमण ने नहीं, कबाइलियों ने लूटमार के उद्देश्य किया था।

लेकिन, पिछले दिनों मेजर ओंकार-ह कलकट ने जो रहस्योद्घाटन किया, से यह प्रमाणित हो गया है कि यह क्रमण वास्तव में पाकिस्तान ने ही या था।

इस आक्रमण से पूर्व कलकट बन्नू यर ब्रिगेड ग्रुप के मुख्य कार्यालय में गेडियर सी. पी. मुरे के अधीन ब्रिगेड र थे।

२० अगस्त, १९४७ को, जब ब्रिगे-यर मुरे मिराली गये हुए थे, कलकट एक बंद लिफ़ाफा प्राप्त हुआ, जिस पर खा था 'व्यक्तिगत और गोपनीय।' कट ने, जो ब्रिगेडियर के मुख्य सहायक उस लिफाफे को खोल लिया। पत्र किस्तान के कमांडर-इन चीफ़ ने भेजा और उसमें उस 'आपरेशन गुलमर्ग' पूरा ब्यौरा था, जिसके तहत कबाइ-की आड़ में पाकिस्तानी सेना कश्मीर पर हमला करने वाली थी। कल कट ने फ़ौरन ब्रिगेडियर को फोन करके उन्हें इस गोपनीय पत्र का विवरण दिया।

ब्रिगेडियर ने कलकट से कहा कि वह इस पत्र का ज़िक्र किसी से भी न करे, नहीं तो वह कभी पाकिस्तान नहीं छोड़ पायेगा।

लेकिन, पाकिस्तानियों को न जाने कैसे इस बात का पता चल गया, और उन्होंने कलकट को फ़ौरन नज़रबंद कर लिया।

लेकिन, दिलेर कलकट अपनी नज़र-बंदी से मुक्त होकर १८ अक्तूबर को अंबाला पहुंचे। वहां पहुंचकर, उन्होंने अगले दिन दिल्ली के लिये प्रयाण किया, और वहाँ सुरक्षा-मंत्री श्री बल्देवसिंह तथा अनेक उच्च सेनाधिकारियों को 'आपरेशन गुलमर्ग' के बारे में बताया। मगर, दुर्भाग्य से किसी ने भी इस महत्वपूर्ण सूचना को गंभीरता से नहीं लिया।

जब २२ अक्तूबर, १९४७ को 'आपरेशन गुलमर्ग' की कार्रवाई शुरू हुई, तो सुरक्षा-मंत्री तथा सेनाधिकारियों को कलकट की याद आयी।

कलकट की खोज आरंभ हुई, और उन्हें अमृतसर से प्रधान मंत्री पं. नेहरू के पास लाया गया। पं. नेहरू ने कलकट के सामने ही सरदार बल्देवसिंह को उनकी लापरवाही के लिए डांटा और भारतीय सेना ने कश्मीर को बचाने की तैयारियां शुरू कीं।

एक भीगी शाम...

कमल की पांखुरी पर
लिख दी बरसात ने
एक भीगी शाम
सरोवर के नाम।
अंकुराये मोती से
दूब-धान-अंक
मेघों के देवालय
गूंजे शुभ-शंख
उछाल दिया लहरों पर
हंसकर किनारों ने
चुंबन ललाम
नदिया के नाम।
बूंदों के मंत्र हुए
सीपियों के छंद
पुरवा ने ओढ़ ली
फसलों की गंध
मूंगिया रंग शाखों पर
आंज दिया मौसम ने
सावनी प्रणाम
अमराई के नाम।
झरनों में बिंबायित
फाल्तई आकाश
धरती के अंतस में
रोमिल विश्वास
माटी के पृष्ठों पर
उकेर दिये पावस ने
दृश्य अभिराम
दिशाओं के नाम।

बीन लें बादल...

एक क्षण के लिए
छोड़ें सोच की दुनिया
रेशमी पुरवाइयों में
बहक जायें।

बीन लें हम
हथेली पर
सावनी बादल
घटाओं के
साथ पूजें
हरे दूर्वादल

फिर बुनें सपने गुलाबी
जामुनी और मोरपांखी
कोई वर्षा गीत
मिलकर गुनगुनायें।

वादियों तक
चलें खोजें
वे सभी संदर्भ अपने
हवाओं की
साक्षी में
जो रचे मिल साथ हमने

मेघदूतों से
करें दो बात मन की
इंद्रधनुषी बिंब
पलकों पर रचायें।

— सावित्री परमार —
पालीवाल भवन, खजानेवालों का रास्ता, चांदपोल, जयपुर (राज.)

(पृष्ठ ३२ का शेषांश)

प्रकृति का रहस्यवाद और व्यक्ति के ात्मिक ज्ञान के प्रति आकर्षण को ि ने काव्य में संजोया है। काव्य-धारा रहस्यात्मकता के साथ-साथ दुरूहता आभास होता है। लेकिन इस प्रकार विषयों के लिए प्रबुद्ध पाठकों की आव- ता और अभिव्यक्ति की सीमाएं ं आप आ जाती है और रचना उपयोगिता पर प्रभाव डालती हैं।

०००

बरी लड़ियां (काव्य-संग्रह) * काशी- यादव; प्रकाशक : भोजपुरी समाज ,मिडया एजेंसी, लेंटीन चेंबर्स, दलाल , फोर्ट, बंबई-४०००२३; मूल्य : रुपये।

बरी लड़ियां' काशीनाथ यादव का नवीनतम कविता संग्रह है। इससे एक संग्रह आ चुका है, जिसमें बाल- ताएं संकलित की गयी हैं। 'बिखरी ' में कवि ने गीतों और मुक्तछंद कविताओं को एक लड़ी में गूंथकर रे सामने रखा है। इस संग्रह में कवि विविध भाव-भूमि और शिल्प का ता से आकलन किया जा सकता है। सरल भाषा में कवि ने जीवन की सभी भावनाओं को रेखांकित किया जिनको लेकर व्यक्ति और समाज ही उत्सुक होते हैं। देश-प्रेम और की भावना को भी कवि ने अपनी का आधार बनाया है। राष्ट्रभाषा की दुर्दशा की ओर संकेत करते हुए कवि कहते हैं।

विरोधी हैं इसके जो लोग
सरलीकरण का करते योग
उनका है केवल यह ढोंग
उन्हें है अंग्रेजी का रोग।

जीवन के विरोधाभासों, सामाजिक विसंगतियों, राष्ट्रीय समस्याओं, व्यक्तिगत असफलताओं और सृजनात्मक आशावाद के प्रति कवि की दृष्टि अत्यंत सजग और पैनी है, जिसे उन्होंने बखूबी काव्य-शैली में ढालकर पठनीय और चिंतनशील बनाया है। कल्पनाएं स्वप्निल होती हैं, कवि स्वप्न-संवाहक। वह आदमी की बेहतरी के लिए निरंतर धारा के विरुद्ध चिंतन करता रहता है। इस कविता-संग्रह की कविताएं भी इन सारी बातों को सार्थक करती हैं।

०००

***'सांझी है रोशनी' (कविता-गज़ल संग्रह)* रामनिवास 'मानव'; प्रकाशक : पंकज प्रकाशन, सी ८/१५८-ए लारेन्स रोड, दिल्ली; मूल्य : २५ रुपये।**

रामनिवास 'मानव' का कविता-ग़ज़ल संग्रह 'सांझी है रोशनी' हिंदी पद्य साहित्य में एक उल्लेखनीय कड़ी है। जहां तक ग़ज़लों का सवाल है, हिंदी में दुष्यंतकुमार की ग़ज़लों ने एक चेतना और समाजोन्मुख दृष्टि दी। पर बाद में हिंदी ग़ज़लों पर दुष्यंतकुमार की छाप देखी जाने लगी। इस संग्रह की ग़ज़लें भी इस

बात की अपवाद नहीं हैं। विषय की दृष्टि से भी और शब्दावली के ढांचे में भी उस प्रभाव का संकेत मिलता है :

'रोशनी के वास्ते चिराग कोई
या कि अब तलाश करो आग कोई
समझा दो सिंहासन को 'मानव' की
हर ग़ज़ल है क्रांति का राग कोई'

फिर भी, कवि ने अपनी मौलिकता को कहीं भी धूमिल नहीं होने दिया।

आंखों में ज्वालामुखी से जल रहे हैं
लेकर लावा ढेर-सा हम चल रहे हैं।

जैसी पंक्तियां वर्तमान पीढ़ी की त्रासदी को रेखांकित करती हैं। ग़ज़लों के अलावा कवि ने अपनी कविता में अपनी काव्य प्रतिभा का परिचय दिया है। कविता के क्षेत्र के सन्नाटे को तोड़ने की कोशिश भी ये कविताएं करती हैं :

'मैं सोचता हूं,
ये सब दीवारें
ढह क्यों नहीं जातीं
और हर आंगन
आकाश क्यों नहीं हो जाता...'

सीधी और तीखी भाषा में एक कविता आज के सन्नाटे को चीरने की सफल कोशिश करती है?

इस किताब का हर शब्द
गूंगा है
कुछ नहीं बोलेगा।
तुम चाहते हो समझना
युग-बोध को,
तो पढ़ो
खामोशी की आंखों में तैरती
विवश अभिव्यक्तियां...।'

कोरे शब्दों में कवि ने भावमय
घोल कर सार्थक कविताओं की सृजना
है। आज कविता में जो एक सन्नाटा है
एक उदासी है, एक अंधेरा है, उसमें
संग्रह रोशनी की तरह आशा की किर
जगाता है।

०००

***जन्माष्टमी** (खण्डकाव्य)* रचयिता:
पं. गोकुल प्रसाद शास्त्री; प्रकाशक:
गोकुलप्रसाद शास्त्री, १४, शिक्षानगर,
तानसेन मार्ग, ग्वालियर; मूल्य: ३५ रु

गोकुलप्रसाद शास्त्री द्वारा रचित 'जन्माष्टमी' एक खण्डकाव्य है, जिस
कवि ने श्रीकृष्ण के जीवन के विवि
पहलुओं को पद्यात्मक विधा में बांधा है
श्रीकृष्ण के जीवन पर संगीतात्मकता
प्रवाहपूर्ण शैली में कवि ने यह खण्डका
लिखा है।

चिर-परिचित कथा के अतिरिक्त कवि
ने ऐसे प्रसंग भी सहजता से जोड़े हैं, जि
वर्तमान की स्थितियां भी अनायास ही
रेखांकित हो गयी हैं :

आज कुर्सी बन गयी इंसान की मां-बाप है
आदमी जिसके लिए करता न क्या
पाप है।

इन पंक्तियों की प्रासंगिकता
समाप्त नहीं होती। आदमी की मूल
मानसिकता पर कवि ने पुराने मिथकों
आधार मानकर प्रहार किया है। साथ ही

आदमी को प्रकृति की सर्वश्रेष्ठ कृति मानता है :

ती से विश्व में होता नहीं कोई बड़ा
जिसके हिमालय, सिर झुकाये है खड़ा ।

न शाश्वत पंक्तियों के साथ कवि ने अनुपम शैली में कृष्ण के संदेश को कथा के माध्यम से धाराप्रवाह पद्य कर एक सशक्त रचना को 'जन्मा-' के रूप में पाठकों को सौंपा है ।

०००

टाध्यायी (अनुवाद) * रचयिता : र प्रसाद जोशी; प्रकाशक : विवेक न, पो. बॉ. ११, साहुलपुर-३३१०-; मूल्य : १५ रुपये ।

स यजुर्वेदीय रूद्राष्टाध्यायी पद्यानुवाद' के रचयिता महावीर प्रसाद हैं। वेदों के आठों अध्यायों से होकर कवि ने यह हिंदी-पद्यानुवाद किया है। संस्कृत के ज्ञान भंडार को में प्रस्तुत कर कवि ने कई दुर्लभ ओं और जीवन विषयक ज्ञान को लोगों तक पहुंचाया है । भारतीय शास्त्र और वेदों में छिपे जीवन के रहस्यों को सीधी-सरल भाषा में ों के सामने रखा गया है ।

ा के अध्येताओं के लिए यह पुस्तक उपयोगी बन पड़ी है । संस्कृत के उद्धरणों के साथ ही हिंदी का पद्यनुवाद प्रकाशित किया है । मूल रूप में रखने से अनुवाद की विश्वनी बढ़ गयी है ।

भारतीय-दर्शन और जीवन-चिंतन पर धाराप्रवाह शैली में सहज-सरल अनुवाद प्रस्तुत कर कवि ने जनसामान्य के लिए वेदों की बातें उपलब्ध करायी हैं ।

०००

***भावांकुर (कविता संग्रह) * कवि: अनिल पालीवाला 'अनल'; प्रकाशक : अरविंद प्रकाशन, अलवर; मूल्य १० रुपये ।**

'भावांकुर' कवि अनिल पालीवाल 'अनल' की कविताओं का संकलन है। इस संग्रह में कवि की विभिन्न भावभूमि की कविताएं संकलित हैं। एक ओर जहां गणपति, सरस्वती और राम की वंदना है, वहीं आज के समाज के विरोधाभास, पाखंड, स्वार्थ के दानव का पर्दा-फाश भी किया गया है। दहेज जैसे विकराल असामाजिक तत्वों पर कवि कहता है :

> **'कोमल कुसुम लताओं को हम**
> **इसके कर न उजड़ने देंगे**
> **इसका तांडव नृत्य लास्य में**
> **हम बदलेंगे हम बदलेंगे ।'**

साथ ही, वर्तमान विसंगतियों, देश-प्रेम और प्रेरणादायक रचनाओं को इस संग्रह में सम्मिलित किया गया है। कवि जनोन्मुख चिंतक है और आशावाद उसकी कविता का आधार है । अपनी अभिव्यक्ति के लिए कवि ने भाषा-शैली का चुनाव अत्यंत प्रसंगानुकूल किया है । कवि का यह 'भावांकुर' अगली रचनाओं में पल्लवित हो सकेगा ऐसी आशा है ।

—डॉ. दामोदर खड़से

बाल कहानी

चार गंजे

□

सुरजीत

एक बार की बात है कि एक आदमी था। वह अपनी जीविका खजूर के पत्तों की टोकरियां बनाकर करता एक दिन वह टोकरियां बनाने के पत्ते तोड़ने खजूर के पेड़ पर चढ़ा।

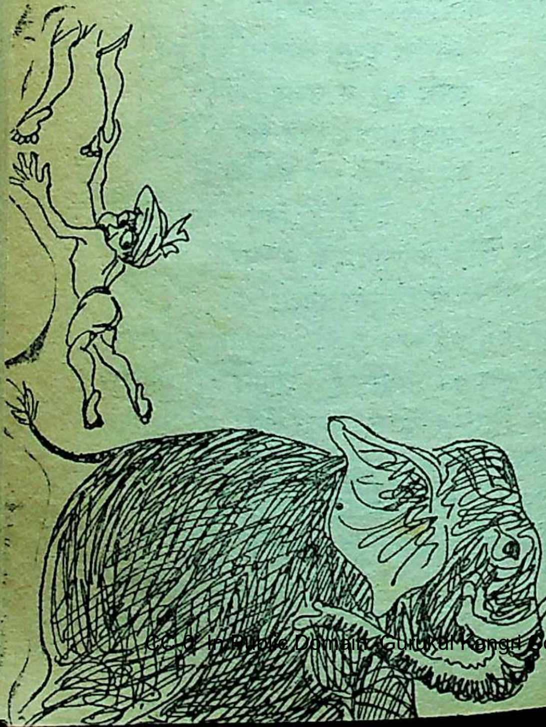

वह पेड़ पर चढ़कर पत्ते तोड़ता गुनगुनाता रहा। इस बीच उसने 'मेरे पास ऐसे काम करने के एक नौकर होना चाहिये। मैं टोकरी बना लूंगा, तो फिर उसे मूल्य में बेचूंगा। फिर मैं और भी टोकरियां बनाकर बेचूंगा। यहां तक इतने रुपये बचा लूंगा कि एक नौकर सकूं और फिर उसकी तनख्वाह सकूं।'

नौकर रखने के विचार से वह प्रसन्न हुआ और फिर अपने आप से 'और यदि उसने मेहनत से काम न तो मैं उसे इस प्रकार लात मारकर फेंक दूंगा।' यह सोचते समय वह

ना,कि वह कहां बैठा है । उसने गुस्से अपनी एक टांग उठायी और इतने ज़ोर झटकी कि वह पेड़ पर अपने आप को ाल न सका और गिर पड़ा ।

ह तो उसका भाग्य अच्छा था कि ते-गिरते भी उसने खजूर के पत्ते पकड़- अपनी जान बचा ली । अब वह इन तों को पकड़े हुए लटका हुआ चीख रहा -'बचाओ बचाओ, . . . मदद . . . द . . .'

उस समय एक महावत हाथी पर सवार से गुज़रा । उसने जो यह 'बचाओ ओं' का शोर सुना तो इधर-उधर ा । आकाश की ओर मुंह उठाया, देखा कि टोकरी बनाने वाला पेड़ लटका हुआ चीख रहा है ।

टोकरी बनाने वाला फिर चीखा-'मुझे नीचे उतारो ! मैं वचन देता हूं कि इसके बदले में मैं सारी उम्र तुम्हारी सेवा करूंगा ।'

महावत ने तत्काल अपने हाथी की दिशा पेड़ की ओर मोड़ दी । पेड़ के पास आकर महावत हाथी की पीठ पर खड़ा हुआ और टोकरी बनाने वाले के पैर पकड़ लिये ।

उस समय हाथी ने महसूस किया कि महावत ने मेरी पीठ को पैरों से सख्ती से दबाया है । उसने उसे आगे चलने का इशारा समझा, और हाथी आगे निकल गया । यों महावत भी टोकरी बनानेवाले के पैर पकड़े पेड़ के साथ लटका रह गया ।

अब दोनों आदमियों ने मिलकर चीखना-चिल्लाना शुरू किया—'बचाओ . . . बचाओ . . .' उस समय चार गंजे आदमी

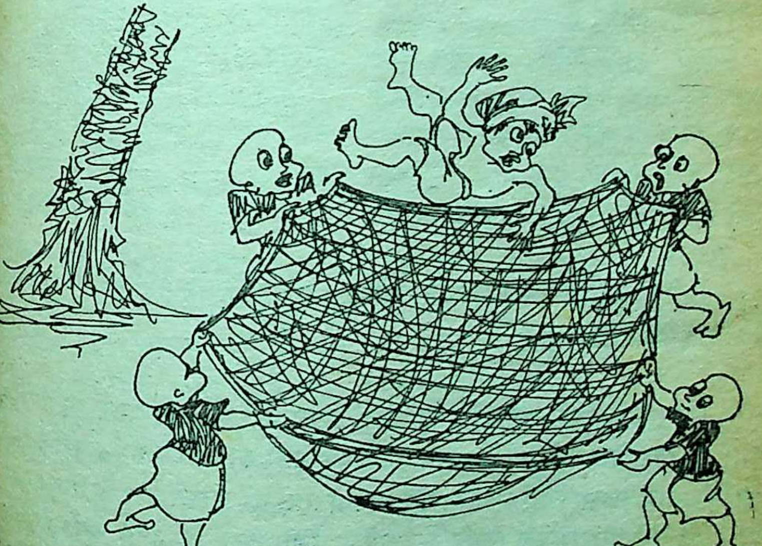

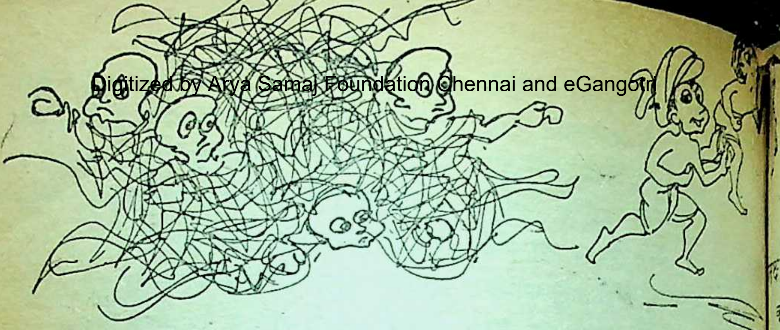

वहां से गुज़र रहे थे। उन्होंने जब 'बचाओ बचाओ . . .' की दुहाई सुनी, तो वह हैरान होकर वहीं रुक गये।

महावत और टोकरी वाला दोनों चिल्लाये—'हमें बचा लो! हमें बचा लो! हम वचन देते हैं कि हम सारी उम्र तुम्हारी सेवा करते रहेंगे।'

चारों गंजों को यह सुनकर बहुत प्रसन्नता हुई कि इतनी आसानी से हमें दो नौकर मिल जायेंगे।

'ठहरो!' यह कहकर वह गंजे भागे-भागे जाल लेने के लिए गये। फिर उन्होंने जाल के चारों कोने मज़बूती से अपनी-अपनी गर्दन के गिर्द बांध लिये और जाल पकड़कर पेड़ के नीचे खड़े होकर चिल्लाने लगे—'अब तुम कूद जाओ! छलांग लगाओ हम तुम्हें पकड़ लेंगे।'

वस अब टोकरी बनाने वाले ने के पत्तों को छोड़ दिया। महावत और दोनों ऐन जाल के बीचों बीच आ गिरे

उनके गिरने से जाल पर इतना पड़ा कि चारों गंजे जाल के बीच में चले आये। उनके सिर आपस में टकरा और इतनी तेजी से टकराये कि चक हो गये यों चारों गंजे वहीं के वहीं हो गये और जाल में फंसे के फंसे रह

यही मौका देखकर टोकरी बनाने और महावत दोनों वहां से चुपचाप गये।

—सी-३४, सुदर्शन
नयी दिल्ली-११००

☐

प्रत्येक बच्चा एक कलाकार है। मुश्किल यह है कि वह बड़ा होने पर भी कलाकार कैसे बना रह सकता है?

-पि

०००

अगर हम बच्चों को अच्छे नागरिक बनना नहीं सिखाते, अगर हम उनकी क्षमताओं को विकसित नहीं करते, अगर हम उनके मनों को ज्ञान से समृद्ध नहीं बनाते, दिलों में प्यार, सच्चाई और कर्तव्य की भावना तथा हर अच्छी चीज के लिए सम्मान नहीं करते, तो हमारा देश तबाह हो जायेगा, जिस तरह कि हमसे पहले कई और तबाह हुए हैं।

-हेरेस

☐

सांस्कृतिक मंच

क्ष्मीबाई की स्मृति में गोष्ठी

कानपुर, विगत १८ जून '८८ को महान प्रेमी महिला महारानी लक्ष्मीबाई के र्वाण दिवस के उपलक्ष्य में 'ज्ञान-मंजरी' तत्वावधान में जवाहर नगर में एक गोष्ठी वरिष्ठ कवि गंगाशरण 'चातक' अध्यक्षता में संपन्न हुई। जिसमें श्री 'चातक', विद्या सक्सेना, स्वतंत्र; गुरुप्रसाद 'कार्टून', देवकुमार 'देव'; कमलशंकर दवे, वीरेश, कुमार गुप्त; राम 'जय', डा. मधु प्रधान, प्रेमी, डा. राज, डा. शिरीष, डा. प्रतीक, विनोद; मन 'आजाद', तथा आर.एन. विश्वकर्मा हित अनेक साहित्यकारों ने वीरांगना के ति भावांजलि अर्पित की। गोष्ठी का चालन कुमार गुप्त ने किया तथा प्रधानजी आगतों को धन्यवाद दिया।

–जयराम सिंह यादव 'जय'

०००

सीमांत' लोकार्पण समारोह

स्व. पद्मश्री डा. श्यामनंदन किशोर के प्रकाशित संग्रह 'सीमांत' का लोकार्पण समारोह दिल्ली के गांधी शांति प्रतिष्ठान के स्मृति-दीपित सभागार में संपन्न आ, जहां उनके ही स्वर में उनके कितने हृदयद्रावक गीतों के कैसेट पहले कुछ वातावरण में ऊँ ध्वनि जगाते रहे। के बाद श्रीमती अमृता प्रीतम ने अपनी खास रूहानी शैली में उनकी कविताओं के मन छू लेने वाले विश्लेषण किये और उन्हें क्रांति और शांति दोनों का मसीहा बताते हुए जीवन की सूक्ष्म अंतरंग परछाइयां बुनने के लिए उन्हें हृदय से आशीष दिये।

डा. विजयेन्द्र स्नातक ने उनकी कविता के दार्शनिक गांभीर्य पर बोलते हुए उनके जीवन के कई अंतरंग प्रसंग उजागर किये।

श्री राजेंद्र अवस्थी और श्री गौरीशंकर राजहंस भी बहुत ही आत्मीयता से डा. किशोर और उनकी कृतियों की मिठास, सरलता और उनके भोलेपन पर बोले कि विदेशों में कैसे घर के लिए व्याकुल रहते थे। डा. धर्मपाल मैनी उनके व्यक्तित्व और कृतित्व की मानवीय चेतना पर गंभीरता से बोले। श्री जगदीश चतुर्वेदी ने काल के गाल में असमय ही चले गये अपने दो प्रखर समकालीनों डा. किशोर और श्री राजकमल चौधरी के काव्य में परंपरा और प्रयोग की संतुलन की बात की।

डा. श्याम सिंह 'शशि' ने उनके काव्य के महत्वपूर्ण प्रसंगों पर बोलते हुए उन्हें बहुआयामी बताया।

डा. कमल किशोर गोयनका, श्री प्रेम जनमेजय, डा. सरोजनी प्रीतम, डा. मृदुला सिन्हा और श्री एवं श्रीमती रमेश ऋषिकल्प ने भी श्रद्धांजलि दी।

कवि की पुत्री डा. अनामिका से उनकी

दो कविताएं पढ़ने को कहा गया और उन्होंने उनका युग बोध उजागर करने वाली दो रचनाएं सुनायीं। —अनामिका

०००

एकम् सत्-वेदांत : वीडियो कैसेट

ऊर्जा मंत्री श्री वसंत साठे ने स्थानीय ताजमहल होटल में पिछले दिनों वेदांत पर आधारित और पार्थ संस्था द्वारा निर्मित वीडियो-कैसेट, 'एकम् सत्' का विमोचन करते समय कहा कि प्राचीन भारत के ऋषि-मुनियों ने सृष्टि और उसके रचयिता के विषय में गहरा चिंतन किया था। उनके चिंतन में अंधश्रद्धा के लिए स्थान नहीं था। विज्ञान और सच्चे दर्शन में कई बातों में समानता है। सत्य को जानने की उत्कंठा दोनों में पायी जाती है।

आज का युग दृश्य-श्रव्य माध्यम का है, इसलिए यह उचित ही है कि जिन्होंने अमर चित्रकथा के माध्यम से भारतीय संस्कृति का परिचय बच्चों को कराया, उन्होंने इस दृश्य-श्रव्य माध्यम का उपयोग भारतीय दर्शन जैसे गहन विषय को समझाने के लिए किया है।

भारतीय विद्या भवन के कार्यवाहक सचिव श्री एस. रामकृष्णन् ने समारोह की अध्यक्षता की। पार्थ संस्था की ओर से उसके डायरेक्टर श्री अनंत पै ने आभार प्रदर्शन किया।

०००

'बागपत के खरबूजे' पर चर्चा

ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित व्यंग्य-संकलन 'बागपत के खरबूजे' के लेखक हरीश नवल की उपस्थिति में प्रगतिशील संघ, इंदौर इकाई द्वारा चर्चा गोष्ठी आयोजन किया गया।

'व्यंग्य संध्या' के इस कार्यक्रम में स्तर के व्यंग्यकार द्वय सर्वश्री प्रेम (दिल्ली) और ज्ञान चतुर्वेदी (भोपाल) विशेष रूप से उपस्थित थे।

'बागपत के खरबूजे' पर सर्वश्री कुमार, चैतन्य त्रिवेदी और संदीप श्री ने समीक्षात्मक आलेखों का वाचन कि

इंदौर के व्यंग्यकार सर्वश्री पुरोहित, दिलीप गुप्ते और यशवंत ने अपनी व्यंग्य रचनाएं सुनायीं।

प्रारंभ में श्री रामविलास अतिथियों का स्वागत किया। का सफल संचालन श्री आशुतोष ने किया एवं आभार श्री हरेराम ने माना। —अनंत श्री

०००

ग्रीष्मकालीन व्याख्यानमाला

अभ्यास मंडल इंदौर द्वारा कालीन व्याख्यानमाला का आयोजन मई से १७ मई तक किया गया। इस दिवसीय व्याख्यानमाला का आदिवासियों के बीच कार्यरत समाजसेविका श्रीमती लता ने 'आदिवासियों की समस्याएं' वि व्याख्यान के साथ किया। व्याख्यान के दूसरे दिन पूर्व सांसद श्री सुरें 'बेरोजगारी की समस्या' विषय पर 'पंजाब समस्या एवं ५९ वां

धन' विषय पर प्रसिद्ध न्यायविद् व्ही. तारकुंडे ने व्याख्यानमाला के तीसरे अपने विचार रखे ।

थे दिन पूर्व सांसद और प्रसिद्ध जसेवी श्री नानाजी देशमुख ने 'युगानु- सामाजिक पुनर्रचना' विषय पर अपने चार प्रकट किये । पांचवें दिन साहित्य- श्री विजयबहादुर सिंह का 'बुद्धि- ी का धर्म' विषय पर व्याख्यान हुआ । दिल्ली विश्वविद्यालय के प्राध्यापक संघसेन सिंह 'धर्म विज्ञान तथा राज- ' विषय पर व्याख्यानमाला के छठें बोले । सामाजिक कार्यकर्ता एवं र्शन कलाकार श्रीमती सुषमा देशपांडे 'सावित्री बाई फुले–एक जीवन' पर ते हुए कहा कि महिलाओं को फुले- नी से प्रेरणा लेनी चाहिये । अभ्यास ल की ग्रीष्मकालीन व्याख्यानमाला के तिम वक्ता के रूप में औरंगाबाद के त मजदूर एवं किसान नेता श्री शांता- म पदेरे थे ।

—संतोषकुमार वाही

०००

मानदार अनभूति की कविताएं

दिल्ली की साहित्यिक संस्था 'विमर्श' ने लित शुक्ल की कविता-पुस्तक 'सहमी ई शताब्दी' पर एक परिचर्चा गोष्ठी का योजन किया । डा. रामदरश मिश्र के निध्य में हुई इस गोष्ठी की अध्यक्षता . श्याम सिंह 'शशि' ने की । अध्यक्ष- से बोलते हुए उन्होंने कहा कि ललित क्ल की कविताएं समय-संदर्भ में प्रासंगिक एवं कविता की कसौटी पर खरी उतरने वाली कविताएं हैं । डा. रामदरश मिश्र के अनुसार संकलन की सभी कविताओं में बड़ी आत्मीयता है ।

विषय प्रवर्तन में राजीव सक्सेना ने कहा कि ललित शुक्ल की कविताओं को पढ़ते हुए कबीर की उलटबांसियों का जैसा आनंद आता है । डा. देवेन्द्र आर्य ने संकलन की कविताओं को मौजूदा कालखंड की विशिष्टताओं से युक्त कहा । इतिहासवेत्ता कवि डा. गोविंद उपाध्याय ने ललित शुक्ल की कविता में टेलिपैथिक एलीमेंट्स की प्रचुरता को रेखांकित किया। डा. मुलेखचंद्र के विचार से कवि लगातार उन बिम्बों की खोज में तत्पर है, जो मानव त्रासदी को आदिम संस्कृति के ऊपर हावी होते हुए देखता है । समीक्षक गंगाप्रसाद विमल की मान्यता थी कि 'सहमी हुई शताब्दी' की संचरना में आधुनिक मिथक के बिम्ब परिताप देते है। कवि में हस्तक्षेप की क्षमता है ।

डा. चंचल चौहान ने संकलन की कविताओं को विभिन्न मूड्स की रचना बतलाया । उनके अनुसार कवि ने वृहत्तर मानवीय संदर्भों को ईमानदारी से रचना के फलक पर उठाया है । डा. रणजीत साहा को इन कविताओं में कृत्रिम भावबोध की झलक मिली । इनकी मान्यताओं को खारिज करते हुए डा. माहेश्वर ने स्थापना दी कि ललित शुक्ल के कवि ने निरंतर विकास किया है । डा. नरेंद्र मोहन का

विश्व है हमारा कैनवास...

यदि चालीस वर्ष पीछे नज़र डालें तो हम देखेंगे कि भारत तब पूरी तरह विदेशी डाइज़ पर निर्भर था. और तब तक इस क्षेत्र में अतुल ने कदम नहीं रखा था. स्वदेशी डाइज़ के उत्पादन क्षेत्र में पहल हमने की... एक श्रद्धांजलि के रूप में, जो हमारे संस्थापक स्वर्गीय श्री कस्तूरभाई लालभाई की दूरदृष्टि को समर्पित थी.

आज अतुल न केवल डायस्टफ़ की विशाल श्रेणी का उत्पादन करते हैं बल्कि बुनियादी रसायन, डायस्टफ़ के माध्यम, फ़ार्मास्युटिकल्स तथा कीटनाशकों का उत्पादन करके कपड़े, चमड़े, कागज़, हाथ से बने कपड़े, पिग्मेंट, पेट्रोलियम, जूट तथा साबुन जैसे विविध उद्योगों में देश को आत्मनिर्भर बनाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं.

अपनी १०० करोड़ की बिक्री और १० से भी
करोड़ रुपये के निर्यात-द्वारा तेज़ी से विकास की
अग्रसर है. हमेशा उत्तम क्वालिटी के उत्पादन
करना ही हमारा उद्देश्य है जिसे हम पूरा करते हैं
आर एंड डी विभाग की सहायता से.

भारत में उद्योगों के कदम तीव्र गति से विकास
अग्रसर है. और अतुल राष्ट्र की उपलब्धियों में
सहभागी रहा है.

®THE ATUL® PRODUCTS LTD.

अतुल ३९६०२०, गुजरात, इंडिया, टेलेक्स : ०१७३ २१२
फोन : ATUL ६१ से ६५. टेलीग्राम : TULA

व पढ़ते हुए प्रताप सहगल ने 'सहमी ताब्दी' को इस दशक की मान्य कृति ाया। जगदीश चतुर्वेदी के अनुसार लित शुक्ल संभावनाओं के कवि हैं।

परिचर्चा में डा. रामनिवास शर्मा, डा. प्रकाश शर्मा आदि विचारकों ने भी लिया। गोष्ठी में रमेश गौड़, डा. दयाल, डा. रणवीर रांग्रा, रमानाथ त्री, श्रवणकुमार आदि कवि और क उपस्थित थे। संचालन डा.रमेश-. मिश्र ने किया था। अंत में 'विमर्श' अध्यक्ष कुसुम श्रीवास्तव ने श्रोताओं रचनाकारों के प्रति आभार प्रकट या।

— अनुभूति मिश्र

०००

ज की समस्या पर नाटक

मशेदपुर के रवीन्द्र कला मंदिर के गृह में ३० जून को एक आकर्षक रोह में टिस्को सामुदायिक विकास जनकल्याण विभाग द्वारा आयोजित नाटक प्रतियोगिता का पुरस्कार रण श्रीमती डेजी इरानी के हाथों संपन्न हुआ।

विभाग ने इस वर्ष 'दहेज' पर नाटक मंचित करने का आह्वान किया था, जिसमें १३ नाट्य दलों ने भाग लिया। इस विकराल समस्या के प्रति लोक जागरण हेतु ये नाटक मंचित कराये गये थे।

समारोह में सर्वश्रेष्ठ नाटक का पुरस्कार 'परंपराओं का ओम स्वाहा' (लेखिका-रेणु दीवान) को तथा द्वितीय पुरस्कार 'अंतहीन संवाद' को (लेखक-ज्योति मिश्रा) मिला। निर्देशन का पुरस्कार शिवकुमार प्रसाद ने तथा नायक का पुरस्कार जगमोहन तिवारी (दोनों 'परंपराओं का ओम स्वाहा') को मिला, जबकि 'अंतहीन संवाद' की नायिका सविता घोष ने सर्वश्रेष्ठ नायिका का पुरस्कार जीता। 'अंततः' और 'जागते रहो' नाटकों को भी पुरस्कार दिये गये।

समारोह के प्रारंभ में सुश्री लीलावती ने अतिथियों का स्वागत किया और अंत में श्री एस. पी. शर्मा ने धन्यवाद ज्ञापन किया।

—निर्मल मिलिंद

□

लकड़हारे ने उस जंगल को काट गिराने का निश्चय किया। पेड़ों तक यह खबर -तूफान की तरह पहुंच गयी।

पेड़ों ने हिम्मत रखी और कहा—'आदमी के हाथ पतले हैं और बहुत छोटे, वह न काट सकता है, न उखाड़ने की ताकत उसमें है।'

कई दिन बाद लकड़हारे लकड़ी के बेट वाली कुल्हाड़ियां हाथ में लेकर आये।

पेड़ों ने कहा—'अपनी ही बिरादरी यदि शत्रुओं का साथ दे तो फिर विपत्ति का ना निश्चित है।' बेट के जाति-द्रोह से जंगल का सफाया कराया।

—डा. गोपालप्रसाद 'वंशी'

□

तिरंगे की व्यवहार-संहिता

□ सुधीर

आजादी का पवित्र और महान प्रतीक, हमारा राष्ट्रीय तिरंगा है, जो अनगिनत आत्मवलिदानी देशभक्तों के संघर्ष और त्याग का आत्मबल कहा जाता है। राष्ट्रीय ध्वज, देश प्रेम की अप्रतिम भावना की भूमिका है। स्वातंत्र्य युद्ध और राष्ट्रीय ध्वज का संघर्षमय इतिहास ही हमारी राष्ट्रीयता का गौरवमय इतिहास है। बिना तिरंगे के हमारी आजादी की लड़ाई की गाथा अधूरी है।

सन १९०५ में जर्मनी में सर्वप्रथम निर्वासित क्रांतिकारी हिंदुस्तानियों के बीच, प्रख्यात देशभक्त एवं क्रांतिकारी महिला मादाम भीखाईजी कामा द्वारा हिंदुस्तान का सबसे पहला झंडा फहराया गया था। सन १९०६ में कलकत्ता के पारसी बागान में दूसरा राष्ट्रीय ध्वज, जो क्रमशः २२ जुलाई १९४७ तक अनेक रंग, रूप एवं अर्थ बदलता हुआ आज हमारे राष्ट्रीय ध्वज के रूप में, अपनी गोद में ८२ वर्षीय इतिहास की आंधियों को छुपाये हुए हैं।

चूंकि, हमारी आजादी की लड़ाई की प्रतिष्ठा का प्रत्यक्ष साक्ष्य है–तिरंगा। इसलिये इसके गौरव, मान-मर्यादा और सम्मान की सुरक्षा एवं संरक्षा बहुत श्यक समझी गयी। जाने-अनजाने नता के इस महान प्रतीक तिरंगे के अज्ञानतावश कोई अपकार न हो, कारण सन १९५० में इसकी प्रतिष्ठा क्षित रखने के उद्देश्य से संसद ने संहिता : चिन्ह और नाम अधिनियम संशोधन करते हुए बिना केंद्र सरकार अनुमति के राष्ट्रीय ध्वज के ट्रेड या डिजाइनों में उसके प्रयोग पर लगा दिया।

सन १९७१ में इस 'ध्वज संहिता' अंतर्गत राष्ट्रीय हित में एक संशोधन किया गया। इस कानून के अंतर्गत जनिक रूप से राष्ट्रीय तिरंगे को बिगाड़ने, दूषित करने, नष्ट करने, विकृत करने या अन्य किसी दूसरे व्यवहार से तिरस्कृत या अपमान करने दोषी को, तीन वर्ष की जेल या जुरमाना दोनों सजाओं का भागी घोषित किया सकता है।

स्वाधीनता की वर्तमान राष्ट्रीय ध्वज तिरंगे के प्रति प्रतिष्ठा सर्वजनीय एकनिष्ठ श्रद्धा, क्या हम गत रूप से सुरक्षित रख पाये हैं?

ीरतापूर्वक विचारकर 'ध्वज संहिता' निदेश-प्रकरण के अंतर्गत सूक्ष्म दृष्टि से स प्रकार देखना होगा।

० राष्ट्रीय ध्वज की लंबाई और चौड़ाई ं ३ : २ का अनुपात होना चाहिये। और अशोक चक्र में २४ अरे ही होने ाहिये।

० राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा केवल महत्वपूर्ण जकीय प्रासादों या भवनों में ही रोज हराया जा सकता है।

० जन सामान्य केवल विशेष राष्ट्रीय ों पर ही ध्वजारोहण कर सकता है। था 'गणतंत्र दिवस', ६ से १३ अप्रैल क जलियान वाला बाग की स्मृति में योजित 'राष्ट्रीय सप्ताह', 'स्वतंत्रता दिवस', और 'महात्मा गांधी का जन्म दिवस'। 'राष्ट्रीय आमोद' के अवसर पर न साधारण को एवं विशेष अवसरों पर ज्य सरकारों को तिरंगा झंडा फहराने ो विशेष छूट है। जैसे महाराष्ट्र राज्य में १ मई जो उसका स्थापना दिवस है।

० कारों पर अमूमन महत्वपूर्ण धिकृत लोग ही राष्ट्रीय ध्वज फहरा कते हैं। यथा–राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, ाज्यपाल, उपराज्यपाल, प्रधानमंत्री, अन्य त्री, केंद्रीय और राज्य विधान मंडलों के ध्यक्ष, सर्वोच्च न्यायाधीश एवं विदेशों ं स्थित भारतीय राजदूत एवं राजनयिक।

० राष्ट्रीय ध्वज सूर्योदय के समय फहराना और सूर्यास्त के समय उतार लेना ाहिये। राष्ट्रीय ध्वज जल्दी-जल्दी फहराना चाहिये मगर उतारना चाहिये धीरे-धीरे।

० राष्ट्रीय ध्वज से ऊपर कोई झंडा न फहरे। और न कोई झंडा उसके बगल में हो–सिवाय राष्ट्रसंघ के। यदि, अन्य राष्ट्रों के झंडे हों भी तो ये तिरंगे के बाईं ओर होने चाहिये।

० ध्वज दंड पर एक से अधिक झंडा नहीं फहरे। साथ ही ध्वज दंड पर फूल मालाएं या कोई चिन्ह कदापि न रखा जाये।

० राष्ट्रीय ध्वज किसी व्यक्ति अथवा किसी भवन (दोनों ही प्रतिष्ठित एवं पुनीत कितने क्यों न हों) के सम्मान में, झुकना नहीं चाहिये।

० राष्ट्रीय ध्वज न जमीन छुए और न पानी में ही वह उन्मुक्त रूप से फहरे।

० राष्ट्रीय ध्वज तोरणों, परदों, झंडियों या दीवारों में सजावट के रूप में इस्तेमाल कभी न हो। न ही रंगीन कपड़े या रंग इस तरह सजाएं जायें कि वे तिरंगे जैसे दिखायीदें।

० तिरंगा किसी वेशभूषा या वरदी में अंकित न हो। तिरंगे में किसी भी तरह की अक्षर-रचना न हो। किसी तरह के के विज्ञापन में उसका उपयोग भी कानूनन वर्जित है।

० फटा या उड़े रंग वाला तिरंगा कभी नहीं फहराना चाहिए। फटा तिरंगा सीने के बाद दोबारा भी नहीं फहराना चाहिए।

(शेषांश पृष्ठ १४३ पर)

भारतीय संस्कृति में शंख का महत्व

□

पं. बाबूलाल जोशी

पद्म पुराण के उत्तरखंड में शंख का विस्तारपूर्वक वर्णन है। अन्य पुराणों में भगवान विष्णु के मत्स्यावतार लेने और शंखासुर के मारने संवंधी आख्यान है। शंखासुर ने वेदों को चुरा लिया था और उन्हीं को प्राप्त करने के लिए मत्स्यावतार लेकर विष्णु ने उसका वध किया। एक कथा यह भी है कि भगवान शंकर तथा शंखचूड़ राक्षस में परस्पर युद्ध हुआ। इस युद्ध में शिवजी ने भगवान विष्णु से त्रिशूल लेकर उसके द्वारा शंखचूड़ का वध किया और उसके अस्थि-पंजर को समुद्र में डाल दिया। वही आगे चलकर शंख के रूप में उत्पन्न हुआ। इसीलिये शंख में रखा हुआ जल गंगाजल के समान पवित्र कहा गया है।

समुद्र मंथन से निकले हुए १४ रत्नों में शंख भी निकला था, इसलिये यह एक रत्न है। नौ निधियों में एक निधि के रूप में शंख का भी स्थान है। इसी प्रकार आयुर्वेद, ज्योतिष, शकुनशास्त्र और हस्त-रेखा शास्त्र में भी शंख के बारे में पर्याप्त विचार किया गया है।

भारतीय संस्कृति और धर्म में शंख का बड़ा महत्व है। विष्णु व देवी के चार आयुधों में शंख को भी एक स्थान मिला है। मंदिरों में आरती के समय शंख ध्व का विधान है तथा प्रत्येक तांत्रिक पूजा में शंख के द्वारा अभिषेक का महात्म्य है। विवाह, युद्ध एवं पुण्यकर्मों की शुरुआत में शंख ध्वनि को पवित्र माना गया है।

अथर्ववेद में शंख-मणि सूक्त में कहा गया है कि यह शंख अंतरिक्ष, वायु ज्योतिर्मण्डल एवं सुवर्ण से उपलब्ध है। इसकी ध्वनि शत्रुओं को निर्बल करने वाली है। यह हमारा रक्षक है। स से उत्पन्न हुआ यह शंख राक्षसों व पिशाचों को वशीभूत करने वाला, रो अज्ञान एवं अलक्ष्मी (दरिद्रता) को दू करके आयु को बढ़ाता है। यह चंद्रमा के अमृत मंडल से उत्पन्न है, अतः इसे तां और वीर लोग अपने पास रखते हैं।

शंख के मुख्यतः दो प्रकार हैं। ए दक्षिणावर्त दूसरा वामावर्त। इसमें दाहि की ओर जिसका पर्दा खुला हुआ होता है उसे दक्षिणावर्त अर्थात दाहिना शंख और जिसका बायीं ओर से पर्दा खुला होता है वामावर्त शंख कहते हैं। बायीं ओर के शं बहुतायत में बड़ी आसानी से सुलभ हैं किंतु दाहिने शंख (दक्षिणावर्त) आसा से नहीं मिलते, बल्कि दुर्लभ होते हैं और इनका मूल्य भी बहुत ही अधिक होता है।

क्रमशः

हिने शंख के दो भेद हैं। एक नर ादा, शंख मोटी परतवाला, भारी का, नर शंख कहलाता है और पतली लिये हल्के वजन को मादा शंख े हैं।

ो शंख चिकना, गहरे सफेद रंग का त दिखायी देने वाला होता है, वह संज्ञा का शंख कहलाता है।

स शंख में कर्कशता दिखायी देती विभक्त रेखाएं तथा अधिक भार लाल रंग का होता है वह क्षत्रिय का शंख कहलाता है।

ो भारी होते हुए भी कोमल दिखायी हो और जिसकी आभा पीले रंग लिये ह शंख वैश्य संज्ञा का होता है और ंख टेढ़े-मेढ़े आकार का होकर कठोरता हो, अधिक भार के साथ काली आभा शंख शूद्र संज्ञक कहाता है।

ो शंख सिंदूरी आभा लिये छोटी पूंछ का होता है, ऐसा शंख **गणेश शंख** कहलाता है। यह बहुत कम मिलता है। पीले या लाल रंग की रेखाएं व लंबी पूंछ लिये शंख देवी शंख के रूप में माना जाता है और सफेद रंग या मोती-सी चमक लिये या दही जैसा दिखायी देने वाला **विष्णु** शंख कहलाता है।

गोल आकार, चिकनापन तथा निर्मलता ये तीन गुण उत्तम श्रेणी शंख के हैं।

दायां (दक्षिणावर्त) शंख जिसके घर में विधिवत प्रतिष्ठित होता है उसे न केवल राज-सम्मान मिलता है, बल्कि श्री-वृद्धि, यश, कीर्ति, जन सम्मान का सुख, सहज मिलता है और निःसंतान दंपत्ति को इसका पूजित दूध पिलाने से संतान देने में सहायक बनता है व अग्नि पीड़ा से बचाता हुआ अपमृत्यु से भी रक्षा करता है।

—बिचलावास, जोशी भवन,
रतलाम-४५७००१, म. प्र.

□

(पृष्ठ १४१ का शेषांश)

राष्ट्रीय सम्मान के किसी व्यक्तित्व, वह भारतीय हो या विदेशी की मृत्यु तिरंगा झुकाया जाये। यदि यह घटना राष्ट्रीय ध्वजारोहण पर्व पर हो, तो उस भवन का झंडा झुकाया जायेगा, जिस पर उस राष्ट्रीय महत्व के व्यक्तित्व का सम्मानित शव रखा हो। राष्ट्रीय गौरव, श्रद्धा और मान-मर्यादा के प्रतीक रूप में ये है तिरंगे की सामान्य ध्वज संहिता। **—परमेश्वरी भवन, अल्मोड़ा, उ. प्र.**

□

आह्वान

कोटि-कोटि कंठों से मिलकर जननी का जयगान करो,
बढ़ो देश के युवक-युवतियो, आज पुण्य प्रस्थान करो।

— राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी

□

दो क्षण हंस न लें!

दो क्षण ६५

एक मां अपने बेटे के बारे में पड़ोसिन को बता रही थी–

'बहन, समय समय की बात है। जिस बेटे को गिनती लिखनी सिखायी, वह अब मुझे पहाड़ा पढ़ाता है।'

०००

'हंसने से सेहत अच्छी रहती है।'

'ठीक कह रहे हो, बरखुरदार, लोग इसीलिए तो तुम पर हंसते हैं।'

०००

नया लेखक रचनाओं के साथ वापसी के लिए टिकट लगा लिफाफा भेजता है सफल लेखक सिर्फ रचना भेजता है, टिकट लगा लिफाफा नहीं, पर महान लेखक न रचना भेजता है, न लिफाफा।–**उषा टंडन**

०००

एक स्त्री ने अपनी सहेली से कहा, 'डाक्टर ने मेरे पति का हृदय-प्रत्यारोपण करके उन्हें जीवन-दान तो दे दिया, लेकिन अब उनके हृदय में वह प्यार नहीं रह गया है जो पहले था।'

'तब तो वह जरूर किसी ऐसे प्रेमी का
हृदय होगा, जिसने प्यार में धोखा
होगा !' सहेली ने कहा।

०००

पति के दफ्तर से लौटते ही
बरस पड़ी, 'क्यों जी ! तुम तो
खाकर कहते हो कि तुम रीना को
तक नहीं, फिर जब मैंने आज
तुमसे रीना बनकर बातें की तो
घुल-मिलकर बातें करते रहे।'

'क्योंकि मैं जानता था कि
तुम हो। रीना मुझसे कभी फोन पर
नहीं करती।' पति ने मुस्कराते हुए

०००

एक नेताजी ने डाक्टर से पूछा
कि मेरी दोनों आंखें देखने में
जैसी हैं, फिर भी आपने बिना
यह कैसे पहचान लिया कि मेरी
आंख शीशे की है ?'

'बात यह है कि आप की बायीं
ही मुझे सहानुभूति की एक
आयी !' डाक्टर ने कहा।

☐

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बंबई-४००
के लिए प्रकाशित तथा श्री वेंकटेश्वर प्रेस, ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास
बंबई–४०० ००४ में मुद्रित।

की पत्रिका 'भारती' से सम

नवनीत

हिन्दी डाइजेस

दीपावली विशेषांक

१९८

१०.००

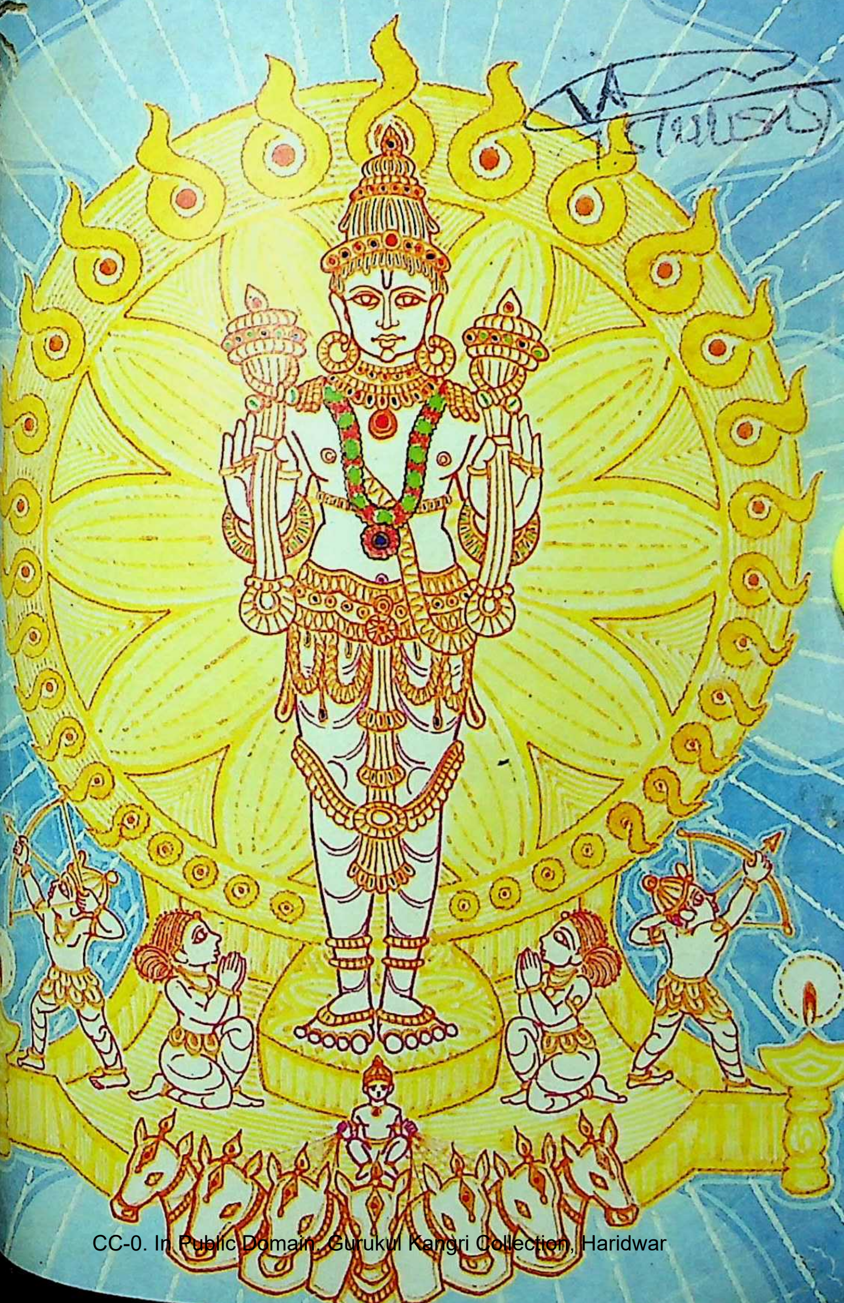

प्यार में धोखा
कहा।
००
से लौटते ही
ी ! तुम तो
तुम रीना को
मैंने आज फो
बातें की तो तु
करते रहे।'
ा था कि फो
कभी फोन पर
मुस्कराते हुए
००
ाक्टर से पूछा
दिखने में बिल्कु
पने बिना आं
या कि मेरी
ाप की बायीं
की एक
कहा।
-

बंई-४००
श्रीकृष्णदास

विश्व है
हमारा कैनवास...

यदि चालीस वर्ष पीछे नजर डालें तो हम देखेंगे कि भारत तब पूरी तरह विदेशी डाइज़ पर निर्भर था. और तब तक इस क्षेत्र में अतुल ने कदम नहीं रखा था. स्वदेशी डाइज़ के उत्पादन क्षेत्र में पहल हमने की... एक श्रद्धांजलि के रूप में, जो हमारे संस्थापक स्वर्गीय श्री कस्तूरभाई लालभाई की दूरदृष्टि को समर्पित थी.

आज अतुल न केवल डायस्टफ़ की विशाल श्रेणी का उत्पादन करते है बल्कि बुनियादी रसायन, डायस्टफ़ के माध्यम, फार्मास्युटिकल्स तथा कीटनाशकों का उत्पादन करके क़पड़े, चमडे, कागज़, हाथ से बने कपड़े, पिग्मेंट, पेट्रोलियम, जूट तथा साबुन जैसे विविध उद्योगों में देश को आत्मनिर्भर बनाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे है

अपनी १०० करोड़ की बिक्री और १० से भी
करोड़ रुपये के निर्यात द्वारा तेज़ी से विकास की
अग्रसर है. हमेशा उत्तम क्वालिटी के उत्पादन
करना ही हमारा उद्देश्य है जिसे हम पूरा करते हैं
आर एंड डी विभाग की सहायता से.

भारत में उद्योगों के कदम तीव्र गति से विकास के
अग्रसर है. और अतुल राष्ट्र की उपलब्धियों में
सहभागी रहा है.

THE
ATUL®
PRODUCTS LTD.
अतुल ३९६०२०, गुजरात, इंडिया, टेलेक्स : ०१७३ २३२
फोन : ATUL ६५, टेलीग्राम : TULA

श्री सूक्तम

अनुप्रणेता : श्रीनिधि द्विवेदी

आदिवेद ऋग्वेद के परिशिष्ट भाग के समान रुद्रयामलोक्त श्री सूक्त का अविकल
ुवाद यहां प्रस्तुत है। इंद्रयज्ञ भी इसी की ऋचाओं द्वारा संपन्न होता है। आद्याशक्ति
क्ष्मी का यह सर्वश्रेष्ठ स्तोत्र है।

15|7|84

गु० कां० विश्वविद्यालय
हरिद्वार

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो मऽआवह॥ १
कांति सुनहरी हरी मनहरी स्वर्ण रजत रंगी माला।
सोने चांदी की लक्ष्मी को जातवेद! मम हित ला ला॥ १

○○

तां मऽआवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्॥ २
अग्निदेव दो ऐसी लक्ष्मी जो सुस्थिर हो घर आवे।
जिससे सोना गाय अश्व जनवल धनवल बढ़ता जाये॥ २

○○

अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधनीम्।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मादेवी जुषताम्॥ ३
रत्नों के रथ में आओ मां! हस्तिनाद का हर्ष लिये।
रोको अश्व रहो मेरे घर देवी श्री उत्कर्ष हिये॥ ३

○○

कांसोस्मितां हिरण्यप्रकारामार्द्रां ज्वलंतीं तृप्तां तर्पयन्तीम्।
पद्मेस्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम्॥ ४
सोने चांदी की मधुर हंसी कितनी प्रोज्वल श्री प्रभामयी।
कमलासम कमलाभा कमला आओ मां लाओ तृप्ति नयी॥ ४

○○

चंद्रां प्रभासांयशसा ज्वलंतीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्।
तां पद्मनेमिं शरणं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणोमि॥ ५
यश प्रोज्वल चंद्रप्रभा, त्रिलोक सुरवंदित मातु उदारमना।
श्री कमलालये हरो अश्री शरणागत हूं अशरण शरणा॥ ५

आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्त्वथ वृक्षोऽ बिल्वः।
तस्य फलानि तपसा नुदंतु मायांतरायाश्च बाह्याऽअलक्ष्मीः॥ ६
दिनमणि शोभे ! तेरी श्री से है बिल्व वनस्पति का उद्गम।
उसके फल मम बहिरंतर की सब हरें अलक्ष्मी दुख दुर्दम॥ ६

∘ ∘

उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह।
प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिंददातु मे॥ ७
शिव सखा मुझे दे सुयश समणि भारत सुराष्ट्र का मैं जनगण।
दो सुख समृद्धि दो ऋद्धि सिद्धि मां लक्ष्मी करता पद वंदन॥ ७

∘ ∘

क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्।
अभूतिमसमृद्धिंच सर्वान्निर्णुद मे गृहात्॥८
जो भूख प्यास से मलिन बड़ी हे लक्ष्मि ! अलक्ष्मी नाश करूं।
अपने घर से सारी अभूति असमृद्धि आदि का ह्रास करूं॥८

∘ ∘

गंध द्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्।
ईश्वरीं सर्वं भूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्॥ ९
सुरभित सुमना दुर्धर्ष नित्य गज वाजि रत्न धन-धान्य भरी।
सब जीवों की मां श्रीलक्ष्मी आओ मेरे घर शुभंकरी॥ ९

∘ ∘

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमसीमहि।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः॥ १०
मन काम पूर्ण कल्पना सत्य पशु अन्नरूप सब सुख पाऊं।
तेरे प्रभाव से मां लक्ष्मी धन यश का आश्रय बन जाऊं॥ १०

∘ ∘

कर्दमेन प्रजाभूता मयि संभवकर्दम।
श्रियं वासय मे कुले मातरंपद्ममालिनीम्॥ ११
कर्दम ! तुमसे उत्पन्न प्रजा श्री का निवास हो मेरे घर
सर्व-दा सर्वदा मम कुल में हो स्थिर कमलमाला सुंदर॥ ११

आपः सृजन्तुस्निग्धानिचिक्लीत वस मे गृहे ।
निच देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ।। १२
चिक्लीत सजल हो स्नेह सृजन तुम मेरे घर आवास करो ।
श्रीसंग रहो मेरे कुल में हो सदय सदा धन-धान्य भरो ।। १२

००

आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिंगलांपद्ममालिनीम् ।
चंद्रां हिरण्यमयी लक्ष्मीं जातवेदो मऽआवह ।। १३
मेरे घर लाओं जातवेद ! लक्ष्मी तुम आर्द्रा पुष्करिणी ।
कंचनमाला सूर्या स्वर्णा स्वर्णाभा जग पालन करिणी ।। १३

००

आर्द्रां यःकरिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।
सूर्यां हरिण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो मऽआवह ।। १४
तुम अग्नि देव लाओं लक्ष्मी पिंगला दया करने वाली ।
कंचनमाला सूर्या स्वर्णा भक्तों के दुख हरने वाली ।। १४

००

तां मऽआवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं प्रभूतिं गावो दास्योऽश्वान्विदेयं पुरुषानहम् ।। १५
मेरे घर लाओं जातवेद ! लक्ष्मी सदैव रहने वाली ।
जिससे मैं पाऊं स्वर्ण विभव गज वाजि गाय धन यश लाली ।। १५

००

यः शुचिः प्रयतोभूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ।
सूक्तं पंचदशर्चं श्रीकामः सततं जपेत् ।। १६
श्रीकामी जो शुचि हो प्रतिदिन जपे पढ़े औ करे हवन ।
पंद्रह पुण्य ऋचायें श्रीनिधि करतीं सुसफल जग जीवन ।। १६

—नाग निकुंज, जवेरी बाजार, बंबई-२

नवनीत

संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग } किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ३७, अंक ११

संस्थापक : कन्हैयालाल मुं
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल नेवटिया
नवनीत : स्थापना १९५

नवंबर १९८

लेख : कथा राम की व्यथा मानव की : हरीन्द्र दवे ८; पवित्र और मंगलदा गोमाता : अशोक श्रीवास्तव 'अंजान' १२; जिया के बाद पाकिस्तान : रामपाल २०; दीपोत्सव का आध्यात्मिक महत्व : पं. सत्यकाम विद्यालंकार ३६; 'इन्हें बूझत नइ यां' : डा. राष्ट्रबंधु ४२; फरार वैज्ञानिक : प्रवासी विनयकृष्ण ६३; पत्नि नमस्तुभ्यं : डा. ए. एल. श्रीवास्तव ६५, 'सांझी' नारी के अंतः सौंद बाह्य रूप : डा. वासुदेव यादव ६८; दास्तान लक्ष्मी वाहन उल्लू की : बाल ७६; असंख्य आलोक पुष्प खिलें : प्रो. रमेश तिवारी वीरान ८०; फट-फट बजाती रेत : विनयकुमार ८५; प्राचीन विश्व में दिवाली : राजीव सक्सेना दक्षिणेश्वर काली मंदिर : डा. बुद्धिनाथ मिश्र ८९; अंधेरे में ज्योति किरण बनने स्त्री : बलबीर सिंह ११३; हिंदी बाल साहित्य : कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न : मदनगो शर्मा १२१; नोबेल पुरस्कार और महिलायें : आशारानी व्होरा १६१; कहानी और बालक : डा. उषा देवी सिंह १९६; उम्र लंबी हो पर बोझिल दुर्गाशंकर त्रिवेदी २०१; भारत में बैंक व्यवसाय : अशोक मित्र २०५; दीवाने : डा. विनोद गुप्त २१९।

परिचर्चा १ : क्या लक्ष्मी प्रथम पूज्या है ? : संयोजक : जगदीश कि

२ : इक्कीसवीं सदी के साहित्य से आपकी अपेक्षा ? महामहिम डॉ. शंकरद शर्मा, (उप-राष्ट्रपति, भारत); महामहिम श्री रामकृष्ण त्रिवेदी, (रा गुजरात), अमृतलाल नागर, पं. सत्यकाम विद्यालंकार, पं. नरेन्द्र शर्मा, पं. सीता चतुर्वेदी, डा. प्रभाकर माचवे, रामेश्वर शुक्ल अंचल, गोविन्द मिश्र, विष्णु प्रभा यशपाल जैन, कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, डा. जगदीश गुप्त, डा. लक्ष्मीशंकर

शंक, पं. बद्रीनारायण तिवारी, प्रो. कल्याणमल लोढ़ा, डा. राममूर्ति त्रिपाठी, के. पी. सक्सेना, मृणाल पांडे, वीरेन्द्रकुमार जैन, उमाशंकर शुक्ल, जयप्रकाश भारती, भुशरण द्विवेदी 'बंधु', डा. श्रीपाल सिंह 'क्षेम', शौरिराजन, रामेश्वरदयाल दुबे, नरेशचंद्र चतुर्वेदी, डा. उषा मेहता, क्षेमचंद्र सुमन ४५।

कविता : श्रीसूक्तम् : श्रीनिधि द्विवेदी ३; वह दीपों की माला भास्वर बद्रीप्रसाद गुप्त 'आर्य' ७; जल रे मेरे दीपक : बालकृष्ण गर्ग ३४; आती रहीं जाती रहीं दीवालियां : महीपाल ३५; कल्पनाओं का नीलाकाश : डा. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक' ३८; गीत : जवाहर 'इन्दु' ३९; दीप हर घर में जलायेंगे : डा. गिरिजाशंकर त्रिवेदी ४५; गीत : बालकृष्ण मिश्र ६४; काफिला : रामेश्बर शुक्ल 'अंचल' ७५; छंद-छटा : रामजीदास कपूर ८८; ग़ज़ल : मधुर नज्मी ९३; दो कविताएं : शरद सिंह ९५; अर्थों में भी जिया करो : रामेश्वरदयाल दुबे ९६; दोहे : हुल्लड़ मुरादाबादी १७९; वंदन करें : डा. गणेशदत्त सारस्वत १९१; रत्न भरी धरती की ज्योति भरी मांग : शिवसिंह 'सुमन' २१७; प्रभा बजाज; दिलीप तिवारी।

भविष्यफल : नवंबर १९८८; पं. वी. के. तिवारी २५।

विचित्र वृत्त : फरार वैज्ञानिक : प्रवासी विनयकृष्ण ६३;

संस्मरण : लाल और सफेद रेशमी धागे : अमृता प्रीतम १६; पिता-पुत्र : डा. अशोक गुजराती ४०; सेठ गोविंददास की विनयशीलता : मुकुन्ददास २२२।

यात्रा : कला और सौंदर्य के देश में : डा. राजेन्द्र वाजपेयी १७०।

कहानी : निर्मला भाभी (बंगला कहानी) : अमिया सेन ९७; पागल कुत्ता (मलयालम कहानी) : एस. के. पोट्टेकाट १०८; हेडमास्टर (तमिल कहानी) : एस. कंदास्वामी ११६; वह भूत (कन्नड कहानी) : मास्ति वेंकटेश अय्यंगार १२४; त्थर और पानी (हिंदी कहानी) : सुखवीर १२९; नया जमाना (चीनी कहानी) : कु. यू. १८०; शहतूत (उर्दू कहानी) : शौकत थानवी १८७; छोटा कद, बड़ा पद (बाल कहानी) : भगवतीप्रसाद द्विवेदी १९३।

धारावाहिक उपन्यास : बेलकली : अम्बिकाप्रसाद 'दिव्य' १३३।

हास्य-व्यंग्य : दो क्षण हंस न लें : डा. झूलन सिंह २२४।

स्वास्थ्य : उषःपान अमृतपान : उमेश पांडे २१५।

आवरण : ज्योतिर्धर : चित्र : कमलाक्ष शेणै।

चित्र-सज्जा : ओके, शेणै, चंदर, श्रीश्रीमाल।

ालय : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई-७ फोन : ८११४६२

शास्त्रीय रागों में वेदमन्त्रों की 'कैसट'

'विजन्स' VISIONS

निर्देशक : पं० सत्यकाम विद्यालंकार
गायक : सत्यशील देशपाण्डे
उद्घोषक : (हिन्दी या अंग्रेजी में)
प्रा० रूषीकुमार पंड्या

मूल्य ३० रुपये मात्र। डाक व्यय १० रुपये ४० पैसे। आज ही ४० रुपये ४० पैसे का मनीआर्डर भेजकर मंगवावें।

●

गीता प्रेमियों के लिए खुशखबरी
विश्व की सबसे छोटी साइज की
'श्रीमद्भगवद्गीता'
माहात्म्य सहित
सम्पूर्ण अठारहों अध्याय।

साइज २·५×२ से. मी. मय जिल्द के, ३×२·५ से. मी., पृष्ठ संख्या ३२० विक्रयार्थ उपलब्ध है। मूल्य २५ रुपये मात्र। डाक व्यय ५ रुपये ६० पैसे। आज ही ३० रुपये ६० पैसे का मनीआर्डर भेजकर मंगवावें।

●

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग (खेतवाडी), बम्बई-४०० ००४

हमारे यहां से वेद, वेदान्त, पुराण, इतिहास, धर्मशास्त्र, कर्मकाण्ड, ज्योतिष, आयुर्वेद, स्तोत्र, मंत्र, तुलसीकृत रामायण इत्यादि अनेक विषयों के हजारों ग्रंथ प्रकाशित होते हैं। बृहत्सूचीपत्र मुफ्त मंगा देखिये।

यह दीपों की माला भास्वर !

– बद्रीप्रसाद गुप्त 'आर्य' –

उपेक्षित कुहू निशा,
की चिनगारियां लिये ।
मुक्त, अति हर्ष युक्त
समिद्ध अर्चियां लिये ।
आगत पतिका-सी इतराती
पहने माणिक मेखला सुघर ।

के वक्षस्थल पर
विखरा ज्यों रश्मि जाल,
के गुंठित जूड़े पर
तारों की गुथी माल,
तम के पहाड़ से फूट पड़े
या ज्योति शिखाओं के निर्झर ।

घटाओं के उर में
संपाओं की धड़कन,
-मुंदते-से धूम्र बीच
सहस्त्राक्ष के सहस नयन,
या असित शिला के गुंबद पर,
अंकित हैं सोने के अक्षर ।

पिंग प्रसूनों से
हरीतिमा का दुकूल,
युक्त सरोवर में
कोकनद फूल-फूल,
माधवी प्यार पा, पुहपों से
या किंशुक-कानन गया सवंर ।

काले तम-फणियों ने निकाल
रख दीं या स्वेच्छा से मणियां,
नव तिमिर-कक्ष में गूंथ रही
मावस-बाला हीरक लड़ियां,
या श्याम प्रतीक्षा में अगणित
सखियों के अंखियां जगर मगर ।

यमुनांचल में उठ-उठ असंख्य
बुदबुदे नील नभ तक रहे,
जुगनू तमिस्र की चोली में
चमकते सितारे टांक रहे,
या वसुधा पर करते विलास
अंबर के जोतिष् पिंड उतर ।

तम को खा जाने के निमित्त
खोले प्रकाश ने तीक्ष्ण रदन,
लक्ष्मी ने हंसकर बिखराये
कंचन नगरी में कोटि रतन,
या श्रम का करती स्वर्णतिलक
यह धरती पाकर पुण्य प्रहर ।

जननी के पावन मंदिर में
मुस्काते कोटिक नीराजन,
दृढ़ राष्ट्र साधना के तप से
ज्योतित भक्तों के भावुक मन,
या स्वर्ण अक्षरों से लिख दी
कवि ने वीरों की कथा अमर ।

— आर्यजी नगर, बिंदकी, उ. प्र. —

सांस्कृतिक निरूपण—२४

कथा राम की, व्यथा मानव की

हरीश

अयोध्याकांड का सबसे महत्वपूर्ण पात्र 'मंथरा' है। मंथरा राम के वनवास का कारण बनी। किंतु अरण्यकांड की कथा को गति देने वाला पात्र 'शूर्पणखा' है। शूर्पणखा का अरण्यकांड में प्रवेश न हुआ होता तो राम और रावण का सामना होने का मौका कैसे मिलता?

शूर्पणखा के कारण राम के वनवास का शेष समय रावण के साथ भीषण संघर्ष करने में बीतता है। इसी शूर्पणखा के प्रथम प्रवेश के वक्त राम और लक्ष्मण उसकी हंसी उड़ाते हैं। शूर्पणखा राक्षसी है, परंतु स्त्री तो है न! वाल्मीकि कवि न्याय को छोड़ते नहीं। राम तथा लक्ष्मण शूर्पणखा के साथ-साथ उसकी स्त्रीत्व की गरिमा का मजाक करते हैं, शूर्पणखा के नाक-कान काट लेते हैं, उसके बाद ही रावण को सीता-हरण की प्रेरणा मिलती है।

शूर्पणखा राम पर मोहित हो जाती है। वह राम को निरख रही है तब कवि दोनों के भेद का निरूपण करते हैं—

सुमुखं दुर्मुखी रामं
वृत्तमध्यं महोदरी
विशालाक्षं विरूपाक्षी
सुकेशं ताम्रमूर्धजा
प्रियरूपं विरूपा सा
सुस्वरं भैरवस्वना
(अर. १७-९-१

राम सुमुख हैं: शूर्पणखा दुर्मुख
राम का मध्य भाग (कमर और उ
दुबला है; शूर्पणखा महोदरी है। रा
नेत्र विशाल हैं, शूर्पणखा के विरूप;
के केश सुंदर है, शूर्पणखा के तांबे जैसे
राम का रूप प्रियकर है, शूर्पणखा
विकृत। राम सुस्वर में (मीठी आवाज
बोलते हैं, शूर्पणखा भैरवनाद में बोलती

शूर्पणखा राम के पास आकर कहती
'इन राक्षसों के प्रदेश में तुम क्यों आ
तुम कौन हो? यहां आने का तुम्
प्रयोजन क्या?'

राम अपना परिचय देते हैं।
शूर्पणखा का परिचय पूछते हैं। शूर्प
अपना परिचय देती है। साथ ही
मन की बात भी कहती है। राम के '
दर्शन' से मोहित हुई शूर्पणखा कहती है

समुपेतास्मि भावेन
भर्तारं पुरुषोत्तमम्
(अर. १७-२

ऐसे पुरुषोत्तम को भर्तार रूप में पाने की च्छा से मैं आपके सामने उपस्थित हूं ।

शूर्पणखा राम के प्रति अपनी भावना ट करके ही रुक गयी होती तो राम को का मजाक उड़ाने का मन न हुआ होता । तु वह तो विरूप, निर्णतोदरी (चिपके वाली, वगैरह शब्दों द्वारा सीता के की निंदा करने लगती है । 'सीता' रे योग्य नहीं है, मैं ही हूं ऐसा कहती सीता तथा लक्ष्मण को मैं खा जाऊंगी,' र फिर राम के साथ स्वयं दंडकारण्य में र करने की बात कहती है ।

राम शूर्पणखा को अपनी ओर से 'ना' र बात खत्म नहीं करते । किंतु लक्ष्मण म की प्रशंसा करते हुए कहते हैं : के साथ अभी कोई स्त्री नहीं है; वह ान है, इसलिए . . . .'

अनुरूपस्च ते भर्ता
रूपस्यास्य भविष्यति

(अर. १८-४)

तुम्हारे सुंदर रूप के लायक भर्ता तो म ही है, राम के इस वाक्य के व्यंग समझे बिना शूर्पणखा लक्ष्मण के पास जाती है । लक्ष्मण उसे फिर राम के भेज देता है । लक्ष्मण का मजाक भी खा नहीं समझ पाती, किंतु लक्ष्मण के उसके गले उतरता है कि 'मैं तो हूं । दास से ब्याह करके तू दासी । इससे बेहतर है कि स्वामी से ही करे !'

राम और लक्ष्मण का ऐसा व्यवहार उनके लिए उचित था या नहीं, ऐसा सवाल इस प्रसंग को पढ़ने के बाद हमेशा उठा है । कुछ कवियों ने इस प्रसंग को काफी उछाला है । शूर्पणखा राक्षसी है । उसके साथ न तो राम को ब्याह करना है न लक्ष्मण को । तो फिर दोनों एक राक्षसी का भी ऐसा मजाक उड़ायें; क्या यह उचित है ? राम और लक्ष्मण दोनों के द्वारा अपमानित शूर्पणखा क्रोधाविष्ट होकर सीता पर हमला करती है, तब राम गुस्से में लक्ष्मण से कहते हैं : 'क्रूर कर्म करने वाले अनार्यों के साथ हंसी-मजाक भी अच्छा नहीं ।' ये शब्द भी क्षेपक हों ऐसा लगता है । जो राम रीछ-वानरों को भी 'अपने' मानकर सम्मान देते हैं, वे अनार्यों के लिए ऐसी नापसंदगी दिखायें यह कुछ जंचता नहीं । राम ने तो भील, आदिवासी इत्यादि सभी वर्णों के लोगों को आत्मीय माना था । ऐसे राम जाति के नाम से संकुचित होकर आलोचना करें, ऐसी कल्पना ठीक नहीं लगती । इतना ही नहीं, राम लक्ष्मण से

कहते हैं : 'तुम्हें चाहिये कि तुम इस राक्षसी का कोई अंग विच्छेद करके इसे कुरूप बना दो।' इसके बाद होने वाले सारे अनर्थों की जड़ यह सूचना है। शूर्पणखा की हंसी करके उसे छेड़ने के बदले पहले से राक्षसी के रूप में सामना किया होता तो उसका स्त्रीत्व इतना घायल न हुआ होता। यह पूरा प्रसंग वाल्मीकि की भाषा के प्रवाह में जरा अलग ढंग से लिखा गया है। शूर्पणखा ने अपने भाइयों को राम और लक्ष्मण के विरुद्ध भड़काया था; वह मूल वाल्मीकि की घटना है; किंतु राम तथा लक्ष्मण का शूर्पणखा के साथ का व्यवहार तनिक भी योग्य नहीं।

इसके आगे की कथा सुविदित है। रावण का भाई खर चौदह राक्षसों को राम के वध के लिए भेजता है। उन सबको राम खत्म कर देते हैं। फिर चौदह हजार राक्षसों की सेना के साथ खर तथा दूषण दोनों राम से लड़ने निकल पड़ते हैं। राम अकेले ही इस विराट सेना का सामना करते हैं। लक्ष्मण को सीता की रक्षा के लिए पर्वत की गुफा में भेजकर राम अकेले ही युद्ध करने आये तब असंख्य राक्षसों के शस्त्रों को राम किस तरह निगल लेते हैं, इसका वर्णन कवि ने यों किया है –

प्रतिजग्राह विशिखै–
र्नद्योघानिव सागरः
(अर. २५-१३)

जैसे समुद्र असंख्य नदियों के प्रवाह को स्वयं अपने में समा लेता है, वैसे राम ने राक्षसों के यक्ष शस्त्रों को अपने बाणों द्वारा ग्रस लिया। दूषण, तीन माथेवाले त्रिशि
और अंत में स्वयं खर की हत्या के
वह स्थान राक्षस रहित हो गया। एक
अकंपन नाम का राक्षस बच गया था,
लंका में खर-दूषण के बड़े भाई रावण
इस सर्वनाश की खबर देता है। यह
अरण्यकांड के एकतीसवें अध्याय से
का पात्र सक्रिय होता है। जनस्थान
राक्षसों के संहार की बात जानकर
को बेहद गुस्सा आता है, उस समय
राम का वर्णन इस तरह करता है :

रामो नाम महातेजाः
श्रेष्ठः सर्वधनुष्मताम
दिव्यास्त्रगुणसंपन्नः
परं धर्मं गतो युधि
(अर. ३१-

राम सारे धनुर्धरों में श्रेष्ठ हैं। दि
के जानकार है। युद्ध में तो वे परम
को प्राप्त वीर हैं। अकंपन आगे राव
कहता है –

नहि रामो दशग्रीव
शक्यो जेतुं रणे त्वया
रक्षसां वापि लोकेन
स्वर्गः पापजनैरिव
(अर. ३१-

हे दश मस्तकवाले राजा, तुम
राम को नहीं जीत सकोगे। पापी जैसे
में नहीं, रह सकता वैसे आपका संपूर्ण
जगत् राम को नहीं जीत सकता।

अकंपन रावण से परम सत्य कह
किंतु ऐसे सत्य वचन के बावजूद

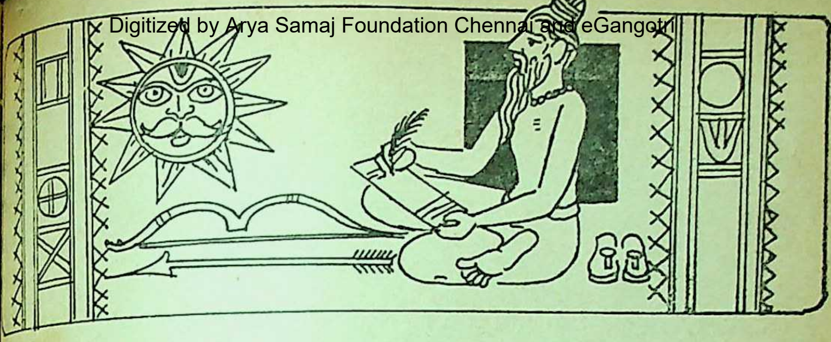

की महिमा जान न सका । वह कहता है राम की पत्नी सीता देवकन्या, गंधर्वी अप्सरा या पन्नगी (नागकन्या) से भी अधिक रूपवती है । तुम यदि सीता का अपहरण कर लो तो राम उसके विरह में प्राण त्याग देंगे ।'

सब सुनने के बाद रावण सीताहरण के लिए निकल पड़ता है । इस काम के लिए वह ताटका के पुत्र मारीच के पास जाता है । मारीच ऋषि है । रावण उसे अपने प्रयोजन की बात करता है–

उसे सुनकर मारीच कहता है :

सीतामिहानयस्वेति
को ब्रवीति ब्रवीहि मे
(अर. ३१-४३)

सीता का हरण करके उसे यहां ले आने की सलाह देने वाला भला कौन है जरा मुझे कहें तो । राक्षस कुल का और आपका इतना बड़ा शत्रु कौन है ? मारीच राम के पराक्रम का वर्णन करता है :

प्रसीद लंकेश्वर राक्षसेन्द्र
लंका प्रसन्नो भव साधु गच्छ,
त्वं स्वेषु दारेषु रमस्व नित्यं
रामः सभार्यो रमतां वनेषु
(अर. ३१-४९)

'हे लंकेश्वर, आप प्रसन्न होवें, प्रसन्न रहें और लंका लौट जायें । आप लंका जाकर अपनी पत्नियों के साथ आनंद से रहें और राम को उनकी पत्नी के साथ वनविहार करने दें । राम को छेड़ने में सार नहीं ।'

मारीच की यह बात सुनकर सीताहरण का विचार छोड़कर, रावण लंका लौट जाता है । **(क्रमशः)**

[रूपांतर : नंदिनी मेहता]

□

एक बार संगीत में रुचि रखने वाला एक महत्वाकांक्षी युवक सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ श्री मोजार्ट के यहां गया और उनसे पूछने लगा कि 'लंबे-लंबे गीतों की स्वर-लिपियाँ कैसे लिखी जाती है ?'

मोजार्ट ने कहा–'अभी तुम लड़के हो, पहले 'बैलड' की स्वर-लिपि लिखो । जब उसमें सफल हो जाओ, तब आगे बढ़ना ।'

'क्यों ? आप तो दस वर्ष के थे, तभी लंबे गीतों की स्वर-लिपि लिखने लगे थे ?'

'ठीक है, पर मैं किसी से पूछने नहीं जाता था !' **–सुरेंद्र अग्निहोत्री**

पवित्र और मंगलदायिनी गोमाता

☐ अशोक श्रीवास्तव 'अंजान'

ऋग्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, और यजुर्वेद तथा शास्त्रों के मंत्रों में गायत्री मंत्र सारभूत होने से सर्वश्रेष्ठ माना गया है। इसी तरह दूध देने वाले पशुओं में गाय और उसका दूध, दही, घृत सर्वश्रेष्ठ माना गया है। क्योंकि गाय का उल्लेख वेदों के मंत्रों में है और गाय के दूध, घृत आदि के बिना वेदों के कर्म संपन्न नहीं हो सकते।

पशुधन को ही वेद मंत्रों में सबसे उत्कृष्ट धन माना गया है। जिसमें गाय का स्थान उच्चकोटि पर है।

स नः पवस्व शं गवेवं जनाय
शमर्वते, शं राजन्नोषधीभ्यः।

(सामवेद उत्तरार्चिक १।१।३)

अर्थात, हे परमात्मन् हमको ऐसी प्रेरणा दीजिये कि हम गायों के प्रति शुभकारी हों, अपने नौकरों-चाकरों के प्रति शुभकारी हों, घोड़ों के प्रति, वृक्षों-लताओं के प्रति शुभकारी तथा उन्नतकारी हों।

इस मंत्र में गाय और घोड़े का विशेष उल्लेख है, क्योंकि यह सबसे अधिक उपकारी हैं। इस यौगिक अर्थ में वे सब पशु धेनु हैं, जिनका दूध पिया जाता है। हमारे यहां गाय, बकरी और भैंस धेनु हैं। सभी पशुओं में गाय को श्रेष्ठ माना गया है।

संस्कृत भाषा में 'गो' शब्द के कई अर्थ हैं-

क्षीरं चान्नं तथा ज्ञानं, लोकेभ्यो दीयते यया।
गोमाता सा सदा सेव्या, धेनुः पृथ्वी सरस्वती॥

धेनु हमारी माता है, क्योंकि वह दूध देती है। पृथ्वी माता है, क्योंकि वह अन्न देती है। सरस्वती (वाणी) माता है क्योंकि वह ज्ञान देती है। धेनु, पृथ्वी, और वाणी—तीनों के लिए संस्कृत में 'गो' शब्द आता है। इसी आशय का वेदमंत्र है।

इन्द्रा युवं वरूण भूतमस्या धियः प्रेतारा, वृषभेव धेनोः।
सा नो दुहीयद् यवसेव गत्वी सहस्रधारा, पयसा महीगौः॥

(ऋग्वेद ४।४१।५)

हे इंद्र और वरुण, तुम दोनों हमारी इस प्रार्थना के प्रेरक हो। जैसे बैल गाय के। यह प्रार्थना हमको इस प्रकार फल दे जैसे घास खाने वाली गाय सहस्रधार दूध से हमको तृप्त करती है।

इहैव गाव एतनेहो शकेव पुष्यत।
इहैवोत प्र जायध्वं मयि संज्ञानमस्तु वः॥

(अथर्ववेद ३।१४।४)

अर्थात्—हे गोमाता, आप मेरे घर में आवें और भोजन खा-खाकर हृष्ट-पुष्ट

में तुम्हारा असीम प्रेम-स्नेह हो ।

अविभ्युषिरस्मिन् गोष्ठे करीषिणीः ।

सोम्यं मध्यवनमीवा उपेतन ।।

माता, आप हमारी गोशाला में के साथ-साथ प्रेम से रहो और यहीं । आप सोम के समान गुणकारी दो और हमेशा निरोगी रहो ।

गावो गोपतिना सचध्वमयं
गोष्ठ इह पोषविष्णुः ।
सोषेण बहुला भवंतीर्जीवा
तीरूप वः सदेम ।।

(अथर्ववेद ३।१४।६)

ओ, मुझ गोपति के साथ रहो । यहां यह गोशाला तुम्हारी पोषण करने वाली हो, धन-धान्य से पुष्ट होकर तुम बढ़ो । हम मनुष्य जीव, तुम जीती हुई गोमाता की अटूट सेवा करें ।

समग्र वेदों में यह स्पष्ट ही कहा गया है कि जो गाय को मारता, उसे कष्ट देता है वह महान पाप का भागीदार होता है । जो लोग गोमाता को प्रताड़ित कर उसे रिपु समझकर कष्ट देते हैं, वे लोग संसार के सबसे बड़े पापी और दनुज माने जाते हैं । इस आशय का श्लोक है –

अध्न्यनया इति गवां नाम कर एता हंतुमर्हति ।
महच्चकाराकुशलं वृषं गां वावभेत्तुं यः ।।

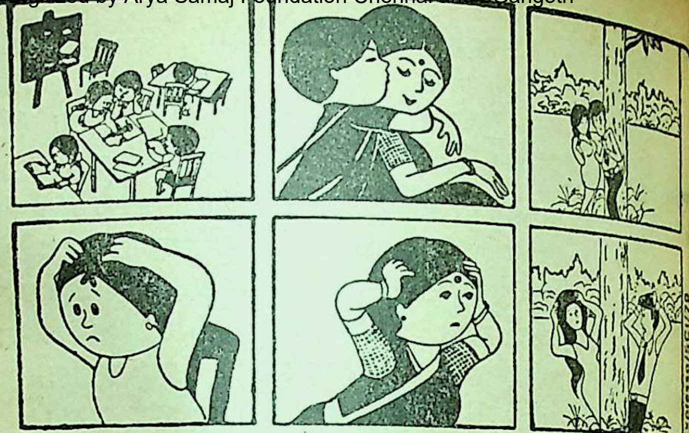

जहाँ मिले दो सर
जूँ को मिले नया घर

स्कूल हो या घर बाग हो या थिएटर
जूं को यों ही मिलता है फैलने का अवसर
लाइसिल अल्कोहल-रहित हैं
अन्य जूं नाशकों की तरह लाइसिल
सूखकर उड़ता नहीं वह सिर की कुदरती नमी
और आवश्यक तेल को खत्म नहीं करता
यही वजह है कि लाइसिल से रूसी पैदा नहीं
होती, बाल रूखे-सूखे नहीं रहते बल्कि
जूं रहीत व मुलायम हो जाते हैं.
लाइसिल आयुर्वेदिक तेल पर आधारित हैं
मनमोहक सुगंधवाला लाइसिल, आयुर्वेदिक
तेल पर आधारित हैं. यह जूं और लीख
का नाश तो करता ही हैं, साथ ही सिर की
त्वचा और बालों को निरोगी रखकर
रूसी या पपड़ी पैदा नहीं होने देता.
अधिकांश डॉक्टर लाइसिल इस्तेमाल
करने की ही सलाह देते हैं.

LiCEL®
LiCEL

तेज असर,
सुरक्षित व अचूक उपाय
सुजानिल्स®
लाइसिल
सुवासित जूँ नाशक

सुजानिल केमो इंडस्ट्रिज
गणेश नगर, चिंचवड, पुणे ४११ ०३३

दीपावली की शुभकामना

दीपावली के मंगलमय अवसर पर हम आपके परिवार के सुख, सौमनस्य एवं र्य की कामना करते हैं। आपने पाठक, लेखक, शुभचिंतक एवं विज्ञापनदाता के में नवनीत को जो स्नेह दिया है, उसके लिए हम आपके आभारी हैं।

भवदीय – **नवनीत-परिवार**

(महा. शा. पर्व २६२।४७)

र्थात्, जब गोमाता का नाम ही अघ्न्य- है, तब इसका वध भला कौन कर ता है? जो गाय और वृषभ का वध ता है वह कभी कुशल से नहीं रह सकता। हां गाय को अथर्ववेद मंत्र में विश्व- गोरूपम् कहा गया है –

अग्निर्ललाटं यमः कृकाटम् एतद्,
वं विश्वरूपं सर्वरूपम् गोरूपम्।

(अथर्ववेद ९।७।१, २५)

ाय हमें अनुरक्ति का पाठ पढ़ाती है। तरह गाय अपने वत्स को लाड़-प्यार स्तनपान कराती हैं, उसी प्रकार हमारा र्तव्य है कि उसके प्रति कठोर व्यवहार न करें।

ऋग्वेद में गाय को माता और वृषभ पिता तुल्य मानकर मान्यता प्रदान की है –

गोमें माता वृषभः पिता मे,
दिवं शर्म जगति मे प्रतिष्ठा। (ऋग्वेद)

अग्नि पुराण से स्पष्ट होता है कि–

गावः पवित्रा मांगल्या गोषुलोकाः
प्रतिष्ठिताः। (अग्निपुराण–२९२)

अर्थात्, गौयें पवित्र और मंगलदायिनी हैं। समस्त लोक गो में ही प्रतिष्ठित है।

महाभारत में गाय की रक्षा पर महत्व दिया गया है। मानव द्वारा मानव की रक्षा करना या मानव द्वारा गोमाता की रक्षा करना एक समान माना है।

गो कृते स्त्रीकृते चैव गुरु विप्रकृतेऽवि वा।
हन्यन्ते ये तु राजेन्द्र शक्रलोकं व्रजन्ति ते॥

(महाभारत गा. १००-११८)

स्पष्ट किया गया है कि जो मनुष्य गो रक्षा, अबला स्त्री की रक्षा एवं ब्राह्मण और गुरु की रक्षा के लिए प्राण दे देता है, उस मनुष्य को स्वर्गलोक की प्राप्ति होती है।

माता रूद्राणां दुहिता वसूनां,
स्वसाऽऽदित्यानममृतस्य नाभिः।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय,
मा गामनागामदिति वधिष्ट॥

(ऋग्वेद ८।१०।१।१५)

अर्थात्, गाय रुद्रों की माता, वसुओं की कन्या एवं अर्यमा की बहन है। यह अमृत की नाभि है, इस अदिति स्वरूप गाय का कोई वध न करे। **–लक्ष्मी नारायणजी मंदिर, सूरज पोल दरवाजा, जयपुर, राजस्थान**

लाल और सफेद रेशमी धागे

☐ अमृता प्रीत

आज प्रभु ने आकाश से पेड़-पौधों को सींचने का निश्चय किया। सुबह से ही बूंदाबांदी हो रही थी। प्रभु के आकाश से भेजे जल ने मेरे हर पेड़-पौधे को धोकर स्वच्छ कर दिया था। गर्मी के तपते दिनों में, जब मैं अपने पौधों पर पानी का छिड़काव किया करती थी, मेरी निगाह नींबू, अनार, आड़ू, मग्नोलिया, चंपक, और मंदिर में चढ़ाये जाने वाले फूलों के पेड़-पौधों की फुनगियों पर पड़ा करती थी, जिन्हें मैं धो नहीं पाती थी। उन्हें देखकर, मैं आकाश की ओर उत्कटता से देखती हुई, प्रार्थना करती, 'प्यारे प्रभु! देखो, मेरे पेड़-पौधों की पत्तियां और शाखाएं कितनी मैली और धूलभरी-हो गयी हैं! उन्हें सीधे आकाश से जल, सिंचित करो।'

शाम बीतने वाली थी। मेरा मन अपने चारों ओर लहलहाती पत्तियों और कलियों की भांति ताज़ा था। मैंने मेज की ड्रॉअर खोलकर, उसमें से सफ़ेद व लाल धागों की वे लड़ियां बाहर निकालीं, जो बल्गारिया के कवि ल्यूशेमीर लेशशेव ने एक पत्र के साथ भेजी थीं, जिसमें लिखा था, 'अमृता! यह संकेत है इस बात का कि बहार की ऋतु वसंत का आगमन हो चुका है। हम बल्गारियावासी इस अवसर पर मित्रों को सफेद व लाल रेशमी धागे हैं, जो उन्हें प्रेम का संदेश देते हैं। लाएं इन धागों को कंगन की भांति कलाइयों में बांधती हैं, और पुरुष बख्तर और हथियारों पर इन्हें पिघलने तक, और जब तक वसंत ऋतु पहला पक्षी आकाश में ऊंची उड़ान लगा लेता, तब तक उतारा नहीं बाद में, इन्हें घर के निकट की प्रस्फुटित शाखा में बांध दिया जाता है। प्रिय मित्र, इस शुभ अवसर पर मैं यह स्नेह-प्रतीक अपनी शुभकामनाओं साथ भेज रहा हू...।'

कलम और किताबें–अकेले हथियार

उसी दिन, मैंने दो धागे अपनी विलिया लता में बांध दिये, और शेष संभालकर रख दिया। उन्हें रखते मेरे मन में यह विचार था कि मैं अपनी अगली पुस्तक को, जब वह आ जायेगी, बांधूंगी। और, उसी दिन, लेवशेव को लिखा, 'कवियों और लेखकों अकेले हथियार हैं–उनकी कलम और किताबें। मेरी किताब ही मेरा बख्तर है। सोचकर मैंने यह निश्चय किया था कि

ों से अपनी अगली पुस्तक को बांधूंगी। बल्गारिया की इस खूबसूरत परंपरा में नया आयाम जोड़ा है कि हर साहित्य-र को अपनी नयी पुस्तक को इन धागों बांधना चाहिये, इस कामना के साथ कि की नयी कृति सबको सुख और हर्ष न करे। विश्व-बंधुत्व और विश्वशांति प्रसार का एक सशक्त माध्यम बने।

और, यही वह दिन था, जिस दिन मेरा काव्य-संग्रह नार्वे से प्रकाशित हुआ। किस्तान के एक शायर मसूद मुनव्वर ने उर्दू में तर्जुमा कर, नार्वे से प्रकाशित था। और, जब मैंने इस काव्य ह की एक प्रति को बल्गारिया से भेजे सफ़ेद व लाल भागों से बांधा, तो मेरी ों के सामने वसंत ऋतु की एक और तस्वीर आ गयी, जिसमें दुनिया का हर आज़ाद था, और सब मुल्कों के बीच और भाईचारा था।

ल्गारिया के इतिहास के कुछ पृष्ठ

ठीक साढ़े-पांच बजे, बल्गारिया के दूत श्री तौशेव मेरे घर तशरीफ़ लाये। न्होंने मुझे बताया, 'हम बल्गारियावासी नी स्वाधीनता की चालीसवीं वर्षगांठ रहे हैं। हमारे राष्ट्रपति ने इस अवसर आपको एक पदक प्रदान किया है, जो -बल्गारिया-मैत्री के प्रतीक के रूप में आपको स्वयं देने आया हूं।'

वसंत ऋतु का जो नया चेहरा मेरे अभी-अभी आया था, वह इस पदक हाथ में आते ही, बदलकर पदक के रूप में परिवर्तित हो गया। उस पदक के रूप में जो विश्व-बंधुत्व व विश्व-शांति का प्रतीक था।

और, उस क्षण अपने देश की स्वतंत्रता के लिए लड़ने वाले बल्गारियावासियों का इतिहास मेरी आंखों के सामने घूम गया। इस रक्तरंजित इतिहास के पृष्ठों के बीच एक चेहरा विशेष रूप से उभरा। हर्षिटो वोटेव का, जिसने १२८ सैनानियों का नेतृत्व कर बल्गारिया को टर्की के चंगुल से मुक्त कराने का प्रयास किया था, और इस प्रयास में टर्कों द्वारा कुल्हाड़ी से मारा गया था। यह दुर्घटना जुलाई, १८६८ में घटी थी।

२८-वर्षीय वोटेव कवि था। उसने मरने से पूर्व अपनी प्रेमिका को लिखा था:

'प्रिये, मेरे लिए रूखे और ऊंचे स्वर में गाओ कैसे जवानी निराशा में नष्ट होती है, और सपने बह जाते हैं, कैसे शोक-संतप्त महिलाएं विलाप करती हैं, और बच्चे चिल्लाते हैं।'

मुझे वह दिन याद आया, जब मैं वोटेव के गांव में गयी थी, और सारा गांव उसके निवास-स्थान पर एकत्र होकर उसे श्रद्धांजलि अर्पित कर रहा था। लोग उसकी कब्र पर फूल डाल रहे थे, और उसकी कविताओं का पाठ कर रहे थे।

और, उसके बाद, बल्गारिया के रक्तरंजित इतिहास का एक और पृष्ठ मेरे सामने उभर कर, मुस्कराया। और, इस योद्धा-कवि ज्योमिलोव के ये शब्द मेरे कानों में गूंजने लगे।

'चलो, साथियो ! हम अपने रस्से आकाश में छितरायें !
और स्वयं भगवान के स्वर्ग को उनमें बांधकर अपने दरवाजे पर ले आयें,
और फिर इन्हीं रस्सों को पृथ्वी के गले में बांध दें।'

आततायियों ने १९२५ में ज्योमिलोव का वध किया था। लेकिन, उसने मरने से पहले जो रस्से आकाश में छितराये थे, वे आज भी वहां मौजूद हैं। आज उसका मुल्क आज़ाद है, और अपनी आजादी की चालीसवीं सालगिरह मना रहा है।

बल्गारिया के रक्तरंजित इतिहास के पृष्ठों से एक और चेहरे ने झांका। यह चेहरा निकोला वाप्तसारोव का था। मेरे कानों में उसके ये स्पष्ट और बुलंद स्वर गूंजे-मेरी आस्था को मार सके, वह गोली अभी नहीं बनी है।'

वाप्तसारोव को नाज़ियों ने २३ जुलाई, १९४२ को गोलियों से भून डाला था। और मैं सोच रही थी कि नाज़ियों की गोलियों ने उसके शरीर को ख़त्म कर दिया था लेकिन, उसकी आस्था आज भी जीवित है और, बल्गारिया अपनी आज़ादी की चा सवीं सालगिरह मनाने के साथ-साथ इस आस्था के अक्षुण्ण होने का समारोह भी मना रहा है।

श्री तौशेव मेरे कमरे में टेबुल-लै

KNOW WELL ABOUT THE RAW MATERIALS YOU U
WHETHER IT IS

CAUSTIC SODA, CHLORO-SOLVENTS, UPGRADED ILMENITE, UTOX,
SODA ASH, SODA BICARB, AMMONIUM BICARBONATE
CALCIUM CHLORIDE, MEGISIUM CHLORIDE, LIQUID
BROMINE, SALT, P. V. C. RESIN.

PRODUCED BY US

OUR TECHNICAL SERVICE DEPARTMENT WILL HELP
YOU TO PRODUCE QUALITY PRODUCTS

Please Wiite to **DCW LIMITED,**
Nirmal, 3rd Floor, Nariman Point, **Bombay-400 021.**
Phones : **2024278, 2024330, 2024427, 2020743**
Gram : SODACHEM, *Telex* : 011-2362
D. C. W. – working to a "**CHEMICAL**" future

न रखे एक फोटो को बड़े ध्यान से देखने लगते हैं। १७ दिसंबर, १९८३ को लिया गया था यह फोटो, जिसमें शांतिनिकेतन में श्रीमती गांधी मुझे डि. लिट. की उपाधि प्रदान कर रही हैं। कुछ क्षण तक, श्रीमती गांधी को खामोशी से देखने के बाद, श्री तौशेव कहने लगे, '२६ अक्तूबर को मुझे श्रीमती गांधी से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था।... उस समय, मैं यह कल्पना भी नहीं कर सकता था कि मैं आखिरी बार उनके दर्शन कर रहा हूं, और पांच दिन बाद– ३१ अक्तूबर को उनका दुखद अंत हो गया। हम राजनयिकों को सिखाया जाता है कि हम कभी भावुक न बनें। किंतु, जब उनके निधन के बाद, मैं दोबारा उसी घर में गया, जो अब एक स्मारक है, तो मेरी आंखों में अनायास आंसू आ गये।'

और, मुझे याद आ गये, अपनी आज़ादी की लड़ाई के दिन! और, वे दिन, जब हम आज़ाद हुए, और हमारी आज़ादी का यह वृक्ष बढ़ने, पनपने, पल्लवित होने लगा.... और फिर, श्रीमती गांधी की हत्या... बाद में अनगिनत बेकसूर लोगों की हत्या। सब ओर भड़कती... सबको लीलती हिंसा की आग!

एक असह्य दर्द से मेरा सर चकराने लगा। हमारी वसंत ऋतु में यह अचानक पतझड़ कहां से आ गया!

मेरी उदासी को समझ कर, श्री तौशेव कहने लगे, 'बड़ी शक्तियां ऐसे हौलनाक खेल क्यों खेलती हैं? पहले दूसरे देशों के युवकों को हथियार देना, और फिर हमदर्दी जताना!'

श्री तौशेव अभी-अभी गये हैं, लेकिन वह पदक और सफ़ेद और लाल रेशमी धागों से बंधी मेरी नयी पुस्तक, ये दोनों मेज़ पर पड़े हैं, और मेरे कमरे में अंधेरा आना शुरू हो गया है।

और तभी, सहसा, आने वाले कल के सूरज की चमकती जगमगाती किरणों का ध्यान आता है मुझे। मेरे ज़हन में यह भी खयाल आता है कि ये लाल और सफ़ेद रेशमी धागे आतंकवादियों की बांहों पर बांध दूं, और कहूं, 'दोस्तो! तुम हमारी धरती के फूल हो... फूल सुगंध बिखेरते हैं, गोलियां नहीं।... इन धागों को हमारे जनतंत्र के वृक्ष की शाखाओं पर बांध दो, ताकि आज़ादी की वसंत-बहार कायम रहे।'

(रविवारीय 'इंडियन पोस्ट' से साभार)

[प्रस्तुति : हरि]

कालूराम ने पुत्र को खेती करने का आदेश दिया। कई दिन बाद पूछा–'बेटा, तेरी खेती का क्या हुआ?'

'खूब लहलहा रही है, पिताजी!' बालक ने उत्तर दिया–'मैंने शरीर रूपी खेत में सत्कर्म का हल चलाया। उसमें ईश-भजन के बीज बोये, सत्संग की खाद दी और संतोष के जल से सींचा है, अब क्या है सर्वत्र आनंद का अन्न उग रहा है।' उत्तर सुनकर पिता अवाक् रह गये। धर्म की खेती करने वाला यही बालक आगे चलकर नानक हुआ।

□

भविष्य की चिंता

जिया के बाद पाकिस्तान ?

☐ रामपाल सिंह

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान जब स्तालिन, चर्चिल और रूजवेल्ट शिखर सम्मेलन में बैठे, तब चर्चिल ने मजाकिया लहजे में पूछा कि यदि हमारी मृत्यु हो जाय तो हमारे देश में क्या होगा। सवाल को सुनकर रूजवेल्ट जरा गंभीर हो गये पर स्तालिन ने मुस्कराकर कहा—मैं जानता हूं मेरे देश में क्या होगा। यह बात करीब ४५ वर्ष पुरानी है। दुनिया का राजनैतिक चेहरा बदल चुका है। पर पड़ोसी पाकिस्तान के सामने यह सवाल अपनी उसी तल्खी के साथ मौजूद है और पाकिस्तान की जनता सवाल सुनकर स्तब्ध-सी आंखें फाड़े अनंत भविष्य को निहारती, बिसूरती-सी जान पड़ती है।

ऐसा नहीं कि विमान दुर्घटना में राष्ट्रपति जनरल मुहम्मद जिया उल हक के मारे जाने के बाद सवाल पाकिस्तानी छाती पर पत्थर की तरह आ पड़ा है और उसके नीचे सिर्फ सांप-बिच्छू छिपे होने का खतरा है, पत्थर के नीचे से हरी दूब भी निकलती नजर आती है। पर खतरे और भविष्य की गोद में न जाने क्या छिपा होने की चिंता तो है ही। चिंता जितनी पाकिस्तान के १० करोड़ व्यक्तियों को होगी उतनी, ही भारत के ८० करोड़ लोगों को है। पाकिस्तान भारतीय उपमहाद्वीप का अंग है और इस उपमहाद्वीप का २३०० वर्ष का इतिहास खैबर दर्रे के आर-पार होनेवाली घटनाओं से प्रभावित होता और करवट बदलता आया है।

पाकिस्तानी भी सवाल उठाते हैं। भारत में तीन बार ऐसा हुआ कि प्रधान मंत्री की मृत्यु हुई या उसकी हत्या की गयी। प्रत्येक बार जब ऐसा हुआ एक नहीं कई व्यक्ति सामने खड़े नजर आये जो पद के योग्य थे और स्वीकार्य भी। पर पाकिस्तान में तो संकट की इस घड़ी में एक भी व्यक्ति ऐसा नजर नहीं आता, जो योग्य हो और सबको स्वीकार्य भी।

अपने अस्तित्व के ४१ वर्ष की दो तिहाई अवधि पाकिस्तान ने फौजी तानाशाही के बूट तले गुजारी है। फौजी अनुशासन के पत्थर को एक दम नंगा रखा गया। उसके नीचे घास तक नहीं उगने दी गयी। सबसे लंबी तानाशाही—११ वर्ष जो पाकिस्तान के अस्तित्व के एक चौथाई से भी ज्यादा है—जनरल जिया की रही। उन्होंने लोकतंत्र को हटाकर लोकतंत्र को जमाने के वायदे के

१९७७ में सत्ता संभाली और फिर
की कि इस्लामी गणतंत्र और
लोकतंत्र की खिचड़ी नहीं पक
। और जब पाकिस्तानी इस्लामी
है तब यहां इस्लाम, इस्लामी
और इस्लामी व्यवस्था ही चलेगी,
नहीं। इसके बाद जनरल जिया
ढांचे को ढहाने पर जुट गये, जिस
तंत्र की बेल फैलती है।

जिया का कहना था कि तीन-
विहीन चुनाव के बाद ही इस्लामी
की नींव पुख्ता होगी। मतलब यह
१९९० के चुनाव के बाद भी १०-१५
सत्ता में बने रहना चाहते थे।
में मृत्यु से लगभग एक मास पूर्व
हा था कि 'इस भ्रम में न रहना
ल्दी हटनेवाला हूं।'

भ्रम तो कोई नहीं पाल रहा था
जिया जल्दी सत्ता छोड़ेंगे। पर
की मुट्ठी में अकेले तलवार थी,
पर उनका नियंत्रण नहीं था।
दुर्घटना में जनरल जिया के साथ
नाओं के अध्यक्षों की समिति के सदर
अब्दुल अख्तर रहमान, थल सेना-
जनरल मियां मुहम्मद अफजल,
जनरल और पांच ब्रिगेडियर
। अब्दुल रहमान अख्तर जनरल
इस्लामीकरण और अफगान नीति
थे। जिया के साथ एक ही
सेना के इतने वरिष्ठ अधिकारियों
से सेना की स्थिति आंधी में टूटे ठूंठ जैसी रह गयी है। सिर्फ खालीपन ही नहीं आया, बल्कि गहरा अंधेरा भी छा गया है। एक अमरीकी प्रवक्ता के अनुसार मौत ने पाकिस्तान से उसका अकेला नेता, अमरीका से उसका पक्का दोस्त और अफगान छापामारों से उनका भरोसेमंद समर्थक छीन लिया। एक ही नहीं जिया के जाने से कई पक्ष अपने आपको अनाथ समझ रहे हैं।

देश के राजनीतिकों को आशंका थी कि हो सकता है पर्दे के पीछे से निकलकर फिर कोई फौजी नेता मंच पर आ बैठे। पर ऐसा नहीं हुआ। कारण साफ था। जो जिया की गद्दी संभाल सकते थे वे जिया के साथ चले गये। पीछे जो बचे उनमें वरिष्ठ जनरल मिर्जा असलम बेग हैं। वे उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले में जन्मे और यहीं पले-बढ़े। वे पाकिस्तान में 'मुहाजिर' हैं और सेना में ८५ फीसदी पंजाबी हैं। कोई उत्तर प्रदेश वाला मुहाजिर पाकिस्तान पर राज करे यह पंजाबी बहुल सेना को शायद ही रास आता। फिर खतरा यह भी था कि यदि जनरल बेग सत्ता पर कब्जा करते तो पाकिस्तान की जनता से उनका सीधा टकराव होता। सेना और जनता दो पाटों के बीच पिसने की बजाय जनरल बेग ने विवेक सम्मत रास्ता यह चुना कि पहल जनता को करने दिया जाय और राजनीतिक गलार फांस से जब वह थक जायगी, तब अपने आप सेना से अनुरोध करेगी कि पाकिस्तान की रक्षा करने को सेना आगे आये। इस अंतरिम काल में

सेना पर अपनी पकड़ मजबूत करने का मौका भी मिल जायगा । जनरल बेग की यह रणनीति सफल होती नजर आ रही है । बेनज़ीर भुट्टो से लेकर राष्ट्रीय अवामी पार्टी के वली खां तक ने सेना के इस रुख की सराहना की है ।

जिया के मरने के बाद सीनेट के अध्यक्ष गुलाम इसहाक खां ने कार्यवाहक राष्ट्रपति का दायित्व संभाल लिया है । उन्होंने २५ कार्तिक (१६ नवम्बर) को पूर्व निश्चय के अनुसार चुनाव कराने का वचन दिया है । चुनाव दलीय आधार पर होंगे या निर्दलीय इस बारे में कार्यवाहक राष्ट्रपति ने कुछ नहीं कहा । बेनजीर भुट्टो ने निर्दलीय चुनाव व्यवस्था को उच्चतम न्यायालय में चुनौती दे रखी है । गुलाम इसहाक खां न्यायालय के फैसले को जानने के बाद ही इस बारे में कोई निर्णय करेंगे । वैसे वे स्वयं ७३ वर्ष के हैं । सत्ता में अब उनकी विशेष रुचि न होगी । पर १९७७ की फौजी क्रांति में वे जिया के साथी रहे हैं । इससे उनके सोच का कुछ अनुमान लगाया जा सकता है ।

पाकिस्तानी मामलों के जानकारों का कहना है कि जनरल जिया उल हक जब तक जिंदा थे राजनैतिक दलों के पास एक नारा था—'जिया हटाओ, लोकतंत्र लाओ' । जिया को प्रकृति ने हटा दिया पर लोकतंत्र नहीं आया । प्रतिपक्षी राजनैतिक दलों को जोड़े रखने में जिया की एक बड़ी भूमिका थी । वैसे उन्होंने राजनैतिक दलों को तोड़ना शुरू कर दिया था । जुनेजो को बर्खास्त करके मुस्लिम लीग को फाड़ दिया था । कार्यवाहक मुख्यमंत्री नवाज शरीफ, प्रांत के सेवा निवृत्त ले. जनरल और बलुचिस्तान के जफरुल्ला खां ने सरकारी मुस्लिम लीग बना फिदा मुहम्मद खां को इस धड़े का बनाया गया है । ये सब जिया उल बड़े बेटे एजाजुल हक को भी खींच रहे हैं । जनरल जिया ने और मुहाजिरों को भी लड़ा दिया उनके जाने के बाद यह प्रक्रिया जाय पर सबको जोड़नेवाला गोंद गया है । नौदलों के लोकतंत्र आंदोलन ने एकता बनाये रखने के के साथ समवेत स्वर में मांग की स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने जिया द्वारा नियुक्त सरकार को करके उसके स्थान पर अंतरिम बनायी जाय, पर उनकी मांग मानी इसका कोई संकेत नहीं है।

भारत के राजनैतिक दलों पाकिस्तान के विभिन्न दलों के प्रधान मंत्री बनने के अपने-अपने करने में लगे हैं। बेनजीर भुट्टो को नहीं छिपाती कि हमारी सबसे बड़ी है और जब भी चुनाव राष्ट्रीय असेम्बली में बहुमत बेनर्जा।र भुट्टो का यह दावा इस्लामवादियों के गले नहीं जमाते इस्लामी और जमायते

पार्टियां समझती हैं कि इस्लामी गण- को चलाने का अधिकार खुदा की ओर हमें ही मिला है । फिदा मुहम्मद की अपने प्रतिपक्षियों को छाती में भाले कने का ऐलान कर रही है । वामपंथी चारों और झुकाव वाली पार्टियां बेनजीर ट्टो पर इसलिए भरोसा नहीं करतीं कि नजीर अमरीका को खुश रखना और नकी ओर झुकना चाहती हैं । वे सेना को अपने साथ रखना चाहती हैं । उन्होंने न पिता जुल्फिकार अली भुट्टो की तियों से सबक सीखा है । पर इसका रा मतलब यह भी है कि वंशानुगत सन चलाने के लिए बेनजीर सेना और रीका के कंधों पर खड़ी होना चाहती है। स्त्री होने और इस्लाम सम्मत ढंग से जकाज चलाने में उनकी कोई आस्था नहीं, लिए दक्षिण पंथी मुल्ला-मौलवी बेनजीर को स्वीकार करने को तैयार नहीं ।

प्रतिपक्षियों में नेतृत्व और टिकटों के वारे को लेकर मतभेद हो सकते हैं । र वे सब नेता जो जनरल जिया के उठ ने से अनाथ हो गये हैं और जिन्हें पाकि- तान में 'जिया की विधवाएं' कहा जाता है चिंतित हैं और अभी से आकाश पाताल के कुलावे मिलाने लगे हैं, जिससे सत्ता- नके हाथ से न जाने पाये । अपनी लक्ष्य द्धि के लिए वे किसी भी सीमा तक जाने को तैयार होंगे ।

पाकिस्तान की कमान जिसके हाथ में रही है, इसमें अमरीका की सबसे ज्यादा दिलचस्पी है । पश्चिम एशिया, उ. पश्चिम एशिया और दक्षिण एशिया में पाकिस्तान को अमरीका ऐसे टापू के रूप में देख रहा है जहां अपने पैर जमा कर रखना जरूरी है । पाकिस्तान में बैठकर वह चीन और मध्य एशियाई रूसी गणराज्यों पर नजर रखने के साथ फारस की खाड़ी और हिंद महासागर की ओर सोवियत फैलाव को रोक सकता है। पाकिस्तान में स्वतंत्र सरकार का आना वह इसलिए भी पसंद नहीं करेगा कि ऐसी सरकार काबुल से मिलकर अफगान समस्या को हल करने का प्रयत्न कर सकती है । जनरल जिया के जाने के बाद से हिज्बे इस्लामी नामक अफगान छापामार दल के नेता गुलबुद्दीन हिकमतयार बहुत चिंतित हैं। विदेशों से आने वाले हथियारों और पैसों का बड़ा भाग जनरल जिया हिकमतयार की झोली में डाल देते थे । जनरल जिया बंगला देश की हानि को अफगानिस्तान को पाकिस्तान में मिलाकर पूरा करने की सोचते थे और अफगानिस्तान-पाकिस्तान का महासंघ बनाने की अपनी कल्पना को साकार करने के लिए वे काबुल में कट्टर इस्लामी सरकार बैठाने और 'गाजी' की उपाधि धारण करने का ख्वाब देख रहे थे। अमरीका भी इस स्वप्न को साकार होते देखना चाहता था । जिया के उठ जाने के बाद यह समूचा सपना टूटता-सा नजर आता है ।

मास्को और काबुल भी नहीं चाहेंगे कि अब इस्लामाबाद में कोई ऐसा नेता सत्ता

में आये, जो शांति और समझौते का रास्ता चुनने की बजाय युद्ध का रास्ता चुने।

ईरान इस्लामी क्रांति को पाकिस्तान की ओर फैलाने की सोच रहा है। वह इस्लामाबाद को दोनों महाशक्तियों के प्रभाव से मुक्त होते और तेहरान के मित्र के रूप में उभरता देखना चाहता है। शाह ईरान बलूच विद्रोह को दबाने में इस्लामाबाद का साथ देकर पाकिस्तान पर अपना प्रभाव बढ़ाना चाहते थे। पाकिस्तान का झुकाव ईरान की ओर न हो इस उद्देश्य से अमरीका पाकिस्तान में शिया-सुन्नी विवाद को उग्र होते देखना चाहेगा। जनरल जिया की हत्या में रूस और अफगान सेवा 'वाद' (पहले इसका नाम 'खाद' था) का हाथ होने का संदेह व्यक्त किया गया। इसमें भारत की ओर भी अंगुली उठायी गयी। ब्रितानी और अमरीकी पत्रों ने लिखा कि जिया का विमान नष्ट कराने में भारत का हाथ है। भारत-पाकिस्तान संबंध जितना बिगड़ेंगे विदेशी ताकतों को पाकिस्तान में अपने पैर जमाने का उतना ही ज्यादा मौका मिलेगा। जनरल जिया की मृत्यु से करीब एक पखवारा पूर्व पेशावर में मशहूर शिया नेता और तहरीके-निफाजे-फिकहे-जकरिया के अध्यक्ष अल्लामा सैयद आरिफ हुसेन अल हुसेनी की हत्या की गयी थी। ४३ वर्षीय यह नेता अमरीका और सऊदी अरब का सख्त विरोधी और खुमेनी समर्थक था। वह जनरल जिया के सुन्नी पंथी इस्लामी कानून को शिया मुसलमानों पर थोपे जाने के

तुम जब भी गाना गाते हो, आसपास गधे इकट्ठे हो जाते हैं।
अच्छा, मतलब जब भी मैं गाना शुरू करता हूं तुम इधर क्यों आ जाते हो?

विरुद्ध था। संदेह प्रकट किया गया था कि अल्लामा की हत्या जिया ने करवायी थी। जिया की मृत्यु के बाद ब्रितानी-अमरीकी सूत्रों ने प्रचारित किया कि जिया विमान का चालक वायुसेना का एक शिया अधिकारी था जो अल्लामा अल हुसेनी की हत्या से बेहद उद्वेलित था और उसने विमान को नष्ट करके बदला लिया। इस खबर के बाद पाकिस्तान में शिया-सुन्नी दंगे हुए।

कुल मिलाकर पाकिस्तान सदमे, अनिश्चय और अंधकार की स्थिति में है। उनकी इस दशा से विदेशी ताकतें लाभ उठाना चाहती हैं। इसी इरादे से रंग-रंग के गुब्बारे उड़ाये जा रहे हैं। वे सब अंधेरे में अपनी अंगुली पकड़ाकर पाकिस्तान को अपनी-अपनी ओर खींच ले जाना चाहती हैं। जो नक्षत्र टिमटिमा रहे हैं, उनको देखकर दिशा का पता नहीं लगाया जा सकता।

—११/१ डालीबाग, लखनऊ-२२६००१

□

मासिक भविष्यफल : नवंबर १९८८

□ पंडित वी. के. तिवारी, 'ज्योतिषशिरोमणि'

: (१४ अप्रैल–१३ मई)

१२ नवंबर तक पारिवारिक सुख- का अभाव रहेगा । रोग आदि के चिंता रहेगी । वित्तीय एवं व्याव- स्थिति संतोषप्रद नहीं रहेगी । मन हेगा । यात्रा स्थगित करना उचित । आत्मीय वर्ग से विवाद या मन- की स्थिति से बचिये । १३ नवंबर मासांत तक व्यावसायिक लाभ एवं स्थिति में सुधार होगा । स्वास्थ्य होगा । यश बढ़ेगा ।

: (१४ मई–१४ जून)

नवंबर तक पारिवारिक सदस्यों रिश्तेदारों से मनोनुकूल सुखद स्थितियों निर्माण होगा । भौतिक सुख-सुविधाएं । विभागीय परीक्षा, आमोद-प्रमोद में वृद्धि रहेगी । स्थायी संपत्ति से में वृद्धि होगी । १७ नवंबर से मासांत आय, सुख, सुविधा सफलता में वृद्धि परंतु मित्रों अथवा साझेदारों से विवाद । वाहन-यात्रा के प्रति सचेत रहें ।

: (१५ जून–१६ जुलाई)

माह मिश्रित फल प्राप्त होंगे । तनाव, अस्वस्थता, कष्ट एवं धनहानि की परिस्थितियों में उलझे रहेंगे । उच्चाधिकारी या परिवार-प्रमुख से विवाद की स्थिति टालना उचित होगा । यात्रा स्थगित रखना ठीक होगा । वाहन सुख, भौतिक सुख, जनसंपर्क सुख प्राप्त होगा । यश बढ़ेगा । संतान जन्म या संतान सुख में वृद्धि होगी । मनोरंजन में रुचि बढ़ेगी । प्रेम संबंधों को स्थायित्व मिलेगा । राजनीति एवं सामाजिक कार्यों में लिप्त व्यक्तियों को विशेष यश मिलेगा ।

कर्क : (१७ जुलाई–१५ अगस्त)

पूर्वार्ध की तुलना में उत्तरार्ध अनुकूल प्रतीत होगा । जटिलताएं एवं बाधाएं कम होंगी । स्वास्थ्य सुधरेगा । २० नवंबर तक रोजगार व व्यवसाय में बाधाएं उत्पन्न होंगी । बंधु वर्ग से कष्ट मिलेगा । धन का अभाव प्रतीत होगा परंतु कार्य वांछित समय पर पूर्ण होंगे । शारीरिक सुख में कमी होगी । कनिष्ठ वर्ग से सुख-सहयोग मिलेगा । मनोबल बढ़ेगा । २१ नवंबर से मासांत तक विरोधी स्थितियों पर आपका नियंत्रण रहेगा । भौतिक सुख पर व्यय होगा ।

सिंह : (१६ अगस्त–१६ सितंबर)

माह में शुभ समाचार मिलेंगे । पिछले प्रयत्नों के आशातीत परिणाम मिलेंगे । स्वास्थ्य उत्तम रहेगा । मनोबल बढ़ेगा । संतान जन्म अथवा मिलन का सुख प्राप्त होगा । विद्या में उन्नति होगी । संगीत एवं कला से जुड़े व्यक्ति यशस्वी होंगे । दांपत्य सुख उत्तम रहेगा । आय में आशातीत वृद्धि होगी । व्यवसायी एवं राजनीतिज्ञ लाभान्वित होंगे । पूर्वार्ध की अपेक्षा उत्तरार्ध विशेष शुभ फलदायी सिद्ध होगा ।

कन्या : (१६ सितंबर–१६ अक्तूबर)

पत्नी की ओर से गार्हस्थिक सुख में बाधा की पुनरावृत्ति होगी । संतान-पक्ष से मन चिंतित रहेगा । जोखिम न लें । राजनीति में विरोध मुखर हो उठेगा । अपव्यय बढ़ेगा । प्रतियोगिता में सफलता मिलेगी । पत्रकार व अध्यापक वर्ग संतोष व यश अनुभव करेगा । व्यवसायी लाभान्वित होंगे । सुगंधित पदार्थों से आय होगी । स्वास्थ्य उत्तम रहेगा । भविष्य में उपयोगी परिवर्तन होंगे ।

तुला : (१५ अक्तूबर–१५ नवंबर)

रोजगार में विपरीत स्थितियां बढ़ेंगी । उच्च वर्ग से विशेष सजग रहने की आवश्यकता रहेगी । स्थान पद व अधिकार हानि की संभावना रहेगी । यात्रा होगी । अस्वस्थता या मानसिक कष्ट रहेगा । कार्य व्यस्तता बढ़ेगी । व्यापार में धन रुकेगा । स्थायी संपत्ति से आय में कमी होगी । रिश्तेदारों से हानि होगी । उत्तरार्ध में व्यापार बढ़ेगा । तरल पदार्थों या सुगं
पदार्थों में विशेष लाभ होगा । पत्रकार
राजनेता पीड़ित रहेंगे ।

वृश्चिक : (१६ नवंबर–१५ दिसंबर)

इस माह १४ नवंबर तक यात्रा, व्य
व्यय की अधिकता, उदर रोग, अ
विवाद, व्यवसाय में धनागम में अवरो
पुत्र से असंतोष रहेगा । १५ से २२
आंशिक सफलता, एवं धन लाभ हो
२३ से मासांत तक पत्रकार व राजनी
वर्ग अधिक व्यस्त रहेगा । व्यवसा
मंदी का प्रभाव चिंता उत्पन्न करेगा ।

धनु : (१६ दिसंबर–१३ जनवरी)

व्यवसाय में लाभ होगा । संतान
से सुख-संतोष मिलेगा । स्त्री पक्ष से
सहयोग प्राप्त होगा । तरल पदा
व्यापार से लाभ होगा । नौकरी में
व जनसाधारण से विरोध २० नवंब
उपरांत मासांत तक मन में चिंता,
के प्रति अरुचि एवं विवाद बढ़ेगा ।
पीड़ा अथवा ज्वर कष्ट की संभावना
व्यय बढ़ेगा । आय में कमी होगी । मनो
एवं सूझबूझ से समस्या का निराकरण
में सफलता मिलेगी ।

मकर : (१४ जनवरी–१२ फरवरी)

१६ नवंबर तक यश बढ़ेगा, का
होंगे । सफलता व श्री संपन्नता प्राप्त हों
पद या अधिकार वृद्धि का अवसर उ
हो सकता है । परिवार व आत्मीय
पूर्ण सहयोग प्राप्त होगा । १७ नवंबर
मासांत तक स्थिति उत्तरोतर

जायेगी। वर्ष का श्रेष्ठ समय सिद्ध । परंतु जनसंपर्क से हानि, अव्यक्त एवं स्वास्थ्य बाधा संभावित है। सुख में व्यवधान उत्पन्न होगा।

:(१३ फरवरी–१४ मार्च)

रिवार सुख में बाधा उत्पन्न होगी। में कष्ट व चिंता बनी रहेगी। धन- में कमी होगी। रोजगार में अधि- ों का सहयोग मिलेगा। यश व में वृद्धि होगी। स्वास्थ्य अच्छा । प्रतिष्ठित वर्ग से वांछित सहयोग ा। माह का अंतिम सप्ताह प्रत्येक से अनुकूल प्रमाणित होगा। प्रयासों रिणति अनुकूल रहेगी। शुभ समाचार सफलता का योग है।

:(१५ मार्च–१५ अप्रैल)

० नवंबर तक विरोध वृद्धि, अस्व- , पत्नी को स्वास्थ्य-बाधा रहेगी। कार्य में मनोबल पूर्वक किये गये प्रारंभिक बाधा के उपरांत पूर्ण होंगे। ता रहेगी।

सामाजिक व राजनीतिक स्थिति में होगी। २१ नवंबर से मासांत तक , बाधा, असुविधा, वैमनस्य, रोग, , व्यस्तता, अशांति एवं अपयश की रहेगी।

धैर्य, संयम, शांति या अवकाश ग्रहण करना उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

दीपावली पूजन मुहूर्त

(अ) ७-५० से ९ बजे तक रात्रि एव २.३५ से ३.४० बजे तक

(ब) १२:४० से १.४० रात्रि

पर्व व व्रत

१ नवंबर–अहोई अष्टमी
५ नवंबर–रमा एकादशी व्रत
६ नवंबर–प्रदोष व्रत
७ नवंबर–धनतेरस धन्वन्तरि जयंति
८ नवंबर–नरक चौदस शिवरात्रि व्रत
९ नवंबर–दीपावली
१० नवंबर–गोवर्धन पूजा
११ नवंबर–भाईदूज यमद्वितीया
१३ नवंबर–चतुर्थी व्रत
१४ नवंबर–पांडव पंचमी
१७ नवंबर–गोपाष्टमी
१८ नवंबर–अक्षय नवमी
२० नवंबर–देव उठनी एकादशी
संत नामदेव जयंती
२१ नवंबर–प्रदोष व्रत
२२ नवंबर–बैकुंठ चतुर्दशी
२३ नवंबर–कार्तिक पूर्णिमा, त्रिपुरारी
एवं रास पूनम, सत्यसाई जयंती
२६ नवंबर–गणेश चतुर्थी व्रत

–देवलोक कालोनी, सी. टी. ओ.,
बेरागढ़ (भोपाल), म. प्र.

□

अक्तूबर अंक के लेख 'तुंगनाथ मंदिर' में पृष्ठ १०८ के दूसरे पैरे की प्रथम पंक्ति में हत्या' के स्थान पर गोहत्या छप गया। इसी प्रकार लेखक के पते में कार्यालय शब्द से रह गया है। पाठक सुधार कर पढ़ें।

विचारोत्तेजक परिचर्चा

क्या लक्ष्मी प्रथम पूज्या है...?

संयोजक : **जगदीश किंजल्क**

**आज के भौतिकवादी युग में सर्वाधिक महत्व 'लक्ष्मी' का है। सारे और सभी
के सुख 'लक्ष्मी' के माध्यम से ही उपलब्ध होते हैं। लक्ष्मी और सुख, एक दूसरे के
हैं, पूरक हैं। मनुष्य की आदिम लालसा सुखभोग की होती है और वह अपना जीवन
भोग के लिए अर्पण कर देता है। यही कारण है कि आज लक्ष्मी की पूजा का महत्व
गया है और लक्ष्मी प्रथम पूज्या बन गयी है।**

**पर हां, इस भौतिकवादी धारणा से हटकर इस देश में कुछ विद्वान ऐसे भी हैं
लक्ष्मी को लक्ष्मी के स्थान पर ही पूजते हैं, प्रथम स्थान पर नहीं। इसके पीछे उनके
और उनका विश्वास ! ऐसे ही कुछ बुद्धिजीवियों के विचार यहां संयोजित किये गये हैं
लक्ष्मी को लक्ष्मी जैसा ही महत्व देते हैं और उसी के स्थान पर उसको पूजते**

☐ त्रिलोचन शास्त्री, सागर

किंजल्कजी, मैं आदमी को ही पूजता हूं और जब आदमी को पूजने की बात कर रहा हूं तो आदमी हूं। अब लक्ष्मी और सरस्वती को प्रतीक रूप में लेंगे। अब आदमी किस रूप में, किस कोटि में माना जायेगा। एक आदमी अपने परिवार को चलाता है। परिवार को चलाने के लिए कई तरह के काम करता है। खेती कर सकता है, जूता गांठ सकता है, आदमी कोई ऐसा धंधा करे जिससे पैसा न आता हो तो उस पर लोग हंसेंगे। वह प्रहसन का नायक बन जायेगा। समाज में ऐसे ही तो प्रहसन होते हैं, जो विषम लगें, यानी कुछ अच्छा करना चाहें

और बुरा हो जाये। लक्ष्मी को यदि
रूप में ले लें तो दीवाली में उन्हें पूजि
लक्ष्मी पूजा से भी प्रसन्न नहीं होती।
लिए कुछ करना पड़ता है। आपके
आस्था है, श्रद्धा है तो लक्ष्मी को
चलिये, बाकी यह है कि यह लक्ष्मी
सामाजिक जीवन को वरहम-दरहम
आज लक्ष्मी संबंधी जो एक नैतिकता
वार्य होनी चाहिये, वहीं नहीं है। नैति
के साथ लक्ष्मी को उपेक्षा की दृष्टि से
देखना चाहिये। क्योंकि उसी पर
सामाजिक जीवन निर्भर करता है।
पहले राय देवीप्रसाद ने लिखा था,
अपना छुपाते हैं गोया, जो दौलत से

नफरत ज्यादा ।' वह अपनी गरीबी को रहे हैं गोया जो दौलत से नफरत करते । माने गरीब हैं वो और दौलत की निंदा ते हैं। तो मैं निंदा करके अपने को लिस नहीं दिखाना चाहता ।

ooo

□ डॉ. चंद्रप्रकाश वर्मा, भोपाल

हिंदू समाज बहुदेववादी है । हर देवता का अपना अपना महत्व है । पर लोक न्यता के अनुरूप इनकी महत्ता भी श्रेणी-द्ध हो गयी है । सामान्यत: जो देवता उतना उपयोगी है वह उतना ही पूजित है। मारे समाज में सदा से प्रथम पूज्य पद तो पति का ही रहा है, पर इस भौतिकवादी ग में जीवनमूल्य सर्वथा बदल गये हैं। नवंत-गुणवंत उपेक्षित हैं। आज पूजा होती धनवंत, विभव विभूति संपन्न व्यक्ति की। स्थिति यह है कि धन से मान-सम्मान, कीर्ति, लौकिक सुख, विविध सांसारिक लब्धियां, सभी कुछ तो खरीदा जा सकता । साधना द्वारा अर्जित उज्ज्वल ज्ञान, छल-कलुष द्वारा अर्जित काले धन के द्वारा जा रहा है। देह की दुहाई फिर रही । आत्मा के विलाप को बधिर विश्व सुना किये हुए है। धन की सार्वभौम मानव को बौराये हुए है –

कनक कनक ते सौगुनी मादकता अधिकाय,
खाये बौराय है, वह पाये बौराय'

ऐसी विडंबना के बीच धन की देवी , ज्ञान के देवता गणेश से बाजी छीन है । आज लक्ष्मी ही प्रथम पूज्या बनी है, भले ही पूजा-व्रत आदि में रुढ़िगत दृष्टि से हम गणेशजी की 'डमी' उपासना करते रहें । पर यह धन का अतिरेक, यह भौतिकता का अट्टहास विश्व मंगल का परिचायक नहीं । लक्ष्मी चंचला है । काव्य में चंचला लक्ष्मी का परिचय एक मधुर परिहास के माध्यम से इस प्रकार दिया गया है 'पुरुष पुरातन की वधू क्यों न चंचला होय ।' जो कुछ चंचल है, अचिर है, उसका आधार ले जीवन के शाश्वत मंगल सत्य कैसे स्थापित किये जा सकेंगे ! जीवन में बुद्धि विवेक से जो प्रकाश प्राप्त होता है, वही आत्मा का वास्तविक धन है । लक्ष्मी को भले ही पूजा मिले पर गणेश की अवमानता न हो । लक्ष्मी क्या प्रथम पूज्या है, यह प्रश्न अनुत्तरित ही रहे तो अच्छा है ।

ooo

□ डॉ. कांतिकुमार जैन, सागर

लक्ष्मी प्रथम पूज्या नहीं है, यह कहना तो बहुत मुश्किल है, पर मैं समझता हूं कि पूरी ईमानदारी का परिचय देना भी नहीं होगा । लक्ष्मी, मेरे लिए प्रथम पूज्या है परंतु दूसरे कारणों से । इस युग में ज्ञान का जो विस्फोट हुआ है, उसको उपलब्ध करने के लिए हमको लक्ष्मी की आवश्यकता पड़ती है । आधुनिकतम उपकरण आप लक्ष्मी की सहायता के बिना प्राप्त नहीं कर सकते । यात्रा करना हो तो, पुस्तकें खरीदना हो तो, लक्ष्मी की आवश्यकता पड़ेगी ही । प्रथम पूज्या तो मेरे लिए ज्ञान है, कला है, साहित्य है । और इसको प्राप्त करने के लिए लक्ष्मी

વીત્યો સમય અછતનો થયાં રાહતનાં કામ

સતત ચોથા વર્ષે કારમી અછતનો
સામનો કરનાર ગુજરાત રાજ્યમાં
ચાલુ વર્ષે ૧૪,૧૯૦ રાહત કામો પર
દરરોજ ૨૧.૮૪ લાખથી વધુ લોકોને
રોજી પૂરી પાડવામાં આવી હતી.
૪૩૬ ઘાસ ડેપો પરથી પશુધન માટે
૯૬૦.૩૯ લાખ કિ.ગ્રા. થી વધુ
ઘાસ વિતરણ કરાયું હતું.
૩૩૯ પાંજરાપોળ તથા ૧૬૫૫
ઢોરવાડા દ્વારા ૧૪.૧૫ લાખથી
વધુ પશુધનની નિભાવણી
કરવામાં આવી હતી.

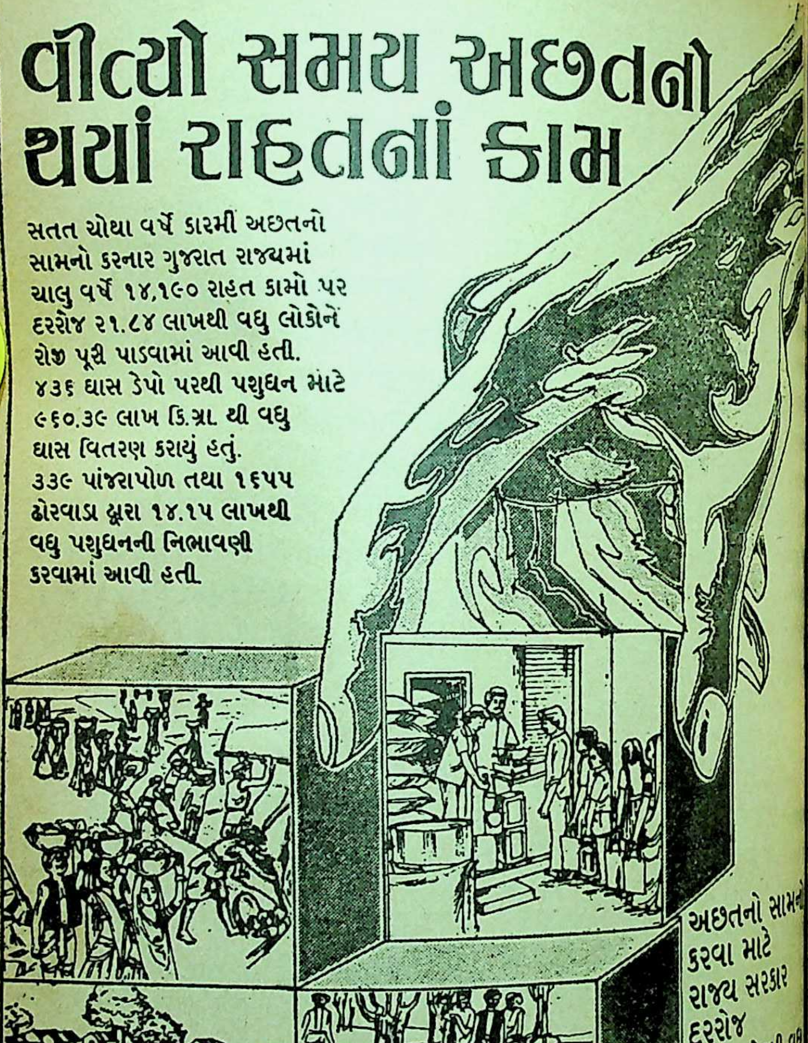

અછતનો સામનો
કરવા માટે
રાજ્ય સરકાર
દરરોજ
રૂ. ૩ કરોડથી વધુ
રકમનો ખર્ચ
ભોગવતી હતી

ये। लक्ष्मी भौतिकता की पर्याय बन ती है और एक तरह से भौतिकता को ने बहुत हेय मान लिया है। हमारे यहां आदर्श हैं वे महावीर, बुद्ध, शंकराचार्य गांधी हैं। महान बनने के लिए भौतिता का परित्याग करना आवश्यक है। पर ज के युग में परिभाषा बदल लेना हिये। लक्ष्मी के संदर्भ में जो प्राचीन ताएं हैं, उस संबंध में भी हमको पुनर करना चाहिये। पहले लक्ष्मी भोगलास, अलंकार या शोषण का प्रतीक थी। ज की लक्ष्मी आधुनिका हो गयी है। अब ह शोषण, भोगविलास, आमोद-प्रमोद का ता माध्यम नहीं है, जितना कि वह ज्ञान न का, साहित्य के प्रति निकटता का र एक तरह से संपूर्ण जीवन की संपन्नता पर्याय है।

ooo

☐ संतोष खरे, सतना

आज के युग में तो निश्चय ही लक्ष्मी न पूज्या हो गयी है। भौतिकवादी युग नुष्य के समस्त कार्य, व्यवहार, संबंध, मी प्राप्त करने के लिए ही होते हैं। लोग नीति में आते हैं समाज सेवा के नाम पर, उनका उद्देश्य तो 'लक्ष्मी' प्राप्त करना होता है। हमारे आदि कवियों ने भले ही या महा ठगिनि हम जानी' लिखा हो, यह तो मानना ही पड़ता है कि इस के पीछे आदमी क्या-क्या नहीं करता। हा जाता है कि लक्ष्मी और सरस्वती जन्मजात शत्रुता होती है, पर सरस्वती के उपासक भी जो काम करते हैं, उसके पीछे मुख्य उद्देश्य लक्ष्मी प्राप्त करना होता है। यह भी कहा जाता है कि लक्ष्मी की सवारी उल्लू है और वह धूर्तों, बेईमानों के पास रहना अधिक पसंद करती है। इस प्रकार देखा जाये तो लक्ष्मी को ऐसे ही लोग और कार्य पसंद आते हैं, जिन्हें समाज अनैतिक अवैधानिक या अनुचित मानता है। पर यही तो विडंबना है कि ऐसे ही लोग हमें नैतिकता, आदर्श और ईमानदारी का भाषण देते हैं, जो वास्तव में स्वयं अनैतिक और बेईमान होते हैं।

इन तमाम स्थितियों के रहते हुए भी हम लक्ष्मी की पूजा नहीं छोड़ते। वास्तविकता यही है कि इस युग में लक्ष्मी केवल पूज्या नहीं वरन् प्रथम पूज्या है। लक्ष्मीजी को मैं सादर प्रणाम करता हूं और, किंजल्कजी, आपको भी यही सलाह देता हूं कि आप भी जीवन का आनंद उठाने के लिए उसे प्रथम पूज्या मानें।

ooo

☐ डॉ. प्रभाकर माचवे, दिल्ली

मेरे लिए लक्ष्मी कभी प्रथम पूज्या न थी, न है, न होगी। ऐसा होता तो मैं व्यवसाय करता, सरस्वती की पूजा नहीं। आज तक जीवन में मैंने कभी कोई हिसाब नहीं रखा। न इसका कि कितना कमाया या कि कितना गंवाया। मेरे घर में सारा पैसा रखना, खर्च करना आदि मेरी पत्नी ही करती है, १९४० से। उसके पहले के २३ वर्षों में पैसे थे ही नहीं कि उन्हें पूजता या जमा करता। किसी भी

किताब से इतनी रायल्टी या आय नहीं मिली कि मैं अपने आप को श्रीमंत मानता। मुझे न कोई पुश्तैनी जायदाद मिली, न बड़े भाइयों से कोई धन दौलत। सब कुछ मेरा स्वार्जित है। सो मैं जानता हूं कि धन जीवन में जरूरी है, महत्वपूर्ण है। पर मैं धन-बल से अधिक मन-बल को मानता हूं। धन कमाने के लिए लोग क्या-क्या छल-छंद करते हैं, मैंने निकट से देखा है। लखपतियों, करोड़पतियों के बीच में भी रहा हूं—कलकत्ता, दिल्ली में, पर मुझे कभी उनसे ईर्ष्या नहीं हुई। बल्कि लक्ष्मीदासों पर मैं दया करता हूं। लक्ष्मी आदमी को अंधा और उल्लू बना देती है। वह कैसे प्रथम पूज्या होगी !

०००

☐ प्रो. कृष्णदत्त वाजपेयी, सागर

भारतीय प्रमुख देवताओं में लक्ष्मी की गणना है। सौंदर्य और समृद्धि की प्रतिनिधि देवी के रूप में उसे मान्यता मिली। सभी धर्मावलंबियों ने लक्ष्मी देवी को महत्व दिया और उसके विविध रूपों की पूजा प्रचलित हुई। प्रश्न है कि क्या भारतीय मुख्य देवों में लक्ष्मी को प्रथम पूज्या होने का गौरव मिला? जो एक परंपरा प्राचीन युग से लेकर मध्यकाल तक प्रचलित मिलती है, उसमें गणेशजी को यह गौरव मिला। तुलसीदासजी ने रामचरित मानस के आरंभ में 'वंदे वाणी विनायकौ' लिखकर इस ओर इंगित किया है। पर लक्ष्मी का वैशिष्टच भारतीय विचारधारा में स्पष्ट मिलता है।

प्रमुख भारतीय देवी के रूप में लक्ष्मी की मान्यता होने के कारण उसकी पूजा के अनेक विधान मिलते हैं। जैन कल्पसूत्र में लक्ष्मी का अभिषेक विस्तार से वर्णित है। उसे हिमालय के सरोवर में कमल-वासिनी कहा गया है और दिग्गजों द्वारा जल से लक्ष्मी का अभिषेक करने की चर्चा की गयी है। भूदेवी के रूप में लक्ष्मी का गजाभिषेक, इस बात का प्रतीक है कि मेघदेवता इंद्र जल-वृष्टि करके भूमि को उर्वर बनाते हैं। पुराणों में लक्ष्मी को सौभाग्य और समृद्धि की देवी के रूप में माना गया है। आवश्यकता सरस्वती-प्राप्ति होना चाहिये। सरस्वती के पीछे लक्ष्मी है।

०००

☐ एम. एल. जैन, सागर

जितने भी आधुनिक शहर हैं, उनमें जो संपन्नता का चिह्न है, वो उनके ज्ञान का स्तर ही है। यदि हम समझते हैं कि इंगलैंड, अमरीका दुनिया में सबसे उच्चकोटि के राष्ट्र हैं, उसकी असली वजह यह है कि वहां जो सरकारी व्यक्ति हैं, उनके जो ज्ञान का स्तर है, पिछड़े हुए लोगों से कहीं ऊपर है। इसी देश में उसकी असली संपन्नता का चिह्न है वे वहां पर कितने तेल का उत्पादन करते हैं कितना लोहा बनाते हैं या अन्य चीजें। वहां, उनके नागरिकों के शैक्षणिक स्तर से ही वहां की संपन्नता उजागर होती है। आप जानते हैं कि अपने देश में साक्षरता का प्रतिशत कम है। मैं समझता हूं जितना महत्व सरस्वती का है, वह शायद लक्ष्मी का कभी नहीं रहा। आजकल के युग में हमारी प्रथम

आ नो भद्राः ऋतवो यन्तु विश्वतः
भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन साहित्य और संस्कृति का मासिक

प्रार्थना

त्वं ह्यग्ने ! अग्निना,
विप्रो विप्रेण सन् सता ।
सखा सख्या समिध्यसे ।।
ऋक् ८-४३-१४ ।।

प्रेम के आदान से ही प्रेम का दीपक जले ।
ज्यों हृदय की भावनायें, नेह का दीपक जगायें ।
ज्ञान के संपर्क से ही, ज्ञान का सौरभ जगायें ।
संत के सत्संग से ही, सत्य का मोती मिले ।
प्रेम के आदान से ही, प्रेम का दीपक जले ।
व्यर्थ है मेरी तपस्या, व्यर्थ मेरी प्रार्थना ।
अर्चना में भी हमारे स्वार्थ की ही याचना ।
पूर्ण तब होगा समर्पण शरण तेरी जब मिले ।
प्रेम के आदान से ही प्रेम की ज्योति जले ।

[रूपांतर : सत्यकाम विद्यालंकार]

जल रे मेरे दीपक जल।

□

बालकृष्ण गर्ग

जंगल हो या गांव-नगर,
महल-झोंपड़ी, द्वार-डगर,
जगमग-जगमग जगर-मगर—
तिल-तिल जलकर करता चल !
जल रे मेरे दीपक, जल !

नन्हा-सा माटी का तन,
लेकिन स्नेह-भरा है मन,
आशा से ज्योतित जीवन—
और आत्मविश्वास प्रबल !
जल रे मेरे दीपक, जल !

बीतीं काली रात कई,
झेले झंझावात कई,
यह अमावसी रात नयी—
भी जायेगी यूं ही ढल !
जल रे मेरे दीपक, जल !

यह जीवन है एक समर
जूझ रहा जो कसे कमर,
मरकर भी वह बने अमर—
अगर लक्ष्य उसका उज्ज्वल !
जल रे मेरे दीपक, जल !

अच्छा फल शुभ कर्मों का
और बुरा दुष्कर्मों का,
मर्म यही सब धर्मों का,
यही प्रकृति का नियम अटल !
जल रे मेरे दीपक जल !

वहीं 'सत्य' है, 'सुंदर' है,
जहां नहीं तम का डर है,
केवल ज्योति, ज्योतिधर है
वहीं परम 'शिव', चिर मंगल !
जल रे मेरे दीपक जल !

□

—संगीत
हाथरस-२०४१०

आती रहीं, जाती रहीं दीवालियां

— महीपाल —

खेत सब ख़ामोश – सूखी बालियां !
ये फ़िजां का रंग ? – सूखी डालियां !

वे बुलंदी के निशां क्या हो गये
चाटती हैं धूल टूटी जालियां !

देखने जिनको निकलता चांद था
हैं कहां वे आज घूंघट वालियां !

जिनके दम-ख़म पर चले मीनावज़ार
हुईं बेचारी, वे क़िस्मत वालियां !

ज़र की ख़ातिर बिक गये, सब बिक गये
आदमी, ईमान, इज्जत वालियां !

ज़िंदगी ने किस क़दर तोड़ा हमें
नाम खुद का ही लगे जब गालियां !

ख़ल्क़ को ही लूट लें आलमपनाह
हो के बेग़ैरत बजायें तालियां !

ये हुक्मरां हैं, ये सिपहसालारे मुल्क़
मुफ़लिसी का इनसे तोहफ़ा पा लिया !

आदमी अदना भी है, कम-अक्ल भी
जाने क्यों भरता भरम की प्यालियां !

जनम का वैरी अंधेरा कब मिटा
आती रहीं, जाती रहीं दीवालियां !

— विजय महल, डी रोड, चर्चगेट, बंबई-२० —

चिंतन

दीपोत्सव का आध्यात्मिक महत्व

☐ पं. सत्यकाम विद्याल

दीपमाला के उत्सव का एक महत्व ऐतिहासिक है, एक आध्यात्मिक भी। श्रीराम अनार्यों पर आर्यों के विजय के प्रतीक रूप में ऐतिहासिक व्यक्ति भी थे; किंतु वही श्रीराम भगवान भी बने, आध्यात्मिक रूप में।

दीपशिखा की अग्नि का भी आध्यात्मिक रूप है। 'अग्नि' शब्द वैदिक वाग्मय में सर्वोच्च देवता का पारिभाषिक शब्द है।

ऋग्वेद के प्रथम मंत्र का प्रथम शब्द 'अग्नि' है। वैदिक शब्दों के गूढ़ रहस्य से अनभिज्ञ इसका अर्थ ईंधन समिधा की प्रज्वलित 'आग' करते हैं। इसी अर्थ को सच मानने वाले लोग कहते हैं कि प्राचीन आर्य अग्नि के उपासक थे।

थोड़ी बहुत जानकारी रखने वाले श्रद्धालु जन इसका अर्थ 'यज्ञाग्नि' मानकर संतोष कर लेते हैं। वे यज्ञ को ही सर्वोत्कृष्ट धार्मिक कृत्य मानते हैं।

इन्हीं अर्थों के कारण आधुनिक विज्ञान-युग के शिक्षित व्यक्तियों की दृष्टि में वेद केवल उस अंध युग के धर्मग्रंथ रह जाते हैं, जो मनुष्य को अग्नि की उपासना करना सिखाते हैं।

यही बात सच होती तो वेदों के प्रति श्रद्धा रखना अंधश्रद्धा मानी जाती। अग्नि शब्द का व्यापक अर्थ जानने के लिए सं का अध्ययन आवश्यक है। वेद स्वयं शब्दों के गूढ़ अभिप्राय को खोलत ऋग्वेद के ही अगले सूक्तों में अग्नि अर्थ स्पष्ट करने वाले दो-तीन मंत्र है

समिद्धो अग्निर्निहितः पृथिव्यां
प्रत्यङः विश्वा भुवनान्य स्यात्
होता पावकः प्रदिवः सुमेधा
देवो देवान् यजत्वग्नि रहत्:

दूसरा मंत्र है–

तदोग्निस्तदादित्य-
स्तद् वायुस्तद्चंद्रमा
तदेव शुक्र तद् ब्रह्म
ता आपः स प्रजापति

अभिप्राय यह कि जो अग्नि रूप से ज्वाला के रूप में प्रकट होती है पृथ्वी के अंतराल में है; वही दि लोक-लोकांतर में अनेक रूपों में होती है। वह अग्नि आह्वनीय है शक्ति संपन्न है, सर्वज्ञ है, पवित्र करने है। उसी अग्नि के दूसरे नाम हैं– वायु, चंद्रमा, शुक्र, ब्रह्म, आपः, प्र

एक और प्रसिद्ध मंत्र है–

इंद्र मित्र वरुणयमाग्नि राहु-
रथो दिव्य, स सुपर्णो गरुत्मान्
एकं सद् विप्रा बहुधा वदंति

अग्नि यमं मातरिश्वानमाहुः

अर्थात् तू विश्व में एक सर्व शक्तिमान ना है, जो इंद्र, मित्र, वरुण, अग्नि, यम, रिश्वा आदि भिन्न-भिन्न नामों से ना जाता है।

ही एक प्रभुसत्ता, जो वैदिक काल में क नामों से भी प्रचलित थी, बाद में न 'ब्रह्म' से विख्यात हुई। वेदों में भी 'ब्रह्म' शब्द की यही व्याख्या थी, जो र्वेद के इस मंत्र से स्पष्ट है :—

ब्रह्म यज्ञः ब्रह्म होता
ब्रह्मणो स्वर वोऽमितः
अध्वर्यु ब्रह्मणो जातो
ब्रह्मणोऽन्तर्हितं हविः ।।

अर्थात् ब्रह्म ही यज्ञ है, ब्रह्म ही आहर्व-है, ब्रह्म के अनंत आनंदमय रूप हैं, भी ब्रह्म है और यज्ञ में जो-जो आहुति ती है, वह भी ब्रह्म में समा जाती है। दि शंकराचार्य ने इस 'ब्रह्म' को ही क महत्व देकर ब्रह्मवाद का प्रचलन ।

'सर्वं खल्विदं ब्रह्म
जीवो ब्रह्मैव नापरः'

वाक्य ही हिंदू दर्शन का मूल मंत्र बन इसका सार यही है कि जो ब्रह्मशक्ति के कण-कण में व्याप्त है, वही जीवा-भी है। समस्त जगत की उत्पत्ति का भी इसी ब्रह्मशक्ति से हुआ और भी इसी में होगा।

ब्रह्म तेज सूर्य में है, अनंत तारा है, वही दीपक की अग्नि शिखा में है। चेतन-अचेतन सब उसी ब्रह्मशक्ति के भिन्न-भिन्न रूप हैं।

दीपक जब बुझा होता है तो अचेतन है, जब अग्नि से प्रज्वलित होता है, उसमें ऊर्जा की शक्ति आ जाती है। दीपक में जो ऊर्जा छोटे रूप में है, वही सूर्य में विशाल बन जाती है। यह ऊर्जा ही संपूर्ण विश्व को अनुप्राणित करती है।

वैदिक वांग्मय में अचेतन सृष्टि के देवता भी चेतनवत् व्यवहार करते हैं। वेद में अग्नि, जल, सूर्य, सविता—सब में तत्वतः वही ब्रह्मशक्ति है, जो सबको चैतन्यता देती है—सब ब्रह्ममय है, इसीलिये चेतन है।

हमारे अंतर्मन की चैतन्यता का संबंध समस्त विश्व की चेतनता से सीधा संबंध है।

कल्पनाओं का नीलाकाश

– डॉ. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक' –

स्वप्न के बादल मुझे नभ में उड़ाते हैं,
कल्पना के इंद्रधनुषी रंग लुभाते हैं।

दृष्टि से ओझल ; ई ज्यों सत्य की धरती,
आस्था के पांव सहसा डगमगाते ह।
स्वर्ण पंखी कामनाओं के विहग उड़कर,
व्योम का विस्तार सारा नाप आते हैं।
मन बहल जाता सहज इन वंचनाओं में
जिंदगी का बोझ ये हलका बनाते हैं।

मानता हूं, यह सभी मृगजल, छला
दूर के ये ढोल फिर भी क्यों सुहा
शून्य की गहराइयों में कुछ नहीं
बस अभावों की तृपा क्षणभर बुझा
पर तुम्हारे ध्यान में जब लीन हो
प्राण-तन-मन सुख उदधि में डूब जा

— वार्डन निवास, श्रीजयनारायण डिग्री कालेज, लखनऊ, उ. प्र. —

जीवात्मा और विश्वात्मा तत्वत: एक ही हैं। इसी प्रकार दीपक की अग्नि और आत्माग्नि भी मूलत: एक ही है।

दीपमालिका के दीपक को प्रज्वलित करते हुए यदि अपने-अपने अंतर के दीपक को प्रज्वलित करने की प्रतीतिहोगी, तभी हमारा दीपोत्सव मनाना सफल होगा। दोनों में एक ही ब्रह्मशक्ति का वर्चस्व प्रकट होता है।

वेद का मंत्रांश है –

एक एवाग्नि बंहुधा सामेद्धः
एक एवेदं विबभूव सर्वंभूः

एक ही अग्नि अनेक रूपों में प्रज्वलित होती है, एक ही है जो अनेक रूपों में अभिव्यक्त होता है।

एकात्मता के इस सूत्र में ही समस्त हिंदू जीवन दर्शन का सार निहित है।

'अहं ब्रह्मास्मि' का यह अर्थ नहीं
ही भगवान हूं, ब्रह्म हूं, बल्कि यह है कि
भी ब्रह्मशक्ति है। दीपक में सूर्य
प्रकाश नहीं है, किंतु दोनों का
एक ही है। दोनों प्रकाश देते हैं,
हैं। तत्वत: दोनों एक ह। दोनों में
शक्ति है—वही ब्रह्म शक्ति है।

असंख्य दीप जलाकर यदि हम
शक्ति की अनंतता का कुछ आभास
तो हम सच्चे अर्थों में दीपमाला का
मनायेंगे। और यदि हम घर का
जलाकर अंतरात्मा को ज्योति
सकेंगे—दोनों में तादात्म्य स्थापित
तो यह उत्सव और भी सार्थक हो

—८३/ए १, वृंदावन,
४००६०१,

गीत

— जवाहर 'इन्दु' —

देह की इस नदी का उफनता हुआ
ज्वार जब तक थमे ना, नहीं आइये ।
मुझको बहने का डर है, मरुस्थल हूं मैं,
गति जिधर है, उधर ही चले जाइये ।।

कंटकाकीर्ण पथ जो मिले हैं भले ।
हो अमिट रोशनी, इसलिये हम जले ।
अर्चना है यही, कामना है यही—
न रहें पुष्प मन के, कभी अधखिले ।।

आपकी दृष्टि में हर जगह है चमन,
सच यही है कि इनको ही अपनाइये ।

मधुबनी उम्र की चंपई चितवनें ।
दृष्टि में यूं समायी रहें, सामने ।
स्वप्नजीवी नहीं, सच की परछाइयां;
जिंदगी जैसी चाहे कहानी बने ।।

जी में आये जो करियेगा, क्या सोचना ?
उम्र बाकी पड़ी है, न पछताइये ।।

मैं नहीं चाहता, कोई अवरोध हो ।
आपके कर्म का, आपको बोध हो ।।
बस यही चाहता, हर घड़ी देखकर
ईर्ष्या, द्वेष, नफ़रत नहीं क्रोध हो ।।

प्राण हैं जब तलक, धड़कनों से कहो,
दृष्टि जाती जहां तक, बढ़े जाइये ।।

— २७२, सेक्टर-२, दूरभाष नगर, रायबरेली-२२९०१०, उ. प्र. —

□

बाल-दिवस के अवसर पर

पिता-पुत्र

□ डॉ. अशोक गुजरा

अप्रैल, १९१९ के वे दिन । प्रार्थना, हड़ताल, उपवास, सभाएं—इस तरह के कार्यक्रम । समूचा देश नवीन उत्साह से भरपूर । भारतवासियों के सम्मुख एक नयी राह । दिल्ली में गोली चली । उधर जलियानवाला बाग में सैकड़ों का नर-संहार । तब मोतीलाल नेहरू, देशबंधु दास आदि पंजाब के हालचाल जानने पहुंचे । जवाहरलालजी भी साथ थे । महात्मा गांधी आये । अंग्रेज सरकार ने सारे प्रकरण पर लीपापोती की कोशिश की । गंगा-किनारे सारे नेता इकट्ठे हुए । आजादी मिलने तक यह लड़ाई जारी रहेगी, ऐसा निर्णय लिया गया । लेकिन लड़ें कैसे ? असहयोग और कानून-उल्लंघन यही एक मार्ग था । जवाहरलालजी इस राह पर चलने को उद्यत हुए । मोतीलालजी पेशोपेश की हालत में थे । आज तक का जीवन उन्होंने सुख-समृद्धि में व्यतीत किया था । गांधीजी का सुझाया पथ बहुत कठिन था ।

जवाहरलाल नेहरू लिखते हैं, 'मुझे स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु जेल जाने में कोई हिचक नहीं थी, पर मेरा सारा उत्साह ढल गया । बात लगती है उतनी आसान नहीं, यह पता चल गया था । कारण मेरे पिता इन कल्पनाओं के घोर विरोधी थे । मैं कारावास में जाऊं, यह कल्पना ही
लिए असह्य थी । हम पर उनका
प्रेम था । प्रेम का दिखावा उन्होंने कभी
किया, लेकिन उनके संयमी आवरण
वात्सल्य का गहरा समंदर छिपा हुआ

इस छिपे खजाने की जानकारी होने
भी आजादी की लड़ाई को लेकर दोनों
मतभेद हुआ । पिता-पुत्र में दिन-रात
विवाद चलने लगा । कभी-कभार
बाप-बेटे के रिश्ते की दहलीज लांघ
बहनें चिंता के कारण कांप-कांप
मां का गला भर आता । दिल घबरा
यह मत-वैभिन्य कहीं पिता-पुत्र को
न कर दे !

लेकिन मोतीलालजी जैसे दृढ़-निश्च
और अजेय व्यक्तित्व के धनी पुरुष
आखिर गांधीजी की जिद के आगे
पड़ा । पिता-पुत्र का विवाद खत्म हु
इस सैद्धांतिक विचार-भिन्नता के
उनका आपसी प्यार हमेशा अछूता
दोनों पुनः समरस हो गये । बल्कि
ज्यादा करीब आ गये ।

१९३० की बारह मार्च को
दांडी-यात्रा पर निकले । पूरे देश में
ने अत्याचार मचा रखा था । कहीं
चार्ज, कहीं गोलीबारी । जवाहर

गिरफ्तार कर लिया गया। जून महीने में लालजी को भी जेल भेज दिया गया। उनकी खराब तबीयत को देखते हुए हें जल्दी रिहा कर दिया गया। उधर हरलाल को कारागर में उनकी बीमारी खबर मिली। मजबूर थे। अपने बीमार को मिलने भी नहीं जा सकते थे।

पर किस्मत ने साथ दिया। उनकी भी ई हो गयी। वे इलाहाबाद स्टेशन पर थे। ट्रेन से मोतीलालजी मसूरी से वाले थे। गाड़ी लेट होती जा रही। जवाहरलालजी को सभा में जाना था। को लेट होता देख मन मारकर सभा लिए चल दिये। मोतीलालजी प्लैटफार्म उतरे तो बेटा सामने न था। घर जाकर क्षा करने लगे। लेकिन तकदीर ने फिर बाया। सभा-स्थल पर ही जवाहर-को पुनः गिरफ्तार कर लिया गया। पुत्र मिल न सके।

१२ जनवरी, १९३१ नैनी जेल में जब लालजी मिलने आये, उन्हें देखकर हरलालजी चौंक गये। उनका वह हुआ चेहरा जवाहरलालजी की आंखों गया। वे कभी ऐसे नहीं दिखते थे। स्वास्थ्य को लेकर जवाहरलालजी बार चिंताग्रस्त हुए। वे लिखते हैं, की और मृत्यु की जोड़ी ही लगती थी। मौत का वे हरदम उड़ाते थे। मैं और कई साल जिऊंगा, कहते थे। उनके संपन्न व्यक्तित्व प्यार प्रेम की हम सब परिजनों को इतनी आदत हो गयी थी कि उनके चले जाने पर यह दुनिया कैसी लगेगी, यह सोच भी हमें सहन नहीं होता था।'

इसके चौदह दिनों बाद जब जवाहरलालजी की जेल से छुट्टी हुई, तब वे सीधे अपने रुग्ण पिता से मिलने चल दिये। बाप-बेटे गले मिले। पिता के पलंग पर जवाहरलालजी बैठे। अपने आंसुओं को रोक नहीं पाये। इस वीर स्वातंत्र्य-योद्धा का अंतर्मन अति कोमल था, बेहद संवेदनशील।

पीड़ा आंसुओं में ढलकर संभवतः सिर्फ ग्यारह दिनों पश्चात् होनेवाले चिरवियोग के हादसे से घबराकर हिचकियों में डूब गयी थी।

लेकिन उसका यह आर्तनाद भी छह फरवरी की उस मनहूस घड़ी को टाल न सका। उस सुबह जवाहरलाल उनके पास ही बैठे थे। रात भर से मोतीलालजी बहुत बेचैन थे। एकाएक उनकी मुद्रा शांत हो गयी। चेहरे पर से दर्द के बादल छंट गये। उन्हें नींद आ गयी है, ऐसा सोचकर जवाहरलाल ने राहत की सांस ली। लेकिन उनकी मां समझ गयीं और उनकी रुलाई फूट पड़ी। इस पर जवाहरलाल ने होठों पर उंगली रख उन्हें टोका कि यह असमय का अपना विलाप रोको, पिता की मुश्किल से आयी नींद टूट जायेगी। अफसोस! वह उनकी अंतिम अनंत निद्रा थी, उसमें से जागना कैसा? **–अ, आदर्श कालोनी,**

अकोला-४४४००४, महाराष्ट्र

'इन्हें कोउ बूझत नइ यां'

□

डॉ. राष्ट्रबंधु

दिवंगता महादेवीजी को बच्चों के साहित्यकारों से अत्यंत प्रेम था। श्रीमती शकुंतला सिरोठिया जैसी सुप्रसिद्ध कवयित्री बाल साहित्यकार बन गयीं। इस परिवर्तन में महादेवीजी का योगदान था। महादेवीजी ने प्रारंभ में बाल कविताएं रची थीं, जो आज भी सुरक्षित हैं। बाल साहित्य के सृजेताओं को उनसे प्रायः प्रेरणा मिलती थी। डा. रोहिताश्व अस्थाना को उन्होंने आशीर्वाद दिया, दिनांक १९ फरवरी ८४ को, अपने घर पर आयोजित एक समारोह में। वह प्रसंग स्मरणीय बन गया है।

श्री रोहिताश्व अस्थाना की कृति 'आओ गायें गीत रसीले' को श्रीमती शकुंतला सिरोठिया बाल साहित्य पुरस्कार ५०१ रु. प्रशस्ति पत्र के साथ श्रीमती वर्मा ने अपने निवास स्थान पर ही कुछ बाल साहित्यकारों की उपस्थिति में अत्यंत आत्मीयता से प्रदान किया।

पूर्व निश्चित कार्यक्रम में, पैर में चोट लग ज़ाने के कारण श्रीमती महादेवी वर्मा जाने में असमर्थ थीं, किंतु अपने घर पर पुरस्कृत साहित्यकार श्री अस्थाना को उन्होंने आमंत्रित करके उनका भावभीना स्वागत किया। उन्होंने अभ्यागतजनों आतिथेय भी अपने यहां किया।

महादेवीजी प्रचुर प्रोत्साहन देती नयी पीढ़ी की पीठ थपथपाकर खुश थीं। रोहिताश्व अस्थाना को दूल्हा क उन्होंने कहा, 'बारात तो आ गयी दूल्हा गायब, ऐसे बरातियों को कौन इसके बाद उन्होंने बुंदेली गीतांश सु 'धरे गठरिया शीश इन्हें कोऊ नइ यां'।

बाल साहित्यकारों से वार्ता कर उन्होंने कहा कि आप लोगों की अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि सरकारें खुश रखती हैं, जो वोट देते हैं। चूंकि वोट नहीं देते अतः वे उपेक्षित हैं। तिरस्कृत संतप्तजनों के लिए लिख सच्चे सेवक हैं।

आज का बच्चा पैदा होते ही बनाया जाता है। वह अभावों से जूझ और अपनी समस्याओं से अकेला ही करता है। धन की विषमता झेलता है परतंत्रता में पलता है। ऐसे जीवों के लिखनेवाले धन्य हैं।

लड़कों की अपेक्षा लड़कियां हमारे में अधिक अवमानना सहती हैं। ह

मान्यता है कि लड़की का पैदा होना के लिए समस्या और चिंता का बनता है।

के समाज में लड़कियां पढ़तीं प्राय: सभी पदों पर सक्षम सिद्ध है। अपना उदाहरण देते हुए श्रीमती वीजी ने कहा कि उनके बाबाजी पोती का नाम लेकर गांधीजी से मिले तो उनका सम्मान हुआ था।

कियों से कुल का सम्मान बढ़ता है, बेटे कुपूत ही ज्यादा निकलते हैं कबीर जैसे संत को कलंकित करते कुनवा डुबा देते हैं। आज के लड़के करते हैं, लेकिन फिर भी लड़कियों अवमानना हो रही है।

मती वर्मा ने गोहत्या पर चिंता की। उनकी आंखों में आंसू छलक ।

राष्ट्रभाषा पर उ. प्र. में उर्दू स्थान को उन्होंने अनुचित बतलाया। देखकर गिरगिटी रंग बदलने नाओं की आदत को सिद्धांतहीनता और धर्म निरपेक्षता के नाम पर धर्म-आचरण करने की भर्त्सना की।

दो घंटों तक श्रीमती वर्मा ने मुग्ध श्रोताओं को आनंदित बताया कि वह मां शारदा की । शरीर का प्रत्येक भाग टूटा-पर भी उनकी कृपा से जीवित गले, हाथ, रीढ़ की हड्डी आदि टूट चुके हैं, फिर भी उनका दिमाग और दिल दुरुस्त तो है मां भगवती की कृपा से।

उनका विशाल-कक्ष किसी मंदिर का ही स्वरूप व्यक्त करता है, जिसमें भगवती सरस्वती और वाग्देवी की प्रतिमाएं हैं। मंदिर का ही नियम इस कक्ष में लागू है। दर्शनार्थी जूते बाहर उतारकर आते हैं और फर्श पर बिछे कालीन पर बैठते हैं। महादेवीजी तख्त पर आसीन मिलती थीं।

महादेवीजी ने अपनी शिष्या श्रीमती शकुंतला सिरोठिया की सराहना की, जिन्होंने बाल साहित्यकार-पुरस्कार देना प्रारंभ किया और श्री रोहिताश्व अस्थाना को आशीर्वाद देने से पूर्व गंगाजल छिड़का, रोचना किया और माला पहिनायी। तद्पश्चात उन्होंने सभी परिचित जनों को रोचना लगाया और तब निरालाजी की याद में कुछ देर खो गयीं। उन्होंने बताया कि निरालाजी साधु, अमरकवि और सच्चे विद्रोही थे। प्रकाशक उन्हें चूस गये। शासन ने भी उन्हें पागल माना। निरालाजी सच्चा भगिनी भाव रखते थे और उनके पास जाकर रोचना कराते थे।

महादेवीजी ने बाल साहित्यकारों को जानकारी दी कि उनके बचपन के समय के रचे बालगीत सुरक्षित हैं। निराशामय वातावरण में, बढ़ते अंधेरे में, क्षुद्र दिये जैसा बाल-साहित्यकारों को उत्तराधिकारी बनना होगा तभी दायित्व निभेगा।

—१०९/३०९ रामकृष्ण नगर,
कानपुर-२०८०१२, उ. प्र.

□

दीप हर घर में जलायेंगे!

— डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी —

दीपकों की ज्योति कुछ ऐसी निराली हो,
खिल उठे जीवन-सुमन ऐसी खुशाली हो।
सब कलुष धुल जायें कुछ ऐसी प्रभा चमके,
गीत-नव, नव-ताल से सारी धरा दमके।
राष्ट्र के कल्याण की ऐसी लहर आये,
अब न कोई फिर किसी पर कहर ढा पाये।
जुट पड़ें हम देश का गौरव बढ़ाने में,
सार्थक हो जिंदगी, उसको सजाने में।
दीन कोई रह न पाये, मूल्य हो श्रम का,
द्वंद्व हों निर्मूल, मूलोच्छेद हो भ्रम का।
जाति, भाषा, धर्म के सब भेद मिट जायें,
सभ्यता के, संस्कृति के, गीत हम गायें।
स्वप्न बापू का हमें साकार करना है,
देश हित हर त्याग अंगीकार करना है।
स्वर्ग से बढ़कर हमारा राष्ट्र हो जाये,
हर क्षितिज की हर दिशा से ध्वनि यही आये।
हों सभी प्राणी सुखी यह मंत्र हो गुंजित,
ज्ञान की नव-ज्योति से हो बुद्धि आलोकित।
बस तभी सार्थक दिवाली हम मनायेंगे,
स्नेहपूरित दीप हर घर में जलायेंगे!

□

कीसवीं सदी के साहित्य से अपेक्षाएं

□

महामहिम डा. शंकर दयाल शर्मा
(उप-राष्ट्रपति, भारत)

वेद से हम एक अनुपम तथा अत्यंत प्रकाशमान प्रेरणा प्राप्त करते हैं। मानुषी जातिः' एक ही जाति है— जाति।

ह सनातन विचार है, जो हजारों से हमें रास्ता दिखाता आ रहा रा विश्वास है कि मानव जाति के श्नों का उत्तर इसी विचार से पाया कता है।

ख, शांति और समृद्धि अभी मानव को पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं हुई है। इसे की प्रक्रिया में साहित्य का महत्वपूर्ण न रहना आवश्यक है। व्यक्ति और की स्वतंत्रता, समानता, सृजनात्म- कल्पना-शक्ति तथा विचार-शक्ति को प से विकसित करने में साहित्य क भूमिका निभाये, यही २१ वीं के साहित्य से मेरी अपेक्षा है।

—उप-राष्ट्रपति निवास, नयी दिल्ली

□ महामहिम श्री रामकृष्ण त्रिवेदी
(राज्यपाल, गुजरात)

आज सभी लोग २१ वीं सदी में प्रवेश की प्रतीक्षा कर रहे हैं। एक तरह से यह अपेक्षित ही है—विशेष कर बुद्धिजीवियों से जिसमें साहित्यकार अग्रगण्य हैं। क्योंकि उन्हें न केवल भविष्यद्रष्टा बनना है, बल्कि भविष्यस्रष्टा भी। और इस संदर्भ में यह आवश्यक है कि भौतिक प्रगति के साथ-साथ सनातन मूल्यों की ओर भी नयी पीढ़ी का ध्यान आकर्षित करें। वैसे इस समय भी और विशेषकर गुजरात में मौलिकता पर काफी जोर दिया जा रहा है, परंतु यह संदेश तो नयी पीढ़ी को बराबर देते ही रहना होगा। साहित्य में भी कवियों का विशेष स्थान है और यदि हम आधुनिक गद्यकाव्य से संगीतमय एवं औपचारिक काव्य पर आ जायें तो युवा वर्ग में उन्हें पढ़कर स्मरण करने की अभिलाषा और भी तीव्र हो जायेगी। जो काव्य आसानी से स्मरण नहीं किया जा सकता, उस पर

पर्व दीपावली के मांगलिक अवसर पर प्रति वर्ष नवनीत अपने विशिष्ट अंक के कुछ सुधी पाठकों से परिचर्चा आयोजित करता आ रहा है। इस वर्ष हमें जो उत्तर पर प्राप्त हो सके हैं, हम उन्हें यहां प्रकाशित कर रहे हैं। —संपादक

मनन भी कठिन हो जाता है और आचरण तो और भी दुश्वार।

मैं आपके दीपावली अंक की सफलता के लिए अपनी शुभकामनाएं भेजता हूं।

–राजभवन, गांधीनगर-३८२०२०, गुजरात

०००

☐ अमृतलाल नागर

वैज्ञानिक आविष्कार यह बतलाते हैं कि इक्कीसवीं सदी के जीवन में काफी बदलाव नजर आने लगेंगे। इससे चिंतन प्रक्रिया में फर्क तो निश्चित रूप से पड़ेगा ही, विचारों की गति शायद अधिक सूक्ष्म संवेदनाओं से संयुक्त होकर बढ़ने लगेगी। शती के प्रारंभ में आज के बिखराव के बाद सिमटने की प्रक्रिया भी आरंभ हो, इसलिए शायद किसी न किसी प्रकार की तानाशाही आयेगी और उसे तब का मानव राजी होकर स्वीकार करेगा। मनुष्य की चिंतन प्रक्रिया में अंतर आयेगा, धर्म संबंधी वर्तमान दृष्टिकोणों में व्यापक परिवर्तन होगा। शायद आगे चलकर कुछ अन्य ग्रहों में भी मानव बस्तियां बसने लगें, विशेष रूप से चंद्रलोक में बस सकती हैं, इससे रिश्तों में भी परिवर्तन नजर आने लगेंगे। साहित्य तब अंतर्राष्ट्रीय से अधिक अंतरग्रहीय होने लगेगा। जहां सोच में परिवर्तन आता है, वहां शैली में भी अनिवार्य रूप से आता ही है, इसलिए लेखन के ढब-ढांचे और ढंग में नये परिवर्तन भी परिलक्षित होंगे। शायद छापे के यंत्र से अधिक कोई उन्नत आविष्कार सामने आ जाय तो कोई आश्चर्य न होना चाहिये। कृत्रिम बच्चे और स्त्री-पुरुष की
संभोग क्रिया द्वारा प्रजनित होने
बच्चों की समस्या भी शायद उठ खड़ी हो
फिर भी मुझे लगता है कि सामाजि
यथावत् ही रहेगी। व्यक्ति और समाज
रिश्तों में अधिक गहराई आ जायेगी। इस
साहित्य पर निश्चित रूप से असर हो

–चौक, लखनऊ-२२६००३, उ.

०००

☐ पं. सत्यकाम विद्यालं

बीसवीं सदी के एक अतीव प्रति
प्रकाशक जब अपनी बिक्री बढ़ाने
लिए यह विज्ञापन दे रहे हों–'तूफानी सं
अब खुले आम सैक्स दर्शाने वाली हीरो
के चित्रों का मजा लीजियें'–तो इक्की
सदी के प्रारंभ में ये प्रकाशक अपना सा
किसी नये रूप में प्रकाशित करेंगे,
अपेक्षा रखना मूर्खतापूर्ण होगा।

बीसवीं सदी के मध्य तक स्वाधी
मिलने से पहले देश का साहित्य
स्वस्थ परंपरा को निभा रहा था। नेहरू
ने देश को वैज्ञानिक उन्नति के ऊंचे शि
पर पहुंचा दिया–मगर नैतिक पतन इ
गहरी खाई में गिर पड़ा कि अब उ
उभरने की आशा ही धुंधली होती जा
है। अब तो यही अपेक्षा है कि नये साहि
कार इतने तेजस्वी हों कि इस गहरे अंध
में प्रकाश की किरण लेकर आगे बढ़
अंत में विजय तो प्रकाश की होगी।
साहित्य युवकों के जीवन में संयम, सदाचा
त्याग, तपस्या का बीज बो सके, वासना

को शीतल करके उज्ज्वल भविष्य की डाल सके, ऐसे ही साहित्य की अपेक्षा चाहिये। होगा यह चमत्कार ही— चमत्कार भी होते ही हैं।

-८३/ए-१, वृंदावन, थाना-४००६०१

○○○

□ पं. नरेंद्र शर्मा

वी संवत्सर की बीसवीं शती की समाप्ति और इक्कीसवीं के आरंभ में केवल बारह वर्ष शेष हैं। इसलिए वाली ईसवी शती के संबंध में सोच-र करना अनिवार्य हो जाता है। कहा है कि बारह बरस में भाग्य-परिवर्तन की संभावना होती है। इस संभावना चरितार्थ करने के हेतु हमें अभी से संकल्प-विकल्प करने होंगे। वस्तुत: न, विगत इतिहास का सार ग्रहण भविष्य के प्रति सक्रिय और सचेष्ट है। यदि यह सही है, तो हमें बारह, उस उत्क्रांति को समर्पित करने जो हमें उन्नतिशील इक्कीसवीं शती मुंह दिखाये।

जिस सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृ-क्रांति का संकल्प हमने इस बीसवीं के आरंभ में किया था, वह संकल्प नहीं हुआ है। इसलिए उसे हमें पूरा होगा। हमारा संविधान १९५० व्यवहार्य हुआ। इसमें भारतीय जन को सत्ता सौंपी गयी। किंतु चक्र तो दिशा में चला है। हमें सही दिशा चक्र का प्रवर्तन करना होगा। साहित्य इस कार्य को शिरोधार्य करेगा, साहित्य से मुझे ऐसी अपेक्षा है।

इक्कीसवीं सदी के अपेक्षित इतिहास को यदि हम अभी से परिकल्पित करें, तो हमें आगामी बारह वर्षों में क्या करना है, इसकी रूपरेखा अभी से बनानी होगी। मेरी समझ में वह रूपरेखा इस दृष्टि से बनायी जाय कि सर्वोच्च सत्ता का बोध जनसामान्य का सामान्य ज्ञान बन जाय। ज्ञान, कर्म और उपासना के योग से संभव होता है। कर्म और उपासना के बिना, ज्ञान मात्र परोक्ष रहता है। कर्म और उपासना के योग से ज्ञान अनुभव-प्रसूत और अनुभूत अर्थात अपरोक्ष होता है। मुझे साहित्य से, जन-मन में, ऐसे अपरोक्ष ज्ञान से जगाने की अपेक्षा है। जगाने के लिए स्वयं हमें भी जागना होगा। **—उन्नीसवां मार्ग, खार, बंबई-४०००५२**

○○○

□ पं. सीताराम चतुर्वेदी

जिन अनेक महापुरुषों, वीरों और सर्वस्व उत्सर्ग करने वाले देशभक्तों ने अपने त्याग और बलिदान से हमें स्वतंत्रता दिलायी, उनके प्रति अत्यंत नीचतापूर्ण विश्वासघात करके हमने कुर्सी और पद हथियाने के क्षुद्र हथकंडे अपना कर उस स्वतंत्रता को श्रीभ्रष्ट किया है। सुविधा शुल्क का निर्लज्जतापूर्ण नाम देकर भयंकर भ्रष्टाचार का जाल फैलाया है, दैनिक प्रयोग की बस्तुओं के दाम बढ़ाकर, तस्करी करके, काला धन बटोरकर जन साधारण

के साथ प्रवंचना की है। जनता को भिखमंगों के समान राशन की दूकानों पर पंक्ति में खड़ा कराकर उसका अपमान किया है। बिजली और पानी की अव्यवस्था उत्पन्न करके लोगों को नारकीय जीवन बिताने को बाध्य किया है। देश को विघटित करने का षड्यंत्र करके निरपराध लोगों की नृशंस हत्याएं की हैं।

अनेक प्रकार के थोथेवाद चलाकर सत्साहित्य के सर्जन में अवरोध उत्पन्न किया है।

धार्मिक उत्सवों पर भी राजनीतिक नेताओं को अनुचित सम्मान देकर धर्म का उपहास किया है। मादक द्रव्यों को प्रोत्साहन देकर अपने युवा-वर्ग को निर्वीर्य किया है और अयोग्य व्यक्तियों को चाटुकारितावश उच्च आसन देकर भारतीय जनतंत्र को निःशक्त और विश्रृंखलित कर डाला है।

इसलिए इक्कीसवीं सदी के साहित्य से हम यह अपेक्षा करते हैं कि वह हमारे इन अक्षम्य अपराधों और दुरंत दुष्कृत्यों के लिए कठोर से कठोर शब्दों में हमें धिक्कारे, हमारी भर्त्सना करे और साहित्य में ऐसी सात्विक, ओजस्विनी और प्रेरणादायक शक्ति भरे कि आगे की पीढ़ी के हृदय में देशभक्ति की उमंगें लहरें मारने लगें। वह मनुष्य को समझे और उन पापों से सदा बची रहे, जिनके कारण हमने अपने को कलुषित कर डाला है। **–वेदपाठी भवन,**

मुजफ्फरनगर-२५१००२, उ. प्र.

डा. प्रभाकर मा

भारतीय साहित्य की अवधारणा
शतकों से खंडित नहीं। वह मह
की उपासना में 'क्षणैः क्षणै यं नवता
वाली है। इसलिए मैंने १९४३ में
सप्तक' में लिखा था–

बीसवीं सदी ने हमें क्या दिया?
मोटर, रेल, विमान, क्रांतियां।

उसी में आगे एक पंक्ति थी–'इ
दिया, उस हाथ लिया!' आज ४५ व
भी मैं यही मानता हूं कि पश्चिम ने
युद्ध, अणुबम और 'एड्स' हमें दिये–
दुनिया को एक गांधी, एक अरविंद
रवींद्रनाथ दिया।

इक्कीसवीं सदी में शायद विज्ञान
तकनीकी विकास की सुख-सुविधाएं
जन तक पहुंचें। पर यदि मनुष्य
मनुष्य में खाई बढ़ती गयी, यदि
अविवेक और आतंकवाद यों ही
गया, यदि संकीर्ण सांप्रदायिकता
गयी–तो ये सारे भौतिक सुपर-कंप्यूटर
काम के? हमें भौतिक से अधिक
साहित्य चाहिये। डर यह है कि दुर
और वीडियो-फिल्में अगली पीढ़ी की
की इच्छा ही न मार डालें। 'फ्यूचर
के लेखक रॉफलर ने तो यहां तक कहा है
इस सदी के अंत तक कोई पुस्तकें ही
पढ़ेगा। हमें अब तंत्र नहीं, मंत्र चाहिये।
का चमत्कार नहीं, उसमें सार्थक
प्रेरणा चाहिये। वही साहित्यकार
जिसकी कथनी-करनी में खाई न हो।

र्विरोधों से ऊपर हो, जो देश को अधिक गहराते बिखंडन से बचा सके ।

मैं शायद तब तक नहीं बचूंगा—पर मेरी अगली पीढ़ियां अधिक सुखी, निरामय सहयोग पूर्ण और स्नेह-सदाशयता से भरी हों, यही कामना है । वही सच्चा साहित्य होगा, जिसमें सबका हित होगा ।

-७१, वल्लभ नगर, इंदौर-४५२००३

०००

□ रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'

बीसवीं सदी का जो अंतिम चरण चल रहा है, उससे की गयी अपेक्षाएं कितनी पूरी हुई हैं, यही प्रश्न अभी अनुत्तरित पड़ा है । इक्कीसवीं सदी की रूपरेखा राजनीतिज्ञों और भविष्यवाणियां करने वाले प्रशासकों की दृष्टि में जैसी भी उजली हो, पर मेरे जैसे व्यक्ति के लिए तो वह अनिश्चय और प्रश्नाकुलताओं के घेरे में ही बंधी है । मेरा दृढ़ विश्वास है, भले वह मनोरथ ही हो, कि खोयी हुई आस्था में और जीवन-मूल्य लौटेंगे । आज चारों ओर जो संधियुगीन वैचारिक विशृंखला छायी है, वह अपनी निश्चित परिणति पहचान लेगी ।

कंप्यूटर संस्कृति अनेक अवस्थाओं और कार्य प्रणालियों को सरलीकृत कर देगी, साथ ही मानव को शारीरिक श्रम कम से कम करना होगा । यों तो मशीनी कार्य पद्धति में भी भूलों की (न्यूनतम ही सही) संभावनाओं को नकारा नहीं जा सकता पर बहुत-सी बातों में शुद्धता बढ़ेगी—हम साहित्यिक सचाई, तथ्यों की वास्तविकता और निष्पक्ष आकलन की ओर बढ़ते जायेंगे । इसका—इतनी बड़ी बाह्य परिवर्तनशीलता का प्रभाव साहित्य की सृजन शक्ति और भावनागत, विचारगत, इंद्रिय अनुभवागम्य अभिव्यक्ति और व्यक्तिनिष्ठ या वस्तुनिष्ठ आत्म प्रकाशन पर न पड़े, यह संभव नहीं । जो सब आज खोया-खोया और विघटित लगता है, वह तो अपने को पुनः पहचनवाकर साहित्य को मर्यादा देगा ही, नयी वैज्ञानिक विचार-बुद्धि और विश्व विवेक जाग्रत होगा । साहित्य का समाज में कटापन दूर होगा—नयी न्यायोचित और अधिक से अधिक लोगों का कल्याण करने वाली सामाजिकता आज की छद्म मुलम्मेदार सामाजिकता का स्थान लेगी । शोषण और दमन का आतंकवाद और रक्तपात की विनाशक लीलाएं बंद होंगी । विज्ञान का, अणुशक्ति का जन्म मानव जाति के सुख, सुविधा, आराम के लिए हुआ था । पूंजीवाद सर्वत्र उसका दुरुपयोग कर रहा है । यह सब खत्म होगा । **—दक्षिण सिविल लाइन्स, पचपेढ़ी, जबलपुर, म. प्र.**

०००

□ गोविंद मिश्र

जब हम अपेक्षाओं की बात करते हैं तो उसमें साहित्य की जिम्मेदारियां—समाज के प्रति, मनुष्य के प्रति, आज की सभ्यता के प्रति—उनकी बात शामिल ही है । बात सिर्फ आकांक्षाओं की नहीं हो रही । आज सभ्यता मनुष्य को जिस तरह

लगातार और बौना बनाती जा रही है, जिस तेज़ी से विनाश की ओर ले जा रही है .... उस सिलसिले को थामने का सामर्थ्य सिर्फ साहित्य, कला और धर्म (धर्म माने संकीर्ण सांप्रदायिकता कतई नहीं; आध्यात्मिकता, आत्मिकता) में है। दुर्भाग्य से आधुनिकता के नाम पर बीसवीं सदी का अधिकांश लेखन उपर्युक्त पतनोन्मुख प्रक्रिया में अपरोक्ष रूप से योग ही देता रहा। हम विनाश के कगार पर आ पहुंचे हैं। यह सब देख-समझकर अब साहित्यकार को चाहिये कि वह मनुष्य, मूल्य, हार्दिकता, प्रेम और सौंदर्य की बातें फिर उठाये। ऐसा लेखन हो कि मनुष्य अपनी अंतर्भूत गरिमा महसूस करके उठे, साहित्य से उसे संबल मिले। प्रकृति पर जो अत्याचार, प्रकृति का जो अनापशनाप दोहन चल रहा है ... यह बंद हो। मनुष्य प्रकृति को अपनी मां की तरह माने, उसके साथ एकलय हो। साहित्य आज के आदमी को इस एकलयता को चहुंदिक व्याप्त सुंदरता की प्रतीति कराये। उन्नीसवीं सदी में लिख रहे रूसी उपन्यासकार दोस्तोव्हस्की ने कहा था–'सुंदरता ही संसार को बचायेगी।' साहित्य फिर से सुंदरता को अपने में धारण करना सीखे, उसका वाहक बने। **–२२, बैलवेडियर,**
वार्डन रोड, बंबई-४०००३६

०००

☐ विष्णु प्रभाकर

आज जिस प्रकार वैज्ञानिक प्रगति और मानव चिंतन में असंतुलन बढ़ता जा रहा है, उससे तो बड़ा भय लगता है। अ वैज्ञानिक प्रगति से उत्पन्न अणु शस्त्रों मनुष्य की संवेदना को सोख लिया साहित्य का सृजन ही असंभव हो रहे और हम वैज्ञानिक पशुमात्र ही बनकर जायेंगे, हमारी पूंछ हमें वापस मिल जायेंगी लेकिन मुझे विश्वास है कि मनुष्य अ संवेदना को नहीं मरने देगा और विज्ञान शक्ति को भी सृजन की शक्ति बना ले तब जिस साहित्य की सृष्टि होगी, वह अ संतुलित होगा। –८१८, कुंडेवाला
अजमेरी गेट, नयी दिल्ली-११०००

०००

☐ यशपाल

इक्कीसवीं सदी के साहित्य से मेरी अपेक्षाएं हैं? इस प्रश्न के उत्तर में प्रथम मैं यह कहना चाहूंगा, वह साहि लोकमंगल के लिए हो, अर्थात् उस सर्वोच्च लक्ष्य जन-जन का हित-साध और मानवचरित्र का उत्कर्ष होना चाहि बीसवीं सदी में मानवीय मूल्यों के हनन उत्पन्न भयावह दुष्परिणामों को हम दे चुके हैं। देखा ही नहीं, भुगत चुके हैं, भु रहे हैं। हमारे साहित्यकार उन भूतों शिक्षा लेकर आगामी शती में ऐसे साहि का सृजन करें, जो देशवासियों को नीति निष्ठ और कर्तव्यपरायण होने की प्रेर दे। साहित्य की प्रत्येक विधा में ऐ कृतियां आवें, जो नागरिकों के जीवन भारतीय संस्कृति की मूल भावना समावेश कर सकें।

र्तमान युग विज्ञान का युग है। इस दी में विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में नात्य उन्नति हुई है। यह विकास तः भौतिक-क्षेत्र तक सीमित रहा है। तु मानव मात्र शरीर नहीं है, आत्मा भी विज्ञान और तकनीक ने शरीर की धा के साधन जुटाये हैं, आत्मा के सुख जाने-अनजाने उपेक्षा की है। मूल्यों का मान संकट उसी के कारण उत्पन्न हुआ साहित्य से मेरी अपेक्षा है कि वह ली शताब्दी में विज्ञान और अध्यात्म बीच असंतुलन को दूर करके उनके मध्य लन स्थापित करे।

साहित्य का उद्देश्य 'वसुधैव कुटुंबकम्' ल मंत्र को साधित करना है। वर्तमान ती के साहित्य ने वसुधा को एक विशाल ब नहीं बनाया है, उसे अनेक प्रकार से जित कर दिया है। आगामी शती का हित्य मानव-समाज में अनेकता को सुर-त रखते हुए उसे एकत्व के मजबूत धागे बांधे, ऐसी मेरी कामना है।

स्वाधीन भारत में गांधीजी ने रामराज्य पित करने की कल्पना की थी, पर हम जो उस कल्पना से कोसों दूर हैं। स्वातं-त्तर काल में वह कल्पना आहत हो गयी। इक्कीसवीं शताब्दी के साहित्य पर उस ना को पुनरुज्जीवित करने का ही नहीं, र्थ करने का भी परम दायित्व है।

वास्तविक साहित्य युग को आलोकित ता है। मौजूदा सदी ने घोर अंधकार या है। आने वाली शताब्दी का साहित्य उस सघन तिमिर को एकदम चीर सकेगा, ऐसी आशा करना तो शेखचिल्ली के स्वप्न जैसा होगा, परंतु इतनी अपेक्षा मैं अवश्य रखता हूं कि उस काल में जो साहित्य रचा जाय, वह अंधकार में ग्रस्त और त्रस्त मानव को प्रकाश की ओर ले जाये।

—सस्ता साहित्य मंडल, एन-७७, कनाट सर्कस, नयी दिल्ली-११०००१

०००

☐ कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

सप्ताह, माह, वर्ष और शताब्दी ये सब व्यावहारिक सुविधा के लिए मानव द्वारा रचे गये समय के विभाजन हैं; जैसे अतीत, वर्तमान और भविष्य, क्योंकि समय में कोई मौलिक विभाजन नहीं है, वह तो एक अजस्र प्रवाह है। इसलिए जिस दिन बीसवीं सदी समाप्त होगी और जिस दिन इक्कीसवीं सदी आरंभ होगी, उन दोनों के बीच, न कोई मौलिक रेखा अतीत में खिंची है, न भविष्य में ही खिंचेगी।

ऊपर समय के तीन भागों का मैंने उल्लेख किया—अतीत, वर्तमान और भविष्य। ये ही समय के तीन अंग हैं। आज का अतीत विगत कल का वर्तमान था और आज का वर्तमान आगत कल का भविष्य है। वही बात कि वस्तु एक है, नामों में भेद है। आज का मनुष्य न अतीत में जी सकता है, न भविष्य में; उसे जीना वर्तमान में ही है। क्या इसका यह अर्थ है कि अतीत और भविष्य निरर्थक हैं? ना, यह घोर असत्य है। अतीत एक पाठ है वर्तमान के लिए और

भविष्य [illegible] लाभ उठाकर हम पुरानी भूलों से बचें, जिससे आनेवाला भविष्य हमारी कामना के अनुकूल हो; आज से उत्तम कल।

१९१४-१८ में पहला विश्व युद्ध हुआ। उसने तोप की ताकत को दुगुना किया और पृथ्वी के युद्ध को हवाई जहाज बनाकर आकाश से जोड़ दिया। १९३९-४५ में दूसरा विश्व युद्ध हुआ और उसने उस ऐटम शक्ति को जन्म दिया, जो पूरी मानव-जाति को कुछ ही घड़ियों में नष्ट कर सकती है।

मानवता का विनाश सामने था, पर शक्तिशाली राष्ट्रों की प्रतिभाएं विनाश के उपकरणों को अधिक से अधिक शक्तिशाली बनाने में जुटी रहीं। उसके कर्णधार मिखाइल गोर्बाचेव ने अतीत के पाठ को वर्तमान में पढ़ा और विश्व की दूसरी महाशक्ति अमरीका से पुरानी शत्रुता को भूलकर मित्रता की बात की, तो बीच में आने वाली बाधाओं-आशंकाओं को लांघकर बीसवीं सदी के ८८ वें वर्ष में मध्यम श्रेणी के ऐटमी आयुधों को नष्ट करने का एक छोटा समझौता हुआ। भारत के प्रधान मंत्री राजीव गांधी ने आनेवाले २२ वर्षों में ऐटमी महाआयुधों को क्रमशः संपूर्णतया विनष्ट करने की एक व्यावहारिक कर्म-प्रक्रिया विश्व को प्रस्तुत की। इससे आशा का जन्म हुआ कि तीसरा विश्व-विनाशी विश्व युद्ध नहीं होगा और बीसवीं-इक्कीसवीं सदी के मिलन का दृश्य मानवता देखेगी।

संभव है यह आशा, कुछ निराशाजनक [illegible]टके खाय, पर मेरी अंतश्चेतना स्पष्ट है कि इक्कीसवीं सदी की दिव्य प्रतिभाएं उत्तम मनुष्यों का उत्तम संसार रचने में अप योगदान करेंगी और इक्कीसवीं सदी का साहित्य इस योगदान को सफल बनाने में आत्मार्पित होगा। मेरी उससे यही अपेक्षा है।

—विकास, सहारनपुर-२४७००१, उ.प्र.

०००

☐ डा. जगदीश गु

साहित्य से अपेक्षा जैसा प्रश्न साहित्य-कारों से न होकर साहित्यमर्मियों होना चाहिये। साहित्यकार किसी अपे से साहित्य नहीं रचता। वह आत्मप्रेरि होकर जो कुछ लिखता है, उसमें कालातीत होने की क्षमता रहती है। २१ वीं सदी त उसकी दृष्टि रुकती नहीं, वह तो सदियों जगह सहस्राब्दियों में भी सोचने की क्षम रखता है। सत्य के साक्षात्कार को आधु-निक युग में नयी दिशा मिली है। विज्ञा के प्रमुख हो जाने से भावी युग की कल्प विज्ञान की सफलता से जुड़ गयी है, कि विज्ञान स्वयं निरपेक्ष रहता है। युद्ध की मानसिकता में विज्ञान उसका साधन बनकर अणु-आयुधों और विषाक्त गैसों द्वारा मनुष्य जाति के लिए संकट बन जाता है। मानव कल्याण की दिशा में उसकी यह प्रगति विड-बना बन जाती है। कंप्यूटर युग में पहुंच कर विज्ञान मानव कल्याण की अकल्पनीय दिशाओं का भी उद्घाटन करता है। और ऊर्जा के व्यापक प्रयोग से मानव जीवन को जितना परिवर्तित किया जा सकता है

साहित्य के द्वारा नहीं, ऐसा भी कुछ सोचने लगे हैं। साहित्य और कला को अस्तित्व बनाये रखना २१ वीं सदी चुनौती बन सकता है।

मनुष्य को संवेदनशील और सौंदर्योन्मुख रखने के लिए उसकी कोमल वृत्तियों जागृत बनाये रखना कभी भी आवश्यक नहीं हो सकता, क्योंकि विज्ञान निर्वै- कता की भाषा अपनाकर उत्तरोत्तर बनाता जा रहा है। मनुष्य से मनुष्य की आत्मीयता जिस भाषा के माध्यम से होती वह है मातृभाषा! भारतवर्ष में—'निज की बात 'पर भाषा' से दबायी नहीं सकती।

विश्व मानव की अंतर्राष्ट्रीय भूमिका का समझते हुए भी यह नहीं सिद्ध होता व्यक्ति उन्मूलित होकर कोई सार्थक अपना सकता है। अपनी भाषा और देश के स्वाभिमान को रखते हुए अंत- ीयता भी ग्राह्य है, किंतु उसके निरस्त पर वही विष बन जाती है। मनुष्य के तेजस्विता नष्ट हो जाती है। इस भाषा और साहित्य को स्वाभिमान नवीनता दोनों बिंदुओं से देखने पर वीं सदी में जाना या उसकी कल्पना अपनी मनोभूमि से जुड़े बिना संभव। भारतीय साहित्य और सांस्कृतिक कभी संतुलित नहीं रही, किंतु परा- का युगव्यापी अनुभव उसे सजग सचेत बनाता है। —१८१, ए/१, वासुकि, दारागंज, इलाहाबाद-६, उ. प्र.

डा. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक'

इक्कीसवीं सदी में भारत की जन संख्या-वृद्धि, बेरोजगारी, शिक्षा के स्तर में गिरावट, अनुशासनहीनता, जातिवाद, जन असंतोष और भ्रष्टाचार अपनी चरम सीमा पर पहुंच जायेगा। जो भी सत्ता में होगा, वह वोट की राजनीति पर शासन चलायेगा। राजनीति, समाज और जीवन के हर क्षेत्र में प्रभावी होगा। शहर के लोग व्यस्तता से और ग्रामीण जन राजनैतिक आतंकवाद से पीड़ित होंगे।

कंप्यूटरीकरण से वैज्ञानिक पद्धति का विकास होगा, जिसका प्रभाव दैनिक जीवन पर भी पड़ेगा। साहित्यकार उससे अछूते नहीं रह पायेंगे। कंप्यूटर की लयगति और उसकी वैज्ञानिक भाषा का प्रभाव साहित्यकारों पर भी पड़ेगा। बुद्धिवाद, भौतिकवाद और वैज्ञानिकता के प्रभाव से संवेदनशीलता का ह्रास होना स्वाभाविक है।

उक्त प्रवृत्तियों के फलस्वरूप साहित्य में भी बदलाव आयेगा। बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में साहित्य वादों में बंट गया है। जो वाद निरपेक्ष और साधक साहित्यकार अभी बचे हैं, वे इक्कीसवीं सदी तक समाप्त हो जायेंगे। व्यावसायिकता की प्रवृत्ति भी बढ़ेगी, जिससे मनोरंजक तथा सेक्स प्रधान साहित्य अधिक लिखा जायेगा।

पुस्तकों और पत्रिकाओं के दाम पाठकों की पहुंच से बाहर होंगे। भौतिक समृद्धि हेतु संघर्ष-रत जनता की साहित्य में रुचि नहीं होगी।

साहित्य पर राजनीतिक विचारधाराओं का प्रभाव बढ़ेगा। भारतीय चिंतन, दर्शन और अध्यात्म गौण हो जायेगा। छंद लिखनेवाले खोजने पर मिलेंगे।

शासन द्वारा प्रेरित साहित्य के साथ-साथ विरोधी साहित्य की रचना होगी, जिसका मुख्य उद्देश्य प्रचार होगा। साहित्य जीविकोपार्जन का साधन बनेगा, साधना का नहीं। **–वार्डेन निवास, जयनारायण डिग्री कालेज, लखनऊ-२२६००१**

०००

☐ बद्रीनारायण तिवारी

विगत महायुद्ध की विभीषिका को (हिरोशिमा-नागासाकी) देखने-भोगने के बाद भी संसार के प्रायः सभी तथाकथित प्रगतिशील कहे जाने वाले देशों में हथियार-निर्माण की दौड़ तथा तनाव की स्थिति व्याप्त है। अति भौतिक सुखों से परिपूर्ण व्यक्ति भी मानसिक तनावों से ग्रस्त है।

इसके निराकरण हेतु साहित्य-सृजन की कौन-सी विधा को अपनाने से मानव जाति परस्पर स्नेह के सूत्र में बंधे और शंका की दृष्टि से एक देश दूसरे देश को देखना बंद कर शांतिमय वातावरण का निर्माण हो सके। साहित्य समाज का दर्पण है के आधार पर सत्यकथा, अपराध कथा और यौन कथा के निम्नस्तरीय दूषित साहित्य प्रकाशन के स्थान पर कालजयी साहित्य सृजन समाज और देश को वास्तविक स्वस्थ वातावरण के निर्माण में सहयोगी होगा।

आर्थिक विषमता तथा श्वेत-अश्वेत रंग-भेद की समस्याएं जो सुरसा की भां
अपना मुख फैलाये शांति को निगलने
प्रयत्नशील हैं, उसको 'वसुधैव कुटुंबक
की शाश्वत मूलधारा से जोड़कर वि
बंधुत्व की भावनाओं पर आधारित साहि
की अपेक्षाएं इक्कीसवीं सदी से है।

अपने निवास के मुख्य कक्ष (ड्राइं
रूम) में क्या चित्रों के स्थान पर वास्तवि
आंतरिक चित्र यानी एक्स-रे टांगना पसं
करेंगे।

अतः इक्कीसवीं सदी में वर्ग-वर्ण भे
रहित जन हितकारी साहित्य की अपेक्षा
मुख्यतः हैं। **–मानस संगम, श्रीप्रया
नारायण मंदिर, कानपुर-२०८००**

०००

☐ प्रो. कल्याणमल लो

इक्कीसवीं सदी का प्रारंभ मानव इतिह
के उस युग में होगा, जब विज्ञान औ
तकनीकी ने सामान्य जीवन प्रक्रिया
मूलभूत परिवर्तन कर दिया है एवं बौद्धि
कता ने उसकी संवेदनशीलता और राग
त्मकता को खंडित। मेरी मान्यता है कि
२१ वीं सदी का कला सृजन, जिस
साहित्य भी सन्निहित है, मानवीय संवेदन
और रागात्मकता को नये सिरे से अपना
कर उसे नवीन संस्कार देगा। इस प्रका
साहित्य में आत्म चैतन्य का प्राधान्य होगा-
भाषाओं की संकीर्ण सीमाएं तोड़कर साहि
त्य आस्था, विश्वास और प्रेम का होगा।
अर्थात् उससे अपेक्षा होगी कि वह मशी
से अधिक मानव पर विश्वास करे। मेरी

अपेक्षा होगी मनुष्य के वर्तमान वीपन विच्छन्नताबोध (एलीनेशन) क्ति और आंतरिक एवं बाह्य संकट चुनौती का सामना, जो वर्तमान काल स्पष्ट हो गया है–अर्थात् अंतरिक्ष में ों की महानता पर निस्सारता और कता के परिणामों की असंगति के द्ध जीवन की नयी अर्थवत्ता खोजना । इक्कीसवीं सदी का साहित्य यथार्थवाद विकल्प हो। उस समय साहित्य अपनी नात्मक प्रक्रिया में सतही न रहकर वीय अस्मिता की जड़ें प्राप्त करे । तीसरी अपेक्षा है आधुनिक तकनीकी विकास से मुद्रण और प्रकाशन में आमूल वर्तन, अर्थात् पुस्तक एक प्रकार से ‘एल- निक बुक’ हो, (यह तो अभी प्रारंभ हो गया है) इससे पुस्तक का मूल्य कम गा।

संचार माध्यम से उसका वितरण गा, वह सामान्य जन-मानस तक सरलता पहुंचेगी और अंतर्राष्ट्रीय धरातल पर विश्व एक साहित्य’ की संभावना और क होगी–साहित्य के माध्यम से विभिन्न स्कृतियों, सामाजिक रीति-रिवाजों का जीवन का आदान-प्रदान सरल और होगा ।

मेरा विश्वास है कि २१ वीं सदी का साहित्य चरितार्थवादी होकर जीवन कता का चित्र होगा ।

–२ ए. देशप्रिय पार्क ईस्ट,
कलकत्ता-७०००२९

□ डा. राममूर्ति त्रिपाठी

इक्कीसवीं सदी के साहित्य से वे ही अपेक्षाएं हैं, जो एक हुजूम को अपने आगे-आगे चलने वाले मशाल से होती है। प्रेमचंद ने साहित्य को ऐसा ही समझा था । मैं भी ऐसा ही समझता हूं ।

शासन चाहता है कि हमारी शिक्षा ऐसी हो जो एक तरफ विश्व की वैज्ञानिक और तकनीकी दौड़ में हमारी पीढ़ी को पीछे न छोड़े, बल्कि साथ-साथ चलने लायक बनाये और दूसरी ओर वह यह भी चाहती है कि वह अपनी परंपरा और संस्कृति से भी विच्छिन्न न हो । भौतिकता और आध्यात्मिकता का मानवता के सेतु से सामंजस्य हो। हम अपनी पहचान की रक्षा करते हुए विश्वरूप बनें। साहित्य से हमें यही अपेक्षा है कि वह इसी भावना से ज्ञात-अज्ञात भाव से परिचालित होकर लिखा जाय । चेतना यही हो–विधा कोई भी हो। अंधकार चाहे जितना प्रगाढ़ होता जा रहा हो–साहित्य के आकाश में जीवन का प्रतिबिंब बनकर चाहे जितनी जगह घेर रहा हो–पर–लेखक या सर्जक की नीयत या मूल चेतना इसी प्रकाश को लाने की बेचैनी से परिचालित हो।**–देवास रोड, उज्जैन-४५६०१०,म. प्र.**

ooo

□ के. पी. सक्सेना

कैसी इक्कीसवीं सदी ? अभी तो बीसवीं का ही बारह वर्ष का वनवास बाकी है । आदमी की तरह साहित्य भी भटक रहा है । सब अपने-अपने लग्घे उठाये

खलीफा बने घूम रहे हैं। कई अपने को प्रेमचंद और टैगोर से छटांक-भर कम मानने को तैयार नहीं। इक्कीसवीं सदी से साहित्य की हालत और बुरी होगी। निरंकुश, बेलगाम होगा। मैं तो रहूंगा नहीं तब . . . (खामखाह मेरे शतायु होने की कामना न करें) . . . जो रहेंगे वें भोगेंगे, इक्कीसवीं सदी के साहित्य की मसीहाई! कविता, कहानी, आलोचना की पेशीनगोई मैं कर नहीं सकता, अलबत्ता व्यंग्य सिर चढ़कर बोलेगा। और तीखा . . . और पैना होगा। विसंगतियां और अभाव जैसे-जैसे बढ़ेंगे, व्यंग्य में और भी करारापन आयेगा। हालात जिस रफ्तार से गड्ढे में जा रहे हैं, उसे देखकर लगता है कि इक्कीसवीं सदी में मूल्यों और मान्यताओं का मलबा ही रह जायेगा . . . साहित्य कौन-सा एस्बेस्टस का शीट ओढ़े है कि अछूता रह जायेगा? हां, अगर आप ज़बर्दस्त आशावादी हों तो लगाये रहें उम्मीदें इक्कीसवीं सदी के साहित्य से। मेरा तो बाप भी इतना आशावादी नहीं हुआ। **—७२, नारायण नगर, रामसागर, लखनऊ-२२६०१६**

०००

□ मृणाल पाण्डे

इक्कीसवीं सदी का नारा हर तीसरे-चौथे दिन किसी न किसी मसले से जुड़ कर लगाया जाता रहा। किंतु अधिकतर लोग यह बात नजरअंदाज कर देते हैं कि इक्कीसवीं सदी मात्र बारह साल बाद हमारे चाहे न चाहे आ ही जायेगी। बारह सालों में दुनिया या मानवता का
कोई ऐसा बदल जायेगा कि, जीवन-
अथवा कला के मानदंड एकदम ही
पलट हो जायें, ऐसी संभावना
कतई नहीं लगती। इसलिए
सदी के साहित्य से भी मेरी वही
हैं, जो बीसवी सदी के साहित्य से हैं-
वह रोचक, सरस, मानवीय और
हो, और अंतत: लोककल्याण से जुड़ा

—संपादक, साप्ताहिक हिंदुस्तान, नयी

०००

□ वीरेन्द्रकुमार

बीसवीं सदी के शेष बारह वर्षों
में मैं दो ही संभावनाएं देख पा
या तो अंतरिक्षीय परमाणु बम
का विकराल युद्ध होकर मानव
नि:शेष हो जाये, पृथ्वी ही
के महासमुद्र में विलुप्त हो जाये।
लोक का समूल विनाश तो संभव ही
सत्ता अविनाशी है। प्रलय के समुद्र पर
नारायण वट-वृक्ष के पत्ते पर नवजात
की तरह हंसते-किलकते दिखायी पड़ते

दूसरी संभावना यह है कि परमाणु
होने से पूर्व ही परमाणु-विस्फोट की
नाशी शक्ति से सत्ताधारी स्वयं ही
हो जायें। सहसा ही उनके भीतर
आद्या मां की करुणा और
मौन विस्फोट से ज्योतित हो उठे।
मात्र की चेतना में अनायास एक
घटित हो जाये। मनुष्य अपनी
सीमाओं से उत्तीर्ण होकर—

रूपांतरित हो जाये। दूसरी संभावना ही अधिक सत्य पड़ती है। क्योंकि सृष्टि और का समूल विनाश संभव ही नहीं। यह ध्रुव सत्य है।

इक्कीसवीं सदी के साहित्य से मेरी अपेक्षा है, कि वह वर्तमान कराल का कार कोमलता से करे। इस सदी के का साहित्यकार कोमलता, सौंदर्य, आत्मीयता, एकात्मकता का क्रांत-साहित्य लिखे। वह अपनी प्रचंड शक्ति और विजनरी स्वप्न-दृष्टि मंत्रवाणी का उच्चार करे, जो और सत्ता के प्रत्येक परमाणु में और प्रेम के स्वर्ण कमल खिला दे। इक्कीसवीं सदी के साहित्य की यह एक नियति है। एक मात्र निर्विकल्प है। ऐसी अतिक्रांति साहित्य ही ला है—शस्त्रों के सौदागर सत्ताधारी नहीं सकते।—**गोविन्द निवास, सरोजिनी रोड, विलेपार्ले (प.), बंबई-४०००५६**

○○○

□ उमाशंकर शुक्ल

में कोई संदेह नहीं कि २१ वीं सदी में साहित्य में बहुत परिवर्तन हो जायेगा लेखकों को संख्या बढ़ जायेगी। कवियों संख्या भी बढ़ेगी। हमारी तो अपेक्षाएं हैं कि जनता को अच्छा साहित्य पढ़ने प्राप्त हो और अश्लील साहित्य पर बंध लगा दिया जाना चाहिये। साहित्य समाज का दर्पण है। बच्चों के लिए कम साहित्य लिखा जाता है। हमारे साहित्यिकों को बालसाहित्य पर अधिक ध्यान देना होगा। बच्चे ही देश के भावी नागरिक हैं। अगर बच्चों को सत्साहित्य पढ़ने को मिलेगा, तो उन्हें बड़े होने पर अच्छा साहित्य पढ़ने की इच्छा होगी।

रामायण, महाभारत तथा अन्य प्राचीन ग्रंथों के आधार पर नयी रचनाएं पाठकों को मिलें तथा विज्ञान के आधार पर भी काफी साहित्य-सृजन किया जा सकता है। लोक साहित्य पर भी लेखकों से हम अच्छी रचनाओं की आवश्यकता महसूस करते हैं।

इक्कीसवीं सदी दूर नहीं है—बस १२ साल बचे हैं और लेखकों व साहित्यकारों को अभी से सत्साहित्य देने की तैयारी शुरू कर देना चाहिये। हमारे संत-महात्माओं ने जो कुछ लिखा है, उसको आधार बनाकर भी अच्छा साहित्य नये ढंग से प्रकाश में लाया जाय। आज से पचास वर्ष पूर्व स्कूलों में रहीम, कबीर, तुलसी, सूरदास, बिहारीलाल, केशव आदि की कविताएं पढ़ायी जाती थीं, लेकिन अब स्कूली पाठ्य-पुस्तकों में से उपर्युक्त कवियों को बहुत कम स्थान मिल पाता है। अच्छा हो कि पुराने कवियों को २१ वीं सदी में भुलाया न जाय, बल्कि उनकी रचनाएं पाठ्य पुस्तकों में रखी जायें। **—पत्रकार, वर्धा, महाराष्ट्र**

○○○

□ जयप्रकाश भारती

बीसवीं सदी के उषाकाल में मानव न बालक के बारे में सोचना शुरू किया।

साठ-सत्तर बरस में वह इस स्थिति में आ पहुंचा कि 'अंतर्राष्ट्रीय बाल वर्ष' मनाया गया—पूरी पृथ्वी के बच्चों के बारे में सोचने लगा। यह चिंता तेजी से बढ़ती जायेगी। इसके साथ ही बच्चों की संख्या भी बढ़ती रहेगी। ऐसी स्थिति में साहित्य का मूल स्वर बालक और उसका मनोविज्ञान ही रहेगा। कविता, कहानी, उपन्यास पढ़ने का समय लोगों के पास न होगा।

२१ वीं सदी में ब्रह्मांड के अनेक रहस्य मानव के सामने उजागर हो जायेंगे। ब्रह्मांड के रहस्यों से जुड़ी सत्य-असत्य कथाओं में लोगों की रुचि विशेष बढ़ेगी। २१ वीं सदी के मध्य तक किसी नयी सभ्यता से मानव की पहचान हो जायेगी। तब हमारे सभी मूल्य बिखर जायेंगे। लोग यह भूल जायेंगे कि साहित्य किस चिड़िया का नाम है। जो-जो वाद साहित्य में खड़े किये गये हैं, उनका ऐतिहासिक उल्लेख भी कहीं नहीं होगा। उस समय का इन्सान अपने पूवजों की कूपमंडूकता पर बस मुस्करा देगा। **—संपादक 'नंदन', नयी दिल्ली-१**

०००

☐ शंभुशरण द्विवेदी 'बंधु'

वस्तुतः आपने 'इक्कीसवीं सदी के साहित्य से अपेक्षाएं' विषय को उठाकर एक मानसिक भाव-भूमि के सृजन का स्तुत्य प्रयास किया है। वैसे तो चारों ओर २१ वीं सदी में प्रवेश का बड़ा शोर है, किंतु आपका यह उपक्रम साहित्य मनीषियों एवं जन-सामान्य को एक साथ गंभीर चिंतन व मनन का सुअवसर प्रदान क है और २१ वीं सदी में प्रवेश का प पाथेय जुटाता-सा प्रतीत होता है।

वास्तव में जिस गति से आज वि बढ़ रहा है, उसके अनुसार २१ वीं स सबसे भयावह समस्या जन-संख्या वि की होगी। साथ ही जीवन के प्रत्येक क्षेत्र यंत्रीकरण के प्रसार तथा प्रयोग से मा मूल्यों तथा मानवीय क्षमताओं में नि ह्रास भी आने की आशंका है। इन प स्थितियों में साहित्य से बहुत अपेक्षाएं है

विज्ञान ने यातायात तथा संचा साधनों की नवीनतम तकनीक विक करके एक देश को दूसरे देश से तथा समाज को दूसरे समाज से बहुत निकट दिया है; किंतु ऐसा प्रतीत होता है इससे मानव-मानव की आंतरिक और बढ़ी है। मनुष्य-मनुष्य में भाई की भावना भरने का कार्य तो संवेदन साहित्य ही कर सकता है। भौतिकवाद ओर उन्मुख समाज को नैतिक मूल्यों पाठ भी साहित्य ही पढ़ा सकता है।

अस्तु, मेरे विचार से २१ वीं सदी साहित्य इतना प्रखर तथा मुखर हो चाहिये जो कि मारक एवं भयानक पर अस्त्रों के सर्वग्रासी तुमुल-नाद को चीर कर मानवता की विजय-दुंदुभी ब सके और लोगों के अंतस्तल में सुकु भावनाओं का ज्वार उठा सके।

जहां तक भारतीय एवं हिंदी साहि की बात है हमें यही अपेक्षाएं रखनी चाहि

साहित्य में मौलिक तथा यथार्थवादी ष्टिकोण अपनाया जायेगा । भारत अपने सुधैव कुटुंबकम्' के महामंत्र का भाव-त्र 'जन-गण-मन' में जागृत कर राष्ट्र-ता के सर्वोदय स्वप्न को साकार कर गा । यदि बारह वर्षों के लंबे अंतराल स्थितियों के विषय में द्रुत-गति से बदलते र इस वैज्ञानिक युग में हम कोई बहुत र्क तथा निश्चित भविष्यवाणी करने में र्थ नहीं हैं, तथापि आने वाले कल को धिक गतिशील तथा सुखकर बनाने की ल्पना तो कर ही सकते हैं ।

–३२०८, रानानगर, रायबरेली-
२२९००१, उ. प्र.

०००

☐ डा. श्रीपालसिंह 'क्षेम'

श की वर्तमान शासन-सत्ता ने यह संकल्प लिया है कि वह शेष अवधि देश को उन सभी साधन-संसाधनों एवं क्तियों से इस स्तर पर सक्षम बना दिया ए कि वह आगामी इक्कीसवीं शदी को न सभी चुनौतियों एवं अपेक्षाओं के लिए र्थ होकर विश्व मानव की उस वैज्ञानिक और प्राविधिक प्रतिस्पर्द्धा में सहभागी था सहयोगी सिद्ध हो सके । आज वैज्ञानिकी और तकनीकी, मानव-विकास एवं कल्याण का प्रमुख आधार बन गयी है । ज धर्म मूल संस्कृति एवं परंपरागत न्यताएं गौण-स्थानीय होती जा रही हैं र भौतिक जीवन दृष्टि ही, मानव-जगत का एकांत लक्ष्य बनती जा रही है। यदि भौतिक-प्राविधिक प्राप्ति का यही उद्दाम प्रवाह निरंतर विकसित होता गया, तो यह शक्ति और जीवन-दृष्टि ही, मानव का एकमेव उपास्य बन जायेगी–बहुत-कुछ तो बन भी चुकी है ।

सृष्टि का केंद्र मानव ही रहा है और रहेगा । विश्व-जीवन की सारी सार्थकता और मूल्यवत्ता, मानवीयता के आकलन एवं मूल्यांकन में ही तो अंततः चरितार्थ होगी । साहित्य एकमेव मानवी संपृक्ति है । मानव, विशेषतः समाज-संलग्न मानव जहां और जिस भी परिवेश में होगा, साहित्य किसी न किसी रूप में, उसकी सत्ता-व्यवस्था के विस्तार का एक अविच्छेद्य अंग होगा । विशेषतया जब वह साहित्य-सर्जना से जुड़ चुका है तो अब आगे जो भी व्यवस्था हो, उससे उसके ऊपरी-रेखा और साधक गुण-रंग के न्यूनाधिक परिवर्तन के बावजूद वह विच्छिन्न नहीं रह सकता । साहित्य मानव चेतना का गुण और उसकी अंतः प्रेरित अभिव्यक्ति होता है । इस दृष्टि से इक्कीसवीं शती के मानव-साहित्य में उसकी उसी चेतना की अभिव्यक्ति होगी, जो इक्कीसवीं शती में पहुंचकर विकसित-प्रकाशित कर चुका रहेगा । पिछले युगों के साहित्य की अपेक्षा, उसमें उसकी वे विशिष्ट जीवन-संपृक्तियां, प्राथमिकताएं और वरीयताएं भी अपना स्थान सुरक्षित रखेंगी, जो उसने अंगीकृत कर ली होंगी ।. . .

एक उदात्त रोचकता, प्रीतिकर विश्वसनीयता और संप्रेषण-संवेदन की निजता

के सहारे, जिस अंश-सीमा तक इक्कीसवीं शती का साहित्य मानव की अंतर संपन्नता को सुरक्षित, विकसित और प्रभावी बनाने में सार्थक सिद्ध होगा, वही उसकी मूल अपेक्षाएं हैं। **–क्षेम सदन, १५४, शेखपुरा, जौनपुर-२२२००२, उ. प्र.**

ooo

☐ प्रतापनारायण टंडन

इक्कीसवीं शताब्दी वैज्ञानिक प्रगति तथा भौतिक उत्कर्ष का अनियंत्रित काल होगा। ऐसे में वैज्ञानिक यांत्रिकता तथा भौतिकता जितनी अधिक बढ़ेगी, मनुष्य का जीवन उतना अधिक व्यस्त तथा संत्रस्त होगा। तब मानव अपनी मानसिक शांति के लिए आध्यात्मिकता तथा भक्ति की ओर झुकेगा। स्वभावत: तब ऐसे साहित्य की रचना अनिवार्य होगी, जिसमें एक ओर व्यंग्य और विश्लेषण होगा, दूसरी ओर भाव और भक्ति की धारा बहेगी। ऐसा ही साहित्य इक्कीसवीं सदी के मानव के मस्तिष्क और मन दोनों को तुष्ट कर सकेगा। **–प्रताप कुटीर, कन्नौज, उ. प्र.**

ooo

☐ र. शौरिराजन

भिन्न रुचि के बावजूद बदलते साहित्यिक तेवर को जमाने के रवैये से कदम मिलाना ही पड़ता है। अभी से लक्षण नजर आ रहे हैं–इक्कीसवीं सदी का भारतीय व्यक्ति सामाजिक चेतना, राष्ट्रीय एकात्मभाव, मानवतावादी जीवन मूल्य, सहयोगी-सहकारी प्रवृत्ति, घर-गली-मुहल्ला-कस्बा-शहर-प्रांत, बंधु-बांधव के मोहबंधन से

कारा, ज्ञान-विज्ञान का साधिकार

और अथक परिश्रम को अनिवार्य

साधनों के रूप में अपनाने को विवश

इस कालखंड के साहित्य से मेरी

क्षाएं हैं :

१. पूर्वोक्त जीवन-साधनों को

विकासशील बनाते रहने की प्रतिबद्ध

२. घर-आंगन और कस्बे की उलझ

अपेक्षाओं, आकांक्षाओं के इर्दगिर्द न

वृहत्तर परिवेश-पर्यावरण में सिर

की विवशता।

३. प्रेम-मुहब्बत को यौनाकर्षण, नि

आवेग, कामिक धंधे से ऊपर उठकर

नारी के समान, सम्मानपूर्ण अधिकार

सापेक्ष अस्तित्व, पूरक व्यक्तित्व पर

रखने की अनिवार्यता।

४. राजनीतिक प्रवंचना, प्रदूषण,

अवमूल्यन, भ्रष्टाचार, और शोषण

विरुद्ध आक्रामक और विजयी अभियान

५. भारत की सर्वतोमुखी विका

धाराओं के लिए मार्ग प्रशस्त करने

सशक्त भूमिका।

बस, इतने में कुछ का श्रीगणेश हो

तो गनीमत समझूंगा। **–२९३, ४१ स्ट्री सेक्टर ८, के. के. नगर, मद्रास-६०००७८**

ooo

☐ रामेश्वर दयाल दुबे

इक्कीसवीं सदी के आगमन की चर्चा जब से शुरू हुई है, तब से देखता हूं कि बीसवीं सदी का शेष काल ही महत्वहीन और

त-सा हो रहा है। सब की निगाहें सवीं सदी पर लगी हैं। भविष्य को वर्तमान ही बताता है, फिर भी अपे- तो व्यक्त की ही जा सकती है।

साहित्य की भूमिका में सर्व का हित मान रहता है। साहित्य होता तो है व्यक्ति की भावराशि का प्रकाशन, तु उसमें व्यक्त होती है मानव मन की । होना भी यही चाहिये।

इक्कीसवीं सदी का साहित्य अपनी परंपरा को कायम रखे और वह 'सर्व- हिताय, सर्वजन सुखाय' बने—उससे यही शा रखना वांछनीय होगा।

-चित्रकूट, निरालानगर, लखनऊ, उ. प्र.

०००

☐ नरेशचन्द्र चतुर्वेदी

(संसद सदस्य)

आज का अधिकांश साहित्य, कुंठा, संत्रास्त और बिखरते हुए व्यक्तित्व सामाजिक शृंखला के टूटन का साहित्य ता जा रहा है। मानव की समग्रता को नात्मक धरातल पर प्रतिष्ठित करने प्रवृत्ति उसमें बहुत कम मात्रा में दृष्टि- चर होती है। परंतु साहित्य की शक्ति की टूटन और घुटन में नहीं, उसकी इच्छा शक्ति और उच्चादर्शों को करने के प्रयत्नों में होती है, वही उसे से समष्टि में रूपांतरित करता है। अपराजेय पौरुष की ऊर्जा ही त्यिक अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान ती है। मानवीय चेतना की समग्रता को समेटना ही उसका मुख्य लक्ष्य होता है। व्यक्ति, समाज और संसार के परिवर्तन की प्रक्रिया का आधार वही साहित्य बन सकता है, जो मनुष्य की अंतर्वर्ती ऊर्जा को विकसित और प्रकाशित करने में सक्षम हो।

आज ज्ञान और विज्ञान दोनों ही मनुष्य की विकास यात्रा के प्रमुख सोपान हैं। ज्ञान ने अंतर को और विज्ञान ने बाह्य को जगा दिया है। दोनों में से किसी एक को भी छोड़कर न तो आज चला जा सकता है और न अपने को सार्थक बनाया जा सकता है। ऐसी स्थिति में मैं समझता हूं कि २१वीं सदी का साहित्य विज्ञान का विस्तार और ज्ञान की गहराई को अपना कर ही चल पायेगा। अगली सदी का साहित्य ज्ञान के आलोक में विज्ञान का मार्ग अपना कर चल सकेगा। यहां यह भी कह देना चाहता हूं कि व्यक्ति और समाज की पीड़ा तथा शारीरिक ही नहीं, मानसिक वेदना भी तथा सहज मानवीय स्वभाव-गुण को छोड़कर साहित्य की कोई उपयोगिता नहीं रह सकती। यह उसका शाश्वत धर्म ही रहेगा। विज्ञान की निर्ममता साहित्य की प्राणधारा कभी नहीं बन सकती, किंतु मानवीय स्पंदन विज्ञान के विवेक से संवारा जा सगता है। मेरे विचार से अगली शताब्दी के साहित्य का प्रमुख स्वर कुछ इस प्रकार का होगा।

मैं सोचता हूं मनुष्य के अंतर में छिपी हुई ऊर्जा की चिन्गारी को जो साहित्य ज्वाला बना सकेगा, मानवीय शक्ति को जो विकसित कर सकेगा, व्यक्ति और समाज

को कर्मशील कर्तव्यपरायण बनने की प्रेरणा दे सकेगा, वही समाज को आनंद की उपलब्धि करायेगा। प्रेरक और आनंदोपलब्धि के रूप में अगली शताब्दी का साहित्य नये क्षितिज को खोज लेगा, ऐसा मेरा अटल विश्वास है। **–२७, नार्थ एवेन्यू, नयी दिल्ली**

०००

डा. उषा मेहता

इक्कीसवीं सदी के साहित्य से मैं यह अपेक्षा करती हूं कि जैसे स्वतंत्रता संग्राम के दौरान साहित्य लोगों में राष्ट्रीयता की भावना का संचार करता था, वैसे इक्कीसवीं सदी का साहित्य ऐसा हो, जिससे लोगों को शोषण विहीन और समतायुक्त समाज की स्थापना, शांति और भाईचारे की भावना पर आधारित नयी दुनिया का निर्माण करने की प्रेरणा मिले।

–मणि भवन, लेबर्नम रोड, गामदेवी,
बंबई-४००००७

०००

क्षेमचन्द्र सुमन

आपने उचित समय पर यह प्रश्न लेखकों के समक्ष उठाया है। आज सभी क्षेत्रों में 'इक्कीसवीं सदी' के नाम पर जो कुछ देखने को मिल रहा है, वह कुछ संतोषजनक थोड़े ही है। फिर साहित्य का क्षेत्र तो सर्वथा उदात्त और अवदात है। भारतीय साहित्य की जो परंपराएं युग-युगों से चली आ रही हैं और जिन पर चलकर हमारे पूर्ववर्ती मनीषियों और कवियों ने साहित्य का निर्माण किया है, वे क्या कम महत्व रखती हैं ?

आज यह फैशन-सा हो गया है जीवन की प्रत्येक कार्य-प्रणाली को वि वैज्ञानिक तुला पर तौलकर उसे 'इक्की सवीं सदी' की ओर अग्रसर किया जा है। साहित्य तो समाज की सनातन नि है और वह समाज को सदैव आलोक प्र करता रहा है। उसे वैज्ञानिक के आवर आवेष्ठित करना तर्क-संगत नहीं। जि साहित्य को आर्ष वाणी में 'पश्यहि न काव्यम् न ममार न जीरियति' कहा गया क्या वह वैज्ञानिक परिवेश से परिव हो सकता है ?

यदि ऐसा हो भी गया तो वह ह देश और हमारी अस्मिता के अवसान ऐसा भीषण रूप होगा कि हम अपने स्व को ही सर्वथा खो बैठेंगे। जिस साहित्य सभी मानवों के कल्याण की बात उन्मु भाव से परंपरा से समाविष्ट होती चली रही है, उसे आज वैज्ञानिक आवरण पह कर यदि विकृत करते हैं, तो वह अत्य ही भयावह होगा।

साहित्यकार तो सदैव समाज को न दिशा देने वाला होता है, उसे समाज किसी भी विकृति से पराभूत नहीं हो चाहिये।

उसी से हम अपने जन-जन में ' विश्वम् भवत्येकनीडम्' की पुनीत भाव उदभूत कर सकेंगे।

–अजय निवास, दिलशाद कालोनी,
शाहदरा, दिल्ली-११००३

फरार वैज्ञानिक

□ प्रवासी विनयकृष्ण

मरीका-स्थित मेरियन जेल में जॉर्ज ब्रिग्स नामक एक युवा कैदी बंद था । उम्र कैद की सजा सुनायी गयी थी । छोटी-सी उम्र में उतनी बड़ी सजा के जूद उसके चेहरे पर हमेशा मुस्कान ती रहती थी ।

एक रात मौका पाकर जॉर्ज ब्रिग्स से फरार हो गया । जेल-प्रशासन की र से उसे ढूंढ़ निकालने का हर संभव न हुआ, मगर कहीं उसका पता न । इस सिलसिले में जेल के चार-पांच दारों को नौकरी से मुअत्तल भी कर गया है ।

कुछ दिनों बाद फरार कैदी जेल के वाजे पर खुद आकर खड़ा हो गया । उसे ही जेल के पहरेदारों व अधिकारियों खलबली मच गयी । जेलर ने अचरज-स्वर में पूछा–'जॉर्ज, तुम फिर लौट आये . . . ?'

जॉर्ज ब्रिग्स ने मुस्कराकर कहा–'लौट आना ही था, सर !'

जेलर ने भौंहें कमान करते हुए पूछा–'लौटना ही था, तो फिर जेल से तुम क्यों थे ?'

जॉर्ज ने उत्तर दिया–'मुझे भागना ही था, इसलिये भाग गया !'

जेलर ने कर्कश स्वर में कहा–'पता है, तुम क्या कह रहे हो ?'

जॉर्ज ने शांत स्वर में उत्तर दिया–'अन्यथा न लें, महोदय . . . आपको शायद पता न हो कि मैं एक विज्ञान का विद्यार्थी रहा हूं . . . जेल की ऊंची-ऊंची चार दीवारों में बंद रहने के बावजूद मैंने समुद्र के खारे जल को पीने योग्य बनाने की एक सरल विधि खोज निकाली है . . . !'

जेलर बोला–'सो तो ठीक है . . . मगर तुम जेल से फरार क्यों हो गये थे ?'

जॉर्ज ने हल्की झुंझलाहट के साथ जवाब दिया–'फरार होने के लिए आप ही ने मुझे मजबूर किया था, जेलर साहब !'

जेलर ने डांटने के लहजे में कहा–'क्या बकते हो ? मैं तुम्हें भागने के लिए क्यों मजबूर करने लगा ?'

जॉर्ज ने शांत स्वर में कहना शुरू किया–'मैंने आपसे प्रयोगशाला में परीक्षण करने की अनुमति मांगी थी, जिसे आपने नामंजूर कर दिया था . . . विवश होकर मुझे जेल की ऊंची दीवार फांदनी पड़ी . . . जान पर

गीत

आलोकित है पंथ हमारा, तुमने दीप जलाया होगा।
ज्योति तुम्हारी ही परछाईं
उज्ज्वलतम भावों की बाती,

प्राणों का अवलेह नेह है
दीप स्वयं दीपक की थाती।

शलभों का स्वर प्रणय निवेदन रंध्रों में भर आया होगा।
आंगन से देहरी तक आकर
तुमने नयन बिछाये होंगे,
किन्तु उपेक्षित पथ को पाकर
वे सहसा भर आये होंगे।

पग ध्वनियों का स्वर रह-रह कर अंतस से टकराया होगा।
कम्पित दीपशिखा ले कर में
प्रतिबिम्बित दृग के काजल में,
पूजा गृह तक आयी होगी
दो आंसू ढुलके आंचल में।

विवश सजल लोचन में मेरा, चित्र उभर कर आया होगा।

—बालकृष्ण मिश्र
मंचितपुर, बूढ़नपुर, रायबरेली, उ. प्र.

खेलते हुए सीधे मैं मिसौरी यूनिवर्सिटी पहुंच गया... वहां के वैज्ञानिक मेरे प्रयोग-परीक्षण पर समुचित कार्यवाही करने पर राजी हो गये हैं... इसलिए मैं सजा भुगतने के लिए जेल लौट आया हूं, श्रीमान!'

जेलर ने जॉर्ज ब्रिग्स की पीठ थपथपाते हुए कहा—'माना कि तुमने जेल के कायदे-कानून तोड़े हैं, इसके लिए तुम कठोर से कठोर दंड के भागी हो... लेकिन, चूंकि तुमने संपूर्ण मानव-जाति के हित के लिए वैज्ञानिक अनुसंधान किये हैं, इसलिये तुम्हें पुरस्कृत भी किया जाना चाहिये, युवा वैज्ञानिक!'

जेलर की अनुशंसा के आधार पर जॉर्ज ब्रिग्स की सजा काफी कम कर दी गयी थी।

—अशोक राजपथ, पटना-८००००१

□

विष्णुपत्नि ! नमस्तुभ्यम्

□ डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव

ली-असंख्य झिलमिलाते दीपों का सम्मिलन, अमावस्या के गहन अंधकार में प्रकाश नंन, और जगन्माता श्रीलक्ष्मी का पूजन। श्रीलक्ष्मी–शोभा, सौंदर्य, सुख, संपन्नता, य, ऐश्वर्य और सृजन की देवी। निरुक्त में 'लक्ष्मी' शब्द की व्युत्पत्ति 'लाभ' अथवा ों के कारण मानी गयी है–लक्ष्मी लाभाद्वा लक्षणात्। लक्ष्मी के गुणों में ज्ञान, ऐश्वर्य आरोग्य, धन, धान्य तथा विजय आदि गिनाये गये हैं–ज्ञानैश्वर्यं सुखारोग्यं धनं धान्यं जयादिकम, लक्ष्य यस्या समादिष्टं सा लक्ष्मीति निगधते।

ी' तथा 'लक्ष्मी' दोनों वैदिक शब्द हैं। 'श्री' से शोभा, सौंदर्य, ज्ञान श्वर्य का तथा 'लक्ष्मी' से धन-धान्य, ृद्धि, सौभाग्य और सृष्टि का बोध है। वैदिक युग में एक निर्धन किंतु और विद्वान् व्यक्ति 'श्रीमान्' कहा था, परंतु 'लक्ष्मीवान्' नहीं। इसी का राजा या धनी व्यक्ति 'लक्ष्मी- था, किंतु विद्या और विवेक के में 'श्रीमान्' नहीं हो सकता था। चलकर 'श्री' और 'लक्ष्मी' दोनों मिलकर एक हो गये और उन दोनों भी इस मिले-जुले 'श्रीलक्ष्मी' शब्द ाथ आ गये। इस बात की पुष्टि में की गयी है, जहां 'श्री' और 'लक्ष्मी' दिक विष्णु (सूर्य) की पत्नियां बतायी श्रीश्च ते **लक्ष्मीश्च पत्न्यौ**। रात्रि कार भयावह होता है। प्रातःकाल सूर्य के उदित होने पर प्रकृति में शोभा उत्पन्न हो जाती है और सकल प्राणी आनंद-मग्न हो उठते हैं। वृष्टि का कारण भी सूर्य है और वृष्टि से शस्य उत्पन्न होती है जो प्राण का आधार है। इस प्रकार सूर्य श्री (सौंदर्य) और लक्ष्मी (धन-धान्य) दोनों के स्वामी ठीक ही कहे गये हैं।

श्रीलक्ष्मी का उद्भव मातृदेवी के स्वरूप से हुआ है और स्वयं मातृदेवी का स्वरूप पृथिवी से प्रभावित हुआ है। पृथिवी संसार के सभी जीवधारियों को जन्म देती है और फिर उनके जीवन के लिए धन-धान्य उपजाती है। इसीलिये श्रीसूक्त में उसे 'मही-माता' और 'प्रजानां भवसि माता' कहा गया है। अथर्ववेद में भी ऋषि ने स्वीकार किया है कि पृथिवी मेरी मां है और मैं उसका पुत्र–'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्या': सौभाग्यलक्ष्मी उपनिषद् में उसे 'सकल

भुवन माता’ कहकर पुकारा गया है। प्रातः-स्मरण में लक्ष्मी को पृथिवी रूप में ही नमन किया जाता है –

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमंडले ।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ।।

आज भी बाली द्वीप में धन की फसल के समय खेतों में जाकर पृथिवी की जो पूजा की जाती है, उसे श्रीदेवी की पूजा कहते हैं।

श्रीलक्ष्मी : जगज्जननी

मातृदेवी के दैवी स्वरूप का यह अस्तित्व मानव सभ्यता के आदिकाल से पाया जाता है। मातृदेवी के रूप में वह संसार के सभी प्राणियों का आधाररही है। प्रायःसंसार की सभी प्राचीन सभ्यताओं में मां भगवती के दैवी स्वरूप के प्रति आस्था के संकेत मिलते हैं। सृष्टि की आदि शक्ति ही मातृदेवी के रूप में सभी देशों और कालों में जनमानस को अपने वात्सल्य और ममत्व से उद्वेलित करती रही है। सुमेरिया की इनन्ना, बेबीलोनिया की इश्तर, मिस्र की आइसिस तथा भारत की श्रीलक्ष्मी ऐसी ही मातृदेवी रही हैं।

लक्ष्मी का उद्‌भव

भारतीय कलामर्मज्ञ डॉ. आनंदकुमार स्वामी ने ऋग्वेद की देवी अदिति से लक्ष्मी का संबंध स्थापित किया है, क्योंकि अदिति भी श्रीलक्ष्मी के समान जगन्माता, सर्व-प्रदाता तथा प्रकृति की अधिष्ठात्री देवी है। कुछ विद्वानों का अनुमान है कि वैदिक देवी उषा के ही विभिन्न गुण कालांतर में लक्ष्मी एवं सरस्वती में विकसित हो गये। शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि जब संसार की रचना करते-करते प्रजापति थक तो एकाकीपन को दूर करने के लिए उन्हों अपने शरीर से ‘श्री’ को प्रकट किया।

किंतु श्रीलक्ष्मी के उद्‌भव का बहु आधार सागर-मंथन बताया गया है। रा यण, महाभारत तथा अनेक पुराणों में आख्यान पाया जाता है। इस आख् के अनुसार जब देवताओं और असुरों मिलकर मेरु की मथानी को नागवा से लपेटकर क्षीरसागर का मंथन किया उसमें से चौदह रत्न निकले–ऐरावत, वै अश्व, कौस्तुभमणि, विष, वारुणी, अ धेनु, कल्पवृक्ष, चंद्र, शंख, धनुष, धन्वं रम्भा और लक्ष्मी। डॉ. रायकृष्णदास विद्वानों का कथन है कि श्रीलक्ष्मी के स तनया होने की परिकल्पना ऐतिहा तथ्यों पर आधारित है। उनका कह कि प्रागैतिहासिक युग में भारत का व्य रिक संपर्क समुद्र से होकर मिस्र, तथा मेसोपोटामिया से था। प्राचीन भा के व्यापारी बड़ी-बड़ी नौकाओं में वि प्रकार का भारतीय माल उन देशों को जाते थे तथा बदले में वहां से स्वर्ण धन की अपरिमित राशि लेकर वापस थे। उस धन का समुद्र से होकर देश में तथा लक्ष्मी शब्द के धन का पर्याय हो से संभवतः श्रीलक्ष्मी के समुद्र से जन्म कहानी लोकप्रिय हुई होगी।

पुराणों में लक्ष्मी को प्रायः विष्णु कहा गया है। सागर-मंथन से उद्‌भूत त पर जब असुर आसक्त होने लगे, तब दे

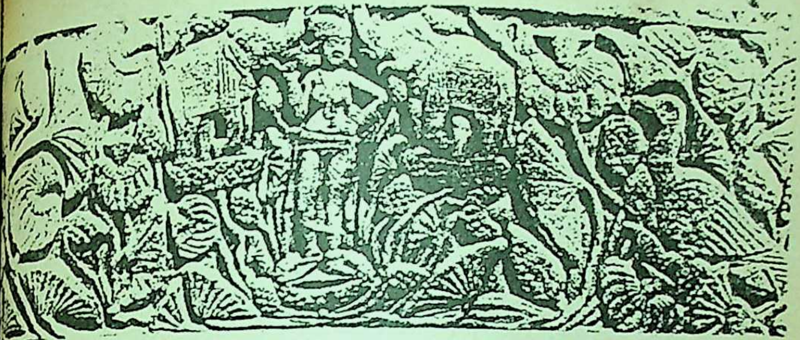

ने उन्हें पहले वारुणी देकर उन्मत्त या और बाद में लक्ष्मी ने विष्णु को ला पहना दी । यजुर्वेद में भी लक्ष्मी न सूर्य की पत्नी कहा गया है वे भी विष्णु ही थे । पुराण पंचलक्षणम् में को दक्ष और प्रसूति की संतान गया है जिसका विवाह धर्म से हुआ जिससे दर्प नाम का एक पुत्र भी हुआ था । रामायण, महाभारत ह्मवैवर्त पुराण में इंद्रप्रिया होने रण लक्ष्मी को इंदिरा भी कहा है।

हाभारत में यत्र-तत्र लक्ष्मी को यक्ष-बेर की प्रिया भी बतलाया गया है । य और ऐश्वर्य की देवी का संबंध धनपति कुबेर से स्थापित करना नितांत संगत जान पड़ता है । श्रीलक्ष्मी पद्मिनी विद्या की अधिष्ठात्री मानी गयी हैं और पद्मिनी विद्या की आधार जो अष्ट निधियां हैं, उनके अधिपति कुबेर कहे गये हैं । अस्तु, इसलिये भी लक्ष्मी और कुबेर का संबंध स्वाभाविक जान पड़ता है । वैसे भी यक्षपूजा भारत में अत्यंत प्राचीनकाल से होती आयी है । अतः कुछ विद्वानों का यह अनुमान सर्वथा असंगत नहीं कि गुणवोधक वैदिक 'श्री' और 'लक्ष्मी' कालांतर में रूपवोधक बनकर किसी यक्षिणी या जन-देवी से जोड़ दी गयीं ।

—५ डी/४, लिडिल रोड, जार्जटाउन,
इलाहाबाद, उ. प्र.

□

पवित्र कल्पना भी उतनी ही बुरी है, जितना बुरा अपवित्र कर्म । संयमित इच्छा परिणाम पर ले जाती है ।

—विवेकानन्द

०००

जिसने एक वार पाप किया वह फिर कभी पुण्य नहीं कर सकता, यह समझना रित्र के एक प्रधान तत्व का अपमान करना है ।

— प्रेमचन्द

□

'सांझी' : नारी के अंतःसौन्दर्य का वाह

□

डा. वासुदेव प्रसाद यादव

क्वार (अश्विन) के महीने में जब बादल हटने लगते हैं, संध्याएं रंगीन होकर और खेत-खलिहानों तक में सब जगह फूलों की बहार आ जाती है, तब फूलों सुकुमार कुमारियों के द्वारा सांझी का व्रत मनाया जाता है। यह सांझी-पर्व कुंआरी का एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण त्योहार है। संझा, सांझी, हंजा, हांजी आदि जन- अपने-अपने अंचल में अपना-अपना संबोधन दे दिया।

मालवा (पश्चिम मध्य प्रदेश एवं दक्षिण-पूर्व राजस्थान) में संजा (सांझी) एक अनुष्ठानिक व्रत है। राजस्थान, हरियाणा, ब्रजमंडल, गुजरात तथा महाराष्ट्र में जिसका किंचित हेर-फेर के साथ वही रूप लक्षित होता है, जो मालवा जनपद में वद्यमान है। महाराष्ट्र में 'गुलाबाई' और बुंदेलखंड में 'मामुलिया' का स्वरूप भी सांझी के ही अन्य रूप हैं।

भाद्रपद की पूर्णमासी से यह पर्व शुरू होता है और क्वार की अमावस्या तक याने कि पूरे सोलह दिन बिना किसी बाधा और अंतराल के बराबर चलता रहता है। यही समय, यही पक्ष हमारे यहां भी कहलाता है। इसमें बालिकाएं बछिया के गोबर से दीवार पर बनाकर उनका फूलों, रंग-बिरंगी एवं अन्य विभिन्न उपकरणों से शृं संध्या के समय उनका पूजन क जैसे-जैसे तिथियां बढ़ती जाती हैं वैसे इन आकृतियों की संख्या भी जाती है।

प्रतिदिन दोपहर से ही किशोरियां की तैयारी उमंग से शुरू कर दे वे नियमित स्नान करती हैं। त कुंकुम का गोल बिंदियानुमा टीका

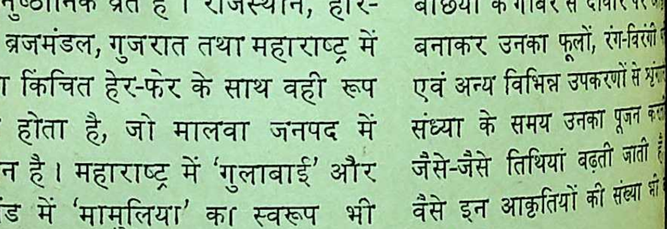

। केश गूंथती हैं, मांग काढ़ती हैं और कुंवारी बछिया के गोबर से साफ- री दीवार पर लिपायी करके, बढ़िया पांडु से पुताई करके ये सारे चित्र, ने, पशु-पक्षी उसी गोबर से बनाती गीले गोबर पर ही रंग-रंगीली पन्नी ाती हैं और उस संपूर्ण चरित्र को पूरा र देती हैं, जो उस तिथि विशेष के तय होता है। सूरज ढलते-ढलते यह बनकर तैयार हो जाता है।

ांझी (संजा) कलेवर का निर्माण र से ही होता है और उसके शरीर को ने के लिये गुलतेवड़ी के फूल परंपरागत ता के अनुसार उपयुक्त हैं। सांझी कृति पर आटा, हल्दी, कुंकुम, कौड़ियां कांच के टुकड़े भी लगाये जाते हैं। पतंगी कागज के कटे हुए हाथी, मोर आदि की आकृतियां खरीदकर दिये जाते हैं।

ंध्या के उतरते झुटपुटे में पंखुड़ियों से सांझी के सामने दीप संजो देती हैं, ा प्रतीत होता है मानो कुंवारियों के र अनुरोध से रीझकर संजा स्वयं रंग- ी किरणों की ओढ़नी ओढ़, सुकोमल यों पर चरण धर, घर के आंगन र आयी हों, और तब सांझी और ों का यह खेल तब तक चलता है जब तक घना अंधकार उतरकर अपने-अपने घर जाने की याद न दे। प्रतिदिन कम-से-कम पांच गीत उनकी आरती-पूजा की जाती है।

सांझी वस्तुत: लोक-चित्रकला का एक नियमित अभ्यास है। लोक-चित्रों के भित्ति-शिल्प का अद्भुत प्रदर्शन है। सांझी किसी कन्या विशेष की ही नहीं, उसके पूरे परिवार और परिवेश के संस्कार का स्पष्ट ही एक लोक-विज्ञापन है। सांझी बनाने के पीछे हर कन्या का उद्देश्य होता है, उसकी मंगल सुहाग-कामना, उसकी अमर सुहागिन होने की आकांक्षा।

सांझी कुमारियों की सहेली है, उनके मन की वाणी है और उनकी आकांक्षाओं तथा सुहाग-कामना की भाष्यकर्त्री है। कन्या अपने माता-पिता से जो कुछ बात नहीं कह सकती, वह सांझी के निमित्त, लोक-गीतों के माध्यम से और बचा-खुचा चित्र-वाणी से कह देती हैं।

मालवा की सांझी में किलाकोट

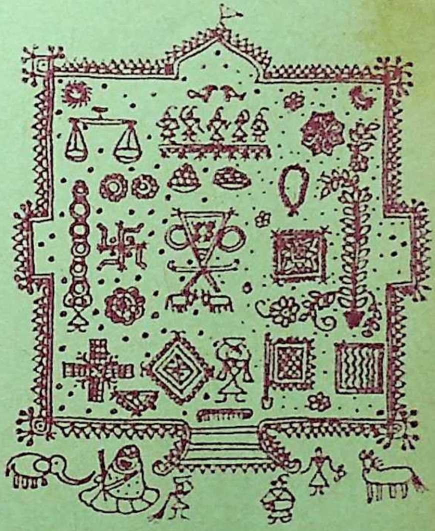

पांच-छह वर्ष की कन्याएं प्रायः सांझी मांडना शुरू कर देती हैं और यह व्रत बराबर उसके विवाह के साथ ही पूरा होता है। ज्यों-ज्यों कन्या का कद बढ़ता जाता है, अवयव आकार लेने लगते हैं, त्यों-त्यों सांझी की ऊंचाई भी बढ़ती जाती है। कन्या के माता-पिता को यह एक तरह की चेतावनी है कि बेटी जवान हो गयी, तैयारी करो।

पौराणिक प्रमाणों से पता लगता है कि सुयोग्य वर पाने के लिए पार्वती ने इस व्रत का प्रारंभ किया था और तभी से यह प्रथा चली आ रही है। सांझी के सम्मुख गाये जानेवाले गीतों से उसके ऐतिहासिक पक्ष पर प्रकाश पड़ता है।

संजा को पीयर सांगानेर
चरण पधारया गढ़ अजमेर,
राणाजी की चाकरी, कल्याणजी को देश
छोड़ो म्हारी चाकरी, पधारो थांका देश।

मालवा जनपद का यही गीत पाठांतर के साथ राजस्थान में इस प्रकार प्रचलित है–

'रखड़ी लो री, रखड़ी लो
रखड़ी लेर म्हारा संजा बाई ने दो
संजा बाई को सासरियो गुड अजमेर
परण पधारया सांगानेर।'

इन सभी पंक्तियों से यह निष्कर्ष निकलता है कि संजा (सांझी) का पीहर सांगानेर नामक स्थान में है और उनका विवाह अजमेर में हुआ था।

सांझी की पूजा सोलह दिनों तक होती है। सोलह दिनों की यह संख्या कुंवारी के पूर्णत्व का द्योतक है। एक-एक दिन कन्या के जीवन का एक-एक वर्ष है। पूनम के
यह व्रत प्रारंभ होता है और अमावस्
दिन पूर्ण होता है। पूर्णिमा कल्याण
प्राप्ति की प्रसन्नता की सूचक है और
वर्ष पूरे होने पर कन्या का विवाह
पितृगृह से विदा करना पड़ता है। यह
पिता के घर की अमावस्या का दिन

पितृगृह से विदाई के समय संजा
गाड़ी का उल्लेख है, जिसमें बैठ
ससुराल जाती है।

छोटी-सी गाड़ी लुढकती जाये
जी में बैठो संजा बाई
घाघरो छमकाती जाये
चूड़लो चमकाती जाये।

सांझी में बनायी जानेवाली सभी
तियां दैनिक जीवन के उपयोग में आने
वस्तुएं हैं। ये सभी आकृतियां बाल
से जीवन की बढ़ती हुई आवश्यकता
गृहस्थ जीवन के मांगलिक प्रतीक हैं।

मालवा की सांझी-परंपरा

सांझी, मालवा की कुंवारी कन्याओं
मुख्य पर्व है। मालवा में सांझी अने
के मुख्य प्रवेशद्वार वाली दीवार पर
बनायी जाती है। सांझी प्रवेशद्वार के
हिस्से में मांडी (बनायी) जाती है। प्र
द्वार के बायें हिस्से में मांडी गयी
को जन-जीवन शुभ नहीं मानता।

सांझी मांडने का क्रम बड़ा मनोवै
है। प्रथम दिन से ग्यारह दिनों तक
नयी आकृतियां बनायी जाती हैं। पहले
की आकृति मिटाकर उसी जगह

बना दी जाती है। ग्यारहवें दिन के
'किलाकोट' बनाना प्रारंभ करते
को अंतिम दिन अर्थात् अमावस
तक सजाते हैं।
दिन गाय के गोबर से चौकोर
संजा (सांझी) बनाने का कार्य
करते हैं। इस लीपे हुए स्थान पर
की पूर्णमासी को पाटला (पाटा
चौकी) मांडा जाता है। फिर शुरू
क्वार (अश्विन) मास। प्रथमा
जाता है 'केल' अर्थात् कदली वृक्ष।
को मांडा जाता है 'बिजोला'।
बच्चों की नजर उतारने का यंत्र
मिट्टी का मंगल उपकरण होता है।
चार मटकियों की मीनार बनाकर
वाली मटको पर एक गुंबदनुमा
पात्र उलटा रखा होता है, जो
में पोला होता है, उसे कहते हैं
। तीज को मंडती है तराजू, चौथ
और पंचमी को पांच कुंवारे
। छठ के दिन छबड़ी (टोकरी)
है, सप्तमी को स्वस्तिक और अष्टमी
जाता है आठ पंखुरियों का
नवमी को डोकरे-डोकरी अर्थात् बूढ़े-
दशमी को पंखा और एकादशी से
प्रारंभ करते हैं 'किलाकोट'। किला-
सज्जा चलती रहती है लगातार
तक अर्थात् अमावस्या तक।
में बनायी जाती है बैलगाड़ी,
हाथी, घोड़ा, चांद, सूरज,
वंदनवार, लड्डू, लाड़ा-लाड़ी
(दूल्हा-दुल्हन), विभिन्न आभूषण, संजा की सखियां, बराती, खोड़या बामन जो संजा को लेने आता है, हाथ के कंगन, पनिहारिन, पतली प्रेमा, चाकर नीचे की ओर और किलाकोट के दरवाजे। लोक-धारणा कुछ ऐसी है कि यात्रा के प्रारंभ में पनिहारिन या मैला ढोनेवाला दिख जायें, तो यात्रा शुभ मानी जाती है। नीचे की ओर अनाज का कोठा भी बनाया जाता है।

यह किलाकोट, वस्तुतः सांझी की विदा की तैयारियों की भूमिका है। उसमें बैलगाड़ी के साथ दहेज का सारा सामान मांडा जाता है। साथ जानेवाली सभी चीजें बनायी जाती हैं। उसे विधिवत् बैलगाड़ी में बैठाकर ससुराल विदा किया जाता है। यह खेत की मेड़ पर से पानी के भरे हुए बेवड़े और चहचहाते पंछियों का शकुन लेकर विदा होती है। उसे जाड़ी जसोदा मिलती हैं, जो उसे संकेत करती है कि ससुराल में जाकर वहां की कुलटा और धूर्त महिला तथा पतली प्रेमा से बचकर रहना। कहीं तेरे पति को अपने जाल में फंसाकर तेरी गृहस्थी न नष्ट कर दे। द्वार पर हाथी और घोड़े मिलते हैं, जो उसके पति को संकेत देते हैं कि संझा बाई का पीहर संपन्न रहा है। इसके द्वार पर हाथी झूमते हैं और घोड़े हिनहिनाते हैं।

सांझी के बहाने कन्या को ससुराल भेजने और उसकी बिदाई की सारी तैयारियां करवा दी जाती हैं। यह एक तरह का लोक-प्रशिक्षण है, जो सदियों से हम अपनी कन्याओं

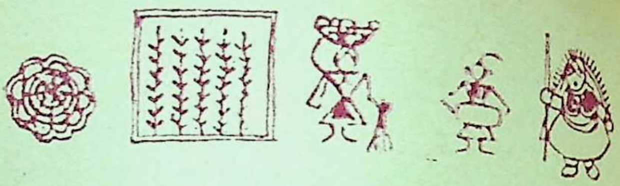

को सांझी के बहाने देते चले आ रहे हैं।

सांस्कृतिक तौर पर यह ऋतु होती है सांझी की। इन दिनों एक ही साथ कन्या का कद, रूप-रंग, चतुराई, कलाकारिता, संगीत और लोक-व्यवहार का प्रदर्शन अपने आप हो जाता है। अपनी-अपनी सांझी हर कन्या अकेली मांडती है। वह अपनी परिकल्पना को गोबर से देखते-देखते आकार दे देती है। सांझी मांडने के वाद याने सूरज ढलने के वाद उसके लोक-व्यवहार की रस-स्निग्धता और संस्कारों की शालीनता का परीक्षण शुरू हो जाता है। संझा की आरती और पूजा के लिए उसे अपनी सहेलियों को निमंत्रित करने के लिए जाना होता है। फिर सारे गांव अथवा मुहल्ले की उसकी सहेलियां किस तरह एकत्रित होती हैं, इसका निरीक्षण किया जाता है। मुहल्ले में वह कितनी लोकप्रिय है, यह बुलावा इसकी कसौटी है।

मामूली पाठांतर से निम्न सांझी-गीत (संझा की आरती) सब जगह प्रचलित है—

पहिली जी आरती
रई रमझोर रई रमझोर
दूसरी जी आरती
फूल गणगौर फूल गणगौर
संझा ऐ के सेली ऐ
मैं थने पूजूं सौ-सौ कलियां सिहासन

सांझी का पर्व समापित होता है, एक गीतों भरी चहल-पहल से शुरू हो लंबी उदासी-सा वातावरण गांव-गांव मुहल्ले-मुहल्ले में छा जाता है। जब सा सांझियां पूरी हो जाती हैं, तब व्रत समापन किया जाता है। शाम को की शुक्ल प्रतिपदा को सारी सांझी खुरचकर एक टोकरी में रखा जाता फिर गाजे-बाजे के साथ उस टोकरी सिर पर उठाकर मुहल्ले-मुहल्ले से कन् के झुंड के झुंड चल पड़ते हैं, किसी नदी तालाब की ओर, जहां उस सारी साम विसर्जित किया जाता है।

साझी-विसर्जन के बाद कुंवारियों चेहरा ऐसा लगता है, जैसे अपनी कि अंतरंग सहेली को ससुराल विदा क लौट रही हों—

तुम तो जाओ संजा वेण सासर
तुम्हारा सासर सी
हत्थी भी आया, घोड़ा भी आया
पालकी भी आयी, म्याना भी आया
तुम तो जाओ संजा वेण सासर।

इस पर संजा (सांझी) कहती है:

हत्थी सामन उभाड़ी
घोड़ा घुड़साल बंबाड़ी

ालकी छज्जा उतारों
याना धाबा घराड़ों
तो नहीं जाऊं, दादाजी सासर ।

कुछ भी हो सांझी के लाख मना भी, उसे ससुराल जाना ही पड़ता यों रात्रि के प्रगाढ़ अंधकार में झड़ियां खो जाती हैं ।

हृदय में संजोयी सांझी

मंडल में भी सांझी-पर्व, कुछ मामूली ओं के साथ, उपरोक्त विधि से ही जाती है। यहां भी सांझी पूजन केवल कन्याएं ही करती हैं । विवाह होने वर्ष वे सांझी खेल सकती हैं । यह उद्यापन कहलाता है ।

का संबंध श्रीकृष्ण से भी जोड़ा है।

व मिलता है कि श्रीकृष्ण ने प्राणेश्वरी राधा को प्रसन्न करने रद की संध्या में जो चित्रात्मक बनायी, वही संध्या समय बनायी कारण सांझी कहलायी । उसके पर श्रीकृष्ण के गो-चारण के ध्या समय लौटने हर उन्हें प्रसन्न लिए अन्य गोपियां भी श्रीकृष्ण की विविध लीलाओं को पुष्पों और रंगों आदि से अपने घरों के बाहर चित्रित करती थीं । वही परंपरा ब्रज में, मंदिरों में तथा प्राचीन घरानों में अभी तक पली आ रही है । सांझी के अनेक चित्र भक्त-कवियों ने अपनी रसभावमयी तूलिका से खींचे हैं । स्वामी हरिदास द्वारा विरचित पंक्तियों से इसके शब्दचित्र के दर्शन किये जा सकते हैं :

चलति चाल मराल बाल-सी
राधा सखियन मांझ,
वीनति फूलनि जमुना कूलनि
खेलति सांझी सांझ ।

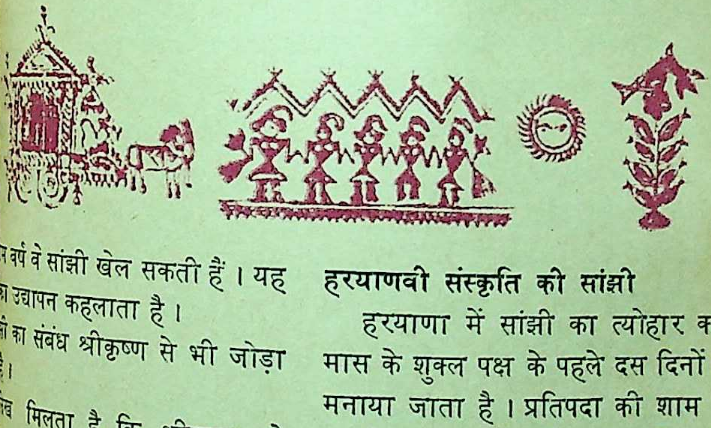

हरयाणवी संस्कृति की सांझी

हरयाणा में सांझी का त्योहार क्वार मास के शुक्ल पक्ष के पहले दस दिनों तक मनाया जाता है । प्रतिपदा की शाम को मुहल्ले या गांव की महिलाएं एकत्रित होती हैं और पहले से निश्चित एक के घर के आंगन में दीवार पर सांझी की स्थापना करती हैं । सांझी 'घालने' (स्थापना करने) के लिए कई दिन पहले से ही लड़कियां चिकनी मिट्टी के चांद-सितारे, आभूषण, हाथ, मुंह और दूसरे-अंग-प्रत्यंग बना लेती हैं । उन्हीं को जोड़-जोड़कर दीवार

पर एक बहुत आकर्षक लोक-आकृति बनायी जाती है। कई स्थानों पर यह आकृति आदमकद तक होती है, तो कहीं छोटी। दांतों के स्थान पर चावलों का प्रयोग होता है। सांझी के मुख पर एक छोटा लाल-सा कपड़ा चिपकाया जाता है। पहले दिन ही सांझी की पूजा होने लगती है और रात गये तक सांझी के गीत गाये जाते हैं।

सांझी के भोजन का, विश्राम का समय हो गया है। बेचारी पीहर से चलकर आयी है। अतः, वह क्या खायेगी, क्यां ओढ़ेगी?

सांझी संझा हे!
के ओढ़ैगी, के पहरैगी?
क्याहैं की मांग सजावैंगी?
क्यांहैं की जड़त जड़ावैंगी?'
श्यालू ओढ़ूंगीं, मसरू पहरूंगी
मोतियों की मांग सजाऊंगी
तार्‌या का जड़त जड़ाऊंगी।

००

साझी संझा हे!
के खाहैगी, के पीवैगी?

००

लड्डू खाऊंगी, दूध पीऊंगी।

सांझी की सहेली घुंघा से भी पूछा जाता है और उसकी पसंद पर रमणियां हंस-हंसकर लोट-पोट हो जाती हैं।

कुछ दिनों बाद सांझी के 'सौभ
आते हैं। बड़े छैल-छबीले हैं सांझी
भाई। बड़ी निपुणता से उन्हें भी दीवार
मांडा जाता है। उनका भी आदर-स
जरूरी है।

दशहरे की संध्या को सांझी, उ
सहेली तथा लणिहार को दीवार से
लिया जाता है और मिट्टी के एक
में सभी सामग्री को रख दिया जाता
अंधेरा होने पर मटके में सांझी के
घी के दीपक जलाये जाते हैं। एक सु
के सिर पर वह प्रकाश से भरा मट
रखा जाता है और महिलाएं गीत
हुई सरोवर की ओर उसे ले चलतीं

उस दिन सरोवर का दृश्य बड़ा
हारी होता है। रमणियों की टोलि
टोलियां अपनी-अपनी सांझी के
घट लिये सरोवर पर आ पहुंचती हैं
से झर-झर प्रकाश झर रहा होता है
वातावरण मंगल गीतों से भर जाता
साथ सभी मंगलघट सरोवर में वि
कर दिये जाते हैं। देखते ही देखते
सरोवर प्रकाश से जगमगा उठता है
लगता है, मानों सरोवर के नीले
आकाश के सभी तारे उतर आये हैं

—९८ अशोक नगर, आगरा-२,

□

० पाप कर्म स्वच्छ दूध के समान तत्काल ही विकार नहीं लाता, वह तो
ढकी अग्नि के समान शनैः शनैः जलते हुए मूर्ख आदमी का पीछा करता रहता है।

० समाज का एक बड़ा भाग पाप को यदि व्यवहार्य बना दे तो वही धर्म हो
है। जो एक के यहां पाप है, वही दूसरे के लिए पुण्य है।

—जयशंकर

□

काफ़िला

□ रामेश्वर शुक्ल अंचल

काफिला आगे बढ़ा जब रक्तरंजित राह से
झिलमिलाती दूर मंज़िल की कसम खाये हुए
धूल मुड़-मुड़कर उसी को देखती उड़ती रही
रह गये अवरोध के अंधड़ कहर ढाये हुए ।

थरथराकर रह गयी तपती दुपहरी की जलन
रह गयीं किरणें दहकती आग के शोले लिये
भूत बनकर रह गया मध्याह्न का सूरज खड़ा
रेत की लू के बगूले रास्ता रोका किये ।

रंग प्याजी पड़ गया झुलसे हुए आकाश का
बादलों को बीनकर जैसे लुवारें खा गयीं
हर दिशा तंदूर-सी फुंकती धधकती रह गयी
हर हवा की सांस बरछी की अनी चमका गयी ।

काफिला आगे बढ़ा फिर भी इसी सैलाब से
और गुज़रेगा इसी लावा उगलती राह से
छातियां भुनकर पहाड़ों की पड़ी रह जायेंगी
काफ़िला बढ़ जायगा होकर इसी दिग्दाह से ।

दूर होती जाय मृगजल-सी छली मंज़िल सदा
आंख से मरु का अकाशीदीप ओझल हो चले
हमसफर नभ के सितारे साथ चाहे छोड़ दें
राह में लुट जाय, कुचला जाय धोखे से भले ।

राह रुकने और मुड़ने का कभी लेता नहीं
काफ़िला हर याद में लेकर बसेरा चल पड़ा
हर दुराशा गीत की आवाज़ देती है उसे
हर थकन में प्रेरणा के स्वप्न का डेरा खड़ा ।

–साउथ सिविल लाइन, पचपेढ़ी, जबलपुर, म. प्र.

□

दास्तान लक्ष्मी-वाहन उल्लू की

☐ वालमुकु

कहते हैं तैमूर लंग का एक सैनिक अधिकारी पक्षियों की बोली पहचानता था। एक दिन विजय दर्प से दीप्त तैमूर एक शहर के खंडहर देख रहा था। तभी एक वृक्ष की तरफ देखकर वह अधिकारी हंसने लगा। तैमूर लंग को अधिकारी के इस अशिष्टता भरे व्यवहार पर बड़ी कोफ्त हुई। उसने पूछा—'अरे हंस क्यों रहे हो इस तरह से?'

इस पर वह गंभीर होकर बोला, 'बादशाह सलामत! गुस्ताखी माफ हो! यह वृक्ष है इस पर बैठे उल्लूओं की बातें सुनकर मेरी हंसी रोकने पर भी नहीं रुकी।'

'क्यों ऐसी क्या बात थी? सच-सच बतलाओ जल्दी से, अन्यथा तुम्हारा सिर कलम कर दिया जायेगा।' तैमूर गरजा!

'हुजूर! एक उल्लू अपनी लड़की के ससुर से कह रहा है कि इस वर्ष शादी कर अपने बेटे की। सुनकर लड़के का बोला—दहेज में पच्चीस-तीस खंडहर तो कर डालें इसी साल। इस पर का पिता उल्लू ठहाका लगाकर अजी! कमाल हो आप भी, पच्चीस क्या आप सौ-दो सौ लो न! बाद तैमूर लंग सलामत रहें तो हम उल्ल के लिए खंडहरों की कभी भी कमी नहीं पायेगी। यह सुनकर मैं हंस पड़ा था।

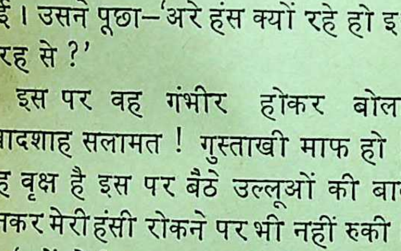

'अरे वाह! हमारी कीर्ति उल्लू भी गा रहे हैं।' तैमूर हंस पड़ा, गंभीर हो गया। तभी उसके दल के शायर ने कहा—हुजूर आलम यह है—

'हर शाख पै उल्लू बैठे हैं
अंजामे गुलिस्तां क्या होगा?'

...और तब तैमूर ने कहा था, 'भार सोने की चिड़िया इसीलिये तो है कि उल्लू लक्ष्मी के संवाहक बने हुए हैं।'

लक्ष्मीवाहन उल्लू

उल्लू को लक्ष्मीजी का वाहन बता जाता है। शायद यह अलंकारिक रूप में हो उल्लू को दिन के प्रकाश में नजर न आता, वह प्रकाश सहन नहीं कर सकता है

ह भाव स्पष्ट होता है कि जो लोग के मद में उन्मत्त हो जाते हैं, उनमें बुद्धि की कमी रहती है वे ज्ञान लौकिक व्यवहार रूपी रोशनी से ते हैं। उनकी गतिविधियां उल्लू के हैं। लक्ष्मी नहीं चाहती कि उनका भक्त धन के मद (घमंड) में अंधा विवेकहीन हो जाये। वह उसका उप- लोकहित में न करे। यदि वह ऐसा है, तो उलूक के समान व्यर्थ ही धन मी) का भार वहन करता है। विद्वानों की मान्यता है कि सारे वर्ष कुन का भविष्य दर्शाने वाला पक्षी दीपावली की रात को लक्ष्मी को र लाकर अपना अनिष्टकारी रूप ने की चेष्टा करता है।

के जन्म की लोककथाएं

लू के जन्म को लेकर कई लोक- कही-सुनी जाती हैं। थाईलैंड की लोककथा के अनुसार उल्लू पहले बहुत ना, हर चीज को मिल-बांटकर खाने पक्षी था। तब उसे दिन में भी नजर था। एक दिन वह उसी वृक्ष पर वाली चिड़िया के अंडे खा गया। लौटी तो उसे सारी बात मालूम उल्लू से उसने पूछा तो वह झूठ बोल किस्मत से तभी उसे दो-तीन बार हुई और जो निकला वह उल्लू की की कलई खोल गया। तब गुस्से में ने उल्लू को शाप दिया कि जिसे दिखायी दे जाओगे उसका अनिष्ट

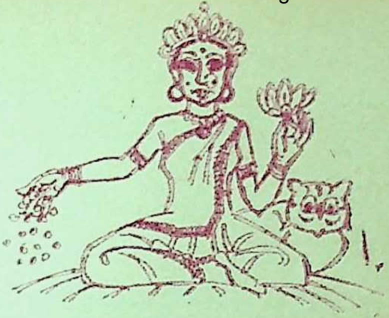

करोगे ! तुम्हें दिन में नजर नहीं आयेगा ताकि तुम किसी के बाल-बच्चों को नष्ट नहीं करो। समुद्र की बेटी अंधेरे में तुम पर सवारी करेगी, इससे तुम्हारी हरकतों पर नकेल पड़ेगी।

श्रीलंका की एक लोककथा के अनुसार एक दुष्ट प्रकृति के पति को अपनी पत्नी के चरित्र पर संदेह बना रहता था। इस शक के कारण वह तरह-तरह से पत्नी को परेशान करता था। एक दिन वह लक्ष्मी-पूजा के लिए गयी। इधर पति ने उसके चरित्र पर संदेह किया। गुस्से में पति ने उसके बच्चे को मारकर उसका मांस एक व्यंजन में मिलाकर पत्नी को परोस दिया। पत्नी को यह बात मालूम हुई तो क्रोधित हो आत्महत्या कर बैठी। लक्ष्मी ने पति को शैतान पक्षी उल्लू बनाकर अपनी सवारी कर ली। पर अभी भी उसे अपने बच्चे के प्रति किये कृत्य की याद आ जाती है। इसीलिये उल्लू कई बार रात में चीखता-चिल्लाता रहता है।

भारत में कुछ फेर-बदल भरे कथानक के साथ यही कहानी मिलाला वनवासियों

और सुमात्रा के वनवासियों में कही जाती है। ग्रीस के लोकजीवन में उल्लू बड़ा सम्मानित जीव है। वे इसका संबंध ज्ञान की देवी एंथीन से मानते हैं। कहते हैं वहां के लोक-देवता 'जों' ने दिन के राजा विष्णु के वाहन गरुड़ का वेश धारण कर लिया। इससे उनकी पत्नी जुनो को बहुत ही दुःख हुआ। तब विष्णु ने अपनी पत्नी लक्ष्मी के लिए उसे उल्लू बना दिया। उल्लू को इसीलिये 'रात का राजा' कहते हैं। इस तरह 'जो जूनो दंपति' विष्णु लक्ष्मी की सेवा करते अमर हो गये।

परोपकारी पक्षी

सुप्रसिद्ध पक्षी विज्ञानी डा. सालिम अली की धारणाओं के अनुसार उल्लू समाजसेवी और परोपकारी पक्षी है। विश्वभर में इसकी १४० जातियां हैं, जिनमें भारत में २५ या २६ ही मिलती हैं। चूंकि चूहों को यह रात में पकड़-पकड़कर खा जाता है, इसलिये खेतों, खलिहानों की रक्षा करता है। श्री अली ने तो कई बार १२ से १५ तक चूहे खाते हुए उल्लू को देखा था। इसकी आंखों में रोड्स एवं कोन्स होते हैं। इनकी वजह से अंधकार में देख लेता है। पंख भी मुलायम होने से शिकार करने जाते वक्त आवाज नहीं होती है। श्रवण शक्ति तेज है। रात्रि में फसलों पर हमले करने वाले कीट-पतंगों को भी यह खा जाया करता है। हिंदू मान्यताओं के अनुसार इसे लक्ष्मीवाहन स्वीकारते हुए सालिम अली कहते हैं कि धन-धान्य की देवी ने इसे अपना वाहन बनाकर इसकी दिव्य दृष्टि, चौकन्नेपन, परोपकारी स्व और खंडहरों में वास की विशेषताओं सार्थक ही किया है। ऐसे पक्षी को अपशकु कहना उसके साथ अन्याय ही है।

तंत्र शास्त्र में उपयोगी

उल्लू को तंत्र शास्त्र में प्रयोगों माध्यम भी बनाया जाता है। मा वशीकरण, उच्चाटन आदि सिद्धियों माध्यम यही पक्षी है। कहते हैं इसके श का तापमान वातावरण के साथ घ बढ़ता नहीं है। सदैव एक जैसा रहता इसीलिये तांत्रिक क्रियाओं में इसका योग किया जाता है।

तंत्र शास्त्री पं. माधव शास्त्री का क है कि यदि प्रभात वेला में पूर्व दि हरे वृक्ष पर बैठा उल्लू बोलता है श्रोताओं को धन मिलता है, उसी दि प्रातः पश्चिम दिशा में सूखे वृक्ष पर बोले तो धन-संपदा का नुकसान या धन की मृत्यु होती है। दक्षिण दि किसी पेड़ या टीले पर बैठा उल्लू तो शुभ सूचक है। मुकदमे में जीत, न्नति, धन-लाभ होता है। रात्रि में पूर्व दि में बोले तो शुभ, यात्रा के समय पीठ पीछे बोलता हो तो यात्रा का उ पूरा होगा। यदि किसी के घर पर ल तीन या इससे भी अधिक बार उल्लू तो चोरी, धन, पशु हानि का संकेत है। के वक्त उल्लू बिना आवाज किये बिस्तर आ बैठे तो मंगल-शकुनी होता है। के बिस्तर पर जा बैठे बिना आवाज कि

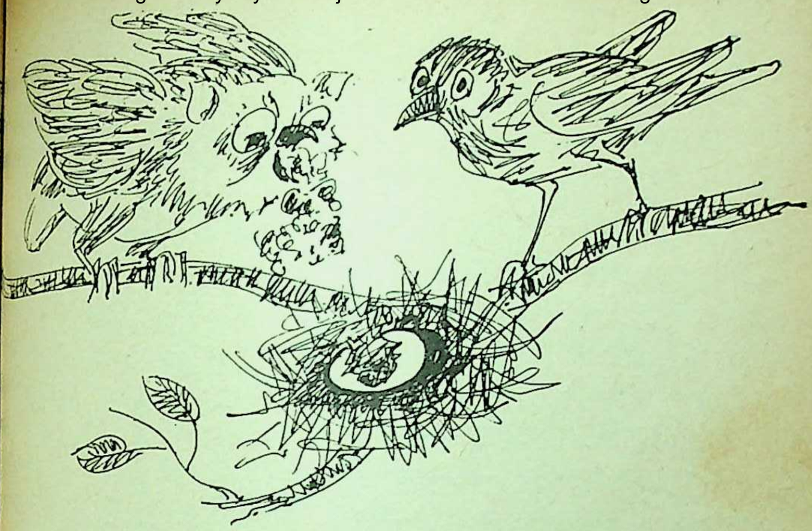

गी शीघ्र ही अच्छा हो जाता है । उल्लू के किसी अंग का स्पर्श हो जाये स ही तो वह दिन मंगलमय होगा। एक लंबी चीख मृत्यु, दो चीखें कार्य लता, तीन चीखें कन्या जन्म, चार उपद्रव, पांच चीखें यात्रा प्रसंग, छह मेहमान आगमन, सात चीखें बीमारी, चीखें भयानक हादसे और नौ या दस चीखें विजय एवं अच्छे परिणामों की मानी जाती हैं ।

टे बच्चों को इसके नाखूनों या पंखों वीज पहनाये जाते हैं। यह भी अंधस है कि उल्लू अपने बच्चों की आंखें पत्थर से खोलकर फिर उसे वहीं आता है, जहां से लाया था। कई री इसी पारस को पाने के लिए वनों के घोंसलों पर पहरा देते हैं । पर इस तथ्य में सच्चाई जरा भी नहीं नजर आती है । वैसे दादी-नानी के नुस्खों के अनुसार इसके सभी अंग औषधियों के काम आते हैं ।

इतनी विशेषताओं वाले पक्षी के होते हुए भी उल्लू को अपशकुनी पक्षी मानना अन्याय ही है इसके साथ ! और मूर्खता का प्रतीक मानकर लोग हर किसी को 'उल्लू है' कह उठते हैं। दीपावली पर आप उल्लू को उल्लू मत बनाइयेगा, अन्यथा वह लक्ष्मी को नाराज करके आपको उल्लू बनाकर ही छोड़ेगा ।

कहिये कैसी रही उल्लू की यह राम कहानी ? दीपावली पर लक्ष्मी को याद करिये तो लक्ष्मीवाहन को भी दंडवत कर लीजियेगा ।

–गोदावरी प्रिंटर्स, अमरनिवास के पास,
दादावाड़ी, कोटा-३२४००९

'परब दिवारी होइ संसारा'—नागमती

असंख्य आलोक पुष्प खिलें!

☐ प्रो. रमेश तिवारी 'वीर

विजयी दीप-शिखा का असीम उल्लास है, दीवाली। पराजित-अमावस का उच्छ्वास है, दीवाली। असीम अंधकार का पलायन है, दीवाली। आलोक गंगा का अवतरण है, दीवाली। आकाश के अनंत नक्षत्र मंडल से धरा की मूर्तिमान स्पर्धा है, दीवाली। मनुष्य की चिर-आलोक पिपासा के लिए, चहुं दिसि, आलोक-वर्षा है, दीवाली।

अंधकार को मनुष्य ने सदैव अपना शत्रु माना है। अंधकार भय उत्पन्न करता है। अंधकार अस्तित्व को विलीन करता है, इसीलिये अपने अस्तित्व की सुरक्षा के लिए वह प्रकाश का मुखापेक्षी रहा है। प्रकृति में अंधकार और प्रकाश का संतुलन है। दिन, प्रकाश की यात्रा है। रात्रि, अंधकार का प्रसार है। 'सम प्रकाश, तम पाख दुहुं' के अनुसार रात्रि में भी प्रकाश और अंधकार का संतुलन प्रकृति ने स्थापित किया है। प्रकृति द्वैतमय है—अतः उसमें तम और प्रकाश दोनों आवश्यक हैं। सृष्टि के लगभग सभी जीवों ने इस प्रकार की व्यवस्था को स्वीकार कर लिया, किंतु मनुष्य ने अपनी बुद्धि के बल पर प्रकृति के इस अंधेरे को चुनौती दी और हर अंधेरे में उजाले की सृष्टि करने का प्रयास किया। 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' को उसने का मंत्र बनाया।

अंधकार में जड़ता है, एकरूपता अकर्मण्यता है, निद्रा है तथा अस्तित्व विलय का भय है; इसीलिये तिमिर है, उपेक्षणीय है। प्रकाश में चेतना विविधता है, कर्मठता है, जाग्रति है अस्तित्व की सुरक्षा है, इसीलिये वह है, वरेण्य है।

अंधकार में आलोक बिखेरने की वीय एषणा ने मानव सभ्यता के इति में प्रगति के अनेकानेक सोपानों पर चरण चिह्न अंकित किये हैं। पत्थर कर अग्नि-शिखा उत्पन्न करने के आदि रूप से लेकर अणुदीप तक उसने की है। दिन-गौरांग है, रात्रि ही श्यामा है रात्रि में भी, चंद्रिका अपनी चेष्टा आलोक बिखेरती ही है; परंतु वस्या की रात्रि अंधकार-असुर की है—पूरी रात्रि अंधकार को समर्पित महानिशा तमोगुण की साकार विव वामपंथी साधना की आधार-भूमि वस्या। प्रकाश-प्रेमी मनुष्य ने इसी अंधकार प्रिया अमावस्या की रात्रि को 'दीपोत्सव में परिवर्तित कर अंधकार की जड़ता

किया है। 'दीपान्विता', 'दीपावली', मालिका', 'दीवाली', 'दीपोत्सव', ज्योतिपर्व', 'आलोकपर्व' आदि इसके नेकों नाम हैं, और सभी नाम प्रकाश के स्तार का अर्थ देते हैं।

इतिहास साक्षी है, इस त्योहार का रंभ ऋतु-उत्सव के रूप में हुआ था। रद आनंद की ऋतु है, मादकता की ऋतु स्वच्छता की ऋतु है। इसी शरद के गत के लिए आर्य एवं द्रविड़ जातियां कोत्सव' मनाती थीं। रात्रि भर अग्नि खाओं के प्रकाश में नृत्य-गीत के सामूहिक कार्यक्रम चलते थे। आज भी बुंदेलखंड में दीपावली पर सामूहिक 'कहरवा' या जाता है।

परिवर्ती युग में यह ऋतु-त्सव, कृषि-उत्सव, बन गया। के विकास के साथ ही ग्रामीण सभ्यता भी कसित हुई। फसल पकी। , कोदों, सामा, ज्वार, , बाजरा की फसलें कूट कर घर आयीं। कों के त्यौहार मनाने का आया। सबसे अधिक मुखता मिली धान को; कि धान आदिम अन्न । धान की 'खील' बनीं। खील अपने आप में प्रकाश प्रतीक है। खील की प्रक्रिया देखें—काली-कलूटी धानी, (अग्नि नहीं) अग्नि के ताप का संपूर्ण संस्पर्श पाकर खिल गयी... श्वेत ... शुभ्र खील। कालिमा के भीतर से जन्मी श्वेताभा मानों तप के प्रभाव से तमोगुण में से सतोगुण खिला हो। इसीलिये इसे 'खिली' कहा गया, जो आगे चलकर 'खील' बन गया।

'दीवाली' केवल आलोक-उत्सव ही नहीं हैं। अन्नोत्सव भी है। अन्न जो ब्रह्म है। आदि युग में मनुष्य भी पशु की भांति, अपक्वाहार ग्रहण करता था, अग्नि से परिचय हुआ तो पाक-शास्त्र का आरम्भिक अध्याय लिखा गया अर्थात् 'भून कर खाना'। 'खील' शाकाहारी पाक शास्त्र की आदि-ऋचा है।

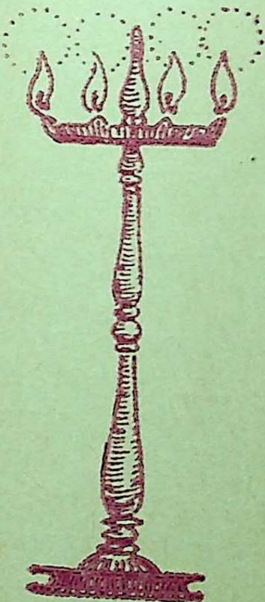

दीवाली आयी। दिये जलाये गये। खील बिखेरकर पूजा की गयी। भौतिक अंधकार में प्रकाश बिखेरने का दायित्व, नन्हे दीपकों ने संभाला और उदर के क्षुधा--जन्य अंधकार में तृप्ति का आलोक बिखेरा नन्ही-नन्ही खीलों ने। परिवर्ती युग में खील के साथ 'बताशा' भी जुड़ गया। यह किसी बालक की मधुर योजना रही होगी, या संभव है, ब्राह्मण की माधुर्यलिप्सा का परिणाम हो, 'ब्राह्मणं मधुरं प्रियम्।' ग्रामीण सभ्यता के विकास

के साथ-साथ धीरे-धीरे धर्म को प्रमुखता प्राप्त हुई। धर्म अपने विविध रूपों में विकसित हुआ। पुराण युग ने दीपावली को धर्म से जोड़ दिया। शाक्तों ने इसे 'नरकासुर-बध' और वैष्णवों ने 'राम राज्याभिषेक' से अनुबंधित किया। बौद्धों ने बुद्ध के बोध-प्राप्ति के क्षण से . . . और जैनों ने इसे महावीर के निर्वाण से संबंधित किया। प्रकाश की कामना सब करते हैं, इसोलिये ऋतु-स्वागत में जन्मा यह लोकोत्सव, कृषि को अपने में समाहित करता हुआ, धार्मिक व्यंजनाओं का वाहक बन गया।

मध्य अर्वाचीन युग, सुख समृद्धि का युग था, अतः इस समृद्धि ने इसके साथ ही लक्ष्मी-पूजन एवं द्यूत-क्रीड़ा को जोड़ दिया। परिवर्ती युग में यह इसीलिये लक्ष्मी पुत्रों का त्यौहार बन गया।

प्रारंभिक युग से आज तक इस पर्व ने सामाजिक आवश्यकताओं तथा परिस्थितियों के अनुसार अनेक रूप धारण किये हैं। उत्तर अर्वाचीन युग में सुधारवादी दृष्टि ने लक्ष्मी के साथ गणेश के पूजन की परंपरा का विकास किया। गणेशजी विवेक के देवता हैं—विनायक हैं। विवेकहीन लक्ष्मी अमंगलकारी होती है। अथवा जहां लक्ष्मी के साथ विवेक का उपयोग नहीं; वहां लक्ष्मी स्थायी न रहेगी। व्यक्ति और समाज का कल्याण इसी में है, कि लक्ष्मी के साथ गणेश सदा, विद्यमान रहें। वर्तमान युग में बहुप्रचलित 'बजट' लक्ष्मी के व्यय में गणेश (बुद्धि) के उपयोग का ही आधुनिक संस्करण है।

दीवाली पर 'ज्योति-शिशु', नन्हे-न
दीपों की पंक्तियां सजाने के साथ ही
ऊंचाई पर 'कंदील' टांगने की परंपरा
रही . . . रंग-विरंगे कंदील। श्वेतप्रका
को रंगीन बना देता है, कंदील। रंगबि
मनुष्य की कला-प्रियता का प्रमाण
कंदील। समुद्र तटीय क्षेत्रों में टंगे 'आका
दीप' के अनुकरण पर इसी परंपरा
जन्म हुआ होगा, जो वाद में चारों
फैल गयी।

जो जैसा है, उसे वैसा ही स्वीकार
लेना मानव-स्वभाव के प्रतिकूल है।
अपने ढंग से परिवर्तन करता है, रंगता है
कृत्रिम ही सही, पर अपनेपन का वोध
उसे लगे कि यह मेरा कृतित्व है।
कृतित्व सुख के लिए वह प्रकृति को
रंग में रंगता रहा हैं। श्वेत प्रकाश
सुख के लिए उसने कृत्रिम रूप से रंग
'कंदील' बनाया—अपनी रंगीन प्रका
सृष्टि को खूब ऊंचा टांगकर मन
दिखाया। मनुष्य के मन में निहित
कल्पना से युक्त, कौतुहल प्रिय शिशु
ने अन्वेषण के नये-नये आयाम उद्घाटि
किये हैं। दीपावली अर्थात् दीपों की पंक्ति
मुंडेरों और छज्जों वाली दीवाली अभी
दिखायी देती है.. पर एक और थी,
अब लुप्त होती जा रही है, जलधारा
तैरती दीपावली। आस्था संपन्न मन
दृष्टि और कांपते हाथों से धारा में प्र
हित . . . 'दीपमाला' . . . । परदेश

पति या पुत्र के मंगलार्थ, स्त्रियों द्वारा न की प्राचीन-परंपरा, अब क्षीण जा रही है। कभी-कभी दीखता है यह स्पर्शी दृश्य। आशा और आशंका की रों पर उठता-गिरता . . . . झलमल-मल . . धारा पर दूर तक तैर कर ओं से ओझल होता दीप, मन की गुह्य ना का प्रत्यय बन जाता है। अद्भुत कार्थ है, इसमें ... मानवता का सृष्टि- अर्थात् सतत् प्रवाहिनी जलधारा पर ता नन्हा दीप ... 'मानव' स्वयं ...। न कितनी दूर तक बहता है, बस यही तो जिजीविषा। वहां विपरीत है सब ...धारा, लहरें खुली हवा के झोंके ... र उनसे जूझता है नन्हा दीप। जीवन आलोकमयी व्याख्या, नारी के मन से जन्मी होगी। कैसा अनूठा प्रत्यय है, दीप' धारा पर विजयी हो, तो 'वे जो जीवन-दीप हैं' अवश्य ही जीवन धारा असंख्य बाधाओं को पार कर लौट ...। प्रणम्य हैं यह आस्था, दुर्लभ वह दृश्य।

दीवाली ने युग के अनुरूप नये-नये स्वीकार किये है, समय के सापेक्ष ति-वाहिका रही है, दीवाली। दीवाली इतिहास पर चर्चा चली थी। चिंतना के होते हैं; इतिहास की डाल से उड़कर हित्य के सरोवर तक आ गयी।

जायसी की 'नागमती' कौंधती है, मेरे आकाश में करुणार्द्र अर्द्धाली—'परब री होइ संसारा' गूंजती है। स्वाधीनता से पूर्व इसने साहित्य जाग्रति का संदेश दिया। स्वामी दयानंद सरस्वती जैसे समाज-सुधारक ऋषियों ने सामाजिक पुनरुत्थान के नये अर्थों को गतिशील बनाया। दीवाली पर, स्वच्छता बढ़े, सदाचार विकसित हो, द्यूत क्रीड़ा बंद हो।

दीपावली अर्थात् आलोक का विस्तार। एक प्रज्वलित नन्हा दीप, असंख्य दीपों को शिखा सौंप सकता है। प्रकाश, ज्ञान का प्रतीक है, अशिक्षा के अंधकार में एक ज्ञानदीप भी, असंख्य अशिक्षितों को शिक्षित बना सकता है। ज्योति से ज्योति जले, अज्ञान-तिमिर की कालिम ढले। जलता हुआ दीप अपनी रक्षा भी करता है, और अपने परिवेश की भी। बगैर जला दीप अंधेरे में ठोकरें खाता है, वही अंतर है शिक्षित और अशिक्षित व्यक्ति की नियति में। 'दीपावली ज्ञान की संदेश वाहिका बने' ऐसा कहा था स्वामी विवेकानंद ने।

मेरी चिंतना पुनः स्मृति के पंख लगा कर ... अतीत के आकाश में उड़ान भरती है, राष्ट्र के इतिहास में कई बार 'दीपावली' ऐसे आयी कि इतिहास बना गयी तथा स्वयं इतिहास का अंग बन गयी। विस्तार में न जायें—सन उन्नीस सौ सैंतालीस, स्वाधीनता के बाद की प्रथम दीपावली . . . उस दीपोत्सव में स्वाधीनता का उल्लास भी संयुक्त हुआ था। शताब्दियों की पराधीनता का अंधकार पराजित हुआ था। स्वाधीनता के आलोक से मंडित थी वह दीपावली ...। परंतु दीपों के नीचे, एक

दर्द अंधकार वृत बनकर चुपचाप बैठा था। विभाजन का दर्द . . . । राष्ट्र स्वाधीन भी हुआ था और खंडित भी . . . ।

इस दीवाली ने हमें सिखाया कि राष्ट्र-लक्ष्मी की रक्षा अकेले गणपति से न होगी, कार्तिकेय को भी साथ रखना होगा। गणपति विवेक का प्रतिनिधि है। कार्तिकेय शौर्य का प्रतिनिधि है। छः गुनी जागरूकता है, कार्तिकेय में, इसीलिये देवसेना के सेनापति हैं स्कंद। राष्ट्र लक्ष्मी के एक ओर विनायक हों, और दूसरी ओर स्कंद। यही उपयुक्त है। बुद्धि और शक्ति के मध्य ही लक्ष्मी का स्थान उचित है। बुद्धि उसे विकसित करे, शक्ति उसकी सुरक्षा करे—यही वरेण्य है।

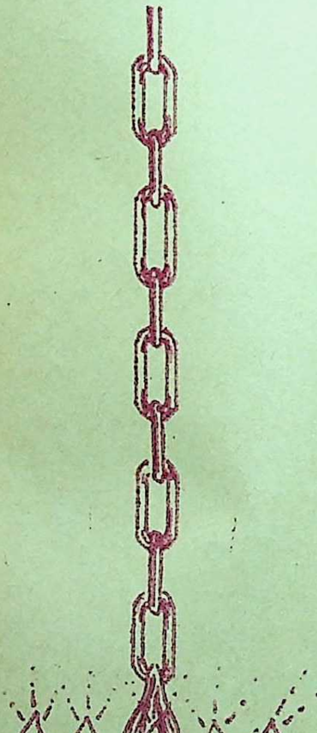

और अब इस वर्ष की दीपावली, हमारे सामने है।

यह दीपावली एक सर्वथा नये संदेश को अपनी अंजुलि में लिए राष्ट्र के सम्मुख खड़ी है। स्वाधीन भारत में लक्ष्मी का प्रकाश कुछ गिनी-चुनी मुंडेरों पर केंद्रित हो गया है।

हमें सीमित मुंडेरों पर कैद दीपों को उतारकर एक-एक कुटिया तक ले जाना है। लक्ष्मी के आलोक के समान वितरण का यज्ञ प्रारंभ हो।

हम सबको मिलकर संपन्न करना है—यह राष्ट्रीय-यज्ञ। आज तक कहते रहे 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' पर इस बार 'दीपावली' कह रही है, 'ज्योति को ही अंधकार की ओर ले चलो' . . .।

राष्ट्र-लक्ष्मी कुटियों में आलोक बिखेरे, दीनहीन, नग्न, क्षुधा-पीड़ित मानवता के आंसू पोंछे, यही सार्थकता होगी, इस पर्व की ! ज्योति से ज्योति जले, दीपोत्सव की आभा असंख्य आलोक-पुष्पों में खिले।

—मकरंदनगर, कन्नौज, उ.प्र.

□

द बनाकर देखो

फट-फट पटाखे बजाती रेत

☐ विनय कुमार

बिरंगी रोशनी, फुलझड़ी के फूल, नार और बम छूटने का धूम-धड़ाका , चौराहों पर होने लगता है तो बच्चों दीपावली आने का संकेत मिलने लगता आप भी कई तरह की आतिशबाजियां ते होंगे। पर आइये इस बार आप खुद वली के मौके पर पटाखों की आवाज तरह तड़-तड़ करती रेत फर्श पर बिखेर- आगंतुकों को चौंक पड़ने के लिए विवश सकते हैं। वे उछलकर कपड़े संभा- चौंक पड़ेंगे, उसकी आवाज सुनकर। उनकी उछल-कूद का मजा लेते हुए कमाल पर किलक उठेंगे।

सी चीज बनाने के लिए सामग्री ना जरा कठिन है। कारण यह है कि सायनिक द्रव्य जरा कठिनता से ही पाते हैं। देहातों, कस्बों, छोटे शहरों हीं भी मिल सकते हैं। फिर इस फट- कूटकर पटाखे चलने का एहसास कर- वाली रेत को तैयार करते समय कुछ सावधानियां बरतना भी जरूरी है। रसायनों का मिक्सचर तैयार करते छोटे बच्चों को इनसे थोड़ा दूर रखना चाहिये। खुद को भी दूरी पर कर ही प्रयोग करना ठीक रहेगा। यह दूरी रखकर प्रयोग करने वाली बात सुनकर आप घबराइयेगा मत। बस सावधानी बरतने के हिसाब से जरूरी है।

सामग्री : बारीक घनी रेत के कण, लिकर अमोनिया, आयोडिन क्रिस्टल, तश्तरी या मोटा कागज, एक लकड़ी का बड़ा डब्बा, घोल को हिलाने के लिए टेस्ट ट्यूब, घोल बनाने के लिए बरतन आदि।

विधि : सबसे पहले टेस्ट ट्यूब में थोड़ा-सा लिकर अमोनिया लेकर उसमें कुछ आयोडिन क्रिस्टल डालकर खूब अच्छी तरह हिलाइये। जब यह घोल लकड़ी से हिलाते-हिलाते एक जान हो जाये (ध्यान रहे हाथ से न मिलायें) तो तश्तरी या मोटे कागज पर रेत में उसे मिलाकर धूप में सूखने के लिए रख दीजिये। अब आप सूख चुकी रासायनिक रेत फर्श पर बिखेर दीजिये। जहां पर लोगों का आना-जाना ज्यादा ही हो।

दीपावली के दूसरे दिन जब आपके दोस्त, रिश्तेदार, पड़ोसी या परिचित दीपावली की शुभकामनाएं देने आयेंगे तो आप उन्हें उछलते देखकर, फट-फट करती रेत में अपनी हंसी की आवाज को शामिल कर

(शेषांश पृष्ठ ९४ पर)

प्राचीन विश्व में दिवाली

☐ राजीव सक्सेना

प्रायः यह समझा जाता है कि दीवाली केवल भारत का त्यौहार है, किंतु वास्तविकता यह नहीं है। दीप उत्सव के रूप में दीवाली विश्व के लगभग सभी प्रमुख देशों में मनायी जाती है। चीन, जापान, हांगकांग, अमेरिका, ब्रिटेन, थाइलैंड सहित और सभी देशों में जहाँ भारतीय मूल के नागरिक रहते हैं दीवाली का त्यौहार बड़े उत्साह के साथ मनाया जाता है।

यद्यपि दीवाली का त्यौहार समय के साथ-साथ बदलकर आधुनिक स्वरूप ग्रहण कर चुका है और यह केवल सजावट और मनोरंजन तक ही सीमित रह गया है, तथापि इसका प्रतीकात्मक स्वरूप ज्यों का त्यों कायम है। अंधकार पर प्रकाश की विजय के प्रतीकात्मक पर्व के तौर पर दीवाली का इतिहास बहुत पुराना है। यदि सच कहा जाये तो दीवाली विश्व का प्राचीनतम उत्सव है। यह एक तथ्य है कि भारत सहित प्राचीन विश्व के सभी देशों में दीपोत्सव मनाये जाते थे। दीपोत्सव मिस्र के निवासी, बेबीलोन के पुजारी, माया और इन्का सभ्यता के लोग भी बड़े जोश से मनाते थे। यहाँ तक कि बहुत बाद में अस्तित्व में आयी यूनानी सभ्यता ने भी दीपोत्सव का मनाना ज़रूरी समझा।

एक प्राचीन मिस्री ग्रंथ में ऐसे अनेक चित्र मिले हैं जिनसे पता चलता है कि मिस्र के निवासी दीपोत्सव मनाते थे। एक चित्र का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि मिस्र के महान सम्राट भी यह उत्सव जनता के साथ मिलकर मनाते थे। एक चित्र, जिसे संभवतः एडफिसेज ने बनाया है, में सम्राट रामीसेस को हाथ में एक बड़ा स्वर्ण दीपक लिये भगवान सूर्य की आराधना करते हुए दिखाया गया है। सम्राट के निकट कई भद्र पुरुष भी हाथों में दीपक लिये खड़े हैं। इस चित्र के आधार पर पुराविदों ने यह धारणा व्यक्त की है कि दीपों का त्योहार प्राचीन मिस्र में राजा और जनता के द्वारा बड़ी धूमधाम से मनाया जाता था, किंतु वहाँ इसका स्वरूप थोड़ा भिन्न था। प्राचीन मिस्र के शासक अपने आपको सूर्य का पुत्र मानते थे और उसके प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करने के लिए दीपों का त्यौहार मनाते थे। यही कारण है जो प्राचीन मिस्र में दीवाली को 'सौर उत्सव' के रूप में मनाया जाता था। प्राचीन मिस्र में दीवाली मनाये जाने के कुछ संकेत पिरामिडों से मिले हैं। विश्व-प्रसिद्ध चियोप्स के पिरामिड में स्थित गर्भगृह की एक दीवार पर एक पंक्ति में बहुत सारे दीपक चित्रित किये गये हैं। जिनमें

में विद्वानों का कहना है कि ये प्राचीन लोगों द्वारा मनाये जाने वाले 'सौर व' की ओर संकेत करते हैं। दुर्भाग्य यह मित्ति-चित्र अव नष्ट हो चला है। विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में या सभ्यता की गणना की जाती है। त्र विद्या, ज्योतिष, चिकित्सा, कलेण्डर और आकाश संवंधी रहस्यों के वारे में तनी जानकारी मय लोगों को थी उतनी भवत: किसी और सभ्यता को नहीं थी। ख्यात विज्ञानकथा लेखक वांन डेनिकन ने यह प्रमाणित भी कर दिया है कि माया भ्यता का संपर्क व्रह्मांड की अज्ञात सभ्यताओं से था और अक्सर अंतरिक्ष यात्री ान के आदान-प्रदान के लिए मय लोगों के पास आया करते थे।

इकेरस के ग्रंथ में दीपोत्सव के मनाये जाने का विस्तृत उल्लेख मिलता है। इकेरस लिखता है कि दीपोत्सव की संध्या को ज्यों ही सूर्यास्त होता है वड़े-वड़े चौरस मैदानों के किनारे हजारों दीपक जल उठते हैं, ताकि 'आसमान से आने वाले देवताओं के 'अंतरिक्ष-यान' कुशलतापूर्वक उतर सकें। इकेरस के उल्लेख से ऐसा प्रतीत होता है कि र्ष के किसी निश्चित दिन अंतरिक्ष से बुद्धिमान प्राणी धरती पर आते होंगे और उनके यान उतरते समय भ्रमित न हो जायें, इसलिये दीपों को जलाकर प्रकाश किया जाता होगा। संयोग से पेरू में नाज्का के समीप एक वड़े चौरस मैदान के किनारे कुछ गड्ढे पाये गये हैं, जिनका सूक्ष्म अवलोकन करने पर पता चलता है कि इनका उपयोग दीपाधारों को रखने के लिए किया जाता होगा।

सुमेरियन सभ्यता द्वारा दीपोत्सव मनाने के भी पर्याप्त प्रमाण मिले हैं। एक पौराणिक ग्रंथ में एक कथा मिलती है कि टीका ईरस नामक एक पुजारिन की इकलौती संतान की अकाल मृत्यु हो जाने पर उसने नदी की धार में खड़े होकर दीपक जलाया था, चमत्कार की वात कि इसके तुरंत वाद उसका पुत्र जीवित हो गया। सुमेर लोगों के जीवन पर इस घटना का वहुत प्रभाव पड़ा और वे अपने आपको अकाल मृत्यु से दूर रखने के लिए दीपों का त्योहार मनाने लगे। टीका ईरस की कहानी एक दंतकथा वन गयी।

चीनी लोग प्राचीन समय से ही 'अविनाशी आकाश' और सूर्य की पूजा करते आये हैं। चीनी साहित्य में फेंग नामक

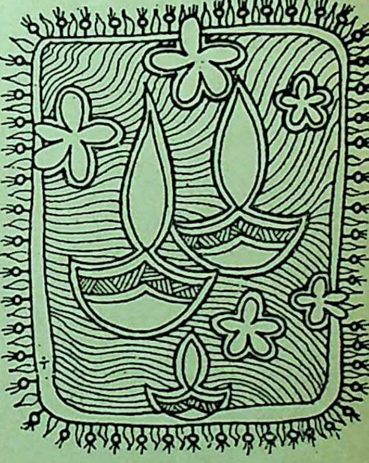

छंद-छटा

☐ रामजी दास कपू

केश में राहु को केतु-सा बांधती, सोम में मंगल भाल कसा हुआ ॥
लोचनों में बुध ज्ञान विसारता, प्राण समीर में जीव धसा हुआ ॥
तारक सात बंधा ध्रुव सत्य ही, मानस कोष में काव्य कसा हुआ ॥
मन्दगता शुचिता प्रमदा बनी, अंतर हंस का बिम्ब बसा हुआ ॥

ooo

पंख पसार बुलाती विहंग है, काकली नीड़-द्रुमों से मचा ली ॥
धूप के अम्बर शृंग उतारती, वारुणी ला रहीं रंग गुलाली ॥
तारक एक लगा शुभ भाल पै, आरती साजती लै रवि थाली ॥
आती दिनान्त में वत्सला धेनु-सी, सांध्य परी उतरी नभ वाली ॥

—लालबाग, सीतापुर-२६१००१, उ. प्र.

एक व्यापारी की कहानी मिलती है। कथा संक्षेप में इस प्रकार है कि फेंग के जहाज समुद्री तूफान में फंस गये थे और उनके वापस तट तक आने की कोई संभावना नहीं थी। निराश फेंग अपने कमरे में बैठा जलते दीपक को देख रहा था कि अचानक उसके दिमाग में एक विचार आया। उसने कागज का एक कंदील बनाया और उसमें दीपक रखकर समुद्र-तट के किनारे ऊंचाई पर टांग दिया। भाग्य की बात फेंग के सभी जहाज सुरक्षित लौट आये। फेंग का दूसरे लोगों ने भी अनुसरण किया, कंदील बनाकर व्यापारी उसे ऊपर टांगते और आन तथा उत्साह के त्योहार के रूप में दीवाली मनाते।

सो इस तरह दीवाली विश्व का प्राचीन-तम उत्सव है। विभिन्न देशों में दीवाली मनाने का स्वरूप चाहे जैसा भी रहा हो, किंतु प्रकाश के पर्व के रूप में इसकी प्रतीका-त्मकता सर्वत्र एक जैसी रही है। एक प्राचीन उत्सव के रूप में दीवाली केवल भारतीयों का ही नहीं, बल्कि समूचे विश्व का त्योहार है।

—किसरौल-नागफनी, मुरादाबाद, उ. प्र.

☐

कृष्ण देव का साधना-केन्द्र

दक्षिणेश्वर काली मंदिर

☐ डॉ. बुद्धिनाथ मिश्र

ने भर पानी में झूमते तोतापाखी धान, जहां-तहां वन-प्रांतर में हास रते कास के सादे फूल, आकाश में ाका-पंक्ति की तरह उड़ते हिमवर्णी स, दरवाजे से आंगन तक सुरभि-जाल रते शेफाली (हरसिंगार) वृक्ष, घर आगे छोटी-छोटी तलैयों में अठखेलियां ते वत्तखों के समूह और फलों से लदे छरहरे नारियल-सुपारी के गाछ—शरद तु में सारी बंगाल की धरती महाशक्ति की लीलाभूमि हो जाया करती है। यही रण है कि बंकिमचंद्र और उनकी पंक्ति न्य कवि 'सुजला सुफला, शस्य श्यामला' रत-भूमि और 'सुहासिनी, सुमधुर षिणी, सुखदा, वरदा' भगवती दुर्गा एकरूप देखने की अभेद दृष्टि पा सके। हते हैं, आज जिस भूभाग में कलकत्ता नगरी बसी हुई है, वहां पहले निर्जन न था, जिसे 'काली क्षेत्र' कहा जाता था। लीघाट का प्राचीन काली मंदिर उन नों भी आस्तिकों का आकर्षण केंद्र था। नी परंपरागत प्रतिष्ठा के कारण, वह मंदिर आज भी भक्तों की अपार ड़ आकर्षित करता है, परंतु जगह की तंगी और दुर्व्यवस्था के कारण यह मंदिर दर्शनार्थियों की आस्था को सुरक्षित नहीं रख पाता। अव्यवस्थित भीड़ और पंडे-पुजारियों की छीना-झपटी के कारण हर संवेदनशील दर्शनार्थी वहां से खिन्न मन होकर ही लौटता है।

लेकिन, कलकत्ता के पूर्वी छोर पर एक मंदिर ऐसा भी है, जहां पहुंचकर कोई भी आस्तिक व्यक्ति अभिभूत और आत्म-विस्मृत हुए बिना नहीं रह सकता। यह स्थान है—हुगली (गंगा की शाखा) के पुराने बाली ब्रिज से बिलकुल सटा लगभग ६० बीघे का विशाल प्रांगणवाला दक्षिणेश्वर काली मंदिर, जिसका निर्माण सन १८५६ में बंगाल की अहल्याबाई रानी रासमणि ने कराया था और जहां परमहंस रामकृष्ण देव और उनकी अर्धांगिनी शारदा देवी ने बरसों महाकाली की आराधना की थी। विशाल प्रांगण, बनारस के सीढ़ीदार घाटों की याद दिलाता भागीरथी का पक्का घाट, बंगाली स्थापत्य कला के अनुरूप बने मंदिर, आंगन के कोने में रामकृष्ण देव का शांत पावन कक्ष और चतुर्दिक फैला आस्था का वातावरण।

दस साल पहले जब एक साहित्यिक कार्यक्रम में भाग लेने पहली बार कलकत्ता आया था, तो बच्चों के आग्रह पर दक्षिणेश्वर भी गया था। उस समय दक्षिणेश्वर कस्बा आज की तरह अपनी सत्ता खो नहीं बैठा था। दमदम रेलवे स्टेशन से दक्षिणेश्वर स्टेशन तक क्षीण आबादी थी। लेकिन अब इस इलाके की आबादी काफी सघन हो गयी है। महाभारत के युद्ध में जैसे घटोत्कच ने माया से अपने शरीर को कई योजन फैलाकर अक्षौहिणी भर सेना को नष्ट कर दिया था, उसी प्रकार तीन सौ वर्ष पहले मात्र तीन गांवों को जोड़कर स्थापित कलकत्ता शहर ने आज तक न जाने कितने गांवों और कस्बों को उदरस्थ कर लिया है। दक्षिणेश्वर कभी कलकत्ता नगर से अलग-थलग था, लेकिन आज इसकी 'बूंदता' महानगर की 'वारिधिता' में बिला गयी है।

काली मां का मंदिर

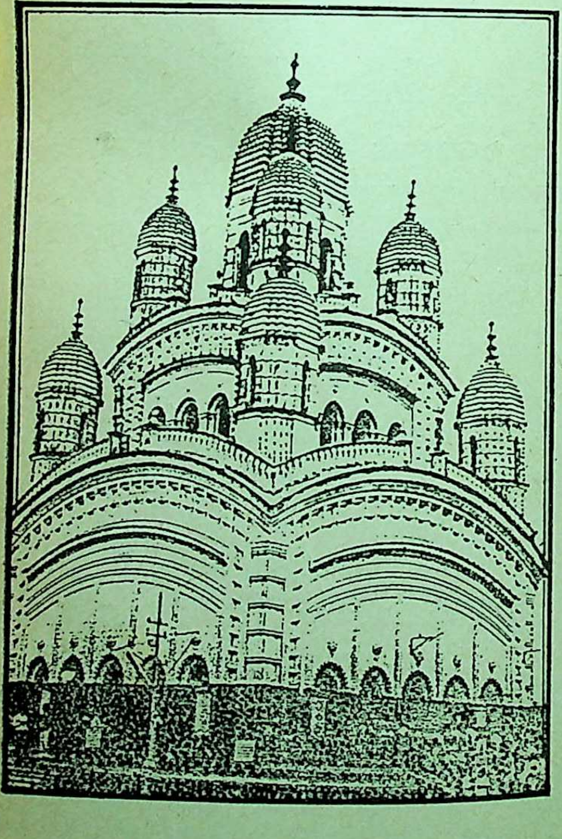

बंगाल की जनता में रानी रासमणि की धार्मिक आस्था, दानशीलता और सहृदयता के बहुत सारे किस्से प्रचलित हैं। बंगाल के तमाम मंदिर, धर्मशालाएं, कूप-तड़ाग, घाट आदि रा रासमणि के बनवाये हुए हैं। अपने पतिदेव, बंगाल के प्रतिष्ठित जमींदार रामचंद्र की मृत्यु के बाद रानी ने अपना सारा समय तीर्थाटन और भगवद्भक्ति में लगा दिया था। उन्होंने एक बार बाबा विश्वनाथ का दर्शन करने काशी जाने का निश्चय किया। उन दिनों ट्रेनें तो थीं नहीं। अधिकतर यात्रा नावों से की जाती थी। रानी मां (बंगाल में बहू को भी 'बहू मां' कहा जाता है), उनकी दास-दासियों, पूरी अवधि के लिए खुराक और माल-असबाब लादने के लिए

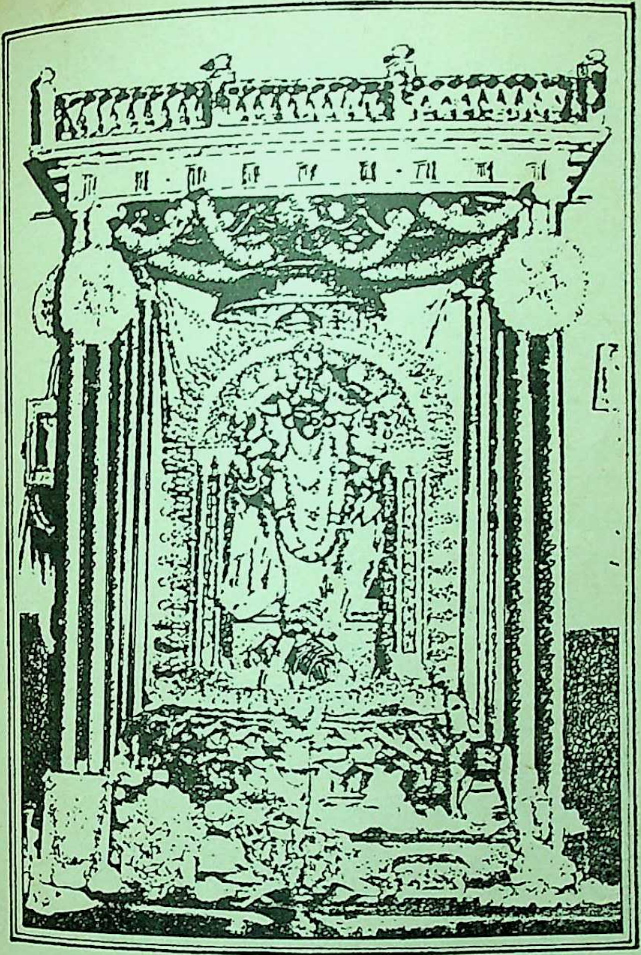

दक्षिणेश्वरी काली मां

नावों का काफिला तैयार हुआ । मगर त्रा की तिथि से पूर्व की रात में भगवती ने सपने में रानी मां से कहा कि काशी मत जाओ । बल्कि इसके बदले यहीं गंगा के किनारे मेरे लिए मंदिर बनवाकर मेरी पूजा का प्रबंध कर दो । सपने में ही सही, लेकिन था तो भगवती का आदेश । रानी मां ने यात्रा स्थगित कर दी और मंदिर के लिए उपयुक्त स्थान तलाशने लगीं ।

सन १८४७ में दक्षिणेश्वर गांव में गंगा के तट पर ६० हजार रु. में ६० बीघे का चौरस भूखंड खरीदा गया । सर्वप्रथम,

काशी के घाटों की तरह ही १.६० लाख रुपये की लागत से सीढ़ीदार घाट बनवाया गया। घाट के दोनों ओर ६-६ शिव मंदिर निर्मित किये गये, जिनमें दाहिनी ओर का प्रथम मंदिर योगेश्वर शिव का है। शेष ११ मंदिर एकादश रुद्र के हैं। हर मंदिर की दीवारों पर नागरी लिपि में वेद-उपनिषद के मंत्र हिंदी अनुवाद सहित उत्कीर्ण हैं। राष्ट्रभाषा हिंदी को भारतीय अस्मिता से जोड़कर देखने की प्रवृत्ति १९ वीं सदी के बंगाल की विशेषता थी।

दक्षिणेश्वर काली का मंदिर प्रांगण के बीच में है। देवी-प्रतिमा चांदी के शतदल पर विराजित है। कमल पर शवासन की मुद्रा में शिव लेटे हैं। उनकी छाती पर काली का दायां पैर अड़ा है। महाकाल सफेद संगमरमर के और महाकाली काले संगमरमर की हैं। बनारसी साड़ी में आवृत काली के चार हाथ हैं और गले में ३२ नरमुंडों की माला है। देवी के सलज्ज मुख पर मधुर मुस्कान है। पुराणेतिहास कहता है कि एक बार महाबली शुंभ-निशुंभ के नेतृत्व में असुरों ने देवताओं से युद्ध कर उन्हें परास्त कर दिया। देवताओं की प्रार्थना पर महाकाली ने शुंभ-निशुंभ का वध किया। असुरों से युद्ध करते वक्त देवी का क्रोध इतना प्रचंड हो गया कि यदि उन्हें न रोका जाता तो वे सारी सृष्टि का ही विनाश कर देतीं। तब महाकाल शिवजी रात्रि के अंधकार में रणक्षेत्र में जाकर स्वयं लेट गये। युद्धोन्मत्त काली के पांव जब अपने पति की छाती पर पड़े, तो और संकोच के मारे जीभ बाहर आयी। लज्जा के जल ने क्रोधाग्नि एक पल में शांत कर दिया। देवी का सन चांदी का है और बहुत कलात्मक कमल के पास कांसे का एक शृगाल जो सिर उठाये आहार की प्रतीक्षा कर है। महाकाली की दायीं ओर परमहंस का चित्र और बायीं ओर की प्रतिमा है। पंक्तिबद्ध होकर करने की कड़ी व्यवस्था के कारण छीना-झपटी की कोई चर्चा नहीं। परमहंस की इच्छा थी कि मां की उन्हीं के वंशज हमेशा करें, सो आज उन्हीं के वंशज पुजारी का कार्य करते शिवरात्रि, नवरात्र और कालीपूजा वली) के अवसर पर मंदिर में विशेष होता है। कालीपूजा की रात्रि में भैंसे बलि दी जाती है। अन्य अवसरों पर छागलों की बलि होती है।

कहते हैं, प्रांगण के सभी मंदिरों निर्माण में आठ वर्ष लगे और लगभग लाख रुपये खर्च हुए। आठ लाख सोने अशर्फियां! भवतारिणी मंदिर और बद्ध १२ शिवालयों के अलावा प्रांगण में एक नट मंदिर है, जहां शनिवार-रविवार को भक्तगण होकर भजन-कीर्तन करते हैं। काली मंदिर के उत्तर में राधाकृष्ण मंदिर है, जिसमें अष्ट धातु की हैं और कृष्ण काले संगमरमर के। कृष्ण के हाथों में सोने की वंशी है।

ग़ज़ल

जश्न ग़म का मनायें खुशी मर गयी–
आदमी जी रहा ज़िंदगी मर गयी ।
शब्द ही की प्रगतिशीलता के तले–
आंतरिक अर्थ की बाँसुरी मर गयी ।
तीरगी की घनी बर्छियों से बिंधी–
घर की दहलीज़ पर रौशनी मर गयी ।
पत्थरों की गुलाबी नज़र देखकर
आजकल आईने की हँसी मर गयी ।
भूख के रेशमी - रेशमी दर्द से
चम्पई - चम्पई चाँदनी मर गयी ।
देखते, देखते, देखते, देखते
हादसों से दबी ये सदी मर गयी ।

–मधुर नज्मी

श्री 'हरिऔध' कला-भवन, आज़मगढ़-२७६००१

गण में एक भव्य विष्णु मंदिर भी है । मुख्य प्रवेश द्वार के बगल में ही कोने पर ह पवित्र कक्ष है, जहां रामकृष्ण देव ने ीन दशकों तक निवास किया था । पहले मकृष्ण के अग्रज रामकुमार चटर्जी ली मंदिर के पुजारी थे । उनकी मृत्यु के द रामकृष्ण पुजारी नियुक्त हुए । देवी ी आराधना में वे इतने तल्लीन हो जाते ि कभी-कभी घंटों सुधि नहीं आती ी । इसी मंदिर के पुजारी के रूप में न्होंने अपनी साधना से उपास्य-उपासक ा भेद मिटा दिया था । अक्सर वे महाकाली की प्रतिमा में महाशक्ति के दर्शन करते थे । इस कक्ष में रामकृष्ण देव द्वारा प्रयुक्त पलंग, मसहरी, तकिया, लकड़ी का बक्सा, रामायण, चश्मा और वस्त्र सुरक्षित हैं । कमरे की दीवारों पर उसी समय से टंगे राधाकृष्ण, राम दरबार, ध्रुव, प्रह्लाद, सिंहवाहिनी दुर्गा, हरिनाम संकीर्तनरत चैतन्य महाप्रभु, कृष्ण-ध्यानरता राधिका के चित्र हैं । पलंग पर रामकृष्ण देव का मूल चित्र है । कमरे में वह छोटी चौकी भी है, जिस पर बैठकर वे शास्त्र-चर्चा करते थे । आज रामकृष्ण देव को भी अन्य

देवताओं की तरह 'जगाया' जाता है, 'स्नान' कराया जाता है, पूजा-आरती की जाती है और भोग लगाया जाता है। कमरे में बोलना या फोटो लेना वर्जित है। इस शांत, नीरव कक्ष में बैठकर ध्यान लगाना एक सुखद अनुभव है। कमरे के पश्चिम में गोलाकार बरामदा है, जहाँ बैठकर रामकृष्ण देव गंगालहरी को घंटों निहारा करते थे। एक बरामदे की दीवार पर रामकृष्ण द्वारा रेखांकित 'वृंदावन' अब भी सुरक्षित है, जिसमें कदम्ब वृक्ष पर पक्षीगण कलरव कर रहे हैं।

इस कक्ष के उत्तर में, मुख्य प्रवेश द्वार के ऊपर 'नहबत' (नौबतखाना) है। लगभग १३ वर्षों तक 'श्रीमां' यानी शारदादेवी ने इसी नहबत में निवास किया था। श्रीमां के कमरे के पूर्व में दोतला बंगला है जिसमें रानी रासमणि मंदिर आने पर रहती थीं। मंदिर के बाहर 'पंचवटी' है, जिसमें संत तोतापुरी से दीक्षा लेने के बाद रामकृष्ण ने जप-ध्यान के लिए अश्वत्थ, बेल, बट, अशोक और आंवले का वृक्ष लगाया था। उन पांच वृक्षों में मात्र बिल्ववृक्ष जीवित रह गया है।

रामकृष्ण देव की साधना-स्थली दक्षिणेश्वर काली मंदिर उन गिने- मंदिरों में है, जहाँ पहुंचकर महानगर आपाधापी से क्लांत मन को शांति मि है और मिलता है एक अनिर्वचनीय महाकाली का आविर्भाव, पुराणों के सार, धर्मभ्रष्ट यानी व्यवस्थाहीन सृष्टि विनाश के लिए हुआ था। कालीघाट काली की विशाल मुखाकृति और जिह्वा उनके इसी रूप की द्योतक है। दक्षिणेश्वर काली 'भवतारिणी' हैं। लिये उनकी मुख-मुद्रा भी सात्विक उनकी रूपाकृति पांच वर्ष की कुमारी की तरह है। स्वामी रामकृष्ण की में ऐसी अनेक घटनाओं की चर्चा है, भगवती ने बालिका के रूप में अपने पुत्र' को दर्शन दिया था और उनका दर्शन किया था। दक्षिणेश्वर काली मंदि वह सिद्धपीठ है, जिसने विनाश की महाकाली को पुत्रवत्सला मां के परिणत कर दिया है। —७७/२१

बड़े रायपुर रोड, कलकत्ता-७०००

☐

(पृष्ठ ८५ का शेषांश)

उठेंगे। होगा यह कि जब भी कोई व्यक्ति उस रासायनिक बिखरी हुए रेत पर से गुजरेगा तब जूतों, चप्पलों, सैंडिलों के दबाव के कारण पटाखों की तड़-तड़ जैसी आवाज आयेगी। हां, यह भी सावधानी जरूर रखनी होगी कि ऐसी रेत पर नंगे पैर चलने से बचा जाये। आगंतुक इधर-उध कहीं भी पटाखों का अस्तित्व नहीं पा चौंक उठेगा। जब आप उसे रहस्य ब लगेंगे तो वह आपकी प्रशंसा किये बि न रहेगा।

—बी. ११६ विजय प

तिलक नगर, जयपुर-३०२००

☐

नृत्यरत हैं वर्तिकाएं

पर
अदाएं
रत हैं वर्तिकाएं

कदम पर
गातीं
की
लहरियां

रोशनी के पख
बांधे
झूमती है आज दुनिया

भी
गाये
तारे गुनगुनाये

कथाएं
बूझे
काओं की
में

घुंघरुओं के
स्वर खनकते
ज्योति की जगमग घटा में

की
जगाये
ढ़ी है दिशाएं

दीप-तोरण

मावसी आंगन
झिलमिलायें दीप-तोरण

जाल
तम के
कट चुके

लाभ-शुभ
गृह में रुके

फूल बनकर
महक जाये
रंग डूबे रोशनी-कण

पर्व
दीपों का
मनाकर

इन्द्रधनुषी
रूप लेकर

कार्तिक की
नम हवाएं
देखतीं अब झील-दर्पण

—शरद सिंह

५ सिविल लाइन्स, सागर, म. प्र.

□

अर्थों में भी जिया करो

□ रामेश्वर दयाल दुबे

शब्दों में जीते रहते हो
अर्थों में भी जिया करो।
वाणी-भूषण बन जो निकले
उसको सार्थक किया करो।।
शब्द नहीं हैं केवल ध्वनियां
बिंब यहां प्रतिबिम्ब बन रहे।
सहज भावना के चित्रों के
उनमें दिव्य बितान तन रहे।।
बिंबों-भावों के जलनिधि में
अवगाहन भी किया करो।।
अर्थ बिना हर शब्द व्यर्थ है
भाव बिना वह प्राण हीन है।
कौन कहे सरिता उसको जो
धूल उड़ाती जल विहीन है।।
शब्दों के चैतन्य रूप का
निशि-दिन अनुभव किया करो।।
शब्द ब्रह्म है, किंतु कौन-सा
जिसमें शक्ति छिपी रहती है।
चेतनता की विद्युत-धारा
रह अव्यक्त बहा करती है।।
उसी ब्रह्म की चिर उपासना
भावुक बनकर किया करो।
शब्दों में जीते रहते हो
अर्थों में भी जिया करो।।

–चित्रकूट, सी-२७४, निराला नगर, लखनऊ-२०

□

कहानी

निर्मला भाभी

□

अमिया सेन

वन का नाम है, निर्माण भवन । ी भवन में एस्टेट आफिस के डाय- से मुझे कुछ काम था । यद्यपि कोई ी व्यक्ति नहीं हूं, फिर भी व्यवसाय तिर सरकारी गुर्गों से दो-चार होना ता है । रिसेप्शन रूम में पहुंचते ही भाभी को देखकर मैं चौंक उठा । धिकारी के साथ उनकी झड़प हो ी ।

दस क्या बीस बार भी आऊं तो भी 'ना' करने का कोई हक नहीं है । तर जनता के लिए है और जरूरतमंद आयेंगे ही ।' निर्मला भाभी काफी बोल रही थीं ।

प्शन अफसर मिस्टर भंडारी काफी न से लग रहे थे । वे निर्मला भाभी को ने की कोशिश कर रहे थे, 'देखिये मैं तो सिर्फ चाहता हूं कि आप न कीजिये और फिर जाइये, ताकि परेशानी न हो । 'ना' तो नहीं कर ...।'

शानी होगी या नहीं, यह मैं सम- आप मुझे पास बना दीजिये ।' कहते हुए निर्मला भाभी भंडारी के सामने पड़ा हुआ रजिस्टर अपने सामने रखते हुए तेजी से लिखने लगीं—'मिसेज निर्मला राय, प्रयोजन : अल्टरनेट ऐलाटमेंट आफ हाउस' आदि।

अंततः बाध्य होकर भंडारी उनके हाथ में गेटपास रखकर परेशानी से मुक्त हो गये ।

मैं भी गेटपास का प्रार्थी था । लेकिन मेरा और निर्मला भाभी का गंतव्य स्थान अलग-अलग था । मुझे जाना था डाइरेक्टर के पास, निर्मला भाभी को एडिशनल डाइरेक्टर से मिलना था ।

मैं चुपचाप खड़ा सब कुछ देख रहा था । निर्मला भाभी के बाद ही मेरा नंबर था । हाथ में गेटपास लेकर पीछे मुड़ते ही उन्होंने मुझे देखा ! मैंने कहा—'क्या बात है ? आज भी क्वार्टर एलाट नहीं हुआ ?'

फाइल को सीने से दबाये हुए चश्मे के भीतर से देखते हुए निर्मला भाभी ने कहा, 'बाहर चलो, सब कुछ बताती हूं . . . ।'

मैं लाइन से हटकर जाना भी नहीं चाहता था, और मेरा नंबर आने वाला भी था । मैंने उनसे थोड़ी देर तक प्रतीक्षा

अनुवादक : श्यामसुंदर चौधरी

करने को कहा। लगभग पांच-सात मिनट बाद मि. भंडारी से छुटकारा पाकर मैं उनके साथ चलने लगा।

०००

हम दोनों ही कभी बांग्लादेश के बाखरगंज जिले के एक ही गांव में रहते थे। निर्मला भाभी राय खानदान की बड़ी बहू थीं और मैं गुप्त परिवार के हेमंत गुप्त का कनिष्ठ पुत्र! हम दोनों के घर आस-पास ही थे। दोनों मकानों के बीच में आने-जाने के लिए एक पतली सड़क थी। एक छोटे से नाले के ऊपर बांस का बना हुआ एक पुल था। यही तो उस जिले की विशिष्टता है। पूरा जिला नदी और नालों से भरा हुआ है। चारों ओर पानी से घिरे गांव एक-एक द्वीप जैसे लगते हैं।

शादी के वक्त निर्मला भाभी चौदह साल की थीं। मेरी उम्र नौ वर्ष की थी। गांव के स्कूल में पांचवीं कक्षा में था। निर्मला भाभी के पति अतिनदा गांव के संपर्क से मेरे भाई लगते थे। अपनी दादी की इच्छा के कारण ही उन्हें बी. ए. पास करते ही निर्मला भाभी को राय खानदान में ले आना पड़ा।

'रायबाड़ी' चारों ओर से बाग-बगीचों से घिरा हुआ था। सुपारी और नारियल के अलावा आम, जामुन, कटहल, वेर, अमरूद, नीबू आदि के पेड़ों की भरमार थी। स्कूल की छुट्टी होने के बाद आकर मैं इस पेड़ से उस पेड़ पर चढ़ता रहता। जब जिस किसी फल का मौसम होता तोड़कर ले आता रायबाड़ी में।

संयुक्त परिवार होने के कारण भीड़ रहती थी। पर यह अच्छा था नौकर-चाकर वगैरह सब पहली मं पर रहते थे। दूसरी पर घर के सभी वि हित और अविवाहित सदस्य रहते थे ढेर सारे पके हुए फलों को सबकी आंखों बचाता हुआ किसी प्रकार दूसरी मं के दक्षिण ओर के कमरे की ओर जाता, जो शादी के बाद अतिनदा के लि खाली किया गया था। मुझे देखते निर्मला भाभी का घूंघट में छिपा चेहरा चमक उठता।

रायबाड़ी के समवयस्क लड़कों के तो मेरा पहले से ही परिचय था। द्वारा ही निर्मला भाभी से आसानी जान-पहचान हो गयी थी। निर्मला भा घर की सबसे छोटी बहू थीं। हम लोगों हमउम्र थीं। इसलिये हम लोग जो फल वगैरह इकट्ठा करते निर्मला भाभी लिए अलग से निकालकर रख देते। फिर उन तक चुपचाप ही उन चीजों पहुंचाते थे। कारण रायवाड़ी की दकियानूसीपन भरा हुआ था। यहां बहू और जेल के कैदी में बहुत थोड़ा था। बाहरी वातावरण के साथ इन कोई संबंध नहीं था।

छुट्टी की दोपहर जब सभी बुजुर्ग आरा करते हम लोग निर्मला भाभी को छत पर ले जाते। सबकी जेब में इमली, वेर, नीबू, हरी मिर्च, नमक और

तथा चाकू आदि रखे होते । किसी में समूचा केले का पत्ता रहता । पांच-छः लोग गोलाई में निर्मला को घेरकर बैठते । भाभी अपने हाथों से सभी सामानों को काटकर केले के पत्ते के ऊपर रखकर अच्छी मिला देतीं । और फिर हम सब लेकर खाते रहते ।

लोग जब और बड़े हुए तब भी तरह खाते-पीते रहते, लेकिन तब मेनू गया था । दिन में चोरी-चोरी दोपहर वाड़ी की रसोई में हम लोगों की पार्टी चलती रहती, जबकि चाय ड़ी में निषिद्ध थी । निर्मला भाभी तो भी निषिद्ध वस्तु मसलन आमलेट हम लोगों को बना देतीं, यद्यपि स्वयं के अलावा और कुछ नहीं लेती थीं । र्मला भाभी ताश भी अच्छा खेल थीं । दूसरी भाभियां जहां ट्वेन्टी और रमी तक ही सीमित थीं वहीं भाभी हम लोगों के साथ ब्रिज भी । वैसे उनके मायके में लोग संगीत के भी शौकीन थे ।

० ० ०

आंखों में चश्मा पहने, बगल में दबाये और शहरी ढंग की साड़ी में वर्षीया इस महिला को देखकर साल पुरानी घूंघट में छिपी उस वहू की कल्पना करना भी हमारे ठिन था ।

सरकारी कर्मचारी थे । पाकिस्तान का अपना घर, जमीन तथा तमाम दौलत गंवाकर अब एक निम्न मध्यवर्गीय से अधिक और कुछ नहीं थे । अतः अवकाश-प्राप्ति के बाद जो होता है वही हुआ । और फिर परिवार बर्बाद होने के पहले ही निर्मला भाभी ने उसका भार अपने कंधे पर ले लिया । स्वदेश में संयुक्त परिवार के बीच रहने के कारण उनकी प्रतिभा छुपी ही रही । स्वाधीनता के पश्चात् दिल्ली आकर ही उनके अंदर का तेज उभरकर बाहर आया । भविष्य की ओर नजर डालकर वह बच्चों के साथ ए. बी. सी. डी. से आरंभ कर बी. ए. तक अपने को लैस कर चुकी थीं । और फिर निकल पड़ीं नौकरी की खोज में । दौड़-धूप करके पुनर्वास दफ्तर में जैसे-तैसे एक नौकरी का इंतजाम कर ही लिया । उम्र की समस्या जरूर आयी थी, लेकिन प्रधानमंत्री तक का हवाला देकर किस तरह अपना काम निकाल लिया, यह उनके ही बस की बात थी ।

इतना सब होते अतिनदा अवकाश प्राप्त कर चुके थे । क्वार्टर भी उनके हाथ से निकल चुका था । मजबूरन किराये के मकान में आना पड़ा । कंधे पर कर्ज का बोझ । एक वर्ष पूर्व पुत्री नंदा के ब्याह पर लिया गया कर्ज का भार । तब से निर्मला भाभी एक सरकारी क्वार्टर के लिए दौड़-भाग कर रही हैं ।

दिल्ली तो है ही एक अभिजात्य शहर । आजादी के बाद से तो यहां पर प्रिंस लोगों का राज्य है । आज के व्यापारी ही तो

ये प्रिंस हैं, शायद इस दिन के इंतजार में ही उन सबने गांधीजी के आंदोलनों में खुलकर सहयोग दिया । अब उन लोगों का सुनहरा सपना साकार हो चुका है । वैसे इस शहर की नब्ज को टटोले बिना इस बात को जानना असंभव ही लगता है । यद्यपि आम आदमी के लिए सरकार की चिंताओं का अंत नहीं है । किया भी गया है कुछ हद तक । फिर भी इसकी डोर तो इन तथाकथित राजकुमारों के हाथ में है । अतः गरीब की हर तरह से मौत ही है ।

बहुत ढूंढ़ने पर जो टिन की छत वाला कमरा मिला था, उसका किराया ढाई सौ से आरंभ हुआ था । और धीरे-धीरे चार सौ तक पहुंच चुका था । दोनों लड़कों को अभी स्कूल में भी भर्ती करना था । यही वजह है कि निर्मला भाभी इतनी परेशान हैं।

'समझे भानू, यह सब उस सेक्शन अफसर लक्ष्मण सिंह की बदमाशी है । पांच साल से जो भी आवेदन दे रही हूं, सब दबाता चला गया है । एक भी ऊपर नहीं भेजा । मेडिकल ग्राउंड के तहत दिये गये आवेदन तक की भी यही दशा की । इसीलिये तो अभी एडिशनल डाइरेक्टर के पास जा रही हूं ।' लिफ्ट की ओर बढ़ती हुई निर्मला भाभी बोलीं ।

'आपकी नौकरी के कितने साल रह गये हैं ?' मैंने तपाक से पूछा ।

'नौकरी... ?' निर्मला भाभी ने मुस्कराते हुए कहा, 'अभी भी आठ साल हैं ।'

'आठ साल हैं ?'

'हाई स्कूल में उम्र कम जो लिखायी
वर्ना इस उम्र में सरकारी नौकरी हो
है ? और फिर ऐसा क्यों न कहूं ? आ
हिंदुस्तान में कैसे-कैसे युधिष्ठिर बै
हैं, देखते नहीं । सीधे रास्ते पर तो
लोग भूल ही गये ।'

'वह तो ठीक है, लेकिन सिर्फ सात
की नौकरी में आप सरकारी क्वार्टर
पा सकती हैं ? वेटिंग लिस्ट में तो
दस से बीस साल तक के लोग पड़े हुए

'सब होता है, भानू . . . देख लेना
है या नहीं . . .।'

000

लगभग साल भर बाद उनके साथ
पत नगर के सेंट्रल मार्केट पर मेरी
कात हो गयी । दक्षिण दिल्ली में
सबसे बड़ा और सुंदर बाजार है । मैं
बार कुछ खरीदारी करने आया था
तो साउथ एक्सटेंशन में रहता हूं । वैसे
पर किसी चीज की कमी नहीं है, लें
विदेशियों के कारण कीमतें आसमान
छू रही हैं । अभिजात्य इलाके में रहते
भी चूंकि हम लोग बेहद साधारण जी
अतः सस्ते की खोज में ही लगे रहते

सेंट्रल मार्केट पूरी तरह व्यावसायिक
होते हुए भी तरह-तरह के रोजगार
सुविधा होने के कारण साधारण व्यक्ति
की यहां भरमार होती है । अतः चीजों
कीमतें भी उचित ही हैं ।

'ऐ . . अरे . . आपके मकान का
हुआ ?' मैं पूछ बैठा ।

मकान . . ? अभी कुछ नहीं, फिर ही जायेगा । कल वर्क एंड हाउसिंग निस्टर के पास जा रही हूं । किसी तरह र फाइल में से एक भी आवेदन पत्र काल सकूं तो . . . न देकर जायेगा ?'

'आप बहुत थकी-सी लग रही हैं, दीदी ।' अर्थात् मेरी पत्नी ने निर्मला भाभी की र देखते हुए कहा ।

'हां, लग रही हूंगी । एक तो इतनी और ऊपर से गृहस्थी का बोझ ।'

मैं चुपचाप उनकी ओर देख रहा था । जो टांसी बहू कभी कहीं निकलते हुए घब-ती, परिस्थिति आज उसे खुले आकाश नीचे ले आयी ।

इस लू-भरी गर्मी में भी निर्मला भाभी में तपते हुए दौड़ रही हैं । कभी निर्माण न, कभी आफिस में तो कभी मंत्री के । फिर घर पहुंचकर राशन लाना या दूसरी खरीदारी का काम भी उनके जिम्मे था ।

'आप अकेले ही इतनी दौड़भाग क्यों रही हैं ? अतिनदा कहां हैं . . . ?'

'अब, उनकी क्या कहूं . . . जमींदार दान के हैं, सब कुछ गंवाने के बाद भी जात्य का अहंकार नहीं गया है । जैसे तौर पर बंगाली लोगों में यह भावना तरह फन फैलाये रहती है कि वे नाथ टैगोर, नेताजी और जगदीशचंद्र वगैरह की संस्कृति में पले-बड़े हुए वे सब कुछ हैं । इधर अपने अंदर तो

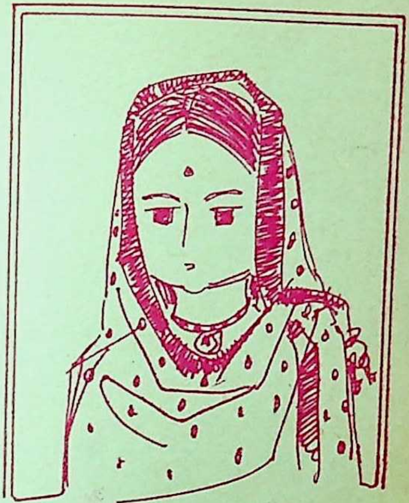

भई ऐसी कोई खुशफहमी है नहीं । मैं ठहरी एक मजदूरन । जीवन में खटने आयी हूं । मेहनत-मशक्कत करके दो एक-दिन में दुनिया छोड़ जाऊंगी । इन सबसे प्रतिष्ठा पर तो धक्का लगता नहीं । अच्छा अब चलूं । तुम लोग खरीदारी करो ।'

इतना कहकर देखते ही देखते निर्मला भाभी उस बाजार की भीड़ में कहीं खो गयीं ।

०००

निर्मला भाभी के पिता एक प्रसिद्ध डाक्टर थे । मेरी तो नौकरी ही ऐसी नहीं है कि किसी एक जगह पर अपने को स्थिर रख सकूं । सौभाग्यशाली हूं इस बार दिल्ली में पांच साल रह सका—मद्रास, कलकत्ता, बंबई होता हुआ हांगकांग पहुंचा और फिर जब दिल्ली आया तो नौ साल बीत चुके थे ।

दिल्ली आकर सबसे पहले जिसकी याद

आयी, वह थी निर्मला भाभी । आखिर क्या निर्मला भाभी को सरकारी क्वार्टर मिल सका ?

मेरे मुंह से वे सारी बातें सुनकर निर्मला भाभी के प्रति अंजु के मन में आदर और श्रद्धा का भाव उमड़ पड़ा था । अब की बार वह कलकत्ता से निर्मला भाभी के लिए एक तांत की साड़ी खरीद लायी थीं । उसके जोर देने पर ही एक दिन उसे लेकर निर्मला भाभी को ढूंढ़ने निकल पड़ा ।

कृष्णा मार्केट में जहां वे रहती थीं वहां जाकर मकान-मालिक से पता चला सात साल पहले से वे लोग सादिक नगर के एक सरकारी क्वार्टर के एक कमरे में किराया देकर रह रहे हैं । उनसे उनका पता भी मिल गया ।

गाड़ी जब सादिक नगर की ओर जा रही थी तो अंजु चिंतित स्वर में बोल रही थी, 'जब हम लोग दीदी से आखिरी बार मिले थे, उनकी नौकरी सिर्फ सात साल रह गयी थी । हम लोग तो नौ वर्ष बाद जा रहे हैं ।'

'हां, यह तो है । फिर भी जाकर देखा तो जाये ।"

सादिक नगर पहुंचते दोपहर हो चुकी थी । एक छोटे से होटल में हमने खाना खाया । अंजु पता मालूम करते हुए एक मकान की चौथी मंजिल पर गयी और लगभग दस मिनट बाद लौटी ।

'पता चला ?'

'पूरी तरह तो नहीं. . .हां, उम्मीद है । चलो दक्षिणपुरी. . .।' कहती हुई अंजु हथेली पर छोटा-सा कागज का टुक रख दिया । दक्षिणपुरी के झुग्गी-झोप वाले इलाके का कोई नंबर था ।

आपातकाल के समय जब दिल्ली सुंदरीकरण का काम जोरों पर था, त गरीबों और श्रमजीवियों को बाईस और पच्चीस गज की जमीन देकर कालोनी का निर्माण किया गया था । भी एक ऐसी ही कालोनी है । बाद में दिल्ली विकास प्राधिकरण ने उन अंच में एक कमरे के जनता फ्लैट तथा नि मध्यवित्त के लिए दो कमरों के फ्लैट बनाये, लेकिन मैं अभी तक ऐसे अंचल देख नहीं सका ।

अत: देखने की उत्सुकता थी । जाने सोच रहा था कि अवकाश प्राप्त करने बाद शायद निर्मला भाभी ने आफिस मिली हुई राशि से इस जगह पर एक खरीद लिया होगा । इसीलिए हम सबसे पहले डी. डी. ए. के फ्लैट की गये, पर जब एक घंटे तक खाक छानने भी कुछ नहीं हुआ तो थककर अंजु से 'अब छोड़ो भी, वापस चलो ।'

लेकिन अंजु भी कहां मानने वाली बाध्य होकर गाड़ी को झुग्गी इलाके बाजार की ओर मोड़ दिया ।

तीन-चार दुकानदारों से पूछने के जिस दुकानदार के पास गया उसने देकर कहा, 'आप लोग सीधी सड़क पे जाइये । बायीं ओर की पहली गली में मु

ता।'

तो रह-रहकर अंजु के ऊपर गुस्सा था। एक बार जिद पे अड़ गयी अड़ ही गयी।

च्ची-पक्की सड़कों के दोनों ओर झोंपड़ियां बनी हुई थीं। बीच में एक-पक्के मकान बने हुए थे। एक ओर रेल की लाइन बिछी हुई थी, पीछे ओर जंगल-सा फैला हुआ था।

हां पर नंबर ढूंढ़ना भी एक समस्या क्योंकि सभी पक्के मकानों में नंबर हुए नहीं थे। एक छोटे लड़के से पूछा। र तक सोचता रहा और फिर बोला, आगे चले जाइये। एक डाक्टर बैठते हैं, वह यहां के लगभग सभी को जानते हैं।'

! यहां डाक्टर भी रहते हैं?' मुंह से निकला। उसे आश्चर्य हो था।

ही दूर चलने पर एक डाक्टर के र नजर पड़ी। डा. बी. एन. मित्रा, ., एम. बी. बी. एस.। एक टिन की र ईंट तथा मिट्टी के बने हुए कमरे के डाक्टर साहब बैठे हुए थे। कुछ मरीज बरामदे में बैठे थे। डाक्टर कुछ लिख रहे थे। अंजु ने उनके कर बगैर किसी भूमिका के सीधे-र्मला भाभी के हुलिये का वर्णन कर सुनते ही डाक्टर ने पूछा, 'आप य की बात तो नहीं कर रही पत्नी और दो लड़के वही न?'

'हां . . . हां . . . वही . . .।'

डाक्टर ने कहा, 'तीन साल पहले वह यहां पर एक झुग्गी खरीदकर सपरिवार रहती थीं। फिर रिटायरमेंट के बाद प्रावीडेंट फंड और ग्रैच्युटी वगैरह लेने के बाद उन्होंने उस झुग्गी को बेच दिया और फिर . . .' उंगली के इशारे से कालोनी के पीछे का जंगल दिखाते हुए उन्होंने कहा, 'आजकल वे उस टीले पर मकान बनाकर स्थायी रूप से वहां के निवासी हो चुके हैं।' इतना कहकर डाक्टर यकायक हंस पड़े।

हंसी थोड़ी विचित्र भी थी। इसीलिये मैंने उनसे पूछा, 'वहां पर लोग रहते भी हैं, मतलब इतनी ऊंचाई पर . . .?'

'नहीं, बस्ती नाम की चीज तो नहीं है वहां, लेकिन वे लोग वहीं रहते हैं।'

टीले के नीचे गाड़ी खड़ी करके हम सब ऊपर पहुंचे। सूर्य अस्त हो रहा था। घने पेड़-पौधों के उस परिवेश में सूर्यास्त की लाली शोभा बढ़ा रही थी। बीचोबीच एक छोटा-सा घर। ऊपर बीच में लिखा था—'भवानी मंदिर'।

बरामदे के बाद ही छोटा-सा दरवाजा था। अंदर से बंद लग रहा था।

अंजु माथे से पसीना पोंछते हुए बोली, 'यह तो मंदिर लग रहा रहा है। आसपास कोई मकान तो है नहीं।'

यही सोचते हम लोग मकान के पीछे की ओर गये। देखा तो अवाक् रह गये।

पीछे की ओर एक बड़ा-सा फूलों का बगीचा था। एक ओर माली काम कर रहा

था । निर्मला भाभी लाल किनारे वाली साड़ी पहने उसे कुछ समझा रही थीं । सामने की तरह उस मकान के पीछे की ओर भी एक बरामदा था । अतिनदा वहां पर एक आरामकुर्सी पर बैठे कोई पुस्तक पढ़ रहे थे । दोनों की ही उम्र जैसे दस साल आगे का सफर तय कर चुकी थी ।

'अरे भानू . . . ? अंजु भी आयी है . . . ? अरे सुनते हो, देखो कौन आया हैं ?' निर्मला भाभी तेजी से अंजु का हाथ पकड़ कर अंदर ले जाने लगीं । पीछे-पीछे हाथ में पुस्तक लिए हुए अतिनदा । निर्मला भाभी हम लोगों को उत्साह के साथ मकान दिखाने लगीं । बरामदे में प्रवेश करते ही ड्राइंगरूम-डाइनिंग रूम था । दो खूबसूरत बेडरूम, डबल टायलेट, डबल स्टोर रूम और एक रीडिंग रूम के पास ही एक छोटा-सा घर नौकरों के लिए, एक रसोई भी थी। दरवाजे और खिड़कियों में कीमती पर्दे लगे हुए थे ।

मैं और अंजु आश्चर्यचकित से सब कुछ देख रहे थे । निर्मला भाभी का कृष्णा मार्केट वाला टिन शेड का सीलन भरा छोटा-सा कमरा याद आ गया । याद आया, अतिनदा ने कभी अपनी लड़की नंदा के विवाह पर डेढ़ हजार रुपये मुझसे कर्ज में लिये थे, जो अभी तक मुझे वापस नहीं मिल सके हैं । वैसे अपने अभावग्रस्त जीवन के चलते इतने रुपये वापस करना उनके लिए संभव भी नहीं था ।

अंजु हाथ में लिए हुए तांत की साड़ी वाले लिफाफे को छुपाने की कोशिश कर थी । निर्मला भाभी की वर्तमान को देखकर इस साड़ी को भेंट करने में संकोच हो रहा था ।

लेकिन निर्मला भाभी हम लोगों पाकर मानो दिशाहीन-सी हो गयी थीं । लोगों को खींचते हुए डाइनिग टेबिल ले गयीं । काफी कीमती टेबिल था । से निकालकर खूबसूरत मिठाइयों की हम लोगों के सामने रख दी । और बैठकर जबरदस्ती हम लोगों को लगीं ।

खा-पी लेने के बाद हम लोगों के सुपारी और पान मसाला देते हुए 'जानते हो, भानू, इस आजाद भारत में रास्ते पर किसी काम को करना बहुत खीर है । सिर्फ एक सरकारी फ्लैट पाने लिए कितनी दौड़भाग नहीं की मैंने, तो जानते ही हो, लेकिन असफल मेरा एक लड़का उस वक्त कालेज में घर का किराया चार सौ रुपये था । अतिनदा की पेंशन भी तो नाममात्र ही थी । सिर पर लड़की की शादी के की चिंता ।'

पंखा कुछ धीमे चल रहा था । तेज करती हैं, फिर उसी जगह बात को जारी रखते हुए कहती हैं- के मकान-मालिकों को तो तुम जानते हो । एक साल होते न होते किराया की नोटिस दे देते हैं, लेकिन मुझमें उनकी नोटिसों को बर्दाश्त करने की

थी । आखिरकार एक दिन वह कुछ मियों को लेकर आया हमारा सामान फेंकने के लिए । काफी हाथ-पांव ने के बाद एक महीने का समय मिला तब सादिक नगर में एक कमरा दो पये किराये पर मिला ! लेकिन उसमें -सिमटकर रहना एक समस्या बन थी, फिर भी जी. पी. फंड से उधार सात सौ रुपये में यहां एक झुग्गी । लेकिन उस माहौल में बच्चों का झोल खाता नजर आया । वे दिन तरह बीते क्या बताऊं ?'

निर्मला भाभी की आंसू भरी आंखों मुस्कराते चेहरे को देखकर मुझे ाड़ी के उस प्रासाद तुल्य भवन की याद आ गयी ।

निर्मला भाभी लगातार बोलती चली गयीं, 'तुम लोगों ने जिनसे पता पूछा था, उन डाक्टर साहब ने एक खास सुझाव दिया था । इस इलाके में आकर उन्होंने सिर्फ सेवा के उद्देश्य से ही अपना क्लिनिक खोला । वह एक रिटायर्ड मिलिट्री अफसर हैं । उन्होंने कहा था कि दिल्ली में गरीबों का रहना भी एक समस्या है, लेकिन मंदिर के नाम पर जगह आसानी से हासिल की जा सकती है । कानून भी इसे रोक नहीं सकता । उनकी बात का मेरे ऊपर असर पड़ा और मैं हाथ में खुरपी लेकर यहां के घास की सफाई करने लगीं । एक जगह खुदाई करते वक्त अचानक एक दुर्गाजी की मूर्ति बाहर निकल आयी ।'

फिर थोड़ा मुस्कराकर हम लोगों की

ओर देखते हुए कहा, 'पर असल में वह नंदा का खिलौना था।'

अंजु आश्चर्यचकित-सी मुस्कराते हुए बोली, 'फिर मामला कैसे जमाया ?'

'क्यों ? मूर्ति एक डिब्बे में ले गयी थी। बस गड्ढा खोदते ही चीख-चीखकर सबको बुलाने लगी। फिर तो देखते ही देखते हल्ला मच गया। कैसे लोग यहां रहते हैं यह तो तुमने देखा ही होगा। कितने भोले और सरल प्रकृति के लोग हैं। असली भारतवासी। सभी इकट्ठे होकर चंदा देने लगे। किसी तरह एक कमरा तैयार कर ही लिया। एक बार पुलिस जरूर आयी थी, लेकिन परेशान होकर वापस चली गयी। मंदिर बनते ही मैंने झुग्गी बेच दी। उसके बाद धीरे-धीरे यह मकान भी एक दिन बनकर खड़ा हो गया। कंटीले तार से मैंने पहले ही मंदिर के नाम पर काफी जगह घेर ली थी। अभी तुम लोग जो कुछ देख रहे हो उसमें पंद्रह आने मंदिर की कमाई के हैं, सिर्फ एक आना मेरा अपना है।'

'मंदिर की कमाई...?' अंजु कुछ सोच में पड़ गयी थी।

'और क्या ? तुम नहीं जानते राजधानी के लोग किस कदर भगवान के भक्त हैं।' निर्मला भाभी खुलकर हंसते हुए बोलीं, 'अब तो दूर-दूर से भक्त आते हैं। अमीर घराने के लोगों की भीड़ रहती है। बहुत जागृत देवी है न... इंसान की हर तरह की मनौतियां भी तो पूरी करती है।'

'भाई, मैं तो भानू, तुम्हारी भाभी से बहुत डरता हूं। पता नहीं यह खुद कौन देवी हैं।' अतिनदा ने हल्की मुस्कान साथ कहा।

'आवाज उठाये बगैर सरकार नहीं चाहती है। भानू, तुम्हीं देखो, पैसे के इतनी जमीन पर कब्जा अच्छा खासा मंदिरनुमा घर बना लिया सात पुश्तों तक तो यहां से हटाने की में हिम्मत नहीं है।' भाभी ने कहा।

'लेकिन क्या आपके लड़के यह सब चला पायेंगे ?'

'मोटी रकम देकर कोई पुरोहित लेंगे। और अगर यहां नहीं रहना चाहें किराये पर उठा देंगे। अभी तो मैं ही काम करती हूं। सवेरे और शाम कुल दो की बात है। घर का काम तो कुछ नहीं पड़ता है। दो आदमी रख लिये हैं।

'कहां ? कोई दिखायी तो नहीं रहा है ?'

'दोनों बाजार गये हैं। एक को घर और दूसरे को मंदिर का सामान लाने है। अभी आते होंगे।'

'आपने मंदिर के नाम पर घर बना तो फिर मांस मछली...?'

'यह दिल्ली है, भानू, सब चलता है। एक परेशानी है। रोज शाम को वाले आकर घंटे दो घंटे झांझ मंजीरे साथ कीर्तन गाते हैं। अब, क्योंकि यह मंदिर में होना ही है, इसलिये इतना सहन करना ही पड़ेगा। वैसे देश के वि जन के बाद जितना कष्ट झेला, उ

यह तो कुछ भी नहीं है। दुर्भाग्य दिनों में मैंने कल्पना भी नहीं की थी कि लड़के को विलायत भेज सकूंगी इंजीरिंग पढ़ने के लिए।'

मैं चौंक-सा पड़ा। अंजु भी चौंकी। उस न जाने कैसे अंजु की गोद में रखा पैकेट यकायक गिर पड़ा। निर्मला ने उठाते हुए कहा, 'अरे, यह तो साड़ी ती है...!'

अंजु लज्जित-सी होकर बोल उठी, कलकत्ता गयी थी न, वहीं से लायी खरीदकर...।'

तब तक भाभी पैकेट खोल चुकी थी, ! बहुत सुंदर है। मेरे लिए ही लायी न...?'

लेकिन दीदी, यह तो तांत की साड़ी । संकोच-मिश्रित आवाज में अंजु ने ।

अरे, तो क्या हुआ....? मैं तो इन साड़ियों को सवेरे-शाम पहनकर आ चुकी हूं। अब इससे जरा राहत गी।' भाभी साड़ी को लेकर बच्चों तरह खुश होती हुई दूसरे कमरे में गयीं। दस मिनट बाद वापस आयीं। की दी हुई साड़ी को पहने हुए थीं। में नोटों का एक बंडल था।

'भानू, यह रहे तुम्हारे रुपये। बहुत हो गयी। वैसे मैं जानती थी तुम एक जरूर आओगे। मैं तो तुम्हारा पता नहीं जानती थी। और फिर तुम्हारा तो फिरने वाला काम है। नहीं तो....'

'लेकिन भाभी, रुपये मूल से भी कुछ ज्यादा हैं।'

'दस साल बैंक में रखते तो सूद भी मिलता। इसीलिये दो हजार दिये हैं तुमको मैंने।'

'नहीं, नहीं, भाभी। यह नहीं चलेगा।' कहते हुए सौ-सौ के पांच नोट मेज पर रखते ही अतिनदा बोले, 'ले लो, भानू। तुम्हारी भाभी अब पहले की तरह अभाव में नहीं जी रही है। तपन आजकल बैंक में चार्टर्ड एकाउंटेंट है। बंबई में रहता है। मां को मोटी रकम भेजता रहता है। यह सब वही रुपये हैं। हां, दूसरा विलायत में इंजीनियरिंग पढ़ रहा है।'

भाभी क्रोध-मिश्रित हंसी के साथ बोलीं, 'देश गया, जमीन चली गयी, धन-संपत्ति तक गयी। पश्चिमी पाकिस्तान वालों को सोलह आना मुआवजा दिया गया, लेकिन हम लोगों के हिस्से में आया सिर्फ बलिदान। एक छोटा-सा फ्लैट तक नहीं पा सकी। कहा गया, 'आउट ऑफ टर्न मिल नहीं सकता।' मैं क्या फुटपाथ पर रहती? जो किया सब ठीक ही किया। चलो, तुम लोगों को मंदिर की भवानी के दर्शन करा लाऊं।'

'जीवित भवानी के दर्शन तो हम कर ही चुके हैं, भाभी, अब खिलौने वाली भवानी देखने की हमारी इच्छा नहीं है।' मैं कह उठा।

निर्मला भाभी के चरणस्पर्श कर हम वापस चल पड़े।

□

मलयालम कहानी

पागल कुत्ता

□

एस. के. पोट्टेकाट

(ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता)

१९८० के ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता श्री एस. के. पोट्टेकाट, जिनका दुखद निधन ६ वर्ष की आयु में ३ अगस्त, १९८२ को हुआ, मलयालम साहित्य के अग्रणी कथाकारों औ साहित्यकारों में से एक थे। उनके सात उपन्यास, दो काव्य-संग्रह, तीन कथा-संग्रह त यात्रावर्णन (तीन खंडों में) प्रकाशित हो चुके हैं। १९४० में प्रकाशित उनकी यह कहान आज भी उतनी ही समसामयिक लगती है, जितनी आज से ४७ वर्ष पूर्व थी।

जब सुबह की धूप तेज़ होने लगी, तब कीरन अपनी जर्जर चटाई से उठा। सारी रात वह अपने गंदे और धूलभरे मुंडु के अंदर एक मेढक की तरह पड़ा रहा था। बाहर आंगन में आकर उसने अपनी ९० वर्ष की मां को झोपड़ी के बाहर बैठे देखा। वहीं उसका छह साल का बेटा चाथन नारियल के पेड़ की एक शाखा से खेल रहा था।

झोपड़ी के बाहर आकर उसने सामने फैले खेतों की ओर देखा। मकर की फ़सल के बाद, खेतों पर कुछ काम नहीं हुआ था। मकर की फसल में जितना कुछ चावल उन्हें मिला था, वह कभी का ख़त्म हो गया था। और, अब स्थिति यह थी कि उसके परिवार के लोगों ने तीन दिनों से कुछ नहीं खाया था। तभी, उसे झोपड़ी के अंद से अपनी 'चेरुमि' (पत्नी) के कराहने क आवाज़ सुनायी दी। वह गर्भवती थी, औ बच्चा आज या कल में ही होने वाला था और, उसके पास एक खोटे पैसे के अलाव कोई और रक़म नहीं थी। वह अंदर-बाह से अपने खेतों की भांति खाली था। वह न कुछ कर सकता था, न कहीं जा सकता था।

वह धीरे-धीरे अपने खेतों की ओर बढ़ने लगा। वहां एक नाले से थोड़ा पानी अपनी हथेलियों में लेकर अपना मुंह धोया और कुल्ला किया। अपनी उंगलियों और पानी की मदद से अपने दांत साफ़ करने के बाद, वह सड़क की ओर बढ़ा। वहां एक दुकान के आगे थोड़ी-सी भीड़ को जमा देखकर, वह भी लोगों के बीच खड़ा होकर

ानने की कोशिश करता रहा कि
माजरा क्या है ?
नायर ने उसे बताया कि दुकान-
कुरुप और अन्य लोग छप्पूनी
उस लाल रंग के कुत्ते की वजह से
हैं, जो अचानक पागल हो गया
पागल कुत्ता अभी तक पांच-छह
तथा एक गाय को काट चुका है ।
ुबह ही उसने केलु धोबी के बेटे को
ाटा । केलु अब अधिकारी से एक
लेने जायेगा, ताकि उसके
पर अस्पताल में भर्ती किया जा सके । इस प्रमाणपत्र के आधार पर वह अधिकारी से पांच-छह आने रोज़ बच्चे के इलाज तथा दूसरे खर्चों के लिए ले सकेगा ।

बेचारा केलु अपने बेटे को गोद में लिये चुपचाप बैठा था । भाजी-विक्रेता चंदन ने उसे सलाह दी, 'जा, बेटे को लेकर, अभी अधिकारी के घर चला जा । वह इस वक्त घर पर मिल जायेगा ।'

केलु सलाह मानकर, बेटे को गोद में लेकर, अधिकारी के घर की ओर रवाना हो गया । भीड़ छंटने लगी । कीरन भी करुप्पन चायवाले की दुकान की तरफ़

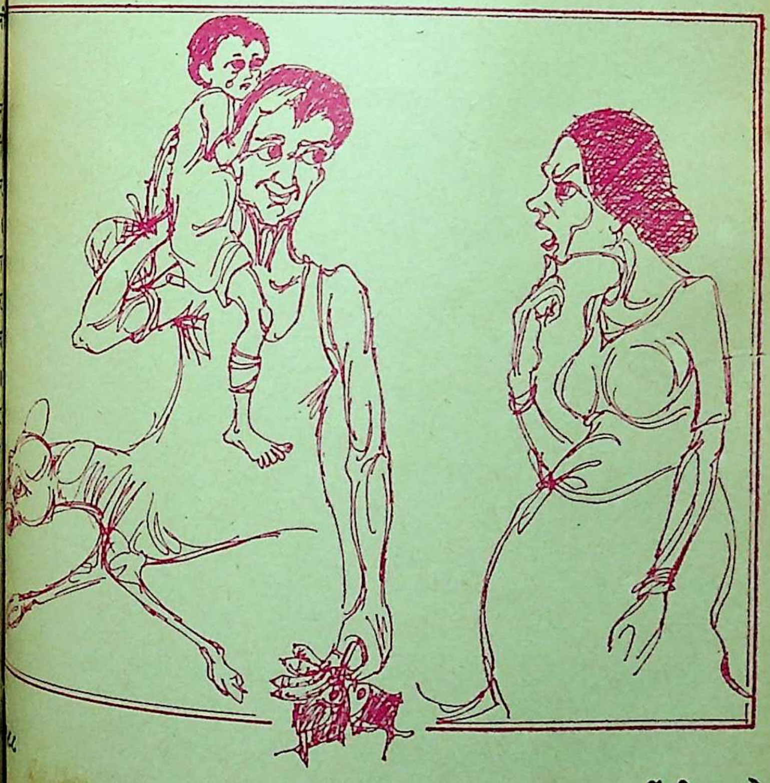

बढ़ा। वहां पहुंचकर, उसने करुप्पन से कहा, 'आधा कप चाय देना, भई।'

करीब दस मिनट के बाद, करुप्पन ने उसके हाथ में आधा कप चाय का पकड़ाते हुए कहा, 'काफ़ी पत्तियां और चीनी डाल दी है। और मत मांगना।' करुप्पन कीरन की आदत जानता था। वह ज्यादा चीनी या पत्तियों का बहाना करके उससे आधे के स्थान पर पूरा कप चाय ले लेता था।

कीरन ने चुस्कियां लेते-लेते चाय ख़त्म की। तभी उसकी निगाह करुप्पन की दुकान पर रखे चावल के बने नानों (पथीरी) पर पड़ी। वह जानता था कि उसके पास पैसे नहीं हैं, और करुप्पन उसे मुफ्त पथीरियां नहीं देगा। फिर भी उसने हिम्मत करके पूछ लिया, 'थोड़ी पथीरियां ले लूं। पैसे कल दे दूंगा।'

'जब पैसे हों, तब ले जाना। अच्छा, अब दफ़ा हो यहां से।'

कीरन पैसा उसकी मेज़ पर रख कर बाहर आ गया।

०००

काफ़ी देर तक वह गांव की सड़कों पर व्यर्थ घूमता रहा। उसके दिमाग में पागल कुत्ते की तस्वीर ही घूम रही थी। जैसे ही उसने केलु को अधिकारी के घर से लौटते देखा, उसने पूछा, 'तुम्हें अधिकारी से सर्टिफिकेट मिल गया क्या?'

'हां, मिल गया। मैं उसे लेकर अस्पताल जा रहा हूं। अब मुझे ६ आने रोज़ मिलेंगे। इक्कीस इंजेक्शन लगेंगे।' कहकर, केलु आगे बढ़ गया।

कीरन के दिमाग़ में अब पागल की तस्वीर के अलावा, छह-छह आनों तस्वीरें भी घूमने लगीं।

उस रात को वह देर से अपने की ओर लौटा। घर में किसी ने सारे कुछ नहीं खाया था। पानी मिला भी नहीं। उसकी गर्भवती पत्नी ने पास से जंगली जड़ी बूटियां तोड़ी थीं, उन्हें उबालकर तथा चबाकर सो गयीं

सुबह ही सुबह, कीरन की पत्नी पति की चीख-पुकार सुनकर उठ उसने झोपड़ी के बाहर आकर जो दृश्य उसे देखकर वह दहल गयी।

उसने देखा, उसका बेटा चायन पीड़ा से चिल्ला रहा है, और उसके खड़ा उसका बाप कीरन चिल्ला 'अरे, मेरे बेटे को पागल कुत्ते ने लिया।' वह हाथ में एक लाठी लिये का चक्कर लगा रहा था, जैसे पागल का पीछा कर रहा हो।

बीवी के इस सवाल के जवाब में आखिर हुआ क्या, वह बोला, 'कुत्ते ने को तब काटा जब वह सो रहा था।'

उसकी बीवी को उसकी बात विश्वास न हुआ, क्योंकि कीरन के दांत से सने थे। उसने पूछा, 'मगर तुम्हारे में खून कैसे?'

कीरन ने फ़ौरन कपड़े से दांतों में खून को पोंछते हुए कहा, 'बस, चुप डायन! किसी को इस खून के बारे

तो मैं तेरा खून करके रख दूंगा ।'

रन की पत्नी ने अपने बेटे की ओर जो ज़ोर-ज़ोर से रो रहा था । उसके से खून बह रहा था ! वह अपनी मां बताने में असमर्थ था कि वास्तव में हुआ था । लेकिन, उसकी मां जान थी कि क्या हुआ था ! वह सहमी-सी चाप खड़ी रही । अपने पति के क्रोध अनुभव था उसे ।

० ० ०

रन और उसके बेटे की चीख, लाहट सुनकर पड़ोस के लोग वहां जमा ये । कीरन ने उन्हें बताया कि किस र लाल रंग के एक कुत्ते ने तड़के उसके ते हुए लड़के की टांग में काटा, और फिर गया । उसने कुत्ते का बहुत पीछा लेकिन वह न मालूम कहां भाग उसे कुछ पता नहीं चला ।

ग्ध-विक्रेता कनारन नायर बोला, 'ज़रूर नी नायर का कुत्ता रहा होगा । कल केलु के लड़के को काटा था ।'

भीड़ ने एकमत से निर्णय लिया कि उस कुत्ते को जिदा न छोड़ा जाये । को दिखायी दे, वह देखते ही उसे मार । फिर सबने सहानुभूति दिखाते हुए से कहा, 'तुम फ़ौरन अपने बेटे को कारी के पास ले जाओ, और उससे टिफिकेट लेकर अस्पताल में उसे इंजेक्शन ना शुरू करो ।'

रन जब अपने बेटे को अपने साथ अधिकारी के घर पहुंचा, तो अधिकारी सोकर उठा ही था । जैसे ही उसने आंगन में खड़े कीरन और उसके बेटे को देखा, वह धीरे-धीरे चलकर उन दोनों की तरफ आने लगा । उसे अपनी ओर आते देखकर, कीरन ने अपने बेटे की पीठ में एक कचोटी मारी, जिससे वह बेचारा धीरे-धीरे रोने लगा ।

अधिकारी ने कीरन से पूछा, 'क्या बात है ? क्यों आये हो ?'

'हुजूर, मेरे बेटे को एक पागल कुत्ते ने काट खाया है,' और वह रोने लगा ।

'तुमने उस कुत्ते को जान से मारा क्यों नहीं ?'

'हुजूर, वह काटते ही फ़ौरन भाग कर नज़रों से ओझल हो गया । मैंने उसे ढूंढ़ने की बहुत कोशिश की, मगर वह दिखायी नहीं दिया ।'

'परले दर्जे के बेवकूफ हो तुम ? कुत्ता कैसा था ?'

'लाल रंग का था, हुजूर ! छप्पूनी नायर का था ।'

'अरे, उसी ने तो कल केलु धोबी के बेटे को काटा था ।'

'हां, हुजूर, वही कुत्ता था ।'

'तुम सब लोग जाहिल ही नहीं, डरपोक भी हो । एक कुत्ते तक को नहीं मार सकते । अब मैं क्या करूं, बताओ ।'

'हुज़ूर, एक सर्टिफिकेट दे दें, तो बड़ी मेहरबानी हो ।'

अधिकारी ने सर्टिफिकेट दे दिया कि उसके लड़के को एक पागल कुत्ते ने काटा

है। उस सर्टिफिकेट को जेब में रखकर कीरन चाथन को लेकर अस्पताल की ओर चल पड़ा।

०००

अस्पताल में कंपाउंडर ने कुंद सुई चाथन के पेट में चुभाई, और दवा अंदर प्रवेश करायी। चाथन बराबर कराहता रहा।

उस शाम कीरन घर लौटा तो बहुत खुश था। उसके सर पर एक सेर चावल की पोटली थी, और हाथ में हरे केले। दूसरे हाथ में नोआ की माथी मछली थी। जो पैसे उसे मिले थे, उनमें से उसने एक आना ताड़ी पर भी खर्च किया था। चाथन उसके कंधों पर सो रहा था।

चार इंजेक्शनों के बाद, चाथन का बदन सूजने लगा। वह न खड़ा हो सकता था, न सो सकता था। फिर भी, कीरन उसे रोज अस्पताल ले जाता रहा। जो भी रास्ते में मिलता, उसे वह बड़े गव से सुनाता कि कैसे उसके बेटे को पागल कुत्ते ने काटा, और कैसे वह अधिकारी के घर जाकर सर्टिफिकेट लाया, और अब रोज अपने बेटे को इंजेक्शन दिलाने ले जाता है।

सात इंजेक्शनों के बाद, चाथन बहुत ज्यादा कमज़ोर हो गया। वह रोज़ सुबह अपने बाप से कहता, 'अब और इंजेक्शन नहीं, बापू!' लेकिन कीरन उसे ऐसे कंधों पर उठा लेता, जैसे कोई डाकिया डाक का थैला उठा लेता है। वह नियत समय पर अस्पताल पहुंच जाता।

डाक्टर, कभी कभी मुझे लगता हैं कि मैं अपनी जान खुद ले लूंगा.
आप चिंता मत कीजिए यह काम मैं कर दूंगा।

ग्यारह इंजेक्शनों के बाद, चाथन शरीर इतना ज्यादा सूज गया था कि चान में नहीं आता था। उसके बदन रंग बदल गया था। उसकी ऐसी हा देखकर डॉक्टर ने कीरन से कहा, कुछ दिनों तक मत लाना।' कीरन यह सुनकर बड़ी निराशा हुई। वह लटकाये चाथन को लेकर झोपड़ी लौटा।

अगले दिन सुबह, कीरन ने देखा चाथन चटाई पर अचेत पड़ा है। वह गले लगाकर रोने लगा, 'मेरे चाथन, प्यारे बेटे!'

उसने उसकी नब्ज देखी। वह चल बंद हो गयी थी।

वह चिल्लाता हुआ अपनी पत्नी की भागा। मगर, उसकी पत्नी गोद में लि हुए अपने नवजात शिशु को चुप कराने लगी हुई थी।

पागल कुत्ते की तरह चिल्लाता हु कीरन झोपड़ी से बाहर आया।

ंधेरे में ज्योति-किरण बनने वाली स्त्री

☐ बलवीर सिंह

ओल्गा स्कोरोखोरोवा की आंखें ज्योतिविहीन हैं, और कान सुनने में अस- ं। बचपन में ही उसके चारों ओर अनंत कार और अथाह मौनता फैल गयी थी। में से निकल सकने की जब कोई आशा की नहीं रही थी, तो उसे लगा था कि हालत में जीना मौत से भी भयानक है। लेकिन अंत में, उस भयानकता के साथ ते हुए वह अंधेरे और सन्नाटे में से जैसे र उठी, और उसने आम लोगों के बले में जिस भरपूर ढंग से जिया और र को जिस सूक्ष्म दृष्टि से देखा-जाना, अपने आप में एक चमत्कार है। फिर, वह समय भी आया, जब उसने अपने अनुभवों और अहसासों को अभिव्यक्त करने का प्रयत्न किया, तो वह कवयित्री बन गयी, लेखिका बन गयी। एक अंधी-बहरी स्त्री के लिए यह एक असाधारण प्राप्ति थी। अपनी और भी कई प्राप्तियों की बदौलत आज संसार के महान व्यक्तियों में उसकी गणना होती है।

ओल्गा का जीवन चिरंतन अंधकार और मौनता के सन्नाटे में से निकलने और सुंदर सार्थक ढंग से जीने का एक अद्वितीय उदाहरण है।

ओल्गा का जन्म सन १९१४ में उक्रेन

(रूस) के एक छोटे-से ग्राम में हुआ था । वह अभी पांच वर्ष की भी नहीं हुई थी कि सख्त बुखार की शिकार होकर लंबे अरसे के लिए बिस्तर पर पड़ गयी । इलाज के बावजूद उसकी हालत बिगड़ती ही गयी । आखिर उस बीमारी से उसकी आंखों की रोशनी जाती रही । कुछ अर्से के बाद उसके कान भी जवाब दे गये । और न सुन सकने का असर उसके बोलने पर पड़ा जिससे उसकी जबान विकास करने से रुक गयी ।

माता-पिता के लिए अपनी नन्हीं-सी बेटी की यह हालत देखी नहीं जाती थी । बेटी की आंखों का अंधेरा उनकी अपनी जिंदगियों में भी भर गया । कभी वे सोचते कि उस दयनीय हालत में जीने से तो ओल्गा को मौत आ जाये तो अच्छा है । भला वह अंधी, बहरी और किसी हद तक गूंगी बनकर सारा जीवन कैसे काटेगी ?

ओल्गा अब केवल नाम मात्र की ही जी रही थी । वह बेसहारा बनी हुई जैसे किसी अंधेरे गहरे कुएं में गिरी हुई थी, जहां दम घोटने वाला सन्नाटा छाया हुआ था ।

और फिर, उस पर भाग्य का एक और कहर टूटा—उसके माता-पिता दोनों ही चल बसे ।

अब ओल्गा के लिए जीवन अंधेरा ही नहीं, एकांत, बेसहारा, और ठोकरों से भरा हुआ था । और कोई उसे संभालने वाला नहीं था ।

उस ज़ीवन से छुटकारे का एक रास्ता था—मौत । लेकिन ओल्गा को मौत न आयी । न ही वह खुद मर सकी ।

सन १९२२ में, जब वह आठ वर्ष की थी, उसे अंधों के स्कूल में दाखिल किया गया, ताकि वह किसी हद तक अपने पांवों पर खड़ी होकर बाकी का जीवन बिता सके । लेकिन उसकी हालत इतनी बिगड़ चुकी थी कि उसे वहां कुछ भी फायदा न हुआ । पिछले कुछ सालों में वह अंधेरे और चुप के अलावा जिस भयानक अकेले-पन में घिरी रही थी, उसमें से उसे निकालने में शिक्षक सफल न हो पाये, और इस वजह से उसे कुछ सिखा भी न पाये । अतः उस अंधेरे, बेआवाज अकेलेपन में घिरी हुई ओल्गा का संभलना और कुछ सीखना तो क्या था, बल्कि वह गूंगी भी हो गयी । जो थोड़ा-बहुत बोलना वह जानती थी वह भी भूल गयी ।

आखिर उसे गूंगों, बहरों और अंधों के एक और स्कूल में भेजा गया, जो प्रो. ईवान सोकोल्यान्स्की ने दो साल पहले खोला था, और जहां बिल्कुल नये ढंग से शिक्षा दी जाती थी । प्रो. सोकोल्यान्स्की ने ओल्गा की ओर विशेष ध्यान दिया । उसकी शिक्षण-पद्धति का कमाल था कि ओल्गा कुछ ही समय में फिर से बोलने लगी । उसके बाद तो उसने तेजी से विकास करना शुरू किया । उसने 'ब्रेल लिपि' सीखी और पढ़ने-लिखने लगी ।

उसके जीवन में यह एक आश्चर्यजनक मोड़ आया था । बोलने और पढ़ने-लिखने

बदौलत वह वर्षों लंबे अंधेरे और नता की सीमाओं से ऊपर उठी और न-प्रतिदिन उन्नति करती हुई स्कूली क्षा पूरी करके उच्च शिक्षा प्राप्त करने गी। तब उसके सामने दूर-दूर तक फैले नये क्षितिज उभरे और उसने उन तक हुंचना चाहा। आखिर उसने शैक्षणिक नोविज्ञान में एम. ए. की डिग्री प्राप्त की। न के आलोक द्वारा उसने नयी नजर से सार को देखना शुरू किया था। और उसकी न की भूख अथाह थी। उस अर्से में उसने तना ज्यादा पढ़ा कि उसके अपने शब्दों 'साल दर साल मैंने अपना ज्ञान बढ़ाया र अपनी साहित्यिक शब्दावली में वृद्धि की। मेरी साहित्यिक भाषा और ज्ञान का त है: पढ़ाई, पढ़ाई, और ज्यादा पढ़ाई-सकर साहित्यिक पुस्तकों की।'

इसी अर्से में उसने अपने चारों ओर के सार को बहुत सूक्ष्मता से महसूस किया र अपने उन अहसासों को जबान देने के ए लिखना शुरू किया। यह एक नितांत या अनुभव था। और ओल्गा ने लेख खे, कविताएं लिखीं। धीरे-धीरे उसने नये क्षेत्र में कठिन बातों और अहसासों अभिव्यक्त करने में सफलता प्राप्त की। तब उसने अपनी पहली पुस्तक लिखी एक बहुत बड़ी प्राप्ति थी।

सन १९७२ में ओल्गा की तीसरी पुस्तक छपी, तो पाठक उसे पढ़कर दंग रह गये। ओल्गा कहां की कहां पहुंच गयी थी! उस पुस्तक का नाम है 'चारों ओर के संसार को मैं कैसे अनुभव करती और समझती हूं।' उसमें उसने बताया कि वह किस प्रकार अपने हाथों से 'देखती' है, और सुनने में असमर्थ होने पर भी किस प्रकार सूक्ष्म संगीत तक 'सुन' सकती है। एक साधारण व्यक्ति से कहीं अधिक उसने इस संसार की सुंदरता का आनन्द लिया है। उसका जीवन घुटन भरी सीमाओं में फंसे हुए एक व्यक्ति के असाधारण संघर्ष और आशावादी दृष्टिकोण की कहानी है।

ओल्गा केवल अपना व्यक्तिगत जीवन जीकर ही संतुष्ट नहीं हुई, और उसने केवल अपने आपको ही ऊपर नहीं उठाया, बल्कि अनगिनत अंधे-बहरे लोगों को प्रेरणा दी है और कुछ करने और बनने का रास्ता दिखाया है। उसने अंधे, बहरे और गूंगे बच्चों के लिए भी बहुत काम किया है। मास्को के निकट जागोरस्क में अंधों-बहरों के एक खास स्कूल में वह पढ़ाती भी है। वहां उसने जो काम किया है, उसकी संसार भर में सराहना हुई है।

ओल्गा अंधेरे को मात देकर रोशनी बनी है, कविता बनी है, संगीत बनी है!

□

इस स्वतंत्रता की अमर ज्योति की ज्वाला मंद न हो।
प्राणों का स्नेह चढ़ाने की यह धारा बंद न हो।।

—सोहनलाल द्विवेदी

□

तमिल कहानी

हेडमास्टर

□

एस. कंदास्वामी

समकालीन तमिल कथाकारों में एस. कंदास्वामी का प्रमुख स्थान है। प्रस्तुत है–मानवीय अंतःक्रिया की दुर्बोधताओं को उजागर करती उनकी एक श्रेष्ठ कथा-कृति का संक्षिप्त रूपांतर।

सब लड़के हेडमास्टर को 'सर' कहने की अपेक्षा 'सार' कहते थे। यह उच्चारण उनके लिए अधिक सहज और स्वाभाविक जैसा था।

अरपूथराज जब नया हेडमास्टर बनकर स्कूल में आया, तो कौन उसे 'सार' कहकर, उससे अपना परिचय बढ़ायेगा इस बारे में थंगय्या, कृष्णन् तथा उसके दो-तीन साथियों में होड़ लगी। सब उत्तेजित भी थे, और सशंकित भी। वे जानते थे कि अरपूथराज इसी स्कूल का भूतपूर्व विद्यार्थी है। यहां की शिक्षा पूरी करके वह मद्रास चला गया था, और वहां से डिग्री लेकर लौटा। मानयला आयंगर के रिटायर हो जाने के बाद, उसे हेडमास्टर बनने का मौक़ा मिला।

थंगय्या को न जाने क्यों, पहली दृष्टि में ही अरपूथराज 'सार' अच्छे लगने लगे थे। मगर, उनके निकट जाने और उन्हें 'सार' कहने में न जाने क्यों उसे डर लगता था। उसकी हिम्मत तब बढ़ी, जब उसकी बहन ने उससे कहा कि डरने की कोई जरूरत नहीं है, आखिर वह भी उन्हीं की तरह एक आदमी है, हेडमास्टर है क्या हुआ?

दो दिन तक स्कूल में थंगय्या हेडमास्टर के इर्दगिर्द चक्कर लगाता रहा कि कब मौ मिले, और कब वह उसे 'सार' कह उनका ध्यान अपनी ओर खींचे। मौ तीसरे दिन ही मिल पाया। जब उसने 'गु मार्निंग, सार' कहा। सर ने मुस्करा उसकी तरफ़ देखा, और आगे बढ़ गये।

उनके जाते ही, थंगय्या के साथियों उसे घेर लिया, और पूछने लगे, 'अरे 'सार' को जानता है? कब से जानता है थंगय्या ने गर्व और झूठ का प्रदर्शन क हुए कहा, 'मैं उनसे चर्च में मिला था। उसके साथी उससे बहुत अधिक प्रभावि दिखायी दिये।

अगले सप्ताह, जब वह अपनी बहन साथ चर्च जा रहा था, तो उसने 'सा को भी चर्च जाते देखा। उसने बहन साथ छोड़ दिया, और उनकी तरफ़ भा उनके पास पहुंचकर, जब तक उसने उ 'गुड मार्निंग, सार' नहीं कह लिया,

नहीं मिला। हेडमास्टर ने इस बार के अलावा उसके साथ चर्च जा रही, की बहन को भी ग़ौर से देखा, और ने यह मालूम करके कि वह कौन-सी न में पढ़ता है, बोले, 'तुम्हारे टीचर नायगम हैं न!' थंगय्या को खुशी हुई हेडमास्टर साहब ने उससे इतनी बातें । लोग, और पुराने टीचर, बेकार में उनके बारे में ग़लत प्रचार करते हैं वह शेखीबाज़ है, और किसी से मिलना ना पसंद नहीं करता।

०००

असल में, स्कूल के जो टीचर और लोग हेडमास्टर के बारे में कुप्रचार करते रहते थे, वे उससे जलते थे कि वह सब पुराने टीचरों को पछाड़कर हेडमास्टर बन गया था। वेलू टीचर, जो तीसरी कक्षा को पढ़ाता था, और राजकुमारी टीचर इस कुप्रचार में सबसे आगे थे। ये लोग बारबार उसके बारे में 'शेखीबाज़' शब्द का प्रयोग करते थे, जिसके अर्थ बेचारे थंगय्या को नहीं मालूम थे। उसकी बहन भी उसके अर्थ नहीं जानती थी। और किसी से उसकी पूछने की हिम्मत नहीं

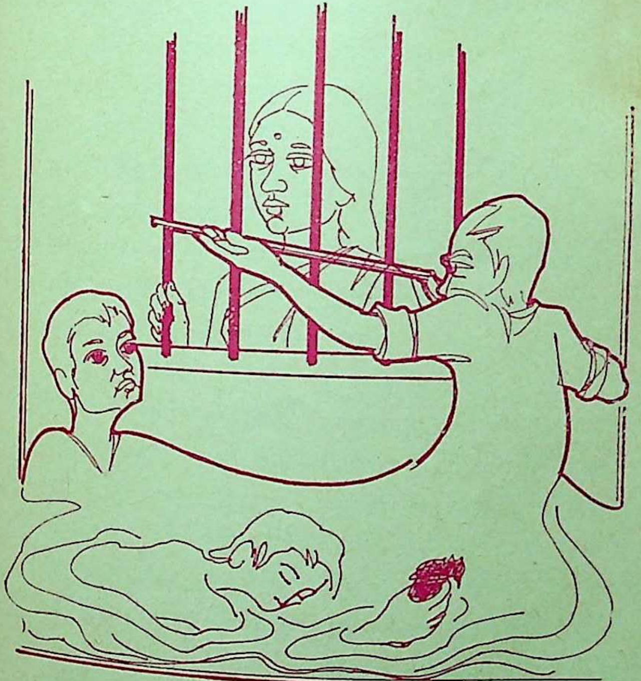

होती थी। इसलिये, हिम्मत करके उसने हेडमास्टर साहब से ही इस शब्द का अर्थ पूछ लिया, और यह भी कि सब उन्हें शेखीबाज़ क्यों कहते हैं?

थंगय्या का सवाल सुनकर, हेडमास्टर साहब एक क्षण को चकराकर रह गये, और उनकी समझ में न आया कि वह क्या जवाब दें। उन्हें चुप देखकर थंगय्या ने उन्हें बताया कि कौन-कौन 'सार' और दूसरे लोग उन्हें शेखीबाज़ कहते हैं। 'वे झूठ कहते हैं न, सार?'

'हां, बिलकुल झूठ।' 'सार' ने उजली सी मुस्कराहट के साथ कहा। 'तुम इन लोगों के बारे में बिलकुल मत सोचो। अच्छी बातों के बारे में सोचो? जैसे, पशु-पक्षी। अच्छा, तुमने कभी शिकार किया है?'

'शिकार? जी नहीं। मगर उसके बारे में सुना ज़रूर है।'

'तो फिर, अगले इतवार को तुम मेरे साथ शिकार पर चलना। बड़ा मज़ा, आयेगा।'

थंगय्या की खुशी का ठिकाना न था। अब उसकी निगाह में 'सार' की इज्जत और ज्यादा बढ़ गयी थी। अपनी बहन के बाद, वह अब सबसे ज़्यादा इज्जत 'सार' की ही करने लगा था।

अगले इतवार को सुबह सात बजे वह इमली के उस पेड़ के नीचे पहुंच गया, जहां 'सार' ने उसे बुलाया था। उसे देखते ही 'सार' के, जिनके कंधे पर एक बंदूक लटकी थी, होंठों पर मुस्कराहट खेल गयी। उन्होंने कहा–'चलो', और दोनों जंगल की ओर चल पड़े।

थंगय्या को अपनी बहन से पता चल गया था कि 'सार' अरपूथराज ने दो साल पहले, जब वे यहां छुट्टी पर आये थे, मनिक्क अचारी के लोहाखान में एक बड़े कोबरा नाग को अपनी बंदूक से मारा था। वह उनकी बंदूक के और कमाल देखने को उत्सुक था।

०००

जब थंगय्या ने उस साहसिक घटना की याद 'सार' को दिलायी, तो उन्होंने हंस कर कहा, 'वह मेरा पहला शिकार था। लेकिन मुझे खुशी है कि मैं उसमें कामयाब रहा था। जब मैंने गोली चलायी थी, तो मेरे हाथ बुरी तरह कांप रहे थे, और मुझे डर था कि गोली कोबरा को नहीं लगेगी। पास खड़े लोग भी चिल्लाकर कोबरा को विचलित कर रहे थे, लेकिन मेरे अचूक निशाने से उसका सर धड़ से अलग हो गया।'

'आज आप किसका शिकार करेंगे, सार?' थंगय्या ने पूछा। वह कोबरा की कहानी सुनकर विस्मयाभिभूत हो गया था।

'आज हमारा इरादा आवायम्मल के बाग में जाकर कोयल का शिकार करने का है। मगर वहां दिन में भी घोर अंधेरा रहता है, और हम बदकिस्मती से अपनी टॉर्च घर पर ही भूल आये हैं। ख़ैर, कोशिश तो करेंगे ही।'

'आप चिंता न करें, सार, मैं टार्च घर

लेता हूं ।' कहकर वह अपने घर की भागा । जहां वे खड़े थे, वहां से उसका पास ही था । घर में पहुंचकर, उसने से कहा, 'लाओ, जल्दी से पिताजी की टॉर्च दे दो । 'सार' को देनी है । वे टॉर्च भूल आये हैं ।'

बहन ने खिड़की से झांककर, कुछ दूर 'सार' को देखा, और फिर थंगय्या से , 'उन्हें जाकर यहां बुला क्यों नहीं । जा, इतने में मैं टॉर्च खोजती हूं ।' वह कुर्सी पर जमी हुई धूल को लगी ।

थंगय्या बाहर गया, और निराश मुद्रा वापस लौटा । बोला, 'सार कहते हैं, जल्दी है । इसलिये नहीं आयेंगे । टार्च बारे में कहते हैं, उसके बिना भी काम जायेगा ।'

तू पागल है । जाकर दुबारा कह, पांच के लिए आ जायेंगे, तो थोड़ा आराम उन्हें मिलेगा । वहां धूप में . . . ' कह- उसने फिर खिड़की से 'सार' को देखा । की नजरें एक क्षण को मिलीं । उसे हो आया ।

मुस्कराते हुए, सलोने से, प्यारे से को देखकर, अरपूथराज भी रोमां- हो आया ।

थंगय्या इस बार लौटा, तो उसके साथ भी था । उसका परिचय कराते उसने कहा, 'गोपाल, सार ! सैवन्थ ।'

गोपाल 'सार' से ऐसे बातें करने लगा, जैसे उसकी 'सार' से वर्षों पहले की जान-पहचान हो ।

लेकिन 'सार' का ध्यान गोपाल की बातों में नहीं था । दो भोले नयन उसके सामने बार-बार आ जाते थे ।

०००

आवायम्मल के बाग में 'सार' ने चार कोयलों का शिकार किया । वहां से वे थंगय्या और गोपाल के साथ कावेरी नदी की ओर बढ़े, लेकिन नदी में बाढ़ आयी हुई थी, जिसकी वजह से 'सार' ने उस पार जाकर और शिकार करने का अपना इरादा बदल दिया । वैसे, गोपाल और थंगय्या दोनों तैरकर उस पार जाने को तैयार थे । 'हम इस तरह तैरकर जायेंगे कि आपकी बंदूक पानी में बिलकुल नहीं भीजेगी ।' दोनों ने कहा । मगर 'सार' जोखिम नहीं उठाना चाहते थे ।

तीनों अब पार्थसारथी आयंगर के फार्म की ओर चले, जो गोपाल के घर के पीछे स्थित था । रास्ते में अरपूथराज को चेड़ पक्षी की आवाज़ सुनायी पड़ी । पर, वह कहां बैठा था, यह न उन्हें पता चला, न दोनों लड़कों को । अंत में, अरपूथराज ने आवाज़ के सहारे गोली चलाने का फ़ैसला किया, मगर तभी गोपाल को कुछ याद आया, और उसने 'सार' से कहा, 'सार, यहां भूत रहते हैं । गोली चलाने से वे नाराज़ हो जायेंगे ।' 'सार' किसी को नाराज़ नहीं करना चाहते थे, इसलिये उन्होंने बंदूक नीचे रखते हुए कहा, 'आज बस इतना ही ।

चार कोयलें काफ़ी हैं।'

अगले रविवार को वे तीनों पार्थसारथी अय्यंगर के फार्म पर गये, जहां शिकार के लिए पक्षियों की कमी न थी। तीतर कोयल, बगुले आदि। 'सार' ने पहले तीतर और बगुले को अपनी गोली का शिकार बनाना चाहा, मगर वे दोनों गोली के आने के पहले ही उड़ गये।

तभी, थंगय्या ने एक ऊंचे पेड़ पर बैठी कोयल को देखा, और अरपूथराज से कहा, सार, देखिये, वह कोयल!'

'सार' ने ऊपर देखा। आम तौर पर, कोयल इतनी ऊंचाई पर नहीं जाती। उन्होंने निशाना जमाया, और गोली चला दी। कोयल फड़फड़ाती हुई नीचे तालाब में आकर गिरी। गोपाल ने कमीज उतारी, और उसे पकड़ने के लिए तालाब में कूद पड़ा। गोपाल को अपनी ओर आते देख, घायल और मृतप्राय: कोयल तालाब में उगे पौधों की पत्तियों पर छलांग लगाने लगी। लेकिन, अंत में उसने प्राण छोड़ ही दिये। उसके तालाब में डूबने से पहले ही गोपाल ने उसे हाथ में ले लिया, और तालाब से बाहर आकर 'सार' के हाथों में थमा दिया। 'सार' ने उसे थंगय्या को दिया।

अगले दिन, थंगय्या ने एकांत में 'सार' से कहा, 'सार, मेरी बहन ने आपसे दो कोयल मांगी हैं।'

'सार' की आंखों के सामने थंगय्या की बहन का मोहक, सलोना चेहरा घूम गया। एक-दो बार जब वे थंगय्या के घर के आगे से निकले थे, तब उन्होंने देखा था कि व उसे देखते ही शरमा कर छिप जाती है

उन्होंने थंगय्या से 'हाँ' 'न' कुछ न कहा; सिर्फ़। मुस्कराकर रह गये।

'सार, बहन को न जाने क्या हो गया है हमेशा मुझसे आपके और आपके शिकार के बारे में पूछती रहती है–क्या उन निशाना अचूक होता है? क्या वे कभी कभी अपना निशाना चूक भी जाते हैं!

अगले रविवार को 'सार' शिकार प गये। इस बार, उनके साथ थंगय्या, गोपा के अलावा कृष्णन् भी था। 'सार' ने न के किनारे लगे एक पेड़ पर बैठी एक कोय पर गोली चलायी। जैसे ही कोयल पानी गिरी, गोपाल उसे पकड़ने के लिए नदी कूदा। मगर, कोयल को पकड़ने की कोशि में वह बहता चला गया.. बहता च गया ... और फिर अदृश्य हो गया।

... एक घंटे बाद, ४०-५० लोगों उसे एक फलांग दूर मृत पाया। कोयल उस नन्हें से हाथ में बंद थी।

'सार' धक्क से रह गये। दो हफ्ते छुट्टी लेकर, घर में ही बैठे रहे। सबसे बा करना बंद कर दिया था।

दो सप्ताह बाद, जब वे स्कूल आये, त सबसे पहले उनकी भेंट थंगय्या से हुई उसने पूछा, 'सार, आप दो हफ्ते से दिखा नहीं दिये।'

'हूं' कहकर 'सार' आगे बढ़ने लगे।

'बहन आपके बारे में पूछ रही थी।'

'सार' चलते-चलते रुक गये।

□

हिंदी बाल-साहित्य : कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न

☐ मदनगोपाल शर्मा

दी बाल साहित्य हजारों वर्षों की यात्रा के पश्चात् अपने वर्तमान स्वरूप प्राप्त कर सका है। कहानी सुनाने की रा बहुत पुरानी है तथा आज भी ी न किसी रूप में जीवित है। लिखित ं में उपलब्ध हिंदी बाल साहित्य का न संस्कृत, प्राकृत व द्रविड़ भाषाओं उपलब्ध साहित्य रहा है। अच्छा बाल हित्य सतत साधना का परिणाम है। च्चों के मनोविज्ञान व उनकी समझ के नुरूप सरल सुबोध भाषा में बाल साहित्य सृजन आसान काम नहीं है।

बाल साहित्य कैसा हो इस प्रश्न पर ानों में काफी समय से विचार होता ा है और आगे भी होता रहेगा। व रूप से बच्चों की अभिरुचि और की उपयोगिता को बाल साहित्य की टी माना जा सकता है। बाल साहित्य नाम पर ऐसा कुछ लिखा जाय, जिसे े पसंद ही न करें तो ऐसे साहित्य को बाल साहित्य की श्रेणी में कैसे रख ते हैं? बच्चों की अभिरुचि से तात्पर्य बच्चे की स्वस्थ अभिरुचि से है। ों के लिए लिखा जाने वाला साहित्य बच्चों के लिए उपयोगी भी होना चाहिये अन्यथा केवल अभिरुचि व मनोरंजन के नाम पर प्रभावित होने वाला बाल साहित्य (पाकेट बुक्स, उपन्यास, कुछ श्रेणी के कामिक्स आदि) बच्चों को सही दिशा देने के बजाय दिग्भ्रमित ही करेगा।

कल के बच्चे और आज के बच्चे में बहुत अंतर है। भौतिक विकास के साथ-साथ बच्चे की भाषा और समझ में भी विकास हुआ है, उसका कौतुहल और जिज्ञासाएं बढ़ी हैं। आज वे बच्चे पुराने परंपरागत बाल साहित्य से संतुष्ट नहीं हैं, वे नये परिवेश के अनुरूप साहित्य चाहते हैं जिसमें ज्ञान-विज्ञान, साहस, विनोद, मनोरंजन व स्नेह के साथ-साथ मनोरंजन व कौतुहल भी हो। बच्चों को अच्छी पठनीय सामग्री तो चाहिये ही साथ ही विविध चित्रों आदि से सज्जित आकर्षक मुद्रण भी उनकी रुचि में चार चांद लगा देता है।

स्वतंत्रता के पश्चात जहां हिन्दी बाल साहित्य भंडार में असाधारण वृद्धि हुई है, वहां अनेक नये महत्वपूर्ण प्रश्न भी सामने आये हैं। बाल गीत, शिशु गीत,

नाटक, कविता, कहानी, लेख, जीवनियां, संस्मरण, उपन्यास आदि लगभग सभी विधाओं में बाल साहित्य लिखा गया है तथा बाल साहित्य के पाठकों की संख्या में भी आशातीत वृद्धि हुई है। आज बाल पत्रिकाओं की प्रतीक्षा बच्चे ही नहीं बूढ़े और वयस्क भी करते हैं। विश्व साहित्य में बाल साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है परंतु दुर्भाग्य की बात यह है कि हिंदी साहित्य में बाल साहित्य को उपयुक्त स्थान अभी तक नहीं मिल पाया है। यहां तक कि हिंदी बाल साहित्य को अपनी अलग पहचान बनाये रखने के लिए विशेष प्रयास करने पड़ रहे हैं। यद्यपि इस दिशा में स्थिति में सुधार हुआ है तथापि हिंदी में बाल साहित्यकारों व उनके कृतित्व को समुचित आदर व सम्मान नहीं मिल पाया है। बच्चों के लिए लिखना शायद बच्चों का खेल समझा गया है, जिसका परिणाम यह हुआ है कि बच्चों पर आरोपित साहित्य भी काफी मात्रा में लिखा जा रहा है तथा प्राचीन बाल साहित्य का यथावत् अनुवाद छप रहा है। यह जैसा प्रेरणादायक व रुचिकर होना चाहिये वैसा प्रकाशित नहीं हो पा रहा है। आवश्यकता इस बात की है कि प्राचीन बाल साहित्य को युगीन परिवेश के संदर्भ में पुनः लिखवाकर नये रूप में प्रस्तुत किया जाये।

एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह भी है कि बच्चों की भाषा के संबंध में विस्तारपूर्वक चर्चा होनी चाहिये। बाल साहित्य के लेखक भाषा को बच्चों की भाषा मान लेना उचि नहीं होगा। आवश्यकता इस बात की कि बच्चों की भाषा पर शोध कार्य हो। इ प्रयोजन के लिए बच्चों को तीन श्रेणियों आयु के आधार पर विभाजित करना उचि होगा। पहली श्रेणी शिशु साहित्य की जिसमें ७–८ वर्ष तक के बच्चों को शामि किया जावे। दूसरी श्रेणी में ८ से १२ तक के बच्चे हों तथा तीसरी श्रेणी में १२ १५ तक के किशोर बच्चे हों। प्रत्येक श्रे के बच्चों की भाषा अलग-अलग होगी त उनकी आवश्यकताओं पर आधारित शब्दा वली का चयन किया जाना चाहिये। इस क्षेत्र के बच्चों की भाषा-दक्षता में अंतर हिंदी बाल साहित्य को एक और महत्व भूमिका निभानी है, वह है ऐसे बच्चों के साहित्य सृजन करना, जिनकी मातृ हिंदी नहीं है और जो संपर्क भाषा के में हिंदी सीख रहे हैं।

बच्चों की आवश्यकताओं और अपेक्षा का निर्धारण करते समय सबसे महत्व पहलू यह भी है कि आधुनिकता के नाम परंपरागत सांस्कृतिक आधार की उपेक्षा हो। बाल साहित्य सुरुचिपूर्ण, ज्ञानव होने के साथ-साथ हमारी सांस्कृतिक गरि से मंडित होना चाहिये तथा नैतिक गुणों विकास करना उसका उद्देश्य होना चाहि बच्चों के कोमल मस्तिष्क पर अनाव बोझ भी नहीं पड़ना चाहिये। मूल्यों आधारित परंपरागत साहित्य को नये संद

ोड़कर पुन: लिखाया जाना चाहिये।

हिंदी बाल साहित्य से जुड़ा एक अन्य त्वपूर्ण प्रश्न है बच्चों को कम कीमत में कें उपलब्ध कराना । हिंदी में मुद्रित तीय बाल पुस्तकों की कीमत अपेक्षाकृत क है । प्रकाशकों का तर्क यह है कि ों की पुस्तकें छापने में लागत अधिक ती है, इसलिये कीमत अधिक रहती पुस्तकों की ज्यादा कीमत के कारण र संख्या भी प्रतिकूल रूप से प्रभावित ती है। यद्यपि पुस्तक मेलों के आयो- से बाल पुस्तकों की बिक्री में हुई है तथा सरकारी खरीद में भी ी बाल पुस्तकें क्रय की जाती हैं फिर बाल पुस्तकों के लेखन, प्रकाशन व रण को नयी दिशा देने की आवश्यकता। एक गंभीर समस्या यह भी है कि जिस षा में बाल साहित्य छपता व बिकता है, के अनुपात में लेखक को रायल्टी नाम- त्र को मिलती है । कई प्रकाशक बाल कों पर लेखक को रायल्टी देना ही नहीं ते, अत: यह भी बहुत जरूरी है कि साहित्य के लेखकों को उनके लेखन समुचित पारिश्रमिक मिलना चाहिये । साहित्य सस्ता व स्तरीय उपलब्ध इस दिशा में सार्थक प्रयास किये जाने हिये। बाल साहित्य के प्रकाशन के लिए न आदि सस्ते दर पर दिलाये जाने के कीमत पर भी नियंत्रण रहै ।

हिंदी बाल साहित्य को लोक साहित्य न-जातीय साहित्य से भी जोड़ा जाना चाहिये । नानी व दादी की कहानियां सभी क्षेत्रों में प्रचलित हैं, इन कहानियों को आधुनिक संदर्भ के साथ जोड़ा जाना चाहिये तथा सुप्रसिद्ध बाल साहित्यकारों से ऐसी कहानियों को फिर से लिखाकर नये रूप में प्रकाशित किया जाना चाहिये । लोक संस्कृति और लोक कलाओं की जानकारी बच्चों को व्यवस्थित दी जानी चाहिये।

हिंदी बाल साहित्य को अभी बहुत लंबी यात्रा करनी है तथा उज्ज्वल भविष्य सामने है । आज हिंदी बोलने व समझने वालों की संख्या भारत में ही नहीं, विदेशों में भी बढ़ रही है । बाल साहित्य बच्चों के साथ-साथ नये हिंदी सीखने वालों के लिए भी उपयोगी है । हिंदी बाल साहित्य में विभिन्न भारतीय भाषाओं और विदेशी भाषाओं के अनूदित बाल साहित्य को शामिल किया जाना चाहिये । भारतीय बाल साहित्य न केवल भारतीय साहित्य के लिए, बल्कि संपूर्ण विश्व साहित्य के लिए अमूल्य निधि है । पंचतंत्र और हितोपदेश की कहानियों का अनुवाद विश्व की अनेक भाषाओं में हो चुका है और विश्व के बच्चे इन्हें आज भी बड़ी चाव से पढ़ते हैं । हिंदी बाल साहित्य को अपनी सृजनशीलता, आकर्षण, सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के साथ-साथ मनोरंजन, ज्ञान के आधार पर अनवरत प्रगति के पथ पर अग्रसर होना है । यह तभी संभव होगा, जब लेखकों, प्रकाशकों व पाठकों की बाल साहित्य में संयुक्त भागीदारी हो ।

□

कन्नड कहानी

वह भूत

□

मास्ति व्यंकटेश अय्यंगार

कन्नड के यशस्वी साहित्यकार डॉक्ट मास्ति व्यंकटेश अय्यंगार, जिनका निध ९६ वर्ष की आयु में ६ जून, १९८६ क हुआ, उन्होंने सुदीर्घ, सृजनशील जीवन काल में १२० के करीब ग्रंथों की रचन की और कन्नड के अलावा समूचे भारती साहित्य को भी समृद्ध किया उन्होंने १९८५ का ज्ञानपीठ-पुरस्कार भ प्राप्त किया था। प्रस्तुत है, उनकी ए सुविख्यात कहानी का संक्षिप्त रूपांतर

आपने भूतों की बहुत-सी कहानियां सुनी और पढ़ी होंगी, लेकिन जैसी अजीबोगरीब भूत कहानी मैं आज सुनाने जा रहा हूं, आपने शायद ही सुनी हो।

इस कहानी का नायक तो एक अज्ञात भूत ही है, लेकिन सहनायक है, वैंकट राव नाम का एक तरुण, जो मेरे ही गांव का रहने वाला है। जब उसने गांव के स्कूल की पढ़ाई पूरी कर ली, तो उसके सामने सवाल आया कि अब आगे की पढ़ाई कहां पूरी की जाये। तब, उसकी मां को बंगलूर में रहने वाले कृष्ण रावजी की याद आयी, जो उसके दूर के रिश्तेदार थे। लिहाज़ा, कृष्ण रावजी की सहमति से उसने बंगलूर में अपनी आगे की पढ़ाई आरंभ की।

अपने गांव में वैंकट राव का साबका कभी भूतों से नहीं पड़ा था, लेकिन बंगलूर में कुछ दिनों रहने के बाद, उसे भूतों की अनुभूति होने लगी। उसका कारण शा यह था कि बंगलूर में उसका जीवन का एकाकी था। एक दिन, बड़ी हिम्मत क उसने अपने पिता को एक पत्र लिखा कि उसे भूत तंग करने लगे हैं, और उन छुटकारा पाने के लिए उसे क्या कर चाहिये? उसके पिताजी ने उत्तर में लि कि जब भी उसे भूतों की अनुभूति होने ल वह अपने यज्ञोपवीत को अपने हाथ में ले; उसे फ़ौरन भूतों से छुटकारा मि जायेगा। इस सीख से वैंकट राव का भू में विश्वास और अधिक प्रगाढ़ हो गया और वह शंकित मन से उस दिन की प्रतीक्ष करने लगा जब उसे सचमुच भूत दिखा देगा, और वह अपना जनेऊ उसे दिखाक अपनी रक्षा करेगा।

जिस समय वैंकट बंगलूर गया था, उस समय उसकी आयु पंद्रह वर्ष थी। वह

साल बंगलूर में रहा, और इस दौरान, य से, भूतों ने उसे ज्यादा तंग नहीं । शायद उन्हें पता चल गया था कि के पास उनका सामना करने के लिए वीत रूपी हथियार मौजूद है ।

०००

सात साल बाद ।

वैंकट राव अब अपनी उच्च शिक्षा पूरी चुका है । इतना ही नहीं, अब वह एक य-सुदर्शन युवक भी है । उसे सूचना ी कि एक कन्या के पिता श्री श्रीनिवास- अपने साथी कृष्ण राव के साथ उसे के लिए आ रहे हैं । उसके मेजबान दार कृष्ण राव इस समाचार से इतने प्रसन्न हुए, मानों स्वयं उन्हीं के पुत्र के लिए विवाह का प्रस्ताव आया हो ।

जब श्री श्रीनिवास राव कृष्ण राव के घर पधारे, तो कृष्ण राव ने वैंकट राव को बुलाकर कहा, 'ये हैं–श्री श्रीनिवास राव तुम्हारे होने वाले श्वसुर !' वैंकट को श्री श्रीनिवास राव को देखकर इतनी खुशी नहीं हुई, जितनी इन शब्दों को सुनकर हुई । उसका मन-मयूर हर्ष और गर्व से नाचने लगा । लेकिन, उसे विनम्रता का अभिनय भी करना पड़ा । उसने अस्फुट स्वर में कहा, 'मैं . . . मैं . . . इतनी जल्दी विवाह नहीं करना चाहता ।' लेकिन, उसके इन शब्दों की ओर किसी ने कोई ध्यान नहीं

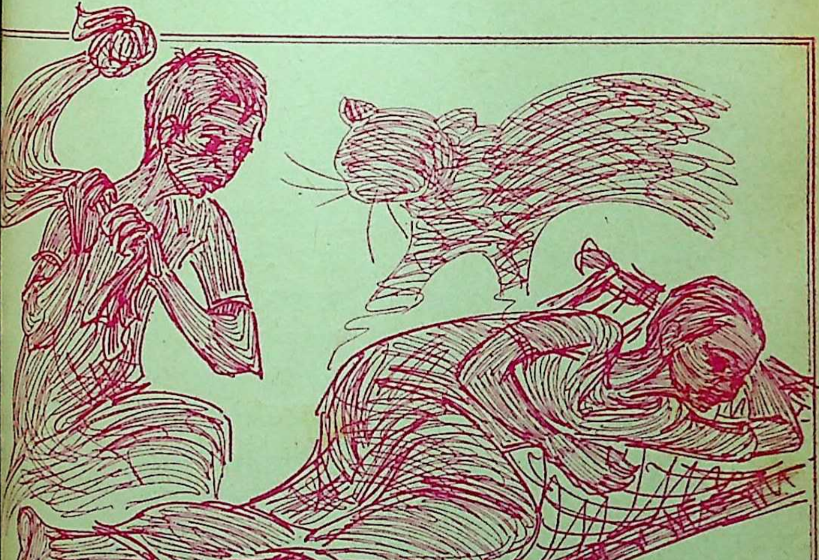

दिया, उल्टे उन्हें उसकी स्वीकृति माना।

कृष्ण राव खुश थे, श्रीनिवास राव खुश थे, और मन ही मन वैंकट भी खुश था। खुशी के इसी माहौल में सबने रात का खाना खाया, और फिर कृष्ण राव ने वैंकट से कहा कि वह अपने कमरे में दोनों मेहमानों के सोने की व्यवस्था करे। उन्हें अगले दिन सुबह की गाड़ी से घर लौटना था।

रात को दस बजे के करीब श्रीनिवास राव और कृष्णप्पा ने अपने अपने बिस्तर वैंकट के कमरे में फैलाये, और खर्राटे भरने लगे। दोनों सो रहे थे, लेकिन वैंकट की आंखों में नींद न थी। कारण, वह खिड़की से सामने के उस घर को देख रहा था, जिसे भुतहा घर कहा जाता है। कभी इस घर में एक पति ने अपनी पत्नी की हत्या की थी, और बाद में, लोगों के मतानुसार, उस स्त्री के प्रेत ने अपने भूतपूर्व पति की हत्या कर दी थी। तब से यह घर खाली पड़ा था। जिस किसी किरायेदार ने उसमें रहने की कोशिश की, उसे डर के मारे, या भूतों के प्रकोप से घर छोड़ने को मजबूर होना पड़ा था।

वह रात वैंकट को, अन्य रातों की अपेक्षा, ज्यादा ख़ामोश लग रही थी। भुतहा घर, अन्य रातों की अपेक्षा ज्यादा डरावना लग रहा था। वैंकट को लग रहा था कि शायद आज उस घर में आज की रात मृत पति-पत्नी के भूत आये हैं, और कोई न कोई उत्पात-उपद्रव करेंगे। वह उनके उपद्रवों से दूर रहना चाहता था। इसलिए, उसने उस ओर देखना बंद कि और सोने का प्रयास करने लगा।

०००

उसे बिस्तर पर लेटे दो मिनट भी हुए होंगे कि उसे एक ख़ौफ़नाक आ सुनायी दी। वह एकबारगी कांपकर गया, और फिर उस आवाज़ को अपने से निकालकर सोने का प्रयास करने ल आखिर, उसे नींद आ भी गयी।

... मगर, आधी रात के करीब वह जाग गया।

उसे कमरे के किसी भाग से कि चलने की हल्की-सी आवाज़ सुनायी दे थी। उसने यह मालूम करने की को की कि आवाज़ कैसी है, और कहां रही है, मगर कुछ भी जानने या करने में असमर्थ रहा। वह आवाज़ होने के स्थान पर, धीरे-धीरे बढ़ती ही

एक क्षण को वैंकट के मन में यह वि आया कि कहीं सामने के घरवाला तो कमरे में नहीं आ गया है! मगर, यह सोचकर इस विचार को मन से नि लने की कोशिश की कि भूत इस प्र आवाज़ करते हुए नहीं चलते। फिर, का डर समूल अपने मन से निकाल उद्देश्य से उसने अपने जनेऊ को छुआ, इसका भी कोई प्रभाव नहीं हुआ। का सुनायी देना बंद नहीं हुआ। और, तो उसे लग रहा था, जैसे आवाज़ और करीब आती जा रही थी।

ना। उसे लग रहा था, भूत कुछ ही क्षणों आकर उसकी गर्दन दबोच देगा ।

और, सचमुच, कुछ क्षण बाद, उसे की आंखों के सामने एक काला . . . वना . . . चेहरा दिखायी दिया, जो घुड़की देता लग रहा था । उसकी ों से एक पीली ज्वाला लपलपाती- उसकी ओर बढ़ रही थी। वैंकट इतना क डर गया कि क्या करे, क्या कहे, भी उसे नहीं सूझ रहा था । उसने नी आंखें बंद करने की कोशिश की र वह आंखें भी नहीं बंद कर पाया । का एक कारण यह था कि भूत हर अपना आकार बदल रहा था । कभी और लंबा हो जाता, कभी और चौड़ा । में, वैंकट ने पाया कि उसने अपना ला रूप धारण कर लिया है ।

वैंकट सहमा-सा भूत को देख रहा था पांच मिनट बाद, उसने पाया कि भूत बिल्ली की शक्ल अख्तियार कर ली है । कि वह बिल्लियों से नहीं डरता था, लिये उसने निश्चय किया कि वह अपनी र को लपेटकर, उससे बिल्ली की ल वाले भूत का कचूमर निकालकर रख । उसने एक क्षण की भी देरी नहीं की बिल्ली पर वार पर वार करना आरंभ दिया ।

लेकिन, करीब एक मिनट बाद उसे ना पड़ा ।

और, जिस कारण से वह रुका, ने उसे और अधिक भय-स्तब्ध कर दिया ।

कारण यह था कि जिस बिल्ली की शक्ल वाले भूत पर वह लगातार प्रहार कर रहा था, वह असल में कृष्णप्पा का श्यामवर्णीय चेहरा था : अप्रत्याशित प्रहार से व्याकुल तथा क्षुब्ध कृष्णप्पा अब उठ कर वैंकट को आश्चर्य से देख रहे थे । वे जागने से पूर्व, एक मीठा सपना देख रहे थे, जिसमें उनकी कर्कशा पत्नी, जो बहुत ज्यादा नाराज़ होने पर बेलन से उनकी ख़बर भी ले लेती थी, और अक्सर लेती ही रहती थी, उन्हें प्यार कर रही थी । चादर के प्रहार के परिणामस्वरूप, आंखें खोलने से पूर्व, उन्हें यही लगा कि उनकी पत्नी ने प्यार करते-करते, अकारण उन्हें मारना आरंभ कर दिया है । उन्होंने वैंकट से, जो उन्हें अंधेरे में अपनी पत्नी सरीखा लग रहा था, सहमते हुए पूछा, 'मेरा क्या कसूर है ? मुझे क्यों इस तरह मार रही हो ?'

यह सब शोरगुल सुनकर श्रीनिवास भी जाग गये ।

श्रीनवास के जागने पर ही वैंकट को यह चेतना जागृत हुई कि वह क्या कर रहा है, और जिसे वह भूत समझकर मार रहा था, वे वास्तव में उसके भावी श्वसुर महोदय के आदरणीय मित्र हैं । वह मनाने लगा कि पृथ्वी फट जाये, तो वह उसमें समा जाये ।

तभी उसने यह भी निश्चय किया कि वह कुछ नहीं बोलेगा, और अपनी ज़बान

बंद रखेगा, क्योंकि ज़बान खोलने के अर्थ होंगे, और ज्यादा बेवकूफ़ बनना। इसलिए वह चादर ओढ़कर चुपचाप सो गया।

उधर, कृष्णप्पा ने अपने चेहरे तथा शरीर के शेष भागों का मुआयना कर, यह संतोष प्राप्त किया कि उन्हें कोई गहरी चोट नहीं आयी है। इसके बाद, वे वैंकट के बारे में सोचने लगे। कहीं लड़का पागल तो नहीं है? कौन जाने? आज वे सुबह-सुबह, जल्दी में प्रार्थना करना भूल गये थे। हां, उसी का यह नतीजा उन्हें भुगतना पड़ा है—शायद!

०००

सुबह होते ही, एक आपातकालीन सभा हुई, जिसमें श्रीनिवास राव, कृष्णप्पा तथा कृष्ण राव ने भाग लिया। इस सभा में यह विचार-विमर्श हुआ कि रात की पिटायी का क्या कारण हो सकता है? कृष्णप्पा का स्पष्ट मत था कि जिस प्रकार वैंकट ने रात में अकारण उनकी पिटायी की, उससे स्पष्ट है कि उसके दिमाग़ का कोई न कोई स्क्रू अवश्य ढीला है। लेकिन, श्रीनिवास राव तथा कृष्ण राव ने कृष्णप्पा के इस मत पर अपने निषेधाधिकार का प्रयोग करते हुए निर्णायक फ़ैसला दिया कि वैंकट ने जो कुछ किया, शायद किसी ख़ौफनाक सपने के परिणामस्वरूप किया। शायद उसने सपने में किसी चोर को देखा था, और सपने में ही कृष्णप्पा को चोर समझकर उनकी धुनाई, अनजाने में कर दी थी। जहां तक उस पर लगाये पागलपन के आरोप का सवाल है, यह आरोप सरासर बेबुनिया है, क्योंकि पागलपन के कोई लक्षण उस किसी को कभी दिखायी नहीं दिये।

तो, विवाह पूर्व-निर्धारित तिथि हुआ, और बड़ी धूमधाम से हुआ, औ मुझे यह बताते हुए बड़ी खुशी है कि वैंक तथा उसकी पत्नी सुखपूर्वक जीवन व्यती कर रहे हैं।

इस विवाह से सभी को प्रसन्नता हुई। हां, कृष्णप्पा थोड़े खामोश रहे। उन् आज तक यह संदेह है कि वैंकट में दीवान के बीज मौजूद हैं, और वह कभी भी वैं हरकत कर सकता है, जैसी उसने उन साथ की थी। उनका कहना है कि उस अप्रत्याशित दीवानगी का सबसे ज्याद शिकार उसकी पत्नी ही होगी।

विवाह के बाद, जब वैंकट-दंपति पह बार मेरे घर आये, तो खाने के बीच मैं गंभीरता से वैंकट से पूछा, 'अब तक तु अपनी पत्नी की कितनी बार पिटायी क चुके हो?'

वैंकट की पत्नी ने घोर आश्चर्य पहले मुझे और फिर अपने पति को देखा। वैंकट कुछ क्षण के लिए तो परेशान र फिर संभलकर बोला, 'कृष्णप्पा अंकल के साथ उस रात जो हुआ था...'

'वह भी जानता हूं,' मैंने कहा, 'मैं ब यही चाहता हूं कि वैसी हरकत तुम कृ से भी अपनी पत्नी के साथ न कर बैठना, नहीं तो मुझे भूत बनकर तुम्हारी खब लेनी पड़ेगी।'

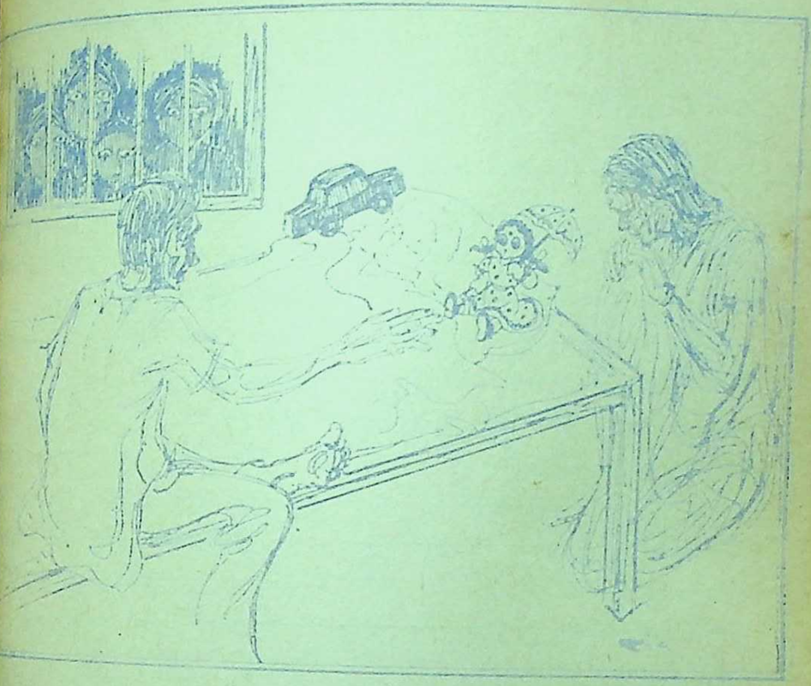

की कहानी

त्थर और पानी

☐ सुखवीर

खिलौनों की दुकान के सामने चुपचाप खड़ा था।

हुत बड़ी दुकान थी वह और इतने त्र प्रकार के खिलौने थे उसमें कि सी को लगता, वह जैसे किसी परी-क में पहुंच गया हो।

दुकान के सामने खड़ा वह शो-केसों में खिलौनों को देख रहा था और उसकी आंखों में गहरी उदासी और वीरानी थी।

वह उसी प्रकार खड़ा देखता रहा।

वह मैना थी–चमकदार पंखोंवाली। वह हंसता हुआ बंदर था–ढोल बजा रहा। वह मोटर थी–हरे और पीले रंग की। वह बतख थी, वह हाथी, वह सोफासेट, वह बाजा . . .। और वह गुड़िया थी–रेशमी फ्राक, पांवों में मखमली बूट, माथे पर

बिंदिया, हाथ में छतरी, और फूले-फूले कपोल . . .

आखिर वह वहां से हटा और धीरे-धीरे कदम भरता हुआ दुकान की सीढ़ियां चढ़कर अंदर गया। वहां तो खिलौनों का अंत ही न था। वह आश्चर्यचकित आंखों से चारों ओर देखने लगा। इतनी बड़ी किसी दुकान में वह पहले नहीं गया था। उसका दिल घबराने लगा।

दुकान के एक सेल्समैन ने उसे कुछ हैरानी से देखा और फिर उसके पास आकर पूछा, 'क्या चाहिये?' उसकी आवाज में हल्की-सी सख्ती थी। भला ऐसा गरीब आदमी उस दुकान में क्या खरीद सकता था!

उसने सेल्समैन की ओर देखा और उसके सूखे हुए होंठों में से बड़ी कठिनाई से निकला, 'खिलौने।'

'कैसे खिलौने?' सेल्समैन ने कहा। उसे जैसे अभी तक विश्वास नहीं था कि वह आदमी खिलौने खरीदेगा।

उसने धीरे-से कहा, 'एक मोटर और एक गुड़िया।'

सेल्समैन एक छोटी-सी गुड़िया और एक मोटर लाया। दुकान में वह सबसे कम कीमत की गुड़िया और मोटर थी।

उसने एक नजर गुड़िया और मोटर को देखा और फिर बाहर की ओर नजर मोड़ते हुए कहा, 'यह नहीं, वह गुड़िया, जो बाहर रखी है।'

सेल्समैन वहीं खड़ा रहा। 'वह बीस रुपये की है, पूरे बीस की!'

'हां, वह ला दो। और साथ मोटर भी।'

गुड़िया और मोटर आने पर पूछा, 'यह मोटर कितने की है?'

'बारह रुपये की,' सेल्समैन ने

सुनकर लह सोच में पड़ गया। उसने जेब में से दस-दस रुपये के निकाले और सेल्समैन से कहा, 'मे यही तीस रुपये हैं। दोनों चीजें ती में दे दो।'

सेल्जमैन ने उसे गहरी नजर से उसकी वे खोयी-खोयी आंखें, वीरान खाकी रंग की पुरानी कमीज और धोती! सेल्समैन को उस पर तरस और उसने तीस रुपये में वे दोनों दे दिये।

जब उसने खिलौनों वाला डिब्बा तो उसके चेहरे पर मद्धिम-सी मुस् आयी।

अब जब वह घर जा रहा था, तो कदम पहले की तरह बोझिल नहीं

वह सोच रहा था कि घर जाने दोनों खिलौने अपनी सोई हुई बे तकिये के पास रख देगा—एक तरफ एक तरफ मोटर। और जब वह उठ गुड़िया और मोटर देखेगी, तो खुश होगी! तब उसे पड़ोसियों की के खिलौनों को देखकर तरसना पड़ेगा।

वैसी ही गुड़िया और मोटर पड़ोसि

ियों के पास थीं, जिन्हें वे किसी को नहीं लगाने देती थीं । एक दिन जब की बेटी ने उसकी गुड़िया देखने के लिए ती थी, तो वह चिल्लाने लगी थी दोनों हाथों से उसके बालों को पकड़-उसने ऐसे खींचा था कि उसकी चीखें गयी थीं । उसी समय उसकी मां में से दौड़ी-दौड़ी आयी थी और उसने गालियां दी थीं और बांह से पकड़कर बाहर निकालते हुए कहा था, 'खबर-, अगर फिर कभी हमारे घर में पांव खा तो... अपनी हैसियत तो देख । आयी गुड़िया लेने वाली ! .....'

उसकी बेटी अपने घर आकर बहुत थी । आखिर जब वह चुप नहीं तो उसकी मां ने उसे बेरहमी से मारते कहा था, 'आखिर तू उस रांड के घर ही क्यों ? कितनी बार तुझे वहां से रोक चुकी हूं ! उन अकड़खोरों के भला हमारा क्या मुकाबला ? कहां कहां हम ! . . .'

की मार खाकर तीन साल की वह देर तक सिसकती रही थी । आखिर आंख लग गयी थी ।

सुबह जब वह उठी थी, तो उसका शरीर रहा था । फिर, उसका बुखार बढ़ता या था । उनके मोहल्ले के दीनदयाल की दवाई से कोई खास फर्क नहीं रहा था । बुखार कभी जरा-सा उत-कभी फिर पहले से भी ज्यादा चढ़ । दीनदयाल अपनी बुजुर्गाना आवाज में उन्हें धीरज देता, 'चिंता की बात नहीं है । आराम आ जायेगा । लड़की बस जरा-सा डर गयी है . . .'

और आज वह अपनी बेटी के लिए खिलौने लिये जा रहा सोच रहा था, देखकर वह कितनी खुश होगी । तालियां बजायेगी, शोर मचायेगी, और फिर गुड़िया को उठाकर नाचने लगेगी ।

घर के नजदीक पहुंचकर वह धीरे-धीरे कदम उठाता हुआ अंदर गया । उसकी पत्नी चूल्हे के पास घुटनों पर सिर रखे बैठी थी । उसने उसके आने की आहट सुन ली थी, पर वह वैसे ही बैठी रही । कल भी जब वह घर आया था, तो वह इसी प्रकार घुटनों पर सिर रखे बैठी थी और उसने सिर नहीं उठाया था ।

उसने पत्नी को बुलाया नहीं और उसी प्रकार धीरे-धीरे कदम रखता हुआ चारपाई के पास गया । डिब्बे में से गुड़िया निकालकर उसने तकिये के एक तरफ रखी, मोटर निकालकर दूसरी तरफ रखी, और फिर इस प्रकार आहिस्ता से चारपाई पर एक तरफ बैठ गया कि उसकी बेटी कहीं जग न जाये ।

उसकी पत्नी ने अब घुटनों पर से सिर उठा लिया था और उसकी ओर बिटर-बिटर देख रही थी । उसने उसे चारपाई पर गुड़िया और मोटर रखते देखा था, पर बोली नहीं थी । और गुड़िया और मोटर रखते समय उसके होंठों पर जो एक हल्की-सी मुस्कराहट आयी थी, वह भी उसने देखी थी । और अब वह पति की ओर देख रही

थी, जो चारपाई पर ऐसे बैठा था, जैसे प्रतीक्षा कर रहा हो कि बेटी जागे और अपने सिरहाने पड़ी गुड़िया और मोटर को देखकर हैरान रह जाये।

कोठरी में गहरी चुप्पी छायी हुई थी।

उसी समय कोठरी की खिड़की में से किसी की दो आंखों ने अंदर झांका। फिर, दो और आंखों ने अंदर झांका। और फिर, वहां कई स्त्रियां खड़ी दिखायी दीं। दरवाजे में भी कई स्त्रियां खड़ी थीं। वे सब उसे चारपाई पर बैठे हुए देख रही थीं, और उस गुड़िया और मोटर को देख रही थीं, जो तकिये के दोनों ओर रखी हुई थीं। आखिर उनमें कानाफूसी होने लगी।

पर उसका ध्यान तो खिलौनों में था कि उसकी बेटी जागे और उन्हें देखकर खुशी में नाचने लगे।

आखिर काफी देर के बाद जब उसका धैर्य टूट गया, तो वह बेटी को जगाने से न रह सका। 'देख, मैं तेरे लिए क्या लाया हूं? देख, तेरे सिरहाने क्या पड़ा है? यह मोटर है—हरे और पीले रंग की। पों-पों करने वाली। इसे चाबी देने की जरूरत नहीं। बस, एक बार चला दो, तो देर तक चलती रहती है। और यह गुड़िया है। देख, इसका रेशमी फ्राक और पांवों में नर्म-नर्म बूट! तुझे भी ऐसे बूट ले देंगे, और साथ में ऐसा फूलों वाला फ्राक भी, और ऐसी एक छोटी-सी छतरी भी।...'

वह बोलता रहा।

आखिर दरवाजे में खड़ी स्त्रियों में से एक बूढ़ी स्त्री उसके पास जाकर उसका कंधा हिलाते हुए कहने लगी, 'उठ बेटा अब बहुत हो गया। तीन दिन से तूने कुछ खाया-पिया नहीं। उठ, रोटी का कौर मुंह में डाल। ऐसे कब तक गुजारा होगा उठ, मेरा बेटा...'

उसने बेटी पर से नजर हटाकर बुढ़िया की ओर देखा और जब फिर उसकी नजर चारपाई पर पड़ी, तो वह खाली दिखायी दी। वहां उसकी बेटी नहीं थी। दूसरे ही क्षण वह फूट-फूटकर रोने लगा।

बेटी के मरने पर उसकी आंखें जैसे पथरा गयी थीं, और उनमें एक भी आंसू नहीं आया था। आज तीन दिन के बाद वह पहली बार रोया था।

—बी-१९, सन एंड सी, वरसोवा रो
बम्बई-४०००६

◆

सन ३० के आसपास की बात है। बापू ने सरदार से पूछा : 'भारत के स्वतं होने के बाद तुम कौन-सा पद ग्रहण करोगे?'

सरदार ने कहा : 'मैं तो चिमटा और लोटा लूंगा, बस।'

बापू बोले : 'मुहम्मद अली कहते रहते हैं वे शिक्षामंत्री बनेंगे, शौकत अली प्रधा सेनापति बनना चाहते हैं। मोतीलालजी प्रधान मंत्री से कुछ कम नहीं बनना चाहते गनीमत तो यह है कि स्वराज्य के न मिलने से सबकी आबरू बच रही है।'

◆

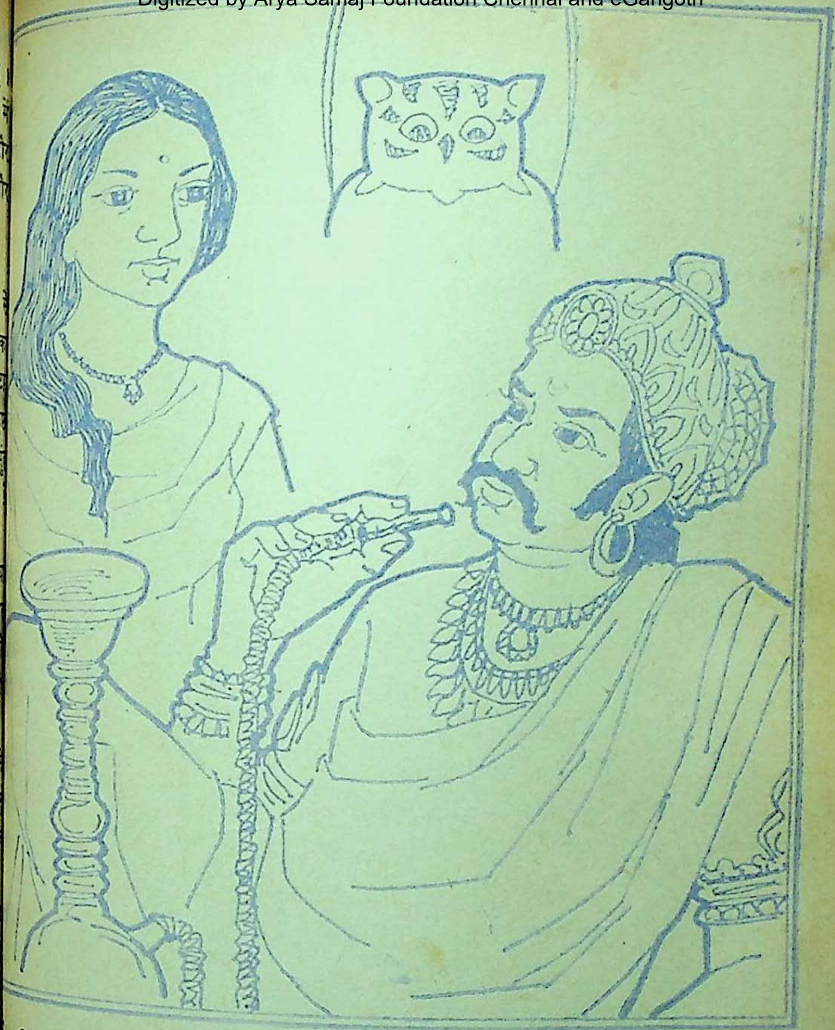

हासिक धारावाहिक उपन्यास-१

बेलकली

☐ अम्बिकाप्रसाद दिव्य

बुंदेलखंड के गौरव उद्भट विद्वान स्वर्गीय श्री अम्बिका प्रसाद दिव्य ने साहित्य की
विधाओं में लगभग ६० ग्रंथ लिखे उनमें अप्रकाशित ऐतिहासिक उपन्यास
है। इस उपन्यास की कथावस्तु सामंती काल के अच्छे-बुरे–दोनों पहलुओं पर
डालती है, साथ ही उस जमाने की संस्कृति, सभ्यता, शिष्टाचार और सामाजिक
राग-द्वेष, प्रणय, त्याग-बलिदान का भी सजीव चित्रण करती है। यद्यपि
लोकोक्तियों, मुहावरों और संवादों में आंचलिक प्रयोग की झलक दृष्टिगोचर होती
किंतु उसका भावार्थ सहज ही समझ में आ जाता है। विश्वास है पाठकों को
उपन्यास का कथानक रुचिकर लगेगा।

–संपाद

अध्याय–१

पावस ऋतु थी। श्रावण का सुंदर महीना। आकाश में काले-काले मेघ इस प्रकार विचरण कर रहे थे जैसे निरंकुश हाथी अपने बंधन तोड़कर स्वच्छंदता से घूम रहे हों। यद्यपि प्रभात का समय था, परंतु अंधकार के कारण संध्या-सा प्रतीत होता रहा था। प्रकृत में एक विचित्र निस्तब्धता थी, जैसे किसी अपूर्व घटना का उद्‌घाटन होने जा रहा हो।

इसी समय राजा अमानसिंह अपने राजप्रासाद की एक खुली छत पर घूम रहे थे। कुछ दरबारी और सेवक भी छत पर खड़े थे। उनकी दृष्टि राजा साहब की ओर लगी थी। प्रतीक्षा में थे कि राजा साहब के मुख से कुछ शब्द निकलें और निस्तब्धता भंग हो। स्वयं निस्तब्धता भंग करने का किसी का साहस नहीं हो रहा था। सहसा राजा साहब छत से नीचे देखते हुए बोले, 'क्यों, राम कवि? यदि मैं इस छत से नीचे गिर पड़ूं तो क्या हो?'

राजा साहब ने सबसे प्रथम राम
को संबोधित किया। अतः राम कवि
पर राजा साहब की विशेष कृपा
प्रसन्नता से फूल गये। उन्होंने समझा
राजा साहब ने समस्या दी है। शीघ्र
एक दोहा बना कर बोले –

'गिरें आपके शत्रु नृप, जो सिर रहे
आप गिरें क्यों ईश को, जो सिर रहे नव

राजा साहब राम कवि का उत्तर
कुछ मुस्कराते हुए बोले, 'क्यों मल्ल
तुम भी कहो कुछ।'

मल्लजी भी राजा साहब के दर
कवि थे। पहले ही से समझ गये थे
राम कवि के पश्चात् उनकी भी
आयेगी। उनसे भी प्रश्न पूछा
अतः दोहा तैयार था।

'धंस नीचे जैहे धरा जो गिरहो महरा
कछु न बिगरहै आपको, जग को

राजा साहब ने नाथ कवि की ओर देखा
वे भी अपना तीर धनुष पर चढ़ाये हुए

। संकेत पाते ही ऐसे उत्साह से बोले, विजयश्री उन्हीं के हाथ रहना हो। दाता तो ऐसी कठिन समस्या सामने रख हैं कि बुद्धि ही कुछ काम नहीं करती। भी कुछ विनय करता हूं –

गिरे तो यह धरा-समझ आपको दान।
अंचल बढ़ा कैं बीचहि में, सुख मान

राजा साहब ने बोधा की ओर संकेत । बोधा भी एक दरबारी कवि थे, अपने को सर्वश्रेष्ठ समझते थे । मुस्कते हुए बोले –

र कैं जैहैं आप कहं—नीचो कहां दिखात ।
र कैं हूं जित जात गिरि-उत हूं गिरह् वै जात ।।'

कवियों की युक्तियों को सुनकर राजा फिर नीचे की ओर देखने लगे। दैवसे उसी समय राजप्रसाद से नीचे मार्ग एक आदमी दिखायी पड़ा। उसे बुलाते बोले, 'यह कौन जा रहा है ?'

'मैं हूं, अन्नदाता ! लटोरा नाऊ।' लटोरा ऊपर देखते हुए हाथ जोड़कर कहा।

'यहां तो आ रे!' राजा साहब ने हाथ संकेत करते हुए कहा। लटोरा को ऐसा , जैसे ऊपर से यमराज का निमंत्रण गया हो। आज्ञा उल्लंघन कर नहीं था, मार्ग पूछता हुआ, छत पर और हाथ जोड़कर एक ओर इस में खड़ा हो गया, जैसे कोई अपराधी सुनने को खड़ा हो।

'क्यों रे! मैं इस छत से नीचे गिर पड़ूं हो ?' राजा साहब ने उसे देखते हुए पूछा।

लटोरा एक अनपढ़ और भोलाभाला व्यक्ति था। अपनी समझ के अनुसार बोला, 'महाराज ! दहेड़ी-सी खोपड़ी फूट जाय और प्राण पखेरू उड़ जायें। और क्या हो? कुछ कहते न बना हो तो महराज जानें।'

लटोरा की बात सुनकर राजा साहब हंसते हुए बोले, 'इसने कही सच्ची बात। मुझे ऐसे ही आदमी की आवश्यकता थी। इसे अपने पास रखूंगा।'

राजा साहब की बात सुनकर कवियों के मुख पीले पड़ गये। वे जो अपनी-अपनी वागविदग्धता पर मन ही मन गर्व से फूल रहे थे और राजा साहब से प्रशंसा सुनने तथा पुरस्कार पाने की आशा लगा रहे थे, सहसा हतोत्साह हो गये। तब भी अपनी हार को छिपाने के ध्येय से बोधा बोले, 'वाह अन्नदाता, क्या परख की। कैसा बेलौस कहने वाला आदमी है। ऐसे आदमी बहुत कम मिलते हैं।'

राम कवि भी हां में हां मिलाते हुए बोले, 'इसने तो हम सब की कविताओं का रंग फीका कर दिया।'

नाथ कवि ने भी हार में भी जीत जैसा अभिनय करते हुए कहा, 'वास्तव में इसने तो हम सबको परास्त कर दिया।'

बोधा से भी चुप न रहा गया। राजा साहब की रुचि का समर्थन तो करना ही था। युक्तिपूर्वक बोले, 'यह भी तो कवि है। सिर की दहेड़ी से कैसी उपमा दी है। अच्छे शुभ मुहूर्त्त में इधर से निकला है।

भाग्य खुल गया।'

लटोरा अपने ढंग से अपने हृदयोल्लास और कृतज्ञता को प्रकट करता हुआ बोला, 'महराज ! मैं तो पूरा लट्ठ हूं। महराज को लट्ठ की चाहना हो तो रख लिया जाऊं। कुत्ता-बिल्ली को मारने में काम आऊंगा।'

यह बात चल ही रही थी कि इसी समय कुछ स्त्रियां राजप्रासाद के पीछे के मार्ग से गाती हुई निकलीं !

नन्हीं-नन्हीं बुंदियन मेघा बरस गये,
जमी है अखाड़िन दूब।
दूबा जो मोरी भैंसन चर लई
देती हैं गगर भर दूध।
दूधा जो मोरे वीरन पीलये,
लेत मुगलवन सें जूझ।
जूझ करत मुगल ऐसो पछारो,
बाहबा भई जो खूब।

गीत सुनते ही बात का विषय बदल गया। राजा साहब को एक पुरानी घटना का स्मरण हो आया। कुछ मुस्कराते हुए बोले, 'क्यों रामसिंह ? सुना यह गीत।'

'हां पृथ्वीनाथ। सुना तो,' राम कवि ने विनम्रतासूर्वक हाथ जोड़कर कहा, 'यह गीत उसी घटना पर रचा गया है, जब श्रीमान्त ने मुगल को अखाड़े में पछाड़ा था। ईश्वर ने सरकार की कैसी सवा सोलह आने बात रक्खी थी।'

'वाह ! रामजी ?' नाथ कवि चापलूसी करते हुए बोले, 'क्या महराज ने देवयोग से बाजी मारी थी ! महाराज में वैसी शक्ति है। एक मुगल नहीं वैसे दस मुगल आ जा तो भी महाराज से पार न पाते। ऐसे-वै नहीं, महराज छत्रसाल महराज के अवतार हैं। आसपास के रजवाड़ों में है क्या को ऐसा डील !'

'यह डील किसकी बदौलत है ?' रा साहब ने विनम्रतापूर्वक कहा, 'यह सब मेर बहिन सुभद्रा की बदौलत है। जब मैं कसर करके उठा करता था, वे अपने हाथ से मु दूध पिलाया करती थीं। दूध अब भी पीता हूं, परंतु अब उसमें वैसा स्वाद नहीं आता।

'सरकार ! स्वाद कैसे आवे ?' बो ने हाथ जोड़कर कहा, 'दूध में प्रेम शर्करा मिलाने वाला भी तो हो कोई सुभद्रा जब से गयीं तब से यहां आयीं नहीं। महराज ने भी उन्हें भुला दिया।'

'भुला नहीं दिया,' राजा साहब कुछ गंभीर होकर कहा, 'प्राणसिंह जी उन्हें भेजते ही नहीं। वे मुझसे कुछ बु माने हैं। कई बार आदमी भेज चुका।'

'सरकार की स्वयं जवाई हो तो अवश्य भेज देंगे।' मल्लजी ने कहा।

'मैं जाऊंगा तब तो जिज्जी को ले ही आऊंगा,' राजा साहब ने सगर्व कहा 'प्राणसिंह पीठ पीछे जो चाहे बकते मेरे सामने नहीं अकड़ सकते।' ऐसा क हुए राजा साहब एक चौकी पर बैठ हुक्का पीने लगे।

'महाराज के सामने वे क्या ?' हिं पति ने कहा, 'महराज के शत्रु भी न अकड़ सकते। वे तो फिर सगे-संबंधी हैं

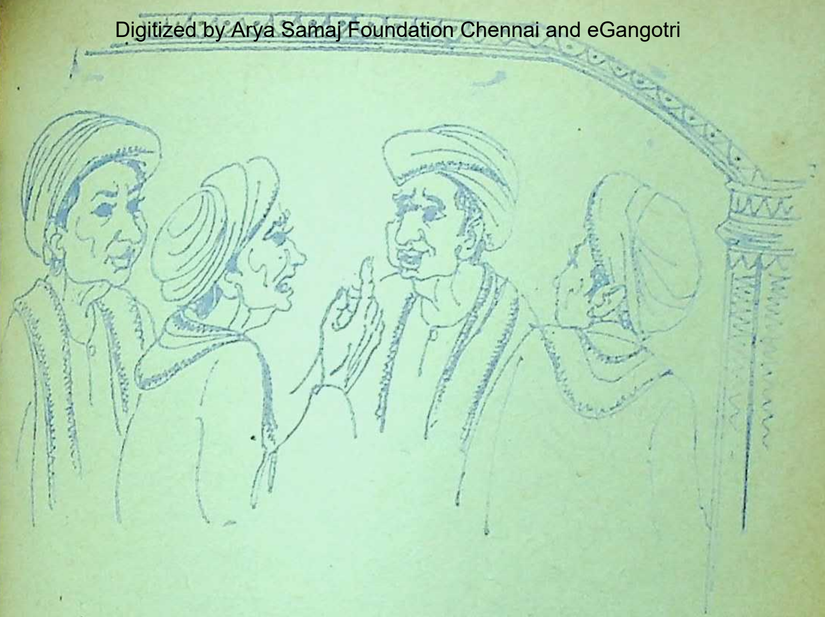

। फिर अकौड़ी एक दो कौड़ी की र ही तो है । जीजा ऐंठें-अकड़ेंगे तो बलबूते पर ।'

बुरा किस बात से माने हैं ?' मल्लजी ज्ञान-सा बनकर पूछा ।

मैं उनके पैर नहीं छूता ।' राजा साहब भीर होकर उत्तर दिया ।

वाह !' मल्लजी हंसते हुए बोले, 'इस पर हैं बुरा माने । कहीं तिलकधारी किसी के पैर छूते हैं । यह तो अकौड़ी-ों की नासमझी है । तिलकधारी का साला-बहनोई नहीं होता ।'

रा माने हों या भला,' राजा साहब ने कहा, 'मैं जाऊंगा तो सुभद्रा जिज्जी कर ही आऊंगा ।'

ल्लजी राजा साहब की बात का समर्थन हुए बोले, 'श्रीमान जायेंगे तो जिज्जी क्या जीजा को भी यहां ले आयेंगे ।'

'और मल्लजी,' राजा साहब ने विनोद-पूर्वक कहा, 'तुम जाओ तो ?'

'मैं जाऊं तो जीजाजी की जिज्जी भी ले आऊं !' ऐसा कहते हुए मल्लजी गर्व से मूंछ पर हाथ फेरने लगे । मल्लजी की बात को सुनकर सब लोग हंसने लगे । राजा साहब भी हंसी को न रोक सके ।

'तो महाराज, इन्हीं को क्यों न भेज दिया जावे,' हिंदूपति ने हंसते हुए कहा ।

'पर मैं बिना महाराज के जा कहां सकता हूं ?' मल्लजी ने उत्तर दिया ।

'अच्छा, तुम सब मेरे साथ ही चलना । अकौड़ी में शेर का शिकार भी खेलेंगे और सुभद्रा जिज्जी को भी ले आयेंगे ।' ऐसा कहते हुए राजा साहब उठ खड़े हुए और अंतःपुर की ओर चले गये । समय अधिक

हो गया था, अत: दरबारी लोग भी अपने-अपने घर गये।

○○○

अध्याय–२

लटोरा का भाग्य खुल गया। उसी दिन से सारे नगर में उसकी प्रतिष्ठा बढ़ गयी। लोग उसकी बड़ाई करने लगे। जिस मार्ग से भी वह निकल जाता, लोग उठ उठकर उससे राम-राम करते, उससे बड़े सम्मानपूर्वक बोलते और उसे पान-पत्ती के लिए पूछते। लटोरा भी जहां अब तक अपने को एक छोटा और नगण्य प्राणी समझता था, अपने को कुछ और ही समझने लगा। उस दिन की बात तो उसे भुलाये भी न भूलती। प्राय: मन ही मन अपनी प्रशंसा करता रहता–कैसा बेलौस जबाब दिया। सच्चा कहने वाला हो तो मेरे जैसा हो।

यही तो बात बिगड़ी है। राजा-महाराजाओं के पास कोई सच्ची बात कहनेवाले आदमी ही नहीं रहते। यदि राजा दिन को रात कहता है तो चाटुकार लोग आकाश में तारे भी देखने लगते हैं। हां में हां मिलाने वाले और ठकुरसुहाती कहने वाले ही अधिकतर रहते हैं। किसी अभागे के मुंह से यह नहीं निकलता कि महराज, आंख खोलकर देखिये, अंधे न बन जाइये, यह रात नहीं दिन है। मेरे जैसे आदमी यदि उनके पास रहें तो अवश्य ही उनकी आंखें खोल दें। राज्य का सारा अंधेरा ही दूर कर दें। राजा भी समझ लें कि कोई आदमी मिला। कवि लोग तो जितनी चाटुकारी करते हैं, उतनी कोई साधारण आदमी न करेगा। झूठ ही की रोटी खाते हैं, परलोक को भी नहीं डरते।

ऐसा ही कुछ सोचता हुआ एक जब वह अपनी चौपाल में बैठा हुआ और हुक्का पी रहा था। राजा साहब एक हलकारा उसके पास आया और आदरपूर्वक राम-राम करता हुआ 'लटोरे भैया ! चलो तुमको साहब ने बुलाया है।'

'किसलिए है ? आओ-आओ बैठो पी लो, फिर चलता हूं।' ऐसा कहते लटोरा ने अपने हुक्के पर से उतारकर हलकारे की ओर बढ़ायी।

हलकारा बैठ गया और हाथ में लेते हुए बोला, 'तुम्हें एक चिट्ठी अकौड़ी जाना है। चिट्ठी सुभद्रा कुमारी की विदा की है। महाराजा ने वहां जाने के लिए तुम्हीं को चुना है मर्जी हुई है कि लटोरा ही को भेजो, वह बेलौस कहने वाला आदमी है ठकुरसुहाती नहीं कहेगा।'

हलकारा की बात सुनकर लटोरा मन ऐसा फूल गया, जैसे कहीं का राज्य ही मिल गया हो। गर्व से हंसता हुआ बोला, 'महराज को भी क्या आदमी है ! मेरा जैसा लट्ठ और गंवार उन्हें आया है। कोई दूसरा राजा होता तो उसी दिन गर्दन काट लेता। भला मैं महाराजाओं से बात करना क्या जानूं बाप न मारी मेढकी बेटा तीरंदाज।

वों ने भी कभी राज-दरबार नहीं देखे । र मालिक की रुझान है, जिस पर रीझ वे ।'

हलकारा मुंह से धुआं फूंकता हुआ ला, 'सच कहते हो, लटोरे भैया । हमारे हाराज तो पूरे देवता हैं । वे ऐसी बात र भी रीझ जाते हैं, जिस पर दूसरा ोई सिर काटे बिना न छोड़े । फिर लटोरे या, तुममें भी तो ईश्वर ने कुछ हुनर या है । सच्ची बात निकलती किसके ह से है! कवियों को ही न देख लो—रात-न दिन ठकुरसुहाती कहते रहते हैं । एक ं बात सच्ची नहीं कहते । यह तो तुम्हारी दम थी कि उस दिन महाराज से ऐसी ी बात कह आये ।'

लटोरा ने फिर चिलम लेते हुए कहा, या, मैं तो सच्चा कहना ही जानता हूं । रसुहाती कहना मैं क्या जानूं ! न कभी ज-दरबार गया हूं, न कभी सीखी है, और भगवान करे कि कभी सीखना पड़े । हूं कितने दिन की जिंदगी है, क्यों अपने ो झूठ बोलकर नीचे गिराये? जो कुछ ते बने सच्चा न कहें । मेरा तो लट्ठ-सा ा यही ज्ञान है, किसी को अच्छा लगे बुरा । हां यह तो कहो मुझे अकौड़ी ब जाना है ?'

'जब का सुदिन बना हो ।' हलकारा ने ा, 'यह तो खासकलम साहब ही बत-ंगे ।' ऐसा कहता हुआ हलकारा चला ा । लटोरा भी उठा और घर के भीतर ी स्त्री के पास पहुंचा ।

स्त्री का नाम था बेलकली । उसका जैसा नाम था वैसा ही गुण । वह वास्तव में बेला की कली के समान रूपवती थी । लटोरा की दूसरी शादी थी । इससे उसकी आयु तो कुछ उतार हो चली थी, परंतु बेलकली का अभी विकास ही हो रहा था । उसके शरीर में यौवन और सौंदर्य प्रतियोगिता-सी करके बढ़ रहे थे । भाग्य की विडंबना थी, जो उसने नाई के घर जन्म लिया था । लटोरा उस पर लट्टू था । एक तो दूसरी शादी थी, इस कारण से उसे और भी प्रसन्न रखना चाहता था ।

'ले बेलकली !' लटोरा ने भीतर आते ही कहा, 'खासकलम ने बुला भेजा है । अकौड़ी चिट्ठी लेकर जाना है । महाराजा साहब ने मुझे ही चिट्ठी ले जाने के लिए चुना है । ऐसी आफत है कि अब राज-काज से श्वास लेने के लिए भी समय नहीं मिलता । घर में चैन से बैठ भी नहीं पाता । घर के बाहर निकलते ही लोग घेरते हैं – लटोरे भैया, मेरा यह काम करा दो—मेरी यह विनती कर दो—जैसे लटोरे भैया ने ही सब का ठेका ले रक्खा हो ।'

लटोरे की बात सुनकर बेलकली अपनी बड़ी-बड़ी आंखें मटकाती हुई विनोदपूर्वक बोली, 'मेरा भी कोई काम महाराज से करवा दो तब जानूं । गढ़वा दो मुझे एक सोने की हमेल । नहीं तो ऐसे कितने ही बिल्ली-कुत्ते राजा-महाराजाओं के महलों में पले रहते हैं ।'

'तभी तो मैं तुझे बेलकली कहा करता

हूं।' लटोरा ने मुस्कराते हुए कहा, 'राजा-महाराजा कल्पवृक्ष के रूप में होते हैं। उनकी छाया में पहुंच जाना ही बहुत होता है, फिर अपने महाराजा तो जैसे औघड़दानी हैं, दुनिया जानती है। कुछ दिन ठहर तो जा। करने तो दे कुछ दिन सेवा महाराज की। तू हमेल की बात करती है, मैं तेरे लिए सोने का कटहरा बनवा दूंगा। फिर तू उसी में सिंहनी जैसी बंद रहना।'

'जब बनवा दोगे,' बेलकली ने उपेक्षा प्रदर्शित करते हुए कहा, 'तब समझ लूंगी कि महाराज के पास नौकर हो गये हो। अभी कैसे कोरी-कोरी बातों से मान लूं। ऐसी बातें घर में कौन नहीं कर लेता।'

'न मान, बेलकली।' लटोरा ने फिर कहा, 'ईश्वर ने कौन तेरे अकल दी है जो तू माने। यह शकल भर दी है। पर तेरी शकल का तो मुझे लोहा मानना पड़ता है। तेरे जैसी रूपवती तो कोई रानी भी न होगी।'

'और तुम्हारी अकल का मैं भी लोहा मानती हूं,' बेलकली ने मुस्कराते हुए कहा, 'तुम्हारे अकल न होती तो महाराज को दहेड़ी जैसा सिर फूटने को कैसे कह आते। बहुत है जो बचकर आ गये। तुम्हारी जैसी अकल तो राजा में भी न होगी। तुम्हें तो कहीं का राजा होना चाहिये था।'

'सिर फूटने को कह आया,' लटोरा ने कहा, 'तो क्या कुछ अनुचित कह आया। जो कोई इतनी ऊंचाई से गिरेगा तो उसका सिर नहीं फूटेगा तो और क्या होगा! मैं ठकुरसुहाती नहीं कहना जानता। यदि ऐसा न कहता तो महाराज आज अपने पास ही क्यों रखते! दहेड़ी के कारण ही तो आज मुझे जगह मिल गयी। धन्य भाग्य जो मानती नहीं, मेरी अकल पर पत्थर फेंकती है। तेरी जैसी अकल और कहीं मिल होती तो आज कहीं का राजा ही होता। और अभी क्या हुआ है। अक्कल बड़ी कि भैंस!'

'और मुझे भी,' बेलकली ने कहा, 'तुम्हारी जैसी अक्कल मिल जाती तो मैं भी कहीं की रानी बन जाती। पर दुख है कि न तुम्हारे शकल है न मेरे अकल। इसलिये दोनों नाई बनकर रह गये।'

'तुझे नाई ही बना रहना है,' लटोरा ने आक्षेप किया, 'और कहीं मेरी अक्कल ने मारा तो कहीं का राजा ही बन जाऊं। अक्कल ही से लोग राजा बनते हैं।'

'यही तो तुम्हारी अक्कल है,' बेलकली ने व्यंग्य कसा, 'यदि तुम राजा हो जाओगे तो मैं रानी न बन जाऊंगी। क्या तब मुझे छोड़ दोगे?'

'और तू रानी बन गयी तो,' लटोरा ने उत्सुकता से पूछा, 'क्या मुझे छोड़ देगी?'

'धन्य है तुम्हारी अक्कल को। बिना तुम्हारे राजा बने मैं कैसे रानी बन जाऊंगी। इसी अक्कल से है तुम्हें राजा बनना!' ऐसा कह बेलकली हंसने लगी।

'चल रहने तो दे। तुझसे कोई नहीं जीत सकता। जाता हूं खासकलम के घर हो आऊं।' ऐसा कहते हुए लटोरा ने अपने

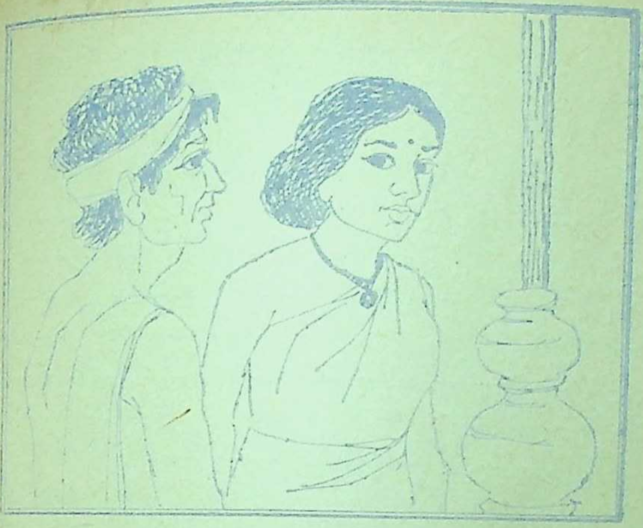

लटोरा और बेलकली

पहने और खासकलम के घर की ली।

०००

अध्याय—३

कौड़ी एक छोटी-सी जागीर थी। यहां के राजा प्राणसिंह थे। इन्हीं को के राजा अमानसिंह की बहिन सुभद्रा ही थी। यद्यपि अकौड़ी बहुत छोटी थी, राजा प्राणसिंह उसे किसी बड़े राज्य म न समझते थे। एक दिन उसे बढ़ाकर बड़ा राज्य बनाने का भी स्वप्न देख े। अतः वे अपनी फौज बढ़ाने में लगे े। अकौड़ी की गढ़ी का भी विस्तार ा जा रहा था। उसके चारों ओर की भी चौड़ी की जा रही थी। परंतु की कमी हर एक काम में बाधा डाल ी। रुपये की कमी को कैसे पूरा किया जाये, कोई उपाय नहीं समझ में आ रहा था। एक दिन इसी प्रश्न को लेकर वे अपनी रानी सुभद्रा के पास पहुंचे। सुभद्रा पलंग पर लेटी हुई थी और एक नौकरानी उनके पैर दाब रही थी। प्राणसिंह को देखते ही सुभद्रा उठ खड़ी हो गयी। प्राणसिंह पलंग पर बैठ गये और सुभद्रा को भी उसी पर बैठालते हुए बोले, 'रानी, अब तो गढ़ी का काम आगे नहीं चल रहा है। रुपये की बहुत कमी पड़ रही है। तुम्हारे पास कुछ रुपया हो तो दो।'

'मेरे पास,' सुभद्रा ने मुस्कराते हुए कहा, 'रुपया तो नहीं, हीरे-जवाहरात चाहो तो मिल सकते हैं।'

'तुम तो हंसी करती हो,' प्राणसिंह ने उनके कंधे पर हाथ रखते हुए कहा, 'रुपया दो कुछ। गढ़ी का परकोटा पूरा कराना

आवश्यक है। नयी फसल आने पर व्याज सहित तुम्हारा रुपया पूरा कर दिया जावेगा।’

‘मैं हंसी करती हूं?’ सुभद्रा ने हंसते हुए कहा ‘आप जानते नहीं कि मैं परना की रहने वाली हूं, जहां हीरा ही हीरा निकलता है। मैं अकौड़ी की नहीं, जहां कौड़ी भी नहीं निकलती।’

‘मैं तो तुम्हें भी एक हीरा ही मानता हूं,’ प्राणसिंह ने विनोदपूर्वक कहा।

‘पर अकौड़ी में आकर बिकी हूं, जहां कौड़ी भी मेरा मूल्य नहीं।’

‘प्राणसिंह कौड़ियों से मूल्य नहीं करता, प्राणों से मूल्य करता है। तुम्हारा मूल्य मेरे प्राण हैं। पर इस अकौड़ी का नाम ही बुरा है। तुम्हारे आ जाने पर भी यह अकौड़ी ही बनी रही। परना से संबंध हो जाने पर भी यह अपना नाम न बदल सकी। मेरा तो विचार है कि इसका नाम बदल कर कुबेरपुरी रख दूं।’

‘फिर आपको भी तो अपना नाम कुबेर सिंह रखना होगा। नाम तो बहुत अच्छा सोचा है आपने, पर पहले उसे नाम योग्य तो बना भी लीजिये न।’

‘ईश्वर ने चाहा तो इसे कुबेरपुरी ही बना के छोड़ूंगा। कुछ सेना इकट्ठी कर लूं, फिर एक न एक किला प्रतिवर्ष जीतूंगा। क्षत्री के हाथ में तलवार होनी चाहिये, फिर उसे किस बात की कमी।’

ऐसी बात चल ही रही थी कि बाहर से एक स्त्री आयी और हाथ जोड़कर बोली, ‘परना से एक आदमी आया है, कुछ पत्री लाया है।’

अभी तक परना से चिट्ठी-पत्री आना-जाना बंद था। चिट्ठी का सुनकर सुभद्रा को बड़ा आश्चर्य-सा चिट्ठी क्यों आयी, कोई मरा-जिया नहीं? भैया को तो नहीं कुछ हो अवश्य कोई बड़ी घटना घटी होगी, चिट्ठी आयी। बोली, ‘बुला न लूं को यहीं। मायके का तो आदमी है। परदा क्या!’

‘नहीं। पहले चिट्ठी मंगा लो। आदमी को बुला लेना।’ प्राणसिंह ने होकर कहा।

स्त्री शीघ्र ही जाकर चिट्ठी ले प्राणसिंह ने चिट्ठी पढ़ी और सुभ दे दी। मुस्कराते हुए बोले, ‘तुम्हारे हैं, विदा को आ रहे हैं। कैसे तुम्हारी आ गयी? बड़े अचरज की बात है!

‘अचरज की बात क्या है! महाराजाओं की ऐसी याद होती है। बार आदमी फिर गये, आपने भेजा इससे स्वयं आ रहे हैं। कहिये आप या नहीं। न भेजना हो तो अभी फिर बहाना बना दिया जाये। यदि अभा आ गये तो वह बिना विदा कराये जावेंगे, मेरी लाश ही क्यों न जाये। वे बहुत भले हैं वहीं बड़े हठी भी हैं। काम की सनक आ जाती है, उसे करके छोड़ते हैं।’

‘हां, तुम्हारे भाई पूरे भैंसा तो हैं

ने उन्हें शरीर तो दिया है, पर दिमाग। ऐसे आदमी किस काम के होते हैं। जैसी सूद जिस ओर गहली सो।'

रे भाई भैंसा हैं तो मैं क्या हुई ?' ने विनोदपूर्वक पूछा।

तुम भी भैंस हुईं और क्या हुईं ?' और आपको ब्याही हूं तो आप क्या ?'

आदमी तो भैंस-बकरी सभी से शादी ते हैं।'

र आप आदमी ही सही। पर विदा तो कहिये। मुझे भेज दीजिये तो भाई आपको कुछ रुपया ला दूं। आपकी पूरी हो जाये। अमान का हाथ जैसा है आप जानते ही है।'

भद्रा की बात प्राणसिंह को जंच गयी। की आवश्यकता थी ही। उन्हें ऐसा हुआ, जैसे ईश्वर ने ही सहायता भेजी सुभद्रा के परना जाने से अवश्य ही मिल जाना था। अतः सोचते हुए 'जब अमान आ रहे हैं तब विदा तो ही होगी। मुझे रुपयों की आवश्यकता है ही। तुम गयीं तो रुपया अवश्य ले गी।'

भद्रा प्राणसिंह की बात सुनकर प्रसन्न ी। मुस्कराती हुई बोली, 'अब उस को बुला लूं। और भी कुछ पूछूं।'

सिंह ने अनुमति दे दी और लटोरा या। लटोरा प्राणसिंह तथा सुभद्रा के चरण छूकर दीन भाव से दूर खड़ा हो गया। सुभद्रा ने उसे देखते ही पूछा, 'क्यों रे, मैंने तो तुझे पहले कभी नहीं देखा। क्या अभी हाल ही में नौकर हुआ है ?'

'हां सरकार!' लटोरा ने हाथ जोड़कर कहा, 'महाराज, थोड़ी-सी बात पर प्रसन्न हो गये और मुझे अपनी ताबेदारी में रख लिया।'

'क्या बात थी ?' सुभद्रा ने उत्सुकता से पूछा।

'बात तो कुछ नहीं थी, सरकार! लटोरा ने विनम्रता से कहा, 'एक दिन महराज अपनी छत पर खड़े थे। नीचे मार्ग से मैं निकला तो मुझे ऊपर बुलाकर पूछते क्या हैं कि मैं इस छत से नीचे गिर पड़ूं तो क्या हो ? मैं तो सरकार, अनपढ़ और गंवार ठहरा, राज-दरबार कभी देखे नहीं, कह दिया, दहेड़ी-सा सिर टूट जाये और प्राण पखेरू उड़ जायें और क्या हो! इतनी-ही बात पर महराज खुश हो गये।'

लटोरा की बात सुनकर प्राणसिंह कह-कहा मारकर हंसने लगे। हंसते हुए बोले, 'हैं तुम्हारे भाई कुछ सनकी से न ?'

'हां महराज, हैं तो कुछ सनकी से,' लटोरा ने हाथ जोड़कर समर्थन किया।

प्राणसिंह लटोरा की बात सुनकर और जोर से हंसे। सुभद्रा कुछ लज्जित-सी होकर बोली, 'कैसा है रे, महराज को सनकी कहता है। वे सुन पावेंगे तो तेरा सिर काट लेंगे।'

'नहीं, अन्नदाता!' लटोरा गर्व से बोला 'मैं तो उनके मुंह पर कह दूंगा। महराज को

ठकुरसुहाती पसंद नहीं । जब आपका चलना होगा, तब आपके सामने कह दूंगा कि प्राणसिंह राजा कुछ सनकी से हैं ।'

लटोरा की बात सुनकर सुभद्रा हंसने लगीं । प्राणसिंह कुछ लज्जित से होकर बोले, 'तू तो बड़ा बदमाश है रे । अभी महराज को सनकी कहता था, अब मुझे कहने लगा ।'

'महराज, सनकी कुछ बुरा होता है क्या ?' लटोरा ने अज्ञान बनते हुए पूछा । 'सनकी न होते तो मुझे कैसे पास रख लेते ? इसी से तो मैं समझता हूं कि सनकी अच्छे होते हैं ।'

'होते होंगे,' सुभद्रा ने कहा, 'यह तो बता, महराज को मेरी याद कैसे आ गयी ?'

'उसी दिन, जिस दिन मुझे महराज ने बुलाया था, कुछ औरतें एक गीत गाती हुई निकली थीं 'नन्हीं-नन्हीं बुंदियन मेघा बरस गये, जमी है अखारिन दूब'– इस गीत को सुनते ही महराज को आपकी याद आ गयी । आंखों में आंसू भर आये और विदा की बात चलने लगी । अब विदा की मंजूरी दी जावे ।'

'बिदा कौन मेरे हाथ में है । वे बैठे हैं तेरे सनकी महराज, पूछ न ले ।'

'देखा जायेगा,' प्राणसिंह बीच में ही बोले, 'अभी तो खवास आया ही है । कुछ दिन तो ठहरने दो । दे दी जावेगी मंजूरी ।' ऐसा कहते हुए प्राणसिंह उठ गये ।

सुभद्रा और भी यहां-वहां की बातें करने लगी ।

अध्याय-४

लटोरा को अकौड़ी गये बहुत दिन
गये । वह अधिक से अधिक दो स
में लौटने को कह गया था । जब दो म
बीत गये और वह न लौटा तो वेलकली
चिंता हुई । क्यों न लौटे, क्या बात
गयी ? अभी तक तो लौट आना चाहिए
मार्ग में कोई चोर-डाकू न मिल गये हों
अकौड़ी में ही कोई झगड़ा न हो गया
प्राणसिंह राजा ने ही सिर काट दिया
सिर काट देना तो राजा-महाराजाओं
लिए खेल है । बात की बात में सिर क
देते हैं । भटा-भाजी से भी सस्ते सिर हैं
कहां जाऊं, किससे पूछूं ? घर पर कोई
है नहीं । बुड्ढी सास है, वह कहीं आने-
की नहीं । ऐसा सोचते हुए एक दिन
अपनी सास से बोली, 'वे तो अभी तक
आये । पंद्रह दिन की कह गये थे,
पूरा महीना होने चला है । कोई खबर
न मिली । किससे पूछूं क्या करूं ?'

'अरी राजमहल को चली जाती,' बु
ने कहा, 'वहां से पता लग जायेगा ।
रानी मुझे जानती हैं । बता देना कि
उसकी बहू हूं । मैं तो हाथ-पैर से थकित
नहीं तो मैं चली जाती ।'

बुढ़िया की सलाह वेलकली को
आ गयी । वह राजमहलों में अपनी
करना ही चाहती थी, अब वहां जाने
बहाना भी मिल गया । अतः वह एक दि
संध्या समय बड़ी रानी के महल को पहुंची

राजा साहब के दो रानियां थीं—एक बड़ी नी और एक छोटी। बड़ी रानी रूप-रंग बहुत सुंदर नहीं थीं—अतः उपेक्षित-सी ती थीं। इस कारण से बहुत साधारण ढंग हती थीं। इसलिए जो कोई स्त्री उनके आ जाती, उससे बड़े प्रेम से मिलतीं र बात करतीं।

बेलकली उनके पास पहुंची नहीं कि के रूप को देखकर उन्हें कुछ आश्चर्य-सा आ। इतनी रूपवती स्त्री यह कौन आ ी? क्या छोटी रानी है? नहीं छोटी नी तो इसकी निछावर भी नहीं।

बड़ी रानी ऐसा सोच ही रही थीं कि लकली ने उनके चरण छुए और अपना रिचय दिया।

'अच्छा तू लटोरा की दुलहिन है,' बड़ी नी ने उसे बैठालते हुए कहा, 'लटोरा ड़ा भाग्यवान है। कैसी ठकुराइन-सी ुलहिन पा गया है।'

'सरकार, मैं उन्हीं की खबर पूछने सेवा आयी हूं। अकौड़ी चिट्ठी लेकर गये थे, र अभी तक लौटे नहीं। पंद्रह दिन में आने ो कह गये थे, जिसका एक महीना से भी र हो गया।'

इसी समय संयोग से राजा साहब भी आ ये। उन्हें देखकर बड़ी रानी पलंग से उठ ड़ी हुईं। बेलकली भी एक ओर सिकुड़कर ड़ी हो गयी। बड़ी रानी बोलीं, 'लटोरा कौड़ी गया था, अभी लौटा नहीं।'

'क्यों, तुम्हें लटोरा से क्या काम पड़ ा?' राजा साहब ने कहा—'क्या तुम भी उस पर रीझ गयी हो?'

'मैं क्या उस पर रीझूंगी,' बड़ी रानी ने मुस्कराते हुए कहा, 'उसे तो देखो कैसी ठकुराइन-सी स्त्री मिली है।' ऐसा कहते हुए बड़ी रानी ने सहसा बेलकली का घूंघट खोल दिया। राजा साहब उसे देखकर एक क्षण को स्तंभित से रह गये। उन्हें ऐसा लगा जैसे देवलोक की अप्सरा उनके सामने आ गयी हो। पर अपने को संभालते हुए बोले, 'यह लटोरा की घरवाली है! बड़ी बदसूरत है! कहां लटोरा कहां यह। लटोरा को तो देखो कैसा नाक-कान-मुंह है कि बिल्ली-कुत्ते भी झख मारते हैं। क्या नाम है इसका?'

बेलकली ने घूंघट सम्हालते हुए धीरे से कहा, 'बेलकली'।

'वाह,' राजा साहब विनोदपूर्वक बोले, 'आंख के अंधे नाम नयनसुख।'

'आपको तो . . .' बड़ी रानी ने विनोद और व्यंग्यपूर्वक कहा, 'छोटी रानी के सिवा दुनिया में कोई सुंदर ही नहीं।'

'तो तुम भी बन जाओ छोटी रानी।'

'कैसे बन जाऊं, पैर कटा डालूं या सिर। किस तरफ से छोटी बनूं। आप ही ने बड़ा बनाया है, आप ही छोटा बनाइये।'

'मुझे ही बड़ा न बना लो। एक ओर से तुम खींचो एक ओर से बेलकली।'

'बेलकली को क्या पड़ी है?'

राजा साहब सुनकर हंसने लगे। बड़ी रानी ने विषय बदलते हुए फिर कहा, 'आप आये कैसे थे? छोटी रानी ने तो नहीं मेरा

कुछ भेद लेने को भेजा था ?'

'मैं अपना भेद क्यों बताऊं?' ऐसा कहते हुए राजा साहब चले गये।

उनके चले जाने पर बड़ी रानी फिर बोलीं, 'देख लिया महाराज का कैसा अच्छा स्वभाव है। दूसरे की बहू-बेटी की ओर आंख उठाकर भी नहीं देखते। इसी को दिखाने को मैंने तेरा घूंघट खोल दिया था।'

'मैं जाति की नाइन। मुझे क्या देखते। रूप की न रंग की।'

'ऐसा न कहो, बेलकली। जैसा तेरा नाम है तैसा ही तेरा रूप। छोटी रानी अपने को बहुत सुंदर समझती है, तुझे देखे तो पृथ्वी में गड़ जाये।'

'रूप-रंग तो ऐसा है, महरानी कि जिसे पिया चाहे वही सुहागिन। महराज छोटी रानी को चाहते हैं तो वही सबसे सुंदर है।'

'आदमी सुंदरता से चाहता है कि चाहने से सुंदरता आती है, यह मेरी समझ में नहीं आता। छोटी रानी मुझसे रूप-रंग में अच्छी है। मैं तो समझती हूं इसीलिये महराज उसे अधिक चाहते हैं।'

'महाराज चाहे जिसे चाहते हों, पर नगर में तो आपकी ही बड़ाई है। ठकुर-सुहाती नहीं कहती। जब चाहे पता लगवा लीजिये। आप जैसी बड़ी हैं आपको बड़प्पन का ख्याल है। महाराज जैसे हाथ के ऊंचे हैं वैसी ही आप। महाराज भी मन में भले छोटी रानी को अधिक चाहते हों, पर बड़प्पन तो आप ही का रखते हैं। छोटी रानी तो छोटे कामों के लिए हैं।'

'छोटे काम कौन से हैं?' बड़ी रानी ने विनोदपूर्वक पूछा।

'जैसे सरकार जानती न हों।' बेलकली ने मुस्कराते हुए कहा।

'ऐसा न कह, बेलकली। वह सुन पायेगी तो तेरी जीभ निकलवा लेगी। आजकल उसकी तूती बोल रही है। दीवालों के भी कान होते हैं। आजकल अपनी छाया का भी विश्वास करना कठिन है। महराज के स्वभाव का कुछ ठिकाना नहीं। बात की बात में पारा इतना चढ़ जाता है कि म्यान से बाहर हो जाते हैं। मैं तो जीवन के दिन पूरे कर रही हूं। तिस पर भी छोटी रानी एक न एक षड्यंत्र करती रहती है।' ऐसा कहते हुए बड़ी रानी ने आंखों में आंसू भर दिये।

'न दुख करो, मालिक!' बेलकली स्वयं गला भरकर बोली, 'सौत तो आटे की भी बुरी होती है। ईश्वर मौत दे पर मिट्टी की भी सौत न दे।'

'भगवान कौन अपने कहे में है। ऐसे जीवन से तो मरना ही भला। छोटी रानी की आंख की किरकिरी ही दूर हो जाये। जो रहे सुख से तो रहे।'

'मालिक! आप बहुत सीधी-सादी दिखती हैं। मैं तो आपकी जगह होती तो महराज को मुट्ठी में लिये रहती।'

'तेरे पास ऐसा कोई जादू-तंत्र है क्या? समझ ले बेलकली तू ही मेरी जगह है। कुछ जानती हो तो बता।'

'खवास को आ जाने दीजिये। फिर कुछ

उपाय करा दूंगी । पर उनका तो कुछ पता पड़ा ही नहीं । महाराज ने भी कुछ न बताया ।'

'मैं कल पता लगवाकर बताऊंगी । कल फिर आना । कल ही नहीं, रोज आया कर । मैं तो चाहती हूं कि तुझे अपने ही पास नौकर रख लूं ।'

'मालिक ! आप ही का तो खाती हूं । नौकर ही तो हूं । अब आती-जाती ही रहा करूंगी ।' ऐसा कहते हुए बेलकली ने फिर बड़ी रानी के चरण छुए और उठकर चली गयी ।

ooo

अध्याय—५

हिंदूपति, राजा अमानसिंह के छोटे भाई थे । यद्यपि राजा अमानसिंह से वे प्रकट रूप से मिले रहते थे, परंतु उनका हृदय साफ नहीं था । उनके हृदय में भी राज-लिप्सा छिपी थी, परंतु वह कर्मक्षेत्र में नहीं उतर पा रही थी । राजा अमानसिंह का इतना अधिक आतंक था कि उनके विरुद्ध खड़ा होना मृत्यु ही से लड़ना था । षड्यंत्र करते तो उसके लिए भी सहायकों की आवश्यकता थी । किसे अपना सहायक बनाते और कैसे ? किसे अपना विश्वास-पात्र बनाते और किसके सामने अपने विचार प्रकट करते । पहले आवश्यकता थी कि पहले लोगों की नाड़ी टटोलते और उन्हें राजा अमानसिंह के विरुद्ध उभाड़ते । अतः ऐसे अवसर ढूंढ़ते रहते, जिनमें राजा साहब पर आक्षेप तथा व्यंग्य कस सकते और उनके संबंध में लोगों के विचार जान सकते । उस दिन की घटना, जिसमें लटोरा को नौकरी मिल गयी थी, एक मनोरंजन की चीज थी ही । उससे हिंदूपति क्यों लाभ न उठाते । एक दिन जब चारों कवि उसी छत पर खड़े हुए आपस में बात कर रहे थे, हिंदूपति भी जा पहुंचे । कवियों को देखकर व्यंग्यपूर्वक बोले, 'क्या कोई कवि नीचे कूद रहा है ? दहेड़ी-सा सिर फूट जायेगा ।'

हिंदूपति की बात सुनकर कवि लोग सहजभाव से हंसने लगे । मल्लजी हंसते हुए बोले, 'सरकार दहेड़ी तो सारे नगर में प्रसिद्ध हो गयी है ।'

'क्यों न प्रसिद्ध हो जाये, उसे महाराज के सिर की उपमा मिल गयी है न ? कैसी सुंदर उपमा है । तुम लोगों को इतने दिन कविता करते हो गये, पर ऐसी उपमा न सूझी ।'

'महराज !' मल्लजी हाथ जोड़कर बोले, 'हम लोगों में से किसी ने ऐसी उपमा दी होती तो पहले हमारा ही सिर दहेड़ी-सा फूटता । पर मालिक की मरजी तो है । मूर्ख की मूर्खता ही सराहनीय होती है ।'

'हां महराज की मूर्खता ठहरी न, क्यों न सराहनीय हो ।' हिंदूपति ने ताना कसा ।

मल्लजी के काटो तो खून नहीं । घबड़ाते हुए से बोले; 'सरकार, ऐसी मरजी न हो । मैंने महराज की मूर्खता नहीं कही, उस लटोरा की मूर्खता कही है । मेरे मुंह में दांत कहां कि ऐसी बात कह सकूं ? आप

ही जो चाहिये कहते जाइये । आप समर्थ हैं । आप सब कुछ कह सकते हैं ।'

'क्यों बोधा, तुमने क्या सुना ?' हिंदूपति ने बोधा को साक्षी बनाने के अभिप्राय से कहा ।

बोधा धर्मसंकट में पड़ गये । वे समझ गये कि हिंदूपति अपनी बात का समर्थन कराना चाहते हैं । अतः बड़ी चतुरता से बोले, 'सरकार सुना तो वही है, जो आपने सुना है । निकल तो गयी मुंह से बात, पर अब महाराज से न कही जावे ।'

मल्लजी को जितना क्रोध हिंदूपति पर नहीं था, उतना बोधा पर आया । भभकते हुए बोले, 'तुम भी ईमान को पी गये । कहां का बैर कहां भंजाते हो । तुम्हारी कविता मेरी कविता से नीची रहती है, इसलिये ही तुम मुझे नीचा दिखाना चाहते ।'

'अच्छा नाथ ! तुम कहो, तुमने क्या सुना ?' हिंदूपति ने हंसते हुए कहा ।

'महाराज, मैं कुछ कहूंगा तो मल्लजी मुझे भी वैसा ही कह देंगे । मेरी कविता को भी अपनी कविता से नीची बना देंगे ।'

नाथ की बात को सुनते ही मल्लजी का पारा और भी चढ़ गया । आंखें लाल-पीली करते हुए बोले, 'तुम्हें कविता करना आता ही कब है ! तुक जोड़ लेने को कविता नहीं कहते । पिंगल का एक अक्षर भी तो आता नहीं, कवि बनने का दावा ।'

हिंदूपति को एक विनोद का भी साधन-सा मिल गया । राम कवि को भी उभाड़ते हुए बोले, 'अच्छा राम कवि ! तुम कह दो सही-सही । न मेरी ओर बोलना न मल्लजी की ओर ।'

'सरकार, मेरी कविता का भी क्या आप अपमान कराना चाहते हैं । मल्लजी अभी क्रोध में हैं । मेरी कविता को भी अपनी से नीची बता देंगे ।'

'तो क्या तुम्हारी सबकी कविता मल्लजी की कविता से अच्छी रहती है ?' हिंदूपति ने हंसते हुए कहा ।

'हां सरकार ! हमारी कविता में मूर्ख का प्रयोग नहीं रहता,' राम कवि ने तुरंत चुटकी ली ।

हिंदूपति को मल्लजी के चिढ़ाने में आनंद आ रहा था, साथ ही उनके आंतरिक भाव भी जानने को मिल रहे थे, अतः जले पर नमक-सा लगाते हुए बोले, 'आदमी के बात हृदय में होती है, वह मुंह से किसी किसी दिन निकल ही पड़ती है । पर मल्लजी, आप तो व्यर्थ ही डरते हैं । महराज को ठकुरसुहाती पसंद नहीं । यदि यही बात आप उनके मुंह पर कह दें तो संभव है कि महराज आपको भी कुछ पुरस्कार दे दें ।'

'क्षमा कीजिये, महाराज !' मल्लजी ने हाथ जोड़कर कहा, 'मुझे न चाहिये ऐसा पुरस्कार । आप ही मेरा सिर काट दीजिये, महाराज की दृष्टि में बुरा क्यों बनवाते हैं ।'

ऐसी बात चल ही रही थी कि राजा साहब आ गये । राजा साहब अपने आसन पर बैठते हुए बोले, 'क्यों हिंदूपति, शिकार को चलना है कहीं ?'

'सरकार, चलिये,' हिंदूपति ने कहा, 'मैं

शिकार के लिए कमर ही कसे रहता आज कल सुअरों की बहुत भरमार हो ी है।'

कहां पर ?' राजा साहब ने पूछा।

सुअरों की बात सुनकर मल्लजी ने समझा हिंदूपति ने फिर उन पर ही ताना कसा हाथ जोड़कर बोले, 'अन्नदाता, सुअरों तो हर जगह भरमार है। आपके दर-में भी कमी नहीं। एक मैं ही बैठा मेरे पर ही गोली चला दी जावे।'

हिंदूपति को भय हुआ कि मल्लजी कहीं और न बकने लगें अतः बीच ही में 'महाराज घरेला सुअरों पर गोली ीं चलाते।'

हिंदूपति की बात सुनकर सब लोग लगे और सारा वातावरण विनोद का गया। एक मल्लजी के ही मुंह पर हंसी यी। नीचे को सिर करके बोले, 'अच्छा इसी बहाने बचा रहूं।'

क्यों तुम्हें प्राण इतने प्यारे क्यों हो ?' राजा साहब ने पूछा।

'महाराज! आपकी सेवा के लिए,' जी ने उत्तर दिया। 'आपकी सेवा के सुअर बनकर भी रहना पसंद करूंगा, की नाराजी में सिंह बनकर भी रहना संद करूंगा।' ऐसा कहते हुए मल्लजी ांखों के आंसू पोंछ लिये।

'बात क्या है ?' राजा साहब ने पूछा।

'अन्नदाता, कुछ लोग चाहते हैं कि की नाराजी मेरे पर हो जाये।'

'चाहते हैं तो हो जायेगी,' राजा साहब विनोद से बोले, 'कौन-सी बड़ी बात है। मुझे कुछ देना तो न पड़ेगा ?'

राजा साहब की बात सुनकर मल्लजी के और भी प्राण सूख गये। उनका और कुछ आगे कहने का साहस न पड़ा। उनको आशा थी कि राजा साहब उनका पक्ष लेंगे, परंतु बात उल्टी ही हुई। बात कुछ और आगे बढ़ती, परंतु इसी समय लटोरा अकौड़ी से आ गया। उसने राजा साहब के चरण छुए और एक पत्र वहीं पृथ्वी पर रख दिया।

राजा साहब ने उसे देखते ही पूछा, 'बहुत दिन लगा दिये रे। क्या करता रहा ?'

'अन्नदाता !' लटोरा ने हाथ जोड़कर कहा, 'प्राणसिंह राजा विदा की मंजूरी ही न देते थे। जब मंजूरी दे दी तब आया। 'ना' लेकर यहां कैसे आता ? पहली बार सरकार के काम को गया और खाली हाथ लौटता ! मैंने तो कह दिया था कि साल क्यों न लग जाये, यहां से तब जाऊंगा जब विदा की मंजूरी ले लूंगा। सुभद्रा जीजी ऐसी रोती थीं . . .। कहती थीं कि भैया ने तो मुझे भुला ही दिया।'

०००

लटोरा की बात सुनकर राजा साहब की आंखों में आंसू भर आये। उन्हें ऐसा लगा कि जैसे बैठे हैं वैसे ही विदा को चल दें। चिट्ठी हिंदूपति को देते हुए बोले, 'पढ़ो तो क्या लिखा है ?'

हिंदूपति ने चिट्ठी पढ़कर सुना दी। विदा की स्वीकृति सुनकर राजा साहब बोले, 'देवता कैसे राजी हो गये ? इस

लटोरा नें क्या जादू कर दिया ?'

'चरण छुए और भिन्नतें कीं आपकी ओर से प्राणसिंह राजा से हजार-हजार बार, अन्नदाता ! तब कहीं पत्थर के देवता पसीजे ।'

'अरे तब तो तू लुटिया डुबो आया !' राजा साहब ने क्रोध से कहा, 'जाति का नाई ही तो ठहरा । क्षत्रियों की शान-बान को क्या जाने !'

राजा साहब का रुख बदला हुआ देख लटोरा सहसा घबड़ाया हुआ-सा बोला, 'महराज ! दहेड़ी-सा सिर फूट जायेगा और प्राण पखेरू उड़ जायेंगे ।' इस अप्रासंगिक बात को सुनकर सबको हंसी आ गयी । राजा साहब भी हंसी न रोक सके और उनका क्रोध शांत हो गया । लटोरा के सिर की बला टल गयी ।

०००

अध्याय–६

दरबार समाप्त हुआ नहीं कि कवि लोग अपने-अपने घरों को चले । मार्ग में वही दरबार की बात फिर छिड़ी । मल्लजी हिंदूपति के व्यवहार से बहुत अप्रसन्न और उदास थे । जब राजप्रासाद से कुछ दूर निकल आये तब बोले, 'देख लिया हिंदूपति राजा का स्वभाव । इनके सामने मुंह खोलना भी कठिन है । जीभ पकड़ते हैं । आप लोग भी उनकी हां में हां मिलाते रहे । किसी ने भी ईमान की बात न कही । क्या मैंने महाराज के लिए ऐसी बात कही थी कि ऐसी गोमारी हत्या लगा दी ।'

'अरे नहीं ।' राम कवि ने कुछ गू रहस्य-सा जानते हुए कहा, 'इनकी क्या हत्य की जावेगी । चींटा मारा पानी कहा हत्या की जानी होगी किसी और की हिंदूपति राजा की शतरंजी बातें समझ लेन हंसी-खेल नहीं है । बहुत दूर की कौड़ उड़ाते हैं । पर चुप रहना ही भला । बा तो यह है कि हम लोगों में भी तो भीतर ही भीतर छुरी चलती है । एक दूसरे की जड़ें काटते रहते हैं । फिर किसको अपना समझें, किसका विश्वास करें । मल्लजी हम लोगों को तो दोष देते हैं, पर अपने कितना जहर भरा है यह नहीं देखते ।'

मल्ल कवि को और भी जहर उगल का मौका मिल गया । क्रोध से भभकते हु बोले, 'मुझमें तो जहर भरा है और लोगों में अमृत । अभी जो बात तुमने क क्या उसमें जहर नहीं ?'

'तुमने यह नहीं कहा–हत्या की जान होगी किसी और की । इसका क्या अ निकलता है ? क्या, हदूपति राजा में यह बात कहूंगा नहीं । जो मेरी जड़ें खोदे मैं कौन उसकी सींचूंगा ।'

'अरे भाई, किसी की जड़ें न खोदो,' नाथ कवि ने निष्पक्ष भाव से कहा–'सबको रोटी लगी है सो खाते जाओ । हम लो तो कवि हैं, कविता करना ही हमारा का है । किसी के तीन-पांच में पड़ने से हमें क्या लाभ ? करघा छोड़ तमाशे जाय नाहक चोट जुलाहा खाय । हमारे लिए जैसे महरा वैसे उनके भाई, दोनों सिर माथे पर हैं ।

से पूना भक्तिन मई, कथरी ओढ़ गयी’, मल्लजी ने पत्थर-सा पटकते कहा, ‘आप ही हैं हम सबके दंड भरते । ऐसे निष्पक्ष होकर हिंदूपति के ने न बोले ।’

आप तो मल्लजी, बिलकुल म्यान के र हो रहे है,’ ‘नाथ कवि ने शांत करने चेष्टा करते हुए कहा–‘क्या पागल कुत्ते नहीं काट लिया ?’

‘पागल कुत्ते ने काटा है तुमको,’ मल्लजी कहा, ‘तुम सब हिंदूपति राजा से मिले और कोई षड्यंत्र कर रहे हो । क्या मैं राज से कहूंगा नहीं ।’

‘अधिक आगे न बढ़ो, मल्लजो,’ नाथ ने क्रोध से कहा, ‘हिंदूपति राजा का व तुमसे छिपा नहीं । हम रीति की करते हैं तो तुम्हें अनरीति की लगती । तुम समझते हो कि महराज की तुम विशेष कृपा है । पर यह समझ लो कि -महाराजा किसी के सगे नहीं होते । लटोरा पर कैसी त्योरी बदल गयी महराज की ।’

‘अच्छा है, जबरा मारे रोने न दे ।’ जी ने लाचार-सा होकर कहा । ‘तुम मिलकर कटा दो मेरी गर्दन । तुम्हारे की किरकिरी निकल जाये ।’

‘अरे भाई मल्लजी,’ बोधा ने कहा, ‘तुम हंसी-मजाक भी नहीं समझते । हिंदू- राजा तो तुम्हें चिढ़ा रहे थे । देखते थे कि जब बात करते थे, हमारी ओर देते जाते थे । अगर उनके मन में आपके प्रति कोई विद्वेष होता तो महराज से यहीं कह देते । तुम कौन उनकी जीभ पकड़ लेते ।’

‘हां, ऐसा ही तो हंसी-मजाक होता है । किसी की गर्दन कटे, किसी का मनोविनोद हो ।’ ऐसा कहते हुए मल्लजी अपने घर को चले गये ।

उनके जाते ही बोधा बोले, ‘आज का विनोद कुछ कड़ुवा हो गया । मल्लजी को बुरा लग गया । लेकिन वे भी कैसे उखड़े ? अपने को सबसे अच्छा कवि समझते हैं । पिंगल का अपने को ही आचार्य मानते हैं ।’

‘समझते नहीं,’ नाथ ने कहा, ‘हम लोगों पर अपनी धाक जमाना चाहते । पर महराज इस बात को खूब जानते हैं कि वे पूरे के पूरे उल्लू हैं, परंतु मनोविनोद के लिए हैं उन्हें रक्खे । और रखना भी चाहिये । भगवान के राज्य में उल्लू भी रहते हैं, हंस भी रहते हैं और कौआ भी ।’

‘उल्लू नहीं हैं,’ राम कवि ने गंभीर होकर कहा, ‘बने हुए उल्लू हैं । उनके उल्लूपन के पीछे से कोई कौटिल्य काम करता है । धोखा न खाना । किसी न किसी दिन ये मल्लजी हम सबको ऐसा उलझायेंगे कि सुलझते न बनेगा । ऐन गुरु घंटाल हैं । वास्तव में तो उनसे बोलने का भो काम नहीं । छेड़ते तो उन्हें हिंदूपति राजा हैं पर वे हम सब पर अपनी तान तोड़ते हैं ।’

‘एक बात और है,’ बोधा ने कहा, ‘हिंदूपति राजा की भी चाल-ढाल कुछ समझ में नहीं आती । उनकी जो बात निक-

गलती है बड़ी गहरी होती है। उनके हृदय में अवश्य कोई चोर घुसा है। समीक्षा करके देखो तो उनका आक्षेप महराज पर ही था।'

'अरे भाई, क्यों मुंह खोलते हो?' नाथ कवि ने कहा, 'कोई उनसे कह देगा तो तुम्हारी उनसे ठन जायेगी।'

'कौन कह देगा?' बोधा बोले, 'क्या हम लोगों में से भी कोई ऐसा निकल आवेगा। तब तो हम लोगों को अपनी-अपनी जीभ कटा डालना चाहिये। न रहेगा बांस न बज़ेगी बांसुरी।'

'खैर देखा जायेगा,' ऐसा कहते हुए नाथ कवि अपने घर को चले गये।

उनके जाते ही राम कवि बोले, 'ये भी बड़े गुरुघंटाल हैं। देखने में बड़े सीधे-सादे हैं, परंतु जहां मौका पड़ता है आग लगा देते हैं। मल्लजी अकेले को दोष नहीं।'

'कुछ भी हो,' बोधा ने कहा, 'हुआ आज बुरा। हिंदूपति ने हम सब लोगों के बीच फूट डाल दी।' ऐसा कहते हुए सब लोग अपने-अपने घर चले गये।

ooo

अध्याय–७

लटोरा राजप्रासाद से घर पहुंचा। परंतु उसके मन में जो प्रसन्नता होनी चाहिये थी वह नहीं थी। वह मन ही मन वही-वही बात सोच रहा था। थोड़ी ही सी बात पर महराज की कैसी त्योरी बदल गयी थी। सारा गुड़ गोबर हुआ जाता था। पर उस दहेड़ी ने फिर भी प्राण बचाये। महाराजा साहब का स्वभाव बड़ा कठिन है उनका सांप जैसा मिजाज है। न प्रसन्न होते देर लगती है न नाराज होते। पर प्रसन्न से नाराजी बड़ी भयंकर है। नाराजी हु नहीं कि गर्दन मारी गयी। दामाद या बहनोई के दुनिया चरण छूती है पर महाराजा साहब की लीला निराली है। वे अपने नौकरों भी उनके पैर नहीं छूने देना चाहते। अब तो न नौकरी छोड़ते बनती है न करते। भाग्य ने न जाने कहां से कहां जाकर फंसाया। ऐसा सोचता हुआ वह घर आया नहीं कि बेलकली को आवाज लगायी।

'आ गये।' बेलकली ने प्रसन्नता से किवाड़ खोलते हुए कहा।

'हां, आ गया। पर राजा-महराजाओं की सेवा बड़ी कठिन है। उनसे तो दू रहना ही भला।'

'सेवा कठिन हो गयी। क्या कुछ बिग गया?' बेलकली ने जिज्ञासा से पूछा।

'मैंने कहा कि प्राणसिंह राजा के आप ओर से हजार-हजार बार चरण छुए त कहीं पत्थर के देवता पसीजे। इतने पर ही उनकी त्योरी चढ़ गयी। मुझे तो ऐसा लग कि सिर कटा, पर तेरे भाग्य से बच आया!'

'त्योरी चढ़ती ही है,' बेलकली ने आंखें मटकाते हुए कहा, 'तुम्हें अक्कल तो दी नहीं भगवान ने। लाख प्राणसिंह बहनोई लगते हैं पर अपने महाराज की बराबरी के कैसे हो सकते हैं? कहां अकौड़ी, एक दो कौड़ी की जागीर, कहां यह इतना बड़ा राज्य। महराज पैर पड़के विदा कराते हैं

तलवार के बल से । तुमने महाराज का र नीचा करा दिया । तुम भला चाहो महाराज के पास की नौकरी छोड़ दो, तो किसी दिन अवश्य तुम्हारा सिर टा जायेगा ।'

'क्या नौकरी के लिए मैं उनके सामने ती करने गया था । अपने आप नौकरी ती है । सिर ही कटना होगा तो क्या कर । कितने लोगों के सिर नहीं कट ते ! उनमें से एक मेरा भी सही । तुम इसे कटा ही समझो ।'

ऐसा कहता हुआ लटोरा चारपाई ठाकर लेट रहा । थका हुआ था । लेटते नींद आ गयी । बेलकली उसके लिए ना बनाने लगी । थोड़ी देर में किसी ने र पर आवाज लगायी । बेलकली ने र खोल कर देखा । मल्लजी थे ।

'लटोरे भैया, कहां हैं,' मल्लजी ने ा ।

'सो रहे हैं । अभी जगाये देती हूं ।' ऐसा ते हुए बेलकली लटोरा को जगाने के ए चली गयी । लटोरा ने चौपाल में एक िया डाल दी और मल्लजी को बैठालते बोला, 'मालिक, कैसी अवायी हुई ?'

'कुछ न पूछो, खवास ।' मल्लजी ने करुण स्वर में कहा, 'मैं तो कुछ पागल ा हो रहा हूं । लोगों ने मुझे बड़े संकट डाल दिया है । हिंदूपति राजा ने मुझे लगाया है कि मैंने महराज को मूर्ख है । कहीं यह बात उन्होंने महराज कह दी तो क्या होगा ? कुछ समझ में नहीं आता । न तो मुझसे रोटी खायी गयी है न नींद ली गयी है । तुम चतुर आदमी हो । तुमसे पूछने आया हूं कि कोई उपाय हो सके तो बताओ ।'

'वाह कविराज !' लटोरा विशेषज्ञ-सा बनता हुआ बोला, 'इतनी-सी बात पर आप घबड़ा गये । मेरे पर तो देखो महराज की कैसी त्योरी चढ़ गयी थी, पर कैसा बच आया ! तुम पहले से जाकर महराज से कह दो कि हिंदूपति आपको मूर्ख कहते थे, फिर वे कहेंगे भी तो उनकी न जमेगी । आपको तो वहीं दरबार में मुंह पर कह देना था । आपने बड़ी भूल की । पीछे की घाली पीठ में लगती है ।'

'कहते तो ठीक हो, लटोरे भैया !' मल्लजी ने बड़ाई करते हुए कहा, 'चूक हो गयी । हिंदूपति राजा आगे हो गये होंगे तो अब मेरी न जमेगी । उन्होंने अवश्य महराज के कान भर दिये होंगे । वे चूकने वाले आदमी नहीं हैं । मुझे एकांत में समय भी मिलने का नहीं । अब तो तुम्हीं मेरे पर कृपा करो तो बात सम्हल सकती है । तुम कह दोगे तो महाराज के हृदय में बात जम जायेगी ।'

'मैं कह दूंगा,' लटोरा गर्व से बोला, 'मैं न कह सका तो किसी दिन आपको समय दिला दूंगा । एकांत में जो कुछ कहना हो कह लीजियेगा । आप चिंता न करें । मेरे होते आपका कुछ नहीं बिगड़ सकता ।'

'यह तो मुझे विश्वास है, लटोरे भैया ।' मल्लजी ने अपनी छड़ी उठाते हुए कहा,

'तभी तो मैं आपके पास आया हूं।' ऐसा कहते हुए मल्लजी चले गये।

बेलकली किवाड़ के पीछे छिपी हुई सब सुन रही थी। लटोरा भीतर आया नहीं कि बोली, 'तुम्हारा क्या अटका है जो किसी को कुछ कहने जाओगे। तुम्हें पागल कुत्ते ने तो नहीं काटा? कह न लेंगे वे खुद। तुम्हें आये हैं उल्लू बनाने। तुम तो जाओ और हिंदूपति राजा से कह आओ। देखना कैसे प्रसन्न होते हैं। वे तो आखिर महराज के भाई हैं। तुम्हें इनसे कौन मूसल बदलाना है।'

'ठीक कहती है, बेलकली,' लटोरा ने कहा, 'तू बड़ी समझदार है। मैं ऐसा ही करूंगा। हिंदूपति राजा खुश हो जायेंगे तो उनसे कुछ मतलब ही गंठेगा, इन कविराज से क्या मिलना है? इनके पीछे उनका क्यों बुरा बनूं। और उसने महराज को अवश्य मूर्ख कहा होगा। हिंदूपति राजा इन्हें वैसे ही क्यों दोष देते। अच्छा चल, रोटी तो परस, पेट में भटे चुर रहे हैं।'

'चलो खा तो लो, फिर मुझे राजमहल बड़ी रानी के पास जाना है,' ऐसा कहते हुए बेलकली चौके में गयी और खाना परसने लगी। लटोरा पटे पर चौके में बैठता हुआ बोला, 'तुझे राजमहल क्यों जाना है? बड़ी रानी से कब से जान-पहचान हो गयी?'

'जब तुम इतने दिन तक न आये तो तुम्हारी खबर पूछने एक दिन चली गयी। उसी दिन से जान-पहचान हो गयी। बड़ी रानी का बड़ा अच्छा स्वभाव है, पर बेचारी छोटी रानी के कारण दुखी रहती है।'

'किसी दिन महाराज की नजर पड़ ग तो तू भी बड़ी रानी बना ली जावेगी। ते वहां आना-जाना मुझे अच्छा न लगा। वहां न जाने दूंगा।'

बेलकली कुछ न बोली।

०००

अध्याय–८

राजा साहब शिकार खेलकर आये न कि छोटी रानी के पास पहुंचे। छो रानी के पास पहुंचते ही उन्हें बेलकली याद आ गयी। पलंग पर बैठते हुए विनो पूर्वक बोले, 'छोटी रानी, तुमने नहीं बेलकली अपने पास रखी? बड़ी रानी तो देखो कैसी अच्छी बेलकली अपने रक्खी है।'

बेलकली का नाम सुनकर छोटी रा बड़े आश्चर्य में पड़ी। जिज्ञासा भरी दृ से राजा साहब की ओर देखती हुई बो 'बेलकली क्या चीज है? बेला की क है या और कोई चीज?'

राजा साहब मुस्कराते हुए, बोले 'जाक देख आओ न? किसकी कली है, कै खिली है, उसमें कितनी सुगंध और कितन सुंदरता है।'

'मुझे नहीं देखना। ये कलियां आप ह देखिये। आप ही उनकी सुगंध लीजिये औ रसपान कीजिये। बड़ी रानी जो न रख सब थोड़ा है। वे बड़ी हैं, उनकी सब बा बड़ी हैं। वे बेले की कली, चंपा क कली, चमेली की कली सबकी कली रख

ती हैं। वे स्वयं एक कली हैं। अधखिली में रस है रंग है। आपको हम दोनों ड़ाने में क्या बड़ा आनंद आता है?'

'तुमसे लड़ने में भी तो आनंद आता है। मुझे भी क्या मुगल पहलवान समझ ा है।'

मुगल की बात सुनते राजा साहब हंसी क सके। हंसते-हंसते बोले, 'तुम कौन न से कम हो?'

'हां औरतें आपके लिए सब पहलवान हैं।'

'हीं उलटा कहती हो, सब पहलवान लिए औरतें हैं।'

'और आप पहलवान हैं कि नहीं।'

'रे रानी, तुम तो बड़ा पैंतरा बदलती । तुमने ये दांवपेंच किस पहलवान से े? आओ तो मेरी तुम्हारी कुश्ती हो ।' ऐसा कहते हुए राजा साहब ने छोटी ी का हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचा।

'कुश्ती देखने के लिए भी तो बुला ये। आप हारने लगेंगे तो अन्याय े।'

'तो मैं तुमसे पहले से ही हार न मान लूं।'

'तो कुश्ती हो चुकी!' ऐसा कहते ी रानी ने हंस दिया। फिर विषय को ने के अभिप्राय से बोलीं, 'हां, यह तो ये, आपको अकौड़ी कब जाना है? की मंजूरी आ गयी कि नहीं?'

'मंजूरी तो आ गयी, परंतु अभी सुदिन बना। जब का सुदिन बनेगा तब गा। क्या तुम्हें साथ चलना है?'

'मुझे कौन साथ ले जायेगा। साथ जायेंगी तो बड़ी रानी। अच्छा अब यह तो बताओ बेलकली क्या चीज है?'

'बता तो दिया बेलकली है और क्या चीज है।'

'आपने तो उसे एक पहेली बना दिया है। 'जान कहानी मेरी, मुंडी मतारी तेरी'। अच्छा यह बता दीजिये उसका रंग कैसा है?'

'तुम्हारे जैसा।'

'रूप कैसा है?'

'तुम्हारे जैसा।'

'अच्छा तब तो मैं समझ गयी, आप मुझे ही कहते हैं बेलकली।'

'वाह! तुम अपने ही मुंह बेलकली बनती हो। जब बेलकली को देखोगी तब कहोगी कि किसी को देखा है।'

'देखने को मिले कैसे?'

'देख आओ न बड़ी रानी के पास जाकर।'

'आप तो यही चाहते हैं कि मैं वहां जाऊं और अपना अपमान कराऊं। बड़ों के पास छोटों की गुजर कहां। बड़ी रानी बड़ी हैं। उनकी हर एक चीज बड़ी-बड़ी है। बड़ी-बड़ी आंखें, बड़ी-बड़ी नाक, बड़े-बड़े दांत। आप तो उनके लिए बहुत छोटे हैं।'

'तो मुझे क्या करना है! मैं छोटा मेरी रानी छोटी!' ऐसा कहते हुए राजा साहब लेट रहे।

०००

अध्याय–९

हिंदूपति यद्यपि अपने सामने मनमानी बात कर लेते थे, परंतु राजा साहब से डरते भी बहुत थे। जैसी उनके हृदय में

एक कालख छिपी थी, वैसी ही वे राजा साहब के हृदय में भी समझते थे। सोचते थे कि यदि राजा साहब का मौका पड़ गया तो वे उनको छोड़ेंगे नहीं। किसी दिन भी समाप्त करा देंगे। यह भी सोचते थे कि लोग कान भरने से भी न चूकते होंगे। परंतु प्रकट रूप से राजा साहब और उनके व्यवहार में कोई अंतर नहीं था। वे भलीभांति राजा साहब की हां में हां मिलाते और सेवा सुश्रूषा करते। राजा साहब भी उनसे प्रेमपूर्वक बात करते।

उस दिन दरबार में मल्लजी पर जो उन्होंने आरोप किया था, उसको राजा साहब के कानों तक नहीं पहुंचाया था। न उसे पहुंचाने का उनका विचार ही था। वह एक मनोविनोद ही था। उसे वह प्रायः भूल भी गये थे। परंतु लटोरा को वह बात न भूली थी। एक दिन समय पाकर वह उनके पास पहुंचा। मध्याह्न का समय था, वे खाना खाकर उठे थे और अपने कमरे में पलंग पर बैठे हुए हुक्का पी रहे थे। लटोरा ने आकर उनके चरण छुए और एक ओर खड़ा हो गया।

'कैसे भूल पड़े, लटोरे?' हिंदूपति ने मुंह से धुआं फूंकते हुए कहा।

'मालिक से कुछ बात करनी थी,' लटोरा ने इधर-उधर देखते हुए कहा। हिंदूपति समझ गये कि लटोरा कुछ एकांत में कहना चाहता है। नौकरों को हटाते हुए बोले 'कहो क्या है?'

'मल्ल कवि हैं सरकार, एक दिन मेरे घर आये थे। बड़े झल्लाये हुए थे। कह थे कि मालिक ने महाराज को मूख कहा है यह बात तुम महराज के कान तक पहुं दो। पर मैंने तो साफ कह दिया कि ऐसा नहीं कर सकता। तुम्हीं चले जाओ और कह आओ। इस पर बड़े झल्लाये चले गये। भला मैं कैसे ऐसी बात सकता था। मेरे लिए तो महराज व दोनों एक रूप हैं।'

लटोरा की बात सुनकर हिंदूपति कुछ हंसी भी आयी, कुछ चिता भी हुई। सोचने लगे—ऐसा नहीं कि मल्ल कवि वास्तव में महाराज के कान भर दिये हों महराज बात को मन में रखेंगे और अव पाकर बदला लेंगे। पर चिता के भाव दबाते हुए बोले, 'कोई चिता नहीं। लेने दो मल्ल कवि को मेरी शिकाय मेरा क्या बिगाड़ लेगा, पर अपने सोचे।'

'महराज, ये कवि लोग सब ऐसे ही है ये इसी की रोटी खाते हैं। इसकी चु उसकी चुगली यही इनका धंधा है। 'राज के ऊपर इन्होंने अच्छा जादू फेरा है चौबीस घंटे में एक भी बात इनके मुंह सच्ची नहीं निकलती। रस्सी को सांप कर कहते हैं। राजकाज सब इन्हीं कारण बिगड़ा है। जिसका चाहें कटवा दें, जिसे चाहे जागीर लगवा दें। महराज पर ऐसा पानी चढ़ाते हैं कि अपने को भूल ही जाते है। इनके आपकी तो कुछ चलती ही नहीं। आप

तो राजकाज सुधर ही न जाये। ने में चूहे लौटते हैं। जिसे दान देते तो रानियों तक के जेवर-कपड़े उतरवा हैं। महाराज ने मुझे अपनी सेवा में लिया है तो मुझसे सब जलते हैं। मैं खरी कह देता हूं न! मुझे खासे ास कहा करते हैं। क्या मैं खासे खवास बन सकता, मालिक ?'

'क्यों नहीं बन सकता।' हिंदूपति ने से हुक्के की निगाली निकालते हुए ा। 'जब कहे खासे खवास बनवा दूं। तो बायें हाथ का खेल है। पर पहले मुझे विश्वास तो हो जाय कि तू मेरा है। कुछ काम करेगा समय पड़ने पर। मेरे न आयेगा।'

'मालिक! गंगा-तुलसी उठवा ली है,' लटोरा ने सज्जनता और कृतज्ञता मूर्ति बनते हुए कहा, 'जहां मालिक का ीना गिरेगा, वहां अपना खून गिराऊंगा। क्षा ही लेनी हो तो अभी अपना सिर ट के मालिक के सामने रख दूं। मालिक हुक्म मिले तो देख ही लिया जाये यह ति का नाई बात का कितना धनी है। लिक, भगवान तो मुझे बनाने में भूल गया नाई के घर जन्म दे दिया है नहीं तो ठाकुर के घर जन्म देना था। तल-र के बदले हाथ में छुरा दे दिया है।'

'नाई जितने हैं सब ठाकुर हैं,' हिंदू-ति ने मुस्कराते हुए कहा, 'उनके हाथ में तलवारें ही थीं, परंतु वे घिसते-घिसते छुरा के बराबर रह गयी हैं। सिर नहीं काटतीं तो बाल अब भी काटती हैं।'

'मालिक! यह बात न मेरी जानी थी। हैं सब लक्षण मेरे ठाकुरों जैसे ही। ये हाथ ऐसे फरका करते हैं जैसे लड़ाई के मैदान में ही चलते हों। खवासिन भी ऐसी मिली है कि ठकुरानियों को मात करती है। ठाकुरों जैसी ही मालिक मेरी बोली-बानी है।। मुझसे ठकुरसुहाती कहते नहीं बनती। भला लट्ठ-सा मार देता हूं। मालिक! नाराज न हों, घर में हुक्का भी रक्खे हूं, उगालदान भी रक्खे हूं, तकिया कालीन भी रक्खे हूं, रूप-रंग सब बनाये हूं। दाढ़ी-मूंछ तो मालिक के सामने हैं।'

हिंदूपति ने सोचा—अच्छा काठ का उल्लू है, पर ऐसे काठ के उल्लू भी बड़े काम के होते हैं। उनसे जो काम निकल सकता है समझदारों से नहीं निकल सकता। बागी शेर से वफादार कुत्ता भला होता है। इसीलिए कुत्ते को सब पालते हैं। लटोरा को और बनाते हुए बोले—'और तो सब है, कोई जागीर भी है ?'

'नहीं मालिक! यही एक कमी है। पर मालिक की मिहरबानी रही तो किसी दिन जागीर भी लग जावेगी। यह तो मालिक के हाथ की बात है।'

'जागीर का कोई काम तो कर,' हिंदूपति ने धीरे से कहा।

'मालिक, काम बताया जावे न? लाइये सरकार की मालिश कर दूं। उंगलियां चटका दूं। सिर मल दूं। पैर दाब दूं। उबटना कर दूं। और जो सेवा हो कर दूं।'

'अरे इन कामों पर कहीं जागीर मिलती है,' हिंदूपति ने हंसते हुए कहा, 'जागीर मिलने के काम दूसरे ही होते हैं।'

'मालिक ! तो जागीर का काम बताया जाये।'

'बताऊंगा समय आने दे।' ऐसा कहते हुए हिन्दूपति लेट रहे। लटोरा ने भी उनके चरण छुए और चलता हुआ।

०००

अध्याय–१०

मल्ल कवि उसी दिन से राजा साहब से एकांत में बात करने का समय ढूंढ़ रहे थे। एक दिन वह समय उन्हें स्वयं ही मिल गया। अकौड़ी जाने का सुदिन बनवाया जाना था। मल्ल कवि कुछ ज्योतिष जानते थे। अतः राजा साहब ने उन्हें बुलाया।

राजा साहब सोकर जागे थे। पलंग पर बैठे हुक्का पी रहे थे। लटोरा के अतिरिक्त और कोई नौकर पास नहीं था। मल्ल कवि आये नहीं कि उन्होंने झुककर प्रणाम किया और एक ओर पृथ्वी पर बैठ गये। राजा साहब उनकी ओर देखते हुए बोले, 'मल्लजी अकौड़ी चलना है। कोई सुदिन तो बताओ।'

मल्ल कवि ने जेब से पंचांग निकाला और उसे पृथ्वी पर बिछाकर देखने लगे। उन्हें अपनी बात कह लेने की शीघ्रता हो रही थी। इस समय लटोरा के अतिरिक्त कोई पास नहीं था। ऐसा समय फिर मिलने का नहीं था। संभव था कि शीघ्र ही कोई और न आ जाये। पंचांग की ओर देखते हुए बोले, 'महाराज, सुदिन तो बतांता है, पर एक बात जानना चाहता हूं। एतराज न हो तो विनय करूं?'

लटोरा को पहले ही से पता था कि मल्लजी क्या विनय करेंगे। अतः उन्हें खुलकर विनयकर लेने का अवसर देने के अभिप्राय से वह उनके सामने से हट गया और वहीं दीवार के पीछे छिप गया। राजा साहब इधर-उधर देखते हुए बोले, 'कहो, क्या कुछ पंचांग में निकल आया है?'

मल्ल कवि और समीप आ गये और धीरे से बोले, 'अन्नदाता, मैं यह जानना चाहता हूं कि हिंदूपति राजा के प्रति आपके कैसे विचार हैं? वे सरकार के भाई हैं पर समझ में नहीं आता कैसे भाई हैं। उनके मन में कुछ ...'

'राजा-महाराजाओं के कोई भाई बहनोई नहीं होता। मैं हिंदूपति को अच्छी तरह समझता हूं। जैसा वह है जानता हूं। कहने की बात नहीं।' ऐसा कहते हुए राजा साहब फिर हुक्का पीने लगे।

'बस महाराज ! इतना ही जानना था। आगे कुछ कहने की आवश्यकता नहीं। महाराज स्वयं सतर्क हैं इतना ही पर्याप्त है। अकौड़ी जाना है पर वहां कोई धोखा न हो। प्राणसिंह राजा और हिंदूपति राजा की दांत काटी रोटी है।'

'मैं जानता हूं।' राजा साहब ने मुंह से धुआं फूंकते हुए कहा।

'और क्या कहूं, अन्नदाता,' मल्लजी ने हाथ जोड़कर कहा, 'ऐसे-ऐसे ताने कसते,

ऐसे-ऐसे व्यंग बाण छोड़ते हैं कि सुनते ही बनते हैं। एक दिन यहां तक हुआ कि सरकार को मूर्ख भी कह उठे। हम लोगों को सुना-सुनाकर कहा करते हैं। सरकार के सामने भीगी बिल्ली से म्याऊं-म्याऊं किया करते हैं।'

ऐसी बात चल ही रही थी कि हिंदूपति और खासकलम भी आ गये। मल्लजी को एकांत में बैठा देखकर हिंदूपति को ऐसा लगा जैसे किसी ने हृदय पर कटार भोंक दी हो। समझ गये कि मल्लजी चूके न होंगे। उन्होंने अवश्य ही जहर उगला होगा। परंतु तब भी अपने भाव को छिपा कर, राजा साहब के चरण छुए और एक ओर खड़े हो गये।

राजा साहब उन्हें देखते हुए बोले, 'अकौड़ी जाने का सुदिन निकलवा रहा हूं।'

'मल्लजी सुदिन तो अच्छा बना लेते हैं,' हिंदूपति ने व्यंग्यपूर्वक कहा।

राजा साहब हिंदूपति के व्यंग्य को समझ गये। हंसते हुए बोले, 'अंधर पतुरिया बहिर जिमीदार, नाचे जा मोर तोर परतीतई है। जैसा मैं सुदिन पूछने वाला वैसे वे बताने वाले।'

महराज की बात सुनकर मल्ल कवि प्रसन्न हो गये। बोले, 'महराज, मेरा तो नाम ही मल्ल है। मल्ल तो मूर्ख होते ही हैं। मैं ज्योतिष में क्या जानूं, महराज की मरजी पाकर ही यह स्वांग रचे रहता हूं।'

हिंदूपति समझ गये कि मल्लजी ने अपना काम कर लिया। उनके मुख पर क्रोध और उदासीनता छा रही थी। हृदय में एक तूफान-सा उठ रहा था। कुछ और कहने ही वाले थे कि अन्य दरबारी लोग भी आ गये और बात का विषय बदल गया। लटोरा भी निकल आया और हुक्के की आग फूंकने लगा। आग फूंकते चिलम गर्म हो गयी और लटोरा के हाथ से छूट गयी। वह मल्लजी के सिर पर गिरी। मल्लजी ने ऐसा अभिनय किया कि सब लोगों को हंसी आ गयी। राजा साहब भी हंसी न रोक सके। हंसते हुए बोले, 'मल्लजी, इसने जानबूझकर तुम्हारे सिर पर आग डाली है!'

'सरकार, इसने मेरे सिर पर आग डाली है, मैं कैसा जो इसे आग पर न डालूं।'

'अन्नदाता! इनके सिर को मैं चिलम का धोखा खा गया।' लटोरा ने चिलम उठाते हुए कहा।

लटोरा की बात सुनकर सब कहकहा मारकर हंसने लगे। राजा साहब भी हंसते-हंसते लोट-पोट हो गये। हिंदूपति को लटोरा की सिफारिश करने का अवसर मिल गया। हंसते हुए बोले, 'महराज, इस लटोरा ने न जाने कहां की बुद्धि पायी है। इसमें कैसी हाजिरजबावी है, दूसरा बीरबल हुआ है। इसे कम से कम खासा खवास तो बना दिया जाये। इसे लोग खासा खवास कहने भी लगे हैं।'

हिंदूपति की बात सुनकर लटोरा हाथ जोड़कर बोला, 'वाह मालिक, अच्छी सिफारिश हुई। 'परसो साहु जू को मासा भर'।

इतनी भी सिफारिश न की कि दरवाजे पर एक हाथी ही बंधवा दिया जाये।'

'महाराज, हाथी नहीं,' मल्लजी ने विनोदपूर्वक कहा, 'एक गधा बंधवा दिया जाये। यह गधे के ही योग्य है।'

'महाराज, मंजूर है,' लटोरा बोला, 'पर गधा मैं अपने मन का चुन लूंगा। रस्सा लिये आता हूं। यहीं मिल जायेगा।'

'कहो मल्लजी, मंजूर है?' राजा साहब ने हंसते हुए पूछा।

'नहीं महराज। तब तो हाथी ही बंधवाया जाये।'

'क्यों खासकलम?' राजा साहब ने पूछा।

खासकलम को भी डर हुआ कि कहीं मेरे गले में ही रस्सा न डाल दें। हाथ जोड़कर बोले, 'महराज, कैसी विनती करूं। न हाथी कहते बनता है, न गधा। गधा कहता हूं तो कहीं मेरे गले में ही रस्सा न पड़े। लटोरा तो बड़ा चालाक है। इसके दरवाजे हाथी ही बंधवाया जावे।'

'तब क्या है!' राजा साहब ने कहा, 'बंधवाओ इसके दरवाजे हाथी।' राजा साहब की बात सुनकर लटोरा की प्रसन्नता की सीमा न रही। शीघ्र ही कृतज्ञता से उसने राजा साहब के चरण छुए।

खासकलम के मन में कुछ ईर्षा-सी हुई। बोले, 'खुल गया भाग्य। यह भी चर्चा का विषय चलेगा कि महराज का खवास हाथी पर सवार होकर हजामत बनाने जाता था। पर इसकी कविता सच्ची। इन कवियों को इतने दिन कविता करते हो गये पर किसी के द्वार पर हाथी न बंधा।'

'कवि लोग तो स्वयं हाथी हैं,' हिंदूपति ने कहा, 'इनके दरवाजें क्या हाथी बंधेंगे!'

'अच्छा है,' राजा साहब ने कहा, 'इ कवियों का नाम भी मल्लगज, रामगज, नाथगज तथा बोधागज रखा दिया जावे।'

'इन्हीं में से,' हिंदूपति ने कहा, 'किसी क लटोरा के द्वार पर भी न बांध दिया जावे।'

'क्यों, मल्लजी?' राजा साहब ने विनोदपूर्वक कहा।

'महाराज, लटोरा जब स्वीकार क तब न। इन हाथियों को वह क्यों स्वीकार करेगा? इनके लिए बड़े-बड़े अंकुश चाहिये उस बेचारे के पास नहन्नी छोड़कर क्या है?'

'आज अच्छा विनोद रहा,' राजा साह ने फिर कहा,' अच्छा वह अकौड़ी जाने सुदिन बना लिया?'

'अन्नदाता, थोड़ा समय और दिया जावे घर से बना लाऊंगा।'

'घर से बना लाना,' ऐसे कहते हु राजा साहब उठ गये। सब लोग अपने-अप घर को गये। लटोरा और हिंदूपति व रह गये।

लटोरा को एक ओर बुलाकर हिंदूपति बोले, 'क्यों, आज मल्ल कवि ने तो खूब जड़ी।'

'हां महाराज,' लटोरा ने कहा, 'मैं त छिपे-छिपे सब सुनता रहा हूं। ऐसी ज है कि महाराज को आप पर संदेह हो गया है। मल्लजी ने अच्छा नहीं किया।'

ऐसा कहता लटोरा भी चला गया।

[क्रमशः]

नोबेल पुरस्कार और महिलाएं

□ आशारानी व्होरा

बेल पुरस्कार !

विश्व का सर्वोच्च प्रतिष्ठा पुरस्कार, क्तित्व या नेतृत्व पर नहीं, केवल ल पर प्रदान किया जाता है। जिज्ञासा भाविक है कि आज तक यह पुरस्कार र की कितनी व किन महिलाओं को, के किस कृतित्व पर मिला ? महिला-उपलब्धियों के क्षेत्र में शोध ते हुए मेरी दिलचस्पी इस ओर भी केंद्रित हुई थी। यहां मेरे जैसे अन्य जिज्ञासु पाठकों; विशेषतया प्रबुद्ध महिलाओं की जानकारी के लिए इसकी एक झलक प्रस्तुत है :

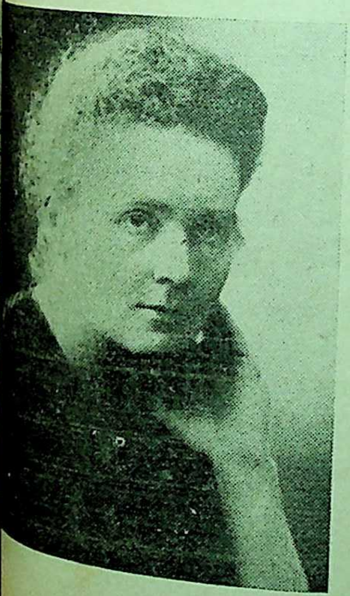

ार नोबेल पुरस्कार पाने वाली महिला मेरी क्यूरी

पहला नोबेल पुरस्कार १९०१ में दिया गया था और प्रथम बार किसी महिला को १९०३ में। तब से आज तक विश्व भर में कुछ २० महिलाओं को यह सौभाग्य प्राप्त हो सका है – विज्ञान में आठ, विश्वशांति में छह तथा साहित्य में छह। इनमें से आज जीवित नाम पांच ही हैं : मदर टेरेसा, बेट्टी विलियम्स, (विश्व शांति पुरस्कार), और डा. रोज्रलिन एस. यैलो (चिकित्सा विज्ञान पुरस्कार), डा. बारबरा मैकलिनटाक (प्रजनन विज्ञान पुरस्कार) तथा रीटा लेवी मांटेलसिनी (औषधि विज्ञान पुरस्कार)।

विज्ञान में पुरस्कार

प्रथम पुरस्कार (१९०३) की विजेता थीं, पौलैंड की सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक मैडम मेरी क्यूरी, जिन्हें आज सारा संसार 'रेडियम महिला' के नाम से जानता है और जिनसे सारा विज्ञान जगत प्रेरणा ग्रहण करता है। मैडम क्यूरी नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाली विश्व की प्रथम नारी ही नहीं थीं, वही एकमात्र ऐसी महिला थीं, जिन्हें

अपने जीवन में दो बार नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया । प्रथम बार 'भौतिकी' में अपने पति श्री पियरे क्यूरी तथा एक अन्य भागीदार श्री हेनरी बैकरेस के साथ और दूसरी बार १९११ में रसायन में अकेले । प्रथम बार पुरस्कार ग्रहण करते समय उनकी आयु ३५ वर्ष की थी, द्वितीय बार ४३ वर्ष की । इस दृष्टि से सबसे कम आयु में पुरस्कृत होने वाली महिला भी वे ही थीं । मैडम क्यूरी की संसार को देन है : पोलोनियम, रेडियम और रेडियोधर्मी विकिरणों का ज्ञान ।

विज्ञान में पुरस्कृत अन्य नाम हैं : आइरीन जूलियट क्यूरी (१९३५ का रसायन में पुरस्कार), गर्टी थेरेसा कोरी (१९४७ का चिकित्सा विज्ञान में पुरस्कार), मारिया ज्योपर्ट मेयर (१९६३ का भौतिकी में पुरस्कार), डोरोथी क्रोफुट होजकिन (१९६४ का रसायन में पुरस्कार), डा. रोजलिन एस. यैलो (१९७६ का चिकित्सा विज्ञान में पुरस्कार), बारबरा मैकलिनटाक (१९८३ का प्रजनन विज्ञान में पुरस्कार) तथा रीटा लेवी मांटेलसिनी (१९८६ का औषधि विज्ञान पुरस्कार) ।

पौलैंड की आइरीन जूलियट मेरी क्यूरी की लड़की थीं, जिन्होंने अपने पति फ्रेडरिक जूलियट–मेरी क्यूरी के असिस्टेंट–के साथ मिलकर क्यूरी दंपत्ति के रेडियोधर्मी तत्वों की खोज को आगे बढ़ाया और संयुक्त रूप से पुरस्कार प्राप्त किया । इनकी नयी खोज थी–रेडियो
तत्वों का कृत्रिम रूप से उत्पादन । अ
मां मेरी क्यूरी की तरह पुरस्कार प्रा
करते समय आइरीन क्यूरी की आयु
केवल ३८ वर्ष थी ।

डोरोथी क्रोफुट होजकिन

अमरीकन दंपत्ति गर्टी थरेसा को
और उनके पति कार्ल कौरी ने मधुजन के
अणु की रचना का पता लगाया । मधुज
के उत्प्रेरणा और परिवर्तन संबंधी उन
अनुसंधान पर उन्हें शरीर विज्ञान
चिकित्सा का नोबेल पुरस्कार संयुक्त रूप
प्रदान किया गया । उनकी यह नयी खो
'कोरी चक्र' के नाम से प्रसिद्ध हुई । पु
स्कार प्राप्त करते समय गर्टी थेरेसा को
की आयु ५१ वर्ष थी ।

मारिया ज्योपर्ट मेयर जन्म से पोलिश ी, अमरीकन प्रोफेसर जोजफ एडवर्ड यर से विवाह के बाद उन्होंने अमेरिकी गरिकता ग्रहण की व वहीं बस गयीं। ति भी वैज्ञानिक थे, पर उनकी परमाणु ढांचे संबंधी खोज में वे नहीं, अन्य वैज्ञानिक भागीदार थे। नोबेल पुरस्कार में नके साथ थे—ले. एच. डी. जेन्सन और . यूजीन पाल विगनर। उनकी 'न्यूक्लिर शैल थियोरी' और न्यूट्रान की 'जादुई ख्याएं' प्रसिद्ध हैं। पुरस्कार के समय नकी आयु ५७ वर्ष थी।

इंलैंड की डोरोथी क्रोफुट होजकिन ने सुलिन, पेनीसिलिन जैसे प्राकृतिक उत्पादों पर कार्य करते हुए उनका क्ष-किरण विश्लेषण किया। उनका मुख्य विषय ा: मणिम विज्ञान या 'एक्स-रे क्रिस्टलोग्राफी', जिसमें उनकी रुचि दस वर्ष की ायु से ही हो गयी थी। अपने विश्लेषण-ार्य पर नोबेल पुरस्कार प्राप्त करते मय उनकी आयु ५४ वर्ष थी और मृत्यु के समय ७० वर्ष।

डा. रोजलीन एस. यैलो ने रक्त में ार्मोनों की अल्प मात्रा मालूम करने के िए रेडियो विधि का पता लगाया था। चिकित्सा विज्ञान में इस पुरस्कार में उनके ागीदार थे, डा. रोजर गुलेमिन तथा . एण्ड्रयूज शाली। इन दोनों ने भी मस्तिष्क में हार्मोन-उत्पादन विषयक खोज ी थी। लेकिन पुरस्कार-राशि का आधा ाग डा. यैलो को मिला था और शेष आधा इन दोनों डाक्टरों को। इससे जाहिर है कि हार्मोन विज्ञान पर दिये गये चिकित्सा नोबेल पुरस्कार में डा. यैलो के काम का महत्व अधिक आंका गया।

बर्था वान सट्नर

१९८३ और १९८६ के दोनों चिकित्सा नोबेल पुरस्कार औषधि विज्ञान में नयी खोजों के लिए दिये गये। डा. बारबरा मैकलिनटाक को प्रजनन विज्ञान में महत्वपूर्ण शोध के लिए और रीटा लेवी मांटेलसिनी को कोशिकाओं और अवयवों के विकास को नियमित करने वाली प्रणाली में नयी खोज के लिए। इन वैज्ञानिक महिलाओं में डा. बारबरा मैकलिनटाक ही ऐसा नाम है, जिन्हें पुरस्कार की पूरी राशि मिली, किसी के साथ आधी बांट कर नहीं।

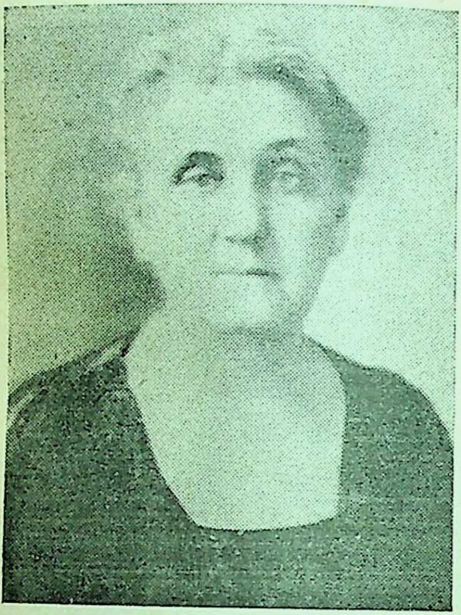

जेन एडम्स

१९०५ में दूसरी बार और 'विश्वशांति' में प्रथम बार पुरस्कार प्राप्त करने वाली महिला थीं – श्रीमती बर्था वान सट्नर। बर्था वान सट्नर एक आस्ट्रेलियन उपन्यासकार थीं, पर उपन्यासकार से अधिक वे महान शांतिवादी के रूप में विख्यात हुई।

विश्वशांति पुरस्कार

कहते हैं, नाइट्रोग्लैसरीन और डाइनामाइट जैसे विस्फोटकों के आविष्कारक अल्फ्रेड नोबेल को विश्वशांति की ओर मोड़ने और शांति के लिए पुरस्कार निर्धारित करने की प्रेरणा देने वाली बर्था वान सट्नर ही थीं। अल्फ्रेड नोबेल के जीवन में तीन युवतियां आयीं। उनकी प्रथम प्रेमिका अल्पायु में ही काल-कवलित हो गयी, जिसे भावुक अल्फ्रेड जीवन भर नहीं सके। दूसरी बार, जब वे अपार और वैभव के स्वामी बन चुके थे, बर्था वान सट्नर को इस वैभव के का सहभागी बनाना चाहा, पर उन्हें जानकर बेहद निराशा हुई कि बर्था सट्नर इसके पूर्व ही किसी और करती थीं। इसी प्रकार तीसरा भी उनके लिए दुखदायी साबित और अल्फ्रेड जिंदगी में कहीं बंध सके, केवल अपनी मां की गोद से, जिसे वे प्यार करते थे। पर यह विषयांतर जायेगा। यहां इतना ही कि बर्था सट्नर अल्फ्रेड नोबेल के जीवन में थोड़ी देर के लिए आयीं, पर जीवन के लिए उन पर अपना गहरा प्रभाव गयीं। मित्रता के नाते उनका पत्र-व्य बराबर चलता रहा। अल्फ्रेड उनके शांति-प्रयत्नों का बराबर करते रहे। फिर जब उनका प्रसिद्ध न्यास 'ले डाउन आर्म्स' (हथियार दो) प्रकाशित हुआ तो उसने नोबेल को भी बेहद प्रभावित किया।

उपन्यास की प्रशंसा करते हुए वान सट्नर को लिखा था, 'मैं चाहता किसी ऐसे विस्फोटक का निर्माण कोई ऐसी मशीन बनाऊं कि आमने-सामने युद्धार्थ खड़ी सेनाएं एक सेकिंड में दूसरे का सर्वनाश कर दें। तभी कहलाने वाली जातियों की आंखें और वे युद्ध करना छोड़ देंगी।' इसके

दिन बाद ही उन्होंने फिर वान सट्नर को खा, 'मैं अपनी संपत्ति का एक भाग एक रस्कार के लिए रख देना चाहता हूं। ति पांचवें वर्ष यह पुरस्कार उस व्यक्ति दिया जाये, जो संसार से युद्ध का समूल नाश करने के लिए महत्वपूर्ण काम करे इसके पक्ष में जोरदार आवाज उठाये। स वर्षों में कुल छह बार यह दिया जाये। दि इतनी लंबी अवधि के बाद भी राष्ट्र ना रवैया नहीं बदलेंगे तो वे बर्बरता सीमा पर पहुंच जायेंगे। तब पुरस्कार जारी रखने का कोई अर्थ न रह येगा।'

यह थी, 'ले डाउन आर्म्स' की प्रेरणा र 'शांति नोबेल पुरस्कारों' की भूमिका। चलकर विश्वशांति के लिए दिया जाने ला पहला पुरस्कार बर्था वान सट्नर को उनके इसी उपन्यास पर प्रदान किया –उनके लेखिका रूप को नहीं, शांति के ए उठायी गयी उनकी जोरदार आवाज । पुरस्कार प्राप्त करने के समय उनकी ६२ वर्ष की थी।

विश्वशांति के प्रयासों के लिए पुरस्कृत अमरीकन महिलाएं हैं: जेन एडम्स ९३१), एमिली बाल्च (१९४६)। नों महिलाएं अमरीका की सुप्रसिद्ध जिक कार्यकत्रियां थीं। जेन एडम्स नी 'पीस-पार्टी' तथा 'हल-हाउस' नामक ण संस्था के कारण विश्व विख्यात । 'हल-हाउस' के बाहर लिखा रहता था, भूखे हैं तो यहां आयें, भोजन ग्रहण करें। आप थके हैं तो यहां आयें, विश्राम करें'। पर भूख, धन या भोजन की ही नहीं होती, स्नेह, शांति और मैत्री की, सहानुभूती और सद्भावना की भी होती है। उनकी 'गुड नेबर पालिसी' इसी पर विचार-गोष्ठियां आयोजित करती थी और उनकी 'पीस-पार्टी' हर जोखिम उठाकर युद्ध का विरोध किया करती थी। जेन एडम्स की मृत्यु ७५ वर्ष की आयु में १९३५ में हुई। नोबेल पुरस्कार उन्हें केवल चार वर्ष पूर्व १९३१ में मिला था–निकोलस मरे बटलर के साथ आधा विभाजित करके।

नेली साख्श

एमिली बाल्च को वाई. एम. सी. ए. के लीडर जोन आर मांट के साथ आधा बांटकर यह पुरस्कार दिया गया। एमिली

पर्ल बक

बाल्च का नाम 'वीमेंस इंटरनेशनल लीग फार पीस एंड फ्रीडम' के साथ जुड़ा था, जिसकी आज विष्व भर में शाखाएं हैं। जेन एडम्स के साथ वे भी इस अंतर्राष्ट्रीय संस्था की एक संस्थापिका थीं। उनके अध्यक्षता-काल में महामंत्री रहीं, फिर जेन एडम्स की मृत्यु के बाद वे ही अध्यक्षा बनीं। इस संस्था के माध्यम से उन्होंने हमेशा सैनिकवाद का विरोध किया और निरस्त्रीकरण व शांति के पक्ष में आवाज बुलंद की। भ्रमण, व्याख्यान, प्रपत्र, लेखन, सम्मेलन, प्रतिनिधिमंडल, प्रस्ताव और प्रतिवेदन–सभी माध्यमों से राजनीतिक स्तर पर अपनी आवाज बुलंद करने के साथ, उन्होंने अपनी लीग का

संदेश स्कूलों के विद्यार्थियों और गृहिणि
तक पहुंचाने के भी व्यापक प्रयत्न कि
एक समाजशास्त्री के नाते ऐसे अध्यय
पर आधारित उनकी पुस्तकें काफी लो
प्रिय हुईं–'अवर स्लेविक फैलो सिटीज
'पब्लिक असिस्टेंट्स आफ द पुअर इ
फ्रांस', 'रिफ़्यूजीज़ एज़ एसेट्स' आदि
उनके कविता-संग्रह का भी नाम है,
मिराकल्स आफ लिविंग'।

नोबेल शांति पुरस्कार के तीन अ
नामों में से परमाणु निरस्त्रीकरण के लि
निरंतर आवाज बुलंद करने पर स्वी
की श्रीमती अल्वा मिर्डल को १९८
पुरस्कार से सम्मानित किया गया
१९७९ के नोबेल शांति पुरस्कार से स
नित भारत में बसी विश्व-नागरिक
मानवता की सेवा को समर्पित कल्या
मदर टेरेसा के बारे में सभी जानते है
तीसरा नाम है, आयरलैंड की बेट्टी वि
यम्स का, जिन्हें प्रोटेस्टेंटों और कैथोलि
के स्थायी झगड़ों के कारण समय-समय
होने वाले इन दंगों व हिंसा के वि
मानवीय पक्ष में आवाज उठाने पर १९
का नोबेल शांति पुरस्कार प्रदान कि
गया था। इस पुरस्कार में उनकी स
भागिनी थीं, उन तीन मृत बच्चों की
मिस आइरीट कौरिगन, जिनकी एक
के दौरान भगदड़ में तेज वाहन से कुचल
मृत्यु हो गयी थी और यह दुर्घटना
विलियम्स को पहले विचलित व
हिंसा के खिलाफ जोरदार आंदोलन छे

िए प्रेरित कर गयी थी । मिस माइ-कैरिगिन ने पूरे आंदोलन में बेट्टी यम्स का निरंतर साथ दिया था, लिए उन्हें पुरस्कार का एक अंश प्रदान ा गया था । इस तरह इनका नाम कर 'नोबेल शांति पुरस्कार' प्राप्त ने वाले कुल महिला नाम सात हो जाते र अभी तक के नोबेल पुरस्कार विजेता नाम इक्कीस, लेकिन मिस माइरीड गिन को बेट्टी विलियम्स के काम में मदद करने के लिए ही पुरस्कार का अंश प्रदान किया गया था, नोबेल कार विजेता महिलाओं में अलग से के नाम का उल्लेख नहीं किया जाता । र मेरी क्यूरी का नाम आज भी सर्वोच्च र पर है, क्योंकि उन्होंने विश्व में ा पुरस्कार' भी लिया, नोबेल पुरर जैसा बड़ा पुरस्कार 'दुबारा' भी लेने य प्राप्त किया । चूंकि मेरी क्यूरी को ार पुरस्कार प्राप्त हुआ था, इस तरह सकते हैं कि पुरस्कार के आरंभ से ६ तक विश्व की कुल बीस महिलाओं क्कीस बार यह पुरस्कार प्रदान किया ।

य पुरस्कार

०९ में तीसरी बार और साहित्य में बार पुरस्कार प्राप्त करने वाली ा लेखिका थीं–सेल्मा लागरलोफ । तीन वर्ष की आयु में ही लकवे की र हो, हमेशा के लिए लंगड़ी हो जाने बालिका सेल्मा ने अपनी हीनभावना को निष्कासन ही राह दी–साहित्य पठन-पाठन और लेखन के माध्यम से। और यह माध्यम उसकी प्रतिभा की परतों को प्रस्फुटित करता चला गया । सेल्मा के साहित्य में अपने ग्रामीण अंचल की सोंधी सुगंध है–पूरी मार्मिकता और जीवंत कल्पना शक्ति, उच्च आदर्शवाद और आत्मीयता-बोध के साथ । उनकी रचनाओं में लोक जीवन, लोक संस्कृति एवं 'घर' का प्रमुख स्थान है । इसलिये सरलता, सादगी और सहज प्रवाह भी ।

सेल्मा लागरलोफ

उनकी सर्वाधिक लोकप्रिय कृतियां हैं–'गोस्टा बर्लिंग की कहानी' और 'लिलिक्रोना का घर' । फक्कड़ कवि और लोकगायक गोस्टा बर्लिंग की कहानी वहां इसी

तरह घर-घर में जानी जाती है जैसे हमारे यहां 'ढोला मारू' की कहानी। वेला बजाने वाली लड़की लिलिक्रोना भी ऐसा ही एक मधुर चरित्र है। सोलह कृतियों की रचयिता कुमारी सेल्मा लागरलोफ ५१ वर्ष की आयु में पुरस्कार ग्रहण करने से पूर्व ही चर्चित और लोकप्रिय हो चुकी थीं। पुरस्कार के बाद जब उन्हें स्वीडिश अकादमी की सदस्या मनोनीत किया गया, तो विश्व में यह सम्मान पाने वाली वे प्रथम महिला थीं।

साहित्य में नोबेल पुरस्कार विजेता अन्य महिला नाम हैं: ग्रेजिया डेलेडा (१९२६), सिग्रिड अनसैट (१९२८), पर्ल बक (१९३८), गेब्रीला मिस्त्राल (१९३५), एवं नेली शाख्स (१९६६)।

ग्रेजिया डेलेडा इटली की विख्यात कथा-लेखिका थीं, जिन्होंने अपनी जन्मभूमि सार्डीनिया की पृष्ठभूमि में ही अपने प्रायः सभी उपन्यासों, कहानियों की रचना की। उनकी अधिकांश कहानियां दुखांत हैं, पर मानवीय संवेदना और सहानुभूति की गहराई के साथ उच्च आदर्शों से प्रेरित। ५१ वर्ष की आयु में नोबेल पुरस्कार पाने वाली ग्रेजिया डेलेडा की अधिक प्रसिद्ध कृतियां हैं: 'फ्लावर आफ सार्डीनियां', 'नोस्टाल्जिया', 'टू मिराकल्स', 'रीड्स इन द विंड', 'दि मदर' तथा 'स्शेज'।

चिली की कवयित्री ग्रेबीला मिस्त्राल दक्षिण अमरीका की पहली साहित्यकार थीं, जिन्हें यह पुरस्कार मिला। उनके गीति-काव्य एक लंबे अरसे तक लैटिन

सिग्रिड अनसैट

अमरीकियों में आदर्श प्रेरणा भरते रहे
उनकी रचनाओं की संख्या अधिक न
पर जो हैं, उनमें से अधिकांश बहुत स
मानी गयी हैं। 'नोबेल, द मैन एंड हि
प्राइज़ेज़' के लेखक ऐंडर्स आस्टलिंग
अनुसार, 'ग्रेबीला मिस्त्राल की वाणी में आ
इस सुदूर देश की विश्वसनीय आवाज सु
सकते हैं। उनकी कविताओं में एक सं
दनशील हृदय की भावविह्वलता आं
आवेश, ममता और विद्रोह–सभी स्थिति
कलात्मक ढंग से उजागर हुई हैं। ५
वर्ष की आयु में नोबेल पुरस्कार उ
'सानेट्स आफ डेथ' (मृत्यु गीत) नाम
रचना पर मिला। ग्रेबीला मिस्त्राल का
असली नाम था–लुसीला गोहाय वा

यागा । पर अपने दो प्रिय कवियों– डिसन्जिया और फ्रेडरिक मिस्त्राल नों को मिलाकर उन्होंने अपना नाम लिया था । यही नाम प्रसिद्ध हुआ । ीनी जन-जीवन का जीवंत चित्रण वाली अमरीकन लेखिका पर्ल बक के से हिंदी संसार अच्छी तरह परिचित उनकी पुरस्कार विजेता कृति 'गुड तथा अनेक कृतियां हिंदी में अनु- त हैं । ४६ वर्ष की आयु में पुरस्कार वाली पर्ल बक ने विश्व की नोबेल- ार विजेता महिला साहित्यकारों में िक लोकप्रियता अर्जित की थी । ों चुनी हुई कृतियों का विश्व की अनेक ओं में अनुवाद हो चुका है ।

र्वेजियन उपन्यास–लेखिका सिग्रिड ट के अधिकांश उपन्यासों का कथा- १४ वीं–१५ वीं शताब्दी और घटना- नार्वे है । फिर भी सार्वजनीन अपील चस्पी की उनमें कमी नहीं । चरित्र- की सजीवता, विचित्रता, अद्भुत कौशल और सूक्ष्म मनोविश्लेषण रण उनके भारी-भरकम उपन्यास पढ़े गये । उपन्यासों के अलावा, घर-परिवार और महिला-समस्याओं खूब लिखा है । नारी जीवन की कल्पना परंपरागत भारतीय नारी- के समान है, जिसमें वे मां, पत्नी व के स्वरूप और कर्तव्य को प्रमुख ती हैं । उनके बारे में प्रसिद्ध है कि ीय अनसेट को नोबेल पुरस्कार की सूचना मिलने के बाद पत्रकारों का एक दल जब उनकी प्रतिक्रिया जानने के लिए उनसे मिला, तब वे अपने सबसे छोटे बच्चे को सुला रही थीं । उन्होंने ऐसे समय भी अपने मातृत्व के कार्य में बाहरी हस्तक्षेप पसंद नहीं किया और अपने बच्चे का समय छीनकर पत्रकारों को देने से इंकार कर दिया।

नेली शाख्स प्रथम यहूदी महिला थीं, जिन्हें १९६६ का साहित्य पुरस्कार सैमुअल जोसेफ एग्नान के साथ आधा बांटकर मिला । जोसेफ एग्नान गद्य लेखक थे, नेली शाख्स कवयित्री । और संयोग कि दोनों की मृत्यु १९७० में हुई, जबकि पुरस्कार के समय एग्नान ८९ वर्ष के थे, नेली शाख्स ७५ वर्ष की । एक धार्मिक यहूदी परिवार से संबंधित नेली के पिता जर्मनी के एक बड़े उद्योगपति थे, जिन्हें हिटलर की यहूदी विरोधी नीति के कारण जर्मनी छोड़, स्वीडन में बसना पड़ा था । नेली शाख्स की रचनाएं यहूदी यातनाओं और इज़राइल की दुखी जनता के मार्मिक चित्रण से ओत-प्रोत हैं । पर गहन पीड़ा के बावजूद, वे कहीं तिक्त नहीं हो पायीं । उनके स्वर में आक्रोश नहीं, मानवीय संवेदना, आध्यात्मिक चिंतन और कहीं-कहीं संतों का-सा क्षमा-भाव है । इसीलिये उनकी रचनाओं को 'मानव आत्मा का स्वच्छ दर्पण' और उन्हें 'विराट की कवयित्री' कहा गया है ।

–सी. ६ बी./एम. आई. जी. फ्लैट्स,
मायापुरी, नयी दिल्ली-११००६४

□

कला-यात्रा

कला और सौंदर्य के देश में

☐ डा. राजेन्द्र वाजपे

सौंदर्य कला का प्रेरणा स्रोत सदा ही रहा है। इटालियन चित्रकारों एवं मूर्तिकारों की कलात्मक प्रतिभा को प्रज्वलित करने में उनके इस नैसर्गिक एवं शारीरिक सौंदर्य की गहरी भूमिका रही है। यह गूढ़ तथ्य वहीं समझ में आया। वैसे भी इटली सारे विश्व में अपने चित्रकारों के लिए मशहूर रहा है। वह सचमुच कला एवं सौंदर्य का देश है। इसकी अनुभूति वहां जाने पर ही हुई। अभी कुछ वर्षों पूर्व ही पश्चिम जर्मन सरकार के निमंत्रण पर मुझे बर्लिन में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय कला विशेषज्ञों के सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व करने का गौरव प्राप्त हुआ था। तब मुझे जर्मनी के अतिरिक्त फ्रांस और इंग्लैंड के प्रमुख संग्रहालयों एवं क दीर्घाओं में सुरक्षित योरोप के महान क कारों की मूल कलाकृतियों का प्र दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ थ इटली संयोगवश छूट गया था। जो यो पीय कला का महान् गढ़ रहा है। यह ब खल रही थी। संयोगवश विश्वविद्या की स्नातकोत्तर कक्षाओं में अध्यय लिए अनुशंसित पुस्तकों में से मेरी पुस्तक इटालियन कला पर थी। इटा दूतावास के सांस्कृतिक निदेशक की पुस्तक पर निगाह पड़ी और उन्होंने इ में कला पर शोध करने के लिए मुझे आ त्रित किया। मेरी खुशी का ठिकाना न

प्राचीन रोम का विजय द्वार—
'आर्च आफ टीटस्'

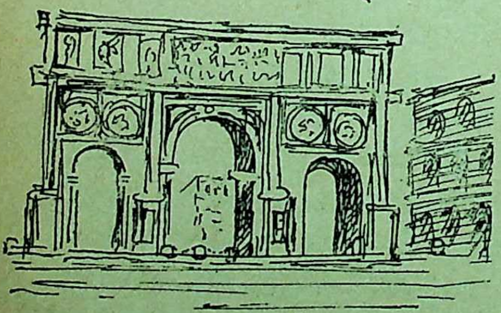

इटली के कलाकार कला के क्षेत्र क्यों अग्रणी रहे हैं, इसका मर्म मुझे रो हवाई अड्डे पर उतरने पर ही लगा। व की धरती का नैसर्गिक सौंदर्य मनोहर और उससे भी बढ़कर मनमोहक है, इट के नर-नारियों का सौंदर्य—क्या ना नक्श, क्या रूप-रंग ! लगता है विधाता उन्हे स्वयं अपने हाथों से ही गढ़ बनाया हो। उत्तरी योरोप की तरह, भू बाल या भूरी आंखें नहीं, बल्कि गहरे क बाल और बड़ी-बड़ी काली आंखें, बो

सुर्ख गाल । रूप और रंग का अनोखा किसी मायने में परीलोक से कम । वहां, कलादीर्घाओं में कलाकृतियों रसास्वादन करते हुए, कलाकृतियों से र दर्शकों के झुंडों में तितलियों की मंडराती हुई इटालियन देवांगनाओं ौंदर्य पर आंखों का अपने आप खिंचे जाना बिलकुल स्वाभाविक है। हमारे की तरह वहां कलादीर्घाओं में छुट-लोग नहीं, झुंड के झुंड, एक प्रवाह में ते-उफनते चले आते रहते हैं। कितनी संवेदनशीलता है वहां की जनता में के प्रति !

कलाकार तो और भी अधिक संवेदनशील होता है। फिर इटालियन कलाकार जिसके चारों ओर सौंदर्य ही सौंदर्य उमड़ पड़ा है ! इसीलिये उत्कृष्ट कलाकृतियों के सृजन में सारे विश्व में इटालियन चित्रकार एवं मूर्तिकार की प्रतिभा अद्वितीय रही है। इटली में छोटे से छोटा एवं बड़े से बड़ा शहर कलाकृतियों से भरा पड़ा है, एक से एक बढ़कर खूबसूरत चित्र और मूर्तियां वहां देखने को मिलती हैं, जिनकी मूल प्रेरणा-स्रोत वहां की सुंदर, सजीली कांताएं ही रही हैं। उनके रूप-रंग का लावण्य कलाकार के अतिशय संवेदनशील सौंदर्य-बोध को सहज ही उद्वेलित करके रख देता है और उससे उत्प्रेरित हो वह सुंदर-सुंदर

लेखक रोम की विश्व विख्यात प्राचीन इमारत 'कोलोसियम' जहां खेल-कूद, नाटक, जलसे एवं अन्य समारोह आयोजित किये जाते थे, के सामने।

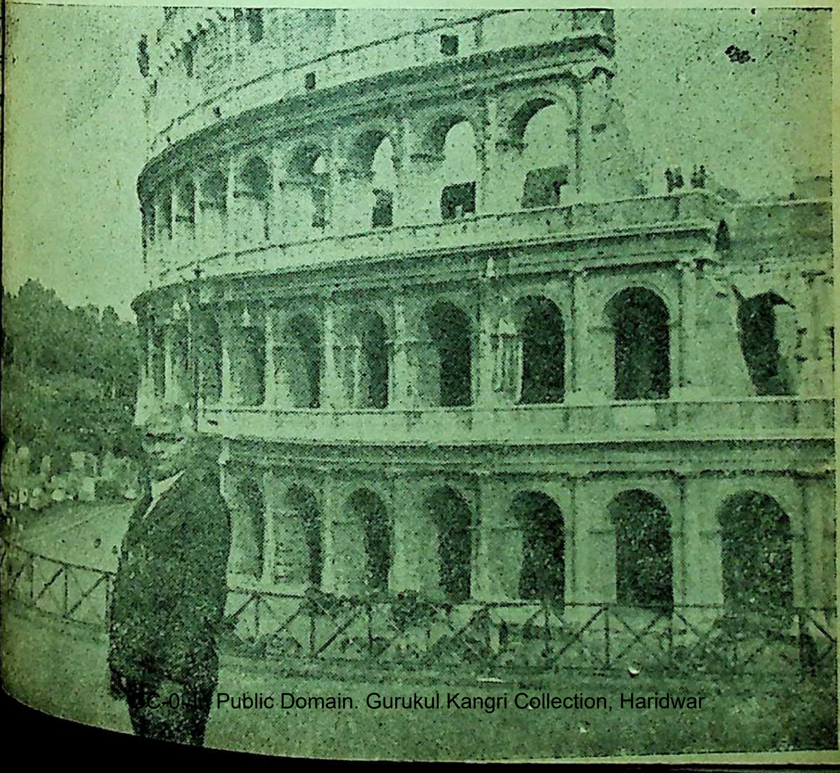

चित्रों एवं मूर्तियों को गढ़ने लगता है। उनके कला में पारंगत होने का राज यही है। इसीलिए वह देश कला से भरा पड़ा है।

इटली की राजधानी रोम में ही इतना कुछ देखने को है कि महीनों का समय भी कला-पारखी के लिए कम है। ठीक ही कहा गया है 'रोम वाज नाट बिल्ट इन ए डे' अर्थात् 'रोम एक दिन में नहीं बना था।' उसके निर्माण में शिल्पकारों की पीढ़ियां-दर-पीढ़ियां शताब्दियों से अपना योगदान करती आयी हैं। रोम नगर के प्राचीन, शास्त्रीय कालीन स्मारक (क्लासिकल मानुमेंट्स) 'कोलोसियम', 'पैन्थेयन' 'फॉरम', मंदिर एवं विशाल राजकीय भवनों के भग्नावशेष रोम की प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति की प्रतिध्वनि आज तक गुंजित करते चले आ रहे हैं। हिंदुओं की तरह प्राचीन रोम के नागरिक भी अनेक देवी-देवताओं की पूजा किया करते थे, उनके विशाल मंदिर बनाते थे, और उनमें उनकी मूर्तियां प्रतिष्ठापित करते थे। 'अफ्रोदिती' (सौंदर्य देवी) और 'अपोलो' (सूर्य देवता) की मूर्तियों की भरमार सारे रोम में ही नहीं, पूरे इटली में देखी जा सकती है।

उत्सुकतावश रोम में प्राचीन इमारतों को देखते-देखते एक दिन शहर के बाहर 'आउटस्कर्ट' में जा पहुंचा, प्राचीन शिल्पियों के कौशल एवं निर्माण पराक्रम को देखते हुए इतना तल्लीन रहा कि समय का बोध ही न रहा। सूर्यास्त हो चुका था। आसपास कोई दिख न रहा था। दो-चार सर-सराती हुई कारें गुजरीं। मैंने हाथ दिया पर किसी ने न रोका। मैं अंदर ही अंदर बहुत घबड़ाया। पासपोर्ट, डॉलर सब साथ थे। ख्वाजा अहमद अब्बास ने पहले ही मुझे आगाह कर दिया था कि सूर्यास्त के पहले घर लौट आना। इटली में माफिया गैं शाम से बड़ा सक्रिय हो जाता है। अतः मैं और भी चिंतित एवं सशंकित हो उठा। लगा मैं आज विदेश में फंसा और लुटा। मन बड़ा अकुलाया और क्रंदन करने लगा। इतने में न जाने कहां से एक लंबा-चौड़ा व्यक्ति यकायक अपनी कार घुमाते हुए वहां प्रकट हो गया। अंग्रेजी में थोड़ी बात की और तुरंत अपने बगल में बैठाकर मुझे मेरे निवास पर छोड़ गया। बड़ा अनुनय-विनय करने पर भी उसने अपना नाम-पता कुछ भी न बताया। बस इतना कहा 'मैं तुमसे बंबई में मिलूंगा।' और एकदम लोप हो गया। कौन था वह व्यक्ति? बाद में समझ पाया। परमात्मा आड़े समय में किस रूप में किसकी मदद करता है, कोई नहीं जानता। रोम प्रवास के दौरान हुई यह घटना चिरस्मरणीय घटना है।

प्राचीन रोम के महत्वाकांक्षी शासक अपनी विजय एवं वैभव की प्रशस्ति में विशाल भवन, विजय द्वार, फॉरम आदि का बड़े विशाल पैमाने पर निर्माण कराते थे। उनके अवशेषों को देखकर पर्यटक चकित रह जाता है। और मध्यकाल के बाद, चौदहवीं से सोलहवीं शती के बीच इटली

पुनर्जागरण-कालीन कला (रिनासां) के उद्भव, विकास एवं उत्कर्ष ने विश्व को जगमगा कर रख दिया। ती, चिमेबू, डच्चिओं एवं मसाच्चियों हाथों इटालियन चित्रकला का पुनरु- न होना प्रारंभ हुआ। पॉलो उच्चेलो, डेंजो, पोलाइलो, पेरुजिनो आदि, आदि ड़ों चित्रकारों एवं मूर्तिकारों के योग- न से उत्तरोत्तर परिष्कृत एवं परिमार्जित- ा हुआ, लेवनार्दो-द-विन्ची, माईकेलें लो, रेफेल, तीसियन एवं तितोरेत्तो आदि न्य कलाकारों के कृतित्व से अपनी परा- ष्ठा को जा पहुंचा। यह समय कला तिहास का स्वर्णकाल माना जाता है। इन संत इटालियन कलाकारों की कला- तियां सारे विश्व में विशेष कर योरोप की कला-दीर्घाओं में भरी पड़ी है।

रोम में वेटिकन गैलरी सबसे अधिक हत्वपूर्ण है। सेन्ट पीटर्स से लगे कक्षों में फेल द्वारा चित्रित 'स्कूल ऑफ अथेंस' या माइकेलेंजेलो द्वारा 'सृष्टि-सृजन' की चित्रा- ली सिस्टीन चैपेल की विशाल भित्तियों पर खकर दर्शक भौंचक्का-सा रह जाता है, टिकन कला:दीर्घा में पौर्वात्य एवं पाश्चात्य ला-कृतियों का अंबार लगा है।

वैटिकन कलादीर्घा एवं 'गैलरी आफ डर्न आर्ट' महान् इटालियन एवं योरो- य चित्रकारों की कला-कृतियों से भरी ड़ी है। कितना अधिक काम किया है टली के कलाकारों ने, देखते ही बनता है। म नगर के हर कोने में 'मां मैरी एवं शिशु ईशु' के चित्र एवं मूर्ति लगी नजर आती हैं, जिसे श्रद्धालु हिंदुओं की तरह ही फूल-माला एवं दीपदान करते हैं। गिरजाघरों के शिखरों में लगे पीतल या सोने के कलश एवं पताकाएं बिलकुल हिंदू मंदिरों के समान लगती हैं। कभी-कभी एक नजर में धोखा भी हो जाता है कि वे ईसाई गिरजाघरों के या हिंदू मंदिरों के शिखर हैं।

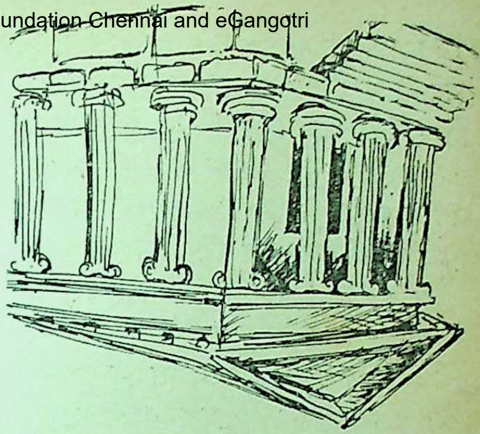

भाग्य देवी 'फारचून विरेले' का मंदिर

रोम का प्रमुखतम आकर्षण है 'सेंट पीटर' का भव्य गिरजाघर, जहां रोज मेला-सा लगा रहता है। देश-विदेश सभी जगहों से पर्यटक इसे भारी संख्या में देखने आते हैं। इसी गिरजे में माइकेलेंजेलो द्वारा उत्कीर्ण 'करुणा' (पीएता) नामक मूर्ति सुरक्षित है, जिसमें मां मैरी को महात्मा ईसा की लाश लिये शोक-संतप्त दिखलाया गया है। गिरजाघर में बर्निनी एवं डोनेटलो द्वारा उत्कीर्ण दैत्याकार श्वेत संगमर्मर की मूर्तियां 'महान इटालियन

चित्रकारों की बहुत बड़ी-बड़ी दीवारों पर बनायी गयी तस्वीरें दर्शक को मंत्र-मुग्ध किए बगैर नहीं रहतीं और गिरजाघर के सामने फैले हुए विशाल प्रांगण में विश्व-विख्यात शिल्पी बर्निनी द्वारा गिरजाघर के दोनों ओर अर्धचंद्राकार गोलाई में खड़े किये गये गगनचुंबी खंभों की कबायत करतीं हुई कतारें एक अनोखा भव्य दृश्य उपस्थित करती हैं और सहज ही दर्शक का मन मोह लेती हैं। इन गोलाई से फैली हुई खंभों की कतारों के बीच 'सेन्ट पीटर' का विस्तृत प्रांगण अपना स्वयं का आकर्षण रखता है। यह लंबा-चौड़ा चौराहा अपनी चहल-पहल के लिए विशेषकर उल्लेखनीय है, ईसाइयों के धर्मगुरु पोप यहीं पर जनसमूह को दर्शन देते हैं और संबोधित करते हैं।

रोम के प्राचीनतम भवनों में 'कोलोसियम' सबसे अधिक महत्वपूर्ण एवं शालीन है। यह दैत्याकार तिमंजली इमारत अंडाकार है और उसके सब ओर में ऊंचे-ऊंचे मेहराब हैं, जो अपने-आप में एक भव्य विहंगम रूप प्रस्तुत करते हैं: इसके अंदर प्रांगण में खेल-कूद, एवं अन्य प्रतिस्पर्द्धाएं नियमित रूप से हुआ करती थीं। नाटक खेले जाते थे। अन्य समारोह आयोजित होते थे, इसका निर्माण ऐसी युक्ति से किया गया था कि तीनों मंजिलों में बैठे ५०,००० दर्शक समारोहों को एकदम स्पष्ट देख सकें। रोम के प्राचीन वास्तुशिल्पियों की प्रतिभा का यह सबसे बड़ा जीता-जागता दृष्टांत है।

एक अन्य स्थान भी रोम नगर में बड़ा लोकप्रिय हैं। इसे 'त्रेवी फाउंटेन' कहते हैं। यहां एक सोते के पानी की धार पत्थरों के बीच बराबर बहा करती है। लोग, विशेषकर पर्यटक, इसमें सिक्के डालते हैं। ऐसी मान्यता है कि जो भी ऐसा करता है, उसका रोम में पुनः आगमन निश्चित हो जाता है।

रोम में बहुत कुछ देखने को है। सात पहाड़ियों पर बसा नगर गुंबदों से भरा पड़ा है। हर कोने में कुछ-न-कुछ कलात्मक रचना सुसज्जित की गयी है। अनेक प्राचीन द्वारों के अवशेष अभी तक सुरक्षित हैं जैसे 'आर्च ऑफ टीटस्', 'आर्च ऑफ कान्सटेन्टाइन' आदि। प्राचीन मंदिरों में 'पॅन्थेअन', 'वेस्ता का मंदिर', भाग्यदेवी 'फारचून विरेले का मंदिर' विशेषतः उल्लेखनीय हैं। अन्य प्राचीन अवशेषों में 'फॉरम', 'सेस्टियस का पिरामिड' दर्शनीय है। रोम में बड़े-बड़े चौराहे हैं जिन्हें वहां 'पिएत्सा' कहा जाता है। जैसे, 'पिएत्सा नवानो', 'पिएत्सा रेपब्लिका', 'पिएत्सा वेनित्सिआनो' आदि। इन सबका अपना-अपना निजी आकर्षण है जैसे 'पिएत्सा वेनित्सिआनो' पर बनाया गया श्वेत संगमर्मर पत्थर का भव्य भवन 'वित्तोरिआनो' (विजय स्मारक) है जिसकी ऊंची छत के दोनों किनारों पर दौड़ते हुए योद्धाओं के दो रथ ऐतिहासिक विजय का मूक उद्घोष पर्यटक के कानों में करते रहते

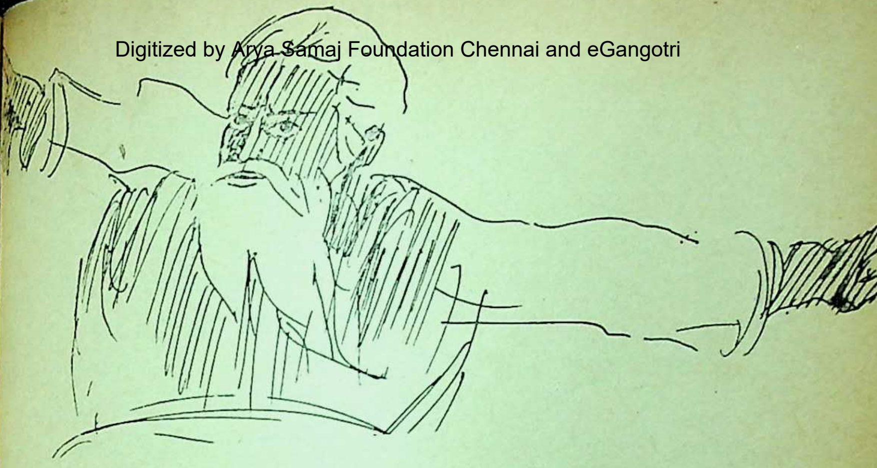

वेटिकन की सिस्टीन चैपेल की छत पर माइकेलेन्जेलो निर्मित सृष्टिकर्ता भगवान का चित्र

हैं। यहां सारे दिन बड़ी चहल-पहल रहती है। रोम नगर सीमा के बाहर स्थित सेंट पॉल का विशाल गिरजाघर अपनी भव्यता एवं शालीनता के लिये दर्शकों को बराबर आकृष्ट किये रहता है। प्राचीन रोम से कुछ दूरी पर 'नया रोम' नगर बसाया गया है, सभी आधुनिक सुख-सुविधाओं से संपन्न। वहां आधुनिक वास्तु-शिल्प शैली से निर्मित किया गया 'गिरजाघर' पर्यटकों को अपनी ओर खींचे बगैर नहीं रहता। पुराना रोम और नया रोम प्राचीन एवं नवीन संस्कृति के क्रमशः प्रतीक हैं, जैसे दिल्ली और नयी दिल्ली।

रोम के साथ-साथ इटली के अन्य नगर भी अपना आकर्षण रखते हैं, जैसे फ्लोरेंस, वेनिस, मिलान, नेपिल्स, पादुआ आदि। कला की दृष्टि से रोम के बाद, फ्लोरेंस और वेनिस ही आते हैं। फ्लोरेंस और वेनिस दोनों ही छोटी, किंतु छविपूर्ण नगर हैं। 'पित्ती' और 'उफीत्सी' कला दीर्घाएं फ्लोरेंस में ही स्थित हैं। जिनमें पुनरुत्थान कालीन कला-कृतियों का सर्वाधिक संचय देखने को मिलता है। टीशियन की विश्वविख्यात कृति 'मैग्डालेन', बाट्टी चेल्ली की 'बर्थ आव वीनस' और 'प्राइमवीरा' पित्ती गैलरी में सुरक्षित हैं और माइकेलेंजेलो का सुप्रसिद्ध 'दाविद' नामक मूर्ति-शिल्प एवं अन्य श्वेत संगमर्मर में उत्कीर्ण रचनाएं फ्लोरेन्स में सुरक्षित हैं। फ्लोरेंस नगर के शासक मेडिची के संरक्षण के फलस्वरूप उक्त नगर सारे इटली में कला का प्रमुख गढ़ बन गया था।

इटली के सभी नगरों में वेनिस नगर सबसे निराला है। पानी पर तैरता यह शहर दर्शक का मन मोह लेता है। मुख्य भूमि से कटा, समुद्र पर उतराता, छोटी-बड़ी नहरों के जटिल जाल से घिरा हुआ छोटा-सा नगर कश्मीर की डल झील की याद ताजा कर देता है। सड़कों की जगह नहरों ने ले रखी है। शिकारों में फेरीवाले अपना समान लिये बेचते फिरते हैं। सड़कें भी हैं, लेकिन कम और तंग। सबसे

अधिक चहल-पहल 'आल्तो' नामक पुल के आस-पास दिखती है। मेहराबों से सजा हुआ, वेनिस की प्रमुखतम नहर 'ग्राण्ड कैनाल' पर निर्मित यह पुल मध्यकालीन युगों की स्मृति संजोये हुए है। वेनिस नगर भी, फ्लोरेंस की तरह ही, कला-क्षेत्र में अग्रणी रहा है। यहां के कलाकार चटकीले रंगों के चित्र, विशेषकर प्राकृतिक दृश्यों को, निरूपित करने में सारे इटली में प्रसिद्ध रहे हैं। 'कैनालेत्तो' एवं 'गुआर्दी' नामक वेनिस के चित्रकार अपने प्राकृतिक दृश्यों के लिए विश्वविख्यात हैं। वेनिस की चित्रवीथिकाओं, विशेषकर 'अकाडेमिया' में, अच्छा-खासा संकलन देखा जा सकता है और रोम के सेंट पीटर्स की तरह, वेनिस का 'सेंट मार्क' नामक गिरजा अपने मोजाइक चित्रों एवं प्रतीकों के भव्य अलंकरण के लिए सारी दुनिया के पर्यटकों को बराबर खींचे रहता है।

संयोगवश रोम और वेनिस के प्रवास के दौरान वहां के विश्वविद्यालयों द्वारा व्याख्यान के लिए मुझे आमंत्रित किया गया था। वहां के विद्यार्थियों की भारतीय कला एवं संस्कृति में अभिरुचि देखकर मैं दंग रह गया। इतनी अधिक उत्सुकता बढ़ी कि एक घंटे के लिए निश्चित व्याख्यान जिज्ञासावश तीन घंटे तक चलता रहा।

इटली का हर छोटा-बड़ा नगर अपनी कलाकृतियों का संचय रखता है। अतः हर एक के विषय में कुछ पन्नों में चर्चा संभव नहीं है। मात्र उल्लेख ही किया जा सकता है। नेपिल्स समुद्र से लगा शहर बंबई का-सा लगता है और बहुत बड़ी कलादीर्घा के लिए प्रसिद्ध है। उत्तरी इटली के 'मिलान' नामक शहर में लेवनार्दो की बहुत-सी मौलिक रचनाएं देखने को मिलीं। विशेषकर 'द लास्ट सपर' जो अब काफी क्षतिग्रस्त हो गयी है।

'पीसा' का सफेद पत्थर से बनाया गया 'लीनिंग टावर' भी बड़ा आकर्षक लगा। इसे दुनिया के ७ आश्चर्यों में माना जाता है, जिसे देखने संसार भर से लोग यहां आते हैं। एकदम तिरछी बनायी गयी यह मीनार सचमुच एक अचंभा लगती है साथ-साथ गलेलियों के सिद्धांत की पुष्टि भी करती है। प्रत्येक दर्शक को मीनार के ऊपर चढ़ जाने के लिये काफी प्रवेश शुल्क देना पड़ता है, जिससे बहुतेरे जिज्ञासु इसे बाहर से ही देखकर लौट जाते हैं। इस मीनार के सामने निर्मित श्वेत संगमर्मर का गिरजाघर भी वास्तुकला की उत्कृष्ट उपलब्धि है। समुद्र के किनारे निकाले गये प्राचीन 'हरकुलेनियम' एवं 'पाम्पेई' नामक नगरों के अवशेषों में प्राचीन रोमन कला के भग्नावशेषों को देखकर ग्रीस एवं रोम की प्राचीन शास्त्रीय कालीन परंपराओं की याद ताजा हो गयी। ये स्थान पुरातत्ववेत्ताओं को विशेष आकृष्ट करते है, सामान्य पर्यटकों को नहीं।

इटली में इस तरह एक नगर से दूसरे नगर तक कूद-फांद करते हुए अंत में स्विट्जरलैंड के नैसर्गिक सौंदर्य का दर्शन

ने जा पहुंचा । महंगाई क्या है, यह वहीं मझ में आया । एक केला दस रुपये का ! हां, चौंकिये मत । बिलकुल सही बयान र रहा हूं । आंखों देखी । सबसे पहले लुगानो पहुंचा । वहीं की पहाड़ियों, लों एवं बगीचों के शांत वातावरण में मुच ऐसा लगा कि स्वर्ग में आ गये हैं । वट्ज़रलैंड की राजधानी 'बर्न' में पहुंच-र और भी अच्छा लगा । एक छोटा-सा ारा, साफ-सुथरा शहर किसी के भी ल को मोह लेने वाला । लेकिन जिनेवा ौर ज्यूरिख अपनी बड़ी-बड़ी झीलों के वजूद उतने आकर्षक न लगे, जितना नके विशेष में पढ़ा था । वहां संयुक्त राष्ट्र-घ के भवन को भी देखा, लेकिन कोई खास त नजर नहीं आयी । हां, रेल से यात्रा रते हुए स्विट्ज़रलैंड की धरती और काश बड़े रमणीक लगे । अनगिनत ुरंगों एवं घाटियों के बीच रेलगाड़ी यात्रा करते हुए ऐसी मनोहर प्राकृतिक टाएं देखने को मिलती हैं कि पर्यटक वाक् रह जाता है । वहां लोग संपन्न हैं । म आदमी इटली और स्विट्ज़रलैंड नों देशों में सुखी हैं । इटली, तुलनात्मक ष्टि से उतना समृद्ध न होते हुए भी खुश-ल है । क्योंकि आबादी पिछले बीस वर्षों बराबर उतनी ही बनी हुई है । इटली आम आदमी मिलनसार है, जरा किसी कुछ पूछ लीजिये, आपको पूरी दिलचस्पी मदद करेंगे । कम-से कम मेरा तजुर्बा रहा है ! हां, अपने इटली प्रवास के दौरान मैं सिर्फ एक बार मिलान रेलवे स्टेशन में स्विट्ज़रलैंड से रात में १२ बजे लौटने पर एक लफंगे के चक्कर में पड़ने से बाल-बाल बचा । आधी रात के समय एक गिरोह सक्रिय था । भगवान ने ही बचाया उसके चक्कर से वर्ना मुझे अपने पासपोर्ट, विदेशी मुद्रा आदि सभी से हाथ धोना पड़ता । सारी रात जागते काटी और सबेरा होने पर चैन की सांस ली । कुछ दिन रोम में और रुककर जो कुछ खास रह गया था, देखा और वहां से सीधा भारत लौट आया ।

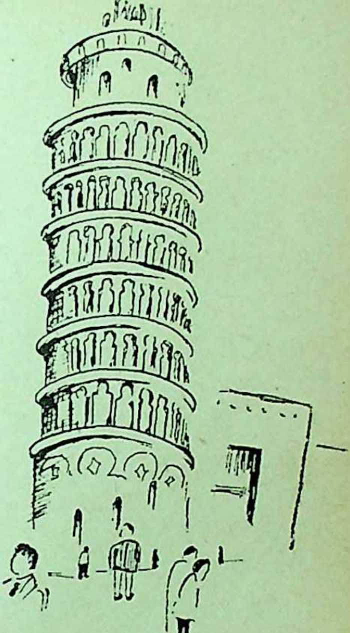

पीसा का लीनिंग टावर
(दुनिया का ७ वां आश्चर्य)

इटली की सरकार के प्रति मैं आभारी

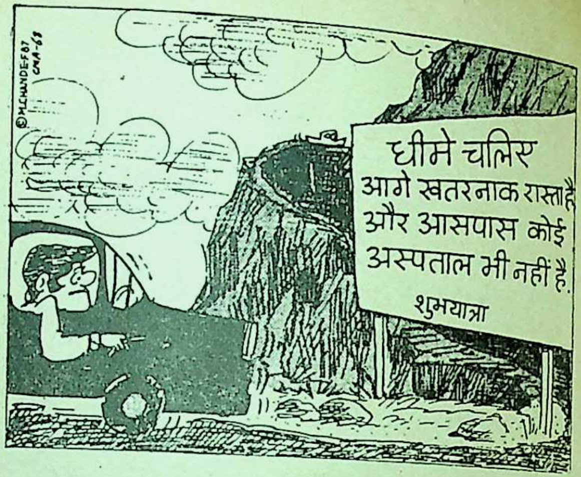

हूं, जिसने मझे इटली में कलाकृतियों के अध्ययन, के लिए फेलोशिप प्रदान की। साथ ही भारत सरकार के प्रति भी, जिसने मझे हवाई-यात्रा टिकट प्रदत्त किया। और मैं रोम स्थित भारतीय राजदूत श्रीयुत अजमानी साहब का भी कृतज्ञ रहूंगा, जिन्होंने मेरे रोम प्रवास के दौरान मेरे ठहरने के लिए अपने एक फ्लैट के द्वार खोल दिये थे, जिसके फलस्वरूप मैं रोम की कला-संस्कृति का और अधिक समय तक अध्ययन कर सका। इतना घूमने-घामने से इटालियन कला-संस्कृति एवं सौंदर्य के प्रति मेरा सम्मोहन उत्तरोत्तर बढ़ता गया। सच बात तो यह है कि इटली से लौटने की इच्छा ही नहीं हो रही थी। वहां का सौंदर्य ही कुछ ऐसा है, जो दर्शक को सहज ही अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है। सुप्रसिद्ध अंग्रेजी कवि कीट्स और शेली ने अपने काव्य में इटली की धरती और वहां के सौंदर्य के जो गुण-गान गाये हैं वे कवि की काल्पनिक उड़ान से उत्प्रे न होकर ठोस यथार्थ सत्य से गर्भित हैं उनके काव्य में इटली की महिमा-ग एवं सौंदर्य के विषय में जो कुछ पढ़ा वहां जाकर उसे प्रत्यक्ष अपनी आंखों देखा और शत-प्रतिशत सत्य पाया। नगर में ही इन दोनों विश्व-विख्यात म विभूतियों की समाधियां हैं। इटली विदा होने के पहले वहां भी गया औ नतमस्तक होकर उनके प्रति अपनी श्र जलि अर्पित की। भारत लौटने पर ऐ लगा जैसे अपना सूक्ष्म शरीर वहीं इट के पीछे छोड़ आया हूं। सचमुच लौ के पुजारियों के लिये इटली स्वर्ग है। भी जाकर देखिये एक बार। कला औ सौंदर्य का यह देश आपको निश्चय ही सम्मोहित कर लेगा, इसमें किंचित सं नहीं !

—सी-१, २१ जीवन शांति, सांताक्रूज (प.)
एस. वी. रोड, बम्बई-४०००५

☐

हुल्लड़ कवि के दोहे

◆

सौ बातों की बात सुन, एक अरब की एक,
आनंदित मन पा गया, जिसने रखा विवेक।

सागर में चंद्र है, घटे-बढ़े सौ बार,
दिन तेरा मन गले वो है मंगलवार।

के वुद्धू रहे समझाया सौ बार,
बनाये जो तुम्हें वो होता बुधवार।

पा बिन ना हुआ, मानव का उद्धार,
कला का देवता करता बेड़ा पार।

देव तो पीर है करुणा का त्यौहार,
ार को सूर्य बन दे प्रकाश के हार।

को काहे कोसता, जला नेह के दीप,
मागर में छिपे हैं कुछ मोती कुछ सीप।

-चुगली-भर्त्सना, क्रोध-ईर्ष्या-काम,
के ये ही लक्ष्य हैं, उनकी जाने राम !

भावना सम रमे तब बनता संगीत,
आंसू के प्रीत ज्यों, बिन करुणा के गीत।

होना था हो चुका, भूल उसे नादान,
जीते हैं भूत में बन जाते श्मशान।

मानव अर्जुन यहाँ परम आत्मा कृष्ण,
ज्ञान से हल हुए, मन के सारे प्रश्न।

बात कहो संक्षेप में, मत हांको तुम दून,
पैसा ना हो पास में, जग लगता है सून।

जैसा युग वैसा धरम, अवसर को पहचान,
कलयुग में तो यूं लगा, पैसा है भगवान।

बिन पूछे क्यों बोलता, चुप में मज़े हज़ार,
बहुत चीखना रोग है, चुप रह, मेरे यार।

बहुत सफलता बुरी है, भेजा करे खराब,
जो कांटों में खिला है, असली वही गुलाब।

देरी कर दो क्रोध में, टल जाता है क्रोध,
खुद अपनी ही आग में जल जाता है क्रोध।

बात बात में बात से, जग जाता है क्रोध,
मन वैरागी मौन हो, मग जाता है, क्रोध।

कहा भाग्य ने कर्म से, रहो सुमति के साथ,
सौ हाथों से प्राप्त कर, बांट हज़ारो हाथ।

कवि की दुनिया अलग है, अलग स्वप्न संसार,
कवि के आंसू में छिपा सागर एक अपार।

रब ने जो खाते लिखे, उसमें भूल न चूक,
उसका हर निर्णय सही सह ले होकर मूक !

— ५०३, चेतना, प्रताप नगर, अंधेरी (प.), बंबई-५८ —

◆

चीनी कहानी

नया जमाना

□

कू - यू

जब फांग की मां और लड़की के पिता को मालूम हुआ कि दोनों युवक-युवती एक-दूसरे को बहुत ज्यादा चाहते हैं तो उन्होंने उनका विवाह कर देने में जरा भी एतराज नहीं किया। फांग बहुत ही सुंदर युवक था। वह जिले का सरकारी कर्मचारी था और लड़की फेंगलान खेतों में काम करने वाली निपुण के रूप में प्रसिद्ध थी। गांव के किसान उन दोनों को बहुत चाहते थे और उनके विचार से भी यह एक आदर्श जोड़ी थी।

वे दोनों अलग-अलग गांव के रहने वाले थे। एक गांव से दूसरे में जाने के लिए केवल एक छोटी-सी नदी पार करनी पड़ती थी। जब से इन दोनों का परिचय हुआ, फांग फेंगलान से मिलने का कोई न कोई बहाना ढूंढ़ ही लेना था। गांव की बूढ़ी औरतें फांग के बार-बार अपने गांव में आने पर बातें किया करती थीं।

शादी के पहले ही लड़के-लड़कियों का इस तरह मिलना बिलकुल नयी बात है, वे कहतीं।

शादी के कुछ दिन पूर्व से ही फेंगलान के पिता ने हिसाब लगाना शुरू किया कि कितना गल्ला बेंच देने से लड़की को दहेज दिया जा सकेगा। एक दिन बड़े सवेरे उठकर उसने अनाज के कुछ बोरे गाड़ी पर लादे। नाश्ता करके शहर की मंडी जा, अनाज बेचकर फेंगलान के लिए कुछ चीजें खरीदने का उसका इरादा था। पर जैसे ही वह जाने को तैयार हुआ, फेंगलान ने उसे टोक दिया—'बापूजी, आप क्या करने जा रहे हैं?' उसने पूछा, 'बड़ी मुश्किल से इस साल हम लोग थोड़ा-सा अनाज बचा पाये हैं, और ग्राम-सभा के लोगों ने यह निश्चित नहीं किया है कि अगली गेहूं की फसल आने तक प्रत्येक व्यक्ति पांच टान (चीनी माप) अनाज सुरक्षित रखेगा?'

उसका पिता गाड़ी खड़ी करके अपना पाइप भरने लगा।

'वृद्ध होते हुए भी आप परिवार के लिए हमेशा कठिन परिश्रम करते रहते हैं' फेंगलान ने कहा।

'फेंगलान, मैं वहीं करूंगा, जिसे तुम ठीक समझोगी।' इसके आगे वह कुछ बोल न सका। कुछ देर तक चुपचाप पाइप पीता

बाद उसने कहा, 'मैं तुम्हारे लिए चार ढे कपड़े, कुछ फर्नीचर, शीशा और डर वगैरा खरीदने की सोच रहा था। तुम यह चीजें पसंद नहीं करोगी!'

फेंगलान यह सुनकर हंसने लगी और ने गाड़ी से बोरे उतारना शुरू किया। का पिता उसकी ओर ताज्जुब से देखता ।

'बापूजी, फांग ने क्या कहा था, यह भूल गये। उसने कहा था कि हम लोग वाह में कुछ भी खर्च न करेंगे। उस गांव कोई ऐसा घर नहीं है, जिसमें आवश्यक चर न हो, तब फिर फालतू मेज और यां खरीदने की क्या जरूरत? यह न खेत जोतने में काम आयेगा और न फसलें उगाने में। और उन छपे हुए कपड़ों को पहनने का मुझे अवसर कब मिलेगा? यह तो पुराना रिवाज है, जब शादी के तीन बरस तक पत्नियों को खेतों पर काम करने की आज्ञा नहीं दी जाती थी। मैं तो जब फांग-परिवार में प्रवेश करूंगी, अवश्य ही उनकी खेती में सहायता करूंगी। और तब मुझे चेहरे पर पावडर लगाने का कहां मौका मिलेगा? फांग एक सरकारी कर्मचारी है, वह इसे पसंद नहीं करेगा और न ही मैं इसे पसंद करती हूं।'

उसका पिता चबूतरे की सीढ़ी पर बैठ गया। सोचने के कारण उसकी भवें तन गयीं और सिर नीचे की ओर झुक गया था। फेंगलान उन बोरों को उतारकर

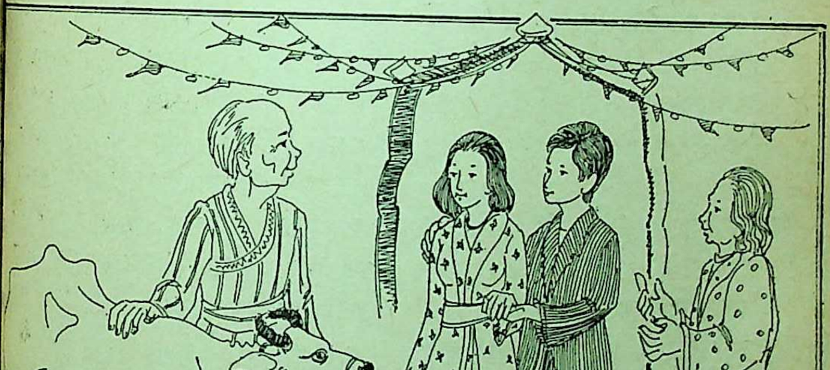

सायबान के नीचे रख रही थी।

'अगर हम अनाज नहीं बेच सकते, तो अपना छोटा बैल ही क्यों न बेच दें। गाड़ी खींचने के लिए हमें दो बैलों की तो आवश्यकता है नहीं।' उसके पिता ने प्रतिवाद करते हुए कहा।

'यह नया बैल न बेचा जाय। इसके तो और भी अधिक कारण हैं। पैदा होने के समय से मैंने इसे पाला-पोसा है। इस समय यह एक साल का है। बहुत ही जल्द हम लोग इसे काम में ला सकते हैं। तब फिर इसे आप क्यों बेच देंगे? फांग के पास कोई बैल नहीं है, आपके सिवा वह किससे बैल मांगने जायेगा?'

पिता उसकी बात का कुछ जवाब न दे सका। उसे यह भय हुआ कि कहीं पुराने रीति-रिवाजों में विश्वास रखने वाले किसान उसका मजाक न उडाने लगें। कोई दूसरा उपाय उसको समझ में न आता था।

०००

शादी के दिन सुबह फांग की मां मुर्गे की पहली आवाज के साथ उठ बैठी। अपने कपड़े संभाल, वह फांग के कमरे में आयी। जहां वह सो रहा था। शादी के बाद यही बहू का कमरा था।

'उठो, तुम अभी तक पड़े सो रहे हो। कमरे को तो देखो, कैसी मनहूसियत छायी हुई है।' उसने, गुस्से से कहा और माथे पर हाथ रख फर्श पर बैठ गयी।

फांग अपनी आंखें मलता हुआ उठ बैठा। 'अरे मां, अभी तो ठीक से सबेरा ही नहीं हुआ, इतने तड़के से तुम क्या करने लगीं?' फांग ने कहा।

'मैं सोयी कैसे रह सकती हूं? मैं पूछती हूं कि क्या यह घर ऐसा मालूम पड़ रहा है, जिसमें शादी होने जा रही हो?'

'अच्छा, तो तुम्हारा यह मतलब है कि घर के सामने पालकी नहीं है? लेकिन मां, यह तो सब पुरानी बातें हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपनी खेती के काम में रात-दिन लगा हुआ है। कौन पालकी के पीछे परेशान होता फिरे। जब एक साधारण किसान भी इन रिवाजों को नहीं पसंद करता। तब मैं एक सरकारी कर्मचारी होकर क्यों लकीर का फकीर बना रहूं?'

'तुम क्या कह रहे हो? मेरे दिमाग में गोबर नहीं भरा है।' उसने गुस्से से चटायी पर हाथ पटकते हुए कहा, 'बहू चाहे पालकी पर आये न आये, मुझे इसकी तनिक भी परवाह नहीं। पर यह बात मेरी समझ में नहीं आयी कि अब तक उनके यहां से दहेज का सामान क्यों नहीं आया? जब मेरी शादी हुई थी, तब तुम्हारी नानी ने मुझे एक बक्सा खरीद देने के लिए अपने बर्तन तक बेच डाले थे।

पुत्र ने अपनी मां को समझाते हुए कहा- 'मां, यद्यपि यहां कोई अकाल नहीं पड़ा है, फिर भी हमारे देश में अब भी कुछ ऐसी जगहें हैं, जो अकालग्रस्त होती रहती हैं और उनकी सहायता के लिए हमें अनाज सुरक्षित रखना चाहिये। इसके अतिरिक्त, यदि फेंगलान के पिता अपना सारा अनाज

दहेज देने के लिए बेच डालें, तब फिर वह वसंत में क्या करेंगे ?'

ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे मां ने उसका एक शब्द भी नहीं सुना । वह अपने मन में ही कुछ भुनभुनाती रही । फिर गुस्से से बोली, 'मक्खीचूस घी में पड़ी मक्खी भी निचोड़ लेता है। दुपहर को जब औरतें दहेज का सामान देखने आयेंगी, तब क्या मैं अपना मुंह पीटूंगी ? मैं चाहे गरीब घर की ही क्यों न होऊं, मैं यह सब बरदाश्त नहीं कर सकती ।'

'मां, अब नया जमाना है,' फांग ने कहा–'हमें अब पुराने रिवाजों को गले नहीं लगाये रहना चाहिये । तुम जानती हो, हमारे घर में कोई बैल नहीं है । अगर फेंगलान दहेज के सामानों से भरे लाल रंग के दो चमकीले बक्से भी लाये, तो क्या वह हमारे खेत जोत-बो सकते हैं ।'

'तुम तो हमेशा खेत और जमीन की ही बात किया करते हो ?' मां ने पुत्र के तर्क से बिलकुल अप्रभावित रहकर कहा, 'मेरी इतनी उमर हो गयी, मैं तो यह कभी भी न जान सकी कि जमीन के वास्ते किन-किन चीजों की जरूरत होती है । यह बात तो ठीक है कि हमें जमीन पर काम करना है, लेकिन हमें लोगों को मुंह दिखाने लायक भी रहना चाहिये । जीवन में ऐसा सुनहरा मौका क्या बार-बार आता है ?'

इस वक्त तक सुबह हो गयी थी और धूप चढ़ आयी थी । फांग ने हाथ-मुंह धोकर कपड़े पहने ।

'मां !' उसने कहा, 'आज के समय में सबसे अधिक मुंह दिखाने वाले वे व्यक्ति हैं, जो उत्पादन-कार्य करते हैं । ऐसा पहले नहीं था । जब हम, सब लोग ठीक से रहने लगेंगे, तब हम लोगों की इच्छानुसार कुछ चीजें खरीद देंगे । मेरे विचार से इसमें कोई विशेष देर नहीं होगी ।'

'मूर्ख !' मां ने डाटते हुए कहा, 'लड़की घर में आ जाने के बाद तुम समझते हो, वह कुछ खरीदकर देंगे ?'

'तो फिर मैं लड़की से शादी कर रहा हूं, उनके दहेज से नहीं ।' फांग ने अधीरता के साथ कहा ।

मां यह सुनकर अप्रतिभ हो गयी, बोली, 'तब फिर तुम जानो, तुम्हारा काम जाने मेरे बिना भी यह शादी हो सकती है । मैं कुछ दिनों के लिए तुम्हारी नानी के यहां जा रही हूं ।' उसने बड़े रोब से कहा और दरवाजे की तरफ तेजी से बढ़ने लगी ।

वहां गांव के मुखिया खड़े थे, जो दरवाजा खटखटाने ही वाले थे । वह उधर से होकर विवाह-मंडप की ओर जा रहे थे, जहां शादी होने वाली थी । कुछ ही दूर जाने पर जब उन्होंने सुना कि मां और बेटे दोनों लड़ रहे हैं तो वह लौट आये और पास आने पर मालूम हुआ कि दोनों में खूब झगड़ा हो रहा है ।

गुस्से से तमतमाते चेहरे और दुःख के साथ मां ने मुखिया की तरफ देखा ।

'यह तुमने ठीक नहीं किया ।' मुखिया शू ने समझाते हुए कहा, 'उदाहरण के लिए, मान लो दो लड़कियां हैं । जिनमें से

एक के पास तो उपहारों के सामान से भरे हुए बक्से हैं और दूसरी के पास उसके गुणी और समर्थ हाथों के अलावा कुछ भी नहीं है। तो तुम किसे पसद करोगी ?'

कुछ शांत होते हुए मुस्कराहट के साथ मां ने कहा–'गांव के लोग तो हमेशा ऐसे लोगों को पसंद करते हैं, जो कड़ी मेहनत करते हैं। लेकिन ऐसे सवाल पूछने का आपका मतलब क्या है ?'

○○○

नाश्ते वगैरा के बाद विवाह-मंडप को अत्यंत आकर्षक ढंग से सजाया गया। दीवारों में बंदनवार लटकाये गये और सबके बीच में माओ का बड़ा चित्र लगाया गया। जिला सरकार से भेंट का सामान आया। मंडप इतना खचाखच भरा था कि तिल रखने की जगह न थी। हर आदमी इतने गौर से देख रहा था, जैसे उसकी दोनों आंखें यह सब देखने के लिए काफी न हों। स्त्री और पुरुष, बच्चे और जवान बड़ी खुशी से बातें कर रहे थे।

एक बूढ़ी स्त्री ने कहा, 'बहू अभी तक क्यों नहीं आयी ? क्या यह लोग पालकी नहीं ला रहे हैं ? चलो, अच्छा ही है। जब मेरी शादी हुई थी, तब तो मैं उस पर बैठे-बैठे परेशान हो गयी थी। यह चीज खर्चीली भी है। यह तरीका अच्छा है, खर्चे और परेशानी दोनों से बच जायेंगे।'

एक बातूनी औरत फांग की मां के पास पहुंची और पूछने लगी कि फांग के दहेज का सामान कहां है ? वह गुस्से से लाल हो गयी कुछ कहने के लिए उसने मुंह खोला, पर मुंह से एक भी शब्द न निकला। तब वह दूसरी ओर चली गयी, जैसे कि उसने सुना ही नहीं।

जब फेंगलान मंडप में आयी, तब बाजे-वालों ने मंगलगान किया। गांव के रिवाज के अनुसार उसका पिता उसके साथ नहीं आया था। गांव के मुखिया शू उसका स्वागत करने और विवाह संपन्न कराने के लिए उठे। लोग उनके चारों ओर मधुमक्खियों की नाईं टूट पड़े। स्त्री समाज की चेयरमैन ने बड़ी मुश्किल से उसे लोगों की भीड़ के बीच से निकाला।

फेंगलान मामूली नीले रंग के कपड़े का एक जैकेट और उसी के जोड़ का एक पाजामा पहने थी। किसान लड़कियों की तरह उसके सिर पर एक छपा हुआ कपड़ा बंधा था। वह आकर फांग की बगल में बैठ गयी। उसकी आंखें खुशी से चमक रही थीं। लोग उसे अच्छी तरह देखने के लिए एक-दूसरे को धक्के दे रहे थे और अपनी गर्दन ऊपर उठा रहे थे। लड़कों ने उन्हें देखकर तालियां बजायीं।

'दोस्तो, आप लोग शांत रहें।' शू ने कहना शुरू किया, 'शादी शुरू होने के पहले मैं बताना चाहता हूं कि फांग और फेंगलान ने एक-दूसरे को अपनी इच्छा से पसंद किया है। वे दोनों एक साथ काम करते थे और तभी एक-दूसरे की योग्यता से प्रभावित हुए। उन दोनों में प्रेम हो गया और अंत में उन्होंने विवाह करने का निश्चय किया।

आप सब लोग जानते हैं कि फेंगलान खेती के काम में कितनी होशियार है। उसने सरकार की अन्न संरक्षण योजना पर ध्यान दिया और अपने खेत के उत्पादन को बढ़ाया। इसी कारण उसने दहेज पर मूर्खता से रुपया खर्च करना ठीक न समझा।'

'अच्छा, यह बतायें कि उन दोनों में प्रेम कैसे हो गया?' एक युवक किसान ने बात काटते हुए पूछा।

यह सुनकर लोग ठहाका मार कर हसने लगे।

इस शोरगुल के वातावरण में इसी समय एक ऐसे आदमी ने प्रवेश किया, जिसकी मूंछें काली और ऐंठी हुई थीं, जिसकी उमर चालीस के करीब थी और उसके साथ एक बैल था। यह फेंगलान के गांव का मुखिया, लो, था। वे दोनों उसका स्वागत करने के लिए आग आये।

'यह बैल आप क्यों लाये हैं?' फांग ने पूछा।

'यह फेंगलान का दहेज है,' लो ने मुस्कराते हुए कहा। फिर उसने फांग की मां को पुकारते हुए कहा, 'आइये, देखिये, लड़की के पिता ने यह भेंट भेजी है।'

उसकी मां शीघ्रता से आंगन की ओर आयी। पर जब उसने एक सुंदर बाल वाले और तगड़े बैल को देखा, तो उसकी समझ में नहीं आया कि वह इसका क्या करे?

'यह बैल फेंगलान के घर का है' लो ने समझाते हुए कहा, 'फेंगलान की शादी फांग के साथ हो रही है और शादी के बाद उसे आप लोगों के साथ रहना और काम करना है। आपके पास बैल न होने के कारण खेती के काम में कठिनाई होगी। इसलिये फेंगलान के पिता ने इसे दहेज के रूप में भेजा हैं।'

फांग की मां के यहां कभी कोई बैल न था। उसने हिचकिचाहट के साथ हाथ बढ़ाकर बैल के माथे को थपथपाया। वह पूंछ हिलाने लगा और खुरों को जमीन पर पटकने लगा। उसका सारा शरीर भूरे रंग का और सीना सफेद था। देखने से ही मालूम पड़ता था कि यह बैल बहुत ही मजबूत और उपयोगी साबित होगा। मारे खुशी के हंसने के कारण उसका पोपला मुंह खुला ही रह गया। फिर अचानक एक विचार उसके दिमाग में आया–'मेरा लड़का तो कभी घर पर रहता ही नहीं है और मैंने कभी बैल की देखभाल की नहीं है। इसलिये यह बैल हमें बड़ी मुसीबत में डाल देगा।' उसने परेशानी की हालत में कहा!

यह सुनकर सब लोग हंसने लगे। शू ने कहा–'मालूम पड़ता है कि मारे खुशी के तुम पागल हो गयी हो। क्या तुम भूल गयीं कि तुम्हारी एक बहू एक आदर्श किसान बालिका है और उसने ही इस बैल को पाला है।'

कुछ बड़े-बूढ़े इस बैल को देखने चारों ओर इकट्ठे हो गये। उन्होंने उसका मुंह देखा। उसके खुर देखे और उसके मुलायम बालों को थपथपाकर एक मत से उसकी प्रशंसा की।

कोई भी किसान इतने अच्छे और खूब-

'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' की चंदे की दरें

* एक प्रति (भारत में) रु. ५.००

भारत में (साधारण डाक से)

* एक वर्ष : ५५ रु.; दो वर्ष : १०० रु.; तीन वर्ष : १४० रु.

विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)

* पाकिस्तान, श्रीलंका, रु. १२०; अन्य देश रु. १८५

विदेशों में हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए)

* प्रत्येक देश के लिए रु. ३१०

* बम्बई से बाहर के चेक भेजने वाले रु. ६ अधिक भेजें।

– व्यवस्थापक, नवनीत हिंदी डाइजेस्ट, भारतीय विद्या भवन, बम्बई-४००००७

सूरत बैल पालने वाली लड़की की प्रशंसा किये बिना न रहा। 'एक आदर्श काम करने वाला अपना सब काम आदर्श रूप में ही करता है' उन्होंने अपनी राय प्रकट की।

'इतनी अच्छी नयी कामकाजी बहू को पाकर हम लोग धन्य हो गये है। अब हम लोगों के उत्पादन-कार्य में खूब तेजी आ जायेगी।' स्त्री समाज की चेयरमैन ने अपनी सदस्याओं से कहा।

'हम लोगों को ऐसे दहेज का ख्याल पहले कभी नहीं आया।' एक स्त्री ने अत्यंत आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा, 'हम लोग अपनी शादियों में जो चीजें साथ लाये थे, वह इतनी बेकार और अनुपयोगी थीं कि उनमें से किसी भी वस्तु की तुलना इतने सजीव और उपयोगी उपहार से नहीं की जा सकती।'

इस खुशी और उत्साह के मौके पर सब लोगों ने जोर दिया कि फांग की मां भी अब कुछ कहे।

'तुम्हारे परिवार में एक सदस्य की वृद्धि हुई है। इस खुशी के मौके पर तुम्हें जरूर कुछ कहना चाहिये।' उन्होंने कहा और उसे लड़के व बहू के सामने लाकर खड़ा कर दिया।

मां ने मुस्कराते हुए पहले फांग और फेंगलान की ओर, और फिर भीड़ की ओर देखा। उसका हृदय बहुत ही द्रवित हो गया। वह बोली–'यद्यपि मैं पुराने विचारों की हूं, फिर भी इस नये जमाने की नयी रीतियां ही होनी चाहिये...'

सब लोगों ने हसते हुए जोर से ताली बजाकर उसके विचारों का स्वागत किया।

और तबसे लोग बराबर इस विवाह के नये रिवाज की चर्चा करते है।

[अंग्रेजी से अनुवाद : प्रभाती]

उर्दू व्यंग्य-कथा

शहतूत

शौकत थानवी

घर में शहतूत का वृक्ष है। और शहतूत मौलवी साहब की दुखती हुई रग है। लड़कों को तो आप जानते हैं कि शरारत का एक बहाना मिलना चाहिये। और जब कोई बूढ़ा ही दीवाना बन जाये, तो उन शैतानी गिरोह के स्वयंसेवकों को बहाना ढूंढने की भी जरूरत नहीं रहती। अतः यही होता है कि मौलवी साहब तशरीफ तो लाते हैं लड़कों को पढ़ाने के लिए, मगर अपने साथ शहतूत का हंगामा लेकर तशरीफ लाते हैं। यह बहुत मामूली ढंग से आरंभ होकर होते-होते अच्छा-खासा बलवा बन जाता है और ऐसी भयानक अवस्था प्राप्त कर लेता है कि मौलवी साहब अपने उच्चस्तर और वयोवृद्धता को एक ओर रखकर पुलिस की तरह मध्य में आ कूदते हैं और लड़कों की यह अवैध भीड़ 'शहतूत-शहतूत' के नारे लगा करके वास्तव में लाठी चार्ज के योग्य हो जाती है। यूं मौलवी साहब को देखिये तो बहुत सभ्य पुरुष नजर आते हैं। सिर के बालों से वयोवृद्ध लगते हैं। आंखों के सुरमे से गंभीरता की लहर पैदा होती है। दाढ़ी तो आप जानते ही हैं कि वयोवृद्धता का चिह्न है और उन सब पर यह तर्क है कि जब कोई उसका पति अपनी पत्नी की साड़ी का साफा बांध लेता है, तो यूं भी भारी भरकम हो जाता है। और यदि अपने साथ लट्ठ भी रखे, तो रोब भी घुलामिला रहता है। सारांश यह है कि यदि शहतूत की दृष्टि से ओझल कर दिया जाये, तो मौलवी साहब हर तरह से विश्वसनीय दिखायी देते हैं। मगर खुदा जाने दिमाग का कौन्-सा पुर्जा ढीला है कि शहतूत का नाम लेते ही मालूम यह होता है कि किसी ने बारूद के ढेर में दियासलाई लगा दी। अर्थात् मौलवी साहब इंसानी सूरत के घनचक्कर बनकर बहक जाते हैं और फिर काबू में नहीं आते।'

होता यह है कि आपने आकर आवाज दी और सब लड़के अपनी-अपनी पोथी-पट्टी बगल में दबाकर बहुत शालीनता के साथ उनके पास पहुंच गये और सम्मानपूर्वक अभिवादन करके सामने बैठ गये। मौलवी साहब भी गंभीर बनकर पढ़ाने के लिए बैठे और शुरू कर दिया पढ़ाना। अब लड़कों ने मौलवी साहब से नजर बचाकर एक दूसरे को संकेत किया और संकेतों में कुछ निश्चय करके एक लड़के ने कहा, 'मौलवी साहब! फारसी में उसको क्या कहते हैं?'

मौलवी साहब ने चश्मे के अंदर से घूरकर कहा, 'किसको क्या कहते हैं ?'

लड़कों ने कहा, 'उसको, जिसका नाम लेने पर आप नाराज होते हैं ।'

मौलवी साहब ने कहा, 'कल मैंने खूब अच्छी तरह समझा दिया है कि मैं न तो नौकरी की परवाह करता हूं और न किसी से डरता हूं । यदि तुम लोगों ने इस गुस्ताखी का सिलसिला जारी रखा तो इसका नतीजा यही होगा कि एक-आध की मौत मेरे हाथों आयेगी और मैं फांसी पर चढ़ जाऊंगा । मगर तुम लोग नहीं मानते हो ।'

लड़के ने कहा, 'इसलिये तो मैंने नाम लिया नहीं है । परंतु यदि कोई इस नामाकूल चीज का नाम फारसी में पूछ ले तो मैं क्या जवाब दूंगा ।

मौलवी साहब ने कहा, 'बस तुम यही कह देना कि इसको फारसी में 'लगवय्यत' कहते हैं । प्रथम तो कोई सज्जन आदमी ऐसा नामाकूल प्रश्न ही नहीं करेगा और अगर पूछे तो 'लगवय्यत' ही कहना । इसलिए कि फारसी जुबान ऐसी गिरी हुई भाषा नहीं है कि, इसमें इन नामाकूल चीजों के नाम भी हों ।'

लड़के ने कहा, 'तो मौलवी साहब 'शिजर लगवय्यत' के अर्थ हुए शहतूत के वृक्ष ।'

अब मौलवी साहब बिजली की तरह तड़पकर उठे और उन्होंने अपना डंडा पागलों की तरह उठाया । इधर उनकी यह छोटी-सी पाठशाला तितर-बितर हो गयी । प्रश्न करने वाला लड़का तो खैर गया । मगर दूसरे लड़कों को भी जिंदगी खतरे में नजर आयी और वे मौलवी साहब और उनके लट्ठ की से दूर हट गये । स्वयं मौलवी साहब का गोला बने हुए लट्ठ थामे हुए लगे जिस घर में ऐसा नामाकूल वृक्ष हो दया की देवी नहीं आ सकती । कभी नहीं हो सकती । जो मुसीबत उस घर पड़े, कम है । जिस घर में ऐसी वस्तु को पाला-पोसा जाता हो, वहां लड़के ऐसे ही नालायक हो सकते हैं । उनको शिक्षा प्राप्त होगी न साहित्य । लिख सकेंगे, न पढ़ सकेंगे । बस मांगेंगे दर-दर की और भीख भी इन रादों को नहीं मिलेगी ।'

किसी लड़के ने जोर से कहा, मैं तो शहतूत नहीं कहता ।'

मौलवी साहब ने अपना लट्ठ उस ओर दे मारा और हलक फाड़कर 'नहीं कहता का बच्चा ! और यह तूने क्या है ?' लड़के खिलखिलाते हुए भागे । और मौलवी साहब ने फिर बड़ाना शुरू किया, 'ऐसी औलाद किसी को न दे । ये नालायक खानदान नाम डूबायेंगे और असभ्य कहलायेंगे उनकी यह करतूत उनको दुनिया और परलोक दोनों में जलील करेगी ।'

एक लड़के ने कहा, 'मौलवी साहब ! करतूत नहीं शहतूत कहिये, शहतूत !' मौलाना साहब पागलों की तरह उसकी

तरफ़ बढ़े और झपेट में असफल रहकर उन्होंने अपना सिर पीट लिया और लट्ठ धड़ाधड़ जमीन पर पटकने लगे। तात्पर्य यह कि अगर कोई बड़ा-बूढ़ा आ गया और उसने लड़कों को डांटकर मौलवी साहब को समझा दिया तो ठीक, अथवा मौलवी साहब इसी रूप में घर चले जाते हैं और लड़कों को सदैव की भांति मनोवांछित छुट्टी मिल जाती हैं।

एक दिन यह पूरा किस्सा बेगम ने हमको सुनाकर कहा कि 'मौलवी साहब लड़कों को पढ़ाने के लिए रखे गये हैं या इसलिये कि ये लड़के उनको इस तरह चुटकियों में उड़ाया और उंगलियों पर नचाया करें? लड़के तो खैर लड़के हैं मगर इन बड़े मियां को क्या हो गया है? जरा आप भी एक दिन यह तमाशा देखकर मौलवी साहब को समझाइये तो सही।'

मौलवी साहब की यह हालत सुनकर स्वयं हमको उनसे बहुत सहानुभूति पैदा हो गयी और एक दिन हमने यह पूरी लीला छिपकर देखी और जब इस लीला को बहुत अच्छी तरह देख चुके तो सामने आकर पहले तो लड़कों को खूब डांटा। उसके बाद मौलवी साहब को ठंडा करने की कोशिश करते हुए कहा, 'मौलाना, फिर भी यह किस्सा क्या है? आप ऐसा गंभीर और वयोवृद्ध महान व्यक्ति और उसकी यह हालत के टांग बराबर के छोकरों पर काबू नहीं।'

मौलवी साहब ने अपनी विद्वता को छिपाने और बनावटी रूप में इंसान बनने की कोशिश करते हुए कहा, 'साहब! बहुत अच्छा हुआ कि आज आपने स्वयं इन साहबजादों की ये हरकतें देख लीं। मेरा तो अब नाक में दम आ चुका है और मैं स्वयं यह चाहता हूं कि अब आपसे जाने की आज्ञा लूं। मैं वास्तव में इन लड़कों को नहीं पढ़ा सकता।'

हमने सब कुछ जानते हुए गंभीरता से कहा, 'फिर भी कुछ मालूम तो हो कि घटना क्या है?'

मौलवी साहब ने कहा, 'ये लड़के बहुत नालायक है।'

हमने कहा, 'यह तो आपका बड़प्पन है। अन्यथा ये लड़के किस योग्य हैं, मौलवी साहब!'

मौलवी साहब ने बिना समझे-बूझे जोश में कहा, 'आप लोग नाममात्र को उनकी ओर ध्यान नहीं देते और ये इस हद तक बिगड़ चुके हैं कि अब इनका सुधरना असंभव है।'

हमने कहा, 'फिर भी आप यह तो बताने का कष्ट करें। कि आपकी शिकायत क्या है?'

मौलवी ने कहा, 'किस्सा वास्तव में यह है कि ये लड़के उस अपवित्र वृक्ष की संगत में खराब हो रहे हैं।'

हमने कहा, 'कौन-सा नालायक वृक्ष, मौलाना?'

मौलवी साहब ने कहा, 'अजी वही नामाकूल वृक्ष, जिसमें वह आफत पैदा होती है।'

हमने ध्यान देने का अभिनय करते हुए कहा, 'मैं कुछ भी नहीं समझा।'

मौलवी साहब ने कहा, 'आपका मस्तिष्क पवित्र है। इसमें इस गंदी चीज का नाम प्रलय तक नहीं आ सकता।'

हमने कहा, 'यह चमेली का झाड़ है, यह गुल अब्बास है, यह क्रूटन है, यह नींबू, यह हजारा नारंगी है, यह अमरूद है, यह शहतूत है –'

अंतिम नाम पर मौलाना ने बड़ी जोर से 'आखथू' कहा और चेहरे पर गंभीरता ले आये तो हमने कहा, 'संभव है आपका आशय शहतूत से है।'

मौलाना ने फिर थूकते हुए घोर विरोध प्रकट करते हुए कहा, 'आप क्यों अपनी जुबान खराब कर रहे हैं? इस जुबान से आप खुदा का नाम लेते होंगे।'

हमने कहा, 'मगर मौलाना मेरे लिए तो शहतूत खुदा की भेजी हुई नेमतों में से एक है और उससे घृणा करना नेमत का अपमान करना है।'

मौलाना ने कहा, 'माफ कीजियेगा। मेरी राय यह थी कि आप बहुत योग्य आदमी हैं और साथ में आपको कला प्रेमी भी समझता था, मगर आज मालूम हुआ कि दूर के ढोल सुहाने होते हैं अथवा आपके मस्तिष्क में यह गुमराह करने वाला और अपवित्र विचार पैदा ही नहीं होता और आपकी जुबान से इस अपवित्र वस्तु की चर्चा ही कोई नहीं सुनता।'

हमने अपने आपको गंभीर बनाये रखा और आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा, 'वा
में मौलाना मैं बिल्कुल नहीं समझ रहा
कि आप क्या कह रहे हैं? मैं आपसे विचा
का आदान-प्रदान करना चाहता हूं औ
चाहता हूं कि आप मुझको भी अपने विचा
का बना दें।'

मौलवी साहब ने उत्साहपूर्वक कहा, '
आप वास्तव में यह चाहते हैं, तो सबसे प
यह काम कीजिये कि इस वृक्ष को आज
कटवा दीजिये। अन्यथा आपके घर पर
शोक की घटायें छायी रहेंगी और क
स्वस्थता और संपन्नता के दर्शन न होंगे।'

हमने कहा, 'मौलाना! यही तो
समझना चाहता हूं कि शहतूत के
यह सब बातें क्यों कर संभव हैं?'

मौलवी साहब ने फिर थूकते हुए कहा,
चीज़ का नाम अपनी जुबान से न लें! वा
में इसीके कारण आज मानव इस दुनि
में पड़े हुए हैं अन्यथा स्वर्ग में न होते?'

हमने कहा, 'मगर मौलाना! ह
सुना है कि गेहूं के कारण आदम जन्न
निकाले गये थे।'

मौलवी साहब ने कहा, 'यह एक
धारणा है और एक भारी भरकम ऐ
हासिक गलती है। गेहूं वाली कहावत
है। वास्तव में झगड़े की जड़ यह वृक्ष है
सूरत देखिये इस कंबख्त की तो बुज
होने लगे। मालूम यह होता है जैसे की
चढ़ने के लिए रेंगता हुआ चला आता है
वास्तव में यह नाली का कीड़ा है। लानत
जो इनको खाते हैं!'

वंदन करें

इस सुनहले प्रात का वंदन करें।
रोशनी के गात का वंदन करें।।
आज सहसा हो गयीं पुलकित धरा,
मलयजी मधु-वात का वंदन करें।।
स्नेह से सिंचित सरों में आज फिर,
हंस पड़े जलजात का वंदन करें।।
राग से पूरित दिशाएं हो गयीं,
कोकिला रस-स्नात का वंदन करें।।
इंद्रधनुषी रंग में मन रंग गया,
मौसमी उत्पात का वंदन करें।।
आम के सर मौर बंधने लग गये,
फागुनी बारात का वंदन करें।।
प्राण महके रूप-रस की गंध से,
शर्बती दिन-रात का वंदन करें।।
मधु-मिलन की यामिनी में आज हम,
प्यार की सौगात का वंदन करें।।

—डॉ. गणेशदत्त सारस्वत

आर. एम. पी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीतापुर-२६१००१, उ. प्र.

हमने कहा, 'देखने में तो आपका उदा- ठीक है। चाहे यह देखने में कीड़े जैसा गर इसका हलका-फुलका मजा... ।' मौलाना ने बात काटकर कहा, 'आप तुच्छ चीज का नाम न लीजिये। आपके की भव्यता नष्ट हो जाती है और एक कालस आपके मुख पर फैलती मैं देख रहा हूं। आश्चर्य है कि आप ास का पक्ष ले रहे हैं और आपने इस कंबख्त की विनाश लीलाओं पर कभी ध्यान न दिया। मोहम्मद शाह रंगीला इसे पसंद करते थे और नादिर शाह दुर्रानी इससे घृणा करता था। फिर देखिये क्या फल निकला! नादिर शाह को भी चुपके से यही चीज खिला दी गयी थी, तो उसके पेट में दर्द होने लगा और वास्तव में उसकी मौत इसी जालिम के कारण से हुई। और सुनिये मुगल साम्राज्य के पतन का कारण

यही कंबख्त था, जबकि जोधाबाई के लगाये हुए बाग में दक्षिण का एक वृक्ष परवान चढ़ा और मुगल परिवार ने इस वृक्ष के इसी मनहूस फल को खाया। इसको खाते ही उस राज्य के कदम डगमगा गये और अंत में देख लीजिये कि जिस राज्य के डंके बाज रहे थे, आज उसका कोई नाम लेवा भी नहीं है। तुर्की राज्य ने इस बेहूदा चीज का इस्तेमाल किया। तुर्कों को इसकी खबर हो गयी। नतीजा यह हुआ कि इनको गद्दी से उतार दिया गया और गाजी कमाल अतातुर्क जो इस चीज का घोर बैरी था राज्य पा गया और देख लीजिये कि कैसी तुर्कियां कर रहा है। स्वयं अंग्रेजों को देख लीजिये कि उनके राज्य में कभी सूरज नहीं छिपता था। इसका कारण क्या था? वास्तव में और कोई बात नहीं है। केवल वह इतनी सावधानी बरतते थे कि इस चीज को अपने लिए जहर समझते थे और आज तक किसी अंग्रेज ने इसको भूल कर भी नहीं खाया। आश्चर्य यह है कि आपको ये बातें नहीं मालूम।'

मौलवी साहब ने फिर सलाह देते हुए कहा, 'अगर आप इस पेड़ को लानत समझते हैं, तो आज ही इस मनहूस को कटवाकर अपना घर इससे साफ कर लीजिये।'

हमने मौलवी साहब का दिल रखने को कहा, 'बहुत अच्छा! यह मनहूस सूरत आप कल से न देख सकेंगे।'

मौलवी साहब ने इस वायदे पर संतोष की सांस ली और दिल की गहराइयों से कहा, 'खुदा आपको जन्नत दे। आपके योग्य व्यक्ति अधिक काल तक गुमराह रह सकता था!'

यह कह कर मौलवी साहब जाने मगर हमने उनको चाय पिलाने के लि रोकना चाहा तो मौलवी साहब ने और ऐतिहासिक बात कही, 'मैं चाय नहीं सकता, बहुत छींकें आने लगती हैं।'

हमने चाय पर छींकों के तर्क को आश्च से सुना और चाय की जगह मौलाना लिए शर्बत लाने को कह दिया और मौल साहब से शहतूत की राजनीति पर विचा करने लगे। सच तो यह है कि इस बेचारे मस्तिष्क इतना अधिक शहतूतग्रस्त हो चु था कि उस पर दया आती थी और शह के संदर्भ में उनकी चिढ़ मानों अब दिल सांसें निकलकर मस्तिष्क में विकार पहुंच चुकी थीं। इसलिये जब वह प्रशं के पुल बांधकर शर्बत का गिलास गये तो नौकर ने बेगम का पुर्जा हमने दिया, जिस पर केवल यह लिखा हुआ था 'यह शहतूत का शर्बत था।' हमने वह पुर् मौलाना को देते हुए कहा, 'मौलाना साहब देखिये!' मौलाना साहब ने पुर्जा देख ही शर्बत का खाली गिलास नौकर पर तरह खींच मारा कि अगर वह क्रिकेट अच्छा खिलाड़ी न होता और गिलास को रोक नहीं लेता तो स्वयं उसको तो खैर चोट लगती ही मगर गिलास का नुकसान पूरे किस्से को ट्रेजेडी पर खत्म करता।

[उर्दू से अनु: तरनजीत]

□

बाल-कथा

छोटा कद, बड़ा पद

□

भगवतीप्रसाद द्विवेदी

आज मैं जिस कहानी को लिखने जा रहा हूं दरअसल वह कहानी नहीं बल्कि मेरी आपबीती है। कहानी में जहां कल्पना का सहारा लेने की पूरी छूट रहती है, वहीं आपबीती में सदा ही कड़वे सच का सामना करना पड़ता है, आज मेरे नाम के साथ आई. ए. एस. जैसे पुछल्ले का लगा होना लोगों को हैरत में डाल देता है। छोटा कद और बड़ा पद–ठीक छोटा मुंह और बड़ी बात की तरह!

दरअसल मैं भी सामान्य छात्रों जैसा ही था। कुछ मानों में तो उनसे भी गया गुजरा। मेरा अत्यंत छोटा बौने जैसा कद और पीठ तथा पेट के आगे निकला हुआ कूबड़ देख, लोग मेरी खिल्ली उड़ाया करते थे, कुछ लोग तो मुझे तरह-तरह के जले-कटे संबोधन देने लगे थे।

उसी वक्त पिताजी का स्थानांतरण कस्बे से महानगर में हो गया था। उन दिनों मैं नौवीं कक्षा का छात्र था। पिताजी केन्द्रीय सरकार के अधीन एक कार्यालय में बाबूगीरी की नौकरी किया करते थे। वहां उन्होंने मेरा नामांकन राजकीय इंटर कालेज में करवा दिया।

ज्योंही पहले दिन मैंने कक्षा में प्रवेश किया, सभी लड़कों ने मुझे देखकर जोरदार ठहाका लगाया। मैं एक खाली सीट की तरफ अभी बढ़ ही रहा था कि पीछे से आवाज आयी, 'अमां टिंगू, इधर आओ।'

इससे पूर्व मैं उधर देख पाता, कई लड़कों ने 'कूबड़राम', 'ऊंट मियां' जैसे अनेक संबोधनों से मुझे अलंकृत किया। मैं अंदर-ही-अंदर आग-बबूला होकर रह गया। जी में आया कि एक साथ ही सबका गला दबा दूं। मगर चुप्पी की भी एक सीमा होती है न?

उन सबका मुझे खोद-खोदकर चिढ़ाने का सिलसिला अब भी जारी था। मैंने चिल्लाते हुए कहा, 'हां-हां, मैं टिंगू हूं, कूबड़वाला हूं, ऊंट हूं . . तुम्हारा क्या जाता है?' मगर मेरा चिढ़ना और उन सबका चिढ़ाना तब तक जारी रहा, जब तक कि छुट्टी की घंटी नहीं बज गयी।

घर आकर पूरी रात मैं सुबक-सुबककर रोता रह गया था। मैंने यह फैसला कर लिया कि उस कालेज में मैं अब हरगिज पैर नहीं रखूंगा, मेरे मन में हीन भावना घर करने लगी थी। अपने शरीर से ही

मुझे घृणा हो आयी थी । अब घर से मैं कालेज के लिए प्रस्थान जरूर करता, मगर पार्क, पिक्चर और सैर-सपाटे में ही पूरा समय गुजार देता था और शाम को बस्ता लटकाये चुपचाप घर लौट आया था। रात में भी मैं झूठ-मूठ पढ़ने का ढोंग-भर करता था । फिर भी एक अनजाना भय मुझे भीतर ही भीतर खाये जा रहा था ।

एक रोज पिताजी को असलियत का पता चल ही गया था। वे अचानक घूमते-घामते कालेज में जा पहुंचे थे। शाम को अब मैं नित्य की भांति टहलते हुए वापस लौटा तो आते ही उन्होंने जिरह करना आरंभ कर दिया था। मैं कुछ देर तक बहानेबाजी करते हुए हकलाता रहा था, मगर अंत में मुझे हकीकत को उगलना ही पड़ा। फिर खुद ही फूट-फूटकर रो बड़ा था मैं ।

'बेटा, वह पहाड़ जैसा शरीर ही भला किस काम का, जिसमें कोई गुण न हो। आदमी अपनी प्रतिभा के द्वारा विशिष्टता हासिल करता है, शरीर की खूबसूरती के आधार पर नहीं।' पिताजी ने समझाते हुए फिर कहा था, 'तुम्हारे हाथ-पांव तो सही-सलामत हैं। विश्व के कई अपंगों ने तो अपनी विलक्षण प्रतिभा के द्वारा ऐसे विशिष्ट कार्य किये हैं, जिन्हें हाथ-पैर मारने के बावजूद बहुतेरे लोग कर दिखाने में असमर्थ रहे ।'

पिताजी ने अलमारी में से एक पुस्तक निकाली थी और उसे मुझको थमाते हुए कहा था, 'यह किताब ही तुम्हारा मार्गनिर्देश करेगी।'

अपने कमरे में जाकर मैं पुस्तक को पढ़ने में मशगूल हो गया था। वह किताब उन विकलांगों की जीवनी पर आधारित थी, जिन्होंने पूरे विश्व में अपना नाम रौशन किया था। उनमें से सबसे ज्यादा जिस व्यक्तित्व ने मुझे प्रभावित किया था वह था यूरोप का नारसन क्रोचर, जिसके दोनों पैर बचपन में ही एक दुर्घटना में घुटनों के नीचे से काटे जा चुके थे। अस्पताल में पड़े-पड़े ही उसने डगलस वेडर, जो एयर फोर्स का एक लड़ाकू जवान था, की जीवनी 'रीच फार दि स्काई' पढ़कर प्रेरणा ग्रहण की थी और बचपन से ही अपने पर्वतारोहण के लक्ष्य पर अट रहा था। अंततः वह स्विट्जरलैंड के आः गर पवत के उस सर्वोच्च शिखर पर जा पहुंचा था, जो मृत्यु-शिखर के नाम से जाना ता था।

मेरे दिमाग में वह पंगु पर्वतारोही ही बार-बार नाचने लगा था। जब वही अपने अपने हाथों के सहारे पेड़ पर चढ़ने का अभ्यास करता था, तो दर्शक उसकी जमकर खिल्ली उड़ाया करते थे। कुछ लोगों का काम ही होता है दूसरे की हंसी उड़ाना। मगर नारसन क्रोचर के मन में तो किसी प्रकार की हीन-भावना अपना स्थान नहीं बना सकी थी। वह तो हंसकर ही सबकी व्यंग्य-भरी बातों को टालता रहा था।

मुझे उस अपंग से बहुत बड़ी प्रेरणा मिली थी और अगले दिन मैं समय से तैयार होकर

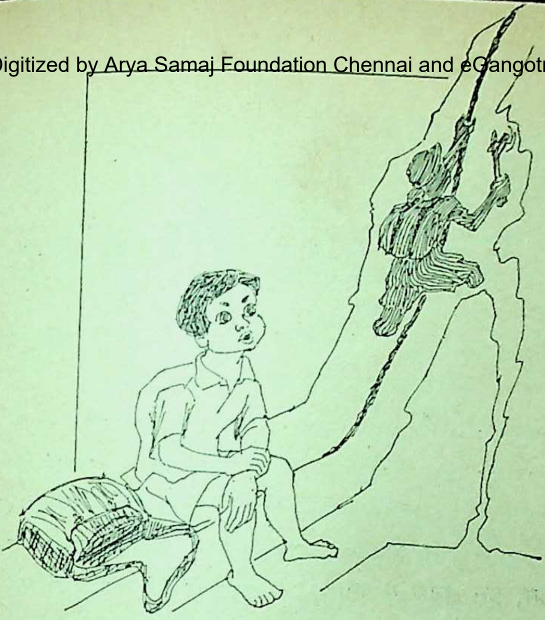

कालेज के लिए चल पड़ा था। । एक लंबे अंतराल के बाद मुझे फिर कालेज में देखकर छात्रों का समूह मेरी खिल्ली उड़ाने पर आमादा हो गया था । मगर मैं खीजने के बजाय अब सबसे मुस्कराते हुए मिलता और स्वाभाविक ढंग से उनसे बातें करता था । मेरे इस बदलाव पर वे सभी अचरज से मुझे घूर रहे थे । मुझे स्वयं भी अपनी इस तब्दीली पर विश्वास नहीं हो रहा था ।

रात में मैंने जमकर पढ़ाई आरंभ कर दी। शरीर की बनावट तथा कमजोरी मुझे थोड़ा-बहुत प्रभावित जरूर करती थी, मगर मैं निराश नहीं होता था। ऐसे वक्त में मुझे वह पंगु पर्वतारोही ही नजर आने लगता था, जो अपने हाथों से पैरों तक काम लेते हुए उतने बड़े पर्वत की चोटी पर जा पहुंचा था। मेरे लिए मेरा प्रेरणा स्रोत ही बन गया था नारसन क्रोचर ।

०००

स्नातक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करने के बाद बिहार लोक सेवा आयोग की लिखित तथा मौखिक परीक्षा में, जब मैंने सफलता हासिल की तो मेरी खुशी का ठिकाना नहीं था। घर से बाहर निकलते ही मेरे कुछ दोस्त दिखायी पड़े थे, जो उस परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो गये थे ।

रमेश ने फुसफुसाते हुए कहा था, 'वह देखो, टिंगू तो अबकी बार बाजी मार ले गया । अब वह बी. डी. ओ. बन जायेगा ।'

'अरे भई, इसमें कौन-सी बड़ी बात है ! उसका चुनाव विकलांग वाले आरक्षित कोटे में हुआ है। सामान्य लोगों में होता तो एक उपलब्धि भी होती ।' रजनीश का करारा व्यंग्य मुझे उद्वेलित करने लगा था ।

घर आकर मैं रात-भर रोता रहा था ।

(शेषांश पृष्ठ २२० पर)

बाल-कहानी और बालक

☐ डॉ. उषादेवी सिंह

कहानी आदिम विद्या है। कहानी का जन्म कब हुआ, यह कहना कठिन है। इसका समय ईसा पूर्व ५ हजार वर्ष से १० हजार वर्ष पूर्व तक आंका गया है। कहानी का जन्म कैसे हुआ, इस संबंध में जो बातें कही जाती हैं वे अधिकांशत: अनुमानित हैं। कहते हैं कि जब चमत्कारिक ढंग से घटी किसी घटना के बारे में एक व्यक्ति ने दूसरे व्यक्ति को बताया होगा और श्रोता ने बड़े मनोयोग पूर्वक उसे सुना होगा, उसमें रस लिया होगा और चमत्कृत हुआ होगा, तभी कहानी का जन्म हुआ। आगे चलकर घटना वर्णन की कला का विकास कथक्कड़ के माध्यम से हुआ। कथक्कड़ अपने जीवनानुभवों या दूसरों के जीवन में घटित घटनाओं या सुनी-सुनायी बातों को रोचक ढंग से प्रस्तुत करता था। कालांतर में इतिहास और कल्पना के योग से कथक्कड़ के द्वारा जिस विधा का विकास हुआ, वह लोक के बीच लोककथा कहलायी और पारिवारिक परिवेश में दादी-नानी की कहानी कही गयी, धर्म से जुड़कर पौराणिक आख्यान और साहित्य से जुड़कर कथा, गल्प, कहानी आदि संज्ञाओं से अभिहित हुई।

मनुष्य में रोचक प्रसंग सुनने और सुनाने की प्रवृत्ति स्वभावगत है। इसी मूल प्रवृत्ति के कारण कहानी-कला का विकास हुआ, लेकिन बाल कहानी की धारा साहित्यिक कहानी की धारा से भिन्न है। यद्यपि दोनों धाराओं का उद्गम स्थल एक ही है, परंतु उनमें बहुत अधिक अंतर आ गया है। राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद जब उत्तर-प्रदेश के इंस्पेक्टर ऑफ स्कूल नियुक्त हुए तो अंग्रेजी राज की शिक्षा नीति के तहत उन्हें वर्नाक्यूलर अर्थात् देशी भाषा में पाठ्य-पुस्तकें तैयार करने का काम सौंपा गया। राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद ने न केवल पाठ्य-पुस्तकें लिखीं, अपितु बाल-पाठकों के लिए मनोरंजक पुस्तकें भी लिखीं। इस मनोरंजक सामग्री में बाल कहानी भी थी। जिन कहानियों को बच्चे पसंद करते हैं, उन्हें बार-बार पढ़ते हैं, वास्तव में वही कहानी उत्तम बाल कहानी कही जायेगी। सामान्य भाषा में जो कहानी बाल-पाठक को लक्ष्य करके लिखी जाती है, उसे बाल-कहानी कहते हैं, परंतु वे वयस्क कहानियां जो बाल-पाठक की समझ की सीमा में आती हैं जिनके विषय और विचार बाल-पाठक की रुचि

अनुकूल होते हैं, और जिन्हें बाल-पाठक स्वीकार करता है। बाल-कहानी ही मानी जायेगी।

साधारणत: बालकों के लिए लिखी गयी कहानियां ही बाल-कहानी कही गयी हैं, परन्तु सूक्ष्म दृष्टि से विश्लेषण किया जाय तो इसमें बालक की वय, रुचि तथा बालक द्वारा अंगीकार किये जाने की बातें स्पष्ट रूप से दिखायी देती हैं। बालक की जरूरतें थोड़े-थोड़े अंतराल से बदलती रहती हैं। शैशवावस्था में बालक केवल पुस्तकों के चित्रों को देखकर अपनी रुचि व्यक्त करता है। वाणी के अभाव में वह मनोभावों को व्यक्त करने में असमर्थ रहता है। वह इस अवस्था में पुस्तकों के रंगीन चित्रों को देखता है और अपनी रुचि-अनुसार चित्रों को पसंद करता है। शैशवावस्था पार करते ही वह बाल्यावस्था में कदम रखता है, उसकी रुचि पहले से भिन्न हो जाती है। इस समय बालक अपने भावों को व्यक्त करने के लिए भाषा का सहारा लेता है। उसमें पढ़ने और लिखने की अच्छी समझ विकसित हो जाती है। इस अवस्था में बालक की कल्पना-शक्ति का विकास तीव्रगति से होता है। वह काल्पनिक रचनाओं को पढ़ना ज्यादा पसंद करता है। ऐसे साहित्य से उसे असीम आनंद की प्राप्ति होती है। फलत: बालक कल्पना प्रधान साहित्य में ज्य।दा रुचि लेता है। वयस्क संसार में जो बातें असंभव होती हैं, वही बातें बालक की कल्पना में संभव बन जाती हैं।

काल्पनिक रचनाएं बालक को अत्यधिक लुभावनी लगती हैं। ये बालक की कल्पना शक्ति का विकास करती हैं। परीकथाओं को पढ़ते समय बालक थोड़े समय के लिए अद्‌भुत संसार में विचरण करने लगता है। परीकथा के संदर्भ में येलेना ग्रोओवा का कथन है कि 'मुझे परी कथायें बेहद पसंद हैं। वे लोगों को भविष्य की कल्पना करने में मदद करती हैं। आपको याद होगा, इन्सान ने उड़ान भरने से काफी समय पहले ही अपनी कहानियों में उड़ान भरने वाले कालीनों का जिक्र करना शुरू कर दिया था। इसके अलावा दूसरी बहुत-सी चीजों की भी पहले से ही चर्चा होने लगी थी, जो बहुत बाद में सामने आयीं।' वस्तुत: बालक सबसे अधिक कल्पना की उड़ान भरा करते हैं। अक्सर आज की कल्पना ही, कल की सच्चाई बनकर सामने आती है। बालक को कल्पनाशीलता से वंचित नहीं किया जा सकता है। बालक मन की कल्पना प्रधानता के आधिक्य के कारण ही वह काल्पनिक कहानियों को पढ़ना और सुनना ज्यादा पसंद करता है।

बाल्यावस्था के उपरांत बालक किशोरावस्था में प्रवेश करता है। किशोरावस्था में बालक की रुचि, व्यवहार और समझ की सीमा में परिवर्तन आ जाता है। किशोरावस्था में प्रत्येक बात का कारण जानने की इच्छा होती है—क्यों और कैसे? प्रश्न वह बार-बार पूछकर अपनी जिज्ञासा शांत करता है। वह हर बात को जानन के लिए

उत्सुक रहता है। किशोर में नवीन ज्ञान की उत्कंठा के संबंध में पेटर सेन्डीफोर्ड ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि 'बालक बाह्य जगत की ओर आकृष्ट होता है और दूसरे व्यक्तियों तथा दूसरे देशों के विषय में जानना चाहता है। वह जिन चीजों को देखता है या व्यवहार में लाता है उनका रहस्य जानना चाहता है। जो वस्तुएं उसे प्राप्त होती हैं, उन्हें पूर्ण रूप से जानना चाहता है। यह इच्छा इतनी प्रबल होती है कि यदि और कुछ न प्राप्त हुआ तो वह शुष्क और मोटी-मोटी पुस्तकों को ही निष्ठापूर्वक पढ़ डालता है।'

जिज्ञासा और ज्ञान की उत्कंठा के साथ नैतिक तथ्यों के समझने और उच्चादर्शों के ग्रहण करने की शक्ति भी बढ़ जाती है। अब बालक प्रारंभिक पसंद को वस्तुओं से हटकर अपनी पसंद की वस्तुओं का चुनाव स्वयं करने लगता है। उसकी समझ की सीमा व्यापक हो जाती है। इसलिए वह कल्पना लोक से हटकर यथार्थ की भूमि पर पैर रखने लगता है। साहस, शौर्य और बुद्धिमत्ता युक्त कहानियां पढ़ना वह ज्यादा पसंद करता है। ये कहानियां उन पर अपना विशेष प्रभाव डालने के साथ-साथ बाल व्यक्तित्व का निर्माण करने में काफी हद तक सहायक होती हैं। बालक इसी मानसिकता के आधार पर जीवन-पथ पर अग्रसर होता है। वह अपनी यथार्थ भूमि से जुड़ी रचनाओं को पढ़ना बेहद पसंद करता है। बालकों की इस भूख और जिज्ञासा-तृप्ति के लिए बाल कथाकारों ने अपनी रचनाधर्मिता में परिवर्तन लाने की आवश्यकता पर बल दिया। फलस्वरूप स्वतंत्रता के बाद बाल-कहानी के क्षेत्र में परिवर्तन हुआ, लेकिन यह परिवर्तन हमें सातवें दशक में लिखी गयी कहानियों में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। कहानी के क्षेत्र में एक क्रांतिकारी मोड़ आया। इस दशक में लिखी जाने वाली कहानियां मात्र प्राचीन कहानियों की नकल नहीं थी, अपितु ये कहानियां बाल जीवन से जुड़ी समस्याओं के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालती हैं। यथा पास-पड़ोस, गली-मुहल्ला, विद्यालय व दोस्ती से जुड़ी अनेक समस्याओं को इन कहानियों में उजागर किया गया है। अर्थात् बाल-जीवन के रहस्यों का उद्घाटन करना ही इन कहानियों का उद्देश्य होता है। आधुनिक बालक कहानियों में बाल-जीवन के विविध पक्षों का उद्घाटन और चित्रण होता है।

बालक के समक्ष कतिपय आदर्श और नैतिक प्रश्न होते हैं, जिनका समाधान बाल-मनोवृत्तिनुसार इन कहानियों में किया जाता है। बाल जीवन के बाहरी और आभ्यंतरिक अंतर्द्वंद्वों का समाधान इन कहानियों में होता है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि आधुनिक बाल-कहानियां बाल मन की उन जिज्ञासाओं, समस्याओं और विचारों को अभिव्यक्त करने में सहायक होती हैं जो बालक को सतत परेशान करती रहती हैं। वस्तुतः ये कहानियां बाल-जीवन की वास्त-

विक भूमि से जुड़ी समस्याओं पर निर्मित होती हैं।

इन कहानियों को पढ़कर बालक सुदूर कल्पना लोक में विचरण न करके अपने यथार्थ से जुड़ा रहता है, जो उसे एक दिशा प्रदान करने में सहायक होती हैं।

बाल समस्याओं के अतिरिक्त उन्हें समाज, परिवेश और बदलते युग की जानकारी भी दी जाती है। दिन-प्रतिदिन होने वाली वैज्ञानिक तरक्की से भी परिचित कराया जाता है। विज्ञान की नीरस और जटिल वस्तुओं की जानकारी कथा के माध्यम से सरस बनाकर बाल-पाठक के मानसिक स्तर के अनुरूप ही लिखा जा रहा है, जिसे बालक आसानी से ग्रहण कर लेता है।

दैनिक जीवन में प्रयोग होने वाले वैज्ञानिक उपकरणों के साथ-साथ नवीन जानकारी देना इन वैज्ञानिक कहानियों की मुख्य विशेषता होती है, जिससे बालक के ज्ञान-क्षितिज के विस्तार के साथ-साथ बाल विकास भी हो सके। प्रारंभिक बाल-कहानियों में विज्ञान के आविष्कारों और वैज्ञानिक वस्तुओं के महत्व के विषय में ही कहानियां लिखी गयीं, लेकिन आधुनिक युग में इसका क्षेत्र बहुत विस्तृत हो गया है, क्योंकि कथाकारों की दृष्टि से बदलाव आ गया है।

अब बालकों को राकेट और ग्रहों के विषय में जानकारी दी जा रही है तथा राकेट द्वारा होने वाले हानि और लाभ की जानकारी दी जाने लगी है। ये कहानियां बाल-बुद्धि को भलीभांति व्यापक बनाती हैं।

रहस्य और अनजानी चीजों के विषय में जानकारी देना इनका मुख्य लक्ष्य होता है। कथाकार सरसता और कल्पना के संयोग से वैज्ञानिक उपकरणों व उसकी उपयोगिता की जानकारी देता है, जो बाल-पाठक के लिए रोचक और ज्ञानवर्द्धक होने के साथ ही बाल-विकास में उपयोगी होता है।

अतः आज के वैज्ञानिक युग के अनुरूप बच्चों की मानसिकता तैयार करने में ये वैज्ञानिक कहानियां सार्थक होती दिखायी दे रही हैं।

वैज्ञानिक लाभ की चर्चा करते समय बाल-कथाकारों को इस बात को कभी नहीं विस्मृत करना चाहिये कि जितना बच्चों में वैज्ञानिक अभिरुचि जागृत करना आवश्यक है, उतना ही विज्ञान से मानवता के लिए बढ़ते हुए खतरों से भी उन्हें सावधान रहना है।

अंततः कहा जा सकता है कि कहानी के माध्यम से बाल समस्याओं के साथ-साथ नवीन चीजों की जानकारी दी जा रही है। आज बाल कहानी की रचना युग की मांग को देखकर की जा रही है जो बाल विकास के साथ उन्हें ऐसा भविष्य निर्मित करने में सहायक हो सकती है, जिसकी बालकों को आवश्यकता है।

—द्वारा : श्री यशवंत सिंह
बी. २३/४१, खोजवां बाजार,
वाराणसी, उ. प्र.

□

दीपावली शुभचिन्तन-१९८८

तिमिर का करें विनाश ...राह में बिखेरें प्रकाश...

अज्ञान, दरिद्रता, संकुचित विचार, विद्रोह, असहिष्णुता और हिंसाचार
ये तिमिर के ही रूप हजार आंतरिक एकता, एकात्म भाव
प्रेम और सौहार्द के खोलें तेजोमय द्वार.
हृदय की पावनता शुचिता को जगह जगह सींचकर
महाराष्ट्र को बनायें बलवान महापुरुषों के कर्तृत्व को
विरासत के उजाले में, ढूंढ़ें राहें विकास की भरें उड़ान
राष्ट्र की प्रतिमा उभार खोलें तेजोमय द्वार.

कृतिशील शासन : महाराष्ट्र शासन डीजीआईपीआर

दीपावली की शुभकामनाएं
और
नववर्ष का अभिनन्दन

पंडित प्रोसेस स्टूडियो

फोन : ४२२९४८०
दूसरी मंजिल, ब्लाक नं १५,
प्रभादेवी इंडस्ट्रियल इस्टेट,
वीर सावरकर रोड,
बंबई–४०० ०२५.

उम्र लंबी हो, पर बोझिल नहीं!

☐ दुर्गाशंकर त्रिवेदी

मित्रवर! आपके जन्म दिन पर बधाई देते हुए डा. वेबर की एक उक्ति अनायास ही मेरे मस्तिष्क में तैरने लगी है। बधाई के इन क्षणों में वह उक्ति बुदबुदाता हुआ मैं कलम की नोक पर उतार रहा हूं! उन्होंने कहा था—दीर्घ जीवी होना बड़ी बात नहीं है। बड़ी बात है जीवन से अधिक से अधिक हासिल करना। इस उक्ति को आप तक पहुंचाकर उम्मीद करता हूं कि आपकी जिंदगी लंबी जरूर हो, बोझिल नहीं हो।'

जीवंत विचारों के व्याख्याकार कन्हैयालालजी मिश्र 'प्रभाकर' ने वर्षों पहले यह आशीर्वाद मेरे जन्म दिन पर भेजा था। एक चर्चा के दौरान वे युवा पीढ़ी में तेजी से पनपते मोटापे से भी व्यथित थे। वे 'बोझिल काया' के इस रूप के प्रति भी अपने इष्ट मित्रों का ध्यान खींचते रहते थे। क्योंकि मोटापा जीवन का रस चूसने वाली मीठी बीमारी है।

मिट्टी, पानी, धूप, हवा के सहयात्री, जीवन शास्त्री प्राकृतिक चिकित्साचार्य विट्ठलदास मोदी ने बताया—जिंदगी को ज्यादा से ज्यादा आनंदपूर्वक, सतोष व स्वस्थ जीवन की अनुभूतियों में जीते रहकर कैसे लंबी की जाय, यह कला हर युवक-युवती को सीखनी चाहिये। 'जिंदगी जिंदादिली का नाम है' जैसी उक्तियां हम रटा करते हैं। वहीं निराशा के झूले में झूलते आनंद जिसका नाम ही शेष है जैसी अनुभूति भी जहन में पाले रहते हैं। स्वस्थ जीवन के लिए हमें चिंतन को, जीवन के जीने के तरीकों को आमूल-चूक परिवर्तित करना पड़ेगा। क्योंकि हमारी दिनचर्या तो केवल छाया है मन की। जैसा सोचेंगे वैसे बन जायेंगे।

फिर भी जिंदगी सही ढर्रे पर चले इसके लिए कुछ जरूरी बातें हैं। ये आपको बहुत सहायक सिद्ध होंगी।

उचित भोजन लीजिये

'अन्न ब्रह्म है।'—हमारे पूर्वजों नें हमें यह बतलाया है। अतः हम अपने आहार पर पूरा-पूरा ध्यान दें। सही भोजन और पौष्टिक तत्वों का उचित तालमेल यदि आप ठीक बिठा लेंगे तो बात बन जायेगी। मोटापा नहीं बढ़े, पर शरीर पुष्ट जरूर रहे, इस तथ्य पर ध्यान केंद्रित रखेंगे तो अपनी आयु को अकाल मृत्यु के गाल में नहीं झोंकेंगे।

आप क्या खायें? कितना खायें? इस तथ्य पर किसी अनुभवी चिकित्सक की

राय लें । नीम हकीमों के नुस्खों, विविध शक्तिदायक दवाओं के विज्ञापनों आदि को पढ़कर कोई निष्कर्ष निकालेंगे, तो यह भी हो सकता है कि वह उल्टा बैठे । अतः सावधानीपूर्वक अपना आहार तय करें ।

संतुलित भोजन पर पूरा ध्यान दें । भोजन की उपेक्षा अभी तो नहीं अखरेगी पर आगे जाकर कमजोरी उत्पन्न कर सकती है । इसलिये सोच-समझकर अपनी स्थिति के अनुरूप ही कोई कदम उठायें ।

व्यायाम भी जरूरी है

पं. मदनमोहन मालवीय जैसे मनीषी कह गये हैं–'मैं व्यायाम को प्रातःकालीन संध्या से भी अधिक जरूरी मानता हूं । एक बार बिना संध्या-पूजा किये मेरा काम चल जायेगा परंतु बिना व्यायाम किये नहीं चल पायेगा । व्यायाम जरूरी चीज है ।'

व्यायाम के बारे में हम भारतीयों का रवैया जबानी जमाखर्च तक ही सीमित होता जा रहा है । बढ़ती जनसंख्या, बढ़ते शहरों के बीच अखाड़े, खेल के मैदान आदि कम हो रहे हैं, यह सच है । फिर भी टहलना, अधिकांश काम स्वयं हाथों से करना, पैदल चलकर काम निपटाना, घर पर हो सके ऐसे आसन करना आदि के द्वारा थोड़ा बहुत नियमित व्यायाम किया ही जा सकता है । सिर्फ हिम्मत जुटा करके आदत बनाने की देर है। व्यायाम को दिनचर्या का अंग बनाइये जरूर !

अपने पेशे से तृप्ति

अधिकांश घुटघुट कर मरने वाले लोगों में अपने पेशे से अतृप्त लोगों का बाहुल्य है । आप जिस किसी भी क्षेत्र में काम कर रहे हों उसके प्रति लगाव उत्पन्न कीजिये। अपनी रोजी-रोटी देने वाले धंधे के प्रति उकताहट की गयी, तो वह कुंठा ही जगायेगी ।

होता यह है कि कई बार हमारी स्वेच्छा से चुना हुआ पेशा भी हमारी मानसिक, बौद्धिक व आर्थिक क्षमता के अनुरूप नहीं होता है । ऐसी दशा में यदि संभव हो तो रुचि के अनुरूप कोई अन्य धंधा तलाश लें । रोज-रोज कुंठित रहकर, मन में असंतोष पालने के बजाय एक बार खतरा उठा लीजिये । फिर उस काम में पूरा-पूरा र लेकर जुट जाइये । विजयश्री निश्चय ही आपके लिए प्रतीक्षा करती नजर आने लगेगी ।

जिस भी धंधे में आप रहें उसके विविध पक्षों की जानकारी बढ़ायें । अधिक से अधिक अध्ययन करें । अपनी कार्य क्षमता बढ़ाने पर ध्यान दें ! इस जीवन के प्रति आस्था बनी रहा करेगी। जीवन तब बोझ नहीं लगेगा ।

आर्थिक स्थिति मजबूत करें

धन के प्रति हमारे यहां आसक्ति नहीं रखने के बावजूद भी ऐसी स्थिति कभी नहीं रही कि हम सब धन के महत्व को न कार रहे हों । आज के अर्थ-प्रधान युग में धन का बड़ा महत्व है । व्यवस्थित रूप से अपनी आमदनी बढ़ाने और अनर्गल खर्चों में कमी करके खर्च घटाने पर ध्यान

ीजियें । आर्थिक दृष्टि से यदि आप स्वा-बी रहें तो ज्यादा प्रसन्न रहेंगे । संकट ौर वीमारियों से टकराहट हुई तो अपना चाव अच्छी तरह करने के लिए दूसरों का ुंह भी नहीं ताकना पड़ेगा । कंजूस बनने ी राय मैं नहीं देता आपको, पर खुले हाथों र्च करने की आदत पर नकेल डालने पर ाग्रह जरूर करूंगा । यदि पास में पांच से वचे रहेंगे तो संकट के समय अतिरिक्त रेशानी में नहीं उलझ पायेंगे । जेव भरी ोगी तो कई मानसिक परेशानियों से सहज ी वचाव होगा ।

स्तिष्क उर्वर रखिये

अपने आप को समकालीन साहित्य, राज-ीति आदि से जुड़ा रखिये । हर समय काम े ही चक्कर में मत उलझिये । थोड़ा ामाजिक सेवाओं के लिए भी समय जरूर िकालिये । इससे आत्मसंतुष्टि वनी हेगी । मस्तिष्क कई तरह के उर्वर विचारों ा कोंद्र-बिंदु बना रहेगा ।

अपनी मानसिक क्षमताओं का पूरा-पूरा भोग जरूर कीजिये । क्योंकि समुचित योग न होने की स्थिति में मन-मस्तिष्क ंच खा जाया करते हैं । कुंद होकर उनकी तिशीलता प्राय: समाप्त हो जाती है । इस रह जीवन के उत्पादक और सही संदर्भों उपयोगी वर्षों की संख्या कम होती चली योगी विचार कुंद होते चले जायेंगे ।

रिवारिक परितोष भी जरूरी

दीर्घायु के लिए पारिवारिक संतोष भी ा आवश्यक तत्व है । यह व्यक्ति की अपनी भावनाओं पर निर्भर करता है कि उसका परितोष किन स्थितियों में संभव हो पायेगा ।

आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण और महंगाई-भरे इस युग में नून-तेल-लकड़ी के चक्करों में ही आदमी गले तक डूबा रहता है । अत: घरवालों का दायित्व है कि वे उसके लिए ऐसा वातावरण निर्मित करें, जिसमें वह एक संतोषी जीवन की तरह जीवन यापन कर सके !

जीवन प्रार्थनामय बनायें

आप जिस किसी भी धर्म में आस्था रखते हों कुछ समय नियमित रूप से प्रार्थना व स्वाध्याय – खासतौर पर आर्थिक या आध्यात्मिक ग्रंथों के लिए समय अवश्य ही निकालें । नियमित प्रार्थना से हम मन में एक विशेष तरह की प्रफुल्लता प्राप्त कर सकते हैं । ईश्वर के प्रति आस्था, समर्पण भाव और मानव मूल्यों के प्रति आदर भाव से मन प्रफुल्लित रहेगा जो जीने का आनंद दुगना कर देगा ।

कहने का तात्पर्य सिर्फ इतना है कि लंबी उम्र प्राप्त करने के लिए कोई खास नुस्खे नहीं हैं किसी के भी पास । अगर होते तो लंबी आयु वालों की भीड़ ही लगी रहती । फिर भी इन तथ्य-परक बातों को आचरण में अपना कर जीवन को लंबा, शांत और सुखानुभूति करवाने वाला बनाया ही जा सकता है । बस सक्रिय होकर पहल कीजिये जरा ।

—बी. ११६ विजय पथ,
तिलक नगर, जयपुर, राजस्थान,

□

HARITA GROUP

alone in a crowd

With Best
Compliments From

Harita Finance Limited
Harita Credit Limited
Harita Investments Private Limited
178, Kodambakkam High Road, Madras-600 034.
Phone : 471427 / 474642
Branches : Madurai, Tirupati, Tirunelveli, Coimbatore,
Bangalore.

भारत में बैंक-व्यवसाय

अशोक मित्र

भारत में बैंक-व्यवसाय की शुरुआत ईस्ट इंडिया कंपनी के काल में हुई। उससे पूर्व, पैसों का लेन-देन साहूकारों द्वारा होता था। अंग्रेजों ने भारत में आधुनिक बैंक-व्यवसाय की शुरुआत तो की, किंतु उसे भारत के आर्थिक शोषण का साधन भी बनाया, जिसे दादाभाई नौरोजी ने बोलते आंकड़े प्रस्तुत कर बड़े ज़ोरदार ढंग से प्रमाणित किया था।

अंग्रेजों के शासन-काल के इतिहास तो बहुत से लोगों ने लिखे, लेकिन ऐसे इतिहास बहुधा राजनैतिक घटनाओं से भरपूर हैं। लेकिन, अमिय कुमार बागची देश के उन इने-गिने अर्थशास्त्रियों में से हैं, जिन्होंने उस काल के राजकोष और राजस्व संबंधी समस्याओं का गहन अध्ययन किया है। उनकी मेहनत व लगन की दाद देनी पड़ेगी कि उन्होंने खोज करके इस काल की इन समस्याओं के अध्ययन के साथ-साथ, उस काल के बैंक-व्यवसाय पर भी अपनी पैनी नज़र डाली है।

उनके इस श्रम का सुपरिणाम आम पाठक के सामने जब आया, जब स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने, जो अंग्रेजों के काल में इंपीरियल बैंक के नाम से प्रसिद्ध था, १९७६ में 'प्रेसीडेंसी बैंक्स एक्ट, १८७६' की शताब्दी का समारोह मनाने का निश्चय किया। इसी एक्ट के द्वारा अंग्रेजों के शासनकाल में भारत में बैंक-व्यवसाय की शुरुआत हुई। इस समारोह के अवसर पर, स्टेट बैंक ने श्री अमिय कुमार बागची से स्टेट बैंक तथा उसके पूर्ववर्ती इंपीरियल बैंक का इतिहास लिखने को कहा। बैंकने इस कार्य को पूरा करने के लिये श्री बागची को कुछ सहकारी भी उपलब्ध कराये, जिन्होंने उन्हें शोध-कार्य में उनकी बहुत मदद की। इसके अलावा, उसने अपने अनेक अभिलेखागारों के कागज़ात व ग्रंथ भी उन्हें उपलब्ध कराये। श्री बागची ने बैंक द्वारा दी गयी इन सुविधाओं के अतिरिक्त अन्य स्रोतों से भी तथ्य प्राप्त किये ताकि उस काल की अन्य बैंक-प्रणालियों के वर्णन का समावेश भी पुस्तक में किया जा सके।

बुनियाद का विवरण

श्री बागची की पुस्तक 'द एवोल्यूशन ऑफ द स्टेट बैंक ऑफ इंडिया' (स्टेट बैंक ऑफ इंडिया का क्रमविकास) का प्रथम भाग : 'बुनियाद १८०६-७६' शीर्षक से पिछले दिनों प्रकाशित हुआ। भारतीय

बैंक-व्यवसाय के इतिहास में रुचि रखने वाले लोगों के लिए यह प्रथम भाग तथा पुस्तक के अन्य भाग उपयोगी सिद्ध होंगे, ऐसी आशा है।

प्रथम भाग स्टेट बैंक की उत्पत्ति की कहानी सुनाता है। यह कहानी स्टेट बैंक के पूर्वावतार इंपीरियल बैंक के जन्म की, या भारत में बैंक-व्यवसाय की शुरुआत की कहानी मात्र नहीं है। उन्होंने भारत में बैंक-व्यवसाय की शुरुआत का ताना-बाना उस काल के भारत की अर्थव्यवस्था के इतिहास से बुना है। ऐसा करते समय, उन्होंने उन छोटे-मोटे बैंकों या बैंक-समान उद्यमों का रोचक परिचय भी दिया है। बहुत कम लोगों को यह जानकारी होगी कि उस काल में इंपीरियल बैंक के अलावा अन्य बैंक भी विद्यमान थे।

ऐसे अनेक अनजाने तथ्य पुस्तक के आरंभ में बिखरे पड़े हैं, जिनसे पुस्तक की रोचकता व उपादेयता और अधिक बढ़ गयी है। ये रोचक तथ्य बड़ी खामोशी के साथ, लेकिन बड़े प्रभावपूर्ण ढंग से उस काल के भारत की अर्थव्यवस्था पर, अपने ढंग से, टिप्पणी करते चलते हैं।

भारत में आधुनिक बैंक-व्यवसाय की शुरुआत एक ऐसी महत्वपूर्ण घटना थी, जो संयोग से घटी थी। जिस ईस्ट इंडिया कंपनी ने यह शुरुआत की, उसका दोहरा व्यक्तित्व था। मूलतः यह कंपनी ब्रिटेन से भारत आयी एक ऐसी व्यापारिक संस्था थी, जिसके कलकत्ता स्थित मुख्य कार्यालय का दूरवर्ती नियंत्रण लंदन स्थित एक 'बोर्ड ऑफ कंट्रोल' द्वारा होता था। ब्रिटेन के एक शाही शासन-पत्र द्वारा इस कंपनी को यूरोप और एशिया के बीच व्यापार का एकाधिकार प्राप्त था। इसके साथ ही साथ यूरोप में नेपोलियन की पराजय के बाद अंग्रेजों को अपने साम्राज्य की नींव रखने और उसका विस्तार करने का जो स्वर्ण-अवसर मिला था, उसका लाभ उठाकर ब्रिटेन की रानी के नाम पर शासन करने वाले लोग, भारत में कंपनी के माध्यम से अपने साम्राज्य का आधार तैयार कर रहे थे। कंपनी को अपनी सेना के रख-रखाव, कर्मचारियों के वेतनादि और व्यापार के लिए धन की आवश्यकता दिनोंदिन बढ़ती जाती थी, और उसकी पूर्ति के लिए उसने भारत में बैंक-व्यवसाय आरंभ किया।

भारतीय साहूकार, व्यापारी

कंपनी का यूरोपीय देशों के साथ व्यापार निर्बंध था, किंतु भारत में उसे भारतीय व्यापारियों के साथ जो व्यापार करना पड़ता था, उस पर अनेक प्रतिबंध थे, जो किसी ने लगाये नहीं थे, परंपरागत थे। अंग्रेजों के आगमन से पूर्व, देश का सारा आंतरिक व्यापार ऐसे भारतीय साहूकार-व्यापारियों के हाथ में था, जो कंपनी की हुंडियों पर कमीशन काटते थे। नकदी की उपलब्धि और मात्रा इन लोगों की कंपनी के अंग्रेज अधिकारियों के प्रति विश्वसनीयता पर आधारित होती थी, इसलिए यह सारा धंधा बड़ा अनिश्चित और जोखिम-

पूर्ण हो गया था। आरंभ में, जब कंपनी सैनिक और व्यापारिक दृष्टि से अधिक शक्तिशाली नहीं थी, भारतीय साहूकार अपने कमीशन की दरें, मर्जी के मुताबिक बढ़ाकर कंपनी का काफ़ी आर्थिक शोषण करते थे।

कंपनी की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने, और भारतीय साहूकारों तथा ब्रितानी बैंक पर अपनी निर्भरता को न्यूनतम करने के उद्देश्य से, कंपनी के एक अधिकारी हेनरी टकर के मन में 'बैंक ऑफ कलकत्ता' की स्थापना का विचार आया। इस बैंक के प्रबंधकों में कंपनी के अधिकारियों की, जो एक के बाद एक भारतीय भूखंड पर अपना अधिकार जमाते जा रहे थे, संख्या सबसे अधिक थी। ये लोग बैंक में कंपनी के हितों की रक्षा करने के साथ-साथ ब्रितानी सरकार के हितों की रक्षा भी करते थे। इस बैंक की स्थापना के बाद धन के लेन-देन का सारा धंधा, जो दुर्व्यवस्था से ग्रस्त था, धीरे-धीरे व्यवस्थित होने लगा।

इस प्रकार, भारत में उत्तरदायित्वपूर्ण, 'ज्वाइंट-स्टॉक' बैंकिंग की शुरुआत हुई, यद्यपि 'सीमित दायित्व' की धारणा अभी तक अप्रचलित थी। मूलत: यह 'इकाई बैंकिंग व्यवस्था थी, जो एजेंटों व आढ़तियों के सहयोग से सुचारु रूप से चलने लगी थी। आरंभ में, इस बैंक में कोई ग्राहक अपने पैसे जमा करने नहीं जाता था, और कमीशन की दर भी निश्चित नहीं थी; वह व्यक्ति और स्थान देखकर निर्धारित की जाती थी।

लेकिन, कंपनी न इस बैंक को, और बाद में दूसरे बैंकों को भी, एक निश्चित सीमा तक अपने नोट जारी करने का अधिकार दिया था। सन १८३५ तक, जब कंपनी ने अपने सिक्के जारी किये। यह कंपनी की मर्जी पर निर्भर रहता था कि किस बैंक को ज्यादा नोट दे, और किसे कम। दूसरे शब्दों में, बैंक पूरी तरह कंपनी के अधिकार में थे, और उनका कारोबार पूरी तरह कंपनी की कृपा पर निर्भर था।

'बैंक ऑफ कलकत्ता' की स्थापना सन १८०६ में की गयी थी, लेकिन १८०९ में उसका नाम 'बैंक ऑफ बंगाल' कर दिया गया।

बीस प्रतिशत मूलधन सरकार का अर्थात् कंपनी का था। सरकार अर्थात् कंपनी द्वारा १८४० में स्थापित 'बैंक ऑफ बंबई' में, और १८४३ में स्थापित 'बैंक ऑफ मद्रास' में लगाये गये मूलधन का प्रतिशत इससे कम था। लेकिन, तीनों बैंकों पर कंपनी का ही आधिपत्य था, और उसके द्वारा निर्वाचित व्यक्ति ही इन बैंकों के प्रबंधक थे। इन तीनों बैंकों को ही, आगे चलकर, 'इंपीरियल बैंक' की, जो आज़ादी के बाद 'स्टेट बैंक ऑफ इंडिया' नाम से जाना जाने लगा, कल्पना ने मूर्त्त रूप धारण करना आरंभ किया। सैद्धांतिक रूप से, 'स्टेट बैंक ऑफ इंडिया' देश का विशालतम सार्वजनिक बैंक है, मगर उस पर जनता का नियंत्रण कितना है, और सरकार का कितना, यह सब भलीभांति जानते हैं।

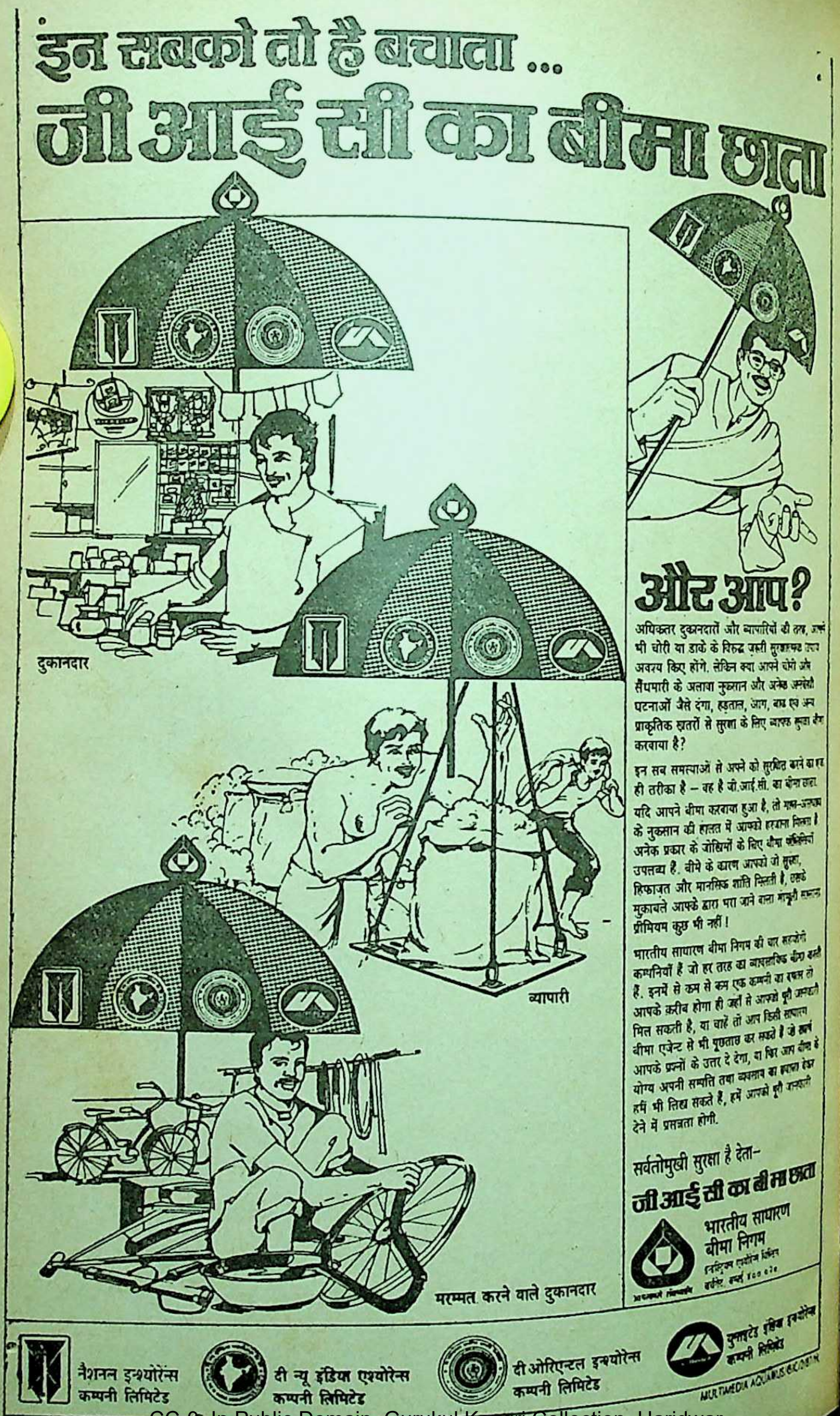
इन सबको तो है बचाता ...
जी आई सी का बीमा छाता
दुकानदार
व्यापारी
मरम्मत करने वाले दुकानदार
और आप?
सर्वतोमुखी सुरक्षा है देता–
जी आई सी का बीमा छाता
नैशनल इन्श्योरेंस कम्पनी लिमिटेड
दी न्यू इंडिया एश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड
दी ओरिएन्टल इन्श्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड
युनाइटेड इंडिया इन्श्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड
MULTIMEDIA AQUARIUS/GIC/281/R

अधिकतर दुकानदारों और व्यापारियों की तरह, आपने भी चोरी या डाके के विरुद्ध ज़रूरी सुरक्षात्मक उपाय अवश्य किए होंगे. लेकिन क्या आपने चोरी और सैंधमारी के अलावा नुकसान और अनेक अनदेखी घटनाओं जैसे दंगा, हड़ताल, आग, बाढ़ एवं अन्य प्राकृतिक ख़तरों से सुरक्षा के लिए व्यापक सुरक्षा बीमा करवाया है?

इन सब समस्याओं से अपने को सुरक्षित करने का एक ही तरीका है – वह है जी.आई.सी. का बीमा छाता.

यदि आपने बीमा करवाया हुआ है, तो माल-असबाब के नुकसान की हालत में आपको हरजाना मिलता है. अनेक प्रकार के जोखिमों के लिए बीमा पॉलिसियां उपलब्ध हैं. बीमे के कारण आपको जो सुरक्षा, हिफाज़त और मानसिक शांति मिलती है, उसके मुकाबले आपके द्वारा भरा जाने वाला मामूली सालाना प्रीमियम कुछ भी नहीं!

भारतीय साधारण बीमा निगम की चार सहयोगी कम्पनियाँ हैं जो हर तरह का व्यावसायिक बीमा करती हैं. इनमें से कम से कम एक कम्पनी का दफ्तर तो आपके क़रीब होगा ही जहाँ से आपको पूरी जानकारी मिल सकती है, या चाहें तो आप किसी साधारण बीमा एजेन्ट से भी पूछताछ कर सकते हैं जो सहर्ष आपके प्रश्नों के उत्तर दे देगा, या फिर आप बीमा के योग्य अपनी सम्पत्ति तथा व्यवसाय का ब्यौरा देकर हमें भी लिख सकते हैं, हमें आपको पूरी जानकारी देने में प्रसन्नता होगी.

भारतीय साधारण
बीमा निगम
इन्डस्ट्रियल एश्योरेंस बिल्डिंग
चर्चगेट, बम्बई ४०० ०२०

बैंक अ

इन
सरकार
अनियमि
रहती थी
को भारी
ब्रितानी
था ब्रित
कर्मचारी
तथापि व
इस आदे
नाम से
बाद में,
ऐसी योज
जिनकी व
होती थी।
ऑफ बंब
डायरेक्टर
में लगी
मुसीबत म
होती थी,
होकर बंद
'बैंक अ
के कारण
'बैंक अ
सुनाते सम
'प्रेमचंद
भूले, जिन्हों
खुले रूप मे
किया, औ

१९८८

'बैंक ऑफ बंगाल' और 'बैंक ऑफ बंबई' को भारी हानि

इन तीनों बैंकों पर कंपनी का अर्थात, सरकार का अधिकार होते हुए भी, उनमें अनियमितताएं और गड़बड़ियां तो होती ही रहती थीं, जिनके कारण, इनमें से दो बैंकों को भारी हानि हुई थी। यद्यपि कंपनी और ब्रितानी सरकार के सख्त आदेश थे कि कंपनी या ब्रितानी सरकार का कोई वेतनभोगी कर्मचारी इन बैंकों में पूंजी नहीं लगा सकता, तथापि कर्मचारी और स्वयं अधिकारी भी इस आदेश का उल्लंघन अपने रिश्तेदारों के नाम से पूंजी लगाकर करते थे। ये लोग, बाद में, बैंकों पर ज़ोर डालते थे कि वह ऐसी योजनाओं के लिए ऋण प्रदान करे, जिनकी व्यावहारिकता व संभाव्यता संदिग्ध होती थी। अमरीकी गृह-युद्ध के दिनों में, 'बैंक ऑफ बंबई' ने, एक फर्जी कंपनी को, जिसके डायरेक्टर वही थे, जिनकी कुछ पूंजी बैंक में लगी थी, भारी ऋण देकर अपने सर मुसीबत मोल ले ली। ऋण की अदायगी न होती थी, और न हुई, और बैंक दीवालिया होकर बंद हो गया।

'बैंक ऑफ बंगाल' को भी ग़लत एजेंटों के कारण भारी हानि सहनी पड़ी थी।

'बैंक ऑफ बंबई' के पतन की कहानी सुनाते समय श्री बागची एक ऐसे भारतीय, 'प्रेमचंद रायचंद' की कहानी सुनाना नहीं भूले, जिन्होंने यह देखकर कि अंग्रेज बैंक को खुले रूप में लूट रहे हैं, उन्हीं का अनुकरण किया, और बैंक की दौलत पर काफ़ी हाथ फेरा। अंग्रेजों ने बाद में प्रेमचंद रायचंद को इस बैंक-त्रासदी का खलनायक बनाने की काफी कोशिश की, मगर इस कोशिश में वे खुद भी और ज़्यादा बदनाम हुए।

बाद में, इस प्रकार की अनियमितताओं और गड़बड़ियों को रोकने के लिए सरकार ने 'प्रेसीडेंसी बैंक कानून' बनाया। लेकिन, इस कानून के पारित हो जाने पर भी 'बाहरी' व्यक्तियों द्वारा बैंक के कामकाज में हस्तक्षेप करने की घटनाओं का अंत नहीं हुआ। कारण, ये 'बाहरी' लोग और कोई नहीं, अंदरूनी लोग ही होते थे, जो स्वयं गवर्नर तक को चकमा देकर, बैंकों को मनचाहा नाच नचाकर, अपना उल्लू सीधा करते रहते थे। बैंक की शाखाओं के प्रबंधक बैंक के निर्देशनों को ताक में रखकर, मनमाना कमीशन ऐंठते थे, मगर उसकी पूरी रक़म बैंक में नहीं जाती थी, तीन-चौथाई उनकी जेब में पहुंचती थी। उदाहरणार्थ, 'बैंक ऑफ बंगाल' की कलकत्ता और ढाका शाखाओं द्वारा काटे जाने वाले कमीशन की दरों में जमीन आसमान का अंतर था।

तो, यह थी, उन्नीसवीं सदी के बीच के वर्षों में हमारे देश की बैंक-व्यवस्था की एक तस्वीर, जो यही जाहिर करती है कि इन बैंकों के माध्यम से 'कंपनी बहादुर' ने अंग्रेजों की जेब भरने और हिंदुस्तानियों की खुले आम लूटमार करने का एक नया और नायाब तरीका खोज निकाला था। १८५७ के सैनिक-विद्रोह ने कंपनी और

ब्रितानी सरकार को कड़वे राजनीतिक सबक सिखाये, वहां यह सबक भी सिखाया कि लोगों के पैसों के साथ खिलवाड़ करने वाली सरकार को अपने गैर कानूनी तौर-तरीके बदलने को मजबूर होना ही पड़ता है।

बैंकों की इस दुर्व्यवस्था का ही कारण था कि जब कभी कंपनी को युद्ध के लिए धन की आवश्यकता होती थी, तो वे इस आवश्यकता की पूर्ति करने में असमर्थ रहते थे, क्योंकि जिन लोगों पर उनके धन को सुरक्षित करने और उसका अच्छा विनियोग करने की जिम्मेवारी थी, वे ही उसे खोखला कर देते थे। अकाल के दिनों में अपने खोखलेपन के कारण वे बैंक किसानों और भूख से मर रहे लोगों की सहायता करने में भी असमर्थ रहते थे।

टैगोर के यूनियन बैंक को कैसे हड़पा गया!

श्री द्वारकानाथ टैगोर तथा उनके मित्रों ने सही ढंग का विशुद्ध भारतीय बैंक-व्यवसाय बंगाल में आरंभ करने के उद्देश्य से यूनियन बैंक की स्थापना की थी। लेकिन, 'बैंक ऑफ बंगाल' के भारत-विरोधी प्रबंधकों ने इसे पनपने का अवसर ही नहीं दिया, और अपने प्रभाव का दुरुपयोग कर, एक प्रकार से हड़प ही लिया। यूनियन बैंक को एक बार अतिरिक्त धन-राशि की आवश्यकता थी, और वह उसके बदले में 'बैंक ऑफ बंगाल' को प्रामिसरी नोट देने को प्रस्तुत था। लेकिन, बैंक ऑफ बंगाल की शर्त थी कि वह यह राशि स्वयं बैंक द्वारा जारी किये गये नोटों के बदले में ही दे सकता है।

सन १८६० के बाद से देश में रेल-सेवाओं का तेज़ी से विस्तार हुआ, और उसके परिणामस्वरूप नकद धन की मांग बढ़ी। तब ब्रितानी सरकार को अपने बैंकों के निरंकुश कार्यकलायों पर अंकुश लगाने को बाध्य होना पड़ा। १८७६ के प्रेसीडेंसी बैंक्स कानून ने तीनों सरकारी बैंकों को समान आधार और दर्जा प्रदान किया। इस कानून ने बैंकों द्वारा नोट जारी करने पर प्रतिबंध लगा दिया। लेकिन वे अपनी-अपनी प्रेसीडेंसियों में सरकारी बैंकों की भूमिका निभाने लगे, और उन्हें खजानों का सारा काम करने के अधिकार भी दिये गये। सरकार ने इस मूलभूत धारणा को स्वीकार किया कि ब्रिटिश भारत में सरकारी बैंकों को एक अहम् रोल अदा करना है—उसकी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ और गतिशील बनाने में।

४५ वर्ष बाद, सब सरकारी बैंकों को 'इंपीरियल बैंक' के रूप में सम्मिश्रित और विलीन कर दिया गया।

इन तीनों बैंकों के बारे में एक तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है। और वह यह कि अंग्रेज सरकार ने इन तीनों बैंकों में से किसी को भी विनिमय-व्यापार करने के अधिकार प्रदान नहीं किये। दादाभाई नौरोजी ने अंग्रेजों पर जो यह इल्जाम लगाया था कि वे भारत का बड़े व्यवस्थित तरीके से आर्थिक शोषण कर, उसे खोखला कर रहे हैं, तो उनका इशारा उनके उत

विदेशी व्यापार की ओर ही था, जो इस र आर्थिक शोषण का सर्वाधिक प्रयोग- द्ध रूप था। सारी मलाई वहीं थी। यह रा विदेशी-व्यापार उन बैंकों के माध्यम किया जाता था, जो ब्रिटेन में नियमित ये गये थे। यह सच है कि 'बैंक ऑफ गाल' ने बर्मा में, और 'बैंक ऑफ मद्रास' श्रीलंका में अपनी शाखाएं खोली थीं, किन चूंकि इन देशों के साथ भारत का यापार रुपये की मुद्रा के द्वारा होता था, इसलिए वे मात्र एक दिखावा थीं। जब सीडेंसी बैंक कानून के तहत, प्रेसीडेंसी बैंकों के विदेशी व्यापार करने पर प्रतिबंध लगाया गया, तो भी यह द्विभाजन कायम रहा। इस निर्णय का एक कारण यह भी था कि इन प्रेसीडेंसी बैंकों पर मूल भारतीयों का भी आंशिक प्रभुत्व था। यद्यपि ये भारतीय उच्च वर्ग के थे, और शत प्रतिशत अंग्रेजभक्त थे, तथापि अंग्रेजों ने इस डर से कि कहीं इन स्वामीभक्त तत्वों को भी भारत के शोषण की भनक न पड़ जाये, सीडेंसी बैंकों को विदेशी व्यापार के अधिकार कभी नहीं दिये। श्री दादाभाई नौरोजी इस काल के पहले और संभवत: अकेले भारतीय थे, जिन्होंने पूरी खोज करके अंग्रेजों के इस षड्यंत्र का साहसपूर्वक पर्दाफाश किया।

खजांचियों' की भूमिका

श्री बागची ने एक पूरा अध्याय उन कपटपूर्ण तरीकों को दिया है, जिनके प्रयोग से अंग्रेजों ने अनेक दशकों तक बड़ी बेरहमी के साथ भारत का आर्थिक शोषण किया। अध्याय का शीर्षक ही है—'धोखेबाजी, जालसाजी तथा अन्य विक्षोभ।' राजकिशोर दत्त की जालसाजियों के पर्दाफाश का वर्णन भी किसी जासूसी उपन्यास से कम रोचक नहीं है। मगर, उनका कहना है कि इस मामले का मुकदमा भी धोखेबाजी से भरा था, और उसके फैसले में हर पक्ष के साथ अन्याय हुआ।

ख़ैर, यह तो स्वाभाविक ही था।

राम कोमल सेन नाम के एक खजांची की जो कहानी श्री बागची ने सुनायी है, वह भी कम रोचक नहीं है। सेन १८३२ में 'बैंक ऑफ बंगाल' के एक खजांची बने थे। बाद में, उन्होंने अपने सेवा-काल में कैसे-कैसे अप्रत्याशित अनुभव किये, यह वर्णन पाठक को सचमुच रोमांचित करता है।

श्री बागची ने उस काल में खजांचियों का जो वर्णन किया है, उससे प्रकट है कि उन दिनों भारतीय बैंकों और अंग्रेजों द्वारा स्थापित किये गये बैंकों में बड़ी तीव्र प्रतियोगिता चलती थी, और खजांचियों को अपने निर्धारित काम के अलावा, बैंक की ओर नये-नये ग्राहकों को आकर्षित करने की ड्यूटी भी बजानी पड़ती थी। बैंक केवल ऐसे लोगों को ही खजांची बनाते थे, जो अधिक से अधिक व्यापारियों और हुंडी-साहूकारों से परिचित हों। उनका वेतन तो सिर्फ ३००/ रुपये प्रति माह होता था, लेकिन उसकी 'ऊपरी कमाई' की कोई सीमा न थी।

□

WITH PRAYFUL COMPLIMENTS

From

KHANDELWAL BROTHERS LIMITED

Khandelwal Bhavan
166, Dr. D. N. Road
Fort, **Bombay – 400 001**

Tel : **2023055/66/81/91**
327187—349995
2045076—2045145

Telex : 011-2410 & 011-6222

Caule : 'KHANDELBRO' Bombay.

दूर करो अंधियारा

आज जन-मन है बहुत व्याकुल
ढूंढ़ता है तिमिर-पथ में
राह पर पाता नहीं ।
घूम कर दुश्चक्र पर भटक जाता मार्ग
लेकिन लक्ष्य मिल पाता नहीं ।
क्या प्रगति की आज
हमने इस धरा पर
पेट भर भोजन नहीं है
वस्त्र भी तन पर नहीं है
और सिर पर टीन का
छप्पर नहीं है
बढ़ रहा है नित्य प्रति
अज्ञान का तम
स्वप्न सर्वक्षेम का
या कि योगक्षेम का ?
खंड-खंड भू-भाग बंट रहे
अंग कट रहे भारत माँ के
मत बँटने दो उन्हें
और तम को हटने दो
दीप हमारे मन के भीतर
बुझे पड़े जो
उन्हें जलाओ ज्ञानदीप से
दूर करो अंधियारा मन का
तभी हमारे ज्योति-पर्व हर रोज मनेंगे।
और कहेंगे हम –
'तमसो मा ज्योतिर्गमय' !

–दिलीपकुमार तिवारी
३३/२, पांजरापोल, दूसरी गली,
सी. पी. टैंक रोड, बम्बई–४

सुखी दुख

'सुख' एक अनुभूति है,
सपना है ।
'दुख' ही नितान्त अपना है ।
'सुख' डराता है
भविष्य के दुख की
कल्पना मात्र से ।
'दुख' बाध्य करता है
जीने को अभिशप्त जीवन भी
क्षणिक 'सुख' की कल्पना मात्र से ।
'सुख' दृष्टि विहीन करके
भरता है अहंकार,
'दुख' हृदय को तपाकर
ढालता है
विनम्रता के अलंकार ।

–प्रभा बजाज

□

स्टैंडर्ड मिल्स
स्टैनरोज़ा®
ड्रेस मटीरियल्स
कपड़े कुछ इतने
खूबसूरत कि सुहाता नहीं कोई और नाम!
LINK ADS/SM/277/87HIN

उष:पान, अमृतपान

उमेश पांडे

हमारे पूर्वजों ने स्वास्थ्य रक्षा के निमित्त ऐसे अनेक उपाय बताये हैं जिन्हें स्वास्थावस्था में यदि हम अपनी दैनिक चर्या का अंग बनायें तो निश्चय ही निरोग रहते हुए अधिकाधिक आयु का भोग कर सकते हैं। उन्हीं उपायों में से एक है उष:पान।

उष:पान का शाब्दिक अर्थ है। 'उष:काल में पीना' अर्थात उष:काल में जल पीना। यह जल नासिका मार्ग से ग्रहण करना तो और भी उत्तम बताया गया है जोकि थोड़े से अभ्यास के द्वारा आसानी से संपन्न होने लगता है। किंतु जो लोग नासिका द्वारा जल न पी सकें उन्हें मुख मार्ग से ही उष:काल में जल ग्रहण करना चाहिए। बाजारों में नाक से पानी ग्रहण करने हेतु विशेष प्रकार की लुटियां भी मिलती हैं।

नासिका मार्ग से जल ग्रहण करने के अभ्यास के समय पहले एक तोला जल से प्रारंभ करें और फिर उसकी मात्रा बढ़ाकर ८० तोले तक की जा सकती है। इससे कम भी हो तो कोई हर्ज नहीं।

उष:पान के लिए प्राय: ताम्रपात्र में रखा हुआ बासी जल ही प्रयुक्त किया जाता है, क्योंकि ताम्रपात्र में रखे हुए जल पर किसी भी प्रकार के कीटाणु अपना प्रभाव नहीं डाल पाते और यदि कुछ कीटाणु उसमें आ भी जायें तो वे पनप नहीं पाते। ताम्रपात्र में रखे जल में तांबे के आवेषित परमाणु विद्यमान रहते हैं जिनका ग्रहण करना हमारे शरीर के लिए हितकर है।

उष:पान से हमारे शरीर को अनेक फायदे हैं। सर्वप्रथम तो ये कि उष:पान करने के पश्चात् मात्र १०-१२ मिनट तक हमें खुलकर पेशाब हो जाती है। परिणामस्वरूप हमारा शरीर हल्का हो जाता है और मूत्रमार्ग बिल्कुल साफ हो जाता है। इसका एक और अप्रत्यक्ष लाभ है; वह यह कि नित्य उष:पान करने से वृक्काश्मरी अर्थात् वृक्क की पथरी तथा मूत्राशय की पथरी नहीं बन पाती हैं क्योंकि इन भागों में पथरी बनाने वाले कण न तो रूक पाते हैं और न ही जम पाते हैं। इसी प्रकार उष:पान करने वाला मूत्र-जलन का शिकार नहीं होता है उसके शरीर में गर्मी नहीं बढ़ती है।

हमारे शरीर में अनेक प्रकार की व्याधियां कब्ज से उत्पन्न होती हैं। उष:पान करने वाला कब्ज से मुक्त रहता है। परि-

णामस्वरूप उसे भूख अच्छी लगती है, उसे अजीर्ण नहीं होता और कब्ज से जन्म लेने वाली एक भयंकर व्याधि अर्थात् बवासीर के होने का अंदेशा भी उसमें नहीं रहता है। भूख अधिक लगने से और भोजन का योग्य पाचन होने से शरीर-ऊर्जा में वृद्धि होती है। शरीर हृष्ट-पुष्ट होता है।

अम्लपित्त के शिकार व्यक्ति अर्थात् ऐसे व्यक्ति जिन्हें भोजनोपरांत छाती में जलन का अनुभव होता है, खट्टी डकारें आती हों तथा गैस की शिकायत रहती हो ऐसे व्यक्ति शीघ्र ही उष:पान से लाभ प्राप्त करते हैं—इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।

नाक के द्वारा किया जाने वाला उष:पान नेत्र ज्योति में असीमित वृद्धि करता है। यही नहीं नासिका द्वारा किया जाने वाला उष:पान नेत्रों को परमशीतलता प्रदान करता है और इस प्रकार नेत्रों में होने वाली जलन का नाश करता है। नासिका द्वारा उष:काल में ग्रहण किया जल नासारंध्रों को भली प्रकार खोलता है, शिरोपीड़ा का हरण करता है। इस उष:पान से घ्राणशक्ति बढ़ती है, सिर में एक विशेष प्रकार की तरावट बनी रहती है। सिरदर्द कभी नहीं होता तथा उनके केश अधिक समय तक कृष्णवर्णी बने रहते हैं।

जो व्यक्ति नित्य उष:पान करता है उसका रक्त सदैव शुद्ध रहता है। परिणाम-स्वरूप फोड़े-फुंसी, और रक्तजनित कई व्याधियां उससे कोसों दूर रहती हैं।

उष:पान से प्रोस्टेट ग्रंथि की वृद्धि में भी नियंत्रण देखा गया है। पुन: मूत्राशय की पेशी की शक्ति कमजोर हो जाने से मूत्र-त्याग का कार्य भलीभांति नहीं होता। इस विकार में मूत्र-त्याग करते समय व्यक्ति को कुछ पीड़ा जान पड़ती है। उष:पान से व्यक्ति को यह शिकायत नहीं होती है।

आयुर्वेद में मूत्रक्षय नामक एक विकार का वर्णन आया है। वृक्क में रक्त से मूत्र का पृथक्करण होता है। यह क्रिया इस विकार में भलीभांति नहीं हो पाती इससे मूत्र कम होता है। उष:पान से मूत्र की नैसर्गिक क्रिया ठीक हो जाती है। यही नहीं उष:पान मूत्रशुक्र को ठीक करने के लिए भी रामबाण प्रयोग है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उष:पान वास्तव में एक प्रकार का अमृत-पान है किंतु स्नेहादि पदार्थों के पीने की अवस्था में, अधिक दस्त होने की स्थिति में, वेदना में, जलोदर के कारण, पेट फूलने की अवस्था में, जलोदर, कंप, कफ और वात की खास व्याधि होने की दशा में उष:पान नहीं करना चाहिये। —३१९, म. गा. मार्ग, मल्हारगंज,
इन्दौर-४५२००२, म. प्र.

आध्यात्मिक क्षेत्र में जो सार की बात है, वह है सारी खोज, सारी लालसा, और कामना की समाप्ति, जिसके कारण मानव प्रयास के लिए बाध्य होता है। वस्तुत: जब व्यक्ति समग्रत: और पूर्णत: प्रयासविहीन है, नि:स्पंद है, तब वह मन के परे जा पहुंचता है और मोक्ष की उसे प्राप्ति हो जाती है।

रत्न-भरी धरती की ज्योति-भरी मांग !

□

— शिवसिंह 'सुमन' —

रत्न भरी धरती की ज्योति भरी मांग है,
माटी का सूरज है पत्थर का चांद है ।
रोती हैं सिद्धियां हर सूने आयामों में,
निधियों का ब्याह रचा दर्द भरी शामों में,

दुनिया यह पिंड बनी कीली पर डोल रही,
सुख-दुख के चूनर की गांठें है खोल रही,
मधुबन में ठूंठों पर संरचना झूम रही,
पंछीहर पंछी के मन में अवसाद है ।

हर प्रात: के स्वर में मुखरित मन करती है,
संध्या को अपना मन सपनों में धरती है,
रोज-रोज बढ़ना ही जीवन का ध्येय है,
बिंबों को गढ़ना ही दीपक का श्रेय है,

अंबर की रातों में तारों की धड़कन है,
जीवन की बातों में आंतरिक विवाद है ।
आंसू की बूंद-बूंद जल प्लावन आता है,
नियमों-उपनियमों में सृष्टि बांध जाता है,

चलती इन सांसों का कोई विश्वास नहीं,
ये तो बस छोड़-छाड़ भगती हैं लाश कहीं,
भीतर से बोल रहा बाहर है मौन जो,
सागर के तीर एक जोगिया निषाद है ।

मंजिल की ध्वनियां सब मंजिल पर गूंज रहीं,
आंसू की धारों में जिनकी अनुगूंज बही,
बढ़ती है उम्र रोज घटती है धूप-छांह,
अंतर को भेद रही तृष्णा की एक राह,

डूबी अंधियारे में अग-जग की किरणें हैं,
अणु-अणु के केंद्रों पर शेष ब्रह्मनाद है ।
धर्म-अर्थ काम-मोक्ष जीवन-पथ छोड़ गये,
श्वासों की डोर-डोर घायल मन जोड़ गये,

बंदी हर प्राण बने अंतर की चाहों में,
उठती है पीर यहां निशि-दिन ही आहों में,
प्राण-प्राण जलती है समिधा की आग नयी,
जन्म एक रचना है मृत्यु एक स्वाद है ।

—कवि निवास, कंदरावां, प्रह्लादपुर-२२९००१, उ. प्र.—

□

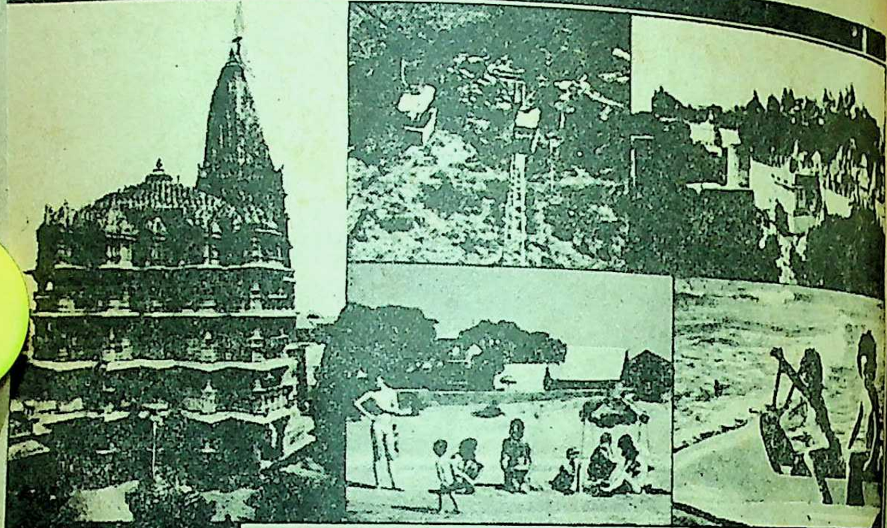

Gujarat

eternally beautiful !

Glittering Gems of Glorious Gujarat -

Ahmedpur Mandvi - beautiful beach resort.
Chorwad - the only palace beach resort in India.
Dwarka - Kingdom of Lord Krishna, one of 4 most sacred Hindu Dham
Gir - the only habitat of lions in Asia.
Palitana - Picturesque mountain city of Jain Temples on the top of Shetrunjaya Hill.
Porbandar - Birth place of Mahatma Gandhi.
Ropeway of Pavagadh - First of its kind in Western India.
Somnath - the Shrine Eternal - foremost among 12 Jyotirlinga of Lord Shiva.

Gujarat for pleasant moments.

Tourism Corporation of Gujarat Limited

GUJARAT TOURISM

•Amdavad:
H. K. House,
Off Ashram Road,
Amdavad 380 009
Phone 449683, 449172
Telex - 012-549 TCG IN

•Bombay:
Dhanraj Mahal,
Apollo Bunder,
Bombay 400 039
Phone 2024925
Telex - 011-2434 GUJ IN

•Delhi:
A/6 State Emporia Bldg.,
Baba Kharaksing Marg.
New Delhi 110 001,
Phone 322107.

•Junagadh:
Hotel Girnar,
Majewadi Gate,
Junagadh 362 001
Phone 21208

•Surat:
1/847, Athugar Street,
Nanpura, Surat 395 001
Phone : 26586

•Vadodara:
Narmada Bhavan,
C-Block, Indira Avenue,
Vadodara 390 001.
Phone - 540797.

•Rajkot:
Near Collector Office,
Rajkot-360 001
Phone : 45800
International Travels,
Phone : 22689

•Jamnagar:
Royal Travels,
Phone 78208

•Bhavnagar:
Parag Travels,
Phone [illegible]

खुशबू के दीवाने

☐ डा. विनोद गुप्ता

दुनिया में खुशवुओं के ऐसे शौकीनों की कमी नहीं है, जो मनपसंद खुशवू प्राप्त करने के लिए मनचाही कीमत देने के लिए तैयार रहते हैं। ऐसी ही एक खुशवू है अगरवुड के तेल की, जिसके दीवाने हैं अरव के लोग, जो इसकी खातिर चाहे जितना पैसा देने को तैयार हैं।

इस खुशवू को दुनियाभर में इत्रों और सेंट का राजा कहा जाता है। भारत में इसके तेल की कीमत एक लाख अस्सी हजार रुपये किलो तक है, किंतु बिचौलियों की वजह से अरव पहुंचते-पहुंचते इसकी कीमत दुगनी हो जाती है। दिलचस्प तथ्य यह है कि इस क़ीमत पर भी यह तेल हाथों हाथ विक जाता है।

आख़िर यह कीमती तेल है क्या? असम में एक अनोखा पेड़ पाया जाता है, जिसे वोलचाल की भाषा में अगरवुड कहते हैं। इसका वानस्पतिक नाम एक्यूलेरिया अगलोचा है। सुवास की वजह से ही इस पेड़ की लकड़ी चालीस हजार रुपये किलो विकती है। इस लकड़ी के वाष्पीकरण से जो तेल निकलता है, कहते हैं यह कामोत्तेजक होता है। संक्रमण के मान से अगरवुड को तीन श्रेणियों में रखा जा सकता है। 'बी' तथा 'सी' श्रेणी की लकड़ियों का वाष्पीकरण तो घरों में ही होता है और तेल सीधे बंबई भेज दिया जाता है। वहां से उसे अरव भेज दिया जाता है। 'ए' श्रेणी की लकड़ी का तेल दो लाख रुपये किलो तक भाव दे जाता है।

असम में जोरहाट के पास कोई पचास किलोमीटर के फासले पर एक छोटा-सा गांव है—नागरानी ? यही इन पेड़ों का प्रमुख केंद्र है। इस गांव में कोई पचास परिवारों की बस्ती है, जिनमें से अधिकांश मुस्लिम हैं

नागरानी में हर तीन परिवारों के पीछे एक परिवार में छोटा-सा वाष्पीकरण संयंत्र मिल जायेगा, जो हर समय अगरवुड से तेल निकालने का काम करता है। प्रति सौ किलो लकड़ी से एक किलो तेल मिलता है। यह संयंत्र पांच से दस किलो लकड़ी से तेल निकाल सकता है।

असम में इस पेड़ की लकड़ी और इसके तेल का व्यापार खूब फलफूल रहा है, किंतु सारा कारोबार एक सुनियोजित समूह द्वारा बहुत ही गुप्त तरीके से किया जाता है। फलतः कितना तेल तथा लकड़ी हर वर्ष निर्यात होती है, इसके विश्वसनीय आंकड़े मिलना कठिन है। फिर भी मोटे अनुमान के अनुसार अकेले नागरानी गांव से ही

।।।२९९

वर्षभर में दो सौ किलो तेल का उत्पादन होता है जिसकी कीमत करोड़ों रुपये है।

सैकड़ों पेड़ों के बीच ऐसे संक्रामक पेड़ की पहचान करना कोई आसान बात नहीं है।

इसे ढूंढ निकालना भी अपने आप में एक कला है, जो दीर्घ अनुभव से ही आती है।

जो इस कला में पारंगत हैं वे लाखों का कारोबार कर रहे हैं, मगर उत्पादन शुल्क बचाने के चक्कर में सारा कारोबार गुप्त रूप से हो रहा है।

'ए' श्रेणियों की लकड़ियों के पहले छिलपे बना लिये जाते हैं और फिर उन्हें सीधे निर्यात कर दिया जाता है। तेल निकालने के पश्चात् लकड़ी का जो अवशेष बचता है, वह भी व्यर्थ नहीं जाता। इसे अगरबत्ती बनाने वाले खरीद लेते हैं। अगरबत्ती बनाने के लिए इस अवशेष से भरे ट्रक रोज जोरहाट से हैदराबाद और मैसूर के लिए रवाना होते हुए देखे जा सकते हैं। ये शहर अगरबत्तियों के गढ़ माने जाते हैं।

वैसे अब नागरानी का एकाधिकार टूट रहा है, क्योंकि कई नये लोग भी इस ओर आने लगे हैं।

अकेले जोरहाट में ही चार-पांच ऐसे कारखाने खुल गये हैं, जो आधुनिक तकनीक से तेल निकालते हैं। इसके अलावा अमरीका में बसे एक भारतीय ने भी जोरहाट में अगरवुड से तेल निकालने का एक अच्छा-सा कारखाना स्थापित कर लिया है।

इन सबका दुष्परिणाम यह हो रहा है कि आज असम में अगरवुड के पेड़ों की संख्या तेजी से घटती जा रही है।

—दीपक निवास, १५६ महात्मा गांधी मार्ग,
बड़वानी, म. प्र.

□

(पृष्ठ १९५ का शेषांश)

नहीं, यह कोई उपलब्धि नहीं है मेरे लिए मेरा चुनाव विकलांग कोटे में हुआ है। मैं सामान्य कोटे में भी बैठकर दिखा दूंगा वी. पी. एस. सी. में नहीं, अब आई. ए. एस. में . . . और पिताजी तथा सभी शुभचिंतकों की फब्तियां सुनने के बावजूद मैं अपने निश्चय पर अड़ा रहा था। उस नौकरी को ठुकराकर मैं नये सिरे से परीक्षा की तैयारी में जुट गया था।

—मैं सच कह रहा हूं, मेरा आत्मविश्वास ही रंग लाया था। उस पंगु पर्वतारोही ने मेरा मार्गदर्शन किया था। दोस्तों की व्यंग्य भरी चुनौती ने कुछ कर दिखाने के लिए ललकारा था . . . और उन सबका ही नतीजा है कि मैं आज इस भारतीय प्रशासनिक सेवा में तल्लीन हूं। मुझे चिढ़ाने वाले आज मेरे प्रशंसक हैं और वे अपने बेटों को मेरी कहानियां सुनाया करते हैं।

—कार्यालय जिला प्रबंधक टेलिफोन,
निर्देशिका अनुभाग, पटना-८००००१

□

भारतीय स्टेट बैंक से ऋण लीजिए,
अपनी चहेती वस्तुओं को घर ले आइए!

111299

INTRODUCING
THE
BIG
BUY
SCHEME BY SBI

अपने घर कार, वी सी आर या सिलाई मशीन. आज ही! अब इन्हें से पहले न खर्च में कमी करने की ज़रूरत, न बचत की आवश्यकता ज़रूरत है महीनों व सालों तक लम्बे इन्तज़ार की. चाहे, तो आप खरीद सकते हैं.... स्टेट बैंक की बड़ी खरीद योजना की सहायता से.

योजना "आज खरीदो, बाद में चुकाओ" योजना है जो आपकी के लिए ही बनायी गयी है ताकि आप अपने उपभोग की वस्तुएं जैसे कंडीशनर, टी.वी. सेट, कुकिंग रेंज, वॉशिंग मशीन आदि तथा अपनी सम्पदा बढ़ाएं.

लाख रुपये तक ऋण लीजिए, अपनी चहेती वस्तुएं खरीदिए.

योजना के अन्तर्गत न्यूनतम राशि 5,000 रुपये से लेकर राशि 1 लाख रुपये तक या अपनी शुद्ध मासिक आय/वेतन का (दोनों में से जो भी कम हो) ऋण ले सकते हैं. यह ऋण आसान किस्तों में 3 से 5 वर्षों की अवधि में अदा करना होगा.

★ वेतन भोगियों, यह योजना आपके लिए है.

यदि आप सरकारी, सार्वजनिक या निजी क्षेत्र में किसी संगठन के स्थायी कर्मचारी हैं एवं आपकी सेवा अवधि कम से कम पाँच वर्ष की हो चुकी है तो आप बड़ी खरीद योजना का लाभ उठा सकते हैं. यदि आप व्यवसायी हैं अथवा स्व-नियोजित व्यक्ति हैं और आप उस व्यवसाय में कम से कम पाँच वर्ष से जुड़े हुए हैं तो यह योजना आपके लिए भी खुली है.

★ तो आज ही आइए, आसानी से ऋण लीजिए!

भारतीय स्टेट बैंक की निकटतम शाखा में जल्दी जाइए और बड़ी खरीद योजना का लाभ उठाइए तथा वहां से बाहर निकल कर वे सभी चीजें खरीद डालिये जिन्हें आप अब तक टालते रहे हैं.

स्टेट बैंक

CHAITRA.B.SBI 1534 HIN

संस्मरण

सेठ गोविंददास की विनयशीलता

□ मुकुन्ददास

हिंदी के कालजयी साहित्यकार एवं १०० उत्कृष्ट नाटकों के रचयिता सेठ गोविंददासजी मेरे पूज्य पितामह थे। वे अपनी निस्पृहता, निश्छलता, सहज सरलता व उदारता के लिए भी बहुत प्रसिद्ध थे। तत्संबंधी एक संस्मरण यहां प्रस्तुत है।

आज से लगभग चार दशकों पूर्व एक बार सुप्रसिद्ध साहित्यकार पं. शांतिप्रिय द्विवेदी उनसे मिलने जबलपुर पधारे। आते ही उन्होंने सेठजी से कहा, 'मुझे अपना एक ग्रंथ प्रकाशित करवाने के लिए पांच सौ रुपयों की बड़ी आवश्यकता है। यदि आप मुझे य राशि दे दें तो मैं अपना यह ग्रंथ आपको ही समर्पित कर दूंगा।'

सेठजी ने हाथ जोड़कर उनसे निवेदन किया, 'यह मेरा परम सौभाग्य है कि आ जैसे दिग्गज साहित्यकार पहली बार मेरे महल में पधारे हैं। पहले आप स्नान-ध्या भोजन आदि से निवृत्त होकर विश्राम कीजिये, सायंकाल चाय के समय बातें होंगी।' द्विवेदी ने ऐसा ही किया।

सायंकाल सेठजी ने पांच सौ रुपये के बदले द्विवेदीजी को दो हजार रुपये देते हुए उनसे निवेदन किया, 'अभी आप इस राशि से अपना काम चला लीजिये। भविष्य में आपको जब भी जितनी राशि की आवश्यकता हो, मुझे आज्ञा दें। मैं नहीं चाहता कि आप जैसे सरस्वती के मूर्धन्य वर-पुत्र की कलम अर्थाभाव के कारण रुक जाये। हां, आपसे मेरा करबद्ध निवेदन यह भी है कि आप अपना प्रकाशित होने वाला यह ग्रंथ मुझ छोटे-से साहित्यकार को कदापि समर्पित न करें। मैं अपने आप को इस योग्य नहीं समझता।'

सेठ गोविंददासजी के इन विनम्र वचनों को सुनकर द्विवेदीजी गद्गद् एवं हतप्रभ कारण होकर रह गये।

सेठजी की विनम्रता यहीं समाप्त नहीं हुई। उन्होंने रात्रिकालीन भोजन के उपरांत अपने विशिष्ट अतिथि द्विवेदीजी को स्टेशन तक पहुंचाया तथा गर्मियों के दिन होने के उन्हें उच्च श्रेणी के रेल-डिब्बे में बैठाकर उन्हें भावभीनी बिदायी दी।

बाद में द्विवेदीजी ने सेठजी के संपूर्ण साहित्य का गहन अध्ययन कर उस पर आ ऐसे अति गंभीर निबंध लिखे जिन्होंने गोविंददासजी को हिंदी साहित्य में स्थापित करने में बड़ा सहयोग प्रदान किया।

—डी. बी. वल्लभदास पैलेस, जबलपुर, म.

□

बड़ों की विनोदी बातें

डा. जुलियन हक्सले के पितामह श्री टामस हक्सले एक बड़े वैज्ञानिक थे। विज्ञान की बाते तो उन्हें खूब याद रहती थीं, पर दैनिक जीवन की बातों में वह बहुत भुलक्कड़ थे।

एक बार उन्हें एक आवश्यक भाषण देने के लिए पास के किसी नगर में जाना था। स्टेशन पर पहुंचे, तो पता चला कि गाड़ी दो घंटे लेट है। हक्सले साहब झपटकर एक टैक्सी पर जा चढ़े और चिल्लाये–'जल्दी चलो–पूरी रफ्तार से।'

टैक्सी पूरी रफ्तार से दौड़ पड़ी। थोड़ी देर बाद हक्सले साहब को ध्यान आया कि उन्हें जाना कहां है, यह तो उन्होंने टैक्सीवाले को बताया ही नहीं। झट आवाज लगायी–'क्यों जी, तुम्हें मालूम है, मुझे कहां जाना है?'

'जी नहीं, श्रीमान,' टैक्सी-ड्राइवर ने जवाब दिया–'पर हुजूर के हुक्म के मुताबिक मैं पूरी रफ्तार से चल रहा हूं।'

०००

बोस्टन की एक पत्रिका के व्यवस्थापक के पास एक पत्र आया–'महाशय, मैं एक वर्ष पहले आपका ग्राहक बना था। जैसा कि, आपके पत्र में लिखा है, यदि एक साल में आपकी पत्रिका पसंद न आयी, तो चंदा वापस कर दिया जायेगा। कृपया अपनी बात पूरी कीजिये, मुझे पत्रिका पसंद नहीं... लेकिन सोचता हूं कि अब आपको पैसे लौटाने का क्यों कष्ट दूं। अतः कृपया वह पैसा अगले साल के मेरे चंदे में जमा कर लीजिये।'

०००

बादशाह 'फ्रेडरिक दूसरा' बड़ा मजाकिया था। एक दिन एक गवैया दरबार में आया। उसने एक सुंदर गीत गाया। सब मुग्ध हो गये। दरबारी कल्पना करने लगे कि गवैया निश्चय ही मालामाल हो जायेगा। पर गाना समाप्त होने पर बादशाह ने पुरस्कार देने के बजाय एक कागज पर लिखा–'यह गवैया एक मूर्ख है,' और नीचे अपने हस्ताक्षर कर दिये। फिर उसने गवैये को यह कागज देकर उससे कहा कि वह पूरे दरबार के सामने उसे पढ़कर सुनाये। चतुर गवैये ने उसे इस प्रकार पढ़ा–'यह गवैया एक मूर्ख है, फ्रेडरिक दूसरा!'

–सुरेंद्र अग्निहोत्री

□

दो क्षण हंस लें!

चुनाव में जीते हुए उम्मीदवार को जब एक ग्रामीण ने 'हियरिंग एड' (श्रवण यंत्र) मशीन भेंट की तो उम्मीदवार ने कहा, 'मैं इसका क्या करूंगा ? मैं कोई बहरा थोड़े ही हूं ?'

'फिर चुनाव जीतने के बाद आप मतदाताओं की तकलीफें क्यों नहीं सुन पाते ?'

०००

रेलवे स्टेशन पर कई बुकिंग खिड़कियों पर एक ही जवाब पाने पर एक ग्रामी वृद्धा ने फिर अपनी तसल्ली के लिए एक खिड़की पर पूछा, 'भैया, लखनऊ का किरा कितना है ?' जब वही जवाब मिला तो वृद्धा बुदबुदायी, 'जब सब जगह एक ही भाव तो फिर एक टिकट दे दो ।'

०००

अदालत के कटघरे में खड़ी अधेड़ उम्र की महिला से जज ने कहा, 'आप पर आ है कि आपने सौंदर्य प्रसाधनों का प्रयोग कर अपनी असली उम्र को छुपाया और ए व्यक्ति को अपने को युवा बताकर और दिखाकर उसे धोखा देती रहीं ।'

'इसमें मेरा क्या दोष है । दोष तो प्रसाधन सामग्री बनाने वाले का है !'

०००

एक सज्जन अपनी दुल्हन पर रौब जमाने की दृष्टि से बोले, 'जानती हो, प्रिये, य कार मेरे पास दो साल से है, लेकिन इसकी मरम्मत के लिए मैंने एक पैसा भी नहीं दिया'

'आप ठीक कह रहे हैं । कल कार मैकेनिक भी आया था, यही बात कह रहा था'

०००

फोन पर एक व्यक्ति ने डाक्टर को बताया, 'कृपया शीघ्र आइये, एक कुत्ते ने हमा नेताजी को काट लिया है ।'

'लेकिन, जनाब, मैं तो जानवरों का डाक्टर हूं !' डाक्टर ने कहा ।

'इलाज भी तो कुत्ते का ही करना है । नेताजी तो भले चंगे हैं ।' व्यक्ति ने बताया

–डॉ. झूलन

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बंबई-४०० ००७ के लिए प्रकाशित तथा श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, ३६/४८ खेम[illegible] [illegible]ीकृष्णदा[illegible] मार्ग, बंबई–४०० ००४ में मुद्रित ।

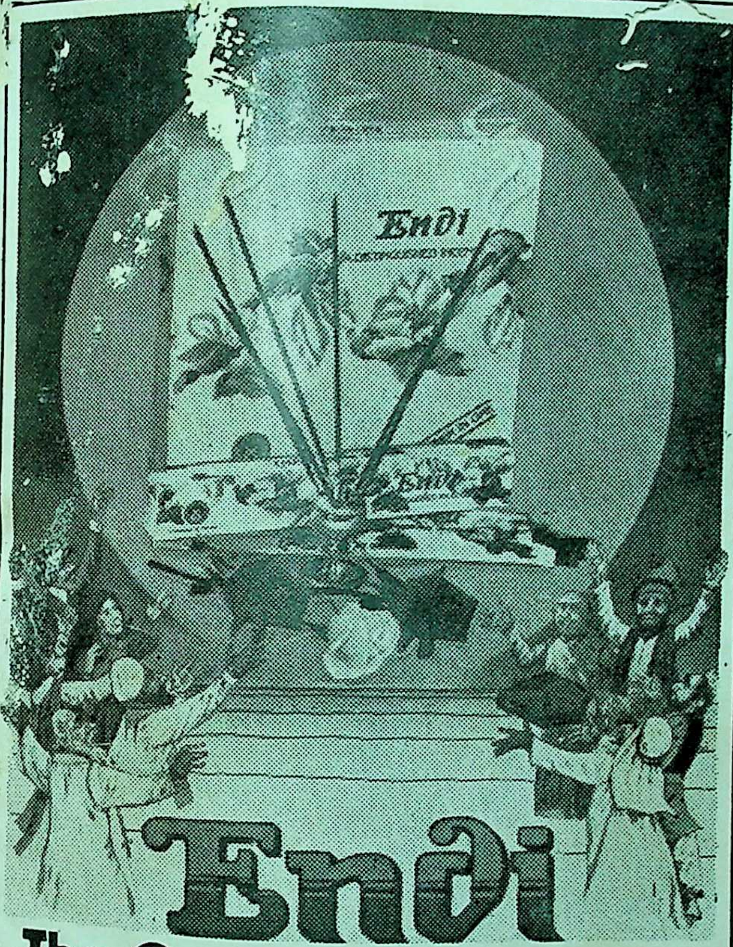

The Great and Graceful Fragrance

SEVEN IN ONE

MYSORE SUGANDHI
DHOOP FACTORY PVT. LTD.
13, Commercial Chambers, Yusuf Meharali Rd.,
P.O. Box 3178, Bombay 400 003.

Regd. No. BY

चंद्रां प्रभासां यशसा ज्वलंतीं
श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् ।
तांपद्मिनेमीं शरणमहं प्रपद्ये
अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे ।।

आनंदमयी, तेजोमयी, यश से उज्ज्वल, देव तथा लोगों से प्रार्थित कमलासना लक्ष्मीदेवी की मैं शरण में हूं । मेरी प्रार्थना है कि हे देवी मेरा दारिद्रय दूर करो ।

—ऋग्वेद

शक्ति फाइनेन्स
आपकी प्रार्थना में शामिल है ।

शक्ति फाइनैन्स लिमिटेड
कार्यकारी चेयरमैन एस. एन. पै

पंजीकृत कार्यालय : ४७५, ननजप्पा रोड,
कोईम्बतूर-६४१ ०१८

THE COMPANY THAT CARES
FOR YOUR INTEREST

Compiled
1999-2000